श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

(सचित्र 'तत्त्वप्रबोधिनी' माल-हिन्दी-टीका-सहितम्)

तृतीयः खण्डः

(चतुर्थः स्कन्धः पञ्चमः स्कन्धश्च)

दयालोक प्रकाशन संस्थान

१८, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद - २११ ००२

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

(सचित्रं 'तत्त्वप्रबोधिनी' सरल-हिन्दी-टीका-सहितम्)

तृतीयः खण्डः

(चतुर्थः स्कन्धः पञ्चमः स्कन्धश्च)

टीकाकर्त्री

श्रीमती दयाकान्ति देवी

धर्मपत्नी—श्रीलोकमणिलाल

दयालोक प्रकाशन संस्थान

१८ पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद, २११००२

प्रकाशक—दयालोक प्रकाशन संस्थान, १८, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद

विक्रमसंवत् २०४५, प्रथम संकरण १०००

प्राप्ति—स्थान
दयालोक प्रकाशन संस्थान
१८ पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद—२११००२

मूल्य : ८०० रूपये मात्र

मुद्रक—
शाकुन्तल मुद्रणालय
३४, बलरामपुर हाउस, इलाहाबाद

नम्र निवेदन

प्रकट है कि कलिकाल में मनुष्य अनेक दुःखों से दुःखित रहते हैं और सब यही चाहते हैं कि हमारा दुःख दूर हो और सुख की प्राप्ति हो। यद्यपि सांसारिक दुःख क्षण, घड़ी, मास, वर्ष इत्यादि नियमित काल के लिए औषध, मंत्र आदि से भी दूर किये जा सकते हैं, परन्तु वे बिना मुक्ति के अत्यन्त नाश को नहीं प्राप्त होते जिससे दुःख सागर से पीछा छूट जाय। मुक्ति ब्रह्मज्ञान के बिना कदापि नहीं हो सकती, जैसा कि यजुर्वेद की श्रुति का अभिप्राय है—'तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय' अर्थात् ब्रह्मसाक्षात्कार से ही मुक्ति की प्राप्ति होती है, दूसरा कोई उपाय नहीं है। ब्रह्मसाक्षात्कार के लिए वेदान्तशास्त्र की रचना हुई है।

भागवत ग्रन्थ वेदान्त की टीका स्वरूप है। वेदान्तशास्त्र में ब्रह्म का जो निगूढ तत्त्व प्रकट किया गया है, भागवत में उसी की विस्तृत रूप से व्याख्या की गई है। यह भागवत ग्रन्थ अमृतस्वरूप है। भागवत के प्रारम्भ भाग में ही लिखा है--

निगमकल्पतरोर्गलितं फलम्,
शुकमुखादमृतद्रवसंयुतम्।
पिबत भागवतं रसमालयम्,
मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः॥

(भा० १, १, ३)

यह वाक्य यथार्थ में ही सत्य है। वेदान्त सूत्र के प्रारंभ मे ही 'जन्माद्यस्य यतः' आदि सूत्र निविष्ट हैं। भागवत के भी प्रारम्भ में 'जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्' इत्यादि वर्णित हैं। सम्पूर्ण वेदान्त शास्त्र अध्ययन करने के उपरान्त भागवत का अध्ययन करने से वेदान्त का मर्म अच्छी तरह समझ में आ जाता है। यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं है कि भागवत की तरह भगवद्भक्ति प्रधान और वेदान्त का तात्पर्यबोधक ग्रन्थ दूसरा नहीं है।

जैसे सकल प्राणियों का जीवन जल है उसी प्रकार समस्त सिद्धियों का जीवन भक्ति है। भक्ति से भगवान् प्रसन्न होते हैं गुणों से नहीं -'भक्त्या तुष्यति माधवो न च गुणैर्भक्तिप्रियो माधवः'। प्राचीन कहावत है —'भक्त्या भागवतं वेत्ति'—भक्ति से ही भागवत का वास्तविक अर्थ लगता है। हमने तो

केवल शब्दार्थ और पाठकों की सुविधा के लिए पदच्छेद कर दिया है और समष्टिरूप से श्लोक का अर्थ समझने के लिए श्लोकार्थ भी लिख दिया एवं शब्दार्थ में जो संख्यायें लिखी हैं, उनके अनुसार १, २, क्रम से शब्द बैठाने पर अन्वय भी निकल आता है। हमारे इस प्रयास में कहाँ तक सफलता मिली है, वह तो पाठक ही बतायेंगे, पर हमारी इस कृति से पाठकों को कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपने को कृतकृत्य समझूंगी। पुस्तक के इस खण्ड में पृष्ठों की संख्या लगभग १२०० होने के कारण इसका मूल्य १५० रु० पड़ा है।

अन्त में मैं आचार्य श्री तारिणीश झा के प्रति अपना आभार प्रकट करती हूँ, जिनके सहयोग से यह कार्य सम्पन्न हो रहा है। इसके मुद्रक श्री उपेन्द्र त्रिपाठी को धन्यवाद देती हूँ, जिन्होने बड़ी लगन एवं निष्ठा से इसका मुद्रण कार्य किया।

गंगा दशहरा
संवत् २०४५, कलि सं० ५०८९, श्रीकृष्ण संवत् ५११४
२४ जून १९८८

निवेदिका
दयाकान्तिदेवी अग्रवाल

श्रीहरिः शरणम्

विषय सूची

१. नम्रनिवेदन　　　　२. विषय-सूची

चतुर्थ स्कन्ध

पञ्चम स्कन्ध

चित्र सूची

(रंगीन)

रेखा चित्र

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

चतुर्थः स्कन्धः

यद्भक्तिं न विना मुक्तिर्यः सेव्यः सर्वयोगिनाम् ।
तं वन्दे परमानन्दघनं श्रीनन्दनन्दनम् ॥

श्री मद्भागवत की आरती

आरती अति पावन पुराण की ।

धर्म भक्ति विज्ञान खान की ।। आ० ।।

महापुराण भागवत निर्मल ।

शुक-मुख-विगलित निगम-कल्प-फल

परमानन्द-सुधा-रसमय कल ।

लीला-रति-रस रस-निधान की ।। आ० ।।

कलि-मल-मथनि त्रिताप-निवारिनि ।

जन्म-मृत्युमय भव-भय-हारिनि ।

सेवत सतत सकल सुख कारिनि ।

सु महौषधि हरि-चरित- गान की ।। आ० ।।

विषय-विलास-विमोह-विनाशिनि ।

विमल विराग विवेक विकाशिनि ।

भगवत्तत्व-रहस्य प्रकाशिनि ।

परम ज्योति परमात्म-ज्ञान की ।। आ० ।।

परमहंस-मुनि-मन-उल्लासिनि ।

रसिक-हृदय-रस-रास विलासिनि ।

भुक्ति मुक्ति रति प्रेम सुवासिनि ।

कथा अकिञ्चन प्रिय सुजान की ।। आ० ।।

श्रीमद्भागवत महापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

प्रथमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—मनोस्तु शतरूपायां तिस्रः कन्याश्च जज्ञिरे ।
आकूतिर्देवहूतिश्च प्रसूतिरिति विश्रुताः ॥१॥

पदच्छेद—

मनोः तु शतरूपायाम् तिस्रः कन्याः च जज्ञिरे ।
आकूतिः देवहूतिः च प्रसूतिः इति विश्रुताः ॥

शब्दार्थ—

मनोः	२.	मनु महाराज की	आकूतिः	७.	आकूति
तु	१.	हे विदुरजी तदनन्तर	देवहूतिः	८.	देवहूति
शतरूपायाम्	३.	शतरूपाके गर्भ से	च	९.	और
तिस्रः कन्याः	४.	तीन कन्यायें	प्रसूतिः	१०.	प्रसूति
च	६.	जो	इति	११.	नाम से
जज्ञिरे ।	५.	उत्पन्न हुईं	विश्रुताः ॥	१२.	प्रसिद्ध हुईं

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! तदनन्तर मनु महाराज की शतरूपा के गर्भ से तीन कन्यायें उत्पन्न हुईं। जो आकूति, देवहूति और प्रसूति नाम से प्रसिद्ध हुईं ॥

द्वितीयः श्लोकः

आकूतिं रुचये प्रादादपि भ्रातृमतीं नृपः ।
पुत्रिकाधर्ममाश्रित्य शतरूपानुमोदितः ॥२॥

पदच्छेद—

आकूतिम् रुचये प्रादात् अपि भ्रातृमतीम् नृपः ।
पुत्रिकाधर्मम् आश्रित्य शतरूपा अनुमोदितः ॥

शब्दार्थ—

आकूतिम्	९.	आकूति का	पुत्रिका	६.	पुत्रि का
रुचये	१०.	प्रजापति रुचि के साथ	धर्मम्	७.	धर्म की
प्रादात्	११.	विवाह किया	आश्रित्य	८.	शर्त पर
अपि	१.	यद्यपि	शतरूपा	४.	शतरूपा की
भ्रातृमतीम्	२.	उनके भाई थे (फिर भी)	अनुमोदितः ॥	५.	अनुमति से
नृपः ।	३.	मनु महाराज ने			

श्लोकार्थ—यद्यपि उनके भाई थे ; फिर भी मनु महाराज ने शतरूपा की अनुमति से पुत्रिका धर्म की शर्त पर आकूति का प्रजापति रुचि के साथ विवाह किया ॥

तृतीयः श्लोकः

प्रजापतिः स भगवान् रुचिस्तस्यामजीजनत् ।
मिथुनं ब्रह्मवर्चस्वी परमेण समाधिना ॥३॥

पदच्छेद—

प्रजापतिः सः भगवान् रुचिः तस्याम् अजीजनत् ।
मिथुनम् ब्रह्म वर्चस्वी परमेण समाधिना ॥

शब्दार्थ—

प्रजापतिः	१. प्रजापति	अजीजनत् ।	१०. उत्पन्न किया
सः	७. उन्होंने	मिथुनम्	९. स्त्री-पुरुष का एक जोड़ा
भगवान्	२. भगवान्	ब्रह्म वर्चस्वी	६. ब्रह्म तेज से सम्पन्न थे
रुचिः	३. रुचि	परमेण	४. परम
तस्याम् ।	८. उस आकूति से	समाधिना ॥	५. समाधि के द्वारा

श्लोकार्थ—प्रजापति भगवान् रुचि परम समाधि के द्वारा ब्रह्म तेज से सम्पन्न थे। उन्होंने उस आकूति से स्त्री-पुरुष का एक जोड़ा उत्पन्न किया ॥

चतुर्थः श्लोकः

यस्तयोः पुरुषः साक्षाद्विष्णुर्यज्ञस्वरूपधृक् ।
या स्त्री सा दक्षिणा भूतेरंशभूताऽनपायिनी ॥४॥

पदच्छेद—

यः तयोः पुरुषः साक्षात् विष्णुः यज्ञ स्वरूप धृक् ।
या स्त्री सा दक्षिणा भूतेः अंश भूता अनपायिनी ॥

शब्दार्थ—

यः	२. जो	या	९. जो
तयोः	१. उन दोनों में	स्त्री	१०. स्त्री थी
पुरुषः	३. पुरुष था (वह)	सा	११. वह (भगवान् से)
साक्षात्	७. स्वयं	दक्षिणा	१६. दक्षिणा थी
विष्णुः	८. विष्णु भगवान् थे (तथा)	भूतेः	१३. लक्ष्मी जी के
यज्ञ	४. यज्ञ	अंश	१४. अंश से
स्वरूप	५. स्वरूप	भूता	१५. उत्पन्न
धृक् ।	६. धारी	अनपायिनी ॥	१२. कभी अलग न रहने वाली

श्लोकार्थ—उन दोनों में जो पुरुष था वह यज्ञ स्वरूपधारी स्वयं विष्णु भगवान् थे। तथा जो स्त्री थी वह भगवान् से कभी अलग न रहने वाली लक्ष्मी जी के अंश से उत्पन्न दक्षिणा थी।

पञ्चमः श्लोकः

आनिन्ये स्वगृहं पुत्र्याः पुत्रं विततरोचिषम् ।
स्वायम्भुवो मुदा युक्तो रुचिर्जग्राह दक्षिणाम् ॥५॥

पदच्छेद—

आनिन्ये स्वगृहम् पुत्र्याः पुत्रम् वितत रोचिषम् ।
स्वायम्भुवः मुदा युक्तः रुचिः जग्राह दक्षिणाम् ॥

शब्दार्थ—

आनिन्ये	९. ले आये (तथा)	स्वायम्भुवः	१. स्वायम्भुव मनु
स्वगृहम्	८. अपने घर	मुदा	६. प्रसन्नता से
पुत्र्याः	२. पुत्री आकृति के	युक्तः	७. युक्त होकर
पुत्रम्	५. पुत्र को	रुचिः	१०. प्रजापति रुचि ने
वितत	३. अत्यन्त	जग्राह	१२. पालन-पोषण किया
रोचिषम् ।	४. तेजस्वी	दक्षिणाम् ॥	११. पुत्री दक्षिणा का

श्लोकार्थ—स्वायम्भुव मनु पुत्री आकृति के अत्यन्त तेजस्वी पुत्र को प्रसन्नता से युक्त होकर अपने घर ले आये तथा प्रजापति रुचि ने पुत्री दक्षिणा का पालन-पोषण किया ॥

षष्ठः श्लोकः

तां कामयानां भगवानुवाह यजुषां पतिः ।
तुष्टायां तोषमापन्नोऽजनयद् द्वादशात्मजान् ॥६॥

पदच्छेद—

ताम् कामयानाम् भगवान् उवाह यजुषाम् पतिः ।
तुष्टायाम् तोषम् आपन्नः अजनयत् द्वादशआत्मजान् ॥

शब्दार्थ—

ताम्	४. उसके साथ	तुष्टायाम्	६. उसके प्रसन्न होने पर
कामयानाम्	१. दक्षिणा की इच्छा होने पर	तोषम्	७. स्वयं सन्तोष
भगवान्	२. भगवान्	आपन्नः	८. प्राप्त करते हुये
उवाह	५. विवाह किया (तथा)	अजनयत्	१०. उत्पन्न किया
यजुषाम् पतिः ।	३. यज्ञ पुरुष ने	द्वादश आत्मजान् ॥	९. बारह पुत्रों को

श्लोकार्थ—दक्षिणा की इच्छा होने पर भगवान् यज्ञ पुरुष ने उसके साथ विवाह किया । तथा उसके प्रसन्न होने पर स्वयं सन्तोष प्राप्त करते हुये बारह पुत्रों को उत्पन्न किया ॥

सप्तमः श्लोकः

तोषः प्रतोषः संतोषो भद्रः शान्तिरिडस्पतिः ।
इध्मः कविर्विभुः स्वह्नः सुदेवो रोचनो द्विषट् ॥७॥

पदच्छेद—

तोषः प्रतोषः सन्तोषः भद्रः शान्तिः इडस्पतिः ।
इध्मः कविः विभुः स्वह्नः सुदेवः रोचनः द्विषट् ॥

शब्दार्थ—

तोषः	१. तोष	इध्मः	७. इध्म
प्रतोषः	२. प्रतोष	कविः	८. कवि
सन्तोषः	३. सन्तोष	विभुः	९. विभु
भद्रः	४. भद्र	स्वह्नः	१०. स्वह्न
शान्तिः	५. शान्ति	सुदेवः	११. सुदेव (और)
इडस्पतिः ।	६. इडस्पतिः	रोचनः द्विषट् ॥	१२. रोचन ये बारह पुत्र हैं

श्लोकार्थ—तोष, प्रतोश, सन्तोष, भद्र, शान्ति, इडस्पति, इध्म, कवि, विभु, स्वह्न सुदेव और रोचन ये बारह पुत्र हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

तुषिता नाम ते देवा आसन् स्वायम्भुवान्तरे ।
मरीचिमिश्रा ऋषयो यज्ञः सुरगणेश्वरः ॥८॥

पदच्छेद—

तुषिताः नाम ते देवा आसन् स्वायम्भुव अन्तरे ।
मरीचि मिश्रा ऋषयः यज्ञः सुरगण ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

तुषिताः	४. तुषित	मरीचि	८. मरीचि
नाम	५. नाम के	मिश्रा	९. इत्यादि
ते	३. वे (बारहों पुत्र)	ऋषयः	१०. सप्त ऋषि थे (तथा)
देवा	६. देवता	यज्ञः	११. (स्वयं) यज्ञ भगवान्
आसन्	७. कहलाये (उस समय)	सुरगण	१२. देवगणों के
स्वायम्भुव	१. स्वायम्भुव	ईश्वरः ॥	१३. अधीश्वर इन्द्र थे ।
अन्तरे ।	२. मन्वन्तर में		

श्लोकार्थ—स्वायम्भुव मन्वन्तर में, वे बारहों पुत्र तुषित नाम के देवता कहलाये । उस समय मरीचि इत्यादि सप्त ऋषि थे । तथा स्वयं यज्ञ भगवान् देव गणों के अधीश्वर इन्द्र थे ॥

नवमः श्लोकः

प्रियव्रतोत्तानपादौ मनुपुत्रौ महौजसौ ।
तत्पुत्रपौत्रनप्तृणामनुवृत्तं तदन्तरम् ॥९॥

पदच्छेद—

प्रियव्रतः उत्तान पादौ मनु पुत्रौ महा ओजसौ ।
तत् पुत्र पौत्र नप्तृणाम् अनुवृत्तम् तद् अन्तरम् ॥

शब्दार्थ—

प्रियव्रत	३. प्रियव्रत (और)	तत्	८. उन्हीं के
उत्तान पादौ	४. उत्तान पाद दोनों	पुत्र	९. पुत्र
मनु	५. मनु महाराज के	पौत्र	१०. पौत्र (और)
पुत्रौ	६. पुत्र थे	नप्तृणाम्	११. दौहित्रों से
महा	१. महान्	अनुवृत्तम्	१२. व्याप्त था
ओजसौ ।	२. तेजस्वी	तद् अन्तरम् ॥	७. वह मन्वन्तर

श्लोकार्थ—महान् तेजस्वी प्रियव्रत और उत्तान पाद दोनों मनु महाराज के पुत्र थे । वह मन्वन्तर उन्हीं के पुत्र पौत्र और दौहित्रों से व्याप्त था ॥

दशमः श्लोकः

देवहूतिमदात्तात कर्दमायात्मजां मनुः ।
तत्सम्बन्धि श्रुतप्रायं भवता गदतो मम ॥१०॥

पदच्छेद—

देवहूतिम् अदात् तात कर्दमाय आत्मजाम् मनुः ।
तत् सम्बन्धि श्रुत प्रायम् भवता गदतः मम ॥

शब्दार्थ—

देवहूतिम्	४. देवहूति का	तत् सम्बन्धि	७. उससे सम्बन्धित कथा
अदात्	६. विवाह किया था	श्रुत	१२. सुन ली है
तात	१. हे विदुर जी !	प्रायम्	११. प्रायः
कर्दमाय	५. कर्दम मुनि के साथ	भवता	१०. आपने
आत्मजाम्	३. अपनी कन्या	गदतः	९. कहने से
मनुः ।	२. मनु महाराज ने	मम ॥	८. मेरे

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! मनु महाराज ने अपनी कन्या देवहूति का कर्दम मुनि के साथ विवाह किया था । उससे सम्बन्धित कथा मेरे कहने से आपने प्रायः सुन ली है ।

एकादशः श्लोकः

दक्षाय ब्रह्मपुत्राय प्रसूतिं भगवान्मनुः ।
प्रायच्छद्यत्कृतः सर्गः त्रिलोक्याम् विततो महान् ॥११॥

पदच्छेद—

दक्षाय ब्रह्म पुत्राय प्रसूतिम् भगवान् मनुः ।
प्रायच्छत् यत् कृतः सर्गः त्रिलोक्याम् विततः महान् ॥

शब्दार्थ—

दक्षाय	५.	दक्ष प्रजापति के साथ	प्रायच्छत्	७.	विवाह किया
ब्रह्म	३.	ब्रह्मा जी के	यत्	८.	जिससे
पुत्राय	४.	पुत्र	कृतः	९.	उत्पन्न
प्रसूतिम्	६.	प्रसूति का	सर्गः त्रिलोक्याम्	११.	वंश तीनों लोकों
भगवान्	२.	महाराज ने	विततः	१२.	व्याप्त हो गया
मनुः ।	१.	मनु	महान् ॥	१०.	विशाल

श्लोकार्थ—मनु महाराज ने ब्रह्मा जी के पुत्र दक्ष प्रजापति के साथ प्रसूति का विवाह किया । जिससे उत्पन्न विशाल वंश तीनों लोकों में व्याप्त हो गया ॥

द्वादशः श्लोकः

याः कर्दमसुताः प्रोक्ता नव ब्रह्मर्षिपत्नयः ।
तासां प्रसूतिप्रसवं प्रोच्यमानं निबोध मे ॥१२॥

पदच्छेद—

याः कर्दम सुताः प्रोक्ता नव ब्रह्मर्षि पत्नयः ।
तासाम् प्रसूति प्रसवम् प्रोच्यमानम् निबोध मे ॥

शब्दार्थ—

याः	१.	जो	तासाम्	७.	उनकी
कर्दम सुताः	२.	कर्दम मुनि की कन्यायें	प्रसूति	८.	वंश
प्रोक्ताः	३.	बताई गई हैं	प्रसवम्	९.	परम्परा
नव	४.	नौ	प्रोच्यमानम्	१०.	बता रहा हूँ (उसे)
ब्रह्मर्षि	५.	ब्रह्मर्षियों की	निबोध	१२.	सुनें
पत्नयः ।	६.	पत्नियां हैं	मे ॥	११.	मुझसे

श्लोकार्थ—जो कर्दम मुनि की कन्यायें बताई गई हैं, नौ ब्रह्मर्षियों की पत्नियाँ हैं । उनकी वंश परम्परा बता रहा हूँ, उसे मुझसे सुनें ॥

त्रयोदशः श्लोकः

पत्नी मरीचेस्तु कला सुषुवे कर्दमात्मजा ।
कश्यपं पूर्णिमानं च ययोरापूरितं जगत् ॥१३॥

पदच्छेद—

पत्नी मरीचेः तु कला सुषुवे कर्दम आत्मजा ।
कश्यपम् पूर्णिमानम् च ययोः आपूरितम् जगत् ॥

शब्दार्थ—

पत्नी	४.	धर्म पत्नी	कश्यपम्	६.	कश्यप
मरीचेः	३.	मरीचि ऋषि की	पूर्णमानम्	८.	पूर्णिमा नाम के पुत्रों को
तु	१.	उनमें	च	७.	और
कला	५.	कला ने	ययोः	१०.	जिन दोनों के वंश से
सुषुवे	९.	उत्पन्न किया	आपूरितम्	१२.	व्याप्त हो गया
कर्दम आत्मजा ।	२.	कर्दम मुनि की कन्या (और)	जगत् ॥	११.	संसार

श्लोकार्थ—उनमें कर्दम मुनि की कन्या और मरीचि ऋषि की धर्म पत्नी कला ने कश्यप और पूर्णिमा नाम के पुत्रों को उत्पन्न किया। जिन दोनों के वंश से संसार व्याप्त हो गया।

चतुर्दशः श्लोकः

पूर्णिमाऽसूत विरजं विश्वगं च परंतप ।
देवकुल्यां हरेः पादशौचाद्याऽभूत्सरिद्दिवः ॥१४॥

पदच्छेद—

पूर्णिमा असूत विरजम् विश्वगम् च परंतप ।
देवकुल्याम् हरेः पाद शौचात् या अभूत् सरित् दिवः ॥

शब्दार्थ—

पूर्णिमा	२.	पूर्णिमा ने	हरेः	९.	भगवान् विष्णु के
असूत	७.	उत्पन्न की	पाद्	१०.	चरणों के
विरजम्	३.	विरज	शौचात्	११.	धोवन से
विश्वगम्	५.	विश्वग (नाम के दो पुत्र)	या	८.	जो (दूसरे जन्म में)
च	४.	और	अभूत	१४.	प्रगट हुई
परंतप ।	१.	शत्रु तापन विदुर जी !	सरित्	१३.	नदी गंगा के रूप में
देवकुल्याम्	६.	देवकुल्या (नाम की कन्या)	दिवः ॥	१२.	देव

श्लोकार्थ—शत्रु तापन हे विदुर जी ! पूर्णिमा ने विरज और विश्वग नाम के दो पुत्र तथा देव कुल्या नाम की कन्या उत्पन्न की। जो दूसरे जन्म में भगवान् विष्णु के चरणों के धोवन से देव नदी गंगा के रूप में प्रगट हुई।

पञ्चदशः श्लोकः

अत्रेः पत्न्यनसूया त्रीञ्जज्ञे सुयशसः सुतान् ।
दत्तं दुर्वाससं सोममात्मेशब्रह्मसम्भवान् ॥१५॥

पदच्छेद—

अत्रेः पत्नी अनसूया त्रीन् जज्ञे सुयशसः सुतान् ।
दत्तम् दुर्वाससम् सोमम् आत्म ईश ब्रह्म सम्भवान् ॥

शब्दार्थ—

अत्रेः	१.	अत्रि ऋषि की	दत्तं	५.	दत्तात्रेय
पत्नी	२.	धर्म पत्नी	दुर्वाससम्	६.	दुर्वासा (और)
अनसूया	३.	अनुसूया से	सोमम्	७.	चन्द्रमा
त्रीन्	८.	तीन	आत्म	११.	विष्णु
जज्ञे	१०.	उत्पन्न हुये (जो क्रमशः)	ईश	१२.	रुद्र (और)
सुयशसः	४.	महान् कीर्ति वाले	ब्रह्म	१३.	ब्रह्मा जी के (अंश से)
सुतान् ।	९.	पुत्र	सम्भवान् ॥	१४.	प्रकट हुये थे

श्लोकार्थ—अत्रि ऋषि की धर्मपत्नी अनसूया से महान् कीर्ति वाले दत्तात्रेय, दुर्वासा और चन्द्रमा तीन पुत्र उत्पन्न हुये; जो क्रमशः विष्णु, रुद्र और ब्रह्मा जी के अंश से प्रकट हुये थे।

षोडशः श्लोकः

विदुर उवाच— अत्रेर्गृहे सुरश्रेष्ठाः स्थित्युत्पत्त्यन्तहेतवः ।
किञ्चिच्चिकीर्षवो जाता एतदाख्याहि मे गुरो ॥१६॥

पदच्छेद—

अत्रेः गृहे सुरश्रेष्ठाः स्थितिः उत्पत्ति अन्त हेतवः ।
किञ्चित् चिकीर्षवः जाताः एतद् आख्याहि मे गुरो ॥

शब्दार्थ—

अत्रेः	१२.	महर्षि अत्रि के	किञ्चित्	१०.	क्या
गृहे	१३.	घर	चिकीर्षवः	११.	करने की इच्छा से
सुरश्रेष्ठाः	९.	सर्वश्रेष्ठ देव	जाताः	१४.	उत्पन्न हुये थे
स्थितिः	५.	पालन	एतद्	३.	यह
उत्पत्ति	६.	जन्म (और)	आख्याहि	४.	बतावें (कि संसार के)
अन्त	७.	विनाश के	मे	२.	मुझे
हेतवः ।	८.	कारण	गुरो ॥	१.	हे गुरु जी !

श्लोकार्थ—हे गुरु जी ! मुझे यह बतावें कि संसार के पालन, जन्म, और विनाश के कारण सर्व श्रेष्ठ देव क्या करने की इच्छा से महर्षि अत्रि के घर उत्पन्न हुये थे।

सप्तदशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—ब्रह्मणा नोदितः सृष्टावत्रिर्ब्रह्मविदां वरः ।
सह पत्न्या ययावृक्षं कुलाद्रिं तपसि स्थितः ॥१७॥

पदच्छेद—

ब्रह्मणा नोदितः सृष्टौ अत्रिः ब्रह्म विदाम् वरः ।
सह पत्न्या ययौ ऋक्षम् कुलाद्रिम् तपसि स्थितः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मणा	५. ब्रह्मा जी से	सह	११. साथ
नोदितः	७. आदेश पाने पर	पत्न्या	१०. अपनी पत्नी के
सृष्टौ	६. सृष्टि करने का	ययौ	१४. चले गये
अत्रिः	४. महर्षि अत्रि	ऋक्षम्	१२. ऋक्ष नामक
ब्रह्म	१. ब्रह्म	कुलाद्रिम्	१३. कुल पर्वत पर
विदाम्	२. ज्ञानियों में	तपसि	८. तपस्या करने का
वरः ।	३. श्रेष्ठ	स्थितः ॥	९. संकल्प लेकर

श्लोकार्थ—ब्रह्म ज्ञानियों में श्रेष्ठ महर्षि अत्रि ब्रह्मा जी से सृष्टि करने का आदेश पाने पर तपस्या करने का संकल्प लेकर अपनी पत्नी के साथ ऋक्ष नामक कुलपर्वत पर चले गये।

अष्टदशः श्लोकः

तस्मिन् प्रसूनस्तबकपलाशाशोककानने ।
वार्भिः स्रवद्भिरुद्घुष्टे निर्विन्ध्यायाः समन्ततः ॥१८॥

पदच्छेद—

तस्मिन् प्रसून स्तबक पलाश अशोक कानने ।
वार्भिः स्रवद्भिः उद घुष्टे निर्विन्ध्यायाः समन्ततः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१. उस पर्वत पर	वार्भिः	९. जल की
प्रसून	२. पुष्पों के	स्रवद्भिः	८. बहते हुये
स्तबक	३. गुच्छों से लदे	उद घुष्टे	१०. कल-कल ध्वनि हो रही थी
पलाश	४. पलाश (और)	निर्विन्ध्यायाः	७. निर्विन्ध्या नदी के
अशोक कानने ।	५. अशोक वृक्षों के जंगल में	समन्ततः ॥	६. चारों ओर

श्लोकार्थ—उस पर्वत पर पुष्पों के गुच्छों से लदे पलाश और अशोक वृक्षों के जंगल में चारों ओर निर्विन्ध्या नदी के बहते हुये जल की कल-कल ध्वनि हो रही थी ।

एकोनविंशः श्लोकः

प्राणायामेन संयम्य मनो वर्षशतं मुनिः ।
अतिष्ठदेकपादेन निर्द्वन्द्वोऽनिलभोजनः ॥१९॥

पदच्छेद—

प्राणायामेन संयम्य मनः वर्ष शतम् मुनिः ।
अतिष्ठत् एक पादेन निर्द्वन्द्वः अनिल भोजनः ॥

शब्दार्थ—

प्राणायामेन	१.	प्राणायाम के द्वारा	अतिष्ठत्	१२.	खड़े रहे
संयम्य	३.	वश में करके	एक	१०.	एक
मनः	२.	मन को	पादेन	११.	पैर से
वर्ष	६.	वर्ष तक	निर्द्वन्द्वः	७.	सर्दी, गर्मी आदि द्वन्दों को सहते-हुये
शतम्	५.	एक सौ	अनिल	८.	वायु का
मुनिः ।	४.	महर्षि अत्रि	भोजनः ॥	९.	आहार करके

श्लोकार्थ—प्राणायाम के द्वारा मन को वश में करके महर्षि अत्रि एक सौ वर्ष तक सर्दी-गर्मी आदि द्वन्दों को सहते हुये वायु का आहार करके एक पैर से खड़े रहे ।

विंशः श्लोकः

शरणं तं प्रपद्येऽहं य एव जगदीश्वरः ।
प्रजामात्मसमां मह्यं प्रयच्छत्विति चिन्तयन् ॥२०॥

पदच्छेद—

शरणम् तम् प्रपद्ये अहम् यः एव जगदीश्वरः ।
प्रजाम् आत्म समाम् मह्यम् प्रयच्छतु इति चिन्तयन् ॥

शब्दार्थ—

शरणम्	८.	शरण	प्रजाम्	१३.	पुत्र
तम्	६.	उनकी	आत्म	११.	अपने
प्रपद्ये	९.	लेता हूँ (वे)	समाम्	१२.	समान
अहम्	५.	मैं	मह्यम्	१०.	मुझे
यः	३.	जो	प्रयच्छतु	१४.	प्रदान करें
एव	७.	ही	इति	१.	(उस समय वे) ऐसी
जगदीश्वरः ।	४.	जगत् के स्वामी हैं	चिन्तयन् ॥	२.	प्रार्थना कर रहे थे (कि)

श्लोकार्थ—उस समय वे ऐसी प्रार्थना कर रहे थे कि जो जगत् के स्वामी हैं । मैं उनकी ही शरण लेता हूँ; वे मुझे अपने समान पुत्र प्रदान करें ।

एकविंशः श्लोकः

तप्यमानं त्रिभुवनं प्राणायामैधसाग्निना ।
निर्गतेन मुनेर्मूर्ध्नः समीक्ष्य प्रभवस्त्रयः ॥२१॥

पदच्छेद—

तप्यमानम् त्रिभुवनम् प्राणायाम् एधसा अग्निना ।
निर्गतेन मुनेः मूर्ध्नः समीक्ष्य प्रभवः त्रयः ॥

शब्दार्थ—

तप्यमानम्	१०. जल रहे है		निर्गतेन	५. निकलते हुये
त्रिभुवनम्	९. तीनों लोक		मुनेः मूर्ध्नः	४. अत्रि ऋषि के मस्तक से
प्राणायाम्	६. प्राणायाम रूपी		समीक्ष्य	३. देखा (कि)
एधसा	७. इंधन से		प्रभवः	२. स्वामियों ने
अग्निना ।	८. प्रज्वलित तेज के द्वारा		त्रयः ॥	१. ब्रह्मा, विष्णु, और महेश तीनों

श्लोकार्थ—ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों स्वामियों ने देखा कि अत्रि ऋषि के मस्तक से निकलते हुये प्राणायाम रूपी इंधन से प्रज्वलित तेज के द्वारा तीनों लोक जल रहे है ।

द्वाविंशः श्लोकः

अप्सरोमुनिगन्धर्वसिद्धविद्याधरोरगैः ।
वितायमानयशसस्तदाश्रमपदं ययुः ॥२२॥

पदच्छेद—

अप्सरः मुनि गन्धर्व सिद्ध विद्याधर उरगैः ।
वितायमान यशसः तदा आश्रम पदम् ययुः ॥

शब्दार्थ—

अप्सरः	१. (जिस समय) अप्सरायें		वितायमान	८. गा रहे हैं
मुनि	२. मुनि		यशसः	७. उनके यश को
गन्धर्व	३. गन्धर्व		तदा	९. उस समय वे (तीनों देवता)
सिद्ध	४. सिद्ध		आश्रम	१०. उनके आश्रम
विद्याधर	५. विद्याधर (और)		पदम्	११. स्थान में
उरगैः ।	६. नाग		ययुः ॥	१२. पधारे

श्लोकार्थ—जिस समय अप्सरायें मुनि, गन्धर्व, सिद्ध, विद्याधर और नाग उनके यश को गा रहे हैं । उस समय वे तीनों देवता उनके आश्रम स्थान में पधारे ।

त्रयविंशः श्लोकः

तत्प्रादुर्भावसंयोगविद्योतितमना मुनिः ।
उत्तिष्ठन्नेकपादेन ददर्श विबुधर्षभान् ॥२३॥

पदच्छेद—

तत् प्रादुर्भाव संयोग विद्योतित मनाः मुनिः ।
उत्तिष्ठन् एक पादेन ददर्श विबुध ऋषभान् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	उन देवताओं के	उत्तिष्ठन्	६.	खड़े-खड़े ही
प्रादुर्भाव	२.	आगमन के	एक	७.	एक
संयोग	३.	प्रभाव से	पादेन	८.	पैर से
विद्योतित	५.	प्रकाशित हो गया	ददर्श	१२.	दर्शन किया
मनाः	४.	(उनका) अन्तः करण	विबुध	११.	देवों का
मुनिः ।	६.	अत्रि ऋषि ने	ऋषभान् ॥	१०.	उन श्रेष्ठ

श्लोकार्थ——उन देवताओं के आगमन के प्रभाव से उनका अन्तः करण प्रकाशित हो गया । अत्रि ऋषि ने एक पैर से खड़े-खड़े ही उन श्रेष्ठ देवों का दर्शन किया ।

चतुर्विंशः श्लोकः

प्रणम्य दण्डवद्भूमावुपतस्थेऽर्हणाञ्जलिः ।
वृषहंससुपर्णस्थान् स्वैः स्वैश्चिह्नैश्चचिह्नितान् ॥२४॥

पदच्छेद—

प्रणम्य दण्डवत् भूमौ उपतस्थे अर्हण अञ्जलिः ।
वृष हंस सुपर्ण स्थान् स्वैः स्वैः चिह्नैश्च चिह्नितान् ॥

शब्दार्थ—

प्रणम्य	३.	प्रणाम किया (और)	हंस	८.	हंस
दण्डवत्	२.	दण्ड के समान लोट कर	सुपर्ण	१०.	गरुड़ पर
भूमौ	१.	(उन्होंने) पृथ्वी पर	स्थान्	११.	स्थित थे (तथा)
उपतस्थे	६.	(उनकी) पूजा की	स्वैः स्वैः	१२.	अपने-अपने
अर्हण	५.	पूजन सामग्री लेकर	चिह्नैः	१३.	त्रिशूल आदि चिह्नों से
अञ्जलिः ।	४.	हाथ में	च	९.	और
वृष	७.	(वे देव अपने वाहन) बैल	चिह्नितान् ॥	१४.	युक्त थे

श्लोकार्थ——उन्होंने पृथ्वी पर दण्ड के समान लोट कर प्रणाम किया । और हाथ में पूजन सामग्री लेकर उनकी पूजा की । वे देव अपने-अपने वाहन बैल, हंस और गरुड़ पर स्थित थे । तथा अपने-अपने त्रिशूल आदि चिह्नों से युक्त थे ।

पञ्चविंशः श्लोकः

कृपावलोकेन हसद्वदनेनोपलम्भितान् ।
तद्रोचिषा प्रतिहते निमील्य मुनिरक्षिणी ॥२५॥

पदच्छेद—

कृपा अवलोकेन हसत् वदनेन उपलम्भितान् ।
तद् रोचिषा प्रतिहते निमील्य मुनिः अक्षिणी ॥

शब्दार्थ—

कृपा	२.	दया (और)	तद्	७.	उनके
अवलोकेन	१.	(उनकी) आँखों में	रोचिषा	८.	तेज से
हसत्	४.	मुसकान	प्रतिहते	९.	चका चौंध हुई
वदनेन	३.	मुख पर मधुर	निमील्य	११.	बन्दकरलीं
उपलम्भितान् ।	५.	झलक रही थी	मुनिः	६.	तदनन्तर अत्रिमुनि ने
			अक्षिणी ॥	१०.	अपनी आँखें

श्लोकार्थ—उनकी आँखों में दया और मुख पर मधुर मुसकान झलक रही थी। तदनन्तर अत्रि मुनि ने उनके तेज़ से चका चौंध हुई अपनी आँखें बन्द कर लीं।

षट्विंशः श्लोकः

चेतस्तत्प्रवणं युञ्जन्नस्तावीत्संहताञ्जलिः ।
श्लक्ष्णया सूक्तया वाचा सर्वलोकगरीयसः ॥२६॥

पदच्छेद—

चेतः तत् प्रवणम् युञ्जन् अस्तावीत् संहत अञ्जलिः ।
श्लक्ष्णया सूक्तया वाचा सर्वलोक गरीयसः ॥

शब्दार्थ—

चेतः	१.	अपने चित्त को	अञ्जलिः ।	५.	हाथ
तत्	२.	उन देवताओं की	श्लक्ष्णया	९.	सुन्दर (और)
प्रवणम्	३.	ओर	सूक्तया	१०.	मधुर
युञ्जन्	४.	लगा कर (तथा)	वाचा	११.	वाणी में
अस्तावीत्	१२.	स्तुति करने लगे	सर्वलोक	७.	सभी लोकों में
संहत	६.	जोड़ कर (अत्रि मुनि)	गरीयसः ॥	८.	सबसे बड़े (उन देवों की)

श्लोकार्थ—अपने चित्त को उन देवताओं की ओर लगाकर तथा हाथ जोड़कर अत्रि मुनि सभी लोकों में सबसे बड़े उन देवों की सुन्दर और मधुर वाणी में स्तुति करने लगे।

सप्तविंशः श्लोकः

अत्रिरुवाच—

विश्वोद्भवस्थितिलयेषु विभज्यमानैः मायागुणैरनुयुगं विगृहीतदेहाः ।
ते ब्रह्मविष्णु गिरिशाः प्रणतोऽस्म्यहं वस्तेभ्यः क एव भवतां य इहोपहूतः ॥२७॥

पदच्छेद—विश्व उद्भव स्थिति लयेषु विभज्यमानैः माया गुणैः अनुयुगम् विगृहीत देहाः ।
ते ब्रह्म विष्णु गिरिशाः प्रणतः अस्मि अहम्, वः तेभ्यः कः एव भवताम् य इह उपहूतः ॥

शब्दार्थ—

विश्व, उद्भव	४. जगत् की उत्पत्ति	ब्रह्म, विष्णु, गिरिशाः	१०. ब्रह्मा, विष्णु, और महादेव को
स्थिति, लयेषु	५. पालन और, संहार के लिये	प्रणतः, अस्मि	१२. प्रणाम, करता हूँ
विभज्यमानैः	३. विभाग करके	अहम्	११. मैं
माया, गुणैः	२. माया के सत्त्वादि गुणों का	वः	६. आप
अनुयुगम्	१. प्रत्येक कल्प में	तेभ्यः	१३. उन
विगृहीत	७. धारण करते हैं	कः एव	१५. वे कौन हैं (जिनकी)
देहाः ।	६. शरीर	भवताम्	१४. आप लोगों में
ते	८. उन	य इह उपहूतः ॥	१६-१७. मैंने यहाँ प्रार्थना की है

श्लोकार्थ—प्रत्येक कल्प में माया के सत्त्वादि गुणों का विभाग करके जगत् की उत्पत्ति, पालन और संहार के लिये शरीर धारण करते हैं। उन आप ब्रह्मा, विष्णु, महादेव को मैं प्रणाम करता हूँ। उन आप लोगों में वे कौन हैं जिनकी मैंने यहाँ प्रार्थना की है।

अष्टविंशः श्लोकः

एको मयेह भगवान् विबुधप्रधानैश्चित्तीकृतः प्रजननाय कथं नु यूयम् ।
अत्रागतास्तनुभृतां मनसोऽपि दूराद्, ब्रूत प्रसीदत महानिह विस्मयो मे ॥२८॥

पदच्छेद—एकः मया इह भगवान् विबुध प्रधानः, चित्तीकृतः प्रजननाय कथम् नु यूयम् ।
अत्र आगताः तनुभृताम् मनसः अपि दूरात्, ब्रूत प्रसीदत महान् इह विस्मयः मे ॥

शब्दार्थ—

एकः	४. एक ही	अत्र, आगताः	१०. यहाँ पधारे हैं
मया, इह	१. मैंने यहाँ	तनुभृताम्	११. शरीरधारियों के लिये (आप)
भगवान्	५. भगवान् का	मनसः अपि, दूरात्	१२-१३. मनसे भी दुर्लभ हैं
विबुध, प्रधानः	३. देवताओं में प्रधान	ब्रूत	१६. बतावें
चित्तीकृतः	६. चिन्तन किया है	प्रसीदत	१७. प्रसन्न हों (और)
प्रजननाय	२. पुत्र प्राप्ति के लिये	महान्	१५. बहुत बड़ा
कथम्	८. कैसे	इह	१८. इस विषय में
नु	७. फिर	विस्मयः	१६. आश्चर्य है (अतः आप लोग)
यूयम् ।	६. आप तीनों ही	मे ॥	१४. मुझे

श्लोकार्थ—मैंने यहाँ पुत्र प्राप्ति के लिये देवताओं में प्रधान एक ही भगवान् का चिन्तन किया है। फिर कैसे आप तीनों ही यहाँ पधारे हैं। शरीरधारियों के लिये आप मनसे भी दुर्लभ हैं। मुझे बहुत बड़ा आश्चर्य है; अतः आप लोग प्रसन्न हों और इस विषय में बतावें।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति तस्य वचः श्रुत्वा त्रयस्ते विबुधर्षभाः।
प्रत्याहुः श्लक्ष्णया वाचा प्रहस्य तमृषिं प्रभो ॥२९॥

पदच्छेद—

इति तस्य वचः श्रुत्वा त्रयः ते विबुध ऋषभाः।
प्रत्याहुः श्लक्ष्णया वाचा प्रहस्य तम् ऋषिम् प्रभोः ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	प्रत्याहुः	१४.	बोले
तस्य	३.	उन अत्रि मुनि के	श्लक्ष्णया	१२.	मधुर
वचः श्रुत्वा	४.	वचन को सुनकर	वाचा	१३.	वाणी में
त्रयः	६.	तीनों ही	प्रहस्य	९.	हँसकर
ते	५.	वे	तम्	१०.	उन
विबुध	८.	देव	ऋषिम्	११.	अत्रि ऋषि से
ऋषभाः।	७.	प्रधान	प्रभोः ॥	१.	हे विदुर जी !

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! इस प्रकार उन अत्रि मुनि के वचन को सुनकर वे तीनों ही प्रधान देव हँसकर उन अत्रि ऋषि से मधुर वाणी में बोले।

त्रिंशः श्लोकः

देवा ऊचुः—यथा कृतस्ते सङ्कल्पो भाव्यं तेनैव नान्यथा।
सत्सङ्कल्पस्य ते ब्रह्मन् यद्वै ध्यायति ते वयम् ॥३०॥

पदच्छेद—

यथा कृतः ते सङ्कल्पः भाव्यम् तेन एव न अन्यथा ।
सत् सङ्कल्पस्य ते ब्रह्मन् यद् वै ध्यायति ते वयम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	६.	जैसा	सत्	३.	सत्य
कृतः	८.	किया है	सङ्कल्पस्य	४.	संकल्प हैं
ते	५.	आपने	ते	२.	आप
सङ्कल्पः	७.	संकल्प	ब्रह्मन्	१.	हे मुनिवर !
भाव्यम्	११.	होना चाहिये	यद्	१४.	जिसका
तेन	९.	वैसा	वै	१७.	ही
एव	१०.	ही	ध्यायति	१५.	ध्यान किया है
न	१३.	नहीं हो सकता है (आपने)	ते	१६.	वे
अन्यथा।	१२.	उसके विपरीत	वयम् ॥	१८.	हम हैं

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! आप सत्य संकल्प हैं। आपने जैसा संकल्प किया है। वैसा ही होना चाहिये। उसके विपरीत नहीं हो सकता है। आपने जिसका ध्यान किया है वे ही हम हैं।

एकत्रिंशः श्लोकः

अथास्मदंशभूतास्ते आत्मजा लोकविश्रुताः ।
भवितारोऽङ्गभद्रं ते विस्रप्स्यन्ति च ते यशः ॥३१॥

पदच्छेद—

अथ अस्मत् अंशभूताः ते आत्मजाः लोक विश्रुताः ।
भवितारः अङ्ग भद्रम् ते विस्रप्स्यन्ति च ते यशः ॥

शब्दार्थ—

अथ	४.	अब	भवितारः	११.	होंगे
अस्मत्	५.	हमारे	अङ्ग	१.	हे मुनिवर !
अंशभूताः	६.	अंश से उत्पन्न हुये	भद्रम्	३.	कल्याण हो
ते	७.	आपके	ते	२.	आपका
आत्मजाः	८.	पुत्र	विस्रप्स्यन्ति	१४.	फैलायेंगे
लोक	९.	संसार में	च	१२.	और
विश्रुताः ।	१०.	विख्यात	ते यशः ॥	१३.	आपकी कीर्ति

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! आपका कल्याण हो, अब हमारे अंश से उत्पन्न हुये आपके पुत्र संसार में विख्यात होंगे । और आपकी कीर्ति फैलायेंगे ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

एवं कामवरं दत्त्वा प्रतिजग्मुः सुरेश्वराः ।
सभाजितास्तयोः सम्यग्दम्पत्योर्मिषतोस्ततः ॥३२॥

पदच्छेद—

एवम् काम वरम् दत्त्वा प्रतिजग्मुः सुरेश्वराः ।
सभाजिताः तयोः सम्यक् दम्पत्योः मिषतोः ततः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार (उनकी)	सभाजिताः	७.	पूजित होकर
काम	२.	कामना पूर्ति का	तयोः	५.	उन दोनों से
वरम्	३.	वरदान	सम्यक्	६.	भली भाँति
दत्त्वा	४.	देकर (तथा)	दम्पत्योः	९.	पति-पत्नी के
प्रतिजग्मुः	१२.	चले गये	मिषतोः	१०.	देखते-देखते
सुरेश्वराः ।	८.	(वे) देवाधि देव	ततः ॥	११.	वहाँ से

श्लोकार्थ—इस प्रकार उनकी कामना पूर्ति का वरदान देकर तथा उन दोनों से भली-भाँति पूजित होकर वे देवाधि देव पति-पत्नी के देखते-देखते वहाँ से चले गये ।

त्रयत्रिंशः श्लोकः

सोमो अभूद्ब्रह्मणोंऽशेन दत्तो विष्णोस्तु योगवित् ।
दुर्वासाः शंकरस्यांशो निबोधाङ्गिरसः प्रजाः ॥३३॥

पदच्छेद—

सोमः अभूत् ब्रह्मणः अंशेन दत्तः विष्णोः तु योगवित् ।
दुर्वासाः शंकरस्य अंशः निबोध अङ्गिरसः प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

सोमः	३.	चन्द्रमा	योगवित्	६.	योग शास्त्र के ज्ञाता
अभूत्	८.	उत्पन्न हुये	दुर्वासाः	९.	दुर्वासा ऋषि
ब्रह्मणः	१.	ब्रह्मा जी के	शंकरस्य	१०.	भगवान् शिव के
अंशेन	२.	अंश से	अंशः	११.	अंश थे (अब आप)
दत्तः	७.	दत्तात्रेय जी	निबोध	१४.	सुनें
विष्णोः	५.	भगवान् विष्णु के अंश से	अङ्गिरसः	१२.	अङ्गिरा ऋषि की
तु	४.	तथा	प्रजाः ॥	१३.	सन्तानों के विषय में

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के अंश से चन्द्रमा तथा भगवान् विष्णु के अंश से योग शास्त्र के ज्ञाता दत्ता त्रेय जी उत्पन्न हुये। दुर्वासा ऋषि भगवान् शिव के अंश थे। अब आप अङ्गिरा ऋषि की सन्तानों के विषय में सुनें।

चतुःत्रिंशः श्लोकः

श्रद्धा त्वङ्गिरसः पत्नी चतस्रोऽसूत कन्यकाः ।
सिनीवाली कुहू राका चतुर्थ्यनुमतिस्तथा ॥३४॥

पदच्छेद—

श्रद्धा तु अङ्गिरसः पत्नी चतस्रः असूत कन्यकाः ।
सिनी वाली कुहू राका चतुर्थ अनुमतिः तथा ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धा तु	२.	श्रद्धा नाम की	सिनी वाली	४.	सिनी वाली
अङ्गिरसः	१.	अङ्गिरा ऋषि की	कुहू	५.	कुहू
पत्नी	३.	पत्नी थीं (उन्होंने)	राका	६.	राका
चतस्रः	१०.	चार	चतुर्थ	८.	चौथी
असूत	१२.	उत्पन्न कीं	अनुमतिः	९.	अनुमति नाम की
कन्यकाः ।	११.	कन्यायें	तथा ॥	७.	तथा

श्लोकार्थ—अङ्गिरा ऋषि की श्रद्धा नाम की पत्नी थीं। उन्होंने सिनी वाली, कुहू, राका तथा चौथी अनुमति नाम की चार कन्यायें उत्पन्न कीं।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

तत्पुत्रावपरावास्तां ख्यातौ स्वरोचिषेऽन्तरे ।
उतथ्यो भगवान् साक्षाद्ब्रह्मिष्ठश्च बृहस्पतिः ॥३५॥

पदच्छेद—

तत् पुत्रौ अपरौ आस्ताम् ख्यातौ स्वरोचिषे अन्तरे ।
उतथ्यः भगवान् साक्षात् ब्रह्मिष्ठः च बृहस्पतिः ॥

शब्दार्थ—

तत्	२. उनके		उतथ्यः	६. उतथ्य
पुत्रौ	३. दो पुत्र		भगवान्	५. भगवान्
अपरौ	१. (इन कन्याओं के) अतिरिक्त		साक्षात्	४. स्वयम्
आस्ताम्	१३. हुये थे		ब्रह्मिष्ठः	८. ब्रह्मज्ञानी
ख्यातौ	१२. प्रसिद्ध		च	७. और
स्वरोचिषे	१०. स्वरोचिष		बृहस्पतिः ॥	९. बृहस्पति नाम के
अन्तरे ।	११. मन्वन्तर में			

श्लोकार्थ—इन कन्याओं के अतिरिक्त उनके दो पुत्र स्वयम् भगवान् उतथ्य और ब्रह्मज्ञानी बृहस्पति नाम के स्वरोचिष मन्वन्तर में प्रसिद्ध हुये थे ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

पुलस्त्योऽजनयत्पत्न्यामगस्त्यं च हविर्भुवि ।
सोऽन्यजन्मनि दह्राग्निर्विश्रवाश्च महातपाः ॥३६॥

पदच्छेद—

पुलस्त्यः अजनयत् पत्न्याम् अगस्त्यम् च हविर्भुवि ।
सः अन्य जन्मनि दह्राग्निः विश्रवाः च महा तपाः ॥

शब्दार्थ—

पुलस्त्यः	१. पुलस्त्य ऋषि ने		सः	१०. अगस्त्य जी
अजनयत्	८. जन्म दिया		अन्य जन्मनि	११. दूसरे जन्म में
पत्न्याम्	२. (अपनी) पत्नी		दह्राग्निः	१२. जठराग्नि नाम से (प्रसिद्ध हुये)
अगस्त्यम्	४. अगस्त्य		विश्रवाः	७. विश्रवा जी को
च	५. और		च	९. उनमें से
हविर्भुवि ।	३. हविर्भू से		महा तपाः ॥	६. महान् तपस्वी

श्लोकार्थ—पुलस्त्य ऋषि ने अपनी पत्नी हविर्भू से अगस्त्य और महान् तपस्वी विश्रवा जी को जन्म दिया । उनमें से अगस्त्य जी दूसरे जन्म में जठराग्नि नाम से प्रसिद्ध हुये ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तस्य यक्षपतिर्देवः कुबेरस्त्विडविडासुतः ।
रावणः कुम्भकर्णश्च तथान्यस्यां विभीषणः ॥३७॥

पदच्छेद—

तस्य यक्षपतिः देवः कुबेरः तु इडविडा सुतः ।
रावणः कुम्भकर्णः च तथा अन्यस्याम् विभीषणः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	५. उन विश्रवा जी की पत्नी	रावणः	११.	रावण
यक्षपतिः	२. यक्षराज	कुम्भकर्णः	१२.	कुम्भकर्ण
देवः	३. देवता	च	१३.	और
कुबेरः	४. कुबेर	तथा	८.	तथा (उनकी)
तु	१. तदनन्तर	अन्य	९.	दूसरी
इडविडा	६. इडविडा के	स्याम्	१०.	पत्नी से
सुतः ।	७. पुत्र कहलाये	विभीषणः ॥	१४.	विभीषण उत्पन्न हुये

श्लोकार्थ—तदनन्तर यक्षराज देवता कुबेर उन विश्रवा जी की पत्नी इडविडा के पुत्र कहलाये। तथा उनकी दूसरी पत्नी से रावण, कुम्भकर्ण और विभीषण उत्पन्न हुये ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

पुलहस्य गतिर्भार्या त्रीनसूत सती सुतान् ।
कर्मश्रेष्ठं वरीयांसं सहिष्णुं च महामते ॥३८॥

पदच्छेद—

पुलहस्य गतिः भार्या त्रीन् असूत सती सुतान् ।
कर्म श्रेष्ठम् वरीयांसं सहिष्णुम् च महामते ॥

शब्दार्थ—

पुलहस्य	२. पुलह ऋषि की	सुतान् ।	११.	पुत्र
गतिः	३. गति नाम की	कर्म श्रेष्ठम्	६.	कर्म श्रेष्ठ
भार्या	५. पत्नी ने	वरीयांसं	७.	वरीयान्
त्रीन्	१०. तीन	सहिष्णुम्	९.	सहिष्णु नाम के
असूत	१२. उत्पन्न किये	च	८.	और
सती	४. साध्वी	महामते ॥	१.	महान् बुद्धिमान हे विदुर जी

श्लोकार्थ—महान् बुद्धि मान हे विदुर जी ! पुलह ऋषि की गति नाम की साध्वी पत्नी ने कर्म श्रेष्ठ, वरीयान् और सहिष्णु नाम के तीन पुत्र उत्पन्न किये ।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

क्रतोरपि क्रिया भार्या वालखिल्यानसूयत ।
ऋषीन् षष्टिसहस्राणि ज्वलतो ब्रह्मतेजसा ॥३९॥

पदच्छेद—

क्रतोः अपि क्रिया भार्या वालखिल्यान् असूयत ।
ऋषीन् षष्टि सहस्राणि ज्वलतः ब्रह्म तेजसा ॥

शब्दार्थ—

क्रतोः	१.	क्रतु ऋषि की	ऋषीन्	११.	ऋषियों को
अपि	४.	भी	षष्टि	९.	साठ
क्रिया	२.	क्रिया नाम की	सहस्राणि	१०.	हजार
भार्या	३.	पत्नी ने	ज्वलतः	८.	देदीप्यमान
वालखिल्यान्	५.	वालखिल्यान नाम से	ब्रह्म	६.	ब्रह्म
असूयत ।	१२.	उत्पन्न किया	तेजसा	७.	तेज से

श्लोकार्थ—क्रतु ऋषि की क्रिया नाम की पत्नी ने भी वालखिल्यान नाम से ब्रह्म तेज से ददीप्यमान साठ हजार ऋषियों को उत्पन्न किया ।

चत्वारिंशः श्लोकः

ऊर्जायां जज्ञिरे पुत्रा वशिष्ठस्य परन्तप ।
चित्रकेतुप्रधानास्ते सप्त ब्रह्मर्षयोऽमलाः ॥४०॥

पदच्छेद—

ऊर्जायाम् जज्ञिरे पुत्राः वशिष्ठस्य परन्तप ।
चित्रकेतुः प्रधानाः ते सप्त ब्रह्मर्षयः अमलाः ॥

शब्दार्थ—

ऊर्जायाम्	३.	अरुन्धती से	चित्रकेतुः	४.	चित्रकेतु
जज्ञिरे	१०.	उत्पन्न हुये	प्रधानाः	५.	इत्यादि
पुत्राः	९.	पुत्र	ते	७.	वे
वसिष्ठस्य	२.	वशिष्ठ जी की पत्नी	सप्त ब्रह्मर्षयः	८.	सात ब्रह्मर्षि
परन्तप ।	१.	शत्रुतापन हे विदुर जी !	अमलाः ॥	६.	शुद्ध चित्त

श्लोकार्थ—शत्रु तापन हे विदुर जी ! वशिष्ठ जी की पत्नी अरुन्धती से चित्रकेतु इत्यादि शुद्ध चित्त वे सात ब्रह्मर्षि पुत्र उत्पन्न हुये ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

चित्रकेतुः सुरोचिश्च विरजा मित्र एव च ।
उल्वणो वसुभृद्यानो द्युमान् शक्त्यादयोऽपरे ॥४१॥

पदच्छेद—

चित्रकेतुः सुरोचिः च विरजा मित्र एव च ।
उल्वणः वसुभृद्यानः द्युमान् शक्ति आदयः अपरे ॥

शब्दार्थ—

चित्रकेतुः	१.	(उनके नाम हैं) चित्रकेतु	उल्वणः	५.	उल्वण
सुरोचिः	२.	सुरोचि	वसुभृद्यानः	७.	वसुभृद्यान्
च	६.	और	द्युमान्	८.	द्युमान्
विरजाः	३.	विरजा	शक्ति	११.	शक्ति
मित्रः	४.	मित्र	आदयः	१२.	इत्यादि पुत्र हुये
एव च ।	९.	तथा (उनकी)	अपरे ॥	१०.	दूसरी पत्नी से

श्लोकार्थ—उनके नाम हैं; चित्रकेतु, सुरोचि, विरजा, मित्र, उल्वण और वसुभृद्यान् तथा द्युमान तथा उनकी दूसरी पत्नी से शक्ति इत्यादि पुत्र हुये ।

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

चित्तिस्त्वथर्वणः पत्नी लेभे पुत्रं धृतव्रतम् ।
दध्यञ्चमश्वशिरसम् भृगोर्वंशम् निबोध मे ॥४२॥

पदच्छेद—

चित्तिः तु अथर्वणः पत्नी लेभे पुत्रम् धृतव्रतम् ।
दध्यञ्चम् अश्व शिरसम् भृगोः वंशम् निबोध मे ॥

शब्दार्थ—

चित्तिः	२.	चित्ति नाम की	दध्यञ्चम्	६.	दधीचिको
तु	८.	जिनका नाम	अश्व शिरसम्	९.	अश्व शिरा भी है
अथर्वणः	१.	अथर्वा ऋषि की	भृगोः	११.	भृगु ऋषि की
पत्नी	३.	भार्या ने	वंशम्	१२.	सन्तानों का
लेभे	७.	प्राप्त किया	निबोध	१३.	वर्णन सुनें
पुत्रम्	५.	पुत्र	मे ॥	१०.	(अब आप) मुझ से
धृतव्रतम् ।	४.	तपो निष्ठ			

श्लोकार्थ—अथर्वा ऋषि की चित्ति नाम की भार्या ने तपो निष्ठ पुत्र दधीचि को प्राप्त किया । जिनका नाम अश्व शिरा भी है । अब आप मुझसे भृगु ऋषि की सन्तानों का वर्णन सुनें ।

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

भृगुः ख्यात्यां महाभागः पत्न्यां पुत्रानजीजनत् ।
धातारं च विधातारं श्रियं च भगवत्पराम् ॥४३॥

पदच्छेद—

भृगुः ख्यात्याम् महाभागः पत्न्याम् पुत्रान् अजीजनत् ।
धातारम् च विधातारम् श्रियम् च भगवत् पराम् ॥

शब्दार्थ—

भृगुः	२.	भृगु ऋषि ने	धातारम्	५.	धाता
ख्यात्याम्	३.	ख्याति नाम की	च	६.	और
महाभागः	१.	महाभाग	विधातारम्	७.	विधाता नाम के
पत्न्याम्	४.	(अपनी) पत्नी से	श्रियम्	११.	श्री नाम की कन्या
पुत्रान्	८.	दो पुत्र	च	९.	तथा
अजीजनत् ।	१२.	उत्पन्न की	भगवत् पराम् ॥	१०.	भगवान में परायण

श्लोकार्थ—महाभाग भृग ऋषि ने ख्यातिनाम की अपनी पत्नी से धाता और विधाता नाम के दो पुत्र तथा भगवान् में परायण श्री नाम की कन्या उत्पन्न की ।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

आयतिं नियतिं चैव सुते मेरुस्तयोरदात् ।
ताभ्यां तयोरभवतां मृकण्डः प्राण एव च ॥४४॥

पदच्छेद—

आयतिम् नियतिम् च एव सुते मेरुः तयोः अदात् ।
ताभ्याम् तयोः अभवताम् मृकण्डः प्राण एव च ॥

शब्दार्थ—

आयतिम्	२.	अयति	ताभ्याम्	८.	उन दोनों से
नियतिम्	४.	नियति नाम की (अपनी)	तयोः	९.	उनके
च, एव	३.	और	अभवताम्	१४.	उत्पन्न हुये
सुते	५.	दो कन्यायें	मृकण्डः	१०.	मृकण्ड
मेरुः	१.	मेरु ऋषि ने	प्राण	१३.	प्राण नाम के पुत्र
तयोः	६.	उन दोनों से	एव	१२.	क्रमशः
अदात् ।	७.	ब्याहीं	च ॥	११.	और

श्लोकार्थ—मेरु ऋषि ने आयति और नियति नाम की अपनी दो कन्यायें उन दोनों से ब्याहीं । उन दोनों से उनके मृकण्ड और क्रमशः प्राण नाम के पुत्र उत्पन्न हुये ।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

मार्कण्डेयो मृकण्डस्य प्राणाद्वेद शिरामुनिः ।
कविश्च भार्गवो यस्य भगवानुशना सुतः ॥४५॥

पदच्छेद— मार्कण्डेयः मृकण्डस्य प्राणात् वेदशिराः मुनिः ।
कविः च भार्गवः यस्य भगवान् उशना सुतः ॥

शब्दार्थ—

मार्कण्डेयः	२.	मार्कण्डेय (तथा)	च	७.	एक पुत्र
मृकण्डस्य	१.	मृकण्ड ऋषि के	भार्गवः	६.	भृगु ऋषि के
प्राणात्	३.	प्राण ऋषि के	यस्य	९.	जिनके
वेदशिराः	५.	वेद शिरा (उत्पन्न हुये)	भगवान्	११.	भगवान्
मुनिः	४.	मुनिवर	उशना	१२.	उशना हैं
कविः	८.	कवि नाम के थे	सुतः ॥	१०.	पुत्र

श्लोकार्थ—मृकण्ड ऋषि के मार्कण्डेय तथा प्राण ऋषि के मुनिवर वेदशिरा उत्पन्न हुये। भृगु ऋषि के एक पुत्र कवि नाम के थे जिनके पुत्र भगवान् उशना हैं।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

त एते मुनयः क्षत्तर्लोकान्सर्गैरभावयन् ।
एष कर्दमदौहित्रसंतानः कथितस्तव ।
शृण्वतः श्रद्धानस्य सद्यः पापहरः परः ॥४६॥

पदच्छेद— ते एते मुनयः क्षत्तः लोकान् सर्गैः अभावयन् ।
एषः कर्दम दौहित्र सन्तानः कथितः तव ।
शृण्वतः श्रद्दधानस्य सद्यः पापहरः परः ॥

शब्दार्थ—

ते, एते	२.	पहले कहे गये इन	सन्तानः	११.	सन्तानों का
मुनयः	३.	मुनि जनों ने	कथितः	१२.	वर्णन किया
क्षत्तः	१.	हे विदुर जी !	तव ।	८.	आपसे (मैंने)
लोकान्	५.	सृष्टि का	शृण्वतः	१४.	श्रवण करने पर
सर्गैः	४.	अपनी सन्तानों से	श्रद्दधानस्य	१३.	श्रद्धा पूर्वक इसका
अभावयन् ।	६.	विस्तार किया	सद्यः	१६.	तत्काल
एषः	७.	इस प्रकार	पाप	१७.	पापों का
कर्दम	९.	कर्दम ऋषि के	हरः	१८.	नाश करता है
दौहित्र	१०.	दौहित्रों की	परः ॥	१५.	यह

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! पहले कहे गये इन मुनिजनों ने अपनी सन्तानों से सृष्टि का विस्तार किया। इस प्रकार आपसे मैंने कर्दम ऋषि के दौहित्रोंकी सन्तानों का वर्णन किया। श्रद्धा पूर्वक इसका श्रवण करने पर यह तत्काल पापों का नाश करता है।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

प्रसूतिं मानवीं दक्ष उपयेमे ह्यजात्मजः ।
तस्यां ससर्ज दुहितॄः षोडशामललोचनाः ॥४७॥

पदच्छेद—

प्रसूतिम् मानवीम् दक्षः उपयेमे हि अजात्मजः ।
तस्याम् ससर्ज दुहितॄः षोडश अमल लोचनाः ॥

शब्दार्थ—

प्रसूतिम्	४. प्रसूति नाम की	तस्याम्	७.	उनसे
मानवीम्	५. मनु पुत्री के साथ	ससर्ज	१२.	उत्पन्न कीं
दक्षः	२. दक्ष प्रजापति ने	दुहितॄः	११.	कन्यायें
उपयेमे	६. विवाह किया (तथा)	षोडश	१०.	सोलह
हि	३. ही	अमल	८.	सुन्दर
अजः, आत्मजः ।	१. ब्रह्मा जी के पुत्र	लोचनाः ॥	९.	नयनों वाली

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के पुत्र दक्ष प्रजापति ने ही प्रसूति नाम की मनु पुत्री के साथ विवाह किया। तथा उनसे सुन्दर नयनों वाली सोलह कन्यायें उत्पन्न कीं।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

त्रयोदशादाद्धर्माय तथैकामग्नये विभुः ।
पितृभ्य एकाम् युक्तेभ्यो भवायैकां भवच्छिदे ॥४८॥

पदच्छेद—

त्रयोदशः अदात् धर्माय तथा एकाम् अग्नये विभुः ।
पितृभ्यः एकाम् युक्तेभ्यः भवाय एकाम् भवच्छिदे ॥

शब्दार्थ—

त्रयोदशः	२.	तेरह कन्यायें	पितृभ्यः	७. पितरों को
अदात्	१२.	दी	एकाम्	५. एक कन्या
धर्माय	३.	धर्म को	युक्तेभ्यः	६. समस्त
तथा	८.	तथा	भवाय	११. भगवान् शंकर जी को
एकाम्, अग्नये	४.	एक कन्या, अग्नि को	एकाम्	९. एक कन्या
विभुः ।	१.	भगवान् दक्ष ने	भवच्छिदे ॥	१०. संसार का संहार करने वाले

श्लोकार्थ—भगवान् दक्ष ने तेरह कन्यायें धर्म को, एक कन्या अग्नि को, एक कन्या समस्त पितरों को तथा एक कन्या संसार का संहार करने वाले भगवान् शंकर जी को दी।

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

श्रद्धा मैत्री दया शान्तिस्तुष्टिः पुष्टिः क्रियोन्नतिः ।
बुद्धिर्मेधा तितिक्षा ह्रीर्मूर्तिर्धर्मस्य पत्नयः ॥४६॥

पदच्छेद—

श्रद्धा मैत्री दया शान्तिः तुष्टिः पुष्टिः क्रिया उन्नतिः ।
बुद्धिः मेधा तितिक्षा ह्रीः मूर्तिः धर्मस्य पत्नयः ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धा	१. श्रद्धा		बुद्धिः	९. बुद्धि
मैत्री	२. मैत्री		मेधा	१०. मेधा
दया	३. दया		तितिक्षा	११. तितिक्षा
शान्तिः	४. शान्ति		ह्रीः	१२. लज्जा (और)
तुष्टिः	५. तुष्टि		मूर्तिः	१३. मूर्ति
पुष्टिः	६. पुष्टि		धर्मस्य	१४. ये धर्म की
क्रिया	७. क्रिया		पत्नयः ॥	१५. पत्नियाँ हैं
उन्नतिः ।	८. उन्नति			

श्लोकार्थ—श्रद्धा, मैत्री, दया, शान्ति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, लज्जा और मूर्ति ये धर्म की पत्नियाँ हैं ।

पञ्चाशः श्लोकः

श्रद्धासूत शुभं मैत्री प्रसादमभयं दया ।
शान्तिः सुखं मुदं तुष्टिः स्मयं पुष्टिरसूयत ॥५०॥

पदच्छेद—

श्रद्धा असूत शुभम् मैत्री प्रसादम् अभयम् दया ।
शान्तिः सुखम् मुदम् तुष्टिः स्मयम् पुष्टिः असूयत ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धा	१. श्रद्धा ने		शान्तिः	८. शान्ति ने
असूत	७. जन्म दिया (तथा)		सुखम्	९. सुख को
शुभम्	२. शुभ को		मुदम्	११. मोद को (और)
मैत्री	३. मैत्री ने		तुष्टिः	१०. तुष्टि ने
प्रसादम्	४. प्रसन्नता को		स्मयम्	१३. अभिमान को
अभयम्	६. अभय को		पुष्टिः	१२. पुष्टि ने
दया ।	५. दया ने		असूयत ॥	१४. उत्पन्न किया

श्लोकार्थ—श्रद्धा ने शुभ को, मैत्री ने प्रसन्नता को, दया ने अभय को जन्म दिया । तथा शान्ति ने सुख को, तुष्टि ने मोद को और पुष्टि ने अभिमान को उत्पन्न किया ।

एकपञ्चाशः श्लोकः

योगं क्रियोन्नतिर्दर्पमर्थं बुद्धिरसूयत ।
मेधा स्मृतिं तितिक्षा तु क्षेमं ह्रीः प्रश्रयं सुतम् ॥५१॥

पदच्छेद—

योगम् क्रिया उन्नतिः दर्पम् अर्थम् बुद्धिः असूयत ।
मेधा स्मृति तितिक्षा तु क्षेमम् ह्रीः प्रश्रयम् सुतम् ॥

शब्दार्थ—

योगम्	२. योग को	मेधा	७. मेधा ने
क्रिया	१. क्रिया ने	स्मृति	८. स्मृति को
उन्नतिः	३. उन्नति ने	तितिक्षा	९. तितिक्षा ने
दर्पम्	४. घमण्ड को	तु	११. तथा
अर्थम्	६. अर्थ को	क्षेमम्	१०. क्षेम को
बुद्धिः	५. बुद्धि ने	ह्रीः	१२. लज्जा ने
असूयत ।	१५. उत्पन्न किया	प्रश्रयम्	१३. विनय नाम के
		सुतम् ॥	१४. पुत्र को

श्लोकार्थ—क्रिया ने योग को, उन्नति ने घमण्ड को, बुद्धि ने अर्थ को, मेधा ने स्मृति को, तितिक्षा ने क्षेम को तथा लज्जा ने विनय नाम के पुत्र को उत्पन्न किया ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

मूर्तिः सर्वगुणोत्पत्तिर्नरनारायणावृषी ॥५२॥

पदच्छेद—

मूर्तिः सर्व गुण उत्पत्तिः ।
नर नारायणौ ऋषी ॥

शब्दार्थ—

मूर्तिः	४. मूर्ति देवी ने	नर	५. न (और)
सर्व	१. सभी	नारायणौ	६. नारायण
गुण	२. गुणों की	ऋषी ॥	७. ऋषियों को (उत्पन्न किया)
उत्पत्तिः ।	३. खान		

श्लोकार्थ—सभी गुणों की खान मूर्ति देवी ने नर और नारायण ऋषियों को उत्पन्न किया ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

ययोर्जन्मन्यदो विश्वमभ्यनन्दत्सुनिर्वृतम् ।
मनांसि ककुभो वाताः प्रसेदुः सरितोऽद्रयः ॥५३॥

पदच्छेद—

ययोः जन्मनि अदः विश्वम् अभ्यनन्दत् सुनिर्वृतम् ।
मनांसि ककुभः वाताः प्रसेदुः सरितः अद्रयः ॥

शब्दार्थ—

ययोः	१. जिन दोनों के	मनांसि	७. (लोगों के) मन
जन्मनि	२. जन्म लेने पर	ककुभः	८. दिशायें
अदः	३. यह सम्पूर्ण	वाताः	९. वायु
विश्वम्	४. संसार	प्रसेदुः	१२. प्रसन्न हो गये
अभ्यनन्दत्	६. अभिनन्दन करने लगा	सरितः	१०. नदियाँ (और)
सुनिर्वृतम् ।	५. आनन्दित होकर	अद्रयः ॥	११. पर्वत

श्लोकार्थ—जिन दोनों के जन्म लेने पर यह सम्पूर्ण संसार आनन्दित होकर अभिनन्दन करने लगा तथा लोगों के मन, दिशायें, वायु, नदियाँ और पर्वत प्रसन्न हो गये ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

दिव्यवाद्यन्त तूर्याणि पेतुः कुसुमवृष्टयः ।
मुनयस्तुष्टुवुस्तुष्टा जगुर्गन्धर्वकिन्नराः ॥५४॥

पदच्छेद—

दिवि अवाद्यन्त तूर्याणि पेतुः कुसुम वृष्टयः ।
मुनयः तुष्टुवुः तुष्टाः जगुः गन्धर्व किन्नराः ॥

शब्दार्थ—

दिवि	१. आकाश में	मुनयः	७. मुनिजन
अवाद्यन्त	३. बजने लगे	तुष्टुवुः	९. स्तुति करने लगे (और)
तूर्याणि	२. बाजे	तुष्टाः	८. प्रसन्न होकर
पेतुः	६. होने लगी	जगुः	१२. गाने लगे
कुसुम	४. पुष्पों की	गन्धर्व	१०. गन्धर्व (तथा)
वृष्टयः ।	५. वर्षा	किन्नराः ॥	११. किन्नर

श्लोकार्थ—आकाश में बाजे बजने लगे, पुष्पों की वर्षा होने लगी, मुनिजन प्रसन्न होकर स्तुति करने लगे और गन्धर्व तथा किन्नर गाने लगे ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

नृत्यन्ति स्म स्त्रियो देव्य आसीत्परममङ्गलम् ।
देवा ब्रह्मादयः सर्वे उपतस्थुरभिष्टवैः ॥५५॥

पदच्छेद—

नृत्यन्ति स्म स्त्रियः देव्यः आसीत् परम मङ्गलम् ।
देवा ब्रह्म आदयः सर्वे उपतस्थुः अभिष्टवैः ॥

शब्दार्थ—

नृत्यन्ति स्म	३.	नाचने लगीं	देवाः	१०.	देवगण
स्त्रियः	२.	अप्सरायें	ब्रह्म	७.	ब्रह्मा
देव्यः	१.	देवलोक की	आदयः	८.	इत्यादि
आसीत्	६.	छा गया (और)	सर्वे	९.	सभी
परम	४.	महान्	उपतस्थुः	१२.	स्तुति करने लगे
मङ्गलम् ।	५.	आनन्द	अभिष्टवैः ।	११.	स्तोत्रों से (उनकी)

श्लोकार्थ—सभी देव लोक की अप्सरायें नाचने लगीं, महान् आनन्द छा गया और ब्रह्मा इत्यादि सभी देवगण स्तोत्रों से उनकी स्तुति करने लगे ।

षट्पञ्चाशः श्लोकः

यो मायया विरचितं निजयाऽऽत्मनीदं खे रूपभेदमिव तत्प्रतिचक्षणाय ।
एतेन धर्मसदने ऋषिमूर्तिनाद्य प्रादुश्चकार पुरुषाय नमः परस्मै ॥५६॥

पदच्छेद—

यः मायया विरचितम् निजया आत्मनि इदम् खे रूप भेदम् इव तत् प्रतिचक्षणाय ।
एतेन धर्मसदने ऋषिमूर्तिना अद्य प्रादुश्चकार पुरुषाय नमः परस्मै ॥

शब्दार्थ—

यः	५.	(उसी तरह) जिन्होंने	तत्	११.	उसे
मायया	७.	माया से	प्रतिचक्षणाय ।	१२.	प्रकाशित करने के लिये
विरचितम्	१०.	रचा है (तथा)	एतेन	१५.	इस
निजया	६.	अपनी	धर्मसदने	१४.	धर्मराज के घर में
आत्मनि	८.	आत्मा में	ऋषिमूर्तिना	१६.	ऋषि के रूप में (अपने को)
इदम्,	९.	इस जगत को	अद्य	१३.	इस समय
खे	२.	आकाश में	प्रादुश्चकार	१७.	प्रकट किया है (उस)
रूप	४.	स्वरूप बनते हैं	पुरुषाय	१९.	पुरुष को
भेदम्	३.	अनेकों प्रकार के	नमः	२०.	नमस्कार है
इव	१.	जैसे	परस्मै ॥	१८.	परम

श्लोकार्थ—जैसे आकाश में अनेकों प्रकार के स्वरूप बनते हैं; उसी तरह जिन्होंने अपनी माया से अपनी आत्मा में इस जगत् को रचा है तथा उसे प्रकाशित करने के लिये इस समय धर्मराज के घर में इस ऋषिरूप में अपने को प्रकट किया है, उस परम पुरुष को नमस्कार है ।।

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

सोऽयं स्थितिव्यतिकरोपशमाय सृष्टान् सत्त्वेन नः सुरगणाननुमेयतत्त्वः ।
दृश्याददभ्रकरुणेन विलोकनेन यच्छ्रीनिकेतममलं क्षिपतारविन्दम् ॥५७॥

पदच्छेद—

स: अयम् स्थिति व्यतिकर उपशमाय सृष्टान्, सत्त्वेन नः सुरगणान् अनुमेय तत्त्वः ॥
दृश्यात् अदभ्र करुणेन विलोकनेन, यत् श्रीः निकेतम् अमलम् क्षिपता अरविन्दम् ॥

शब्दार्थ—

सः अयम्	३.	उन्हीं भगवान् ने	दृश्यात्	१८.	हमारी ओर निहारें
स्थिति	४.	संसार की मर्यादा में	अदभ्र	१०.	(वे भगवान्) अपार
व्यतिकर	५.	उपद्रव की	करुणेन	११.	करुणामय
उपशमाय	६.	शान्ति के लिये	विलोकनेन,	१२.	नेत्रों से
सृष्टान्,	९.	बनाया है	यत्, श्रीः	१३.	जो शोभा के
सत्त्वेन	८.	सत्त्वगुण से	निकेतम्	१४.	धाम
नः सुरगणान्	७.	हम देवताओं को	अमलम्	१५.	निर्मल, दिव्य
अनुमेय	२.	अनुमान से जाना जा सकता है	क्षिपता	१७.	नीचे कर देते हैं
तत्त्वः ।	१.	जिनका स्वरूप	अरविन्दम् ॥	१६.	कमल को भी

श्लोकार्थ—जिनका स्वरूप अनुमान से जाना जा सकता है; उन्हीं भगवान् ने संसार की मर्यादा में उपद्रव की शान्ति के लिये हम देवताओं को सत्त्वगुण से बनाया है। वे भगवान् अपार करुणामय नेत्रों से, जो शोभा के धाम, निर्मल दिव्य कमल को भी नीचे कर देते हैं, हमारी ओर निहारें ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

एवं सुरगणैस्तात भगवन्तावभिष्टुतौ ।
लब्धावलोकैर्ययतुरर्चितौ गन्धमादनम् ॥५८॥

पदच्छेद—

एवम् सुर गणैः तात भगवन्तौ अभिष्टुतौ ।
लब्ध अवलोकैः ययतुः अर्चितौ गन्धमादनम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	५.	इस प्रकार	लब्ध	३.	पाकर
सुरगणैः	४.	देवताओं ने	अवलोकैः	२.	प्रभु के दर्शन
तात	१.	हे प्यारे विदुर जी !	ययतुः	१०.	चले गये
भगवन्तौ	६.	भगवान् नर नारायण की	अर्चितौ	८.	पूजा की (तदनन्तर वे दोनों ऋषि)
अभिष्टुतौ ।	७.	स्तुति करके	गन्धमादनम् ॥	९.	गन्धमादन पर्वत पर

श्लोकार्थ—हे प्यारे विदुर जी ! प्रभु के दर्शन पाकर देवताओं ने इस प्रकार भगवान् नर नारायण की स्तुति करके पूजा की। तदनन्तर वे दोनों ऋषि गन्धमादन पर्वत पर चले गये ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

ताविमौ वै भगवतो हरेरंशाविहागतौ ।
भारव्ययाय च भुवः कृष्णौ यदुकुरूद्वहौ ॥५९॥

पदच्छेद—

तौ इमौ वै भगवतः हरेः अंशौ इह आगतौ ।
भार व्ययाय च भुवः कृष्णौ यदु कुरु उद्वहौ ॥

शब्दार्थ—

तौ	४.	वे (नर-नारायण)	भार	८.	भार
इमौ	५.	दोनों	व्ययाय	९.	दूर करने के लिये
वै	६.	ही	च	११.	और
भगवतः	१.	भगवान्	भुवः	७.	पृथ्वी का
हरेः	२.	श्री हरि के	कृष्णौ	१४.	कृष्ण, अर्जुन के रूप में
अंशौ	३.	अंशभूत	यदु	१०.	यदुवंश
इह	१५.	यहाँ	कुरु	१२.	कुरुवंश को
आगतौ ।	१६.	प्रकट हुये हैं	उद्वहौ ॥	१३.	धारण करने वाले

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के अंशभूत वे नर-नारायण दोनों ही पृथ्वी का भार दूर-करने के लिये यदुवंश और कुरुवंश को धारण करने वाले कृष्ण, अर्जुन के रूप में यहाँ प्रकट हुये हैं ॥

षष्टितमः श्लोकः

स्वाहाभिमानिनश्चाग्नेरात्मजांस्त्रीनजीजनत् ।
पावकं पवमानं च शुचिं च हुतभोजनम् ॥६०॥

पदच्छेद—

स्वाहा अभिमानिनः च अग्नेः आत्मजान् त्रीन् अजीजनत् ।
पावकम् पवमानम् च शुचिम् च हुत भोजनम् ॥

शब्दार्थ—

स्वाहा	३.	स्वाहा ने	पावकम्	४.	पावक
अभिमानिनः	९.	अभिमानी	पवमानम्	५.	पवमान
च	१.	तथा	च	६.	और
अग्नेः	२.	अग्नि की पत्नी	शुचिम्	७.	शुचि नाम के
आत्मजान्	१०.	पुत्रों को	च	१०.	जिनका
त्रीन्	८.	तीन	हुत	१३.	हवन किया हुआ पदार्थ ही
अजीजनत् ।	११.	उत्पन्न किया	भोजनम् ॥	१४.	भोजन है

श्लोकार्थ—तथा अग्नि की पत्नी स्वाहा ने पावक, पवमान और शुचि नाम के तीन अभिमानी पुत्रों को उत्पन्न किया, जिनका हवन किया हुआ पदार्थ ही भोजन है ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

तेभ्योऽग्नयः समभवन् चत्वारिंशच्च पञ्च च।
त एवैकोनपञ्चाशत्साकं पितृपितामहैः ॥६१॥

पदच्छेद—

तेभ्यः अग्नयः समभवन् चत्वारिंशत् च पञ्च च।
ते एव एकोन पञ्चाशत् साकम् पितृ पितामहैः ॥

शब्दार्थ—

तेभ्यः	१.	उन तीनों से	ते	७.	वे
अग्नयः	४.	अग्नियाँ	एव	८.	ही
समभवन्	५.	उत्पन्न हुईं	एकोनपञ्चाशत्	१२.	उनचास (अग्नि कहलाये)
चत्वारिंशत् च	२.	चालीस और	साकम्	११.	साथ (मिलकर)
पञ्च	३.	पाँच (पैंतालीस)	पितृ	९.	तीन पिता (और)
च।	६.	तथा	पितामहैः ॥	१०.	एक पितामह के

श्लोकार्थ—उन तीनों से चालीस और पाँच पैंतालीस अग्नियाँ उत्पन्न हुईं; तथा वे ही तीन पिता और एक पितामह के साथ मिलकर उनचास अग्नि कहालाये।

द्वाषष्टितमः श्लोकः

वैतानिके कर्मणि यन्नामभिर्ब्रह्मवादिभिः।
आग्नेय्य इष्टयो यज्ञे निरूप्यन्तेऽग्नयस्तु ते ॥६२॥

पदच्छेद—

वैतानिके कर्मणि यत् नामभिः ब्रह्म वादिभिः।
आग्नेय्यः इष्टयः यज्ञे निरूप्यन्ते अग्नयः तु ते ॥

शब्दार्थ—

वैतानिके	३.	वैदिक यज्ञ के	आग्नेय्यः	८.	आग्नेयी
कर्मणि	४.	अनुष्ठान में	इष्टयो	९.	इष्टिय ोंका
यत्	५.	जिनके	यज्ञे	७.	यज्ञ में
नामभिः	६.	नामों से	निरूप्यन्ते	१०.	निरूपण करते हैं
ब्रह्म	१.	वेद के	अग्नयः	१३.	अग्नि हैं
वादिभिः।	२.	ज्ञाता विद्वान्	तु	१२.	यही
			ते ॥	११.	वे

श्लोकार्थ—वेद के ज्ञाता विद्वान् वैदिक यज्ञ के अनुष्ठान में जिनके नामों से यज्ञ में आग्नेयी इष्टियों का निरूपण करते हैं; वे यही अग्नि हैं ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

अग्निष्वात्ता बर्हिषदः सौम्याः पितर आज्यपाः ।
साग्नयोऽनग्नयस्तेषां पत्नी दाक्षायणी स्वधा ॥६३॥

पदच्छेद—

अग्निष्वात्ताः बर्हिषदः सौम्याः पितरः आज्यपाः ।
साग्नयः अनग्नयः तेषाम् पत्नी दाक्षायणी स्वधा ॥

शब्दार्थ—

अग्निष्वात्ताः	१. अग्निष्वात्त		साग्नयः	६. साग्निक (और)
बर्हिषदः	२. बर्हिषद		अनग्नयः	७. निरग्निक (दो प्रकार के हैं)
सौम्याः	३. सोमपान करने वाले (और)		तेषाम्	८. उन सबकी
पितरः	५. पितर		पत्नी	११. एक ही पत्नी है
आज्यपाः ।	४. घृत-पान करने वाले		दाक्षायणी	९. दक्ष की पुत्री
			स्वधा ॥	१०. स्वधा

श्लोकार्थ—अग्निष्वात्त बर्हिषद् सोमपान करने वाले और घृत-पान करने वाले पितर साग्निक और निरग्निक दो प्रकार के हैं। उन सबकी दक्ष की पुत्री स्वधा एक ही पत्नी है ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

तेभ्यो दधार कन्ये द्वे वयुनां धारिणीं स्वधा ।
उभे ते ब्रह्मवादिन्यौ ज्ञानविज्ञानपारगे ॥६४॥

पदच्छेद—

तेभ्यः दधार कन्ये द्वे वयुनाम् धारिणीम् स्वधा ।
उभे ते ब्रह्म वादिन्यौ ज्ञान विज्ञान पारगे ॥

शब्दार्थ—

तेभ्यः	२. उन पितरों से		उभे	९. दोनों
दधार	७. उत्पन्न की		ते	८. वे
कन्ये	६. कन्यायें		ब्रह्मवादिन्यौ	१३. वेद का (उपदेश करती थीं)
द्वे	५. दो		ज्ञान	१०. शास्त्र ज्ञान (और)
वयुनाम्	३. वयुना (और)		विज्ञान	११. आत्म ज्ञान में
धारिणीम्	४. धारिणी नाम की		पारगे ॥	१२. पारंगत थीं (तथा)
स्वधा ।	१. स्वधा ने			

श्लोकार्थ—स्वधा ने उन पितरों से वयुना और धारिणी नाम की दो कन्यायें उत्पन्न कीं। वे दोनों शास्त्र ज्ञान और आत्म ज्ञान में पारंगत थीं ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

भवस्य पत्नी तु सती भवं देवमनुव्रता ।
आत्मनः सदृशं पुत्रं न लेभे गुणशीलतः ॥६५॥

पदच्छेद—

भवस्य पत्नी तु सती भवम् देवम् अनुव्रता ।
आत्मनः सदृशम् पुत्रम् न लेभे गुण शीलतः ॥

शब्दार्थ—

भवस्य	१. महादेव की		आत्मनः	८.	उन्हें
पत्नी	४. भार्या थीं (वह)		सदृशम्	११.	समान
तु	२. जो		पुत्रम्	१२.	कोई पुत्र
सती	३. सती नाम की		न	१३.	नहीं
भवम्	६. शिव की		लेभे	१४.	प्राप्त हुआ
देवम्	५. भगवान्		गुण	९.	गुण (और)
अनुव्रता ।	७. सेवा में लगी रहती थीं		शीलतः ॥	१०.	स्वभाव में अपने

श्लोकार्थ—महादेव की जो सती नाम की भार्या थीं; वह भगवान् शिव की सेवा में लगीं रहती थीं। उन्हें गुण और स्वभाव में अपने समान कोई पुत्र नहीं प्राप्त हुआ ॥

षट्षष्टितमः श्लोकः

पितर्यप्रतिरूपे स्वे भवायानागसे रुषा ।
अप्रौढैवात्मनाऽऽत्मानमजहाद्योगसंयुता ॥६६॥

पदच्छेद—

पितरि अप्रतिरूपे स्वे भवाय अनागसे रुषा ।
अप्रौढा एव आत्मना आत्मानम् अजहात् योग संयुता ॥

शब्दार्थ—

पितरि	४. पिता दक्ष प्रजापति के		अप्रौढा	७.	उन्होंने युवावस्था में
अप्रतिरूपे	५. प्रतिकूल रहने से		एव	८.	ही
स्वे	३. अपने		आत्मना	१०.	स्वयम्
भवाय	२. शंकर जी के प्रति		आत्मानम्	११.	अपना शरीर
अनागसे	१. निरपराध		अजहात्	१२.	त्याग दिया
रुषा ।	६. क्रोध के कारण		योग संयुता ॥	९.	योग का, आश्रय लेकर

श्लोकार्थ—निरपराध शंकर जी के प्रति अपने पिता दक्ष प्रजापति के प्रतिकूल रहने से क्रोध के कारण उन्होंने युवावस्था में ही योग का आश्रय लेकर स्वयम् अपना शरीर त्याग दिया ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे
विदुरमैत्रेयसंवादे प्रथमः अध्यायः समाप्तः ॥१॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

द्वितीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

विदुर उवाच—भवे शीलवतां श्रेष्ठे दक्षो दुहितृवत्सलः ।
विद्वेषमकरोत्कस्मादनादृत्यात्मजां सतीम् ॥१॥

पदच्छेद—

भवे शीलवताम् श्रेष्ठे दक्षः दुहितृ वत्सलः ।
विद्वेषम् अकरोत् कस्मात् अनादृत्य आत्मजाम् सतीम् ॥

शब्दार्थ—

भवे	९.	भगवान् शंकर जी से	विद्वेषम्	११.	वैर
शीलवताम्	७.	विनयी लोगों से	अकरोत्	१२.	किया
श्रेष्ठे	८.	सबसे बड़े	कस्मात्	१०.	क्यों
दक्षः	३.	प्रजापति दक्ष ने	अनादृत्य	६.	अनादर करके
दुहितृ	१.	अपनी पुत्रियों पर	आत्मजाम्	४.	अपनी पुत्री
वत्सलः ।	२.	स्नेह रखने वाले	सतीम्	५.	सती का

श्लोकार्थ—अपनी पुत्रियों पर स्नेह रखने वाले प्रजापति दक्ष ने अपनी पुत्री सती का अनादर करके विनयी लोगों में सबसे बड़े भगवान् शंकर जी से क्यों वैर किया ॥

द्वितीयः श्लोकः

कस्तं चराचरगुरुं निर्वैरं शान्तविग्रहम् ।
आत्मारामं कथं द्वेष्टि जगतो दैवतं महत् ॥२॥

पदच्छेद—

कः तम् चराचर गुरुम् निर्वैरम् शान्त विग्रहम् ।
आत्मा आरामम् कथम् द्वेष्टि जगतः दैवतम् महत् ॥

शब्दार्थ—

कः	१२.	कोई	आत्मा	६.	अपने में ही
तम्	११.	उन भगवान् शंकर से	आरामम्	७.	सन्तुष्ट (रहने वाले तथा)
चराचर	१.	चेतन और अचेतन के	कथम्	१३.	क्यों
गुरुम्	२.	प्रकाशक	द्वेष्टि	१४.	वैर करेगा
निर्वैरम्	३.	वैर-भाव से रहित	जगतः	८.	संसार के
शान्त	४.	शान्त	दैवतम्	१०.	आराध्यदेव
विग्रहम् ।	५.	मूर्ति	महत् ॥	९.	परम

श्लोकार्थ—चेतन और अचेतन के प्रकाशक, वैर-भाव से रहित, शान्त मूर्ति, अपने में ही सन्तुष्ट रहने वाले तथा संसार के परम आराध्यदेव उन भगवान् शंकर से कोई क्यों वैर करेगा ॥

तृतीयः श्लोकः

एतदाख्याहि मे ब्रह्मन् जामातुः श्वशुरस्य च ।
विद्वेषस्तु यतः प्राणांस्तत्यजे दुस्त्यजान्सती ॥३॥

पदच्छेद—

एतद् आख्याहि मे ब्रह्मन् जामातुः श्वशुरस्य च ।
विद्वेषः तु यतः प्राणान् तत्यजे दुस्त्यजान् सती ॥

शब्दार्थ—

एतद्	३.	यह कथा	विद्वेषः	९.	विरोध हुआ
आख्याहि	४.	बतावें	तु	१०.	तथा
मे	२.	मुझे	यतः	५.	जिसके कारण
ब्रह्मन्	१.	हे भगवन् !	प्राणान्	१३.	प्राणों को (भी)
जामातुः	८.	दामाद का	तत्यजे	१४.	त्याग दिया
श्वशुरस्य	६.	ससुर	दुस्त्यजान्	१२.	नहीं त्यागने योग्य
च ।	७.	और	सती ॥	११.	सती ने

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! मुझे यह कथा बतावें जिसके कारण ससुर और दामाद का विरोध हुआ । तथा सती ने नहीं त्यागने योग्य प्राणों को भी त्याग दिया ॥

चतुर्थः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—पुरा विश्वसृजां सत्रे समेताः परमर्षयः ।
तथामरगणाः सर्वे सानुगा मुनयोऽग्नयः ॥४॥

पदच्छेद—

पुरा विश्वसृजाम् सत्रे समेताः परमर्षयः ।
तथा अमरगणाः सर्वे सानुगाः मुनयः अग्नयः ॥

शब्दार्थ—

पुरा	१.	पहले कभी एक बार	तथा	८.	और
विश्वसृजाम्	२.	प्रजापतियों के	अमरगणाः	६.	देवगण
सत्रे	३.	यज्ञ में	सर्वे	५.	सभी
समेताः	११.	एकत्रित हुये थे	सानुगाः	१०.	अपने अनुचरों के साथ
परमर्षयः ।	४	महर्षिगण	मुनयः	७.	मुनिजन
			अग्नयः	९.	अग्नि

श्लोकार्थ—पहले कभी एक बार प्रजापतियों के यज्ञ में महर्षिगण, सभी देवगण, मुनिजन और अग्नि अपने अनुचरों के साथ एकत्रित हुये थे ।

पञ्चमः श्लोकः

तत्र प्रविष्टमृषयो दृष्ट्वार्कमिव रोचिषा।
भ्राजमानं वितिमिरं कुर्वन्तं तन्महत्सदः ॥५॥

पदच्छेद—

तत्र प्रविष्टम् ऋषयः दृष्ट्वा अर्कम् इव रोचिषा।
भ्राजमानम् वितिमिरम् कुर्वन्तम् तत् महत् सदः ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ पर	भ्राजमानम्	७.	प्रकाशमान थे (और)
प्रविष्टम्	३.	प्रवेश करते हुये (दक्ष को)	वितिमिरम्	११.	अन्धकार से रहित
ऋषयः	२.	ऋषियों ने	कुर्वन्तम्	१२.	कर रहे थे
दृष्ट्वा	४.	देखा	तत्	८.	उस
अर्कम् इव	६.	सूर्य के समान	महत्	९.	विशाल
रोचिषा।	५.	(वे) तेज में	सदः॥	१०.	सभा भवन को

श्लोकार्थ—वहाँ पर ऋषियों ने प्रवेश करते हुये दक्ष को देखा। वे तेज में सूर्य के समान प्रकाशमान थे; और उस विशाल सभा भवन को अन्धकार से रहित कर रहे थे॥

षष्ठः श्लोकः

उदतिष्ठन् सदस्यास्ते स्वधिष्ण्येभ्यः सहाग्नयः।
ऋते विरिञ्चं शर्वं च तद्भासाऽऽक्षिप्तचेतसः ॥६॥

पदच्छेद—

उदतिष्ठन् सदस्याः ते स्वधिष्ण्येभ्यः सह अग्नयः।
ऋते विरिञ्चम् शर्वम् च तद् भासा आक्षिप्त चेतसः॥

शब्दार्थ—

उदतिष्ठन्	१५.	खड़े हो गये	ऋते	४.	छोड़कर
सदस्याः	१०.	सभासद	विरिञ्चम्	१.	ब्रह्मा जी
ते	९.	वे सभी	शर्वम्	३.	महादेव जी को
स्व	१३.	अपने-अपने	च	२.	और
धिष्ण्येभ्यः	१४.	आसनों से	तद्	५.	उनके
सह	१२.	साथ	भासा	६.	प्रकाश से
अग्नयः।	११.	अग्नियों के	आक्षिप्त	७.	प्रभावित
			चेतसः॥	८.	बुद्धि वाले

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी और महादेव जी को छोड़कर उनके प्रकाश से प्रभावित बुद्धि वाले वे सभी सभासद अग्नियों के साथ अपने-अपने आसनों से खड़े हो गये।

सप्तमः श्लोकः

सदसस्पतिभिर्दक्षो भगवान् साधु सत्कृतः ।
अजं लोकगुरुं नत्वा निषसाद तदाज्ञया ॥७॥

पदच्छेद—

सदसस्पतिभिः दक्षः भगवान् साधु सत्कृतः ।
अजं लोकगुरुम् नत्वा निषसाद तदा आज्ञया ॥

शब्दार्थ—

सदसस्पतिभिः	१. सभासदों के द्वारा	अज	७.	ब्रह्मा जी को
दक्षः	५. दक्ष प्रजापति	लोकगुरुम्	६.	जगत् पितामह
भगवान्	४. भगवान्	नत्वा	८.	नमस्कार करके
साधु	२. भली-भाँति	निषसाद	१०.	बैठ गये
सत्कृतः ।	३. आदर पाकर	तद् आज्ञया ॥	९.	उनके, आदेश से

श्लोकार्थ—सभासदों से भली-भाँति आदर पाकर भगवान् दक्ष प्रजापति जगत् पितामह ब्रह्मा जी को नमस्कार करके उनके आदेश से बैठ गये ॥

अष्टमः श्लोकः

प्राङ्निषण्णं मृडं दृष्ट्वा नामृष्यत्तदनादृतः ।
उवाच वामं चक्षुर्भ्यामभिवीक्ष्य दहन्निव ॥८॥

पदच्छेद—

प्राक् निषण्णम् मृडम् दृष्ट्वा न अमृष्यत् तद् अनादृतः ।
उवाच वामम् चक्षुर्भ्याम् अभिवीक्ष्य दहन् इव ॥

शब्दार्थ—

प्राक्	१. पहले से	अनादृतः ।	६.	आदर न पाये हुये (दक्ष जो)
निषण्णम्	२. बैठे हुये	उवाच	१४.	कहने लगे
मृडम्	३. शिवजी को	वामम्	९.	टेढ़ी
दृष्ट्वा	४. देखकर	चक्षुर्भ्याम्	१०.	नज़रों से
न	७. नहीं	अभिवीक्ष्य	११.	देखकर
अमृष्यत्	८. (उसे) सहन कर सके (तथा)	दहन्	१३.	जलाते हुये
तद्	५. उनसे	इव ॥	१२.	मानों

श्लोकार्थ—पहले से बैठे हुये शिवजी को देखकर उनसे आदर न पाये हुये दक्ष जी उसे सहन नहीं कर सके तथा टेढ़ी नज़रों से देखकर मानों जलाते हुये कहने लगे ॥

नवमः श्लोकः

श्रूयतां ब्रह्मर्षयो मे सहदेवाः सहाग्नयः ।
साधूनां ब्रुवतो वृत्तं नाज्ञानान्न च मत्सरात् ॥९॥

पदच्छेद—

श्रूयताम् ब्रह्मर्षयः मे सह देवाः सह अग्नयः ।
साधूनाम् ब्रुवतः वृत्तम् न अज्ञानात् न च मत्सरात् ॥

शब्दार्थ—

श्रूयताम्	७.	सुनें	साधूनाम्	१३.	सत्पुरुषों का
ब्रह्मर्षयः	५.	हे ब्रह्मर्षियो !	ब्रुवतः	१५.	बता रहा हूँ
मे	६.	मेरी बात	वृत्तम्	१४.	व्यवहार
सह	४.	सहित	न	९.	नहीं
देवाः	१.	देवताओं	अज्ञानात्	८.	नासमझी से
सह	२.	और	न	११.	नहीं
अग्नयः ।	३.	अग्नियों के	च	१०.	और
			मत्सरात् ॥	१२.	द्वेषभाव से (मैं)

श्लोकार्थ—देवताओं और अग्नियों के सहित हे ब्रह्मर्षियों ! मेरी बात सुनें । नासमझी से नहीं और नही द्वेषभाव से मैं सत्पुरुषों का व्यवहार बता रहा हूँ ॥

दशमः श्लोकः

अयं तु लोकपालानां यशोघ्नो निरपत्रपः ।
सद्भिराचरितः पन्था येन स्तब्धेन दूषितः ॥१०॥

पदच्छेद—

अयम् तु लोक पालानाम् यशः घ्नः निरपत्रपः ।
सद्भिः आचरितः पन्थाः येन स्तब्धेन दूषितः ॥

शब्दार्थ—

अयम्	१.	यह (शिव)	सद्भिः	१०.	सज्जनों के
तु	२.	तो	आचरितः	११.	आचरण का
लोक	४.	लोक	पन्थाः	१२.	मार्ग (ही)
पालानाम्	५.	पालों की	येन	८.	जिस
यशः	६.	पवित्र कीर्ति का	स्तब्धेन	९.	घमण्डी ने
घ्नः	७.	नाशक है	दूषितः ॥	१३.	लांछित कर दिया है
निरपत्रपः ।	३.	निर्लज्ज (और)			

श्लोकार्थ—यह शिव तो निर्लज्ज और लोकपालों की पवित्र कीर्ति का नाशक है । जिस घमंडी ने सज्जनों के आचरण का मार्ग ही लांछित कर दिया है ॥

एकादशः श्लोकः

एष मे शिष्यतां प्राप्तो यन्मे दुहितुरग्रहीत् ।
पाणिं विप्राग्निमुखतः सावित्र्या इव साधुवत् ॥११॥

पदच्छेद—

एषः मे शिष्यताम् प्राप्तः यत् मे दुहितुः अग्रहीत् ।
पाणिम् विप्रः अग्नि मुखतः सावित्र्याः इव साधु वत् ॥

शब्दार्थ—

एषः	१३.	यह	पाणिम्	११.	हाथ
मे	१४.	मेरे	विप्रः	४.	ब्राह्मणों (और)
शिष्यताम्	१५.	पुत्र के समान	अग्निः	५.	अग्नि के
प्राप्तः	१६.	है	मुखतः	६.	सामने
यत्	१.	क्योंकि	सावित्र्याः	७.	सावित्री के
मे	९.	मेरी	इव	८.	समान
दुहितुः	१०.	कन्या का	साधु	२.	सज्जनों के
अग्रहीत् ।	१२.	पकड़ा है (अतः)	वत् ॥	३.	समान (इसने)

श्लोकार्थ—क्योंकि सज्जनों के समान इसने ब्राह्मणों और अग्नि के सामने सावित्री के समान मेरी कन्या का हाथ पकड़ा है। अतः यह मेरे पुत्र के समान है ॥

द्वादशः श्लोकः

गृहीत्वा मृगशावाक्ष्याः पाणिं मर्कटलोचनः ।
प्रत्युत्थानाभिवादार्हे वाचाप्यकृत नोचितम् ॥१२॥

पदच्छेद—

गृहीत्वा मृगशाव अक्ष्याः पाणिम् मर्कट लोचनः ।
प्रत्युत्थान अभिवाद अर्हे वाचा अपि अकृत न उचितम् ॥

शब्दार्थ—

गृहीत्वा	६.	ग्रहण करके	अभिवाद	८.	प्रणाम करने के
मृगशाव	३.	मृग	अर्हे	९.	योग्य मेरे प्रति
अक्ष्याः	४.	नयनी (मेरी कन्या का)	वाचा	१०.	वाणी से
पाणिम्	५.	पाणि	अपि	११.	भी
मर्कट	१.	बन्दर के समान	अकृत	१४.	किया है
लोचनः ।	२.	आँखों वाला (यह शिव)	न	१३.	नहीं
प्रत्युत्थान	७.	खड़े होकर	उचितम् ॥	१२.	आदर

श्लोकार्थ—बन्दर के समान आँखों वाला यह शिव मृगनयनी मेरी कन्या का पाणि ग्रहण करके खड़े होकर प्रणाम करने के योग्य मेरे प्रति वाणी से भी आदर नहीं किया है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

लुप्तक्रियायाशुचये मानिने भिन्नसेतवे ।
अनिच्छन्नप्यदां बालां शूद्रायेवोशतीं गिरम् ॥१३॥

पदच्छेद—

लुप्त क्रियाय अशुचये मानिने भिन्न सेतवे ।
अनिच्छन् अपि अदाम् बालाम् शूद्राय इव उशतीम् गिरम् ॥

शब्दार्थ—

लुप्त	४.	लोप करने वाले	अपि	२.	भी (मैंने)
क्रियाय	३.	कर्मों का	अदाम्	१४.	दे दी
अशुचये	५.	अपवित्र	बालाम्	१३.	(अपनी) कन्या
मानिने	६.	अभिमानी (और)	शूद्राय	९.	शूद्र को
भिन्न	८.	उल्लंघन करने वाले (इस शिव को)	इव	१२.	समान
सेतवे ।	७.	मर्यादा का	उशतीम्	१०.	वेद
अनिच्छन्	१.	न चाहते हुये	गिरम् ॥	११.	वाणी के

श्लोकार्थ—न चाहते हुये भी मैंने कर्मों का लोप करने वाले, अपवित्र, अभिमानी और मर्यादा का उल्लंघन करने वाले इस शिव को शूद्र को वेद-वाणी के समान अपनी कन्या दे दी ॥

चतुर्दशः श्लोकः

प्रेतावासेषु घोरेषु प्रेतैर्भूतगणैर्वृतः ।
अटत्युन्मत्तवन्नग्नो व्युप्तकेशो हसन् रुदन् ॥१४॥

पदच्छेद—

प्रेत आवासेषु घोरेषु प्रेतैः भूत गणैः वृतः ।
अटति उन्मत्त वत् नग्नः व्युप्त केशः हसन् रुदन् ॥

शब्दार्थ—

प्रेत	१.	यह प्रेतों के	अटति	१३.	घूमता रहता है
आवासेषु	२.	रहने का स्थान	उन्मत्त	८.	पागल के
घोरेषु	३.	भयंकर (श्मशानों में)	वत्	९.	समान
प्रेतैः	४.	प्रेत और	नग्नः	१०.	नंगे (शरीर)
भूत	५.	भूत	व्युप्त	१२.	बिखेरे हुये
गणैः	६.	समूहों के	केशः	११.	बालों को
वृतः ।	७.	घिर कर	हसन्	१४.	कभी हंसता है
			रुदन् ॥	१५.	कभी रोता है

श्लोकार्थ—यह प्रेतों के रहने के स्थान भयंकर श्मशानों में प्रेत और भूत समूहों से घिर कर पागल के समान नंगे शरीर और बालों को बिखेरे हुये घूमता रहता है । कभी हंसता है; कभी रोता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

चिताभस्मकृतस्नानः प्रेतस्रङ्न्रस्थिभूषणः ।
शिवापदेशो ह्यशिवो मत्तो मत्तजनप्रियः ।
पतिः प्रमथभूतानां तमोमात्रात्मकात्मनाम् ॥१५॥

पदच्छेद—
चिता भस्म कृत स्नानः प्रेत स्रक् नृ अस्थि भूषणः ।
शिव अपदेशः हि अशिवः मत्तः मत्तजन प्रियः ।
पतिः प्रमथ भूतानाम् तमोमात्रात्मक आत्मानम् ॥

शब्दार्थ—

चिता	१.	यह अपवित्र चिता की	हि	१०.	किन्तु (है पूरा)
भस्म	२.	राख से	अशिवः	११.	अमंगलरूप अशिव
कृत	४.	किये हुये	मत्तः	१२.	यह नशे में मतवाला रहता है
स्नानः	३.	स्नान	मत्तजनप्रियः ।	१३.	मतवाले लोगों का, प्यारा है
प्रेत	५.	प्रेतों के समान	पतिः	१८.	स्वामी है
स्रक्	६.	मुण्डों की माला (और)	प्रमथ	१४.	प्रथमगण (तथा)
नृ अस्थि	७.	मनुष्यों की हड्डी का	भूतानाम्	१५.	भूत-प्रेतों का
भूषणः	८.	आभूषण धारण किये रहता है	तमोमात्रात्मक	१६.	केवल तमोगुणी
शिव अपदेशः	९.	शिव है, इसका नाम तो	आत्मनाम् ॥	१७.	जीवों का

श्लोकार्थ—यह अपवित्र चिता की राख से स्नान किये हुआ प्रेतों के समान मुण्डों की माला और मनुष्यों की हड्डी का आभूषण धारण किये रहता है । शिव है, इसका नाम तो किन्तु है अमंगलरूप अशिव । यह नशे में मतवाला रहता है, मतवाले लोगों का प्यारा है । प्रथमगण और भूत-प्रेतों का केवल तमोगुणी जीवों का स्वामी है ॥

षोडशः श्लोकः

तस्मा उन्मादनाथाय नष्टशौचाय दुर्हृदे ।
दत्ता बत मया साध्वी चोदिते परमेष्ठिना ॥१६॥

पदच्छेद—
तस्मै उन्माद नाथाय नष्ट शौचाय दुर्हृदे ।
दत्ता बत मया साध्वी चोदिते परिमेष्ठिना ॥

शब्दार्थ—

तस्मै	९.	उस	दत्ता	१२.	ब्याह दी
उन्माद	५.	पागलों के	बत	१.	खेद है कि
नाथाय	६.	स्वामी (तथा)	मया	२.	मैंने
नष्ट	८.	रहित	साध्वी	११.	(अपनी) भोली-भाली बेटी
शौचाय	७.	पवित्रता से	चोदिते	४.	कहने से
दुर्हृदे	१०.	दुष्ट स्वभाव वाले (शिव को)	परिमेष्ठिना ॥	३.	ब्रह्मा जी के

श्लोकार्थ—खेद है कि मैंने ब्रह्मा जी के कहने से पागलों के स्वामी तथा पवित्रता से रहित उस दुष्ट स्वभाव वाले शिव को अपनी भोली-भाली बेटी ब्याह दी ।

सप्तदशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—विनिन्द्यैवं स गिरिशमप्रतीपमवस्थितम् ।
दक्षोऽथाप उपस्पृश्य क्रुद्धः शप्तुं प्रचक्रमे ॥१७॥

पदच्छेद—

विनिन्द्य एवम् सः गिरिशम् अप्रतीपम् अवस्थितम् ।
दक्षः अथ अपः उपस्पृश्य क्रुद्धः शप्तुम् प्रचक्रमे ॥

शब्दार्थ—

विनिन्द्य	५.	निन्दा करके	दक्षः	७.	दक्ष प्रजापति
एवम्	४.	इस प्रकार	अथ	९.	तदनन्तर
सः	६.	वे	अपः	१०.	हाथ में जल
गिरिशम्	३.	भगवान् शंकर जी की	उपस्पृश्य	११.	लेकर
अप्रतीपम्	१.	बिना प्रतिकार के	क्रुद्धः	८.	कोध से भर गये
अवस्थितम् ।	२.	निश्चल बैठे हुये	शप्तुम्	१२.	शाप देने को
			प्रचक्रमे ॥	१३.	तैयार हो गये

श्लोकार्थ—बिना प्रतीकार के निश्चल बैठे हुये भगवान् शंकर जी की इस प्रकार निन्दा करके वे दक्ष प्रजापति क्रोध में भर गये । तदनन्तर हाथ में जल लेकर शाप देने को तैयार हो गये ॥

अष्टादशः श्लोकः

अयं तु देवयजन इन्द्रोपेन्द्रादिभिर्भवः ।
सह भागं न लभतां देवैर्देवगणाधमः ॥१८॥

पदच्छेद—

अयम् तु देवयजने इन्द्र-उपेन्द्र आदिभिः भवः ।
सह भागम् न लभताम् देवैः देवगण अधमः ॥

शब्दार्थ—

अयम्	३.	यह	सह	९.	साथ
तु	५.	तो	भागम् न	११.	भाग न
देवयजने	१०.	यज्ञ में (अपना)	लभताम्	१२.	प्राप्त करे
इन्द्र-उपेन्द्र	६.	इन्द्र-उपेन्द्र	देवैः	८.	देवताओं के
आदिभिः	७.	इत्यादि	देवगण	१.	देवताओं में
भवः ।	४.	शंकर	अधमः ॥	२.	नीच

श्लोकार्थ—देवताओं में नीच यह शंकर तो इन्द्र-उपेन्द्र इत्यादि देवताओं के साथ यज्ञ में अपना भाग न प्राप्त करे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

निषिध्यमानः स सदस्यमुख्यैर्दक्षो गिरित्राय विसृज्य शापम् ।
तस्माद्विनिष्क्रम्य विवृद्धमन्युर्जगाम कौरव्य निजं निकेतनम् ॥१९॥

पदच्छेद— निषिध्यमानः सः सदस्य मुख्यैः दक्षः गिरित्राय विसृज्य शापम् ।
तस्मात् विनिष्क्रम्य विवृद्ध मन्युः जगाम कौरव्य निजम् निकेतनम् ॥

शब्दार्थ—

निषिध्यमानः	४.	मना किये जाने पर भी	तस्मात्	१०.	वहाँ से
सः	५.	वे	विनिष्क्रम्य	११.	निकल गये (और)
सदस्य	३.	सभासदों के द्वारा	विवृद्ध	१३.	बढ़ जाने से
मुख्यैः	२.	प्रधान	मन्युः	१२.	क्रोध के
दक्षः	६.	दक्ष प्रजापति	जगाम	१६.	चले गये
गिरित्राय	७.	भगवान् शंकर को	कौरव्य	१.	हे विदुर जी !
विसृज्य	९.	देकर	निजम्	१४.	अपने
शापम् ।	८.	शाप	निकेतनम् ॥	१५.	घर को

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! प्रधान सभासदों के द्वारा मना किये जाने पर भी वे दक्ष प्रजापति भगवान् शंकर को शाप देकर वहाँ से निकल गये और क्रोध के बढ़ जाने से अपने घर को चले गये ॥

विंशः श्लोकः

विज्ञाय शापं गिरिशानुगाग्रणीर्नन्दीश्वरो रोषकषायदूषितः ।
दक्षाय शापं विससर्ज दारुणं ये चान्वमोदंस्तदवाच्यतां द्विजाः ॥२०॥

पदच्छेद— विज्ञाय शापम् गिरिश अनुग अग्रणी नन्दीश्वरः रोष कषाय दूषितः ।
दक्षाय शापम् विससर्ज दारुणम् ये च अन्वमोदम् तद् अवाच्यताम् द्विजाः ॥

शब्दार्थ—

विज्ञाय	५.	जानकारी होने पर	दक्षाय	८.	दक्ष को
शापम्	४.	शाप की	शापम् विससर्ज	१५.	शाप दे दिया
गिरिश	१.	भगवान् शंकर के	दारुणम्	१४.	भयंकर
अनुग	२.	अनुयायियों में	ये	११.	जिन्होंने
अग्रणीः नन्दीश्वरः	३.	प्रधान, नन्दीश्वर जी को	च	९.	और
रोष, कषाय	६.	क्रोध के, प्रभाव से	अन्वमोदम्	१३.	अनुमोदन किया था
दूषितः ।	७.	तमतमा उठे (तथा उन्होंने)	तद् अवाच्यताम्	१२.	उस, निन्दा का
			द्विजाः ॥	१०.	(उन) ब्राह्मणों को

श्लोकार्थ—भगवान् शंकर के अनुयायियों में प्रधान नन्दीश्वर जी को शाप की जानकारी होने पर क्रोध के प्रभाव से तम-तमा उठे । तथा उन्होंने दक्ष को और उन ब्राह्मणों को जिन्होंने उस निन्दा का अनुमोदन किया था भयंकर शाप दे दिया ॥

एकविंशः श्लोकः

य एतन्मर्त्यमुद्दिश्य भगवत्यप्रतिद्रुहि ।
द्रुह्यत्यज्ञः पृथग्दृष्टिस्तत्त्वतो विमुखो भवेत् ॥२१॥

पदच्छेद—

यः एतद् मर्त्यम् उद्दिश्य भगवति अप्रतिद्रुहि ।
द्रुह्यति अज्ञः पृथक् दृष्टिः तत्त्वतः विमुखः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

यः	१. जो (दक्ष)	द्रुह्यति	७. वैर-भाव रखता है
एतद्	२. इस	अज्ञः	१०. मूर्ख
मर्त्यम्	३. मरणधर्मा शरीर में	पृथक्	८. भेद
उद्दिश्य	४. अभिमान करके	दृष्टिः	९. बुद्धि रखने वाला (वह)
भगवति	६. भगवान् शिव के प्रति	तत्त्वतः	११. तत्त्व ज्ञान से
अप्रतिद्रुहि ।	५. किसी से द्रोह न करने वाले	विमुखः भवेत् ॥	१२. रहित होगा

श्लोकार्थ—जो दक्ष इस मरणधर्मा शरीर में अभिमान करके किसी से द्रोह न करने वाले भगवान् शिव के प्रति वैर-भाव रखता है। भेद-बुद्धि रखने वाला वह मूर्ख तत्त्वज्ञान से रहित होगा।

द्वाविंशः श्लोकः

गृहेषु कूटधर्मेषु सक्तो ग्राम्यसुखेच्छया ।
कर्मतन्त्रं वितनुते वेदवादविपन्नधीः ॥२२॥

पदच्छेद—

गृहेषु कूट धर्मेषु सक्तः ग्राम्य सुख इच्छया ।
कर्म तन्त्रम् वितनुते वेदवाद विपन्न धीः ॥

शब्दार्थ—

गृहेषु	७. गृहस्थाश्रम के	कर्म	१०. कर्म-
कूट धर्मेषु	८. कपट पूर्ण धर्मों में	तन्त्रम्	११. काण्ड में
सक्तः	९. आसक्त रहकर	वितनुते	१२. लगा रहता है
ग्राम्य	४. विषय	वेदवाद	१. वेद के अर्थवादों के कारण
सुख	५. सुख की	विपन्न	२. विवेकहीन
इच्छया ।	६. इच्छा से	धीः ॥	३. बुद्धि वाला (वह दक्ष)

श्लोकार्थ—वेद के अर्थवादों के कारण विवेकहीन बुद्धि वाला वह दक्ष विषय सुख की इच्छा से गृहस्थाश्रम के कपटपूर्ण धर्मों में आसक्त रहकर कर्म काण्ड में लगा रहता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

बुद्ध्या पराभिध्यायिन्या विस्मृतात्मगतिः पशुः ।
स्त्रीकामः सोऽस्त्वतितरां दक्षो बस्तमुखोऽचिरात् ॥२३॥

पदच्छेद—

बुद्धया पर अभिध्यायिन्या विस्मृत आत्मगतिः पशुः ।
सः अस्तु अतितराम् दक्षः बस्त मुखः चिरात् ॥

शब्दार्थ—

बुद्धया	३.	बुद्धि से	सः	९.	वह
पर	१.	आत्मा का	अस्तु	१४.	होवे
अभिध्यायिन्या	२.	चिन्तन करने वाली	अतितराम्	७.	अत्यन्त
विस्मृत	५.	भूलकर	दक्षः	१०.	दक्ष
आत्मगतिः	४.	आत्म स्वरूप को	बस्त	१२.	बकरे के
पशुः ।	६.	पशु के समान	मुखः	१३.	मुख वाला
स्त्रीकामः	८.	स्त्री-लम्पट	चिरात् ॥	११.	शीघ्र

श्लोकार्थ—आत्मा का चिन्तन करने वाली बुद्धि से आत्म स्वरूप को भूलकर पशु के समान अत्यन्त स्त्री लम्पट वह दक्ष शीघ्र बकरे के मुख वाला होवे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

विद्याबुद्धिरविद्यायां कर्ममय्यामसौ जडः ।
संसरन्त्विह ये चामुमनु शर्वावमानिनम् ॥२४॥

पदच्छेद—

विद्या बुद्धिः अविद्यायाम् कर्ममय्याम् असौ जडः ।
संसरन्तु इह ये च अमुम् अनु शर्व अवमानिनम् ॥

शब्दार्थ—

विद्या	५.	विद्या	इह	१३.	यहाँ
बुद्धिः	६.	समझ बैठा है (अतः यह)	ये	१०.	जो
अविद्यायाम्	४.	अविद्या को ही	च	७.	और
कर्ममय्याम्	३.	कर्ममयी	अमुम्	११.	इसके
असौ	१.	यह	अनु	१२.	अनुयायी हैं (वे)
जडः ।	२.	मूर्ख (दक्ष)	शर्व	८	भगवान् शिव का
संसरन्तु	१४.	संसार चक्र में पड़े रहें	अवमानिनम् ॥	९.	अपमान करने वाले

श्लोकार्थ—यह मूर्ख दक्ष कर्ममयी अविद्या को ही विद्या समझ बैठा है । अतः भगवान् शिव का अपमान करने वाले जो इसके अनुयायी हैं वे यहाँ संसार चक्र में पड़े रहें ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

गिरः श्रुतायाः पुष्पिण्या मधुगन्धेन भूरिणा ।
मथ्ना चोन्मथितात्मानः सम्मुह्यन्तु हरद्विषः ॥२५॥

पदच्छेद—

गिरः श्रुतायाः पुष्पिण्याः मधु गन्धेन भूरिणा ।
मथ्ना च उन्मथित आत्मानः सम्मुह्यन्तु हरद्विषः ॥

शब्दार्थ—

गिरः	३.	वेद वाणी की	मथ्ना	७.	मथानी से
श्रुतायाः	१.	श्रुतिरूप	च	११.	सदा
पुष्पिण्याः	२.	पुष्पों से सुशोभित	उन्मथित	८.	व्याकुल
मधु	४.	मनोहर	आत्मानः	९.	मन वाले
गन्धेन	६.	गन्ध रूप	सम्मुह्यन्तु	१२.	अज्ञानी बने रहें
भूरिणा ।	५.	अत्यधिक	हरद्विषः ॥	१०.	भगवान् शंकर के विरोधी

श्लोकार्थ—श्रुतिरूप पुष्पों से सुशोभित वेद वाणी की मनोहर गन्धरूप मथानी से व्याकुल मन वाले भगवान् शंकर के विरोधी सदा अज्ञानी बने रहें ॥

षड्विंशः श्लोकः

सर्वभक्षा द्विजा वृत्त्यै धृतविद्यातपोव्रताः ।
वित्तदेहेन्द्रियारामा याचका विचरन्त्विह ॥२६॥

पदच्छेद—

सर्व भक्षाः द्विजाः वृत्त्यै धृत विद्या तपः व्रताः ।
वित्त देह इन्द्रिय आरामाः याचकाः विचरन्तु इह ॥

शब्दार्थ—

सर्व भक्षाः	३.	सब-कुछ, खाने वाले	वित्त देह	८.	धन, शरीर (और)
द्विजाः	२.	ब्राह्मण	इन्द्रिय	९.	इन्द्रियों से
वृत्त्यै	४.	पेट भरने के लिये	आरामाः	१०.	प्रसन्न रहने वाले (तथा)
धृत	७.	धारण करने वाले	याचकाः	११.	भिखारी होकर
विद्या तपः	५.	विद्या, तपस्या और	विचरन्तु	१२.	घूमे
व्रताः ।	६.	व्रत-नियम	इह ॥	१.	इस संसार में

श्लोकार्थ—इस संसार में ब्राह्मण सब-कुछ खाने वाले, पेट भरने के लिये विद्या तपस्या और व्रत-नियम धारण करने वाले, धन, शरीर और इन्द्रियों से प्रसन्न रहने वाले तथा भिखारी होकर घूमें ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तस्यैवं ददतः शापं श्रुत्वा द्विजकुलाय वै ।
भृगुः प्रत्यसृजच्छापं ब्रह्मदण्डं दुरत्ययम् ॥२७॥

पदच्छेद—

तस्य एवम् ददतः शापम् श्रुत्वा द्विजकुलाय वै ।
भृगुः प्रत्यसृजत् शापम् ब्रह्म दण्डम् दुरत्ययम् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१. नन्दीश्वर के द्वारा		भृगुः	८. भृगु ऋषि
एवम्	२. इस प्रकार		प्रत्यसृजत्	१३. देने लगे
ददतः	५. दिये जाते हुये		शापम्	१२. शाप
शापम्	६. शाप को		ब्रह्म	१०. ब्रह्म
श्रुत्वा	७. सुनकर		दण्डम्	११. दण्डरूप
द्विज कुलाय	३. ब्राह्मण कुल के लिये		दुरत्ययम् ॥	९. दुस्तर
वै ।	४. ही			

श्लोकार्थ—नन्दीश्वर के द्वारा इस प्रकार ब्राह्मण कुल के लिये ही दिये जाते हुये शाप को सुनकर भृगु ऋषि दुस्तर ब्रह्म-दण्डरूप शाप देने लगे ।

अष्टाविंशः श्लोकः

भवव्रतधरा ये च ये च तान् समनुव्रताः ।
पाखण्डिनस्ते भवन्तु सच्छास्त्रपरिपन्थिनः ॥२८॥

पदच्छेद—

भव व्रत धराः ये च ये च तान् समनुव्रताः ।
पाखण्डिनः ते भवन्तु सत् शास्त्र परिपन्थिनः ॥

शब्दार्थ—

भव	२. भगवान् शंकर का		पाखण्डिनः	११. पाखण्डी
व्रत धराः	३. व्रत धारण करने वाले है		ते	१०. वे लोग
ये	१. जो लोग		भवन्तु	१२. होवें
च	४. तथा		सत्	७. उत्तम
ये च	५. जो लोग		शास्त्र	८. शास्त्रों के
तान् समनुव्रतः।	६. उन शिव भक्तों के अनुयायी हैं वे		परिपन्थिनः ॥	९. विरोधी

श्लोकार्थ—जो लोग भगवान् शंकर का व्रत धारण करने वाले हैं; तथा जो लोग उन शिव भक्तों के अनुयायी हैं; वे उत्तम शास्त्रों के विरोधी लोग पाखण्डी होवें ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

नष्टशौचा मूढधियो जटाभस्मास्थिधारिणः ।
विशन्तु शिवदीक्षायां यत्र दैवं सुरासवम् ॥२९॥

पदच्छेद—

नष्ट शौचाः मूढ धियः जटा भस्म अस्थि धारिणः ।
विशन्तु शिव दीक्षायाम् यत्र दैवम् सुरा आसवम् ॥

शब्दार्थ—

नष्ट	४.	रहित	विशन्तु	१०.	दीक्षित हों
शौचाः	३.	शुद्धि से	शिव	१.	भगवान् शिव की
मूढ	५	मन्द	दीक्षायाम्	२.	दीक्षा में
धियः	६.	बुद्धि (तथा)	यत्र	११.	जहाँ पर
जटा भस्म	७.	जटा, राख, (और)	दैवम्	१४.	देवता हैं
अस्थि	८.	हड्डी	सुरा	१२.	मदिरा (और)
धारिणः।	९.	धारण करने वाले लोग	आसवम् ॥	१३.	आसव ही

श्लोकार्थ—भगवान् शिव की दीक्षा में शुद्धि से रहित, मन्द बुद्धि तथा जटा-राख और हड्डी धारण करने वाले लोग दीक्षित हों; जहाँ पर मदिरा और आसव ही देवता हैं।

त्रिंशः श्लोकः

ब्रह्म च ब्राह्मणांश्चैव यद्यूयं परिनिन्दथ ।
सेतुं विधारणं पुंसामतः पाखण्डमाश्रिताः ॥३०॥

पदच्छेद—

ब्रह्म च ब्राह्मणान् च एव यद् यूयम् परिनिन्दथ ।
सेतुम् विधारणम् पुंसाम् अतः पाखण्डम् आश्रिताः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्म च	६.	वेद और	सेतुम्	४.	मर्यादा के
ब्राह्मणान्	७.	ब्राह्मणों की	विधारणम्	५.	रक्षक
च एव	८.	ही	पुंसाम्	३.	मनुष्यों की
यद्	१.	क्योंकि	अतः	१०.	इसलिये (तुम लोगों ने)
यूयम्	२.	तुम लोगों ने	पाखण्डम्	११.	पाखण्ड का
परिनिन्दथ।	९.	निन्दा की है	आश्रिताः ॥	१२.	सहारा ले रखा है

श्लोकार्थ—क्योंकि तुम लोगों ने मनुष्यों की मर्यादा के रक्षक वेद और ब्राह्मणों की ही निन्दा की है; इसलिये तुम लोगों ने पाखण्ड का सहारा ले रखा है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

एष एव हि लोकानां शिवः पन्थाः सनातनः ।
यं पूर्वे चानुसंतस्थुर्यत्प्रमाणं जनार्दनः ॥३१॥

पदच्छेद—

एषः एव हि लोकानाम् शिवः पन्थाः सनातनः ।
यम् पूर्वे च अनुसंतस्थुः यत् प्रमाणम् जनार्दनः ॥

शब्दार्थ—

एषः	२. यह	यम्	१२. जिसमें
एव	४. ही	पूर्वे	६. हमारे पूर्वज
हि	१. क्योंकि	च	११. तथा
लोकानाम्	५. लोगों के लिये	अनुसंतस्थुः	१०. चले हैं
शिवः	६. कल्याणकारी (और)	यत्	८. जिस पर
पन्थाः	३. वेद मार्ग	प्रमाणम्	१३. प्रमाण
सनातनः ।	७. सनातन है	जनार्दनः ॥	१४. भगवान् विष्णु हैं

श्लोकार्थ—क्योंकि यह वेदमार्ग ही लोगों के लिये कल्याणकारी और सनातन हैं । जिस पर हमारे पूर्वज चले हैं । तथा जिसमें प्रमाण भगवान् विष्णु हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

तद्ब्रह्म परमं शुद्धं सतां वर्त्म सनातनम् ।
विगर्ह्य यात पाखण्डं दैवं वो यत्र भूतराट् ॥३२॥

पदच्छेद—

तत् ब्रह्म परमम् शुद्धम् सताम् वर्त्म सनातनम् ।
विगर्ह्य यात पाखण्डम् दैवम् वः यत्र भूतराट् ॥

शब्दार्थ—

तद्	५. उस	विगर्ह्य	८. भूतों के स्वामी (रहते हैं)
ब्रह्म	७. वेद की	यात	१०. चले जाओ
परमम्	१. (तुम लोगों ने) परम	पाखण्डम्	६. पाखण्ड मार्ग में
शुद्धम्	२. पवित्र (एवम्)	दैवम्	१३. इष्टदेव
सताम्	३. सज्जनों के	वः	१२. तुम्हारे
वर्त्म	४. मार्ग स्वरूप	यत्र	११. जहाँ पर
सनातनम् ।	६. सनातन	भूतराट् ॥	१४. निन्दा की है (अतः)

श्लोकार्थ— तुम लोगों ने परम पवित्र एवम् सज्जनों के मार्ग स्वरूप उस सनातन वेद की निन्दा की है । अतः पाखण्ड मार्ग में चले जाओ जहाँ पर तुम्हारे इष्टदेव भूतों के स्वामी रहते हैं ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—तस्यैवं वदतः शापं भृगोः स भगवान् भवः ।
निश्चक्राम ततः किञ्चिद्विमना इव सानुगः ॥३३॥

पदच्छेद—

तस्य एवम् वदतः शापम् भृगोः सः भगवान् भवः ।
निश्चक्राम ततः किञ्चिद् विमनाः इव सानुगः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	२. उन		भवः ।	८. शिव
एवम्	१. इस प्रकार		निश्चक्राम	१४. निकल गये
वदतः	५. देने पर		ततः	१२. वहाँ से
शापम्	४. शाप		किञ्चिद्	६. कुछ
भृगोः	३. भृगु ऋषि के		विमनाः	१०. खिन्न चित्त हुये
सः	६. वे		इव	११. से
भगवान्	७. भगवान्		सानुगः ॥	१३. (अपने) अनुयायियों के साथ

श्लोकार्थ—इस प्रकार उन भृगु ऋषि के शाप देने पर वे भगवान् शिव कुछ खिन्न चित्त हुये से अपने अनुयायियों के साथ निकल गये ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तेऽपि विश्वसृजः सत्रं सहस्रपरिवत्सरान् ।
संविधाय महेष्वास यत्रेज्य ऋषभो हरिः ॥३४॥

पदच्छेद—

ते अपि विश्वसृजः सत्रम् सहस्र परिवत्सरान् ।
संविधाय महेष्वास यत्र इज्यः ऋषभः हरिः ॥

शब्दार्थ—

ते	२. उन		संविधाय	८. अनुष्ठान किया
अपि	४. भी (वहाँ)		महेष्वास	१. धनुर्धर हे विदुर जी !
विश्वसृजः	३. प्रजापतियों ने		यत्र	६. जिसमें
सत्रम्	७. यज्ञ का		इज्यः	१२. उपास्य देव (थे)
सहस्र	५. एक हज़ार		ऋषभः	१०. पुरुषोत्तम
परिवत्सरान्	६. वर्ष तक चलने वाले		हरिः ॥	११. भगवान् श्री हरि

श्लोकार्थ—धनुर्धर हे विदुर जी ! उन प्रजापतियों ने भी वहाँ एक हज़ार वर्ष तक चलने वाले यज्ञ का अनुष्ठान किया । जिसमें पुरुषोत्तम भगवान् श्री हरि उपास्य देव थे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

आप्लुत्यावभृथं यत्र गङ्गा यमुनयान्विता ।
विरजेनात्मना सर्वे स्वं स्वं धाम ययुस्ततः ॥३५॥

पदच्छेद—

आप्लुत्य अवभृथम् यत्र गङ्गा यमुनया अन्विता ।
विरजेन आत्मना सर्वे स्वम् स्वम् धाम ययुः ततः ॥

शब्दार्थ—

आप्लुत्य	६.	स्नान करके	विरजेन	८.	शुद्ध
अवभृथम्	५.	यज्ञान्त	आत्मना	९.	चित्त होकर
यत्र	१.	जहाँ पर	सर्वे	७.	सभी (लोग)
गङ्गा	२.	श्री गङ्गा जी	स्वम्	११.	अपने
यमुनया	३.	यमुना जी से	स्वम् धाम	१२.	अपने-आश्रम लोक को
अन्विता ।	४.	मिली हैं (वहाँ)	ययुः	१३.	चले गये
			ततः ॥	१०.	वहाँ से

श्लोकार्थ——जहाँ पर श्री गङ्गा जी यमुना जी से मिली हैं वहाँ यज्ञान्त स्नान करके सभी शुद्ध चित्त होकर अपने-अपने आश्रम को चले गये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे दक्षशापो नाम द्वितीयः अध्यायः ॥२॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

तृतीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—सदा विद्विषतोरेवं कालो वै ध्रियमाणयोः ।
जामातुः श्वशुरस्यापि सुमहानतिचक्रमे ॥१॥

पदच्छेद—

सदा विद्विषतोः एवम् कालः वै ध्रियमाणयोः ।
जामातुः श्वशुरस्य अपि सुमहान् अतिचक्रमे ॥

शब्दार्थ—

सदा	६.	हमेशा	जामातुः	२.	दामाद
विद्विषतोः	७.	वैरभाव	श्वशुरस्य	४.	ससुर को
एवम्	१.	इस प्रकार	अपि	३.	और
कालः	१०.	समय	सुमहान्	९.	बहुत अधिक
वै	५.	आपस में	अतिचक्रमे ॥	११.	बीत गया
ध्रियमाणयोः ।	८.	रखते हुए			

श्लोकार्थ—इस प्रकार दामाद और ससुर को आपस में हमेशा वैरभाव रखते हुए बहुत अधिक समय बीत गया ।

द्वितीयः श्लोकः

यदाभिषिक्तो दक्षस्तु ब्रह्मणा परमेष्ठिना ।
प्रजापतीनां सर्वेषामाधिपत्ये स्मयोऽभवत् ॥२॥

पदच्छेद—

यदा अभिषिक्तः दक्षः तु ब्रह्मणा परमेष्ठिना ।
प्रजापतीनाम् सर्वेषाम् आधिपत्ये स्मयः अभवत् ॥

शब्दार्थ—

यदा	३.	जब	प्रजापतीनाम्	५.	प्रजापतियों के
अभिषिक्तः	८.	अभिषेक कर दिया	सर्वेषाम्	४.	समस्त
दक्षः	७.	दक्ष का	आधिपत्ये	६.	स्वामी के रूप में
तु	९.	तब (उनमें)	स्मयः	१०.	(और अधिक) अभिमान
ब्रह्मणा	२.	ब्रह्मा जी ने	अभवत् ॥	११.	बढ़ गया
परमेष्ठिना ।	१.	पितामह			

श्लोकार्थ—पितामह ब्रह्मा जी ने जब समस्त प्रजापतियों के स्वामी के रूप में दक्ष का अभिषेक कर दिया तब उनमें और अधिक अभिमान बढ़ गया ।

तृतीयः श्लोकः

इष्ट्वा स वाजपेयेन ब्रह्मिष्ठानभिभूय च ।
बृहस्पतिसवं नाम समारेभे क्रतूत्तमम् ॥३॥

पदच्छेद—

इष्ट्वा सः वाजपेयेन ब्रह्मिष्ठान् अभिभूय च ।
बृहस्पति सवम् नाम समारेभे क्रतु उत्तमम् ॥

शब्दार्थ—

इष्ट्वा	३. यज्ञ करके	बृहस्पतिसवम्	७. बृहस्पतिसव
सः	१. उन्होंने (पहले)	नाम	८. नाम का
वाजपेयेन	२. वाजपेय नाम का	समारेभे	११. प्रारम्भ किया
ब्रह्मिष्ठान्	४. ब्रह्मनिष्ठ शिव जी का	क्रतु	१०. यज्ञ
अभिभूय	५. तिरस्कार किया	उत्तमम् ॥	९. सर्वश्रेष्ठ
च ।	६. तथा (उसके बाद)		

श्लोकार्थ—उन्होंने पहले वाजपेय नाम का यज्ञ करके ब्रह्मनिष्ठ शिवजी का तिरस्कार किया तथा उसके बाद बृहस्पतिसव नाम का सर्वश्रेष्ठ यज्ञ प्रारम्भ किया ।

चतुर्थः श्लोकः

तस्मिन् ब्रह्मर्षयः सर्वे देवर्षिपितृदेवताः ।
आसन् कृतस्वस्त्ययनास्तत्पत्न्यश्च सभर्तृकाः ॥४॥

पदच्छेद—

तस्मिन् ब्रह्मर्षयः सर्वे देवर्षि पितृ देवताः ।
आसन् कृत स्वस्त्ययनाः तत् पत्न्यः च सभर्तृकाः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१. उस यज्ञ में	कृत	१४. की थीं
ब्रह्मर्षयः	३. ब्रह्मर्षि	स्वस्त्ययनाः	१३. मांगलिक गान
सर्वे	२. सभी	तत्	११. उनकी
देवर्षि	४. देवर्षि	पत्न्यः	११. स्त्रियाँ (भी)
पितृ	५. पितर और	च	८. तथा
देवताः ।	६. देवगण	स	१०. साथ
आसन्	७. उपस्थित हुए थे	भर्तृकाः ॥	९. अपने पतियों के

श्लोकार्थ—उस यज्ञ में सभी ब्रह्मर्षि देवर्षि, पितर और देवगण उपस्थित हुए थे तथा अपने पतियों के साथ उनकी स्त्रियों ने भी मांगलिक गान किया था ।

पञ्चमः श्लोकः

तदुपश्रुत्य नभसि खेचराणां प्रजल्पताम् ।
सती दाक्षायणी देवी पितुर्यज्ञमहोत्सवम् ॥५॥

पदच्छेद—

तद् उपश्रुत्य नभसि खेचराणाम् प्रजल्पताम् ।
सती दाक्षायणी देवी पितुः यज्ञ महोत्सवम् ॥

शब्दार्थ—

तद्	८.	उस	सती	२.	सती
उपश्रुत्य	११.	सुना	दाक्षायणी	१.	दक्ष-पुत्री
नभसि	४.	आकाश में	देवी	३.	देवी ने
खेचराणाम्	६.	गगनचारी (देवताओं से)	पितुः	७.	पिता के
प्रजल्पताम् ।	५.	बातचीत करते हुये	यज्ञ	९.	यज्ञ
			महोत्सवम् ॥	१०.	समारोह के विषय में

श्लोकार्थ—दक्षपुत्री सती देवी ने आकाश में बात चीत करते हुये गगनचारी देवताओं से पिता के उस यज्ञ समारोह के विषय में सुना ॥

षष्ठः श्लोकः

व्रजन्तीः सर्वतो दिग्भ्य उपदेववरस्त्रियः ।
विमानयानाः सप्रेष्ठा निष्ककण्ठीः सुवाससः ॥६॥

पदच्छेद—

व्रजन्तीः सर्वतः दिग्भ्यः उपदेववर स्त्रियः ।
विमान यानाः सप्रेष्ठाः निष्ककण्ठीः सुवाससः ॥

शब्दार्थ—

व्रजन्तीः	११.	जा रही हैं	विमान	९.	विमान की
सर्वतः	१.	सभी	यानाः	१०.	सवारी से
दिग्भ्यः	२.	दिशाओं से	सप्रेष्ठाः	८.	अपने पतियों के साथ
उपदेववर	३.	गन्धर्वों की सुन्दर	निष्ककण्ठीः	६.	सुवर्ण का हार (और)
स्त्रियः ।	४.	स्त्रियाँ		५.	गले में
			सुवाससः ॥	७.	सुन्दर वस्त्र पहने हुये

श्लोकार्थ—सभी दिशाओं से गन्धर्वों की सुन्दर स्त्रियाँ गले में सुवर्ण का हार और सुन्दर वस्त्र पहने हुये अपने पतियों के साथ विमान की सवारी से जा रही हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

दृष्ट्वा स्वनिलयाभ्याशे लोलाक्षीर्मृष्टकुण्डलाः ।
पतिं भूतपतिं देवमौत्सुक्यादभ्यभाषत ॥७॥

पदच्छेद— दृष्ट्वा स्व निलय अभ्याशे लोल अक्षीः मृष्ट कुण्डलाः ।
पतिम् भूत पतिम् देवम् औत्सुक्यात् अभि अभाषत ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	८.	देख कर (सती जी)	कुण्डलाः ।	४.	कुण्डलों वाली (देवाङ्गनाओं को)
स्व	५.	अपने	पतिम्	९.	अपने पति
निलय	६.	कैलाश पर्वत के	भूत पतिम्	११.	भूत नाथ से
अभ्याशे	७.	निकट से (जाते हुये)	देवम्	१०.	भगवान्
लोल	१.	चञ्चल	औत्सुक्यात्	१२.	उत्सुकतावश
अक्षीः	२.	नेत्रों वाली (और)	अभ्यभाषत ॥	१३.	बोली
मृष्ट	३.				

श्लोकार्थ—चञ्चल नेत्रों वाली और चमकते कुण्डलों वाली देवाङ्गनाओं को अपने कैलाश पर्वत के निकट से जाते हुये देखकर सती जी अपने पति भगवान् भूतनाथ से उत्सुकता वश बोलीं ॥

अष्टमः श्लोकः

सत्युवाच—प्रजापतेस्ते श्वशुरस्य साम्प्रतं निर्यापितो यज्ञमहोत्सवः किल ।
वयं च तत्राभिसराम वाम ते यद्यर्थितामी विबुधा व्रजन्ति हि ॥८॥

पदच्छेद—प्रजापतेः ते श्वशुरस्य साम्प्रतम् निर्यापितः महोत्सवः किल ।
वयम् च तत्र अभिसराम वाम ते यदि अर्थिता अमी विबुधाः व्रजन्ति हि ॥

शब्दार्थ—

प्रजापतेः	५.	दक्ष प्रजापति का	वयम् च	१३.	हमलोग भी
ते	३.	आपके	तत्र अभिसराम	१४.	वहाँ चलें
श्वशुरस्य	४.	ससुर के घर	वाम	१.	हे वामदेव
			ते	११.	आपकी
साम्प्रतम्	२.	इस समय	यदि	१०.	यदि
निर्यापितः	९.	चल रहा है	अर्थिता	१२.	इच्छा हो तो
यज्ञ	७.	यज्ञ का	अमी विबुधाः	१६.	ये, देवगण (भी वहाँ)
महोत्सवः	८.	महोत्सवः	व्रजन्ति	१७.	जा रहे हैं
किल ।	६.	बहुत बड़ा	हि ॥	१५.	क्योंकि

श्लोकार्थ—हे वामदेव ! इस समय आपके ससुर के घर दक्ष प्रजापति का बहुत बड़ा यज्ञ का महोत्सव चल रहा है। यदि आपकी इच्छा हो तो हम लोग भी वहाँ चलें। क्योंकि ये देवगण भी वहाँ जा रहे हैं ॥

नवमः श्लोकः

तस्मिन् भगिन्यो मम भर्तृभिः स्वकैर्ध्रुवं गमिष्यन्ति सुहृद्दिदृक्षवः ।
अहं च तस्मिन् भवताभिकामये सहोपनीतं परिबर्हमर्हितुम् ॥९॥

पदच्छेद—तस्मिन् भगिन्यः मम भर्तृभिः स्वकैः ध्रुवम् गमिष्यन्ति सुहृद् दिदृक्षवः ।
अहम् च तस्मिन् भवता अभिकामये सह उपनीतम् परिबर्हम् अर्हितुम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१.	उस यज्ञ में	अहम्	१०.	(अतः) मैं
भगिन्यः	३.	बहिनें	च	११.	भी
मम	२.	मेरी	तस्मिन्	१२.	वहाँ
भर्तृभिः	५.	पतियों के साथ	भवता	१३.	आपके
स्वकैः	४.	अपने	अभिकामये	१८.	इच्छा करती हूँ
ध्रुवम्	८.	अवश्य	सह	१४.	साथ (माता पिता के द्वारा)
गमिष्यन्ति	९.	जायेंगी	उपनीतम्	१५.	दिये गये
सुहृद्	६.	सगे सम्बन्धियों को	परिबर्हम्	१६.	वस्त्राभूषणादि
दिदृक्षवः ।	७.	देखने की इच्छा से	अर्हितुम् ॥	१७.	(उपहारों को) लेने की

श्लोकार्थ—उस यज्ञ में मेरी बहिनें अपने पतियों के साथ सगे संबन्धियों को देखने की इच्छा से अवश्य जायेंगी । अतः मैं भी वहाँ आपके साथ माता-पिता के द्वारा दिये गये वस्त्राभूषणादि उपहारों को लेने की इच्छा करती हूँ ।

दशमः श्लोकः

तत्र स्वसॄर्मे ननु भर्तृसम्मिता मातृष्वसॄः क्लिन्नधियं च मातरम् ।
द्रक्ष्ये चिरोत्कण्ठमना महर्षिभिरुन्नीयमानं च मृडाध्वरध्वजम् ॥१०॥

पदच्छेद—तत्र स्वसॄः मे ननु भर्तृ सम्मिताः मातृष्वसॄ क्लिन्न धियम् च मातरम् ।
द्रक्ष्ये चिर उत्कण्ठ मनाः महर्षिभिः उन्नीयमानम् च मृड अध्वर ध्वजम् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	२.	वहाँ (मैं)	द्रक्ष्ये	११.	देखूंगी
स्वसॄः	५.	बहनों	चिर	१२.	बहुत दिनों से
मे	४.	अपनी	उत्कण्ठ	१४.	(यह) लालसा (भी है)
ननु	१०.	अवश्य	मनाः	१३.	(मेरे) मन में
भर्तृ सम्मिताः	३.	पतियों से, सम्मानित	महर्षिभिः	१६.	ऋषियों के द्वारा
मातृष्वसॄः	६.	मौसियों	उन्नीयमानम्	१७.	किये जा रहे
क्लिन्न धियम्	८.	स्नेहमयी	च	१५.	और
च	७.	और	मृड	१.	हे मंगलमय शिवजी
मातरम् ।	९.	माता को	अध्वर ध्वजम् ॥	१८.	यज्ञोत्सव को

श्लोकार्थ—मंगलमय हे शिव जी ! वहाँ मैं पतियों से सम्मानित अपनी बहनों, मौसियों और स्नेहमयी माता को अवश्य देखूंगी । बहुत दिनों से मेरे मन में यह लालसा भी है और ऋषियों के द्वारा किये जा रहे यज्ञोत्सव को भी देखूंगी ।

एकादशः श्लोकः

त्वय्येतदाश्चर्यमजात्ममायया विनिर्मितं भाति गुणत्रयात्मकम् ।
तथाप्यहं योषिदतत्त्वविच्च ते दीना दिदृक्षे भव मे भवक्षितिम् ॥११॥

पदच्छेद—त्वयि एतद् आश्चर्यम् अज आत्म मायया विनिर्मितम् भाति गुणत्रय आत्मकम् ।
तथापि अहम् योषित् अतत्त्ववित् च ते दीना दिदृक्षे भव मे भव क्षितिम् ॥

शब्दार्थ—

त्वयि	८.	आप में	अहम्	११.	मैं
एतद्	२.	यह	योषित्	१५.	स्त्री (हूँ)
आश्चर्यम्	३.	आश्चर्य है कि	अतत्त्ववित्	१३.	स्वरूप को नहीं समझने वाली
अज	१.	अजन्मा हे शिव जी !	च	१६.	अतः
आत्म मायया	४.	अपनी माया से	ते	१२.	आपके
विनिर्मितम्	५.	रचित	दीना	१४.	दीन
भाति	९.	भासित हो रहा है	दिदृक्षे	२०.	देखना चाहती हूँ
गुणत्रय	६.	त्रिगुण	भव	१७.	हे शिव जी !
आत्मकम् ।	७.	रूप संसार	मे	१८.	(मैं) अपनी
तथापि	१०.	फिर भी	भव क्षितिम् ॥	१९.	जन्म-भूमि

श्लोकार्थ—अजन्मा हे शिव जी ! यह आश्चर्य है कि अपनी माया से रचित त्रिगुणरूप संसार आपमें भासित हो रहा है; फिर भी मैं आपके स्वरूप को नहीं समझने वाली दीन स्त्री हूँ, अतः हे शिव जी ! मैं अपनी जन्मभूमि देखना चाहती हूँ ।

द्वादशः श्लोकः

पश्य प्रयान्तीरभवान्ययोषितोऽप्यलंकृताः कान्तसखा वरूथशः ।
यासां व्रजद्भिः शितिकण्ठ मण्डितं नभो विमानैः कलहंसपाण्डुभिः ॥१२॥

पदच्छेद—पश्य प्रयान्तीः अभव अन्य योषितः अपि अलंकृताः कान्त सखाः वरूथशः ।
यासाम् व्रजद्भिः शितिकण्ठ मण्डितम् नभः विमानैः कलहंस पाण्डुभिः ॥

शब्दार्थ—

पश्य	३.	देखें	वरूथशः ।	८.	झुण्ड के झुण्ड
प्रयान्तीः	११.	जा रही हैं	यासाम्	१२.	जिनके
अभव	१.	हे अजन्मा !	व्रजद्भिः	१३.	उड़ते हुए
अन्य	४.	दूसरी	शितिकण्ठ	२.	शिव जी ! (आप)
योषितः	५.	स्त्रियाँ	मण्डितम्	१८.	सुशोभित हो रहा है
अपि	६.	भी	नभः	१७.	आकाश-मण्डल
अलंकृताः	७.	सज-धज कर	विमानैः	१६.	विमानों से
कान्त	९.	(अपने) पतियों के	कलहंस	१४.	राजहंस के समान
सखाः	१०.	साथ	पाण्डुभिः ॥	१५.	सफेद

श्लोकार्थ—हे अजन्मा शिव जी ! आप देखें, दूसरी स्त्रियाँ भी सज-धज कर झुण्ड के झुण्ड अपने पतियों के साथ जा रही हैं; जिनके उड़ते हुए राजहंस के समान सफेद विमानों से आकाश-मण्डल सुशोभित हो रहा है ।

त्रयोदशः श्लोकः

कथं सुतायाः पितृगेहकौतुकं निशम्य देहः सुरवर्य नेङ्गते ।
अनाहुता अप्यभियन्ति सौहृदं भर्तुर्गुरोर्देहकृतश्च केतनम् ॥१३॥

पदच्छेद— कथम् सुतायाः पितृगेह कौतुकम् निशम्य देहः सुरवर्य न इङ्गते ।
अनाहुताः अपि अभियन्ति सौहृदम् भर्तुः गुरोः देहकृतः च केतनम् ॥

शब्दार्थ—

कथम्	७.	कैसे	अनाहुताः	१६.	बिना बुलाये
सुतायाः	५.	बेटी का	अपि	१७.	भी
पितृगेह	२.	पिता के घर में	अभियन्ति	१८.	जाते हैं
कौतुकम्	३.	उत्सव को	सौहृदम्	१४.	सगे सम्बन्धियों के
निशम्य	४.	सुनकर	भर्तुः	१०.	पति
देहः	६.	शरीर	गुरोः	११.	गुरु
सुरवर्य	१.	हे सुरश्रेष्ठ	देहकृतः	१२.	माता-पिता
न	८.	नहीं	च	१३.	और
इङ्गते ।	९.	व्याकुल होगा (क्योंकि)	केतनम् ॥	१५.	घर में

श्लोकार्थ—हे सुरश्रेष्ठ ! पिता के घर में उत्सव को सुन कर बेटी का शरीर कैसे नहीं व्याकुल होगा । क्योंकि पति, गुरु, माता-पिता और सगे-सम्बन्धियों के घर में बिना बुलाये भी जाते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तन्मे प्रसीदेदममर्त्य वाञ्छितं कर्तुं भवान्कारुणिको बतार्हति ।
त्वयाऽऽत्मनोऽर्धेऽहमदभ्रचक्षुषा निरूपिता मानुगृहाण याचितः ॥१४॥

पदच्छेद—तत् मे प्रसीद इदम् अमर्त्य वाञ्छितम् कर्तुम् भवान् कारुणिकः बत अर्हति ।
त्वया आत्मनः अर्धे अहम् अदभ्र चक्षुषा निरूपिता मा अनुगृहाण याचितः ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	इसलिये	त्वया	१०.	आप ने
मे प्रसीद	३.	मुझ पर प्रसन्न हों	आत्मनः अर्धे	१४.	अपने, आधे अङ्ग में
इदम्	६.	इस	अहम्	१३.	मुझे
अमर्त्य	२.	हे देव ! आप	अदभ्र	११.	दया की
वाञ्छितम्	७.	इच्छा को	चक्षुषा	१२.	दृष्टि से
कर्तुम्	८.	पूरी करने में	निरूपिता	१५.	स्थापित किया है (मैं)
भवान् कारुणिकः	४.	आप बड़े दयालु हैं	मा	१७.	मेरे पर
बत	५.	अतः	अनुगृहाण	१८.	कृपा करें
अर्हति ।	९.	समर्थ हैं	याचितः ॥	१६.	प्रार्थना कर रही हूँ

श्लोकार्थ—इसीलिये हे देव ! आप मुझ पर प्रसन्न हों, आप बड़े दयालु हैं । अतः इस इच्छा को पूरी करने में समर्थ हैं । आपने दया की दृष्टि से मुझे अपने आधे अङ्ग में स्थापित किया है । मैं प्रार्थना कर रही हूँ । मुझ पर कृपा करें ॥

पञ्चदशः श्लोकः

एवं गिरित्रः प्रिययाभिभाषितः प्रत्यभ्यधत्त प्रहसन् सुहृत्प्रियः ।
संस्मारितो मर्मभिदः कुवागिषून् यानाह को विश्वसृजां समक्षतः ॥१५॥

पदच्छेद— एवम् गिरित्रः प्रियया अभिभाषितः प्रत्यभ्यधत्त प्रहसन् सुहृत् प्रियः ।
संस्मारितः मर्म भिदः कुवाक् इषून् यान् आह कः विश्वसृजाम् समक्षतः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	संस्मारितः	११.	स्मृति हो आई
गिरित्रः	६.	शिव जी ने	मर्म भिदः	९.	हृदय को, बींधने वाले
प्रियया	२.	प्रिय पत्नी के	कुवाक् इषून्	१०.	दुर्वचन रूप, बाणों की
अभिभाषितः	३.	कहने पर	यान्	१२.	जिन्हें
प्रत्यभ्यधत्त	८.	उत्तर दिया (उस समय उन्हें)	आह	१६.	कहा था
प्रहसन्	७.	हंसते हुये	कः	१३.	दक्ष ने
सुहृत्	४.	हितैषियों का	विश्वसृजाम्	१४.	प्रजापतियों के
प्रियः ।	५.	कल्याण करने वाले	समक्षतः ॥	१५.	सामने

श्लोकार्थ——इस प्रकार प्रिय पत्नी के कहने पर हितैषियों का कल्याण करने वाले शिव जी ने हंसते हुये उत्तर दिया । उस समय उन्हें हृदय को बींधने वाले दुर्वचन रूपी बाणों की स्मृति हो आई; जिन्हें दक्ष ने प्रजापतियों के सामने कहा था ॥

षोडशः श्लोकः

त्वयोदितं शोभनमेव शोभने अनाहुता अप्यभियन्ति बन्धुषु ।
ते यद्यनुत्पादितदोषदृष्टयो बलीयसानात्म्यमदेन मन्युना ॥१६॥

पदच्छेद— त्वया उदितम् शोभनम् एव शोभने अनाहुताः अपि अभियन्ति बन्धुषु ।
ते यदि अनुत्पादित दोष दृष्ट्या बलीयसी अनात्म्यमदेन मन्युना ॥

शब्दार्थ—

त्वया	२.	तुमने	ते	१३.	उनके
उदितम्	५.	कही है	यदि	९.	यदि
शोभनम्	३.	अच्छी	अनुत्पादित	१६.	न, उत्पन्न हुआ हो
एव	४.	ही बात	दोष	१५.	दोष-भाव
शोभने	१.	हे सुन्दरि !	दृष्ट्या	१४.	विचारों में
अनाहुताः अपि	७.	बिना बुलायें भी	बलीयसी	१०.	प्रबल
अभियन्ति	८.	जाते हैं	अनात्म्यमदेन	११.	देहभिमान (और)
बन्धुषु ।	६.	बन्धु जनों के यहाँ	मन्युना ॥	१२.	क्रोध से

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! तुमने अच्छी ही बात कही है । बन्धु जनों के यहाँ बिना बुलाये भी जाते हैं, यदि प्रबल देहाभिमान और क्रोध से उनके विचारों में दोष-भाव न उत्पन्न हुआ हो ॥

सप्तदशः श्लोकः

विद्यातपोवित्तवपुर्वयः कुलैः सतां गुणैः षड्भिरसत्तमेतरैः ।
स्मृतौ हतायां भृतमानदुर्दृशः स्तब्धा न पश्यन्ति हि धाम भूयसाम् ॥१७॥

पदच्छेद— विद्या तपः वित्त वपुः वयः कुलैः सताम् गुणैः षड्भिः असत्तम इतरैः ।
स्मृतौ हतायाम् भृतमान दुर्दृशः स्तब्धाः न पश्यन्ति हि धाम भूयसाम् ॥

शब्दार्थ—

विद्या तपः	१.	विद्या, तपस्या	स्मृतौ	११.	विवेक शक्ति के
वित्त वपुः	२.	धन, शरीर	हतायाम्	१२.	नष्ट हो जाने पर
वयः	३.	युवावस्था (और)	भृतमान	१३.	बढ़े हुये, घमंड के कारण
कुलैः	४.	उच्चकुल	दुर्दृशः	१४.	बुरे विचार वाले
सताम्	५.	सज्जनों के (ये)	स्तब्धाः	१५.	अभिमानी लोग
गुणैः	७.	गुण हैं (तथा)	न पश्यन्ति	१८.	नहीं देख पाते हैं
षड्भिः	६.	छः	हि	१०.	क्योंकि
असत्तम	८.	असज्जनों में	धाम	१७.	प्रभाव को
इतरैः ।	९.	(ये ही) दुर्गुण हैं	भूयसाम् ॥	१६.	बड़े लोगों के

श्लोकार्थ—विद्या, तपस्या, धन, शरीर, युवावस्था और उच्चकुल सज्जनों के ये छः गुण हैं। तथा असज्जनों में ये ही दुर्गुण हैं। क्योंकि विवेक शक्ति के नष्ट हो जाने पर बढ़े हुये घमंड के कारण बुरे विचार वाले अभिमानी लोग बड़े लोगों के प्रभाव को नहीं देख पाते हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

नैतादृशानां स्वजनव्यपेक्षया गृहान् प्रतीयादनवस्थितात्मनाम् ।
येऽभ्यागतान् वक्रधियाभिचक्षते आरोपितभ्रूभिरमर्षणाक्षिभिः ॥१८॥

पदच्छेद— न एतादृशानाम् स्वजन व्यपेक्षया गृहान् प्रतीयात् अनवस्थित आत्मनाम् ।
ये अभ्यागतान् वक्रधिया अभिचक्षते आरोपित भ्रूभिः अमर्षण अक्षिभिः ॥

शब्दार्थ—

न	१५.	नहीं	ये	१.	जो
एतादृशानाम्	९.	इस प्रकार के	अभ्यागतान्	२.	आये हुये (अतिथियों को)
स्वजन	१३.	ये बान्धव हैं	वक्रधिया	३.	कुटिल-बुद्धि से
व्यपेक्षया	१४.	ऐसा समझकर	अभिचक्षते	८.	देखते हैं
गृहान्	१२.	घर	आरोपित	५.	चढ़ाकर
प्रतीयात्	१६.	जाना चाहिये	भ्रूभिः	४.	भौंहें
अनवस्थित	१०.	अव्यवस्थित	अमर्षण	६.	क्रोध भरी
आत्मनाम् ।	११.	चित्त वाले (लोगों के)	अक्षिभिः ॥	७.	आंखों से

श्लोकार्थ—जो आये हुये अतिथियों को कुटिल-बुद्धि से भौंहें चढ़ाकर क्रोध भरी आँखों से देखते हैं। इस प्रकार के अव्यवस्थित चित्त वाले लोगों के घर ये बान्धव हैं ऐसा समझ कर नहीं जाना चाहिये ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तथारिभिर्न व्यथते शिलीमुखैः शेतेऽर्दिताङ्गो हृदयेन दूयता ।
स्वानां यथा वक्रधियां दुरुक्तिभिर्दिवानिशं तप्यति मर्मताडितः ॥१६॥

पदच्छेद— तथा अरिभिः न व्यथते शिलीमुखैः शेते अर्दित अङ्गः हृदयेन दूयता ।
स्वानाम् यथा वक्रधियाम् दुरुक्तिभिः दिवा निशम् तप्यति मर्म ताडितः ॥

शब्दार्थ—

तथा	५.	वैसी	स्वानाम्	११.	अपने स्वजनों के
अरिभिः	१.	शत्रुओं के	यथा	८.	जैसी कि
न	६.	नहीं	वक्र	६.	कुटिल
व्यथते	७.	व्यथा होती है	धियाम्	१०.	बुद्धि
शिलीमुखैः	२.	वाणों से	दुरुक्तिभिः	१२.	दुर्वचनों से (होती है)
शेते		सोता है (किन्तु)	दिवा	१८.	दिन
अर्दित	४.	छिद जाने पर भी	निशम्	१६.	रात
अङ्गः	३.	शरीर के	तप्यति	२०.	सन्तप्त रहता है
हृदयेन		हृदय में	मर्म	२१.	मर्म के
दूयता ।		कष्ट पाता हुआ	ताडितः ॥	२२.	विंध जाने पर

श्लोकार्थ—शत्रुओं के वाणों से शरीर के छिद जाने पर भी वैसी व्यथा नहीं होती है । जैसी कि कुटिल बुद्धि अपने स्वजनों के दुर्वचनों से होती है । अङ्गों के विंध जाने पर सोता है । किन्तु कुवाक्यों से हृदय में कष्ट पाता हुआ दिन-रात सन्तप्त रहता है ॥

विंशः श्लोकः

व्यक्तं त्वमुत्कृष्टगतेः प्रजापतेः प्रियाऽऽत्मजानामसि सुभ्रु सम्मता ।
अथापि मानं न पितुः प्रपत्स्यसे मदाश्रयात्कः परितप्यते यतः ॥२०॥

पदच्छेद—व्यक्तम् त्वम् उत्कृष्ट गतेः प्रजापतेः प्रिया आत्मजानाम् असि सुभ्रु सम्मता ।
अथापि मानम् न पितुः प्रपत्स्यसे मद् आश्रयात् कः परितप्यते यतः ॥

शब्दार्थ—

व्यक्तम्	२.	मैं यह जानता हूँ (कि)	अथापि	१०.	फिर भी
त्वम्	३.	तुम	मानम्	१३.	सम्मान
उत्कृष्ट गतेः	४.	परम, उन्नति को प्राप्त	न	१४.	नहीं
प्रजापतेः	५.	प्रजापति दक्ष को	पितुः	१२.	(तुम) पिता का
प्रिया	७.	प्यारी और	प्रपत्स्यसे	१५.	पावोगी
आत्मजानाम्	६.	सभी बेटियों में अधिक	मद् आश्रयात्	११.	मेरे आश्रित होने के कारण
असि	६.	हो	कः	१७.	दक्ष प्रजापति (मुझसे)
सुभ्रु	१.	हे सुन्दरि !	परितप्यते	१८.	जलते हैं
सम्मता ।	८.	सम्मानित	यतः ॥	१६.	क्योंकि

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! मैं यह जानता हूँ कि तुम परम उन्नति को प्राप्त प्रजापति दक्ष को सभी बेटियों में अधिक प्यारी और सम्मानित हो । फिर भी मेरे आश्रित होने के कारण तुम पिता का सम्मान नहीं पावोगी । क्योंकि दक्ष प्रजापति मुझसे जलते हैं ।

एकविंशः श्लोकः

पापच्यमानेन हृदाऽऽतुरेन्द्रियः समृद्धिभिः पूरुषबुद्धिसाक्षिणाम् ।
अकल्प एषामधिरोढुमञ्जसा पदं परं द्वेष्टि यथासुरा हरिम् ॥२१॥

पदच्छेद—पापच्यमानेन हृदा आतुर इन्द्रियः समृद्धिभिः पूरुष बुद्धि साक्षिणाम् ।
अकल्पः एषाम् अधिरोढुम् अञ्जसा पदम् परम् द्वेष्टि यथा असुराः हरिम् ॥

शब्दार्थ—

पापच्यमानेन	६.	जलता रहता है (और)	एषाम्	९.	इन (महा पुरुषों के)
हृदा	५.	(जिसका) हृदय	अधिरोढुम्	१२.	प्राप्त करने में
आतुर	८.	व्याकुल रहती है (वह)	अञ्जसा	११.	सरलता से
इन्द्रियः	७.	इन्द्रियाँ	पदम्	१०.	पद को
समृद्धिभिः	४.	समृद्धियों से	परम्	१४.	किन्तु उनसे
पूरुष	१.	मनुष्यों की	द्वेष्टि	१५.	द्वेष रखता है
बुद्धि	२.	बुद्धि के	यथा	१६.	जैसे
साक्षिणाम् ।	३.	साक्षी (महापुरुषों की)	असुराः	१७.	असुर
अकल्पः	१३.	असमर्थ (रहता है)	हरिम् ॥	१८.	भगवान् श्री हरि से (द्वेष करते हैं)

श्लोकार्थ—मनुष्यों की बुद्धि के साक्षी महापुरुषों की समृद्धियों से जिसका हृदय जलता रहता है और इन्द्रियाँ व्याकुल रहती हैं, वह इन महापुरुषों के पद को सरलता से प्राप्त करने में असमर्थ रहता है। किन्तु उनसे द्वेष रखता है; जैसे असुर भगवान् श्री हरि से द्वेष करते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

प्रत्युद्गमप्रश्रयणाभिवादनं विधीयते साधु मिथः सुमध्यमे ।
प्राज्ञैः परस्मै पुरुषाय चेतसा गुहाशयायैव न देहमानिने ॥२२॥

पदच्छेद— प्रत्युद्गम प्रश्रयणे अभिवादनम् विधीयते साधु मिथः सुमध्यमे ।
प्राज्ञैः परस्मै पुरुषाय चेतसा गुहा आशयाय एव न देहमानिने ॥

शब्दार्थ—

प्रत्युद्गम	३.	खड़ा होना	परस्मै	११.	परात्पर
प्रश्रयणे	४.	नम्रता (और)	पुरुषाय	१२.	परम पुरुष को
अभिवादनम्	५.	प्रणाम इत्यादि क्रियायें	चेतसा	१४.	हृदय से (प्रणाम करते हैं)
विधीयते	७.	की जाती हैं (किन्तु)	गुहा	९.	सभी जीवों के अन्तःकरण में
साधु	६.	भली-भांति	आशयाय	१०.	रहने वाले
मिथः	२	आपस में (मिलने पर)	एव	१३.	ही
सुमध्यमे ।	१.	हे सुन्दरि !	न	१६.	नहीं
प्राज्ञैः	८.	आत्मज्ञानी लोग	देहमानिने ॥	१५.	देहाभिमानी को

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! आपस में मिलने पर खड़ा होना और प्रणाम इत्यादि क्रियायें भली-भांति की जाती हैं। किन्तु आत्मज्ञानी लोग सभी जीवों के अन्तःकरण में रहने वाले परात्पर परम पुरुष को ही हृदय से प्रणाम करते हैं, देहाभिमानी को नहीं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

सत्त्वं विशुद्धं वसुदेवशब्दितं यदीयते तत्र पुमानपावृतः।
सत्त्वे च तस्मिन् भगवान् वासुदेवो ह्यधोक्षजो मे नमसा विधीयते ॥२३॥

पदच्छेद— सत्त्वम् विशुद्धम् वसुदेव शब्दितम् यद् ईयते तत्र पुमान् अपावृतः।
सत्त्वे च तस्मिन् भगवान् वासुदेवः हि अधोक्षजः मे नमसा विधीयते ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वम्	२.	जीवों का अन्तःकरण	सत्त्वे	११.	अन्तःकरण में
विशुद्धम्	१	निर्मल	च तस्मिन्	१०.	तथा उस
वसुदेवः	३.	वसुदेव	भगवान्	१४.	भगवान्
शब्दितम्	४.	कहा जाता है	वासुदेवः	१५.	वासुदेव को
यद्	५.	क्योंकि	हि	१६.	ही
ईयते	८.	अनुभव होता है	अधोक्षजः	१३.	इन्द्रियातीत
तत्र	६.	वहाँ पर	मे	१२.	मैं
पुमान्	७.	परम पुरुष का	नमसा	१७.	प्रणाम
अपावृतः।	८.	प्रत्यक्ष रूप में	विधीयते ॥	१८.	करता हूँ

श्लोकार्थ—निर्मल जीवों का अन्तःकरण वसुदेव कहा जाता है। क्योंकि वहाँ पर परम पुरुष का प्रत्यक्ष रूप में अनुभव होता है। तथा उस अन्तःकरण में मैं इन्द्रियातीत भगवान् वासुदेव को ही प्रणाम करता हूँ ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तत्ते निरीक्ष्यो न पितापि देहकृद् दक्षो मम द्विट् तदनुव्रताश्च ये।
यो विश्वसृग्यज्ञगतं वरोरु मामनागसं दुर्वचसाकरोत्तिरः ॥२४॥

पदच्छेद—तत् ते निरीक्ष्यः न पिता अपि देहकृत् दक्षः मम द्विट् तद् अनुव्रताः च ये।
यः विश्वसृक् यज्ञ गतम् वरोरु माम् अनागसम् दुर्वचसा अकरोत् तिरः ॥

शब्दार्थ—

तत् ते	१०.	अतः उन्होंने यद्यपि तुम्हारे	यः	२.	जिन्होंने
निरीक्ष्यः न	१८.	उनको तुम्हें नहीं देखना चाहिए	विश्वसृक्	३.	प्रजापतियों के
पिता	१४.	(अपने) पिता	यज्ञ गतम्	४.	यज्ञ में विद्यमान
अपि	१२.	फिर भी	वरोरु	९.	हे सुन्दरि !
देहकृत्	११.	शरीर को उत्पन्न किया है	माम्	५.	मुझ
दक्षः	१५.	दक्ष को	अनागसम्	६.	निरपराध का
मम द्विट्	१३.	मुझसे, वैर करने वाले	दुर्वचनों से	७.	दुर्वचनों से
तद् अनुव्रताः	१७.	उनके अनुयायी हैं	अकरोत्	९.	किया था
च ये।	१६.	और जो	तिरः ॥	८.	तिरस्कार

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! जिन्होंने प्रजापतियों के यज्ञ में विद्यमान मुझ निरपराध का दुर्वचनों से तिरस्कार किया था। अतः उन्होंने यद्यपि तुम्हारे शरीर को उत्पन्न किया है। फिर भी मुझसे वैर करने वाले अपने पिता दक्ष को और जो उनके अनुयायी हैं; उनको तुम्हें नहीं देखना चाहिये ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

यदि व्रजिष्यस्यतिहाय मद्वचो भद्रं भवत्या न ततो भविष्यति ।
सम्भावितस्य स्वजनात्पराभवो यदा स सद्यो मरणाय कल्पते ॥२५॥

पदच्छेद—

यदि व्रजिष्यसि अतिहाय मद् वचः भद्रम् भवत्याः न ततः भविष्यति ।
सम्भावितस्य स्व जनात् पराभवः यदा सः सद्यः मरणाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

यदि	१. यदि		**सम्भावितस्य**	१२. सम्मानित जन का
व्रजिष्यसि	५. तुम जाओगी		**स्व**	१३. अपने
अतिहाय	४. न मानकर		**जनात्**	१४. लोगों से
मद्	२. मेरा		**पराभवः**	१५. अपमान होता है (तब)
वचः	३. वचन		**यदा**	१०. जब
भद्रम्	८. कल्याण		**सः**	१६. वह
भवत्याः	७. तुम्हारा		**सद्यः**	१७. तत्काल
न	९. नहीं		**मरणाय**	१८. मृत्यु का
ततः	६. उससे		**कल्पते ॥**	१९. कारण बन जाता है
भविष्यति ।	१०. होगा			

श्लोकार्थ—यदि मेरा वचन न मानकर तुम जाओगी; उससे तुम्हारा कल्याण नहीं होगा । जब सम्मानित जन का अपने लोगों से अपमान होता है; तब वह तत्काल मृत्यु का कारण बन जाता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे
उमारुद्रसंवादे प्रथमः अध्यायः समाप्तः ॥१॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

चतुर्थः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच–**एतावदुक्त्वा विरराम शंकरः पत्न्यङ्गनाशं ह्युभयत्र चिन्तयन् ।**

सुहृद्दिदृक्षुः परिशङ्किता भवान्निष्क्रामती निर्विशती द्विधाऽऽस सा ॥१॥

पदच्छेद—एतावत् उक्त्वा विरराम शंकरः पत्नी अङ्ग नाशम् हि उभयत्र चिन्तयन् ।

सुहृत् दिदृक्षुः परिशङ्किता भवान् निष्क्रामती निर्विशती द्विधा आस सा ।।

शब्दार्थ—

एतावत् उक्त्वा	१.	इतना कहकर	सुहृत्	१०.	अपने बान्धवों को
विरराम	३.	मौन हो गये	दिदृक्षुः	११.	देखने की इच्छा से (कभी)
शंकरः	२.	शिव जी	परिशङ्किता	१४.	भयभीत होकर
पत्नी अङ्ग	७.	भार्या सती के, शरीर का	भवान्	१३.	शिवजी से
नाशम्	८.	विनाश (सम्भावित है)	निष्क्रामती	१२.	बाहर निकलती थीं (और फिर)
हि	४.	क्योंकि	निर्विशती	१५.	घर में घुस जाती थीं (इस प्रकार)
उभयत्र	६.	दोनों ही स्थितियों में	द्विधा आस	१६.	वे द्विविधा की स्थिति में थीं
चिन्तयन् ।	५.	वे सोचने लगे	सा ।।	९.	(उस समय) सती जी

श्लोकार्थ—इतना कहकर शिवजी मौन हो गये; क्योंकि वे सोचने लगे कि दोनों ही स्थितियों में भार्या सती के शरीर का विनाश सम्भावित है। उस समय सती जी अपने बान्धवों को देखने की इच्छा से कभी बाहर निकलती थीं; और फिर शिवजी से भयभीत होकर घर में घुस जाती थीं; इस प्रकार वे द्विविधा की स्थिति में थीं ।।

द्वितीयः श्लोकः

सुहृद्दिदृक्षाप्रतिघातदुर्मनाः स्नेहाद्रुदत्यश्रुकलातिविह्वला ।

भवं भवान्यप्रतिपूरुषं रुषा प्रधक्ष्यतीवैक्षत जातवेपथुः ।।२।।

पदच्छेद—सुहृत् दिदृक्षा प्रतिघात दुर्मनाः स्नेहात् रुदती अश्रुकला अति विह्वला ।

भवम् भवानी अप्रतिपूरुषम् रुषा प्रधक्ष्यती इव ऐक्षत जात वेपथुः ।।

शब्दार्थ—

सुहृत्	१.	अपने बान्धवों को	भवम्	१५.	भगवान् शिव को (ऐसे)
दिदृक्षा	२.	देखने की इच्छा में	भवानी	१०.	(उस समय) सती जी के
प्रतिघात	३.	बाधा पड़ने से	अप्रतिपूरुषम्	१४.	अद्वितीय पुरुष
दुर्मनाः	४.	(उनका) मन उदास हो गया	रुषा	१३.	क्रोध से
स्नेहात्	५.	(वे) स्नेह के कारण	प्रधक्ष्यती	१८.	जला रही हो
रुदती	९.	रोने लगीं	इव	१७.	मानों
अश्रुकला	८.	आंसू बहाकर	ऐक्षत	१६.	देखने लगीं
अति	६.	बड़ी	जात	१२.	उत्पन्न हो गया (और वे)
विह्वला ।	७.	विकलता से	वेपथुः ।।	११.	शरीर में कम्पन

श्लोकार्थ—अपने बान्धवों को देखने की इच्छा में बाधा पड़ने से उनका मन उदास हो गया। वे स्नेह के कारण बड़ी विकलता से आंसू बहाकर रोने लगीं। उस समय सती जी के शरीर में कम्पन उत्पन्न हो गया। और वे क्रोध से अद्वितीय पुरुष भगवान् शिव को ऐसे देखने लगीं मानों जला रही हों ।।

तृतीयः श्लोकः

ततो विनिःश्वस्य सती विहाय तं शोकेन रोषेण च दूयता हृदा ।
पित्रोरगात्स्त्रैणविमूढधीर्गृहान् प्रेम्णाऽऽत्मनो योऽर्धमदात्सतां प्रियः ॥३॥

पदच्छेद—ततः विनिःश्वस्य सती विहाय तम् शोकेन रोषेण च दूयता हृदा ।
पित्रोः अगात् स्त्रैण विमूढ धीः गृहान् प्रेम्णा आत्मनः यः अर्धम् अदात् सताम् प्रियः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१३.	तथा	पित्रोः	१६.	माता-पिता के
विनिःश्वस्य	१२.	लम्बी श्वास छोड़ने लगीं	अगात्	१८.	चल दीं
सती	७.	सती जी	स्त्रैण विमूढ	१४.	स्त्री स्वभाव से मन्द
विहाय	६.	छोड़कर	धीः	१५.	बुद्धि होने के कारण
तम्	५.	शिवजी को	गृहान्	१७.	घर को
शोकेन	८	शोक	प्रेम्णा आत्मनः	२.	प्रेम के साथ अपने शरीर का
रोषेण	१०.	क्रोध से	यः	१.	जिन्होंने
च	९.	और	अर्धम् अदात्	३.	आधा अङ्ग दिया था
दूयता हृदा ।	११.	सन्तप्त हृदय होकर	सताम् प्रियः ॥	४.	सज्जनों के प्रिय (उन भगवान्)

श्लोकार्थ—जिन्होंने प्रेम के साथ अपने शरीर का आधा अङ्ग दिया था; सज्जनों के प्रिय उन भगवान् शिवजी को छोड़कर सती जी शोक और क्रोध से सन्तप्त हृदय होकर लम्बी श्वास छोड़ने लगीं। तथा स्त्री स्वभाव से मन्द बुद्धि होने के कारण माता-पिता के घर को चल दीं ॥

चतुर्थः श्लोकः

तामन्वगच्छन् द्रुतविक्रमां सतीमेकां त्रिनेत्रानुचराः सहस्रशः ।
सपार्षदयक्षा मणिमन्मदादयः पुरोवृषेन्द्रास्तरसा गतव्यथाः ॥४॥

पदच्छेद—ताम् अन्वगच्छन् द्रुत विक्रमाम् सतीम् एकाम् त्रिनेत्र अनुचराः सहस्रशः ।
सः पार्षद यक्षाः मणिमत् मद आदयः पुरः वृषेन्द्राः तरसा गतव्यथाः ॥

शब्दार्थ—

ताम्	१.	उन	स पार्षद	१४.	पार्षदों के साथ
अन्वगच्छन्	१८.	पीछे-पीछे चल दिये	यक्षाः	१३.	यक्षों और
द्रुत	४.	तेजी से	मणिमत् मद	६.	मणिमान् मद
विक्रमाम्	५.	डग भरते देखकर	आदयः	७.	इत्यादि
सतीम्	२.	सती जी को	पुरः	१२.	आगे करके
एकाम्	३.	अकेली	वृषेन्द्राः	११.	नन्दीश्वर को
त्रिनेत्र	८	भगवान् शिव के	तरसा	१७.	बड़े वेग से (उनके)
अनुचराः	१०.	सेवक	गत	१६.	रहित होकर
सहस्रशः ।	९.	हजारों	व्यथाः ॥	१५.	भय से

श्लोकार्थ—उन सती जी को अकेली तेजी से डग भरते देखकर मणिमान्, मद इत्यादि भगवान् शिव के हजारों सेवक नन्दीश्वर को आगे करके यक्षों और पार्षदों के साथ भय से रहित होकर बड़े वेग से उनके पीछे-पीछे चल दिये ॥

पञ्चमः श्लोकः

तां सारिकाकन्दुकदर्पणाम्बुजश्वेतातपत्रव्यजनस्रगादिभिः ।
गीतायनैर्दुन्दुभिशङ्खवेणुभिर्वृषेन्द्रमारोप्य विटङ्किता ययुः ॥५॥

पदच्छेद—ताम् सारिका कन्दुक दर्पण अम्बुज श्वेत आतपत्र व्यञ्जन स्रग् आदिभिः ।
गीत अयनैः दुन्दुभिः शङ्ख वेणुभिः वृषेन्द्रम् आरोप्य विटङ्किताः ययुः ॥

शब्दार्थ—

ताम्	१.	(शिवजी के सेवक) उन सती जी को	गीत	१५.	गाने-बजाने के
सारिका	४.	मैना पक्षी	अयनैः	१६.	सामानों के साथ
कन्दुक	५.	गेंद	दुन्दुभिः	१२.	नगाड़े
दर्पण	६.	शीशा	शङ्ख	१३.	शङ्ख
अम्बुज	७.	कमल (आदि क्रीडा के सामान)	वेणुभिः	१४.	बांसुरी (आदि)
श्वेत	८	श्वेत	वृषेन्द्रम्	२.	नादिये पर
आतपत्र	९.	छत्र	आरोप्य	३.	बैठाकर
व्यञ्जन	१०.	(व्यञ्जन) चंवर	विटङ्किताः	१७.	निःशंक होकर
स्रग् आदिभिः ।	११	माला इत्यादि (राज चिह्न तथा)	ययुः ॥	१८.	चल दिये

श्लोकार्थ—शिवजी के सेवक उन सती जी को नादिये पर बैठाकर मैना पक्षी, गेंद, शीशा, कमल आदि क्रीडा के सामान, श्वेत छत्र (व्यजन) चंवर, माला, इत्यादि राज चिह्न तथा नगाड़े, शङ्ख बांसुरी आदि गाने बजाने के सामान के साथ निःशंक होकर चल दिये ॥

षष्ठः श्लोकः

आब्रह्मघोषोर्जितयज्ञवैशसं विप्रर्षिजुष्टं विबुधैश्च सर्वशः ।
मृद्दार्वयःकाञ्चनदर्भचर्मभिर्निसृष्टभाण्डं यजनं समाविशत् ॥६॥

पदच्छेद— आब्रह्मघोष ऊर्जित यज्ञ वैशसम् विप्रर्षि जुष्टम् विबुधैः च सर्वशः ।
मृद् दारु अयः काञ्चन दर्भ चर्मभिः विसृष्ट भाण्डम् यजनम् समाविशत् ॥

शब्दार्थ—

आब्रह्मघोष	३.	चारों ओर वेद के घोष से	मृद्	१२.	मिट्टी
ऊर्जित	६.	सम्पन्न हो रही थी	दारु	१३.	काष्ठ
यज्ञ	४.	यज्ञ की	अयः	१४.	लोहा
वैशसम्	५.	क्रिया	काञ्चन	१५.	सुवर्ण
विप्रर्षि	७.	महर्षिगण	दर्भ चर्मभिः	१६.	डाभ (और) चमड़े के
जुष्टम्	११.	बैठे थे (तथा)	विसृष्ट	१८.	बिखरे हुये थे
विबुधैः	९.	देवगण	भाण्डम्	१७.	पात्र
च	८.	और	यजनम्	१.	सती जी ने सेवकों के साथ यज्ञशाला में
सर्वशः ।	१०.	चारों ओर	समाविशत् ॥	२.	प्रवेश किया (उसमें)

श्लोकार्थ—सती जी ने अपने सेवकों के साथ यज्ञशाला में प्रवेश किया। उसमें चारों ओर वेद के घोष से यज्ञ की क्रिया सम्पन्न हो रही थी। महर्षिगण और देवगण चारों ओर बैठे थे। तथा मिट्टी, काष्ठ, लोहा, सुवर्ण; डाभ और चमड़े के पात्र बिखरे हुये थे ॥

सप्तमः श्लोकः

तामागतां तत्र न कश्चनाद्रियद् विमानितां यज्ञकृतो भयाज्जनः ।
ऋते स्वसॄर्वै जननीं च सादराः प्रेमाश्रुकण्ठ्यः परिषस्वजुर्मुदा ॥७॥

पदच्छेद—ताम् आगताम् तत्र न कश्चन आद्रियत् विमानिताम् यज्ञकृतः भयात् जनः ।
ऋते स्वसॄः वै जननीम् च सादराः प्रेम अश्रु कण्ठ्यः परिषस्वजुः मुदा ॥

शब्दार्थ—

ताम्	४.	उन सती जी का	ऋते	८.	छोड़कर
आगताम्	२.	आई हुई (तथा दक्ष से)	स्वसॄः	७	वहनों को
तत्र	१.	वहाँ पर	वै	९.	और
न	१२.	नहीं	जननीम् च	६.	माता तथा
कश्चन	१०.	किसी भी	सादराः	१६.	आदर के साथ
आद्रियत्	१३.	आदर किया (किन्तु)	प्रेम अश्रु	१४.	(माता और वहनों ने) प्रेम के आंसुओं से
विमानिताम्	३.	अपमानित	कण्ठ्यः	१५.	गद्-गद् कण्ठ होकर
यज्ञकृतः भयात्	५.	यज्ञकर्त्ता (दक्ष के) डर से	परिषस्वजुः	१९.	आलिंगन किया
जनः ।	११.	व्यक्ति ने	मुदा ॥	१७.	प्रसन्नता से (उनका)

श्लोकार्थ—वहाँ पर आई हुई तथा दक्ष से अपमानित उन सती जी का यज्ञकर्ता दक्ष के डर से माता और वहनों को छोड़कर और किसी भी व्यक्ति ने आदर नहीं किया। किन्तु माता और बहनों ने प्रेम के आंसुओं से गद्-गद् कण्ठ होकर आदर के साथ प्रसन्नता से उनका आलिगिन किया ॥

अष्टमः श्लोकः

सौदर्यसम्प्रश्नसमर्थवार्तया मात्रा च मातृष्वसृभिश्च सादरम् ।
दत्तां सपर्यां वरमासनं च सा नादत्त पित्राप्रतिनन्दिता सती ॥८॥

पदच्छेद— सौदर्य सम्प्रश्न समर्थ वार्तया मात्रा च मातृष्वसृभिः च सादरम् ।
दत्ताम् सपर्याम् वरम् आसनम् च सा न आदत्त पित्रा प्रतिनन्दिता सती ॥

शब्दार्थ—

सौदर्य	५.	वहनों से	दत्ताम्	१४.	दिये गये
सम्प्रश्न	६.	कुशल प्रश्न (और)	सपर्याम्	१३.	उपहार रूप में
समर्थ	७	प्रेम-पूर्ण	वरम् आसनम्	१४.	सुन्दर बिछौने
वार्तया	८.	वार्ता-लाप के पश्चात्	च	१५.	और वस्त्रादि को
मात्रा	९.	माता	सा	४.	(इसलिये) उन्होंने
च	१०.	और	न आदत्त	१६.	नहीं स्वीकार किया
मातृष्वसृभिः च	११.	मौसियों के द्वारा	पित्रा	२.	पिता (दक्ष से)
सादरम् ।	१२.	आदर पूर्वक	प्रतिनन्दिता	३.	अप्रसन्न थीं
			सती ॥	१.	सती जी

श्लोकार्थ—सती जी पिता दक्ष से अप्रसन्न थी; इसलिये उन्होंने बहनों से कुशल प्रश्न और प्रेम-पूर्ण वार्तालाप के पश्चात् माता और मौसियों के द्वारा आदर पूर्वक उपहार रूप में दिये गये, सुन्दर बिछौने और वस्त्रादि को स्वीकार नहीं किया ॥

नवमः श्लोकः

अरुद्रभागं तमवेक्ष्य चाध्वरं पित्रा च देवे कृतहेलनं विभौ ।
अनादृता यज्ञसदस्यधीश्वरी चुकोप लोकानिव धक्ष्यती रुषा ॥९॥

पदच्छेद— अरुद्रभागम् तम् अवेक्ष्य च अध्वरम् पित्रा च देवे कृत हेलनम् विभौ ।
अनाहृत यज्ञसदसि अधीश्वरी चुकोप लोकान् इव धक्ष्यती रुषा ॥

शब्दार्थ—

अरुद्रभागम्	४.	शिव के भाग से रहित	हेलनम्	१०.	अपमान
तम्	२.	उस	विभौ ।	८.	सर्वव्यापक
अवेक्ष्य	५.	देखकर	अनाहृता	१३.	अपमानित
च	१.	तथा	यज्ञसदसि	१२.	यज्ञशाला में
अध्वरम्	३.	यज्ञ को	अधीश्वरी	१४.	लोकेश्वरी (सती जी ने ऐसा)
पित्रा	७.	पिता दक्ष के द्वारा	चुकोप	१५.	क्रोध किया
च	६.	और	लोकान्	१८.	लोकों को
देवे	९.	भगवान् शिव का	इव	१६	मानों
कृत	११.	करते देखकर	धक्ष्यती	१९.	जलाना चाहती हों
			रुषा ॥	१७.	क्रोध से

श्लोकार्थ—तथा उस यज्ञ को शिव के भाग से रहित देखकर और पिता दक्ष के द्वारा सर्वव्यापक भगवान् शिव का अपमान करते देखकर यज्ञशाला में अपमानित लोकेश्वरी सती जी ने ऐसा क्रोध किया मानों क्रोध से लोकों को जलाना चाहती हों ॥

दशमः श्लोकः

जगर्ह सामर्षविपन्नया गिरा शिवद्विषं धूमपथश्रमस्मयम् ।
स्वतेजसा भूतगणान् समुत्थितान् निगृह्य देवी जगतोऽभिश्रृण्वत ॥१०॥

पदच्छेद— जगर्ह सामर्ष विपन्नया गिरा शिव द्विषम् धूमपथ श्रम स्मयम् ।
स्व तेजसा भूत गणान् समुत्थितान् निगृह्य देवी जगतः अभिशृण्वतः ॥

शब्दार्थ—

जगर्ह	१८.	निन्दा करने लगीं	स्व	९.	अपने
सामर्ष	१५.	क्रोध से	तेजसा	१०.	प्रभाव से
विपन्नया	१६.	लड़खड़ाती	भूत	७.	भूत
गिरा	१७	वाणी में (दक्ष की)	गणान्	८.	गणों को
शिव	४	शिव	समुत्थितान्	६.	मारने के लिये उद्यत
द्विषम्	५.	द्रोही (दक्ष को)	निगृह्य	११.	रोक कर
धूमपथ	१.	कर्म काण्ड के	देवी	१२.	सती जी
श्रम	२.	अनुष्ठान से (बढ़े हुये)	जगतः	१३.	लोगों को
स्मयम्	३	घमंड वाले	अभिशृण्वतः ॥	१४.	सुनाते हुये

श्लोकार्थ—कर्म काण्ड के अनुष्ठान से बढ़े हुये घमंड वाले शिव द्रोही दक्ष को मारने के लिये उद्यत भूत गणों को अपने प्रभाव से रोक कर सती जी लोगों को सुनाते हुये क्रोध से लड़खड़ाती वाणी में दक्ष की निन्दा करने लगीं ॥

एकादशः श्लोकः

न यस्य लोकेऽस्त्यतिशायनः प्रियस्तथाप्रियो देहभृतां प्रियात्मनः ।
तस्मिन् समस्तात्मनि मुक्तवैरके ऋते भवन्तं कतमः प्रतीपयेत् ॥११॥

पदच्छेद—न यस्य लोके अस्ति अतिशायनः प्रियः तथा अप्रियः देहभृताम् प्रिय आत्मनः ।
तस्मिन् समस्त आत्मनि मुक्त वैरके ऋते भवन्तम् कतमः प्रतीपयेत् ॥

शब्दार्थ—

न	४.	नहीं	प्रिय आत्मनि।	७.	प्रिय आत्मा हैं (जिनका)
यस्य	२.	जिससे	तस्मिन्	१४.	उन (भगवान् शिव से)
लोके	१	संसार में	समस्त आत्मनि	१३.	सबके कारण
अस्ति	५.	है (जो)	मुक्त	१२.	रहित (और)
अतिशायनः	३.	बड़ा कोई	वैरके	११.	सर्वथा वैर-भाव से
प्रियः	८.	(न कोई) प्रिय है	ऋते	१६.	छोड़कर
तथा	९.	तथा (न कोई)	भवन्तम्	१५.	आपको
अप्रियः	१०.	अप्रिय है (अतः)	कतमः	१७.	कौन मनुष्य
देह भृताम्	६.	शरीरधारियों के	प्रतीपयेत् ॥	१८.	विरोध करेगा

श्लोकार्थ—संसार में जिससे बड़ा कोई नहीं है; जो शरीरधारियों के प्रिय आत्मा हैं। जिनका न कोई प्रिय है न कोई अप्रिय है। अतः सर्वथा वैर-भाव से रहित और सबके कारण उन भगवान् शिव से आपको छोड़कर कौन मनुष्य विरोध करेगा।

द्वादशः श्लोकः

दोषान् परेषां हि गुणेषु साधवो गृह्णन्ति केचिन्न भवादृशा द्विज ।
गुणांश्च फल्गून् बहुलीकरिष्णवो महत्तमास्तेष्वविदद्भवानघम् ॥१२॥

पदच्छेद—दोषान् परेषाम् हि गुणेषु साधवः गृह्णन्ति केचित् न भवादृशा द्विज ।
गुणान् च फल्गून् बहुली करिष्णवः महत्तमाः तेषु अविदत् भवान् अघम् ॥

शब्दार्थ—

दोषान्	६.	दोष	द्विज।	१.	हे द्विजवर !
परेषाम्	४.	दूसरों के	गुणान्	१२.	गुणों को
हि	७.	ही	च फल्गून्	११.	वे तो (दूसरों के) थोड़े से (भी)
गुणेषु	५.	गुणों में (भी)	बहुली करिष्णवः	१३.	अधिक करके, देखते हैं (अतः)
गृह्णन्ति	८.	सज्जन पुरुष (ऐसा)	महत्तमाः	१४.	(वे) महापुरुष हैं
केचित्	३.	कुछ (लोग)	तेषु	१६.	उन महापुरुष के ऊपर
न	१०.	नहीं (करते हैं)	अविदत्	१५.	आरोप किया
भवादृशा	२.	आप जैसे	भवान्	१६.	आपने
			अघम् ॥	१७.	दोष का

श्लोकार्थ—हे द्विजवर ! आप जैसे कुछ लोग दूसरों के गुणों में भी दोष ही देखते हैं। किन्तु सज्जन पुरुष ऐसा नहीं करते हैं। वे तो दूसरों के थोड़े से भी गुणों को अधिक करके देखते हैं। अतः वे महापुरुष हैं। आपने उन महापुरुष के ऊपर दोष का आरोप लगाया है॥

त्रयोदशः श्लोकः

नाश्चर्यमेतद्यदसत्सु सर्वदा महद्विनिन्दा कुणपात्मवादिषु ।
सेर्ष्यं महापूरुषपादपांसुभिर्निरस्ततेजःसु तदेव शोभनम् ॥१३॥

पदच्छेद—न आश्चर्यम् एतद् यत् असत्सु सर्वदा महद् विनिन्दा कुणप आत्मवादिषु ।
सईर्ष्यम् महापूरुष पाद पांसुभिः निरस्त तेजः सु तदेव शोभनम् ॥

शब्दार्थ—

न	१०.	नहीं है	आत्मवादिषु ।	२.	आत्मा मानने वाले
आश्चर्यम्	९.	आश्चर्य	सईर्ष्यम्	५.	ईर्ष्यावश
एतद्	८.	यह	महापूरुष	१२.	महापुरुषों के
यत्	११.	क्योंकि	पाद	१३.	चरणों की
असत्सु	३.	दुष्ट मनुष्य	पांसुभिः	१४.	धूली से
सर्वदा	४.	सदा	निरस्त	१६.	नष्ट हो जाता है (अतः)
महद्	६.	महापुरुषों की	तेजः सु	१५.	उनका तेज
विनिन्दा	७.	निन्दा करते हैं	तदेव	१७.	उन्हें वही
कुणप	१.	शवरूप शरीर को	शोभनम् ॥	१८.	शोभा देता है

श्लोकार्थ—शवरूप शरीर को आत्मा मानने वाले दुष्ट मनुष्य सदा ईर्ष्यावश महापुरुषों की निन्दा करते हैं। यह आश्चर्य नहीं है; क्योंकि महापुरुषों की चरणों की धूली से उनका तेज नष्ट हो जाता है। अतः उन्हें वही शोभा देता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यद् द्व्यक्षरं नाम गिरेरितं नृणां सकृत्प्रसङ्गादघमाशु हन्ति तत् ।
पवित्रकीर्तिं तमलङ्घ्यशासनं भवानहो द्वेष्टि शिवं शिवेतरम् ॥१४॥

पदच्छेद—यद् द्वयक्षरम् नाम गिरा ईरितम् नृणाम् सकृत् प्रसङ्गात् अघम् आशु हन्ति तत् ।
पवित्र कीर्तिम् तम् अलङ्घ्य शासनन् भवान् अहो द्वेष्टि शिवम् शिवेतरम् ॥

शब्दार्थ—

यद् द्वयक्षरम्	१.	जिनका दो अक्षर का	पवित्र कीर्तिम्	१४.	पवित्र नाम वाले
नाम	२.	शिव यह नाम	तम्	१३.	उन्हीं
गिरा ईरितम्	५.	वाणी से, निकल जाने	अलङ्घ्य	११.	उल्लंघन नहीं कर सकता
नृणाम्	७.	मनुष्यों के	शासनम्	१०.	जिनके आदेश का (कोई)
सकृत्	४.	एक बार भी	भवान्	१६.	आप
प्रसङ्गात्	३.	प्रसङ्गवश	अहो	१२.	आश्चर्य है
अघम्	८.	समस्त पापों को	द्वेष्टि	१७.	द्वेष करते हैं (अतः आप)
आशु हन्ति	९.	तत्काल नष्ट कर देता है (तथा)	शिवम्	१५.	भगवान् शिव से
तत् ।	६.	वह	शिवतरम् ॥	१८.	अमंगल रूप हैं

श्लोकार्थ—जिनका दो अक्षर का शिव यह नाम प्रसङ्गवश एकबार भी वाणी से निकल जाने पर वह मनुष्यों के समस्त पापों को तत्काल नष्ट कर देता है। तथा जिनके आदेश का कोई उल्लंघन नहीं कर सकता है। उन्हीं पवित्र नाम वाले भगवान् शिव से आप द्वेष करते हैं। अतः आप अमंगलरूप हैं।

पञ्चदशः श्लोकः

यत्पादपद्मं महतां मनोऽलिभिर्निषेवितं ब्रह्मरसासवार्थिभिः ।
लोकस्य यद्वर्षति चाशिषोऽर्थिनस्तस्मै भवान् द्रुह्यति विश्वबन्धवे ॥१५॥

पदच्छेद—यत् पाद पद्मम् महताम् मनः अलिभिः निषेवितम् ब्रह्म रस आसव अर्थिभिः ।
लोकस्य यत् वर्षति च आशिषः अर्थिनः तस्मै भवान् द्रुह्यति विश्व बन्धवे ॥

शब्दार्थ—

यत्	७.	जिनके	लोकस्य	१३.	लोगों के
पाद पद्मम्	८.	चरण कमल का	यत्	११.	जो
महताम्	४.	महापुरुषों के	वर्षति	१५.	पूरा करता है
मनः	५.	मन	च	१०.	तथा
अलिभिः	६.	मधुकर	आशिषः	१४.	मनोरथों को
निषेवितम्	९	सेवन किया करते हैं	अर्थिनः	१२.	सकाम
ब्रह्म रस	१.	ब्रह्मानन्द रस का	तस्मै	१७.	उन भगवान् शंकर से
आसव	२	पान करने की	भवान् द्रुह्यति	१८.	आप विरोध करते हैं
अर्थिभिः ।	३.	इच्छा से	विश्व बन्धवे ॥	१६.	संसार के हितैषी

श्लोकार्थ—ब्रह्मानन्द रस का पान करने की इच्छा से महापुरुषों के मन मधुकर जिनके चरण कमल का सेवन किया करते हैं । तथा जो सकाम लोगों के मनोरथों को पूरा करते हैं । संसार के हितैषी उन भगवान् शंकर से आप विरोध करते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

किं वा शिवाख्यमशिवं न विदुस्त्वदन्ये ब्रह्मादयस्तमवकीर्य जटाः श्मशाने ।
तन्माल्यभस्मनृकपाल्यवसत्पिशाचैर्ये मूर्धभिर्दधति तच्चरणावसृष्टम् ॥१६॥

पदच्छेद—किम् वा शिवआख्यम् अशिवम् न विदुः त्वद् अन्ये ब्रह्म आदयः तम् अवकीर्य जटाः श्मशाने ।
तद् माल्य भस्म नृ कपाली अवसत् पिशाचैः ये मूर्धभिः दधति तत् चरण अवसृष्टम् ॥

शब्दार्थ—

किम्	९.	क्या	श्मशाने ।	३.	श्मशान भूमि में
वा	१२.	अथवा	तद्	८.	इसलिये
शिवआख्यम्	११.	नाम मात्र के शिव हैं	माल्य भस्म	१.	नरमुण्डों की माला चिता की राख
अशिवम्	१३.	अमंगलरूप हैं (यह)	नृ कपाली	२.	मनुष्यों की खोपड़ी रखने वाले (भगवान् शिव)
न विदुः	१६.	नहीं जानते हैं	अवसत्	७.	निवास करते हैं
त्वद् अन्ये	१४.	आप से भिन्न	पिशाचैः	६.	भूत प्रेतों के साथ
ब्रह्म आदयः	१५.	ब्रह्मा इत्यादि देवगण	ये	१७.	ये देवगण (तो)
तम्	१०.	वे	मूर्धभिः दधति	२०.	सिरपर धारण करते हैं
अवकीर्य	५.	बिखेर कर	तत् चरण	१८.	उनके चरणों के
जटाः	४.	जटाओं को	अवसृष्टम् ॥	१९.	निर्माल्य को

श्लोकार्थ—नरमुण्डों की माला, चिता की राख एवं मनुष्यों की खोपड़ी रखने वाले भगवान् शिव श्मशान भूमि में जटाओं को बिखेर कर भूत-प्रेतों के साथ निवास करते हैं । इसलिये क्या वे नाम मात्र के शिव हैं । अथवा अमंगलरूप हैं; यह आप से भिन्न ब्रह्मा इत्यादि देवगण नहीं जानते हैं । ये देवगण तो उनके चरणों के निर्माल्य के सिर पर धारण करते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

कर्णौ पिधाय निरयाद्यदकल्प ईशे धर्मावितर्यसृणिभिर्नृभिरस्यमाने ।
छिन्द्यात्प्रसह्य रुशतीमसतीं प्रभुश्चेज्जिह्वामसूनपि ततो विसृजेत्स धर्मः ॥१७॥

पदच्छेद—कर्णौ पिधाय निरयात् यद् अकल्पः ईशे धर्म अवितरि असृणिभिः नृभिः अस्यमाने ।
छिन्द्यात् प्रसह्य रुशतीम् असतीम् प्रभुः चेत् जिह्वाम् असून् अपि ततः विसृजेत् सः धर्मः ॥

शब्दार्थ—

कर्णौ पिधाय	७.	दोनों कान बन्द करके (वहाँ से)	प्रसह्य	१४.	बलपूर्वक
निरयात्	८.	निकल जावे (तथा)	रुशतीम्	११.	बकवाद करने वाली
यद्	५.	यदि (दण्ड देने में)	असतीम्	१२.	दुष्ट
अकल्पः	६.	असमर्थ हो (तो)	प्रभुः	१०.	समर्थ हो (तो)
ईशे	३.	अपने स्वामी की	चेत्	९.	यदि
धर्म अवितरि	२.	धर्म के रक्षक	जिह्वाम्	१३.	जीभ को
असृणिभिः नृभिः	१.	निरङ्कुश लोगों से	असून् अपि	१७.	अपने प्राणों को भी
अस्यमाने ।	४.	निन्दा किये जाने पर (मनुष्य)	ततः	१६.	आवश्यकता होने पर
छिन्द्यात्	१५.	काट डाले (तदनन्तर)	विसृजेत् सः धर्मः ॥	१८.	दे दे यही धर्म है

श्लोकार्थ—निरङ्कुश लोगों से धर्म के रक्षक अपने स्वामी की निन्दा किये जाने पर मनुष्य यदि दण्ड देने में असमर्थ हो तो दोनों कान बन्द करके वहाँ से निकल जावे तथा यदि समर्थ हो तो बकवाद करने वाली दुष्ट जीभ को बलपूर्वक काट डाले । तदनन्तर आवश्यकता होने पर अपने प्राणों को भी दे दे यही धर्म है ॥

अष्टादशः श्लोकः

अतस्तवोत्पन्नमिदं कलेवरं न धारयिष्ये शितिकण्ठगर्हिणः ।
जग्धस्य मोहाद्धि विशुद्धिमन्धसो जुगुप्सितस्योद्धरणं प्रचक्षते ॥१८॥

पदच्छेद— अतः तव उत्पन्नम् इदम् कलेवरम् न धारयिष्ये शितिकण्ठ गर्हिणः ।
जग्धस्य मोहात् हि विशुद्धिम् अन्धसः जुगुप्सितस्य उद्धरणम् प्रचक्षते ॥

शब्दार्थ—

अतः	१.	इसलिये	जग्धस्य	११.	खाये हुये
तव उत्पन्नम्	४.	आप से उत्पन्न	मोहात्	१०.	भूल से भी
इदम्	५.	इस	हि	९.	क्योंकि
कलेवरम्	६.	शरीर को	विशुद्धि	१४.	शुद्धि
न	७.	(मैं अब) नहीं	अन्धसः	१३.	अन्न की
धारयिष्ये	८.	रख सकती हूँ	जुगुप्सितस्य	१२.	निन्दित
शितिकण्ठ	२.	भगवान् नीलकण्ठ की	उद्धरणम्	१५.	वमन करने से (ही)
गर्हिणः ।	३.	निन्दा करने वाले	प्रचक्षते ॥	१६.	बताई गई है

श्लोकार्थ—इसलिये भगवान् नीलकण्ठ की निन्दा करने वाले आपसे उत्पन्न इस शरीर को मैं अब नहीं रख सकती हूं; क्योंकि भूल से भी खाये हुये निन्दित अन्न की शुद्धि वमन करने से ही बताई गई है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

न वेदवादाननुवर्तते मतिः स्व एव लोके रमतो महामुनेः ।
यथा गतिर्देवमनुष्ययोः पृथक् स्व एव धर्मे न परं क्षिपेत्स्थितः ॥१९॥

पदच्छेद— न वेदवादान् अनुवर्तते मतिः स्वे एव लोके रमतः महामुनेः ।
यथा गतिः देवमनुष्ययोः पृथक् स्वे एव धर्मे न परम् क्षिपेत् स्थितः ॥

शब्दार्थ—

न	८.	नहीं	यथा	१०.	जैसे
वेदवादान्	७.	वेद के विधानों का	गतिः	१२.	स्थिति
अनुवर्तते	९.	अनुसरण करती है	देवमनुष्ययोः	११.	देवता और मनुष्यों की
मतिः	६.	(उनकी) बुद्धि	पृथक्	१३.	अलग-अलग है वैसे ही ज्ञानी अज्ञानी में भेद है
स्वे	२.	अपने	स्वे एव धर्मे	१४.	अपने ही धर्म को
एव	३.	ही	न	१७.	न
लोके	४.	स्वरूप में	परम्	१६.	(दूसरों के) मार्ग को
रमतः	५.	रमण करते हैं	क्षिपेत्	१८.	निन्दा करे
महामुनेः ।	१.	(जो) महामुनि	स्थितः ॥	१५.	आचरण करता हुआ (मनुष्य)

श्लोकार्थ—जो महामुनि अपने ही स्वरूप में रमण करते हैं; उनकी बुद्धि वेद के विधानों का अनुसरण नहीं करती है। जैसे देवता और मनुष्यों की स्थिति अलग-अलग है। वैसे ही ज्ञानी-अज्ञानी में भेद है। अपने ही धर्म का आचरण करता हुआ मनुष्य दूसरों के मार्ग की निन्दा न करे ॥

विंशः श्लोकः

कर्म प्रवृत्तं च निवृत्तमप्यृतं वेदे विविच्योभयलिङ्गमाश्रितम् ।
विरोधि तद्यौगपदैककर्तरि द्वयं तथा ब्रह्मणि कर्म नर्च्छति ॥२०॥

पदच्छेद—कर्म प्रवृत्तम् च निवृत्तम् अपि ऋतम् वेदे विविच्य उभय लिङ्गम् आश्रितम् ।
विरोधि तद् यौगपद एककर्तरि द्वयम् तथा ब्रह्मणि कर्म न ऋच्छति ॥

शब्दार्थ—

कर्म	४.	कर्म	विरोधि	१०.	परस्पर विरोधी होने से
प्रवृत्तम् च	१.	यज्ञादि प्रवृत्ति रूप और	तद्	११.	वे
निवृत्तम्	२.	शमादि निवृत्ति रूप	यौगपद	१३.	एक साथ
अपि	३.	दोनों ही प्रकार के	एककर्तरि	१४.	एक पुरुष में (नहीं हो सकते)
ऋतम् वेदे	५.	ठीक हैं वेद में (उनके)	द्वयम्	१२.	दोनों प्रकार के कर्म
विविच्य	६.	अलग-अलग	तथा	१५.	तथा
उभय	७.	रागी और विरागी	ब्रह्मणि	१६.	ब्रह्म स्वरूप भगवान् शिव में
लिङ्गम्	८.	दो प्रकार के अधिकारी	कर्म	१७.	(ये दोनों प्रकार के) कर्म
आश्रितम् ।	९.	बताये गये हैं	न ऋच्छति ॥	१८.	नहीं रह सकते हैं

श्लोकार्थ—यज्ञादि प्रवृत्ति रूप और शमादि निवृत्तिरूप दोनों ही प्रकार के कर्म ठीक हैं, वेद में उनके अलग-अलग रागी और विरागी दो प्रकार के अधिकारी बताये गये हैं। परस्पर विरोधी होने से वे दोनों प्रकार के कर्म एक साथ एक पुरुष में नहीं हो सकते तथा ब्रह्म स्वरूप भगवान् शिव में वे दोनों प्रकार के कर्म नहीं रह सकते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

मा वः पदव्यः पितरस्मदास्थिता या यज्ञशालासु न धूमवर्त्मभिः ।
तदन्नतृप्तैरसुभृद्भिरीडिता अव्यक्तलिङ्गा अवधूतसेविताः ॥२१॥

पदच्छेद—मा वः पदव्यः पितरः मद् आस्थिताः याः यज्ञशालासु न धूम वर्त्मभिः ।
तद् अन्न तृप्तैः असुभृद्भिः ईडिताः अव्यक्त लिङ्गाः अवधूत सेविताः ॥

शब्दार्थ—

मा	१०.	नहीं हैं	तद्	१५.	यज्ञ के
वः	६.	वे विभूतियाँ आप लोगों में	अन्न	१३.	अन्न से
पदव्यः	३.	विभूतियां	तृप्तैः	१४.	प्रसन्न रहने वाले
पितरः	१.	हे पिता जी !	असुभृद्भिः	१५.	(केवल) प्राण के पोषक
मद् आस्थिताः	४.	मुझमें विद्यमान हैं	ईडिताः	१७.	प्रशंसा (भी)
याः	२.	जो	अव्यक्त	६.	दिखाई नहीं देते हैं (केवल)
यज्ञशालासु	१०.	यज्ञशालाओं में	लिङ्गाः	५.	उनके लक्षण
न	१८.	नहीं (करते हैं)	अवधूत	७.	महापुरुष (उनका)
धूम वर्त्मभिः	१६.	कर्म काण्डी लोग उसकी	सेविताः ॥	८.	सेवन करते हैं

श्लोकार्थ—हे पिता जी ! जो विभूतियाँ मुझमें विद्यमान हैं; उनके लक्षण दिखाई नहीं देते हैं । केवल महापुरुष ही उनका सेवन करते हैं । वे विभूतियाँ आप लोगों में नहीं हैं । यज्ञशालाओं में यज्ञ के अन्न से प्रसन्न रहने वाले केवल प्राण के पोषक कर्मकाण्डी लोग उसकी प्रशंसा भी नहीं करते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

नैतेन देहेन हरे कृतागसो देहोद्भवेनालमलं कुजन्मना ।
व्रीडा ममाभूत्कुजनप्रसङ्गतस्तज्जन्म धिग् यो महतामवद्यकृत् ॥२२॥

पदच्छेद—न एतेन देहेन हरे कृत आगसः देह उद्भवेन अलम् अलम् कुजन्मना ।
व्रीडा मम अभूत् कुजन प्रसङ्गतः तद् जन्म धिक् यः महताम् अवद्यकृत् ॥

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं है (मेरा यह)	व्रीडा	१२.	लज्जा
एतेन देहेन	५.	इस अपने शरीर से (मुझे)	मम	११.	मुझे
हरे	१.	भगवान् शंकर के प्रति	अभूत्	१३.	हो रही है
कृत	३.	करने वाले आपके	कुजन प्रसङ्गतः	१०.	दुष्ट जनों के सम्बन्ध में
आगसः	२.	अपराध	तद्	१४.	उस
देह उद्भवेन	४.	शरीर से उत्पन्न	जन्म	१५.	जन्म को
अलम्	६	कोई प्रयोजन	धिक्	१६.	धिक्कार है
अलम्	९.	व्यर्थ है	यः महताम्	१७.	जो महापुरुषों के प्रति
कुजन्मना ।	८.	निन्दित जन्म (भी)	अवद्यकृत् ॥	१८.	अपराध करता है

श्लोकार्थ—भगवान् शंकर के प्रति अपराध करने वाले आपके शरीर से उत्पन्न इस अपने शरीर से मुझे कोई प्रयोजन नहीं है । मेरा यह निन्दित जन्म भी व्यर्थ है । दुष्ट जनों के सम्बन्ध से मुझे लज्जा हो रही है; उस जन्म को धिक्कार है जो महापुरुषों के प्रति अपराध करता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

गोत्रं त्वदीयं भगवान् वृषध्वजो दाक्षायणीत्याह यदा सुदुर्मनाः ।
व्यपेतनर्मस्मितमाशु तद्ध्यहं व्युत्स्रक्ष्य एतत्कुणपं त्वदङ्गजम् ॥२३॥

पदच्छेद—

गोत्रम् त्वदीयम् भगवान् वृषध्वजः दाक्षायणी इति आह यदा सुदुर्मनाः ।
व्यपेत नर्म स्मितम् आशु तत् हि अहम् व्युत्स्रक्ष्ये एतत् कुणपम् त्वद् अङ्गजम् ॥

शब्दार्थ—

गोत्रम्	५.	गोत्र से (सम्बन्धित)	व्यपेत	१०.	छोड़कर
त्वदीयम्	४.	आपके	नर्म स्मितम्	९.	मधुर प्रसङ्ग और मुसकान को
भगवान्	२.	भगवान्	आशु	१६.	तत्काल
वृषध्वजः	३.	शिव	तत्	१२.	इसलिये
दाक्षायणी	६.	दाक्षायणी	हि	१७.	ही
इति	७.	इस नाम से	अहम्	१५.	मैं
आह	८.	पुकारेंगे (तब मैं)	व्युत्स्रक्ष्ये	१८.	छोड़ना चाहती हूँ
यदा	१.	जब	एतत् कुणपम्	१४.	इस, शव रूप शरीर को
सुदुर्मनाः ।	१०.	अत्यन्त दुःखी (हो जाऊँगी)	त्वद् अङ्गजम् ॥	१३.	आपके शरीर से उत्पन्न

श्लोकार्थ—जब भगवान् शिव आपके गोत्र से सम्बन्धित दाणायणी इस नाम से पुकारेंगें तब मैं मधुर प्रसङ्ग और मुसकान को छोड़कर अत्यन्त दुःखी हो जाऊँगी; इसलिये आपके शरीर से उत्पन्न इस शवरूप शरीर को मैं तत्काल ही छोड़ना चाहती हूँ ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

इत्यध्वरे दक्षमनूद्य शत्रुहन् क्षितावुदीचीं निषसाद शान्तवाक् ।
स्पृष्ट्वा जलं पीतदुकूलसंवृता निमील्यदृग्योगपथं समाविशत् ॥२३॥

पदच्छेद—

इति अध्वरे दक्षम् अनूद्य शत्रुहन् क्षितौ उदीचीम् निषसाद शान्त वाक् ।
स्पृष्ट्वा जलम् पीत दुकूल संवृता निमील्य दृक् योगपथम् समाविशत् ॥

शब्दार्थ—

इति	४.	इस प्रकार	स्पृष्ट्वा	११.	आचमन करके
अध्वरे	२.	यज्ञ मण्डप में	जलम्	१०.	जल से
दक्षम्	३.	दक्ष प्रजापति से	पीत	१२.	पीले रंग का
अनूद्य	५.	कह कर (और)	दुकूल	१३.	दुपट्टा
शत्रुहन्	१.	शत्रुहन्ता हे विदुर जी !	संवृता	१४.	धारण कर लिया (और)
क्षितौ	८.	भूमि पर	निमील्य	१६.	बन्द करके
उदीचीम्	७	उत्तर दिशा की ओर	दृक्	१५.	आँखें
निषसाद	९.	बैठ गईं (तदनन्तर)	योगपथम्	१७	योग मार्ग में
शान्त वाक् ।	६.	मौन होती हुई (सती जी)	समाविशत् ॥	१८.	स्थित हो गईं

श्लोकार्थ—शत्रुहन्ता हे विदुर जी ! यज्ञ मण्डप में दक्ष प्रजापति से इस प्रकार कहकर और मौन होती हुई सती जी उत्तर दिशा की ओर भूमि पर बैठ गईं । तदनन्तर जल से आचमन करके पीले रंग का दुपट्टा धारण कर लिया और आँखें बन्द करके योग मार्ग में स्थित हो गईं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

कृत्वा समानावनिलौ जितासना सोदानमुत्थाप्य च नाभिचक्रतः।
शनैर्हृदि स्थाप्य धियोरसि स्थितं कण्ठाद् भ्रुवोर्मध्यमनिन्दितानयत् ॥२५॥

पदच्छेद—कृत्वा समानौ अनिलौ जित आसना सोदानम् उत्थाप्य च नाभिचक्रतः।
शनैः हृदि स्थाप्य धिया उरसि स्थितम् कण्ठात् भ्रुवोः मध्यम् अनिन्दिता अनयत् ॥

शब्दार्थ—

कृत्वा	५.	करके (नाभिचक्र में स्थित किया)	शनैः	१०.	धीरे-धीरे
समानौ	४.	एक रूप	हृदि स्थाप्य	१२.	हृदय में स्थापित किया (इसके पश्चात्)
अनिलौ	३.	प्राण और अपान वायु को	धिया	११.	बुद्धि के साथ
जित	२.	स्थिर कर (प्राणायाम द्वारा)	उरसि	१४.	हृदय में
आसना	१.	(उन्होंने) आसन को	स्थितम्	१५.	स्थित उस वायु को
सोदानम्	७.	उदान वायु के साथ उसे	कण्ठात्	१६.	कण्ठ मार्ग से
उत्थाप्य	९.	ऊपर उठाकर	भ्रुवोः मध्यम्	१७.	भ्रुकुटियों के बीच में
च	६.	फिर	अनिन्दिता	१३.	अनिन्दिता सती जी
नाभिचक्रतः।	८.	नाभिचक्र से	अनयत् ॥	१८.	ले गयीं

श्लोकार्थ—उन्होंने आसन को स्थिर कर प्राणायाम द्वारा प्राण और अपान वायु को एकरूप करके नाभिचक्र में स्थित किया। फिर उदान वायु के साथ उसे नाभिचक्र से ऊपर उठाकर धीरे-धीरे बुद्धि के साथ हृदय में स्थापित किया। इसके पश्चात् अनिन्दिता सती जी हृदय में स्थित उस वायु को कण्ठमार्ग में भ्रुकुटियों के बीच में ले गईं ॥

षड्विंशः श्लोकः

एवं स्वदेहं महतां महीयसा मुहुः समारोपितमङ्कमादरात्।
जिहासती दक्षरुषा मनस्विनी दधार गात्रेष्वनिलाग्निधारणम् ॥२६॥

पदच्छेद—एवम् स्वदेहम् महताम् महीयसा मुहुः समारोपितम् अङ्कम् आदरात्।
जिहासती दक्ष रुषा मनस्विनी दधार गात्रेषु अनिल अग्नि धारणम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	जिहासती	११.	छोड़ने की इच्छा से
स्वदेहम्	१०.	उस अपने शरीर को	दक्ष	८.	पिता दक्ष के ऊपर
महताम्	२.	महापुरुषों के	रुषा	९.	क्रोध होने से
महीयसा	३.	पूजनीय (शिवजी ने जिसे)	मनस्विनी	१२.	स्वाभिमानिनी (सती जी)
मुहुः	६.	अनेक बार	दधार	१६.	करने लगीं
समारोपितम्	७.	बैठाया था	गात्रेषु	१३.	अपने अङ्गों में
अङ्कम्	४.	अपनी गोद में	अनिल अग्नि	१४.	वायु और अग्नि की
आदरात्।	५.	बड़े आदर के साथ	धारणम् ॥	१५.	भावना

श्लोकार्थ—इस प्रकार महापुरुषों के पूजनीय शिवजी ने जिसे अपनी गोद में बड़े आदर के साथ अनेक बार बैठाया था पिता दक्ष के ऊपर क्रोध होने से उस अपने शरीर को छोड़ने की इच्छा से स्वाभिमानिनी सती जी अपने अङ्गों में वायु और अग्नि की भावना करने लगीं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

ततः स्वभर्तुश्चरणाम्बुजासवं जगद्गुरोश्चिन्तयती न चापरम्।
ददर्श देहो हतकल्मषः सती सद्यः प्रजज्वाल समाधिजाग्निना ॥२७॥

पदच्छेद　ततः स्वभर्तुः चरण अम्बुज आसवम् जगद्गुरोः चिन्तयती न च अपरम्।
　　ददर्श देहः हत कल्मषः सती सद्यः प्रजज्वाल समाधिज अग्निना ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. उसके पश्चात्		ददर्श	११. देख रहीं थीं (जब)
स्वभर्तुः	४. अपने स्वामी (शिव जी के)		देहः	१२. उनका शरीर
चरण अम्बुज	५. चरण कमल के		हत	१४. रहित (हो गया तब)
आसवम्	६. पराग का		कल्मषः	१३. पापों से
जगद्गुरोः	३. संसार के गुरु		सती	२. सती जो
चिन्तयती	७. ध्यान करने लगीं		सद्यः	१७. तत्काल
न	१०. नहीं		प्रजज्वाल	१८. जल उठा
च	८. उस समय (वे)		समाधिज	१५. समाधि से उत्पन्न
अपरम्।	९. इसके अतिरिक्त (कुछ भी)		अग्निना ॥	१६. अग्नि के द्वारा

श्लोकार्थ— उसके पश्चात् सती जी संसार के गुरु अपने स्वामी शिव जी के चरण कमल के पराग का ध्यान करने लगीं। उस समय वे इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं देख रहीं थीं। जब उनका शरीर पापों से रहित हो गया तब समाधि से उत्पन्न अग्नि के द्वारा तत्काल जल उठा ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तत्पश्यतां खे भुवि चाद्भुतं महद् हाहेति वादः सुमहानजायत।
हन्त प्रिया दैवतमस्य देवी जहावसून् केन सती प्रकोपिता ॥२८॥

पदच्छेद—तत् पश्यताम् खे भुवि च अद्भुतम् महत् हाहा इति।वादः सुमहान् अजायत।
　　हन्त प्रिया दैवतमस्य देवी जहौ असून् केन सती प्रकोपिता ॥

शब्दार्थ—

तत् पश्यताम्	३. उसे देखने वाले लोगों में		हन्त	१०. लोग कहने लगे खेद है कि
खे भुवि	१. आकाश में पृथ्वी पर		प्रिया	१२. प्रिय
च	२. और		दैवतमस्य	११. सर्वश्रेष्ठ देव (शिवजी को)
अद्भुतम्	५. आश्चर्य जनक		देवी	१३. पत्नी
महत्	४. अत्यन्त		जहौ	१८. त्याग दिया
हाहा इति	६. हाय-हाय इस प्रकार का		असून्	१७. अपने प्राणों को
वादः	८. कोलाहल		केन	१५. दक्ष प्रजापति से
सुमहान्	७. भयंकर		सती	१४. सती जी ने
अजायत।	९. होने लगा		प्रकोपिता ॥	१६. कुपित होकर

श्लोकार्थ—आकाश में, पृथ्वी पर और उसे देखने वाले लोगों में अत्यन्त आश्चर्यजनक हाय-हाय इस प्रकार का भयंकर कोलाहल होने लगा। लोग कहने लगे खेद है कि सर्वश्रेष्ठदेव शिवजी की प्रिय पत्नी सतीजी ने दक्ष प्रजापति से कुपित होकर अपने प्राणों को त्याग दिया ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

अहो अनात्म्यं महदस्य पश्यत प्रजापतेर्यस्य चराचरं प्रजाः ।
जहावसून् यद्विमताऽऽत्मजा सती मनस्विनी मानमभीक्ष्णमर्हति ॥२९॥

पदच्छेद—अहो अनात्म्यम् महद् अस्य पश्यत प्रजापतेः यस्य चर अचरम् प्रजाः ।
जहौ असून् यद् विमता आत्मजा सती मनस्विनी मानम् अभीक्ष्णम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	अरे	प्रजाः ।	७.	सन्तान है
अनात्म्यम्	१०.	मूर्खता है (कि)	जहौ	१५.	त्याग दिया
महद्	९.	कितनी बड़ी	असून्	१४.	अपने प्राणों को
अस्य	८.	उसकी	यद् विमता	१३.	जिससे अपमानित होकर
पश्यत	२.	देखें	आत्मजा सती	१२.	पुत्री सतीजी ने
प्रजापतेः	६.	प्रजापति की	मनस्विनी	११.	(उसकी) स्वाभिमानिनी
यस्य	५.	जिस दक्ष	मानम्	१७.	सम्मान के
चर	४	चेतन सारा संसार	अभीक्ष्णम्	१६.	वे सदा
अचरम्	३.	जड़	अर्हति ॥	१८.	योग्य थीं

श्लोकार्थ—अरे ! देखें जड़-चेतन सारा संसार जिस दक्ष प्रजापति की सन्तान है । उसकी कितनी बड़ी मूर्खता है कि उसकी स्वाभिमानिनी पुत्री सतीजी ने उससे अपमानित होकर अपने प्राणों को त्याग दिया । वे सदा सम्मान के योग्य थीं ॥

त्रिंशः श्लोकः

सोऽयं दुर्मर्षहृदयो ब्रह्मध्रुक् च लोकेऽपकीर्तिं महतीमवाप्स्यति ।
यदङ्गजां स्वां पुरुषद्विडुद्यतां न प्रत्यषेधन्मृतयेऽपराधतः ॥३०॥

पदच्छेद—सः अयम् दुर्मर्ष हृदयः ब्रह्मध्रुक् च लोके अपकीर्तिम् महतीम् अवाप्स्यति ।
यद् अङ्गजाम् स्वाम् पुरुष द्विद् उद्यताम् न प्रत्यषेधत् मृतये अपराधः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	सो	यद्	१०.	क्योंकि
अयम्	५.	यह दक्ष	अङ्गजाम्	१६.	पुत्री सती को
दुर्मर्ष हृदयः	२.	कठोरहृदय	स्वाम्	१५.	अपनी
ब्रह्मध्रुक्	४.	ब्राह्मणद्रोही	पुरुषद्विद्	११.	इस शिव द्रोही ने
च	३.	और	उद्यताम्	१४.	तत्पर
लोके	६.	संसार में	न	१७.	नहीं
अपकीर्तिम्	८.	अपयश को	प्रत्यषेधत्	१८.	मना किया
महतीम्	७.	बहुत बड़े	मृतये	१३.	मरने के लिये
अवाप्स्यति ।	९.	प्राप्त करेगा	अपराधतः ॥	१२.	अपमान के कारण

श्लोकार्थ—सो कठोर हृदय और ब्राह्मण द्रोही यह दक्ष संसार में बहुत बड़े अपयश को प्राप्त करेगा । क्योंकि इस शिव द्रोही ने अपमान के कारण मरने के लिये तत्पर अपनी पुत्री सती को मना नहीं किया ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

वदत्येवं जने सत्या दृष्ट्वासुत्यागमद्भुतम् ।
दक्षं तत्पार्षदा हन्तुमुदतिष्ठन्नुदायुधाः ॥३१॥

पदच्छेद—

वदति एवम् जने सत्याः दृष्ट्वा सुत्यागम् अद्भुतम् ।
दक्षम् तत् पार्षदाः हन्तुम् उदतिष्ठन् उदायुधाः ॥

शब्दार्थ—

वदति	७.	कहते रहने पर	अद्भुतम् ।	२.	आश्चर्य जनक (इस)
एवम्	६.	ऐसा	दक्षम्	९.	दक्ष को
जनेः	५.	लोगों के	तत् पार्षदाः	८.	भगवान् शंकर के भूतगण (पार्षद)
सत्याः	१.	सती जी के	हन्तुम्	१०.	मारने के लिये
दृष्ट्वा	४.	देखकर	उदतिष्ठन्	१२.	खड़े हो गये
सुत्यागम्	३.	बहुत बड़े त्याग को	उदायुधाः ॥	११.	हथियार उठाकर

श्लोकार्थ—सतीजी के आश्चर्यजनक इस बहुत बड़े त्याग को देखकर लोगों के ऐसा कहते रहने पर भगवान् शंकर के पार्षद भूतगण दक्ष को मारने के लिये हथियार उठाकर खड़े हो गये ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

तेषामापततां वेगं निशाम्य भगवान् भृगुः ।
यज्ञघ्नघ्नेन यजुषा दक्षिणाग्नौ जुहाव ह ॥३२॥

पदच्छेद—

तेषाम् आपतताम् वेगम् निशाम्य भगवान् भृगुः ।
यज्ञघ्न घ्नेन यजुषा दक्षिणाग्नौ जुहाव ह ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	१.	उन भूतगणों के	यज्ञघ्न	७.	यज्ञों के विघ्न
आपतताम्	२.	आक्रमण के	घ्नेन	८.	विनाशक
वेगम्	३.	वेग को	यजुषा	९.	मन्त्रों से
निशाम्य	४.	देखकर	दक्षिणाग्नौ	११.	यज्ञाग्नि में
भगवान्	५.	महर्षि	जुहाव	१२.	हवन किया
भृगुः ।	६.	भृगु ने	ह ॥	१०.	उस

श्लोकार्थ—उन भूतगणों के आक्रमण के वेग को देखकर महर्षि भृगु ने यज्ञों के विघ्न-विनाशक मन्त्रों से उस यज्ञाग्नि में हवन किया ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अध्वर्युणा ह्रूयमाने देवा उत्पेतुरोजसा ।
ऋभवो नाम तपसा सोमं प्राप्ताः सहस्रशः ॥३३॥

पदच्छेद—

अध्वर्युणा ह्रूयमाने देवाः उत्पेतुः ओजसा ।
ऋभवः नाम तपसा सोमम् प्राप्ताः सहस्रशः ॥

शब्दार्थ—

अध्वर्युणा	१.	हवनकर्ता के द्वारा	ऋभवः नाम	४.	ऋभु नाम के
ह्रूयमाने	२.	हवन किये जाने पर	तपसा	६.	अपनी तपस्या के प्रभाव से
देवाः	५.	देवगण	सोमम्	८.	चन्द्रलोक में
उत्पेतुः	७.	उत्पन्न हुये (जो)	प्राप्ताः	१०.	रहते हैं
ओजसा ।	६.	अपनी शक्ति के साथ	सहस्रशः ॥	३.	हजारों की संख्या में

श्लोकार्थ—हवनकर्ता के द्वारा हवन किये जाने पर हजारों की संख्या में ऋभु नाम के देवगण अपनी शक्ति के साथ उत्पन्न हुये जो अपनी तपस्या के प्रभाव से चन्द्रलोक में रहते हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तैरलातायुधैः सर्वे प्रमथाः सहगुह्यकाः ।
हन्यमाना दिशो भेजुरुशद्भिर्ब्रह्मतेजसा ॥३४॥

पदच्छेद—

तैः अलात आयुधैः सर्वे प्रमथाः सह गुह्यकाः ।
हन्यमानाः दिशः भेजुः उशद्भिः ब्रह्म तेजसा ॥

शब्दार्थ—

तैः	४.	उन देवताओं से	हन्यमानाः	७.	मार खाकर
अलात	६.	जलती लकड़ियों के द्वारा	दिशः	११.	चारों ओर
आयुधैः	५.	अस्त्रों के रूप में लिये गये	भेजुः	१२.	भाग गये
सर्वे प्रमथाः	१०.	सभी प्रथमगण	उशद्भिः	३.	सम्पन्न
सह	९.	साथ	ब्रह्म	१.	ब्रह्म
गुह्यकाः ।	८.	गुह्यकों के	तेजसा ॥	२.	तेज से

श्लोकार्थ—ब्रह्म तेज से सम्पन्न उन देवताओं से अस्त्रों के रूप में लिये गये जलती लकड़ियों के द्वारा मार खाकर सभी प्रथमगण चारों ओर भाग गये ॥

श्रीमद्भागवत महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे सतीदेहोत्सर्गो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः
श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
चतुर्थः स्कन्धः
पंचमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

भवो भवान्या निधनं प्रजापतेरसत्कृताया अवगम्य नारदात् ।
स्वपार्षदसैन्यं च तदध्वरर्भुभिर्विद्रावितं क्रोधमपारमादधे ॥१॥

पदच्छेद—भवः भवान्याः निधनम् प्रजापतेः असत्कृतायाः अवगम्य नारदात् ।
स्व पार्षद सैन्यम् च तद् अध्वर ऋभुभिः विद्रावितम् क्रोधम् अपारम् आदधे ॥

शब्दार्थ—

भवः	१.	शिव जी ने	सैन्यम्	१२.	सेना को
भवान्याः	६.	सती ने अपना	च	८.	और
निधनम्	७.	देह त्याग दिया है	तद् अध्वर	९.	उस, यज्ञ के
प्रजापतेः	४.	प्रजापति दक्ष से	ऋभुभिः	१०.	ऋभु गणों ने
असत्कृतायाः	५.	अपमानित की गयीं	विद्रावितम्	१३.	मार भगाया है
अवगम्य	३.	सुना कि	क्रोधम्	१५.	क्रोध से
नारदात् ।	२.	देवर्षि नारद से	अपारम्	१४.	(इससे वे) अपार
स्व पार्षद	११.	अपने भूतगणों की	आदधे ॥	१६.	भर गये ।

श्लोकार्थ—शिवजी ने देवर्षि नारद से सुना कि प्रजापति दक्ष से अपमानित की गयी सती ने अपना देह त्याग दिया है और उस यज्ञ के ऋभुगणों ने अपने भूतगणों की सेना को मार भगाया है; इससे वे अपार क्रोध से भर गये ।

द्वितीयः श्लोकः

क्रुद्धः सुदष्टोष्ठपुटः स धूर्जटिर्जटां तडिद्वह्निसटोग्ररोचिषम् ।
उत्कृत्य रुद्रः सहसोत्थितो हसन् गम्भीरनादो विससर्ज तां भुवि ॥२॥

पदच्छेद—क्रुद्धः सुदष्ट ओष्ठपुटः सः धूर्जटिः जटाम् तडिद् वह्निसटा उग्र रोचिषम् ।
उत्कृत्य रुद्रः सहसा उत्थितः हसन् गम्भीर नादः विससर्ज ताम् भुवि ॥

शब्दार्थ—

क्रुद्धः	४.	क्रोध के मारे	उत्कृत्य	१२.	उखाड़ कर
सुदष्ट	६.	दाँतों से चबाते हुए	रुद्रः	३.	उग्र रूप करके
ओष्ठपुटः	५.	अपने दोनों होठों को	सहसा	१३.	एकाएक
सः	१.	वे भगवान्	उत्थितः	१४.	खड़े हो गये (उस समय)
धूर्जटिः	२.	शंकर	हसन्	१५.	अट्टहास करते हुए
जटाम्	११.	एक जटा को	गम्भीर	१६.	बड़े जोर की (उन्होंने)
तडिद्	७.	बिजली की	नादः	१७.	आवाज की (और)
वह्निसटा	८.	जलती लपट के समान	विससर्ज	२०.	पटक दिया
उग्र	९.	अत्यन्त	ताम्	१८.	उसे
रोचिषम् ।	१०.	दीप्तिमान् (अपनी)	भुवि ॥	१९.	पृथ्वी पर

श्लोकार्थ—वे भगवान् शंकर उग्र रूप करके क्रोध के मारे अपने दोनों होठों को दाँतों से चबाते हुए बिजली की जलती लपट के समान अत्यन्त दीप्तिमान् अपनी एक जटा को उखाड़ कर एकाएक खड़े हो गये । उस समय अट्टहास करते हुए उन्होंने बड़े जोर की आवाज की और पृथ्वी पर पटक दिया ।

तृतीयः श्लोकः

ततोऽतिकायस्तनुवा स्पृशन्दिवं सहस्रबाहुर्घनरुक् त्रिसूर्यदृक् ।
करालदंष्ट्रो ज्वलदग्निमूर्धजः कपालमाली विविधोद्यतायुधः ॥३॥

पदच्छेद—ततः अतिकायः तनुवा स्पृशन् दिवम् सहस्र बाहुः घन रुक् त्रि सूर्य दृक् ।
कराल दंष्ट्रः ज्वलत् अग्नि मूर्धजः कपाल माली विविध उद्यत आयुधः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	पटकने पर उस जटा से	कराल	१०.	भयंकर
अतिकायः	२.	एक विशालकाय पुरुष	दंष्ट्रः	१२.	जबड़े (तथा)
तनुवा	३.	शरीर से मानो	ज्वलत्	१३.	जलती
स्पृशन्	५.	छू रहा था (उसके)	अग्नि	१४.	आग के समान
दिवम्	४.	आकाश को	मूर्धजः	१५.	लाल केश थे (वह)
सहस्र बाहुः	६.	हजार, भुजायें	कपाल	१६.	नर मुण्डों की
घन रुक	७.	बादल के समान, श्यामवर्ण	माली	१७.	माला पहने हुए था
त्रि	६.	तीन	विविध	१८.	(और) अनेक प्रकार के
सूर्य	८.	सूर्य के समान चमकते	उद्यत	२०.	लिये हुए था
दृक् ।	१०.	नेत्र	आयुधः ॥	१९.	हथियार

श्लोकार्थ—पटकने पर उस जटा से एक विशालकाय पुरुष उत्पन्न हुआ, जो अपने शरीर से मानो आकाश को छू रहा था। उसके हजार भुजायें, बादल के समान श्याम वर्ण, सूर्य के समान चमकते तीन नेत्र, भयंकर जबड़े तथा जलती आग के समान लाल-लाल केश थे। वह नर-मुण्डों की माला पहने हुए था और अनेक प्रकार के हथियार लिये हुए था।

चतुर्थः श्लोकः

तं किं करोमीति गृणन्तमाह बद्धाञ्जलिं भगवान् भूतनाथः ।
दक्षं सयज्ञं जहि मद्भटानां त्वमग्रणी रुद्र भटांशको मे ॥४॥

पदच्छेद—तम् किम् करोमि इति गृणन्तम् आह बद्ध अञ्जलिम् भगवान् भूतनाथः ।
दक्षम् स यज्ञम् जहि मद्भटानाम् त्वम् अग्रणीः रुद्र भट अंशकः मे ॥

शब्दार्थ—

तम्	६.	उस पुरुष से	दक्षम्	१२.	दक्ष प्रजापति को
किम्	१.	(मैं) क्या	सयज्ञम्	१३.	यज्ञ के साथ
करोमि	२.	करूँ	जहि	१४.	नष्ट कर दो
इति	३.	इस प्रकार	मद्भटानाम्	१५.	मेरे वीरों के
गृणन्तम्	५.	प्रार्थना करते हुए	त्वम् अग्रणीः	१६.	तुम सेनापति हो
आह	६.	कहा	रुद्र	११.	वीरभद्र ! (तुम)
बद्ध अञ्जलिम्	४	हाथ जोड़कर	भट	१०.	हे वीरवर
भगवान्	७	भगवान्	अंशकः	१८.	अंश हो
भूतनाथः ।	८.	शिव ने	मे ॥	१७.	(मेरे और)

श्लोकार्थ—'मैं क्या करूँ' इस प्रकार हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हुए उस पुरुष से भगवान् शिव ने कहा, हे वीरवर वीरभद्र ! तुम दक्ष प्रजापति को उसके यज्ञ के साथ नष्ट कर दो। मेरे वीरों के तुम सेनापति हो और मेरे अंश हो।

पञ्चमः श्लोकः

आज्ञप्त एवं कुपितेन मन्युना स देवदेवं परिचक्रमे विभुम् ।
मेने तदाऽऽत्मानमसङ्गरंहसा महीयसां तात सहः सहिष्णुम् ॥५॥

पदच्छेद— आज्ञप्तः एवम् कुपितेन मन्युना सः देवदेवम् परिचक्रमे विभुम् ।
मेने तदा आत्मानम् असङ्ग रंहसा महीयसाम् तात सहः सहिष्णुम् ॥

शब्दार्थ—

आज्ञप्तः	५. आज्ञा पाने के बाद	मेने	१६.	मानने लगी
एवम्	४. ऐसी	तदा	१०.	उस समय
कुपितेन	३. भरे भगवान् शिव से	आत्मानम्	१३.	अपने को
मन्युना	२. क्रोध में	असङ्ग	११.	(अपने) अबाध
सः	६. वीरभद्रने	रंहसा	१२.	वेग के कारण
देवदेवम्	८. महादेव की	महीयसाम्	१४.	बड़े-बड़े वीरों के
परिचक्रमे	९. परिक्रमा की	तात	१.	हे प्यारे विदुर जी !
विभुम् ।	७. भगवान्	सहः सहिष्णुम् ॥	१५.	वेग को सहने वाला

श्लोकार्थ—हे प्यारे विदुर जी ! क्रोध में भरे भगवान् शिव से ऐसी आज्ञा पाने के बाद वीरभद्र ने भगवान् महादेव की परिक्रमा की । उस समय वे अपने अबाध वेग के कारण अपने को बड़े-बड़े वीरों के वेग को सहने वाला मानने लगे ॥

षष्ठः श्लोकः

अन्वीयमानः स तु रुद्रपार्षदैर्भृशं नदद्भिर्व्यनदत्सुभैरवम् ।
उद्यम्य शूलं जगदन्तकान्तकं स प्राद्रवद् घोषणभूषणाङ्घ्रिः ॥६॥

पदच्छेद— अन्वीयमानः सः तु रुद्र पार्षदैः भृशम् नदद्भिः व्यनदत् सुभैरवम् ।
उद्यम्य शूलम् जगत् अन्तक अन्तकम् सः प्राद्रवत् घोषण भूषण अङ्घ्रि ॥

शब्दार्थ—

अन्वीयमानः	१८ पीछे-पीछे चल रहे थे	उद्यम्य	८.	उठाकर
सः	१७. उनके	शूलम्	७.	त्रिशूल को
तु	४. तथा	जगत् अन्तक	५.	संसार के विनाशक (यमराज का)
रुद्र	१३. भगवान् शिव के	अन्तकम्	६.	संहार करने वाला
पार्षदैः	१४. पार्षद भूतगण	सः	१.	वीरभद्र ने
भृशम्	१५. बड़े जोर की	प्राद्रवत्	९.	दौड़ पड़े (उस समय उनके)
नदद्भिः	१६. गर्जना करते हुये	घोषण	१२.	झन-झना रहे थे (और)
व्यनदत्	३. गर्जना की	भूषण	११.	नूपुर
सुभैरवम् ।	२. अत्यन्त भयानक	अङ्घ्रिः ॥	१०.	पैरों के

श्लोकार्थ—वीरभद्र ने अत्यन्त भयानक गर्जना की तथा संसार के विनाशक यमराज का संहार करने वाला त्रिशूल उठाकर दौड़ पड़े । उस समय उनके पैरों के नूपुर झन-झना रहे थे और भगवान् शिव के पार्षद भूतगण बड़े जोर की गर्जना करते हुये उनके पीछे-पीछे चल रहे थे ॥

सप्तमः श्लोकः

अथर्त्विजो यजमानः सदस्याः ककुभ्युदीच्यां प्रसमीक्ष्य रेणुम् ।
तमः किमेतत्कुत एतद्रजोऽभूदिति द्विजा द्विजपत्न्यश्च दध्युः ॥७॥

पदच्छेद—अथ ऋत्विजः यजमानः सदस्याः ककुभि उदीच्याम् प्रसमीक्ष्य रेणुम् ।
तमः किम् एतत् कुतः एतद् रजः अभूत् ककुभि इति द्विजाः द्विजपत्न्यः च दध्युः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इधर	किम्	१४.	क्या
ऋत्विजः	२.	(हवन कर्ता) ऋत्विज	एतत्	१५.	यह
यजमानः	३.	(दक्ष प्रजापति) यजमान	कुतः एतद्	१८.	कहाँ से यह
सदस्याः	४.	सदस्य और	रजः अभूत्	१९.	धूली आ रही है
ककुभि	९.	दिशा में	इति	१२.	ऐसा
उदीच्याम्	८	उत्तर	द्विजाः	५.	ब्राह्मण
प्रसमीक्ष्य	११.	देख कर	द्विजपत्न्यः	७.	ब्राह्मणों की पत्नियाँ
रेणुम् ।	१०	धूली को	च	६.	तथा
तमः	१६.	अन्धकार है	दध्युः ॥	१३.	विचार करने लगे

श्लोकार्थ—इधर (हवनकर्ता) ऋत्विज (दक्ष प्रजापति) यजमान, सदस्य और ब्राह्मण तथा ब्राह्मणों की पत्नियाँ उत्तर दिशा में धूल को देखकर ऐसा विचार करने लगे क्या यह अन्धकार है कहाँ से यह धूल आ रही है ॥

अष्टमः श्लोकः

वाता न वान्ति न हि सन्ति दस्यवः प्राचीनबर्हिर्जीवति होग्रदण्डः ।
गावो न काल्यन्त इदं कुतो रजो लोकोऽधुना किं प्रलयाय कल्पते ॥८॥

पदच्छेद—वाताः न वान्ति न हि सन्ति दस्यवः प्राचीनबर्हिः जीवति ह उग्रदण्डः ।
गावः न काल्यन्ते इदम् कुतः रजः लोकः अधुना किम् प्रलयाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

वाताः	३.	आँधी	गावः	११.	गऊओं के
न	२.	न तो	न काल्यन्ते	१२.	आने का भी समय नहीं हुआ है
वान्ति	४.	चल रही है	इदम्	१३.	फिर यह
न	६.	नहीं	कुतः	१५.	कहाँ से उठ रही है
हि	५.	और	रजः	१४.	धूल
सन्ति	८.	हैं	लोकः	१७.	संसार का
दस्यवः	७.	लुटेरे	अधुना	१.	इस समय
प्राचीनबर्हिर्जीवति	१०.	राजा प्राचीनबर्हि जीवित हैं	किम्	१६.	क्या
ह उग्रदण्डः ।	९.	क्योंकि कठोर दण्ड देने वाले	प्रलयाय कल्पते ॥	१८.	प्रलय होने वाला है

श्लोकार्थ—इस समय न तो आँधी चल रही है, और नहीं लुटेरे हैं; क्योंकि कठोर दण्ड देने वाले राजा प्राचीन बर्हि जीवित हैं। गऊओं के आने का भी समय नहीं हुआ है। वह धूल कहाँ से उठ रही हैं ? क्या संसार का प्रलय होने वाला है ॥

नवमः श्लोकः

प्रसूतिमिश्राः स्त्रिय उद्विग्नचित्ता ऊचुर्विपाको वृजिनस्यैष तस्य ।
यत्पश्यन्तीनां दुहितॄणां प्रजेशः सुतां सतीमवदध्यावनागाम् ॥९॥

पदच्छेद—प्रसूति मिश्राः स्त्रियः उद्विग्न चित्ताः ऊचुः विपाकः वृजिनस्य एषः तस्य ।
यत् पश्यन्तीनाम् दुहितॄणाम् प्रजेशः सुताम् सतीम् अवदध्यौ अनागाम् ॥

शब्दार्थ—

प्रसूति मिश्राः	१.	प्रसूति इत्यादि	यत्	९.	क्योंकि
स्त्रियः	२.	दक्ष पत्नियाँ	पश्यन्तीनाम्	१२.	सामने ही
उद्विग्न	४.	व्याकुल (होती हुई)	दुहितॄणाम्	११.	सभी पुत्रियों के
चित्ताः	३.	मन में	प्रजेशः	१०.	दक्ष प्रजापति ने (अपनी)
ऊचुः	५.	कहने लगीं	सुताम्	१४.	पुत्री
विपाकः	८.	फल है	सतीम्	१५.	सती का
वृजिनस्य	७.	पाप का	अवदध्यौ	१६.	अपमान किया था
एषः तस्य ।	६.	यह उसी	अनागाम् ॥	१३.	निरपराध

श्लोकार्थ—प्रसूति इत्यादि दक्ष-पत्नियाँ मन में व्याकुल होती हुई कहने लगीं; यह उसी पाप का फल है। क्योंकि दक्ष प्रजापति ने अपनी सभी पुत्रियों के सामने निरपराध पुत्री सती का अपमान किया था ॥

दशमः श्लोकः

यस्त्वन्तकाले व्युप्तजटाकलापः स्वशूलसूच्यर्पितदिग्गजेन्द्रः ।
वितत्य नृत्यत्युदितास्त्रदोर्ध्वजानुच्चाट्टहासस्तनयित्नुभिन्नदिक् ॥१०॥

पदच्छेद— यः तु अन्तकाले व्युप्त जटाकलापः स्वशूल शुचि अर्पित दिग्गजेन्द्रः ।
वितत्य नृत्य उदित अस्त्र दोः ध्वजान् उच्च अट्टहास स्तनयित्नु भिन्न दृक् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो भगवान् शिव	वितत्य	१०.	फैलाकर
तु	५.	तथा	नृत्य	११.	ताण्डव नृत्य करते हैं (उस समय)
अन्तकाले	२.	प्रलय काल आने पर	उदित	७.	धारण करके
व्युप्त	४.	बिखेर कर		६.	आयुध
जटाकलापः	३.	अपने जटा जूट को	अस्त्र दोः	८.	भुजा रूपी
स्वशूल	१२.	उनके त्रिशूल के	ध्वजान्	९.	पताका को
शुचि	१३.	अग्र भाग से	उच्च अट्टहास	१७.	भयंकर अट्टहास से
अर्पित	१५.	बिंध जाते हैं (तथा)	स्तनयित्नु	१६.	मेघ गर्जन के समान
दिग्गजेन्द्रः ।	१४.	दिशाओं के गजराज	भिन्न दृक् ॥	१८	दिशायें फट जाती हैं

श्लोकार्थ—जो भगवान् शिव प्रलयकाल आने पर अपने जटा-जूट को बिखेर कर तथा आयुध धारण करके भुजारूपी पताका को फैलाकर ताण्डव नृत्य करते हैं। उस समय उनके त्रिशूल के अग्रभाग से दिशाओं के गजराज बिंध जाते हैं। तथा मेघगर्जन के समान दिशायें फट जाती हैं ॥

एकादशः श्लोकः

अमर्षयित्वा तमसह्यतेजसं मन्युप्लुतं दुर्विषहं भ्रुकुट्या ।
करालदंष्ट्राभिरुदस्य भागणं स्यात्स्वस्ति किं कोपयतो विधातुः ॥११॥

पदच्छेद— अमर्षयित्वा तम् असह्य तेजसम् मन्यु प्लुतम् दुर्विषहम् भ्रुकुटचा ।
करल दंष्ट्राभिः उदस्य भागणम् स्यात् स्वस्ति किम् कोपयतः विधातुः ॥

शब्दार्थ—

अमर्षयित्वा	१.	क्रोध करने के कारण	कराल दंष्ट्राभिः	८.	भयंकर दाँतों से
तम्	११.	उन (भगवान् शिव को) क्रुद्ध करके	उदस्य	१०.	नष्ट हो जाते हैं
असह्य	३	सहन नहीं किया जा सकता (तथा)	भागणम्	९.	तारागण
तेजसम्	२.	उनका तेज	स्यात्	१६.	हो सकता है
मन्यु	४.	क्रोध से (लबालब)	स्वस्ति	१५.	कल्याण
प्लुतम्	५.	भर जाने पर	किम्	१२.	क्या
दुर्विषहम्	७.	(वे) दुर्धर्ष जान पड़ते हैं	कोपयतः	१३.	क्रुद्ध करने वाले
भ्रुकुटचा ।	६.	भौंहें टेढ़ी करने के कारण	विधातुः ॥	१४.	ब्रह्मा का भी

श्लोकार्थ—क्रोध करने के कारण उनका तेज सहन नहीं किया जा सकता तथा क्रोध से लबालब भर जाने पर भौहें टेढ़ी करने के कारण वे दुर्धर्ष जान पड़ते हैं। भयंकर दांतों से तारागण नष्ट हो जाते हैं। उन भगवान् शिव को क्रुद्ध करके क्या क्रुद्ध करने वाले ब्रह्मा का भी कल्याण हो सकता है ॥

द्वादशः श्लोकः

बह्वेवमुद्विग्नदृशोच्यमाने जनेन दक्षस्य मुहुर्महात्मनः ॥
उत्पेतुरुत्पाततमाः सहस्रशो भयावहा दिवि भूमौ च पर्यक् ॥१२॥

पदच्छेद— बहु एवम् उद्विग्न दृशा उच्यमाने जनेन दक्षस्य मुहुः महात्मनः ।
उत्पेतुः उत्पाततमाः सहस्रशः भयावहाः दिवि भूमौ च पर्यक् ॥

शब्दार्थ—

बहु	६.	अनेक प्रकार से	उत्पेतुः	१८.	होने लगे
एवम्	१.	इस प्रकार	उत्पात	१७.	उत्पात
उद्विग्न	२.	घबडायी	तमाः	१६.	भयंकर
दृशा	३.	आँखों से	सहस्रशः	१४.	हजारों
उच्यमाने	७.	कहते रहने पर	भयावहाः	१५.	भयंकर
जनेन	४.	लोगों के	दिवि	१०.	आकाश
दक्षस्य	९.	दक्ष प्रजापति के यज्ञ में	भूमौ	१२.	पृथ्वी पर
मुहुः	५.	बार-बार	च	११.	और
महात्मनः ।	८.	महात्मा	पर्यक् ॥	१३.	चारों ओर

श्लोकार्थ—इस प्रकार घबड़ायी आँखों से लोगों के बार-बार अनेक प्रकार से कहते रहने पर महात्मा दक्ष के प्रजापति के यज्ञ में आकाश और पृथ्वी पर चारों ओर हजारों भयंकर उत्पात होने लगे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तावत्स रुद्रानुचरैर्मखो महान् नानायुधैर्वामनकैरुदायुधैः ।
पिङ्गैः पिशङ्गैर्मकरोदराननैः पर्याद्रवद्भिर्विदुरान्वरुध्यत ॥१३॥

पदच्छेद—

तावत् स रुद्र अनुचरैः मखः महान् नाना आयुधैः वामनकैः उदायुधैः ।
पिङ्गैः पिशङ्गैः मकर उदर आननैः पर्याद्रवद्भिः विदुर अन्वरुध्यत ॥

शब्दार्थ—

तावत्	२.	उतने में ही	उदायुधैः ।	१७.	हथियार उठाकर
सः	५.	उस	पिङ्गैः	१२.	पीले
रुद्र	३.	भगवान् शिव के	पिशङ्गैः	१२.	भूरे
अनुचरैः	४.	गणों ने	मकर	१४.	मकर के (समान)
मखः	७.	यज्ञ मण्डप को	उदर	१५.	पेट (और)
महान्	६.	महान्	आननैः	१६.	मुखवाले
नाना	९.	अनेक प्रकार के	पर्याद्रवद्भिः	१८.	दौड़ रहे थे
आयुधैः	१०.	हथियार लिये हुये	विदुर	१.	हे विदुर जी !
वामनकैः	११.	बौने	अन्वरुध्यत ॥	८.	घेर लिया

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! उतने में ही भगवान् शिव के गणों ने उस महान् यज्ञ मण्डप को घेर लिया । अनेक प्रकार के हथियार लिये हुये बौने, पीले, भूरे, मकर के पेट और मुख वाले हथियार उठाकर दौड़ रहे थे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

केचिद्बभञ्जुः प्राग्वंशं पत्नीशालां तथापरे ।
सद आग्नीध्रशालां च तद्विहारं महानसम् ॥१४॥

पदच्छेद—

केचिद् बभञ्जुः प्राग्वंशम् पत्नीशालाम् तथा अपरे ।
सदः आग्नीध्रशालाम् च तद् विहारम् महानसम् ॥

शब्दार्थ—

केचिद्	१.	कुछ गणों ने	सदः	६.	सभा मण्डप को
बभञ्जुः	१२.	नष्ट कर दिया	आग्नीध्रशालाम्	७.	हवन मण्डप को
प्राग्वंशम्	२.	यज्ञ के बाड़े को	च	१०.	और
पत्नीशालाम्	५.	पत्नीशाला को	तद्	८.	यजमान के
तथा	३.	तथा	विहारम्	९.	रहने के स्थान
अपरे ।	४.	कुछ ने	महानसम् ॥	११.	पाकशाला को

श्लोकार्थ—कुछ गणों ने यज्ञ के बाड़े को तथा कुछ ने पत्नीशाला को, सभा मण्डप को, हवन मण्डप को, यजमान के रहने के स्थान को और पाकशाला को नष्ट कर दिया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

रुरुजुर्यज्ञपात्राणि तथैकेऽग्नीननाशयन् ।
कुण्डेष्वमूत्रयन् केचिद्बिभिदुर्वेदिमेखलाः ॥१५॥

पदच्छेद—

रुरुजुः यज्ञ पात्राणि तथा एके अग्नीन् अनाशयन् ।
कुण्डेषु अमूत्रयन् केचिद् बिभिदुः वेदि मेखलाः ॥

शब्दार्थ—

रुरुजुः	४. तोड़ डाला	कुण्डेषु	९. यज्ञ-कुण्डों में
यज्ञ	२. यज्ञ के	अमूत्रयन्	१०. पेशाब कर दिया (और)
पात्राणि	३. वर्तनों को	केचिद्	८. कुछ ने
तथा	५. तथा	बिभिदुः	१३. तोड़ दिया
एके	१. कुछ ने	वेदि	११. वेदियों की
अग्नीन्	६. अग्नियों को	मेखलाः ॥	१२. डोरी को
अनाशयन् ।	७. बुझा दिया		

श्लोकार्थ—कुछ ने यज्ञ के वर्तनों को तोड़ डाला, तथा अग्नियों को बुझा दिया। कुछ ने यज्ञ-कुण्डों में पेशाब कर दिया और वेदियों को डोरी को तोड़ डाला ॥

षोडशः श्लोकः

अबाधन्त मुनीनन्य एके पत्नीरतर्जयन् ।
अपरे जगृहुर्देवान् प्रत्यासन्नान् पलायितान् ॥१६॥

पदच्छेद—

अबाधन्त मुनीन् अन्ये एके पत्नीः अतर्जयन् ।
अपरे जगृहुः देवान् प्रत्यासन्नान् पलायितान् ॥

शब्दार्थ—

अबाधन्त	३. पीड़ा पहुँचाने लगे	अपरे	६. दूसरों ने
मुनीन्	२. मुनियों को	जगृहुः	१०. पकड़ लिया
अन्ये	१. कुछ भूतगण	देवान्	९. देवताओं को
एके पत्नीः	४. कुछ दक्ष की पत्नियों को	प्रत्यासन्नान्	७. यज्ञ में उपस्थित (और)
अतर्जयन् ।	५. डराने लगे (तथा)	पलायितान् ॥	८. भागते हुये

श्लोकार्थ—कुछ भूतगण मुनियों को पीड़ा पहुँचाने लगे, कुछ दक्ष-पत्नियों को डराने लगे तथा दूसरों ने यज्ञ में उपस्थित और भागते हुये देवताओं को पकड़ लिया ॥

सप्तदशः श्लोकः

भृगुं बबन्ध मणिमान् वीरभद्रः प्रजापतिम् ।
चण्डीशः पूषणं देवं भगं नन्दीश्वरोऽग्रहीत् ॥१७॥

पदच्छेद—

मृगुम् बबन्ध मणिमान् वीरभद्रः प्रजापतिम् ।
चण्डीशः पूषणम् देवम् भगम् नन्दीश्वरः अग्रहीत् ॥

शब्दार्थ—

मृगुम्	२. भृगु ऋषि को (और)		चण्डीशः	६. चण्डीश ने
बबन्ध	५. बांध लिया		पूषणम् देवम्	७. पूषा देवताओं को (तथा)
मणिमान्	१. मणिमान् ने		भगम्	६. भग देवता को
वीरभद्रः	३. वीरभद्र ने		नन्दीश्वरः	८. नन्दीश्वर ने
प्रजापतिम् ।	४. दक्ष प्रजापति को		अग्रहीत् ॥	१०. पकड़ लिया

श्लोकार्थ—चण्डीश ने पूषा देवता को, मणिमान् ने भृगु ऋषि को और वीरभद्र ने दक्ष प्रजापति को बांध लिया तथा नन्दीश्वर को भग देवता ने पकड़ लिया ॥

अष्टादशः श्लोकः

सर्व एवर्त्विजो दृष्ट्वा सदस्याः सदिवौकसः ।
तैरर्घमानाः सुभृशं ग्रावभिर्नैकधाद्रवन् ॥१८॥

पदच्छेद—

सर्वे एव ऋत्विजः दृष्ट्वा सदस्याः सदिवौकसः ।
तैः अर्घमानाः सुभृशम् ग्रावभिः नैकधा अद्रवन् ॥

शब्दार्थ—

सर्वे	७. सब		तैः	१. उन भूतगणों के द्वारा
एव	८. ही		अर्घमानाः	५. पीड़ित होते हुये
ऋत्विजः	६. हवनकर्ता (और)		सुभृशम्	४. अत्यन्त
दृष्ट्वा	६. देखकर		ग्रावभिः	२. पत्थरों की मार से (सबको)
सदस्याः	११. सारे सदस्य		नैकधा	३. अनेक तरह से
सदिवौकसः ।	१०. देवताओं के साथ		अद्रवन् ॥	१२. भाग गये

श्लोकार्थ—उन भूतगणों के द्वारा पत्थरों की मार से सबको अनेक तरह से अत्यन्त पीड़ित होते हुये देखकर सब ही हवनकर्त्ता और देवताओं के साथ सारे सदस्य भाग गये ॥

एकोनविंशः श्लोकः

जुह्वतः स्रुवहस्तस्य श्मश्रूणि भगवान् भवः।
भृगोर्लुलुञ्चे सदसि योऽहसच्छ्मश्रु दर्शयन् ॥१९॥

पदच्छेद—

जुह्वतः स्रुव हस्तस्य श्मश्रूणि भगवान् भवः।
भृगोः लुलुञ्चे सदसि यः अहसत् श्मश्रु दर्शयन् ॥

शब्दार्थ—

जुह्वतः	९.	हवन करते हुये	भृगोः	१०.	उन भृगु ऋषि की
स्रुव	८.	स्रुवा लेकर	लुलुञ्चे	१२.	नोंच लीं
हस्तस्य	७.	हाथ में	सदसि	१.	देवताओं की भी
श्मश्रूणि	११.	दाढी-मूँछें	यः	२.	जिन्होंने
भगवान्	५.	भगवान्	अहसत्	४.	उपहास किया था
भवः।	६.	वीरभद्र ने	श्मश्रु दर्शयन् ॥	३.	मूँछें दिखाकर (भगवान् शिव का)

श्लोकार्थ—देवताओं की सभा में जिन्होंने मूँछें (दिखाकर भगवान्) शिव का उपहास किया था भगवान् वीरभद्र ने हाथ में स्रुवा लेकर हवन करते हुये उन भृगु ऋषि की दाढी-मूँछें नोंच लीं ॥

विंशः श्लोकः

भगस्य नेत्रे भगवान् पातितस्य रुषा भुवि।
उज्जहार सदःस्थोऽक्ष्णा यः शपन्तमसूसुचत् ॥२०॥

पदच्छेद—

भगस्य नेत्रे भगवान् पातितस्य रुषा भुवि।
उज्जहार सदः स्थः अक्ष्णा यः शपन्तम् असूसुचत् ॥

शब्दार्थ—

भगस्य	५.	भगदेवता की	उज्जहार	७.	निकाल लीं।(क्योंकि)
नेत्रे	६.	दोनों आँखें	सदः स्थः	८.	देवआओं को सभा में बैठकर
भगवान्	१.	भगवान् वीरभद्र ने	अक्ष्णा	११.	अपनी आँख से
पातितस्य	४.	पटक कर	यः	९.	उन्होंने
रुषा	२.	क्रोध से	शपन्तम्	१०.	शाप देते हुये (दक्ष को)
भुवि।	३.	पृथ्वी पर	असूसुचत् ॥	१२.	इशारा किया था

श्लोकार्थ—भगवान् वीरभद्र ने क्रोध से पृथ्वी पर पटककर भगदेवता की दोनों आँखें निकाल लीं। क्योंकि देवताओं की सभा में बैठकर उन्होंने शाप देते हुये दक्ष को अपनी आँखों से इशारा किया था ॥

एकविंशः श्लोकः

पूष्णश्चापातयद्दन्तान् कालिङ्गस्य यथा बलः ।
शप्यमाने गरिमणि योऽहसद्दर्शयन्दतः ॥२१॥

पदच्छेद—

पूष्णः च अपातयत् दन्तान् कालिङ्गस्य यथा बलः ।
शप्यमाने गरिमणि यः अहसत् दर्शयन् दतः ॥

शब्दार्थ—

पूष्णः	४.	(वैसे ही वीरभद्र ने) पूषा देवता के	शप्यमाने	९.	गाली देते समय
च	७.	क्योंकि	गरिमणि	८.	भगवान् शिव को
अपातयत्	६.	तोड़ डाले	यः	१०.	ये
दन्तान्	५.	दांत	अहसत्	१३.	हंसे थे
कालिङ्गस्य	३.	कलिङ्ग नरेश (दांत तोड़ दिये थे)	दर्शयन्	१२.	दिखाकर
यथा	१.	जैसे (अनिरुद्ध के विवाह के समय)	दतः ॥		
बलः ।	१.	बल राम जी ने			

श्लोकार्थ—जैसे अनिरुद्ध के विवाह के समय बलराम जी ने कलिङ्ग नरेश के दांत तोड़ दिये थे। वैसे ही वीरभद्र ने पूषा देवता के दांत तोड़ डाले; क्योंकि भगवान् शिव को गाली देते समय ये दांत दिखाकर हंसे थे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

आक्रम्योरसि दक्षस्य शितधारेण हेतिना ।
छिन्दन्नपि तदुद्धर्तुं नाशक्नोत् त्र्यम्बकस्तदा ॥२२॥

पदच्छेद—

आक्रम्य उरसि दक्षस्य शित धारेण हेतिना ।
छिन्दन् अपि तद् उद्धर्तुम् न अशक्नोत् त्र्यम्बकः तदा ॥

शब्दार्थ—

आक्रम्य	८.	वार किया (किन्तु वे)	छिन्दन् अपि	१०	काटने पर भी (उसे)
उरसि	७.	छाती पर	तद्	९.	उसके सिर को
दक्षस्य	६.	दक्ष की	उद्धर्तुम्	११.	अलग करने में
शित	३.	तेज	न अशक्नोत्	१२.	समर्थ नहीं हो सके
धारेण	४.	धार वाली	त्र्यम्बकः	२.	वीरभद्र ने
हेतिना ।	५	तलवार से	तदा ॥	१.	उसके बाद

श्लोकार्थ—उसके बाद वीरभद्र ने तेज धार वाली तलवार से दक्ष की छाती पर वार किया; किन्तु वे उसके सिर को काटने पर भी अलग करने में समर्थ नहीं हो सके ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

शस्त्रैरस्त्रान्वितैरेवमनिर्भिन्नत्वचं हरः ।
विस्मयं परमापन्नो दध्यौ पशुपतिश्चिरम् ॥२३॥

पदच्छेद—

शस्त्रैः अस्त्र अन्वितैः एवम् अनिर्भिन्न त्वचम् हरः ।
विस्मयम् परम् आपन्नः दध्यौ पशुपतिः चिरम् ॥

शब्दार्थ—

शस्त्रैः	२.	आयुधों के द्वारा	विस्मयम्	८	आश्चर्य
अस्त्र अन्वितैः	१.	अस्त्रों से युक्त	परम्	७.	अत्यन्त
एवम्	३.	इस प्रकार (काटने पर भी जब)	आपन्नः	९.	हुआ (उस समय)
अनिर्भिन्न	५.	नहीं कटी	दध्यौ	१२.	सोचते रहे
त्वचम्	४.	(दक्ष की) चमड़ी	पशुपतिः	१०.	जीवों के स्वामी वीरभद्र
हरः ।	६.	(जब) वीरभद्र को	चिरम् ॥	११.	बहुत देर तक

श्लोकार्थ—अस्त्रों से युक्त आयुधों के द्वारा इस प्रकार काटने पर भी जब दक्ष की चमड़ी नहीं कटी तब वीरभद्र को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। उस समय जीवों के स्वामी वीरभद्र बड़ी देर तक सोचते रहे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

दृष्ट्वा संज्ञपनं योगं पशूनां स पतिर्मखे ।
यजमानपशोः कस्य कायात्तेनाहरच्छिरः ॥२४॥

पदच्छेद—

दृष्ट्वा संज्ञपनम् योगम् पशूनाम् सः पतिः मखे ।
यजमान पशोः कस्य कायात् तेन अहरत् शिरः ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	७.	देखकर	यजमान	९.	यजमान रूप
संज्ञपनम्	५.	बलि को	पशोः	१०.	पशु
योगम्	६.	विधि को	कस्य	११.	दक्ष प्रजापति के
पशूनाम्	४	पशुओं को	कायात्	१३.	धड़ से
सः	१.	उन	तेन	८.	उसी प्रकार
पतिः	२.	वीरभद्र ने	अहरत्	१४.	अलग कर दिया
मखे ।	३	यज्ञ मण्डप में	शिरः ॥	१२.	सिर को

श्लोकार्थ—उन वीरभद्र ने यज्ञ मण्डप में पशुओं की बलि की विधि को देखकर उसी प्रकार यजमान रूप पशु दक्ष प्रजापति के सिर को धड़ से अलग कर दिया ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

साधुवादस्तदा तेषां कर्म तत्तस्य शंसताम् ।
भूतप्रेतपिशाचानामन्येषां तद्विपर्ययः ॥२५॥

पदच्छेद—

साधुवादः तदा तेषाम् कर्म तत् तस्य शंसताम् ।
भूत प्रेत पिशाचानाम् अन्येषाम् तद् विपर्ययः ।

शब्दार्थ—

साधुवादः	६.	वाह-वाह	भूत	३.	भूत
तदा	१.	उस समय	प्रेत	४.	प्रेत (और)
तेषाम्	२.	वे	पिशाचानाम्	५.	पिशाचगण
कर्म	८.	कार्य को (देखकर)	अन्ये	११.	दूसरे
तत्	७.	उस	एषाम्	१२.	देवगण
तस्य	६.	उनके	तद्	१३.	उसके
शंसताम् ।	१०.	करने लगे (तथा)	विपर्ययः ॥	१४.	विपरीत (हाय-हाय करने लगे)

श्लोकार्थ—उस समय वे भूत-प्रेत-पिशाचगण उनके उस कार्य को देखकर वाह-वाह करने लगे। तथा दूसरे देवगण उसके विपरीत हाय-हाय करने लगे ॥

षड्विंशः श्लोकः

जुहावैतच्छिरस्तस्मिन्दक्षिणाग्नावमर्षितः ।
तद्देवयजनं दग्ध्वा प्रातिष्ठद् गुह्यकालयम् ॥२६॥

पदच्छेद—

जुहाव एतद् शिरः तस्मिन् दक्षिणाग्नौ अमर्षितः ।
तद् देवयजनम् दग्ध्वा प्रातिष्ठद् गुह्यकालयम् ॥

शब्दार्थ—

जुहाव	५.	डाल दिया (और)	तद्	७.	उस
एतद् शिरः	२.	दक्ष के सिर को	देवयजनम्	८.	यज्ञ मण्डप को
तस्मिन्	३.	उस	दग्ध्वा	६.	जलाकर
दक्षिणाग्नौ	४.	दक्षिणाग्नि में	प्रातिष्ठन्	११.	चल दिये
अमर्षितः ।	१.	क्रुद्ध हुये (वीरभद्र ने)	गुह्यकालयम् ॥	१०.	कैलाश पर्वत को

श्लोकार्थ—क्रुद्ध हुये वीरभद्र ने दक्ष के सिर को उस दक्षिणाग्नि में डाल दिया और यज्ञ मण्डप को जला कर कैलाश पर्वत को चल दिये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे दक्षयज्ञविध्वंसो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

षष्ठः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

अथ देवगणाः सर्वे रुद्रानीकैः पराजिताः ।
शूलपट्टिशनिस्त्रिंशगदापरिघमुद्गरैः ॥१॥

पदच्छेद—

अथ देवगणाः सर्वे रुद्र अनीकैः पराजिताः ।
शूल पट्टिश निस्त्रिंश गदा परिघ मुद्गरैः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इधर	शूल	६.	त्रिशूल
देवगणाः	३.	देवगण	पट्टिश	७.	पट्टिश
सर्वे	२.	सभी	निस्त्रिंश	८.	तलवार
रुद्र	४.	भगवान् शिव की	गदा	९.	गदा
अनीकैः	५.	सेना से	परिघ	१०.	परिघ (और)
पराजिताः ।	१२.	भाग गये	मुद्गरैः ॥	११.	मुदगरों की मार खाकर

श्लोकार्थ—इधर सभी देवगण भगवान् शिव की सेना से त्रिशूल, पट्टिश, तलवार, गदा, परिघ और मुद्गरों की मार खाकर भाग गये ॥

द्वितीयः श्लोकः

संछिन्नभिन्नसर्वाङ्गाः सर्त्विक्सभ्या भयाकुलाः ।
स्वयम्भुवे नमस्कृत्य कार्त्स्न्येनैतन्न्यवेदयन् ॥२॥

पदच्छेद—

संछिन्न भिन्न सर्व अङ्गाः स ऋत्विक् सभ्याः भय आकुलाः ।
स्वयम्भुवे नमस्कृत्य कार्त्स्न्येन एतत् न्यवेदयन् ॥

शब्दार्थ—

संछिन्न	३.	छिन्न	भय	५.	डर से
भिन्न	४.	भिन्न हो गये	आकुलाः	६.	घबराये हुये देवगण
सर्व	१.	देवताओं के सारे	स्वयम्भुवे	१०.	ब्रह्मा जी को
अङ्गाः	२.	अङ्ग	नमस्कृत्य	११.	प्रणाम करके
स	९.	साथ	कार्त्स्न्येन	१३.	सारा वृत्तान्त
ऋत्विक्	७.	हवनकर्ता (और)	एतत्	१२.	उनसे यह
सभ्याः	८.	सदस्यों के	न्यवेदयन् ॥	१४.	निवेदन किया

श्लोकार्थ—देवताओं के सारे अङ्ग छिन्न-भिन्न हो गये । डर से घबराये हुये देवगण हवनकर्ता और सदस्यों के साथ ब्रह्मा जी को प्रणाम करके उनसे यह सारा वृत्तान्त निवेदन किया ॥

तृतीयः श्लोकः

उपलभ्य पुरैवैनद्भगवानब्जसम्भवः ।
नारायणश्च विश्वात्मा न कस्याध्वरमीयतुः ॥३॥

पदच्छेद—

उपलभ्य पुरा एव एतद् भगवान् अब्ज् सम्भवः ।
नारायणः च विश्वात्मा न कस्य अध्वरम् ईयतुः ॥

शब्दार्थ—

उपलभ्य	१०.	जानते थे (अतः वे)	नारायणः	६.	नारायण
पुरा	८.	पहले से	च	४	और
एव	६.	ही	विश्वात्मा	५.	सबकी आत्मा
एतद्	७.	यह	न	१३.	नहीं
भगवान्	१.	भगवान्	कस्य	११.	दक्ष प्रजापति के
अब्ज	२.	कमल	अध्वरम्	१२.	यज्ञ में
सम्भवः ।	३.	योनि ब्रह्मा जी	ईयतुः ॥	१४.	गये

श्लोकार्थ—भगवान् कमलयोनि ब्रह्मा जी और सब की आत्मा नारायण यह पहले से ही जानते थे अतः वे दक्ष प्रजापति के यज्ञ में नहीं गये ॥

चतुर्थः श्लोकः

तदाकर्ण्य विभुः प्राह तेजीयसि कृतागसि ।
क्षेमाय तत्र सा भूयान्न प्रायेण बुभूषताम् ॥४॥

पदच्छेद—

तद् आकर्ण्य विभुः प्राह तेजीयसि कृत आगसि ।
क्षेमाय तत्र सा भूयात् न प्रायेण बुभूषताम् ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	देवताओं की बात	क्षेमाय	१२.	कल्याणकारी
आकर्ण्य	२.	सुन कर	तत्र	८.	उस विषय में
विभुः	३.	ब्रह्मा जी	सा	१०.	वह प्रतिक्रिया
प्राह	४.	बोले	भूयात्	१४.	होती है
तेजीयसि	५.	तेजस्वी पुरुष का भी	न	१३.	नहीं
कृत	७.	करने पर	प्रायेण	११.	अधिकतर
आगसि ।	६.	अपराध	बुभूषताम् ॥	६.	बदला लेने वालों की

श्लोकार्थ—देवताओं की बात सुनकर ब्रह्माजी बोले तेजस्वी पुरुष का भी अपराध करने पर उस विषय में बदला लेने वाले की वह प्रतिक्रिया अधिकतर कल्याणकारी नहीं होती है ॥

पञ्चमः श्लोकः

अथापि यूयं कृतकिल्बिषा भवं ये बर्हिषो भागभाजं परादुः ।
प्रसादयध्वं परिशुद्धचेतसा क्षिप्रप्रसादं प्रगृहीताङ्घ्रिपद्मम् ॥५॥

पदच्छेद— अथ अपि यूयम् कृत किल्बिषा भवम् ये बर्हिषः भाग भाजम् परादुः ।
प्रसादयध्वम् परिशुद्ध चेतसा क्षिप्र प्रसादम् प्रगृहीत अङ्घ्रि पद्मम् ॥

शब्दार्थ—

अथ अपि	८.	फिर भी	प्रसादयध्वम्	१४.	प्रसन्न करो
यूयम्	१.	तुम लोगों ने	परिशुद्ध	९.	निर्मल
कृत	७.	किया हैं	चेतसा	१०.	मन से
किल्बिषः	६.	(उनका) अपराध	क्षिप्र	१५.	(वे) शीघ्र
भवम्	४.	शिव जी के	प्रसादम्	१६.	प्रसन्न होने वाले (हैं)
ये बर्हिषः	२.	जो यज्ञ में	प्रगृहीत	१३.	पकड़ कर (उन्हें)
भाग भाजम्	३.	भाग पाने के योग्य थे	अङ्घ्रि	११.	उनके चरण
परादुः ।	५.	भाग नहीं दिया है (अतः)	पद्मम् ॥	१२.	कमल को

श्लोकार्थ—तुम लोगों ने जो यज्ञ में भाग पाने के योग्य, शिव जी को भाग नहीं दिया है, अतः उनका अपराध किया है, फिर भी निर्मल मन से उनके चरण-कमल को पकड़ कर उन्हें प्रसन्न करो। वे शीघ्र ही प्रसन्न होने वाले हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

आशासाना जीवितमध्वरस्य लोकः सपालः कुपिते न यस्मिन् ।
तमाशु देवं प्रियया विहीनं क्षमापयध्वं हृदि विद्धं दुरुक्तैः ॥६॥

पदच्छेद— आशासानाः जीवितम् अध्वरस्य लोकः सपालः कुपिते न यस्मिन् ।
तम् आशु देवम् प्रियया विहीनम् क्षमापयध्वम् हृदि विद्धम् दुरुक्तैः ॥

शब्दार्थ—

आशासानाः	८.	चाहते हो तो	तम्	१०.	उन
जीवितम्	७.	फिर से पूर्ण करना	आशु	९.	शीघ्र ही
अध्वरस्य	६.	तुम लोग यज्ञ को	देवम्	११.	महादेव जी से
लोकः	१५.	सारे लोक (और)	प्रियया	४.	अपनी प्रिय पत्नी से
सपालः	१६.	लोक पाल	विहीनम्	५.	रहित हो गये हैं (अतः)
कुपिते	१४.	क्रोध करने पर	क्षमापयध्वम्	१२.	क्षमा की याचना करो
न	१७.	नहीं रह सकते हैं	हृदि	१.	(शिव जी का) हृदय
यस्मिन् ।	१३.	जिनके	विद्धम्	३.	बिंध गया है (और वे)
			दुरुक्तैः ॥	२.	दुर्वचन रूपी बाणों से

श्लोकार्थ—शिव जी का हृदय दुर्वचनरूपी बाणों से बिंध गया है। और वे अपनी प्रिय पत्नी से रहित हो गये हैं। अतः तुम लोग यज्ञ को फिर से पूर्ण करना चाहते हो तो शीघ्र ही उन महादेव जी से क्षमा की याचना करो। जिनके क्रोध करने पर सारे लोक और लोक पाल नहीं रह सकते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

नाहं न यज्ञो न च यूयमन्ये ये देहभाजो मुनयश्च तत्त्वम् ।
विदुः प्रमाणं बलवीर्ययोर्वा यस्यात्मतन्त्रस्य क उपायं विधित्सेत् ॥७॥

पदच्छेद — न अहम् न यज्ञः न च यूयम् ये देहभाजः मुनयः च तत्त्वम् ।
विदुः प्रमाणम् बल वीर्ययोः वा यस्य आत्मतन्त्रस्य क उपायम् विधित्सेत् ॥

शब्दार्थ—

न अहम्	१. न मैं		विदुः	१३. जानते हैं (अतः)
न यज्ञः न	२. न यज्ञस्वरूप इन्द्र		प्रमाणम्	१२. प्रमाण को
न च	४. न ही		बल वीर्ययोः	११. शक्ति और सामर्थ्य के
यूयम्	३. तुम लोग		वा	१०. अथवा
अन्ये	६. दूसरे		यस्य	१५. उन शिव जी को
ये	५. जो		आत्मतन्त्रस्य	१४. परमस्वतन्त्र
देहभजः	७. शरीरधारी		कः	१७. कौन
मुनयः	८. मुनिजन		उपायम्	१६. प्रसन्न करने का उपाय
च तत्त्वम् ।	९. भी उनके स्वरूप को		विधित्सेत् ॥	१८. जान सकता है

श्लोकार्थ—न मैं न यज्ञ स्वरूप इन्द्र, न तुम लोग और दूसरे शरीरधारी मुनिजन भी जो उनके स्वरूप को अथवा शक्ति और सामर्थ्य को नहीं जानते हैं । अतः परम स्वतन्त्र उन शिव जी को प्रसन्न करने का उपाय कौन जान सकता है ॥

अष्टमः श्लोकः

स इत्थमादिश्य सुरानजस्तैः समन्वितः पितृभिः सप्रजेशैः ।
ययौ स्वधिष्ण्यान्निलयं पुरद्विषः कैलासमद्रिप्रवरं प्रियं प्रभोः ॥८॥

पदच्छेद— सः इत्थम् आदिश्य सुरान् अजः तैः समन्वितः पितृभिः सप्रजेशैः ।
ययौ स्वधिष्ण्यात् निलयम् परद्विषः कैलाशम् अद्रि प्रवरम् प्रियम् प्रभोः ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वे		ययौ	१८. गये
इत्थम्	४. इस प्रकार		स्वधिष्ण्यात्	१०. अपने लोक से
आदिश्य	५. आदेश देकर		निलयम्	१४. धाम
सुरान्	३. देवताओं को		परद्विषः	११. त्रिपुरारि
अजः	२. ब्रह्मा जी		कैलाशम्	१७. कैलाश पर्वत पर
तैः	६. उन देवताओं		अद्रि	१५. पर्वतों में
समन्वितः	९. साथ		प्रवरम्	१६. श्रेष्ठ
पितृभिः	७. पितरों (और)		प्रियम्	१३. मनोहर
सप्रजेशैः ।	८. प्रजापतियों के		प्रभोः ॥	१२. भगवान् शिव के

श्लोकार्थ—वे ब्रह्मा जी देवताओं को इस प्रकार आदेश देकर उन देवताओं, पितरों और प्रजापतियों के साथ अपने लोक से त्रिपुरारि भगवान् शिव के मनोहर धाम पर्वतों में श्रेष्ठ कैलाश पर्वत पर गये ॥

नवमः श्लोकः

जन्मौषधितपोमन्त्रयोगसिद्धैर्नरेतरैः ।
जुष्टं किन्नरगन्धर्वैरप्सरोभिर्वृतं सदा ॥९॥

पदच्छेद—

जन्म ओषधि तपः मन्त्र योग सिद्धैः नर इतरैः ।
जुष्टम् किन्नर गन्धर्वैः अप्सरोभिः वृतम् सदा ॥

शब्दार्थ—

जन्म	१.	(वह पर्वत) जन्म से ही	इतरैः ।	८.	भिन्न देवताओं से
ओषधि	२.	वनस्पति	जुष्टम्	९.	सुशोभित है (और वहाँ)
तपः	३.	तपस्या	किन्नर	११.	किन्नर
मन्त्र	४.	मन्त्र (और)	गन्धर्वैः	१२.	गन्धर्व
योग	५.	योग के प्रभाव से	अप्सरोभिः	१३.	अपसरायें
सिद्धैः	६.	सिद्धि को प्राप्त हुये	वृतम्	१४.	विहार करती हैं
नर	७.	मनुष्यों से	सदा ॥	१०.	हमेशा

श्लोकार्थ—वह पर्वत जन्म से ही वनस्पति, तपस्या, मन्त्र और योग के प्रभाव से सिद्धि को प्राप्त हुये मनुष्यों से भिन्न देवताओं से सुशोभित है। और वहाँ हमेशा किन्नर, गन्धर्व, अप्सरायें विहार करती हैं॥

दशमः श्लोकः

नानामणिमयैः शृङ्गैर्नानाधातुविचित्रितैः ।
नानाद्रुमलतागुल्मैर्नानामृगगणावृतैः ॥१०॥

पदच्छेद—

नाना मणिमयैः शृङ्गैः नाना धातु विचित्रितैः ।
नाना द्रुम लता गुल्मैः नाना मृगगण आवृतैः ॥

शब्दार्थ—

नाना	२.	अनेक प्रकार की	नाना	७.	(वह पर्वत) अनेक प्रकार के
मणिमयैः	३.	मणियों से बने थे (तथा)	द्रुम लता	८.	वृक्ष लतायें (और)
शृङ्गैः	१.	उस पर्वत के शिखर	गुल्मैः	९.	झाड़ियों से (तथा)
नाना	४.	अनेक प्रकार की	नाना	१०.	अनेक प्रकार के
धातु	५.	धातुओं से	मृगगण	११.	पशु-पक्षियों के समूह से
विचित्रितैः ।	६	अनेक वर्ण के लग रहे थे	आवृतैः ॥	१२.	व्याप्त था

श्लोकार्थ—उस पर्वत के शिखर अनेक प्रकार की मणियों से बने थे, तथा अनेक प्रकार की धातुओं से अनेक वर्ण के लग रहे थे। वह पर्वत अनेक प्रकार के वृक्ष-लताओं और झाड़ियों से तथा अनेक प्रकार के पशु-पक्षियों के समूह से व्याप्त था॥

एकादशः श्लोकः

नानामलप्रस्रवणैर्नानाकन्दरसानुभिः ।
रमणं विहरन्तीनां रमणैः सिद्धयोषिताम् ॥११॥

पदच्छेद—

नाना अमल प्रस्रवणैः नाना कन्दर सानुभिः ।
रमणम् विहरन्तीनाम् रमणैः सिद्ध योषिताम् ॥

शब्दार्थ—

नाना अमल	१. अनेक निर्मल		रमणम्	१०. विहार स्थान था
प्रस्रवणैः	२. झरनों से		विहरन्तीनाम्	७. विहार करने वाली
नाना	३. अनेक		रमणैः	६. अपने पतियों के साथ
कन्दर	४. गुफाओं (एवं)		सिद्ध	८. सिद्धों की
सानुभिः ।	५. चोटियों से (वह पर्वत)		योषिताम् ॥	९. स्त्रियों का

श्लोकार्थ—अनेक निर्मल झरनों से अनेक गुफाओं एवम् चोटियों से वह पर्वत अपने पतियों के साथ विहार करने वाली सिद्धों की स्त्रियों का विहार स्थान था ॥

द्वादशः श्लोकः

मयूरकेकाभिरुतं मदान्धालिविमूर्च्छितम् ।
प्लावितै रक्तकण्ठानां कूजितैश्च पतत्त्रिणाम् ॥१२॥

पदच्छेद—

मयूर केका अभिरुतम् मदान्ध अलि विमूर्च्छितम् ।
प्लावितैः रक्तकण्ठानाम् कूजितैः च पतत्त्रिणाम् ॥

शब्दार्थ—

मयूर	१. वह पर्वत मोर की	प्लावितैः	८. कुहू-कुहू की ध्वनि से
केका	२. ध्वनि से	रक्तकण्ठानाम्	७. कोयलों की
अभिरुतम्	३. सुशोभित	कूजितैः	११. कलरव से (व्याप्त था)
मदान्ध	४. मद से अन्धे	च	९. और
अलि विमूर्च्छितम् ॥	६. भौंरों की गुञ्जार से गुञ्जायमान (तथा)	पतत्त्रिणाम् ॥	१०. पक्षियों के

श्लोकार्थ—वह पर्वत मोर की ध्वनि से सुशोभित, मद से अन्धे भौंरों की गुञ्जार से गुञ्जायमान तथा कोयलों की कुहू-कुहू की ध्वनि से और पक्षियों के कलरव से व्याप्त था ॥

त्रयोदशः श्लोकः

आह्वयन्तमिवोद्धस्तैर्द्विजान् कामदुघैर्द्रुमैः ।
व्रजन्तमिव मातङ्गैर्गृणन्तमिव निर्झरैः ॥१३॥

पदच्छेद—

आह्वयन्तम् इव उद्धस्तैः द्विजान् कामदुघैः द्रुमैः ।
व्रजन्तम् इव मातङ्गैः गृणन्तम् इव निर्झरैः ॥

शब्दार्थ—

आह्वयन्तम्	६.	बुला रहे थे	व्रजन्तम्	९.	चल रहा था (तथा)
इव	४.	मानों	इव	८.	मानों
उद्धस्तैः	३.	डालियों को हिला-हिलाकर	मातङ्गैः	७.	हाथियों की चाल से
द्विजान्	५.	पक्षियों को	गृणन्तम्	११.	बात करता हुआ
कामदुघैः	१.	(वहाँ पर) कामनाओं की पूर्ति करने वाले	इव	१२.	सा जान पड़ता था
द्रुमैः ।	२.	कल्प वृक्ष	निर्झरैः ॥	१०.	झरनों की कल-कल ध्वनि से

श्लोकार्थ—(वहाँ पर) कामनाओं की पूर्ति करने वाले कल्प वृक्ष डालियों को हिला-हिलाकर मानों पक्षियों को बुला रहे थे। हाथियों की चाल से मानों चल रहा था तथा झरनों की कल-कल ध्वनि से बात करता हुआ-सा जान पड़ता था ॥

चतुर्दशः श्लोकः

मन्दारैः पारिजातैश्च सरलैश्चोपशोभितम् ।
तमालैः शालतालैश्च कोविदारासनार्जुनैः ॥१४॥

पदच्छेद—

मन्दारैः पारिजातैः च सरलैः च उपशोभितम् ।
तमालैः शाल तालैः च कोविदार असन अर्जुनैः ॥

शब्दार्थ—

मन्दारैः	१.	वह पर्वत मन्दार	तालैः	६.	ताड़
पारिजातैः च	२.	कल्प वृक्ष	च	९.	और
सरलैः च	३.	सरल	कोविदार	७.	कचनार
उपशोभितम् ।	११.	सुन्दर लग रहा था	असन	८.	असन
तमालैः	४.	तमाल	अर्जुनैः ॥	१०.	अर्जुन वृक्षों से
शाल	५.	शाल			

श्लोकार्थ—वह पर्वत मन्दार, कल्पवृक्ष, सरल, शाल, ताड़, कचनार असन और अर्जुन वृक्षों से सुन्दर लग रहा था ॥

पञ्चदशः श्लोकः

चूतैः कदम्बैर्नीपैश्च नागपुन्नागचम्पकैः ।
पाटलाशोकबकुलैः कुन्दैः कुरबकैरपि ॥१५॥

पदच्छेद—

चूतैः कदम्बैः नीपैः च नाग पुन्नाग चम्पकैः ।
पाटल अशोक बकुलैः कुन्दैः कुरबकैः अपि ॥

शब्दार्थ—

चूतैः	१.	(वह पर्वत) आम	पाटल	६.	गुलाब
कदम्बैः	२.	कदम्ब	अशोक	७.	अशोक
नीपैः	३.	नीप	बकुलैः	८.	मौलसिरी
च	१०.	और	कुन्दैः	९.	कुन्द
नाग पुन्नाग	४.	नाग पुन्नाग	कुरबकैः	११.	कुरबक के वृक्षों से
चम्पकैः ।	५.	चम्पा	अपि ॥	१२.	भी (सुशोभित था)

श्लोकार्थ—वह पर्वत आम, कदम्ब, नीप, नाग पुन्नाग, चम्पा, गुलाब, अशोक मौलसिरी, कुन्द, कुरबक के वृक्षों से भी सुशोभित था ॥

षोडशः श्लोकः

स्वर्णार्णशतपत्रैश्च वररेणुकजातिभिः ।
कुब्जकैर्मल्लिकाभिश्च माधवीभिश्च मण्डितम् ॥१६॥

पदच्छेद—

स्वर्ण वर्ण शतपत्रैः च वररेणुक जातिभिः ।
कुब्जकैः मल्लिकाभिः च माधवीभिः च मण्डितम् ॥

शब्दार्थ—

स्वर्ण	१.	(वह पर्वत) सुनहले	कुब्जकैः	७.	कुब्जक
वर्ण	२.	रंग के	मल्लिकाभिः	९.	मोगरा
शतपत्रैः	३.	कमल	च	८.	और
च	४.	और	माधवीभिः	११.	माधवी की लताओं से
वररेणुक	५.	इलायची	च	१०.	तथा
जातिभिः ।	६.	मालती	मण्डितम् ॥	१२.	सुशोभित

श्लोकार्थ—वह पर्वत सुनहले रंग के कमल और इलायची, मालती, कुरबक और मोगरा तथा माधवी की लताओं से सुशोभित था ।

सप्तदशः श्लोकः

पनसोदुम्बराश्वत्थप्लक्षन्यग्रोधहिङ्गुभिः ।
भूर्जैरोषधिभिः पूगै राजपूगैश्च जम्बुभिः ॥१७॥

पदच्छेद—

पनस उदुम्बर अश्वत्थ प्लक्ष न्यग्रोध हिङ्गुभिः ।
भूर्जैः ओषधिभिः पूगैः राज पूगैः च जम्बुभिः ॥

शब्दार्थ—

पनस	१.	(वह पर्वत) कटहल	भूर्जैः	७.	भोजपत्र
उदुम्बर	२.	गूलर	ओषधिभिः	८.	केलादि ओषधि
अश्वत्थ	३.	पीपल	पूगैः	९.	सुपारी
प्लक्ष	४.	पाकड़	राज पूगैः	१०.	राजपूग
न्यग्रोध	५.	वट	च	११.	और
हिङ्गुभिः ।	६.	गूगल	जम्बुभिः ॥	१२.	जामुन के वृक्षों से सुशोभित था

श्लोकार्थ—वह पर्वत कटहल, गूलर, पीपल, पाकड़, वट, गूगल, भोजपत्र केलादि ओषधि, सुपारी, राजपूग और जामुन के वृक्षों से सुशोभित था ॥

अष्टादशः श्लोकः

खर्जूराम्रातकाम्राद्यैः प्रियालमधुकेङ्गुदैः ।
द्रुम जातिभिरन्यैश्च राजितं वेणुकीचकैः ॥१८॥

पदच्छेद—

खर्जूर आम्रातक आम्रआद्यैः प्रियाल मधुक इङ्गुदैः ।
द्रुम जातिभिः अन्यैः च राजितम् वेणु कीचकैः ॥

शब्दार्थ—

खर्जूर	१.	(वह पर्वत) खजूर	द्रुम	८.	वृक्ष
अम्रातक	२.	आमड़ा	जातिभिः	९.	जाति के
आम्र	३.	आम	अन्यैः	१०.	दूसरे वृक्षों से
आद्यैः	४.	इत्यादि वृक्षों से	च	११.	और
प्रियाल	५.	पियाल	राजितम्	१४.	सुन्दर लग रहा था
मधुक	६.	महुआ	वेणु	१२.	ठोस बांस
इङ्गुदैः ।	७.	लिसोड़ा (इत्यादि)	कीचकैः ॥	१३.	पोले बाँसों से

श्लोकार्थ—वह पर्वत खजूर, आमड़ा, आम इत्यादि वृक्षों से पियाल, लिसौड़ा इत्यादि वृक्ष जाति के दूसरे वृक्षों से और ठोस बाँस, पोले बाँसों से सुन्दर लग रहा था ॥

एकोनविंशः श्लोकः

कुमुदोत्पलकह्लारशतपत्रवनर्द्धिभिः ।
नलिनीषु कलं कूजत्खगवृन्दोपशोभितम् ॥१९॥

पदच्छेद—

कुमुद उत्पल कह्लार शतपत्र वन ऋद्धिभिः ।
नलिनीषु कलम् कूजत् खग वृन्द उपशोभितम् ॥

शब्दार्थ—

कुमुद	१.	कुमुद	नलिनीषु	७.	कमलिनी के ऊपर
उत्पल	२.	उत्पल	कलम्	८.	मनोहर
कह्लार	३.	कह्लार जाति के	कूजत्	९.	कलरव करते हुये
शतपत्र	४.	कमलों के	खग	१०.	पक्षियों के
वन	५.	वन की	वृन्द	११.	झुंड से (वह पर्वत)
ऋद्धिभिः ।	६.	शोभा से (तथा)	उपशोभितम् ॥	१२.	शोभायमान था

श्लोकार्थ—कुमुद, उत्पल, कह्लार जाति के कमलों के वन की शोभा से तथा कमलिनी के ऊपर मनोहर कलरव करते हुये पक्षियों के झुंड से वह पर्वत शोभायमान था ॥

विंशः श्लोकः

मृगैः शाखामृगैः क्रोडैर्मृगेन्द्रैर्ऋक्षशल्यकैः ।
गवयैः शरभैर्व्याघ्रै रुरुभिर्महिषादिभिः ॥२०॥

पदच्छेद—

मृगैः शाखामृगैः क्रोडैः मृगेन्द्रैः ऋक्ष शल्यकैः ।
गवयैः शरभैः व्याघ्रैः रुरुभिः महिष आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

मृगैः	१.	(वह पर्वत) हरिण	गवयैः	७.	नीलगाय
शाखामृगैः	२.	बन्दर	शरभैः	८.	शरभ
क्रोडैः	३.	सूअर	व्याघ्रैः	९.	बाघ
मृगेन्द्रैः	४.	सिंह	रुरुभिः	१०.	रुरुमृग (और)
ऋक्ष	५.	रीछ	महिष	११.	भैंसे
शल्यकैः ॥	६.	स्याही	आदिभिः ॥	१२.	इत्यादि जानवरों से (व्याप्त था)

श्लोकार्थ—वह पर्वत हरिण, बन्दर, सूअर, सिंह, रीछ, स्याही, नीलगाय, शरभ, बाघ, रुरुमृग और भैंसे इत्यादि जानवरों से व्याप्त था ॥

एकविंशः श्लोकः

कर्णान्त्रैकपदाश्वास्यैर्निर्जुष्टं वृकनाभिभिः ।
कदलीषण्डसंरुद्धनलिनीपुलिनश्रियम् ॥२१॥

पदच्छेद—

कर्णान्त्र एकपद अश्वास्यैः निर्जुष्टम् वृक नाभिभिः ।
कदलीखण्ड संरुद्ध नलिनी पुलिन श्रियम् ॥

शब्दार्थ—

कर्णान्त्र	१. (वह पर्वत) कर्णान्त्र		कदलीखण्ड	६. केलों के झुंड से
एकपद	२. एक पद		संरुद्ध	७. घिरी हुई
अश्वास्यैः	३. अश्वमुख		नलिनी	८. कमलिनी
निर्जुष्टम्	५. व्याप्त था (तथा)		पुलिन	९. सरोवरों के तट की
वृक नाभिभिः ।	४. भेड़िया और कस्तूरी मृगों से		श्रियम् ॥	१०. शोभा बढ़ा रही थी

श्लोकार्थ—वह पर्वत कर्णान्त्र, एक पद, अश्वमुख, भेड़िया और कस्तूरी मृगों से व्याप्त था तथा केलों के झुंड से घिरी हुई कमलिनी सरोवरों के तट की शोभा बढ़ा रही थी ॥

द्वाविंशः श्लोकः

पर्यस्तं नन्दया सत्याः स्नानपुण्यतरोदया ।
विलोक्य भूतेशगिरिं विबुधा विस्मयं ययुः ॥२२॥

पदच्छेद—

पर्यस्तम् नन्दया सत्याः स्नान पुण्यतर उदया ।
विलोक्य भूतेश गिरिम् विबुधाः विस्मयम् ययुः ॥

शब्दार्थ—

पर्यस्तम्	६. घिरे हुये	विलोक्य	९. देखकर
नन्दया	५. नन्दानाम की नदी से	भूतेश	७. भूतनाथ भगवान् शिव के
सत्याः	१. सती जी के	गिरिम्	८. कैलाश पर्वत को
स्नान	२. नहाने से	विबुधाः	१०. देवगण
पुण्यतर	३. और अधिक पवित्र	विस्मयम्	११. आश्चर्य में
उदया ।	४. जल वाली	ययुः ॥	१२. पड़ गये

श्लोकार्थ—सती जी के नहाने से और अधिक पवित्र जल वाली नन्दा नाम की नदी से घिरे हुये भूतनाथ भगवान् शिव के कैलाश पर्वत को देखकर देवगण आश्चर्य में पड़ गये ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

ददृशुस्तत्र ते रम्यामलकां नाम वै पुरीम् ।
वनं सौगन्धिकं चापि यत्र तन्नाम पङ्कजम् ॥२३॥

पदच्छेद—

ददृशुः तत्र ते रम्याम् अलकाम् नाम वै पुरीम् ।
वनम् सौगन्धिकम् च अपि यत्र तत् नाम पङ्कजम् ॥

शब्दार्थ—

ददृशुः	१२.	देखा	वनम्	१०.	वन को
तत्र	१.	वहाँ पर	सौगन्धिकम्	९.	सौगन्धिक नाम के
ते	२.	उन देवताओं ने	च	८.	और
रम्याम्	६.	सुन्दर	अपि	११.	भी
अलकाम्	३.	अलका	यत्र	१३.	जिस वन में
नाम	४.	नाम की	तत्	१४.	सौगन्धिक
वै	५.	इस	नाम	१५.	नाम के
पुरीम् ।	७.	पुरी को	पङ्कजम् ॥	१६.	कमल (खिले थे)

श्लोकार्थ—वहाँ पर उन देवताओं ने अलका नाम की इस सुन्दर पुरी को और सौगन्धिक वन को भी देखा । जिस वन में सौगन्धिक नाम के कमल खिले थे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

नन्दा चालकनन्दा च सरितौ बाह्यतः पुरः ।
तीर्थपादपदाम्भोजरजसातीव पावने ॥२४॥

पदच्छेद—

नन्दा च अलकनन्दा च सरितौ बाह्यतः पुरः ।
तीर्थपाद पद अम्भोज रजसा अतीव पावने ॥

शब्दार्थ—

नन्दा	९.	नन्दा	तीर्थपाद	३.	भगवान् श्री हरि के
च	१०.	और	पद	४.	चरण
अलकनन्दा च	११.	अलकानन्दा	अम्भोज	५.	कमल के
सरितौ	१२.	दो नदियाँ बहती थीं	रजसा	६.	पराग से
बाह्यतः	२.	बाहर	अतीव	७.	अत्यन्त
पुरः ।	१.	उस पुरी के	पावने ॥	८.	पवित्र

श्लोकार्थ—उस पुरी के बाहर भगवान् श्री हरि के चरण-कमल के पराग से अत्यन्त पवित्र नन्दा और अलकनन्दा नाम की दो नदियाँ बहती थीं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

ययोः सुरस्त्रियः क्षत्तरवरुह्य स्वधिष्ण्यतः ।
क्रीडन्ति पुंसः सिञ्चन्त्यो विगाह्य रतिकर्शिताः ॥२५॥

पदच्छेद—

ययोः सुर स्त्रियः क्षत्तः अवरुह्य स्वधिष्ण्यतः ।
क्रीडन्ति पुंसः सिञ्चन्त्यः विगाह्य रति कर्शिताः ॥

शब्दार्थ—

ययोः	८.	जिन नदियों में	क्रीडन्ति	१२.	क्रीडा करती हैं
सुर	४.	देवताओं की	पुंसः	१०.	अपने पतियों के ऊपर
स्त्रियः	५.	स्त्रियाँ	सिञ्चन्त्यः	११.	जल उलीचती हुई
क्षत्तः	१.	हे विदुर जी !	विगाह्य	९.	प्रवेश करके
अवरुह्य	७.	उतर कर	रति	२.	रति विलास से
स्वधिष्ण्यतः ।	६.	अपने धाम से	कर्शिताः ॥	३.	थकी हुई

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! रति विलास से थकी हुई देवताओं की स्त्रियाँ अपने धाम से उतर कर जिन नदियों में प्रवेश करके अपने पतियों के ऊपर जल उलीचती क्रीडा करती हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

ययोस्तत्स्नानविमृष्टनवकुङ्कुमपिञ्जरम् ।
वितृषोऽपि पिबन्त्यम्भः पाययन्तो गजा गजीः ॥२६॥

पदच्छेद—

ययोः तत् स्नान विमृष्ट नव कुङ्कुम पिञ्जरम् ।
वितृषः अपि पिबन्ति अम्भः पाययन्तः गजाः गजीः ॥

शब्दार्थ—

ययोः	१.	जिन नदियों में	वितृषः	९.	प्यास न होने पर
तत्	२.	देवाङ्गनाओं के	अपि	१०.	भी
स्नान	३.	नहाने से	पिबन्ति	१२.	पीते हैं (और)
विमृष्ट	४.	धुले हुये	अम्भः	८.	जल को
नव	५.	नवीन	पाययन्तः	१४.	पिलाते हैं
कुङ्कुम	६.	केशर के कारण	गजाः	११	हाथी
पिञ्जरम् ।	७	पीले वर्ण के	गजीः ॥	१३.	अपनी हथिनियों को

श्लोकार्थ—जिन नदियों में देवाङ्गनाओं के नहाने से धुले हुये नवीन केशर के कारण पीले वर्ण के जल को प्यास न होने पर भी हाथी पीते हैं और अपनी हथिनियों को पिलाते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तारहेममहारत्नविमानशतसंकुलाम् ।
जुष्टां पुण्यजनस्त्रीभिर्यथा खं सतडिद्घनम् ॥२७॥

पदच्छेद—

तार हेम महारत्न विमान शत संकुलाम् ।
जुष्टाम् पुण्यजन स्त्रीभिः यथा खम् सतडित् घनम् ॥

शब्दार्थ—

तार	४.	चाँदी	जुष्टाम्	१२.	सेवित थीं
हेम	५.	सुवर्ण (और)	पुण्यजन	१०.	यक्षों की
महारत्न	६.	बहुमूल्य मणियों से निर्मित	स्त्रीभिः	११.	पत्नियों से
विमान	८.	विमानों से	यथा	३.	समान (वह पुरी)
शत	७.	सैकड़ों	खम्	२.	आकाश के
संकुलाम् ।	९.	व्याप्त थी (और)	सतडित् घनम् ॥	१.	बिजली और बादलों से व्याप्त

श्लोकार्थ—बिजली और बादलों से व्याप्त आकाश के समान वह पुरी चाँदी, सुवर्ण और बहुमूल्य मणियों से निर्मित सैकड़ों विमानों से व्याप्त थी और यक्षों की पत्नियों से सेवित थी ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

हित्वा यक्षेश्वरपुरीं वनं सौगन्धिकं च तत् ।
द्रुमैः कामदुघैर्हृद्यं चित्रमाल्यफलच्छदैः ॥२८॥

पदच्छेद—

हित्वा यक्षेश्वर पुरीम् वनम् सौगन्धिकम् च तत् ।
द्रुमैः कामदुघैः हृद्यम् चित्र माल्य फल च्छदैः ॥

शब्दार्थ—

हित्वा	३.	छोड़कर	द्रुमैः	१३.	कल्प वृक्षों से
यक्षेश्वर	१.	(वे देवगण) यक्षराज की	कामदुघैः	८.	कामनाओं की पूर्ति करने वाले (और)
पुरीम्	२.	अलका पुरी को	हृद्यम्	१४.	मनोहर लगता था
वनम्	६.	वन में (पहुँचे)	चित्र	९.	अनेक प्रकार के
सौगन्धिकम्	४.	सौगन्धिक नाम के	माल्य	१०.	फूल (तथा)
च	७.	जो	फल	११,	फलों से
तत् ।	५.	उस	च्छदैः ॥	१२.	लदे हुये

श्लोकार्थ—वे देवगण यक्षराज की अलकापुरी को छोड़कर सौगन्धिक नाम के उस वन में पहुँचे, जो कामनाओं की पूर्ति करने वाले और अनेक प्रकार के फूल और फलों से लदे हुये कल्पवृक्षों से मनोहर लगता था ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

रक्तकण्ठखगानीकस्वरमण्डितषट्पदम् ।
कलहंसकुलप्रेष्ठं खरदण्डजलाशयम् ॥२९॥

पदच्छेद—

रक्तकण्ठ खग अनीक स्वर मण्डित षट् पदम् ।
कलहंस कुल प्रेष्ठं खर दण्ड जल आशयम् ॥

शब्दार्थ—

रक्तकण्ठ	१.	वह वन कोयल आदि	कलहंस	८.	वहाँ राजहंसों के
खग	२.	पक्षियों के	कुल	९.	कुल को
अनीक	३.	झुण्ड की	प्रेष्ठं	१०.	अत्यन्त प्यारे
स्वर	४.	कलरव ध्वनि से (तथा)	खर	११.	निर्मल
मण्डित	७.	सुशोभित था	दण्ड	१२.	जल वाले
षट्	५.	भौंरों की	जल	१३.	सरोवर
पदम् ।	६.	गुञ्जार से	आशयम् ॥	१४.	विद्यमान थे

श्लोकार्थ—वह वन कोयल आदि पक्षियों के झुंड की कलरव ध्वनि से तथा भौंरों के गुञ्जार से सुशोभित था । वहाँ राजहंसों के कुल को अत्यन्त प्यारे निर्मल जल वाले सरोवर विद्यमान थे ॥

त्रिंशः श्लोकः

वनकुञ्जरसंघृष्टहरिचन्दनवायुना ।
अधि पुण्यजनस्त्रीणां मुहुरुन्मथयन्मनः ॥३०॥

पदच्छेद—

वन कुञ्जर संघृष्ट हरिचन्दन वायुना ।
अधि पुण्यजन स्त्रीणाम् मुहुः उन्मथयन् मनः ॥

शब्दार्थ—

वन	१.	वन के	अधि पुण्यजन	६.	विशेष रूप से यक्षों का
कुञ्जर	२.	हाथियों के	स्त्रीणाम्	७.	पत्नियों के
संघृष्ट	३.	घर्षण से	मुहुः	९.	बार-बार
हरिचन्दन	४.	चन्दन की सुगन्धित	उन्मथयन्	१०.	मथे डालता था
वायुना ।	५.	वायु	मनः ॥	८.	मन को

श्लोकार्थ—वन के हाथियों के घर्षण से चन्दन की सुगन्धित वायु विशेष रूप से यक्षों की पत्नियों के मन को मथे डालता था ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

वैदूर्यकृतसोपाना वाप्य उत्पलमालिनीः ।
प्राप्ताः किम्पुरुषैर्दृष्ट्वा त आराद्ददृशुर्वटम् ॥३१॥

पदच्छेद—

वैदूर्य कृत सोपानाः वाप्यः उत्पल मालिनीः ।
प्राप्ताः किम्पुरुषैः दृष्ट्वा ते आरात् ददृशुः वटम् ॥

शब्दार्थ—

वैदूर्य	२. वैदूर्य मणि की	प्राप्ताः	८. आते थे (उन्हें)
कृत	४. बनायी गई थीं (और उनमें)	किम्पुरुषैः	७. किन्नरगण (विहार करने)
सोपानाः	३. सीढ़ियाँ	दृष्ट्वा	९. देखने के पश्चात्
वाप्यः	१. (वहाँ) वावड़ियों में	ते आरात्	१०. उन देवगणों ने समीप में
उत्पल	५. कमल	ददृशुः	१२. देखा
मालिनीः ।	६. खिले हुये थे (जहाँ)	वटम् ॥	११. एक वट वृक्ष

श्लोकार्थ—वहाँ वावड़ियों में वैदूर्यमणि की सीढ़ियाँ बनाई गईं थीं और उनमें कमल खिले हुये थे। जहाँ किन्नरगण विहार करने आते थे। उन्हें देखने के पश्चात् उन देवगणों ने समीप में एक वट वृक्ष देखा ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

स योजनशतोत्सेधः पादोनविटपायतः ।
पर्यक्कृताचलच्छायो निर्नीडस्तापवर्जितः ॥३२॥

पदच्छेद—

सः योजन शत उत्सेधः पादोन विटप आयतः ।
पर्यक् कृत अचल छायः निर्नीडः ताप वर्जितः ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वह वट वृक्ष	पर्यक्	८. उसके चारों ओर
योजन	३. योजन	कृत	११. होने से
शत	२. एक सौ	अचल	९. घनी
उत्सेधः	४. ऊँचा था (उसकी)	छायः	१०. छाया
पादोन	६. पचहत्तर योजन तक	निर्नीडः	१४. घोंसले (नहीं थे)
विटप	५. शाखायें	ताप	१२. वहाँ गर्मी
आयतः ।	७. फैली हुई थीं	वर्जितः ॥	१३. नहीं लगती थी (तथा उसमें)

श्लोकार्थ—वह वट वृक्ष एक सौ योजन ऊँचा था। उसकी शाखायें पचहत्तर योजन तक फैली हुई थीं। उसके चारों ओर घनी छाया होने से वहाँ गर्मी नहीं लगती थी। तथा उसमें घोंसले नहीं थे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तस्मिन्महायोगमये मुमुक्षुशरणे सुराः ।
ददृशुः शिवमासीनं त्यक्तामर्षमिवान्तकम् ॥३३॥

पदच्छेद—

तस्मिन् महा योग मये मुमुक्षु शरणे सुराः ।
ददृशुः शिवम् आसीनम् त्यक्त अमर्षम् इव अन्तकम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	६.	उस (वट वृक्ष के नीचे)	ददृशुः	१४.	देखा
महा	१.	महान्	शिवम्	८.	भगवान् शिव को
योग	२.	योग	आसीनम्	७.	बैठे हुये
मये	३.	मय (एवम्)	त्यक्त	११.	छोड़े हुये
मुमुक्षु	४.	मोक्ष के इच्छुकों के	अमर्षम्	१०.	क्रोध को
शरणे	५.	आश्रय	इव	१३.	समान
सुराः ।	९.	देवगणों ने	अन्तकम् ॥	१२.	यमराज के

श्लोकार्थ—महान् योगमय एवम् मोक्ष के इच्छुकों के आश्रय उस वट वृक्ष के नीचे बैठे हुये भगवान् शिव को देवगणों ने क्रोध को छोड़े हुये यमराज के समान देखा ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

सनन्दनाद्यैर्महासिद्धैः शान्तैः संशान्तविग्रहम् ।
उपास्यमानं सख्या च भर्त्रा गुह्यकरक्षसाम् ॥३४॥

पदच्छेद—

सनन्दन आद्यैः महासिद्धैः शान्तैः संशान्त विग्रहम् ।
उपास्य मानम् सख्या च भर्त्रा गुह्यक रक्षसाम् ॥

शब्दार्थ—

सनन्दन	१.	सनन्दन	उपास्य मानम्	१२.	उपासना कर रहे थे
आद्यैः	०.	इत्यादि	सख्या	७.	मित्र
महासिद्धैः	४.	महान् सिद्ध (और)	च	८.	और
शान्तैः	३.	शान्त चित्त	भर्त्रा	९.	स्वामी
संशान्त	१०.	अत्यन्त शान्त	गुह्यक	५.	यक्षों (तथा)
विग्रहम् ।	११.	शरीर वाले (भगवान् शिव को)	रक्षसाम् ॥	६.	राक्षसों के

श्लोकार्थ—सनन्दन इत्यादि शान्त चित्त महान्सिद्ध और यक्षों तथा राक्षसों के मित्र और स्वामी अत्यन्त शान्त शरीर वाले भगवान् शिव की उपासना कर रहे थे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

विद्यातपोयोगपथमास्थितं तमधीश्वरम् ।
चरन्तं विश्वसुहृदं वात्सल्याल्लोकमङ्गलम् ॥३५॥

पदच्छेद—

विद्या तपः योगपथम् आस्थितम् तम् अधीश्वरम् ।
चरन्तम् विश्व सुहृदम् वात्सल्यात् लोक मङ्गलम् ॥

शब्दार्थ—

विद्या	५.	उपासना	चरन्तम्	१२.	उपासना कर रहे थे
तपः	६.	तपस्या (और)	विश्व	२.	सबके
योगपथम्	७.	समाधि के मार्ग में	सुहृदम्	३.	मित्र
आस्थितम्	८.	स्थित होकर	वात्सल्यात्	९.	स्नेह के कारण
तम्	४.	वे भगवान् शिव	लोक	१०.	संसार के
अधीश्वरम्	१.	सब के स्वामी (एवम्)	मङ्गलम्	११.	कल्याण के लिये

श्लोकार्थ—सबके स्वामी एवम् सबके मित्र वे भगवान् शिव उपासना, तपस्या और समाधि के मार्ग में स्थित होकर स्नेह के कारण संसार के कल्याण के लिये उपासना कर रहे थे ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

लिङ्गं च तापसाभीष्टं भस्मदण्डजटाजिनम् ।
अङ्गेन संध्याभ्ररुचा चन्द्रलेखां च बिभ्रतम् ॥३६॥

पदच्छेद—

लिङ्गम् च तापस अभीष्टम् भस्म दण्ड जटा अजिनम् ।
अङ्गेन संध्या अभ्र रुचा चन्द्रलेखाम् च बिभ्रतम् ॥

शब्दार्थ—

लिङ्गम्	३.	चिह्न	अङ्गेन	८.	शरीर से
च	६.	वे भगवान् शिव	संध्या	९.	सन्ध्याकालीन
तापस	१.	तथा तपस्वियों के	अभ्र	१०.	बादल के समान
अभीष्टम्	२.	प्रिय	रुचा	११.	कान्तिमान् थे
भस्म	४.	भस्म	चन्द्रलेखाम्	१३.	अर्ध चन्द्र
दण्ड जटा	५.	दण्ड, जटा	च	१२.	और (मस्तक पर)
अजिनम्	७.	मृग चर्म से (युक्त थे)	बिभ्रतम् ॥	१४.	धारण किये थे

श्लोकार्थ—वे भगवान् शिव तपस्वियों के प्रिय चिह्न भस्म, दण्ड, जटा, तथा मृग चर्म से युक्त थे। शरीर से सन्ध्याकालीन बादल के समान कान्तिमान् थे और मस्तक पर अर्धचन्द्र धारण किये थे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

उपविष्टं दर्भमय्यां बृस्यां ब्रह्म सनातनम् ।
नारदाय प्रवोचन्तं पृच्छते शृण्वतां सताम् ॥३७॥

पदच्छेद—

उपविष्टम् दर्भमय्याम् बृस्याम् ब्रह्म सनातनम् ।
नारदाय प्रवोचन्तम् पृच्छते शृण्वताम् सताम् ॥

शब्दार्थ—

उपविष्टम्	३.	बैठकर (वे)	नारदाय	६.	नारद जी के
दर्भमय्याम्	१.	कुशा से निर्मित	प्रवोचन्तम्	१०.	उपदेश कर रहे थे
बृस्याम्	२.	आसन पर	पृच्छते	७.	प्रश्न करने पर
ब्रह्म	५.	ब्रह्म का	शृण्वताम्	९.	सुनते हुये
सनातनम् ।	४.	सनातन	सताम् ॥	८.	सन्तों के

श्लोकार्थ— कुशा से निर्मित आसन पर बैठकर वे सनातन ब्रह्म नारद जी के प्रश्न करने पर सन्तों के सुनते हुये उपदेश कर रहे थे ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

कृत्वोरौ दक्षिणे सव्यं पादपद्मं च जानुनि ।
बाहुं प्रकोष्ठेऽक्षमालामासीनं तर्कमुद्रया ॥३८॥

पदच्छेद—

कृत्वा ऊरौ दक्षिणे सव्यम् पाद पद्मम् च जानुनि ।
बाहुम् प्रकोष्ठे अक्ष मालाम् आसीनम् तर्क मुद्रया ॥

शब्दार्थ—

कृत्वा	८.	रखकर	बाहुम्	६.	हाथ को
ऊरौ	४.	जाँघ पर	प्रकोष्ठे	९.	कलाई में
दक्षिणे	३.	दाहिनी	अक्ष	१०.	रुद्राक्ष की
सव्यम्	१.	(वे अपने) बाँयें	मालाम्	११.	माला पहने हुये
पाद पद्मम्	२.	चरण कमल को	आसीनम्	१४.	बैठे थे
च	५.	और	तर्क	१२.	ज्ञान
जानुनि ।	७.	घुटने पर	मुद्रया ॥	१३.	मुद्रा में

श्लोकार्थ— वे अपने बाँये चरण-कमल को दाहिनी जाँघ पर और हाथ को घुटने पर रखकर कलाई में रुद्राक्ष की माला पहने हुये ज्ञान मुद्रा में बैठे थे ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

तं ब्रह्मनिर्वाणसमाधिमाश्रितं व्युपाश्रितं गिरिशं योगकक्षाम् ।
सलोकपाला मुनयो मनूनामाद्यं मनुं प्राञ्जलयः प्रणेमुः ॥३९॥

पदच्छेद— तम् ब्रह्मनिर्वाण समाधिम् आश्रितम् व्युपाश्रितम् गिरिशम् योगकक्षाम् ।
सलोकपाला मुनयः मनूनाम् आद्यम् मनुम् प्राञ्जलयः प्रणेमुः ॥

शब्दार्थ—

तम्	९.	उन	सलोकपालाः	११.	लोकपालों के सहित
ब्रह्मनिर्वाण	१.	ब्रह्मानन्द की	मुनयः	१२.	मुनियों ने
समाधिम्	२.	समाधि में	मनूनाम्	६.	मननशीलों में
आश्रितम्	३.	बैठे हुये (तथा)	आद्यम्	७.	प्रथम
व्युपाश्रितम्	५.	सहारा लिये हुये	मनुम्	८.	मनन शील
गिरिशम्	१०.	भगवान् शिव को	प्राञ्जलयः	१३.	हाथ जोड़कर
योगकक्षाम् ।	४.	काठ की बनी टेकनी का	प्रणेमुः ॥	१४.	प्रणाम किया

श्लोकार्थ—ब्रह्मानन्द की समाधि में बैठे हुये तथा काठ की बनी टेकनी का सहारा लिये हुये मनन-शीलों में प्रथम मननशील उन भगवान् शिव को लोकपालों के सहित मुनियों ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

स तूपलभ्यागतमात्मयोनिं सुरासुरेशैरभिवन्दिताङ्घ्रिः ।
उत्थाय चक्रे शिरसाभिवन्दनमर्हत्तमः कस्य यथैव विष्णुः ॥४०॥

पदच्छेद—सः तु उपलभ्य आगतम् आत्मयोनिम् सुर असुर ईशैः अभिवन्दित अङ्घ्रिः ।
उत्थाय चक्रे शिरसा अभिवन्दनम् अर्हत्तमः कस्य यथैव विष्णुः ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	वे	उत्थाय	१०.	खड़े हो गये (और)
तु	५.	फिर भी	चक्रे	१३.	किया
उपलभ्य	९.	देखकर	शिरसा	११.	सिर झुकाकर
आगतम्	८.	आया हुआ	अभिवन्दनम्	१२.	प्रणाम
आत्मयोनिम्	७.	ब्रह्मा जी को	अर्हत्तमः	१५.	अत्यन्त पूज्य
सुर असुर	१.	यद्यपि देवता राक्षस और	कस्य	१८.	कश्यप जी को प्रणाम किया था
ईशैः	२.	उनके स्वामी	यथैव	१४.	जैसे
अभिवन्दित	४.	वन्दना करते हैं	विष्णुः ॥	१७.	भगवान् श्री हरि ने (वामनावतार में)
अङ्घ्रिः ।	३.	शिव जी के चरणों की			

श्लोकार्थ—यद्यपि देवता, राक्षस और उनके स्वामी शिवजी के चरणों की वन्दना करते हैं। फिर भी वे ब्रह्मा जी को आया हुआ देखकर खड़े हो गये और सिर झुका कर प्रणाम किया। जैसे अत्यन्त पूज्य भगवान् श्री हरि ने वामनावतार में कश्यप जी को प्रणाम किया था ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

तथापरे सिद्धगणा महर्षिभिर्ये वै समन्तादनु नीललोहितम् ।
नमस्कृतः प्राह शशाङ्कशेखरं कृतप्रणामं प्रहसन्निवात्मभूः ॥४१॥

पदच्छेद— तथा अपरे सिद्धगणाः महर्षिभिः ये वै समन्तात् अनु नीललोहितम् ।
नमस्कृतः प्राह शशाङ्क शेखरम् कृत प्रणामं प्रहसन् इव आत्मभूः ॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	तत्पश्चात्	नमस्कृतः	१०.	नमस्कार किया
अपरे	६.	अन्य	प्राह	१८.	बोले
सिद्धगणाः	७	सिद्धगण (बैठे थे)	शशाङ्क	१४.	चन्द्र
महर्षिभिः	५.	महर्षियों के साथ	शेखरम्	१५.	मौलि (भगवान् शिव से)
ये	४.	जो	कृत	१३.	मुद्रा में स्थित
वै	८.	उन्होंने	प्रणामं	१२.	प्रणाम की
समन्तात्	३.	चारों ओर	प्रहसन्	१६.	हंसते हुये
अनु	११.	उसके बाद (ब्रह्मा जी)	इव	१७.	से
नीललोहितम् ।	२.	भगवान् शिव के	आत्मभूः ॥	९.	ब्रह्मा जी को

श्लोकार्थ—तत्पश्चात् भगवान् शिव के चारों ओर जो महर्षियों के साथ अन्य सिद्धगण बैठे थे; उन्होंने ब्रह्मा जी को नमस्कार किया । उसके बाद ब्रह्मा जी प्रणाम की मुद्रा में स्थित चन्द्रमौलि भगवान शिव से हंसते हुये से बोले ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—जाने त्वामीशं विश्वस्य जगतो योनिबीजयोः ।
शक्तेः शिवस्य च परं यत्तद्ब्रह्म निरन्तरम् ॥४२॥

पदच्छेद— जाने त्वाम् ईशम् विश्वस्य जगतः योनि बीजयः ।
शक्तेः शिवस्य च परम् यत् तद् ब्रह्म निरन्तरम् ॥

शब्दार्थ—

जाने	४.	जानता हूँ	शक्तेः	८.	शक्ति
त्वाम्	३.	आपको (मैं)	शिवस्य	१०.	शिव से
ईशम्	२.	स्वामी	च	९.	और
विश्वस्य	१.	सबके	परम यत्	११.	परे जो
जगतः	५	जगत् की	तद्	१४.	वह (आप हैं)
योनि	६.	प्रकृति (और)	ब्रह्म	१३.	पर ब्रह्म हैं
बीजयोः ।	७.	पुरुष (रूप में स्थित)	निरन्तरम्	१२.	सदा एक रस

श्लोकार्थ—सबके स्वामी आपको मैं जानता हूं । जगत् की प्रकृति और पुरुष रूप में स्थित शक्ति और शिव से परे जो सदा एक रस पर ब्रह्म है, वह आप हैं ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

त्वमेव भगवन्नेतच्छिवशक्त्योः सरूपयोः ।
विश्वं सृजसि पास्यत्सि क्रीडन्नूर्णपटो यथा ॥४३॥

पदच्छेद— त्वम् एव भगवन् एतद् शिव शक्त्योः सरूपयोः ।
विश्वम् सृजसि पासि अत्सि क्रीडन् ऊर्णपटः यथा ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	४.	आप	विश्वम्	११.	संसार को
एव	५.	ही	सृजसि	१२.	बनाते
भगवन्	१.	हे प्रभो !	पासि	१३.	पालन करते (और)
एतद्	१०.	इस	अत्सि	१४.	संहार करते हैं
शिव	७.	शिव और	क्रीडन्	९.	लीला करते हुये
शक्त्योः	८.	शक्ति के रूप में	ऊर्णपटः	२.	मकड़ी के
सरूपयोः।	६.	अपने स्वरूप भूत	यथा ॥	३.	समान

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! मकड़ी के समान आप ही अपने स्वरूप भूत शिव और शक्ति के रूप में लीला करते हुये इस संसार को बनाते, पालन करते और संहार करते हैं ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

त्वमेव धर्मार्थदुघाभिपत्तये दक्षेण सूत्रेण ससर्जिथाध्वरम् ।
त्वयैव लोकेऽवसिताश्च सेतवो यान्ब्राह्मणा श्रद्दधते धृतव्रताः ॥४४॥

पदच्छेद— त्वम् एव धर्म अर्थ दुघ अभिपत्तये दक्षेण सूत्रेण ससर्जिथ अध्वरम् ।
त्वया एव लोके अवसिताः च सेतवः यान् ब्राह्मणाः श्रद्दधते धृत व्रताः ॥

शब्दार्थ—

त्वम् एव	१.	हे प्रभो ! आपने ही	त्वम् एव	११.	आपने ही
धर्म	२.	धर्म (और)	लोके	१२.	संसार में
अर्थ	३.	अर्थ को	अवसिताः	१४.	व्यवस्था की है
दुघ	४.	प्रदान करने वाले वेदों की	च	१०.	तथा
अभिपत्तये	५.	रक्षा के लिये ही	सेतवः	१३.	वर्णाश्रम धर्म की
दक्षेण	६.	दक्ष प्रजापति को	यान्	१५.	जिनका
सूत्रेण	७.	निमित्त बनाकर	ब्राह्मणाः श्रद्दधते	१८.	ब्राह्मण आचरण करते हैं
ससर्जिथ	९.	सृष्टि की है	धृत	१७.	पालन करने वाले निष्ठावान्
अध्वरम् ।	८.	यज्ञ की	व्रताः ॥	१६.	नियम का

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आपने ही धर्म और अर्थ को प्रदान करने वाले वेदों की रक्षा के लिये ही दक्ष प्रजापति को निमित्त बनाकर यज्ञ की सृष्टि की है । तथा आपने ही संसार में वर्णाश्रम धर्म की व्यवस्था की है । जिनका नियम पालन करने वाले निष्ठावान् ब्राह्मण आचरण करते हैं ।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

त्वं कर्मणां मङ्गल मङ्गलानां कर्तुः स्म लोकं तनुषे स्वः परं वा ।
अमङ्गलानां च तमिस्रमुल्बणं विपर्ययः केन तदेव कस्यचित् ॥४५॥

पदच्छेद—त्वम् कर्मणाम् मङ्गल मङ्गलानाम् कर्तुः स्म लोकम् तनुषे स्वः परम् वा ।
अमङ्गलानाम् च तमिस्रम् उल्बणम् विपर्ययः केन तदेव कस्यचित् ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	२.	आप	परम्	१०.	मोक्ष पद
कर्मणाम्	५.	कर्म	वा ।	९.	अथवा
मङ्गल	१.	हे मङ्गलमय ! महेश्वर	अमङ्गलानाम्	१३.	अमंगल कर्म करने वालों को
मङ्गलानाम्	४.	शुभ	च	१२.	तथा
कर्तुः	६.	करने वाले लोगों को	तमिस्रम्	१५.	नरक प्रदान करते हैं (किन्तु)
स्म	३.	ही	उल्बणम्	१४.	घोर
लोकम्	८.	लोक	विपर्ययः	१८.	विपरीत हो जाता है
तनुषे	११.	प्रदान करते हैं	केन तदेव	१७.	किसी कारण से वही फल
स्वः	७.	स्वर्ग	कस्यचित् ॥	१६.	किसी के लिये

श्लोकार्थ—हे मङ्गलमय ! महेश्वर आप ही शुभ कर्म करने वाले लोगों को स्वर्ग लोक अथवा मोक्षपद प्रदान करते हैं तथा अमङ्गल कर्म करने वालों को घोर नरक प्रदान करते हैं किन्तु किसी के लिये किसी कारण से वही फल विपरीत हो जाता है ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

न वै सतां त्वच्चरणार्पितात्मनां भूतेषु सर्वेष्वभिपश्यतां तव ।
भूतानि चात्मन्यपृथग्दिदृक्षतां प्रायेण रोषोऽभिभवेद्यथा पशुम् ॥४६॥

पदच्छेद—न वै सताम् त्वद् चरण अर्पित आत्मनाम् भूतेषु सर्वेषु अभिपश्यताम् तव ।
भूतानि आत्मनि अपृथक् दिदृक्षताम् प्रायेण रोषः अभिभवेत् यथा पशुम् ॥

शब्दार्थ—

न वै	१७.	नहीं	च	७.	तथा
सताम्	१२.	सत्पुरुषों को	आत्मनि	९.	अपनी आत्मा में
त्वद् चरण अर्पित	२.	आप के चरणों में लगाये हुये	अपृथक्	१०.	अभिन्न रूप से
आत्मनाम्	१.	हृदय को	दिदृक्षताम्	११.	देखने वाले
भूतेषु	४.	प्राणियों में	प्रायेण	१६.	प्रायः
सर्वेषु	३.	सभी	रोषः	१५.	क्रोध
अभिपश्यताम्	६.	देखने वाले	अभिभवेत्	१८.	वश में करता है
तव ।	५.	आपके रूप को	यथा	१४.	समान
भूतानि	८.	प्राणियों को	पशुम् ॥	१३.	पशुओं के

श्लोकार्थ—हृदय को आपके चरणों में लगाये हुये सभी प्राणियों में आपके रूप को देखने वाले तथा प्राणियों को अपनी आत्मा में अभिन्न रूप से देखने वाले सत्पुरुषों को पशुओं के समान क्रोध प्रायः वश में नहीं करता है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

पृथग्धियः कर्मदृशो दुराशयाः परोदयेनार्पितहृद्रुजोऽनिशम् ।
परान् दुरुक्तैर्वितुदन्त्यरुन्तुदास्तान्मा वधीद्दैववधान् भवद्विधः ॥४७॥

पदच्छेद— पृथक् धियः कर्मदृशः दुराशयाः पर उदयेन अर्पित हृद् रुजः अनिशम् ।
परान् दुरुक्तैः वितुदन्ति अरुन्तुदाः तान् मा वधीत् दैव वधान् भवद् विधः ॥

शब्दार्थ—

पृथक्	१.	भेद	परान्	१०.	दूसरों को
धियः	०.	बुद्धि होने के कारण	दुरुक्तैः	११.	दुर्वचनों से
कर्मदृशः	३.	कर्मों में	वितुदन्ति	१२.	पीड़ित करते हैं
दुराशयाः	४.	बुरे विचार वाले (तथा)	अरुन्तुदाः	९.	मर्म भेदी अज्ञानी जन
पर उदयेन	५.	दूसरों की उन्नति से	तान्	१४.	उन लोगों को
अर्पित	८.	रखने वाले	मा वधीत्	१६.	नहीं मारते हैं
हृद् रुजः	७.	हृदय में ईर्ष्या रूपी रोग	दैव वधान्	१३.	भाग्य के मारे हुये
अनिशम् ।	६.	रात-दिन	भवद् विधः ॥	१५.	आप जैसे महा पुरुष

श्लोकार्थ—भेद बुद्धि होने के कारण कर्मों में आसक्त बुरे विचार वाले तथा दूसरों की उन्नति से रात-दिन हृदय में ईर्ष्यारूपी रोग रखने वाले मर्मभेदी अज्ञानी जन दूसरों को दुर्वचनों से पीड़ित करते हैं। भाग्य के मारे हुये उन लोगों को आप जैसे महापुरुष नहीं मारते हैं ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

यस्मिन् यदा पुष्करनाभमायया दुरन्तया स्पृष्टधियः पृथग्दृशः ।
कुर्वन्ति तत्र ह्यनुकम्पया कृपां न साधवो दैवबलात्कृते क्रमम् ॥४८॥

पदच्छेद— यस्मिन् यदा पुष्करनाभ मायया दुरन्तया स्पृष्ट धियः पृथक् दृशः ।
कुर्वन्ति तत्र हि अनुकम्पया कृपाम् न साधवः दैव बलात् कृते क्रमम् ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन्	६.	जहाँ	तत्र	११.	उस मनुष्य पर
यदा	५.	जब (और)	हि	१३.	ही
पुष्करनाभ	१.	भगवान् श्री हरि की	अनुकम्पया	१०.	पर दुःख-दुःखी स्वभाव के कारण
मायया	३.	माया से	कृपाम्	१२.	कृपा
दुरन्तया	२.	अपार	न	१८.	नहीं (करते हैं)
स्पृष्ट	८.	मोहित हो जाती है (तब)	साधवः	९.	महा पुरुष
धियः	७.	बुद्धि	दैव बलात्	१५.	भग्य के प्रभाव से
पृथक्दृशः ।	४.	भेद दर्शी (मनुष्य की)	कृते	१६.	अनिष्ट हो जाने पर
कुर्वन्ति	१४.	करते हैं	क्रमम् ॥	१७.	उसके बचाव का प्रयास

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि की अपार माया से भेद दर्शी मनुष्य की जब और जहाँ बुद्धि मोहित हो जाती है तब महा पुरुष पर दुःख-दुःखी स्वभाव के कारण उस मनुष्य पर कृपा ही करते हैं, भाग्य के प्रभाव से अनिष्ट हो जाने पर उसके बचाव का प्रयास नहीं करते हैं ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

भवांस्तु पुंसः परमस्य मायया दुरन्तयास्पृष्टमतिः समस्तदृक् ।
तया हतात्मस्वनुकर्मचेतः स्वनुग्रहं कर्तुमिहार्हसि प्रभो ॥४९॥

पदच्छेद— भवान् तु पुंसः परमस्य मायया दुरन्तया अस्पृष्ट मतिः समस्त दृक् ।
तया हत आत्मसु अनुकर्म चेतः सु अनुग्रहम् कर्तुम् इह अर्हसि प्रभो ॥

शब्दार्थ—

भवान्	२.	आप	तया	११.	उस माया से
तु	३.	तो	हत	१३.	वश में होकर
पुंसः	६.	पुरुष भगवान् की	आत्मसु	१२.	जिनका चित्त
परमस्य	५.	परम	अनुकर्म चेतः सु	१४.	कर्मों में आसक्त रहता है
मायया	८.	माया से	अनुग्रहम्	१६.	कृपा
दुरन्तया	७.	दुस्तर	कर्तुम्	१७.	करना ही
अस्पृष्ट	१०.	मोहित नहीं होती है	इह	१५.	उन लोगों पर
मतिः	९.	आपकी बुद्धि	अर्हसि	१८.	उचित है
समस्त दृक् ।	४.	सर्वदर्शी हैं	प्रभो ॥		हे भगवन् !

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप तो सर्वदर्शी हैं। परम पुरुष भगवान् की दुस्तर माया से आपकी बुद्धि मोहित नहीं होती है। उस माया से जिनका चित्त वश में होकर कर्मों में आसक्त रहता है, उन लोगों पर कृपा करना ही उचित है ॥

पञ्चाशः श्लोकः

कुर्वध्वरस्योद्धरणं हतस्य भोस्त्वयासमाप्तस्य मनो प्रजापतेः ।
न यत्र भागं तव भागिनो ददुः कुयज्विनो येन मखो निनीयते ॥५०॥

पदच्छेद—कुरु अध्वरस्य उद्धरणम् हतस्य भोः त्वया असमाप्तस्य मनो प्रजापतेः ।
न यत्र भागम् तव भागिनः ददुः कुयज्विनः येन मखः निनीयते ॥

शब्दार्थ—

कुरु	१८.	करें	न	११.	नहीं
अध्वरस्य	१६.	यज्ञ का	यत्र	८.	यज्ञ में
उद्धरणम्	१७.	उद्धार	भागम्	१०.	भाग
हतस्य	१५.	नष्ट हुये	तव	९.	आपका
भोः	१.	हे भगवन् !	भागिनः	५.	आप यज्ञ के अधिकारी हैं
त्वया	३.	आप से ही	ददुः	१२.	दिया है
असमाप्तस्य	४.	यज्ञ पूर्ण (होता है)	कुयज्विनः	७.	बुद्धिहीन याजकों ने
मनो	२.	आप सबके मूल हैं	येन मखः	१३.	जिससे यज्ञ का
प्रजापतेः ।	६.	दक्ष यज्ञ के	निनीयते ॥	१४.	विध्वंस हुआ (अतः आप)

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप सबके मूल हैं। आप से ही यज्ञ पूर्ण होता है; आप यज्ञ के अधिकारी हैं। दक्ष यज्ञ के बुद्धिहीन याजकों ने यज्ञ में आपका भाग नहीं दिया है। जिससे यज्ञ का विध्वंस हुआ है; अतः आप नष्ट हुये यज्ञ का उद्धार करें ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

जीवताद्यजमानोऽयं प्रपद्येताक्षिणी भगः।
भृगोः श्मश्रूणि रोहन्तु पूष्णो दन्ताश्च पूर्ववत् ॥५१॥

पदच्छेद—

जीवतात् यजमानः अयम् प्रपद्येत अक्षिणी भगः।
भृगोः श्मश्रूणि रोहन्तु पूष्णः दन्ताः च पूर्ववत् ॥

शब्दार्थ—

जीवतात्	३. जीवित हो जायें	भृगोः श्मश्रूणि	७. महर्षि भृगु की दाढ़ी मूँछें
यजमानः	२. दक्ष प्रजापति	रोहन्तु	८. निकल आवें
अयम्	१. यह (यजमान)	पूष्णः	१०. पूषा देवता के
प्रपद्येत	६. प्राप्त कर लें	दन्ताः	१२. दाँत हो जावें
अक्षिणी	५. आँखें	च	९. और
भगः।	४. भग देवता	पूर्ववत् ॥	११. पहले के समान

श्लोकार्थ—यह यजमान दक्ष प्रजापति जीवित हो जावें। भग देवता आँखें प्राप्त कर लें; महर्षि भृगु की दाढ़ी-मूँछें निकल आवें और पूषा देवता के पहले के समान दाँत हो जावें ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

देवानां भग्नगात्राणामृत्विजां चायुधाश्मभिः।
भवतानुगृहीतानामाशु मन्योऽस्त्वनातुरम् ॥५२॥

पदच्छेद—

देवानाम् भग्न गात्राणाम् ऋत्विजाम् च आयुध अश्मभिः।
भवता अनुगृहीतानाम् आशु मन्यो अस्तु अनातुरम् ॥

शब्दार्थ—

देवानाम्	५. देवताओं के	भवता	८. आपकी
भग्न	७. घायल हो गये हैं	अनुगृहीतानाम्	९. कृपा से (वे)
गात्राणाम्	६. अङ्ग-प्रत्यङ्ग	आशु	१०. तत्काल ही
ऋत्विजाम् च	४. याजकों और	मन्यो	१. हे रुद्रदेव !
आयुध	२. अस्त्र-शस्त्रों (और)	अस्तु	१२. हो जावें
अश्मभिः।	३. पत्थरों की बौछार से	अनातुरम् ॥	११. स्वस्थ

श्लोकार्थ—हे रुद्र देव ! अस्त्र-शस्त्रों और पत्थरों की बौछार से याजकों और देवताओं के अङ्ग-प्रत्यङ्ग घायल हो गये हैं। आपकी कृपा से वे तत्काल ही स्वस्थ हो जावें ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

एष ते रुद्र भागोऽस्तु यदुच्छिष्टोऽध्वरस्य वै ।
यज्ञस्ते रुद्र भागेन कल्पतामद्य यज्ञहन् ॥५३॥

पदच्छेद—

एष ते रुद्र भागः अस्तु यद् उच्छिष्टः अध्वरस्य वै ।
यज्ञः ते रुद्र भागेन कल्पताम् अद्य यज्ञहन् ॥

शब्दार्थ—

एषः	६. वह		वै ।	५. अंश है
ते	७. आपका		यज्ञः	१५. यज्ञ
रुद्र	१. हे रुद्रदेव !		ते	१३. आपके
भागः	८. भाग		रुद्र	११. हे रुद्रदेव
अस्तु	९. होवे		भागेन	१४. भाग से (यह)
यद्	३. जो		कल्पताम्	१६. पूर्ण होवे
उच्छिष्टः	४. बचा हुआ		अद्य	१२. आज
अध्वरस्य	२. यज्ञ का		यज्ञहन् ॥	१०. यज्ञ-विध्वंसक

श्लोकार्थ—हे रुद्रदेव ! यज्ञ का जो बचा हुआ अंश है वह आपका भाग होवे । यज्ञ विध्वंशक हे रुद्रदेव ! आज आपके भाग से यह यज्ञ पूर्ण होवे ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे
रुद्रसान्त्वनं नाम षष्ठः अध्यायः समाप्तः ॥६॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

सप्तमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— इत्यजेनानुनीतेन भवेन परितुष्यता ।
अभ्यधायि महाबाहो प्रहस्य श्रूयतामिति ॥१॥

पदच्छेद—

इति अजेन अनुनीतेन भवेन परितुष्यता ।
अभ्यधायि महाबाहो प्रहस्य श्रूयताम् इति ॥

शब्दार्थ—

इति	३.	इस प्रकार	अभ्यधायि	८.	बोले
अजेन	२.	ब्रह्मा जी के द्वारा	महाबाहो	१.	हे विदुर जी !
अनुनीतेन	४.	प्रार्थना करने पर	प्रहस्य	७.	हँसकर
भवेन	५.	भगवान् शंकर	श्रूयताम्	१०.	सुनिये
परितुष्यता ।	६.	प्रसन्न होते हुये	इति ॥	९.	कि (आप)

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! ब्रह्मा जी के द्वारा इस प्रकार प्रार्थना करने पर भगवान् शंकर प्रसन्न होते हुये हँसकर बोले कि आप सुनिये ॥

द्वितीयः श्लोकः

श्रीमहादेव उवाच—नाघं प्रजेश बालानां वर्णये नानुचिन्तये ।
देवमायाभिभूतानां दण्डस्तत्र धृतो मया ॥२॥

पदच्छेद—

न अघम् प्रजेश बालानाम् वर्णये न अनुचिन्तये ।
देव माया अभिभूतानाम् दण्डः तत्र धृतः मया ॥

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं	देव	२.	भगवान् श्रीहरि की
अघम्	६.	अपराध की (मैं)	माया	३.	माया से
प्रजेश	१.	हे प्रजापति !	अभिभूतानाम्	४.	मोहित रहने वाले
बालानाम्	५.	नासमझों के	दण्डः	१३.	कुछ दण्ड
वर्णये	८.	चर्चा करता हूँ (और उसका)	तत्र	१२.	उन्हें
न	९.	नहीं	धृतः	१४.	दिया है
अनुचिन्तये ।	१०.	चिन्तन भी करता हूँ	मया ।	११.	मैंने (तो केवल)

श्लोकार्थ—हे प्रजापति ! भगवान् श्रीहरि की माया से मोहित रहने वाले नासमझों के अपराध की मैं चर्चा नहीं करता हूँ। और उसका चिन्तन भी नहीं करता हूँ। मैंने तो केवल उन्हें कुछ दण्ड दिया है ॥

तृतीयः श्लोकः

प्रजापतेर्दग्धशीर्ष्णो भवत्वजमुखं शिरः ।
मित्रस्य चक्षुषेक्षेत भागं स्वं बर्हिषो भगः ॥३॥

पदच्छेद—

प्रजापतेः दग्ध शीर्ष्णः भवतु अज मुखम् शिरः ।
मित्रस्य चक्षुषा ईक्षेत भागम् स्वम् बर्हिषः भगः ॥

शब्दार्थ—

प्रजापतेः	१. दक्ष प्रजापति का	मित्रस्य	९. मित्रदेवता की
दग्ध	३. जल गया है (अतः)	चक्षुषा	१०. आँखों से
शीर्ष्णः	२. सिर	ईक्षेत	१४. देखें
भवतु	७. हो जावे	भागम्	१३. भाग को
अजः	४. उनका बकरे के	स्वम्	११. अपने
मुखम्	५. मुख वाला	बर्हिषः	१२. यज्ञ के
शिरः ।	६. सिर	भगः ॥	८. भग देवता

श्लोकार्थ—दक्ष प्रजापति का सिर जल गया है । अतः उनका बकरे के मुख वाला सिर हो जावे । भगदेवता, मित्रदेवता की आँखों से अपने यज्ञ के भाग को देखें ॥

चतुर्थः श्लोकः

पूषा तु यजमानस्य दद्भिर्जक्षतु पिष्टभुक् ।
देवाः प्रकृतसर्वाङ्गा ये म उच्छेषणं ददुः ॥४॥

पदच्छेद—

पूषा तु यजमानस्य दद्भिः जक्षतु पिष्ट भुक् ।
देवाः प्रकृत सर्वाङ्गा ये मे उच्छेषणम् ददुः ॥

शब्दार्थ—

पूषा	१. पूषा देवता	देवाः	१२. (वे) देवगण
तु	२. तो	प्रकृत	१४. स्वस्थ हो जावें
यजमानस्य	५. उसे यजमान के	सर्वाङ्गा	१३. अपने सारे अङ्गों से
दद्भिः	६. दाँतों से	ये	८. जिन्होंने
जक्षतु	७. भक्षण करें (तथा)	मे	९. मुझे
पिष्ट	३. पिसा हुआ अन्न	उच्छेषणम्	१०. यज्ञ का बचा भाग
भुक् ।	४. खाते हैं (अतः वे)	ददुः ॥	११. दिया है

श्लोकार्थ—पूषा देवता तो पिसा हुआ अन्न खाते हैं अतः वे उसे यजमान के दाँतों से भक्षण करें । तथा जिन्होंने मुझे यज्ञ का बचा भाग दिया है, वे देव गण अपने सारे अङ्गों से स्वस्थ हो जावें ॥

पञ्चमः श्लोकः

बाहुभ्यामश्विनोः पूष्णो हस्ताभ्यां कृतबाहवः ।
भवन्त्वध्वर्यवश्चान्ये बस्तश्मश्रुर्भृगुर्भवेत् ॥५॥

पदच्छेद—

बाहुभ्याम् अश्विनोः पूष्णः हस्ताभ्याम् कृत बाहवः ।
भवन्तु अध्वर्यवः च अन्ये बस्त श्मश्रुः भृगुः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

बाहुभ्याम्	४.	भुजाओं से (और)	अध्वर्यवः	२.	याजकगण
अश्विनोः	३.	अश्विनी कुमार की	च	१०.	तथा
पूष्णः	५.	पूषा देवता के	अन्ये	१.	दूसरे
हस्ताभ्याम्	६.	हाथों से	बस्त	१२.	बकरे की सी
कृत	८.	करने वाले	श्मश्रुः	१३.	डाढ़ी-मूंछ
बाहवः ।	७.	अपना काम	भृगुः	११.	भृगु ऋषि की
भवन्तु	९.	होवें	भवेत् ॥	१४.	हो जावे

श्लोकार्थ—दूसरे याजकगण अश्विनी कुमार की भुजाओं से और पूषा देवता के हाथों से अपना काम करने वाले होवें ; तथा भृगु ऋषि की बकरे की सी डाढ़ी-मूंछ हो जावें ॥

षष्ठः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—तदा सर्वाणि भूतानि श्रुत्वा मीढुष्टमोदितम् ।
परितुष्टात्मभिस्तात साधु साध्वित्यथाब्रुवन् ॥६॥

पदच्छेद—

तदा सर्वाणि भूतानि श्रुत्वा मीढुष्ट मोदितम् ।
परितुष्ट आत्मभिः तात साधु-साधु इति अथ अब्रुवन् ॥

शब्दार्थ—

तदा	२.	उस समय	परितुष्ट	८.	प्रसन्न
सर्वाणि	३.	सारे	आत्मभिः	९.	होते हुये
भूतानि	४.	प्राणी	तात	१.	हेवत्स ! (विदुर जो)
श्रुत्वा	७.	सुनकर	साधु-साधु	१२.	धन्य है, धन्य है
मीढुष्ट	५.	भगवान् शंकर का	इति	१३.	इस प्रकार
मोदितम् ।	६.	वचन	अथ	१०.	तत्पश्चात्
			अब्रुवन् ॥	१४.	कहने लगे

श्लोकार्थ—हेवत्स ! (विदुर जी) उस समय सारे प्राणी भगवान् शंकर का वचन सुनकर प्रसन्न होते हुये तत्पश्चात् धन्य है, धन्य है—इस प्रकार कहने लगे ॥

सप्तमः श्लोकः

ततो मीढ्वांसमामन्त्र्य शुनासीराः सहर्षिभिः ।
भूयस्तद्देवयजनं समीढ्वद्वेधसो ययुः ॥७॥

पदच्छेद—

ततः मीढ्वांसम् आमन्त्र्य शुनासीराः सह ऋषिभिः ।
भूयः तद् देवयजनम् समीढ्वत् वेधसः ययुः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. तदनन्तर	भूयः	७. फिर से
मीढ्वांसम्	५. भगवान् शंकर की	तद्	१०. उस
आमन्त्र्य	६. प्रार्थना करके	देवयजनम्	११. यज्ञ मण्डल में
शुनासीराः	२. देवगण	समीढ्वत्	९. शिव जी के साथ
सह	४. साथ	वेधसः	८. ब्रह्मा जी (और)
ऋषिभिः ।	३. महर्षियों के	ययुः ॥	१२. पधारे

श्लोकार्थ—तदनन्तर देवगण महर्षियों के साथ भगवान् शंकर की प्रार्थना करके फिर से ब्रह्मा जी और शिवजी के साथ उस यज्ञ मण्डल में पधारे ।

अष्टमः श्लोकः

विधाय कार्त्स्न्येन च तद्यदाह भगवान् भवः ।
संदधुः कस्य कायेन सवनीयपशोः शिरः ॥८॥

पदच्छेद—

विधाय कार्त्स्न्येन च तद् यद् आह भगवान् भवः ।
संदधुः कस्य कायेन सवनीय पशोः शिरः ॥

शब्दार्थ—

विधाय	८. करके (देवताओं ने)	भवः ।	२. शिव जी ने
कार्त्स्न्येन	७. सम्पूर्ण रूप से	संदधुः	१४. जोड़ दिया
च	५. तदनुसार	कस्य	९. दक्ष प्रजापति के
तद्	६. वह काम	कायेन	१०. शरीर से
यद्	३. जो	सवनीय	११. यज्ञ
आह	४. कहा	पशोः	१२ पशु के
भगवान्	१. भगवान्	शिरः ॥	१३ सिर को

श्लोकार्थ—भगवान् शिवजी ने जो कहा तदनुसार वह काम सम्पूर्ण रूप से करके देवताओं ने दक्ष प्रजापति के शरीर से यज्ञ पशु के सिर को जोड़ दिया ॥

नवमः श्लोकः

संधीयमाने शिरसि दक्षो रुद्राभिवीक्षितः ।
सद्यः सुप्त इवोत्तस्थौ ददृशे चाग्रतो मृडम् ॥९॥

पदच्छेद—

संधीयमाने शिरसि दक्षः रुद्र अभिवीक्षितः ।
सुप्तः इव उत्तस्थौ ददृशे च अग्रतः मृडम् ॥

शब्दार्थ—

संधीयमाने	२. जोड़ देने पर	सुप्तः	७.	सोकर जागे हुये के
शिरसि	१. सिर को	इव उत्तस्थौ	८.	समान, उठ खड़े हुये
दक्षः	३. दक्ष प्रजापति	ददृशे	१२.	देखा
रुद्र	४. भगवान् शिव की	च	९.	और (उन्होंने)
अभिवीक्षितः ।	५. दृष्टि पड़ते ही	अग्रतः	१०.	अपने सामने
सद्यः	६. तत्काल	मृडम् ॥	११.	भगवान् शिव को

श्लोकार्थ—सिर को जोड़ देने पर दक्ष प्रजापति भगवान् शिव की दृष्टि पड़ते ही तत्काल सोकर जगे के समान उठ खड़े हुये और उन्होंने अपने सामने भगवान् शिव को देखा ॥

दशमः श्लोकः

तदा वृषध्वजद्वेषकलिलात्मा प्रजापतिः ।
शिवावलोकादभवच्छरद्ध्रद इवामलः ॥१०॥

पदच्छेद—

तदा वृषध्वज द्वेष कलिल आत्मा प्रजापतिः ।
शिव अवलोकात् अभवत् शरद् ह्रदः इव अमलः ॥

शब्दार्थ—

तदा	१. उस समय	शिव	७.	भगवान् शिव के
वृषध्वज	३. भगवान् शंकर के प्रति	अवलोकात्	८.	देखने से
द्वेष	४. विरोध भाव से	अभवत्	१२.	हो गया
कलिल	५. कलुषित	शरद् ह्रदः	९.	शरत्कालीन
आत्मा	६. चित्त	इव	१०.	समान
प्रजापतिः ।	२. दक्ष प्रजापति का	अमलः ॥	११.	निर्मल

श्लोकार्थ—उस समय दक्ष प्रजापति का भगवान् शिव के प्रति विरोध भाव से कलुषित चित्त भगवान् शिव के देखने से शरत कालीन सरोवर के समान निर्मल हो गया ॥

एकादशः श्लोकः

भवस्तवाय कृतधीर्नाशक्नोदनुरागतः ।
औत्कण्ठ्याद्बाष्पकलया सम्परेतां सुतां स्मरन् ॥११॥

पदच्छेद—

भव स्तवाय कृत धीः न अशक्नोत् अनुरागतः ।
औत्कण्ठ्यात् बाष्प कलया सम्परेताम् सुताम् स्मरन् ॥

शब्दार्थ—

भव	१.	उन्होंने भगवान् शिव की	अनुरागतः ।	८.	स्नेह और
स्तवया	२.	स्तुति करने का	औत्कण्ठ्यात्	९.	उत्कण्ठा के कारण
कृत	४.	किया (किन्तु)	बाष्प कलया	१०.	नेत्रों में आँसु भर आये
धीः	३.	विचार	सम्परेताम्	५	मरी हुई (तथा)
न	११.	कुछ बोल नहीं	सुताम्	६.	अपनी पुत्री सती का
अशक्नोत्	१२.	सके	स्मरन्	७.	स्मरण हो जाने से

श्लोकार्थ—उन्होंने भगवान् शिव की स्तुति करने का विचार किया ; किन्तु मरी हुई अपनी पुत्री सती का स्मरण हो जाने से स्नेह और उत्कण्ठा के कारण नेत्रों में आँसु भर आये ; तथा कुछ बोल नहीं सके ॥

द्वादशः श्लोकः

कृच्छ्रात्संस्तभ्य च मनः प्रेमविह्वलितः सुधीः ।
शशंस निर्व्यलीकेन भावेनेशं प्रजापतिः ॥१२॥

पदच्छेद—

कृच्छ्रात् संस्तभ्य च मनः प्रेम विह्वलितः सुधीः ।
शशंस निर्व्यलीकेन भावेन ईशम् प्रजापतिः ॥

शब्दार्थ—

कृच्छ्रात्	७.	जैसे-तैसे	सुधीः ।	४.	परम बुद्धिमान्
संस्तभ्य	८.	रोक कर	शशंस	१२.	स्तुति करने लगे
च	३.	एवम्	निर्व्यलीकेन	९.	शुद्ध
मनः	६.	हृदय के (आवेग को)	भावेन	१०.	भाव से
प्रेम	१.	प्रेम से	ईशम्	११.	शिवजी की
विह्वलितः	२.	विभोर	प्रजापतिः ॥	५.	दक्ष प्रजापति

श्लोकार्थ—प्रेम से विभोर एवम् परम बुद्धि मान दक्ष प्रजापति हृदय के आवेग जैसे-तैसे को रोक कर शुद्ध भाव से शिवजी की स्तुति करने लगे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

भूयाननुग्रह अहो भवता कृतो मे दण्डस्त्वया मयि भृतो यदपि प्रलब्धः ।
न ब्रह्मबन्धुषु च वां भगवन्नवज्ञा तुभ्यं हरेश्च कुत एव धृतव्रतेषु ॥१३॥

पदच्छेद—भूयान् अनुग्रहः अहो भवता कृतः मे दण्डः त्वया मयि भृतः यदपि प्रलब्धः ।
न ब्रह्म बन्धुषु च वाम् भगवन् अवज्ञा तुभ्यम् हरेः च कुतः एव धृत व्रतेषु ॥

शब्दार्थ—

भूयान्	३.	बहुत बड़ी	न	१६.	नहीं करते हैं (फिर)
अनुग्रहः	४.	कृपा	ब्रह्म बन्धुषु च	१४.	निन्दित ब्राह्मणों का भी
अहो भवता	१.	अहो आपने	वाम्	१३.	दोनों ही
कृतः	५.	की है (क्योंकि)	भगवन्	१०.	हे प्रभो !
मे	२.	मेरे ऊपर	अवज्ञा	१५.	अनादर
दण्डः	७.	दण्ड देकर	तुभ्यम्	११.	आप
त्वया मयि	६.	आपने मुझे	हरेः च	१२.	और भगवान् श्री हरि
भृतः यदपि	८.	शिक्षा दी है, यद्यपि मैंने आपका	कुतः एव	१८.	कैसे अनादर कर सकते हैं
प्रलब्धः ।	९.	अपराध किया था	धृत व्रतेषु ॥	१७	हम जैसे यज्ञादि नियम रखने वालों का

श्लोकार्थ—अहो आपने मेरे ऊपर बहुत बड़ी कृपा की है; क्योंकि आपने मुझे दण्ड देकर शिक्षा दी है। यद्यपि मैंने आपका अपराध किया था। हे प्रभो ! आप और भगवान् श्री हरि दोनों ही निन्दित ब्राह्मणों का भी अनादर नहीं करते हैं; फिर हम जैसे यज्ञादि नियम रखने वालों का कैसे अनादर कर सकते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

विद्यातपोव्रतधरान् मुखतः स्म विप्रान् ब्रह्माऽऽत्मतत्त्वमवितुं प्रथमं त्वमस्राक् ।
तद्ब्राह्मणान् परम सर्वविपत्सु पासि पालः पशूनिव विभो प्रगृहीतदण्डः ॥१४॥

पदच्छेद—विद्या तपः व्रत धरान् मुखतः स्म विप्रान् ब्रह्मा आत्मतत्त्वम् अवितुम् प्रथमम् त्वम् अस्राक् ।
तद् ब्राह्मणान् परम सर्वविपत्सु पासि पालः पशून् इव विभोः प्रगृहीत दण्डः ॥

शब्दार्थ—

विद्या तपः	६.	विद्या तपस्या (और)	तद् ब्राह्मणान्	१५.	उन ब्राह्मणों की
व्रत धरान्	७.	यज्ञादि नियम धारण करने वाले	परम	१२.	हे महान् !
मुखतः स्म	५.	मुख से अपने	सर्वविपत्सु	१२.	सभी आपत्तियों में
विप्रान्	८.	ब्राह्मणों को	पासि	१६.	रक्षा करते हैं
ब्रह्मा आत्मतत्त्वम्	२.	ब्रह्मारूप से आत्मस्वरूप की	पालः पशून्	१८.	चरवाहा पशुओं की रक्षा करता है
अवितुम्	३.	रक्षा करने के लिये	इव	१७.	जैसे
प्रथमम्	४.	सबसे पहले	विभो	११.	प्रभो (आप)
त्वम्	१.	आपने	प्रगृहीत	१४.	लेकर
अस्राक् ।	९.	उत्पन्न किया है	दण्डः ॥	१३.	दण्डा

श्लोकार्थ—आपने ब्रह्मारूप से आत्म स्वरूप की रक्षा करने के लिये सबसे पहले अपने मुख से विद्या, तपस्या और यज्ञादि नियम धारण करने वाले ब्राह्मणों को उत्पन्न किया है। हे महान् ! प्रभो ! आप सभी आपत्तियों में डण्डा लेकर उन ब्राह्मणों की रक्षा करते हैं, जैसे चरवाहा पशुओं की रक्षा करता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

योऽसौ मया विदिततत्त्वदृशा सभायां क्षिप्तो दुरुक्तिविशिखैरगणय्य तन्माम् ।
अर्वाक् पतन्तमर्हत्तमनिन्दयापाद् दृष्ट्याऽऽर्द्रया स भगवान् स्वकृतेन तुष्येत् १५

पदच्छेद—यः असौ, मया अविदित तत्त्व दृशा सभायाम् क्षिप्तः दुरुक्ति विशिखैः अगणय्य तद् माम् ।
अर्वाक् पतन्तम् अर्हत्तम निन्दया अपात् दृष्ट्या आर्द्रया सः भगवान् स्व कृतेन तुष्येत् ॥

शब्दार्थ—

यः असौ मया	१.	जिस आपको मैंने	अर्वाक् पतन्तम्	११.	नरक लोक में गिरते हुये
अविदित	३.	न रखने के कारण	अर्हत्तम	९.	पूज्यतम के प्रति
तत्त्वदृशा	२.	तत्त्व दृष्टि	निन्दया	१०.	अपराध करने के कारण
सभायाम्	४.	देवताओं की सभा में	अपात्	१५.	बचा लिया है
क्षिप्तः	६.	घायल किया था	दृष्ट्या	१४.	दृष्टि से
दुरुक्ति विशिखैः	५.	दुर्वचन रूपी वाणों से	आर्द्रया	१३.	अपनी कृपा
अगणय्य	८.	न विचार कर	सः भगवान्	१६.	वे भगवान् शिव
तद्	७.	उसे	स्व कृतेन	१७.	अपने उदार व्यवहार से ही
माम् ।	१२.	मुझे	तुष्येत् ॥	१८.	प्रसन्न होवें

श्लोकार्थ—जिस आपको मैंने तत्त्व दृष्टि न रखने के कारण देवताओं की सभा में दुर्वचनरूपी बाणों से घायल किया था; उसे न विचार कर पूज्यतम के प्रति अपराध करने के कारण नरकलोक में गिरते हुये मुझे अपनी कृपा दृष्टि से बचा लिया है । वे भगवान् शिव अपने उदार व्यवहार से ही प्रसन्न होवें ॥

षोडशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—**क्षमाप्यैवं स मीढ्वांसं ब्रह्मणा चानुमन्त्रितः ।**
कर्म सन्तानयामास सोपाध्यायर्त्विगादिभिः ॥१६॥

पदच्छेद—क्षमाप्य एवम् स मीढवांसम् ब्रह्मणा च अनुमन्त्रितः ।
कर्म सन्तानयामास सः उपाध्याय ऋत्विक् आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

क्षमाप्य	३.	क्षमा प्रार्थना करके	अनुमन्त्रितः ।	६.	कहने से
एवम्	१.	इस प्रकार	कर्म	११.	यज्ञ कर्म को
सः	४.	उन दक्ष प्रजापति ने	सन्तानयामास	१२.	प्रारम्भ किया
मीढ्वांसम्	२.	भगवान् शिव से	सः	१०.	साथ लेकर
ब्रह्मणा	५.	ब्रह्मा जी के	उपाध्याय	७.	आचार्यों
च	८.	और	ऋत्विक् आदिभिः ॥	९.	याजकों इत्यादि को

श्लोकार्थ—इस प्रकार भगवान् शिव से क्षमा प्रार्थना करके उन दक्ष प्रजापति ने ब्रह्मा जी के कहने से आचार्यों और याजकों इत्यादि को साथ लेकर यज्ञ कर्म को प्रारम्भ किया ॥

सप्तदशः श्लोकः

वैष्णवं यज्ञसन्तत्यै त्रिकपालं द्विजोत्तमाः ।
पुरोडाशं निरवपन् वीरसंसर्गशुद्धये ॥१७॥

पदच्छेद—

वैष्णवम् यज्ञसन्तत्यै त्रिकपालम् द्विज उत्तमाः ।
पुरोडाशम् निरवपन् वीर संसर्ग शुद्धये ॥

शब्दार्थ—

वैष्णवम्	८.	वैष्णव सम्बन्धी	पुरोडाशम्	९.	चरु का
यज्ञ सन्तत्यै	३.	यज्ञ को सम्पन्न करने के लिये	निरवपन्	१०.	हवन किया
त्रिकपालम्	७.	तीन कपालों में निर्मित	वीर	४.	भगवान् शंकर के (भूत-पिशाचों के)
द्विज	२.	ब्राह्मणों ने	संसर्ग	५.	सम्पर्क से उत्पन्न
उत्तमाः ।	१.	श्रेष्ठ	शुद्धये ॥	६.	दोष की निवृत्ति के लिये

श्लोकार्थ—श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने यज्ञ को सम्पन्न करने के लिये भगवान् शंकर के भूत-पिशाचों के सम्पर्क से उत्पन्न दोष की निवृत्ति के लिये तीन कपालों में निर्मित वैष्णव समबन्धो चरु का हवन किया ॥

अष्टादशः श्लोकः

अध्वर्युणाऽऽत्तहविषा यजमानो विशाम्पते ।
धिया विशुद्धया दध्यौ तथा प्रादुरभूद्धरिः ॥१८॥

पदच्छेद—

अध्वर्युणा आत्त हविषा यजमानः विशाम्पते ।
धिया विशुद्धया दध्यौ तथा प्रादुः अभूत् हरिः ॥

शब्दार्थ—

अध्वर्युणा	४.	याजक के साथ	धिया	७.	बुद्धि से (भगवान् श्री हरि का)
आत्त	३.	लेकर खड़े हुये	विशुद्धया	६.	निर्मल
हविषा	२.	चरु	दध्यौ तथा	८.	ध्यान किया तदनन्तर
यजमानः	५.	दक्ष प्रजापति ने	प्रादुरभूत्	१०.	प्रकट हो गये
विशाम्पते ।	१.	हे विदुर जी !	हरिः ॥	९.	भगवान् श्री हरि स्वयं ही

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! चरु लेकर खड़े हुये याजक के साथ दक्ष प्रजापति ने निर्मल बुद्धि से भगवान् श्री हरि का ध्यान किया । तदनन्तर भगवान् श्री हरि स्वयं ही प्रकट हो गये ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तदा स्वप्रभया तेषां द्योतयन्त्या दिशो दश ।
मुष्णंस्तेज उपानीतस्तार्क्ष्येण स्तोत्रवाजिना ॥१९॥

पदच्छेद— तदा स्वप्रभया तेषाम् द्योतयन्त्या दिशः दश ।
मुष्णन् तेजः उपानीतः तार्क्ष्येण स्तोत्र वाजिना ॥

शब्दार्थ—

तदा	५.	उस समय (भगवान् श्री हरि)	मुष्णन्	१२.	हर रहे थे
स्वप्रभया	९.	अपनी कान्ति से	तेजः	११.	तेज को
तेषाम्	१०.	उन देवताओं के	उपानीतः	४.	पास में लाये
द्योतयन्त्या	८.	देदीप्यमान	तार्क्ष्येण	१.	गरुड़ जी
दिशः	७.	दिशाओं में	स्तोत्र	२.	साम-गान रूपी
दश ।	६.	दशों	वाजिना ॥	३.	पंखों से (भगवान् श्री हरि को)

श्लोकार्थ—गरुड़ जी साम-गान रूपी पंखों से भगवान् श्री हरि को पास में लाये । उस समय भगवान् श्री हरि दशो दिशाओं में देदीप्यमान अपनी कान्ति से उन देवताओं के तेज को हर रहे थे ॥

विंशः श्लोकः

श्यामो हिरण्यरशनोऽर्ककिरीटजुष्टो नीलालकभ्रमरमण्डितकुण्डलास्यः ।
कम्ब्वब्जचक्रशरचापगदासिचर्म व्यग्रैर्हिरण्मयभुजैरिव कर्णिकारः ॥२०॥

पदच्छेद—श्यामः हिरण्य रशनः अर्क किरीट जुष्टः नीलः अलक भ्रमर मण्डित कुण्डल आस्यः ।
कम्बु अब्ज चक्र शर चाप गदा असि चर्म व्यग्रैः हिरण्मय भुजैः इव कर्णिकारः ॥

शब्दार्थ—

श्यामः	१.	(भगवान् श्री हरि) सांवले वर्ण के थे	कम्बु अब्ज	१२.	शंख कमल
हिरण्य रशनः	२.	(उनकी कमर में) सुवर्ण की करधनी	चक्र	१३.	सुदर्शन चक्र
अर्क	३.	(मस्तक पर) सूर्य के समान चमकदार	शर चाप	१४.	बाण धनुष
किरीट जुष्टः	४.	मुकुट सुशोभित था	गदा असि	१५.	गदा खड्ग (और)
नील अलक	६.	नीले वर्ण की अलकावली रूपी	चर्म व्यग्रैः	१६.	ढाल लिये हुये
भ्रमर	७.	भौंरों से (और)	हिरण्मय	१०.	सुवर्ण के आभूषणों से शोभित
मण्डित	९.	सुशोभित था (वे)	भुजैः	११.	अपनी आठ भुजाओं में
कुण्डल	८.	कुण्डलों से	इव	१८.	समान लग रहे थे
आस्यः ।	५.	उनका मुख कमल	कर्णिकारः ॥	१७.	कनेर पुष्प के

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि सांवले वर्ण के थे, उनकी कमर में सुवर्ण की करधनी, सूर्य के समान चमकदार मुकुट सुशोभित था । नीले वर्ण का उनका मुख अलकावली रूपी भौंरों से और कुण्डलों से सुशोभित था । वे सुवर्ण के आभूषणों से सुशोभिन अपनी आठ भुजाओं में शंख, कमल, सुदर्शन चक्र, बाण, धनुष, गदा, खड्ग और ढाल लिये हुये कनेर पुष्प के समान लग रहे थे ॥

एकविंशः श्लोकः

वक्षस्यधिश्रितवधूर्वनमाल्युदारहासावलोककलया रमयंश्च विश्वम् ।
पार्श्वभ्रमद्व्यजनचामरराजहंसः श्वेतातपत्रशशिनोपरि रज्यमानः ॥२१॥

पदच्छेद—वक्षसि अधिश्रित वधूः वनमाली उदार हास अवलोक कलया रमयन् च विश्वम् ।
पार्श्व भ्रमद् व्यजन चामर राजहंसः श्वेत आतपत्र शशिना उपरि रज्यमानः ॥

शब्दार्थ—

वक्षसि	१.	भगवान् के वक्षः स्थल पर	पार्श्व	१०.	उनके बगल में (पार्षदगण)
अधिश्रित	३.	शोभा दे रही थी (वे)	भ्रमद्	१४.	झल रहे थे
वधूः	२.	श्रीवत्स की रेखा	व्यजन	१२.	पंखा (और)
वनमाली	४.	वनमाला पहने थे	चामर	१३.	चँवर
उदार हास	६.	मधुर, हंसी के साथ	राजहंसः	११.	राजहंस के समान सफेद
अवलोक कलया	७.	कटाक्षकी लीला से	श्वेत आतपत्र	१७.	श्वेत वर्ण का छत्र
रमयन्	९.	आनन्दित कर रहे थे	शशिना	१६.	चन्द्रमा के समान
च	५.	और	उपरि	१५.	उसके ऊपर
विश्वम् ।	८.	सारे संसार को	रज्यमानः ॥	१८.	शोभित हो रहा था

श्लोकार्थ—भगवान् के वक्षः स्थल पर श्रीवत्स की रेखा शोभा दे रही थी । वे वनमाला पहने थे; और मधुर हंसी के साथ सारे संसार को आनन्दित कर रहे थे । उनके बगल में पार्षदगण राजहंस के समान सफेद पंखा और चँवर झल रहे थे । उनके ऊपर चन्द्रमा के समान सफेद वर्ण का छत्र शोभित हो रहा था ।

द्वाविंशः श्लोकः

तमुपागतमालक्ष्य सर्वे सुरगणादयः ।
प्रणेमुः सहसोत्थाय ब्रह्मेन्द्रत्र्यक्षनायकाः ॥२२॥

पदच्छेद— तम् उपागतम् आलक्ष्य सर्वे सुरगण आदयः ।
प्रणेमुः सहसा उत्थाय ब्रह्म इन्द्र त्र्यक्ष नायकाः ॥

शब्दार्थ—

तम्	२.	उन भगवान् श्री हरि को	प्रणेमुः	१२.	प्रणाम किया
उपागतम्	१.	पधारे हुये	सहसा	१०.	एकाएक
आलक्ष्य	३.	देख कर	उत्थाय	११.	खड़े होकर
सर्वे	७.	सभी	ब्रह्म इन्द्र	४.	ब्रह्मा इन्द्र
सुरगण	८.	देवगण (और)	त्र्यक्ष	५.	भगवान् शंकर (और)
आदयः ।	९.	ऋषियों (तथा) महर्षियों ने	नायकाः ॥	६.	प्रधान

श्लोकार्थ—पधारे हुये उन भगवान् श्री हरि को देख कर ब्रह्मा, इन्द्र, भगवान् शंकर और प्रधान सभी देवगण और ऋषियों तथा महर्षियों ने एकाएक खड़े होकर प्रणाम किया ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

तत्तेजसा हतरुचः सन्नजिह्वाः ससाध्वसाः ।
मूर्ध्ना धृताञ्जलिपुटा उपतस्थुरधोक्षजम् ॥२३॥

पदच्छेद—

तत् तेजसा हत रुचः सन्न जिह्वाः ससाध्वसाः ।
मूर्ध्ना धृत अञ्जलि पुटाः उपतस्थुः अधोक्षजम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	उन् भगवान् श्री हरि के	ससाध्वसाः ।	५.	भय के साथ-साथ
तेजसा	२.	तेज से	मूर्ध्ना	७.	(वे) सिर झुका कर (और)
हत	४.	फीकी पड़ गई	धृत	१०.	जोड़कर
रुचः	३.	देवताओं की कान्ति	अञ्जलि पुटाः	९.	दोनों हाथों को
सन्न	७	लड़खड़ाने लगी	उपतस्थुः	१२.	खड़े हो गये
जिह्वा	६.	(उनकी) जीभ	अधोक्षजम् ॥	११.	भगवान् श्री हरि के सामने

श्लोकार्थ—उन् भगवान् श्री हरि के तेज से देवताओं की कान्ति फीकी पड़ गई । भय के साथ-साथ उनकी जीभ लड़खड़ाने लगी । वे सिर झुकाकर और दोनों हाथों को जोड़कर भगवान् श्री हरि के सामने खड़े हो गये ।

चतुर्विंशः श्लोकः

अप्यर्वाग्वृत्तयो यस्य महि त्वात्मभुवादयः ।
यथामति गृणन्ति स्म कृतानुग्रहविग्रहम् ॥२४॥

पदच्छेद—

अपि अर्वाक् वृत्तयः यस्य महि तु आत्मभू आदयः ।
यथा मति गृणन्ति स्म कृत अनुग्रह विग्रहम् ॥

शब्दार्थ—

अपि	१.	यद्यपि	आदयः ।	८.	इत्यादि देवगण
अर्वाक्	५.	नहीं पहुँच सकती	यथा	१०.	अनुसार
वृत्तयः	२.	देवताओं की बुद्धि	मति	९.	अपनी बुद्धि के
यस्य	३.	उन भगवान् श्री हरि की	गृणन्ति स्म	१४.	स्तुति करने लगे
महि	४.	महिमा तक	कृत	१३.	धारण करने वाले (भगवान् की)
तु	६	फिर भी	अनुग्रह	११.	भक्तों पर कृपा करने के लिये
आत्मभू	७	ब्रह्मा	विग्रहम् ॥	१२.	शरीर

श्लोकार्थ—यद्यपि देवताओं की बुद्धि उन भगवान् श्री हरि की महिमा तक नहीं पहुँच सकती, फिर भी ब्रह्मा इत्यादि देवगण अपनी बुद्धि के अनुसार भक्तों पर कृपा करने के लिये शरीर धारण करने वाले भगवान् की स्तुति करने लगे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

दक्षो गृहीतार्हणसादनोत्तमं यज्ञेश्वरं विश्वसृजां परं गुरुम्।
सुनन्दनन्दाद्यनुगैर्वृतं मुदा गृणन् प्रपेदे प्रयतः कृताञ्जलिः ॥२५॥

पदच्छेद— दक्षः गृहीत अर्हण सादन उत्तमम् यज्ञेश्वरम् विश्वसृजाम् परम् गुरुम् ।
सुनन्द नन्द आदि अनुगैः वृत्तम् मुदा गृणन् प्रपेदे प्रयतः कृत अञ्जलिः ॥

शब्दार्थ—

दक्षः	१.	प्रजापति दक्ष	सुनन्द नन्द	६.	सुनन्द नन्द
गृहीत	५.	लेकर	आदि	७.	इत्यादि
अर्हण	४.	पूजा सामग्री	अनुगैः वृत्तम्	८.	पार्षदों से घिरे हुये
सादन	३.	पात्र में	मुदा	१५.	प्रसन्नता से
उत्तमम्	२.	श्रेष्ठ	गृणन्	१६.	स्तुति करते हुये (उनके)
यज्ञेश्वरम्	९.	यज्ञो के स्वामी (और)	प्रपेदे	१७.	शरणागत हुये
विश्वसृजाम्	१०.	प्रजापतियों के	प्रयतः	१३.	विनम्र भाव से
परम्	११.	परम	कृत	१५.	जोड़कर
गुरुम् ।	१२.	गुरु (भगवान् श्री हरि को)	अञ्जलिः ॥	१४.	दोनों हाथ

श्लोकार्थ—प्रजापति दक्ष श्रेष्ठ पात्र में पूजा सामग्री लेकर सुनन्द, नन्द इत्यादि पार्षदों से घिरे हुये, यज्ञों के स्वामी और प्रजापतियों के परम गुरु भगवान् श्री हरि को विनम्रभाव से दोनों हाथ जोड़कर स्तुति करते हुये उनके शरणागत हुये ॥

षड्विंशः श्लोकः

शुद्धं स्वधाम्न्युपरताखिलबुद्ध्यवस्थं चिन्मात्रमेकमभयं प्रतिषिध्य मायाम् ।
तिष्ठंस्तयैव पुरुषत्वमुपेत्य तस्यामास्ते भवानपरिशुद्ध इवात्मतन्त्रः ॥२६॥

पदच्छेद—शुद्धम् स्वधाम्नि उपरत अखिल बुद्धि अवस्थम् चिन्मात्रम् एकम् अभयम् प्रतिषिध्य मायाम् ।
तिष्ठन् तया एवं पुरुषत्वम् उपेत्य तस्याम् आस्ते भवान् अपरिशुद्ध इव आत्म तन्त्रः ॥

शब्दार्थ—

शुद्धम्	६.	निर्मल	प्रतिषिध्य	११.	तिरस्कार करके
स्वधाम्नि	५.	अपने स्वरूप में	मायाम् ।	१०.	माया का
उपरत	४.	रहित (आप)	तिष्ठन्	१२.	रहते हैं (तथा)
अखिल	२.	जाग्रदादि तीनों	तया एवं पुरुषत्वम्	१४.	उसी माया के द्वारा ही जीव-भाव को
बुद्धि	१.	दक्ष ने कहा हे भगवन् ! बुद्धि की	उपेत्य	१५.	प्राप्त करके
अवस्थम्	३.	अवस्थाओं से	तस्याम् आस्ते	१८.	उसी में स्थित रहते हैं
चिन्मात्रम्	७.	केवल ज्ञान स्वरूप	भवान्	१७.	आप
एकम्	८.	अद्वितीय (और)	अपरिशुद्ध इव	१६	अज्ञानी के समान
अभयम्	९.	भय से रहित हैं (आप)	आत्म तन्त्रः ॥	१३.	स्वतन्त्र होकर भी

श्लोकार्थ—दक्ष ने कहा—हे भगवन् ! बुद्धि की जाग्रदादि तीनों अवस्थाओं से रहित आप अपने स्वरूप में निर्मल, केवल ज्ञान स्वरूप, अद्वितीय और भय से रहित हैं, आप माया का तिरस्कार करके रहते हैं तथा स्वतन्त्र होकर भी उसी माया के द्वारा जीवभाव को प्राप्त करके अज्ञानी के समान आप उसी में स्थित रहते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

ऋत्विज ऊचुः—

तत्त्वं न ते वयमनञ्जन रुद्रशापात् कर्मण्यवग्रहधियो भगवन्विदामः ।
धर्मोपलक्षणमिदं त्रिवृदध्वराख्यं ज्ञातं यदर्थमधिदैवमदोव्यवस्थाः ॥२७॥

पदच्छेद—

तत्त्वम् न वयम् अनञ्जन रुद्र शापात् कर्मणि अवग्रह धियः भगवन् विदामः ।
धर्म उपलक्षणम् इदम् त्रिवृत् अध्वर आख्यम् ज्ञातम् यदर्थम् अधिदैवम् अदः व्यवस्थाः ॥

शब्दार्थ—

तत्त्वम् न	१०.	स्वरूप को नहीं	धर्म	१२.	धर्म को
ते	९.	आपके	उपलक्षणम्	१३.	बताने वाले
वयम्	८.	हम लोग	इदम्	१५.	इस
अनञ्जन	१.	हे निर्विकार	त्रिवृत्	१४.	वेदत्रयी के
रुद्र	३.	भगवान् शिव के प्रधान पार्षद-नन्दीश्वर के	अध्वर	१६.	यज्ञ
शापात्	४.	शाप से	आख्यम्	१७.	स्वरूप को ही
कर्मणि	५.	कर्मकाण्ड में ही	ज्ञातम्	१८.	जानते हैं
अवग्रह	६.	आसक्त	यदर्थम्	१९.	जिसके लिये
धियः	७.	चित्त	अधिदैवम्	२०.	देवताओं के अनुसार
भगवन्	२.	प्रभो !	अदः	२१.	उसमें
विदामः ।	११.	जानते हैं (हम)	व्यवस्थाः ॥	२२.	व्यवस्था की गई है

श्लोकार्थ—हे निर्विकार प्रभो ! भगवान् शिव के प्रधान पार्षद नन्दीश्वर के शाप से कर्मकाण्ड में ही आसक्त चित्त हम लोग आप के स्वरूप को नहीं जानते हैं । हम धर्म को बताने वाले वेदत्रयी के इस यज्ञ स्वरूप को ही जानते हैं । जिसके लिये देवताओं के अनुसार उसमें व्यवस्था की गई है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

सदस्या ऊचुः—उत्पत्त्यध्वन्यशरण उरुक्लेशदुर्गेऽन्तकोग्र-
व्यालान्विष्टे विषयमृगतृष्यात्मगेहोरुभारः ।
द्वन्द्वश्वभ्रे खलमृगभये शोकदावेऽज्ञसार्थः,
पादौकस्ते शरणद कदा याति कामोपसृष्टः ॥२८॥

पदच्छेद—

उत्पत्ति अध्वनि शरण उरु क्लेश दुर्गे अन्तक उग्र ।
व्याल अन्विष्टे विषय मृग तृषि आत्म गेह उरु भारः ॥
द्वन्द्व श्वभ्रे खल मृग भये शोक दावे अज्ञ सार्थः ।
पाद ओकः ते शरणद कदा याति काम उपसृष्टः ॥

शब्दार्थ—

उत्पत्ति	२७.	इस संसार	द्वन्द्व	१२.	परस्पर
अध्वनि	२८.	मार्ग में	श्वभ्रे	१३.	बैर के गढ्ढे हैं (जो)
शरण	२९.	विश्राम नहीं है (फिर भी)	खल	१४.	दुष्टजन रूपी
उरु	२.	(यह संसार) अनेक प्रकार के	मृग	१५.	जंगली पशुओं के कारण
क्लेश	३.	कष्टों के कारण	भये	१६.	भयानक हैं (जिसमें)
दुर्गे	४.	भयानक है (जिसमें)	शोक	१७.	शोकरूपी
अन्तक	५.	यमराज के समान	दावे	१८.	दावानल जलती रहती है
उग्र	६.	भयंकर	अज्ञ	१९.	अज्ञानी
व्याल	७.	सर्प	सार्थः	२०.	लोग
अन्विष्टे	८.	ताक में बैठे रहते हैं	पाद	३२.	चरणों की
विषय	९.	शब्दादि विषयरूपी	ओकः	३३.	शरण में
मृग	१०.	मृग तृष्णा में	ते	३१.	आपके
तृषि	११.	पड़कर (उसमें)	शरणद	१.	जीवों को आश्रय देने वाले हे प्रभो
आत्म	२१.	अपने ऊपर	कदा	३०.	वे मनुष्य भला कब
गेह	२२.	घर के	याति	३४.	आवेंगे
उरु	२३.	भारी	काम	२५.	वासनाओं से
भारः ।	२४.	बोझ को उठाकर	उपसृष्टः ॥	२६.	घिरे रहते हैं

श्लोकार्थ—जीवों को आश्रय देने वाले हे प्रभो ! यह संसार अनेक प्रकार के कष्टों के कारण भयानक है; जिसमें यमराज के समान भयंकर सूर्य ताक में बैठे रहते हैं। शब्दादि विषयरूपी मृग तृष्णा में पड़कर जिसमें परस्पर बैर के गढ्ढे हैं; हैं ; जो दुष्टजन रूपी जंगली पशुओं के कारण भयानक है; जिसमें शोकरूपी दावानल जलती रहती है। अज्ञानी लोग अपने ऊपर घर के भारी बोझ को उठाकर वासनाओं से घिरे रहते हैं। इस संसार मार्ग में विश्राम नहीं है; फिर भी वे मनुष्य भला कब आपके चरणों की शरण में आवेंगे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

रुद्र उवाच— तव वरद वराङ्घ्रावाशिषेहाखिलार्थे,
हि अपि मुनिभिरसक्तैरादरेणार्हणीये।
यदि रचितधियं माविद्यलोकोऽपविद्धं,
जपति न गणये तत्त्वत्पराऽनुग्रहेण ॥२९॥

पदच्छेद—

तव वरद वर अङ्घ्रौ आशिषा इह अखिल अर्थे,
हि अपि मुनिभिः असक्तैः आदरेण अर्हणीये।
यदि रचित धियम् मा अविद्य लोकः अपविद्धम्,
जपति न गणये तत् त्वत् पर अनुग्रहेण ॥

शब्दार्थ—

तव	२.	आपके	यदि	१७.	यदि
वरद	१.	हे वरदायक प्रभो !	रचित	१६.	लगा रहने से
वर	३.	श्रेष्ठ	धियम्	१५.	(उसमें) चित्त
अङ्घ्रौ	४.	चरण	मा	२०.	मुझे
आशिषा	७.	कामनाओं की	अविद्य	१८.	अज्ञानी
इह	५.	इस संसार में	लोकः	१९.	जन (मुझे)
अखिल	६.	सम्पूर्ण	अपविद्धम्	२१.	अपवित्र
अर्थे	८.	पूर्ति करते हैं	जपति	२२.	कहते हैं (तो)
हि	९.	तथा	न	२७.	नहीं
अपि	१२.	भी (उन चरणों की)	गणये	२८.	(मैं) ध्यान देता हूँ
मुनिभिः	११.	मुनिजन	तत्	२६.	उनके कहने पर
असक्तैः	१०.	निष्काम	त्वत्	२३.	आपकी
आदरेण	१३.	आदर के साथ	पर	२४.	अहेतुकी
अर्हणीये।	१४.	पूजा करते हैं	अनुग्रहेण ॥	२५.	कृपा के कारण

श्लोकार्थ—हे वरदायक प्रभो ! आपके श्रेष्ठ चरण इस संसार में सम्पूर्ण कामनाओं की पूर्ति करते हैं तथा निष्काम मुनिजन भी उन चरणों की आदर के साथ पूजा करते हैं उनमें चित्त लगा रहने से यदि अज्ञानी जन मुझे अपवित्र कहते हैं, तो आपकी अहेतुकी कृपा के कारण उनके कहने पर मैं नहीं ध्यान देता हूँ ॥

त्रिंशः श्लोकः

भृगुरुवाच—यन्मायया गहनयापहृतात्मबोधा ब्रह्मादयस्तनुभृतस्तमसि स्वपन्तः ।
नात्मन् श्रितं तव विदन्त्यधुनापि तत्त्वं सोऽयं प्रसीदतु भवान् प्रणतात्मबन्धुः ३०

पदच्छेद—यत् मायया गहनया अपहृत आत्मबोधाः ब्रह्म आदयः तनुभृतः तमसि स्वपन्तः ।
न आत्मन् श्रितम् तव विदन्ति अधुना अपि तत्त्वम् सः अयम् प्रसीदतु भवान् प्रणत आत्मबन्धुः ॥

शब्दार्थ—

..	१.	जिस आपकी	आत्मन् श्रितम्	१०.	आत्मज्ञान में सहायक
मायया	३.	माया से	तव	११.	आपके
गहनया	२.	कठिन	विदन्ति	१४.	जान पाये हैं
अपहृत	५.	समाप्त हो गया है	अधुना अपि	९.	(वे) अभी भी
आत्मबोधाः	४.	(जिसका) आत्मज्ञान	तत्त्वम्	१२.	स्वरूप को
ब्रह्म आदयः	६.	(वे) ब्रह्मा इत्यादि	सः	१६.	वही
तनुभृतः तमसि	७.	शरीरधारी अज्ञान में पड़े	अयम् प्रसीदतु	१८.	इस समय प्रसन्न होवें
स्वपन्तः ।	८.	रहते हैं	भवान्	१७.	आप
न	१३.	नहीं	प्रणत आत्मबन्धुः ॥	१५.	शरणागतजनों के आत्मा और सहायक

श्लोकार्थ—जिस आपकी कठिन माया से जिनका आत्मज्ञान समाप्त हो गया है, वे ब्रह्मा इत्यादि शरीरधारी अज्ञान में पड़े रहते हैं। वे अभी भी आत्मज्ञान में सहायक आपके स्वरूप को नहीं जान पाये हैं। शरणागत जीवों के आत्मा और सहायक वही आप इस समय प्रसन्न होवें ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—नैतत्स्वरूपं भवतोऽसौ पदार्थभेदग्रहैः पुरुषो यावदीक्षेत् ।
ज्ञानस्य चार्थस्य गुणस्य चाश्रयो मायामयाद् व्यतिरिक्तो यतस्त्वम् ॥३१॥

पदच्छेद—न एतत् स्वरूपम् भवतः असौ पदार्थ भेद ग्रहैः पुरुषः यावद् ईक्षेत् ।
ज्ञानस्य च अर्थस्य गुणस्य च आश्रयः माया मयात् व्यतिरिक्तः यतः त्वम् ॥

शब्दार्थ—

न	१०.	नहीं है	ज्ञानस्य	१३.	ज्ञान
एतत्	७.	वह	च	१५.	और
स्वरूपम्	९.	स्वरूप	अर्थस्य	१४.	शब्दादि विषय
भवतः	८.	आपका	गुणस्य	१६.	इन्द्रियों के
असौ	१.	वह अज्ञानी	च	१८.	तथा
पदार्थ	४.	वस्तुओं का	आश्रयः	१७.	आधार हैं
भेद	३.	भिन्न-भिन्न	मायामयात्	१९.	मायारचित संसार से
ग्रहैः	५.	ज्ञान कराने वाली इन्द्रियों से	व्यतिरिक्तः	२०.	अलग हैं
पुरुषः	२.	जीव	यतः	११.	क्योंकि
यावद् ईक्षेत् ।	६.	जितना देखता है	त्वम् ॥	१२.	आप

श्लोकार्थ—वह अज्ञानी जीव भिन्न-भिन्न वस्तुओं का ज्ञान कराने वाली इन्द्रियों से जितना देखता है वह आपका स्वरूप नहीं है। क्योंकि आप ज्ञान, शब्दादि विषय इन्द्रियों के आधार हैं तथा माया-रचित संसार से अलग हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

इन्द्र उवाच—इदमप्यच्युत विश्वभावनं वपुरानन्दकरं मनोदृशाम् ।
सुरविद्विट्क्षपणैरुदायुधैर्भुजदण्डैरुपपन्नमष्टभिः ॥३२॥

पदच्छेद— इदम् अपि अच्युत विश्व भावनम् वपुः आनन्दकरम् मनः दृशाम् ।
सुर विद्विट् क्षपणैः उदायुधैः भुजदण्डैः उपपन्नम् अष्टभिः ॥

शब्दार्थ—

इदम्	४.	यह	दृशाम् ।	८.	नेत्रों को
अपि	६.	भी	सुर	१०.	देवताओं के
अच्युत	१.	हे प्रभो !	विद्विट्	११.	विरोधियों को
विश्व	२.	संसार की	क्षपणैः	१२.	नष्ट करने के लिये
भावनम्	३.	रक्षा करने वाला	उदायुधैः	१३.	हथियार धारण किये हुये
वपुः	५.	शरीर	भुजदण्डैः	१५.	भुजाओं से (यह शरीर)
आनन्दकरम्	६.	आनन्द दे रहा है	उपपन्नम्	१६.	सुशोभित है
मनः	७.	मन को (और)	अष्टभिः ॥	१४.	आठ

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! संसार की रक्षा करने वाला यह शरीर भी मन को और नेत्रों को आनन्द दे रहा है । देवताओं के विरोधियों को नष्ट करने के लिये हथियार धारण किये हुये यह आठ भुजाओं से सुशोभित है ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

पत्न्य ऊचुः—यज्ञोऽयं तव यजनाय केन सृष्टो विध्वस्तः पशुपतिनाद्य दक्षकोपात् ।
तं नस्त्वं शवशयनाभशान्तमेधं यज्ञात्मन्नलिनरुचा दृशा पुनीहि ॥३३॥

पदच्छेद—यज्ञः अयम् तव यजनाय केन सृष्टः विध्वस्तः पशुपतिना अद्य दक्ष कोपात् ।
तम् नः त्वम् शवशयन आभ शान्त मेधम् यज्ञात्मन् नलिनरुचा दृशा पुनीहि ॥

शब्दार्थ—

यज्ञः	५.	यज्ञ	तम्	१५.	उस यज्ञ को
अयम्	४.	यह	नः	१४.	हमारे
तव यजनाय	२.	आपको प्रसन्न करने के लिये	त्वम्	१६.	आप
केन	३.	ब्रह्मा जी ने	शवशयन आभ	११.	श्मशान भूमि के समान
सृष्टः	६.	रचा है (किन्तु)	शान्त	१३.	रहित
विध्वस्तः	१०.	नष्ट कर दिया है (अतः)	मेधम्	१२.	पवित्रता से
पशुपतिना	८.	भगवान् शिव ने	यज्ञात्मन्	१	यज्ञस्वरूप हे प्रभो
अद्य	७.	इस समय	नलिनरुचा	१७.	कमल के समान कान्तिमान्
दक्षकोपात्	६.	प्रजापति दक्ष पर क्रोध करके (उसको)	दृशा पुनीहि ॥	१८.	नेत्रों से (देखकर) पवित्र करें

श्लोकार्थ—यज्ञस्वरूप हे प्रभो ! आपको प्रसन्न करने के लिये ब्रह्मा जी ने यह यज्ञ रचा है । किन्तु इस समय भगवान् शिव ने प्रजापति दक्ष पर क्रोध करके उसको नष्ट कर दिया है । अतः श्मशान भूमि के समान पवित्रता से रहित हमारे उस यज्ञ को आप कमल के समान कान्तिमान् नेत्रों से देखकर पवित्र करें ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ऋषय ऊचुः—अनन्वितं ते भगवन् विचेष्टितं यदात्मना चरसि हि कर्म नाज्यसे ।
विभूतये यत् उपसेदुरीश्वरीं न मन्यते स्वयमनुवर्ततीं भवान् ॥३४॥

पदच्छेद—अनन्वितम् ते भगवन् विचेष्टितम् यद् आत्मना चरसि हि कर्म न अज्यसे ।
विभूतये यत् उपसेदुः ईश्वरीम् न मन्यते स्वयम् अनुवर्ततीम् भवान् ॥

शब्दार्थ—

अनन्वितम्	४.	अद्भुत है	विभूतये	१०.	लोग वैभव के लिये
ते	२.	आपकी	यत्	११.	जिस
भगवन्	१.	हे प्रभो !	उपसेदुः	१३	उपासना करते हैं
विचेष्टितम्	३.	लीला	ईश्वरीम्	१२.	लक्ष्मी जी की
यद् आत्मना	५.	क्योंकि (आप) अपने से	न	१७.	नहीं
चरसि	७.	करते हैं	मन्यते	१८.	बहुत आदर देते हैं
हि	८.	किन्तु (उसमें)	स्वयम्	१४.	जो अपने आप
कर्म	६.	कर्म	अनुवर्ततीम्	१६.	सेवा करती (आप उन्हें)
न अज्यसे ।	९.	नहीं लिप्त होते हैं	भवान् ॥	१५.	आप की

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आपकी लीला अद्भुत है; क्योंकि आप अपने से कर्म करते हैं । किन्तु उसमें नहीं लिप्त होते हैं । लोग वैभव के लिये जिस लक्ष्मी जी की उपासना करते हैं जो अपने आप आपकी सेवा करती हैं, आप उन्हें बहुत आदर नहीं देते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

सिद्धा ऊचुः—अयं त्वत्कथामृष्टपीयूषनद्यां मनोवारणः क्लेशदावाग्निदग्धः ।
तृषार्तोऽवगाढो न सस्मार दावं न निष्क्रामति ब्रह्मसम्पन्नवन्नः ॥३५॥

पदच्छेद—अयम् त्वत् कथा मृष्ट पीयूष नद्याम् मनः वारणः क्लेश दावाग्नि दग्धः ।
तृषार्तः अवगाढः न सस्मार दावम् न निष्क्रामति ब्रह्म सम्पन्नवत् नः ॥

शब्दार्थ—

अयम्	३.	यह	तृषार्तः	७.	प्यास से व्याकुल होकर
त्वत्	८.	आपकी	अवगाढः	१२.	प्रविष्ट हुआ
कथा	९.	कथारूपी	न	१४.	नहीं
मृष्ट पीयूष	१०.	मधुर अमृत की	सस्मार	१५.	स्मरण कर रहा है (और)
नद्याम्	१२.	नदी में	दावम्	१३.	उस दावाग्नि का
मनः	५.	मनरूपी	न निष्क्रामति	१८.	निकलना नहीं चाहता है
वारणः	६.	हाथी	ब्रह्म	१६.	ब्रह्म
क्लेश दावाग्नि	१.	भगवन् ! कष्टरूप दावानल से	सम्पन्नवत्	१७.	ज्ञानी के समान (उसमें से)
दग्धः	२.	जला हुआ	नः ॥	४.	हमारा

श्लोकार्थ—भगवन् ! कष्ट रूपी दावानल से जला हुआ यह हमारा मनरूपी हाथी प्यास से व्याकुल होकर आपकी कथारूपी मधुर अमृत की नदी में प्रविष्ट हुआ उस दावाग्नि का स्मरण नहीं कर रहा है और ब्रह्मज्ञानी के समान उसमें से निकलना नहीं चाहता है ॥

षटत्रिंशः श्लोकः

यजमान्युवाच—स्वागतं ते प्रसीदेश तुभ्यं नमः श्रीनिवास श्रिया कान्तया त्राहि नः ।
त्वामृतेऽधीश नाङ्गैर्मखः शोभते शीर्षहीनः कबन्धो यथा पूरुषः ॥३६॥

पदच्छेद— स्वागतम् ते प्रसीद ईश तुभ्यम् नमः श्रीनिवास श्रिया कान्त्या त्राहि नः ।
त्वाम् ऋते अधीश न अङ्गैः मखः शोभते शीर्ष हीनः कबन्धः यथा पूरुषः ॥

शब्दार्थ—

स्वागतम्	३.	स्वागत है	नः ।	९.	हमारी
ते	२.	आपका	त्वाम् ऋते	१२.	आपके बिना
प्रसीद	५.	प्रसन्न होवें	अधीश	११.	हे भगवन्
ईश	१.	सर्व समर्थ हे ईश्वर	न	१४.	नहीं
तुभ्यम् नमः	४.	आपको नमस्कार है (आप)	अङ्गैः मखः	१३.	अन्य अङ्गों से (यह)
श्रीनिवास	६.	हे लक्ष्मीपते	शोभते	१५.	शोभा पाता है
श्रिया	८.	शोभा से (आप)	शीर्ष हीनः	१७.	मस्तक से रहित
कान्त्या	७.	अपनी मनोहर	कबन्धः	१९.	केवल धड़ से शोभा नहीं पाता है
त्राहि	१०.	रक्षा करें	यथा	१६.	जैसे
			पूरुषः ॥	१८.	मनुष्य

श्लोकार्थ—सर्वसमर्थ हे ईश्वर! आपका स्वागत है। आपको नमस्कार है। आप प्रसन्न होवें। हे लक्ष्मीपते! अपनी मनोहर शोभा से आप हमारी रक्षा करें। हे भगवन्! आपके बिना अन्य अङ्गों से (यह) शोभा नहीं पाता है, जैसे मस्तक से रहित मनुष्य केवल धड़ से शोभा नहीं पाता है॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

लोकपाला ऊचुः—दृष्टः किं नो दृग्भिरसद्ग्रहैस्त्वं प्रत्यग्द्रष्टा दृश्यते येनदृश्यम् ।
माया ह्येषा भवदीया हि भूमन् यस्त्वं षष्ठः पञ्चभिर्भासि भूतैः ॥३७॥

पदच्छेद— दृष्टः किम् नः दृग्भिः असद्ग्रहैः त्वम् प्रत्यग् द्रष्टा दृश्यते येन दृश्यम् ।
माया हि एषा भवदीया हि भूमन् यः त्वम् षष्ठः पञ्चभिः भासि भूतैः ॥

शब्दार्थ—

दृष्टः	८.	देखे जा सकते हैं ?	हि	१२.	ही
किम्	३.	क्या	एषा भवदीया	११.	यह आपकी
नः दृग्भिः	७.	हमारी इन्द्रियों से	हि	९.	क्योंकि
असद्ग्रहैः	६.	मिथ्या वस्तुओं का ज्ञान कराने वाली	भूमन्	१०.	हे अनन्त
त्वम्	५	वह आप	यः	१३.	जो
प्रत्यग् द्रष्टा	४.	सबकी अन्तरात्मा के साक्षी	त्वम् षष्ठः	१६.	आप छठे रूप में
दृश्यते	२.	देखा जाता है	पञ्चभिः	१४.	पाँच
येन दृश्यम् ।	१	जिसके द्वारा यह जगत्	भासि	१७.	भासित हो रहे हैं
माया	१३.	माया है	भूतैः ॥	१५.	महाभूतों के साथ

श्लोकार्थ—जिसके द्वारा यह जगत् देखा जाता है। क्या सबकी अन्तरात्मा के साक्षी वह आप मिथ्या वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त कराने वाली हमारी इन्द्रियों से देखे जा सकते हैं? क्योंकि हे अनन्त! यह आपकी ही माया है। जो पाँच महाभूतों के साथ आप छठे रूप में भासित हो रहे हैं॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

योगेश्वरा ऊचुः—

प्रेयान्न तेऽन्योऽस्त्यमुतस्त्वयि प्रभो विश्वात्मनीक्षेन्न पृथग्य आत्मनः ।
अथापि भक्त्येशतयोपधावतामनन्यवृत्त्यानुगृहाण वत्सल ॥३८॥

पदच्छेद—प्रेयान् ते अन्यः अस्ति अमुतः त्वयि प्रभो विश्व आत्मनि ईक्षेत् न पृथक् यः आत्मनः ।
अथापि भक्त्या ईशतया उपधावताम् अनन्य वृत्त्या अनुगृहाण वत्सल ॥

शब्दार्थ—

प्रेयान् न	११.	अधिक प्रिय नहीं	न पृथक्	६.	नहीं अलग
ते	१०.	आपको	यः	२.	जो मनुष्य
अन्यः	९.	दूसरा कोई	आत्मनः ।	५.	अपने से
अस्ति	१२.	है	अथापि	१३.	फिर भी
अमुतः	८.	उसे छोड़कर	भक्त्या ईशतया	१६.	भक्ति के द्वारा स्वामीभाव से आप को
त्वयि	४.	आपको	उपधावताम्	१७.	सेवा करता है (उस पर)
प्रभो	१.	हे भगवन्	अनन्य वृत्त्या	१५.	अनन्य प्रेमा
विश्व आत्मनि	३.	सम्पूर्ण विश्व की आत्मा	अनुग्रहाण	१८.	कृपा करें
ईक्षेत्	७.	देखता है	वत्सल ॥	१४.	हे भक्त वत्सल जो मनुष्य

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! जो मनुष्य सम्पूर्ण विश्व की आत्मा आपको अपने से अलग नहीं देखता है । उसे छोड़कर दूसरा कोई आपको अधिक प्रिय नहीं है । फिर भी हे भक्त वत्सल ! जो मनुष्य अनन्य प्रेमा भक्ति के द्वारा स्वामीभाव से आपकी सेवा करता है, उस पर कृपा करें ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

जगदुद्भवस्थितिलयेषु दैवतो बहुभिद्यमानगुणयाऽऽत्ममायया ।
रचितात्मभेदमतये स्वसंस्थया विनिवर्तितभ्रमगुणात्मने नमः ॥३९॥

पदच्छेद— जगत् उद्भव स्थिति लयेषु दैवतः बहु भिद्यमान गुणया आत्म मायया ।
रचित आत्म भेद मतये स्व संस्थया विनिवर्तित भ्रम गुण आत्मने नमः ॥

शब्दार्थ—

जगत्	६.	(आप) जगत् की	रचित	१२.	धारण करते हैं (तथा)
उद्भव	७.	उत्पत्ति	आत्म	१०.	अपने में
स्थिति	८.	पालन (और)	भेद मतये	११.	(ब्रह्मादिरूप से) भेद बुद्धि
लयेषु	९.	संहार के लिये	स्व संस्थया	१३.	अपनी स्वरूप स्थिति में
दैवतः	१.	हे प्रभो जीवों के भाग्यवश	विनिर्वतिता	१७.	दूर कर देते हैं (ऐसे)
बहु	३.	अनेक प्रकार की	भ्रम	१४.	भेद बुद्धि (और)
भिद्यमान	४.	विषमता वाली	गुण	१५.	सत्त्वादि गुणों को
गुणया	२.	सत्त्वादि गुणों में	आत्मने	१६.	अपने से
आत्म मायया ।	५.	अपनी माया के द्वारा	नमः ॥	१८.	(आप भगवान् को) नमस्कार है

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! जीवों के भाग्यवश सत्त्वादि गुणों में अनेक प्रकार की विषमता वाली अपनी माया के द्वारा आप जगत् की उत्पत्ति, पालन और संहार के लिये अपने में ब्रह्मादि रूप से भेद बुद्धि धारण करते हैं तथा अपनी स्वरूप स्थिति में भेद बुद्धि और सत्त्वादि गुणों का अपने से दूर कर देते हैं, ऐसे आप भगवान् को नमस्कार है ॥

चत्वारिंश श्लोकः

ब्रह्मोवाच— नमस्ते श्रितसत्त्वाय धर्मादीनां च सूतये ।
निर्गुणाय च यत्काष्ठां नाहं वेदापरेऽपि च ॥४०॥

पदच्छेद— नमः ते श्रित सत्त्वाय धर्म आदीनाम् च सूतये ।
निर्गुणाय च यत् काष्ठाम् न अहम् वेद अपरे अपि च ॥

शब्दार्थ—

नमः	१६.	नमस्कार है	निर्गुणाय	८.	गुणों से रहित है
ते	१५.	उस आप को	च	७.	किन्तु (आप)
श्रित	६.	स्वीकार किया है	यत् काष्ठाम्	९.	जिसमें आपके स्वरूप को
सत्त्वाय	५.	शुद्ध सत्त्वगुण को	न	१३.	नहीं
धर्म	१.	धर्म (और)	अहम्	१०.	मैं
आदीनाम्	२.	अर्थ, काम, मोक्ष को	वेद	१४.	जानते हैं
च	४.	आपने	अपरे अपि	१२.	दूसरे ब्रह्मादि देवता भी
सूतये ।	३.	उत्पन्न करने के लिये	च ॥	११.	और

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! धर्म और अर्थ, काम, मोक्ष को उत्पन्न करने के लिये आपने शुद्ध सत्त्वगुण को स्वीकार किया है । किन्तु आप गुणों से रहित हैं; जिस आपके स्वरूप को मैं और दूसरे ब्रह्मादि-देवता भी नहीं जानते हैं । उस आपको नमस्कार है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

अग्निरुवाच—यत्तेजसाहं सुसमिद्धतेजा हव्यं वहे स्वध्वर आज्यसिक्तम् ।
तं यज्ञियं पञ्चविधं च पञ्चभिः स्विष्टं यजुर्भिः प्रणतोऽस्मि यज्ञम् ॥४१॥

पदच्छेद—यत् तेजसा अहम् सुसमिद्ध तेजाः हव्यम् वहे स्वध्वरे आज्य सिक्तम् ।
तम् यज्ञियम् पञ्चविधम् च पञ्चभिः स्विष्टम् यजुर्भिः प्रणतः अस्मि यज्ञम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जिस आपके	तम्	१७.	उन आपको मैं
तेजसा	२.	प्रकाश से	यज्ञियम्	११.	यज्ञ आपके ही स्वरूप हैं
अहम्	३.	मैं	पञ्चविधम्	१०.	पांच प्रकार के
सुसमिद्ध	५.	प्रज्वलित करके	च	१२	तथा
तेजाः	४.	अपने प्रकाश को	पञ्चभिः	१३.	पांच प्रकार के
हव्यम्	८.	हवि	स्विष्टम्	१५.	पूजन होता है
वहे	९.	पहुँचाता हूँ	यजुर्भिः	१४.	यजुर्वेद के मन्त्रों से आपका ही
स्वध्वरे	६.	यज्ञ में	प्रणतः अस्मि	१८.	प्रणाम करता हूँ
आज्य सिक्तम् ।	७.	घृत मिश्रित	यज्ञम् ॥	१६.	यज्ञ स्वरूप

श्लोकार्थ—जिस आपके प्रकाश से मैं अपने प्रकाश को प्रज्वलित करके यज्ञ में घृत मिश्रित हवि देवताओं तक पहुँचाता हूँ । पांच प्रकार के यज्ञ (अग्निहोत्र, दर्श, पौर्णमास, चातुर्मास्य और पशु सोम) आपके ही स्वरूप हैं तथा (आश्रावय, अस्तु, वौषट्, यजे, यजामहे और वषट्, इन पांच प्रकार के यजुर्वेद के मन्त्रों से आपका ही पूजन होता है । यज्ञ स्वरूप उन आपको मैं प्रणाम करता हूँ ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

देवाऊचुः— पुरा कल्पापाये स्वकृतमुदरीकृत्य विकृतं
त्वमेवाद्यस्तस्मिन् सलिल उरगेन्द्राधिशयने ।
पुमान् शेषे सिद्धैर्हृदि विमृशिताध्यात्मपदविः
स एवाद्याक्ष्णोर्यः पथि चरसि भृत्यानवसि नः ॥४२॥

पदच्छेद—

पुरा कल्प अपाये स्वकृतम् उदरीकृत्य विकृतम् ।
त्वम् एव आद्यः तस्मिन् सलिले उरगेन्द्र अधिशयने ।।
पुमान् शेषे सिद्धैः हृदि विमृशित अध्यात्म पदविः ।
सः एव अद्य अक्ष्णोः यः पथि चरसि भृत्यान् अवसि नः ।।

शब्दार्थ—

पुरा	३. पूर्व	शेषे	१५.	शयन करते हैं
कल्प	४. कल्प के	सिद्धैः	१६.	सिद्धगण
अपाये	५. अन्त में	हृदि	१७.	अपने हृदय में
स्वकृतम्	८. अपने कार्य	विमृशित	२१.	ध्यान करते हैं
उदरीकृत्य	१०. उदर में लीन करके	अध्यात्म	१९.	ब्रह्म
विकृतम्	९. जगत् प्रपञ्च को (अपने)	पदविः	२०.	स्वरूप का
त्वम्	६. आप	सः एव	२२.	वही (आप)
एव	७. ही	अद्य	२३.	आज
आद्यः	१. हे प्रभो ! आप आदि	अक्ष्णोः	२५.	नेत्रों के
तस्मिन्	११. उस प्रलयकाल के	यः	१८.	जिस आपके
सलिले	१२. जल में	पथि	२६.	सामने
उरगेन्द्र	१३. सर्पराज की	चरसि	२७.	दर्शन दे रहे हैं (और अपने)
अधिशयने	१४. उत्तम शय्या पर	भृत्यान् अवसि	२८.	भक्तों की रक्षा कर रहे हैं
पुमान्	२. पुरुष हैं	नः ।।	२४.	हमारे

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप आदि पुरुष हैं। पूर्व कल्प के अन्त में आप ही अपने कार्य जगत् प्रपञ्च को अपने उदर में लीन करके उस प्रलय काल के जल में सर्पराज की उत्तमशय्या पर शयन करते हैं। सिद्धगण अपने हृदय में जिस आपके ब्रह्मस्वरूप का ध्यान करते हैं वही आप आज हमारे नेत्रों के सामने दर्शन दे रहे हैं और अपने भक्तों की रक्षा कर रहे हैं ।।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

गन्धर्वा ऊचुः--अंशांशास्ते देव मरीच्यादय एते ब्रह्मेन्द्राद्या देवगणा रुद्रपुरोगमाः।
क्रीडाभाण्डं विश्वमिदं यस्य विभूमन् तस्मै नित्यं नाथ नमस्ते करवाम ॥४३॥

पदच्छेद—अंश अंशाः ते देव मरीचि आदयः एते ब्रह्म, इन्द्र आद्याः देवगणाः रुद्र पुरोगमाः।
क्रीडाभाण्डम् विश्वम् इदम् यस्य विभूमन्, तस्मै नित्यम् नाथ नमः ते करवाम ॥

शब्दार्थ—

अंश अंशाः	८.	अंशों के भी अंश हैं	विश्वम् इदम्	१०.	यह सम्पूर्ण विश्व
ते	७.	आपके	यस्य	११.	जिस आपके
देव	१.	हे भगवन्	विभूमन्	९.	हे अनन्त
मरीचि आदयः	३.	मरीचि इत्यादि ऋषिगण (और)	तस्मै	१४.	उस
एते	२.	ये	नित्यम्	१६.	सदा
ब्रह्मा इन्द्र	५.	ब्रह्मा इन्द्र	नाथ	१३.	हे स्वामिन्! हमलोग
आद्याः देवगणाः	६.	इत्यादि देवता	नमः	१७.	प्रणाम
रुद्र पुरोगाः	४.	शंकर जी के सहित	ते	१५.	आपके
क्रीडाभाण्डम्	१२.	खेल की सामग्री है	करवाम ॥	१८.	करते हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन्! ये मरीचि इत्यादि ऋषिगण और शंकर जी के सहित ब्रह्मा, इन्द्र इत्यादि देवता आपके अंशों के भी अंश है। हे अनन्त! यह सम्पूर्ण विश्व जिस आपके खेल की सामग्री है स्वामिन्! हम लोग उस आपको सदा प्रणाम करते हैं॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

विद्याधरा ऊचुः—

त्वन्माययार्थमभिपद्य कलेवरेऽस्मिन् कृत्वा ममाहमिति दुर्मतिरुत्पथैः स्वैः।
क्षिप्तोऽप्यसद्विषयलालस आत्ममोहं युष्मत्कथामृतनिषेवक उद् व्युदस्येत् ॥४४॥

पदच्छेद—त्वत् मायया अर्थम् अभिपद्य कलेवरे अस्मिन् कृत्वा मम अहम् इति दुर्मतिः उत्पथैः स्वैः।
क्षिप्तः अपि असद् विषय लालसः आत्म मोहम् युष्मत् कथा अमृतनिषेवक उद्व्युदस्येत् ॥

शब्दार्थ—

त्वत् मायया	४.	आपकी माया से	क्षिप्तः अपि	१०.	अनादर पाकर भी
अर्थम् अभिपद्य	३.	पुरुषार्थ को प्राप्त करके	असद् विषय	११.	मिथ्या विषयों की
कलेवरे	२.	शरीर में	लालसः	१२.	कामना करता है (फिर भी)
अस्मिन्	१.	(मनुष्य) इस	आत्म मोहम्	१६.	अपने अज्ञान को
कृत्वा	७.	कर लेता है	युष्मत् कथा	१३.	आपकी कथारूपी
मम अहम्	५.	मेरा (और) मैं	अमृत	१४.	सुधा का
इति दुर्मतिः	६.	इस प्रकार की दुर्बुद्धि	निषेवक	१५.	पान करने से वह
उत्पथैः	८.	कुमार्ग से चलने पर	उद्	१७.	बिल्कुल
स्वैः।	९.	अपने लोगों के द्वारा	व्युदस्येत् ॥	१८.	त्याग देता है

श्लोकार्थ—मनुष्य इस शरीर में पुरुषार्थ को प्राप्त करके आपकी माया से मेरा मैं इस प्रकार की दुर्बुद्धि कर लेता है। कुमार्ग से चलने पर अपने लोगों के द्वारा अनादर पाकर भी मिथ्या विषयों की कामना करता है; फिर भी आपकी कथारूपी सुधा का पान करने से वह अपने अज्ञान को बिल्कुल त्याग देता है।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

ब्राह्मणा ऊचुः—त्वं क्रतुस्त्वं हविस्त्वं हुताशः स्वयं त्वं हि मन्त्रः समिद्दर्भपात्राणि च
त्वं सदस्यर्त्विजो दम्पती देवता अग्निहोत्रं स्वधा सोम आज्यं पशुः ॥४५॥

पदच्छेद—त्वम् क्रतुः त्वम् हविः त्वम् हुताशः स्वयम् त्वम् हि मन्त्रः समिद्दर्भ पात्राणि च ।
त्वम् सदस्य ऋत्विजः दम्पती देवता, अग्निहोत्रं स्वधा सोमः आज्यम् पशुः ॥

शब्दार्थ—

त्वम् क्रतुः	१.	हे भगवन् ! आप ही यज्ञ हैं	त्वम्	१०.	आप ही
त्वम् हविः	२.	आप ही हवन सामग्री हैं	सदस्य	११.	सदस्य
त्वम्	३.	आप ही	ऋत्विजः	१२.	याजक
हुताशः	५.	अग्नि हैं	दम्पती	१३.	यजमान और यजमान पत्नी
स्वयम्	४.	स्वयम्	देवता	१४.	देवता
त्वम् हि	७.	आप ही	अग्निहोत्र	१५.	अग्निहोत्र
मन्त्रः समिद्	८.	मन्त्र समिधा	स्वधा सोमः	१६.	स्वधा सोमरस
दर्भ पात्राणि	९.	कुशा और यज्ञपात्र हैं (तथा)	आज्यम्	१७.	घृत और
च ।	६.	और	पशुः ॥	१८.	पशु हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप ही यज्ञ हैं, आप ही हवन सामग्री हैं, आप ही स्वयम् अग्नि हैं, और आप ही मन्त्र, समिधा, कुश और यज्ञ पात्र हैं तथा आप ही सदस्य, याजक, यजमान और यजमान-पत्नी, देवता, अग्निहोत्र, स्वधा, सोमरस, घृत और पशु हैं ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

त्वं पुरा गां रसाया महासूकरो दंष्ट्रया पद्मिनीं वारणेन्द्रो यथा ।
स्तूयमानो नदँल्लीलया योगिभिर्व्युज्जहर्थ त्रयीगात्र यज्ञक्रतुः ॥४६॥

पदच्छेद— त्वम् पुरा गाम् रसायाः महासूकरः, दंष्ट्रया पद्मिनीम् वारणेन्द्रः यथा ।
स्तूय मानः नदत् लीलया योगिभिः व्युज्जहर्थ त्रयीगात्र यज्ञ क्रतुः ॥

शब्दार्थ—

त्वम् पुरा	४.	आप आदिकाल में	स्तूय मानः	१६.	स्तुति कर रहे थे
गाम्	७.	पृथ्वी को	नदत्	१४.	(उस समय आप) धीरे-धीरे गरज रहे थे
रसायाः	६.	रसातल में गई हुई	लीलया	८.	लीला से
महासूकर	५.	विशाल वराह का रूप धारण करके	योगिभिः	१५.	योगिजन (आपकी)
दंष्ट्रया	९.	अपनी दाढ़ों पर रखकर (ऐसे)	व्युज्जहर्थ	१०.	उठा लाये थे
पद्मिनीम्	१३.	कमलिनी को (उठा लेता है)	त्रयीगात्र	१.	हे वेदमूर्ते ! आप
वारणेन्द्रः	१२.	गजराज	यज्ञ	२.	यज्ञ (और)
यथा ।	११.	जैसे	क्रतुः ॥	३.	संकल्प हैं ॥

श्लोकार्थ—हे वेदमूर्ते ! आप यज्ञ और संकल्प हैं । आप आदिकाल में विशाल वराह का रूप धारण करके रसातल में गई हुई पृथ्वी को लीला से अपनी दाढ़ों पर रखकर ऐसे उठा लाये थे, जैसे गजराज कमलिनी को उठा लेता है । उस समय आप धीरे-धीरे गरज रहे थे । योगिजन आपकी स्तुति कर रहे थे ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

स प्रसीद त्वमस्माकमाकाङ्क्षतां दर्शनं ते परिभ्रष्टसत्कर्मणाम् ।
कीर्त्यमाने नृभिर्नाम्नि यज्ञेश ते यज्ञविघ्नाः क्षयं यान्ति तस्मै नमः ॥४७॥

पदच्छेद—सः प्रसीद त्वम् अस्माकम् आकांक्षताम्, दर्शनम् ते परिभ्रष्ट सत्कर्मणाम् ।
कीर्त्य माने नृभिः नाम्नि यज्ञेश ते, यज्ञ विघ्नाः क्षयम् यान्ति तस्मै नमः ॥

शब्दार्थ—

सः	१४.	अब	कीर्त्यमाने	५.	कीर्तन करने पर
प्रसीद	१६.	प्रसन्न हों	नृभिः	२.	मनुष्यों के द्वारा
त्वम्	१५.	आप	नाम्नि	४.	नाम का
अस्माकम्	१०.	हम लोग	यज्ञेश	१.	हे यज्ञेश्वर !
आकांक्षताम्	१३.	इच्छा कर रहे थे	ते	३.	आपको
दर्शनम्	१२.	दर्शन की	यज्ञ विघ्नाः	६.	यज्ञ के विघ्न
ते	११.	आपके	क्षयम् यान्ति	७.	नष्ट हो जाते हैं
परिभ्रष्ट	९.	नष्ट हो गया था (अतः)	तस्मै	१७.	उस आपको
सत्कर्मणाम् ।	८.	यज्ञ-स्वरूप हमारा श्रेष्ठ कर्म	नमः ॥	१८.	नमस्कार है

श्लोकार्थ—हे यज्ञेश्वर ! मनुष्यों के द्वारा आपको नाम का कीर्तन करने पर यज्ञ के विघ्न नष्ट हो जाते हैं। यज्ञ-स्वरूप हमारा श्रेष्ठ कर्म नष्ट हो गया था। अतः हम लोग आपके दर्शन की इच्छा कर रहे थे। अब आप प्रसन्न हों। उस आपको नमस्कार है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— इति दक्षः कविर्यज्ञं भद्र रुद्रावमर्शितम् ।
कीर्त्यमाने हृषीकेशे संनिन्ये यज्ञभावने ॥४८॥

पदच्छेद— इति दक्षः कविः यज्ञम् भद्र रुद्र अवमर्शितम् ।
कीर्त्यमाने हृषीकेशे संनिन्ये यज्ञ भावने ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	अवमर्शितम् ।	१०.	नष्ट किये गये
दक्षः	८.	प्रजापति दक्ष ने	कीर्त्यमाने	६.	कीर्तन करते रहने पर
कविः	७.	परम चतुर	हृषीकेशे	५.	भगवान् श्री हरि का
यज्ञम्	११.	यज्ञ को (फिर से)	संनिन्ये	१२.	प्रारम्भ कर दिया
भद्र	१.	हे विदुर जी !	यज्ञ	३.	यज्ञ के
रुद्र	९.	रुद्र के गणों से	भावने ॥	४.	संरक्षक

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! इस प्रकार यज्ञ के संरक्षक भगवान् श्री हरि का कीर्तन करते रहने पर परम चतुर प्रजापति दक्ष ने रुद्र के गणों से नष्ट किये गये यज्ञ को फिर से प्रारम्भ कर दिया ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

भगवान् स्वेन भागेन सर्वात्मा सर्वभागभुक्।
दक्षं बभाष आभाष्य प्रीयमाण इवानघ ॥४६॥

पदच्छेद—

भगवान् स्वेन भागेन सर्वं आत्मा सर्वभागभुक्।
दक्षम् बभाषे आभाष्य प्रीयमाणः इव अनघ ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	७.	भगवान् श्री हरि	भुक्।	६.	भोगने वाले
स्वेन	८.	अपने	दक्षम्	१२.	प्रजापति दक्ष को
भागेन	६.	भाग से (त्रिकपाल पुरोडाश-रूप)	बभाषे	१४.	कहा
सर्वं	२.	सबकी	आभाष्य	१३.	सम्बोधन करके
आत्मा	३.	आत्मा	प्रीयमाणः	१०.	प्रसन्न होते हुये
सर्व	४.	सबके	इव	११.	से
भाग	५.	भाग को	अनघ ॥	१.	हे निष्पाप विदुर जी

श्लोकार्थ—हे निष्पाप विदुर जी ! सबकी आत्मा सबके भाग को भोगने वाले भगवान् श्री हरि ने अपने त्रिकपाल-पुरोडाश रूप भाग से प्रसन्न होते हुये से प्रजापति दक्ष को सम्बोधन करके कहा ॥

पञ्चाशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच— अहं ब्रह्मा च शर्वश्च जगतः कारणं परम्।
आत्मेश्वर उपद्रष्टा स्वयंदृगविशेषणः ॥५०॥

पदच्छेद—

अहम् ब्रह्मा च शर्वः च जगतः कारणम् परम्।
आत्म ईश्वरः उपद्रष्टा स्वयम् दृक् अविशेषणः ॥

शब्दार्थ—

अहम्	४.	मैं (ही)	परम्।	२.	सर्वोत्तम
ब्रह्मा	५.	ब्रह्मा	आत्मा	६.	सबकी आत्मा
च	६.	और	ईश्वरः	१०	ईश्वर
शर्वः	७.	शंकर (हूँ)	उपद्रष्टा	११.	साक्षी
च	८.	तथा	स्वयम्	१२.	स्वयम्
जगतः	१.	संसार का	दृक्	१३.	प्रकाश
कारणम्	३.	कारण	अविशेषणः ॥	१४.	उपाधि रहित हूँ

श्लोकार्थ—संसार का सर्वोत्तम कारण मैं ही ब्रह्मा और शंकर हूँ तथा सबकी आत्मा ईश्वर साक्षी स्वयम् प्रकाश उपाधि रहित हूँ ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

आत्ममायां समाविश्य सोऽहं गुणमयीं द्विज ।
सृजन् रक्षन् हरन् विश्वं दध्रे संज्ञां क्रियोचिताम् ॥५१॥

पदच्छेद—

आत्म मायाम् समाविश्य सः अहम् गुणमयीम् द्विज ।
सृजन् रक्षन् हरन् विश्वम् दध्रे संज्ञाम् क्रिया उचिताम् ॥

शब्दार्थ—

आत्म	४.	अपनी	सृजन्	९.	रचना
मायाम्	६.	माया को	रक्षन्	१०.	पालन (और)
समाविश्य	७.	स्वीकार करके	हरन्	११.	संहार करने के लिये
सः	२.	वही	विश्वम्	८.	संसार की
अहम्	३.	मैं	दध्रे	१४.	धारण करता हूँ
गुणमयीम्	५.	त्रिगुणात्मिका	संज्ञाम्	१३.	ब्रह्मा विष्णु और महेश नाम को
द्विज ।	१.	हे विप्रवर	क्रिया उचिताम् ॥	१२.	कर्म के अनुरूप

श्लोकार्थ—हे विप्रवर ! वही मैं अपनी त्रिगुणात्मिका माया को स्वीकार करके संसार की रचना, पालन और संहार के लिये कर्म के अनुरूप ब्रह्मा, विष्णु और महेश नाम को धारण करता हूँ ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

तस्मिन् ब्रह्मण्यद्वितीये केवले परमात्मनि ।
ब्रह्मरुद्रौ च भूतानि भेदेनाज्ञोऽनुपश्यति ॥५२॥

पदच्छेद—

तस्मिन् ब्रह्मणि अद्वितीये केवले परमात्मनि ।
ब्रह्मरुद्रौ च भूतानि भेदेन अज्ञः अनुपश्यति ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	४.	उस	रुद्रौ	८.	शंकर
ब्रह्मणि	५.	ब्रह्म स्वरूप में	च	९.	और
अद्वितीये	१.	भेद से रहित (एवं)	भूतानि	१०.	सभी जीवों को
केवले	२.	विशुद्ध	भेदेन	११.	भिन्न-भिन्न रूप में
परमात्मनि ।	३.	(मुझ) परमात्मा	अज्ञः	६.	अज्ञानी मनुष्य
ब्रह्म	७.	ब्रह्मा	अनुपश्यति ॥	१२.	देखता है

श्लोकार्थ—भेद से रहित एवं विशुद्ध मुझ परमात्मा उस ब्रह्म स्वरूप में अज्ञानी मनुष्य ब्रह्मा, शंकर और सभी जीवों को भिन्न-भिन्न रूप में देखता है ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

यथा पुमान्न स्वाङ्गेषु शिरःपाण्यादिषु क्वचित् ।
पारक्यबुद्धिं कुरुते एवं भूतेषु मत्परः ॥५३॥

पदच्छेद—

यथा पुमान् न स्व अङ्गेषु शिरः पाणि आदिषु क्वचित् ।
पारक्य बुद्धिम् कुरुते एवम् भूतेषु मत् परः ॥

शब्दार्थ—

यथा पुमान्	१.	जिस प्रकार मनुष्य	पारक्य	८.	भेद
न	७.	नहीं	बुद्धिम्	९.	बुद्धि
स्व	२.	अपने	कुरुते	१०.	करता है
अङ्गेषु	३.	अङ्ग	एवम्	११.	उसी प्रकार
शिरः पाणि	४.	मस्तक हाथ	भूतेषु	१४.	प्राणियों में (भेद बुद्धि नहीं रखता है)
आदिषु	५.	इत्यादि में	मत्	१२.	मेरा
क्वचित् ।	६.	कहीं भी	परः ॥	१३.	भक्त

श्लोकार्थ—जिस प्रकार मनुष्य अपने अङ्ग मस्तक, हाथ इत्यादि में कहीं भी भेद बुद्धि नहीं करता है, उसी प्रकार मेरा भक्त प्राणियों में भेद बुद्धि नहीं रखता है ।

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

त्रयाणामेकभावानां यो न पश्यति वै भिदाम् ।
सर्वभूतात्मनां ब्रह्मन् स शान्तिमधिगच्छति ॥५४॥

पदच्छेद—

त्रयाणाम् एक भावानाम् यः न पश्यति वै भिदाम् ।
सर्वभूत आत्मनाम् ब्रह्मन् सः शान्तिम् अधिगच्छति ॥

शब्दार्थ—

त्रयाणाम्	६.	ब्रह्मा विष्णु महेश हम तीनों में	सर्वभूत	४.	समस्त प्राणियों की
एक भावानाम्	३.	एक स्वरूप वाले (एवं)	आत्मनाम्	५.	आत्मा
यः	२.	जो मनुष्य	ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मज्ञानी विदुर जी !
न पश्यति	८.	नहीं देखता है	सः	९.	वह
वै	१०.	अवश्य	शान्तिम्	११.	शान्ति को
भिदाम् ।	७.	भेद	अधिगच्छति ॥	१२.	प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—हे ब्रह्म ज्ञानी विदुर जी ! जो मनुष्य एक स्वरूप वाले एवम् समस्त प्राणियों की आत्मा ब्रह्मा, विष्णु, महेश हम तीनों में भेद नहीं देखता है, वह अवश्य शान्ति को प्राप्त करता है ॥

पञ्च पञ्चाशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— एवं भगवताऽऽदिष्टः प्रजापतिपतिर्हरिम् ।
अर्चित्वा क्रतुना स्वेन देवानुभयतोऽयजत् ॥५५॥

पदच्छेद— एवम् भगवता आदिष्टः प्रजापति पतिः हरिम् ।
अर्चित्वा क्रतुना स्वेन देवान् उभयतः अयजत् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	अर्चित्वा	९	पूजन करके
भगवता	२.	भगवान् श्री हरि से	क्रतुना	८.	भाग (त्रिकपाल पुरोडाश से)
आदिष्टः	३.	आदेश पाकर	स्वेन	७.	उनके
प्रजापति	४.	प्रजापतियों के	देवान्	११.	देवताओं का
पतिः	५.	नायक (दक्ष ने)	उभयतः	१०.	अङ्गभूत और प्रधान कर्मों से
हरिम् ।	६.	भगवान् श्री हरि का	अयजत् ॥	१२.	यजन किया

श्लोकार्थ—इस प्रकार भगवान् श्री हरि से आदेश पाकर प्रजापतियों के नायक दक्ष ने भगवान् श्री हरि का उनके भाग त्रिकपाल, पुरोडाश से पूजन करके अङ्गभूत और प्रधान कर्मों से देवताओं का यजन किया ॥

षट् पञ्चाशः श्लोकः

रुद्रं च स्वेन भागेन ह्युपाधावत्समाहितः ।
कर्मणोदवसानेन सोमपानितरानपि ।
उदवस्य सहर्त्विग्भिः सस्नाववभृथं ततः ॥५६॥

पदच्छेद— रुद्रम् च स्वेन भागेन हि उपाधावत् समाहितः ।
कर्मणा उदवसानेन सोमपान् इतरान् अपि ।
उदवस्य सह ऋत्विग्भिः सस्नौ अवभृथम् ततः ॥

शब्दार्थ—

रुद्रम्	२.	भगवान् महादेव का	इतरान्	९.	दूसरे देवताओं का
च	५.	और	अपि ।	१०.	भी (पूजन किया)
स्वेन भागेन	३.	उनके (यज्ञशेष रूप) भाग से	उदवस्य	१२.	उप संहार कर
हि उपाधावत्	४.	ही पूजन किया	सह	१४.	साथ
समाहितः ।	१.	एकाग्रचित्त होकर (दक्षने)	ऋत्विग्भिः	१३.	याजकों को
कर्मणा	७.	कर्म से	सस्नौ	१६.	स्नान किया
उदवसानेन	६.	उदवसान नामक	अवभृथम्	१५.	अवभृथ
सोमपान्	८.	सोम पान करने वाले (तथा)	ततः ॥	११.	उसके बाद (यज्ञ का)

श्लोकार्थ—एकाग्रचित्त होकर दक्ष ने भगवान् महादेव का उनके यज्ञ शेष रूप भाग से ही पूजन किया और उदवसान नामक कर्म से सोमपान करने वाले तथा दूसरे देवताओं का भी पूजन किया। उसके बाद यज्ञ का उपसंहार करके याजकों के साथ अवभृथ स्नान किया ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

तस्मा अप्यनुभावेन स्वेनैवावाप्तराधसे ।
धर्म एव मतिं दत्त्वा त्रिदशास्ते दिवं ययुः ॥५७॥

पदच्छेद—

तस्मै अपि अनुभावेन स्वेन एव अवाप्त राधसे ।
धर्मे एव मतिम् दत्त्वा त्रिदशाः ते दिवम् ययुः ॥

शब्दार्थ—

तस्मै	७. उस दक्ष प्रजापति को	धर्मे एव	८. धर्म में ही
अपि	६. भी	मतिम्	९. आपकी बुद्धि (हो ऐसा)
अनुभावेन	३. कर्म से	दत्त्वा	१०. आशीर्वाद देकर
स्वेन	१. अपने	त्रिदशाः	१२. देवगण
एव	२. ही	ते	११. वे
अवाप्त	५. प्राप्त होने पर	दिवम्	१३. स्वर्गलोक को
राधसे ।	४. सिद्धि को	ययुः ॥	१४. चले गये

श्लोकार्थ—अपने ही कर्म से सिद्धि को प्राप्त होने पर भी उन दक्ष प्रजापति को धर्म में ही आपकी बुद्धि हो ऐसा आशीर्वाद देकर वे देवगण स्वर्ग लोक को चले गये।

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

एवं दाक्षायणी हित्वा सती पूर्वकलेवरम् ।
जज्ञे हिमवतः क्षेत्रे मेनायामिति शुश्रुम ॥५८॥

पदच्छेद—

एवम् दाक्षायणी हित्वा सती पूर्वं कलेवरम् ।
जज्ञे हिमवतः क्षेत्रे मेनायाम् इति शुश्रुम ॥

शब्दार्थ—

एवम्	५. इस प्रकार	जज्ञे	१२. जन्म लिया था
दाक्षायणी	३. दक्ष की पुत्री	हिमवतः	९. हिमालय की
हित्वा	८. छोड़कर	क्षेत्रे	१०. धर्म पत्नी
सती	४. सती जी ने	मेनायाम्	११. मेना के गर्भ से
पूर्वं	६. अपना पहले का	इति	१. ऐसा
कलेवरम् ।	७. शरीर	शुश्रुम ॥	२. (हम लोगों ने) सुना है कि

श्लोकार्थ—ऐसा हम लोगों ने सुना है कि दक्ष की पुत्री सती जी ने इस प्रकार अपना पहले का शरीर छोड़कर हिमालय की धर्मपत्नी मेना के गर्भ से जन्म लिया था॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

तमेव दयितं भूय आवृङ्क्ते पतिमम्बिका ।
अनन्यभावैकगतिं शक्तिः सुप्तेव पूरुषम् ॥५९॥

पदच्छेद—

तम् एव दयितम् भूयः आवृङ्क्ते पतिम् अम्बिका ।
अनन्य भाव एक गतिम् शक्तिः सुप्ता इव पूरुषम् ॥

शब्दार्थ—

तम्	११.	उन्हीं	अनन्य	७.	अनन्य
एव	१२.	भगवान् महादेव को	भाव	८.	भक्ति के
दयितम्	१०.	अत्यन्त प्रिय	एक गतिम्	९.	एक मात्र शरण (तथा)
भूयः	६.	फिर से (उस जन्म में)	शक्तिः	३.	माया शक्ति
आवृङ्क्ते	१४.	वरण किया	सुप्ता	२.	सोई हुई
पतिम्	१३.	पति रूप में	इव	१.	जैसे (प्रलय काल में)
अम्बिका ।	५.	जगदम्बिका सती जी ने	पूरुषम् ॥	४.	आदि पुरुष का वरण करती है (उसी प्रकार)

श्लोकार्थ—जैसे प्रलयकाल में सोई हुई माया शक्ति आदि पुरुष का वरण करती है । उसी प्रकार जगदम्बिका सती जी ने फिर से उस जन्म में अनन्य भक्ति के एक मात्र शरण तथा अत्यन्त प्रिय उन्हीं भगवान् महादेव को पतिरूप में वरण किया ।।

षष्टितमः श्लोकः

एतद्भगवतः शम्भोः कर्म दक्षाध्वरद्रुहः ।
श्रुतं भागवताच्छिष्यादुद्धवान्मे बृहस्पतेः ॥६०॥

पदच्छेद—

एतद् भगवतः शम्भोः कर्म दक्ष अध्वर द्रुहः ।
श्रुतम् भागवतात् शिष्यात् उद्धवात् मे बृहस्पतेः ॥

शब्दार्थ—

एतद्	५.	यह	श्रुतम्	१२.	सुना है
भगवतः	३.	भगवान्	भागवतात्	१०.	परम भगवद् भक्त
शम्भोः	४.	महादेव जी का	शिष्यात्	९.	शिष्य
कर्म	६.	चरित्र	उद्धवात्	११.	उद्धव जी से
दक्ष अध्वर	१.	प्रजापति दक्ष के यज्ञ का	मे	७.	मैंने
द्रुहः ।	२.	विध्वंस करने वाले	बृहस्पतेः ॥	८.	बृहस्पति के

श्लोकार्थ—प्रजापति दक्ष के यज्ञ का विध्वंस करने वाले भगवान् महादेव जी का यह चरित्र मैंने बृहस्पति के शिष्य परम भगवद् भक्त उद्धव जी से सुना है ।

एकषष्टितमः श्लोकः

इदं पवित्रं परमीशचेष्टितं यशस्यमायुष्यमघौघमर्षणम् ।
यो नित्यदाऽऽकर्ण्य नरोऽनुकीर्तयेद् धुनोत्यघं कौरव भक्तिभावतः ॥६१॥

पदच्छेद—

इदम् पवित्रम् परम् ईश चेष्टितम् यशस्यम् आयुष्यम् अघ ओघ मर्षणम् ।
यः नित्यदा आकर्ण्य नरः अनुकीर्तयेद् धुनोति अघम् कौरव भक्तिभावतः ॥

शब्दार्थ—

इदम्	३.	यह	यः	१२.	जो
पवित्रम्	५.	पवित्र	नित्यदा	१६.	प्रतिदिन (इसका)
परम्	४.	अत्यन्त	आकर्ण्य	१७.	श्रवण करता है (और)
ईशः	२.	भगवान् महादेव का	नरः	१३.	मनुष्य
चेष्टितम्	६.	चरित्र	अनुकीर्तयेद्	१८.	पाठ करता है (वह)
यशस्यम्	७.	यश को देने वाला	धुनोति	२०.	दूर कर देता है
आयुष्यम्	८.	आयु बढ़ाने वाला (और)	अघम्	१९.	अपने पापों को
अघ	९.	पापों के	कौरव	१.	हे विदुर जी
ओघ	१०.	पुञ्ज का	भक्ति	१४.	श्रद्धा और
मर्षणम्	११.	नाश करने वाला है	भावतः ॥	१५.	प्रेम से

श्लोकार्थ—कुरुनन्दन हे विदुर जी ! भगवान् महादेव का यह अत्यन्त पवित्र चरित्र यश को देने वाला, आयु बढ़ाने वाला और पापों के पुञ्ज का नाश करने वाला है। जो मनुष्य श्रद्धा और प्रेम से प्रतिदिन इसका श्रवण करता है और पाठ करता है वह अपने पापों को दूर कर देता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे
दक्षयज्ञसंधानं नाम सप्तमः अध्यायः समाप्तः ॥७॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

अष्टमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—सनकाद्या नारदश्च ऋभुर्हंसोऽरुणिर्यतिः ।
नैते गृहान् ब्रह्मसुता ह्यावसन्नूर्ध्वरेतसः ॥१॥

पदच्छेद— सनक आद्याः नारदः च ऋभुः हंसः अरुणिः यतिः ।
न एते गृहान् ब्रह्म सुताः हि आवसन् ऊर्ध्वरेतसः ॥

शब्दार्थ—

सनक	१.	सनक	न	१३.	नहीं
आद्याः	२.	सनन्दन सनातन और सनत्कुमार	एते	१०.	ये
नारदः	३.	देवर्षि नारद	गृहान्	१२.	गृहस्थाश्रम में
च	७.	और	ब्रह्म	९.	ब्रह्मा जी के
ऋभुः	४.	ऋभु	सुताः	११.	पुत्र
हंसः	५.	हंस	हि	१५.	क्योंकि (ये)
अरुणिः	६.	अरुणि	आवसन्	१४.	रहे
यतिः ।	८.	यति	ऊर्ध्वरेतसः ॥	१६.	बाल ब्रह्मचारी थे

श्लोकार्थ—सनक, सनन्दन, सनातन और सनत् कुमार, देवर्षिनारद, ऋभु, हंस, अरुणि और यति ब्रह्मा जी के ये पुत्र गृहस्थाश्रम में नहीं रहे, क्योंकि ये बाल ब्रह्मचारी थे ॥

द्वितीयः श्लोकः

मृषाधर्मस्य भार्याऽऽसीद्दम्भं मायां च शत्रुहन् ।
असूत मिथुनं तत्तु निर्ऋतिर्जगृहेऽप्रजः ॥२॥

पदच्छेद— मृषा अधर्मस्य भार्या आसीत् दम्भम् मायाम् च शत्रुहन् ।
असूत मिथुनम् तत् तु निर्ऋतिः जगृहे अप्रजः ॥

शब्दार्थ—

मृषा	३.	मृषा नाम की	असूत	९.	उत्पन्न की
अधर्मस्य	२.	(ब्रह्मा जी के पुत्र) अधर्म की	मिथुनम्	१४.	जोड़े को
भार्या	४.	पत्नी	तत्	१३.	उस
आसीत्	५.	थीं (जिसने)	तु	१०.	किन्तु
दम्भम्	६.	दम्भ नामक पुत्र	निर्ऋतिः	१२.	निर्ऋति ने
मायाम्	८.	माया नाम की कन्या	जगृहे	१५.	ले लिया
च	७.	और	अप्रजः ॥	११.	सन्तान हीन
शत्रुहन् ।	१.	शत्रुनाशन हे विदुर जी			

श्लोकार्थ—शत्रुनाशन हे विदुर जी ! ब्रह्मा जी के पुत्र अधर्म की मृषा नाम की पत्नी थीं । जिसने दम्भ नामक पुत्र और माया नाम की कन्या उत्पन्न की । किन्तु सन्तान हीन निर्ऋति ने उस जोड़े को ले लिया ॥

तृतीयः श्लोकः

तयोः समभवल्लोभो निकृतिश्च महामते ।
ताभ्यां क्रोधश्च हिंसा च यद् दुरुक्तिः स्वसा कलिः ॥३॥

पदच्छेद—

तयोः समभवत् लोभः निकृतिः च महामते ।
ताभ्यां क्रोधः च हिंसा च यद् दुरुक्तिः स्वसा कलिः ॥

शब्दार्थ—

तयोः	२.	उन दोनों से	क्रोधः च	८.	क्रोध नामक पुत्र और
समभवत्	६.	उत्पन्न हुई	हिंसा	९.	हिंसा नाम की कन्या
लोभः	३.	लोभ नामक पुत्र	च	१०.	हुई
निकृतिः	५.	घृणा नाम को कन्या	यद्	११.	जिनसे
च	४.	और	दुरुक्तिः	१४.	गाली नाम की कन्या हुई
महामते ।	१.	बुद्धिमान् हे विदुर जी	स्वसा	१३.	बहन
ताभ्याम्	७	उनसे	कलिः ॥	१२.	कलह नाम का पुत्र (और उसकी)

श्लोकार्थ—बुद्धिमान हे विदुर जी ! उन दोनों से लोभ नामक पुत्र और घृणा नाम की कन्या उत्पन्न हुई । उनसे क्रोध नामक पुत्र और हिंसा नाम की कन्या हुई । जिनसे कलह नाम का पुत्र और उसकी बहन गाली नाम की कन्या हुई ॥

चतुर्थः श्लोकः

दुरुक्तौ कलिराधत्त भयं मृत्युं च सत्तम ।
तयोश्च मिथुनं जज्ञे यातना निरयस्तथा ॥४॥

पदच्छेद—

दुरुक्तौ कलिः आधत्त भयम् मृत्युम् च सत्तम ।
तयोः च मिथुनम् जज्ञे यातना निरयः तथा ॥

शब्दार्थ—

दुरुक्तौ	३.	गाली से	तयोः	९.	उन दोनों से
कलिः	२.	कलह ने	च	८.	तथा
आधत्त	७.	उत्पन्न किया	मिथुनम्	१३.	जोड़ा
भयम्	४.	भय	जज्ञे	१४.	उत्पन्न हुआ था
मृत्युम्	६.	मृत्यु को	यातना	१०.	यातना नामक कन्या
च	५.	और	निरयः	१२.	नरक नाम के पुत्र का
सत्तम ।	१.	साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी	तथा ॥	११.	और

श्लोकार्थ— साधुश्रेष्ठ हे विदुर जी ! कलह ने गाली से भय और मृत्यु को उत्पन्न किया । तथा उन दोनों से यातना नामक कन्या और नरक नाम के पुत्र का जोड़ा उत्पन्न हुआ ॥

पञ्चमः श्लोकः

संग्रहेण मयाऽऽख्यातः प्रतिसर्गस्तवानघ ।
त्रिःश्रुत्वैतत्पुमान् पुण्यं विधुनोत्यात्मनो मलम् ॥५॥

पदच्छेद—

संग्रहेण मया आख्यातः प्रतिसर्गः तव अनघ ।
त्रिः श्रुत्वा एतत् पुमान् पुण्यम् विधुनोति आत्मनः मलम् ॥

शब्दार्थ—

संग्रहेण	५. संक्षेप से	त्रिःश्रुत्वा	९. तीन बार सुनकर
मया	२. मैंने	एतत्	८. इसे
आख्यातः	६. वर्णन किया है	पुमान्	७. मनुष्य
प्रतिसर्गः	४. प्रलय का	पुण्यम्	१०. पुण्य प्राप्त करता है (और)
तव	३. आप से	विधुनोति	१२. दूर करता है
अनघ	१. निष्पाप हे विदुर जी	आत्मनः मलम् ॥	११. अपने शरीर के पाप को

श्लोकार्थ—निष्पाप हे विदुर जी ! मैंने आपसे प्रलय का संक्षेप में वर्णन किया है । मनुष्य इसे तीन बार सुनकर पुण्य प्राप्त करता है और अपने शरीर के पाप को दूर करता है ॥

षष्ठः श्लोकः

अथातः कीर्तये वंशं पुण्यकीर्तेः कुरूद्वह ।
स्वायम्भुवस्यापि मनोर्हरेरंशांशजन्मनः ॥६॥

पदच्छेद—

अथातः कीर्तये वंशम् पुण्यकीर्तेः कुरूद्वह ।
स्वायम्भुवस्य अपि मनोः हरेः अंश अंश जन्मनः ॥

शब्दार्थ—

अथातः	२. अब (मैं)	स्वायम्भुवस्य	८. स्वायम्भुव नाम के
कीर्तये	१२. वर्णन करता हूँ	अपि	१०. भी
वंशम्	११. कुल का	मनोः	९. मनु के
पुण्य	३. पवित्र	हरेः	५. भगवान् श्री हरि के
कीर्तेः	४. यश वाले	अंश	६. अंश से उत्पन्न (ब्रह्मा जी के)
कुरुद्वह ।	१. कुरुकुल नन्दन हे विदुर जी	अंशजन्मनः ॥	७. अंश से उत्पन्न होने वाले

श्लोकार्थ—कुरुकुलनन्दन हे विदुर जी ! अब मैं पवित्र यश वाले भगवान् श्री हरि के अंश से उत्पन्न ब्रह्मा जी के अंश से उत्पन्न होने वाले स्वायम्भुव नाम के मनु के भी कुल का वर्णन करता हूँ ॥

सप्तमः श्लोकः

प्रियव्रतोत्तानपादौ शतरूपापतेः सुतौ ।
वासुदेवस्य कलया रक्षायां जगतः स्थितौ ॥७॥

पदच्छेद—

प्रियव्रतः उत्तानपादौ शतरूपा पतेः सुतौ ।
वासुदेवस्य कलया रक्षायाम् जगतः स्थितौ ॥

शब्दार्थ—

प्रियव्रत	३. प्रियव्रत (और)		वासुदेवस्य	६. भगवान् वासुदेव की
उत्तानपादौ	४. उत्तान पाद नाम के		कलया	७. कला से उत्पन्न होने के कारण
शतरूपा	१. शतरूपा के		रक्षायाम्	९. पालन में
पतेः	२. पति मनु के		जगतः	८. संसार के
सुतौ ।	५. दो पुत्र थे (जो)		स्थितौ ॥	१०. लगे रहते थे

श्लोकार्थ—शतरूपा के पति मनु के प्रियव्रत और उत्तानपाद नाम के दो पुत्र थे जो भगवान् वासुदेव की कला से उत्पन्न होने के कारण संसार के पालन में लगे रहते थे ॥

अष्टमः श्लोकः

जाये उत्तानपादस्य सुनीतिः सुरुचिस्तयोः ।
सुरुचिः प्रेयसी पत्युर्नेतरा तत्सुतो ध्रुवः ॥८॥

पदच्छेद—

जाये उत्तानपादस्य सुनीतिः सुरुचिः तयोः ।
सुरुचिः प्रेयसी पत्युः न इतरा तत्सुतः ध्रुवः ॥

शब्दार्थ—

जाये	४. दो पत्नियाँ थीं		प्रेयसी	८. अत्यन्त प्रिय थी
उत्तानपादस्य	१. उत्तान पाद महाराज की		पत्युः	७. उत्तान पाद की
सुनीतिः	२. सुनीति (और)		न	१०. (प्रिय) नहीं थी
सुरुचिः	३ सुरुचि नाम की		इतरा	९. दूसरी सुनीति (उतनी)
तयोः ।	५. उनमें		यत्	११. उसी का
सुरुचि	६. सुरुचि नाम की पत्नी		सुतः ध्रुवः ॥	१२. पुत्र ध्रुव था

श्लोकार्थ—उत्तान पाद महाराज की सुनीति और सुरुचि नाम की दो पत्नियाँ थीं। उनमें सुरुचि नाम की पत्नी उत्तान पाद को अत्यन्त प्रिय थी दूसरी सुनीति उतनी प्रिय नहीं थी। उसी का पुत्र ध्रुव था ॥

नवमः श्लोकः

एकदा सुरुचेः पुत्रमङ्कमारोप्य लालयन् ।
उत्तमं नारुरुक्षन्तं ध्रुवं राजाभ्यनन्दत ॥९॥

पदच्छेद —

एकदा सुरुचेः पुत्रम् अङ्कम् आरोप्य लालयन् ।
उत्तमम् न आरुरुक्षन्तम् ध्रुवम् राजा अभ्यनन्दत ॥

शब्दार्थ—

एकदा	१.	एक बार	उत्तमम्	५.	उत्तम को
सुरुचेः	३.	सुरुचि के	न	११.	नहीं
पुत्रम्	४.	पुत्र	आरुरुक्षन्तम्	९.	गोद में बैठने की इच्छा वाले
अङ्कम्	६.	गोद में	ध्रुवम्	१०.	बालक ध्रुव का (उन्होंने)
आरोप्य	७.	बैठाकर	राजा	२.	राजा उत्तान पाद
लालयन् ।	८.	प्यार कर रहे थे (उस समय)	अभ्यनन्दत ॥	१२.	स्वागत किया

श्लोकार्थ—एक बार राजा उत्तान पाद सुरुचि के पुत्र उत्तम को गोद में बैठा कर प्यार कर रहे थे। उस समय गोद में बैठने की इच्छा वाले बालक ध्रुव का उन्होने स्वागत नहीं किया ॥

दशमः श्लोकः

तथा चिकीर्षमाणं तं सपत्न्यास्तनयं ध्रुवम् ।
सुरुचिः शृण्वतो राज्ञः सेर्ष्यमाहातिगर्विता ॥१०॥

पदच्छेद—

तथा चिकीर्षमाणम् तम् सपत्न्याः तनयम् ध्रुवम् ।
सुरुचिः शृण्वतो राज्ञः स ईर्ष्यम् आह अतिगर्विता ॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	तदनन्तर	सुरुचिः	७.	सुरुचि ने
चिकीर्षमाणम्	६.	बैठने का प्रयास करते देख	शृण्वतः	९.	सुनाकर
तम्	४.	उस बालक	राज्ञः	८.	राजा को
सपत्न्याः	२.	सौत के	स	१२.	साथ
तनयम्	३.	पुत्र	ईर्ष्यम्	११.	डाह के
ध्रुवम् ।	५.	ध्रुव को (गोद में)	आह	१३.	कहा
			अतिगर्विता ॥	१०.	बड़े घमंड से

श्लोकार्थ—तदन्तर सौत के पुत्र उस बालक ध्रुव को गोद में बैठने का प्रयास करते देख सुरुचि ने राजा को सुनाकर बड़े घमंड से डाह के साथ कहा ॥

एकादशः श्लोकः

न वत्स नृपतेर्धिष्ण्यं भवानारोढुमर्हति ।
न गृहीतो मया यत्त्वं कुक्षावपि नृपात्मजः ॥११॥

पदच्छेद— न वत्स नृपतेः धिष्ण्यम् भवान् आरोढुम् अर्हति ।
न गृहीतः मया यत् त्वम् कुक्षौ अपि नृप आत्मजः ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं	न	१४.	नहीं
वत्स	१.	हे पुत्र	गृहीतः	१५.	धारण किया है
नृपतेः	३.	राजा की	मया	१२.	मैंने (अपने)
धिष्ण्यम्	४.	गोद में	यत्	८.	क्योंकि
भवान्	२.	तुम	त्वम्	११.	तुमको
आरोढुम्	५.	बैठने के	कुक्षौ	१३.	गर्भ में
अर्हति	७.	योग्य हो	अपि	१०.	भी
			नृप आत्मजः	९.	राजा के पुत्र होने पर

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! तुम राजा की गोद में बैठने के योग्य नहीं हो; क्योंकि राजा के पुत्र होने पर भी तुमको मैंने अपने गर्भ में धारण नहीं किया है ॥

द्वादशः श्लोकः

बालोऽसि बत नात्मानमन्यस्त्रीगर्भसम्भृतम् ।
नूनं वेद भवान् यस्य दुर्लभेऽर्थे मनोरथः ॥१२॥

पदच्छेद— बालः असि बत न आत्मानम् अन्यस्त्री गर्भ सम्भृतम् ।
नूनम् वेद भवान् यस्य दुर्लभे अर्थे मनोरथः ॥

शब्दार्थ—

बालः	२.	बालक	सम्भृतम् ।	१०.	उत्पन्न हुआ
असि	३.	हो	नूनम्	४.	इसीलिये
बत	१.	खेद है (कि तुम)	वेद	१२.	जानते हो
न	११.	नहीं	भवान्	५.	तुम
आत्मानम्	६.	अपने को	यस्य	१३.	(अत एव) तुम्हारी
अन्य	७.	दूसरी	दुर्लभे	१४.	दुर्लभ
स्त्री	८.	स्त्री के	अर्थे	१५.	वस्तु की
गर्भ	९.	गर्भ से	मनोरथः ॥	१६.	कामना है

श्लोकार्थ—खेद है कि तुम बालक हो, इसीलिये तुम अपने को दूसरी स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुआ नहीं जानते हो । अत एव तुम्हारी दुर्लभ वस्तु की कामना है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तपसाऽऽराध्य पुरुषं तस्यैवानुग्रहेण मे ।
गर्भे त्वं साधयात्मानं यदीच्छसि नृपासनम् ॥१३॥

पदच्छेद— तपसा आराध्य पुरुषम् तस्य एव अनुग्रहेण मे ।
गर्भे त्वम् साधय आत्मानम् यदि इच्छसि नृप आसनम् ॥

शब्दार्थ—

तपसा	६.	तपस्या से	त्वम्	२.	तुम
आराध्य	८.	प्रसन्न करके	साधय	१४.	रक्खो
पुरुषम्	७.	परम पुरुष (भगवान् को)	आत्मानम्	११.	अपने को
तस्य एव	९.	उन्हीं की	यदि	१.	यदि
अनुग्रहेण	१०.	कृपा से (तुम)	इच्छसि	५.	चाहते हो (तो)
मे ।	१२.	पहले मेरे	नृप	३.	राज
गर्भे	१३.	गर्भ में	आसनम् ॥	४.	सिंहासन को

श्लोकार्थ—यदि तुम राज सिंहासन को चाहते हो तो तपस्या से परम पुरुष भगवान् को प्रसन्न करके उन्हीं की कृपा से तुम अपने को पहले मेरे गर्भ में रक्खो ॥

चतुर्दशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—मातुः सपत्न्याः स दुरुक्तिविद्धः श्वसन् रुषा दण्डहतो यथाहिः ।
हित्वा मिषन्तं पितरं सन्नवाचं जगाम मातुः प्ररुदन् सकाशम् ॥१४॥

पदच्छेद— मातुः सपत्न्याः सः दुरुक्तिविद्धः श्वसन् रुषा दण्डहतः यथा अहिः ।
हित्वा मिषन्तम् पितरम् सन्नवाचम्, जगाम मातुः प्ररुदन् सकाशम् ॥

शब्दार्थ—

मातुः	२.	माँ के	अहिः ।	८.	सर्प के
सपत्न्याः	१.	सौतेली	हित्वा	१६.	छोड़कर (वह)
सः	५.	वह बालक ध्रुव	मिषन्तम्	१४.	देखते हुये
दुरुक्ति	३.	दुर्वचन बाणों से	पितरम्	१५.	पिता को
विद्धः	४.	घायल	सन्न	१२.	चुप-चाप
श्वसन्	११.	लम्बी साँसे लेने लगा (तथा)	वाचम्	१३.	होकर
रुषा	१०.	क्रोध से	जगाम	२०.	गया
दण्ड	६.	डण्डे से	मातुः	१८.	अपनी माता के
हतः	७.	घायल	प्ररुदन्	१७.	रोता हुआ
यथा	९.	समान	सकाशम् ॥	१९.	पास

श्लोकार्थ—सौतेली माँ के दुर्वचन बाणों से घायल वह बालक ध्रुव डण्डे से घायल सूर्य के समान क्रोध से लम्बी साँसें लेने लगा। तथा चुप-चाप होकर देखते हुये पिता को छोड़कर वह रोता हुआ अपनी माता के पास गया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

तं निःश्वसन्तं स्फुरिताधरोष्ठं सुनीतिरुत्सङ्ग उदूह्य बालम् ।
निशम्य तत्पौरमुखान्नितान्तं सा विव्यथे यद्गदितं सपत्न्या ॥१५॥

पदच्छेद—तम् निः श्वसन्तम् स्फुरित अधर ओष्ठम् सुनीतिः उत्सङ्गे उदूह्य बालम् ।
निशम्य तत् पौर मुखान् नितान्तम् सा विव्यथे यद् गदितम् सपत्न्या ॥

शब्दार्थ—

तम्	५.	उस	निशम्य	१३.	सुनकर
निः श्वसन्तम्	२.	लम्बी साँसें भरते हुये (और)	तत् पौर	११.	उसे महल के लोगों के
स्फुरित	३.	फड़कते हुये	मुखान्	१२.	मुख से
अधर ओष्ठम्	४.	होंठों वाले	नितान्तम्	१५.	अत्यन्त
सुनीतिः	१.	सुनीति ने	सा	१४.	वह
उत्सङ्गे	७.	गोद में	विव्यथे	१६.	दुःखी हुई
उदूह्य	८.	बैठा लिया (तथा)	यद्गतिम्	१०.	जो कुछ कहा था
बालम् ।	६.	अपने पुत्र ध्रुव को	सपत्न्या ॥	९.	सौत ने

श्लोकार्थ—सुनीति ने लम्बी साँसें भरते हुये और फड़कते हुये होठों वाले उस अपने पुत्र ध्रुव को गोद में बैठा लिया तथा सौत ने जो कुछ कहा था उसे महल के लोगों के मुख से सुनकर वह अत्यन्त दुःखी हुई ॥

षोडशः श्लोकः

सोत्सृज्य धैर्यं विललाप शोकदावाग्निना दावलतेव बाला ।
वाक्यं सपत्न्याः स्मरती सरोजश्रिया दृशा बाष्पकलामुवाह ॥१६॥

पदच्छेद— सा उत्सृज्य धैर्यम् विललाप शोक दावाग्निना दाव लता इव बाला ।
वाक्यम् सपत्न्याः स्मरती सरोज श्रिया दृशा बाष्प कलाम् उवाह ॥

शब्दार्थ—

सा	१.	वह	वाक्यम्	११.	वचन का
उत्सृज्य	८.	छोड़कर	सपत्न्याः	१०.	सौत के
धैर्यम्	७.	धीरज	स्मरती	१२.	स्मरण करती हुई
विललाप	९.	विलाप करने लगी (तथा)	सरोज	१३.	कमल के समान
शोक	५.	शोकरूपी	श्रिया	१४.	शोभा वाली
दावाग्निना	६.	दावानल से	दृशा	१५.	आँखों से
दाव	३.	जली हुई	बाष्प	१६.	आँसुओं की
लता इव	४.	लता के समान	कलाम्	१७.	धारा
बाला ।	२.	(भोली-भाली) सुनीति	उवाह ॥	१८.	बहाने लगी

श्लोकार्थ—वह भोली-भाली सुनीति दावानल से जली हुई लता के समान शोकरूपी दावानल से जली हुई धीरज छोड़कर विलाप करने लगी। सौत के वचन का स्मरण करती हुई कमल के समान शोभावाली आँखों से आँसुओं की धारा बहाने लगी ॥

सप्तदशः श्लोकः

दीर्घं श्वसन्ती वृजिनस्य पारमपश्यती बालकमाह बाला ।
मामङ्गलं तात परेषु मंस्था भुङ्क्ते जनो यत्परदुःखदस्तत् ॥१७॥

पदच्छेद— दीर्घम् श्वसन्ती वृजिनस्य पारम् अपश्यती बालकम् आह बाला ।
मा अमङ्गलम् तात परेषु मंस्थाः भुङ्क्ते जनः यत् पर दुःखदः तत् ॥

शब्दार्थ—

दीर्घम्	१.	लम्बी	अमङ्गलम्	११.	अकल्याण
श्वसन्ती	२.	सांसें लेती हुई (तथा)	तात	९.	हे पुत्र ! तुम
वृजिनस्य	३.	अपने दुःख के सागर का	परेषु	१०.	दूसरों के विषय में
पारम्	४.	अन्त	मंस्थाः	१३.	सोचना
अपश्यती	५.	न देखती हुई	भुङ्क्ते	१८.	भोगता है
बालकम्	७.	बालक ध्रुव से	जनः	१६.	मनुष्य (स्वयम्)
आह	८.	बोली	यत् पर	१४.	क्योंकि दूसरों को
बाला ।	६.	भोली-भाली सुनीति	दुःखदः	१५.	दुःख देने वाला
मा	१२.	मत	तत् ॥	१७.	उसके फल को

श्लोकार्थ—लम्बी सांसें लेती हुई तथा अपने दुःख के सागर का अन्त न देखती हुई भोली-भाली सुनीति बालक ध्रुव से बोलीं; हे पुत्र ! तुम दूसरों के विषय में अकल्याण मत सोचना । क्योंकि दूसरों को दुःख देने वाला मनुष्य स्वयम् उसके फल को भोगता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

सत्यं सुरुच्याभिहितं भवान्मे यद् दुर्भगाया उदरे गृहीतः ।
स्तन्येन वृद्धश्च विलज्जते यां भार्येति वा वोढुमिडस्पतिर्माम् ॥१८॥

पदच्छेद— सत्यम् सुरुच्या अभिहितम् भवान् मे यद् दुर्भगायाः उदरे गृहीतः ।
स्तन्येन वृद्धः च विलज्जते याम् भार्या इति वा वोढुम् इडस्पतिः माम् ॥

शब्दार्थ—

सत्यम्	२.	सत्य ही	च	९.	और
सुरुच्या	१.	सुरुचि ने	विलज्जते	१८.	लज्जा करते हैं
अभिहितम्	३.	कहा है	याम्	११.	जिस
भवान् मे	५.	तुम मुझ	भार्या	१४.	पत्नी
यद्	४.	कि	इति	१६.	ऐसा
दुर्भगायाः	६.	मन्दभागिनी के	वा	१५.	अथवा (दासी)
उदरे	७.	उदर से	वोढुम्	१७.	कहने में (भी)
गृहीतः ।	८.	उत्पन्न हुये हो	इडस्पतिः	१३.	महाराज उत्तान पाद
स्तन्येन वृद्ध	१०.	मेरे ही दूध से, पले हो	माम् ॥	१२.	मुझको

श्लोकार्थ—सुरुचि ने सत्य ही कहा है कि तुम मुझ मन्दभागिनी के उदर से उत्पन्न हुये हो और मेरे ही दूध से पले हो; जिस मुझको महाराज उत्तान पाद पत्नी अथवा दासी ऐसा कहने में भी लज्जा करते हैं।

एकोनविंशः श्लोकः

आतिष्ठ तत्तात विमत्सरस्त्वमुक्तं समात्रापि यदव्यलीकम् ।
आराधयाधोक्षजपादपद्मं यदीच्छसेऽध्यासनमुत्तमो यथा ॥१९॥

पदच्छेद— आतिष्ठ तत् तात विमत्सरः त्वम् उक्तम् समात्रा अपि यद् अव्यलीकम् ।
आराधय अधोक्षज पाद पद्म यदि इच्छसे अध्यासनम् उत्तमः यथा ॥

शब्दार्थ—

आतिष्ठ	१४.	करो (और)	आराधय	१८.	आराधना करो
तत्	१३.	वही	अधोक्षज	१५.	भगवान् श्री हरि के
तात	१.	हे पुत्र	पाद	१६.	चरण
विमत्सरः	११.	द्वेष भाव छोड़कर	पद्मम्	१७.	कमल की
त्वम्	१०.	तुम	यदि	२.	यदि (तुम)
उक्तम्	९.	कहा है	इच्छसि	६.	चाहते हो (तो)
समात्रा अपि	७	सौतेली माँ होने पर भी (सुरुचि ने)	अध्यासनम्	५.	राज सिंहासन
यद्	८.	जो	उतमः	३.	उत्तम के
व्यलीकम् ।	१२.	निष्कपट भाव से	यथा ॥	४.	समान

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! यदि तुम उत्तम के समान राज सिंहासन चाहते हो तो सौतेली माँ होने पर भी सुरुचि ने जो कहा है तुम द्वेषभाव छोड़कर निष्कपट भाव से वही करो और भगवान् श्री हरि के चरण कमल की आराधना करो ॥

विंशः श्लोकः

यस्याङ्घ्रिपद्मं परिचर्य विश्व-विभावनायात्तगुणाभिपत्तेः ।
अजोऽध्यतिष्ठत्खलु पारमेष्ठ्यं पदं जितात्मश्वसनाभिवन्द्यम् ॥२०॥

पदच्छेद— यस्य अङ्घ्रि पद्मम् परिचर्य विश्वविभावनाय आत्तगुण अभिपत्तेः ।
अजः अध्यतिष्ठत् खलु पारमेष्ठ्यम् पदम् जित आत्म श्वसन अभिवन्द्यम् ॥

शब्दार्थ—

यस्य	६.	जिस भगवान् श्री हरि के	अजः	११.	ब्रह्मा जी ने
अङ्घ्रि	७.	चरण	अध्यतिष्ठत्	१४.	प्राप्त किया है (तथा)
पद्मम्	८.	कमल की	खलु	१०.	ही
परिचर्य	९.	सेवा करके	पारमेष्ठ्यम्	१२.	परमेष्ठी
विश्व	१.	संसार की	पदम्	१३.	पद को
विभावनाय	२.	रक्षा के लिये	जित	१७.	जीतने वाले (योगिजन)
आत्त	५.	स्वीकार करने वाले	आत्म	१५.	मन (और)
गुण	३.	सत्त्व गुण के	श्वसन	१६.	प्राण वायु को
अभिपत्तेः ।	४.	आवरण को	अभिवन्द्यम् ॥	१८.	जिसकी वन्दना करते हैं

श्लोकार्थ—संसार की रक्षा के लिये सत्त्वगुण के आवरण को स्वीकार करने वाले जिस भगवान् श्री हरि के चरण कमल की सेवा करके ही ब्रह्मा जी ने परमेष्ठी पद को प्राप्त किया है तथा मन और प्राण को जीतने वाले योगिजन जिसकी वन्दना करते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

तथा मनुर्वो भगवान् पितामहो यमेकमत्या पुरदक्षिणैर्मखैः ।
इष्ट्वाभिपेदे दुरवापमन्यतो भौमं सुखं दिव्यमथापवर्ग्यम् ॥२१॥

पदच्छेद— तथा मनुर्वो भगवान् पितामहः यम् एक मत्या पुरुदक्षिणैः मखैः ।
इष्ट्वा अभिपेदे दुरवापम् अन्यतः भौमम् सुखम् दिव्यम् अथ अपवर्ग्यम् ॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	तथा	इष्ट्वा	१०.	यजन करके
मनुः	५.	मनु ने	अभिपेदे	१८.	प्राप्त किया था
वः	२.	आपके	दुरवापम्	१२.	दुर्लभ
भगवान्	४.	महाराज	अन्यतः	११.	दूसरे साधनों से
पितामहः	३.	दादा	भौमम्	१३.	लौकिक
यम्	९.	जिन भगवान् श्री हरि का	सुखम्	१७.	सुख को
एकमत्या	६.	अनन्य भाव से	दिव्यम्	१४.	अलौकिक
पुरुदक्षिणैः	७.	अधिक दक्षिण वाले	अथ	१५.	और
मखैः ।	८.	यज्ञों के द्वारा	अपवर्ग्यम् ॥	१६.	मोक्ष

श्लोकार्थ—तथा आपके दादा महाराज मनु ने अनन्य भाव से अधिक दक्षिण वाले यज्ञों के द्वारा जिन भगवान् श्री हरि का यजन करके दूसरे साधनों से दुर्लभ लौकिक-अलौकिक और मोक्ष सुख को प्राप्त किया था ॥

द्वाविंशः श्लोकः

तमेव वत्साश्रय भृत्यवत्सलं मुमुक्षुभिर्मृग्यपदाब्जपद्धतिम् ।
अनन्यभावे निजधर्मभाविते मनस्यवस्थाप्य भजस्व पूरुषम् ॥२२॥

पदच्छेद— तम् एव वत्स आश्रय भृत्य वत्सलम् मुमुक्षभिः मृग्य पदाब्ज पद्धतिम् ।
अनन्य भावे निजधर्म भाविते मनसि अवस्थाप्य भजस्व पूरुषम् ॥

शब्दार्थ—

तम् एव	६.	उन्हीं	अनन्यभावे	१२.	एकाग्र चित्त
वत्स	१.	हे पुत्र	निज	९.	अपने
आश्रय	८.	सहारा लो (तथा)	धर्म	१०.	धर्म से
भृत्यवत्सलम्	७.	भक्त वत्सल (भगवान श्री हरि का)	भाविते	११.	शुद्ध किये गये
मुमुक्षुभिः	२.	मोक्ष चाहने वाले	मनसि	१३.	मन में
मृग्य	५.	ढूंढ़ते हैं	अवस्थाप्य	१५.	स्थापित करके
पदाब्ज	३.	जिनके चरण कमल की	भजस्व	१६.	भजन करो
पद्धतिम् ।	४.	धूली को	पूरुषम् ॥	१४.	आदि पुरुष भगवान् को

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! मोक्ष चाहने वाले जिनके चरण कमल की धूली को ढूंढ़ते हैं उन्हीं भक्त वत्सल भगवान् श्री हरि का सहारा लो । तथा अपने धर्म से शुद्ध किये गये एकाग्रचित्त मन में आदि पुरुष भगवान् को स्थापित करके भजन करो ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

नान्यं ततः पद्मपलाशलोचनाद् दुःखच्छिदं ते मृगयामि कंचन।
यो मृग्यते हस्तगृहीतपद्मया श्रियेतरैरङ्ग विमृग्यमाणया ॥२३॥

पदच्छेद— न अन्यम् ततः पद्म पलाश लोचनात् दुःख छिदम् ते मृगयामि कंचन।
यः मृग्यते हस्त गृहीत पद्मया श्रिया इतरैः अङ्ग विमृग्यमाणया ॥

शब्दार्थ—

न	९.	नहीं	यः	११.	जिन भगवान् श्री हरि को
अन्यम्	८.	दूसरे को	मृग्यते	१६.	ढूंढती रहती हैं (और)
ततः	६.	भगवान् श्री हरि से भिन्न	हस्त	१२.	हाथ में
पद्म पलाश	४.	कमलदल के समान	गृहीत	१४.	लेकर
लोचनात्	५.	नेत्र वाले	पद्मया	१३.	कमल
दुःख छिदम्	३.	दुःख को दूर करने वाला	श्रिया	१५.	लक्ष्मी जी
ते	२.	तुम्हारे	इतरैः	१७.	दूसरे ब्रह्मादि देवता भी
मृगयामि	१०.	देख रही हूँ	अङ्ग	१.	हे पुत्र
कंचन।	७.	किसी	विमृग्यमाणया ॥	१८.	ढूंढते हैं

श्लोकार्थ—हे पुत्र! तुम्हारे दुःख को दूर करने वाला कमलदल के समान नेत्र वाले भगवान् श्री हरि से भिन्न किसी दूसरे को नहीं देख रही हूँ। जिन भगवान् श्री हरि को हाथ में कमल लेकर लक्ष्मी जी ढूंढती रहती है और दूसरे ब्रह्मादि देवता भी ढूंढते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— एवं संजल्पितं मातुराकर्ण्यार्थागमं वचः।
संनियम्यात्मनाऽऽत्मानं निश्चक्राम पितुः पुरात् ॥२४॥

पदच्छेद—

एवम् संजल्पितम् मातुः आकर्ण्य अर्थ आगमम् वचः।
संनियम्य आत्मना आत्मानम् निश्चक्राम पितुः पुरात् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	संनियम्य	९.	नियन्त्रित करके
संजल्पितम्	३.	कहे गये	आत्मना	७.	अपनी बुद्धि से
मातुः	२.	माता के द्वारा	आत्मानम्	८.	मन को
आकर्ण्य	६.	सुनकर (तथा)	निश्चक्राम	१२.	निकल गये
अर्थ	४.	अर्थ से	पितुः	१०.	पिता के
आगमम् वचः ॥	५.	परिपूर्ण वचन को	पुरात् ॥	११.	नगर से

श्लोकार्थ—इस प्रकार माता के द्वारा कहे गये अर्थ से परिपूर्ण वचन को सुनकर तथा अपनी बुद्धि से मन को नियन्त्रित करके पिता के नगर से निकल गये ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

नारदस्तदुपाकर्ण्य ज्ञात्वा तस्य चिकीर्षितम् ।
स्पृष्ट्वा मूर्धन्यघघ्नेन पाणिना प्राह विस्मितः ॥२५॥

पदच्छेद—

नारदः तद् उपाकर्ण्य ज्ञात्वा तस्य चिकीर्षितम् ।
स्पृष्ट्वा मूर्धनि अघघ्नेन पाणिना प्राह विस्मतः ॥

शब्दार्थ—

नारदः	६.	देवर्षि नारद (वहाँ आये)	स्पृष्ट्वा	१०.	फेर कर
तद्	१.	वह समाचार	मूर्धनि	७.	उन्हों ध्रुव के मस्तक पर
उपाकर्ण्य	२.	सुनकर (और)	अघघ्नेन	८.	पाप नाशक
ज्ञात्वा	५.	जानकर	पाणिना	९.	अपना हाथ
तस्य	३.	ध्रुव	प्राह	१२.	कहा
चिकीर्षितम् ।	४.	क्या करना चाहता है (यह)	विस्मितः ॥	११.	आश्चर्य चकित होते हुये

श्लोकार्थ—वह समाचार सुनकर और ध्रुव क्या करना चाहता है यह जानकर देवर्षि नारद वहाँ आये। उन्होंने ध्रुव के मस्तक पर पापनाशक अपना हाथ फेर कर आश्चर्य चकित होते हुये कहा ॥

षड्विंशः श्लोकः

अहो तेजः क्षत्रियाणां मानभङ्गममृष्यताम् ।
बालोऽप्ययं हृदा धत्ते यत्समातुरसद्वचः ॥२६॥

पदच्छेद—

अहो तेजः क्षत्रियाणाम् मान भङ्गम् अमृष्यताम् ।
बालः अपि अयम् हृदा धत्ते यत् समातुः असद् वचः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	अहो आश्चर्य है	अपि	१०.	(फिर) भी
तेजः	३.	तेज है	अयम्	८.	यह
क्षत्रियाणाम्	२.	क्षत्रियों का कैसा	हृदा	१३.	हृदय में
मान	४.	(वे अपने) सम्मान का	धत्ते	१४.	घर कर गये हैं
भङ्गम्	५.	अनादर	यत्	७.	यद्यपि
अमृष्यताम् ।	६.	नहीं सह सकते	समातुः	११.	सौतेली माता के
बालः	९.	बालक है	असद् वचः ॥	१२.	कटु वचन (इसके)

श्लोकार्थ—अहो आश्चर्य है। क्षत्रियों का कैसा तेज है। वे अपने सम्मान का अनादर नहीं सह सकते। यद्यपि यह बालक है। फिर भी सौतेली माता के कटु वचन इसके हृदय में घर कर गये हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

नारद उवाच— नाधुनाप्यवमानं ते सम्मानं वापि पुत्रक ।
लक्षयामः कुमारस्य सक्तस्य क्रीडनादिषु ॥२७॥

पदच्छेद—

न अधुना अपि अवमानम् ते सम्मानम् वापि पुत्रक ।
लक्षयामः कुमारस्य सक्तस्य क्रीडनादिषु ॥

शब्दार्थ—

न	१३.	(कुछ) नहीं है	पुत्रक ।	१.	हे बेटा
अधुना	८.	इस समय	लक्षयामः	२.	हम देखते हैं
अपि	३.	अभी	कुमारस्य	४.	तुम बच्चे हो (और)
अवमानम्	१०.	अपमान	सक्तस्य	७.	मस्त रहते हो (अतः)
ते	६.	तुम्हारा	क्रीडन	५.	खेल कूद
सम्मानम्	१२.	सम्मान	आदिषु ॥	६.	आदि में
वापि	११.	अथवा			

श्लोकार्थ—हे बेटा ! हम देखते हैं; अभी तुम बच्चे हो और खेल-कूद में मस्त रहते हो । अतः इस समय तुम्हारा अपमान अथवा सम्मान कुछ नहीं है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

विकल्पे विद्यमानेऽपि न ह्यसंतोषहेतवः ।
पुंसो मोहमृते भिन्ना यल्लोके निजकर्मभिः ॥२८॥

पदच्छेद—

विकल्पे विद्यमाने अपि न हि असन्तोष हेतवः ।
पुंसः मोहम् ऋते भिन्ना यत् लोके निज कर्मभिः ॥

शब्दार्थ—

विकल्पे	१.	मान अथवा अपमान	पुंसः	४.	मनुष्य के
विद्यमाने	२.	मानने पर	मोहम्	७.	मोह के
अपि	३.	भी	ऋते	८.	सिवाय
न	१०.	नहीं है	भिन्ना	६.	(और) कुछ
हि	१४.	ही (सुख दुःख पाता है)	यत्	११.	क्योंकि
असन्तोष	५.	दुःख का	लोके	१२.	संसार में (मनुष्य)
हेतवः ।	६.	कारण	निज कर्मभिः ॥	१३.	अपने कर्मों से

श्लोकार्थ—मान अथवा अपमान मानने पर भी मनुष्य के दुःख का कारण मोह के सिवाय और कुछ नहीं है । क्योंकि संसार में मनुष्य अपने कर्मों से ही सुख-दुःख पाता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

परितुष्येत्ततस्तात　　तावन्मात्रेण　　पूरुषः ।
दैवोपसादितं　　यावद्वीक्ष्येश्वरगतिं　　बुधः ॥२९॥

पदच्छेद—

परितुष्येत् ततः तात तावन्मात्रेण पूरुषः ।
दैव उपसादितम् यावत् वीक्ष्य ईश्वर गतिम् बुधः ॥

शब्दार्थ—

परितुष्येत्	९	प्रसन्न रहना चाहिये	उपसादितम्	१२.	मिला है
ततः	१.	अतः	तावद्	१०.	जितना
तात	२.	हे पुत्र	वीक्ष्य	५.	विचार करके
तावन्मात्रेण	८.	उतने से ही	ईश्वर	३.	भगवान् के
पूरुषः ।	७	मनुष्य को	गतिम्	४.	विधान का
दैव	११.	भाग्य से	बुधः ॥	६.	विद्वान्

श्लोकार्थ—अतः हे पुत्र ! भगवान् के विधान का विचार करके विद्वान् मनुष्य को उतने से ही प्रसन्न रहना चाहिये जितना भाग्य से मिला है ॥

त्रिंशः श्लोकः

अथ　　मात्रोपदिष्टेन　　योगेनावरुरुत्ससि ।
यत्प्रसादं स वै पुंसां दुराराध्यो मतो मम ॥३०॥

पदच्छेद—

अथ मात्रा उपदिष्टेन योगेन अवरुरुत्ससि ।
यत् प्रसादम् सः वै पुंसाम् दुराराध्यः मतः मम ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	अब तुम	प्रसादम्	६.	कृपा
मात्रा	२.	माता के द्वारा	सः वै	८.	वे अवश्य
उपदिष्टेन	३.	बताये हुये	पुंसाम्	९.	मनुष्यों पर
योगेन	४.	योग-साधना से	दुराराध्य	१०.	बड़ी कठिनाई से (प्रसन्न होते हैं)
अवरुरुत्ससि ।	७.	प्राप्त करना चाहते हो	मतः	११.	मत है
यत्	५.	जिस परमात्मा की	मम ॥	१२.	(ऐसा) मेरा

श्लोकार्थ—अब तुम माता के द्वारा बताये हुये योग साधना से जिस परमात्मा की कृपा प्राप्त करना चाहते हो; वे अवश्य मनुष्यों पर बड़ी कठिनाई से प्रसन्न होते हैं, ऐसा मेरा मत है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

मुनयः पदवीं यस्य निःसङ्गेनोरुजन्मभिः ।
न विदुर्मृगयन्तोऽपि तीव्रयोगसमाधिना ॥३१॥

पदच्छेद—

मुनयः पदवीम् यस्य निः सङ्गेन उरु जन्मभिः ।
न विदुः मृगयन्तः अपि तीव्र योग समाधिना ॥

शब्दार्थ—

मुनयः	१.	मुनिगण	न विदुः	१२.	नहीं जान पाते हैं
पदवीम्	११.	स्वरूप को	मृगयन्तः	८.	ढूंढते रहने पर
यस्य	१०.	जिस परमात्मा के	अपि	९.	भी
निः सङ्गेन	४.	अनासक्त-भाव से रहते हुये	तीव्र	५.	कठिन
उरु	२.	अनेक	योग	६.	अष्टांग योग (और)
जन्मभिः ।	३.	जन्मों में	समाधिना ॥	७.	समाधि के द्वारा

श्लोकार्थ—मुनिगण अनेक जन्मों में अनासक्त भाव से रहते हुये कठिन अष्टांगयोग और समाधि के द्वारा जिस परमात्मा के स्वरूप को नहीं जान पाते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

अतो निवर्ततामेष निर्बन्धस्तव निष्फलः ।
यतिष्यति भवान् काले श्रेयसां समुपस्थिते ॥३२॥

पदच्छेद—

अतः निवर्तताम् एषः निर्बन्धः तव निष्फलः ।
यतिष्यति भवान् काले श्रेयसाम् समुपस्थिते ॥

शब्दार्थ—

अतः	१.	इसलिये	यतिष्यति	११.	प्रयत्न करना
निवर्तताम्	७.	छोड़ दो	भवान्	२.	तुम
एषः	४.	यह	काले	९.	समय
निर्बन्धः	६.	हठ	श्रेयसाम्	८.	परम पुरुषार्थ का
तव	३.	अपना	समुपस्थिते ॥	१०.	आने पर
निष्फलः ॥	५.	व्यर्थ का			

श्लोकार्थ—इसलिये तुम अपना यह व्यर्थ का हठ छोड़ दो परम् पुरुषार्थ का समय आने पर प्रयत्न करना ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यस्य यद् दैवविहितं स तेन सुखदुःखयोः ।
आत्मानं तोषयन्देही तमसः पारमृच्छति ॥३३॥

पदच्छेद—

यस्य यद् दैव विहितम् सः तेन सुख दुःखयोः ।
आत्मानम् तोषयन् देही तमसः परम् ऋच्छति ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जिस मनुष्य को	दुःखयोः ।	४.	दुःख में से
यद्	५.	जो	आत्मानम्	१०.	अपने मन को
दैव	२.	विधाता के विधान से	तोषयन्	११.	प्रसन्न रक्खे ऐसा होने पर वह
विहितम्	६.	मिला	देही	८.	मनुष्य
सः	७.	वह	तमसः	१२.	मोहरूप संसार से
तेन	९.	उसी से	परम्	१३.	पार
सुख	३.	सुख और	ऋच्छति ॥	१४.	पा जाता है

श्लोकार्थ—जिस मनुष्य को विधाता के विधान से सुख और दुःख में से जो मिला है वह मनुष्य उसी से अपने मन को प्रसन्न रक्खे ऐसा होने पर वह मोहरूप संसार से पार पा जाता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

गुणाधिकान्मुदं लिप्सेदनुक्रोशं गुणाधमात् ।
मैत्रीं समानादन्विच्छेन्न तापैरभिभूयते ॥३४॥

पदच्छेद—

गुण अधिकात् मुदम् लिप्सेत् अनुक्रोशम् गुण अधमात् ।
मैत्रीम् समानात् अन्विच्छेत् न तापैः अभिभूयते ॥

शब्दार्थ—

गुण	२.	गुण वालों से	मैत्रीम्	८.	मित्रता
अधिकात्	१.	मनुष्य को अपने से अधिक	समानात्	७.	समान गुण वालों से
मुदम् लिप्सेत्	३.	प्रसन्न रहना चाहिये	अन्विच्छेत्	९.	करनी चाहिये (ऐसा करने पर वह)
अनुक्रोशम्	६.	दया करनी चाहिये (तथा)	न	११.	नहीं
गुण	५.	गुण वालों पर	तापैः	१०.	दुःखों से
अधमात् ।	४.	अपने से कम	अभिभूयते ॥	१२.	दबाया जा सकता है

श्लोकार्थ—मनुष्य को अपने से अधिक गुण वालों से प्रसन्न रहना चाहिये अपने, से कम गुणवालों पर दया करनो चाहिये । तथा समान गुण वालों से मित्रता करनी चाहिये, ऐसा करने पर वह दुःखों से दबाया नहीं जा सकता है ।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

ध्रुव उवाच— सोऽयं शमो भगवता सुखदुःखहतात्मनाम् ।
दर्शितः कृपया पुंसां दुर्दर्शोऽस्मद्विधैस्तु यः ॥३५॥

पदच्छेद—

सः अयम् शमः भगवतः सुख दुःख हत आत्मनाम् ।
दर्शितः कृपया पुंसाम् दुर्दर्शः अस्मद् विधैः तु यः ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	अब	दर्शितः	११.	दिखाया है
अयम्	९.	यह	कृपया	८.	कृपा करके
शमः	१०.	शान्ति का मार्ग	पुंसाम्	५.	मनुष्यों के लिये
भगवतः	७.	आपने	दुर्दर्शः	१६.	दृष्टि नहीं जा सकती है
सुख	१.	सुख (और)	अस्मद्	१३.	हमारे जैसे
दुःख	२.	दुःख से	विधैः	१४.	लोगों की
हत	३.	चञ्चल	तु	१२.	किन्तु
आत्मनाम् ।	४.	चित्त वाले	यः ।	१५.	उस पर

श्लोकार्थ—सुख और दुःख से चञ्चल चित्त वाले मनुष्यों के लिये अब आपने कृपा करके यह शान्ति का मार्ग दिखाया है; किन्तु हमारे जैसे लोगों की उस पर दृष्टि नहीं जा सकती है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

अथापि मेऽविनीतस्य क्षात्त्रं घोरमुपेयुषः ।
सुरुच्या दुर्वचोबाणैर्न भिन्ने श्रयते हृदि ॥३६॥

पदच्छेद—

अथापि मे अविनीतस्य क्षात्रम् घोरम् उपेयुषः ।
सुरुच्या दुर्वचः बाणैः न भिन्ने श्रयते हृदि ॥

शब्दार्थ—

अथापि	१.	इसके सिवाय	सुरुच्या	७.	सुरुचि के
मे	२.	मुझे	दुर्वचः	८.	कटुवचन रूपी
अविनीतस्य	६.	विनय से रहित हूँ	बाणैः	९	बाणों से
क्षात्रम्	४.	क्षत्रिय स्वभाव	न	१२.	नहीं
घोरम्	३.	कठोर	भिन्ने	१०.	विदीर्ण
उपेयुषः ।	५.	प्राप्त हुआ है (और मैं)	श्रयते	१३.	ठहर सकता है
			हृदि ॥	११.	(मेरे) हृदय में आपका उपदेश

श्लोकार्थ—इसके सिवाय मुझे कठोर क्षत्रिय स्वभाव प्राप्त हुआ है। और मैं विनय से रहित हूँ। सुरुचि के कटु वचन रूपी बाणों से विदीर्ण मेरे हृदय में आपका उपदेश नहीं ठहर रहा है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

पदं त्रिभुवनोत्कृष्टं जिगीषोः साधु वर्त्म मे ।
ब्रूह्यस्मत्पितृभिर्ब्रह्मन्नन्यैरप्यनधिष्ठितम् ॥३७॥

पदच्छेद—

पदम् त्रिभुवन उत्कृष्टम् जिगीषोः साधु वर्त्म मे ।
ब्रूहि अस्मत् पितृभिः ब्रह्मन् अन्यैः अपि अनधिष्ठितम् ॥

शब्दार्थ—

पदम्	९.	(उस) धाम को	ब्रूहि	[illegible]	बतावें
त्रिभुवन	७.	तीनों लोकों में	अस्मत्	२.	हमारे
उत्कृष्टम्	८.	उत्तम	पितृभिः	३.	पिता-पितामह (तथा)
जिगीषोः	११.	जीतने की इच्छा है	ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्
साधु	१२.	अच्छी प्रकार से (उसका)	अन्यैः	४.	दूसरे लोग भी
वर्त्म	१३.	मार्ग	अपि	५.	भी (जिसे)
मे ।	१०.	मुझे	अनधिष्ठितम् ॥	६	नहीं प्राप्त कर सकते हैं

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! हमारे पिता-पितामह तथा दूसरे लोग भी जिसे नहीं प्राप्त कर सके हैं तीनों लोकों में उत्तम उस धाम को जीतने की मुझे इच्छा है । अच्छी-प्रकार से उसका मार्ग बतावें ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

नूनं भवान् भगवतो योऽङ्गजः परमेष्ठिनः ।
वितुदन्नटते वीणां हितार्थं जगतोऽर्कवत् ॥३८॥

पदच्छेद—

नूनम् भवान् भगवतः यः अङ्गजः परमेष्ठिनः ।
वितुदन् अटते वीणाम् हितार्थम् जगतः अर्कवत् ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	७.	ही	वितुदन्	११.	बजाये हुये
भवान्	२.	आप	अटते	१२.	घूमते रहते हैं
भगवतः	३.	भगवान्	वीणाम्	१०.	वीणा
यः	१.	क्योंकि	हितार्थम्	९.	कल्याण के लिये
अङ्गजः	५.	पुत्र हैं (अतः)	जगतः	८.	संसार के
परमेष्ठिनः ।	४.	ब्रह्मा जी के	अर्कवत् ॥	६.	सूर्य के समान

श्लोकार्थ—क्योंकि आप भगवान् ब्रह्मा जी के पुत्र हैं अतः सूर्य के समान ही संसार के कल्याण के लिये वीणा बजाते हुये घूमते रहते हैं ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— इत्युदाहृतमाकर्ण्य भगवान्नारदस्तदा ।
प्रीतः प्रत्याह तं बालं सद्वाक्यमनुकम्पया ॥३९॥

पदच्छेद—

इति उदाहृतम् आकर्ण्य भगवान् नारदः तदा ।
प्रीतः प्रत्याह तम् बालम् सद् वाक्यम् अनुकम्पया ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	प्रीतः	७.	प्रसन्न होते (हुये)
उदाहृतम्	२.	ध्रुव के वचन को	प्रत्याह	१२.	देने लगे
आकर्ण्य	३.	सुनकर	तम्	८.	उस
भगवान्	५.	देवर्षि	बालम्	९	बालक ध्रुव को
नारदः	६.	नारद	सद् वाक्यम्	११.	सद उपदेश
तदा ।	४	उस समय	अनुकम्पया ॥	१०.	कृपा करके

श्लोकार्थ—इस प्रकार ध्रुव के वचन को सुनकर उस समय देवर्षि नारद प्रसन्न होते हुये उस बालक ध्रुव को कृपा करके सद उपदेश देने लगे ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

नारद उवाच— जनन्याभिहितः पन्थाः स वै निःश्रेयसस्य ते ।
भगवान् वासुदेवस्तं भज तत्प्रवणात्मना ॥४०॥

पदच्छेद—

जनन्या अभिहितः पन्थाः सः वै निःश्रेयसस्य ते ।
भगवान् वासुदेवः तम् भज तत् प्रवण आत्मना ॥

शब्दार्थ—

जनन्या	१.	तुम्हारी माता ने	भगवान्	८.	भगवान्
अभिहितः	३.	बताया है	वासुदेवः	९.	वासुदेव ही उपाय हैं
पन्थाः	२.	(जो) मार्ग	तम्	१३.	उनका ही
सः	४.	वह	भज	१४.	भजन करो
वै	५.	ही	तत्	१०.	इसलिये
निःश्रेयसस्य	७.	श्रेयस्कर है	प्रवण	१२.	लगाकर
ते ।	६.	तुम्हारे लिये	आत्मना ॥	११.	चित्त

श्लोकार्थ—तुम्हारी माता ने जो मार्ग बताया है वही तुम्हारे लिये श्रेयस्कर है । भगवान् वासुदेव ही उपाय हैं; इसलिये चित्त लगाकर उनका ही भजन करें ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

धर्मार्थकाममोक्षाख्यं य इच्छेच्छ्रेय आत्मनः ।
एकमेव हरेस्तत्र कारणं पादसेवनम् ॥४१॥

धर्म अर्थ काम मोक्ष आख्यम् यः इच्छेत् श्रेयः आत्मनः ।
एकम् एव हरेः तत्र कारणम् पाद सेवनम् ॥

शब्दार्थ—

धर्म	३.	धर्म	आत्मनः ।	२.	अपने लिये
अर्थ	४.	अर्थ	एकम्	१५.	एक मात्र
काम	५.	काम (और)	एव	१४.	ही
मोक्ष	६.	मोक्ष	हरेः	११.	भगवान् श्री हरि के
आख्यम्	७.	नाम के	तत्र	१०.	उसके लिये
यः	१.	जो मनुष्य	कारणम्	१६.	उपाय है
इच्छेत्	९.	चाहता है	पाद	१२.	चरणों की
श्रेयः	८.	पुरुषार्थ को	सेवनम् ॥	१३.	सेवा

श्लोकार्थ—जो मनुष्य अपने लिये धर्म अर्थ, काम और मोक्ष नाम के पुरुषार्थ को चाहता है, उसके लिये भगवान् श्री हरि के चरणों की सेवा ही एक मात्र उपाय है।

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

तत्तात गच्छ भद्रं ते यमुनायास्तटं शुचि ।
पुण्यं मधुवनं यत्र सांनिध्यं नित्यदा हरेः ॥४२॥

पदच्छेद—

तत् तात गच्छ भद्रम् ते यमुनायाः तटम् शुचि ।
पुण्यम् मधुवनम् यत्र सांनिध्यम् नित्यदा हरेः ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	इसलिये	शुचि ।	६.	पवित्र
तात	२.	हे पुत्र	पुण्यम्	१०.	पुण्य प्रद
गच्छ	८.	जाओ	मधुवनम्	११.	मधुवन नाम का (वन है वहाँ)
भद्रम्	४.	कल्याण हो (तुम)	यत्र	९.	जहाँ
ते	३.	तुम्हारा	सांनिध्यम्	१४.	उपस्थित रहते हैं
यमुनायाः	५.	यमुना जी के	नित्यदा	१३.	सदा
तटम्	७.	तट पर	हरेः ॥	१२.	भगवान् श्री हरि

श्लोकार्थ—इसलिये हे पुत्र ! तुम्हारा कल्याण हो। यमुना जी के पवित्र तट पर जाओ, जहाँ पुण्यप्रद मधुवन नाम का वन है। वहाँ भगवान् श्री हरि सदा उपस्थित रहते हैं।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

स्नात्वानुसवनं तस्मिन् कालिन्द्याः सलिले शिवे ।
कृत्वोचितानि निवसन्नात्मनः कल्पितासनः ॥४३॥

पदच्छेद—

स्नात्वा अनुसवनम् तस्मिन् कालिन्द्याः सलिले शिवे ।
कृत्वा उचितानि निवसन् आत्मनः कल्पित आसनः ॥

शब्दार्थ—

स्नात्वा	६.	स्नान करके (तथा)	कृत्वा	९.	निवृत्त हो
अनुसवनम्	५.	तीनों काल	उचितानि	८.	नित्य क्रिया से
तस्मिन्	२.	उस	निवसन्	१२.	बैठे
कालिन्द्याः	१.	यमुना जी के	आत्मनः	७.	अपनी
सलिले	४.	जल में	कल्पित	११.	बिछाकर
शिवे ।	३.	पवित्र	आसनः ॥	१०.	आसन

श्लोकार्थ—यमुना जी के उस पवित्र जल में तीनों काल स्नान करके तथा अपनी नित्य क्रिया से निवृत्त हो आसन बिछाकर बैठे ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

प्राणायामेन त्रिवृता प्राणेन्द्रियमनोमलम् ।
शनैर्व्युदस्याभिध्यायेन्मनसा गुरुणा गुरुम् ॥४४॥

पदच्छेद—

प्राणायामेन त्रिवृता प्राण इन्द्रिय मनः मलम् ।
शनैः व्युदस्य अभिध्यायेत् मनसा गुरुणा गुरुम् ॥

शब्दार्थ—

प्राणायामेन	२.	प्राणायाम के द्वारा	**शनैः**	७.	धीरे-धीरे
त्रिवृता	१.	पूरक कुम्भक रेचक तीनों	**व्युदस्य**	८.	दूर करके
प्राण	३.	प्राण	**अभिध्यायेत्**	१२.	ध्यान करे
इन्द्रिय	४.	इन्द्रिय और	**मनसा**	१०.	मन से
मनः	५.	मन के	**गुरुणा**	९.	धैर्य युक्त
मलम् ।	६.	मल को	**गुरुम् ॥**	११.	परम् गुरु परमात्मा का

श्लोकार्थ—पूरक, कुम्भक, रेचक तीनों प्राणायाम के द्वारा प्राण इन्द्रिय और मन के मल को धीरे-धीरे दूर करके धैर्य युक्त मन से परम गुरु परमात्मा का ध्यान करे ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

प्रसादाभिमुखं शश्वत्प्रसन्नवदनेक्षणम् ।
सुनासं सुभ्रुवं चारुकपोलं सुरसुन्दरम् ॥४५॥

पदच्छेद—

प्रसाद अभिमुखम् शश्वत् प्रसन्न वदन ईक्षणम् ।
सुनासम् सुभ्रुवम् चारु कपोलम् सुर सुन्दरम् ॥

शब्दार्थ—

प्रसाद	१.	(भगवान् श्री हरि) भक्तों पर उनके कृपा करने में	सुनासम्	७.	(उनकी) सुन्दर नासिका
अभिमुखम्	२.	तत्पर रहते हैं	सुभ्रुवम्	८.	सुहावनी भौंहें (और)
शश्वत्	५.	निरन्तर	चारु	९.	मनोहर
प्रसन्न	६.	प्रसन्न रहता है	कपोलम्	१०.	गाल (हैं)
वदन	४.	मुख	सुर	११.	वे देवताओं में
ईक्षणम् ।	३.	नेत्र (और)	सुन्दरम् ॥	१२.	परम सुन्दर हैं

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि भक्तों पर कृपा करने में तत्पर रहते हैं उनका नेत्र और मुख निरन्तर प्रसन्न रहता है। उनकी सुन्दर नासिका, सुहावनी भौंहें और मनोहर गाल हैं। वे देवताओं में परम सुन्दर हैं ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

तरुणं रमणीयाङ्गमरुणोष्ठेक्षणाधरम् ।
प्रणताश्रयणं नृम्णं शरण्यं करुणार्णवम् ॥४६॥

पदच्छेद—

तरुणम् रमणीय अङ्गम् अरुण ,ओष्ठ ईक्षण अधरम् ।
प्रणत आश्रयणम् नृम्णम् शरण्यम् करुणा अवर्णम् ॥

शब्दार्थ—

तरुणम्	१.	भगवान् की युवा अवस्था है	प्रणत	७.	भक्तजनों के
रमणीय	३.	मनोहर हैं	आश्रयणम्	८.	आश्रय
अङ्गम्	२.	उनके सारे अङ्ग	नृम्णम्	९.	सुखदायी
अरुण	६.	लाल-लाल हैं (वे)	शरण्यम्	१०.	शरणागत ,रक्षक (और)
ओष्ठ	४.	होठ	करुणा	११.	दया के
ईक्षण अधरम् ।	५.	नेत्र (और) नीचे का होठ	अवर्णम् ॥	१२.	सागर हैं

श्लोकार्थ—भगवान् की युवा अवस्था है; उनके सारे अङ्ग मनोहर हैं; तथा होठ, नेत्र और नीचे का होठ लाल-लाल है; वे भक्त जनों के आश्रय, सुखदायी, शरणागत-रक्षक और दया के सागर हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीवत्साङ्कं घनश्यामं पुरुषं वनमालिनम् ।
शङ्खचक्रगदापद्मै रभिव्यक्तचतुर्भुजम् ॥४७॥

पदच्छेद—

श्रीवत्स अङ्कम् घन श्यामम् पुरुषम् वनमालिनम् ।
शङ्ख चक्र गदा पद्मैः अभिव्यक्त चतुर्भुजम् ॥

शब्दार्थ—

श्रीवत्स	१.	भगवान् के वक्षः स्थल पर श्रीवत्स का	शङ्ख	८.	शंख
अङ्कम्	२.	चिह्न है (वे)	चक्र	९.	चक्र
घन	३.	सजल मेघ के समान	गदा	१०.	गदा (और)
श्यामम्	४.	साँवले	पद्मैः	११.	पद्म
पुरुषम्	५.	परम पुरुष	अभिव्यक्त	१२.	सुशोभित है
वनमालिनम्	६.	वनमाला पहिरे हुये हैं	चतुर्भुजम् ॥	७.	उनके चारों हाथों में

श्लोकार्थ—भगवान् के वक्षः स्थल पर श्रीवत्स का चिह्न है; वे सजल मेघ के समान साँवले परम पुरुष वनमाला पहिरे हुये हैं । उनके चारों हाथों में शंख-चक्र गदा और पद्म सुशोभित हैं ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

किरीटिनं कुण्डलिनं केयूरवलयान्वितम् ।
कौस्तुभाभरणग्रीवं पीतकौशेयवाससम् ॥४८॥

पदच्छेद—

किरीटिनम् कुण्डलिनम् केयूर वलय अन्वितम् ।
कौस्तुभ आभरण ग्रीवम् पीत कौशेय वाससम् ॥

शब्दार्थ—

किरीटिनम्	१.	(वे भगवान्) मुकुट	कौस्तुभ	७.	कौस्तुभमणि का
कुण्डलिनम्	२.	कुण्डल (और)	आभरण	८.	आभूषण है (तथा)
केयूर	३.	बाजूवन्द	ग्रीवम्	६.	गले में
वलय	४.	कंङ्कण	पीत कौशेय	९.	पीले रंग का रेशमी
अन्वितम् ।	५.	पहने हैं (उनके)	वाससम् ॥	१०.	वस्त्र धारण किये हैं

श्लोकार्थ—वे भगवान् मुकुट, कुण्डल और बाजूवन्द, कंङ्कण पहने हैं उनके गले में कौस्तुभमणि का आभूषण है तथा पीले रंग का रेशमी वस्त्र धारण किये हैं ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

काञ्चीकलापपर्यस्तं लसत्काञ्चननूपुरम् ।
दर्शनीयतमं शान्तं मनोनयनवर्धनम् ॥४९॥

पदच्छेद—

काञ्ची कलाप पर्यस्तम् लसत् काञ्चन नूपुरम् ।
दर्शनीय तमम् शान्तम् मनः नयन वर्धनम् ॥

शब्दार्थ—

काञ्ची	१.	(भगवान् की कमर में) करधनी की	दर्शनीय	८.	सुन्दर
कलाप	२.	लड़ियाँ	तमम्	७.	(वे) परम
पर्यस्तम्	३.	लटकी हैं	शान्तम्	९.	शान्त (और)
लसत्	६.	सुशोभित है	मनः	१०.	मन (एवम्)
काञ्चन	४.	(उनके पैरों में) सुवर्ण के	नयन	११.	नेत्रों को
नूपुरम् ।	५.	पायजेब	वर्धनम् ॥	१२.	आनन्द देने वाले हैं

श्लोकार्थ—भगवान् के कमर में करधनी की लड़ियाँ लटकी हैं। उनके पैरों में सुवर्ण के पायजेब सुशोभित हैं। वे परम सुन्दर, शान्त और मन एवम् नेत्रों को आनन्द देने वाले हैं।

पञ्चाशः श्लोकः

पद्भ्यां नखमणिश्रेण्या विलसद्भ्यां समर्चताम् ।
हृत्पद्मकर्णिकाधिष्ण्यमाक्रम्यात्मन्यवस्थितम् ॥५०॥

पदच्छेद—

पद्भ्याम् नखमणि श्रेण्या विलसद्भ्याम् समर्चताम् ।
हृत् पद्म कर्णिका धिष्ण्यम् आक्रम्य आत्मनि अवस्थितम् ॥

शब्दार्थ—

पद्भ्याम्	१०.	दोनों पैरों की	पद्म	४.	कमल
नखमणि	७.	नखरूपी मणियों की	कर्णिका	५.	दल के
श्रेण्या	८.	कतार से	धिष्ण्यम्	६.	स्थान पर
विलसद्भ्याम्	९	मनोहर	आक्रम्य	११.	स्थापित करके
समर्चताम्	१.	अर्चना करने वालों के	आत्मनि	२.	अन्तः करण में
हृत्	३.	हृदय	अवस्थितम् ॥	१२.	विराजम न हैं

श्लोकार्थ—अर्चना करने वालों के अन्तः करण में हृदय कमल दल के स्थान पर नखरूपी मणियों की कतार से मनोहर दोनों पैरों को स्थापित करके विराजमान हैं ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

स्मयमानमभिध्यायेत्सानुरागावलोकनम् ।
नियतेनैकभूतेन मनसा वरदर्षभम् ॥५१॥

पदच्छेद—

स्मयमानम् अभिध्यायेत् सानुराग अवलोकनम् ।
नियतेन एक भूतेन मनसा वरद ऋषभम् ॥

शब्दार्थ—

स्मयमानम्	३.	मुस्कराते हुये	एक	७.	एकाग्र
अभिध्यायेत्	१०.	ध्यान करना चाहिये	भूतेन	८.	हुये
सानुराग	१.	अनुराग भरी	मनसा	९.	मन से
अवलोकनम् ।	२.	चितवन से	वरद	४.	वर देने वालों में
नियतेन	६.	स्थिर (एवम्)	ऋषभम् ॥	५.	प्रधान श्री हरि का

श्लोकार्थ—अनुराग भरी चितवन से मुस्कराते हुये वर देने वालों में प्रधान श्री हरि का स्थिर एवम् एकाग्र हुये मन से ध्यान करना चाहिये ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

एवं भगवतो रूपं सुभद्रं ध्यायतो मनः ।
निर्वृत्या परया तूर्णं सम्पन्नं न निवर्तते ॥५२॥

पदच्छेद—

एवम् भगवतः रूपम् सुभद्रम् ध्यायतः मनः ।
निर्वृत्या परया तूर्णम् सम्पन्नम् न निवर्तते ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	निर्वृत्या	८.	आनन्द में
भगवतः	२.	भगवान् श्री हरि के	परया	७.	परम
रूपम्	४.	स्वरूप का	तूर्णम्	१०.	शीघ्र
सुभद्रम्	३.	मंगलमय	सम्पन्नम्	९.	मग्न हुआ (वहाँ से)
ध्यायतः	५.	ध्यान करते-करते	न	११.	नहीं
मनः ।	६.	मन	निवर्तते ॥	१२.	लौटता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार भगवान् श्री हरि के मंगलमय स्वरूप का ध्यान करते-करते मन परम आनन्द में मग्न हुआ वहाँ से शीघ्र नहीं लौटता है ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

जप्यश्च परमो गुह्यः श्रूयतां मे नृपात्मज ।
यं सप्तरात्रं प्रपठन् पुमान् पश्यति खेचरान् ॥५३॥

पदच्छेद — जप्यः च परमः गुह्यः श्रूयताम् मे नृप आत्मजः ।
यम् सप्तरात्रम् प्रपठन् पुमान् पश्यति खेचरान् ॥

शब्दार्थ—

जप्यः	४.	जप करना चाहिये (जिसे)	यम्	७.	जिस (मन्त्र का)
च	१.	तथा	सप्तरात्रम्	८.	सात रात तक
परमः गुह्यः	३.	अत्यन्त गोपनीयमन्त्र	प्रपठन्	९.	जप करने पर
श्रूयताम्	६.	सुनो	पुमान्	१०.	मनुष्य
मे	५	मुझसे	पश्यति	१२.	देख सकता है
नृप आत्मजः ।	२.	हे राजकुमार	खेचरान् ॥	११.	गगनचारी सिद्धों को

श्लोकार्थ—तथा हे राजकुमार ! अत्यन्त गोपनीय मन्त्र जपना चाहिये, जिसे मुझसे सुनो । जिस मन्त्र का सात रात तक जप करने पर मनुष्य गगनचारी सिद्धों को देख सकता है ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

"ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।"

मन्त्रेणानेन देवस्य कुर्याद् द्रव्यमयीं बुधः ।
सपर्यां विविधैर्द्रव्यैर्देशकालविभागवित् ॥५४॥

"ॐ नमः भगवते वासुदेवाय ।"

पदच्छेद— मन्त्रेण अनेन देवस्य कुर्यात् द्रव्यमयीम् बुधः ।
सपर्याम् विविधैः द्रव्यैः देशकाल विभाग वित् ॥

शब्दार्थ—

ॐ	१.	ॐकार स्वरूप	द्रव्यमयीम्	१४.	द्रव्यमयी
नमः	४.	नमस्कार है	बुधः ।	१०.	विद्वान् मनुष्य को
भगवते	२.	भगवान्	सपर्याम्	१५.	पूजा
वासुदेवाय	३.	वासुदेव को	विविधैः	११.	अनेक प्रकार की
मन्त्रेण	६.	मन्त्र से	द्रव्यैः	१२.	सामग्रियों के द्वारा
अनेन	५.	इस	देशकाल	७.	स्थान और समय के
देवस्य	१३.	भगवान् श्री हरि की	विभाग	८.	विभाग के
कुर्यात्	१६.	करनी चाहिये	वित् ॥	९.	जानकार

श्लोकार्थ—ॐकार स्वरूप भगवान् वासुदेव को नमस्कार है; "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय" इस मन्त्र से स्थान और समय के विभाग के जानकार विद्वान् मनुष्य को अनेक प्रकार को सामग्रियों के द्वारा भगवान् श्री हरि की द्रव्य मयी पूजा करनी चाहिये ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

सलिलैः शुचिभिर्माल्यैर्वन्यैर्मूलफलादिभिः ।
शस्ताङ्कुरांशुकैश्चार्चेत्तुलस्या प्रियया प्रभुम् ॥५५॥

पदच्छेद— सलिलैः शुचिभिः माल्यैः वन्यैः मूल फल आदिभिः ॥
शस्त अङ्कुर अंशुकैः च अर्चेत् तुलस्या प्रियया प्रभुम् ॥

शब्दार्थ—

सलिलैः	२.	जल	शस्त अङ्कुर	८.	कोमल दूर्वादल
शुचिभिः	१.	पवित्र	अंशुकैः	९.	वृक्षों की छाल
माल्यैः	३.	माला	च	१०.	और
वन्यैः	४.	वन के	अर्चेत्	१४.	पूजा करनी चाहिये
मूल	५.	मूल	तुलस्या	१२.	तुलसी से
फल	६.	फल	प्रियया	११.	प्रिय
आदिभिः ।	७.	इत्यादि	प्रभुम् ॥	१३.	भगवान् श्री हरि की

श्लोकार्थ—पवित्र जल, माला वन के मूल, फल इत्यादि कोमल दूर्वादल वृक्षों की छाल और प्रिय तुलसी से भगवान् श्री हरि की पूजा करनी चाहिये ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

लब्ध्वा द्रव्यमयीमर्चां क्षित्यम्ब्वादिषु वार्चयेत् ।
आभृतात्मा मुनिः शान्तो यतवाङ्मितवन्यभुक् ॥५६॥

पदच्छेद— लब्ध्वा द्रव्यमयीम् अर्चाम् क्षिति अम्बु आदिषु वा अर्चयेत् ।
आभृत आत्मा मुनिः शान्तः यत् वाक् मित वन्य भुक् ॥

शब्दार्थ—

लब्ध्वा	३.	करके	आभृत आत्मा	९.	आनन्द मग्न होकर
द्रव्यमयीम्	१.	सामग्रियों से	मुनिः	१०.	मनन करता हुआ
अर्चाम्	२.	भगवान् की पूजा	शान्तः	११.	शान्त चित्त (मनुष्य)
क्षिति	४.	पृथ्वी	यत्	१३.	संयम करे (और)
अम्बु	५.	जल	वाक्	१२.	वाणी का
आदिषु	६.	इत्यादि पञ्च महाभूतों में	मित	१५.	थोड़ा
वा	८.	तदनन्तर	वन्य	१४.	वन के कन्द-मूल का
अर्चयेत् ।	७.	अर्चना करनी चाहिये	भुक् ॥	१६.	आहार करे

श्लोकार्थ—सामग्रियों से भगवान् श्री हरि की पूजा करके पृथ्वी, जल इत्यादि पञ्चमहाभूतों में अर्चना करनी चाहिये । तदनन्तर आनन्द मग्न होकर मनन करता हुआ शान्त चित्त मनुष्य वाणी का संयम करे और वन के कन्द-मूल का थोड़ा आहार करे ।

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

स्वेच्छावतारचरितैरचिन्त्यनिजमायया ।
करिष्यत्युत्तमश्लोकस्तद् ध्यायेद्धृदयङ्गमम् ॥५७॥

पदच्छेद—

स्वेच्छा अवतार चरितैः अचिन्त्य निज मायया ।
करिष्यति उत्तम श्लोकः तद् ध्यायेत् हृदयङ्गमम् ॥

शब्दार्थ—

स्वेच्छा	६.	इच्छानुसार	करिष्यति	९.	करेंगे
अवतार	७.	अवतार की (जो)	उत्तम	१.	पवित्र
चरितैः	८.	लीलायें	श्लोकः	२.	कीर्ति (भगवान् श्री हरि)
अचिन्त्य	४.	अनिर्वचनीय	तद्	१०.	उनका
निज	३.	अपनी	ध्यायेत्	१२	ध्यान करना चाहिये
मायया ।	५.	माया के द्वारा	हृदयङ्गमम् ॥	११.	हृदय में

श्लोकार्थ—पवित्र कीर्ति भगवान् श्री हरि अपनी अनिर्वचनीय माया के द्वारा इच्छानुसार अवतार की जो लीलायें करेंगे उनका हृदय में ध्यान करना चाहिये ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

परिचर्या भगवतो यावत्यः पूर्वसेविताः ।
ता मन्त्रहृदयेनैव प्रयुञ्ज्यान्मन्त्रमूर्तये ॥५८॥

पदच्छेद—

परिचर्या भगवतः यावत्यः पूर्व सेविताः ।
ताः मन्त्र हृदयेन एव प्रयुञ्ज्यात् मन्त्र मूर्तये ॥

शब्दार्थ—

परिचर्या	३.	पूजाओं का	मन्त्र	१०.	सावधान
भगवतः	१.	भगवान् श्री हरि की	हृदयेन	११.	मन से
यावत्यः	२.	जिन-जिन	एव	९.	ही
पूर्व	४.	पहले से	प्रयुञ्ज्यात्	१२.	प्रयोग करना चाहिये
सेविताः ।	५.	विधान किया गया है	मन्त्र	७.	मन्त्र
ताः	६.	उनका	मूर्तये ॥	८.	रूप (भगवान् श्री हरि के लिये)

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि की जिन-जिन पूजाओं का पहले से विधान किया गया है उनका मन्त्र रूप भगवान् श्री हरि के लिये ही सावधान मन से प्रयोग करना चाहिये ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

एवं कायेन मनसा वचसा च मनोगतम् ।
परिचर्यमाणो भगवान् भक्तिमत्परिचर्यया ॥५९॥

पदच्छेद—

एवम् कायेन मनसा वचसा च मनोगतम् ।
परिचर्यमाणः भगवान् भक्तिमत् परिचर्यया ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	मनोगतम् ।	६.	हृदय में स्थित
कायेन	५.	शरीर से	परिचर्यमाणः	१०.	सेवा करनी चाहिये
मनसा	२.	मन	भगवान्	७.	भगवान् श्री हरि की
वचसा	३.	वाणी	भक्तिमत्	८.	भक्ति से युक्त
च	४.	और	परिचर्यया ॥	९.	पूजा के द्वारा

श्लोकार्थ—इस प्रकार मन, वाणी और शरीर से हृदय में स्थित भगवान् श्री हरि की भक्ति से युक्त पूजा के द्वारा सेवा करनी चाहिये ॥

षष्टितमः श्लोकः

पुंसाममायिनां सम्यग्भजतां भाववर्धनः ।
श्रेयो दिशत्यभिमतं यद्धर्मादिषु देहिनाम् ॥६०॥

पदच्छेद—

पुंसाम् अमायिनाम् सम्यग् भजताम् भाव वर्धनः ।
श्रेयः दिशति अभिमतम् यद् धर्म आदिषु देहिनाम् ॥

शब्दार्थ—

पुंसाम्	४.	मनुष्यों के	श्रेयः दिशति	१२.	कल्याणकारी वस्तु देते हैं
अमायिनाम्	३.	निष्कपट	अभिमतम्	११.	इच्छित है (वह)
सम्यग्	१.	(भगवान् श्री हरि) भली-भांति	यद्	१०.	जो
भजताम्	२.	भजन करने वाले	धर्म	८	धर्म
भाव	५.	भक्ति भाव को	आदिषु	९.	अर्थ, काम और मोक्ष में
वर्धनः ।	६.	बढ़ाते हैं (तथा)	देहिनाम् ॥	७.	प्राणियों को

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि भली-भांति भजन करने वाले निष्कपट मनुष्यों के भक्ति-भाव को बढ़ाते हैं तथा प्राणियों को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में जो इच्छित है वह कल्याणकारी वस्तु देते हैं ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

विरक्तश्चेन्द्रियरतौ भक्तियोगेन भूयसा ।
तं निरन्तरभावेन भजेताद्धा विमुक्तये ॥६१॥

पदच्छेद—

विरक्तः च इन्द्रिय रतौ भक्ति योगेन भूयसा ।
तम् निरन्तर भावेन भजेत अद्धा विमुक्तये ॥

शब्दार्थ—

विरक्तः	४.	वैराग्य हो गया है (तो)	तम्	९.	उन भगवान् श्री हरि का
च इन्द्रिय	२.	यदि इन्द्रियों के	निरन्तर	१०.	धारा प्रवाह
रतौ	३.	विषयों से	भावेन	११.	रूप से
भक्ति	६.	भक्ति	भजेत	१२.	भजन करना चाहिये
योगेन	७.	योग के द्वारा	अद्धा	१.	वस्तुतः
भूयसा ।	५.	प्रबल	विमुक्तये ॥	८.	मोक्ष की प्राप्ति के लिये

श्लोकार्थ—वस्तुतः यदि इन्द्रियों के विषयों से वैराग्य हो गया है तो प्रबल भक्ति योग के द्वारा मोक्ष की प्राप्ति के लिये उन भगवान् श्री हरि का धारा प्रवाह रूप से भजन करना चाहिये ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

इत्युक्तस्तं परिक्रम्य प्रणम्य च नृपार्भकः ।
ययौ मधुवनं पुण्यं हरेश्चरणचर्चितम् ॥६२॥

पदच्छेद—

इति उक्तः तम् परिक्रम्य प्रणम्य च नृप अर्भकः ।
ययौ मधुवनम् पुण्यम् हरेः चरण चर्चितम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	नारद जी के ऐसा	ययौ	१२.	चले गये
उक्तः तम्	२.	कहने पर उनकी	मधुवनम्	११.	मधुवन में
परिक्रम्य	३.	परिक्रमा करके	पुण्यम्	१०.	पवित्र
प्रणम्य	५.	प्रणाम करके	हरेः	७.	भगवान् श्री हरि के
च	४.	और	चरण	८.	चरणों से
नृप अर्भकः ।	६.	राजकुमार ध्रुव	चर्चितम् ॥	९.	अंकित

श्लोकार्थ—नारद जी के ऐसा कहने पर उनकी परिक्रमा करके और प्रणाम करके राजकुमार ध्रुव भगवान् श्री हरि के चरणों से अंकित पवित्र मधुवन में चले गये ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

तपोवनं गते तस्मिन्प्रविष्टोऽन्तःपुरं मुनिः ।
अर्हितार्हणको राज्ञा सुखासीन उवाच तम् ॥६३॥

पदच्छेद—

तपोवनम् गते तस्मिन् प्रविष्टः अन्तः पुरम् मुनिः ।
अर्हित अर्हणकः राज्ञा सुख आसीनः उवाच तम् ॥

शब्दार्थ—

तपोवनम्	२.	तपोवन में	अर्हित	९.	पूजा प्राप्त करके (तथा)
गते	३.	चले जाने पर	अर्हणकः	८.	पूजन सामग्रियों से
तस्मिन्	१.	उन ध्रुव जी के	राज्ञा	७.	राजा के द्वारा
प्रविष्टः	६.	प्रवेश किया	सुख आसीनः	१०.	सुख पूर्वक आसन पर बैठकर
अन्तः पुरम्	५.	राजा उत्तानपाद के महल में	उवाच	१२.	कहा
मुनिः ।	४.	देवर्षि नारद ने	तम् ॥	११.	(उन्होंने) उनसे

श्लोकार्थ—उन ध्रुव जी के तपोवन में चले जाने पर देवर्षि नारद ने राजा उत्तानपाद के महल में प्रवेश किया । राजा के द्वारा पूजन सामग्रियों से पूजा प्राप्त करके तथा सुख पूर्वक आसन पर बैठकर उन्होंने उनसे कहा ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

नारद उवाच—राजन् किं ध्यायसे दीर्घं मुखेन परिशुष्यता ।
किं वा न रिष्यते कामो धर्मो वार्थेन संयुतः ॥६४॥

शब्दार्थ—

राजन् किम् ध्यायसे दीर्घम् मुखेन परिशुष्यता ।
किम् वा न रिष्यते कामः धर्मः वा अर्थेन संयुतः ॥

शब्दार्थ—

राजन्	१.	हे राजन्	किम् वा	७.	क्या
किम्	५.	क्या	न रिष्यते	१२.	नहीं कम हो रहा है
ध्यायसे	६.	ध्यान कर रहे हो	कामः	११.	काम तो
दीर्घम्	४.	बहुत लम्बे समय से	धर्मः वा	१०.	धर्म अथवा
मुखेन	२.	तुम्हारा मुख	अर्थेन	८.	अर्थ के
परिशुष्यता ।	३.	सूख रहा है (तुम)	संयुतः	९.	साथ-साथ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तुम्हारा मुख सूख रहा है । तुम बहुत लम्बे समय से क्या ध्यान कर रहे हो । क्या अर्थ के साथ-साथ धर्म अथवा काम तो नहीं कम हो रहा है ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

राजोवाच— सुतो मे बालको ब्रह्मन् स्त्रैणेनाकरुणात्मना ।
निर्वासितः पञ्चवर्षः सह मात्रा महान्कविः ॥६५॥

पदच्छेद—

सुतः मे बालकः ब्रह्मन् स्त्रैणेन अकरुण आत्मना ।
निर्वासितः पञ्चवर्षः सह मात्रा महान् कविः ॥

शब्दार्थ—

सुतः	८.	पुत्र ध्रुव को (उसकी)	निर्वासितः	११.	घर से निकाल दिया है
मे	७.	अपने	पञ्चवर्षः	५.	पाँच वर्ष के
बालकः	६.	बालक	सह	१०.	साथ
ब्रह्मन्	१	हे ब्रह्मन् (मैं)	मात्रा	९.	माँ के
स्त्रैणेन	२.	स्त्री का गुलाम (और)	महान्	१२.	वह बहुत ज्यादा
अकरुण	३.	कठोर	कविः ॥	१३.	चतुर था
आत्मना ।	४.	स्वभाव वाला हूँ (मैंने)			

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! मैं स्त्री का गुलाम और कठोर स्वभाव वाला हूँ । मैंने पाँच वर्ष के बालक अपने पुत्र ध्रुव को उसकी माँ के साथ घर से निकाल दिया है । वह बहुत ज्यादा चतुर था ॥

षट्षष्टितमः श्लोकः

अप्यनाथं वने ब्रह्मन्मास्मादन्त्यर्भकं वृकाः ।
श्रान्तं शयानं क्षुधितं परिम्लानमुखाम्बुजम् ॥६६॥

पदच्छेद—

अपि अनाथम् वने ब्रह्मन् मास्म अदन्ति अर्भकम् वृकाः ।
श्रान्तम् शयानम् क्षुधितम् परिम्लान मुख अम्बुजम् ॥

शब्दार्थ—

अपि	७.	तथा	वृकाः ।	१०.	भेड़िये
अनाथम्	८.	दीन-हीन (उस)	श्रान्तम्	३.	थक कर
वने	२.	जंगल में	शयानम्	४.	सोये हुये
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्	क्षुधितम्	५.	भूखे
मास्म	११.	नहीं	परिम्लान	६.	मुरझाये हुये
अदन्ति	१२.	खा जावें	मुख	७.	मुख
अर्भकम्	९.	बालक को (कहीं)	अम्बुजम् ॥	८.	कमल वाले

श्लोकार्थ— हे ब्रह्मन् ! जंगल में थक कर सोये हुये भूखे मुरझाये हुये मुख कमल वाले बालक को कहीं भेड़िये नहीं खा जावें ॥

सप्तषष्टितमः श्लोकः

अहो मे बत दौरात्म्यं स्त्रीजितस्योपधारय ।
योऽङ्कं प्रेम्णाऽऽरुरुक्षन्तं नाभ्यनन्दमसत्तमः ॥६७॥

पदच्छेद—

अहो मे बत दौरात्म्यम् स्त्री जितस्य उपधारय ।
यः अङ्कम् प्रेम्णा आरुरुक्षन्तम् न अभ्यनन्दम् असत्तमः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१. अहो		यः	९. जिस मैंने
मे	४. मेरी		अङ्कम्	११. गोद में
बत	६. तो		प्रेम्णा	१०. प्रेम से
दौरात्म्यम्	५. दुष्टता को		आरुरुक्षन्तम्	१२. बैठने की इच्छा वाले
स्त्री	२. स्त्री का		न	१३. नहीं
जितस्य	३. दास		अभ्यनन्दम्	१४. बालक ध्रुव का स्वागत किया
उपधारय ।	७. देखो		असत्तमः ॥	८. दुष्ट स्वभाव वाले

श्लोकार्थ—अहो ! स्त्री के दास मेरी दुष्टता को तो देखो, दुष्टस्वभाव वाले जिस मैंने प्रेम से गोद में बैठने की इच्छा वाले बालक ध्रुव का स्वागत नहीं किया ॥

अष्टषष्टितमः श्लोकः

नारद उवाच—मा मा शुचः स्वतनयं देवगुप्तं विशाम्पते ।
तत्प्रभावमविज्ञाय प्रावृङ्क्ते यद्यशो जगत् ॥६८॥

पदच्छेद—

मा मा शुचः स्व तनयम् देव गुप्तम् विशाम्पते ।
तत् प्रभावम् अविज्ञाय प्रावृङ्क्ते यद् यशः जगत् ॥

शब्दार्थ—

मा मा	४. मत		तत्	८. उसके
शुचः	५. शोक करें		प्रभावम्	९. प्रभाव को
स्व	२. अपने		अविज्ञाय	१०. नहीं जानते हैं
तनयम्	३. पुत्र के विषय में		प्रावृङ्क्ते	१४. फैल रहा है
देव	६. भगवान् (उसका)		यद्	११. जिसका
गुप्तम्	७. रक्षक है (आप)		यशः	१२. यश
विशाम्पते ।	१. हे राजन् आप		जगत् ॥	१३. संसार में

श्लोकार्थ—हे राजन् ! आप अपने पुत्र के विषय में मत शोक करें । भगवान् उसका रक्षक है । आप उसके प्रभाव को नहीं जानते हैं; जिसका यश संसार में फैल रहा है ।

एकोनसप्ततितमः श्लोकः

सुदुष्करं कर्म कृत्वा लोकपालैरपि प्रभुः ।
एष्यत्यचिरतो राजन् यशो विपुलयंस्तव ॥६९॥

पदच्छेद—

सुदुष्करम् कर्म कृत्वा लोक पालैः अपि प्रभुः ।
एष्यति अचिरतः राजन् यशः विपुलयन् तव ॥

शब्दार्थ—

सुदुष्करम्	४.	नहीं करने योग्य	एष्यति	९.	आयेगा (और)
कर्म	५.	कार्य को	अचिरतः	८.	शीघ्र ही
कृत्वा	६.	करके (वह)	राजन्	१.	हे राजन्
लोक पालैः	२.	लोक पालों के द्वारा	यशः	११.	कीर्ति को
अपि	३.	भी	विपुलयन्	१२.	फैलायेगा
प्रभुः ।	७.	समर्थ बालक	तव ॥	१०.	तुम्हारी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! लोकपालों के द्वारा भी नहीं करने योग्य कार्य को करके वह समर्थ बालक शीघ्र ही आयेगा और तुम्हारी कीर्ति को फैलायेगा ॥

सप्ततितमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति देवर्षिणा प्रोक्तं विश्रुत्य जगतीपतिः ।
राजलक्ष्मीमनादृत्य पुत्रमेवान्वचिन्तयत् ॥७०॥

पदच्छेद—

इति देवर्षिणा प्रोक्तम् विश्रुत्य जगतीपतिः ।
राजलक्ष्मीम् अनादृत्य पुत्रम् एव अन्वचिन्तयत् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	राजलक्ष्मीम्	६.	राज्य शासन से
देवर्षिणा	२.	देवर्षिनारद के	अनादृत्य	७.	उदासीन होकर
प्रोक्तम्	३.	कथन को	पुत्रम्	८.	पुत्र की
विश्रुत्य	४.	सुनकर	एव	९.	ही
जगतीपतिः ।	५.	राजा उत्तानपाद	अन्वचिन्तयत् ॥	१०.	चिन्ता करने लगे

श्लोकार्थ—इस प्रकार देवर्षि नारद के कथन को सुनकर राजा उत्तानपाद राज्यशासन से उदासीन होकर पुत्र की ही चिन्ता करने लगे ॥

एकसप्ततितमः श्लोकः

तत्राभिषिक्तः प्रयतस्तामुपोष्य विभावरीम् ।
समाहितः पर्यचरदृष्यादेशेन पूरुषम् ॥७१॥

पदच्छेद—

तत्र अभिषिक्तः प्रयतः ताम् उपोष्य विभावरीम् ।
समाहितः पर्यचरत् ऋषि आदेशेन पूरुषम् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१. उधर यमुना जी में		समाहितः	६. सावधान मन से
अभिषिक्तः	२. स्नान करके (ध्रुव जी ने)		पर्यचरत्	११. पूजा की
प्रयतः	५. तत्पर होकर		ऋषि	७. देवर्षि नारद के
ताम्	३. उस		आदेशेन	८. आदेशानुसार
उपोष्य	६. उपवास किया (और)		पूरुषम् ॥	१०. भगवान् श्री हरि की
विभावरीम् ।	४. रात में			

श्लोकार्थ—उधर यमुना जी में स्नान करके ध्रुव जी ने उस रात में उपवास किया और देवर्षिनारद के आदेशानुसार सावधान मन से भगवान् श्री हरि की पूजा की ॥

द्विसप्ततितमः श्लोकः

त्रिरात्रान्ते त्रिरात्रान्ते कपित्थबदराशनः ।
आत्मवृत्त्यनुसारेण मासं निन्येऽर्चयन्हरिम् ॥७२॥

पदच्छेद—

त्रिरात्रान्ते त्रिरात्रान्ते कपित्थ बदर अशनः ।
आत्मवृत्ति अनुसारेण मासम् निन्ये अर्चयन् हरिम् ॥

शब्दार्थ—

त्रिरात्रान्ते	३. तीन-तीन रात के		आत्मवृत्ति	१. उन्होंने शरीर धर्म के
त्रिरात्रान्ते	४. अन्तर से		अनुसारेण	२. निर्वाह के लिये
कपित्थ	५. कैथ (और)		मासम् निन्ये	१०. पहला महीना बिताया
बदर	६ बेर का		अर्चयन्	६. पूजा करते हुये
अशनः ।	७. आहार करके		हरिम् ॥	८. भगवान् श्री हरि की

श्लोकार्थ—उन्होंने शरीर-धर्म के निर्वाह के लिये तीन-तीन रात के अन्तर से कैथ और बेर का आहार करके भगवान् श्री हरि की पूजा करते हुये पहला महीना बिताया ॥

त्रिसप्ततितमः श्लोकः

द्वितीयं च तथा मासं षष्ठे षष्ठेऽर्भको दिने ।
तृणपर्णादिभिः शीर्णैः कृतान्नोऽभ्यर्चयद्विभुम् ।।७३।।

पदच्छेद—

द्वितीयम् च तथा मासम् षष्ठे-षष्ठे अर्भकः दिने ।
तृण पर्ण आदिभिः शीर्णैः कृत अन्नः अभ्यर्चयत् विभुम् ।।

शब्दार्थ—

द्वितीयम्	२	दूसरे	तृण	८.	घास
च	९.	और	पर्ण आदिभिः	१०.	पत्ते इत्यादि से
तथा	१.	तथा	शीर्णैः	७.	सूखे हुये
मासम्	३.	महोने में	कृत	१२.	करके
षष्ठे-षष्ठे	५.	छः-छः	अन्न	११.	आहार
अर्भकः	४.	बालक ध्रुव ने	अभ्यर्चयत्	१४.	पूजा की
दिने ।	६.	दिन के बाद	विभुम् ।।	१३.	भगवान् श्री हरि की

श्लोकार्थ—तथा दूसरे महीने में बालक ध्रुव ने छः-छः दिन के बाद सूखे हुये घास और पत्ते इत्यादि से आहार करके भगवान् श्री हरि की पूजा की ।।

चतुःसप्ततितमः श्लोकः

तृतीयं चानयन्मासं नवमे नवमेऽहनि ।
अब्भक्ष उत्तमश्लोकमुपाधावत्समाधिना ।।७४।।

पदच्छेद—

तृतीयम् च अनयत् मासम् नवमे-नवमे अहनि ।
अप् भक्षः उत्तम श्लोकम् उपाधावत् समाधिना ।।

शब्दार्थ—

तृतीयम्	२.	तीसरा	अप्	६.	जल
च	१.	तथा (उन्होंने)	भक्षः	७.	पीकर
अनयत्	१२.	बिताया	उत्तम	९.	पवित्र
मासम्	३.	महीना	श्लोकम्	१०.	कीर्ति भगवान् की
नवमे-नवमे	४.	नौ-नौ	उपाधावत्	११.	पूजा करते हुये
अहनि ।	५.	दिन के अन्तर से	समाधिना ।।	८.	समाधि योग के द्वारा

श्लोकार्थ—तथा उन्होंने तीसरा महीना नौ-नौ दिन के अन्तर से जल पीकर समाधियोग के द्वारा पवित्र कीर्ति भगवान् की पूजा करते हुये बिताया ।

पञ्चसप्ततितमः श्लोकः

चतुर्थमपि वै मासं द्वादशे द्वादशेऽहनि ।
वायुभक्षो जितश्वासो ध्यायन्देवमधारयत् ॥७५॥

पदच्छेद—

चतुर्थम् अपि वै मासम् द्वादशे-द्वादशे अहनि ।
वायु भक्षः जित श्वासः ध्यायन् देवम् आधारयत् ॥

शब्दार्थ—

चतुर्थम्	२.	चौथे	वायु	७.	वायु
अपि	१.	तथा उन्होंने	भक्षः	८.	पीकर (तथा)
वै	६.	केवल	जित श्वासः	९.	श्वासको रोककर
मासम्	३.	महीने में	ध्यायन्	१०.	ध्यान योग के द्वारा
द्वादशे-द्वादशे	४.	बारह-बारह	देवम्	११.	भगवान् श्री हरि की
अहनि ।	५.	दिनों के बाद	आधारयत् ॥	१२.	आराधना की

श्लोकार्थ—तथा उन्होंने चौथे महीने में बारह-बारह दिनों के बाद केवल वायु पीकर तथा श्वासको रोककर ध्यानयोग के द्वारा भगवान् श्री हरि की आराधना की ॥

षट्सप्ततितमः श्लोकः

पञ्चमे मास्यनुप्राप्ते जितश्वासो नृपात्मजः ।
ध्यायन् ब्रह्म पदैकेन तस्थौ स्थाणुरिवाचलः ॥७६॥

पदच्छेद—

पञ्चमे मासि अनुप्राप्ते जित श्वासः नृप आत्मजः ।
ध्यायन् ब्रह्म पदा एकेन तस्थौ स्थाणुः इव अचलः ॥

शब्दार्थ—

पञ्चमे	१.	पाँचवां	ब्रह्म	७.	पर ब्रह्म का
मासि	२.	महीना	पदा	१०.	पैर से
अनुप्राप्ते	३.	आ जाने पर	एकेन	९.	एक
जित	६.	रोक कर	तस्थौ	१४.	खड़े हो गये
श्वासः	५.	श्वास को	स्थाणुः	११.	खम्भे के
नृप आत्मजः ।	४.	राजकुमार ध्रुव	इव	१२.	समान
ध्यायन्	८.	ध्यान करते हुये	अचलः ॥	१३.	निश्चल भाव से

श्लोकार्थ—पाँचवां महीना आ जाने पर राजकुमार ध्रुव श्वास को रोककर परब्रह्म का ध्यान करते हुये एक पैर से खम्भे के समान निश्चल भाव से खड़े हो गये ॥

सप्तसप्ततितमः श्लोकः

सर्वतो मन आकृष्य हृदि भूतेन्द्रियाशयम् ।
ध्यायन्भगवतो रूपं नाद्राक्षीत्किंचनापरम् ॥७७॥

पदच्छेद—

सर्वतः मन आकृष्य हृदि भूत इन्द्रिय आशयम् ।
ध्यायन् भगवतः रूपम् न अद्राक्षीत् किञ्चन अपरम् ॥

शब्दार्थ—

सर्वतः	५.	चारों ओर से	ध्यायन्	१०.	ध्यान करने लगे
मनः	४.	मन को	भगवतः	८.	भगवान् श्री हरि के
आकृष्य	६.	खींच कर	रूपम्	९.	स्वरूप का
हृदि	७.	हृदय में	न	१३.	नहीं
भूत	१.	(वे) शब्दादि विषय (और)	अद्राक्षीत्	१४.	ज्ञान रहा
इन्द्रिय	२.	इन्द्रियों को	किञ्चन	११.	उस समय उन्हें किसी
आशयम् ।	३.	नियन्त्रित करने वाले	अपरम् ॥	१२.	दूसरी वस्तु का

श्लोकार्थ—वे शब्दादि विषय और इन्द्रियों को नियन्त्रित करने वाले मन को चारो ओर से खींचकर हृदय में भगवान् श्री हरि के स्वरूप का ध्यान करने लगे । उस समय उन्हें किसी दूसरी वस्तु का ज्ञान नहीं रहा ॥

अष्टसप्ततितमः श्लोकः

आधारं महदादीनां प्रधानपुरुषेश्वरम् ।
ब्रह्म धारयमाणस्य त्रयो लोकाश्चकम्पिरे ॥७८॥

पदच्छेद—

आधारम् महद् आदीनाम् प्रधान पुरुष ईश्वरम् ।
ब्रह्म धारयमाणस्य त्रयः लोकाः चकम्पिरे ॥

शब्दार्थ—

आधारम्	३.	आधार (तथा)	ब्रह्म	७.	पर ब्रह्म की
महद्	१.	वे जब महदादि	धारयमाणस्य	८.	धारणा करने लगे
आदीनाम्	२.	सभी तत्त्वों के	त्रयः	९.	(तब) तीनों
प्रधान	४.	प्रकृति और	लोकाः	१०.	लोक
पुरुष	५	पुरुष के	चकम्पिरे ॥	११.	कांप गये
ईश्वरम् ।	६.	स्वामी			

श्लोकार्थ—वे जब महदादि सभी तत्त्वों के आधार तथा प्रकृति और पुरुष के स्वामी पर ब्रह्म की धारणा करने लगे तब तीनों लोक कांप गये ॥

एकोनाशीतितमः श्लोकः

यदैकपादेन स पार्थिवार्भकस्तस्थौ तदङ्गुष्ठनिपीडिता मही।
ननाम तत्रार्धमिभेन्द्रधिष्ठिता तरीव सव्येतरतः पदे पदे ॥७९॥

पदच्छेद— यदा एक पादेन सः पार्थिव अर्भकः तस्थौ तद् अङ्गुष्ठ निपीडिता मही।
ननाम तत्र अर्धम् इभेन्द्र धिष्ठिता तरी इव सव्य इतरतः पदे-पदे ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	ननाम	११.	झुक गई
एक पादेन	४.	एक पैर से	तत्रअर्धम्	१०.	वहाँ आधे भाग से
सः	३.	वह ध्रुव	इभेन्द्र	१३.	गजराज के
पार्थिवअर्भकः	२.	राजा का पुत्र	धिष्ठिता	१४.	चढ़ जाने पर
तस्थौ	५.	खड़ा हो गया	तरी	१५.	नाव
तद्	६.	तब उसके	इव	१२.	जैसे
अङ्गुष्ठ	७.	अंगूठे से (दबकर)	सव्य	१७.	बायें
निपीडिता	८.	पीड़ित होती हुई	इतरतः	१८.	दायें (डगमगाने लगती है)
मही।	९.	पृथ्वी	पदे-पदे ॥	१६.	पग-पग पर

श्लोकार्थ—जब राजा का पुत्र वह ध्रुव एक पैर से खड़ा हो गया तब उसके अंगूठे से दबकर पीड़ित होती हुई पृथ्वी वहाँ आधे भाग से झुक गई जैसे गजराज के चढ़ जाने पर नाव पग-पग पर बायें-दायें डगमगाने लगती है ॥

अशीतितमः श्लोकः

तस्मिन्नभिध्यायति विश्वमात्मनो द्वारं निरुध्यासुमनन्यया धिया।
लोका निरुच्छ्वासनिपीडिता भृशं सलोकपालाः शरणं ययुर्हरिम् ॥८०॥

पदच्छेद—तस्मिन् अभिध्यायति विश्वम् आत्मनः द्वारम् निरुध्य असुम् अनन्यया धिया।
लोकाः निरुच्छ्वासनिपीडिताभृशम् सलोक पालाः शरणम् ययुः हरिम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	७.	उस	लोका	९.	तब सारा लोक
अभिध्यायति	८.	ध्यान में लग गये	निरुच्छ्वास	१०.	श्वास रुक जाने से
विश्वम्	६.	विश्वात्मा श्री हरि के	निपीडिता	१२.	पीड़ित हो गया (तथा वे सब)
आत्मनः	१.	(जब ध्रुव जी) अपने	भृशम्	११.	अत्यन्त
द्वारम्	२.	इन्द्रियों के द्वार को	सलोकपालाः	१३.	लोक पालों के साथ
निरुध्य	४.	रोक कर	शरणम्	१५.	शरण में
असुम्	३.	(और) प्राण को	ययुः	१६.	गये
अनन्याधिया।	५	अनन्य बुद्धि से	हरिम् ॥	१४.	भगवान् श्री हरि की

श्लोकार्थ—जब ध्रुव जी अपने इन्द्रियों के द्वार को और प्राण को रोककर अनन्य बुद्धि से विश्वात्मा श्री हरि के उस ध्यान में लग गये। तब सारा लोक श्वास रुक जाने से अत्यन्त पीड़ित हो गया। तथा वे सब लोक पालों के साथ भगवान् श्री हरि की शरण में गये ॥

एकाशीतितमः श्लोकः

देवा ऊचुः—नैवं विदामो भगवन् प्राणरोधं चराचरस्याखिलसत्त्वधाम्नः ।
विधेहि तन्नो वृजिनाद्विमोक्षं प्राप्ता वयं त्वां शरणं शरण्यम् ॥८१॥

पदच्छेद—न एवम् विदामः भगवन् प्राणरोधम् चरअचरस्य अखिल सत्त्व धाम्नः ।
विधेहि तत् नः वृजिनात् विमोक्षम् प्राप्ता वयम् त्वाम् शरणम् शरण्यम् ॥

शब्दार्थ—

न	८.	(हम) नहीं	विधेहि	१३.	दिलावें
एवम्	२.	इस प्रकार के	तत् नः	१०.	इसलिये हमें
विदामः	९.	समझ पा रहे हैं	वृजिनात्	११.	इस संकट से
भगवन्	१.	हे स्वामिन्	विमोक्षम्	१२.	छुटकारा
प्राणरोधम्	७.	प्राण संकट को	प्राप्ताः	१८.	आये हैं
चरअचरस्य	३.	स्थावर-जङ्गम	वयम्	१४.	हम लोग
अखिल	४.	सम्पूर्ण	त्वाम्	१६.	आपकी
सत्त्व	५.	जीवों के	शरणम्	१७.	शरण में
धाम्नः ।	६.	शरीर के	शरण्यम् ॥	१५.	शरण देने वाले

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! इस प्रकार के स्थावर-जङ्गम सम्पूर्ण जीवों के शरीर के प्राण संकट को हम नहीं समझ पा रहे हैं । इसलिये हमें इस संकट से छुटकारा दिलावें । हम लोग शरण देने वाले आपकी शरण में आये हैं ॥

द्व्यशीतितमः श्लोकः

श्री भगवानुवाच—मा भैष्ट बालं तपसो दुरत्ययान्निवर्तयिष्ये प्रतियात स्वधाम ।
यतो हि वः प्राणनिरोध आसीदौत्तानपादिर्मयि संगतात्मा ॥८२॥

पदच्छेद— मा भैष्ट बालम् तपसः दुरत्ययात् निवर्तयिष्ये प्रतियात स्वधाम ।
यतः हि वः प्राण निरोधः आसीत् औत्तानपादिः मयि संगत आत्मा ॥

शब्दार्थ—

मा	१.	(आप लोग) मत	यतः	३.	क्योंकि
भैष्ट	२.	डरो	हि वः	८.	इसलिये आप लोगों का
बालम्	१३.	(उस) बालक ध्रुव को	प्राण निरोधः	९.	श्वास रुक गया
तपसः	१५.	तपस्या से	आसीत्	१०.	था (आप लोग)
दुरत्ययात्	१४.	कठिन	औत्तान पादिः	४.	उत्तानपाद के पुत्र ध्रुव की
निवर्तयिष्ये	१६.	निवृत्त करता हूँ	मयि	६.	मुझमें
प्रतियात	१२.	लौट जावें (मैं)	संगत	७.	लीन हो गई है
स्वधाम ।	११.	अपने लोक को	आत्मा ॥	५.	आत्मा

श्लोकार्थ—आप लोग मत डरो; क्योंकि उत्तानपाद के पुत्र ध्रुव की आत्मा मुझमें लीन हो गई है । इसलिये आप लोगों का श्वास रुक गया था । आप लोग अपने लोक को लौट जावें । मैं उस बालक ध्रुव को कठिन तपस्या से निवृत्त करता हूँ ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे ध्रुवचरिते अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

नवमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—त एवमुत्सन्नभया उरुक्रमे कृतावनामाः प्रययुस्त्रिविष्टपम् ।
सहस्रशीर्षापि ततो गरुत्मता मधोर्वनं भृत्यदिदृक्षया गतः ॥१॥

पदच्छेद— ते एवम् उत्सन्न भयाः उरुक्रमे कृत अवनामाः प्रययुः त्रिविष्टपम् ।
सहस्र शीर्षा अपि ततः गरुत्मता मधोर्वनम् भृत्य दिदृक्षया गतः ॥

शब्दार्थ—

ते	३.	उन देवताओं का	त्रिविष्टपम्	८.	स्वर्गलोक को
एवम्	२.	ऐसा कहने पर	सहस्र शीर्षा	११.	विराट् रूप भगवान् श्री हरि
उत्सन्न	५.	समाप्त हो गया	अपि	१२.	भी
भयाः	४.	भय	ततः	१०.	तदनन्तर
उरुक्रमे	१.	भगवान् श्री हरि के	गरुत्मता	१४.	गरुड़पर सवार होकर
कृत	७.	करके	मधोर्वनम्	१५.	मधुवन में
अवनामाः	६.	(और वे) प्रणाम	भृत्य दिदृक्षया	१३.	भक्त ध्रुव को देखने के लिये
प्रययुः	९.	चले गये	गतः ॥	१६.	पधारे

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के ऐसा कहने पर उन देवताओं का भय समाप्त हो गया और वे प्रणाम करके स्वर्गलोक को चले गये। तदनन्तर विराट् रूप भगवान् श्री हरि भी भक्त ध्रुव को देखने के लिये गरुड़ पर सवार होकर मधुवन में पधारे ॥

द्वितीयः श्लोकः

स वै धिया योगविपाकतीव्रया हृत्पद्मकोशे स्फुरितं तडित्प्रभम् ।
तिरोहितं सहसैवोपलक्ष्य बहिःस्थितं तदवस्थं ददर्श ॥२॥

पदच्छेद— सः वै धिया योग विपाक तीव्रया हृत्-पद्मकोशे स्फुरितम् तडित् प्रभम्
तिरोहितम् सहसा एव उपलक्ष्य बहिः स्थितम् तद् अवस्थम् ददर्श ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वे	तडित् प्रभम् ।	६.	बिजली के समान
वै	८.	ध्यान कर रहे थे (वह)	तिरोहितम्	१०.	विलीन हो गई
धिया	४.	बुद्धि के द्वारा	सहसा एव	९.	अचानक ही
योग विपाक	२	योग के अभ्यास से	उपलक्ष्य	११.	नेत्र खोलने पर
तीव्रया	३	एकाग्र हुई	बहिः स्थितम्	१३.	बाहर विद्यमान
हृत्-पद्मकोशे	५.	हृदय-कमल दल में (भगवान् की)	तद् अवस्थम्	१२.	भगवान् को उसी रूप में
स्फुरितम्	७	देदीप्यमान मूर्ति का	ददर्श ॥	१४.	देखा

श्लोकार्थ—वे योग के अभ्यास से एकाग्र हुई बुद्धि के द्वारा हृदय-कमलदल में भगवान् की बिजली के समान देदीप्यमान मूर्ति का ध्यान कर रहे थे; वह अचानक ही विलीन हो गई। नेत्र खोलने पर भगवान् को उसी रूप में बाहर विद्यमान देखा ॥

तृतीयः श्लोकः

तद्दर्शनेनागतसाध्वसः क्षितावबन्दताङ्गं विनमय्य दण्डवत् ।
दृग्भ्यां प्रपश्यन् प्रपिबन्निवार्भकश्चुम्बन्निवास्येन भुजैरिवाश्लिषन् ॥३॥

पदच्छेद–तद् दर्शनेन आगत साध्वसः क्षितौ अवन्दत अङ्गम् विनमय्य दण्डवत् ।
दृग्भ्याम् प्रपश्यन् प्रपिबन् इव अर्भकः चुम्बन् इव आस्येन भुजैः इव आश्लिषन् ॥

शब्दार्थ—

तद् दर्शनेन	१.	ध्रुव जी (भगवान् के) दर्शन से	प्रपश्यन्	६.	(भगवान् को) निहारते हुये
आगत	३.	हो गये (उन्होंने)	प्रपिबन्	१३.	पी रहे थे
साध्वसः	२.	बड़े कातर	इव	११.	मानों (उन्हें)
क्षितौ	४.	पृथ्वी पर	अर्भकः	१०.	बालक ध्रुव जी
अवन्दत	८.	प्रणाम किया (उस समय)	चुम्बन्	१५.	चूम रहे थे
अङ्गम्	५.	सिर को	इव आस्येन	१४.	और मुख से
विनमय्य	७.	झुकाकर	भुजैः	१७.	भुजाओं से
दण्डवत् ।	६.	दण्डे के समान	इव	१६.	तथा
दृग्भ्याम्	१२.	आँखों से	आश्लिषन्	१८.	आलिङ्गन कर रहे थे

श्लोकार्थ—ध्रुव जी भगवान् के दर्शन से बड़े कातर हो गये। उन्होंने पृथ्वी पर सिर को दण्डे के समान झुकाकर प्रणाम किया। उस समय भगवान् को निहारते हुये बालक ध्रुव जी मानों उन्हें आँखों से पी रहे थे और मुख से चूम रहे थे तथा भुजाओं से आलिङ्गन कर रहे थे॥

चतुर्थः श्लोकः

स तं विवक्षन्तमतद्विदं हरिर्ज्ञात्वास्य सर्वस्य च हृद्यवस्थितः ।
कृताञ्जलिं ब्रह्ममयेन कम्बुना पस्पर्श बालं कृपया कपोले ॥४॥

पदच्छेद–सः तम् विवक्षन्तम् अतद् विदम् हरिः ज्ञात्वा अस्य सर्वस्य च हृदि अवस्थितः ।
कृत अञ्जलिम् ब्रह्ममयेन कम्बुना पस्पर्श बालम् कृपया कपोले ॥

शब्दार्थ—

सः	३.	उन	हृदि अवस्थितः ।	२.	हृदय में विराजमान
तम्	१०.	उस	कृत	६.	जोड़े हुये
विवक्षन्तम्	५.	बोलने के इच्छुक	अञ्जलिम्	८.	हाथ
अतद् विदम्	७.	बोलने में असमर्थ	ब्रह्ममयेन	१३.	वेद स्वरूप
हरिः	४.	भगवान् श्री हरि ने	कम्बुना	१४.	अपने शंख से
ज्ञात्वा	१२.	जानकर	पस्पर्श	१८.	स्पर्श किया
अस्य	१६.	उसके	बालम्	११.	बालक ध्रुव के मन की बात
सर्वस्य	१.	सबके	कृपया	१५.	कृपा पूर्वक
च	६.	और	कपोले ॥	१७.	गाल पर

श्लोकार्थ—सबके हृदय में विराजमान उन भगवान् श्री हरि ने बोलने के इच्छुक और बोलने में असमर्थ, हाथ जोड़े हुये उस बालक ध्रुव के मन की बात जान कर वेद स्वरूप अपने शंख से कृपा पूर्वक उसके गाल पर स्पर्श किया॥

पञ्चमः श्लोकः

स वै तदैव प्रतिपादितां गिरं दैवीं परिज्ञातपरात्मनिर्णयः ।
तं भक्तिभावोऽभ्यगृणादसत्वरं परिश्रुतोरुश्रवसं ध्रुवक्षितिः ॥५॥

पदच्छेद— सः वै तदा एव प्रतिपादिताम् गिरम् दैवीम् परिज्ञात परात्म निर्णयः ।
तम् भक्ति-भावः अभ्यगृणात् असत्वरम् परिश्रुत उरु श्रवसम् ध्रुव क्षितिः ॥

शब्दार्थ—

सः	३.	वे ध्रुव जी	तम्	१६.	उन भगवान् श्री हरि को
वै	८.	उन्हें	भक्ति-भावः	१२.	भक्ति से परिपूर्ण होकर
तदा एव	४.	उसी समय	अभ्यगृणात्	१८.	स्तुति करते रहे
प्रतिपादिताम्	७.	सम्पन्न हो गये	असत्वरम्	१७.	बड़ी देर तक
गिरम्	६.	वाणी से	परिश्रुत	१३.	(वे) प्रसिद्ध
दैवीम्	५.	वेद	उरु	१४.	महनीय
परिज्ञात	११.	ज्ञान हो गया	श्रवसम्	१५.	कीर्ति वाले
परात्म	९.	परमात्मा जीवात्मा के	ध्रुव	१.	ध्रुव पद को
निर्णयः ।	१०.	स्वरूप का	क्षितिः ॥	२.	प्राप्त करने वाले

श्लोकार्थ— ध्रुव पद को प्राप्त करने वाले वे ध्रुव जी उसी समय वेदवाणी से सम्पन्न हो गये । उन्हें परमात्मा और जीवात्मा के स्वरूप का ज्ञान हो गया । भक्ति से परिपूर्ण होकर वे प्रसिद्ध महनीय कीर्ति वाले उन भगवान् श्री हरि की बड़ी देर तक स्तुति करते रहे ॥

षष्ठः श्लोकः

योऽन्तः प्रविश्य मम वाचमिमां प्रसुप्तां संजीवयत्यखिलशक्तिधरः स्वधाम्ना ।
अन्यांश्च हस्तचरणश्रवणत्वगादीन् प्राणान्नमो भगवते पुरुषाय तुभ्यम् ॥६॥

पदच्छेद—यः अन्तः प्रविश्य मम वाचम् इमाम् प्रसुप्ताम् संजीवयति अखिलशक्ति धरः स्वधाम्ना ।
अन्यान् च हस्त चरण श्रवण त्वग् आदीन् प्राणान् नमः भगवते पुरुषाय तुभ्यम् ॥

शब्दार्थ—

यः अन्तः	३.	जो भगवान् मेरे अन्तःकरण में	च	९.	तथा
प्रविश्य मम	४.	प्रवेश करके मेरी	हस्त चरण	११.	हाथ पैर
वाचम्	६.	वाणी को	श्रवण त्वग्	१२.	कान त्वग्
इमाम् प्रसुप्ताम्	५.	इस सोई हुई	आदीन्	१३.	इत्यादि इन्द्रियों को (और)
संजीवयति	८.	जीवित कर रहे हैं	प्राणान्	१४.	प्राण को भी जीवित कर रहे हैं
अखिलशक्ति	१.	सम्पूर्ण शक्तियों को	नमः	१८.	प्रणाम है
धरः	२.	धारण करने वाले	भगवते	१६.	भगवान्
स्वधाम्ना ।	७.	अपने तेज से	पुरुषाय	१५.	आदि पुरुष (उन)
अन्यान्	१०.	दूसरे	तुभ्यम् ॥	१७.	आपको

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण शक्तियों को धारण करने वाले जो भगवान् मेरे अन्तःकरण में प्रवेश करके मेरी इस सोई हुई वाणी को अपने तेज से जीवित कर रहे हैं तथा दूसरे हाथ, पैर, कान, त्वक् इत्यादि इन्द्रियों को और प्राण को भी जीवित कर रहे हैं । आदि पुरुष उन भगवान् आपको प्रणाम है ॥

सप्तमः श्लोकः

एकस्त्वमेव भगवन्निदमात्मशक्त्या मायाख्ययोरुगुणया महदाद्यशेषम् ।
सृष्ट्वानुविश्य पुरुषस्तदसद्गुणेषु नानेव दारुषु विभावसुवद्विभासि ।।७।।

पदच्छेद—एकः त्वम् एव भगवन् इदम् आत्म शक्त्या माया आख्यया उरु गुणया महदादि अशेषम् ।
सृष्ट्वा अनुविश्य पुरुषः तद् असद् गुणेषु नाना इव दारुषु विभावसुवत् विभासि ।।

शब्दार्थ—

एकः त्वम्	२.	एक आप	सृष्ट्वा	१०.	रचकर उसमें
एव	३.	ही (हैं)	अनुविश्य	१२	प्रवेश करते हैं (और)
भगवन्	१.	हे भगवन्	पुरुषः	११.	अन्तर्यामीरूप से
इदम्	७.	इस	तद्	१३.	उनके
आत्म शक्त्या	६.	अपनी शक्ति से	असद् गुणेषु	१४.	मिथ्याभूत इन्द्रियों में
माया आख्यया	४.	माया नाम की	नाना इव	१५	अनेक रूपों में
उरु गुणया	५.	अनन्त गुणमयी	दारुषु	१७.	लकड़ियों में
महदादि	८.	महतत्त्वादि	विभावसुवत्	१८.	भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई देती है
अशेषम् ।	९.	सम्पूर्ण जगत् को	विभासि ।।	१६.	भासते हैं (जैसे एक ही अग्नि)

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप एक ही हैं । माया नाम की अनन्त गुणमयी अपनी शक्ति से इस महतत्त्वादि सम्पूर्ण जगत् को रचकर उसमें अन्तर्यामी रूप सेप्रवेश करते हैं । और उनके मिथ्याभूत इन्द्रियों में अनेक रूपों में भासते हैं । जैसे एक ही अग्नि लकड़ियों में भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई देती है ।।

अष्टमः श्लोकः

त्वद्दत्तया वयुनयेदमचष्ट विश्वं सुप्तप्रबुद्ध इव नाथ भवत्प्रपन्नः ।
तस्यापवर्ग्यशरणं तव पादमूलं विस्मर्यते कृतविदा कथमार्तबन्धो ।।८।।

पदच्छेद त्वद् दत्तया वयुनया इदम् अचष्ट विश्वम् सुप्त प्रबुद्धः इव नाथ भवत् प्रपन्नः ।
तस्य अपवर्ग्य शरणम् तव पाद मूलम् विस्मर्यते कृतविदा कथम् आर्तबन्धो ।।

शब्दार्थ—

त्वद् दत्तया	३.	आपके द्वारा दिये गये	तस्य	१३.	उन
वयुनया	४.	ज्ञान से	अपवर्ग्य	११.	मुमुक्षुओं को
इदम्	५.	इस	शरणम्	१२.	शरण देने वाले
अचष्ट	९.	देखा था	तव पाद	१४.	आपके चरणों के
विश्वम्	६.	सम्पूर्ण जगत् को	मूलम्	१५.	आश्रय को
सुप्त	७.	सोकर	विस्मर्यते	१८.	भूल सकता है
प्रबुद्धः इव	८.	जगे हुये के समान	कृतविदा	१६.	कृतज्ञ पुरुष
नाथ	१.	हे स्वामिन्	कथम्	१७.	कैसे
भवत् प्रपन्नः ।	२.	आपके शरणागत (ब्रह्मा जी ने)	आर्तबन्धो ।।	१०.	हे दीन बन्धो

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! आपके शरणागत ब्रह्मा जी ने आपके द्वारा दिये गये ज्ञान से इस सम्पूर्ण जगत् को सोकर जगे हुये के समान देखा था । हे दीनबन्धो ! मुमुक्षुओं को शरण देने वाले उन आपके चरणों के आश्रय को कृतज्ञ पुरुष कैसे भूल सकता है ।।

नवमः श्लोकः

नूनं विमुष्टमतयस्तव मायया ते ये त्वां भवाप्ययविमोक्षणमन्यहेतोः ।
अर्चन्ति कल्पकतरुं कुणपोपभोग्यमिच्छन्ति यत्स्पर्शजं निरयेऽपि नृणाम् ॥६॥

पदच्छेद—नूनम् विमुष्ट मतयः तव मायया ते ये त्वाम् भव अप्यय विमोक्षणम् अन्य हेतोः ।
अर्चन्ति कल्पक तरुम् कुणप उपभोग्यम् इच्छन्ति यत् स्पर्शजम् निरये अपि नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	२.	अवश्य ही	अन्य हेतोः ।	११.	दूसरे सांसारिक प्रयोजन से
विमुष्ट	५.	हर ली गई है	अर्चन्ति	१२.	पूजा करते हैं (तथा)
मतयः	४.	बुद्धि	कल्पक तरुम्	६.	कल्पवृक्ष के समान
तव मायया	१.	हे भगवन् आपकी माया के द्वारा	कुणप	१३.	शवरूप शरीर के
ते	३.	उनकी	उपभोग्यम्	१४.	भोग करने योग्य
ये	६.	जो लोग	इच्छन्ति यत्	१६.	चाहते हैं, क्योंकि (वह)
त्वाम्	१०.	आपकी	स्पर्शजम्	१५.	विषय सुख को
भव अप्यय	७.	जन्म मरण से	निरये अपि	१८.	नरक में भी (मिलता है)
विमोक्षणम्	८.	मोक्ष देने वाले	नृणाम् ॥	१७.	(सुखतो) मनुष्यों को

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपकी माया के द्वारा अवश्य ही उनकी बुद्धि हर ली गई है; जो लोग जन्म-मरण से मोक्ष देने वाले कल्प वृक्ष के समान आपकी दूसरे सांसारिक प्रयोजन से पूजा करते हैं तथा शवरूप शरीर के भोग करने योग्य विषय सुख को चाहते हैं । क्योंकि वह सुख तो मनुष्यों को नरक में भी मिल जाता है ॥

दशमः श्लोकः

या निर्वृतिस्तनुभृतां तव पादपद्म ध्यानाद्भवज्जनकथाश्रवणेन वा स्यात् ।
सा ब्रह्मणि स्वमहिमन्यपि नाथ मा भूत् किं त्वन्तकासिलुलितात्पततां विमाना १०

पदच्छेद—या निर्वृतिः तनु भृताम् तव पाद पद्म ध्यानात् भवत् जन कथा श्रवणेन वा स्यात् ।
सा ब्रह्मणि स्व महिमनि अपि नाथ मा भूत् किम् तु अन्तक असि लुलितात् पतताम् विमानात् ॥

शब्दार्थ—

या निर्वृतिः	७.	जो आनन्द	ब्रह्मणि	११.	ब्रह्म
तनु भृताम्	६.	शरीर धारियों को	स्व महिमनि अपि	१०.	निजानन्द स्वरूप में भी
तव पाद	१.	आपके चरण	नाथ	१३.	हे स्वामिन्
पद्म ध्यानात्	२.	कमल के ध्यान से	मा भूत्	१२.	नहीं हो सकता (अतः)
भवत् जन	४.	आपके भक्तों के	किम्	१६.	कैसे हो सकता है
कथा श्रवणेन	५.	चरित्र श्रवण से	तु	१८.	फिर भला (वह)
वा	३.	अथवा	अन्तक असि	१४	काल की तलवार से
स्यात् ।	८.	होता है	लुलितात्	१५	काटे गये
सा	६.	वह	पतताम्	१७.	गिरने वाले लोगों को
			विमानात् ॥	१६.	विमानों से

श्लोकार्थ—आपके चरण कमल के ध्यान से अथवा आपके भक्तों के चरित्र श्रवण से शरीरधारियों को जो आनन्द होता है; वह निजानन्द ब्रह्म स्वरूप में भी नहीं हो सकता । अतः हे स्वामिन् ! काल की तलवार से काटे गये विमानों से गिरने वाले लोगों को फिर भला वह कैसे हो सकता है ॥

एकादशः श्लोकः

भक्तिं मुहुः प्रवहतां त्वयि मे प्रसङ्गो भूयादनन्त महतामलाशयानाम् ।
येनाञ्जसोल्बणमुरुव्यसनं भवाब्धिं नेष्ये भवद्गुणकथामृतपानमत्तः ॥११॥

पदच्छेद—भक्तिम् मुहुः प्रवहताम् त्वयि मे प्रसङ्गः भूयात् अनन्त महताम् अमल आशयानाम् ।
येन अञ्जसा उल्बणम् उरु व्यसनम् भव अब्धिम् नेष्ये भवद् गुण कथा अमृत पान मत्तः ॥

शब्दार्थ—

भक्तिम्	८.	भक्ति-भाव	येन्	१०.	जिस सङ्ग से (मैं)
मुहुः	७.	निरन्तर	अञ्जसा	१७.	सहज ही में
प्रवहताम्	९.	रहता है	उल्बणम्	१५.	भयंकर
त्वयि	६.	आप में	उरु व्यसनम्	१४.	अनेक प्रकार के दुखों से परिपूर्ण
मे	२.	मुझे	भव अब्धिम्	१६.	संसार सागर से
प्रसङ्गः भूयात्	५.	सङ्ग प्राप्त होवे (जिनका)	नेष्ये	१८.	पार हो जाऊँगा
अनन्त	१.	हे परमात्मन्	भवद् गुण	११.	आपके गुणानुवाद (और)
महताम्	४.	महात्माओं का	कथा अमृत	१२.	लीलाओं की कथा सुधा को
अमल आशयानाम् ।	३.	विशुद्ध अन्तःकरण वाले	पान मत्तः ॥	१३.	पीने से मतवाला होकर

श्लोकार्थ—हे परमात्मन् ! मुझे विशुद्ध अन्तःकरण वाले महात्माओं का सङ्ग प्राप्त होवे; जिनका आप में निरन्तर भक्ति-भाव रहता है । जिस सङ्ग से मैं आपके गुणानुवाद और लीलाओं की कथा सुधा को पीने से मतवाला होकर अनेक प्रकार के दुःखों से परिपूर्ण भयंकर संसार सागर से सहज ही में पार हो जाऊँगा ॥

द्वादशः श्लोकः

ते न स्मरन्त्यतितरां प्रियमीश मर्त्यं ये चान्वदः सुतसुहृद्गृहवित्तदाराः ।
ये त्वब्जनाभ भवदीयपदारविन्दसौगन्ध्यलुब्धहृदयेषु कृतप्रसङ्गाः ॥१२॥

पदच्छेद—ते न स्मरन्ति अति तराम् प्रियम् ईश मर्त्यम् ये च अन्वदः सुत सुहृद् गृह वित्त दाराः ।
ये तु अब्जनाभ भवदीय पद अरविन्द सौगन्ध्य लुब्ध हृदयेषु कृत प्रसङ्गाः ॥

शब्दार्थ—

ते	१०.	वे लोग	ये	६.	जो लोग
न स्मरन्ति	१८.	नहीं स्मरण करते हैं	तु	१७.	भी
अति तराम् प्रियम्	११.	अत्यन्त प्रिय (अपने)	अब्जनाभ	१.	हे कमल नाभ प्रभो
ईश	९.	हे स्वामिन्	भवदीय	३.	आपके
मर्त्यम्	१२.	शरीर	पद अरविन्द	४.	चरण कमलों की
ये	१४.	जो (उनके)	सौगन्ध्य लुब्ध	५.	सुगन्ध का लोभी है (उनकी)
च	१३.	तथा	हृदयेषु	२.	जिनका चित्त
अन्वदः सुत सुहृद्	१५.	सम्बन्धित पुत्र मित्र	कृत	८.	करते हैं
गृह वित्त दाराः ।	१६.	घर धन स्त्री आदि हैं (उनका)	प्रसङ्गाः ॥	७.	सङ्गति

श्लोकार्थ—हे कमलनाभ प्रभो ! जिनका चित्त आपके चरण कमलों की सुगन्ध का लोभी है; उनकी जो लोग सङ्गति करते हैं । हे स्वामिन् ! वे लोग अत्यन्त प्रिय अपने शरीर तथा जो उनके सम्बन्धी पुत्र, मित्र, घर, धन स्त्री आदि हैं; उनका भी स्मरण नहीं करते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तिर्यङ्नगद्विजसरीसृपदेवदैत्यमर्त्यादिभिः परिचितं सदसद्विशेषम् ।
रूपं स्थविष्ठमज ते महदाद्यनेकं नातः परं परम वेद्मि न यत्र वादः ॥१३॥

पदच्छेद–तिर्यक् नग द्विज सरीसृप देव दैत्य मर्त्य आदिभिः परिचितम् सद्-असद् विशेषम् ।
रूपं स्थविष्ठम् अज ते महदादि अनेकम् न अतः परम् परम वेद्मि न यत्र वादः ॥

शब्दार्थ—

तिर्यक् नग	३.	पशु वृक्ष पर्वत	अज	१.	अजन्मा
द्विज सरीसृप	४.	पक्षी रेंगने वाले सर्पादि जीव	ते	१२.	आपके (इस)
देव दैत्य	५.	देवता राक्षस (और)	महदादि	८.	महत्तत्त्व इत्यादि
मर्त्य आदिभिः	६.	मनुष्य इत्यादि से	अनेकम्	९.	अनेक कारणों से निर्मित
परिचितम्	७.	परिपूर्ण	न	१६.	नहीं
सद्-असद्	१०.	सत्य और असत्य से	अतः परम्	१५.	इससे भिन्न रूप को
विशेषम् ।	११.	भिन्न	परम	२.	हे परमात्मन्
रूपम्	१४.	स्वरूप (को ही मैं जानता हूँ)	वेद्मि	१७	जानता हूँ
स्थविष्ठम्	१३.	स्थूल	न	१९.	नहीं (है)
			यत्र वादः ॥	१८.	जहाँ वाणी की गति

श्लोकार्थ—अजन्मा हे परमात्मन् ! पशु, वृक्ष, पर्वत, पक्षी, रेंगने वाले सर्पादि जीव, देवता राक्षस और मनुष्य इत्यादि से परिपूर्ण महत्तत्त्व इत्यादि अनेक कारणों से निर्मित सत्य और असत्य से भिन्न आपके इस स्थूल स्वरूप को ही मैं जानता हूँ । इससे भिन्न रूप को नहीं जानता हूँ । जहाँ वाणी की गति नहीं है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

कल्पान्त एतदखिलं जठरेण गृह्णन् शेते पुमान् स्वदृगनन्तसखस्तदङ्के ।
यन्नाभिसिन्धुरुहकाञ्चनलोकपद्मगर्भे द्युमान् भगवते प्रणतोऽस्मि तस्मै ॥१४॥

पदच्छेद–कल्प अन्त एतद् अखिलम् जठरेण गृह्णन् शेते पुमान् स्वदृक् अनन्त सखः तद् अङ्के ।
यद् नाभि सिन्धु रुह काञ्चन लोक पद्म गर्भे द्युमान् भगवते प्रणतः अस्मि तस्मै ॥

शब्दार्थ—

कल्प अन्ते	१.	युग का अन्त हो जाने पर	सिन्धु रुह	१०.	समुद्र से प्रकट हुये
एतद् अखिलम्	४.	इस सम्पूर्ण विश्व को	काञ्चन	१२.	सुवर्ण रूप
जठरेण गृह्णन्	५.	अपने उदर में लीन करके	लोक	११.	सर्वलोकमय
शेते	८.	शयन करते हैं (तथा)	पद्म गर्भे	१३.	कमल के बीच से
पुमान्	२.	(जो) आदि पुरुष	द्युमान्	१४.	ब्रह्मा जी (उत्पन्न हुये थे)
स्वदृक्	३.	अपनी योगनिद्रा में	भगवते	१६.	भगवान् श्री हरि की मैं
अनन्त सखः	६.	शेषनाग के साथ	प्रणतः	१७.	प्रणाम
तद् अङ्के ।	७.	उनकी गोद में	अस्मि	१८.	करता हूँ
यद् नाभि	९.	जिनके नाभि	तस्मै ॥	१५.	उन

श्लोकार्थ—युग का अन्त हो जाने पर जो आदि पुरुष अपनी योगनिद्रा में इस सम्पूर्ण विश्व को अपने उदर में लीन करके शेष नाग के साथ उनकी गोद में शयन करते हैं तथा जिनके नाभि समुद्र से प्रकट हुये सर्वलोकमय सुवर्ण रूप कमल के बीच से ब्रह्मा जी उत्पन्न हुये थे; उन भगवान् श्री हरि को मैं प्रणाम करता हूँ ॥

पञ्चदशः श्लोकः

त्वं नित्यमुक्तपरिशुद्धविबुद्ध आत्मा कूटस्थ आदिपुरुषो भगवांस्त्र्यधीशः।
यद्बुद्ध्यवस्थितिमखण्डितया स्वदृष्ट्या द्रष्टा स्थितावधिमखो व्यतिरिक्त आस्से ॥१५॥

पदच्छेद–त्वम् नित्यमुक्त परिशुद्ध विबुद्धः आत्मा कूटस्थः आदिपुरुषः भगवान् त्र्यधीशः। यद् बुद्धि अवस्थितम् अखण्डितया स्व दृष्टया द्रष्टा स्थितौ अधिमखः व्यक्तिरिक्तः आस्से ॥

शब्दार्थ—

त्वम नित्यमुक्त	१.	आप सदा माया से रहित	अवस्थितम्	१३.	तीनों अवस्थाओं में
परिशुद्ध	२.	शुद्ध सत्त्वमय	अखण्डितया	१०.	अखण्ड
विबुद्धः आत्मा	३.	सर्वज्ञ परमात्म स्वरूप	स्व	९.	अपनी
कूटस्थ	४.	निर्विकार	दृष्टया	११.	चिन्मयी दृष्टि से
आदि पुरुष	५.	आदि पुरुष	द्रष्टा	१४.	साक्षी रूप
भगवान्	६.	षडैश्वर्य सम्पन्न	स्थितौ	१६.	संसार के पालन के लिये
त्र्यधीशः।	७.	तीनों गुणों के स्वामी हैं	अधिमखः	१७.	यज्ञ स्वरूप विष्णु रूप से
यद्	८.	क्योंकि (आप)	व्यक्तिरिक्तः	१५.	जीव से भिन्न (तथा)
बुद्धि	१२.	बुद्धि को	आस्से ॥	१८.	विराजमान हैं

श्लोकार्थ—आप सदा माया से रहित, शुद्ध सत्त्वमय, सर्वज्ञ, परमात्मस्वरूप, निर्विकार, आदि पुरुष, षडैश्वर्य सम्पन्न, तीनों गुणों के स्वामी हैं। क्योंकि आप अपनी अखण्ड चिन्मयी दृष्टि से बुद्धि की तीनों अवस्थाओं में साक्षीरूप जीव से भिन्न तथा संसार के पालन के लिये यज्ञ स्वरूप विष्णुरूप से विराजमान हैं ॥

षोडशः श्लोकः

यस्मिन् विरुद्धगतयो ह्यनिशं पतन्ति विद्यादयो विविधशक्तय आनुपूर्व्यात्।
तद्ब्रह्म विश्वभवमेकमनन्तमाद्यमानन्दमात्रमविकारमहं प्रपद्ये ॥१६॥

पदच्छेद–यस्मिन् विरुद्ध गतयः हि अनिशम् पतन्ति विद्या आदयः विविध शक्तयः आनुपूर्व्यात्। तद् ब्रह्म विश्व भवम् एकम् अनन्तम् आद्यम् आनन्द मात्रम् अविकारम् अहम् प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन् विरुद्ध	२.	जिस आप में परस्पर विरोधी	विश्व	१०.	संसार के
गतयः	३.	स्वभाव वाली	भवम्	११.	कारण
हि	१.	क्योंकि	एकम्	१२.	अखण्ड
अनिशम्	७.	सदा	अनन्तम्	१४.	अनन्त
पतन्ति	८.	निवास करती हैं (अतः)	आद्यम्	१३.	अनादि
विद्या आदयः	४.	विद्या और अविद्या इत्यादि	आनन्द	१६.	आनन्द स्वरूप
विविध शक्त्या	५.	अनेक प्रकार की शक्तियाँ	मात्रम् अविकारम्	१५	केवल निर्विकार
आनु पूर्व्यात्।	६	धारावाहिक रूप से	अहम्	९.	मैं
तद् ब्रह्म	१७.	उन ब्रह्म स्वरूप आपकी	प्रपद्ये ॥	१८.	शरण में हूँ

श्लोकार्थ—क्योंकि जिस आप में परस्पर विरोधी स्वभाव वाली विद्या और अविद्या इत्यादि अनेक प्रकार की शक्तियाँ धारावाहिक रूप से सदा निवास करती हैं अतः मैं संसार के कारण, अखण्ड, अनादि, अनन्त, केवल निर्विकार, आनन्द उन ब्रह्म स्वरूप आपकी शरण में हूँ ॥

सप्तदशः श्लोकः

सत्याऽऽशिषो हि भगवंस्तव पादपद्ममाशीस्तथानुभजतः पुरुषार्थमूर्तेः ।
अप्येवमर्य भगवान् परिपाति दीनान् वाश्रेव वत्सकमनुग्रहकातरोऽस्मान् ॥१७॥

पदच्छेद—सत्य आशिषः हि भगवन् तव पाद पद्मम् आशीः तथा अनुभजतः पुरुषार्थ मूर्तेः ।
अपि एवम् अर्य भगवान् परिपाति दीनान् वाश्रा इव वत्सकम् अनुग्रह कातरः अस्मान् ॥

शब्दार्थ—

सत्य	४.	पूर्ण करते हैं	अर्य	९.	हे स्वामिन्
आशिषः	३.	मनोरथों को	भगवान्	११.	आप
हि	५.	इसलिये	परिपाति	१५.	रक्षा करते हैं
भगवन् तव	१.	हे स्वामिन् आपके	दीनान्	१४.	अनाथों की
पाद पद्मम्	२.	चरण कमल	वाश्रा	१७.	नई ब्याई गाय
आशीः	६.	इस आशा से	इव	१६.	जैसे
तथा अनुभजतः	८.	वैसा भजन करते हैं	वत्सकम्	१८.	बछड़े की रक्षा करती है
पुरुषार्थ मूर्तेः ।	७.	कामना वाले मनुष्य आपका	अनुग्रह कातरः	१२.	कृपा के वश में होकर
अपि एवम्	१०.	यद्यपि ऐसा है (फिर भी)	अस्मान् ॥	१३.	हम

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! आपके चरण कमल मनोरथों को पूर्ण करते हैं । इसलिये इस आशा से कामना वाले मनुष्य आपका वैसा भजन करते हैं । हे स्वामिन् ! यद्यपि ऐसा है फिर भी आप कृपा के वश में होकर हम अनाथों की रक्षा करते हैं जैसे नई ब्याई गाय बछड़े की रक्षा करती है ॥

अष्टादशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—अथाभिष्टुत एवं वै सत्संकल्पेन धीमता ।
भृत्यानुरक्तो भगवान् प्रतिनन्द्येदमब्रवीत् ॥१८॥

पदच्छेद— अथ अभिष्टुतः एवम् वै सत् संकल्पेन धीमता ।
भृत्य अनुरक्तः भगवान् प्रतिनन्द्य इदम् अब्रवीत् ॥

शब्दार्थ—

अथ	५.	अनन्तर	भृत्य	६.	भक्त
अभिष्टुतः	४.	स्तुति करने के	अनुरक्तः	७	वत्सल
एवम्	३.	इस प्रकार	भगवान्	८.	भगवान् श्री हरि
वै	९.	उन पर	प्रतिनन्द्य	१०.	प्रसन्न होकर
सत् संकल्पेन	१.	उत्तम व्रत का पालन करने वाले	इदम्	११.	यह
धीमता ।	२.	बुद्धिमान ध्रुव जी के द्वारा	अब्रवीत् ॥	१२.	बोले

श्लोकार्थ—उत्तम व्रत का पालन करने वाले बुद्धिमान् ध्रुव जी के द्वारा इस प्रकार स्तुति करने के अनन्तर भक्त वत्सल भगवान् श्री हरि उन पर प्रसन्न होकर यह बोले ॥

एकोनविंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—वेदाहं ते व्यवसितं हृदि राजन्यबालक ।
तत्प्रयच्छामि भद्रं ते दुरापमपि सुव्रत ॥१६॥

पदच्छेद—

वेद अहम् ते व्यवसितम् हृदि राजन्यबालक ।
तत् प्रयच्छामि भद्रम् ते दुरापम् अपि सुव्रत ॥

शब्दार्थ—

वेद	७.	जानता हूँ (और)	तत्	६.	उसे (तुम्हें)
अहम्	३.	मैं	प्रयच्छामि	१०.	देता हूँ
ते	४.	तुम्हारे	भद्रम्	१२.	कल्याण हो
व्यवसितम्	६.	मनोरथ को	ते	११.	तुम्हारा
हृदि	५.	हृदय के	दुरापम् अपि	८.	दुर्लभ होने पर भी
राजन्यबालक ।	२.	हे राजकुमार	सुव्रत ॥	१.	उत्तम व्रत का पालन करने वाले

श्लोकार्थ—उत्तम व्रत का पालन करने वाले हे राजकुमार ! मैं तुम्हारे हृदय के मनोरथ को जानता हूँ और दुर्लभ होने पर भी उसे तुम्हें देता हूँ । तुम्हारा कल्याण हो ॥

विंशः श्लोकः

नान्यैरधिष्ठितं भद्र यद्भ्राजिष्णु ध्रुवक्षिति ।
यत्र ग्रहर्क्षताराणां ज्योतिषां चक्रमाहितम् ॥२०॥

पदच्छेद—

न अन्यैः अधिष्ठितम् भद्र यद् भ्राजिष्णु ध्रुवक्षिति ।
यत्र ग्रह ऋक्ष ताराणाम् ज्योतिषाम् चक्रम् आहितम् ॥

शब्दार्थ—

न	३.	नहीं	यत्र	८.	जहाँ
अन्यैः	२.	(जहाँ) दूसरे लोग	ग्रह	६.	ग्रह
अधिष्ठितम्	४.	रह सकते हैं (तथा)	ऋक्ष	१०.	नक्षत्र (और)
भद्र	१.	हे सौम्य	ताराणाम्	११.	तारागण इत्यादि
यद्	५.	जो	ज्योतिषाम्	१२.	प्रकाश का
भ्राजिष्णु	६.	प्रकाशमान (एवं)	चक्रम्	१३.	समूह
ध्रुवक्षिति ।	७.	ध्रुव पद है	आहितम् ॥	१४.	स्थित है

श्लोकार्थ—हे सौम्य ! जहाँ दूसरे लोग नहीं रह सकते हैं तथा जो प्रकाशमान एवं ध्रुव पद है । जहाँ ग्रह, नक्षत्र और तारागण इत्यादि प्रकाश का समूह स्थित है ।

एकविंशः श्लोकः

मेढ्यां गोचक्रवत्स्थास्नु परस्तात्कल्पवासिनाम् ।
धर्मोऽग्निःकश्यपः शुक्रो मुनयो ये वनौकसः ॥
चरन्ति दक्षिणीकृत्य भ्रमन्तो यत्सतारकाः ॥२१॥

पदच्छेद— मेढ्याम् गोचक्रवत् स्थास्नु परस्तात् कल्प वासिनाम् ।
धर्मः अग्निः कश्यपः शुक्रः मुनयः ये वन ओकसः ॥
चरन्ति दक्षिणीकृत्य भ्रमन्तः यत् सतारकाः ॥

शब्दार्थ—

मेढ्याम्	६.	मेढ़ो के चारों ओर घूमते (रहते हैं उसी प्रकार)	शुक्रः	११.	शुक्र (और)
गोचक्रवत्	५.	जैसे दँवरी के बैल	मुनयः	१४.	मुनिगण हैं (वे)
स्थास्नु	४.	स्थित रहता है	ये	१२.	जो
परस्तात्	३.	बाद अवान्तर कल्प में भी	वन ओकसः ॥	१३.	वनवासी
कल्प	१.	वह पद युग के अन्त तक	चरन्ति	१८.	परिक्रमा करते हैं
वासिनाम् ।	२.	रहने वालों के	दक्षिणीकृत्य	१५.	प्रदक्षिणा के क्रम से
धर्मः	८.	धर्म	भ्रमन्तः	१६.	घूमते हुये
अग्निः	९.	अग्नि	यत्	१७	जिसकी
कश्यपः	१०.	कश्यप	सतारकाः ॥	७.	तारागणों के सहित

श्लोकार्थ—वह पद युग के अन्त तक रहने वालों के बाद अवान्तर कल्प में भी स्थित रहता है, जैसे दँवरी के बैल मेढ़ो के चारों ओर घूमते रहते हैं उसी प्रकार तारागणों के सहित धर्म, अग्नि, कश्यप, शुक्र और जो वन वासी मुनिगण हैं वे प्रदक्षिणा के क्रम से घूमते हुये जिसकी परिक्रमा करते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

प्रस्थिते तु वनं पित्रा दत्त्वा गां धर्मसंश्रयः ।
षट्त्रिंशद्वर्षसाहस्रं रक्षिताव्याहतेन्द्रियः ॥२२॥

पदच्छेद— प्रस्थिते तु वनम् पित्रा दत्त्वा गाम् धर्म संश्रयः ।
षट्त्रिंशत् वर्ष साहस्रम् रक्षिता अव्याहत इन्द्रियः ॥

शब्दार्थ—

प्रस्थिते	५.	चले जाने पर	संश्रयः ।	८.	सहारे
तु	६.	तदनन्तर (तुम)	षट्त्रिंशत्	११.	छत्तीस
वनम्	४.	वन में	वर्ष	१३.	वर्षों तक (राज्य का)
पित्रा	१.	पिता के द्वारा	साहस्रम्	१२.	हजार
दत्त्वा	३.	देकर	रक्षिता	१४.	शासन (करोगे)
गाम्	२.	राज्य शासन का भार	अव्याहत	१०.	शक्ति से सम्पन्न होकर
धर्म	७.	धर्म के	इन्द्रियः ॥	९.	इन्द्रियों की

श्लोकार्थ—पिता के द्वारा राज्य शासन का भार देकर वन में चले जाने पर तदनन्तर तुम धर्म के सहारे इन्द्रियों की शक्ति से सम्पन्न होकर छत्तीस हजार वर्षों तक राज्य का शासन करोगे ॥

त्रयोविंश श्लोकः

त्वद्भ्रातर्युत्तमे नष्टे मृगयायां तु तन्मनाः ।
अन्वेषन्ती वनं माता दावाग्निं सा प्रवेक्ष्यति ॥२३॥

पदच्छेद—

त्वद् भ्रातरि उत्तमे नष्टे मृगयायाम् तु तन्मनाः ।
अन्वेषन्ती वनम् माता दावाग्निं सा प्रवेक्ष्यति ॥

शब्दार्थ—

त्वद्	२.	तुम्हारे	अन्वेषन्ती	१०.	ढूंढ़ती हुई
भ्रातरि	३.	भाई	वनम्	६.	वन में (उसे)
उत्तमे नष्टे	४.	उत्तम के मारे जाने पर	माता	८.	माता (सुरुचि)
मृगयायाम्	१.	शिकार खेलते समय	दावाग्निं	११.	दावानल में
तु	५.	तदनन्तर	सा	७.	वह
तन्मनाः ।	६.	उसके दुःख से पागल हुई	प्रवेक्ष्यति ॥	१२.	प्रवेश कर जायेगी

श्लोकार्थ—शिकार खेलते समय तुम्हारे भाई उत्तम के मारे जाने पर तदनन्तर उसके दुःख से पागल हुई वह माता सुरुचि वन में उसे ढूंढ़ती हुई दावानल में प्रवेश कर जायेगी

चतुर्विंशः श्लोकः

इष्ट्वा मां यज्ञहृदयं यज्ञैः पुष्कलदक्षिणैः ।
भुक्त्वा चेहाशिषः सत्या अन्ते मां संस्मरिष्यसि ॥२४॥

पदच्छेद—

इष्ट्वा माम् यज्ञ हृदयम् यज्ञैः पुष्कल दक्षिणैः ।
भुक्त्वा च इह आशिषः सत्याः अन्ते माम् संस्मरिष्यसि ॥

शब्दार्थ—

इष्ट्वा	७.	यजन करके	भुक्त्वा	१२.	भोगकर के (तुम)
माम्	६.	मेरा	च	८.	तथा
यज्ञ	४.	यज्ञ के	इह	९.	इस संसार में
हृदयम्	५.	प्राण	आशिषः	११.	मनोरथों का
यज्ञैः	३.	यज्ञों से	सत्याः	१०.	चाहे गये
पुष्कल	१.	अधिक	अन्ते माम्	१३.	अन्त समय में मेरा
दक्षिणैः ।	२.	दक्षिणा वाले	संस्मरिष्यसि	१४.	स्मरण करोगे

श्लोकार्थ—अधिक दक्षिणा वाले यज्ञों से यज्ञ के प्राण मेरा यजन करके तथा इस संसार में चाहे गयें मनोरथों का भोग करके तुम अन्त समय में मेरा स्मरण करोगे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

ततो गन्तासि मत्स्थानं सर्वलोकनमस्कृतम् ।
उपरिष्टादृषिभ्यस्त्वं यतो नावर्तते गतः ॥२५॥

पदच्छेद—

ततः गन्तासि मत् स्थानम् सर्वलोक नमस्कृतम् ।
उपरिष्टात् ऋषिभ्यः त्वम् यतः न आवर्तते गतः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	उपरिष्टात्	९.	ऊपर है
गन्तासि	७.	जाओगे	ऋषिभ्यः	८.	जो ऋषि लोक से (भी)
मत्	५.	मेरे	त्वम्	२.	तुम
स्थानम्	६.	धाम को	यतः	१०	जहाँ
सर्वलोक	३.	सभी लोकों से	न आवर्तते	१२.	नहीं लौटता है
नमस्कृतम् ।	४.	पूजित	गतः ॥	११.	जाकर (कोई भी)

श्लोकार्थ—तदनन्तर तुम सभी लोकों से पूजित मेरे धाम को जाओगे, जो ऋषिलोक से भी ऊपर है; जहाँ जाकर कोई भी नहीं लौटता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इत्यर्चितः स भगवानतिदिश्यात्मनः पदम् ।
बालस्य पश्यतो धाम स्वमगाद्गरुडध्वजः ॥२६॥

पदच्छेद—

इति अर्चितः सः भगवान् अतिदिश्य आत्मनः पदम् ।
बालस्य पश्यतः धाम स्वम् अगात् गरुडध्वजः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	बालस्य	८.	बालक ध्रुव के
अर्चितः	२.	पूजित होकर	पश्यतः	९.	देखते-देखते
सः भगवान्	३.	वे भगवान्	धाम	११.	लोक को
अतिदिश्य	७.	निर्देश देकर	स्वम्	१०.	अपने
आत्मनः	५.	अपने	अगात्	१२.	चले गये
पदम् ।	६.	लोक का	गरुडध्वजः ॥	४.	गरुडध्वज

श्लोकार्थ—इस प्रकार पूजित होकर वे भगवान् गरुडध्वज अपने लोक का निर्देश देकर बालक ध्रुव के देखते-देखते अपने लोक को चले गये ॥

सप्तविंशः श्लोकः

सोऽपि संकल्पजं विष्णोः पादसेवोपसादितम् ।
प्राप्य संकल्पनिर्वाणं नातिप्रीतोऽभ्यगात्पुरम् ॥२७॥

पदच्छेद— सः अपि संकल्पजम् विष्णोः पादसेवा उपसादितम् ।
प्राप्य संकल्पनिर्वाणम् न अति प्रीतः अभ्यगात् पुरम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वे बालक ध्रुव जी	प्राप्य	८.	पाकर
अपि	२.	भी	संकल्पनिर्वाणम्	७.	कामना के फल को
संकल्पजम्	३.	संकल्प से उत्पन्न (तथा)	न	१०.	नहीं होते हुये
विष्णोः	४.	भगवान् श्री हरि के	अति प्रीतः	९.	बहुत प्रसन्न
पादसेवा	५.	चरणों की सेवा से	अभ्यगात्	१२.	चले गये
उपसादितम् ।	६.	प्राप्त	पुरम् ॥	११.	अपने नगर को

श्लोकार्थ—वे बालक ध्रुव जी भी संकल्प से उत्पन्न तथा भगवान् श्री हरि के चरणों की सेवा से प्राप्त कामना के फल को पाकर बहुत प्रसन्न नहीं होते हुये अपने नगर को चले गये ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

सुदुर्लभं यत्परमं पदं हरेर्मायाविनस्तच्चरणार्चनार्जितम् ।
लब्ध्वाप्यसिद्धार्थमिवैकजन्मना कथं स्वमात्मानममन्यतार्थवित् ॥२८॥

पदच्छेद—सुदुर्लभम् यत् परमम् पदम् हरेः मायाविनः तद् चरण अर्चना अर्जितम् ।
लब्ध्वा अपि असिद्धार्थम् इव एकजन्मना कथम् स्वम् आत्मानम् अमन्यत अर्थवित् ॥

शब्दार्थ—

सुदुर्लभम्	५.	अत्यन्त दुर्लभ	लब्ध्वा	११.	पाकर के
यत्	६.	जो	अपि	१२.	भी
परमम्	७.	सर्वोत्तम	असिद्धार्थम्	१६.	असफल मनुष्य के
पदम्	८.	पद है	इव	१७.	समान
हरेः	२.	भगवान् श्री हरि के	एकजन्मना	१०.	एक ही जन्म में
मायाविनः	१.	मायापति	कथम् स्वम्	१४.	कैसे स्वयम्
तद्	९.	उसे	आत्मानम्	१५.	अपने को
चरण अर्चना	३.	चरणों की सेवा से	अमन्यत	१८.	मानने लगे
अर्जितम् ।	४.	प्राप्त (तथा)	अर्थवित् ॥	१३.	पुरुषार्थ के जानकार (ध्रुव जी)

श्लोकार्थ—मायापति भगवान् श्री हरि के चरणों की सेवा से प्राप्त तथा अत्यन्त दुर्लभ जो सर्वोत्तम पद है उसे एक ही जन्म में पाकर के भी पुरुषार्थ के जानकार ध्रुव जी कैसे स्वयम् को असफल मनुष्य के समान मानने लगे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—मातुः सपत्न्या वाग्बाणैर्हृदि विद्धस्तु तान् स्मरन् ।
नैच्छन्मुक्तिपतेर्मुक्तिं तस्मात्तापमुपेयिवान् ॥२९॥

पदच्छेद— मातुः सपत्न्याः वाग्बाणैः हृदि विद्धः तु तान् स्मरन् ।
न ऐच्छत् मुक्तिपतेः मुक्तिम् तस्मात् तापम् उपेयिवान् ॥

शब्दार्थ—

मातुः	२.	माँ के	न	१०.	नहीं
सपत्न्याः	१.	(ध्रुव जी) सौतेली	ऐच्छत्	११.	इच्छा की
वाग्बाणैः	३.	वचनरूपी बाणों से	मुक्तिपतेः	८.	मुक्ति के स्वामी भगवान् से
हृदि	४.	हृदय में	मुक्तिम्	९	मोक्ष की
विद्धः	५.	चोट खाये हुये थे	तस्मात्	१२.	इसलिये (उन्हें)
तु	६.	इसलिये	तापम्	१३.	कष्ट
तान् स्मरन् ।	७.	उनका स्मरण हो आया	उपेयिवान् ॥	१४.	हुआ था

श्लोकार्थ—ध्रुव जी सौतेली माँ के वचनरूपी बाणों से हृदय में चोट खाये हुये थे । इसलिये उनका स्मरण हो आया और मुक्ति के स्वामी भगवान् से मोक्ष की इच्छा नहीं की । इसलिये उन्हें कष्ट हुआ था ।

त्रिंशः श्लोकः

ध्रुव उवाच—समाधिना नैकभवेन यत्पदं विदुः सनन्दादय ऊर्ध्वरेतसः ।
मासैरहं षड्भिरमुष्य पादयोश्छायामुपेत्यापगतः पृथङ्मतिः ॥३०॥

पदच्छेद— समाधिना नैक भवेन यत् पदम् विदुः सनन्द आदयः ऊर्ध्वरेतसः ।
मासैः अहम् षड्भिः अमुष्य पादयोः छायाम् उपेत्य अपगतः पृथक् मतिः ॥

शब्दार्थ—

समाधिना	६.	समाधि से	मासैः	१२.	महीनों में ही
नैक	४.	अनेक	अहम्	१०.	किन्तु (मैं)
भवेन	५.	जन्मों की	षड्भिः	११.	छः
यत्	७.	जिसके	अमुष्य	१३.	उन श्री हरि के
पदम्	८.	चरणों को	पादयोः छायाम्	१४.	चरणों की छाया को
विदुः	९.	जान सके थे	उपेत्य	१५.	प्राप्त करके
सनन्द	२.	सनक सनन्दन	अपगतः	१८.	दूर हो गया
आदयः	३.	सनत् कुमारादि	पृथक्	१६.	विषयों में आसक्त
ऊर्ध्वरेतसः ।	१.	बाल ब्रह्मचारी	मतिः ॥	१७.	बुद्धि होने के कारण (उनसे)

श्लोकार्थ—बाल ब्रह्मचारी सनक, सनन्दन, सनत्कुमार अनेक जन्मों की समाधि से जिनके चरणों को जान सके थे, उन श्री हरि के चरणों की छाया को मैं छः महीनों में ही प्राप्त करके विषयों में आसक्त बुद्धि होने के कारण उनसे दूर हो गया ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

अहो बत ममानात्म्यं मन्दभाग्यस्य पश्यत ।
भवच्छिदः पादमूलं गत्वायाचे यदन्तवत् ॥३१॥

पदच्छेद—

अहो बत मम अनात्म्यम् मन्द भाग्यस्य पश्यत ।
भव छिदः पाद मूलम् गत्वा अयाचे यत् अन्तवत् ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	अरे	छिदः	६.	काटने वाले श्री हरि के
बत	५.	तो	पाद	१०.	चरणों की
मम	२.	मुझ	मूलम्	११.	सन्निधि में
अनात्म्यम्	४.	मूर्खता	गत्वा	१२.	जाकर भी
मन्द भाग्यस्य	३.	अभागे की	अयाचे	१४.	याचना की
पश्यत ।	६.	देखो	यत्	७.	जो (मैंने)
भव	८.	संसार के बन्धन को	अन्तवत् ॥	१३.	नाशवान् वस्तु की

श्लोकार्थ—अरे ! मुझ अभागे की मूर्खता तो देखो जो मैंने संसार के बन्धन को काटने वाले श्री हरि के चरणों की सन्निधि में जाकर भी नाशवान् वस्तु की याचना की ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

मतिर्विदूषिता देवैः पतद्भिरसहिष्णुभिः ।
यो नारदवचस्तथ्यं नाग्राहिषमसत्तमः ॥३२॥

पदच्छेद—

मतिः विदूषिता देवैः पतद्भिः असहिष्णुभिः ।
यः नारद वचः तथ्यम् न अग्राहिषम् असत्तमः ॥

शब्दार्थ—

मतिः	४.	बुद्धि को	नारद	८.	देवर्षि नारद जी के
विदूषिता	५.	भ्रष्ट कर दिया था	वचः	१०.	वचन को
देवैः	३.	देवताओं ने (मेरी)	तथ्यम्	६.	यथार्थ
पतद्भिः	१.	अधोगामी (एवम्)	न	११.	नहीं
असहिष्णुभिः	२.	ईर्ष्यालु	अग्राहिषम्	१२.	स्वीकार किया
यः	६.	जो	असत्तमः ॥	७.	मुझ दुष्ट ने

श्लोकार्थ—अधोगामी एवम् ईर्ष्यालु देवताओं ने मेरी बुद्धि को भ्रष्ट कर दिया था, जो मुझ दुष्ट ने देवर्षिनारद जी के यथार्थ वचन को नहीं स्वीकार किया ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

दैवीं मायामुपाश्रित्य प्रसुप्त इव भिन्नदृक् ।
तप्ये द्वितीयेऽप्यसति भ्रातृभ्रातृव्यहृद्रुजा ॥३३॥

पदच्छेद— दैवीम् मायाम् उपाश्रित्य प्रसुप्त इव भिन्नदृक् ।
तप्ये द्वितीये अपि असति भ्रातृ भ्रातृव्य हृद् रुजा ।

शब्दार्थ—

दैवीम्	४.	भगवान् की	द्वितीये	२.	दूसरा कोई
मायाम्	५.	माया से	अपि	१.	यद्यपि (ब्रह्म के सिवाय)
उपाश्रित्य	६.	मोहित होकर	असति	३.	नहीं है (फिर भी)
प्रसुप्त	७.	सोये हुये के	भ्रातृ	१०.	भाई और
इव	८.	समान	भ्रातृव्य	११.	चाचा के
भिन्नदृक् ।	९.	भेद दृष्टि रखने वाला (मैं)	हृद्	१२.	द्वेषरूप हार्दिक
तप्ये	१४.	दुःखी हो रहा हूँ	रुजा ॥	१३.	रोग से

श्लोकार्थ—यद्यपि ब्रह्म के सिवाय दूसरा कोई नहीं है फिर भी भगवान् की माया से मोहित होकर सोये हुये के समान भेद दृष्टि रखने वाला मैं भाई और चाचा के द्वेष रूप हार्दिक रोग से दुःखी हो रहा हूँ ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

मयैतत्प्रार्थितं व्यर्थं चिकित्सेव गतायुषि ।
प्रसाद्य जगदात्मानं तपसा दुष्प्रसादनम् ।
भवच्छिदमयाचेऽहं भवं भाग्यविवर्जितः ॥३४॥

पदच्छेद— मया एतत् प्रार्थितम् व्यर्थम् चिकित्सा इव गता आयुषि ।
प्रसाद्य जगत् आत्मानम् तपसा दुष्प्रसादनम् ।
भवच्छिदम् अयाचे अहम् भवम् भाग्य विवर्जितः ॥

शब्दार्थ—

मया	५.	मैंने	जगत् आत्मानम्	७.	जगत् की आत्मा श्री हरि को
एतत्	१०.	यह	तपसा	८.	तपस्या से
प्रार्थितम्	१२.	कामना की	दुष्प्रसादनम् ।	६.	कठिनाई से प्रसन्न होने वाले
व्यर्थम्	११.	निष्फल	भवच्छिदम्	१६.	संसार बन्धन को काटने वाले
चिकित्सा	४	उपचार व्यर्थ है (उसी प्रकार)	अयाचे	१८.	याचना की
इव	१.	जैसे	अहम्	१५.	मैंने
गता	३.	हीन मनुष्य का	भवम्	१७.	भगवान् श्री हरि से संसार की
आयुषि	२.	आयु	भाग्य	१३.	भाग्य से
प्रसाद्य	९	प्रसन्न करके	विवर्जितः ॥	१४.	हीन होने के कारण

श्लोकार्थ—जैसे आयुहीन मनुष्य का उपचार व्यर्थ है; उसी प्रकार मैंने कठिनाई से प्रसन्न होने वाले जगत् की आत्मा श्री हरि को प्रसन्न करके यह निष्फल कामना की । भाग्य से हीन होने के कारण मैंने संसार बन्धन को काटने वाले भगवान् श्री हरि से संसार की याचना की ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

स्वाराज्यं यच्छतो मौढ्यान्मानो मे भिक्षितो बत ।
ईश्वरात्क्षीणपुण्येन फलीकारानिवाधनः ॥३५॥

पदच्छेद— स्वाराज्यम् यच्छतः मौढ्यात् मानः मे भिक्षितः बत ।
ईश्वरात् क्षीण पुण्येन फलीकारान् इव अधनः ॥

शब्दार्थ—

स्वाराज्यम्	३.	आत्मानन्द को	बत ।	८.	खेद है कि
यच्छतः	४.	देने वाले	ईश्वरात्	५.	भगवान् श्री हरि से
मौढ्यात्	९.	मूर्खतावश (मैंने)	क्षीण	७.	समाप्त हो जाने के कारण
मानः	११.	सम्मान को	पुण्येन	६.	पुण्यों के
मे	१०.	अपने	फलीकारान्	२.	चावल की कनी माँगता है वैसे ही
भिक्षितः	१२.	याचना की है	इव अधनः ॥	१.	जैसे कंगाल प्रसन्न हुये राजा से

श्लोकार्थ—जैसे कंगाल मनुष्य प्रसन्न हुये राजा से चावल की कनी माँगता है वैसे ही आत्मानन्द को देने वाले भगवान् श्री हरि से पुण्यों के समाप्त हो जाने के कारण खेद है कि मूर्खतावश मैंने अपने सम्मान की याचना की है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—न वै मुकुन्दस्य पदारविन्दयो रजोजुषस्तात भवादृशा जनाः ।
वाञ्छन्ति तद्दास्यमृतेऽर्थमात्मनो यदृच्छया लब्धमनःसमृद्धयः ॥३६॥

पदच्छेद—न वै मुकुन्दस्य पदारविन्दयोः रजः जुषः तात भवादृशाः जनाः ।
वाञ्छन्ति तद् दास्यम् ऋते अर्थम् आत्मनः यदृच्छया लब्ध मनः समृद्धयः ॥

शब्दार्थ—

न	१३.	न	वाञ्छन्ति	१५.	चाहते हैं (क्योंकि)
वै	१४.	ही	तद्	९.	उनके
मुकुन्दस्य	२.	भगवान् श्री हरि के	दास्यम्	१०.	सेवा-भाव के
पदारविन्दयोः	३.	चरण कमलों की	ऋते	११.	सिवाय
रजः	४.	धूली से	अर्थम्	१२.	सांसारिक विषय को
जुषः	५.	प्रीति करने वाले	आत्मनः	८.	अपने लिये
तात	१.	हे तात	यदृच्छया	१६.	उन्हें अपने आप ही
भवादृशाः	६.	आप जैसे	लब्ध	१८.	मिल जाती है
जनाः ।	७.	भक्तजन	मनः समृद्धयः ॥	१७.	मन को प्रसन्न करने की वस्तु

श्लोकार्थ—हे तात ! भगवान् श्री हरि के चरण कमलों की धूली से प्रीति करने वाले आप जैसे भक्त-जन अपने लिये उनके सेवा भाव के सिवाय सांसारिक विषय को नहीं चाहते हैं; क्योंकि उन्हें अपने आप ही मन को प्रसन्न करने की वस्तु मिल जाती है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

आकर्ण्यात्मजमायान्तं सम्परेत्य यथाऽऽगतम् ।
राजा न श्रद्दधे भद्रमभद्रस्य कुतो मम ॥३७॥

पदच्छेद—

आकर्ण्य आत्मजम् आयान्तम् सम्परेत्य यथा आगतम् ।
राजा न श्रद्दधे भद्रम् अभद्रस्य कुतः मम ॥

शब्दार्थ—

आकर्ण्य	३.	सुनकर	राजा	४.	राजा उत्तानपाद ने
आत्मजम्	१.	अपने पुत्र को (दूत से)	न श्रद्दधे	५.	विश्वास नहीं किया
आयान्तम्	२.	आते हुये	भद्रम्	११.	ऐसा भाग्य
सम्परेत्य	७.	मरकर (यमलोक से लौट)	अभद्रस्य	१०.	अभागे का
यथा	६.	जैसे (कोई)	कुतः	१२.	कहाँ है
आगतम् ।	८.	आने पर (विश्वास नहीं करता है)	मम ॥	९.	वे सोचने लगे मुझ

श्लोकार्थ—अपने पुत्र को (दूत से) आते हुये सुनकर राजा उत्तानपाद ने विश्वास नहीं किया। जैसे कोई मरकर यमलोक से लौट आने पर विश्वास नहीं करता है। वे सोचने लगे मुझ आभागे का ऐसा भाग्य कहाँ है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

श्रद्धाय वाक्यं देवर्षेर्हर्षवेगेन धर्षितः ।
वार्ताहर्तुरतिप्रीतो हारं प्रादान्महाधनम् ॥३८॥

पदच्छेद—

श्रद्धाय वाक्यम् देवर्षेः हर्ष वेगेन धर्षितः ।
वार्ता हर्तुः अति प्रीतः हारम् प्रादात् महाधनम् ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धाय	३.	विश्वास करके (राजा उत्तापाद)	वार्ता	९.	समाचार
वाक्यम्	२.	वचन पर	हर्तुः	१०.	लाने वाले को
देवर्षेः	१.	देवर्षिनारद के	अति	७.	अत्यन्त
हर्ष	४.	आनन्द के	प्रीतः	८.	प्रसन्न होकर
वेगेन	५.	प्रवाह से	हारम् प्रादात्	१२.	हार दिया
धर्षितः ।	६.	अधीर हो गये (तथा)	महाधनम् ॥	११.	बहुमूल्य

श्लोकार्थ—देवर्षिनारद के वचन पर विश्वास करके राजा उत्तानपाद आनन्द के प्रवाह से अधीर हो गये तथा समाचार लाने वाले को बहुमूल्य हार दिया ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

सदश्वं रथमारुह्य कार्तस्वरपरिष्कृतम् ।
ब्राह्मणैः कुलवृद्धैश्च पर्यस्तोऽमात्यबन्धुभिः ॥३९॥

पदच्छेद—

सद् अश्वम् रथम् आरुह्य कार्तस्वर परिष्कृतम् ।
ब्राह्मणैः कुल वृद्धैः च पर्यस्तः अमात्य बन्धुभिः ॥

शब्दार्थ—

सद्	३.	उत्तम	ब्राह्मणैः	७.	ब्राह्मण
अश्वम्	४.	घोड़ों से युक्त	कुल	८.	कुल के
रथम्	५.	रथपर	वृद्धैः	९.	वृद्धजन
आरुह्य	६.	चढ़कर (राजा उत्तानपाद)	च	११.	और
कार्तस्वर	१.	सुवर्ण से	पर्यस्तः	१२.	साथ (चल दिये)
परिष्कृतम् ।	२	मढे हुये (तथा)	अमात्य बन्धुभिः ॥	१०	मंत्री और बान्धवों के

श्लोकार्थ—सुवर्ण से मढे हुये तथा उत्तम घोड़ों से युक्त रथपर चढ़कर राजा उत्तानपाद ब्राह्मणकुल के वृद्धजन, मंत्री और बान्धवों के साथ चल दिये ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

शङ्खदुन्दुभिनादेन ब्रह्मघोषेण वेणुभिः ।
निश्चक्राम पुरात्तूर्णमात्मजाभीक्षणोत्सुकः ॥४०॥

पदच्छेद—

शङ्ख दुन्दुभिः नादेन ब्रह्म घोषेण वेणुभिः ।
निश्चक्राम पुरात् तूर्णम् आत्मज अभीक्षण उत्सुकः ॥

शब्दार्थ—

शंख	५.	शङ्ख (और)	निश्चक्राम	१२.	निकल गये
दुन्दुभिः	६.	नगाड़े की	पुरात्	११.	नगर से (बाहर)
नादेन	७.	आवाज (तथा)	तूर्णम्	१०.	शीघ्र
ब्रह्म	८.	वेद	आत्मज	१.	पुत्र के
घोषेण	९.	ध्वनि के साथ	अभीक्षणः	२.	दर्शन की
वेणुभिः	४.	वंशी	उत्सुकः ॥	३.	लालसा से (राजा उत्तानपाद)

श्लोकार्थ—पुत्र के दर्शन की लालसा से राजा उत्तानपाद वंशी, शङ्ख और नगाड़े की आवाज तथा वेद ध्वनि के साथ शीघ्र नगर से बाहर निकल गये ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

सुनीतिः सुरुचिश्चास्य महिष्यौ रुक्मभूषिते ।
आरुह्य शिबिकां सार्धमुत्तमेनाभिजग्मतुः ॥४१॥

पदच्छेद—

सुनीतिः सुरुचिः च अस्य महिष्यौ रुक्म भूषितः ।
आरुह्य शिबिकाम् सार्धम् उत्तमेन अभिजग्मतुः ॥

शब्दार्थ—

सुनीतिः	२.	सुनीति	भूषितः ।	७.	सजी हुई
सुरुचिः	४.	सुरुचि	आरुह्य	११.	चढ़कर
च	३.	और	शिबिकाम्	१०.	पालकी पर
अस्य	१.	राजा उत्तानपाद की	सार्धम्	९.	साथ
महिष्यौ	५.	दोनों पटरानियाँ	उत्तमेन	८.	राजकुमार उत्तम के
रुक्म	६.	सुवर्ण के आभूषणों से	अभिजग्मतुः ॥	१२.	चल पड़ीं

श्लोकार्थ—राजा उत्तानपाद की सुनीति और सुरुचि दोनों पटरानियाँ सुवर्ण के आभूषणों से सजी हुई राजकुमार उत्तम के साथ पालकी पर चढ़कर चल पड़ीं ।

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

तं दृष्ट्वोपवनाभ्याश आयान्तं तरसा रथात् ।
अवरुह्य नृपस्तूर्णमासाद्य प्रेमविह्वलः ॥४२॥

पदच्छेद—

तम् दृष्ट्वा उपवन अभ्याशे आयान्तम् तरसा रथात् ।
अवरुह्य नृपः तूर्णम् आसाद्य प्रेम विह्वलः ॥

शब्दार्थ—

तम्	१.	उन् ध्रुव जी को	अवरुह्य	८.	उतर पड़े (और)
दृष्ट्वा	५.	देख कर	नृपः	६.	राजा उत्तानपाद
उपवन	२.	बगीचे के	तूर्णम्	१०.	तत्काल
अभ्याशे	३.	समीप में	आसाद्य	९.	उन् ध्रुव जी को पाकर
आयान्तम्	४.	आते हुये	प्रेम	११.	प्रेम से
तरसा रथात् ।	७.	तुरन्त रथ से	विह्वलः ॥	१२.	अधीर हो गये

श्लोकार्थ—उन् ध्रुव जी को बगीचे के समीप में आते हुये देखकर राजा उत्तानपाद तुरन्त रथ से उतर पड़े और उन ध्रुव जी को पाकर तत्काल प्रेम से अधीर गये ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

परिरेभेऽङ्गजं दोर्भ्यां दीर्घोत्कण्ठमनाः श्वसन् ।
विष्वक्सेनाङ्घ्रिसंस्पर्शहताशेषाघबन्धनम् ॥४३॥

पदच्छेद—

परिरेभे अङ्गजम् दोर्भ्याम् दीर्घं उत्कण्ठमनाः श्वसन् ।
विष्वक्सेन अङ्घ्रि संस्पर्श हत अशेष अघ बन्धनम् ॥

शब्दार्थ—

परिरेभे	६.	आलिगन करके	विष्वकसेन	७.	भगवान् श्री हरि के
अङ्गजम्	५.	पुत्र ध्रुव का	अङ्घ्रि	८.	चरणों के
दोर्भ्याम्	४.	दोनों भुजाओं से	संस्पर्श	९.	स्पर्श से (ध्रुव जी के)
दीर्घं	१.	बहुत दिनों से मन में	हृत	१२.	समाप्त हो गये थे
उत्कण्ठमनाः	२.	लालसा रहने के कारण	अशेष अघ	१०.	सारे पापों के
श्वसन् ।	३.	लम्बी सांसे लेते हुये (राजा ने)	बन्धनम् ॥	११.	बन्धन

श्लोकार्थ—बहुत दिनों से मन में लालसा रहने के कारण साँसे लेते हुये राजा ने दोनों भुजाओं से पुत्र ध्रुव का आलिंगिन करके भगवान् श्री हरि के चरणों के स्पर्श से ध्रुव जी के सारे पापों के बन्धन समाप्त हो गये थे ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

अथाजिघ्रन्मुहुर्मूर्ध्नि शीतैर्नयनवारिभिः ।
स्नापयामास तनयं जातोद्दाममनोरथः ॥४४॥

पदच्छेद—

अथ अजिघ्रन् मुहुः मूर्ध्नि शीतैः नयन वारिभिः ।
स्नापयामास तनयम् जात उद्दाम मनोरथः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर (राजा उत्तान पाद)	वारिभिः ।	१०.	आंसुओं से
अजिघ्रन्	४.	सूंघने लगे (तथा)	स्नापयामास	१२.	भिगो दिया
मुहुः	३.	बार-बार	तनयम्	११.	पुत्र ध्रुव को
मूर्ध्नि	२.	ध्रुव के मस्तक को	जातः	७.	पूर्ण हो जाने से
शीतैः	९.	ठंडे-ठंडे	उद्दाम	५.	प्रबल
नयन	८.	आंखों के	मनोरथः ॥	६.	कामना

श्लोकार्थ—तदनन्तर राजा उत्तानपाद ध्रुव के मस्तक को बार-बार सूंघने लगे तथा प्रबल कामना के पूर्ण हो जाने से आँखों के ठंडे-ठंडे आंसुओं से पुत्र ध्रुव को भिगो दिया ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

अभिवन्द्य पितुः पादावाशीर्भिश्चाभिमन्त्रितः ।
ननाम मातरौ शीर्ष्णा सत्कृतः सज्जनाग्रणीः ॥४५॥

पदच्छेद—

अभिवन्द्य पितुः पादौ आशीर्भिः च अभिमन्त्रितः ।
ननाम मातरौ शीर्ष्णा सत् कृतः सज्जन अग्रणीः ॥

शब्दार्थ—

अभिवन्द्य	५.	प्रणाम करके	ननाम	१२.	प्रणाम किया
पितुः	३.	पिता राजा उत्तानपाद के	मातरौ	१०.	दोनों माताओं के
पादौ	४.	चरणों में	शीर्ष्णा	११.	सिर से
आशीर्भिः	७.	आशीर्वाद	सत् कृतः	९.	आदर पाकर
च	६.	तथा (उनसे)	सज्जन	१.	सज्जनों में
अभिमन्त्रितः।	८.	पाकर (और)	अग्रणीः ॥	२.	प्रधान (ध्रुव जी) ने

श्लोकार्थ—सज्जनों में प्रधान ध्रुव जी ने पिता राजा उत्तानपाद के चरणों में प्रणाम करके तथा उनसे आशीर्वाद और आदर पाकर दोनों माताओं को प्रणाम किया ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

सुरुचिस्तं समुत्थाप्य पादावनतमर्भकम् ।
परिष्वज्याह जीवेति बाष्पगद्गदया गिरा ॥४६॥

पदच्छेद—

सुरुचिः तम् समुत्थाप्य पादौ अवनतम् अर्भकम् ।
परिष्वज्य आह जीव इति बाष्प गद्गदया गिरा ॥

शब्दार्थ—

सुरुचिः	१.	सुरुचि ने	परिष्वज्य	७.	आलिंगिन करके
तम्	४.	उस	आह जीव	१२.	बोली पुत्र चिरंजीवी हो
समुत्थाप्य	६.	उठाकर (और)	इति	११.	इस प्रकार
पादौ	२.	पैरों में	बाष्प	८.	आँसुओं से
अवनतम्	३.	झुके हुये	गद्गदया	९.	लड़खड़ाती हुई
अर्भकम् ।	५.	बालक ध्रुव को	गिरा ॥	१०.	वाणी में

श्लोकार्थ—सुरुचि ने पैरों में झुके हुये उस बालक ध्रुव को उठाकर और आलिंगन करके आँसुओं से लड़खड़ाती हुई वाणी में इस प्रकार बोली—पुत्र ! चिरंजीवी हो ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

यस्य प्रसन्नो भगवान् गुणैर्मैत्र्यादिभिर्हरिः ।
तस्मै नमन्ति भूतानि निम्नमाप इव स्वयम् ॥४७॥

पदच्छेद—

यस्य प्रसन्नः भगवान् गुणैः मैत्री आदिभिः हरिः ।
तस्मै नमन्ति भूतानि निम्नम् आपः इव स्वयम् ॥

शब्दार्थ—

यस्य	६.	जिसके ऊपर	तस्मै	८.	उसके आगे
प्रसन्नः	७.	प्रसन्न होते हैं	नमन्ति	१०.	झुकते हैं
भगवान्	१.	भगवान्	भूतानि	९.	सभी प्राणी
गुणैः	५.	गुणों से	निम्नम्	१४.	नीचे की ओर जाता है
मैत्री	३.	प्रेम	आपः	१२.	जल
आदिभिः	४.	इत्यादि	इव	११.	जैसे
हरिः ।	२.	श्री हरि	स्वयम् ॥	१३.	अपने आप

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि प्रेम इत्यादि गुणों से जिसके ऊपर प्रसन्न होते हैं, उसके आगे सभी प्राणी झुकते हैं, जैसे जल अपने-आप नीचे की ओर जाता है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

उत्तमश्च ध्रुवश्चोभावन्योन्यं प्रेमविह्वलौ ।
अङ्गसङ्गादुत्पुलकावस्रौघं मुहुरूहतुः ॥४८॥

पदच्छेद—

उत्तमः च ध्रुवः च उभौ अन्योन्यम् प्रेम विह्वलौ ।
अङ्ग सङ्गात् उत् पुलकौ अस्र ओघम् मुहुः ऊहतुः ॥

शब्दार्थ—

उत्तमः	१.	उत्तम	अङ्ग	९.	शरीर के
च	२.	और	सङ्गात्	१०.	संस्पर्श से
ध्रुवः	३.	ध्रुव	उत्	१२.	हो गये (और)
च	७.	तथा	पुलकौ	११.	पुलकित
उभौ	४.	दोनों ही	अस्र	१४.	आँसुओं
अन्योन्यम्	८.	एक दूसरे के	ओघम्	१५.	धारा
प्रेम	५.	प्रेम में	मुहुः	१३.	बार-बार (आँखों से)
विह्वलौ ।	६.	अधीर होकर (मिले)	ऊहतुः ॥	१६.	बहाने लगे

श्लोकार्थ—उत्तम और ध्रुव दोनों ही प्रेम में अधीर होकर मिले तथा एक दूसरे के शरीर के संस्पर्श से पुलकित हो गये और बार-बार आंखों से आँसुओं की धारा बहाने लगे ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

सुनीतिरस्य जननी प्राणेभ्योऽपि प्रियं सुतम् ।
उपगुह्य जहावाधिं तदङ्गस्पर्शनिर्वृता ॥४९॥

पदच्छेद—

सुनीतिः अस्य जननी प्राणेभ्यः अपि प्रियम् सुतम् ।
उपगुह्य जहौ आधिम् तद् अङ्ग स्पर्श निर्वृता ॥

शब्दार्थ—

सुनीतिः	३. सुनीति		उपगुह्य	८.	गले लगाकर
अस्य	१. ध्रुव जी की		जहौ	१०.	छोड़ दी (और)
जननी	२. माता		आधिम्	९.	मनोव्यथा
प्राणेभ्यः	४. प्राणों से		तद्	११.	उनके
अपि	५. भी		अङ्ग	१२.	शरीर
प्रियम्	६. प्रिय		स्पर्श	१३.	स्पर्श से
सुतम् ।	७. पुत्र को		निर्वृता ॥	१४.	आनन्द मग्न हो गई

श्लोकार्थ—ध्रुव जी की माता सुनीति ने प्राणों से भी प्रिय पुत्र को गले लगाकर मनोव्यथा छोड़ दी और उनके शरीर के स्पर्श के आनन्द मग्न हो गई ॥

पञ्चाशः श्लोकः

पयः स्तनाभ्यां सुस्राव नेत्रजैः सलिलैः शिवैः ।
तदाभिषिच्यमानाभ्यां वीर वीरसुवो मुहुः ॥५०॥

पदच्छेद—

पयः स्तनाभ्याम् सुस्राव नेत्रजैः सलिलैः शिवैः ।
तदा अभिषिच्य मानाभ्याम् वीर वीरसुवः मुहुः ॥

शब्दार्थ—

पयः	११.	दूध	तदा	२.	उस समय
स्तानाभ्याम्	९.	स्तनों से	अभिषिच्य	७.	भीगते
सुस्राव	१२.	बहने लगा	मानाभ्याम्	८.	हुये
नेत्रजैः	४.	आँखों से उत्पन्न	वीर	१.	हे वीरवर विदुर जी
सलिलैः	६.	जल से	वीरसुवः	३.	वीर पुत्र की माता सुनीति के
शिवैः	५.	मंगलमय	मुहुः ॥	१०.	बार-बार

श्लोकार्थ—हे वीरवर विदुर जी ! उस समय वीर पुत्र की माता सुनीति की आँखों से उत्पन्न मंगलमय जल से भीगते हुये स्तनों से बार-बार दूध बहने लगा ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

तां शशंसुर्जना राज्ञीं दिष्ट्या ते पुत्र आर्तिहा ।
प्रतिलब्धश्चिरं नष्टो रक्षिता मण्डलं भुवः ॥५१॥

पदच्छेद—

ताम् शशंसुः जना राज्ञीम् दिष्ट्या ते पुत्रः आर्तिहा ।
प्रतिलब्धः चिरम् नष्टः रक्षिता मण्डलम् भुवः ॥

शब्दार्थ—

ताम्	१.	उन	आर्तिहा ।	११.	दुःख को दूर करेगा (तथा)
शशंसुः	४.	कहने लगे कि	प्रतिलब्धः	१०.	लौट आया है (यह)
जनाः	३.	पुरवासी लोग	चिरम्	५.	बहुत दिनों से
राज्ञीम्	२.	महारानी सुनीति से	नष्टः	६.	खोया हुआ
दिष्ट्या	९.	सौभाग्य से	रक्षिता	१४.	पालन करेगा
ते	७.	आपका	मण्डलम्	१३.	मण्डल का
पुत्रः ।	८.	पुत्र	भुवः ॥	१२.	पृथ्वी

श्लोकार्थ—उन महारानी सुनीति से पुरवासी लोग कहने लगे कि बहुत दिनों से खोया हुआ आपका पुत्र लौट आया है, यह दुःख को दूर करेगा तथा पृथ्वी मण्डल का पालन करेगा ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

अभ्यर्चितस्त्वया नूनं भगवान् प्रणतार्तिहा ।
यदनुध्यायिनो धीरा मृत्युं जिग्युः सुदुर्जयम् ॥५२॥

पदच्छेद—

अभ्यर्चितः त्वया नूनम् भगवान् प्रणत आर्तिहा ।
यद् अनुध्यायिनः धीरा मृत्युम् जिग्युः सुदुर्जयम् ॥

शब्दार्थ—

अभ्यर्चितः	६.	आराधना की है	यद्	७.	जिनका
त्वया	१.	आपने	अनुध्यायिनः	८.	ध्यान करने वाले
नूनम्	५	अवश्य ही	धीराः	९.	धीर पुरुष
भगवान्	४.	भगवान् श्री हरि की	मृत्युम्	११.	मृत्यु को
प्रणत	२.	शरणागत	जिग्युः	१२.	जीत लेते हैं
आर्तिहा ।	३.	भवभञ्जन	सुदुर्जयम् ॥	१०.	परम अजेय

श्लोकार्थ—आपने शरणागत भव भञ्जन भगवान् श्री हरि की अवश्य ही आराधना की है; जिनका ध्यान करने वाले धीर पुरुष परम अजेय मृत्यु को जीत लेते हैं ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

लाल्यमानं जनैरेवं ध्रुवं सभ्रातरं नृपः ।
आरोप्य करिणीं हृष्टः स्तूयमानोऽविशत्पुरम् ॥५३॥

पदच्छेद—

लाल्यमानम् जनैः एवम् ध्रुवम् सभ्रातरम् नृपः ।
आरोप्य करिणीम् हृष्टः स्तूयमानः अविशत् पुरम् ॥

शब्दार्थ—

लाल्यमानम्	३.	लाड़-प्यार किये जाते समय	आरोप्य	८.	बैठाकर
जनैः	१.	लोगों के द्वारा	करिणीम्	७.	हथिनी पर
एवम्	२.	इस प्रकार	हृष्टः	१०.	प्रसन्नता के साथ
ध्रुवम्	५.	ध्रुव को	स्तूयमानः	९.	बड़ाई सुनते हुये
सभ्रातरम्	६.	भाई उत्तम के साथ	अविशत्	१२.	प्रवेश किया
नृपः।	४.	राजा उत्तानपाद ने	पुरम् ॥	११.	नगर में

श्लोकार्थ— लोगों के द्वारा इस प्रकार राजा उत्तानपाद ने ध्रुव को भाई उत्तम के साथ हथिनी पर बैठाकर बड़ाई सुनते हुये प्रसन्नता के साथ नगर में प्रवेश किया ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

तत्र तत्रोपसंक्लृप्तैर्लसन्मकरतोरणैः ।
सवृन्दैः कदलीस्तम्भैः पूगपोतैश्च तद्विधैः ॥५४॥

पदच्छेद—

तत्र-तत्र उपसंक्लृप्तैः लसत् मकर तोरणैः ।
सवृन्दैः कदलीस्तम्भैः पूग पोतैः च तद् विधैः ॥

शब्दार्थ—

तत्र-तत्र	१.	नगर में जहाँ-तहाँ	सवृन्दैः	७.	फल सहित
उपसंक्लृप्तैः	५.	बनाये गये थे (और)	कदलीस्तम्भैः	८.	केले के खम्भे
लसत्	३.	सुन्दर	पूग पोतैः	१०.	सुपारी की बेलें (सजाई गई थीं)
मकर	२.	मगर के आकार के	च	९	और
तोरणैः।	४.	दरवाजे	तद् विधैः॥	६.	उसी आकार में

श्लोकार्थ— नगर में जहाँ-तहाँ मगर के आकार के सुन्दर दरवाजे बनाये गये थे और उसी आकार में फल सहित केले के खम्भे और सुपारी की बेलें सजाई गई थीं ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

चूतपल्लववासःस्रङ्मुक्तादामविलम्बिभिः ।
उपस्कृतं प्रतिद्वारमपां कुम्भैः सदीपकैः ॥५५॥

पदच्छेद—

चूत पल्लव वासः स्रक् मुक्तादाम विलम्बिभिः ।
उपस्कृतम् प्रतिद्वारम् अपाम् कुम्भैः सदीपकैः ॥

शब्दार्थ—

चूत	६. आम के	उपस्कृतम्	५. रक्खे गये थे (वे कलश)
पल्लव वासः	७. पत्ते वस्त्र	प्रतिद्वारम्	१. प्रत्येक दरवाजों पर
स्रक्	८. माला (और)	अपाम्	३. जल के
मुक्तादाम	९. मोतियों की माला से	कुम्भैः	४. कलश
विलम्बिभिः ।	१०. सजाये गये थे	सदीपकैः ।।	२. दीपक के साथ

श्लोकार्थ—प्रत्येक दरवाजे पर दीपक के साथ जल के कलश रक्खे गये थे । वे कलश आम के पत्ते, वस्त्र, माला और मोतियों की माला से सजाये गये थे ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

प्राकारैर्गोपुरागारैः शातकुम्भपरिच्छदैः ।
सर्वतोऽलंकृतं श्रीमद्विमानशिखरद्युभिः ॥५६॥

पदच्छेद—

प्राकारैः गोपुर आगारैः शातकुम्भ परिच्छदैः ।
सर्वतः अलंकृतम् श्रीमत् विमान् शिखर द्युभिः ॥

शब्दार्थ—

प्राकारैः	३. परकोटे	सर्वतः	७. चारों ओर से
गोपुर	४. दरवाजे (और)	अलंकृतम्	८. सुशोभित था (वहाँ)
आगारैः	५. महलों की	श्रीमत्	६. शोभा से सम्पन्न (वह नगर)
शातकुम्भ	१. सुवर्ण से	विमान	९. विमानों के समान
परिच्छदैः ।	२. मढे हुए	शिखर द्युभिः ॥	१०. महल के कंगूरे चमक रहे थे

श्लोकार्थ—सुवर्ण से मढे हुये परकोटे, दरवाजे और महलों की शोभा से सम्पन्न वह नगर चारों ओर से सुशोभित था । वहाँ विमानों के समान महल के कंगूरे चमक रहे थे ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

मृष्टचत्वररथ्याट्टमार्गं चन्दनचर्चितम् ।
लाजाक्षतैः पुष्पफलैस्तण्डुलैर्बलिभिर्युतम् ॥५७॥

पदच्छेद—

मृष्ट चत्वर रथ्या अट्ट मार्गम् चन्दन चर्चितम् ।
लाजा अक्षतैः पुष्प फलैः तण्डुलैः बलिभिः युतम् ॥

शब्दार्थ—

मृष्ट	५.	साफ किये गये थे (तथा)	लाजा	८.	जगह-जगह पर खील
चत्वर	१.	वहाँ के चौक	अक्षतैः	६.	चावल
रथ्या	२.	गलियाँ	पुष्प	१०.	फूल
अट्ट	३.	हाट	फलैः	११.	फल
मार्गम्	४.	रास्ते	तण्डुलैः	१२.	जौ (और)
चन्दन	६.	चन्दन का	बलिभिः	१३.	मांगलिक वस्तुयें
चर्चितम् ।	७.	छिड़काव किया गया था	युतम् ॥	१४.	रखी गईं थी

श्लोकार्थ—वहाँ के चौक, गलियाँ, हाट, रास्ते साफ किये गये थे तथा चन्दन का छिड़काव किया गया था । जगह-जगह पर खील, चावल, फल, फूल, जौ और मांगलिक वस्तुयें रखी गईं थीं ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

ध्रुवाय पथि दृष्टाय तत्र तत्र पुरस्त्रियः ।
सिद्धार्थाक्षतदध्यम्बुदूर्वापुष्पफलानि च ॥५८॥

पदच्छेद—

ध्रुवाय पथि दृष्टाय तत्र तत्र पुर स्त्रियः ।
सिद्धार्थ अक्षत दधि अम्बु दूर्वा पुष्प फलानि च ॥

शब्दार्थ—

ध्रुवाय	५.	ध्रुव जी को	अक्षत	८.	चावल
पथि	४.	सड़क पर	दधि	६.	दही
दृष्टाय	६.	देखकर (उन पर)	अम्बु	१०.	जल
तत्र-तत्र	१.	उन-उन दरवाजों पर	दूर्वा	११.	दूर्वा
पुर	२.	नगर की	पुष्प	१२.	फूल
स्त्रियः ।	३.	सुन्दरियाँ	फलानि	१४.	फलों की वर्षा करने लगीं
सिद्धार्थ	७.	सफेद सरसों	च ॥	१२.	और

श्लोकार्थ—उन-उन दरवाजों पर नगर की सुन्दरियाँ सड़क पर ध्रुव जी को देखकर उन पर सफेद सरसों, चावल, दही, जल, दूर्वा, फूल और फलों की वर्षा करने लगीं ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

उपजह्रुः प्रयुञ्जाना वात्सल्यादाशिषः सतीः ।
शृण्वंस्तद्वल्गुगीतानि प्राविशद्भवनं पितुः ॥५९॥

पदच्छेद—

उपजह्रुः प्रयुञ्जानाः वात्सल्यात् आशिषः सतीः ।
शृण्वन् तद् वल्गु गीतानि प्राविशत् भवनम् पितुः ॥

शब्दार्थ—

उपजह्रुः	५.	उपहार देने लगीं	तद्	६.	उनके
प्रयुञ्जानाः	४.	बोलती हुई	वल्गु	७.	मनोहर
वात्सल्यात्	१.	(वे शीलवती स्त्रियां) स्नेहभाव से	गीतानि	८.	गीतों को
आशिषः	३.	आशीर्वचन	प्राविशत्	१२.	प्रवेश किया
सतीः ।	२.	शुभ	भवनम्	११.	भवन में
शृण्वन्	९.	सुनते हुये (ध्रुव जी ने)	पितुः ॥	१०.	पिता के

श्लोकार्थ—वे शीलवती स्त्रियाँ स्नेह भाव से शुभ आशीर्वचन बोलती हुई उपहार देने लगीं और उनके मनोहर गीतों को सुनते हुये ध्रुव जी ने पिता के भवन में प्रवेश किया ॥

षष्टितमः श्लोकः

महामणिव्रातमये स तस्मिन् भवनोत्तमे ।
लालितो नितरां पित्रा न्यवसद्दिवि देववत् ॥६०॥

पदच्छेद—

महामणि व्रातमये सः तस्मिन् भवन उत्तमे ।
लालितः नितराम् पित्रा न्यवसत् दिवि देववत् ॥

शब्दार्थ—

महामणि	१.	बहुमूल्य मणि की	लालितः	९.	लाड़-प्यार पाकर
व्रातमये	२.	लड़ियों से सुसज्जित	नितराम्	८.	बहुत
सः	६.	ध्रुव जी ने	पित्रा	७.	पिता का
तस्मिन्	३.	उस	न्यवसत्	१२.	निवास किया
भवन	५.	राज भवन में	दिवि	१०.	देव लोक में
उत्तमे ।	४.	श्रेष्ठ	देववत् ॥	११.	देवताओं के समान

श्लोकार्थ—बहुमूल्य मणि की लड़ियों से सुसज्जित उस श्रेष्ठ राजभवन में ध्रुव जी ने पिता का बहुत लाड़-प्यार पाकर देवलोक में देवताओं के समान निवास किया ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

पयः फेननिभाः शय्या दान्ता रुक्मपरिच्छदाः ।
आसनानि महार्हाणि यत्र रौक्मा उपस्कराः ॥६१॥

पदच्छेद—

पयः फेन निभाः शय्याः दान्ताः रुक्म परिच्छदाः ।
आसनानि महार्हाणि यत्र रौक्माः उपस्कराः ॥

शब्दार्थ—

पयः	२. दूध के		परिच्छदाः ।	८. चादरें बिछी थीं (तथा)
फेन	३. झाग के समान		आसनानि	१०. आसन (और)
निभाः	४. सफेद		महार्हाणि	९. बहुमूल्य
शय्याः	६. पलंग पर		यत्र	१. जहाँ पर
दान्ताः	५. हाथी दाँत से बने		रौक्माः	११. सुवर्ण की
रुक्म	७. सुनहले वर्ण की		उपस्कराः ॥	१२. अनेकों वस्तुयें थीं

श्लोकार्थ——जहाँ पर दूध के झाग के समान सफेद हाथी दाँत से बने पलंग पर सुनहले वर्ण की चादरें बिछी थीं तथा बहुमूल्य आसन और सुवर्ण की अनेकों वस्तुयें थीं ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

यत्र स्फटिककुड्येषु महामारकतेषु च ।
मणिप्रदीपा आभान्ति ललनारत्नसंयुताः ॥६२॥

पदच्छेद—

यत्र स्फटिक कुड्येषु महा मारकतेषु च ।
मणि प्रदीपाः आभान्ति ललना रत्न संयुताः ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१. जहाँ पर		मणि	१०. मणियों के
स्फटिक	२. स्फटिक		प्रदीपाः	११. दीपक
कुड्येषु	६. दीवारों पर		आभान्ति	१२. जल रहे थे
महा	४. बहुमूल्य		ललना	८. स्त्रियों के
मारकतेषु	५. पन्ने की		रत्न	७. रत्नों से बनी
च ।	३. और		संयुताः ॥	९. हाथों में रक्खे हुये

श्लोकार्थ—जहाँ पर स्फटिक और बहुमूल्य पन्ने की दीवारों पर रत्नों से बनी स्त्रियों के हाथों में रक्खे हुये मणियों के दीपक जल रहे थे ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

उद्यानानि च रम्याणि विचित्रैरमरद्रुमैः ।
कूजद्विहङ्गमिथुनैर्गायन्मत्तमधुव्रतैः ॥६३॥

पदच्छेद—

उद्यानानि च रम्याणि विचित्रैः अमर द्रुमैः ।
कूजत् विहङ्ग मिथुनैः गायन् मत्त मधुव्रतैः ॥

शब्दार्थ—

उद्यानानि	५.	उपवन था (जिसमें)	कूजत्	८.	कलरव कर रहे थे
च	६.	और	विहङ्ग	७.	पक्षी
रम्याणि	४.	मनोहर	मिथुनैः	६.	नर और मादा
विचित्रैः	१.	अनेकों प्रकार के	गायन्	१२.	गुञ्जार कर रहे थे
अमर	२.	दिव्य	मत्त	१०.	मतवाले
द्रुमैः ।	३.	वृक्षों से	मधुव्रतैः ॥	११.	भौंरे

श्लोकार्थ—अनेकों प्रकार के दिव्य वृक्षों से मनोहर उपवन था जिसमें नर और मादा पक्षी कलरव कर रहे थे और मतवाले भौंरे गुञ्जार कर रहे थे ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

वाप्यो वैदूर्यसोपानाः पद्मोत्पलकुमुद्वतीः ।
हंसकारण्डवकुलैर्जुष्टाश्चक्राह्वसारसैः ॥६४॥

पदच्छेद—

वाप्यः वैदूर्य सोपानाः पद्म उत्पल कुमुद्वतीः ।
हंस कारण्डव कुलैः जुष्टाः चक्राह्व सारसैः ॥

शब्दार्थ—

वाप्यः	१.	वहाँ की बावलियों में	हंस	७.	हंस
वैदूर्य	२.	पुखराज की	कारण्डव	८.	कारण्डव पक्षी का
सोपानाः	३.	सीढ़ियाँ बनी थीं (उनमें)	कुलैः	९.	समुदाय
पद्म	४.	लाल	जुष्टाः	१२.	क्रीड़ा कर रहे थे
उत्पल	५.	नीले (और)	चक्राह्व	१०.	चकवा (एवं)
कुमुद्वतीः ।	६.	सफेद कमल खिले थे (तथा)	सारसैः ॥	११.	सारस

श्लोकार्थ—वहाँ की बावलियों में पुखराज की सीढ़ियाँ बनी थीं । उनमें लाल नीले और सफेद कमल खिले थे तथा हंस, कारण्डव पक्षी का समुदाय, चकवा एवं सारस क्रीड़ा कर रहे थे ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

उत्तानपादो राजर्षिः प्रभावं तनयस्य तम् ।
श्रुत्वा दृष्ट्वाद्भुततमं प्रपेदे विस्मयं परम् ॥६५॥

पदच्छेद—

उत्तानपादः राजर्षिः प्रभावम् तनयस्य तम् ।
श्रुत्वा दृष्ट्वा अद्भुततमम् प्रपेदे विस्मयम् परम् ॥

शब्दार्थ—

उत्तानपादः	२.	उत्तानपाद ने (नारद जी से)	श्रुत्वा	५.	सुना था (किन्तु)
राजर्षिः	१.	राजर्षि	दृष्ट्वा	८.	देख कर
प्रभावम्	४.	प्रभाव को	अद्भुततमम्	७.	और अनोखा
तनयस्य	३.	अपने पुत्र के	प्रपेदे	११.	पड़ गये
तम् ।	६.	उसे	विस्मयम्	१०.	आश्चर्य में
			परम् ॥	९.	बड़े

श्लोकार्थ—राजर्षि उत्तानपाद ने अपने पुत्र के प्रभाव को सुना था किन्तु उसे और अनोखा देखकर बड़े आश्चर्य में पड़ गये ॥

षट्षष्टितमः श्लोकः

वीक्ष्योढवयसं तं च प्रकृतीनां च सम्मतम् ।
अनुरक्तप्रजं राजा ध्रुवं चक्रे भुवः पतिम् ॥६६॥

पदच्छेद—

वीक्ष्य ऊढ वयसम् तम् च प्रकृतीनाम् च सम्मतम् ।
अनुरक्त प्रजम् राजा ध्रुवम् चक्रे भुवः पतिम् ॥

शब्दार्थ—

वीक्ष्य	१०.	देखकर	अनुरक्त	९.	अनुराग
ऊढ	३.	तरुण	प्रजम्	८.	प्रजा का
वयसम्	४.	अवस्था	राजा	१.	राजा उत्तानपाद ने
तम्	११.	उन्हें	ध्रुवम्	२.	ध्रुव की
च प्रकृतीनाम्	५.	और (उनके प्रति) मंत्रियों के	चक्रे	१४.	बना दिया
च	७.	तथा	भुवः	१२	सारी पृथ्वी का
सम्मतम् ।	६.	समादर	पतिम् ॥	१३.	राजा

श्लोकार्थ—राजा उत्तानपाद ने ध्रुव की तरुण अवस्था और उनके प्रति मन्त्रियों के समादर तथा प्रजा का अनुराग देखकर उन्हें सारी पृथ्वी का राजा बना दिया ॥

सप्तषष्टितमः श्लोकः

आत्मानं च प्रवयसमाकलय्य विशाम्पतिः ।
वनं विरक्तः प्रातिष्ठद्विमृशन्नात्मनो गतिम् ॥६७॥

पदच्छेद—

आत्मानम् च प्रवयसम् आकलय्य विशाम्पतिः ।
वनम् विरक्तः प्रातिष्ठत् विमृशन् आत्मनः गतिम् ॥

शब्दार्थ—

आत्मानम्	२.	अपने को	वनम्	९.	वन में
च	१.	तथा	विरक्तः	६.	संन्यास लेकर
प्रवयसम्	३.	वृद्ध	प्रातिष्ठत्	१०.	चले गये
आकलय्य	४.	समझ कर	विमृशन्	८.	ध्यान करने के लिये
विशाम्पतिः ।	५.	प्रजाओं के स्वामी (राजा उत्तानपाद)	आत्मनः गतिम् ॥	७.	आत्मा के स्वरूप का

श्लोकार्थ—तथा अपने को वृद्ध समझ कर प्रजाओं के स्वामी राजा उत्तानपाद संन्यास लेकर आत्मा के स्वरूप का ध्यान करने के लिये वन में चले गये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे ध्रुवराज्याभिषेक-वर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥९॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

दशमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—प्रजापतेर्दुहितरं शिशुमारस्य वै ध्रुवः।
उपयेमे भ्रमिं नाम तत्सुतौ कल्पवत्सरौ ॥१॥

पदच्छेद—

प्रजापतेः दुहितरम् शिशुमारस्य वै ध्रुवः।
उपयेमे भ्रमिम् नाम तत् सुतौ कल्प वत्सरौ ॥

शब्दार्थ—

प्रजापतेः	२.	प्रजापति	भ्रमिम्	४.	भ्रमि
दुहितरम्	६.	पुत्री से	नाम	५.	नाम की
शिशुमारस्य	३.	शिशुमार की	तत्	८.	उससे
वै	१२.	उत्पन्न हुये	सुतौ	११.	दो पुत्र
ध्रुवः।	१.	ध्रुव जी ने	कल्प	९.	कल्प (और)
उपयेमे	७.	विवाह किया	वत्सरौ ॥	१०.	वत्सर नाम के

श्लोकार्थ—ध्रुव जी ने प्रजापति शिशुमार की भ्रमि नाम की पुत्री से विवाह किया। उससे कल्प और वत्सर नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुये ॥

द्वितीयः श्लोकः

इलायामपि भार्यायां वायोः पुत्र्यां महाबलः।
पुत्रमुत्कलनामानं योषिद्रत्नमजीजनत् ॥२॥

पदच्छेद—

इलायाम् अपि भार्यायाम् वायोः पुत्र्याम् महाबलः।
पुत्रम् उत्कल नामानम् योषित् रत्नम् अजीजनत् ॥

शब्दार्थ—

इलायाम्	५.	इला से	पुत्रम्	९.	पुत्र और
अपि	६.	भी	उत्कल	७.	उत्कल
भार्यायाम्	२.	(दूसरी) पत्नी	नामानम्	८.	नाम का
वायोः	३.	वायु की	योषित्	१०.	एक कन्या
पुत्र्याम्	४.	पुत्री	रत्नम्	११.	रत्न
महाबलः।	१.	महाबली ध्रुव जी की	अजीजनत् ॥	१२.	उत्पन्न हुई

श्लोकार्थ—महाबली ध्रुव जी की दूसरी पत्नी वायु की पुत्री इला से भी उत्कल नाम का पुत्र और एक कन्या रत्न उत्पन्न हुई ॥

तृतीयः श्लोकः

उत्तमस्त्वकृतोद्वाहो मृगयायां बलीयसा।
हतः पुण्यजनेनाद्रौ तन्मातास्य गतिं गता ॥३॥

पदच्छेद—

उत्तमः तु अकृत उद्वाहः मृगयायाम् बलीयसा।
हतः पुण्यजनेन अद्रौ तद् माता अस्य गतिम् गता ॥

शब्दार्थ—

उत्तमः	१.	उत्तम जी का	पुण्यजनेन	७.	यक्ष के द्वारा
तु	९.	तदनन्तर	अद्रौ	५.	पर्वत पर
अकृत	३.	नहीं हुआ था	तद्	१०.	उनकी
उद्वाहः	२.	विवाह	माता	११.	माता सुरुचि ने (भी)
मृगयायाम्	४.	शिकार खेलते समय	अस्य	१२.	उन्हीं की
बलीयसा।	६.	बलवान्	गतिम्	१३.	गति को
हतः	८.	मारे गये	गता।	१४.	प्राप्त किया

श्लोकार्थ—उत्तम जी का विवाह नहीं हुआ था। एकबार वे शिकार खेलते समय पर्वत पर किसी बलवान् यक्ष के द्वारा मारे गये। तदनन्तर उनकी माता सुरुचि ने भी उन्हीं की गति को प्राप्त किया (अर्थात् मर गयी) ॥

चतुर्थः श्लोकः

ध्रुवो भ्रातृवधं श्रुत्वा कोपामर्षशुचार्पितः।
जैत्रं स्यन्दनमास्थाय गतः पुण्यजनालयम् ॥४॥

पदच्छेद—

ध्रुवः भ्रातृ वधम् श्रुत्वा कोप अमर्ष शुचा अर्पितः।
जैत्रम् स्यन्दनम् आस्थाय गतः पुण्यजन आलयम् ॥

शब्दार्थ—

ध्रुवः	१.	ध्रुव जी	अर्पितः।	८.	भर गये (तथा)
भ्रातृ	२.	(अपने) भाई का	जैत्रम्	९.	विजय दिलाने वाले
वधम्	३.	वध	स्यन्दनम्	१०.	रथ पर
श्रुत्वा	४.	सुनकर	आस्थाय	११.	बैठकर
कोप	५.	क्रोध	गतः	१४.	पहुँचे
अमर्ष	६.	उद्वेग (और)	पुण्यजन	१२.	यक्षों की
शुचा	७.	शोक से	आलयम् ॥	१३.	नगरी में

श्लोकार्थ—ध्रुव जी अपने भाई का वध सुनकर क्रोध, उद्वेग और शोक से भर गये तथा विजय दिलाने वाले रथ पर बैठकर यक्षों की नगरी में पहुँचे।

पञ्चमः श्लोकः

गत्वोदीचीं दिशं राजा रुद्रानुचरसेविताम् ।
ददर्श हिमवद्द्रोण्यां पुरीं गुह्यकसंकुलाम् ॥५॥

पदच्छेद—

गत्वा उदीचीम् दिशम् राजा रुद्र अनुचर सेविताम् ।
ददर्श हिमवत् द्रोण्याम् पुरीम् गुह्यक संकुलाम् ॥

शब्दार्थ—

गत्वा	३.	जाकर	ददर्श	१३.	देखी
उदीचीम्	१.	उत्तर	हिमवत्	५.	हिमालय की
दिशम्	२.	दिशा में	द्रोण्याम्	६.	घाटी में
राजा	४.	राजा ध्रुव ने	पुरीम्	१२.	नगरी
रुद्र	७.	भगवान् शिव के	गुह्यक	१०.	यक्षों से
अनुचर	८.	सेवकों से	संकुलाम् ॥	११.	भरी हुई
सेविताम् ।	९.	रक्षित			

श्लोकार्थ—उत्तर दिशा में जाकर राजा ध्रुव ने हिमालय की घाटी में भगवान् शिव के सेवकों से रक्षित यक्षों से भरी हुई नगरी देखी ॥

षष्ठः श्लोकः

दध्मौ शङ्खं बृहद्बाहुः खं दिशश्चानुनादयन् ।
येनोद्विग्नदृशः क्षत्तरुपदेव्योऽत्रसन्भृशम् ॥६॥

पदच्छेद—

दध्मौ शङ्खम् बृहद् बाहुः खम् दिशः च अनुनादयन् ।
येन उद्विग्न दृशः क्षत्तः उपदेव्यः अत्रसन् भृशम् ॥

शब्दार्थ—

दध्मौ	५.	बजाया	येन	६.	जिससे
शङ्खम्	४.	शङ्ख को	उद्विग्न	१५.	घबड़ायी
बृहद्	२.	महा	दृशः	१४.	आंखों से (देखा)
बाहुः	३.	बाहु (ध्रुव ने अपने)	क्षत्तः	१.	हे विदुर जी
खम्	७.	आकाश	उपदेव्यः	११.	यक्षों की स्त्रियां
दिशः	९.	दिशायें	अत्रसन्	१३.	डर गईं (और)
च	८.	और	भृशम् ॥	१२.	बहुत
अनुनादयन् ।	१०.	गूंज गईं			

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! महाबाहु ध्रुव ने अपने शङ्ख को बजाया, जिससे आकाश और दिशायें गूंज गईं, यक्षों की स्त्रियां बहुत डर गईं और उन्होंने घबड़ायी आंखों से देखा ॥

सप्तमः श्लोकः

ततो निष्क्रम्य बलिन उपदेवमहाभटाः ।
असहन्तस्तन्निनादमभिपेतुरुदायुधाः ॥७॥

पदच्छेद—

ततः निष्क्रम्य बलिनः उपदेव महाभटाः ।
असहन्त तद् निनादम् अभिपेतुः उदायुधाः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	असहन्तः	७.	नहीं सहते हुए
निष्क्रम्य	८.	(घरों से) निकलकर (और)	तद्	५.	उस शंख की
बलिनः	३.	बलवान्	निनादम्	६.	ध्वनि को
उपदेव	२.	यक्षों के	अभिपेतुः	१०.	(उन पर) टूट पड़े
महाभटाः ।	४.	महावीर	उदायुधाः ॥	९.	हथियार उठाकर

श्लोकार्थ—तदनन्तर यक्षों के बलवान् महावीर उस शंख-ध्वनि को नहीं सहते हुए घरों से निकलकर और हथियार उठाकर उन पर टूट पड़े ।

अष्टमः श्लोकः

स तानापततो वीर उग्रधन्वा महारथः ।
एकैकं युगपत्सर्वानहन् बाणैस्त्रिभिस्त्रिभिः ॥८॥

पदच्छेद—

सः तान् आपततः वीरः उग्र धन्वा महारथः ।
एकैकम् युगपत् सर्वान् अहन् बाणैः त्रिभिः त्रिभिः ॥

शब्दार्थ—

सः	५.	वे (ध्रुव जी)	एकैकम्	१०.	हर एक को
तान्	७.	उन	युगपत्	९.	एक साथ
आपततः	६.	सामने आते हुये	सर्वान्	८.	सबों पर
वीरः	४.	वीर	अहन्	१४.	मारे
उग्र	१.	प्रचण्ड	बाणैः	१३.	बाण
धन्वा	२.	धनुर्धर	त्रिभिः	११.	तीन
महारथः ।	३.	महारथी	त्रिभिः ॥	१२.	तीन

श्लोकार्थ—प्रचण्ड धनुर्धर महारथी वीर वे ध्रुव जी सामने आते हुये उन सबों पर हर एक को तीन-तीन बाण मारे ॥

नवमः श्लोकः

ते वै ललाटलग्नैस्तैरिषुभिः सर्व एव हि ।
मत्वा निरस्तमात्मानमाशंसन् कर्म तस्य तत् ॥९॥

पदच्छेद—

ते वै ललाट लग्नैः तैः इषुभिः सर्व एव हि ।
मत्वा निरस्तम् आत्मानम् आशंसन् कर्म तस्य तत् ॥

शब्दार्थ—

ते	४.	वे	मत्वा	१०.	मान कर
वै	७.	निश्चित ही	निरस्तम्	९.	पराजित
ललाट	१.	मस्तक पर	आत्मानम्	८.	अपने को
लग्नैः	२.	लगे हुये	आशंसन्	१४.	प्रशंसा करने लगे
तैः इषुभिः	३.	उन बाणों के कारण	कर्म	१३.	कर्म की
सर्व	५.	सभी	तस्य	११.	ध्रुव जी के
एव हि ।	६.	ही यक्षों के वीर	तत् ॥	१२.	उस अद्भुत

श्लोकार्थ—मस्तक पर लगे हुये उन बाणों के कारण वे सभी ही यक्षों के वीर निश्चित ही अपने को पराजित मानकर ध्रुव जी के उस अद्भुत कर्म की प्रशंसा करने लगे ॥

दशमः श्लोकः

तेऽपि चामुममृष्यन्तः पादस्पर्शमिवोरगाः ।
शरैरविध्यन् युगपद् द्विगुणं प्रचिकीर्षवः ॥१०॥

पदच्छेद—

ते अपि च अमुम् अमृष्यन्तः पाद स्पर्शम् इव उरगः ।
शरैः अविध्यन् युगपत् द्विगुणम् प्रचीकीर्षवः ॥

शब्दार्थ—

ते	६.	वे यक्ष	इव	१.	जैसे
अपि	७.	भी	उरगः ।	४.	सर्प (सहन नहीं करता है)
च	५.	उसी प्रकार	शरैः	१३.	छः-छः बाण
अमुम्	८.	उसे	अविध्यन्	१४.	छोड़े
अमृष्यन्तः	९.	नहीं सह सके (और)	युगपत्	१२.	एक साथ
पाद	२.	पैर से	द्विगुणम्	१०.	उनसे दुगना
स्पर्शम्	३.	छू जाने पर	प्रचीकीर्षवः ॥	११.	प्रहार करने की इच्छा से

श्लोकार्थ—जैसे पैर से छू जाने पर सर्प सहन नहीं करता है; उसी प्रकार वे यक्ष भी उसे नहीं सह सके और उनसे दुगना प्रहार करने की इच्छा से एक साथ छः-छः बाण छोड़े ॥

एकादशः श्लोकः

ततः परिघनिस्त्रिंशैः प्रासशूलपरश्वधैः ।
शक्त्यृष्टिभिर्भुशुण्डीभिश्चित्रवाजैः शरैरपि ॥११॥

पदच्छेद—

ततः परिघ निस्त्रिंशैः प्रास शूल परश्वधैः ।
शक्ति ऋष्टिभिः भुशण्डीभिः चित्र वाजैः शरैः अपि ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर (यक्षों ने)	शक्ति	७.	शक्ति
परिघ	२.	परिघ	ऋष्टिभिः	८.	ऋष्टि
निस्त्रिंशैः	३.	तलवार	भुशुण्डीभिः	९.	बन्दूक और
प्रास	४.	प्रास	चित्र वाजैः	१०.	अद्भुत पंख वाले
शूल	५.	त्रिशूल	शरैः	११.	बाणों की
परश्वधैः ।	६.	फरसा	अपि ॥	१२.	भी वर्षा की

श्लोकार्थ—तदनन्तर यक्षों ने परिघ, तलवार, प्रास, त्रिशूल, फरसा, शक्ति, ऋष्टि, बन्दूक और अद्भुत पंख वाले बाणों की भी वर्षा की ॥

द्वादशः श्लोकः

अभ्यवर्षन् प्रकुपिताः सरथं सहसारथिम् ।
इच्छन्तस्तत्प्रतीकर्तुमयुतानि त्रयोदश ॥१२॥

पदच्छेद—

अभ्यवर्षन् प्रकुपिताः सरथम् सह सारथिम् ।
इच्छन्तः तत् प्रतीकर्तुम् अयुतानि त्रयोदश ॥

शब्दार्थ—

अभ्यवर्षन्	१०.	शस्त्रों की वर्षा की	इच्छन्तः	३.	इच्छा से
प्रकुपिताः	६.	क्रुद्ध होकर	तत्	१.	ध्रुव जी का
सरथम्	७.	रथ और	प्रतिकर्तुम्	२.	बदला लेने की
सह	९.	सहित (उन पर)	अयुतानि	५.	अयुत यक्षों ने (एक लाख)
सारथिम् ।	८.	सारथी के	त्रयोदश ॥	४.	तेरह (तीस हजार)

श्लोकार्थ—ध्रुव जी का बदला लेने की इच्छा से तेरह अयुत यक्षों (एक लाख तीस हजार) ने क्रुद्ध होकर रथ और सारथी के सहित उन पर शस्त्रों की वर्षा की ॥

त्रयोदशः श्लोकः

औत्तानपादिः स तदा शस्त्रवर्षेण भूरिणा ।
न उपादृश्यतच्छन्न आसारेण यथा गिरिः ॥१३॥

पदच्छेद—

औत्तानपादिः सः तदा शस्त्र वर्षेण भूरिणा ।
न उपादृश्यत छन्नः आसारेण यथा गिरिः ॥

शब्दार्थ—

औत्तानपादिः	५. ध्रुव जी	न	८. नहीं
सः	७. वे (ऐसे)	उपादृश्यत	९. दिखाई देते थे
तदा	१. उस समय	छन्नः	६. ढक गये (और)
शस्त्र	२. शस्त्रों की	आसारेण	११. भारी वर्षा से
वर्षेण	४. वर्षा से	यथा	१०. जैसे
भूरिणा ।	३. भयंकर	गिरिः ॥	१२. पर्वत (दिखाई नहीं देता है)

श्लोकार्थ—उस समय शस्त्रों की भयंकर वर्षा से ध्रुव जी ढक गये और वे ऐसे नहीं दिखाई देते थे; जैसे भारी वर्षा से पर्वत दिखाई नहीं देता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

हाहाकारस्तदैवासीत्सिद्धानां दिवि पश्यताम् ।
हतोऽयं मानवः सूर्यो मग्नः पुण्यजनार्णवे ॥१४॥

पदच्छेद—

हाहाकारः तदा एव आसीत् सिद्धानाम् दिवि पश्यताम् ।
हतः अयम् मानवः सूर्यः मग्नः पुण्यजन अर्णवे ॥

शब्दार्थ—

हाहाकार	५. हाय-हाय करके	हतः	१२. अस्त हो गया
तदा एव	१. उसी समय	अयम् मानवः	७. यह मनुष्य रूपी
आसीत्	६. कहने लगे (कि)	सूर्य	८. सूर्य
सिद्धानाम्	४. सिद्धगण	मग्नः	११. डूब कर
दिवि	२. आकाश से	पुण्यजन	९. यक्षरूपी
पश्यताम् ।	३. देखने वाले	अर्णवे	१०. समुद्र में

श्लोकार्थ—उसी समय आकाश से देखने वाले सिद्धगण हाय-हाय करके कहने लगे कि यह मनुष्य रूपी सूर्य यक्षरूपी समुद्र में डूबकर अस्त हो गया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

नदत्सु यातुधानेषु जयकाशिष्वथो मृधे ।
उदतिष्ठद्रथस्तस्य नीहारादिव भास्करः ॥१५॥

पदच्छेद—

नदत्सु यातुधानेषु जय काशिषु अथो मृधे ।
उदतिष्ठत् रथः तस्य नीहारात् इव भास्करः ॥

शब्दार्थ—

नदत्सु	५.	सिंह के समान गर्जना करने लगे	उदतिष्ठत्	९.	ऊपर आ गया
यातुधानेषु	१.	यक्षगण	रथः	८.	रथ (इस प्रकार)
जय	३.	विजय	तस्य	७.	ध्रुव जी का
काशिषु	४.	घोष करते हुये	नीहारात्	११.	कुहरे से
अथो	६.	उसी समय	इव	१०.	जैसे
मृधे ।	२.	युद्ध में	भास्करः ॥	१२.	सूर्य (निकल आता है)

श्लोकार्थ—यक्षगण युद्ध में विजय घोष करते हुये सिंह के समान गर्जना करने लगे। उसी समय ध्रुव जी का रथ इस प्रकार ऊपर आ गया जैसे कुहरे से सूर्य निकल आता है ॥

षोडशः श्लोकः

धनुर्विस्फूर्जयन्दिव्यं द्विषतां खेदमुद्वहन् ।
अस्त्रौघं व्यधमद्बाणैर्घनानीकमिवानिलः ॥१६॥

पदच्छेद—

धनुः विस्फूर्जयन् दिव्यम् द्विषताम् खेदम् उद्वहन् ।
अस्त्र ओघम् व्यधमत् बाणैः घन अनीकम् इव अनिलः ॥

शब्दार्थ—

धनुः	२.	धनुष की	ओघम्	९.	समूह को (ऐसे)
विस्फूर्जयन्	३.	टङ्कार करते हुये	व्यधमत्	१०.	छिन्न-भिन्न कर दिया
दिव्यम्	१.	ध्रुव जी ने दिव्य	बाणैः	७.	अपने बाणों के (प्रहार से)
द्विषताम्	४.	शत्रुओं में	घन	१३.	बादलों के
खेदम्	५.	भय	अनीकम्	१४.	समूह को (कर देता है)
उद्वहन् ।	६.	उत्पन्न कर दिया (उन्होंने)	इव	११.	जैसे
अस्त्र	८.	उनके शस्त्रास्त्रों के	अनिलः ॥	१२.	वायु

श्लोकार्थ—ध्रुव जी ने दिव्य धनुष की टङ्कार करते हुये शत्रुओं में भय उत्पन्न कर दिया। उन्होंने अपने बाणों के प्रहार से उनके शस्त्रास्त्रों के समूह को ऐसे छिन्न-भिन्न कर दिया; जैसे वायु बादलों के समूह को तितर-बितर कर देता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

तस्य ते चापनिर्मुक्ता भित्त्वा वर्माणि रक्षसाम् ।
कायानाविविशुस्तिग्मा गिरीनशनयो यथा ॥१७॥

पदच्छेद—

तस्य ते चाप निर्मुक्ताः भित्त्वा वर्माणि रक्षसाम् ।
कायान् आविविशुः तिग्माः गिरीन् अशनयः यथा ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१. ध्रुव जी के	कायान्	८. उनके शरीरों में (ऐसे)
ते	३. वे	आविविशुः	९. प्रवेश कर गये
चाप निर्मुक्ताः	२. धनुष से छूटे हुये	तिग्माः	४. तीखे बाण
भित्त्वा	७. भेद कर	गिरीन्	१२. पर्वतों में (प्रवेश किये थे)
वर्माणि	६. कवचों को	अशनयः	११. (इन्द्र के छोड़े) वज्र
रक्षसाम् ।	५. यक्ष-राक्षसों के	यथा ॥	१०. जैसे

श्लोकार्थ—ध्रुव जी के धनुष से छूटे हुये वे तीखे बाण यक्ष-राक्षसों के कवचों को भेद कर उनके शरीरों में ऐसे प्रवेश कर गये; जैसे इन्द्र के छोड़े वज्र पर्वतों में प्रवेश कर गये थे ॥

अष्टादशः श्लोकः

भल्लैः संछिद्यमानानां शिरोभिश्चारुकुण्डलैः ।
ऊरुभिर्हेमतालाभैर्दोर्भिर्वलयवल्गुभिः ॥१८॥

पदच्छेद—

भल्लैः संछिद्यमानानाम् शिरोभिः चारु कुण्डलैः ।
ऊरुभिः हेम ताल आभैः दोर्भिः वलय वल्गुभिः ॥

शब्दार्थ—

भल्लैः	१. ध्रुव जी के बाणों के प्रहार से	हेम	६. सुनहले
संछिद्यमानानाम्	२. कटे हुये यक्ष-सैनिकों के	ताल	७. ताड़ वृक्ष के
शिरोभिः	५. मस्तकों से	आभैः	८ समान
चारु	३. मनोहर	दोर्भिः	१२. भुजाओं से (युद्ध भूमि पट गई)
कुण्डलैः ।	४. कुण्डलों से युक्त	वलय	१०. कंकणों से
ऊरुभिः	९. जांघों से (तथा)	वल्गुभिः ॥	११. सुशोभित

श्लोकार्थ—ध्रुव जी के बाणों के प्रहार से कटे हुये यक्ष-सैनिकों के मनोहर कुण्डलों से युक्त मस्तकों से, सुनहले ताड़ वृक्ष के समान जांघों से तथा कंकणों से सुशोभित भुजाओं से युद्ध भूमि पट गई ॥

एकोनविंशः श्लोकः

हारकेयूरमुकुटैरुष्णीषैश्च　　महाधनैः ।
आस्तृतास्ता　रणभुवो रेजुर्वीरमनोहराः ॥१९॥

पदच्छेद—

हार　केयूर मुकुटैः उष्णीषैः च महाधनैः ।
आस्तृताः ताः रणभुवः रेजुः वीर मनोहराः ॥

शब्दार्थ—

हार	२.	गले के हार	आस्तृताः	७.	पटी हुई (तथा)
केयूर	३.	बाजूबन्द	ताः	१०.	वह
मुकुटैः	४.	मुकुट	रणभुवः	११.	युद्ध भूमि
उष्णीषैः	६.	पगड़ियों से	रेजुः	१२.	सुशोभित हो रही थी
च	५.	और	वीर	८.	वीरों को
महाधनैः ।	१.	बहुमूल्य	मनोहराः ॥	९.	मनोहर लगने वाली

श्लोकार्थ—बहुमूल्य गले के हार, बाजूबन्द, मुकुट और पगड़ियों से पटी हुई तथा वीरों को मनोहर लगने वाली वह युद्ध भूमि सुशोभित हो रही थी ॥

विंशः श्लोकः

हतावशिष्टा इतरे रणाजिराद् रक्षोगणाः क्षत्रियवर्यसायकैः ।
प्रायो विवृक्णावयवा विदुद्रुवुर्मृगेन्द्रविक्रीडितयूथपा इव ॥२०॥

पदच्छेद— हत अवशिष्टाः इतरे रण अजिरात् रक्षोगणाः क्षत्रिय वर्य सायकैः ।
प्रायः विवृक्ण अवयवाः विदुद्रुवुः मृगेन्द्र विक्रीडित यूथपाः इव ॥

शब्दार्थ—

हत	४.	मरने पर	प्रायः	८.	अधिकतर
अवशिष्टाः	५.	बचे हुये	विवृक्ण	१०.	छिन्न-भिन्न होकर
इतरे	६.	दूसरे	अवयवाः	९.	अङ्गों से
रण अजिरात्	११.	युद्ध के मैदान से (ऐसे)	विदुद्रुवुः	१२.	भाग गये
रक्षोगणाः	७.	यक्ष-सैनिक	मृगेन्द्र	१४.	सिंह से
क्षत्रिय	१.	क्षत्रियों में	विक्रीडित	१५.	पराजित होकर
वर्य	२.	श्रेष्ठ ध्रुव जी के	यूथपाः	१६.	गजराज (भाग जाते हैं)
सायकैः ।	३.	बाणों से	इव ॥	१३.	जैसे

श्लोकार्थ—क्षत्रियों में श्रेष्ठ ध्रुव जी के बाणों से मरने पर बचे हुये दूसरे यक्ष सैनिक अधिकतर अङ्गों से छिन्न-भिन्न होकर युद्ध के मैदान से ऐसे भाग गये; जैसे सिंह से पराजित होकर गजराज भाग जाते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

अपश्यमानः स यदाऽऽततायिनं महामृधे कंचन मानवोत्तमः ।
पुरीं दिदृक्षन्नपि नाविशद् द्विषां न मायिनां वेद चिकीर्षितं जनः ॥२१॥

पदच्छेद—अपश्यमानः सः तदा आततायिनम् महामृधे कंचन मानव उत्तमः ।
पुरीम् दिदृक्षन् अपि न अविशत् द्विषाम् न मायिनाम् वेद चिकीर्षितम् जनः ॥

शब्दार्थ—

अपश्यमानः	७.	नहीं देखा	अपि	८.	यद्यपि (वे)
सः	२.	उन ध्रुव जी ने	न	१२.	नहीं
तदा	३.	उस समय	अविशत्	१३.	प्रवेश किया (क्योंकि)
आततायिनम्	६.	अत्याचारी को	द्विषाम्	९.	शत्रुओं की
महामृधे	४.	युद्ध भूमि में	न	१७.	नहीं
कंचन	५.	किसी	मायिनाम्	१५.	मायावियों की
मानव उत्तमः	१.	मनुष्यों में श्रेष्ठ	वेद	१८.	जान सकता है
पुरीम्	१०.	अलकापुरी को	चिकीर्षितम्	१६.	माया को
दिदृक्षन्	११.	देखना चाहते थे (फिर भी)	जनः ॥	१४.	मनुष्य

श्लोकार्थ—मनुष्यों में श्रेष्ठ उन ध्रुव जी ने उस समय युद्ध भूमि में किसी अत्याचारी को नहीं देखा। यद्यपि वे शत्रुओं की अलकापुरी को देखना चाहते थे; फिर भी नहीं प्रवेश किया। क्योंकि मनुष्य मायावियों की माया को नहीं जान सकता है।

द्वाविंशः श्लोकः

इति ब्रुवंश्चित्ररथः स्वसारथिं यत्तः परेषां प्रतियोगशङ्कितः ।
शुश्राव शब्दं जलधेरिवेरितं नभस्वतो दिक्षु रजोऽन्वदृश्यत ॥२२॥

पदच्छेद— इति ब्रुवन् चित्ररथः स्व सारथिम् यत्तः परेषाम् प्रतियोग शङ्कितः ।
शुश्राव शब्दम् जलधेः इव ईरितम् नभस्वतः दिक्षु रजः अन्वदृश्यत ॥

शब्दार्थ—

इति	३.	इस प्रकार	शुश्राव	१५.	सुनाई दिया (और)
ब्रुवन्	४.	बोलते हुये	शब्दम्	१४.	शब्द
चित्ररथः	५.	विचित्र रथ पर (बैठे रहे)	जलधेः	११.	समुद्र के
स्व	१.	(ध्रुव जी) अपने	इव	१२.	समान
सारथिम्	२.	सारथी से	ईरितम्	१३.	आंधी का (भयंकर)
यत्तः	९.	सावधान हो गये (इतने में)	नभस्वतः	१०.	गर्जना करते हुये
परेषाम्	६.	(तथा) शत्रुओं के	दिक्षु	१६.	दिशाओं
प्रतियोग	७.	आक्रमण की	रजः	१७.	धूली
शङ्कितः ।	८.	आशंका से	अन्वदृश्यत ॥	१८.	दिखाई देने लगी

श्लोकार्थ—ध्रुव जी अपने सारथी से इस प्रकार बोलते हुये विचित्र रथ पर बैठे रहे; तथा शत्रुओं के आक्रमण की आशंका से सावधान हो गये। इतने में गर्जना करते हुये समुद्र के समान आंधी का भयंकर शब्द सुनाई दिया और दिशाओं में धूली दिखाई देने लगी ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

क्षणेनाच्छादितं व्योम घनानीकेन सर्वतः ।
विस्फुरत्तडिता दिक्षु त्रासयत्स्तनयित्नुना ॥२३॥

पदच्छेद—

क्षणेन आच्छादितम् व्योम घन अनीकेन सर्वतः ।
विस्फुरत् तडिता दिक्षु त्रासयत् स्तनयित्नुना ॥

शब्दार्थ—

क्षणेन	१.	क्षण भर में	विस्फुरत्	१०.	चमकने लगी
आच्छादितम्	५.	ढक गया (और)	तडिता	९.	बिजली
व्योम	३.	आकाश	दिक्षु	६.	दिशाओं में
घन अनीकेन	४.	मेघ-माला से	त्रासयत्	७.	भयंकर
सर्वतः ।	२.	सारा	स्तनयित्नुना ॥	८.	गड़गड़ाहट के साथ

श्लोकार्थ—क्षण भर में सारा आकाश मेघ-माला से ढक गया और दिशाओं में भयंकर गड़गड़ाहट के साथ बिजली चमकने लगी ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

ववृषू रुधिरौघासृक्पूयविण्मूत्रमेदसः ।
निपेतुर्गगनादस्य कबन्धान्यग्रतोऽनघ ॥२४॥

पदच्छेद—

ववृषुः रुधिर औघ असृक् पूय विट् मूत्र मेदसः ।
निपेतुः गगनात् अस्य कबन्धानि अग्रतः अनघ ॥

शब्दार्थ—

ववृषुः	९.	वर्षा होने लगी (तथा)	मेदसः ।	८.	चर्बी की
रुधिर	२.	(उस समय) खून की	निपेतुः	१४.	गिरने लगे
औघ	३.	धार	गगनात्	१२.	आकाश से
असृक्	४.	कफ़	अस्य	१०.	ध्रुव जी के
पूय	५.	पीव	कबन्धानि	१३.	बहुत से धड़
विट्	६.	विष्ठा	अग्रतः	११.	आगे
मूत्र	७.	मूत्र (और)	अनघ ॥	१.	हे निष्पाप विदुर जी

श्लोकार्थ—हे निष्पाप विदुर जी ! उस समय खून की धार, कफ, पीव, विष्ठा, मूत्र और चर्बी की वर्षा होने लगी तथा ध्रुव जी के आगे आकाश से बहुत से धड़ गिरने लगे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

ततः खेऽदृश्यत गिरिर्निपेतुः सर्वतोदिशम् ।
गदापरिघनिस्त्रिंशमुसलाः साश्मवर्षिणः ॥२५॥

पदच्छेद—

ततः खे अदृश्यत गिरिः निपेतुः सर्वतः दिशम् ।
गदा परिघ निस्त्रिंश मुसलाः स अश्म वर्षिणः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. तदनन्तर		गदा	११. गदा
खे	२. आकाश में		परिघ	११. परिघ
अदृश्यत	४. दिखाई दिया (उससे)		निस्त्रिंश	१२. तलवार (और)
गिरिः	३. एक पर्वत		मुसलाः	१३. मूसल
निपेतुः	१४. गिरने लगे		स	६. साथ-साथ
सर्वतः	५. सभी		अश्म	७. पत्थरों की
दिशम् ।	६. दिशाओं में		वर्षिणः ॥	८. वर्षा के

श्लोकार्थ—तदनन्तर आकाश में एक पर्वत दिखाई दिया। उससे सभी दिशाओं में पत्थरों की वर्षा के साथ-साथ गदा, परिघ, तलवार और मूसल गिरने लगे ॥

षड्विंशः श्लोकः

अहयोऽशनिनिःश्वासा वमन्तोऽग्निं रुषाक्षिभिः ।
अभ्यधावन् गजा मत्ताः सिंहव्याघ्राश्च यूथशः ॥२६॥

पदच्छेद—

अहयः अशनि निःश्वासाः वमन्तः अग्निम् रुषा अक्षिभिः ।
अभ्यधावन् गजाः मत्ताः सिंह व्याघ्राः च यूथशः ॥

शब्दार्थ—

अहयः	७. सर्प (तथा)		अभ्यधावन्	१४. दौड़ने लगे
अशनि	१. वज्र के समान		गजाः	१०. हाथी
निःश्वासाः	२. सांस छोड़ते हुये (तथा)		मत्ताः	९. मतवाले
वमन्तः	६. उगलते हुये		सिंह	११. सिंह
अग्निम्	५. आग		व्याघ्राः	१३. बाघ (उनके सामने)
रुषा	३. क्रोध भरी		च	१२. और
अक्षिभिः ।	४. आँखों से		यूथशः ॥	८. झुण्ड के झुण्ड

श्लोकार्थ—वज्र के समान सांस छोड़ते हुये तथा क्रोधभरी आँखों से आग उगलते हुये सर्प तथा झुण्ड के झुण्ड मतवाले हाथी, सिंह और बाघ उनके सामने दौड़ने लगे ॥

सप्तविंशः श्लोकः

समुद्र ऊर्मिभिर्भीमः प्लावयन् सर्वतो भुवम् ।
आससाद महाह्लादः कल्पान्त इव भीषणः ॥२७॥

पदच्छेद—

समुद्र ऊर्मिभिः भीमः प्लावयन् सर्वतः भुवम् ।
आससाद महाह्लादः कल्पान्त इव भीषणः ॥

शब्दार्थ—

समुद्रः	६.	समुद्र	आससाद	११.	उनकी ओर आने लगा
ऊर्मिभिः	४.	उत्ताल तरंगों से	महाह्लादः	७.	भयंकर गर्जना करता हुआ (तथा)
भीमः	५.	भयानक	कल्पान्त	१.	प्रलय काल के
प्लावयन्	१०.	डुवाता हुआ	इव	२.	समान
सर्वतः	८.	चारों ओर से	भीषणः ॥	३.	विकराल (एवम्)
भुवम् ॥	९.	पृथ्वी को			

श्लोकार्थ—प्रलयकाल के समान विकराल एवम् उत्ताल तरंगों से भयानक समुद्र भयंकर गर्जना करता हुआ तथा चारों ओर से पृथ्वी को डुवाता हुआ उनकी ओर आने लगा ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

एवंविधान्यनेकानि त्रासनान्यमनस्विनाम् ।
ससृजुस्तिग्मगतय आसुर्या माययासुराः ॥२८॥

पदच्छेद—

एवम् विधानि अनेकानि त्रासनानि अमनस्विनाम् ।
ससृजुः तिग्म गतयः आसुर्या मायया असुराः ॥

शब्दार्थ—

एवम् विधानि	६.	इस प्रकार के	तिग्म	१.	कठोर
अनेकानि	७.	वहुत से कौतुक	गतयः	२.	स्वभाव वाले
त्रासनानि	१०.	डरावने थे	आसुर्या	४.	आसुरी
अमनस्विनाम् ।	९.	कायर मनुष्यों के लिये	मायया	५.	माया से
ससृजुः	८.	दिखाये (जो)	असुराः ॥	३.	असुरों ने (अपनी)

श्लोकार्थ—कठोर स्वभाव वाले असुरों ने अपनी आसुरी माया से इस प्रकार के बहुत से कौतुक दिखाये, जो मनुष्यों के लिये डरावने थे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

ध्रुवे प्रयुक्तामसुरैस्तां मायामतिदुस्तराम् ।
निशम्य तस्य मुनयः शमाशंसन् समागताः ॥२९॥

पदच्छेद— ध्रुवे प्रयुक्ताम् असुरैः ताम् मायाम् अति दुस्तराम् ।
निशम्य तस्य मुनयः शम् आशंसन् समागताः ॥

शब्दार्थ—

ध्रुवे	२.	ध्रुव जी पर	निशम्य	७.	सुनकर
प्रयुक्ताम्	६.	प्रयोग किया है (यह)	तस्य	९.	ध्रुव जी के
असुरैः	१.	राक्षसों ने	मुनयः	८.	ऋषिगण
ताम्	४.	उस आसुरी	शम्	१०.	कल्याण की
मायाम्	५.	माया का	आशंसन्	११.	कामना से (वहाँ पर)
अति दुस्तराम् ।	३.	अति दुस्तर	समागताः ॥	१२.	आये

श्लोकार्थ— राक्षसों ने ध्रुव जी पर अति दुस्तर उस आसुरी माया का प्रयोग किया है, यह सुनकर ऋषिगण ध्रुव जी के कल्याण की कामना से वहाँ पर आये ॥

त्रिंशः श्लोकः

मुनय ऊचुः

औत्तानपादे भगवांस्तव शार्ङ्गधन्वा देवः क्षिणोत्ववनतार्तिहरो विपक्षान् ।
यन्नामधेयमभिधाय निशम्य चाद्धा लोकोऽञ्जसा तरति दुस्तरमङ्ग मृत्युम् ॥३०॥

पदच्छेद— औत्तानपादे भगवान् तव शार्ङ्गधन्वा देवः क्षिणोतु अवनत आर्तिहरः विपक्षान् ।
यत् नामधेयम् अभिधाय निशम्य च अद्धा लोकः अञ्जसा तरति दुस्तरम् अङ्ग मृत्युम् ॥

शब्दार्थ—

औत्तानपादे	१.	उत्तानपाद-नन्दन	नामधेयम्	१२.	नाम का
भगवान्	६.	भगवान्	अभिधाय	१३.	कीर्तन करके
तव	८.	तुम्हारे	निशम्य	१५.	श्रवण करके
शार्ङ्गधन्वा	५.	शार्ङ्गपाणि	च	१४.	और
देवः	७.	श्री हरि	अद्धा	१७.	ही
क्षिणोतु	१०.	नाश करें	लोकः अञ्जसा	१६.	मनुष्य सरलता से
अवनत्	३.	शरणागत	तरति	२०.	पार कर लेता है
आर्तिहरः	४.	दुःख भञ्जन	दुस्तरम्	१८.	अपार
विपक्षान् ।	९.	शत्रुओं का	अङ्ग	२.	हे तात
यत्	११.	जिनके	मृत्युम् ॥	१९.	मृत्यु को

श्लोकार्थ—उत्तानपाद-नन्दन हे तात ! शरणागत दुःख भञ्जन शार्ङ्ग पाणि भगवान् श्री हरि तुम्हारे शत्रुओं का नाश करें; जिनके नाम का कीर्तन करके और श्रवण करके मनुष्य सरलता से ही अपार मृत्यु को पार कर लेता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

एकादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—निशम्य गदतामेवमृषीणां धनुषि ध्रुवः ।
संदधेऽस्त्रमुपस्पृश्य यन्नारायणनिर्मितम् ॥१॥

पदच्छेद—

निशम्य गदताम् एवम् ऋषीणाम् धनुषि ध्रुवः ।
संदधे अस्त्रम् उपस्पृश्य यद् नारायण निर्मितम् ॥

शब्दार्थ—

निशम्य	४.	सुनकर	संदधे	१२.	चढ़ाया
गदताम्	३.	वचन को	अस्त्रम्	१०.	अस्त्र था (उसे)
एवम्	१.	इस प्रकार	उपस्पृश्य	६.	आचमन करके
ऋषीणाम्	२.	ऋषियों के	यद्	९.	जो
धनुषि	११.	अपने धनुष पर	नारायण	७.	भगवान् नारायण के द्वारा
ध्रुवः ।	५.	ध्रुव जी ने	निर्मितम् ॥	८.	बनाया गया

श्लोकार्थ—इस प्रकार ऋषियों के वचन को सुनकर ध्रुव जी ने आचमन करके भगवान् नारायण के द्वारा बनाया गया जो अस्त्र था उसे अपने धनुष पर चढ़ाया ॥

द्वितीयः श्लोकः

संधीयमान एतस्मिन्माया गुह्यकनिर्मिताः ।
क्षिप्रं विनेशुर्विदुर क्लेशा ज्ञानोदये यथा ॥२॥

पदच्छेद—

संधीयमाने एतस्मिन् माया गुह्यक निर्मिताः ।
क्षिप्रम् विनेशुः विदुर क्लेशाः ज्ञान उदये यथा ॥

शब्दार्थ—

संधीयमाने	३.	धनुष पर चढ़ाते ही	विनेशुः	८.	(ऐसे) नष्ट हो गई
एतस्मिन्	२.	इस नारायणास्त्र को	विदुर	१.	हे विदुर जी
माया	६.	माया	क्लेशाः	१२.	दुःख दूर हो जाते हैं
गुह्यक	४.	यक्षों के द्वारा	ज्ञान	१०.	ब्रह्म ज्ञान का
निर्मिताः ।	५.	उत्पन्न की गई	उदये	११.	उदय होते (ही)
क्षिप्रम्	७.	उसी क्षण	यथा ॥	९.	जैसे

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! इस नारायणास्त्र को धनुष पर चढ़ाते ही यक्षों के द्वारा उत्पन्न की गई माया उसी क्षण ऐसे नष्ट हो गई; जैसे ब्रह्म ज्ञान का उदय होते ही दुःख दूर हो जाते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

तस्यार्षास्त्रं धनुषि प्रयुञ्जतः सुवर्णपुङ्खाः कलहंसवाससः ।
विनिःसृता आविविशुर्द्विषद्बलं यथा वनं भीमरवाः शिखण्डिनः ॥३॥

पदच्छेद— तस्य आर्ष अस्त्रम् धनुषि प्रयुञ्जतः सुवर्ण पुङ्खाः कलहंस वाससः ।
विनिसृताः आविविशुः द्विषद् बलम् यथा वनम् भीम रवाः शिखण्डिनः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	ध्रुव जी के द्वारा	विनिसृताः	६.	उससे छूटे हुये
आर्ष	३.	नारायण	आविविशुः	१३.	घुस गये
अस्त्रम्	४.	अस्त्र को	द्विषद्	११.	शत्रुओं को
धनुषि	२.	अपने धनुष पर	बलम्	१२.	सेना में (ऐसे)
प्रयुञ्जतः	५.	चढ़ाते ही	यथा	१४.	जैसे
सुवर्ण	६.	सोने के	वनम्	१८.	वन में (घुस जाता है)
पुङ्खाः	१०.	पंख लगे वाण	भीम	१५.	तीखी
कलहंस	७.	राजहंस के समान	रवाः	१६.	केका ध्वनि करता हुआ
वाससः ।	८.	सफेद तीखी धार वाले (तथा)	शिखण्डिनः ॥	१७.	मोर

श्लोकार्थ—ध्रुव जी के द्वारा अपने धनुष पर नारायण अस्त्र को चढ़ाते ही उससे छूटे हुये राजहंस के समान सफेद तीखी धार वाले तथा सोने के पंख लगे शत्रुओं की सेना में ऐसे घुस गये; जैसे तीखी केका ध्वनि करता हुआ मोर वन में घुस जाता है ॥

चतुर्थः श्लोकः

तैस्तिग्मधारैः प्रधने शिलीमुखैरितस्ततः पुण्यजना उपद्रुताः ।
तमभ्यधावन् कुपिता उदायुधाः सुपर्णमुन्नद्धफणा इवाहयः ॥४॥

पदच्छेद— तै तिग्मधारैः प्रधने शिलीमुखैः इतः ततः पुण्यजनाः उपद्रुताः ।
तम् अभ्यधावन् कुपिताः उदायुधाः सुपर्णम् उन्नद्ध फणाः इव अहयः ॥

शब्दार्थ—

तैः	३.	उन	अभ्यधावन्	११.	ऐसे टूट पड़े
तिग्मधारैः	२.	तीखी धार वाले	कुपिताः	८.	क्रुद्ध होकर (और)
प्रधने	१.	युद्ध भूमि में	उदायुधाः	९.	हथियार उठाकर
शिलीमुखैः	४.	बाणों से आहत होकर	सुपर्णम्	१६.	गरुड़ पर टूट पड़ते हैं
इतः-ततः	६.	इधर-उधर	उन्नद्ध	१५.	उठाकर
पुण्यजनाः	५.	यक्ष गण	फणाः	१४.	फन को
उपद्रुताः ।	७.	भागने लगे (तथा कुछ)	इव	१२.	जैसे
तम्	१०.	ध्रुव जी के ऊपर	अहयः ॥	१३.	बड़े-बड़े सर्प

श्लोकार्थ—युद्ध भूमि में तीखीधार वाले उन बाणों से आहत होकर यक्ष गण इधर-उधर भागने लगे तथा कुछ क्रुद्ध होकर और हथियार उठाकर ध्रुव जी के ऊपर ऐसे टूट पड़े; जैसे बड़े-बड़े सर्प फन को उठाकर गरुड़ जी पर टूट पड़ते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

स तान् पृषत्कैरभिधावतो मृधे निकृत्तबाहूरुशिरोधरोदरान्।
निनाय लोकं परमर्कमण्डलं व्रजन्ति निर्भिद्य यमूर्ध्वरेतसः ॥५॥

पदच्छेद— सः तान् पृषत्कैः अभिधावतः मृधे निकृत्त बाहु ऊरु शिरोधर उदरान् ।
निनाय लोकम् परम् अर्क मण्डलम् व्रजन्ति निर्भिद्य यम् ऊर्ध्वरेतसः ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	ध्रुव जी ने	निनाय	१२.	पहुँचा दिया
तान्	८.	उन यक्षों को	लोकम्	११.	धाम में
पृषत्कैः	२.	बाणों के (आघात से)	परम्	१०.	परम
अभिधावतः	३.	भागते हुये (तथा)	अर्क मण्डलम्	१५.	सूर्य मण्डल का
मृधे	१.	युद्ध में	व्रजन्ति	१७.	जाते हैं
निकृत्त	४.	छिन्न-भिन्न	निर्भिद्य	१३.	जाते हैं
बाहु ऊरु	५.	भुजा जांघ	यम्	१६.	भेदन करके
शिरोधर	६.	गर्दन (और)	ऊर्ध्वरेतसः ॥	१४.	ब्रह्मज्ञानी जन
उदरान् ।	७.	पेट वाले			

श्लोकार्थ—युद्ध में बाणों के आघात से भागते हुये तथा छिन्न-भिन्न भुजा, जांघ, गर्दन और पेट वाले उन यक्षों को ध्रुव जी ने उस परम धाम में पहुँचा दिया; जिस धाम में ब्रह्मज्ञानी जन सूर्य मण्डल का भेदन करके जाते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

तान् हन्यमानानभिवीक्ष्य गुह्यकाननागसश्चित्ररथेन भूरिशः।
औत्तानपादिं कृपया पितामहो मनुर्जगादोपगतः सहर्षिभिः ॥६॥

पदच्छेद— तान् हन्यमानान् अभिवीक्ष्य गुह्यकान् अनागसः चित्र रथेन भूरिशः ।
औत्तानपादिम् कृपया पितामहः मनुः जगाद उपगतः सह ऋषिभिः ॥

शब्दार्थ—

तान्	४.	उन	औत्तानपादिम्	१५.	ध्रुव जी को
हन्यमानान्	७.	मारे जाते हुये	कृपया	११.	दया आ गई (और)
अभिवीक्ष्य	८.	देखकर	पितामहः	६.	उनके दादा
गुह्यकान्	६.	यक्षों को	मनुः	१०.	स्वायम्भुवमनु को
अनागसः	३.	निरपराध	जगाद	१६.	समझाया
चित्र	१.	विचित्र	उपगतः	१४.	वहाँ आकर
रथेन	२.	रथ पर बैठे हुये ध्रुव जी के द्वारा	सह	१३.	साथ
भूरिशः ।	५.	अनेकों	ऋषिभिः ॥	१२.	ऋषियों के

श्लोकार्थ—विचित्र रथ पर बैठे हुये ध्रुव जी के द्वारा निरपराध उन अनेकों यक्षों को मारे जाते हुये देखकर उनके दादा स्वायम्भुव मनु को दया आ गई और ऋषियों के साथ वहाँ आकर ध्रुव जी को समझाया ॥

सप्तमः श्लोकः

मनुरुवाच— अलं वत्सातिरोषेण तमोद्वारेण पाप्मना ।
येन पुण्यजनानेतानवधीस्त्वमनागसः ।।७।।

पदच्छेद—

अलम् वत्स अतिरोषेण तमः द्वारेण पाप्मना ।
येन पुण्यजनान् एतान् अवधीः त्वम् अनागसः ।।

शब्दार्थ—

अलम्	३. ठीक नहीं है		येन	७. जिस क्रोध के कारण
वत्स	१. हे पुत्र		पुण्यजनान्	११. यक्षों का
अतिरोषेण	२. अत्यन्त क्रोध करना		एतान्	९. इन
तमः	५. नरक का		अवधीः	१२. वध किया है
द्वारेण	६. द्वार है		त्वम्	८. तुमने
पाप्मना ।	४. (यह) पापी		अनागसः ।।	१०. निरपराध

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! अत्यन्त क्रोध करना ठीक नहीं है । यह पापी नरक का द्वार है; जिस क्रोध के कारण तुमने इन निरपराध यक्षों का वध किया है ।।

अष्टमः श्लोकः

नास्मत्कुलोचितं तात कर्मैतत्सद्भिगर्हितम् ।
वधो यदुपदेवानामारब्धस्तेऽकृतैनसाम् ।।८।।

पदच्छेद—

न अस्मत् कुल उचितम् तात कर्म एतत् सद् विगर्हितम् ।
वधः यद् उपदेवानाम् आरब्धः ते अकृत एनसाम् ।।

शब्दार्थ—

न	१२. नहीं है		विगर्हितम् ।	१६. निन्दा करते हैं
अस्मत्	९. हमारे		वधः	७. वध
कुल	१०. वंश के		यद्	६. जो
उचितम्	११. योग्य		उपदेवानाम्	४. यक्षों का
तात	१. हे तात		आरब्धः	८. किया है (वह)
कर्म	१५. कर्म की		ते	५. तुमने
एतत्	१४. इस		अकृत	३. नहीं करने वाले
सद्	१३. साधु पुरुष		एनसाम् ।।	२. अपराध

श्लोकार्थ—हे तात ! अपराध नहीं करने वाले यक्षों का तुमने जो वध किया है, वह हमारे वंश के योग्य नहीं है । साधु पुरुष इस कर्म की निन्दा करते हैं ।।

नवमः श्लोकः

नन्वेकस्यापराधेन प्रसङ्गाद् बहवो हताः।
भ्रातुर्वधाभितप्तेन त्वयाङ्ग भ्रातृवत्सल ॥९॥

पदच्छेद—

ननु एकस्य अपराधेन प्रसङ्गात् बहवः हताः।
भ्रातुः वध अभितप्तेन त्वया अङ्ग भ्रातृ वत्सल ॥

शब्दार्थ—

ननु	२.	अवश्य ही	भ्रातुः वध	५.	भाई की हत्या से
एकस्य	८.	एक के	अभितप्तेन	६.	दुःखी होने के कारण
अपराधेन	९.	अपराध करने पर	त्वया	७.	तुमने
प्रसङ्गात्	१०.	प्रसङ्गवश	अङ्ग	१.	हे तात
बहवः	११.	अनेकों का	भ्रातृ	३.	अपने भाई पर तुम्हारा
हताः।	१२.	वध किया है	वत्सल ॥	४.	बड़ा अनुराग था (अतः)

श्लोकार्थ—हे तात ! अवश्य ही अपने भाई पर तुम्हारा बड़ा अनुराग था, अतः भाई की हत्या से दुःखी होने के कारण तुमने एक के अपराध करने पर प्रसङ्गवश अनेकों का वध किया है ॥

दशमः श्लोकः

नायं मार्गो हि साधूनां हृषीकेशानुवर्तिनाम्।
यदात्मानं पराग्गृह्य पशुवद्भूतवैशसम् ॥१०॥

पदच्छेद—

न अयम् मार्गः हि साधूनाम् हृषीकेश अनुवर्तिनाम्।
यद् आत्मानम् पराक् गृह्य पशुवत् भूत वैशसम् ॥

शब्दार्थ—

न	१४.	नहीं है	यद्	४.	जो
अहम्	९.	यह	आत्मानम्	१.	जड शरीर को
मार्गः	१३.	मार्ग	पराक्	२.	आत्मा
हि	८.	अवश्य ही	गृह्य	३.	समझ कर (तुमने)
साधूनाम्	१२.	साधु पुरुषों का	पशुवत्	५.	पशुओं के समान
हृषीकेश	१०.	भगवान् श्री हरि के	भूत	६.	प्राणियों की
अनुवर्तिनाम्।	११.	भक्त	वैशसम् ॥	७.	हत्या की है

श्लोकार्थ—जड़ शरीर को आत्मा समझकर तुमने जो पशुओं के समान प्राणियों की हत्या की है; अवश्य ही यह भगवान् श्री हरि के भक्त साधु पुरुषों का मार्ग नहीं है ॥

एकादशः श्लोकः

सर्वभूतात्मभावेन भूतावासं हरिं भवान्।
आराध्याप दुराराध्यं विष्णोस्तत्परमं पदम् ॥११॥

पदच्छेद—

सर्वभूत आत्म भावेन भूत आवासम् हरिम् भवान् ।
आराध्य आप दुराराध्यम् विष्णोः तत् परमम् पदम् ॥

शब्दार्थ—

सर्वभूत	१.	सभी प्राणियों में	आराध्य	८.	आराधना करके
आत्म	२.	आत्मा की	आप	१४.	प्राप्त किया है
भावेन	३.	भावना करके (एवं)	दुराराध्यम्	६.	कठिनाई से प्रसन्न होने वाले
भूत	४.	प्राणियों के	विष्णोः	१०.	भगवान् विष्णु के
आवासम्	५.	आश्रय (तथा)	तत्	११.	उस
हरिम्	७.	भगवान् श्री हरि की	परमम्	१२.	परम
भवान् ।	९.	तुमने	पदम् ॥	१३.	पद को

श्लोकार्थ—सभी प्राणियों में आत्मा की भावना करके एवं प्राणियों के आश्रय तथा कठिनाई से प्रसन्न होने वाले भगवान् श्री हरि की आराधना करके तुमने भगवान् विष्णु के उस परम पद को प्राप्त किया है ॥

द्वादशः श्लोकः

स त्वं हरेरनुध्यातस्तत्पुंसामपि सम्मतः ।
कथं त्ववद्यं कृतवाननुशिक्षन् सतां व्रतम् ॥१२॥

पदच्छेद—

सः त्वम् हरेः अनुध्यातः तत् पुंसाम् अपि सम्मतः ।
कथं तु अवद्यम् कृतवान् अनुशिक्षन् सताम् व्रतम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	सो	कथं	१२.	कैसे (यह)
त्वम्	२.	तुम	तु	११.	अतः (तुमने)
हरेः	३.	भगवान् श्री हरि के	अवद्यम्	१३.	निन्दित कार्य
अनुध्यातः	४.	प्रिय पात्र हो	कृतवान्	१४.	किया है
तत् पुंसाम्	५.	उनके भक्तों में	अनुशिक्षन्	१०.	शिक्षा देते हो
अपि	६.	भी	सताम्	८.	सज्जनों को
सम्मतः ।	७.	आदर पाते हो (और)	व्रतम् ॥	९.	श्रेष्ठ नियम की

श्लोकार्थ—सो तुम भगवान् श्री हरि के प्रिय पात्र हो, उनके भक्तों में भी आदर पाते हो और सज्जनों को श्रेष्ठ नियम की शिक्षा देते हो; अतः तुमने कैसे यह निन्दित कार्य किया है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तितिक्षया करुणया मैत्र्या चाखिलजन्तुषु ।
समत्वेन च सर्वात्मा भगवान् सम्प्रसीदति ॥१३॥

पदच्छेद—

तितिक्षया करुणया मैत्र्या च अखिल जन्तुषु ।
समत्वेन च सर्व आत्मा भगवान् सम्प्रसीदति ॥

शब्दार्थ—

तितिक्षया	३.	सहन शीलता	समत्वेन	८.	समता से
करुणया	४.	करुणा	च	७.	तथा
मैत्र्या	६.	प्रेम-भाव	सर्व	९.	सबकी
च	५.	और	आत्मा	१०.	आत्मा
अखिल	१.	सम्पूर्ण	भगवान्	११.	भगवान् श्री हरि
जन्तुषु ।	२.	प्राणियों के प्रति	सम्प्रसीदति ॥	१२.	प्रसन्न होते हैं

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण प्राणियों के प्रति सहन शीलता, करुणा और प्रेम-भाव तथा समता से सबकी आत्मा भगवान् श्री हरि प्रसन्न होते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

सम्प्रसन्ने भगवति पुरुषः प्राकृतैर्गुणैः ।
विमुक्तो जीवनिर्मुक्तो ब्रह्म निर्वाणमृच्छति ॥१४॥

पदच्छेद—

सम्प्रसन्ने भगवति पुरुषः प्राकृतैः गुणैः ।
विमुक्तः जीव निर्मुक्तः ब्रह्म निर्वाणम् ऋच्छति ॥

शब्दार्थ—

सम्प्रसन्ने	२.	प्रसन्न होने पर	विमुक्तः	६.	मुक्त होकर (और)
भगवति	१.	भगवान् श्री हरि के	जीव निर्मुक्तः	७.	सूक्ष्म शरीर से भी मुक्त होकर
पुरुषः	३.	मनुष्य	ब्रह्म	९.	ब्रह्म स्वरूप को
प्राकृतैः	४.	प्रकृति द्वारा बनाये हुए	निर्वाणम्	८.	परमानन्द
गुणैः ।	५.	स्थूल शरीर से	ऋच्छति ॥	१०.	प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के प्रसन्न होने पर मनुष्य प्रकृति द्वारा बनाये हुए स्थूल शरीर से मुक्त होकर और सूक्ष्म शरीर से भी मुक्त होकर परमानन्द ब्रह्म स्वरूप को प्राप्त करता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

भूतैः पञ्चभिरारब्धैर्योषित्पुरुष एव हि।
तयोर्व्यवायात्सम्भूतिर्योषित्पुरुषयोरिह ॥१५॥

पदच्छेद—

मूतैः पञ्चभिः आरब्धैः योषित् पुरुषः एव हि।
तयोः व्यवायात् सम्भूतिः योषित् पुरुषयोः इह ॥

शब्दार्थ—

भूतैः	३. महाभूतों से	तयोः	७. उन दोनों के
पञ्चभिः	२. पाँच	व्यवायात्	८. शारीरिक समागम से
आरब्धैः	१. कार्यरूप में परिणत	सम्भूतिः	१२. उत्पत्ति होती है
योषित् पुरुष	५. स्त्री और पुरुष	योषित्	१०. स्त्री (और)
एव	६. उत्पन्न होते हैं (तथा)	पुरुषयोः	११. पुरुष की
हि।	४. और	इह ॥	९. इस संसार में

श्लोकार्थ—कार्यरूप में परिणत पाँच महाभूतों से स्त्री और पुरुष उत्पन्न होते हैं तथा उन दोनों के शारीरिक समागम से इस संसार में स्त्री और पुरुष की उत्पत्ति होती है ॥

षोडशः श्लोकः

एवं प्रवर्तते सर्गः स्थितिः संयम एव च।
गुणव्यतिकराद्राजन् मायया परमात्मनः ॥१६॥

पदच्छेद—

एवम् प्रवर्तते सर्गः स्थितिः संयम एव च।
गुण व्यतिकरात् राजन् मायया परमात्मनः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२. इस प्रकार	च।	१०. और
प्रवर्तते	१२. होता है	गुण	५. सत्त्व रज तम गुणों में
सर्गः	८. शरीर की सृष्टि	व्यतिकरात्	६. विषमता होने के कारण
स्थितिः	९. पालन	राजन्	१. हे ध्रुव जी
संयम	११. संहार	मायया	४. माया से
एव	७. ही	परमात्मनः ॥	३. परमात्मा श्री हरि की

श्लोकार्थ—हे ध्रुव जी ! इस प्रकार परमात्मा श्री हरि की माया से सत्त्व, रज, तम गुणों में विषमता होने के कारण ही शरीर की सृष्टि, पालन और संहार होता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

निमित्तमात्रं तत्रासीन्निर्गुणः पुरुषर्षभ ।
व्यक्ताव्यक्तमिदं विश्वं यत्र भ्रमति लोहवत् ॥१७॥

पदच्छेद— निमित्त मात्रम् तत्र आसीत् निर्गुणः पुरुष ऋषभ ।
व्यक्त अव्यक्तम् इदम् विश्वम् यत्र भ्रमति लोहवत् ॥

शब्दार्थ—

निमित्त	६.	निमित्त	व्यक्त	६.	कार्य
मात्रम्	५.	केवल	अव्यक्तम्	१०.	कारण रूप
तत्र	४.	उस सृष्टि में	इदम्	११.	यह
आसीत्	७.	है	विश्वम्	१२.	संसार (ऐसे)
निर्गुणः	३.	निर्गुण परमात्मा	यत्र	८.	जिस भगवान् के सहारे
पुरुष	१.	पुरुष	भ्रमति	१३.	घूमता है (जैसे)
ऋषभ ।	२.	श्रेष्ठ हे ध्रुव जी	लोहवत् ॥	१४.	चुम्बक के चारों ओर लोहा (घूमता है)

श्लोकार्थ—पुरुष श्रेष्ठ हे ध्रुव जी ! निर्गुण परमात्मा उस सृष्टि में केवल निमित्त है। जिस भगवान् के सहारे कार्य-कारणरूप यह संसार ऐसे घूमता है; जैसे चुम्बक के चारों ओर लोहा घूमता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

स खल्विदं भगवान् कालशक्त्या गुणप्रवाहेण विभक्तवीर्यः ।
करोत्यकर्तैव निहन्त्यहन्ता चेष्टा विभूम्नः खलु दुर्विभाव्या ॥१८॥

पदच्छेद— सः खलु इदम् भगवान् काल शक्त्या गुण प्रवाहेण विभक्त वीर्यः ।
करोति अकर्ता एव निहन्ति अहन्ता चेष्टा विभूम्नः खलु दुर्विभाव्या ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वे निर्गुण	करोति	१२.	सृष्टि करते हैं (और)
खलु	३.	ही	अकर्ता	६.	कर्ता न होने पर
इदम्	११.	इस संसार की	एव	१०.	भी
भगवान्	२.	भगवान्	निहन्ति	१४.	संहार करते हैं (अतः)
काल शक्त्या	४.	काल शक्ति के द्वारा	अहन्ता	१३.	संहारक न होने पर भी
गुण	५.	सत्त्वादि गुणों में	चेष्टा	१६	लीला
प्रवाहेण	६.	विषमता होने से	विभूम्नः	१५.	अनन्त परमात्मा की
विभक्त	८.	विभाग करके	खलु	१७.	अवश्य ही
वीर्यः ।	७.	अपनी शक्ति का	दुर्विभाव्या ॥	१८.	बड़ी अचिन्तनीय है

श्लोकार्थ—वे निर्गुण भगवान् ही काल शक्ति के द्वारा सत्त्वादि गुणों में विषमता होने से अपनी शक्ति का विभाग करके कर्ता न होने पर भी इस संसार की सृष्टि करते हैं। और संहारक न होने पर भी संहार करते हैं। अतः अनन्त परमात्मा की लीला अवश्य ही बड़ी अचिन्तनीय है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

सोऽनन्तोऽन्तकरः कालोऽनादिरादिकृदव्ययः ।
जनं जनेन जनयन्मारयन्मृत्युनान्तकम् ॥१९॥

पदच्छेद— सः अनन्तः अन्तकरः कालः अनादिः आदिकृत् अव्ययः ।
जनम् जनेन जनयन् मारयन् मृत्युना अन्तकम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	जनम्	९.	मनुष्यों को
अनन्तः	४.	अन्त से हीन होकर भी	जनेन	८.	(वह) मनुष्यों से
अन्तकरः	५.	सबका अन्त करने वाला (तथा)	जनयन्	१०.	उत्पन्न करता है (और)
कालः	२.	काल स्वरूप	मारयन्	१३.	नाश करता है
अनादिः	६.	आदि से रहित होकर भी	मृत्युना	११.	मृत्यु से
आदिकृत्	७.	सबका आदिकर्ता (है)	अन्तकम् ॥	१२.	सबका अन्त करने वाले का भी
अव्ययः ।	३.	अविनाशी परमात्मा स्वयं			

श्लोकार्थ—वह काल स्वरूप अविनाशी परमात्मा स्वयं अन्त से हीन होकर भी सबका अन्त करने वाला तथा आदि से रहित होकर भी सबका आदिकर्ता है। वह मनुष्यों से मनुष्यों को उत्पन्न करता है; और मृत्यु से सबका अन्त करने वाले का भी नाश करता है ॥

विंशः श्लोकः

न वै स्वपक्षोऽस्य विपक्ष एव वा परस्य मृत्योर्विशतः शमं प्रजाः ।
तं धावमानमनुधावन्त्यनीशा यथा रजांस्यनिलं भूतसङ्घाः ॥२०॥

पदच्छेद— न वै स्व पक्षः अस्य विपक्षः एव वा परस्य मृत्योः विशतः शमम् प्रजाः ।
तम् धावमानम् अनुधावन्ति अनीशाः यथा रजांसि अनिलम् भूत सङ्घाः ॥

शब्दार्थ—

न वै	१८.	नहीं है	तम्	९.	उस काल के (पीछे-पीछे)
स्व पक्षः	१५.	कोई मित्रपक्ष	धावमानम्	८.	परिवर्तनशील
अस्य	१३.	इस	अनुधावन्ति	१०.	दौड़ते हैं
विपक्षः एव	१७.	शत्रुपक्ष भी	अनीशाः	७.	फल की प्राप्ति में असमर्थ होते हुये
वा	१६.	और	यथा	१.	जैसे
परस्य	१४.	परात्पर (काल भगवान् का)	रजांसि	२.	धूली
मृत्योः विशतः	१२.	सम्पूर्ण प्राणियों में सर्व व्याप्त	अनिलम्	३.	वायु के साथ उड़ती है (वैसे ही)
शमम्	१०.	एक साथ	भूत	४.	पञ्च महाभूतों का
प्रजाः ।	६.	प्राणी	सङ्घाः ॥	५.	समूह रूप

श्लोकार्थ—जैसे धूली वायु के साथ उड़ती है; वैसे ही पञ्च महाभूतों का समूह रूप प्राणी फल की प्राप्ति में असमर्थ होते हुये परिवर्तनशील उस काल के पीछे-पीछे एक साथ दौड़ते हैं। सम्पूर्ण प्राणियों में सर्वव्याप्त इस परात्पर काल भगवान् का कोई मित्रपक्ष और शत्रुपक्ष भी नहीं है ॥

एकविंशः श्लोकः

आयुषोऽपचयं जन्तोस्तथैवोपचयं विभुः ।
उभाभ्यां रहितः स्वस्थो दुःस्थस्य विदधात्यसौ ॥२१॥

पदच्छेद—

आयुषः अपचयम् जन्तोः तथैव उपचयम् विभुः ।
उभाभ्याम् रहितः स्वस्थः दुःस्थस्य विदधाति असौ ॥

शब्दार्थ—

आयुषः	५.	आयु का	उभाभ्याम्	१०.	दोनों से
उपचयम्	६.	क्षय (तथा)	रहितः	११.	रहित (और)
जन्तोः	४.	प्राणी की	स्वस्थः	१२.	अपने स्वरूप में स्थित है
तथैव	७.	उसी प्रकार	दुःस्थस्य	३.	दुःख में स्थित
उपचयम्	८.	वृद्धि	विदधाति	९.	करता है (किन्तु वह स्वयं)
विभुः ।	२.	अनन्त परमात्मा	असौ ॥	१.	वह

श्लोकार्थ—वह अनन्त परमात्मा दुःख में स्थित प्राणी की आयु का क्षय तथा उसी प्रकार वृद्धि करता है; किन्तु वह स्वयं दोनों से रहित और अपने स्वरूप में स्थित है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

केचित्कर्म वदन्त्येनं स्वभावमपरे नृप ।
एके कालं परे दैवं पुंसः काममुतापरे ॥२२॥

पदच्छेद—

केचित् कर्म वदन्ति एनम् स्वभावम् अपरे नृप ।
एके कालम् परे दैवम् पुंसः कामम् उत अपरे ॥

शब्दार्थ—

केचित्	३.	मीमांसक लोग	एके	७.	कुछ लोग
कर्म	४.	कर्मस्वरूप	कालम्	८.	काल
वदन्ति	१४.	कहते हैं	परे	९.	ज्योतिषी लोग
एनम्	२.	उस परमात्मा को	दैवम्	१०.	भाग्य
स्वभावम्	६.	स्वभाव	पुंसः	१२.	मनुष्यों का
अपरे	५.	नास्तिक	कामम्	१३.	काम
नृप ।	१.	हे ध्रुव जी	उत अपरे ॥	११.	तथा कामी जन

श्लोकार्थ—हे ध्रुव जी ! उस परमात्मा को मीमांसक लोग कर्म स्वरूप, नास्तिक स्वभाव कुछ लोग काल, ज्योतिषी लोग भाग्य तथा कामी जन मनुष्यों का काम कहते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अव्यक्तस्याप्रमेयस्य नानाशक्त्युदयस्य च।
न वै चिकीर्षितं तात को वेदाथ स्वसम्भवम् ॥२३॥

पदच्छेद—

अव्यक्तस्य अप्रमेयस्य नाना शक्ति उदयस्य च।
न वै चिकीर्षितम् तात कः वेद अथ स्व सम्भवम् ॥

शब्दार्थ—

अव्यक्तस्य	२.	कारण स्वरूप	वै	९.	अवश्य ही
अप्रमेयस्य	३.	प्रमाणों से अज्ञात	चिकीर्षितम्	८.	करने की इच्छा को
नाना	५.	अनेक	तात	१.	हे तात
शक्ति	६.	शक्तियों से	कः	१०.	कोई
उदयस्य	७.	सम्पन्न (उस परमात्मा की)	वेद	१२.	जानता है
च।	४.	और	अथ	१३.	तथा
न	११.	नहीं	स्व सम्भवम् ॥	१४.	अपने मूल कारण को तो (जान ही नहीं सकता है)

श्लोकार्थ—हे तात ! कारण स्वरूप प्रमाणों से अज्ञात और अनेक शक्तियों से सम्पन्न उस परमात्मा की करने की इच्छा को अवश्य ही कोई नहीं जानता है तथा अपने मूल कारण को तो जान ही नहीं सकता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

न चैते पुत्रक भ्रातुर्हन्तारो धनदानुगाः।
विसर्गादानयोस्तात पुंसो दैवं हि कारणम् ॥२४॥

पदच्छेद—

न च एते पुत्रक भ्रातुः हन्तारः धनद अनुगाः।
विसर्ग आदानयोः तात पुंसः दैवम् हि कारणम् ॥

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं है	विसर्ग	११.	सृष्टि (और)
च	८.	किन्तु	आदानयोः	१२.	नाश में
एते	२.	ये	तात	९.	हे तात
पुत्रक	१.	हे पुत्र	पुंसः	१०	मनुष्य की
भ्रातुः	४.	तुम्हारे भाई को	दैवम्	१३.	ईश्वर
हन्तारः	५.	मारने वाले	हि	१४.	ही
धनद अनुगाः।	३.	कुबेर के अनुचर	कारणम् ॥	१५	कारण

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! ये कुबेर के अनुचर तुम्हारे भाई को मारने वाले नहीं हैं। किन्तु हे तात ! मनुष्य की सृष्टि और नाश में ईश्वर ही कारण है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

स एव विश्वं सृजति स एवावति हन्ति च।
अथापि ह्यनहंकारान्नाज्यते गुणकर्मभिः ॥२५॥

पदच्छेद— सः एव विश्वम् सृजति सः एव अवति हन्ति च।
अथ अपि हि अनहंकारात् न अज्यते गुण_कर्मभिः॥

शब्दार्थ—

सः एव	१.	वही (परमात्मा)	अथ अपि	८.	फिर भी
विश्वम्	२.	संसार की	हि	१०.	ही (वह)
सृजति	३.	सृष्टि करता है	अनहंकारात्	९.	अहंकार (रहित होने से)
सः एव	४.	वही	न	१३.	नहीं
अवति	५.	पालन करता है	अज्यते	१४.	लिप्त होता है
हन्ति	७.	संहार भी करता है	गुण	१२.	फल में
च।	६.	और	कर्मभिः॥	११.	कर्म

श्लोकार्थ—वही परमात्मा संसार की सृष्टि करता है, वही पालन करता है और संहार भी करता है। फिर भी अहंकार रहित होने से ही वह कर्म फल में लिप्त नहीं होता है।

षड्विंशः श्लोकः

एष भूतानि भूतात्मा भूतेशो भूतभावनः।
स्वशक्त्या मायया युक्तः सृजत्यत्ति च पाति च ॥२६॥

पदच्छेद— एषः भूतानि भूत आत्मा भूत ईशः भूत भावनः।
स्व शक्त्या मायया युक्तः सृजति अत्ति च पाति च॥

शब्दार्थ—

एषः	८.	यह परमात्मा	स्व	९.	अपनी
भूतानि	१३.	प्राणियों की	शक्त्या	१०.	शक्ति
भूत	१.	प्राणियों की	मायया	११.	माया से
आत्मा	२.	आत्मा	युक्तः	१२.	युक्त होकर
भूत	३.	प्राणियों के	सृजति	१४.	सृष्टि करता है
ईशः	४.	नियन्ता	अत्ति च	१५.	संहार करता है और
भूत	६.	प्राणियों के	पाति	१६.	पालन करता है
भावनः।	७.	रक्षक	च॥	५.	तथा

श्लोकार्थ—प्राणियों की आत्मा, प्राणियों के नियन्ता तथा प्राणियों के रक्षक यह परमात्मा अपनी शक्ति माया से युक्त होकर प्राणियों की सृष्टि करता है, संहार करता है और पालन करता है॥

सप्तविंशः श्लोकः

तमेव मृत्युममृतं तात दैवं सर्वात्मनोपेहि जगत्परायणम् ।
यस्मै बलिं विश्वसृजो हरन्ति गावो यथा वै नसि दामयन्त्रिताः ॥४७॥

पदच्छेद—तम् एव यस्मै मृत्युम् तात दैवम् सर्व आत्मना उपेहि जगत् परायणम् ।
यस्मै बलिम् विश्वसृजः हरन्ति गावः यथा वै नसि दाम यन्त्रिताः ॥

शब्दार्थ—

तम् एव	१६.	उसी	यस्मै	८.	जिसे
मृत्युम्	१२.	मृत्यु रूप (और)	बलिम्	६.	उपहार
अमृतम्	१३.	अमृत स्वरूप (तथा)	विश्वसृजः	७.	संसार के रचयिता ब्रह्मा जी
तात	१.	हे तात	हरन्ति	१०.	भेंट करते हैं
दैवम्	१७.	ईश्वर की	गावः	५.	बैल
सर्व आत्मना	११.	(तुम) सब प्रकार से	यथा	२.	जैसे
उपेहि	१८.	शरण में जाओ	वै	४.	ही
जगत्	१४.	संसार के	नसि दाम	३.	नाक में नाथने से से
परायणम् ।	१५.	आश्रय	यन्त्रिताः ॥	६.	उपयोगी होता है (उसी प्रकार)

श्लोकार्थ—हे तात ! जैसे नाक में नाथने से ही बैल उपयोगी होता है; उसी प्रकार संसार के रचयिता ब्रह्मा जी जिसे उपहार भेंट करते हैं, तुम सब प्रकार से मृत्युरूप और अमृत स्वरूप तथा संसार के आश्रय उसी ईश्वर की शरण में जाओ ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

यः पञ्चवर्षो जननीं त्वं विहाय मातुः सपत्न्या वचसा भिन्नमर्मा ।
वनं गतस्तपसा प्रत्यगक्षमाराध्य लेभे मूर्ध्नि पदं त्रिलोक्याः ॥२८॥

पदच्छेद— यः पञ्चवर्षः जननीम् त्वम् विहाय मातुः सपत्न्या वचसा भिन्न मर्मा ।
वनम् गतः तपसा प्रत्यगक्षम् आराध्य लेभे मूर्ध्नि पदम् त्रिलोक्याः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	मर्मा ।	७.	हृदय में
पञ्चवर्षः	३.	पाँच वर्ष की अवस्था में	वनम् गतः	११.	वन को चले गये (तथा वहाँ)
जननीम्	६.	अपनी माँ को	तपसा	१२.	तपस्या से
त्वम्	२.	तुम	प्रत्यगक्षम्	१३.	सर्वान्तिर्यामी भगवान् की
विहाय	१०.	छोड़कर	आराध्य	१४.	आराधना करके
मातुः	५.	माता के	लेभे	१८.	प्राप्त किया
सपत्न्या	४.	सौतेली	मूर्ध्नि	१६.	ऊपर
वचसा	६.	वचन से	पदम्	१७.	सर्वोत्तम स्थान को
भिन्न	८.	आहत होने के कारण	त्रिलोक्याः ॥	१५.	तीनों लोकों में

श्लोकार्थ—जो तुम पाँच वर्ष की अवस्था में सौतेली माता के वचन से हृदय में आहत होने के कारण अपनी माँ को छोड़कर वन को चले गये तथा वहाँ तपस्या से सर्वान्तिर्यामी भगवान् की आराधना करके तीनों लोकों के ऊपर सर्वोत्तम स्थान को प्राप्त किया ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तमेनमङ्गात्मनि मुक्तविग्रहे व्यपाश्रितं निर्गुणमेकमक्षरम् ।
आत्मानमन्विच्छ विमुक्तमात्मदृग् यस्मिन्निदं भेदमसत् प्रतीयते ॥२९॥

पदच्छेद— तम् एनम् आत्मनि मुक्त विग्रहे व्यपाश्रितम् निर्गुणम् एकम् अक्षरम् ।
आत्मानम् अन्विच्छ विमुक्तम् आत्मदृक् यस्मिन् इदम् भेदम् असत् प्रतीयते ॥

शब्दार्थ—

तम्	९.	उन	आत्मानम्	१०.	परमात्मा
एनम्	११.	भगवान् श्री हरि का	अन्विच्छ	१३.	ध्यान करो
अङ्ग	१.	हे तात	विमुक्तम्	८.	नित्य मुक्त
आत्मनि	४.	अपने हृदय में	आत्मदृक्	१२.	अध्यात्म दृष्टि से
मुक्त	३.	रहित	यस्मिन्	१४.	जिस परमात्मा में
विग्रहे	२.	वैर-भाव से	इदम्	१६.	यह
व्यपाश्रितम्	५.	स्थापित	भेदम्	१७.	जगत् का भेद
निर्गुणम्	६.	निर्गुण	असत्	१५.	असत्य होने पर भी
एकम् अक्षरम् ।	७.	अद्वितीय अविनाशी	प्रतीयते ॥	१८.	मालूम पड़ता है

श्लोकार्थ—हे तात ! वैर-भाव से रहित अपने हृदय में स्थापित निर्गुण, अद्वितीय, अविनाशी नित्य-मुक्त उस परमात्मा भगवान् श्री हरि का अध्यात्म दृष्टि से ध्यान करो; जिस परमात्मा में असत्य होने पर भी जगत् का यह भेद मालूम पड़ता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

त्वं प्रत्यगात्मनि तदा भगवत्यनन्त आनन्दमात्र उपपन्नसमस्तशक्तौ ।
भक्तिं विधाय परमां शनकैरविद्याग्रन्थिं विभेत्स्यसि ममाहमिति प्ररूढम् ॥३०॥

पदच्छेद—त्वम् प्रत्यगात्मनि तदा भगवति अनन्ते आनन्दमात्रे उपपन्न समस्त शक्तौ ।
भक्तिम् विधाय परमाम् शनकैः अविद्या ग्रन्थिम् विभेत्स्यसि मम अहम् इति प्ररूढम् ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	१.	तुम	भक्तिम् विधाय	११.	भक्ति करके
प्रत्यगात्मनि	७.	सर्वान्तर्यामी	परमाम्	१०.	अनन्य
तदा	२.	उस ध्यान के कारण	शनकैः	१७.	शीघ्र (हो)
भगवति	८.	भगवान्	अविद्या	१५.	अज्ञान की
अनन्ते	९.	अनन्त में	ग्रन्थिम्	१६.	गांठ को
आनन्दमात्रे	६.	केवल आनन्द स्वरूप	विभेत्स्यसि	१८.	काट डालोगे
उपपन्न	५.	सम्पन्न	मम	१३.	मेरा
समस्त	३.	सम्पूर्ण	अहम्	१२.	मैं (और)
शक्तौ ।	४.	शक्तियों से	इति प्ररूढम् ॥	१४.	इस प्रकार दृढ़ हुई

श्लोकार्थ—तुम उस ध्यान के कारण सम्पूर्ण शक्तियों से सम्पन्न केवल आनन्द स्वरूप सर्वान्तर्यामी भगवान् अनन्त में अनन्य भक्ति करके मैं और मेरा इस प्रकार दृढ़ हुई अज्ञान की गाँठ को काट डालोगे ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

संयच्छ रोषं भद्रं ते प्रतीपं श्रेयसां परम् ।
श्रुतेन भूयसा राजन्नगदेन यथाऽऽमयम् ॥३१॥

पदच्छेद—

संयच्छ रोषम् भद्रम् ते प्रतीपम् श्रेयसाम् परम् ।
श्रुतेन भूयसा राजन् अगदेन यथा आमयम् ॥

शब्दार्थ—

संयच्छ	८.	शान्त करो (क्योंकि वह)	श्रुतेन	६.	उपदेश से (तुम)
रोषम्	७.	अपने क्रोध को	भूयसा	५	मेरे पर्याप्त
भद्रम्	१२.	कल्याण हो	राजन्	१.	हे राजन् ध्रुव जी
ते	११.	तुम्हारा	अगदेन	३.	ओषधि से
प्रतीपम्	१०.	विरोधी है	यथा	२.	जैसे
श्रेयसाम् परम् ।	९.	कल्याण मार्ग का सबसे बड़ा	आमयम् ॥	४.	रोग (शान्त किया जाता है) वैसे

श्लोकार्थ—हे राजन् ध्रुव जी ! जैसे औषधि से रोग शान्त किया जाता है, वैसे मेरे पर्याप्त उपदेश से तुम अपने क्रोध को शान्त करो; क्योंकि वह कल्याण मार्ग का सबसे बड़ा विरोधी है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

येनोपसृष्टात्पुरुषाल्लोक उद्विजते भृशम् ।
न बुधस्तद्वशं गच्छेदिच्छन्नभयमात्मनः ॥३२॥

पदच्छेद—

येन उपसृष्टात् पुरुषात् लोकः उद्विजते भृशम् ।
न बुधः तद् वशम् गच्छेत् इच्छन् अभयम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

येन	१.	जिस क्रोध के	बुधः	१०.	विद्वान् मनुष्य को
उपसृष्टात्	२.	वश में हुये	तद्	११.	उस क्रोध के
पुरुषात्	३.	मनुष्य से	वशम्	१२.	वश में
लोकः	४.	लोग	गच्छेत्	१४.	होना चाहिये
उद्विजते	६.	भय करते हैं (अतः)	इच्छन्	९.	इच्छुक
भृशम् ।	५.	बहुत	अभयम्	८.	निर्भय कर के
न	१३.	नहीं	आत्मनः ॥	७.	अपने को

श्लोकार्थ—जिस क्रोध के वश में हुये मनुष्य से लोग बहुत भय करते हैं, अपने को निर्भय करके इच्छुक विद्वान् मनुष्य को उस क्रोध के वश में नहीं होना चाहिये ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

हेलनं गिरिशभ्रातुर्धनदस्य त्वया कृतम् ।
यज्जघ्निवान् पुण्यजनान्भ्रातृघ्नानित्यमर्षितः ॥३३॥

पदच्छेद—

हेलनम् गिरिश भ्रातुः धनदस्य त्वया कृतम् ।
यद् जघ्निवान् पुण्यजनान् भ्रातृघ्नान् इति अमर्षितः ॥

शब्दार्थ—

हेलनम्	११.	अपमान	यद्	५.	जो
गिरिश	७.	भगवान् शंकर के	जघ्निवान्	६.	वध किया है (इससे)
भ्रातुः	८.	सखा	पुण्यजनान्	४.	बहुत से यक्षों का
धनदस्य	९.	कुबेर का	भ्रातृघ्नान्	१.	मेरे भाई को मारा है
त्वया	१०.	तुमने	इति	२.	इस
कृतम् ।	१२.	किया है	अमर्षितः ॥	३.	क्रोध से (तुमने)

श्लोकार्थ—मेरे भाई को मारा है; इस क्रोध से तुमने बहुत से यक्षों का जो वध किया है, इससे भगवान् शंकर के सखा कुबेर का तुमने अपमान किया है ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तं प्रसादय वत्साशु संनत्या प्रश्रयोक्तिभिः ।
न यावन्महतां तेजः कुलं नोऽभिभविष्यति ॥३४॥

पदच्छेद—

तम् प्रसादय वत्स आशु संनत्या प्रश्रय उक्तिभिः ।
न यावत् महताम् तेजः कुलम् नः अभिभविष्यति ॥

शब्दार्थ—

तम्	१२.	उन कुबेर जी को	न	७.	नहीं
प्रसादय	१४.	प्रसन्न करो	यावत्	२.	जब-तक
वत्स	१.	हे पुत्र ध्रुव जी	महताम्	३.	महा पुरुषों का
आशु	१३.	शीघ्र ही	तेजः	४.	तेज
संनत्या	११.	प्रणाम के द्वारा	कुलम्	६.	वंश का
प्रश्रय	९	(तुम) विनयपूर्ण	नः	५.	हमारे
उक्तिभिः ।	१०.	वचनों से (और)	अभिभविष्यति ॥	८.	नाश कर देता है (उसके पहले ही)

श्लोकार्थ—हे पुत्र ध्रुव जी ! जब-तक महापुरुषों का तेज हमारे वंश का नाश नहीं कर देता है; उसके पहले ही तुम विनयपूर्ण वचनों से और प्रणाम के द्वारा उन कुबेर जी को प्रसन्न करो ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एवं स्वायम्भुवः पौत्रमनुशास्य मनुर्ध्रुवम् ।
तेनाभिवन्दितः साकमृषिभिः स्वपुरं ययौ ॥३५॥

पदच्छेद—

एवम् स्वायम्भुवः पौत्रम् अनुशास्य मनुः ध्रुवम् ।
तेन अभिवन्दितः साकम् ऋषिभिः स्व पुरम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	तेन	७.	ध्रुव जी ने (उनको)
स्वायम्भुवः	२.	स्वायम्भुव	अभिवन्दितः	८.	प्रणाम किया (तत्पश्चात् वे)
पौत्रम्	४.	अपने पौत्र	साकम्	१०.	साथ
अनुशास्य	६.	उपदेश दिया (तदनन्तर)	ऋषिभिः	९.	ऋषियों के
मनुः	३.	मनु ने	स्व पुरम्	११.	अपने लोक को
ध्रुवम् ।	५.	ध्रुव को	ययौ ॥	१२.	चले गये

श्लोकार्थ—इस प्रकार स्वायम्भुव मनु ने अपने पौत्र ध्रुव को उपदेश दिया । तदनन्तर ध्रुव जी ने उनको प्रणाम किया । तत्पश्चात् वे ऋषियों के साथ अपने लोक को चले गये ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे एकादशोऽध्यायः ॥११॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

द्वादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—ध्रुवं निवृत्तं प्रतिबुद्ध्य वैशसादपेतमन्युं भगवान् धनेश्वरः ।
तत्रागतश्चारणयक्षकिन्नरैः संस्तूयमानोऽभ्यवदत्कृताञ्जलिम् ॥१॥

पदच्छेद— ध्रुवम् निवृत्तम् प्रतिबुद्ध्य वैशसात् अपेत मन्युम् भगवान् धनेश्वरः ।
तत्र आगतः चारणयक्ष किन्नरैः संस्तूयमानः अभ्यवदत् कृत अञ्जलिम् ॥

शब्दार्थ—

ध्रुवम्	१	ध्रुव जी को	तत्र	९.	वहाँ
निवृत्तम्	५.	विमुख	आगतः	१०.	आये (उस समय)
प्रतिबुद्ध्य	६.	जानकर	चारणयक्ष	११.	चारण यक्ष
वैशसात्	४	हिंसा से	किन्नरैः	१२.	किन्नर गण (उनकी)
अपेत	३.	रहित (और)	संस्तूयमानः	१३.	स्तुति करने लगे (तदनन्तर वे)
मन्युम्	२.	क्रोध से	अभ्यवदत्	१६.	बोले
भगवान्	७.	भगवान्	कृत	१५.	जोड़े हुये (ध्रुव जी से)
धनेश्वरः ।	८.	कुबेर जी	अञ्जलिम् ॥	१४.	हाथ

श्लोकार्थ—ध्रुव जी को क्रोध से रहित और हिंसा से विमुख जानकर भगवान् कुबेर जी वहाँ आये । उस समय चारण, यक्ष, किन्नरगण उनकी स्तुति करने लगे । तदनन्तर वे हाथ जोड़े हुये ध्रुव जी से बोले ॥

द्वितीयः श्लोकः

धनद उवाच—भो भोः क्षत्रियदायाद परितुष्टोऽस्मि तेऽनघ ।
यस्त्वं पितामहादेशाद्वैरं दुस्त्यजमत्यजः ॥२॥

पदच्छेद— भो भोः क्षत्रिय दायाद परितुष्टः अस्मि ते अनघ ।
यः त्वम् पितामह आदेशात् वैरं दुस्त्यजम् अत्यजः ॥

शब्दार्थ—

भो भोः	१.	हे	यः	८.	जो
क्षत्रिय	३.	क्षत्रिय	त्वम्	९.	तुमने
दायाद	४.	कुमार	पितामह	१०.	अपने दादा की
परितुष्टः	६.	प्रसन्न	आदेशात्	११.	आज्ञा से
अस्मि	७.	हूँ	वैरं	१३.	विरोध को
ते	५.	(मैं) तुम पर	दुस्त्यजम्	१२.	कठिनाई से छोड़ने योग्य
अनघ ।	२.	निष्पाप	अत्यजः ॥	१४.	त्याग दिया है

श्लोकार्थ—हे निष्पाप ! क्षत्रिय कुमार मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, जो तुमने अपने दादा की आज्ञा से कठिनाई से छोड़ने योग्य विरोध को त्याग दिया है ।

तृतीयः श्लोकः

न भवानवधीद्यक्षान्न यक्षा भ्रातरं तव ।
काल एव हि भूतानां प्रभुरप्ययभावयोः ॥३॥

पदच्छेद—
न भवान् अवधीत् यक्षान् न यक्षाः भ्रातरम् तव ।
कालः एव हि भूतानाम् प्रभुः अप्यय भावयोः ॥

शब्दार्थ—

न	३. नहीं		कालः	१०. काल
भवान्	१. आपने		एव	११. ही
अवधीत्	४. वध किया है (और)		हि	९. क्योंकि
यक्षान्	२. यक्षों का		भूतानाम्	१२. प्राणियों की
न	८. नहीं (वध किया)		प्रभुः	१५. समर्थ है
यक्षाः	५. यक्षों ने		अप्यय	१३. उत्पत्ति (और)
भ्रातरम्	७. भाई का		भावयोः ॥	१४. विनाश करने में
तव ।	६. आपके			

श्लोकार्थ—आपने यक्षों का वध नहीं किया है और यक्षों ने आपके भाई का वध नहीं किया है। क्योंकि काल ही प्राणियों की उत्पत्ति और विनाश करने में समर्थ है ॥

चतुर्थः श्लोकः

अहं त्वमित्यपार्था धीरज्ञानात्पुरुषस्य हि ।
स्वाप्नीवाभात्यतद्ध्यानाद्यया बन्धविपर्ययौ ॥४॥

पदच्छेद— अहम् त्वम् इति अपार्था धीः अज्ञानात् पुरुषस्य हि ।
स्वाप्नी इव आभाति अतद् ध्यानात् यया बन्ध विपर्ययौ ॥

शब्दार्थ—

अहम्	६. मैं (और)		स्वाप्नी	९. स्वप्न ज्ञान के
त्वम्	७. तुम		इव	१०. समान
इति	८. इस प्रकार		आभाति	१३. हो जाता
अपार्था	११. असत्		अतद्	१. परमात्मा का
धीः	१२. बुद्धि		ध्यानात्	२. ध्यान न करने से
अज्ञानात्	४. अज्ञान के कारण		यया	१४. जिससे जन्म-मरण का
पुरुषस्य	५. मनुष्यों की		बन्ध	१५ बन्धन (और)
हि ।	३. ही		विपर्ययौ ॥	१६. दुःख होता है

श्लोकार्थ— परमात्मा का ध्यान न करने से ही अज्ञान के कारण मनुष्यों की मैं और तुम इस प्रकार स्वप्नज्ञान के समान असत् बुद्धि हो जाती है, जिससे जन्म-मरण का बन्धन और दुःख होता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

तद्गच्छ ध्रुव भद्रं ते भगवन्तमधोक्षजम् ।
सर्वभूतात्मभावेन सर्वभूतात्मविग्रहम् ॥५॥

पदच्छेद—

तद् गच्छ ध्रुव भद्रम् ते भगवन्तम् अधोक्षजम् ।
सर्वभूत आत्मभावेन सर्वभूत आत्म विग्रहम् ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	इसलिये	अधोक्षजम् ।	१०.	श्री हरि को (भजो)
गच्छ	३.	जाओ (तथा)	सर्वभूत	४.	समस्त प्राणियों में
ध्रुव	२.	हे ध्रुव	आत्मभावेन	५.	आत्मा की भावना करके
भद्रम्	१२.	कल्याण हो	सर्वभूत	६.	समस्त प्राणियों की
ते	११.	तुम्हारा	आत्म	७.	आत्मा (और)
भगवन्तम्	९.	भगवान्	विग्रहम् ॥	८.	शरीर

श्लोकार्थ—इसलिये हे ध्रुव ! जाओ तथा समस्त प्राणियों में आत्मा की भावना करके समस्त प्राणियों की आत्मा और शरीर भगवान् श्री हरि को भजो । तुम्हारा कल्याण हो ॥

षष्ठः श्लोकः

भजस्व भजनीयाङ्घ्रिमभवाय भवच्छिदम् ।
युक्तं विरहितं शक्त्या गुणमय्याऽऽत्ममायया ॥६॥

पदच्छेद—

भजस्व भजनीय अङ्घ्रिम् अभवाय भव छिदम् ।
युक्तम् विरहितम् शक्त्या गुणमय्या आत्म मायया ॥

शब्दार्थ—

भजस्व	६.	भजन करो (जो)	युक्तम्	११.	युक्त हैं (और)
भजनीय	२.	भजन करने योग्य हैं	विरहितम्	१२.	रहित भी हैं
अङ्घ्रिम्	१.	जिनके चरण	शक्त्या	१०.	शक्ति से
अभवाय	५.	मोक्ष के लिये	गुणमय्या	७.	त्रिगुणात्मिका
भव	३.	भवबन्धन को	आत्म	८.	अपनी
छिदम् ।	४.	काटने वाले (उन भगवान् का)	मायया ॥	९.	माया

श्लोकार्थ—जिनके चरण भजन करने योग्य हैं, भव बन्धन को काटने वाले उन भगवान् का मोक्ष के लिये भजन करो जो त्रिगुणात्मिका अपनी माया शक्ति से युक्त हैं और रहित भी हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

वृणीहि कामं नृप यन्मनोगतं मत्तस्त्वमौत्तानपदेऽविशङ्कितः ।
वरं वरार्होऽम्बुजनाभपादयोरनन्तरं त्वां वयमङ्ग शुश्रुम ॥७॥

पदच्छेद—वृणीहि कामम् नृप यत् मनोगतम् मत्तः त्वम् औत्तानपादे अविशङ्कितः ।
वरम् वरार्हः अम्बुजनाभ पादयोः अनन्तरम् त्वाम् वयम् अङ्ग शुश्रुम ॥

शब्दार्थ—

वृणीहि	१०.	माँगो (तुम)	वरम्	९.	वरदान
कामम्	८.	मन चाहा	वरार्हः	११.	वर पाने के योग्य हो
नृप	२.	हे राजन् ध्रुव	अम्बुजनाभ	१६.	कमलनाभ भगवान् के
यत्	५.	जो	पादयोः	१७.	चरणों के
मनोगतम्	६.	तुम्हारे मन में है (वह)	अनन्तरम्	१८.	अनन्य सेवक हो
मत्तः	७.	मुझसे	त्वाम्	१५.	तुम
त्वम्	३.	तुम	वयम्	१३.	हम लोगों ने
औत्तानपादे	१०.	उत्तानपाद नन्दन	अङ्ग	१२.	हे तात
अविशङ्कितः ।	४.	निःशंक होकर	शुश्रुम ॥	१४.	सुना है (कि)

श्लोकार्थ—उत्तानपाद नन्दन हे राजन् ध्रुव ! तुम निःशंक होकर जो तुम्हारे मन में है वह मुझसे मनचाहा वरदान माँगो । तुम वर पाने के योग्य हो । हे तात ! हमलोगों ने सुना है कि तुम कमलनाभ भगवान् के चरणों के अनन्य सेवक हो ॥

अष्टमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच–स राजराजेन वराय चोदितो ध्रुवो महाभागवतो महामतिः ।
हरौ स वव्रेऽचलितां स्मृतिं यया तरत्ययत्नेन दुरत्ययं तमः ॥८॥

पदच्छेद— सः राजराजेन वराय चोदितः ध्रुवः महा भागवतः महामतिः ।
हरौ सः वव्रे अचलिताम् स्मृतिम् यया तरति अयत्नेन दुरत्ययम् तमः ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	उन	सः	९.	उन्होंने
राजराजेन	१.	कुबेर जी ने	वव्रे	१३.	वरदान माँगा
वराय	२.	वर माँगने के लिये	अचलिताम्	११.	निरन्तर
चोदितः	८.	कहा (तदनन्तर)	स्मृतिम्	१२.	स्मरण रहे (यह)
ध्रुवः	७.	ध्रुव जी से (ऐसा)	यया	१४.	जिससे (मनुष्य)
महा	३.	परम	तरति	१८.	पार कर लेता है
भागवतः	४.	भगवद् भक्त (एवं)	अयत्नेन	१५.	बिना श्रम के
महामतिः ।	५.	महान् बुद्धिमान्	दुरत्ययम्	१६.	दुस्तर
हरौ	१०.	भगवान् श्री हरि का	तमः ॥	१७.	अज्ञान को

श्लोकार्थ—कुबेर जी ने वर माँगने के लिये परम भगवद्भक्त एवं महान् बुद्धिमान् उन ध्रुव जी से ऐसा कहा ! तदनन्तर उन्होंने 'भगवान् श्री हरि का निरन्तर स्मरण रहे' यह वरदान माँगा; जिससे मनुष्य बिना श्रम के दुस्तर अज्ञान को पार कर लेता है ॥

नवमः श्लोकः

तस्य प्रीतेन मनसा तां दत्त्वैडविडस्ततः ।
पश्यतोऽन्तर्दधे सोऽपि स्वपुरं प्रत्यपद्यत ॥९॥

पदच्छेद—

तस्य प्रीतेन मनसा ताम् दत्त्वा ऐडविडः ततः ।
पश्यतः अन्तर्दधे सः अपि स्व पुरम् प्रत्यपद्यत ॥

शब्दार्थ—

तस्य	४.	ध्रुव जी को	पश्यतः	७.	सबके-देखते-देखते
प्रीतेन	२.	प्रसन्न	अन्तर्दधे	९.	अन्तर्ध्यान हो गये
मनसा	३.	मन से	सः	१०.	तदनन्तर वे ध्रुव जी
ताम्	५.	वह वरदान	अपि	११.	भी
दत्त्वा	६.	देकर	स्व	१२.	अपने
ऐडविडः	१.	इडविड़ा के पुत्र (कुबेर जी)	पुरम्	१३.	नगर को
ततः ।	८.	वहाँ से	प्रत्यपद्यत ॥	१४.	लौट आये

श्लोकार्थ—इडविडा के पुत्र कुबेर जी प्रसन्न मन से ध्रुव जी को वह वरदान देकर सबके देखते-देखते वहाँ से अन्तर्ध्यान हो गये । तदनन्तर वे ध्रुव जी भी अपने नगर को लौट आये ॥

दशमः श्लोकः

अथायजत यज्ञेशं क्रतुभिर्भूरिदक्षिणैः ।
द्रव्यक्रियादेवतानां कर्म कर्मफलप्रदम् ॥१०॥

पदच्छेद—

अथ अयजत यज्ञेशम् क्रतुभिः भूरि दक्षिणैः ।
द्रव्य क्रिया देवतानाम् कर्म कर्मफल प्रदम् ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	उसके बाद ध्रुव जी ने	द्रव्य	७.	(वे भगवान् सामग्री)
अयजत	६.	आराधना की	क्रिया	८.	विधि और
यज्ञेशम्	५.	यज्ञ पुरुष की	देवतानाम्	९.	देवता सम्बन्धी
क्रतुभिः	४.	यज्ञों से	कर्म	१०.	कर्म (तथा)
भूरि	२.	अधिक	कर्मफल	११.	कर्मों के फल को
दक्षिणैः ।	३.	दक्षिणा वाले	प्रदम् ॥	१२.	प्रदान करते हैं

श्लोकार्थ—उसके बाद ध्रुव जी ने अधिक दक्षिणा वाले यज्ञों से यज्ञ पुरुष की आराधना की । वे भगवान् सामग्री, विधि और देवता सम्बन्धी कर्म तथा कर्मों के फल को प्रदान करते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

सर्वात्मन्यच्युतेऽसर्वे तीव्रौघां भक्तिमुद्वहन् ।
ददर्शात्मनि भूतेषु तमेवावस्थितं विभुम् ॥११॥

पदच्छेद—

सर्वं आत्मनि अच्युते असर्वे तीव्र ओघाम् भक्तिम् उद्वहन् ।
ददर्श आत्मनि भूतेषु तम् एव अवस्थितम् विभुम् ॥

शब्दार्थ—

सर्वं	२.	सम्पूर्ण प्राणियों की	ददर्श	१४.	देखने लगे
आत्मनि	३.	आत्मा	आत्मनि	८.	अपनी आत्मा में (तथा)
अच्युते	४.	भगवान् श्री हरि में	भूतेषु	९.	समस्त प्राणियों में
असर्वे	१.	निर्गुण (तथा)	तम्	११.	उन
तीव्र ओघम्	५.	प्रबल वेगवाले	एव	१२.	ही
भक्तिम्	६.	भक्ति-भाव को	अवस्थितम्	१०.	विराजमान
उद्वहन् ।	७.	रखते हुये ध्रुव जी	विभुम् ॥	१३.	भगवान् श्री हरि को

श्लोकार्थ—निर्गुण तथा सम्पूर्ण प्राणियों की आत्मा भगवान् श्री हरि में प्रबल वेग वाले भक्ति-भाव को रखते हुये ध्रुव जी अपनी आत्मा में तथा समस्त प्राणियों में विराजमान उन ही भगवान् श्री हरि को देखने लगे ॥

द्वादशः श्लोकः

तमेवं शीलसम्पन्नं ब्रह्मण्यं दीनवत्सलम् ।
गोप्तारं धर्मसेतूनां मेनिरे पितरं प्रजाः ॥१२॥

पदच्छेद—

तम् एवम् शील सम्पन्नम् ब्रह्मण्यम् दीन वत्सलम् ।
गोप्तारम् धर्म सेतूनाम् मेनिरे पितरम् प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

तम्	१०.	उन्हें	गोप्तारम्	९.	रक्षक (थे)
एवम्	१.	इस प्रकार (ध्रुव जी)	धर्म	७.	धर्म की
शील	२.	सच्चरित से	सेतूनाम्	८.	मर्यादा के
सम्पन्नम्	३.	युक्त	मेनिरे	१३.	मानती थी·
ब्रह्मण्यम्	४.	ब्राह्मणों के हितैषी	पितरम्	१२.	अपना पिता
दीन	५.	अनाथों पर	प्रजाः ॥	११.	प्रजा
वत्सलम् ।	६.	स्नेह करने वाले (और)			

श्लोकार्थ—इस प्रकार ध्रुव जी सच्चरित से युक्त, ब्राह्मणों के हितैषी, अनाथों पर स्नेह करने वाले और धर्म की मर्यादा के रक्षक थे। उन्हें प्रजा अपना पिता मानती थी ॥

त्रयोदशः श्लोकः

षट्त्रिंशद्वर्षसाहस्रं शशास क्षितिमण्डलम् ।
भोगैः पुण्यक्षयं कुर्वन्नभोगैरशुभक्षयम् ॥१३॥

पदच्छेद—

षट्त्रिंशत् वर्ष साहस्रम् शशास क्षिति मण्डलम् ।
भोगैः पुण्य क्षयम् कुर्वन् अभोगैः अशुभक्षयम् ॥

शब्दार्थ—

षट्त्रिंशत्	७. छत्तीस	भोगैः	१. ध्रुव जी ने ऐश्वर्य भोग के द्वारा
वर्ष	९. वर्ष तक	पुण्य	२. पुण्य का
साहस्रम्	८. हजार	क्षयम्	३. नाश (और)
शशास	१२. शासन किया	कुर्वन्	६. करते हुये
क्षिति	१० पृथ्वी	अभोगैः	४. त्याग के द्वारा
मण्डलम् ।	११. मण्डल पर	अशुभक्षयम् ॥	५. पाप का नाश

श्लोकार्थ—ध्रुव जी ने ऐश्वर्य भोग के द्वारा पुण्य का नाश और त्याग के द्वार पाप का नाश करते हुये छत्तीस हजार वर्ष तक पृथ्वी मण्डल पर शासन किया ॥

चतुर्दशः श्लोकः

एवं बहुसवं कालं महात्माविचलेन्द्रियः ।
त्रिवर्गौपयिकं नीत्वा पुत्रायादान्नृपासनम् ॥१४॥

पदच्छेद—

एवम् बहु सवम् कालम् महात्मा अविचलेन्द्रियः ।
त्रिवर्ग औपयिकम् नीत्वा पुत्राय अदात् नृपासनम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	३. इस प्रकार	त्रिवर्ग	४. धर्म अर्थ काम को
बहु	६. अनेकों	औपयिकम्	५. प्राप्त करने में
सवम्	७ वर्षों का	नीत्वा	९. बिता कर
कालम्	८. समय	पुत्राय	१०. अपने पुत्र उत्कल को
महात्मा	१. महात्मा (और)	अदात्	१२. दे दिया
अविचलेन्द्रियः ।	२. जितेन्द्रिय ध्रुव जी ने	नृपासनम् ॥	११. राज सिंहासन

श्लोकार्थ—महात्मा और जितेन्द्रिय ध्रुव जी ने इस प्रकार धर्म, अर्थ, काम को प्राप्त करने में अनेकों वर्षों का समय बिताकर अपने पुत्र उत्कल को राज सिंहासन दे दिया ।

पञ्चदशः श्लोकः

मन्यमान इदं विश्वं मायारचितमात्मनि ।
अविद्यारचितस्वप्नगन्धर्वनगरोपमम् ॥१५॥

पदच्छेद— मन्यमानः इदम् विश्वम् माया रचितम् आत्मनि ।
अविद्या रचित स्वप्न गन्धर्व नगर उपमम् ॥

शब्दार्थ—

मन्यमानः	१२.	समझने लगे	अविद्या	१.	ध्रुव जी अज्ञान से
इदम्	७.	इस समस्त	रचित	२.	निर्मित
विश्वम्	८.	संसार को	स्वप्न	३.	स्वप्न ज्ञान (तथा)
माया	९.	माया से	गन्धर्व	४.	काल्पनिक
रचितम्	१०.	निर्मित	नगर	५.	नगर के
आत्मनि ।	११.	आत्मा में	उपमम् ॥	६.	समान

श्लोकार्थ—ध्रुव जी अज्ञान से निर्मित स्वप्न ज्ञान तथा काल्पनिक नगर के समान इस समस्त संसार को माया से निर्मित आत्मा में समझने लगे ॥

षोडशः श्लोकः

आत्मस्त्र्यपत्यसुहृदो बलमृद्धकोशमन्तःपुरं परिविहारभुवश्च रम्याः ।
भूमण्डलं जलधिमेखलमाकलय्य कालोपसृष्टमिति स प्रययौ विशालाम् ।१६।

पदच्छेद—आत्म स्त्री अपत्य सुहृदः बलम् ऋद्ध कोशम् अन्तः पुरम् परिविहार भुवः च रम्याः ।
भू मण्डलम् जलधि मेखलम् आकलय्य काल उपसृष्टम् इति सः प्रययौ विशालाम् ॥

शब्दार्थ—

आत्म	१.	शरीर	भू मण्डलम्	१२.	पृथ्वी मण्डल
स्त्री अपत्य	२.	भार्या पुत्र	जलधि	१०.	समुद्र तक
सुहृदः	३.	मित्र, सेना	मेखलम्	११.	फैला हुआ
ऋद्ध	४.	भरा पूरा	आकलय्य	१६.	समझकर
कोशम्	५.	खजाना	काल	१३.	काल के
अन्तः पुरम्	६.	रनिवास	उपसृष्टम्	१४.	वश में है
परिविहार	७.	विहार करने की	इति	१५.	ऐसा
भुवः च	९.	भूमि और	सः	१७.	वे
रम्याः ।	८.	मनोहर	प्रययौ	१९.	चले गये
			विशालाम्	१८.	बदरिकाश्रम को

श्लोकार्थ—शरीर, भार्या, पुत्र, मित्र, सेना, भरापूरा खजाना, रनिवास, विहार करने की मनोहर भूमि और समुद्र तक फैला हुआ पृथ्वी मण्डल काल के वश में है, ऐसा समझकर वे बदरिकाश्रम को चले गये ॥

सप्तदशः श्लोकः

तस्यां विशुद्धकरणः शिववार्विगाह्य बद्ध्वाऽऽसनं जितमरुन्मनसाऽऽहृताक्षः ।
स्थूले दधार भगवत्प्रतिरूप एतद् ध्यायंस्तदव्यवहितो व्यसृजत्समाधौ ।।१७।।

पदच्छेद—तस्याम् विशुद्ध करणः शिव वाः विगाह्य बद्ध्वा आसनम् जित मरुत् मनसा आहृत अक्षः ।
स्थूले दधार भगवत् प्रतिरूपे एतद् ध्यायन् तद् अव्यवहितः व्यसृजत् समाधौ ।।

शब्दार्थ—

तस्याम्	१.	वहाँ	आहृत	११	समेट लिया (तदनन्तर)
विशुद्ध	४.	निर्मल हो गया	अक्षः ।	१०.	अपनी इन्द्रियों का
करणः	३.	ध्रुव जी का अन्तःकरण	स्थूले	१३.	विराट रूप में
शिव वाः विगाह्य	२.	पवित्र जल में स्नान करने से	दधार	१५.	लगाया
बद्ध्वा	६.	लगाकर (तथा)	भगवत् प्रतिरूपे	१२.	भगवान् की मूर्ति
आसनम्	५.	(उन्होंने स्थिर) आसन	एतद्	१४.	इस मन को
जित	८.	रोक कर	ध्यायन्	१७.	ध्यान करते-करते
मरुत्	७.	श्वास	तद् अव्यवहितः	१६.	उस रूप का निरन्तर
मनसा	९.	मन को (विषयों से)	व्यसृजत्	१९.	अपने को भूल गये
			समाधौ ।।	१८.	(वे) समाधि में

श्लोकार्थ—वहाँ पवित्र जल में स्नान करने से ध्रुव जी का अन्तःकरण निर्मल हो गया । उन्होंने स्थिर आसन लगाकर तथा श्वास को रोक कर मन को अपनी इन्द्रियों के विषयों से समेट लिया । तदनन्तर भगवान् की मूर्ति विराट् में इस मन को लगाया । उस रूप का निरन्तर ध्यान करते-करते वे समाधि में अपने को भूल गये ।।

अष्टादशः श्लोकः

भक्तिं हरौ भगवति प्रवहन्नजस्रमानन्दबाष्पकलया मुहुरर्द्यमानः ।
विक्लिद्यमानहृदयःपुलकाचिताङ्गो नात्मानमस्मरदसाविति मुक्तलिङ्गः ।।१८।।

पदच्छेद—भक्तिम् हरौ भगवति प्रवहन् अजस्रम् आनन्द बाष्प कलया मुहुः अर्द्यमानः ।
विक्लिद्यमान हृदयः पुलक आचित अङ्गः न आत्मानम् अस्मरत् असौ इति मुक्तलिङ्गः ।।

शब्दार्थ—

भक्तिम्	३.	भक्ति में	हृदयः	८.	उनका हृदय
हरौ	२.	श्री हरि की	पुलक आचित	११.	रोमाञ्च व्याप्त हो गया
भगवति	१.	भगवान्	अङ्ग	१०.	उनके शरीर में
प्रवहन् अजस्रम्	४.	बहते हुये ध्रुव जी निरन्तर	न आत्मानम्	१३.	अपने को भी नहीं
आनन्द	५.	आनन्द के	अस्मरत्	१४.	स्मरण रख सके
बाष्प कलया	६.	आँसुओं की धारा से	असौ	१२.	उस समय (वे)
मुहुः अर्द्यमानः ।	७.	बारम्बार भीगने लगे	इति	१५.	इस प्रकार (उनका)
विक्लिद्यमान	९.	पिघल गया (और)	मुक्तलिङ्गः ।।	१६.	देहाभिमान समाप्त हो गया

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि की भक्ति में बहते हुये ध्रुव जी निरन्तर आनन्द के आंसुओं की धारा से बारम्बार भीगने लगे । उनका हृदय पिघल गया और उनके शरीर में रोमाञ्च व्याप्त हो गया । उस समय वे अपने को भी नहीं स्मरण रख सके । इस प्रकार उनका देहाभिमान समाप्त हो गया ।।

एकोनविंशः श्लोकः

स ददर्श विमानाग्र्यं नभसोऽवतरद् ध्रुवः ।
विभ्राजयद्दश दिशो राकापतिमिवोदितम् ॥१९॥

पदच्छेद—

सः ददर्श विमान अग्र्यम् नभसः अवतरत् ध्रुवः ।
विभ्राजयत् दश दिशः राकापतिम् इव उदितम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	उन	विभ्राजयत्	१३.	प्रकाशित कर रहा था
ददर्श	७.	देखा (जो)	दश	११.	दशों
विमान	६.	विमान को	दिशः	१२.	दिशाओं को
अग्र्यम्	५.	उत्तम	राकापतिम्	९.	पूर्णिमा के चन्द्रमा के
नभसः	३.	आकाश से	इव	१०.	समान
अवतरत्	४.	उतरते हुये	उदितम् ॥	८.	उदित हुये
ध्रुवः ।	२.	ध्रुव जी ने			

श्लोकार्थ—उन ध्रुव जी ने आकाश से उतरते हुये उत्तम विमान को देखा । जो उदित हुये पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान दशों दिशाओं को प्रकाशित कर रहा था ॥

विंशः श्लोकः

तत्रानु देवप्रवरौ चतुर्भुजौ श्यामौ किशोरावरुणाम्बुजेक्षणौ ।
स्थिताववष्टभ्य गदां सुवाससौ किरीटहाराङ्गदचारुकुण्डलौ ॥२०॥

पदच्छेद— तत्र अनु देव प्रवरौ चतुर्भुजौ श्यामौ किशोरौ अरुण अम्बुज ईक्षणौ ।
स्थितौ अवष्टभ्य गदाम् सुवाससौ किरीट हार अङ्गद चारु कुण्डलौ ॥

शब्दार्थ—

तत्र अनु	१.	उस विमान में	स्थितौ	१२.	खड़े थे (वे)
देव	८.	देवताओं में	अवष्टभ्य	११.	सहारा लेकर
प्रवरौ	९.	श्रेष्ठ (दो पार्षद)	गदाम्	१०.	गदा का
चतुर्भुजौ	७.	चार भुजाधारी	सुवाससौ	१३.	सुन्दर वस्त्र
श्यामौ	२.	श्याम वर्ण के	किरीट	१४.	मुकुट
किशोरौ	३.	किशोर अवस्था वाले	हार	१५.	मुक्ता माला
अरुण	४.	लाल	अङ्गद	१६.	बाजूबन्द (और)
अम्बुज	५.	कमल के समान	चारु	१७.	मनोहर
ईक्षणौ ।	६.	नेत्र वाले	कुण्डलौ ॥	१८.	कुण्डल (पहने थे)

श्लोकार्थ—उस विमान में श्याम वर्ण के किशोर अवस्था वाले, लाल कमल के समान नेत्र वाले, चार भुजाधारी, देवताओं में श्रेष्ठ, दो पार्षद गदा का सहारा लेकर खड़े थे। वे सुन्दर वस्त्र, मुकुट, मुक्तामाला, बाजूबन्द और मनोहर कुण्डल पहने थे ॥

एकविंशः श्लोकः

विज्ञाय तावुत्तमगायकिङ्करावभ्युत्थितः साध्वसविस्मृतक्रमः।
ननाम नामानि गृणन्मधुद्विषः पार्षत्प्रधानाविति संहताञ्जलिः ॥२१॥

पदच्छेद— विज्ञाय तौ उत्तमगाय किङ्करौ अभ्युत्थितः साध्वस विस्मृत क्रमः।
ननाम नामानि गृणन् मधुद्विषः पार्षत् प्रधानौ इति संहत अञ्जलिः॥

शब्दार्थ—

विज्ञाय	४.	जानकर	ननाम	१६.	प्रणाम किया
तौ	१.	ध्रुव जी उन दोनों देवताओं को	नामानि	१४.	नामों का
उत्तमगाय	२.	उत्तम कीर्ति भगवान् का	गृणन्	१५.	उच्चारण करते हुये (उन्हें)
किङ्करौ	३.	सेवक	मधुद्विषः	१३.	मधुसूदन भगवान् के
अभ्युत्थितः	५.	खड़े हो गये (और)	पार्षद प्रधानौ	९.	ये दोनों पार्षदों में प्रधान हैं
साध्वस	६.	घबराहट में	इति	१०.	ऐसा समझ कर
विस्मृत	८.	भूल गये	संहत	१२.	जोड़कर
क्रमः।	७.	पूजा का क्रम	अञ्जलि॥	११.	दोनों हाथ

श्लोकार्थ—ध्रुव जी उन दोनों देवताओं को उत्तम कीर्ति भगवान् का सेवक जानकर खड़े हो गये और घबराहट में पूजा का क्रम भूल गये। ये दोनों पार्षदों में प्रधान हैं। ऐसा समझ कर दोनों हाथ जोड़कर मधुसूदन भगवान् के नामों का उच्चारण करते हुये उन्हें प्रणाम किया॥

द्वाविंशः श्लोकः

तं कृष्णपादाभिनिविष्टचेतसं बद्धाञ्जलिं प्रश्रयनम्रकन्धरम्।
सुनन्दनन्दावुपसृत्य सस्मितं प्रत्यूचतुः पुष्करनाभसम्मतौ ॥२२॥

पदच्छेद—तम् कृष्ण पाद अभिनिविष्ट चेतसम् बद्ध अञ्जलिम् प्रश्रय नम्र कन्धरम्।
सुनन्द नन्दौ उपसृत्य सस्मितम् प्रत्यूचतुः पुष्करनाभ सम्मतौ॥

शब्दार्थ—

तम्	१६.	उन ध्रुव जी से	कन्धरम्।	६.	सिर
कृष्ण	१.	भगवान् श्री हरि के	सुनन्द	१२.	सुनन्द (और)
पाद	२.	चरणों में	नन्दौ	१३.	नन्द (दोनों पार्षद)
अभिनिविष्ट	४.	लगाये हुये ध्रुव जी	उपसृत्य	१४.	समीप जाकर
चेतसम्	३.	चित्त	सस्मितम्	१५.	मुसकराहट के साथ
बद्ध	९.	जोड़कर (खड़े थे उस समय)	प्रत्यूचतुः	१७.	बोले
अञ्जलिम्	८.	दोनों हाथ	पुष्करनाभ	१०.	भगवान् श्री हरि के
प्रश्रय	५.	आदर से	सम्मतौ॥	११.	प्रिय
नम्र	७.	झुकाकर (और)			

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के चरणों में चित्त लगाये हुये ध्रुव जी आदर से सिर झुकाकर और दोनों हाथ जोड़कर खड़े थे। उस समय भगवान् श्री हरि के प्रिय सुनन्द और नन्द दोनों पार्षद समीप जाकर मुसकराहट के साथ उन ध्रुव जी से बोले॥

त्रयोविंशः श्लोकः

सुनन्दनन्दावूचतुः—भो भो राजन् सुभद्रं ते वाचं नोऽवहितः शृणु ।
यः पञ्चवर्षस्तपसा भवान्देवमतीतृपत् ॥२३॥

पदच्छेद—

भो भो राजन् सुभद्रम् ते वाचम् नः अवहितः शृणु ।
यः पञ्चवर्षः तपसा भवान् देवम् अतीतृपत् ॥

शब्दार्थ—

भो भो	१.	हे हे	शृणु ।	८.	सुनें
राजन्	२.	राजन् ध्रुव जी	यः	१२.	जो
सुभद्रम्	४.	कल्याण हो	पञ्चवर्षः	१०.	पांच वर्ष की अवस्था में
ते	३.	आपका	तपसा	११.	तपस्या के द्वारा
वाचम्	६.	वाणी	भवान्	९.	आपने
नः	५.	हमारी	देवम्	१३.	भगवान् श्री हरि को
अवहितः	७.	ध्यान से	अतीतृपत् ॥	१४.	प्रसन्न कर लिया था

श्लोकार्थ— हे हे राजन् ध्रुव जी ! आपका कल्याण हो हमारी वाणी ध्यान से सुनें । आपने पांच वर्ष की अवस्था में तपस्या के द्वारा जो भगवान् श्री हरि को प्रसन्न कर लिया था ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तस्याखिलजगद्धातुरावां देवस्य शार्ङ्गिणः ।
पार्षदाविह सम्प्राप्तौ नेतुं त्वां भगवत्पदम् ॥२४॥

पदच्छेद—

तस्य अखिल जगत् धातुः आवाम् देवस्य शार्ङ्गिणः ।
पार्षदौ इह सम्प्राप्तौ नेतुम् त्वाम् भगवत् पदम् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	५.	उन	पार्षदौ	८.	पार्षद
अखिल	१.	सम्पूर्ण	इह	१३.	यहाँ
जगत्	२.	संसार को	सम्प्राप्तौ	१४.	आये हैं
धातुः	३.	धारण करने वाले	नेतुम्	१२.	ले जाने के लिये
आवाम्	७.	हम दोनों	त्वाम्	९.	आपको
देवस्य	६.	भगवान् श्री हरि के	भगवत्	१०.	भगवान् श्री हरि के
शार्ङ्गिणः ।	४.	शार्ङ्ग पाणि	पदम् ॥	११.	वैकुण्ठ लोक में

श्लोकार्थ— सम्पूर्ण संसार को धारण करने वाले शार्ङ्गपाणि भगवान् श्री हरि के हम दोनों पार्षद आपको भगवान् श्री हरि के वैकुण्ठ लोक में ले जाने के लिये यहाँ आये हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

सुदुर्जयं विष्णुपदं जितं त्वया यत्सूरयोऽप्राप्य विचक्षते परम् ।
आतिष्ठ तच्चन्द्रदिवाकरादयो ग्रहर्क्षतारा: परियन्ति दक्षिणम् ॥२५॥

पदच्छेद—सुदुर्जयम् विष्णु पदम् जितम् त्वया यत् सूरयः अप्राप्य विचक्षते परम् ।
आतिष्ठ तत् चन्द्र दिवाकर आदयः ग्रह ऋक्ष ताराः परियन्ति दक्षिणम् ॥

शब्दार्थ—

सुदुर्जयम्	२.	अत्यन्त दुर्लभ	आतिष्ठ	११.	निवास करें (जहाँ पर)
विष्णु पदम्	३.	विष्णु लोक को	तत्	१०.	उस लोक में (आप)
जितम्	४.	प्राप्त कर लिया है	चन्द्र	१२.	चन्द्रमा
त्वया	१.	आपने	दिवाकर	१३.	सूर्य
यत्	६.	जिस	आदयः	१४.	इत्यादि
सूरयः	५.	मुनिजन	ग्रह ऋक्ष	१५.	ग्रह नक्षत्र (और)
अप्राप्य	८.	नहीं प्राप्त करके (उसका)	ताराः	१६.	तारागण
विचक्षते	९.	केवल दर्शन करते हैं	परियन्ति	१८.	घूमते हैं
परम् ।	७.	परमपद को	दक्षिणम् ॥	१७.	प्रदक्षिणक्रम से

श्लोकार्थ—आपने अत्यन्त दुर्लभ विष्णु लोक को प्राप्त कर लिया है । मुनिजन जिस परमपद को नहीं प्राप्त करके उसका केवल दर्शन करते हैं, उस लोक में आप निवास करें, जहाँ पर चन्द्रमा, सूर्य, इत्यादि, ग्रह नक्षत्र और तारागण प्रदक्षिण क्रम से घूमते रहते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

अनास्थितं ते पितृभिरन्यैरप्यङ्ग कर्हिचित् ।
आतिष्ठ जगतां वन्द्यं तद्विष्णोः परमं पदम् ॥२६॥

पदच्छेद— अनास्थितम् ते पितृभिः अन्यैः अपि अङ्ग कर्हिचित् ।
आतिष्ठ जगताम् वन्द्यम् तद् विष्णोः परमम् पदम् ॥

शब्दार्थ—

अनास्थितम्	७.	नहीं गये थे	आतिष्ठ	१४.	निवास करें
ते	२.	आप के	जगताम्	८.	समस्त संसार से
पितृभिः	३.	पूर्वज (तथा)	वन्द्यम्	९.	वन्दनीय
अन्यैः	४.	दूसरे लोग	तद्	१०.	उस
अपि	५.	भी (जहाँ पर)	विष्णोः	११.	भगवान् श्री हरि के
अङ्ग	१.	हे तात	परमम्	१२.	सर्वोत्तम
कर्हिचित् ।	६.	कभी	पदम् ॥	१३.	वैकुण्ठ लोक में (आप)

श्लोकार्थ—हे तात ! आपके पूर्वज तथा दूसरे लोग भी जहाँ पर कभी नहीं गये थे, समस्त संसार से वन्दनीय उस भगवान् श्री हरि के सर्वोत्तम वैकुण्ठ लोक में आप निवास करें ॥

सप्तविंशः श्लोकः

एतद्विमानप्रवरमुत्तमश्लोकमौलिना ।
उपस्थापितमायुष्मन्नधिरोढुं त्वमर्हसि ॥२७॥

पदच्छेद—

एतद् विमान प्रवरम् उत्तम श्लोक मौलिना ।
उपस्थापितम् आयुष्मन् अधिरोढुम् त्वम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

एतद्	५.	इस	उपस्थापितम्	४.	भेजे गये
विमान	७.	विमान पर	आयुष्मन्	१.	हे आयुष्मन्
प्रवरम्	६.	श्रेष्ठ	अधिरोढुम्	९.	चढ़ने के
उत्तमश्लोक	२.	पुण्यश्लोकों के	त्वम्	८.	आप
मौलिना ।	३.	मुकुटमणि भगवान् के द्वारा	अर्हसि ॥	१०.	योग्य हैं

श्लोकार्थ—हे आयुष्मन् ! पुण्य श्लोकों के मुकुटमणि भगवान् के द्वारा भेजे गये इस श्रेष्ठ विमान पर आप चढ़ने के योग्य हैं ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—निशम्य वैकुण्ठनियोज्यमुख्ययोर्मधुच्युतं वाचमुरुक्रमप्रियः ।
कृताभिषेकः कृतनित्यमङ्गलो मुनीन् प्रणम्याशिषमभ्यवादयत् ॥२८॥

पदच्छेद—

निशम्य वैकुण्ठ नियोज्य मुख्ययोः मधु च्युतम् वाचम् उरुक्रम प्रियः ।
कृत अभिषेकः नित्य मङ्गलः मुनीन् प्रणम्य आशिषम् अभ्यवादयत् ॥

शब्दार्थ—

निशम्य	९.	सुनने पर	कृत	११.	करके
वैकुण्ठ	३.	वैकुण्ठ लोक के	अभिषेकः	१०.	स्नान
नियोज्य	५.	पार्षदों की	कृत	१४.	निवृत्त होकर
मुख्ययोः	४.	प्रधान	नित्य	१२.	नित्य
मधु	६.	अमृत	मङ्गलः	१३.	कर्म से
च्युतम्	७.	वर्षी	मुनीन्	१५.	मुनियों को
वाचम्	८.	वाणी	प्रणम्य	१६.	प्रणाम करके
उरुक्रम	१.	भगवान् त्रिविक्रम के	आशिषम्	१७.	आशीर्वाद की
प्रियः ।	२	प्रिय पात्र (ध्रुव जी)	अभ्यवादयत् ॥	१८.	प्रार्थना की

श्लोकार्थ—भगवान् त्रिविक्रम के प्रियपात्र ध्रुव जी वैकुण्ठ लोक के प्रधान पार्षदों की अमृतवर्षी वाणी सुनने पर स्नान करके नित्य कर्म से निवृत्त होकर मुनियों को प्रणाम करके आशीर्वाद की प्रार्थना की ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

परीत्याभ्यर्च्य धिष्ण्याग्र्यं पार्षदावभिवन्द्य च ।
इयेष तदधिष्ठातुं बिभ्रद्रूपं हिरण्मयम् ॥२९॥

पदच्छेद—

परीत्य अभ्यर्च्य धिष्ण्य अग्र्यम् पार्षदौ अभिवन्द्य च ।
इयेष तद् अधिष्ठातुम् बिभ्रद् रूपम् हिरण्मयम् ॥

शब्दार्थ—

परीत्य	४.	परिक्रमा करके	इयेष	१३.	तैयार हो गये
अभ्यर्च्य	३.	पूजा करके (उसकी)	तद्	११.	उस पर
धिष्ण्य	२.	विमान की	अधिष्ठातुम्	१२.	बैठने के लिये
अग्र्यम्	१.	(ध्रुव जी) श्रेष्ठ	बिभ्रद्	१०.	धारण करके
पार्षदौ	६.	दोनों पार्षदों को	रूपम्	९.	दिव्यरूप
अभिवन्द्य	७	प्रणाम करने से	हिरण्मयम् ॥	८.	सुवर्ण के समान कान्तिमान्
च ।	५.	और			

श्लोकार्थ—ध्रुव जी श्रेष्ठ विमान की पूजा करके उसकी परिक्रमा करके और दोनों पार्षदों को प्रणाम करने से सुवर्ण के समान कान्तिमान् दिव्यरूप धारण करके उस पर बैठने के लिये तैयार हो गये ॥

त्रिंशः श्लोकः

तदोत्तानपदः पुत्रो ददर्शान्तकमागतम् ।
मृत्योर्मूर्ध्नि पदं दत्त्वा आरुरोहाद्भुतं गृहम् ॥३०॥

पदच्छेद—

तदा उत्तानपदः पुत्रः ददर्श अन्तकम् आगतम् ।
मृत्योः मूर्ध्नि पदम् दत्त्वा आरुरोह अद्भुतम् गृहम् ॥

शब्दार्थ—

तदा	३.	उस समय	मृत्योः	७.	मृत्यु के
उत्तानपदः	१.	राजा उत्तानपाद के	मूर्ध्नि	८.	मस्तक पर
पुत्रः	२.	पुत्र ध्रुव जी ने	पदम्	९.	पैर
ददर्श	६.	देखा (किन्तु वे)	दत्त्वा	१०.	रखकर
अन्तकम्	४.	मूर्तिमान् काल को	आरुरोह	१२.	चढ़ गये
आगतम् ।	५.	उपस्थित	अद्भुतम् गृहम् ॥	११.	उस दिव्य विमान पर

श्लोकार्थ—राजा उत्तानपाद के पुत्र ध्रुव जी ने उस समय मूर्तिमान् काल को उपस्थित देखा । किन्तु वे मृत्यु के मस्तक पर पैर रख कर उस दिव्य विमान पर चढ़ गये ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तदा दुन्दुभयो नेदुर्मृदङ्गपणवादयः ।
गन्धर्वमुख्याः प्रजगुः पेतुः कुसुमवृष्टयः ॥३१॥

पदच्छेद—

तदा दुन्दुभयः नेदुः मृदङ्ग पणव आदयः ।
गन्धर्व मुख्याः प्रजगुः पेतुः कुसुम वृष्टयः ॥

शब्दार्थ—

तदा	१.	उस समय	गन्धर्व	८.	गन्धर्व
दुन्दुभयः	२.	दुन्दुभि	मुख्याः	७.	प्रधान
नेदुः	६.	बजने लगे	प्रजगुः	९.	गाने लगे (और)
मृदङ्ग	३.	मृदङ्ग	पेतुः	१२.	होने लगी
पणव	४.	ढोल	कुसुम	१०.	फूलों की
आदयः ।	५.	इत्यादि बाजे	वृष्टयः ॥	११.	वर्षा

श्लोकार्थ—उस समय दुन्दुभि, मृदङ्ग, ढोल इत्यादि बाजे बजने लगे । प्रधान गन्धर्व गाने लगे और फूलों की वर्षा होने लगी ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

स च स्वर्लोकमारोक्ष्यन् सुनीतिं जननीं ध्रुवः ।
अन्वस्मरदगं हित्वा दीनां यास्ये त्रिविष्टपम् ॥३२॥

पदच्छेद—

सः च स्वर्लोकम् आरोक्ष्यन् सुनीतिम् जननीम् ध्रुवः ।
अन्वस्मरत् अगम् हित्वा दीनाम् यास्ये त्रिविष्टपम् ॥

शब्दार्थ—

सः	३.	उन	अन्वस्मरत्	८.	स्मरण किया
च	९.	कि (मैं)	अगम्	७.	नहीं जाते देखकर
स्वर्लोकम्	१.	वैकुण्ठ लोक के लिये	हित्वा	११.	छोड़कर (कैसे)
आरोक्ष्यन्	२.	चढ़ते समय	दीनाम्	१०.	बेचारी (माता को)
सुनीतिम्	६.	सुनीति को	यास्ये	१३.	जाऊँगा
जननीम्	५.	अपनी माता	त्रिविष्टपम् ॥	१२.	स्वर्गलोक को
ध्रुवः ।	४.	ध्रुव जी ने			

श्लोकार्थ—वैकुण्ठ लोक के लिये चढ़ते समय उन ध्रुव जी ने अपनी माता सुनीति को नहीं जाते देखकर स्मरण किया कि मैं बेचारी माता को छोड़कर कैसे स्वर्गलोक को जाऊँगा ॥

त्रयस्त्रिंश श्लोकः

इति व्यवसितं तस्य व्यवसाय सुरोत्तमौ ।
दर्शयामासतुर्देवीं पुरो यानेन गच्छतीम् ॥३३॥

पदच्छेद—

इति व्यवसितम् तस्य व्यवसाय सुर उत्तमौ ।
दर्शयामासतुः देवीम् पुरः यानेन गच्छतीम् ॥

शब्दार्थ—

इति	४.	मन की यह	दर्शयामासतुः	७.	दिखाया (कि)
व्यवसितम्	५.	बात	देवीम्	८.	देवी सुनीति
तस्य	३.	ध्रुव जी के	पुरः	९.	आगे-आगे
व्यवसाय	६.	जानकर (उन्हें)	यानेन	१०	एक विमान से
सुर	२.	पार्षदों ने	गच्छतीम् ॥	११.	जा रही हैं
उत्तमौ ।	१.	दोनों प्रधान			

श्लोकार्थ—दोनों प्रधान पार्षदों ने ध्रुव जी के मन की यह बात जान कर उन्हें दिखाया कि देवी सुनीति एक विमान से आगे-आगे जा रही हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तत्र तत्र प्रशंसद्भिः पथि वैमानिकैः सुरैः ।
अवकीर्यमाणो ददृशे कुसुमैः क्रमशो ग्रहान् ॥३४॥

पदच्छेद—

तत्र तत्र प्रशंसद्भिः पथि वैमानिकैः सुरैः ।
अवकीर्यमाणः ददृशे कुसुमैः क्रमशः ग्रहान् ॥

शब्दार्थ—

तत्र तत्र	५.	जहाँ-तहाँ	अवकीर्यमाणः	१०.	वर्षा कर रहे थे
प्रशंसद्भिः	८.	बड़ाई करते हुये	ददृशे	३.	देखे (तथा)
पथि	४.	मार्ग में	कुसुमैः	९.	उन पर फूलों की
वैमानिकैः	६.	विमानों पर सवार	क्रमशः	१.	उन्होंने क्रम से
सुरैः ।	७.	देवतागण	ग्रहान् ॥	२.	सूर्यादि ग्रह

श्लोकार्थ—उन्होंने क्रम से सूर्यादिग्रह देखे तथा मार्ग में जहाँ-तहाँ विमानों पर सवार देवतागण बड़ाई करते हुये उन पर फूलों की वर्षा कर रहे थे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

त्रिलोकीं देवयानेन सोऽतिव्रज्य मुनीनपि ।
परस्ताद्यद् ध्रुवगतिर्विष्णोः पदमथाभ्यगात् ॥३५॥

पदच्छेद— त्रिलोकीम् देव यानेन सः अतिव्रज्य मुनीन् अपि ।
परस्तात् यद् ध्रुव गतिः विष्णोः पदम् अथ अभ्यगात् ॥

शब्दार्थ—

त्रिलोकीम्	४.	तीनों लोकों को	परस्तात् यद्	८.	ऊपर जो
देव	२.	(उस) दिव्य	ध्रुव	१३.	अविनाशी
यानेन	३.	विमान से	गतिः	१४.	पद को प्राप्त हुए
सः	१.	ध्रुव जी	विष्णोः	९.	भगवान् विष्णु का
अतिव्रज्य	५.	पार कर	पदम्	१०.	लोक है (वहाँ)
मुनीन्	६.	सप्तर्षि-मण्डल से	अथ	१२.	इस प्रकार वे
अपि ।	७.	भी	अभ्यगात् ॥	११.	पहुँचे

श्लोकार्थ—ध्रुव जो उस दिव्य विमान से तीनों लोकों को पार कर सप्तर्षि-मण्डल से भी ऊपर जो भगवान् विष्णु का लोक है वहाँ पहुँचे । इस प्रकार वे अविनाशी पद को प्राप्त हुए ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

यद् भ्राजमानं स्वरुचैव सर्वतो लोकास्त्रयो ह्यनु विभ्राजन्त एते ।
यन्नाव्रजञ्जन्तुषु येऽननुग्रहा व्रजन्ति भद्राणि चरन्ति येऽनिशम् ॥३६॥

पदच्छेद—यद् भ्राजमानम् स्व रुचा एव सर्वतः लोकाः त्रयः हि अनु विभ्राजन्त एते ।
यत् न अव्रजन् जन्तुषु ये अननुग्रहाः व्रजन्ति भद्राणि चरन्ति अनिशम् ॥

शब्दार्थ—

यद्	१.	जो वैकुण्ठ लोक	यद् न	१३.	(वे) वहाँ नहीं
भ्राजमानम्	४.	प्रकाशित है	अव्रजन्	१४.	जा सकते (वहाँ)
स्व रुचा एव	३.	अपने प्रकाश से ही	जन्तुषु	११.	प्राणियों पर
सर्वतः	२.	चारों ओर	ये	१०.	जो लोग
लोकाः	८.	लोक	अननुग्रहाः	१२.	निर्दयता करते हैं
त्रयः	७.	तीनों	व्रजन्ति	१५.	वे ही जाते हैं
हि अनु	५.	तथा जिसके प्रकाश से	भद्राणि	१७.	कल्याण
विभ्राजन्ते	९.	प्रकाशित रहते हैं	चरन्ति	१८.	करते हैं
एते ।	६.	ये	ये अनिशम् ॥	१६.	जो (प्राणियों का) निरन्तर

श्लोकार्थ—जो वैकुण्ठ लोक चारों ओर अपने प्रकाश से प्रकाशित है । तथा जिसके प्रकाश से ये तीनों लोक प्रकाशित रहते हैं । जो लोग प्राणियों पर निर्दयता करते हैं, वे वहाँ नहीं जा सकते । वहाँ वे ही जाते हैं जो प्राणियों का निरन्तर कल्याण करते हैं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

शान्ताः समदृशः शुद्धाः सर्वभूतानुरञ्जनाः ।
यान्त्यञ्जसाच्युतपदमच्युतप्रियबान्धवाः ॥३७॥

पदच्छेद—

शान्ताः समदृशः शुद्धाः सर्व भूत अनुरञ्जनाः ।
यान्ति अञ्जसा अच्युत पदम् अच्युत प्रिय बान्धवाः ॥

शब्दार्थ—

शान्ताः	१.	शान्तचित्त	यान्ति	१२.	जाते हैं
समदृशः	२.	समदर्शी	अञ्जसा	११.	सुगमता से
शुद्धाः	३.	निर्मल	अच्युत	९.	भगवान् श्री हरि के
सर्व	४.	सभी	पदम्	१०.	वैकुण्ठ लोक में
भूत	५.	प्राणियों को	अच्युत	७.	(तथा) भगवत्
अनुरञ्जनाः ।	६.	प्रसन्न रखने वाले	प्रिय बान्धवाः ॥	८.	भक्तों को हितैषी मानने वाले

श्लोकार्थ—शान्तचित्त, समदर्शी, निर्मल, सभी प्राणियों को प्रसन्न रखने वाले तथा भगवत् भक्तों को हितैषी मानने वाले भगवान् श्री हरि के वैकुण्ठ लोक में सुगमता से जाते हैं ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

इत्युत्तानपदः पुत्रो ध्रुवः कृष्णपरायणः ।
अभूत्त्रयाणां लोकानां चूडामणिरिवामलः ॥३८॥

पदच्छेद—

इति उत्तानपदः पुत्रः ध्रुवः कृष्ण परायणः ।
अभूत् त्रयाणाम् लोकानाम् चूडामणिः इव अमलः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	अभूत्	१२.	विराजमान हुए
उत्तानपदः	२.	राजा उत्तानपाद के	त्रयाणाम्	७.	तीनों
पुत्रः	३.	पुत्र	लोकानाम्	८.	लोकों के ऊपर
ध्रुवः	६.	ध्रुव जी	चूडामणिः	१०.	मस्तकमणि के
कृष्ण	४.	भगवद्	इव	११.	समान
परायणः ।	५.	भक्त	अमलः ॥	९.	निर्मल

श्लोकार्थ—इस प्रकार राजा उत्तानपाद के पुत्र भगवद् भक्त ध्रुव जी तीनों लोकों के ऊपर निर्मल मस्तकमणि के समान विराजमान हुये ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

गम्भीरवेगोऽनिमिषं ज्योतिषां चक्रमाहितम्।
यस्मिन् भ्रमति कौरव्य मेढ्यामिव गवां गणः ॥३९॥

पदच्छेद—

गम्भीर वेगः अनिनिषम् ज्योतिषाम् चक्रम् आहितम् ।
यस्मिन् भ्रमति कौरव्य मेढयाम् इव गवाम् गणः ॥

शब्दार्थ—

गम्भीर	५.	(वैसे) गम्भीर	यस्मिन्	९.	जिस लोक के
वेगः	६.	वेग वाला	भ्रमति	१२.	घूमता है
अनिनिषम्	११.	निरन्तर	कौरव्य	१.	हे कुरु नन्दन
ज्योतिषाम्	७.	नक्षत्र	मेढयाम्	३.	मेढ़ी (खम्भे) के चारों ओर
चक्रम्	८.	मण्डल	इव	२.	जैसे (दँवरी)
आहितम् ।	१०.	सहारे	गवाम् गणः ॥	४.	बैलों का समूह (घूमता है)

श्लोकार्थ—हे कुरुनन्दन ! जैसे दँवरी में मेढी (खम्भे) के चारों ओर बैलों का समूह घूमता है; वैसे गम्भीर वेग वाला नक्षत्र मण्डल जिस लोक के सहारे निरन्तर घूमता है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

महिमानं विलोक्यास्य नारदो भगवानृषिः ।
आतोद्यं वितुदञ् श्लोकान् सत्रेऽगायत्प्रचेतसाम् ॥४०॥

पदच्छेद—

महिमानम् विलोक्य अस्य नारदः भगवान् ऋषिः ।
आतोद्यम् वितुदन् श्लोकान् सत्रे अगायत् प्रचेतसाम् ॥

शब्दार्थ—

महिमानम्	२.	महिमा को	आतोद्यम्	९.	अपनी वीणा
विलोक्य	३.	देखकर	वितुदन्	१०.	बजाते हुये
अस्य	१.	इन ध्रुव जी की	श्लोकान्	११.	तीन श्लोक
नारदः	६.	नारद जी ने	सत्रे	८.	यज्ञ शाला में
भगवान्	५.	भगवान्	अगायत्	१२.	गाये थे
ऋषिः ।	४.	देवर्षि	प्रचेतसाम् ॥	७.	प्रचेताओं की

श्लोकार्थ—इन ध्रुव जी की महिमा को देखकर देवर्षि भगवान् नारद जी ने प्रचेताओं की यज्ञशाला में अपनी वीणा बजाते हुये तीन श्लोक गाये थे ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

नारद उवाच—नूनं सुनीतेः पतिदेवतायास्तपःप्रभावस्य सुतस्य तां गतिम् ।
दृष्ट्वाभ्युपायानपि वेदवादिनो नैवाधिगन्तुं प्रभवन्ति किं नृपाः ॥४१॥

पदच्छेद— नूनम् सुनीतेः पतिदेवतायाः तपः प्रभावस्य सुतस्य ताम् गतिम् ।
दृष्ट्वा अभ्युपायान् अपि वेदवादिनः न एव अधिगन्तुम् प्रभवन्ति किम् नृपाः ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	१२.	अवश्य ही	दृष्ट्वा	१०.	देखकर
सुनीतेः	२.	सुनीति के	अभ्युपायान्	९.	उपायों को
पतिदेवतायाः	१.	पतिव्रता	अपि	११.	भी
तपः	४.	तपस्या की	वेदवादिनः	८.	वेद-वादी मुनिगण
प्रभावस्य	५.	महिमा से (जिस पद को प्राप्त किया)	न एव	१४.	नहीं
सुतस्य	३.	पुत्र ध्रुव जी ने	अधिगन्तुम्	१३.	पाने में
ताम्	६.	उस	प्रभवन्ति	१५.	समर्थ हो सकते हैं
गतिम् ।	७.	पद को	किम्	१७.	बात ही क्या है
			नृपाः ॥	१६.	फिर राजाओं की तो

श्लोकार्थ—पतिव्रता सुनीति के पुत्र ध्रुव जी ने तपस्या की महिमा से जिस पद को प्राप्त किया; उस पद को वेदवादी मुनिगण उपायों को देखकर भी अवश्य ही पाने में समर्थ नहीं हो सकते हैं। फिर राजाओं की तो बात ही क्या है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

यः पञ्चवर्षो गुरुदारवाक्शरैर्भिन्नेन यातो हृदयेन दूयता ।
वनं मदादेशकरोऽजितं प्रभुं जिगाय तद्भक्तगुणैः पराजितम् ॥४२॥

पदच्छेद—यः पञ्चवर्षः गुरुदार वाक् शरैः भिन्नेन यातः हृदयेन दूयता ।
वनम् मत् आदेश करः अजितम् प्रभुम् जिगाय तद्-भक्त गुणैः पराजितम् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो ध्रुव जी	वनम्	८.	वन को
पञ्चवर्षः	२.	पांच वर्ष की अवस्था में	मद् आदेश	११.	मेरे आदेश के अनुसार
गुरुदार	३.	सौतेली मां के	करः	१२.	आचरण करके
वाक् शरैः	४.	वचनरूपी बाणों से	अजितम्	१३.	अजेय
भिन्नेन	५.	मर्माहत होकर	प्रभुम्	१४.	भगवान् को
यातः	९.	चले गये (तथा)	जिगाय	१५.	जीत लिया
हृदयेन	७.	मन से	तद्-भक्त	१६.	क्योंकि भगवान् अपने भक्तों के
दूयता ।	६.	दुःखी	गुणैः पराजितम् ॥	१७.	गुणों के वश में रहते हैं

श्लोकार्थ—जो ध्रुव जी पांच वर्ष की अवस्था में सौतेली मां के वचनरूपी बाणों से मर्माहत होकर दुःखी मन से वन को चले गये। तथा मेरे आदेश के अनुसार आचरण करके अजेय भगवान् को जीत लिया। क्योंकि भगवान् अपने भक्तों के गुणों के वश में रहते हैं ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

यः क्षत्रबन्धुर्भुवि तस्याधिरूढमन्वारुरुक्षेदपि वर्षपूगैः ।
षट्पञ्चवर्षो यदहोभिरल्पैः प्रसाद्य वैकुण्ठमवाप तत्पदम् ॥४३॥

पदच्छेद— यः क्षत्रबन्धुः भुवि तस्य अधिरुढम् अन्वारुरुक्षेत् अपि वर्ष पूगैः ।
षट् पञ्च वर्षः यत् अहोभिः अल्पैः प्रसाद्य वैकुण्ठम् अवाप तत् पदम् ॥

शब्दार्थ—

यः	११. क्या कोई		षट्	२.	छः वर्ष की अवस्था में जो
क्षत्रबन्धुः	१२. क्षत्रिय		पञ्च	१.	(ध्रुव जी ने) पाँच
भुवि	१०. पृथ्वी पर		वर्षः यत्	२.	वर्ष की अवस्था में जो
तस्य	१६. उन ध्रुव जी के		अहोभिः	५.	दिनों की तपस्या
अधिरुढम्	१७. पद को		अल्पैः	४.	थोड़े
अन्वारुरुक्षेत्	१८. प्राप्त कर सकता है		प्रसाद्य	७.	प्रसन्न करके
अपि	१५. भी		वैकुण्ठम्	६.	भगवान् श्री हरि को
वर्ष	१४. वर्षों में		अवाप	९.	प्राप्त कर लिया
पूगैः ।	१३. अनेकों		तत् पदम् ॥	८.	उनके लोक को

श्लोकार्थ—ध्रुव जी ने पाँच छः वर्ष की अवस्था में जो थोड़े दिनों की तपस्या से भगवान् श्री हरि को प्रसन्न करके उनके लोक को प्राप्त कर लिया। पृथ्वी पर क्या कोई क्षत्रिय अनेकों वर्षों में भी उन ध्रुव जी के पद को प्राप्त कर सकता है ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—एतत्तेऽभिहितं सर्वं यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ।
ध्रुवस्योद्दामयशसश्चरितं सम्मतं सताम् ॥४४॥

पदच्छेद— एतत् ते अभिहितम् सर्वम् यत् पृष्टः अहम् ।
इह त्वया ध्रुवस्य उद्दाम यशसः चरितम् सम्मतम् सताम् ।

शब्दार्थ—

एतत्	८.	यह	इह त्वया	१.	यहाँ तुमने
ते	१०.	तुम्हें	ध्रुवस्य	४.	ध्रुव जी का
अभिहितम्	११.	सुना दिया	उद्दाम	२.	पवित्र
सर्वम्	९.	सब	यशसः	३.	कीर्ति
यत्	५.	जो (चरित्र)	चरितम्	१२.	यह चरित
पृष्टः	७.	पूछा था	सम्मतम्	१४.	अत्यन्त प्रिय है
अहम्	६.	मुझसे	सताम् ॥	१३.	साधु पुरुषों को

श्लोकार्थ—यहाँ तुमने पवित्र कीर्ति ध्रुव जी का जो चरित्र मुझसे पूछा था यह सब तुम्हें सुना दिया। यह चरित साधु पुरुषों को अत्यन्त प्रिय है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

धन्यं यशस्यमायुष्यं पुण्यं स्वस्त्ययनं महत् ।
स्वर्ग्यं ध्रौव्यं सौमनस्यं प्रशस्यमघमर्षणम् ॥४५॥

पदच्छेद—

धन्यम् यशस्यम् आयुष्यम् पुण्यम् स्वस्त्ययनम् महत् ।
स्वर्ग्यम् ध्रौव्यम् सौमनस्यम् प्रशस्यम् अघ मर्षणम् ॥

शब्दार्थ—

धन्यम्	१. यह चरित्र धन	स्वर्ग्यम्	७.	स्वर्ग
यशस्यम्	२. यश (और)	ध्रौव्यम्	८.	ध्रुवपद (और)
आयुष्यम्	३. आयु (देने वाला)	सौमनस्यम्	९.	देवपद (देने वाला)
पुण्यम्	४. पवित्र (और)	प्रशस्यम्	१०.	श्रेष्ठ (एवम्)
स्वस्त्ययनम्	६. मङ्गलकारी है (यह)	अघ	११.	पापों का
महत् ।	५. अत्यन्त	मर्षणम् ॥	१२.	नाश करने वाला है

श्लोकार्थ—यह चरित्र धन, यश और आयु देने वाला पवित्र और अत्यन्त मङ्गलकारी है यह स्वर्ग, ध्रुवपद देवपद देने वाला श्रेष्ठ एवम् पापों का नाश करने वाला है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

श्रुत्वैतच्छ्रद्धयाभीक्ष्णमच्युतप्रियचेष्टितम् ।
भवेद्भक्तिर्भगवति यया स्यात्क्लेशसंक्षयः ॥४६॥

पदच्छेद—

श्रुत्वा एतद् श्रद्धया अभीक्ष्णम् अच्युत प्रिय चेष्टितम् ।
भवेत् भक्तिः भगवति यया स्यात् क्लेश संक्षयः ॥

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	७. सुनने से	भवेत्	१०.	होती है
एतद्	३. इस	भक्तिः	९.	भक्ति
श्रद्धया	५. श्रद्धा पूर्वक	भगवति	८.	भगवान् में
अभीक्ष्णम्	६. बार-बार	यया	११.	जिस भक्ति से
अच्युत	१. भगवत्	स्यात्	१४.	होता है
प्रिय	२. भक्त (ध्रुव जी के)	क्लेश	१२.	दुःखों का
चेष्टितम् ।	४. चरित्र को	संक्षयः ॥	१३.	नाश

श्लोकार्थ—भगवत् भक्त ध्रुव जी के इस चरित्र को श्रद्धा पूर्वक बार-बार सुनने से भगवान् में भक्ति होती है; जिस भक्ति से दुःखों का नाश होता है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

महत्त्वमिच्छतां तीर्थं श्रोतुः शीलादयो गुणाः ।
यत्र तेजस्तदिच्छूनां मानो यत्र मनस्विनाम् ॥४७॥

पदच्छेद— महत्त्वम् इच्छताम् तीर्थम् श्रोतुः शील आदयः गुणाः ।
यत्र तेजः तद् इच्छूनाम् मानः यत्र मनस्विनाम् ॥

शब्दार्थ—

महत्त्वम्	५. महिमा	यत्र	८. जहाँ
इच्छताम्	६. चाहने वालों का	तेजः	११. तेज
तीर्थम्	७. यह पवित्र स्थान है	तद्	९. तेज के
श्रोतुः	१. इससे श्रोता को	इच्छूनाम्	१०. इच्छुक लोगों के
शील	२. सच्चरित्र	मानः	१४. सम्मान (मिलता है)
आदयः	३. इत्यादि	यत्र	१२. और
गुणाः ।	४. गुण (मिलते हैं)	मनस्विनाम्	१३. स्वाभिमानियों को

श्लोकार्थ—इससे श्रोता को सच्चरित्र इत्यादि गुण मिलते हैं । महिमा चाहने वालों का यह पवित्र स्थान है । तेज के इच्छुक लोगों को तेज और स्वाभिमानियों को सम्मान मिलता है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

प्रयतः कीर्तयेत्प्रातः समवाये द्विजन्मनाम् ।
सायं च पुण्यश्लोकस्य ध्रुवस्य चरितं महत् ॥४८॥

पदच्छेद— प्रयतः कीर्तयेत् प्रातः समवाये द्विजन्मनाम् ।
सायम् च पुण्य श्लोकस्य ध्रुवस्य चरितम् महत् ॥

शब्दार्थ—

प्रयतः	११. एकाग्रमन से	च	७. और
कीर्तयेत्	१२. कीर्तन करना चाहिये	पुण्य	१. पवित्र
प्रातः	६. प्रातः	श्लोकस्य	२. कीर्ति
समवाये	१०. समाज में	ध्रुवस्य	३. ध्रुव जी के
द्विजन्मनाम् ।	९. द्विजातियों के	चरितम्	५. चरित्र का
सायम्	८. सायंकाल	महत् ॥	४. महान्

श्लोकार्थ—पवित्र कीर्ति ध्रुव जी के महान् चरित्र का प्रातः सायंकाल द्विजातियों के समाज में एकाग्रमन से कीर्तन करना चाहिये ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

पौर्णमास्यां सिनीवाल्यां द्वादश्यां श्रवणेऽथवा ।
दिनक्षये व्यतीपाते सङ्क्रमेऽर्कदिनेऽपि वा ॥४९॥

पदच्छेद—

पौर्णमास्याम् सिनीवाल्याम् द्वादश्यां श्रवणे अथवा ।
दिनक्षये व्यतीपाते सङ्क्रमे अर्कदिने अपि वा ॥

शब्दार्थ—

पौर्णमास्याम्	१. इस चरित को पूर्णिमा	दिनक्षये	६. तिथि के क्षय होने पर
सिनीवाल्याम्	२. अमावस्या	व्यतीपाते	७. व्यतीपात योग
द्वादश्यां	३. द्वादशीतिथि	सङ्क्रमे	८. संक्रान्ति
श्रवणे	४. श्रवण नक्षत्र	अर्कदिने	१०. रविवार के दिन
तथा ।	५. तथा	अपि	९. और
		वा ॥	११. सुनना चाहिये

श्लोकार्थ—इस चरित को पूर्णिमा, अमावास्या, द्वादशी तिथि, श्रवणनक्षत्र तथा तिथि के क्षय होने पर व्यतीपात योग, संक्रान्ति और रविवार के दिन सुनना चाहिये ॥

पञ्चाशः श्लोकः

श्रावयेच्छ्रद्दधानानां तीर्थपादपदाश्रयः ।
नेच्छंस्तत्रात्मनाऽऽत्मानं सन्तुष्ट इति सिध्यति ॥५०॥

पदच्छेद—

श्रावयेत् श्रद्दधानानाम् तीर्थपाद पद आश्रयः ।
न इच्छन् तत्र आत्मना आत्मानम् सन्तुष्टः इति सिध्यति ॥

शब्दार्थ—

श्रावयेत्	५. सुनाता है	इच्छन्	८. चाहता है
श्रद्दधानानाम्	४. श्रद्धालु पुरुषों को	तत्र	६. (वह) संसार में
तीर्थपाद	१ पवित्र चरण भगवान् के	आत्मानम्	९. स्वयं अपने से
पद	२. चरणों की	आत्मानम्	१०. अपने को
आश्रयः	३. शरण लेने वाला जो पुरुष इसे	सन्तुष्टः	११. सन्तुष्ट रखता है
न	७. कुछ भी नहीं	इति	१२. इस प्रकार वह
		सिध्यति ॥	१३. सिद्ध हो जाता है

श्लोकार्थ—पवित्र चरण भगवान् के चरणों की शरण लेने वाला जो पुरुष इसे श्रद्धालु पुरुषों को सुनाता है, वह संसार में कुछ भी नहीं चाहता है, स्वयं अपने से अपने को सन्तुष्ट रखता है, इस प्रकार वह सिद्ध हो जाता है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

ज्ञानमज्ञाततत्त्वाय यो दद्यात्सत्पथेऽमृतम् ।
कृपालोर्दीननाथस्य देवास्तस्यानुगृह्णते ॥५१॥

पदच्छेद— ज्ञानम् अज्ञात तत्त्वाय यः दद्यात् सत्पथे अमृतम् ।
कृपालोः दीन नाथस्य देवाः तस्य अनुगृह्णते ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानम्	६. (यह) ज्ञान	कृपालोः	९.	दयालु
अज्ञात	४. अनभिज्ञ (पुरुषों को)	दीन	१०.	दीन
तत्त्वाय	३. मर्म से	नाथस्य	११.	वत्सल पर
यः	१. जो (पुरुष)	देवाः	१२.	देवतालोग
दद्यात्	७. देता है	तस्य	८.	उस
सत्पथे	२. भगवत् मार्ग के	अनुगृह्णते ॥	१३.	कृपा करते हैं
अमृतम् ।	५. अमृत स्वरूप			

श्लोकार्थ—जो पुरुष भगवत् मार्ग के मर्म से अनभिज्ञ पुरुषों को अमृतस्वरूप यह ज्ञान देता है, उस दयालु दीन वत्सल पर देवता लोग कृपा करते हैं ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

इदं मया तेऽभिहितं कुरूद्वह ध्रुवस्य विख्यातविशुद्धकर्मणः ।
हित्वार्भकः क्रीडनकानि मातुर्गृहं च विष्णुं शरणं यो जगाम ॥५२॥

पदच्छेद— इदम् मया ते अभिहितम् कुरूद्वह ध्रुवस्य विख्यात विशुद्ध कर्मणः ।
हित्वा अर्भकः क्रीडनकानि मातुः गृहम् च विष्णुम् शरणम् यः जगाम ॥

शब्दार्थ—

इदम्	१५. यह चरित्र	हित्वा	१०.	छोड़कर
मया	१६. मैंने	अर्भकः	६.	बाल्यावस्था में
ते	१७. तुम्हें	क्रीडनकानि	७.	खिलौने
अभिहितम्	१८. सुना दिया	मातुः गृहम्	९.	माता के घर को
कुरूद्वह	१४. हेकुरुनन्दनविदुर जी !	च	८.	और
ध्रुवस्य	१. ध्रुवजी के	विष्णुम्	११.	विष्णु भगवान् की
विख्यात	३. प्रसिद्ध (और)	शरणम्	१२.	शरण में
विशुद्ध	४. पवित्र हैं	यः	५.	वे
कर्मणः ।	२. कर्म	जगाम ॥	१३.	चले गये थे

श्लोकार्थ—ध्रुव जी के कर्म प्रसिद्ध और पवित्र हैं। वे बाल्यावस्था में खिलौने और माता के घर को छोड़कर विष्णु भगवान् की शरण में चले गये थे। हे कुरुनन्दन विदुर जी ! यह चरित्र मैंने तुम्हें सुना दिया ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे ध्रुवचरितं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः
श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
चतुर्थः स्कन्धः
त्रयोदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

सूत उवाच–निशम्य कौषारविणोपवर्णितं ध्रुवस्य वैकुण्ठपदाधिरोहणम् ।
प्ररूढभावो भगवत्यधोक्षजे प्रष्टुं पुनस्तं विदुरः प्रचक्रमे ॥१॥

पदच्छेद— निशम्य कौषारविणा उपवर्णितम् ध्रुवस्य वैकुण्ठपद अधिरोहणम् ।
प्ररूढ भावः भगवति अधोक्षजे प्रष्टुम् पुनः तम् विदुरः प्रचक्रमे ॥

शब्दार्थ—

निशम्य	६.	सुनकर	भावः	१०.	भक्ति
कौषारविणा	१.	मैत्रेय जी से	भगवति	८.	भगवान्
उपर्णितम्	५.	वृत्तान्त	अधोक्षजे	९.	श्री हरि के प्रति
ध्रुवस्य	२.	ध्रुव जी के	प्रष्टुम्	१३.	प्रश्न करना
वैकुण्ठपद	३.	विष्णु पद पर	पुनः, तम्	१२.	(उन्होंने) फिर से, मैत्रेय जी से
अधिरोहणम् ।	४.	आरोहरण का	विदुरः	७.	विदुर जी के (मन में)
प्ररूढ	११.	उत्पन्न हो गई और	प्रचक्रमे ॥	१४.	आरम्भ किया

श्लोकार्थ—मैत्रेय जी से ध्रुवजी के विष्णु पद पर आरोहरण का वृतान्त सुनकर विदुर जी के मन से भगवान् श्री हरि के प्रति भक्ति उत्पन्न हो गई । उन्होंने फिर से मैत्रेय जी से प्रश्न करना आरम्भ किया ॥

द्वितीयः श्लोकः

विदुर उवाच–के ते प्रचेतसो नाम कस्यापत्यानि सुव्रत ।
कस्यान्ववाये प्रख्याताः कुत्र वा सत्रमासत ॥२॥

पदच्छेद— के ते प्रचेतसः नाम कस्य अपत्यानि सुव्रत ।
कस्य अन्ववाये प्रख्याताः कुत्र वा सत्रम् आसत ॥

शब्दार्थ—

के	५.	कौन थे	कस्य	८.	किसके
ते	२.	वे	अन्ववाये	९.	वंश में
प्रचेतसः	३.	प्रचेता	प्रख्याताः	१०.	प्रसिद्ध हुये थे
नाम	४.	नाम के	कुत्र	१२.	कहाँ पर
कस्य	६.	किसके	वा	११.	तथा
अपत्यानि	७.	पुत्र थे	सत्रम्	१३.	यज्ञ
सुव्रत ।	१.	भगवत् परायण मैत्रेय जी !	आसत ॥	१४.	कर रहे थे

श्लोकार्थ—भगवत् परायण मैत्रेय जी ! वे प्रचेता नाम के कौन थे ? किसके पुत्र थे, किसके वंश में प्रसिद्ध हुये थे तथा कहाँ पर यज्ञ कर रहे थे ॥

तृतीयः श्लोकः

मन्ये महाभागवतं नारदं देवदर्शनम् ।
येन प्रोक्तः क्रियायोगः परिचर्याविधिर्हरेः ॥३॥

पदच्छेद—

मन्ये महा भागवतम् नारदम् देव दर्शनम् ।
येन प्रोक्तः क्रियायोगः परिचर्या विधिः हरेः ॥

शब्दार्थ—

मन्ये	६. मानता हूँ	येन	७. जिन्होंने
महा	४. परम	प्रोक्तः	१२. उपदेश किया है
भागवतम्	५. भगवद्भक्त	क्रियायोगः	११. कर्मयोग का
नारदम्	३. नारद जी को	परिचर्या	६. पूजा
देव	१. भगवान् श्री हरि के	विधिः	१०. पद्धति स्वरूप
दर्शनम् ।	२. दर्शन से कृतार्थ	हरेः ॥	८. भगवान् श्रीहरि की

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के दर्शन से कृतार्थ नारद जी को परम भगवद्भक्त मानता हूँ, जिन्होंने भगवान् श्री हरि की पूजा पद्धति स्वरूप कर्म योग का उपदेश किया है ॥

चतुर्थः श्लोकः

स्वधर्मशीलैः पुरुषैर्भगवान् यज्ञपूरुषः ।
इज्यमानो भक्तिमता नारदेनेरितः किल ॥४॥

पदच्छेद—

स्वधर्म शीलैः पुरुषैः भगवान् यज्ञपूरुषः ।
इज्यमानः भक्तिमता नारदेन ईरितः किल ॥

शब्दार्थ—

स्वधर्म	१. अपने धर्म का	इज्यमानः	६. यज्ञकर रहे थे
शीलैः	२. पालन करने वाले	भक्तिमता	८. भक्ति से सम्पन्न
पुरुषैः	३. प्रचेता लोग	नारदेन	६. नारद जी ने
भगवान्	४. भगवान्	ईरितः	१०. ध्रुव जी का (चरित) सुनाया था
यज्ञपूरुषः	५. यज्ञेश्वर का	किल ॥	७. उस समय

श्लोकार्थ—अपने धर्म का पालन करने वाले प्रचेता लोग भगवान् यज्ञेश्वर का यज्ञ कर रहे थे । उस समय भक्ति से सम्पन्न नारद जी ने ध्रुव जी का चरित सुनाया था ॥

पञ्चमः श्लोकः

यास्ता देवर्षिणा तत्र वर्णिता भगवत्कथाः ।
मह्यं शुश्रूषवे ब्रह्मन् कार्त्स्न्येनाचष्टुमर्हसि ॥५॥

पदच्छेद—

यः ताः देवर्षिणा तत्र वर्णिताः भगवत् कथाः ।
मह्यम् शुश्रूषवे ब्रह्मन् कार्त्स्न्येन आचष्टुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

याः	५. जिन	मह्यम्	९. मुझ से (आप)
ताः	१०. उन कथाओं को	शुश्रूषवे	८. सुनने के इच्छुक
देवर्षिणा	३. देवर्षिनारद जी से	ब्रह्मन्	१. हे मैत्रेय जी
तत्र	२. उस यज्ञ में	कार्त्स्न्येन	११. सम्पूर्ण रूप से
वर्णिताः	७. वर्णन किया था	आचष्टुम्	१२. कहने में
भगवत्	४. भगवान् की	अर्हसि ॥	१३. समर्थ हैं
कथाः ।	६. कथाओं का		

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! उस यज्ञ में देवर्षि नारद जी ने भगवान् की जिन कथाओं का वर्णन किया था, सुनने के इच्छुक मुझसे आप उन कथाओं को सम्पूर्ण रूप से कहने में समर्थ हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—ध्रुवस्य चोत्कलः पुत्रः पितरि प्रस्थिते वनम् ।
सार्वभौमश्रियं नैच्छदधिराजासनं पितुः ॥६॥

पदच्छेद—

ध्रुवस्य च उत्कलः पुत्रः पितरि प्रस्थिते वनम् ।
सार्वभौम श्रियम् न ऐच्छत् अधिराजासनम् पितुः ॥

शब्दार्थ—

ध्रुवस्य	१. ध्रुव जी के	सार्वभौम	७. सम्पूर्ण पृथ्वी की
च	९. और	श्रियम्	८. लक्ष्मी
उत्कलः	२. उत्कल नाम के	न	१२. नहीं
पुत्रः	३. पुत्र ने	ऐच्छत्	१३. इच्छा की
पितरि	४. पिता ध्रुव के	अधिराजासनम्	११. राज्य सिंहासन की
प्रस्थिते	६. चले जाने पर	पितुः ॥	१०. पिता के
वनम् ।	५. वन को		

श्लोकार्थ—ध्रुव जी के उत्कल नाम के पुत्र ने पिता ध्रुव के वन को चले जाने पर सम्पूर्ण पृथ्वी की लक्ष्मी और पिता के राज्यसिंहासन की इच्छा नहीं की ॥

सप्तमः श्लोकः

स जन्मनोपशान्तात्मा निःसङ्गः समदर्शनः ।
ददर्श लोके विततमात्मानं लोकमात्मनि ॥७॥

पदच्छेद—

सः जन्मना उपशान्त आत्मा निःसङ्गः समदर्शनः ।
ददर्श लोके विततम् आत्मानम् लोकम् आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वे (उत्कल जी)	ददर्श	१२. देखा था
जन्मना	२. जन्म से ही	लोके	६. उन्होंने संसार में
उपशान्त	३. शान्त	विततम्	११. व्याप्त
आत्मा	४. चित्त	आत्मानम्	८. आत्मा को (और)
निःसङ्गः	५. अनासक्त (और)	लोकम्	१०. सम्पूर्ण संसार को
समदर्शनः ।	६. समदर्शी थे	आत्मनि ॥	९. अपनी आत्मा में

श्लोकार्थ—वे उत्कल जो जन्म से ही शान्तचित्त अनासक्त और समदर्शी थे, उन्होंने संसार में आत्मा को और अपनी आत्मा में सम्पूर्ण संसार को व्याप्त देखा था ॥

अष्टमः श्लोकः

आत्मानं ब्रह्म निर्वाणं प्रत्यस्तमितविग्रहम् ।
अवबोधरसैकात्म्यमानन्दमनुसन्ततम् ॥८॥

पदच्छेद—

आत्मानम् ब्रह्म निर्वाणम् प्रत्यस्तमित विग्रहम् ।
अवबोध रस ऐकात्म्यम् आनन्दम् अनुसन्ततम् ॥

शब्दार्थ—

आत्मानम्	२. आत्मा को	अवबोध	६. ज्ञान
ब्रह्म	१. (उन्होंने) ब्रह्म स्वरूप	रस	७. रस
निर्वाणम्	३. शान्त	ऐकात्म्यम्	८. स्वरूप
प्रत्यस्तमित	५. रहित	आनन्दम्	९. आनन्दमय (और)
विग्रहम् ।	४. भेद से	अनुसन्ततम् ॥	१०. सर्वत्र व्याप्त (देखा था)

श्लोकार्थ—उन्होंने ब्रह्म स्वरूप आत्मा को शान्त, भेद से रहित, ज्ञान, रस-स्वरूप आनन्दमय और सर्वत्र व्याप्त देखा था ॥

नवमः श्लोकः

अव्यवच्छिन्नयोगाग्निदग्धकर्ममलाशयः ।
स्वरूपमवरुन्धानो नात्मनोऽन्यं तदैक्षत ॥९॥

पदच्छेद—

अव्यवच्छिन्न योगाग्नि दग्ध कर्ममल आशयः ।
स्वरूपम् अवरुन्धानः न आत्मनः अन्यम् तद् ऐक्षत ॥

शब्दार्थ—

अव्यवच्छिन्न	३. निरन्तर	अवरुन्धानः	७. लीन न रहते हुये (वे)
योगाग्नि	४. योग की अग्नि से	न	११. नहीं
दग्ध	५. जल गये थे	आत्मनः	९. आत्मा से
कर्ममल	२. कर्मरूपी मल	अन्यम्	१०. भिन्न
आशयः ।	१. उनके अन्तःकरण के	तद्	८. इस जगत् को
स्वरूपम्	६. आत्म स्वरूप में	ऐक्षत ॥	१२. देखते थे

श्लोकार्थ—उनके अन्तः करण के कर्मरूपी मल निरन्तर योग की अग्नि से जल गये थे । आत्म स्वरूप में लीन रहते हुये वे इस जगत् को आत्मा से भिन्न नहीं देखते थे ॥

दशमः श्लोकः

जडान्धबधिरोन्मत्तमूकाकृतिरतन्मतिः ।
लक्षितः पथि बालानां प्रशान्तार्चिरिवानलः ॥१०॥

पदच्छेद—

जड अन्ध बधिर उन्मत्त मूक आकृतिः अतद् मतिः ।
लक्षितः पथि बालानाम् प्रशान्त अर्चिः इव अनलः ॥

शब्दार्थ—

जड	७. मूर्ख	लक्षितः	१४. समझते थे
अन्ध	८. अन्धा	पथि	१. मार्ग में
बधिर	९. बहरा	बालानाम्	२. अज्ञानी लोग
उन्मत्त	१० पागल	प्रशान्त	३. शान्त
मूक आकृतिः	११. गूंगे के समान (और)	अर्चिः	४. लपटों वाली
अतद्	१२. सामान्य जनों से भिन्न	इव	६. समान उन्हें
मतिः ।	१३. बुद्धि वाला	अनलः ॥	५. आग के

श्लोकार्थ—मार्ग में अज्ञानी लोग शान्त लपटों वाली आग के समान उन्हें मूर्ख, अन्धा, बहरा, पागल, गूंगे के समान और सामान्य जनों से भिन्न बुद्धि वाला समझते थे ॥

एकादशः श्लोकः

मत्वा तं जडमुन्मत्तं कुलवृद्धाः समन्त्रिणः ।
वत्सरं भूपतिं चक्रुर्यवीयांसं भ्रमेः सुतम् ॥११॥

पदच्छेद—

मत्वा तम् जडम् उन्मत्तम् कुलवृद्धाः समन्त्रिणः ।
वत्सरम् भूपतिम् चक्रुः यवीयांसम् भ्रमेः सुतम् ॥

शब्दार्थ—

मत्वा	४.	समझकर	वत्सरम्	१०.	वत्सर को
तम्	१.	उन उत्कल जी को	भूपतिम्	११.	राजा
जडम्	२.	मूर्ख (और)	चक्रुः	१२.	बनाया
उन्मत्तम्	३.	पागल	यवीयांसम्	७.	उनके छोटे भाई
कुलवृद्धाः	५.	कुल के बड़े बूढ़े लोग	भ्रमेः	८.	रानी भ्रमि के
समन्त्रिणः ।	६.	और मन्त्रिगणों ने	सुतम् ॥	९.	पुत्र

श्लोकार्थ—उन उत्कल जी को मूर्ख और पागल समझकर कुल के बड़े बूढ़े लोग और मन्त्रिगणों ने उनके छोटे भाई रानी भ्रमि के पुत्र वत्सर को राजा बनाया ॥

द्वादशः श्लोकः

स्वर्वीथिर्वत्सरस्येष्टा भार्यासूत षडात्मजान् ।
पुष्पार्णं तिग्मकेतुं च इषमूर्जं वसुं जयम् ॥१२॥

पदच्छेद—

स्वर्वीथिः वत्सरस्य इष्टा भार्या असूत षड् आत्मजान् ।
पुष्पार्णम् तिग्मकेतुम् च इषम् ऊर्जम् वसुम् जयम् ॥

शब्दार्थ—

स्वर्वीथिः	२.	स्वर्वीथि नाम की	पुष्पार्णम्	५.	पुष्पार्ण
वत्सरस्य	१.	राजा वत्सर की	तिग्मकेतुम्	६.	तिग्मकेतु
इष्टा	३.	प्रेयसी	च	१०.	और
भार्या	४.	पत्नी ने	इषम्	७.	इष
असूत	१४.	जन्म दिया	ऊर्जम्	८.	ऊर्ज
षड्	१२.	छः	वसुम्	९.	वसु
आत्मजान्	१३.	पुत्रों को	जयम् ॥	११.	जय नाम के

श्लोकार्थ—स्वर्वीथी नाम की प्रेयसी पत्नी ने पुष्पार्ण, तिग्मकेतु, इष, ऊर्ज, वसु और जय नाम के छः पुत्रों को जन्म दिया ॥

त्रयोदशः श्लोकः

पुष्पार्णस्य प्रभा भार्या दोषा च द्वे बभूवतुः ।
प्रातर्मध्यन्दिनं सायमिति ह्यासन् प्रभासुताः ॥१३॥

पदच्छेद—

पुष्पार्णस्य प्रभा भार्या दोषा च द्वे बभूवतुः ।
प्रातः मध्यन्दिनम् सायम् इति हि आसन् प्रभासुताः ॥

शब्दार्थ—

पुष्पार्णस्य	१.	राजा पुष्पार्ण की	प्रातः	९.	प्रातः
प्रभा	२.	प्रभा नाम की	मध्यन्दिनम्	१०.	मध्यन्दिनम्
भार्या	६.	पत्नियाँ	सायम्	११.	सायम्
दोषा	४.	दोषा नाम की	इति	१२.	इस नाम से
च	३.	और	हि	८.	उनमें से
द्वे	५.	दो	आसन्	१४.	हुये
बभूवतुः ।	७.	हुईं	प्रभासुताः ॥	१३.	प्रभा के तीन पुत्र

श्लोकार्थ—राजा पुष्पार्ण की प्रभा नाम की और दोषा नाम की दो पत्नियाँ हुईं। उनमें से प्रातः, मध्यनन्दिनम्, सायम् इस नाम से प्रभा के तीन पुत्र हुये ॥

चतुर्दशः श्लोकः

प्रदोषो निशिथो व्युष्ट इति दोषासुतास्त्रयः ।
व्युष्टः सुतं पुष्करिण्यां सर्वतेजसमादधे ॥१४॥

पदच्छेद—

प्रदोषः निशीथः व्युष्टः इति दोषा सुताः त्रयः ।
व्युष्टः सुतम् पुष्करिण्याम् सर्वतेजसम् आदधे ॥

शब्दार्थ—

प्रदोषः	१.	प्रदोष	त्रयः	७	तीन
निशीथः	२.	निशीथ (और)	व्युष्टः	८.	उनमें से व्युष्ट ने
व्युष्टः	३.	व्युष्ट	सुतम्	११.	पुत्र को
इति	४.	इस नाम से	पुष्करिण्याम्	९.	पुष्करिणी के गर्भ से
दोषा	५.	दोषा के	सर्वतेजसम्	१०.	सर्वतेजा नाम के
सुताः	६	पुत्र थे	आदधे ॥	१२.	जन्म दिया

श्लोकार्थ—प्रदोष, निशीथ और व्युष्ट इस नाम के दोषा के तीन पुत्र थे। उनमें से व्युष्ट ने पुष्करिणी के गर्भ से सर्वतेजा नाम के पुत्र को जन्म दिया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

स चक्षुः सुतमाकूत्यां पत्न्यां मनुमवाप ह ।
मनोरसूत महिषी विरजान्नड्वला सुतान् ॥१५॥

पदच्छेद— सः चक्षुः सुतम् आकूत्याम् पत्न्याम् मनुम् अवाप ह ।
मनोः असूत महिषी विरजान् नड्वला सुतान् ॥

शब्दार्थ—

सः	१. उस सर्वतेजा ने	ह ।	६. जो चाक्षुष के मन्वन्तर के
चक्षुः	४. चक्षुनाम के	मनोः	९. चक्षुनाम के मनु की
सुतम्	५. पुत्र को	असूत	१४. उत्पन्न किया
आकूत्याम्	३. आकूति के गर्भ से	महिषी	१०. पत्नी
पत्न्याम्	२. अपनी पत्नी	विरजान्	१२. सत्त्वगुण वाले
मनुम्	७. मनु थे	नड्वला	११. नड्वला ने
अवाप	८. प्राप्त किया	सुतान् ॥	१३. पुत्रों को

श्लोकार्थ—उस सर्वतेजा ने अपनी पत्नी आकूती के गर्भ से चक्षु नाम के पुत्र को, जो चाक्षुष मन्वन्तर के मनु थे, प्राप्त किया । चक्षु नाम के मनु की पत्नी नड्वला ने सत्त्वगुण वाले पुत्रों को उत्पन्न किया ॥

षोडशः श्लोकः

पुरुं कुत्सं त्रितं द्युम्नं सत्यवन्तमृतं व्रतम् ।
अग्निष्टोममतीरात्रं प्रद्युम्नं शिबिमुल्मुकम् ॥१६॥

पदच्छेद— पुरुम् कुत्सम् त्रितम् द्युम्नम् सत्यवन्तम् ऋतम् व्रतम् ।
अग्निष्टोमम् अतीरात्रम् प्रद्युम्नम् शिबिम् उल्मुकम् ॥

शब्दार्थ—

पुरुम्	१. नड्वला के पुरु	व्रतम्	७. व्रत
कुत्सम्	२. कुत्स	अग्निष्टोमम्	८. अग्निष्टोम
त्रितम्	३. त्रित	अतिरात्रम्	९. अतिरात्र
द्युम्नम्	४. द्युम्न	प्रद्युम्नम्	१०. प्रद्युम्न
सत्यवन्तम्	५. सत्यवान्	शिबि	११. शिबि (और)
ऋतम्	६. ऋत	उल्मुकम् ॥	१२. उल्मुक ये बारह पुत्र थे

श्लोकार्थ—नड्वला के पुरु, कुत्स, त्रित, द्युम्न, सत्यवान्, ऋत, व्रत, अग्निष्टोम, अतिरात्र, प्रद्युम्न, शिबि और उल्मुक—ये बारह पुत्र थे ॥

सप्तदशः श्लोकः

उल्मुकोऽजनयत्पुत्रान्पुष्करिण्यां षडुत्तमान् ।
अङ्गं सुमनसं ख्यातिं क्रतुमङ्गिरसं गयम् ॥१७॥

पदच्छेद—

उल्मुकः अजनयत् पुत्रान् पुष्करिण्याम् षड् उत्तमान् ।
अङ्गम् सुमनसम् ख्यातिम् क्रतुम् अङ्गिरसम् गयम् ॥

शब्दार्थ—

उल्मुकः	१.	राजा उल्मुक ने	अङ्गम्	३.	अङ्ग
अजनयत्	१२.	उत्पन्न किया	सुमनसम्	४.	सुमना
पुत्रान्	११.	पुत्रों को	ख्यातिम्	५.	ख्याति
पुष्करिण्याम्	२.	अपनी पत्नी पुष्करिणी से	क्रतुम्	६.	क्रतु
षड्	९.	छः	अङ्गिरसम्	७.	अङ्गिरा (और)
उत्तमान् ।	१०.	उत्तम	गयम् ॥	८.	गयनाम के

श्लोकार्थ—राजा उल्मुक ने अपनी पत्नी पुष्करिणी से अङ्ग, सुमना, ख्याति, क्रतु, अङ्गिरा और गयनाम के छः उत्तम पुत्रों को उत्पन्न किया ॥

अष्टादशः श्लोकः

सुनीथाङ्गस्य या पत्नी सुषुवे वेनमुल्बणम् ।
यद्दौःशील्यात्स राजर्षिर्निर्विण्णो निरगात्पुरात् ॥१८॥

पदच्छेद—

सुनीथा अङ्गस्य या पत्नी सुषुवे वेनम् उल्बणम् ।
यद् दौः शील्यात् सः राजर्षिः निर्विण्णः निरगात् पुरात् ॥

शब्दार्थ—

सुनीथा	२.	सुनीथा नाम की	यद्	८.	जिसकी
अङ्गस्य	१.	राजा अङ्ग की	दौः शील्यात्	९.	दुष्टता से
या	३.	जो	सः	११.	वे
पत्नी	४.	भार्या थी (उसने)	राजर्षि	१२.	राजर्षि अङ्ग
सुषुवे	७.	जन्म दिया	निर्विण्णः	१०.	दुःखी होकर
वेनम्	६.	वेन को	निरगात्	१४.	निकल गये थे
उल्बणम् ।	५.	क्रूर कर्मा	पुरात् ।	१३.	अपने नगर से

श्लोकार्थ—राजा अङ्ग की सुनीथा नाम की जो भार्या थी, उसने क्रूरकर्मा वेन को जन्म दिया । जिसकी दुष्टता से दुःखी होकर वे राजा अङ्ग नगर से निकल गये थे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

यमङ्ग शेपुः कुपिता वाग्वज्रा मुनयः किल ।
गतासोस्तस्य भूयस्ते ममन्थुर्दक्षिणं करम् ॥१९॥

पदच्छेद—

यम् अङ्ग शेपुः कुपिताः वाग्वजाः मुनयः किल ।
गत असोः तस्य भूयः ते ममन्थुः दक्षिणम् करम् ॥

शब्दार्थ—

यम्	५. जिसे	गत	९. निकल जाने पर
अङ्ग	६. हे तात !	असोः	८. उसके प्राण
शेपुः	७. शाप दिया था (तथा)	तस्य	१२. उसकी
कुपिताः	४. क्रुद्ध होकर	भूयः	११. फिर से
वाग्वजाः	२. वाणीरूपी वज्रवाले	ते	१०. उन ऋषियों ने
मुनयः	३. ऋषियों ने	ममन्थुः	१४. मन्थन किया था
किल ।	६. पहले	दक्षिणम् करम् ॥	१३. दाहिनी भुजा का

श्लोकार्थ—हे तात ! वाणीरूपी वज्रवाले ऋषियों ने क्रुद्ध होकर जिसे पहले शाप दिया था तथा उसके प्राण निकल जाने पर उन ऋषियों ने फिर से उसकी दाहिनी भुजा का मन्थन किया था ॥

विंशः श्लोकः

अराजके तदा लोके दस्युभिः पीडिताः प्रजाः ।
जातो नारायणांशेन पृथुराद्यः क्षितीश्वरः ॥२०॥

पदच्छेद—

अराजके तदा लोके दस्युभिः पीडिताः प्रजाः ।
जातः नारायण अंशेन पृथुः आद्यः क्षितीश्वरः ॥

शब्दार्थ—

अराजके	२. राजा से विहीन	जातः	१२. उत्पन्न (हुये)
तदा	१. वेन के मर जाने पर	नारायण	७. भगवान् विष्णु के
लोके	३. राज्य में	अंशेन	८. अंशावतार
दस्युभिः	५. लुटेरों से	पृथुः	११. राजा पृथु
पीडिताः	६. पीडित होने लगी (उस समय)	आद्यः	९. आदि
प्रजाः ।	४. सारी प्रजा	क्षितीश्वरः ॥	१०. सम्राट्

श्लोकार्थ—वेन के मर जाने पर राजा से विहीन राज्य में सारी प्रजा लुटेरों से पीडित होने लगी । उस समय भगवान् विष्णु के अंशावतार सम्राट् राजा पृथु उत्पन्न हुये ॥

एकविंशः श्लोकः

विदुर उवाच—तस्य शीलनिधेः साधोर्ब्रह्मण्यस्य महात्मनः ।
राज्ञः कथमभूद् दुष्टा प्रजा यद्विमना ययौ ॥२१॥

पदच्छेद—

तस्य शीलनिधेः साधोः ब्रह्मण्यस्य महात्मनः ।
राज्ञः कथम् अभूत् दुष्टा प्रजा यद् विमना ययौ ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	राजा अङ्ग	कथम्	६.	कैसे
शीलनिधेः	२.	सच्चरित	अभूत्	९.	उत्पन्न हुआ
साधोः	३.	साधुस्वभाव	दुष्ट प्रजा	८.	दुष्ट पुत्र
ब्रह्मण्यस्य	४.	ब्राह्मणों के रक्षक (और)	यद्	१०.	जिससे
महात्मनः ।	५.	महात्मा थे	विमनाः	११.	दुःखी होकर (वे)
राज्ञः	७.	उस राजा के	ययौ ॥	१२.	चले गये

श्लोकार्थ—राजा अङ्ग सच्चरित, साधुस्वभाव ब्राह्मणों के रक्षक और महात्मा थे । उस राजा के कैसे दुष्ट पुत्र उत्पन्न हुआ; जिससे वे दुःखी होकर चले गये ॥

द्वाविंशः श्लोकः

किं वांहो वेन उद्दिश्य ब्रह्मदण्डमयुयूजन् ।
दण्डव्रतधरे राज्ञि मुनयो धर्मकोविदाः ॥२२॥

पदच्छेद—

किम् वा अंहः वेन उद्दिश्य ब्रह्मदण्डम् अयूयुजन् ॥
दण्डव्रत धरे राज्ञि मुनयः धर्म कोविदाः ॥

शब्दार्थ—

किम् वा	८.	कौन सा	दण्डव्रत	४.	राज दण्ड
अंहः	९.	अपराध	धरे	५.	धारण करने वाले
वेन	७.	वेन का	राज्ञि	६.	राजा
उद्दिश्य	१०.	देखकर	मुनयः	३.	ऋषियों ने
ब्रह्मदण्डम्	११.	ब्रह्म शाप का	धर्म	१.	धर्म के
अयूयुजन् ॥	१२	प्रयोग किया था	कोविदाः ॥	२.	जानकार

श्लोकार्थ—धर्म के जानकार ऋषियों ने राजदण्ड धारण करने वाले राजा वेन का कौन सा अपराध देखकर ब्रह्मशाप का प्रयोग किया था ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

नावध्येयः प्रजापालः प्रजाभिरघवानपि ।
यदसौ लोकपालानां बिभर्त्योजः स्वतेजसा ॥२३॥

पदच्छेद—

न अवध्येयः प्रजापालः प्रजाभिः अघवान् अपि ।
यद् असौ लोकपालानाम् बिभर्ति ओजः स्वतेजसा ॥

शब्दार्थ—

न	५. नहीं	यद्	७. क्योंकि
अवध्येयः	६. तिरस्कार करे	असौ	८ वह महाराज
प्रजापालः	४. प्रजापालक (राजा)	लोक पालानाम्	९. आठों लोक पालों के
प्रजाभिः	१. प्रजाजन	बिभर्ति	१२. धारण करता है
अघवान्	२. थोड़ा पाप करने पर	ओजः	१०. तेज को
अपि ।	३. भी	स्वतेजसा ॥	११. अपने शरीर में

श्लोकार्थ—प्रजाजन थोड़ा पाप करने पर भी प्रजापालक राजा का तिरस्कार नहीं करे। क्योंकि वह महाराज आठों लोक पालों के तेज को अपने शरीर में धारण करता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एतदाख्याहि मे ब्रह्मन् सुनीथात्मजचेष्टितम् ।
श्रद्दधानाय भक्ताय त्वं परावरवित्तमः ॥२४॥

पदच्छेद—

एतद् आख्याहि मे ब्रह्मन् सुनीथा आतमज चेष्टितम् ।
श्रद्दधानाय भक्ताय त्वम् पर अवर वित्तमः ॥

शब्दार्थ—

एतद्	५. यह	चेष्टितम् ।	६. करतूत
आख्याहि	७. सुनावे (मैं)	श्रद्दधानाय	८. श्रद्धालु (और) आपका
मे	२. मुझे	भक्ताय	९. भक्त (हूँ)
ब्रह्मन्	१. हे ब्रह्मन् मैत्रेय जी ! आप	त्वम्	१०. (तथा) आप
सुनीथा	३. रानी सुनीथा के	पर अवर	११. भूत और भविष्य के
आतमज	४. पुत्र की	वित्तमः ॥	१२. जानकार हैं

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् मैत्रेय जी ! आप मुझे रानी सुनीथा के पुत्र की यह करतूत सुनावें। मैं श्रद्धालु और आपका भक्त हूँ। तथा आप भूत और भविष्य के जानकार हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—अङ्गोऽश्वमेधं राजर्षिराजहार महाक्रतुम् ।
नाजग्मुर्देवतास्तस्मिन्नाहूता ब्रह्मवादिभिः ॥२५॥

पदच्छेद—

अङ्गः अश्वमेधम् राजर्षिः आजहार महा क्रतुम् ।
न आजग्मुः देवताः तस्मिन् आहूताः ब्रह्म वादिभिः ॥

शब्दार्थ—

अङ्गः	२.	अङ्ग ने	न आजग्मुः	१२.	नहीं पधारे
अश्वमेधम्	३.	अश्वमेध नाम का	देवताः	११.	देवगण
राजर्षिः	१.	एक बार राजर्षि	तस्मिन्	७.	उस यज्ञ में
आजहार	६.	आरम्भ किया	आहूताः	१०.	बुलाने पर भी
महा	४.	महान्	ब्रह्म	८.	वेद
क्रतुम् ।	५.	यज्ञ	वादिभिः ॥	९.	पाठी ब्राह्मणों के द्वारा

श्लोकार्थ—एक बार राजर्षि अङ्ग ने अश्वमेधनाम का महान् यज्ञ आरम्भ किया । उस यज्ञ में वेद पाठी ब्राह्मणों के द्वारा बुलाने पर भी देवगण नहीं पधारे ॥

षड्विंशः श्लोकः

तमूचुर्विस्मितास्तत्र यजमानमथर्त्विजः ।
हवींषि हूयमानानि न ते गृह्णन्ति देवताः ॥२६॥

पदच्छेद—

तम् ऊचुः विस्मिताः तत्र यजमानम् अथ ऋत्विजः ।
हवींषि हूयमानानि न ते गृह्णन्ति देवताः ॥

शब्दार्थ—

तम् ऊचुः	६.	उन राजा अङ्ग से कहा हे राजन्	हवींषि	८.	घृत आदि सामग्री को
विस्मिताः	३.	आश्चर्य चकित होकर	हूयमानानि	७.	हवन की गई
तत्र	२.	उस समय	न	११.	नहीं
यजमानम्	५.	यजमान स्वरूप	ते	९.	वे
अथ	१.	तदनन्तर	गृह्णन्ति	१२.	ग्रहण कर रहे हैं
ऋत्विजः ।	४.	याजकों ने	देवताः ॥	१०.	देवतागण

श्लोकार्थ—तदनन्तर उस समय आश्चर्य चकित होकर याजकों ने यजमान स्वरूप उन राजा अङ्ग से कहा; हे राजन् ! हवन की गई घृत आदि सामग्री को वे देवतागण ग्रहण नहीं कर रहे हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

राजन् हवींष्यदुष्टानि श्रद्धयाऽऽसादितानि ते ।
छन्दांस्ययातयामानि योजितानि धृतव्रतैः ॥२७॥

पदच्छेद—

राजन् हवींषि अदुष्टानि श्रद्धया आसादितानि ते ।
छन्दांसि अयात यामानि योजितानि धृत व्रतैः ॥

शब्दार्थ—

राजन्	१. हे राजन्	छन्दांसि	७. वेदमन्त्र भी
हवींषि	३. हवन् सामग्री	अयात	९. हीन (नहीं हैं क्योंकि)
अदुष्टानि	४. दूषित नहीं है (उसे)	यामानि	८. बल
श्रद्धया	५. आपने श्रद्धा पूर्वक	योजितानि	१२. उच्चारित हैं
आसादितानि	६. जुटाया है	धृत	११. धारण करने वाले याजकों से
ते ।	२. आपकी	व्रतैः ॥	१०. यज्ञ के नियमों को

श्लोकार्थ—हे राजन् ! आपकी हवन सामग्री दूषित नहीं है । उसे आपने श्रद्धा पूर्वक जुटाया है । वेद मन्त्र भी बलहीन नहीं हैं क्योंकि यज्ञ के नियमों को धारण करने वाले याजकों से उच्चारित हैं ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

न विदामेह देवानां हेलनं वयमण्वपि ।
यन्न गृह्णन्ति भागान् स्वान् ये देवाः कर्मसाक्षिणः ॥२८॥

पदच्छेद—

न विदाम इह देवानाम् हेलनम् वयम् अणु अपि ।
यद् न गृह्णन्ति भागान् स्वान् ये देवाः कर्म साक्षिणः ॥

शब्दार्थ—

न	२. नहीं	यद्	९. जिससे
विदाम	३. जानते हैं (कि)	न गृह्णन्ति	१६. नही ग्रहण कर रहे हैं
इह	४. इस यज्ञ में	भागान्	१५. यज्ञ के भागों को
देवानाम्	५ देवताओं का	स्वान्	१४. अपने
हेलनम्	८. अपमान हुआ है	ये	१२. वे
वयम्	१. हम लोग	देवाः	१३. देवता
अणु	६. तनिक	कर्म	१०. कर्म के
अपि ।	७. भी	साक्षिणः ॥	११. अध्यक्ष

श्लोकार्थ—हमलोग नहीं जानते हैं कि इस यज्ञ में देवताओं का तनिक भी अपमान हुआ है जिससे कर्म के अध्यक्ष वे देवता अपने यज्ञ के भाग को नहीं ग्रहण कर रहे हैं ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच–अङ्गो द्विजवचः श्रुत्वा यजमानः सुदुर्मनाः ।
तत्प्रष्टुं व्यसृजद्वाचं सदस्यांस्तदनुज्ञया ॥२९॥

पदच्छेद—

अङ्गः द्विज वचः श्रुत्वा यजमानः सुदुर्मनाः ।
तत् प्रष्टुम् व्यसृजत् वाचम् सदस्यान् तद् अनुज्ञया ॥

शब्दार्थ—

अङ्गः	२.	राजा अङ्ग	तत् प्रष्टुम्	८.	यह बात पूछने के लिये (उन्होंने)
द्विज	३.	याजकों का	व्यसृजत्	१२.	किया
वचः	४.	वचन	वाचम्	११.	मौन भङ्ग
श्रुत्वा	५.	सुनकर	सदस्यान्	७.	सदस्यों से
यजमानः	१.	यजमान	तद्	९	याजकों से
सुदुर्मनाः ।	६.	अत्यन्त उदास हुये (और)	अनुज्ञया ॥	१०.	अनुमति लेकर

श्लोकार्थ—यजमान राजा अङ्ग याजकों का वचन सुनकर अत्यन्त उदास हुये और सदस्यों से यह बात पूछने के लिये उन्होंने याजकों से अनुमति लेकर मौन भङ्ग किया ॥

त्रिंशः श्लोकः

नागच्छन्त्याहुता देवा न गृह्णन्ति ग्रहानिह ।
सदसस्पतयो ब्रूत किमवद्यं मया कृतम् ॥३०॥

पदच्छेद—

न आगच्छन्ति आहुताः देवाः न गृह्णन्ति ग्रहान् इह ।
सदसस्पतयः ब्रूत किम् अवद्यम् मया कृतम् ॥

शब्दार्थ—

न	१०.	नहीं	इह ।	७	इस यज्ञ में
आगच्छन्ति	११.	आ रहे हैं (और)	सदसस्पतयः	१.	हे सदस्यो
आहुताः	८.	बुलाने पर भी	ब्रूत	२.	आप लोग बतावें
देवाः	९.	देवगण	किम्	४.	क्या
न	१३.	नहीं	अवद्यम्	५.	अपराध
गृह्णन्ति	१४.	स्वीकार कर रहे हैं	मया	३.	मैंने
ग्रहान्	१२.	सोमरस	कृतम् ॥	६.	किया है (जिससे)

श्लोकार्थ—हे सदस्यो ! आप लोग बतावें मैंने क्या अपराध किया है जिससे इस यज्ञ में बुलाने पर भी देवगण नहीं आ रहे हैं और सोमरस नहीं स्वीकार कर रहे हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

सदसस्पतय ऊचुः—नरदेवेह भवतो नाघं तावन्मनाक् स्थितम् ।
अस्त्येकं प्राक्तनमघं यदिहेदृक् त्वमप्रजः ॥३१॥

पदच्छेद—

नरदेव इह भवतः न अघम् तावत् मनाक् स्थितम् ।
अस्ति एकम् प्राक्तनम् अघम् यद् इह ईदृक् त्वम् अप्रजः ॥

शब्दार्थ—

नरदेव इह	१.	हे राजन् ! इस जन्म में	एकम्	९.	एक
भवतः	३.	आपका	प्राक्तनम्	८.	पूर्व जन्म का
न	६.	नहीं	अघम्	१०.	अपराध
अघम्	५.	अपराध	यद्	१२.	जिससे
तावत्	२	तो	इह	१४.	इस जन्म में
मनाक्	४.	तनिक (भी)	ईदृक्	१५.	ऐसे सर्वगुण सम्पन्न होकर भी
स्थितम् ।	७.	है (किन्तु)	त्वम्	१३.	आप
अस्ति	११.	है	अप्रजः ॥	१६	सन्तानहीन हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस जन्म में तो आपका तनिक भी अपराध नहीं है । किन्तु पूर्वजन्म का एक अपराध है जिससे आप इस जन्म में सन्तानहीन हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

तथा साधय भद्रं ते आत्मानं सुप्रजं नृप ।
इष्टस्ते पुत्रकामस्य पुत्रं दास्यति यज्ञभुक् ॥३२॥

पदच्छेद—

तथा साधय भद्रम् ते आत्मानम् सुप्रजम् नृप ।
इष्टः ते पुत्र कामस्य पुत्रम् दास्यति यज्ञभुक् ॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	इसलिये	इष्टः	८.	यज्ञ करने पर
साधय	७.	उपाय करें	ते	१२.	आपको
भद्रम्	४.	कल्याण हो (आप)	पुत्र	१०.	पुत्र की
ते	३.	आपका	कामस्य	११.	कामना करने वाले
आत्मानम्	५.	अपने लिये	पुत्रम्	१३.	पुत्र
सुप्रजम्	६.	उत्तम सन्तान का	दास्यति	१४.	देंगे
नृप ।	२.	हे राजन्	यज्ञभुक् ॥	९.	देवगण

श्लोकार्थ—इसलिये हे राजन् ! आपका कल्याण हो ! आप अपने लिये उत्तम सन्तान का उपाय करें । यज्ञ करने पर देवगण पुत्र की कामना करने वाले आपको पुत्र देंगे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तथा स्वभागधेयानि ग्रहीष्यन्ति दिवौकसः।
यद्यज्ञपुरुषः साक्षादपत्याय हरिर्वृतः ॥३३॥

पदच्छेद—

तथा स्व भागधेयानि ग्रहीष्यन्ति दिवौकसः।
यत् यज्ञ पुरुषः साक्षात् अपत्याय हरिः वृतः॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	उस समय	यज्ञ	९.	भगवान्
स्व	३.	अपने	पुरुषः	१०.	यज्ञ पुरुष
भागधेयानि	४.	यज्ञ भाग को	साक्षात्	८.	स्वयम्
ग्रहीष्यन्ति	५.	गृहण करेंगे	अपत्याय	७.	पुत्र के लिये
दिवौकसः।	२	देवता लोग	हरिः	११.	श्री हरि का
यद्	६.	क्योंकि	वृतः॥	१२.	वरण किया जायेगा।

श्लोकार्थ—उस समय देवता लोग अपने यज्ञ भाग को ग्रहण करेंगे क्योंकि पुत्र के लिये स्वयम् भगवान् यज्ञ पुरुष श्री हरि का वरण किया जायेगा॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तांस्तान् कामान् हरिर्दद्याद्यान् यान् कामयते जनः।
आराधितो यथैवैष तथा पुंसां फलोदयः॥३४॥

पदच्छेद—

तान्-तान् कामान् हरिः दद्यात् यान्-यान् कामयते जनः।
आराधितः यथा एव एषः तथा पुंसाम् फल उदयः॥

शब्दार्थ—

तान्-तान्	५.	उन-उन	आराधितः	१०.	आराधना की जाती है
कामान्	६.	मनोरथों को	यथा एव	८.	जिस प्रकार से
हरिः	४.	भगवान् श्री हरि	एषः	९	इन भगवान् की
दद्यात्	७.	देते हैं (तथा)	तथा	११.	उसी प्रकार
यान्-यान्	२.	जिन-जिन (मनोरथों को)	पुंसाम्	१२.	मनुष्यों को
कामयते	३.	चाहते हैं	फल	१३.	फल की
जनः।	१.	लोग	उदयः॥	१४.	प्राप्ति होती है

श्लोकार्थ—लोग जिन-जिन मनोरथों को चाहते हैं; भगवान् उन-उन मनोरथों को देते हैं; तथा जिस प्रकार से इन भगवान् की आराधना की जाती है उसी प्रकार मनुष्यों को फल की प्राप्ति होती है॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

इति व्यवसिता विप्रास्तस्य राज्ञः प्रजातये ।
पुरोडाशं निरवपन् शिपिविष्टाय विष्णवे ॥३५॥

पदच्छेद—

इति व्यवसिताः विप्राः तस्य राज्ञः प्रजातये ।
पुरोडाशम् निरवपन् शिपि विष्टाय विष्णवे ॥

शब्दार्थ—

इति	४.	ऐसा	पुरोडाशम्	१०.	चरु का
व्यवसिताः	५.	निश्चय करके	निरवपन्	११.	हवन किया
विप्राः	६.	याजकों ने	शिपि	७.	पशुरूप में
तस्य	१.	उन	विष्टाय	८.	प्रवेश किये हुये
राज्ञः	२.	राजा अङ्ग को	विष्णवे ॥	९.	भगवान् विष्णु के लिये
प्रजातये ।	३.	सन्तान के लिये			

श्लोकार्थ—उन राजा अङ्ग को सन्तान के लिये ऐसा निश्चय करके याजकों ने पशुरूप में प्रवेश किये हुये भगवान् विष्णु के लिये चरु का हवन किया ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

तस्मात्पुरुष उत्तस्थौ हेममाल्यमलाम्बरः ।
हिरण्मयेन पात्रेण सिद्धमादाय पायसम् ॥३६॥

पदच्छेद—

तस्मात् पुरुषः उत्तस्थौ हेममाली अमल अम्बरः ।
हिरण्मयेन पात्रेण सिद्धम् आदाय पायसम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१०.	उस यज्ञ कुण्ड से	हिरण्मयेन	५.	सुवर्ण के
पुरुषः	४.	यज्ञ पुरुष	पात्रेण	६.	पात्र में
उत्तस्थौ	११.	प्रकट हुये	सिद्धम्	७.	सिद्ध हुई
हेममाली	१.	सुवर्ण की माला (और)	आदाय	९.	लेकर
अमल	२.	स्वच्छ	पायसम् ॥	८.	खीर को
अम्बरः ।	३.	वस्त्र पहने हुये			

श्लोकार्थ—सुवर्ण की माला और स्वच्छ वस्त्र पहने हुये यज्ञ पुरुष सुवर्ण के पात्र में सिद्ध हुई खीर लेकर उस यज्ञ कुण्ड से प्रकट हुये ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

स विप्रानुमतो राजा गृहीत्वाञ्जलिनौदनम् ।
अवघ्राय मुदा युक्तः प्रादात्पत्न्या उदारधीः ॥३७॥

पदच्छेद— सः विप्र अनुमतः राजा गृहीत्वा अञ्जलिना ओदनम् ।
अवघ्राय मुदा युक्तः प्रादात् पत्न्यै उदार धीः ॥

शब्दार्थ—

सः	३. वे	अवघ्राय	१०. सूंघकर
विप्र	५. याजकों के	मुदा	११. प्रसन्नता से
अनुमतः	६. आदेश से	युक्तः	१२. युक्त होते हुये (उसे)
राजा	४. राजा अङ्ग	प्रादात्	१४. दे दिये
गृहीत्वा	९. लेकर (और)	पत्न्यै	१३. अपनी पत्नी को
अञ्जलिना	८. हाथ में	उदार	१. उदार
ओदनम् ।	७. सिद्ध खीर को	धीः ॥	२. बुद्धि वाले

श्लोकार्थ—उदार बुद्धि वाले उन राजा अङ्ग ने याजकों के आदेश से सिद्ध खीर को हाथ में लेकर और सूंघकर प्रसन्न होते हुये उसे अपनी पत्नी को दे दिया ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

सा तत्पुंसवनं राज्ञी प्राश्य वै पत्युरादधे ।
गर्भं काल उपावृत्ते कुमारं सुषुवेऽप्रजा ॥३८॥

पदच्छेद— सा तत् पुंसवनम् राज्ञी प्राश्य वै पत्युः आदधे ।
गर्भम् काले उपावृत्ते कुमारम् सुषुवे अप्रजा ॥

शब्दार्थ—

सा	२. उस	आदधे ।	१०. धारण किया (और)
तत्	५. वह खीर	गर्भम्	९. गर्भ को
पुंसवनम्	४. पुत्रदायिनी	काले	११. समय
राज्ञी	३. रानी	उपावृत्ते	१२. आने
प्राश्य	६. खाकर	कुमारम्	१३. पुत्र को
वै	७. तथा	सुषुवे	१४. जन्म दिया
पत्युः	८. पति के संसर्ग से	अप्रजा ॥	१. सन्तान हीन

श्लोकार्थ—सन्तानहीन उस रानी ने पुत्रदायिनी वह खीर खाकर तथा पति के संसर्ग से गर्भ को धारण किया और समय आने पर एक पुत्र को जन्म दिया ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

स बाल एव पुरुषो मातामहमनुव्रतः ।
अधर्मांशोद्भवं मृत्युं तेनाभवदधार्मिकः ॥३९॥

पदच्छेद— सः बालः एव पुरुषः मातामहम् अनुव्रतः ।
अधर्मअंश उद्भवम् मृत्युम् तेन अभवद् अधार्मिकः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	अधर्मअंश	५.	अधर्म के अंश से
बालः	३.	बाल्यावस्था से	उद्भवम्	६.	उत्पन्न (अपने)
एव	४.	ही	मृत्युम्	८.	मृत्यु का
पुरुषः	२.	बालक	तेन	१०.	उससे वह
मातामहम्	७.	नाना	अभवद्	१२.	हुआ
अनुव्रतः ।	९.	अनुगामी था	अधार्मिकः ॥	११.	अधार्मिक

श्लोकार्थ—वह बालक बाल्यावस्था से ही अधर्म के अंश से उत्पन्न अपने नाना मृत्यु का अनुगामी था; उससे वह अधार्मिक हुआ ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

स शरासनमुद्यम्य मृगयुर्वनगोचरः ।
हन्त्यसाधुर्मृगान् दीनान् वेनोऽसावित्यरौज्जनः ॥४०॥

पदच्छेद—

सः शरासनम् उद्यम्य मृगयुः वन गोचरः ।
हन्ति असाधुः मृगान् दीनान् वेनः असौ इति अरौत् जनः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	असाधुः	२.	दुष्ट
शरासनम्	३.	धनुष पर बाण	मृगान्	९.	मृगों का
उद्यम्य	४.	चढ़ाकर	दीनान्	८.	बेचारे
मृगयुः	५.	शिकारी के समान	वेनः	१३.	वेन आया
वन	६.	वन में	असौ	१२.	वह
गोचरः ।	७.	घूमता हुआ	इति	१४.	इस प्रकार
हन्ति	१०.	शिकार करता था (उसे देखकर)	अरौत्	१५.	पुकारते थे
			जनः ॥	११.	लोग

श्लोकार्थ—वह दुष्ट धनुष पर बाण चढ़ाकर शिकारी के समान वन में घूमता हुआ बेचारे मृगों का शिकार करता था। उसे देखकर लोग वह वेन आया इस प्रकार पुकारते थे ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

आक्रीडे क्रीडतो बालान् वयस्यानतिदारुणः ।
प्रसह्य निरनुक्रोशः पशुमारममारयत् ॥४१॥

पदच्छेद—

आक्रीडे क्रीडतः बालान् वयस्यान् अति दारुणः ।
प्रसह्य निरनुक्रोशः पशुमारम् अमारयत् ॥

शब्दार्थ—

आक्रीडे	३.	मैदान में	दारुणः ।	२.	निर्दयी (और)
क्रीडतः	४.	खेलते हुये	प्रसह्य	७.	बलात्कार से
बालान्	६.	बालकों को	निरनुक्रोशः	८.	क्रूर वह
वयस्यान्	५.	बराबरी के	पशुमारम्	९.	पशुओं की तरह जाने से
अति	१.	अत्यन्त	अमारयत् ॥	१०.	मारता था

श्लोकार्थ—अत्यन्त निर्दयी और मैदान में खेलते हुये बराबरी के बालकों को बलात्कार से क्रूर वह पशुओं की तरह जान से मारता था ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

तं विचक्ष्य खलं पुत्रं शासनैर्विविधैर्नृपः ।
यदा न शासितुं कल्पो भृशमासीत्सुदुर्मनाः ॥४२॥

पदच्छेद—

तम् विचक्ष्य खलम् पुत्रम् शासनैः विविधैः नृपः ।
यदा न शासितुम् कल्पः भृशम् आसीत् सुदुर्मनाः ॥

शब्दार्थ—

तम्	६.	उसे	यदा	५.	जब
विचक्ष्य	४.	समझकर	न	१०.	नहीं
खलम्	३.	दुष्ट	शासितुम्	९.	सुधारने में
पुत्रम्	२.	अपने पुत्र को	कल्पः	११.	समर्थ हो सके (तब)
शासनैः	८.	उपायों से	भृशम्	१२.	अत्यन्त
विविधैः	७.	अनेक	आसीत्	१४.	हुये
नृपः ।	१.	राजा अङ्ग	सुदुर्मनाः ॥	१३.	दुःखी

श्लोकार्थ—राजा अङ्ग अपने पुत्र को दुष्ट समझकर जब उसे अनेक उपायों से सुधारने में समर्थ नहीं हो सके तब अत्यन्त दुःखी हुये ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

प्रायेणाभ्यर्चितो देवो येऽप्रजा गृहमेधिनः ।
कदपत्यभृतं दुःखं ये न विन्दन्ति दुर्भरम् ॥४३॥

पदच्छेद—

प्रायेण अभ्यर्चितः देवः ये अप्रजाः गृहमेधिनः ।
कदपत्य भृतम् दुःखम् ये न विन्दन्ति दुर्भरम् ॥

शब्दार्थ—

प्रायेण	४.	अवश्य ही	कदपत्य	८.	दुष्ट सन्तान से
अभ्यर्चितः	६.	आराधना की है	भृतम्	९.	उत्पन्न हुये
देवः	५.	भगवान् श्री हरि की	दुःखम्	११.	दुःख को
ये	१.	जो	ये	७.	(क्योंकि) वे लोग
अप्रजाः	३.	सन्तान रहित हैं (उन्होंने)	न विन्दन्ति	१२.	नहीं पाते हैं
गृहमेधिनः ।	२	गृहस्थ	दुर्भरम् ॥	१०.	असहनीय

श्लोकार्थ—जो गृहस्थ सन्तान रहित हैं उन्होंने अवश्य ही भगवान् श्री हरि की आराधना की है; क्योंकि वे लोग दुष्ट सन्तान से उत्पन्न हुये असहनीय दुःख को नहीं पाते हैं ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

यतः पापीयसी कीर्तिरधर्मश्च महान्नृणाम् ।
यतो विरोधः सर्वेषां यत आधिरनन्तकः ॥४४॥

पदच्छेद—

यतः पापीयसी कीर्तिः अधर्मः च महान् नृणाम् ।
यतः विरोधः सर्वेषाम् यतः आधिः अनन्तकः ॥

शब्दार्थ—

यतः	१.	जिससे	यतः	८.	जिसके कारण
पापीयसी	४.	समाप्त हो जाता है	विरोधः	१०.	वैर
कीर्तिः	३.	यश	सर्वेषाम्	९.	सबसे
अधर्मः	७.	अधर्म (होता है)	यतः	११.	तथा
च	५.	और	आधिः	१३.	मानसिक ताप (होता है)
महान्	६.	बहुत बड़ा	अनन्तकः ॥	१२.	अनन्तकाल तक
नृणाम् ।	२.	मनुष्यों का			

श्लोकार्थ—जिससे मनुष्यों का यश समाप्त हो जाता है और बहुत बड़ा अधर्म होता है। जिसके कारण सबसे वैर तथा अनन्तकाल तक मानसिक ताप होता है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

कस्तं प्रजापदेशं वै मोहबन्धनमात्मनः ।
पण्डितो बहु मन्येत यदर्थाः क्लेशदा गृहाः ॥४५॥

पदच्छेद—

कः तम् प्रजा अपदेशम् वै मोह बन्धनम् आत्मनः ।
पण्डितः बहु मन्येत यदर्थाः क्लेशदाः गृहाः ॥

शब्दार्थ—

कः	१. कौन		आत्मनः ।	९. आत्मा का
तम्	३. उस		पण्डितः	२ विद्वान्
प्रजा	५. सन्तान को		बहु	६. बहुत
अपदेशम्	४. नाम मात्र की		मन्येत	७. आदर देगा
वै	८. जो		यदर्थाः	१२. जिसके कारण
मोह	१०. मोहमय		क्लेशदाः	१४. दुःखदायी (हो जाता है)
बन्धनम्	११. बन्धन है (और)		गृहाः ॥	१३. घर

श्लोकार्थ—कौन विद्वान् उस नाम मात्र की सन्तान को बहुत आदर देगा; जो आत्मा का मोहमय बन्धन है और जिसके कारण घर दुःखदायी हो जाता है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

कदपत्यं वरं मन्ये सदपत्याच्छुचां पदात् ।
निर्विद्येत गृहान्मर्त्यो यत्क्लेशनिवहा गृहाः ॥४६॥

पदच्छेद—

कदपत्यम् वरम् मन्ये सद् अपत्यात् शुचाम् पदात् ।
निर्विद्येत गृहात् मर्त्यः यत् क्लेश निवहाः गृहाः ॥

शब्दार्थ—

कदपत्यम्	३. दुष्ट सन्तान को		निर्विद्येत	१४. वैराग्य हो जाता है
वरम्	४. अच्छा		गृहात्	१२. घर से
मन्ये	५. समझता हूँ		मर्त्यः	१३. मनुष्य को
सद्	१. (मैं) उत्तम		यत्	६. जिससे
अपत्यात्	२. सन्तान से		क्लेश	८. दुःखों का
शुचाम्	१०. (और) शोक के		निवहाः	९. भण्डार बन जाता है
पदात् ।	११. स्थान (उस)		गृहाः ॥	७. घर

श्लोकार्थ—मैं उत्तम सन्तान से दुष्ट सन्तान को अच्छा समझता हूँ; जिससे घर दुःखों का भण्डार बन जाता है और शोक स्थान उस घर से मनुष्य को वैराग्य हो जाता है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

एवं स निर्विण्णमना नृपो गृहान्निशीथ उत्थाय महोदयोदयात् ।
अलब्धनिद्रोऽनुपलक्षितो नृभिर्हित्वा गतो वेनसुवं प्रसुप्ताम् ॥४७॥

पदच्छेद— एवम् सः निर्विण्णमनाः नृपः गृहात् निशीथे उत्थाय महोदय उदयात् ।
अलब्ध निद्रः अनुपलक्षितः नृभिः हित्वा गतः वेन सुवम् प्रसुप्ताम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	अलब्ध	६.	नहीं आई
सः	२.	वे	निद्रः	५.	(उन्हें रात में) नींद
निर्विण्णमनाः	४.	मन से दुःखी हो गये	अनुपलक्षितः	१८.	नहीं देखा
नृपः	३.	राजा अङ्ग	नृभिः	१७.	लोगों ने (उन्हें)
गृहात्	१५.	घर से	हित्वा	१४.	छोड़कर
निशीथे	९.	रात्रि में	गतः	१६.	चले गये
उत्थाय	१०.	उठे (और)	वेन	१२.	वेन की
महोदय	७.	भाग्य का	सुवम्	१३.	माता सुनीथा को
उदयात् ।	८.	उदय होने से (वे)	प्रसुप्ताम् ॥	११.	सोई हुई

श्लोकार्थ— इस प्रकार वे राजा अङ्ग मन से दुःखी हो गये, उन्हें रात में नींद नहीं आई । भाग्य का उदय होने से वे रात्रि में उठे और सोई हुई वेन की माता सुनीथा को छोड़कर घर से चले गये । लोगों ने उन्हें नहीं देखा ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

विज्ञाय निर्विद्य गतं पतिं प्रजाः पुरोहितामात्यसुहृद्गणादयः ।
विचिक्युरुर्व्यामतिशोककातरा यथा निगूढं पुरुषं कुयोगिनः ॥४८॥

पदच्छेद— विज्ञाय निर्विद्य गतम् पतिम् प्रजाः पुरोहित अमात्य सुहृद्गण आदयः ।
विचिक्युः उर्व्याम् अति शोक कातराः यथा निगूढम् पुरुषम् कुयोगिनः ॥

शब्दार्थ—

विज्ञाय	४.	जानकर	विचिक्युः	१४.	ढूंढने लगे
निर्विद्य	२.	दुःख के कारण	उर्व्याम्	१३.	पृथ्वी पर (ऐसे)
गतम्	३.	घर से गया हुआ	अति	१०.	अत्यन्त
पतिम्	१.	अपने स्वामी को	शोक	११.	शोक से
प्रजाः	९.	लोग	कातराः	१२.	दुःखी होकर
पुरोहित	५.	पुरोहित	यथा	१५.	जैसे
अमात्य	६.	मन्त्री	निगूढम्	१७.	आत्मा में स्थित
सुहृद्गण	७.	मित्रगण	पुरुषम्	१८.	परमात्मा को (बाहर ढूंढ़ते हैं)
आदयः ।	८.	इत्यादि	कुयोगिनः ॥	१६.	योग के रहस्य को न जानने वाले

श्लोकार्थ—अपने स्वामी को घर से गया हुआ जानकर पुरोहित, मंत्री, मित्रगण इत्यादि लोग अत्यन्त शोक से दुःखी होकर पृथ्वी पर ऐसे ढूंढ़ने लगे जैसे योग के रहस्य को न जानने वाले आत्मा में स्थित परमात्मा को (बाहर ढूंढ़ते हैं) ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

अलक्षयन्तः पदवीं प्रजापतेर्हतोद्यमाः प्रत्युपसृत्य ते पुरीम् ।
ऋषीन् समेतानभिवन्द्य साश्रवो न्यवेदयन् पौरव भर्तृविप्लवम् ॥४९॥

पदच्छेद—

अलक्षयन्तः पदवीम् प्रजापतेः हतउद्यमाः प्रत्युपसृत्य ते पुरीम् ।
ऋषीन् समेतान् अभिवन्द्य साश्रवः न्यवेदयन् पौरव भर्तृ विप्लवम् ॥

शब्दार्थ—

अलक्षयन्तः	५.	नहीं लगा सके (और)	ऋषीन्	१०.	मुनियों को
पदवीम्	४.	पता	समेतान्	९.	वहाँ एकत्रित हुये
प्रजापतेः	३.	अपने स्वामी का	अभिवन्द्य	११.	प्रणाम करके (और)
हतउद्यमाः	६.	निराश होकर	साश्रवः	१२.	आँसू भरके (उनसे)
प्रत्युपसृत्य	८.	लौट आये (उन्होंने)	न्यवेदयन्	१५.	निवेदन किया
ते	२.	वे लोग	पौरव	१०.	हे विदुर जी
पुरीम् ।	७.	नगर को	भर्तृ	१३.	अपने स्वामी के
			विप्लवम् ॥	१४.	खो जाने का

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! वे लोग अपने स्वामी का पता नहीं लगा सके और निराश होकर नगर को लौट आये । उन्होंने वहाँ एकत्रित हुये मुनियों को प्रणाम करके और आँसू भरकर उनसे अपने स्वामी के खो जाने का निवेदन किया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

चतुर्दशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—भृग्वादयस्ते मुनयो लोकानां क्षेमदर्शिनः ।
गोप्तर्यसति वै नृणां पश्यन्तः पशुसाम्यताम् ॥१॥

पदच्छेद— भृगु आदयः ते मुनयः लोकानाम् क्षेम दर्शिनः ।
गोप्तरि असति वै नृणाम् पश्यन्तः पशु साम्यताम् ॥

शब्दार्थ—

भृगु	४.	भृगु	गोप्तरि	७.	राजा के
आदयः	५.	इत्यादि	असति वै	८.	नहीं रहने पर
ते	३.	उन	नृणाम्	९.	लोगों की
मुनयः	६.	मुनिगणों ने	पश्यन्तः	१२.	देखी
लोकानाम्	१.	लोकों का	पशु	१०.	पशुओं के समान
क्षेम दर्शिनः ।	२.	कल्याण चाहने वाले	साम्यताम् ॥	११.	उद्दण्डता

श्लोकार्थ—लोकों का कल्याण चाहने वाले उन भृगु इत्यादि मुनिगणों ने राजा के नहीं रहने पर लोगों की पशुओं के समान उद्दण्डता देखी ॥

द्वितीयः श्लोकः

वीर मातरमाहूय सुनीथां ब्रह्मवादिनः ।
प्रकृत्यसम्मतं वेनमभ्यषिञ्चन् पतिं भुवः ॥२॥

पदच्छेद— वीर मातरम् आहूय सुनीथाम् ब्रह्मवादिनः ।
प्रकृति असम्मतम् वेनम् अभ्यषिञ्चन् पतिम् भुवः ॥

शब्दार्थ—

वीर	१.	हे विदुर जी	प्रकृति	६.	मन्त्रियों की
मातरम्	३.	माता	असम्मतम्	७.	सम्मति न होने पर भी
आहूय	५.	सम्मति से	वेनम्	८.	वेन का
सुनीथाम्	४.	सुनीथा की	अभ्यषिञ्चन्	११.	अभिषेक किया
ब्रह्मवादिनः ।	२.	ऋषियों ने	पतिम्	१०.	राजा के रूप में
			भुवः ॥	९.	पृथ्वी के

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! ऋषियों ने माता सुनीथा की सम्मति से मन्त्रियों की सम्मति न होने पर भी वेन का पृथ्वी के राजा के रूप में अभिषेक किया ॥

तृतीयः श्लोकः

श्रुत्वा नृपासनगतं वेनमत्युग्रशासनम् ।
निलिल्युर्दस्यवः सद्यः सर्पत्रस्ता इवाखवः ॥३॥

पदच्छेद—

श्रुत्वा नृपासन गतम् वेनम् अत्युग्र शासनम् ।
निलिल्युः दस्यवः सद्यः सर्पत्रस्ताः इव आखवः ॥

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	६.	सुनकर	निलिल्युः	१२.	छिप गये
नृपासन	४.	राज सिंहासन पर	दस्यवः	७.	लुटेरे
गतम्	५.	बैठा	सद्यः	११.	तत्काल
वेनम्	३.	वेन को	सर्पत्रस्ताः	८.	सांप से डरे हुये
अत्युग्र	१.	अत्यन्त कठोर	इव	१०.	समान
शासनम् ।	२.	दण्ड देने वाले	आखवः ॥	९.	चूहों के

श्लोकार्थ—अत्यन्त कठोर दण्ड देने वाले वेन को राज सिंहासन पर बैठा सुनकर लुटेरे सांप से डरे हुये चूहों के समान तत्काल छिप गये ॥

चतुर्थः श्लोकः

स आरूढनृपस्थान उन्नद्धोऽष्टविभूतिभिः ।
अवमेने महाभागान् स्तब्धः सम्भावितः स्वतः ॥४॥

पदच्छेद—

सः आरूढ नृपस्थानः उन्नद्धः अष्ट विभूतिभिः ।
अवमेने महा भागान् स्तब्धः सम्भावितः स्वतः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह (वेन)	अवमेने	१२.	अपमान करने लगा
आरूढ	३.	बैठ कर	महा	१०.	महान्
नृपस्थानः	२.	राज सिंहासन पर	भागान्	११	लोगों का
उन्नद्धः	६.	अभिमानी हो गया (और)	स्तब्धः	७.	गर्व से
अष्ट	४.	आठों (लोकपालों की)	सम्भावितः	९.	बड़ा मानता हुआ
विभूतिभिः ।	५.	सम्पत्तियों से	स्वतः ॥	८.	अपने को

श्लोकार्थ—वह वेन राज सिंहासन पर बैठकर आठों लोकपालों की सम्पत्तियों से अभिमानी हो गया और गर्व से अपने को बड़ा मानता हुआ महान् लोगों का अपमान करने लगा ॥

पञ्चमः श्लोकः

एवं मदान्ध उत्सिक्तो निरङ्कुश इव द्विपः ।
पर्यटन् रथमास्थाय कम्पयन्निव रोदसी ॥५॥

पदच्छेद—

एवम् मद अन्धः उत्सिक्तः निरङ्कुशः इव द्विपः ।
पर्यटन् रथम् आस्थाय कम्पयन् इव रोदसी ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार (वह)	पर्यटन्	१२.	घूमने लगा
मद अन्धः	३.	घमण्ड से अन्धा होकर (और)	रथम्	४.	रथ पर
उत्सिक्तः	२.	अभिमानी	आस्थाय	५.	बैठ कर
निरङ्कुशः	६.	निरङ्कुश	कम्पयन्	१०.	कँपाता हुआ
इव	८	समान	इव	११.	सा
द्विपः ।	७.	हाथी के	रोदसी ॥	९.	पृथ्वी और आकाश को

श्लोकार्थ—इस प्रकार वह अभिमानी घमण्ड से अन्धा होकर और रथ पर बैठकर निरङ्कुश हाथी के समान पृथ्वी और आकाश को कँपाता हुआ-सा घूमने लगा ॥

षष्ठः श्लोकः

न यष्टव्यं न दातव्यं न होतव्यं द्विजाः क्वचित् ।
इति न्यवारयद्धर्मं भेरीघोषेण सर्वशः ॥६॥

पदच्छेद—

न यष्टव्यम् न दातव्यम् न होतव्यम् द्विजाः क्वचित् ।
इति न्यवारयत् धर्मम् भेरी घोषेण सर्वशः ॥

शब्दार्थ—

न यष्टव्यम्	३.	नहीं यज्ञ करें	इति	७.	इस प्रकार
न दातव्यम्	४.	न दान देवें (और)	न्यवारयत्	१२.	रोक लगा दी
न	५.	नहीं	धर्मम्	११.	धर्म पर
होतव्यम्	६.	हवन करें	भेरी	९.	ढिंढोरा
द्विजाः	१.	द्विजाति लोग	घोषेण	१०.	पिटवा कर (उसने)
क्वचित् ।	२.	कहीं पर भी	सर्वशः ॥	८.	चारों ओर

श्लोकार्थ—द्विजाति लोग कहीं पर भी यज्ञ नहीं करें, न दान देवें और हवन नहीं करें; इस प्रकार चारों ओर ढिंढोरा पटवा कर उसने धर्म पर रोक लगा दी ॥

सप्तमः श्लोकः

वेनस्यावेक्ष्य मुनयो दुर्वृत्तस्य विचेष्टितम् ।
विमृश्य लोकव्यसनं कृपयोचुः स्म सत्रिणः ॥७॥

पदच्छेद—

वेनस्य अवेक्ष्य मुनयः दुर्वृत्तस्य विचेष्टितम् ।
विमृश्य लोकव्यसनम् कृपया ऊचुः स्म सत्रिणः ॥

शब्दार्थ—

वेनस्य	२. वेन के		विमृश्य	६. विचार कर
अवेक्ष्य	४. देखकर (और)		लोकव्यसनम्	५ लोगों के दुःख पर
मुनयः	८. ऋषियों ने		कृपया	९. कृपा पूर्वक
दुर्वृत्तस्य	१. दुष्ट		ऊचुः स्म	१०. कहा
विचेष्टितम् ।	३. दुश्चरित्र को		सत्रिणः ॥	७. यज्ञ करने वाले

श्लोकार्थ—दुष्ट वेन के दुश्चरित्र को देखकर और लोगों के दुःख पर विचार कर यज्ञ करने वाले ऋषियों ने कृपा पूर्वक कहा ॥

अष्टमः श्लोकः

अहो उभयतः प्राप्तं लोकस्य व्यसनं महत् ।
दारुण्युभयतो दीप्ते इव तस्करपालयोः ॥८॥

पदच्छेद—

अहो उभयतः प्राप्तम् लोकस्य व्यसनम् महत् ।
दारुणि उभयतः दीप्ते इव तस्कर पालयोः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१. आश्चर्य है कि		दारुणि	४. लकड़ी के
उभयतः	८. दोनों ओर से		उभयतः	२. दोनों ओर से
प्राप्तम्	१२ आ गया है		दीप्ते	३. जलती
लोकस्य	९. प्रजा में		इव	५. समान
व्यसनम्	११. संकट		तस्कर	६. चारों ओर
महत् ।	१० महान्		पालयोः ॥	७. रक्षक राजा

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि दोनों ओर से जलती लकड़ी के समान चारों ओर रक्षक राजा दोनों ओर से प्रजा में महान् संकट आ गया है ॥

नवमः श्लोकः

अराजकभयादेष कृतो राजातदर्हणः।
ततोऽप्यासीद्भयं त्वद्य कथं स्यात्स्वस्ति देहिनाम् ॥९॥

पदच्छेद— अराजक भयात् एषः कृतः राजा अतदर्हणः।
ततः अपि आसीत् भयम् तु अद्य कथम् स्यात् स्वस्ति देहिनाम् ॥

शब्दार्थ—

अराजक	१.	हमने अत्याचार के	आसीत्	१०.	हो गया है
भयात्	२.	भय से	भयम्	९.	(प्रजा को) भय
एषः	४.	इस वेन को	तु अद्य	७.	किन्तु अब
कृतः	६.	बनाया था	कथम्	१२	किस प्रकार
राजा	५.	राजा	स्यात्	१४.	मिल सकती है
अतदर्हणः।	३.	योग्य न होने पर भी	स्वस्ति	१३.	सुख-शान्ति
ततः अपि	८.	उससे भी	देहिनाम्	११.	अतः प्रजा को

श्लोकार्थ—हमने अत्याचार के भय से योग्य न होने पर भी इस वेन को राजा बनाया था। किन्तु अब उससे भी प्रजा को भय हो गया है। अतः प्रजा को किस प्रकार सुख शान्ति मिल सकती है॥

दशमः श्लोकः

अहेरिव पयःपोषः पोषकस्याप्यनर्थभृत्।
वेनः प्रकृत्यैव खलः सुनीथागर्भसम्भवः ॥१०॥

पदच्छेद— अहेः इव पयःपोषः पोषकस्य अपि अनर्थ भृत्।
वेनः प्रकृत्या एव खलः सुनीथा गर्भ सम्भवः॥

शब्दार्थ—

अहेः	८.	सांप को	वेन	४.	(यह) वेन
इव	१०.	समान (इसको पालना)	प्रकृत्या	५.	स्वभाव से
पयः पोषः	९.	दूध पिलाने के	एव	६.	ही
पोषकस्य	११.	पालने वालों के लिये	खलः	७.	दुष्ट है
अपि	१२	भी	सुनीथा	१.	सुनीथा की
अनर्थ	१३.	अनर्थ का	गर्भ	२.	कोख से
भृत्।	१४.	कारण हो गया है	सम्भवः॥	३.	उत्पन्न

श्लोकार्थ—सुनीथा की कोख से उत्पन्न यह वेन स्वभाव से ही दुष्ट है। सांप को दूध पिलाने के समान इसको पालना पालने वालों के लिये भी अनर्थ का कारण हो गया है॥

एकादशः श्लोकः

निरूपितः प्रजापालः स जिघांसति वै प्रजाः ।
तथापि सान्त्वयेमामुं नास्मांस्तत्पातकं स्पृशेत् ॥११॥

पदच्छेद— निरूपितः प्रजा पालः सः जिघांसति वै प्रजाः ।
तथापि सान्त्वयेम अमुम् न अस्मान् तत् पातकम् स्पृशेत् ॥

शब्दार्थ—

निरूपितः	३.	नियुक्त किया था	तथापि	८.	फिर भी (हमें)
प्रजा	१.	(हमने इसे) प्रजा की	सान्त्वयेम	१०.	समझाना चाहिये
पालः	२.	रक्षा के लिये	अमुम्	९.	इसे
सः	५.	वह (आज)	न	१३.	नहीं
जिघांसति	७	नष्ट करना चाहता है	अस्मान्	११.	ऐसा करने से हमें
वै	४.	किन्तु	तत् पातकम्	१२.	इसके किये गये पाप
प्रजाः ।	६.	प्रजा को ही	स्पृशेत्	१४.	स्पर्श करेंगे

श्लोकार्थ—हमने इसे प्रजा की रक्षा के लिये नियुक्त किया था; किन्तु वह आज प्रजा को ही नष्ट करना चाहता है। फिर भी हमें इसे समझाना चाहिये। ऐसा करने से हमें इसके किये गये पाप स्पर्श नहीं करेंगे ॥

द्वादशः श्लोकः

तद्विद्वद्भिरसद्वृत्तो वेनोऽस्माभिः कृतो नृपः ।
सान्त्वितो यदि नो वाचं न ग्रहीष्यत्यधर्मकृत् ॥१२॥

पदच्छेद— तद् विद्वद्भिः असद्वृत्तः वेनः अस्माभिः कृतः नृपः ।
सान्त्वितः यदि नः वाचम् न ग्रहीष्यति अधर्मकृत् ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	इसलिये	सान्त्वितः	१०.	समझाने पर भी
विद्वद्भिः	३.	जान बूझ कर	यदि	९.	किन्तु
असद्वृत्तः	४.	दुराचारी (और)	नः	११.	(यह) हमारी
वेनः	६.	वेन को	वाचम्	१२.	बात
अस्माभिः	२.	हमने	न	१३.	नहीं
कृतः	८.	बनाया था	ग्रहीष्यति	१४.	मानेगा
नृपः ।	७.	राजा	अधर्मकृत् ॥	५.	अधार्मिक

श्लोकार्थ—इसलिये हमने जान बूझकर दुराचारी और अधार्मिक वेन को राजा बनाया था। किन्तु समझाने पर भी यह हमारी बात नहीं मानेगा ॥

त्रयोदशः श्लोकः

लोकधिक्कारसन्दग्धं दहिष्यामः स्वतेजसा ।
एवमध्यवसायैनं मुनयो गूढमन्यवः ।
उपव्रज्याब्रुवन् वेनं सान्त्वयित्वा च सामभिः ।।१३।।

पदच्छेद— लोक धिक्कार सन्दग्धम् दहिष्यामः स्व तेजसा ।
एवम् अध्यवसाय एनम् मुनयः गूढ मन्यवः ।
उपव्रज्य अब्रुवन् वेनम् सान्त्वयित्वा च सामभिः ।।

शब्दार्थ—

लोक	१.	प्रजा के	मुनयः	६.	मुनि लोग
धिक्कार	२.	धिक्कार से	गूढ	१३.	छिपा कर
सन्दग्धम्	३.	जले हुये	मन्यवः ।	१२.	अपने क्रोध को
दहिष्यामः	६.	भस्म कर देंगे	उपव्रज्य	११.	गये (और)
स्वतेजसा ।	५.	अपने तेज से	अब्रुवन्	१६.	कहने लगे
एवम्	७.	ऐसा	वेनम्	१०.	वेन के पास
अध्यवसाय	८.	विचार करके	सान्त्वयित्वा	१५.	समझाते हुये
एनम्	४	इस दुष्ट को (हम)	च, सामभिः ।।	१४.	उसे (प्रिय वचनों से)

श्लोकार्थ—प्रजा के धिक्कार से जले हुये इस दुष्ट को हम अपने तेज से भस्म कर देंगे । ऐसा विचार कर मुनि लोग वेन के पास गये और अपने क्रोध को छिपाकर उसे प्रिय वचनों से समझाते हुये कहने लगे ।।

चतुर्दशः श्लोकः

मुनय ऊचुः— नृपवर्य निबोधैतद्यत्ते विज्ञापयाम भोः ।
आयुःश्रीबलकीर्तीनां तव तात विवर्धनम् ।।१४।।

पदच्छेद— नृपवर्य निबोध एतद् यत् ते विज्ञापयाम भोः ।
आयुः श्री बल कीर्तीनाम् तव तातविवर्धनम् ।।

शब्दार्थ—

नृपवर्य	२.	राजन्	आयुः	१०.	आयु
निबोध	७.	ध्यान दें	श्री	११.	सम्पत्ति
एतद्	६.	उस पर	बल	१२.	बल (और)
यत्	४.	जो बात	कीर्तीनाम्	१३.	कीर्ति की
ते	३.	(हम) आप से	तव	९	(इससे) आपकी
विज्ञापयाम	५.	कहते हैं	तात	८.	हे तात
भोः ।	१.	हे	विवर्धनम् ।।	१४.	वृद्धि होगी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! हम आपसे जो बात कहते हैं; उस पर ध्यान दें । हे तात ! इससे आपकी आयु, सम्पत्ति, बल और कीर्ति की वृद्धि होगी ।।

पञ्चदशः श्लोकः

धर्म आचरितः पुंसां वाङ्मनःकायबुद्धिभिः ।
लोकान् विशोकान् वितरत्यथानन्त्यमसङ्गिनाम् ॥१५॥

पदच्छेद—

धर्मः आचरितः पुंसाम् वाक्मनः काय बुद्धिभिः ।
लोकान् विशोकान् वितरति अथ आनन्त्यम् असङ्गिनाम् ॥

शब्दार्थ—

धर्मः	५.	धर्म	लोकान्	८.	स्वर्गादि लोकों की
आचरितः	४.	किया गया	विशोकान्	७.	शोक रहित
पुंसाम्	६.	मनुष्यों को	वितरति	१२.	प्राप्ति कराता है
वाक्	२.	वाणी	अथ	९.	तथा
मनः	१.	मन	आनन्त्यम्	११.	मोक्ष पद की
काय बुद्धिभिः ।	३.	शरीर और बुद्धि से	सङ्गिनाम् ॥	१०.	निष्काम मनुष्यों की

श्लोकार्थ—मन, वाणी, शरीर और बुद्धि से किया गया धर्म मनुष्यों को शोकरहित स्वर्गादिलोकों की तथा निष्काम मनुष्यों को मोक्ष पद की प्राप्ति कराता है ॥

षोडशः श्लोकः

स ते मा विनशेद्वीर प्रजानां क्षेमलक्षणः ।
यस्मिन् विनष्टे नृपतिरैश्वर्यादवरोहति ॥१६॥

पदच्छेद—

सः ते मा विनशेत् वीर प्रजानाम् क्षेम लक्षणः ।
यस्मिन् विनष्टे नृपतिः ऐश्वर्यात् अवरोहति ॥

शब्दार्थ—

सः	५.	वह धर्म	लक्षणः ।	४.	रूप
ते	६.	आपके कारण	यस्मिन्	९.	जिस धर्म के
मा	७.	नहीं	विनष्टे	१०.	नष्ट होने पर
विनशेत्	८.	नष्ट होना चाहिये	नृपतिः	११.	राजा
वीर	१.	हे वीर वर	ऐश्वर्यात्	१२.	अपने एश्वर्य से
प्रजानाम्	२.	प्रजाओं का	अवरोहति ॥	१३.	हीन हो जाता है
क्षेम	३.	कल्याण			

श्लोकार्थ—हे वीरवर ! प्रजाओं का कल्याण रूप वह धर्म आपके कारण नष्ट नहीं होना चाहिये । जिस धर्म के नष्ट होने पर राजा अपने एश्वर्य से हीन हो जाता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

राजन्नसाध्वमात्येभ्यश्चोरादिभ्यः प्रजा नृपः ।
रक्षन् यथा बलिं गृह्णन्निह प्रेत्य च मोदते ॥१७॥

पदच्छेद— राजन् असाधु अमात्येभ्यः चोर आदिभ्यः प्रजाः नृपः ।
रक्षन् यथा बलिम् गृह्णन् इह प्रेत्य च मोदते ॥

शब्दार्थ—

राजन्	१.	हे राजन्	रक्षन्	८.	रक्षा करते हुये
असाधु	३.	दुष्ट	यथा	९.	न्यायानुकूल
अमात्येभ्यः	४.	मन्त्री और	बलिम् गृह्णन्	१०.	राज कर लेता है वह
चोर	५.	चोर	इह	११.	इस लोक में
आदिभ्यः	६.	आदि से	प्रेत्य	१३.	परलोक में
प्रजाः	७.	अपनी प्रजा की	च	१२.	और
नृपः ।	२.	(जो) राजा	मोदते ॥	१४.	सुख पाता है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जो राजा दुष्ट मन्त्री और चोर आदि से अपनी प्रजा की रक्षा करते हुये न्यायानुकूल राज-कर लेता है वह इस लोक में और परलोक में सुख पाता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

यस्य राष्ट्रे पुरे चैव भगवान् यज्ञपूरुषः ।
इज्यते स्वेन धर्मेण जनैर्वर्णाश्रमान्वितैः ॥१८॥

पदच्छेद—

यस्य राष्ट्रे पुरे च एव भगवान् यज्ञपूरुषः ।
इज्यते स्वेन धर्मेण जनैः वर्ण आश्रम अन्वितैः ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जिस राजा के	इज्यते	१४.	आराधना करते हैं
राष्ट्रे	२.	राज्य में	स्वेन	९.	अपने
पुरे	४.	नगर में	धर्मेण	१०.	धर्म पालन के द्वारा
च	३.	और	जनैः	८.	लोग
एव	१३.	ही	वर्ण	५.	वर्ण और
भगवान्	१२.	भगवान् विष्णु की	आश्रम	६.	आश्रम के धर्मों का
यज्ञ पूरुषः ।	११.	यज्ञ पुरुष	अन्वितैः ॥	७.	पालन करने वाले

श्लोकार्थ—जिस राजा के राज्य में और नगर में वर्ण और आश्रम के धर्मों का पालन करने वाले लोग अपने धर्म पालन के द्वारा यज्ञपुरुष भगवान् विष्णु की ही आराधना करते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तस्य राज्ञो महाभाग भगवान् भूतभावनः ।
परितुष्यति विश्वात्मा तिष्ठतो निजशासने ॥१९॥

पदच्छेद—

तस्य राज्ञः महाभाग भगवान् भूत भावनः ।
परितुष्यति विश्व आत्मा तिष्ठतः निज शासने ॥

शब्दार्थ—

तस्य	५.	उस	परितुष्यति	१२.	प्रसन्न रहते हैं
राज्ञः	६.	राजा से	विश्व	७.	विश्व की
महाभाग	१.	बड़भागी हे विदुर जी	आत्मा	८.	आत्मा (और)
भगवान्	११.	भगवान् श्री हरि	तिष्ठतः	४.	पालन करने वाले
भूत	९.	सम्पूर्ण प्राणियों के	निज	२.	अपनी
भावनः ।	१०.	रक्षक	शासने ॥	३.	आज्ञा का

श्लोकार्थ—बड़भागी हे विदुर जी ! अपनी आज्ञा का पालन करने वाले उस राजा से विश्व की आत्मा और सम्पूर्ण प्राणियों के रक्षक भगवान् श्री हरि प्रसन्न रहते हैं ॥

विंशः श्लोकः

तस्मिंस्तुष्टे किमप्राप्यं जगतामीश्वरेश्वरे ।
लोकाः सपाला ह्येतस्मै हरन्ति बलिमादृताः ॥२०॥

पदच्छेद—

तस्मिन् तुष्टे किम् अप्राप्यम् ईश्वर ईश्वरे ।
लोकाः सपालाः हि एतस्मै हरन्ति बलिम् आदृताः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	४.	उनके	लोकाः	१०.	समस्त लोक
तुष्टे	५.	प्रसन्न होने पर	सपालाः	९.	लोकपालों के सहित
किम्	६.	कोई भी वस्तु	हि	८.	इसीलिये
अप्राप्यम्	७.	दुर्लभ (नहीं रह जाती)	एतस्मै	११.	इन्हें
जगताम्	१.	भगवान् जगत् के	हरन्ति	१४.	समर्पित करते हैं
ईश्वर	२.	स्वामी ब्रह्मादिकों के भी	बलिम्	१३.	पूजोपहार
ईश्वरे ।	३.	ईश्वर हैं	आदृताः ॥	१२.	बड़े आदर से

श्लोकार्थ—भगवान् जगत् के स्वामी ब्रह्मादिकों के भी ईश्वर हैं । उनके प्रसन्न होने पर कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं रह जाती । इसलिये लोकपालों के सहित समस्त लोक इन्हें बड़े आदर से पूजोपहार समर्पित करते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

तं सर्वलोकामरयज्ञसंग्रहं त्रयीमयं द्रव्यमयं तपोमयम् ।
यज्ञैर्विचित्रैर्यजतो भवाय ते राजन् स्वदेशाननुरोद्धुमर्हसि ॥२१॥

पदच्छेद— तम् सर्वलोक अमर यज्ञ संग्रहम् त्रयीमयम् द्रव्यमयम् तपोमयम् ।
यज्ञैः विचित्रैः यजतो भवाय ते राजन् स्वदेशान् अनुरोद्धुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

तम्	२.	भगवान् श्री हरि	यज्ञैः	१४.	यज्ञों से
सर्वलोक	३.	समस्त लोक	विचित्रैः	१३.	अनेक प्रकार के
अमर	४.	लोकपाल और	यजतो	१५.	(भगवान्) का पूजन करते हैं
यज्ञ	५.	यज्ञों के	भवाय	१२.	उन्नति के लिये
संग्रहम्	६.	नियन्ता हैं	ते	११.	आपकी
त्रयीमयम्	७.	वे वेदत्रयीरूप	राजन्	१.	हे राजन्
द्रव्यमयम्	८.	द्रव्यरूप और	स्वदेशान्	१०.	(आपके जो) देशवासी
तपोमयम् ।	९.	तपः स्वरूप (हैं)	अनुरोद्धुम्	१६.	(उनके) अनुकूल ही
			अर्हसि ॥	१७.	रहना चाहिये

श्लोकार्थ—हे राजन् ! भगवान् श्री हरि समस्त लोक, लोकपाल और यज्ञों के नियन्ता हैं । वे वेदत्रयी रूप, द्रव्यरूप और तपः स्वरूप हैं । आपके जो देशवासी आपकी उन्नति के लिये अनेक प्रकार के यज्ञों से भगवान् का पूजन करते हैं; उनके अनुकूल ही रहना चाहिये ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यज्ञेन युष्मद्विषये द्विजातिभिर्वितायमानेन सुराः कला हरेः ।
स्विष्टाः सुतुष्टाः प्रदिशन्ति वाञ्छितं तद्धेलनं नार्हसि वीर चेष्टितुम् ॥२२॥

पदच्छेद—यज्ञेन युष्मद् विषये द्विजातिभिः वितायमानेन सुराः कलाः हरेः ।
स्विष्टाः सुतुष्टाः प्रदिशन्ति वाञ्छितम् तद् हेलनम् न अर्हसि वीर चेष्टितम् ॥

शब्दार्थ—

यज्ञेन	४.	यज्ञों के	स्विष्टाः	६.	(तब) उनकी पूजा
युष्मद्	१.	(जब) आपके	सुतुष्टाः	७.	प्रसन्न होकर
विषये	२.	राज्य में	प्रदिशन्ति	१२.	फल देंगे
द्विजातिभिः	३.	ब्राह्मण लोग	वाञ्छितम्	११.	(आपको) मन चाहा
वितायमानेन	५.	अनुष्ठान करेंगे	तद् हेलनम्	१५.	उन देवताओं का तिरस्कार
सुराः	१०.	देवता	न अर्हसि	१६.	नहीं करना चाहिये
कलाः	९.	अंश स्वरूप	वीर	१३.	(अतः) वीर वर (आपको)
हरेः ।	८.	भगवान् के	चेष्टितम् ॥	१४.	कर्मानुष्ठान बन्द करके

श्लोकार्थ—जब आपके राज्य में ब्राह्मण लोग यज्ञों के अनुष्ठान करेंगे तब उनकी पूजा से प्रसन्न होकर भगवान् के अंश स्वरूप देवता आपको मन चाहा फल देंगे । अतः वीर ! आपको कर्मानुष्ठान बन्द करके उन देवताओं का तिरस्कार नहीं करना चाहिये ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

वेन उवाच—बालिशा बत यूयं वा अधर्मे धर्ममानिनः ।
ये वृत्तिदं पतिं हित्वा जारं पतिमुपासते ॥२३॥

पदच्छेद—

बालिशाः बत यूयम् वा अधर्मे धर्ममानिनः ।
ये वृत्तिम् पतिम् हित्वा जारम् पतिम् उपासते ॥

शब्दार्थ—

बालिशाः	२.	बड़े मूर्ख हो	ये	७.	जो आप लोग
बत	३.	खेद है	वृत्तिदम्	८.	जीविका देने वाले
यूयम्	१.	तुम लोग	पतिम्	९.	मुझ साक्षात् पति को
वा	४.	हम लोगों ने	हित्वा	१०.	छोड़कर
अधर्मे	५.	अधर्म में ही	जारम्	११.	किसी दूसरे जार
धर्ममानिनः ।	६	धर्म बुद्धि कर रक्खी है	पतिम्	१२.	पति की
			उपासते ॥	१३.	उपासना करते हैं

श्लोकार्थ—तुम लोग बड़े मूर्ख हो, खेद है कि तुम लोगों ने अधर्म में ही धर्म बुद्धि कर रक्खी है। जो आप लोग जीविका देने वाले मुझ साक्षात् पति को छोड़कर किसी दूसरे जार पति की उपासना करते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अवजानन्त्यमी मूढा नृपरूपिणमीश्वरम् ।
नानुविन्दन्ति ते भद्रमिह लोके परत्र च ॥२४॥

पदच्छेद—

अवजानन्ति अमी मूढाः नृप रूपिणम् ईश्वरम् ।
न अनुविन्दन्ति ते भद्रम् इह लोके परत्र च ॥

शब्दार्थ—

अवजानन्ति	६.	अनादर करते हैं	अनुविन्दन्ति	१४.	पाते हैं
अमी	१.	जो	ते	७.	वे लोग
मूढाः	२.	मूर्ख लोग	भद्रम्	१२.	सुख
नृप	३.	राजा	इह	८.	इस
रूपिणम्	४.	रूपी	लोके	९.	लोक में
ईश्वरम् ।	५.	परमेश्वर का	परत्र	११.	परलोक में
न	१३.	नहीं	च ॥	१०.	और

श्लोकार्थ—जो मूर्ख लोग राजारूपी परमेश्वर का अनादर करते हैं; वे लोग इस लोक में और परलोक में सुख नहीं पाते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

को यज्ञपुरुषो नाम यत्र वो भक्तिरीदृशी।
भर्तृस्नेहविदूराणां यथा जारे कुयोषिताम् ॥२५॥

पदच्छेद—

क: यज्ञपुरुषः नाम यत्र वः भक्ति ईदृशी ।
भर्तृ स्नेह विदूराणाम् यथा जारे कुयोषिताम् ॥

शब्दार्थ—

कः	६.	कौन है (यह तो ऐसा ही है)	भर्तृ	९.	अपने पति से
यज्ञपुरुषः	४.	(वह) यज्ञ पुरुष	स्नेह	१०.	प्रेम
नाम	५.	नाम का	विदूराणाम्	११.	न करके (किसी)
यत्र वः	१.	जिसमें तुम लोगों की	यथा	७.	जैसे
भक्ति	३.	भक्ति है	जारे	१२.	पर पुरुष में (आसक्त हो जायें)
ईदृशी ।	२.	इतनी	कुयोषिताम् ॥	८.	कुलटा स्त्रियाँ

श्लोकार्थ—जिसमें तुमलोगों की इतनी भक्ति है, वह यज्ञ पुरुष नाम का कौन है ? यह तो ऐसा ही है जैसे कुलटा स्त्रियाँ अपने पति से प्रेम न करके किसी पर पुरुष में आसक्त हो जायें ॥

षड्विंशः श्लोकः

विष्णुर्विरिञ्चो गिरीश इन्द्रो वायुर्यमो रविः।
पर्जन्यो धनदः सोमः क्षितिरग्निरपाम्पतिः ॥२६॥

पदच्छेद—

विष्णुः विरिञ्चः गिरीशः इन्द्रः वायुः यमः रविः ।
पर्जन्यः धनदः सोमः क्षितिः अग्निः अपाम् पतिः ॥

शब्दार्थ—

विष्णुः	१.	विष्णु	पर्जन्यः	८.	मेघ
विरिञ्चः	२.	ब्रह्मा	धनदः	९.	कुबेर
गिरीशः	३.	महादेव	सोमः	१०.	चन्द्रमा
इन्द्रः	४.	इन्द्र	क्षितिः	११.	पृथ्वी
वायुः	५.	वायु	अग्निः	१२.	अग्नि (और)
यमः	६.	यम	अपाम्	१३.	जल के
रविः ।	७.	सूर्य	पतिः ॥	१४.	देवता वरुण

श्लोकार्थ—विष्णु, ब्रह्मा, महादेव, इन्द्र, वायु, यम, सूर्य, मेघ, कुबेर, चन्द्रमा, पृथ्वी, अग्नि और जल के देवता वरुण ये सब राजा के शरीर में निवास करते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

एते चान्ये च विबुधाः प्रभवो वरशापयोः ।
देहे भवन्ति नृपतेः सर्वदेवमयो नृपः ॥२७॥

पदच्छेद— एते च अन्ये च विबुधाः प्रभवः वर शापयोः ।
देहे भवन्ति नृपतेः सर्व देवमयः नृपः ॥

शब्दार्थ—

एते	१.	उपर्युक्त देवता	शापयोः ।	४.	शाप देने में
च	२.	तथा	देहे	९.	शरीर में
अन्ये	६.	दूसरे	भवन्ति	१०.	निवास करते हैं
च	११.	इसलिये	नृपतेः	८.	राजा के
विबुधाः	७.	देवता	सर्व	१३.	सर्व
प्रभवः	५.	समर्थ	देवमयः	१४.	देवमय है
वर	३.	वरदान और	नृपः ॥	१२.	राजा

श्लोकार्थ—उपर्युक्त देवता तथा वरदान और शाप देने में समर्थ दूसरे देवता राजा के शरीर में निवास करते हैं । इसलिये राजा सर्वदेवमय है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तस्मान्मां कर्मभिर्विप्रा यजध्वं गतमत्सराः ।
बलिं च मह्यं हरत मत्तोऽन्यः कोऽग्रभुक् पुमान् ॥२८॥

पदच्छेद— तस्मात् माम् कर्मभिः विप्राः यजध्वम् गत मत्सराः ।
बलिम् च मह्यम् हरत मत्तः अन्यः कः अग्रभुक् पुमान् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	च	८.	और
माम्	६.	मेरा (ही)	मह्यम्	९.	मुझे ही
कर्मभिः	५.	अपने सभी कर्मों द्वारा	हरत	११.	समर्पण करो
विप्राः	२.	हे ब्राह्मणो	मत्तः	१२.	मेरे
यजध्वम्	७.	पूजन करो	अन्यः	१३.	सिवाय (और)
गत	४.	छोड़कर	कः	१४.	कौन
मत्सराः ।	३.	(तुम) मत्सरता	अग्रभुक्	१६.	अग्र पूजा का अधिकारी हो सकता है
बलिम्	१०.	उपहार	पुमान् ॥	१५.	पुरुष

श्लोकार्थ—इसलिये हे ब्राह्मणो ! तुम मत्सरता छोड़कर अपने सभी कर्मों द्वारा मेरा ही पूजन करो और मुझे ही उपहार समर्पण करो । मेरे सिवाय और कौन पुरुष अग्रपूजा का अधिकारी हो सकता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इत्थं विपर्ययमतिः पापीयानुत्पथं गतः।
अनुनीयमानस्तद्याच्ञां न चक्रे भ्रष्टमङ्गलः ॥२९॥

पदच्छेद—

इत्थम् विपर्यय मतिः पापीयान् उत्पथम् गतः।
अनुनीयमानः तद् याच्ञाम् न चक्रे भ्रष्ट मङ्गलः ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१.	इस प्रकार	अनुनीयमानः	९.	विनय करने पर भी
विपर्यय	२.	विपरीत	तद्	१०.	मुनियों की
मतिः	३.	बुद्धि होने के कारण	याच्ञाम्	११.	प्रार्थना पर
पापीयान्	४.	वह अत्यन्त पापी और	न चक्रे	१२.	नहीं ध्यान दिया
उत्पथम्	५.	कुमार्ग गामी	भ्रष्ट	८.	क्षीण हो चुका था
गतः।	६.	हो गया था	मङ्गलः ॥	७.	उसका पुण्य

श्लोकार्थ—इस प्रकार विपरीत बुद्धि होने के कारण वह अत्यन्त पापी और कुमार्गगामी हो गया था। उसका पुण्य क्षीण हो चुका था। विनय करने पर भी मुनियों की प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया ॥

त्रिंशः श्लोकः

इति तेऽसत्कृतास्तेन द्विजाः पण्डितमानिना।
भग्नायां भव्य याच्ञायां तस्मै विदुर चुक्रुधुः ॥३०॥

पदच्छेद—

इति ते असत्कृताः तेन द्विजाः पण्डितमानिना।
भग्नायाम् भव्य याच्ञायाम् तस्मै विदुर चुक्रुधुः ॥

शब्दार्थ—

इति	५.	(जब) इस प्रकार	भग्नायाम्	१०.	व्यर्थ हुई समझकर (वे)
ते	६.	उन	भव्य	१.	कल्याण रूप
असत्कृताः	८.	अपमान किया	याच्ञायाम्	९.	(तब) अपनी माँग को
तेन	४.	इस वेन ने	तस्मै	११.	उस पर
द्विजाः	७.	मुनियों का	विदुर	२.	हे विदुर जी
पण्डितमानिना।	३.	अपने को बुद्धिमान् समझने वाले	चुक्रुधुः ॥	१२.	कुपित हो गये

श्लोकार्थ—कल्याणरूप हे विदुर जी! अपने को बुद्धिमान् समझने वाले इस वेन ने जब इस प्रकार उन मुनियों का अपमान किया तब अपनी माँग को व्यर्थ हुई समझ कर वे उस पर कुपित हो गये ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

हन्यतां हन्यतामेष पापः प्रकृतिदारुणः ।
जीवञ्जगदसावाशु कुरुते भस्मसाद् ध्रुवम् ॥३१॥

पदच्छेद—

हन्यताम् हन्यताम् एषः पापः प्रकृति दारुणः ।
जीवन् जगत् असौ आशु कुरुते भस्मसात् ध्रुवम् ॥

शब्दार्थ—

हन्यताम्	१.	(इसे) मार डालो	जीवन्	८.	जीवित रह गया तो
हन्यताम्	२.	मार डालो	जगत्	१०.	संसार को
एषः	३.	यह	असौ	७.	(यदि) यह
पापः	६.	पापी है	आशु	९.	कुछ दिनों में
प्रकृति	४.	स्वभाव से ही	कुरुते	१३.	कर देगा
दारुणः ।	५.	दुष्ट और	भस्मसात्	१२.	भस्म
			ध्रुवम् ॥	११.	अवश्य

श्लोकार्थ—इसे मार डालो, मार डालो ! यह स्वभाव से ही दुष्ट और पापी है । यदि यह जीवित रह गया तो कुछ ही दिनों में संसार को अवश्य भस्म कर देगा ॥

त्रिंशः श्लोकः

नायमर्हत्यसद्वृत्तो नरदेववरासनम् ।
योऽधियज्ञपतिं विष्णुं विनिन्दत्यनपत्रपः ॥३२॥

पदच्छेद—

न अयम् अर्हति असद्वृत्तः नरदेव वरासनम् ।
यः अधियज्ञ पतिम् विष्णुम् विनिन्दति अनपत्रपः ॥

शब्दार्थ—

न	५.	नहीं	यः	७.	क्योंकि यह
अयम्	१.	यह	अधियज्ञ	९.	यज्ञों के
अर्हति	६.	योग्य है	पतिम्	१०.	स्वामी
असद्वृत्तः	२.	दुराचारी	विष्णुम्	११.	विष्णु भगवान् की
नरदेव	३.	राज	विनिन्दति	१२.	निन्दा करता है
वरासनम् ।	४.	सिंहासन के	अनपत्रपः ॥	८.	निर्लज्ज

श्लोकार्थ—यह दुराचारी राजसिंहासन के योग्य नहीं है । क्योंकि यह निर्लज्ज यज्ञों के स्वामी विष्णु भगवान् की निन्दा करता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

को वेनं परिचक्षीत वेनमेकमृतेऽशुभम् ।
प्राप्त ईदृशमैश्वर्यं यदनुग्रहभाजनः ॥३३॥

पदच्छेद—

कः वा एनम् परिचक्षीत वेनम् एकम् ऋते अशुभम् ।
प्राप्त ईदृशम् ऐश्वर्यम् यद् अनुग्रह भाजनः ॥

शब्दार्थ—

कः	६.	कौन	अशुभम् ।	१.	अभागे
वा	५.	भला	प्राप्त	१४.	मिला है
एनम्	७	उन श्री हरि की	ईदृशम्	१२.	(इसे) ऐसा
परिचक्षीत	८.	निन्दा कर सकता है	ऐश्वर्यम्	१३.	ऐश्वर्य
वेनम्	३.	वेन को	यद्	९.	जिनकी
एकम्	२.	एक	अनुग्रह	१०.	कृपा का
ऋते	४.	छोड़कर	भाजनः ॥	११.	पात्र होने से

श्लोकार्थ—अभागे एक वेन को छोड़कर भला कौन उन श्री हरि की निन्दा कर सकता है। जिनकी कृपा का पात्र होने से इसे ऐसा एश्वर्य मिला है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

इत्थं व्यवसिता हन्तुमृषयो रूढमन्यवः ।
निजघ्नुर्हुङ्कृतैर्वेनं हतमच्युतनिन्दया ॥३४॥

पदच्छेद—

इत्थम् व्यसिताः हन्तुम् ऋषयः रूढ मन्यवः ।
निजघ्नुः हुङ्कृतैः वेनम् हतम् अच्युत निन्दया ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१.	इस प्रकार	निजघ्नुः	१२.	मार डाला
व्यवसिताः	६.	निश्चय कर लिया	हुङ्कृतैः	११.	(केवल) हुँकारों से ही
हन्तुम्	५.	उसे मारने का	वेनम्	१०.	उस वेन को
ऋषयः	४.	उन ऋषियों ने	हतम्	९.	(पहले ही) मर चुका था (अतः)
रूढ	३.	प्रकट कर	अच्युत	७.	भगवान् की
मन्यवः ।	२.	अपने छिपे क्रोध को	निन्दया ॥	८.	निन्दा करने के कारण (वह)

श्लोकार्थ—इस प्रकार अपने छिपे क्रोध को प्रकट कर उन ऋषियों ने उसे मारने का निश्चय कर लिया। भगवान् की निन्दा करने के कारण वह पहले ही मर चुका था; अतः उस वेन को केवल हुँकारों से ही मार दिया ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

ऋषिभिः स्वाश्रमपदं गते पुत्रकलेवरम् ।
सुनीथा पालयामास विद्यायोगेन शोचती ॥३५॥

पदच्छेद—

ऋषिभिः स्व आश्रम पदम् गते पुत्र कलेवरम् ।
सुनीथा पालयामास विद्यायोगेन शोचती ॥

शब्दार्थ—

ऋषिभिः	१.	(जब) मुनिगण	कलेवरम् ।	९.	शव की
स्व	२.	अपने-अपने	सुनीथा	६.	माता सुनीथा
आश्रमपदम्	३.	आश्रमों को	पालयामास	१०.	रक्षा करने लगी
गते	४.	चले गये	विद्यायोगेन	७.	मन्त्रादि के बल से
पुत्र	८.	अपने पुत्र के	शोचती ॥	५.	(तब इधर वेन की) शोकाकुला

श्लोकार्थ—जब मुनिगण अपने-अपने आश्रमों को चले गये; तब इधर वेन की शोकाकुला माता सुनीथा मन्त्रादि के बल से अपने पुत्र के शव की रक्षा करने लगी ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

एकदा मुनयस्ते तु सरस्वत्सलिलाप्लुताः ।
हुत्वाग्नीन् सत्कथाश्चक्रुरुपविष्टाः सरित्तटे ॥३६॥

पदच्छेद—

एकदा मुनयः ते तु सरस्वती सलिले आप्लुताः ।
हुत्वा अग्नीन् सत्कथाः चक्रुः उपविष्टाः सरित् तटे ॥

शब्दार्थ—

एकदा	१.	एक दिन	हुत्वा	९.	निवृत्त होकर
मुनयः	३.	मुनिगण	अग्नीन्	८.	अग्निहोत्र से
ते	२.	वे	सत्कथाः	१३.	हरि चर्चा
तु	७.	तथा	चक्रुः	१४.	कर रहे थे
सरस्वती	४.	सरस्वती के	उपविष्टाः	१२.	बैठे हुये
सलिले	५.	जल में	सरित्	१०.	नदी के
आप्लुताः ।	६.	स्नान करके	तटे ॥	११.	तट पर

श्लोकार्थ—एक दिन वे मुनिगण सरस्वती के जल में स्नान करके तथा अग्निहोत्र से निवृत्त होकर नदी के तट पर बैठे हुये हरि-चर्चा कर रहे थे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

वीक्ष्योत्थितांस्तदोत्पातानाहुर्लोकभयङ्करान् ।
अप्यभद्रमनाथाया दस्युभ्यो न भवेद्भुवः ॥३७॥

पदच्छेद—

वीक्ष्य उत्थितान् तदा उत्पातान् आहुः लोक भयङ्करान् ।
अपि अभद्रम् अनाथायाः दस्युभ्यः न भवेत् भुवः ॥

शब्दार्थ—

वीक्ष्य	६. देखकर	अपि	८. क्या
उत्थितान्	४. फैलाने वाले	अभद्रम्	१२. अमङ्गल (तो)
तदा	१. उन दिनों	अनाथायाः	९. राजा विहीन
उत्पातान्	५. बहुत-से उपद्रवों को	दस्युभ्यः	११. लुटेरों से
आहुः	७. (वे) कहने लगे	न	१३. नहीं
लोक	२. लोगों में	भवेत्	१४. होने वाला है
भयङ्करान् ।	३. आतंक	भुवः ॥	१०. पृथ्वी का

श्लोकार्थ—उन दिनों लोगों में आतंक फैलाने वाले बहुत से उपद्रवों को देखकर वे कहने लगे-क्या राजा विहीन पृथ्वी का लुटेरों से अमङ्गल तो नहीं होने वाला है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

एवं मृशन्त ऋषयो धावतां सर्वतोदिशम् ।
पांसुः समुत्थितो भूरिश्चोराणामभिलुम्पताम् ॥३८॥

पदच्छेद—

एवम् मृशन्तः ऋषयः धावताम् सर्वतः दिशम् ।
पांसुः समुत्थितः भूरिः चोराणाम् अभिलुम्पताम् ॥

शब्दार्थ—

एवम् मृशन्तः	२. ऐसा विचार कर ही रहे थे कि	पांसुः	१०. धूल (देखी)
ऋषयः	१. ऋषि लोग	समुत्थितः	८. उठी हुई
धावताम्	५. धावा करने वाले	भूरिः	९. बड़ी भारी
सर्वतः	३. (उन्होंने) सभी	चोराणाम्	६. चोरों और
दिशम् ।	४. दिशाओं में	अभिलुम्पताम् ॥	७. डाकुओं के कारण

श्लोकार्थ—ऋषिलोग ऐसा विचार कर ही रहे थे कि उन्होंने सभी दिशाओं में धावा करने वाले चोरों और डाकुओं के कारण उठी हुई बड़ी धूल देखी ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

तदुपद्रवमाज्ञाय लोकस्य वसु लुम्पताम् ।
भर्तर्युपरते तस्मिन्नन्योन्यं च जिघांसताम् ॥३९॥

पदच्छेद—

तद् उपद्रवम् आज्ञाय लोकस्य वसु लुम्पताम् ।
भर्तरि उपरते तस्मिन् अन्योन्यम् च जिघांसताम् ॥

शब्दार्थ—

तद्	५.	वह सारा	भर्तरि	३.	राजा वेन के
उपद्रवम्	६.	उत्पात	उपरते	४.	मर जाने से
आज्ञाय	१.	(वे) समझ गये (कि)	तस्मिन्	२.	उस
लोकस्य	७.	लोगों का	अन्योन्यम्	११.	एक दूसरे को
वसु	८.	धन	च	१०.	और
लुम्पताम्	९.	लूटने	जिघांसताम् ॥	१२.	मारने के लिये है

श्लोकार्थ—वे समझ गये कि उस राजा वेन के मर जाने से वह सारा उत्पात लोगों का धन लूटने और एक दूसरे को मारने के लिये है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

चोरप्रायं जनपदं हीनसत्त्वमराजकम् ।
लोकान्नावारयञ्छक्ता अपि तद्दोषदर्शिनः ॥४०॥

पदच्छेद—

चोर प्रायम् जनपदम् हीन सत्त्वम् अराजकम् ।
लोकान् न अवारयन् शक्ताः अपि तद् दोषदर्शिनः ॥

शब्दार्थ—

चोर प्रायम्	२.	चोर बढ़ गये हैं	न	११.	नहीं
जनपदम्	१.	देश में	अवारयन्	१२.	निवारण किया
हीन	५.	हीन हो गया है	शक्ताः	६.	समर्थ होने पर
सत्त्वम्	४.	राज्य शक्ति से	अपि	७.	भी
अराजकम् ।	३.	अराजकता फैल गयी है	तद्	८.	उसमें
लोकान्	१०.	लोगों का	दोषदर्शिनः ॥	९.	हिंसादि दोष देखकर

श्लोकार्थ—देश में चोर बढ़ गये हैं; अराजकता फैल गई है और राज्य शक्ति से हीन हो गया है (ऐसी कुप्रवृति को रोकने में) समर्थ होने पर भी उसमें हिंसादि दोष देखकर लोगों का निवारण नहीं किया ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

ब्राह्मणः समदृक् शान्तो दीनानां समुपेक्षकः ।
स्रवते ब्रह्म तस्यापि भिन्नभाण्डात्पयो यथा ॥४१॥

पदच्छेद—

ब्राह्मणः समदृक् शान्तः दीनानाम् समुपेक्षकः ।
ब्रह्म तस्य अपि भिन्न भाण्डात् पयः यथा ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मणः	१. फिर उन्होंने सोचा कि ब्राह्मण (यदि)	ब्रह्म	७. तप
समदृक्	२. समदर्शी (और)	तस्य	६. उसका
शान्तः	३. शान्त स्वभाव (हो तो भी)	अपि	८. उसी प्रकार
दीनानाम्	४. दीनों की	भिन्न भाण्डात्	११. फूटे हुये घड़े से
समुपेक्षकः ।	५. उपेक्षा करने से	पयः	१०. जल (बह जाता है)
स्रवते	९. नष्ट हो जाता है	यथा ॥	१०. जैसे

श्लोकार्थ—फिर उन्होंने सोचा कि ब्राह्मण यदि समदर्शी और शान्त स्वभाव हो तो भी दीनों की उपेक्षा करने से उसका तप उसी प्रकार नष्ट हो जाता है जैसे फूटे हुये घड़े से जल बह जाता है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

नाङ्गस्य वंशो राजर्षेरेष संस्थातुमर्हति ।
अमोघवीर्या हि नृपा वंशेऽस्मिन् केशवाश्रयाः ॥४२॥

पदच्छेद—

न अङ्गस्य वंशः राजर्षेः एषः संस्थातुम् अर्हति ।
अमोघ वीर्याः हि नृपाः वंशे अस्मिन् केशव आश्रयाः ॥

शब्दार्थ—

न	६. नहीं	अमोघ	१२. अचूक
अङ्गस्य	२. अङ्ग का	वीर्याः	१३. शक्ति वाले
वंशः	४. वंश भी	हि	८. क्योंकि
राजर्षेः	१. राजर्षि	नृपाः	१४. अनेक राजा (हुये हैं)
एव	३. यह	वंशे	१०. वंश में
संस्थातुम्	५. नष्ट	अस्मिन्	९. इस
अर्हति ।	७. होना चाहिये	केशव आश्रयाः ॥	११. भगवत् परायण और

श्लोकार्थ—राजर्षि अङ्ग का यह वंश नष्ट नहीं होना चाहिये, क्योंकि इस वंश में भगवत्परायण और अचूक शक्ति वाले अनेक राजा हुये हैं ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

विनिश्चित्यैवमृषयो विपन्नस्य महीपतेः ।
ममन्थुरूरुं तरसा तत्रासीद्बाहुको नरः ॥४३॥

पदच्छेद—

विनिश्चित्य एवम् ऋषयः विपन्नस्य महीपतेः ।
ममन्थुः ऊरुम् तरसा तत्र आसीत् बाहुकः नरः ॥

शब्दार्थ—

विनिश्चित्य	२.	निश्चय करके	ऊरुम्	६.	जाँघ को
एवम्	१.	ऐसा	तरसा	७.	बड़े जोर से
ऋषयः	३.	ऋषियों ने	तत्र	९.	उसमें से
विपन्नस्य	४.	मृत	आसीत्	१२.	उत्पन्न हुआ
महीपतेः ।	५.	राजा वेन की	बाहुकः	१०.	एक हाथ का
ममन्थुः	८.	मथा (तो)	नरः ॥	११.	बौना पुरुष

श्लोकार्थ—ऐसा निश्चय करके ऋषियों ने मृत राजा वेन की जाँघ को बड़े जोर से मथा तो उसमें से एक हाथ का बौना पुरुष उत्पन्न हुआ ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

काककृष्णोऽतिह्रस्वाङ्गो ह्रस्वबाहुर्महाहनुः ।
ह्रस्वपान्निम्ननासाग्रो रक्ताक्षस्ताम्रमूर्धजः ॥४४॥

पदच्छेद—

काक कृष्णः अतिह्रस्व अङ्गः ह्रस्व बाहुः महाहनुः ।
ह्रस्व पात् निम्न नासाग्रः रक्त अक्षः ताम्र मूर्धजः ॥

शब्दार्थ—

काक	१.	(वह) कौए के समान	ह्रस्व	९.	छोटी
कृष्णः	२.	काला (था)	पात्	८.	टाँगें
अतिह्रस्व	४.	बहुत छोटे थे	निम्न	११.	चपटी
अङ्गः	३.	उसके सभी अङ्ग	नासाग्रः	१०.	नाक
ह्रस्व	६.	छोटी (और)	रक्त अक्षः	१२.	लाल आँखें
बाहुः	५.	भुजायें	ताम्र	१४.	तांबे के रंग के थे
महाहनुः ।	७.	जबड़े बड़े (थे)	मूर्धजः ॥	१३.	(और) केश

श्लोकार्थ—वह कौए के समान काला था। उसके सभी अङ्ग बहुत छोटे थे। भुजायें छोटी और जबड़े बड़े थे। टाँगें छोटी, नाक चपटी, लाल आँखें और केश तांबे के रंग के थे ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

तं तु तेऽवनतं दीनं किं करोमीति वादिनम् ।
निषीदेत्यब्रुवंस्तात स निषादस्ततोऽभवत् ॥४५॥

पदच्छेद— तम् तु ते अवनतम् दीनम् किम् करोमि इति वादिनम् ।
निषीद इति अब्रुवन् तात सः निषादः ततः अभवत् ॥

शब्दार्थ—

तम्	८. उसे	निषीद	११. बैठ जा
तु	२. और	इति	१०. कि
ते	७. उन ऋषियों ने	अब्रुवन्	९. कहा
अवनतम्	३. नम्रता से	तात	१३. हे तात
दीनम्	१. (उसने) दीनता	सः	१४. वह
किम्	४. (मैं) क्या	निषादः	१५. निषाद
करोमि	५. करूँ	ततः	१२. इसी से
इति वादिनम् ।	६. ऐसा पूछा (तो)	अभवत् ॥	१६. कहलाया

श्लोकार्थ—उसने दीनता और नम्रता से मैं क्या करूँ ऐसा पूछा तो उन ऋषियों ने उसे कहा बैठ जा । इसीसे हे तात ! वह निषाद कहलाया ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

तस्य वंश्यास्तु नैषादा गिरिकाननगोचराः ।
येनाहरज्जायमानो वेनकल्मषमुल्बणम् ॥४६॥

पदच्छेद— तस्य वंश्याः तु नैषादाः गिरि कानन गोचराः ।
येन् अहरत् जायमानः वेन कल्मषम् उल्बणम् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	७. उसके	येन	६. जिससे
वंश्याः	८. वंशज	अहरत्	५. अपने ऊपर ले लिया
तु	१०. भी (लूट पाट)	जायमानः	१. (उसने) जन्म लेते (ही)
नैषादाः	९. नैषाद	वेन	२. राजा वेन के
गिरि	११. (करने के कारण) पर्वतों	कल्मषम्	४. पापों को
कानन गोचराः ।	१२. और जङ्गलों में रहते हैं	उल्बणम् ॥	३. भयङ्कर

श्लोकार्थ—उसने जन्म लेते ही राजा वेन के भयङ्कर पापों को अपने ऊपर ले लिया । जिससे उसके वंशज नैषाद भी लूट-पाट करने के कारण पर्वतों और जङ्गलों में रहते हैं ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पृथुचरिते निषादोत्पत्तिर्नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

पञ्चदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—अथ तस्य पुनर्विप्रैरपुत्रस्य महीपतेः ।
बाहुभ्यां मथ्यमानाभ्यां मिथुनं समपद्यत ॥१॥

पदच्छेद—

अथ तस्य पुनः विप्रैः अपुत्रस्य महीपतेः ।
बाहुभ्याम् मथ्यमानाभ्याम् मिथुनम् समपद्यत ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	महीपतेः ।	४.	राजा
तस्य	५.	उस वेन की	बाहुभ्याम्	६.	भुजाओं का
पुनः	७.	फिर से	मथ्यमानाभ्याम्	८.	मन्थन किया उससे
विप्रैः	२.	ब्राह्मणों ने	मिथुनम्	९.	स्त्री-पुरुष का जोड़ा
अपुत्रस्य	३.	पुत्रहीन	समपद्यत ॥	१०.	प्रकट हुआ

श्लोकार्थ—इसके बाद ब्राह्मणों ने पुत्रहीन राजा उस वेन की भुजाओं का फिर से मन्थन किया। उससे स्त्री-पुरुष का जोड़ा उत्पन्न हुआ ॥

द्वितीयः श्लोकः

तद् दृष्ट्वा मिथुनं जातमृषयो ब्रह्मवादिनः ।
ऊचुः परमसन्तुष्टा विदित्वा भगवत्कलाम् ॥२॥

पदच्छेद—

तद् दृष्ट्वा मिथुनम् जातम् ऋषयः ब्रह्मवादिनः ।
ऊचुः परम सन्तुष्टाः विदित्वा भगवत् कलाम् ॥

शब्दार्थ—

तद्	३.	उस	ऊचुः	१२.	बोले
दृष्ट्वा	६.	देखकर	परम	१०.	अत्यन्त
मिथुनम्	४.	जोड़े को	सन्तुष्टाः	११.	प्रसन्न हुये (और)
जातम्	५.	उत्पन्न हुआ	विदित्वा	९.	जानकर
ऋषयः	२.	ऋषिगण	भगवत्	७.	(उसे) भगवान् का
ब्रह्मवादिनः ।	१.	वेदपाठी	कलाम् ॥	८.	अंश

श्लोकार्थ—वेद पाठी ऋषिगण उस जोड़े को उत्पन्न हुआ देखकर उसे भगवान् का अंश जानकर अत्यन्त प्रसन्न हुये और बोले ॥

तृतीयः श्लोकः

ऋषय ऊचुः—एष विष्णोर्भगवतः कला भुवनपालिनी ।
इयं च लक्ष्म्याः सम्भूतिः पुरुषस्यानपायिनी ॥३॥

पदच्छेद—

एषः विष्णोः भगवतः कला भुवन पालिनी ।
इयम् च लक्ष्म्याः सम्भूतिः पुरुषस्य अनपायिनी ॥

शब्दार्थ—

एषः	१.	यह पुरुष	इयम्	८.	यह स्त्री
विष्णोः	३.	विष्णु की	च	७.	और
भगवतः	२.	भगवान्	लक्ष्म्याः	११.	लक्ष्मी जी का
कला	६.	कला से (प्रकट हुआ है)	सम्भूतिः	१२.	अवतार है
भुवन	४.	विश्व की	पुरुषस्य	९.	परम पुरुष के
पालिनी ।	५.	रक्षा करने वाली	अनपायिनी ॥	१०.	सदा साथ रहने वाली

श्लोकार्थ—यह पुरुष भगवान् विष्णु की विश्व की रक्षा करने वाली कला से प्रकट हुआ है और यह स्त्री परम पुरुष के सदा साथ रहने वाली लक्ष्मी जी का अवतार है ॥

चतुर्थः श्लोकः

अत्र तु प्रथमो राज्ञां पुमान् प्रथयिता यशः ।
पृथुर्नाम महाराजो भविष्यति पृथुश्रवाः ॥४॥

पदच्छेद—

अत्र तु प्रथमः राज्ञाम् पुमान् प्रथयिता यशः ।
पृथुः नाम महाराजः भविष्यति पृथु श्रवाः ॥

शब्दार्थ—

अत्र	१.	इसमें से	यशः ।	४.	अपनी कीर्ति का
तु	३.	तो	पृथुः	७.	पृथु
प्रथमः	१२.	सबसे पहला (होगा)	नाम	८.	नामक
राज्ञाम्	११.	(यह) राजाओं में	महाराजः	९.	सम्राट्
पुमान्	२.	पुरुष	भविष्यति	१०.	होगा
प्रथयिता	५.	प्रथम-विस्तार करने के कारण	पृथु श्रवाः ॥	६.	परम यशस्वी

श्लोकार्थ—इसमें से पुरुष तो अपनी कीर्ति का प्रथम-विस्तार करने के कारण परम यशस्वी पृथु नामक सम्राट् होगा । यह राजाओं में सबसे पहला होगा ॥

पञ्चमः श्लोकः

इयं च सुदती देवी गुणभूषणभूषणा ।
अर्चिर्नाम वरारोहा पृथुमेवावरुन्धती ॥५॥

पदच्छेद—

इयम् च सुदती देवी गुण भूषण भूषणा ।
अर्चिः नाम वरारोहा पृथुम् एव अरुन्धती ॥

शब्दार्थ—

इयम्	१.	यह	अर्चिः	१२.	अर्चि (होगा)
च	३.	एवम्	नाम	११.	नाम
सुदती	२.	सुन्दर दाँतों वाली	वरारोहा	६.	सुन्दरी
देवी	१०.	(इस) देवी का	पृथुम्	७.	पृथु को
गुण भूषण	४.	गुण (और) आभूषणों को भी	एव	८.	ही (अपना)
भूषणा ।	५.	विभूषित करने वाली	अरुन्धती ॥	९.	पति बनायेगी

श्लोकार्थ—यह सुन्दर दाँतों वाली गुण और आभूषणों को भी विभूषित करने वाली सुन्दरी पृथु को ही अपना पति बनायेगी । इस देवी का नाम अर्चि होगा ॥

षष्ठः श्लोकः

एष साक्षाद्धरेरंशो जातो लोकरिरक्षया ।
इयं च तत्परा हि श्रीरनुजज्ञेऽनपायिनी ॥६॥

पदच्छेद—

एषः साक्षात् हरेः अंशः जातः लोक रिरक्षया ।
इयम् च तत्परा हि श्रीः अनुजज्ञे अनपायिनी ॥

शब्दार्थ—

एषः	१.	यह (पृथु के रूप में)	इयम्	९.	यह (अर्चि के रूप में)
साक्षात्	२.	साक्षात्	च	८.	और
हरेः	३.	श्री हरि के	तत्परा	१०.	निरन्तर (सेवा में रहने वाली)
अंशः	४.	अंश ने ही	हि	१३.	ही
जातः	७.	अवतार लिया है	श्रीः	१२.	श्री लक्ष्मी जी
लोक	५.	संसार की	अनुजज्ञे	१४.	प्रकट हुई हैं
रिरक्षया ।	६.	रक्षा के लिये	अनपायिनी ॥	११.	नित्य सहचरी

श्लोकार्थ— यह पृथु के रूप में साक्षात् श्री हरि के अंश ने ही संसार की रक्षा के लिये अवतार लिया है । और यह अर्चि के रूप में निरन्तर सेवा में रहनेवाली नित्य सहचरी श्री लक्ष्मी जी ही प्रकट हुई हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—प्रशंसन्ति स्म तं विप्रा गन्धर्वप्रवरा जगुः ।
मुमुचुः सुमनोधाराः सिद्धा नृत्यन्ति स्वः स्त्रियः ॥७॥

पदच्छेद—

प्रशंसन्ति स्म तम् विप्राः गन्धर्व प्रवराः जगुः ।
मुमुचुः सुमनः धाराः सिद्धाः नृत्यन्ति स्वः स्त्रियः ॥

शब्दार्थ—

प्रशंसन्ति स्म	३. स्तुति करने लगे	मुमुचुः	१०. करने लगे (और)
तम्	२. उन पृथु जी की	सुमनः	८. पुष्पों की
विप्राः	१. (उस समय) ब्राह्मणगण	धाराः	९. वर्षा
गन्धर्व	५. गन्धर्व	सिद्धा	७. सिद्धगण
प्रवराः	४. प्रमुख	नृत्यन्ति	१२. नाचने लगीं
जगुः ।	६. गाने लगे	स्वः स्त्रियः ॥	११. स्वर्ग लोक की अप्सरायें

श्लोकार्थ—उस समय ब्राह्मणगण उन पृथु जी स्तुति करने लगे, प्रमुख गन्धर्व गाने लगे; सिद्धगण पुष्पों की वर्षा करने लगे और स्वर्ग लोक की अप्सरायें नाचने लगीं ॥

अष्टमः श्लोकः

शङ्खतूर्यमृदङ्गाद्या नेदुर्दुन्दुभयो दिवि ।
तत्र सर्वं उपाजग्मुर्देवर्षिपितृणां गणाः ॥८॥

पदच्छेद—

शङ्ख तूर्य मृदङ्ग आद्या नेदुः दुन्दुभयः दिवि ।
तत्र सर्वे उपाजग्मुः देव ऋषि पितृणाम् गणाः ॥

शब्दार्थ—

शङ्ख	२. शंख	तत्र	१३. (अपने लोकों से) वहाँ
तूर्य	३. तुरही	सर्वे	८. समस्त
मृदङ्ग	४. मृदंग (और)	उपाजग्मुः	१४. उपस्थित हो गये
आद्या	६. आदि बाजे	देव	९. देवता
नेदुः	७. बजने लगे	ऋषि	१०. ऋषि (और)
दुन्दुभयः	५. दुन्दुभि	पितृणाम्	११. पितर
दिवि ।	१. आकाश में	गणाः ॥	१२. समुदाय

श्लोकार्थ—आकाश में शंख, तुरही, मृदंग और दुन्दुभि आदि बाजे बजने लगे। समस्त देवता, ऋषि और पितर समुदाय अपने लोकों से वहाँ उपस्थित हो गये ॥

नवमः श्लोकः

ब्रह्मा जगद्गुरुर्देवैः सहासृत्य सुरेश्वरैः ।
वैन्यस्य दक्षिणे हस्ते दृष्ट्वा चिह्नं गदाभृतः ॥९॥

पदच्छेद—

ब्रह्मा जगद् गुरुः देवैः सह आसृत्य सुरेश्वरैः ।
वैन्यस्य दक्षिणे हस्ते दृष्ट्वा चिह्नम् गदाभृतः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मा	३. ब्रह्मा जी	वैन्यस्य	७. वेन कुमार पृथु के
जगद्	१. संसार के	दक्षिणे	८. दाहिने
गुरुः	२. पितामह	हस्ते	९. हाथ में
देवैः	५. देवताओं को	दृष्ट्वा	१२. देखीं
सह आसृत्य	६. साथ लेकर (पधारे)	चिह्नम्	११. रेखायें
सुरेश्वरैः ।	४. देवराज इन्द्र (और)	गदाभृतः ॥	१०. भगवान् विष्णु की

श्लोकार्थ—संसार के पितामह ब्रह्मा जी देवराज इन्द्र और देवताओं को साथ लेकर वहाँ पधारे। उन्होंने वेन कुमार पृथु के दाहिने हाथ में भगवान् विष्णु की रेखायें देखीं ॥

दशमः श्लोकः

पादयोररविन्दं च तं वै मेने हरेः कलाम् ।
यस्याप्रतिहतं चक्रमंशः स परमेष्ठिनः ॥१०॥

पदच्छेद—

पादयोः अरविन्दम् च तम् वै मेने हरेः कलाम् ।
यस्य अप्रतिहतम् चक्रम् अंशः सः परमेष्ठिनः ॥

शब्दार्थ—

पादयोः	२. उनके पैर में	कलाम् ।	७. अंश
अरविन्दम्	३. कमल का चिह्न	यस्य	९. क्योंकि (जिसके)
च	१. तथा	प्रतिहतम्	१०. बिना कटी
तम्	५. उन्हें	चक्रम्	११. चक्र की रेखा होती है
वै	४. देखकर (उन्होंने)	अंशः	१४. अंश होता है
मेने	८. समझा	सः	१२. वह
हरेः	६. भगवान् का	परमेष्ठिनः ॥	१३. भगवान् का ही

श्लोकार्थ—तथा उनके पैरों में कमल का चिह्न देखकर उन्होंने भगवान् का अंश समझा; क्योंकि जिसके बिना कटी चक्र की रेखा होती है, वह भगवान् का अंश होता है ॥

एकादशः श्लोकः

तस्याभिषेक आरब्धो ब्राह्मणैर्ब्रह्मवादिभिः ।
आभिषेचनिकान्यस्मै आजह्रुः सर्वतो जनाः ॥११॥

पदच्छेद—

तस्य अभिषेकः आरब्धः ब्राह्मणैः ब्रह्मवादिभिः ।
आभिषेचनिकानि अस्मै आजह्रुः सर्वतः जनाः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	३.	उन पृथु जी के	आभिषेचनिकानि	९.	अभिषेक सामग्री
अभिषेकः	४.	राज्याभिषेक का	अस्मै	८.	उनकी
आरब्धः	५.	आयोजन किया (और)	आजह्रुः	१०.	जुटाने लगे
ब्राह्मणैः	२.	ब्राह्मणों ने	सर्वतः	७	चारों ओर से
ब्रह्मवादिभिः ।	१.	वेद पाठी	जनाः ॥	६.	सब लोग

श्लोकार्थ—वेद पाठी ब्राह्मणों ने उन पृथु जी के राज्याभिषेक का आयोजन किया और सब लोग चारों ओर से उनकी अभिषेक सामग्री जुटाने लगे ॥

द्वादशः श्लोकः

सरित्समुद्रा गिरयो नागा गावः खगा मृगाः ।
द्यौः क्षितिः सर्वभूतानि समाजह्रुरुपायनम् ॥१२॥

पदच्छेद—

सरित् समुद्राः गिरयः नागाः गावः खगाः मृगाः ।
द्यौः क्षितिः सर्व भूतानि समाजह्रुः उपायनम् ॥

शब्दार्थ—

सरित्	१.	(उस समय) नदी	द्यौः	७.	स्वर्ग
समुद्राः	२.	समुद्र	क्षितिः	८.	पृथ्वी (तथा)
गिरयः	३.	पर्वत	सर्व	९.	अन्य सब
नागाः	४.	सर्प	भूतानि	१०.	प्राणियों ने
गावः	५.	गौ	समाजह्रुः	१२.	भेंट किये
खगाः मृगाः ।	६.	पक्षी-पशु	उपायनम् ॥	११.	(उन्हें) उपहार

श्लोकार्थ—उस समय नदी, समुद्र, पर्वत, सर्प, गौ, पशु-पक्षी, स्वर्ग, पृथ्वी तथा अन्य सब प्राणियों ने उन्हें उपहार भेंट किये ॥

त्रयोदशः श्लोकः

सोऽभिषिक्तो महाराजः सुवासाः साध्वलङ्कृतः ।
पत्न्यार्चिषालङ्कृतया विरेजेऽग्निरिवापरः ॥१३॥

पदच्छेद—

सः अभिषिक्तः महाराजः सुवासाः साधु अलङ्कृतः ।
पत्न्या अर्चिषा अलङ्कृतया विरेजे अग्निः इव अपरः ॥

शब्दार्थ—

सः	४.	पृथु का	पत्न्या	८.	महारानी
अभिषिक्तः	६.	राज्याभिषेक हुआ	अर्चिषा	९.	अर्चि के साथ (वे)
महाराजः	३.	महाराज	अलङ्कृतया	७.	अलंकारों से सज्जित
सुवासाः	१.	सुन्दर वस्त्र (और)	विरेजे	१२.	शोभा पा रहे थे
साधु	५.	विधिवत्	अग्निः इव	११.	अग्निदेव के समान
अलङ्कृतः ।	२.	आभूषणों से अलंकृत	अपरः ॥	१०.	दूसरे

श्लोकार्थ—सुन्दर वस्त्र और आभूषणों से अलंकृत महाराज पृथु का विधिवत् राज्याभिषेक हुआ। अलंकारों से सज्जित महाराज अर्चि के साथ वे दूसरे अग्निदेव के समान शोभा पा रहे थे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तस्मै जहार धनदो हैमं वीर वरासनम् ।
वरुणः सलिलस्रावमातपत्रं शशिप्रभम् ॥१४॥

पदच्छेद—

तस्मै जहार धनदः हैमम् वीर वर आसनम् ।
वरुणः सलिल स्रावम् आतपत्रम् शशि प्रभम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मै	२.	उन्हें	वरुणः	८.	वरुण ने
जहार	७.	दिया	सलिल	१२.	जल के फुहारे
धनदः	३.	कुबेर ने	स्रावम्	१३.	झरते थे
हैमम्	५.	सोने का	आतपत्रम्	११.	छत्र दिया (जिससे)
वीर	१.	हे वीर विदुर जी	शशि	९.	चन्द्रमा के समान
वर	४.	बड़ा ही सुन्दर	प्रभम् ॥	१०.	श्वेत और प्रकाशमय
आसनम् ।	६.	सिंहासन			

श्लोकार्थ—हे वीर विदुर जी ! उन्हें कुबेर ने बड़ा ही सुन्दर सोने का सिंहासन दिया, वरुण ने चन्द्रमा के समान श्वेत और प्रकाशमय छत्र दिया, जिससे जल के फुहारे झरते थे ॥

पञ्चदशः श्लोकः

वायुश्च वालव्यजने धर्मः कीर्तिमयीं स्रजम् ।
इन्द्रः किरीटमुत्कृष्टं दण्डं संयमनं यमः ॥१५॥

पदच्छेद—

वायुः च वाल व्यजने धर्मः कीर्तिमयीम् स्रजम् ।
इन्द्रः किरीटम् उत्कृष्टम् दण्डम् संयमनम् यमः ॥

शब्दार्थ—

वायुः	१. वायु ने	इन्द्रः	८. इन्द्र ने
च	४. तथा	किरीटम्	१०. मुकुट (और)
वाल	२. चमरी वाल के	उत्कृष्टम्	९. मनोहर
व्यजने	३. दो चंवर	दण्डम्	१३. दण्ड दिया
धर्मः	५. धर्म ने	संयमनम्	१२. दमन करने वाला
कीर्तिमयीम्	६. यशोवर्धिनी	यमः ॥	११. यमने
स्रजम् ।	७. माला		

श्लोकार्थ—वायु ने चमरी वाल के दो चँवर तथा धर्म ने यशोवर्धिनी माला, इन्द्र ने मनोहर मुकुट और यम ने दमन करने वाला दण्ड दिया ॥

षोडशः श्लोकः

ब्रह्मा ब्रह्ममयं वर्म भारती हारमुत्तमम् ।
हरिः सुदर्शनं चक्रं तत्पत्न्यव्याहतां श्रियम् ॥१६॥

पदच्छेद—

ब्रह्मा ब्रह्ममयम् वर्म भारती हारम् उत्तमम् ।
हरिः सुदर्शनम् चक्रम् तत् पत्नी अव्याहताम् श्रियम् ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मा	१. ब्रह्मा ने	हरिः	७. विष्णु भगवान् ने
ब्रह्ममयम्	२. वेदमय	सुदर्शनम्	८. सुदर्शन
वर्म	३. कवच	चक्रम्	९ चक्र (और)
भारती	४. सरस्वती ने	तत् पत्नी	१०. उनकी पत्नी लक्ष्मी जी ने
हारम्	६. हार	अव्याहताम्	११. अविचल
उत्तमम् ।	५. सुन्दर	श्रियम् ॥	१२. सम्पत्ति (दी)

श्लोकार्थ—ब्रह्मा ने वेदमय कवच, सरस्वती ने सुन्दर हार, विष्णु भगवान् ने सुदर्शन चक्र और उनकी पत्नी लक्ष्मी जी ने अविचल सम्पत्ति दी ॥

सप्तदशः श्लोकः

दशचन्द्रमसिं रुद्रः शतचन्द्रं तथाम्बिका ।
सोमोऽमृतमयानश्वांस्त्वष्टा रूपाश्रयं रथम् ॥१७॥

पदच्छेद—

दशचन्द्रम् असिम् रुद्रः शतचन्द्रम् तथा अम्बिका ।
सोमः अमृतमयान् अश्वान् त्वष्टा रूप आश्रयम् रथम् ॥

शब्दार्थ—

दशचन्द्रम्	२.	दश चन्द्राकार की	सोमः	७.	चन्द्रमा ने
असिम्	३.	तलवार	अमृतमयान्	८.	अमृतमय
रुद्रः	१.	भगवान् रुद्र ने	अश्वान्	९.	घोड़े (और)
शतचन्द्रम्	६.	सौ चन्द्राकार की ढाल	त्वष्टा	१०.	विश्वकर्मा ने
तथा	४.	तथा	रूप आश्रयम्	११.	सुन्दर
अम्बिका ।	५.	अम्बिका	रथम् ॥	१२.	रथ (दिया)

श्लोकार्थ—भगवान् रुद्र ने दश चन्द्राकार की तलवार तथा अम्बिका ने सौ चन्द्राकार ढाल, चन्द्रमा ने अमृतमय घोड़े और विश्वकर्मा ने सुन्दर रथ दिया ॥

अष्टादशः श्लोकः

अग्निराजगवं चापं सूर्यो रश्मिमयानिषून् ।
भूः पादुके योगमय्यौ द्यौः पुष्पावलिमन्वहम् ॥१८॥

पदच्छेद—

अग्निः आजगवम् चापम् सूर्यः रश्मिमयान् इषून् ।
भूः पादुके योगमय्यौ द्यौः पुष्पावलिम् अन्वहम् ॥

शब्दार्थ—

अग्निः	१.	अग्निदेव ने	भूः	७.	पृथ्वी ने
आजगवम्	२.	बकरे और गौ के सींग का	पादुके	९.	पादुकायें (और)
चापम्	३.	धनुष	योगमय्यौ	८.	योगमयो सिद्ध
सूर्यः	४.	सूर्य ने	द्यौः	१०.	आकाश के देवता ने
रश्मिमयान्	५.	तेजो मय	पुष्पावलिम्	१२.	पुष्पों की माला प्रदान की
इषून् ।	६.	बाण	अन्वहम् ॥	११.	नित्य नूतन

श्लोकार्थ—अग्निदेव ने बकरे और गौ के सींग का धनुष, सूर्य ने तेजोमय बाण, पृथ्वी ने योगमयी सिद्ध पादुकायें और आकाश के देवता ने नित्य नूतन पुष्पों की माला भेंट की ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नाट्यं सुगीतं वादित्रमन्तर्धानं च खेचराः ।
ऋषयश्चाशिषः सत्याः समुद्रः शङ्खमात्मजम् ॥१९॥

पदच्छेद—

नाट्यम् सुगीतम् वादित्रम् अन्तर्धानम् च खेचराः ।
ऋषयः च आशिषः सत्याः समुद्रः शङ्खम् आत्मजम् ॥

शब्दार्थ—

नाट्यम्	२. अभिनय	ऋषयः	७. ऋषियों ने
सुगीतम्	३. गाने	च	१०. तथा
वादित्रम्	४. बजाने	आशिषः	९. आशीर्वाद
अन्तर्धानम्	६. अन्तर्धान होने की शक्तियाँ	सत्याः	८. अमोघ
च	५. और	समुद्रः	११ समुद्र ने
खेचराः ।	१. आकाशचारी सिद्ध गन्धर्वों ने	शङ्खम्	१३. शंख (दिया)
		आत्मजम् ॥	१२. अपने से उत्पन्न हुआ

श्लोकार्थ—आकाशचारी सिद्ध गन्धर्वों ने अभिनय, गाने, बजाने और अन्तर्धान होने की शक्तियाँ और ऋषियों ने अमोघ आशीर्वाद तथा समुद्र ने अपने से उत्पन्न शंख दिया ॥

विंशः श्लोकः

सिन्धवः पर्वता नद्यो रथवीथीर्महात्मनः ।
सूतोऽथ मागधो वन्दी तं स्तोतुमुपतस्थिरे ॥२०॥

पदच्छेद—

सिन्धवः पर्वताः नद्यः रथवीथीः महात्मनः ।
सूतः अथ मागधः वन्दी तम् स्तोतुम् उपतस्थिरे ॥

शब्दार्थ—

सिन्धवः	१. सातों समुद्र	सूतः	८. सूत
पर्वताः	२. पर्वत (और)	अथ	७. इसके पश्चात्
नद्यः	३. नदियों ने	मागधः	९. मागध (और)
रथ	५. रथ के लिये	वन्दी	१०. वन्दीजन
वीथीः	६. बेरोक-टोक मार्ग (दिये)	तम् स्तोतुम्	११. उनकी स्तुति करने के लिये
महात्मनः ।	४. महात्मा पृथु के	उपतस्थिरे ॥	१२. उपस्थित हुये

श्लोकार्थ—सातों समुद्र, पर्वत और नदियों ने महात्मा पृथु के रथ के लिये बे रोक-टोक मार्ग दिये । इसके पश्चात् सूत, मागध और बन्दीजन, उनकी स्तुति करने के लिये उपस्थित हुये ॥

एकविंशः श्लोकः

स्तावकांस्तानभिप्रेत्य पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् ।
मेघनिर्ह्रादया वाचा प्रहसन्निदमब्रवीत् ॥२१॥

पदच्छेद— स्तावकान् तान् अभिप्रेत्य पृथुः वैन्यः प्रतापवान् ।
मेघ निर्ह्रादया वाचा प्रहसन् इदम् अब्रवीत् ॥

शब्दार्थ—

स्तावकान्	१.	उनकी स्तुति करने वाले	मेघ	८.	मेघ के समान
तान्	२.	उन सूत मागधों का	निर्ह्रादया	९.	गम्भीर
अभिप्रेत्य	३.	आशय समझकर	वाचा	१०.	वाणी में
पृथुः	६.	महाराज पृथु ने	प्रहसन्	७.	हंसते हुये
वैन्यः	५.	वेन कुमार	इदम्	११.	यह
प्रतापवान् ।	४.	परम प्रतापी	अब्रवीत् ॥	१२.	कहा

श्लोकार्थ—उनकी स्तुति करने वाले उन सूत मागधों का आशय समझ कर परम प्रतापी वेन कुमार महाराज पृथु ने हंसते हुये मेघ के समान गम्भीर वाणी में यह कहा ॥

द्वाविंशः श्लोकः

भोः सूत हे मागध सौम्य वन्दिँल्लोकेऽधुनास्पष्टगुणस्य मे स्यात् ।
किमाश्रयो मे स्तव एष योज्यतां मा मय्यभूवन् वितथा गिरो वः ॥२२॥

पदच्छेद— भोः सूत हे मागध सौम्य वन्दिन् लोके अधुना अस्पष्ट गुणस्य मे स्यात् ।
आश्रयः मे स्तवः एषः योज्यताम् मा मयि अभूवन् वितथाः गिरः वः ॥

शब्दार्थ—

भोः सूत	२.	हे सूत	आश्रयः	१२.	लेकर
हे मागध	३.	हे मागध	मे	१३.	मेरी
सौम्य	१.	साधु स्वभाव	स्तवः	१५.	स्तुति
वन्दिन्	४.	हे वन्दिजन	एष	१४.	यह
लोके	५.	संसार में	योज्यताम्	१६.	कर रहे हैं
अधुना	६.	अभी तक	मा	२१.	नहीं
अस्पष्ट	९.	प्रकट नहीं	मयि	१७.	मेरे विषय में
गुणस्य	८.	कोई भी गुण	अभूवन्	२२.	होनी चाहिये
मे	७.	मेरा	वितथाः	२०.	व्यर्थ
स्यात् ।	१०.	हुआ है (अतः)	गिरः	१९.	वाणी
किम्	११.	किन गुणों को	वः ॥	१८.	तुम्हारी

श्लोकार्थ—साधु स्वभाव हे सूत, हे मागध, हे वन्दिजन ! संसार में अभी तक मेरा कोई भी गुण प्रकट नहीं हुआ है। अतः किन गुणों को लेकर मेरी यह स्तुति कर रहे हैं। मेरे विषय में तुम्हारी वाणी व्यर्थ नहीं होनी चाहिये ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

तस्मात्परोक्षेऽस्मदुपश्रुतान्यलंकरिष्यथ स्तोत्रमपीच्यवाचः ।
सत्युत्तमश्लोकगुणानुवादे जुगुप्सितं न स्तवयन्ति सभ्याः ॥२३॥

पदच्छेद— तस्मात् परोक्षे अस्मद् उपश्रुतानि अलंकरिष्यथ स्तोत्रम् अपीच्य वाचः ।
सति उत्तमश्लोक गुण अनुवादे जुगुप्सितम् न स्तवयन्ति सभ्याः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	सति	१२.	रहते
परोक्षे	४.	कालान्तर में	उत्तश्लोक	९.	पवित्र कीर्ति श्री हरि के
अस्मद्	५.	(जब) मेरे	गुण	१०.	सुन्दर गुणों को
उपश्रुतानि	६.	गुण (प्रकट हो जांय)	अनुवादे	११.	स्तुति के
अलंकरिष्यथ	८.	कर लेना	जुगुप्सितम्	१४.	तुच्छ मनुष्यों की
स्तोत्रम्	७.	तब स्तुति	न	१५.	नहीं
अपीच्य	२.	मधुर	स्तवयन्ति	१६.	स्तुति किया करते
वाचः ।	३.	भाषी हे वन्दिजनों	सभ्याः ॥	१३.	शिष्ट पुरुष

श्लोकार्थ—इसलिये मधुर भाषी हे वन्दिजनों ! कालान्तर में जब मेरे गुण प्रकट हो जांय तब स्तुति कर लेना । पवित्र-कीर्ति भगवान् श्री हरि के सुन्दर गुणों की स्तुति के रहते शिष्ट पुरुष तुच्छ मनुष्यों की स्तुति नहीं किया करते ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

महद्गुणानात्मनि कर्तुमीशः कः स्तावकैः स्तावयतेऽसतोऽपि ।
तेऽस्याभविष्यन्निति विप्रलब्धो जनावहासं कुमतिर्न वेद ॥२४॥

पदच्छेद— महद् गुणान् आत्मनि कर्तुम् ईशः कः स्तावकैः स्तावयते असतः अपि ।
ते अस्य अभविष्यन् इति विप्रलब्धः जन अवहासम् कुमतिः न वेद ॥

शब्दार्थ—

महद्	१.	महान्	ते अस्य	१०.	वे-वे गुण इसमें
गुणान्	२.	गुणों को	अभविष्यन्	११.	हो जायेंगे
आत्मनि	३.	स्वयं	इति	१२.	ऐसी स्तुति तो
कर्तुम्	४.	धारण करने में	विप्रलब्धः	१३.	मनुष्य की वञ्चना है
ईशः	५.	समर्थ होने पर (भी)	जन	१४.	इस प्रकार लोग
कः	६.	ऐसा कौन होगा जो	अवहासम्	१८.	उसका अवहास करते हैं
स्तावकैः	९.	स्तुति करने वालों द्वारा	कुमति	१५.	वह मन्दमति
स्तावयते	८.	अपनी स्तुति करायेगा	न	१६.	यह नहीं
असतः अपि ।	७.	उनके न रहने पर भी	वेद ॥	१७.	जानता (कि)

श्लोकार्थ— महान् गुणों को स्वयं धारण करने में समर्थ होने पर भी ऐसा कौन होगा जो उनके न रहने पर भी स्तुति करने वालों के द्वारा अपनी स्तुति करायेगा । वे-वे गुण इसमें हो जायेंगे, ऐसी स्तुति तो मनुष्य की वञ्चना है । वह मन्दमति यह नहीं जानता कि इस प्रकार लोग उसका उपहास करते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

प्रभवो ह्यात्मनः स्तोत्रं जुगुप्सन्त्यपि विश्रुताः ।
ह्रीमन्तः परमोदाराः पौरुषं वा विगर्हितम् ॥२५॥

पदच्छेद—

प्रभवः हि आत्मनः स्तोत्रम् जुगुप्सन्ति अपि विश्रुताः ।
ह्रीमन्तः परम उदाराः पौरुषम् वा विगर्हितम् ॥

शब्दार्थ—

प्रभवः	९.	समर्थ पुरुष	ह्रीमन्तः	१.	जिस प्रकार लज्जाशील
हि	७.	उसी प्रकार	परम	२.	अत्यन्त
आत्मनः	१०.	अपनी	उदाराः	३.	उदार पुरुष
स्तोत्रम्	११.	स्तुति को	पौरुषम्	५	पराक्रम की चर्चा
जुगुप्सन्ति	१३.	निन्दित मानते हैं	वा	६.	बुरी समझते हैं
अपि	१२.	भी	विगर्हितम् ॥	४.	(अपने) निन्दित
विश्रुताः ।	८.	लोक विख्यात			

श्लोकार्थ—जिस प्रकार लज्जाशील अत्यन्त उदार पुरुष अपने निन्दित पराक्रम की चर्चा बुरी समझते हैं उसी प्रकार लोकविख्यात समर्थ पुरुष अपनी स्तुति को भी निन्दित मानते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

वयं त्वविदिता लोके सूताद्यापि वरीमभिः ।
कर्मभिः कथमात्मानं गापयिष्याम बालवत् ॥२६॥

पदच्छेद—

वयम् तु अविदिताः लोके सूत अद्यापि वरीमभिः ।
कर्मभिः कथम् आत्मानम् गापयिष्यामः बाल वत् ॥

शब्दार्थ—

वयम्	३.	हम	वरीमभिः ।	४.	अपने श्रेष्ठ
तु	८.	ही हैं (अतः)	कर्मभिः	५.	कर्मों के द्वारा
अविदिताः	७.	अप्रसिद्ध	कथम्	१०.	कैसे
लोके	६	संसार में	आत्मानम्	११.	अपनी कीर्ति का
सूत	१.	हे सूतगण	गापयिष्यामः	१२.	गान करावें
अद्यापि	२.	अभी	बाल वत् ॥	९.	बच्चों के समान

श्लोकार्थ—हे सूतगण ! अभी हम अपने श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा संसार में अप्रसिद्ध ही हैं । अतः बच्चों के समान कैसे अपनी कीर्ति का गान करावें ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पृथुचरिते पञ्चदशः अध्यायः ॥१५॥

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति ब्रुवाणं नृपतिं गायका मुनिचोदिताः ।
तुष्टुवुस्तुष्टमनसस्तद्वागमृतसेवया ॥१॥

पदच्छेद— इति ब्रुवाणम् नृपतिम् गायकाः मुनि चोदिताः ।
तुष्टुवुः तुष्ट मनसः तद् वाक् अमृत सेवया ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	(जब) इस प्रकार	तुष्टुवः	१३.	उनकी स्तुति करने लगे
ब्रुवाणाम्	३.	कहा (तब)	तुष्ट	९.	बड़े प्रसन्न हुये
नृपतिम्	१.	महाराज पृथु ने	मनसः	४.	मन से
गायकाः	८.	सूत आदि गायक	तद् वाक्	५.	उनके वचन
मुनि	१०	(फिर) वे मुनियों की	अमृत	६.	अमृत का
चोदिताः ।	११.	प्रेरणा से	सेवया ॥	७.	आस्वादन करके

श्लोकार्थ—महाराज पृथु ने जब इस प्रकार कहा तब मन से उनके वचन अमृत का आस्वादन करके सूत आदि गायक बड़े प्रसन्न हुये, फिर वे मुनियों की प्रेरणा से उनकी स्तुति करने लगे ॥

द्वितीयः श्लोकः

नालं वयं ते महिमानुवर्णने यो देववर्योऽवततार मायया ।
वेनाङ्गजातस्य च पौरुषाणि ते वाचस्पतीनामपि बभ्रमुर्धियः ॥२॥

पदच्छेद— न अलम् वयम् ते महिमा अनुवर्णने यः देववर्य अवततार मायया ।
वेन अङ्ग जातस्य च पौरुषाणि ते, वाचस्पतीनाम् अपि बभ्रमुः धियः ॥

शब्दार्थ—

न	९.	नहीं है	वेन अङ्ग	११.	राजा वेन के मृतशरीर से
अलम्	८.	समर्थ	जातस्य	१२.	उत्पन्न हुये हैं
वयम् ते	५.	हम आपकी	च	१०.	यद्यपि (आप)
महिमा	६.	महिमा	पौरुषाणि	१४.	पौरुषों का वर्णन करने में
अनुवर्णने	७.	वर्णन करने में	ते	१३.	फिर भी आपके
यः	२.	जो (अपनी)	वाचस्पतीनाम्	१५.	ब्रह्मा जी की
देववर्यः	१.	आप देवताओं में प्रधान नारायण ही हैं	अपि	१७.	भी
अवततार	४.	अवतीर्ण हुए हैं	बभ्रमुः	१८.	चकरा जाती है
मायया ।	३.	माया से	धियः ॥	१६.	बुद्धि

श्लोकार्थ—आप देवताओं में प्रधान नारायण ही हैं, जो अपनी माया से अवतीर्ण हुए हैं। हम आपकी महिमा का वर्णन करने में समर्थ नहीं है। यद्यपि आप राजा वेन के मृत शरीर से उत्पन्न हुये हैं। फिर भी आपके पौरुषों का वर्णन करने में ब्रह्मा जी की बुद्धि चकरा जाती है ॥

तृतीयः श्लोकः

अथाप्युदारश्रवसः पृथोर्हरेः कलावतारस्य कथामृतादृताः।
यथोपदेशं मुनिभिः प्रचोदिताः श्लाघ्यानि कर्माणि वयं वितन्महि ॥३॥

पदच्छेद—अथापि उदार श्रवसः पृथोः हरेः कला अवतारस्य कथा अमृत आदृताः।
यथाउपदेशम् मुनिभिः प्रचोदिताः श्लाघ्यानि कर्माणि वयम् वितन्महि ॥

शब्दार्थ—

अथापि	१.	तथापि	आदृताः।	५.	आदर करके
उदार	१८.	बड़ी विशाल है	यथा	८.	अनुसार
श्रवसः	१७.	आपकी कीर्ति	उपदेशम्	७.	उपदेश के
पृथोः	२.	आप महाराज पृथु की	मुनिभिः	६.	मुनियों के
हरेः	१४.	आप साक्षात् श्री हरि के	चोदिताः	९.	उन्हीं की प्रेरणा से
कला	१५.	अंश	श्लाघ्यानि	११.	परम प्रशंसनीय
अवतारस्य	१६.	अवतार हैं (और)	कर्माणि	१२.	कर्मों का
कथा	३.	कथा	वयम्	१०.	हम (आपके)
अमृत	४.	सुधा के पान में	वितन्महि ॥	१३.	कुछ विस्तार करना चाहते हैं

श्लोकार्थ—तथापि आप महाराज पृथु की कथा-सुधा के पान में आदर करके मुनियों के उपदेश के अनुसार उन्हीं की प्रेरणा से हम आपके परम प्रशंसनीय कर्मों का कुछ विस्तार करना चाहते हैं। आप साक्षात् श्री हरि के अंश अवतार हैं और आपकी कीर्ति बड़ी विशाल है॥

चतुर्थः श्लोकः

एष धर्मभृतां श्रेष्ठो लोकं धर्मेऽनुवर्तयन्।
गोप्ता च धर्मसेतूनां शास्ता तत्परिपन्थिनाम् ॥४॥

पदच्छेद—

एषः धर्म भृताम् श्रेष्ठः लोकम् धर्मे अनुवर्तयन्।
गोप्ता च धर्म सेतूनाम् शास्ता तत् परिपन्थिनाम् ॥

शब्दार्थ—

एषः	१.	ये	गोप्ता	१०.	रक्षा करेंगे
धर्म	२.	धर्म	च	११.	और
भृताम्	३.	धारियों	धर्म	८.	धर्म के
श्रेष्ठः	४.	श्रेष्ठ महाराज पृथु	सेतूनाम्	९.	मर्यादा की
लोकम्	५.	संसार को	शास्ता	१४.	दण्ड देंगे
धर्मे	६.	धर्म में	तत्	१२.	उसके
अनुवर्तयन्।	७.	प्रवृत्त करके	परिपन्थिनाम्॥	१३.	विरोधियों को

श्लोकार्थ—ये धर्मधारियों में श्रेष्ठ महाराज पृथु संसार को धर्म में प्रवृत्त करके धर्म के मर्यादा की रक्षा करेंगे और उसके विरोधियों को दण्ड देंगे॥

पञ्चमः श्लोकः

एष वै लोकपालानां बिभर्त्येकस्तनौ तनूः ।
काले काले यथाभागं लोकयोरुभयोर्हितम् ॥५॥

पदच्छेद—

एषः वै लोकपालानाम् बिभर्ति एकः तनौ तनूः ।
काले-काले यथा भागम् लोकयोः उभयोः हितम् ॥

शब्दार्थ—

एषः	१. ये	कले	४. समय
वै	३. ही	काले	५. समय पर
लोकपालानाम्	७ लोक पालों की	यथा	११. व्यवस्था करके
बिभर्ति	९. धारण करेंगे (तथा)	भागम्	१०. यज्ञादि और वृष्टि आदि की
एकः	२. अकेले	लोकयोः	१३. लोकों का
तनौ	६. अपने शरीर में	उभयोः	१२. स्वर्ग और भू इन दोनों का
तनूः ।	८. भिन्न-भिन्न मूर्ति को	हितम् ॥	१४. कल्याण करेंगे

श्लोकार्थ—ये अकेले ही समय-समय पर अपने शरीर में लोकपालों की भिन्न-भिन्न मूर्ति को धारण करेंगे तथा यज्ञादि और वृष्टि आदि की व्यवस्था करके स्वर्ग और भू इन दोनों लोकों का कल्याण करेंगे ॥

षष्ठः श्लोकः

वसु काल उपादत्ते काले चायं विमुञ्चति ।
समः सर्वेषु भूतेषु प्रतपन् सूर्यवद्विभुः ॥६॥

पदच्छेद—

वसु काल उपादत्ते काले च अयम् विमुञ्चति ।
समः सर्वेषु भूतेषु प्रतपन् सूर्यवत् विभुः ॥

शब्दार्थ—

वसु	९. (जनता से) कर	समः	५. समदर्शी
काल	८. समय पर	सर्वेषु	३. सभी
उपादत्ते	१०. लेंगे	भूतेषु	४. प्राणियों के प्रति
काले	१२. समय पर	प्रतपन्	६. प्रतापी और
च	११. तथा उस	सूर्यवत्	२. सूर्य के समान
अयम्	१. ये	विभुः ॥	७. महिमाशाली (होंगे)
विमुञ्चति ।	१३. प्रजाहित में व्यय करेंगे		

श्लोकार्थ—ये सूर्य के समान सभी प्राणियों के प्रति समदर्शी, प्रतापी और महिमाशाली होंगे । समय पर जनता से कर लेंगे तथा उसे समय पर प्रजाहित में व्यय करेंगे ॥

सप्तमः श्लोकः

तितिक्षत्यक्रमं वैन्य उपर्याक्रमतामपि ।
भूतानां करुणः शश्वदार्तानां क्षितिवृत्तिमान् ॥७॥

पदच्छेद—

तितिक्षति अक्रमम् वैन्यः उपरि आक्रमताम् अपि ।
भूतानाम् करुणः शश्वद् आर्तानाम् क्षिति वृत्तिमान् ॥

शब्दार्थ—

तितिक्षति	१२.	सहन करेंगे	भूतानाम्	८.	प्राणी के
अक्रमम्	९.	अनुचित व्यवहार को	करुणः	३.	(ये) दयालु
वैन्यः	४.	वैन्य	शश्वद्	११.	सदा
उपरि	५.	अपने मस्तक पर	आर्तानाम्	७.	(उस) दीन
आक्रमताम्	६.	पैर रखने वाले	क्षिति	१.	पृथ्वी के समान
अपि ।	१०.	भी	वृत्तिमान् ॥	२.	व्यवहार करने वाले

श्लोकार्थ—पृथ्वी के समान व्यवहार करने वाले ये दयालु वैन्य अपने मस्तक पर पैर रखने वाले उस दीन प्राणी के अनुचित व्यवहार को भी सदा सहन करेंगे ॥

अष्टमः श्लोकः

देवेऽवर्षत्यसौ देवो नरदेववपुर्हरिः ।
कृच्छ्रप्राणाः प्रजा ह्येष रक्षिष्यत्यञ्जसेन्द्रवत् ॥८॥

पदच्छेद—

देवे अवर्षति असौ देवः नरदेव वपुः हरिः ।
कृच्छ्रप्राणाः प्रजाः हि एषः रक्षिष्यति अञ्जसा इन्द्रवत् ॥

शब्दार्थ—

देवे	१.	जब देव	कृच्छ्र	६.	संकट में पड़ जायेंगे
अवर्षति	२.	वर्षा नहीं करेंगे	प्राणाः	५.	प्राण
असौ	१०.	वे	प्रजाः	४.	प्रजा के
देवः	१२.	महाराज पृथु	हि	३.	और
नरदेव	७.	(तब) राजा	एषः	११.	ये
वपुः	८.	वेशधारी	रक्षिष्यति	१५.	रक्षा करेंगे
हरिः ।	९.	संकट-हारी	अञ्जसा	१४.	सहज में (सबकी)
			इन्द्रवत् ॥	१३.	इन्द्र के समान वर्षा करके

श्लोकार्थ—जब देव वर्षा नहीं करेंगे और प्रजा के प्राण संकट में पड़ जायेंगे, तब राजा वेशधारी, संकटहारी वे ये महाराज पृथु इन्द्र के समान वर्षा करके सहज में सबकी रक्षा करेंगे ॥

नवमः श्लोकः

आप्याययत्यसौ लोकं वदनामृतमूर्तिना।
सानुरागावलोकेन विशदस्मितचारुणा ॥९॥

पदच्छेद— आप्याययति असौ लोकम् वदन अमृत मूर्तिना ।
स अनुराग अवलोकेन विशद स्मित चारुणा ॥

शब्दार्थ—

आप्याययति	१०.	आनन्दमग्न कर देंगे	स अनुराग	७.	प्रेम भरी
असौ	१.	वे	अवलोकेन	८.	चितवन से
लोकम्	९.	सभी लोगों को	विशद	२.	मधुर
वदन	५.	(अपने) मुख	स्मित	३.	मुसकान से
अमृत मूर्तिना ।	६.	चन्द्र और	चारुणा ॥	४.	मनोहर

श्लोकार्थ—वे मधुर मुसकान से मनोहर अपने मुख चन्द्र और प्रेम भरी चितवन से सभी लोगों को आनन्द-मग्न कर देंगे ॥

दशमः श्लोकः

अव्यक्तवर्त्मैष निगूढकार्यो गम्भीरवेधा उपगुप्तवित्तः ।
अनन्तमाहात्म्यगुणैकधामा पृथुः प्रचेता इव संवृतात्मा ॥१०॥

पदच्छेद— अव्यक्त वर्त्मा एषः निगूढ कार्यः गम्भीर वेधाः उपगुप्त वित्तः ।
अनन्त माहात्म्य गुण एक धामा पृथुः प्रचेताः इव संवृत आत्मा ॥

शब्दार्थ—

अव्यक्त	६.	अज्ञात	अनन्त	१४.	अगणित
वर्त्मा	७.	गति वाले	माहात्म्य	१५.	महिमा (और)
एषः	४.	ये महाराज	गुण	१६.	सद्गुणों के
निगूढ	८.	छिपे रूप से	एक	१७.	एक मात्र
कार्यः	९.	कार्य करने वाले (तथा)	धामा	१८.	आश्रय (होंगे)
गम्भीर	१०.	सम्पूर्ण	पृथुः	५.	पृथु
वेधाः	११.	लक्ष्य सिद्धि पाने वाले	प्रचेताः	१.	वरुण के
उपगुप्त	१२.	सुरक्षित	इव	२.	समान
वित्तः ।	१३.	धन वाले	संवृत आत्मा ॥	३.	मनस्वी

श्लोकार्थ—वरुण के समान मनस्वी ये महाराज पृथु अज्ञात गति वाले, छिपे रूप से कार्य करने वाले, सम्पूर्ण लक्ष्य सिद्धि पाने वाले, सुरक्षित धन वाले, तथा अगणित महिमा और सद्गुणों के एक मात्र आश्रय होंगे ॥

एकादशः श्लोकः

दुरासदो दुर्विषह आसन्नोऽपि विदूरवत् ।
नैवाभिभवितुं शक्यो वेनारण्युत्थितोऽनलः ॥११॥

पदच्छेद—

दुरासदः दुर्विषहः आसन्नः अपि विदूरवत् ।
न एव अभिभवितुम् शक्यः वेन अरणि उत्थितः अनलः ॥

शब्दार्थ—

दुरासदः	५.	(शत्रुओं के लिये) दुर्धर्ष	अभिभवितुम्	१०.	(शत्रु कभी इन्हें) हरा
दुर्विषहः	६.	दुःसह होंगे	शक्यः	१२.	सकेंगे
आसन्नः	७.	(ये उनके) समीप रहने पर	वेन	१.	(महाराज पृथु) वेनरूप
अपि	८.	भी (सुरक्षा के कारण)	अरणि	२.	अरणि के (मन्थन से)
विदूरवत् ।	९.	दूर रहने वाले से (होंगे)	उत्थितः	३.	प्रकट हुये
न एव	११.	नहीं	अनलः ॥	४.	अग्नि के समान

श्लोकार्थ—महाराज ! पृथु वेन रूप अरणि के मन्थन से प्रकट हुये अग्नि के समान शत्रुओं के लिये दुर्धर्ष, दुःसह होंगे । ये उनके समीप रहने पर भी सुरक्षा के कारण दूर रहने वाले से होंगे, शत्रु कभी इन्हें हरा नहीं सकेंगे ।

द्वादशः श्लोकः

अन्तर्बहिश्च भूतानां पश्यन् कर्माणि चारणैः ।
उदासीन इवाध्यक्षो वायुरात्मेव देहिनाम् ॥१२॥

पदच्छेद—

अन्तः बहिः च भूतानाम् पश्यन् कर्माणि चारणैः ।
उदासीनः इव अध्यक्षः वायुः आत्मा इव देहिनाम् ॥

शब्दार्थ—

अन्तः	८.	गुप्त	उदासीनः	१३.	उदासी
बहिः	१०.	प्रकट	इव	१४.	से (रहेंगे)
च	९.	और	अध्यक्षः	२.	(रहने वाला) द्रष्टा
भूतानाम्	७.	प्राणियों के	वायुः	३.	प्राण रूप
पश्यन्	१२.	देखते हुये	आत्मा	४.	सूत्रात्मा के
कर्माणि	११.	सभी व्यवहारों को	इव	५.	समान वे
चारणैः ।	६	गुप्तचरों के द्वारा	देहिनाम् ॥	१.	प्राणियों के (भीतर)

श्लोकार्थ—प्राणियों के भीतर रहने वाला द्रष्टा प्राण रूप सूत्रात्मा के समान ये गुप्तचरों के द्वारा प्राणियों के गुप्त और प्रकट सभी व्यवहारों को देखते हुये उदासीन से रहेंगे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

नादण्ड्यं दण्डयत्येष सुतमात्मद्विषामपि ।
दण्डयत्यात्मजमपि दण्ड्यं धर्मपथे स्थितः ॥१३॥

पदच्छेद—

न अदण्ड्यम् दण्डयति एषः सुतम् आत्मद्विषाम् अपि ।
दण्डयति आत्मजम् अपि दण्ड्यम् धर्म पथे स्थितः ॥

शब्दार्थ—

न	९.	नहीं	दण्डयति	१४.	दण्ड देंगे
अदण्ड्यम्	८.	दण्डनीय होने पर	आत्मजम्	१२.	अपने पुत्र को
दण्डयति	१०.	दण्ड देंगे (और)	अपि	१३.	भी
एषः	१.	ये महाराज	दण्ड्यम्	११.	दण्डनीय होने पर
सुतम्	६.	पुत्र को	धर्म	२.	धर्म के
आत्मद्विषाम्	५.	अपने शत्रुओं के	पथे	३.	मार्ग में
अपि।	७.	भी	स्थितः ॥	४.	स्थित रहकर

श्लोकार्थ—ये महाराज धर्म के मार्ग में स्थित रहकर अपने शत्रुओं के पुत्र को भी दण्डनीय न होने पर दण्ड नहीं देंगे और दण्डनीय होने पर अपने पुत्र को भी दण्ड देंगे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

अस्याप्रतिहतं चक्रं पृथोरामानसाचलात् ।
वर्तते भगवानर्को यावत्तपति गोगणैः ॥१४॥

पदच्छेद—

अस्य अप्रतिहतम् चक्रम् पृथोः आमानस अचलात् ।
वर्तते भगवान् अर्कः यावत् तपति गो गणैः ॥

शब्दार्थ—

अस्य	८.	(उसमें) इन	वर्तते	१२.	रहेगा
अप्रतिहतम्	१०.	निष्कण्टक	भगवान्	१.	भगवान्
चक्रम्	११.	राज्य	अर्कः	२.	सूर्य
पृथोः	९.	महाराज पृथु का	यावत्	५.	जितने प्रदेश को
आमानस	३.	हिमालय	तपति	७.	प्रकाशित करते हैं
अचलात् ।	४.	पर्वत तक	गो गणैः ॥	६.	अपनी किरणों से

श्लोकार्थ—भगवान् सूर्य हिमालय पर्वत तक जितने प्रदेश को अपनी किरणों से प्रकाशित करते हैं, उस सम्पूर्ण क्षेत्र में इन महाराज पृथु का निष्कण्टक राज्य रहेगा ॥

पञ्चदशः श्लोकः

रञ्जयिष्यति यल्लोकमयमात्मविचेष्टितैः ।
अथामुमाहू राजानं मनोरञ्जनकैः प्रजाः ॥१५॥

पदच्छेद—

रञ्जयिष्यति यत् लोकम् अयम् आत्म विचेष्टितैः ।
अथ अमुम् आहुः राजानम् मनोरञ्जनकैः प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

रञ्जयिष्यति	६. सुख पहुँचायेंगे	अथ	७.	इसलिये
यत्	१. क्योंकि	अमुम्	१०.	इन्हें
लोकम्	५. सब लोगों को	आहुः	१२.	कहेंगे
अयम्	२. ये महाराज	राजानम्	११.	राजा
आत्म	३. अपने	मनोरञ्जनकैः	८.	मनोरञ्जन करने के कारण
विचेष्टितैः ।	४. कार्यों से	प्रजाः ।।	९.	लोग

श्लोकार्थ—क्योंकि ये महाराज अपने कार्यों से सब लोगों को सुख पहुँचायेंगे । इसलिये मनोरञ्जन करने के कारण लोग इन्हें राजा कहेंगे ॥

षोडशः श्लोकः

दृढव्रतः सत्यसन्धो ब्रह्मण्यो वृद्धसेवकः ।
शरण्यः सर्वभूतानां मानदो दीनवत्सलः ॥१६॥

पदच्छेद—

दृढ व्रतः सत्य सन्धः ब्रह्मण्यः वृद्ध सेवकः ।
शरण्यः सर्व भूतानाम् मानदः दीन वत्सलः ॥

शब्दार्थ—

दृढ	२. सत्य प्रतिज्ञा करने वाले	शरण्यः	९.	शरणदाता
व्रतः	१. ये महाराज नियम के	सर्व	७.	सभी
सत्य सन्धः	३. पक्के	भूतानाम्	८.	प्राणियों के
ब्रह्मण्यः	४. ब्राह्मणों के रक्षक	मानदः	१०.	सबका सम्मान करने वाले
वृद्ध	५. गुरुजनों के	दीन	११.	(और) अनाथों पर
सेवकः ।	६. सेवक	वत्सलः ।।	१२.	स्नेह रखने वाले (होंगे)

श्लोकार्थ—ये महाराज नियम के पक्के, सत्य प्रतिज्ञा करने वाले, ब्राह्मणों के रक्षक, गुरुजनों के सेवक, सभी प्राणियों के शरणदाता, सबका सम्मान करने वाले और अनाथों पर स्नेह रखने वाले होंगें ॥

सप्तदशः श्लोकः

मातृभक्तिः परस्त्रीषु पत्न्यामर्धं इवात्मनः ।
प्रजासु पितृवत्स्निग्धः किङ्करो ब्रह्मवादिनाम् ॥१७॥

पदच्छेद—

मातृ भक्तिः पर स्त्रीषु पत्न्याम् अर्धः इव आत्मनः ।
प्रजासु पितृवत् स्निग्धः किङ्करः ब्रह्म वादिनाम् ॥

शब्दार्थ—

मातृ	३. माता का	आत्मनः ।	६. अपने
भक्तिः	४. भाव रखने वाले	प्रजासु	९. प्रजाओं पर
पर	१. (ये महाराज) दूसरी	पितृवत्	१०. पिता के समान
स्त्रीषु	२. स्त्रियों में	स्निग्धः	११. स्नेह रखने वाले
पत्न्याम्	५. धर्म पत्नी को	किङ्करः	१४. सेवक होंगे
अर्धः	७ आधे अंग के	ब्रह्म	१२. (तथा) वेद
इव	८. समान (मानने वाले)	वादिनाम् ॥	१३. पाठियों के

श्लोकार्थ—ये महाराज दूसरी स्त्रियों में माता का भाव रखने वाले, धर्म पत्नी को अपने आधे अङ्ग के समान मानने वाले, प्रजाओं पर पिता के समान स्नेह रखने वाले, तथा वेद पाठियों के सेवक होंगे ॥

अष्टादशः श्लोकः

देहिनामात्मवत्प्रेष्ठः सुहृदां नन्दिवर्धनः ।
मुक्तसङ्गप्रसङ्गोऽयं दण्डपाणिरसाधुषु ॥१८॥

पदच्छेद—

देहिनाम् आत्मवत् प्रेष्ठः सुहृदाम् नन्दि वर्धनः ।
मुक्त सङ्ग प्रसङ्गः अयम् दण्डपाणिः असाधुषु ॥

शब्दार्थ—

देहिनाम्	२. प्राणियों को	मुक्त	९. रहित महात्माओं की
आत्मवत्	३. अपनी आत्मा के समान	सङ्ग	८. संसार की आसक्ति से
प्रेष्ठः	४. अत्यन्त प्रिय लगने वाले	प्रसङ्ग	१०. सत्संगति करने वाले (और)
सुहृदाम्	५. मित्रों का	अयम्	१. ये महाराज
नन्दि	६. आनन्द	दण्डपाणिः	१२. यम के समान दण्ड देने वाले होंगे
वर्धनः ।	७. बढ़ाने वाले	असाधुषु ॥	११. दुष्टों को

श्लोकार्थ—ये महाराज प्राणियों को अपनी आत्मा के समान अत्यन्त प्रिय लगने वाले, मित्रों का आनन्द बढ़ाने वाले, संसार की आसक्ति से रहित महात्माओं की सत्संगति करने वाले और दुष्टों को यम के समान दण्ड देने वाले होंगे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अयं तु साक्षाद्भगवांस्त्र्यधीशः कूटस्थ आत्मा कलयावतीर्णः ।
यस्मिन्नविद्यारचितं निरर्थकं पश्यन्ति नानात्वमपि प्रतीतम् ॥१६॥

पदच्छेद— अयम् तु साक्षात् भगवान् त्रिअधीशः कूटस्थः आत्मा कलया अवतीर्णः ।
यस्मिन् अविद्या रचितम् निरर्थकम् पश्यन्ति नानात्वम् अपि प्रतीतम् ।।

शब्दार्थ—

अयम् तु	१.	ये महाराज तो	यस्मिन्	९.	जिनमें (विद्वान् लोग)
साक्षात्	४.	साक्षात्	अविद्या	१०.	माया से
भगवान्	६.	भगवान्	रचितम्	११.	निर्मित
त्रि अधीशः	५.	त्रिलोकी के स्वामी	निरर्थकम्	१५.	मिथ्या
कूटस्थः	७.	निर्विकार	पश्यन्ति	१६.	देखते हैं
आत्मा	८.	परमात्मा (हैं)	नानात्वम्	१२.	भेद को
कलया	२.	अंशरूप से	अपि	१४.	होने पर भी
अवतीर्णः	३.	अवतार लिये हुये	प्रतीतम् ।।	१३.	व्यवहार सत्य

श्लोकार्थ—ये महाराज तो अंशरूप से अवतार लिये हुये साक्षात् त्रिलोकी के स्वामी भगवान् निर्विकार परमात्मा हैं । जिनमें विद्वान् लोग माया से निर्मित भेद को व्यवहार सत्य होने पर भी मिथ्या देखते हैं ।।

विंशः श्लोकः

अयं भुवो मण्डलमोदयाद्रेर्गोप्तैकवीरो नरदेवनाथः ।
आस्थाय जैत्रं रथमात्तचापः पर्यस्यते दक्षिणतो यथार्कः ॥२०॥

पदच्छेद— अयम् भुवः मण्डलम् आ उदयाद्रेः गोप्ता एकवीरः नरदेव नाथः ।
आस्थाय जैत्रम् रथम् आत्त चापः पर्यस्यते दक्षिणतः यथा अर्कः ।।

शब्दार्थ—

अयम्	३.	ये	आस्थाय	१०.	चढ़कर
भुवः	६.	(समस्त) पृथ्वी	जैत्रम् रथम्	९.	(अपने) जयशील रथपर
मण्डलम्	७.	मण्डल की	आत्त	१२.	लिये हुये
आ उदयाद्रेः	५.	उदयाचल पर्यन्त	चापः	११.	हाथ में धनुष
गोप्ता	८.	रक्षा करेंगे (तथा)	पर्यस्यते	१६.	करेंगे
एकवीरः	४.	अद्वितीय वीर	दक्षिणतः	१५.	सर्वत्र प्रदक्षिण
नरदेव	१.	राजाओं में		१४.	समान
नाथः ।	२.	सम्राट्	अर्कः ।।	१३.	सूर्य के

श्लोकार्थ—राजाओं में सम्राट् ये अद्वितीय वीर उदयाचल पर्यन्त समस्त पृथ्वी मण्डल की रक्षा करेंगे तथा अपने जयशील रथपर चढ़कर हाथ में धनुष लिये हुये सूर्य के समान सर्वत्र प्रदक्षिण करेंगे ।।

एकविंशः श्लोकः

अस्मै नृपालाः किल तत्र तत्र बलिं हरिष्यन्ति सलोकपालाः ।
मंस्यन्त एषां स्त्रिय आदिराजं चक्रायुधं तद्यश उद्धरन्त्यः ॥२१॥

पदच्छेद— अस्मै नृपालाः किल तत्र तत्र बलिम् हरिष्यन्ति सलोकपालाः ।
मंस्यन्ते एषाम् स्त्रियः आदिराजम् चक्रआयुधम् तद् यशः उद्धरन्त्यः ॥

शब्दार्थ—

अस्मै	५. इन्हें	मंस्यन्ते	१४. समझेंगी
नृपालाः	४. भूपाल	एषाम्	८. तथा इनकी
किल	१. उस समय	स्त्रियः	९. स्त्रियाँ
तत्र-तत्र	२. वहाँ-वहाँ	आदिराजम्	१२. इन आदिराज को
बलिम्	६. भेंट	चक्रआयुधम्	१३. साक्षात् चक्रसुदर्शनधारी
हरिष्यन्ति	७. समर्पण करेंगे	तद् यशः	१० उनकी कीर्ति का
सलोकपालाः ।	३. सभी लोकपाल और	उद्धरन्त्यः ॥	११. गान करती हुई

श्लोकार्थ—उस समय वहाँ-वहाँ सभी लोकपाल और भूपाल इन्हें भेंट समर्पण करेंगे तथा इनकी स्त्रियाँ उनकी कीर्ति का गान करती हुई इन आदिराज को साक्षात् चक्र सुदर्शनधारी समझेंगी ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अयं महीं गां दुदुहेऽधिराजः प्रजापतिर्वृत्तिकरः प्रजानाम् ।
यो लीलयाद्रीन् स्वशरासकोट्या भिन्दन् समां गामकरोद्यथेन्द्रः ॥२२॥

पदच्छेद— यम् महीम् गाम् दुदुहे अधिराजः प्रजापतिः वृत्तिकरः प्रजानाम् ।
यः लीलया अद्रीन् स्वशरासकोट्या भिन्दन् समाम् गाम् अकरोत् यथा इन्द्रः ॥

शब्दार्थ—

अयम्	१. ये	यः लीलयाअद्रीन्	१२. खेल-खेल में, पर्वतों को
महीम्	७. पृथ्वी का	स्वशरासकोट्या	११. अपने धनुष के कोनों से
गाम्	६. गोरूप धारिणी	भिन्दन्	१३. तोड़कर
दुदुहे	८. दोहन करेंगे (तथा)	समाम्	१५. समतल
अधिराजः	२. राजाधिराज	गाम्	१४. पृथ्वी को
प्रजापतिः	३. प्रजापालक	अकरोत्	१६. करेंगे
वृत्तिकरः	५. जीवन निर्वाह के लिये	यथा	१०. समान
प्रजानाम् ।	४. प्रजा के	इन्द्रः ॥	९. इन्द्र के

श्लोकार्थ—ये राजाधिराज प्रजापालक, प्रजा के जीवन निर्वाह के लिये गोरूपधारिणी पृथ्वी का दोहन करेंगें तथा इन्द्र के समान अपने धनुष के कोनों से खेल-खेल में पर्वतों को तोड़कर पृथ्वी को समतल करेंगे ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

विस्फूर्जयन्नाजगवं धनुः स्वयं यदाचरत्क्ष्मामविषह्यमाजौ।
तदा निलिल्युर्दिशि दिश्यसन्तो लाङ्गूलमुद्यम्य यथा मृगेन्द्रः ॥२३॥

पदच्छेद—विस्फूर्जयन् आजगवम् धनुः स्वयम् यदा आचरत् क्ष्माम् अविषह्यम् आजौ।
तदा निलिल्युः दिशि-दिशि असन्तः लाङ्गूलम् उद्यम्य यथा मृगेन्द्रः ॥

शब्दार्थ—

विस्फूर्जयन्	१०.	टंकार करते हुये	तदा	१३.	तब
आजगवम् धनुः	९.	शार्ङ्ग धनुष की	निलिल्युः	१६.	छिप जायेंगे
स्वयम्	६.	वे स्वयम्	दिशि-दिशि	१५.	इधर-उधर
यदा	५.	जब	असन्तः	१४.	सारे दुष्टजन
आचरत्	१२.	घूमेंगे	लाङ्गूलम्	१.	जंगल में पूंछ
क्ष्माम्	११.	पृथ्वी पर	उद्यम्य	२.	उठाकर घूमते हुये
अविषह्यम्	८.	असह्य	यथा	४.	समान
आजौ।	७.	रणभूमि में	मृगेन्द्रः ॥	३.	सिंह के

श्लोकार्थ—जंगल में पूंछ उठाकर सिंह के समान जब ये स्वयम् रणभूमि में असह्य शार्ङ्ग धनुष की टंकार करते हुये पृथ्वी पर घूमेंगे, तब सारे दुष्टजन इधर-उधर छिप जायेंगे।

चतुर्विंशः श्लोकः

एषोऽश्वमेधाञ् शतमाजहार सरस्वती प्रादुरभावि यत्र।
अहार्षीद्यस्य हयं पुरन्दरः शतक्रतुश्चरमे वर्तमाने ॥२४॥

पदच्छेद— एषः अश्वमेधान् शतम् आजहार सरस्वती प्रादुरभावि यत्र।
अहार्षीत् यस्य हयम् पुरन्दरः शतक्रतुः चरमे वर्तमाने ॥

शब्दार्थ—

एषः	४.	ये महाराज	अहार्षीत्	१४.	चुरा ले जायेंगे
अश्वमेधान्	६.	अश्वमेध यज्ञ	यस्य	१२.	इनके
शतम्	५.	एक सौ	हयम्	१३.	घोड़े को
आजहार	७.	करेंगे (तथा)	पुरन्दरः	११.	इन्द्र
सरस्वती	२.	सरस्वती नदी	शतक्रतुः	१०.	एक मात्र सौ यज्ञकर्ता
प्रादुरभावि	३.	निकलती हैं (वहाँ)	चरमे	८.	अन्तिम
यत्र।	१.	जहाँ से	वर्तमाने ॥	९.	यज्ञानुष्ठान के समय

श्लोकार्थ—जहाँ से सरस्वती नदी निकली हैं, वहाँ ये महाराज एक सौ अश्वमेघ यज्ञ करेंगे तथा अन्तिम यज्ञानुष्ठान के समय एक मात्र सौ यज्ञकर्ता इन्द्र इन्द्र इनके घोड़े को चुरा ले जायेंगे॥

पञ्चविंशः श्लोकः

एष स्वसद्मोपवने समेत्य सनत्कुमारं भगवन्तमेकम् ।
आराध्य भक्त्या लभतामलं तज्ज्ञानं यतो ब्रह्म परं विदन्ति ॥२५॥

पदच्छेद— एषः स्व सद्म उपवने समेत्य सनतकुमारम् भगवन्तम् एकम् ।
आराध्य भक्त्या लभताम् अलम् तद् ज्ञानम् यतः ब्रह्म परम् विदन्ति ॥

शब्दार्थ—

एषः	१.	ये महाराज	भक्त्या	८.	भक्ति पूर्वक
स्व सद्म	२.	अपने महल के	लभताम्	१३.	प्राप्त करेंगे
उपवने	३.	बगीचे में	अलम्	११.	सम्पूर्ण
समेत्य	७.	प्राप्त करके (उनकी)	तद्	१०.	उस
सनतकुमारम्	६.	सनत्कुमार को	ज्ञानम्	१२.	ज्ञान को
भगवन्तम्	५.	भगवान्	यतः	१४.	जिससे
एकम् ।	४.	अकेले	ब्रह्म	१६.	ब्रह्म की
आराध्य	९.	सेवा से	परम्	१५.	पर
			विदन्ति ॥	१७.	प्राप्ति होती है

श्लोकार्थ—ये महाराज अपने महल के बगीचे में अकेले भगवान् सनत्कुमार को प्राप्त करके उनकी भक्ति पूर्वक सेवा से उस सम्पूर्ण ज्ञान को प्राप्त करेंगे, जिससे पर ब्रह्म की प्राप्ति होती है ॥

षड्विंशः श्लोकः

तत्र तत्र गिरस्तास्ता इति विश्रुतविक्रमः ।
श्रोष्यत्यात्माश्रिता गाथाः पृथुः पृथुपराक्रमः ॥२६॥

पदच्छेद— तत्र तत्र गिरः ताः-ताः इति विश्रुत विक्रमः ।
श्रोष्यति आत्म आश्रिताः गाथाः पृथुः पृथु पराक्रमः ॥

शब्दार्थ—

तत्र	७.	वहाँ	श्रोष्यति	१४.	सुनेंगे
तत्र	८.	वहाँ	आत्म	९.	अपने
गिरः	१३.	चर्चाओं को	आश्रिताः	१०.	विषय में
ताः-ताः	१२.	उन-उन	गाथाः	११.	कही जाती हुई
इति	१.	इस प्रकार (जब)	पृथुः	६.	(ये महाराज) पृथु
विश्रुत	३.	(जनता में) विख्यात हो जायेगा	पृथु	४.	(तब) परम
विक्रमः ।	२.	इनका पराक्रम	पराक्रमः ॥	५.	पराक्रमी

श्लोकार्थ—इस प्रकार जब इनका पराक्रम जनता में विख्यात हो जायेगा तब परम पराक्रमी ये महाराज पृथु वहाँ-वहाँ अपने विषय में कही जाती हुई उन-उन चर्चाओं को सुनेंगे ॥

सप्तविंशः श्लोकः

दिशो विजित्याप्रतिरुद्धचक्रः स्वतेजसोत्पादितलोकशल्यः ।
सुरासुरेन्द्रैरुपगीयमानमहानुभावो भविता पतिर्भुवः ॥२७॥

पदच्छेद—

दिशः विजित्य अप्रतिरुद्ध चक्रः स्व तेजसा उत्पाटित लोक शल्यः ।
सुर असुर इन्द्रैः उपगीयमान महानुभावः भविता पतिः भुवः ॥

शब्दार्थ—

दिशः	४.	सारी दिशाओं को	सुर	१२.	देवता
विजित्य	५.	जीतकर (तथा)	असुर	१३.	असुर (और)
अप्रतिरुद्ध	२.	विरोध नहीं (कर सकेगा)	इन्द्र	१४.	देवराज इन्द्र (इनके)
चक्र	१.	इनकी आज्ञा का (कोई)	उपगीयमान	१६.	वर्णन करेंगे
स्व तेजसा	३.	ये अपने प्रभाव से	महानुभावः	१५.	प्रबल प्रभाव का
उत्पाटित	८.	निकालकर	भविता	११.	होंगे (उस समय)
लोके	६.	प्रजा के	पतिः	१०.	शासक
शल्यः ।	७.	क्लेशरूप काँटे को	भुवः ॥	९.	सम्पूर्ण भू मण्डल के

श्लोकार्थ—इनकी आज्ञा का कोई विरोध नहीं कर सकेगा । ये अपने प्रभाव से सारी दिशाओं को जीतकर तथा प्रजा के क्लेशरूप काँटे को निकालकर सम्पूर्ण भू-मण्डल के शासक होंगे । उस समय देवता, असुर और देवराज इन्द्र इनके प्रबल प्रभाव का वर्णन करेंगे ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे षोडशोऽध्यायः ॥१६॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

सप्तदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—एवं स भगवान् वैन्यः ख्यापितो गुणकर्मभिः ।
छन्दयामास तान् कामैः प्रतिपूज्याभिनन्द्य च ॥१॥

पदच्छेद—

एवम् सः भगवान् वैन्यः ख्यापितः गुण कर्मभिः ।
छन्दयामास तान् कामैः प्रतिपूज्य अभिनन्द्य च ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार (सूतादि जनों ने)	छन्दयामास	१२.	प्रसन्न किया
सः भगवान्	२.	उन महाराज	तान्	११.	उन्हें
वैन्यः	३.	पृथु के	कामैः	७.	उनके मनोरथों के
ख्यापितः	६.	वर्णन किया (तदनन्तर)	प्रतिपूज्य	८.	पूर्ति करके
गुण	४.	शौर्यादि गुणों और	अभिनन्द्य	१०.	स्वागत करके
कर्मभिः ।	५.	लीलाओं का	च ॥	९.	और

श्लोकार्थ—इस प्रकार सूतादिजनों ने उन महाराज पृथु के शौर्यादि गुणों और लीलाओं का वर्णन किया । तदनन्तर उनके मनोरथों की पूर्ति करके और स्वागत करके उन्हें प्रसन्न किया ।।

द्वितीयः श्लोकः

ब्राह्मणप्रमुखान् वर्णान् भृत्यामात्यपुरोधसः ।
पौराञ्जानपदान् श्रेणीः प्रकृतीः समपूजयत् ॥२॥

पदच्छेद—

ब्राह्मण प्रमुखान् वर्णान् भृत्य अमात्य पुरोधसः ।
पौरान् जानपदान् श्रेणीः प्रकृतीः समपूजयत् ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मण	१.	(तदनन्तर उन्होंने) ब्राह्मण	पौरान्	६.	पुरवासियों
प्रमुखान्	२.	आदि	जानपदान्	७.	देशवासियों
वर्णान्	३.	चारों वर्णों	श्रेणीः	८.	व्यापारिकों (एवं)
भृत्य अमात्य	४.	सेवकों मन्त्रियों	प्रकृतीः	९.	प्राणिमात्र का
पुरोधसः ।	५.	पुरोहितों	समपूजयत् ॥	१०.	सत्कार किया

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन्होंने ब्राह्मण आदि चारों वर्णों, सेवकों, मन्त्रियों, पुरोहितों पुरवासियों, देशवासियों, व्यापारिकों एवम् प्राणिमात्र का सत्कार किया ।

तृतीयः श्लोकः

विदुर उवाच—कस्माद्दधार गोरूपं धरित्री बहुरूपिणी ।
यां दुदोह पृथुस्तत्र को वत्सो दोहनं च किम् ।।३।।

पदच्छेद—

कस्मात् दधार गोरूपम् धरित्री बहुरूपिणी ।
याम् दुदोह पृथुः कः वत्सः दोहनं च किम् ।।

शब्दार्थ—

कस्मात्	३.	(फिर उसने) क्यों	पृथुः	७.	महाराज पृथु ने
दधार	५.	धारण किया	तत्र	९.	उस दूहने में
गोरूपम्	४.	गौ का रूप	कः	११.	कौन था
धरित्री	१.	पृथ्वी तो	वत्सः	१०.	बछड़ा
बहुरूपिणी ।	२.	अनेक रूप धारण करती है	दोहन	१३.	दूहने का पात्र
याम्	६.	जिसे कि	च	१२.	और
दुदोह	८.	दूहा था	किम् ।।	१४.	क्या था

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! पृथ्वी तो अनेक रूप धारण करती है । फिर उसने क्यों गौ का रूप धारण किया, जिसे कि महाराज पृथु ने दुहा था । उस दूहने में बछड़ा कौन था और दूहने का पात्र क्या था ।।

चतुर्थः श्लोकः

प्रकृत्या विषमा देवी कृता तेन समा कथम् ।
तस्य मेध्यं हयं देवः कस्य हेतोरपाहरत् ।।४।।

पदच्छेद—

प्रकृत्या विषमा देवी कृता तेन समा कथम् ।
तस्य मेध्यम् हयम् देवः कस्य हेतोः अपाहरत् ।।

शब्दार्थ—

प्रकृत्या	२.	स्वभाव से	तस्य	८.	उनके
विषमा	३.	ऊबड़-खाबड़ थी	मेध्यम्	९.	अश्वमेध यज्ञ के
देवी	१.	पृथ्वी देवी तो	हयम्	१०.	घोड़े को
कृता	७.	किया (तथा)	देवः	११.	इन्द्र ने
तेन	४.	उसे उन्होंने	कस्य	१२.	किस
समा	६.	समतल	हेतोः	१३.	कारण
कथम् ।	५.	कैसे	अपाहरत् ।।	१४.	चुरा लिया था

श्लोकार्थ—पृथ्वी देवी तो स्वभाव से ऊबड़-खाबड़ थी, उसे उन्होंने कैसे समतल किया तथा उनके अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को इन्द्र ने किस कारण चुरा लिया था ।।

पञ्चमः श्लोकः

सनत्कुमाराद्भगवतो ब्रह्मन् ब्रह्मविदुत्तमात् ।
लब्ध्वा ज्ञानं सविज्ञानं राजर्षिः कां गतिं गतः ॥५॥

पदच्छेद—

सनत्कुमारात् भगवतः ब्रह्मन् ब्रह्मविद् उत्तमात् ।
लब्ध्वा ज्ञानम् सविज्ञानम् राजर्षिः काम् गतिम् गतः ॥

शब्दार्थ—

सनत्कुमारात्	५.	सनत्कुमार से	ज्ञानम्	६.	शास्त्र ज्ञान
भगवतः	४.	भगवान्	सविज्ञानम्	७.	और अध्यात्म ज्ञान
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्	राजर्षिः	९.	राजर्षि पृथु
ब्रह्मविद्	२.	आत्मज्ञानियों में	काम्	१०.	किस
उत्तमात् ।	३.	श्रेष्ठ	गतिम्	११.	गति को
लब्ध्वा	८.	प्राप्त करके	गतः ॥	१२.	प्राप्त हुये

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! आत्मज्ञानियों में श्रेष्ठ भगवान् सनत् कुमार से शास्त्रज्ञान और अध्यात्मज्ञान प्राप्त करके राजर्षि पृथु किस गति को प्राप्त हुये ॥

षष्ठः श्लोकः

यच्चान्यदपि कृष्णस्य भवान् भगवतः प्रभोः ।
श्रवः सुश्रवसः पुण्यं पूर्वदेहकथाश्रयम् ॥६॥

पदच्छेद—

यत् च अन्यद् अपि कृष्णस्य भवान् भगवतः प्रभोः ।
श्रवः सुश्रवसः पुण्यम् पूर्वदेह कथा आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	९.	जो	प्रभोः ।	१.	सर्व समर्थ
च	२.	और	श्रवः	१२.	चरित्र हैं
अन्यद्	१०.	दूसरे	सुश्रवसः	३.	पवित्र कीर्ति
अपि	१४.	उनका भी गान करें	पुण्यम्	११.	पवित्र
कृष्णस्य	५.	श्री कृष्ण के	पूर्वदेह	६.	पूर्वकाल के अवतारों की
भवान्	१३.	आप	कथा	७.	लीलाओं से
भगवतः	४.	भगवान्	आश्रयम् ॥	८.	सम्बन्धित

श्लोकार्थ—सर्व समर्थ और पवित्र कीर्ति भगवान् श्री कृष्ण के पूर्वकाल के अवतारों की लीलाओं से सम्बन्धित जो दूसरे पवित्र चरित्र हैं, आप उनका भी गान करें ॥

सप्तमः श्लोकः

भक्ताय मेऽनुरक्ताय तव चाधोक्षजस्य च।
वक्तुमर्हसि योऽदुह्यद्वैन्यरूपेण गामिमाम् ॥७॥

पदच्छेद—

भक्ताय मे अनुरक्ताय तव च अधोक्षजस्य च।
वक्तुम् अर्हसि यः अदुह्यत् वैन्यरूपेण गाम् इमाम् ॥

शब्दार्थ—

भक्ताय	४. सेवक	वक्तुम्	८. सुनाने में
मे	५. मुझे (आप)	अर्हसि	९. समर्थ हैं
अनुरक्ताय	२. अनुरागी	यः	१०. जिन्होंने
तव	१. आपकी	अदुह्यत्	१४. दोहन किया था
च	३. और	वैन्यरूपेण	११. राजा पृथु का अवतार लेकर
अधोक्षजस्य	६. भगवान् श्री हरि की	गाम्	१२. गोरूपधारिणी
च।	७. लीला	इमाम् ॥	१३. इस पृथ्वी का

श्लोकार्थ—आपके अनुरागी और सेवक मुझे आप भगवान् श्री हरि की लीला सुनाने में समर्थ हैं, जिन्होंने राजा पृथु का अवतार लेकर गोरूपिणी इस पृथ्वी का दोहन किया था ॥

अष्टमः श्लोकः

सूत उवाच— चोदितो विदुरेणैवं वासुदेवकथां प्रति।
प्रशस्य तं प्रीतमना मैत्रेयः प्रत्यभाषत ॥८॥

पदच्छेद—

चोदितः विदुरेण एवम् वासुदेव कथाम् प्रति।
प्रशस्य तम् प्रीतमनाः मैत्रेयः प्रत्यभाषत ॥

शब्दार्थ—

चोदितः	५. प्रार्थना करने पर	प्रशस्य	९. प्रशंसा करते हुये
विदुरेण	१. विदुर जी के द्वारा	तम्	८. उनकी
एवम्	२. इस प्रकार	प्रीतमनाः	६. प्रसन्न मन
वासुदेव	३. भगवान् श्री कृष्ण की	मैत्रेयः	७. मैत्रेय जी
कथाम् प्रति।	४. कथा सुनाने की	प्रत्यभाषत ॥	१०. कहने लगे

श्लोकार्थ—विदुर जी के द्वारा इस प्रकार भगवान् श्री कृष्ण की कथा सुनाने की प्रार्थना करने पर प्रसन्न मन मैत्रेय जी उनकी प्रशंसा करते हुये कहने लगे ॥

नवमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—यदाभिषिक्तः पृथुरङ्ग विप्रैरामन्त्रितो जनतायाश्च पालः ।
प्रजा निरन्ने क्षितिपृष्ठ एत्य क्षुत्क्षामदेहाः पतिमभ्यवोचन् ॥९॥

पदच्छेद— यदा अभिषिक्तः पृथुः अङ्ग विप्रैः आमन्त्रितः जनतायाः च पालः ।
प्रजाः निरन्ने क्षितिपृष्ठे एत्य क्षुत् क्षाम देहाः पतिम् अभ्यवोचन् ॥

शब्दार्थ—

यदा	२.	जब	प्रजाः	१५.	जनता
अभिषिक्तः	५.	राज्याभिषेक करके	निरन्ने	११.	अन्न न उपजने से
पृथुः	४.	पृथु का	क्षितिपृष्ठे	१०.	(तब) पृथ्वी पर
अङ्ग	१.	हे तात	एत्य	१७.	पास जाकर
विप्रैः	३.	ब्राह्मणों ने	क्षुत्	१२.	भूख के कारण
आमन्त्रितः	९.	घोषित किया	क्षाम	१३.	कृश
जनतायाः	७.	प्रजा का	देहाः	१४.	काय
च ।	६.	उन्हें	पतिम्	१६.	अपने स्वामी पृथु के
पालः ।	८.	रक्षक	अभ्यवोचन् ॥	१८.	कहने लगी

श्लोकार्थ—हे तात ! जब ब्राह्मणों ने पृथु का राज्याभिषेक करके उन्हें प्रजा का रक्षक घोषित किया तब पृथ्वी पर अन्न न उपजने से भूख के कारण कृशकाय जनता अपने स्वामी पृथु के पास जाकर कहने लगी ॥

दशमः श्लोकः

वयं राजञ्जाठरेणाभितप्ता यथाग्निना कोटरस्थेन वृक्षाः ।
त्वामद्य याताः शरणं शरण्यं यः साधितो वृत्तिकरः पतिर्नः ॥१०॥

पदच्छेद— वयम् राजन् जाठरेण अभितप्ताः यथा अग्निना कोटरस्थेन वृक्षाः ।
त्वाम् अद्य याताः शरणम् शरण्यम् यः साधितः वृत्तिकरः पतिः नः ॥

शब्दार्थ—

वयम्	६.	(उसी प्रकार) हम	अद्य	१५.	(अतः हम) आज
राजन्	१.	हे राजन्	याताः	१८.	आये हैं
जाठरेण	७.	पेट की आग से	शरणम्	१७.	शरण में
अभितप्ताः	८.	जले जा रहे हैं	शरण्यम्	१०.	शरणागत पालक (और)
यथा	२.	जिस प्रकार	यः	९.	क्योंकि आप
अग्निना	४.	(जली) आग से	साधितः	१४.	बनाये गये हैं
कोटरस्थेन	३.	पेड़ के खोखले में	वृत्तिकरः	१२.	अन्नदाता
वृक्षाः ।	५.	सारा पेड़ (जल जाता है)	पतिः	१३.	प्रभु
त्वाम्	१६.	आपकी	नः ॥	११.	हमारे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जिस प्रकार पेड़ के खोखले में जली आग से सारा पेड़ जल जाता है उसी प्रकार हम पेट की आग से जले जा रहे हैं । क्योंकि आप शरणागतपालक और हमारे अन्नदाता प्रभु बनाये गये हैं । अतः हम आज आपकी शरण में आये हैं ॥

एकादशः श्लोकः

तन्नो भवानीहतु रातवेऽन्नं क्षुधार्दितानां नरदेवदेव ।
यावन्न नङ्क्ष्यामह उज्झितोर्जा वार्तापतिस्त्वं किल लोकपालः ॥११॥

पदच्छेद— तद् नः भवान् ईहतु रातवे अन्नम् क्षुधा अर्दितानाम् नरदेव देव ।
यावत् न नङ्क्ष्यामहे उज्झित ऊर्जा वार्ता पतिः त्वम् किल लोकपालः ॥

शब्दार्थ—

तद्	६.	अतः	यावत्	१७.	उससे पहले ही
नः	१०.	हम	न	१६.	ऐसा न हो कि
भवान्	९.	आप	नङ्क्ष्यामहे	२०.	(हम) नष्ट हो जायें
ईहतु	१५.	प्रबन्ध कीजिये	उज्झितः	१९.	समाप्त होने से
रातवे	१४.	देने का	ऊर्जा	१८.	प्राण शक्ति
अन्नम्	१३.	अन्न	वार्ता	३.	(और हमारी) जीविका के
क्षुधा	११.	भूख से	पतिः	४.	स्वामी के रूप में
अर्दितानाम्	१२.	पीड़ितों को	त्वम्	१.	आप
नरदेव	७.	हे राज	किल	५.	प्रसिद्ध हैं
देव ।	८.	राजेश्वर	लोकपालः ॥	२.	लोकों के रक्षक

श्लोकार्थ—आप समस्त लोकों के रक्षक और हमारी जीविका के स्वामी के रूप में प्रसिद्ध हैं । अतः हे राजराजेश्वर ! आप हम भूख से पीड़ितों को अन्न देने का प्रबन्ध कीजिये । ऐसा न हो कि उससे पहले ही प्राणशक्ति समाप्त होने से हम नष्ट हो जावें ॥

द्वादशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—पृथुः प्रजानां करुणं निशम्य परिदेवितम् ।
दीर्घं दध्यौ कुरुश्रेष्ठ निमित्तं सोऽन्वपद्यत ॥१२॥

पदच्छेद— पृथुः प्रजानाम् करुणम् निशम्य परिदेवितम् ।
दीर्घम् दध्यौ कुरुश्रेष्ठ निमित्तम् सः अन्वपद्यत ॥

शब्दार्थ—

पृथुः	६.	महाराज पृथु	दीर्घम्	७.	बहुत देर तक
प्रजानाम्	२.	प्रजाओं का	दध्यौ	८.	ध्यान करते रहे
करुणम्	३.	करुणा पूर्ण	कुरुश्रेष्ठ	१.	हे कुरुवर
निशम्य	५.	सुनकर	निमित्तम्	१०.	अन्नाभाव का कारण
परिदेवितम् ।	४.	विलाप	सः	९.	(अन्त में) उन्हें
			अन्वपद्यत ॥	११.	मालूम हो गया

श्लोकार्थ—हे कुरुवर ! प्रजाओं का करुणापूर्ण विलाप सुनकर महाराज पृथु बहुत देर तक ध्यान करते रहे । अन्त में उन्हें अन्नाभाव का कारण मालूम हो गया ॥

त्रयोदशः श्लोकः

इति व्यवसितो बुद्‌ध्या प्रगृहीतशरासनः ।
सन्दधे विशिखं भूमेः क्रुद्धस्त्रिपुरहा यथा ॥१३॥

पदच्छेद—

इति व्यवसितः बुद्‌ध्या प्रगृहीत शरासनः ।
सन्दधे विशिखम् भूमेः क्रुद्धः त्रिपुरहा यथा ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	(पृथ्वी ने अन्न छिपा लिया है) ऐसा	सन्दधे	११.	चढ़ाया
व्यवसितः	३.	निश्चय करके	विशिखम्	१०.	वाण
बुद्‌ध्या	२.	बुद्धि से	भूमेः	९.	पृथ्वी को लक्ष्य बनाकर
प्रगृहीत	५.	उठाया (और)	क्रुद्धः	८.	अत्यन्त क्रोध करके
शरासनः।	४.	(उन्होंने अपना) धनुष	त्रिपुरहा	६.	त्रिपुर नाशक शंकर के
			यथा ॥	७.	समान

श्लोकार्थ—पृथ्वी ने अन्न और ओषधियों को छिपा लिया है, ऐसा अपनी बुद्धि से निश्चय करके उन्होंने अपना धनुष उठाया और त्रिपुर नाशक शंकर के समान अत्यन्त क्रोध करके पृथ्वी को लक्ष्य बनाकर वाण चढ़ाया ॥

चतुर्दशः श्लोकः

प्रवेपमाना धरणी निशाम्योदायुधं च तम् ।
गौः सत्यपाद्रवद्भीता मृगीव मृगयुद्रुता ॥१४॥

पदच्छेद—

प्रवेपमाना धरणी निशाम्य उदायुधम् च तम् ।
गौः सती अपाद्रवत् भीता मृगी इव मृगयु द्रुता ॥

शब्दार्थ—

प्रवेशमाना	५.	कांप उठी	सती	१३.	धारण करके
धरणी	४.	पृथ्वी	अपाद्रवत्	१४.	भागने लगी
निशाम्य	३.	देख	भीता	११.	(उसी प्रकार वह) डर कर
उदायुधम्	२.	शस्त्र उठाये	मृगी	१०.	हरिणी (भागती है)
च	६.	और	इव	७.	जिस प्रकार
तम् ।	१.	उन्हें	मृगयु	९.	व्याध के
गौः	१२.	गौ का रूप	द्रुता ॥	८.	पीछा करने पर

श्लोकार्थ—उन्हें शस्त्र उठाये देख पृथ्वी कांप उठी और जिस प्रकार व्याध के पीछा करने पर हरिणी भागती है, उसी प्रकार वह डर कर गौ का रूप धारण करके भागने लगी ॥

पञ्चदशः श्लोकः

तामन्वधावत्तद्वैन्यः कुपितोऽत्यरुणेक्षणः ।
शरं धनुषि सन्धाय यत्र यत्र पलायते ॥१५॥

पदच्छेद—

ताम् अन्वधावत् तद् वैन्यः कुपितः अति अरुण ईक्षणः ।
शरम् धनुषि सन्धाय यत्र-यत्र पलायते ॥

शब्दार्थ—

ताम्	११.	उसका	ईक्षणः ।	३.	आँखें
अन्वधावत्	१२.	पीछा करने लगे	शरम्	६.	बाण
तद्	१.	वह देखकर	धनुषि	८.	धनुष पर
वैन्यः	२.	महाराज पृथु की	सन्धाय	१०.	चढ़ाकर वे
कुपितः	४.	क्रोध से	यत्र-यत्र	६.	उस समय जहाँ-जहाँ
अति अरुण	५.	लाल हो गईं	पलायते ॥	७.	पृथ्वी भागी वहाँ वहाँ

श्लोकार्थ—वह देखकर महाराज पृथु की क्रोध से आँखें लाल हो गईं उस समय जहाँ-जहाँ पृथ्वी भागी वहाँ वहाँ धनुष पर बाण चढ़ाकर वे उसका पीछा करने लगे ॥

षोडशः श्लोकः

सा दिशो विदिशो देवी रोदसी चान्तरं तयोः ।
धावन्ती तत्र तत्रैनं ददर्शानूद्यतायुधम् ॥१६॥

पदच्छेद—

सा दिशः विदिशः देवी रोदसी च अन्तरम् तयोः ।
धावन्ती तत्र-तत्र एनम् ददर्श अनु उद्यत आयुधम् ॥

शब्दार्थ—

सा	१.	वह	धावन्ती	६.	दौड़कर जाती
दिशः	३.	दिशायें	तत्र-तत्र	१०.	वहाँ-वहाँ
विदिशः	४.	कोणों	एनम्	११.	इन्हें
देवी	२.	पृथ्वी देवी	ददर्श	१५.	देखती थी
रोदसी	५.	स्वर्ग पृथ्वी	अनु	१४.	पीछे-पीछे
च	६.	और	उद्यत	१३.	उठाये हुये
अन्तरम्	८.	मध्य अन्तरिक्ष में	आयुधान् ॥	१२.	हथियार
तयोः ।	७.	उनके			

श्लोकार्थ—वह पृथ्वी देवी दिशाओं, कोणों, स्वर्ग, पृथ्वी और उनके मध्य अन्तरिक्ष में दौड़कर जाती वहाँ-वहाँ इन्हें हथियार उठाये हुये पीछे-पीछे देखती थी ॥

सप्तदशः श्लोकः

लोके नाविन्दत त्राणं वैन्यान्मृत्योरिव प्रजाः ।
त्रस्ता तदा निववृते हृदयेन विदूयता ॥१७॥

पदच्छेद—

लोके न अविन्दत त्राणम् वैन्यात् मृत्योः इव प्रजाः ।
त्रस्ता तदा निववृते हृदयेन विदूयता ॥

शब्दार्थ—

लोके	४.	(उसी प्रकार) त्रिलोकी में	प्रजाः ।	२.	मनुष्य को
न	७.	(उसे कोई) नहीं	त्रस्ता	१०.	अत्यन्त डर कर
अविन्दत	८.	मिला	तदा	९.	तब (वह)
त्राणम्	६.	बचाने वाला	निववृते	१३.	पीछे को लौटी
वैन्यात्	५.	पृथु से	हृदयेन	१२.	मन से
मृत्योः	३.	मृत्यु से (कोई नहीं बचा सकता)	विदूयता ॥	११.	दुःखित
इव	१.	जैसे			

श्लोकार्थ—जैसे मनुष्य को मृत्यु से कोई नहीं बचा सकता उसी प्रकार त्रिलोकी में पृथु से बचाने वाला उसे कोई नहीं मिला । तब वह अत्यन्त डरकर दुःखित मन से पीछे को लौटी ॥

अष्टादशः श्लोकः

उवाच च महाभागं धर्मज्ञापन्नवत्सल ।
त्राहि मामपि भूतानां पालनेऽवस्थितो भवान् ॥१८॥

पदच्छेद—

उवाच च महाभागम् धर्मज्ञ आपन्न वत्सल ।
त्राहि माम् अपि भूतानाम् पालने अवस्थितः भवान् ॥

शब्दार्थ—

उवाच	३.	कहने लगी कि	त्राहि	१३.	रक्षा करें
च	१.	और (वह)	माम्	११.	अतः मेरी
महाभागम्	२.	बड़भागी पृथु से	अपि	१२.	भी
धर्मज्ञ	४.	धर्म के तत्त्व को जानने वाले	भूतानाम्	८.	सभी प्राणियों की
आपन्न	५.	शरणागत	पालने	९.	रक्षा करने में
वत्सल ।	६.	वत्सल हे राजन्	अवस्थितः	१०.	तत्पर हैं
			भवान् ।	७.	आप

श्लोकार्थ—और वह बड़भागी पृथु से कहने लगी कि धर्म के तत्त्व को जानने वाले शरणागत वत्सल हे राजन् ! आप सभी प्राणियों की रक्षा करने में तत्पर हैं अतः मेरी भी रक्षा करें ॥

एकोनविंशः श्लोकः

स त्वं जिघांससे कस्माद्दीनामकृतकिल्बिषाम् ।
अहनिष्यत्कथं योषां धर्मज्ञ इति यो मतः ॥१६॥

पदच्छेद—

स: त्वम् जिघांससे कस्माद् दीनाम् अकृत किल्बिषाम् ।
अहनिष्यत् कथम् योषाम् धर्मज्ञः इति यः मतः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	सो	अहनिष्यत्	१४.	वध कर सकेंगे
त्वम्	२.	आप	कथम्	१२.	अतः कैसे
जिघांससे	७.	मारना चाहते हैं	योषाम्	१३.	स्त्री का
कस्माद्	६.	क्यों	धर्मज्ञः	९.	धर्म के जानकार हैं
दीनाम्	५.	मुझ बेचारी को	इति	१०.	ऐसा
अकृत	४.	नहीं करने वाली	यः	८.	क्योंकि आप
किल्बिषाम् ।	३.	अपराध	मतः ॥	११.	माना गया है

श्लोकार्थ—सो आप अपराध नहीं करने वाली मुझ बेचारी को क्यों मारना चाहते हैं। क्योंकि आप धर्म के जानकार हैं, ऐसा माना गया है, अतः कैसे स्त्री का वध कर सकेंगे ॥

विंशः श्लोकः

प्रहरन्ति न वै स्त्रीषु कृतागःस्वपि जन्तवः ।
किमुत त्वद्विधा राजन् करुणा दीनवत्सलाः ॥२०॥

पदच्छेद—

प्रहरन्ति न वै स्त्रीषु कृत आगः सु अपि जन्तवः ।
किमुत त्वदविधाः राजन् करुणा दीन वत्सलाः ॥

शब्दार्थ—

प्रहरन्ति	८.	प्रहार करते हैं (तोफिर)	किमुत	१३.	कैसे कर सकते हैं
न वै	७.	नहीं	त्वद्विधाः	९.	आप जैसे
स्त्रीषु	५.	स्त्रियों पर	राजन्	१.	हे राजन्
कृत	३.	करने पर	करुणा	१०.	दयालु (और)
आगः सु	२.	अपराध	दीन	११.	अनाथों के
अपि	४.	भी	वत्सलाः ॥	१२.	प्रेमी
जन्तवः ।	६.	साधारण मनुष्य			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! अपराध करने पर भी स्त्रियों पर साधारण मनुष्य प्रहार नहीं करते हैं। तो फिर आप जैसे दयालु अनाथों के प्रेमी कैसे कर सकते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

मां विपाट्याजरां नावं यत्र विश्वं प्रतिष्ठितम् ।
आत्मानं च प्रजाश्चेमाः कथमम्भसि धास्यसि ॥२१॥

पदच्छेद—

माम् विपाट्य अजराम् नावम् यत्र विश्वम् प्रतिष्ठितम् ।
आत्मानम् च प्रजाः च इमाः कथम् अम्भसि धास्यसि ॥

शब्दार्थ—

माम्	६.	मुझे	आत्मानम्	८.	आप अपने को
विपाट्य	७.	उखाड़ कर	च	९.	और
अजराम्	१.	(मैं एक) सुदृढ	प्रजाः च	११.	प्रजा को
नावम्	२.	नौका के समान हूँ	इमाः	१०.	इस
यत्र	३.	जिस मुझ पर	कथम्	१३.	कैसे
विश्वम्	४.	सारा विश्व	अम्भसि	१२.	जल के ऊपर
प्रतिष्ठितम् ।	५.	आश्रित है	धास्यसि ॥	१४.	रखेंगे

श्लोकार्थ—मैं एक सुदृढ़ नौका के समान हूँ जिस मुझ पर सारा विश्व आश्रित है । मुझे उखाड़ कर आप अपने को और इस प्रजा को जल के ऊपर कैसे रखेंगे ।।

द्वाविंशः श्लोकः

पृथु रुवाच—वसुधे त्वां वधिष्यामि मच्छासनपराङ्मुखीम् ।
भागं बर्हिषि या वृङ्क्ते न तनोति च नो वसु ॥२२॥

पदच्छेद—

वसुधे त्वाम् वधिष्यामि मत् शासन् पराङ्मुखीम् ।
भागम् बर्हिषि या वृङ्क्ते न तनोति च नः वसु ॥

शब्दार्थ—

वसुधे	१.	हे पृथ्वी मैं	बर्हिषि	८.	यज्ञ में (देवता रूप से)
त्वाम्	२.	तुझे	या	७.	जो तू
वधिष्यामि	३.	मार डालूँगा (क्योंकि)	वृङ्क्ते	१०.	लेती है
मत्	४.	(तू) मेरी	न तनोति	१४.	नहीं देती है
शासन	५.	आज्ञा का	च	११.	किन्तु बदले में
पराङ्मुखीम् ।	६.	उल्लंघन करने वाली है	नः	१२.	हमें
भागम्	९.	अपना भाग तो	वसु ॥	१३.	अन्न

श्लोकार्थ—हे पृथ्वी ! मैं तुझे मार डालूँगा, क्योंकि तू मेरी आज्ञा का उल्लंघन करने वाली है । जो तू यज्ञ में देवता रूप से अपना भाग तो लेती है । किन्तु बदले में हमें अन्न नहीं देती है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

यवसं जग्ध्यनुदिनं नैव दोग्ध्यौधसं पयः ।
तस्यामेवं हि दुष्टायां दण्डो नात्र न शस्यते ॥२३॥

पदच्छेद—

यवसम् जग्धि अनुदिनम् न एव दोग्धि औधसम् पयः ।
तस्याम् एवम् हि दुष्टायाम् दण्डः न अत्र न शस्यते ॥

शब्दार्थ—

यवसम्	२.	हरी-हरी घास	एवम्	८.	इस प्रकार
जग्धि	३.	खाती है (किन्तु)	हि	१०	भी
अनुदिनम्	१.	(तू) प्रतिदिन	दुष्टायाम्	९.	दुष्टता करने पर
न एव	६.	नहीं	दण्डः	१२.	दण्ड
दोग्धि	७.	देती है	न	१३.	नहीं देना
औधसम्	४.	अपने थन का	अत्र	१४.	यह
पयः ।	५.	दूध	न	१५.	नहीं
तस्याम्	११.	तुझे	शस्यते ॥	१६.	उचित है

श्लोकार्थ—तू प्रतिदिन हरी-हरी घास खाती है, किन्तु अपने थन का दूध नहीं देती है । इस प्रकार दुष्टता करने पर भी तुझे दण्ड नहीं देना यह उचित नहीं है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

त्वं खल्वोषधिबीजानि प्राक् सृष्टानि स्वयम्भुवा ।
न मुञ्चस्यात्मरुद्धानि मामवज्ञाय मन्दधीः ॥२४॥

पदच्छेद—

त्वम् खलु ओषधि बीजानि प्राक् सृष्टानि स्वयम्भुवा ।
न मुञ्चसि आत्म रुद्धानि माम् अवज्ञाय मन्दधीः ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	३.	तूने	न	१३.	(उन्हें बाहर) नहीं
खलु	२.	क्योंकि	मुञ्चसि	१४.	निकालती
ओषधि	७.	अन्नादि के	आत्म	९.	अपने में
बीजानि	८.	बीजों को	रुद्धानि	१०.	छिपा लिया है । (और)
प्राक्	५.	पूर्वकाल में	माम्	११.	मेरी भी
सृष्टानि	६.	उत्पन्न किये हुये	अवज्ञाय	१२.	परवाह न करके
स्वयम्भुवा ।	४.	ब्रह्मा जी के द्वारा	मन्दधीः ॥	१.	(तू) ना समझ है

श्लोकार्थ—तू ना समझ है; क्योंकि तूने ब्रह्मा जी के द्वारा पूर्वकाल में उत्पन्न किये हुये अन्नादि बीजों को अपने में छिपा लिया है और मेरी भी परवाह न करके उन्हें बाहर नहीं निकालती ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

अमूषां क्षुत्परीतानामार्तानां परिदेवितम् ।
शमयिष्यामि मद्बाणैर्भिन्नायास्तव मेदसा ॥२५॥

पदच्छेद—

अमूषाम् क्षुत् परीतानाम् आर्तानाम् परिदेवितम् ।
शमयिष्यामि यद् बाणैः भिन्नायाः तव मेदसा ॥

शब्दार्थ—

अमूषाम्	६.	उन
क्षुत्	७.	भूखे
परीतानाम्	८.	एवम्
आर्तानाम्	९.	दुःखी लोगों का
परिदेवितम् ।	१०.	विलाप
शमयिष्यामि	११.	शान्त करूँगा
यद्	१.	अब मैं अपने
बाणैः	२.	बाणों से (तुझे)
भिन्नायाः	३.	छिन्न-भिन्न करके
तव	४.	तेरे
मेदसा ॥	५.	मेदे से

श्लोकार्थ—अब मैं अपने बाणों से तुझे छिन्न-भिन्न करके तेरे मेदे से उन भूखे एवम् दुःखी लोगों का विलाप शान्त करूँगा ॥

षड्विंशः श्लोकः

पुमान् योषिदुत क्लीब आत्मसम्भावनोऽधमः ।
भूतेषु निरनुक्रोशो नृपाणां तद्वधोऽवधः ॥२६॥

पदच्छेद—

पुमान् योषित् उत क्लीवः आत्म सम्भावनः अधमः ।
भूतेषु निरनुक्रोशः नृपाणाम् तद् वधः अवधः ॥

शब्दार्थ—

पुमान्	५.	(वह) पुरुष
योषित्	६.	स्त्री
उत	७.	अथवा
क्लीवः	८.	नपुंसक (कोई भी हो)
आत्म सम्भावनः	२.	अपना ही पोषण करने वाला
अधमः ।	१.	जो दुष्ट
भूतेषु	३.	प्राणियों के प्रति
निरनुक्रोशः	४.	निर्दयी है
नृपाणाम्	९.	राजाओं के लिये
तद्	१०.	उसका
वधः	११.	मारना
अवधः ॥	१२.	पाप नहीं है

श्लोकार्थ—जो दुष्ट अपना ही पोषण करने वाला प्राणियों के प्रति निर्दयी है । वह पुरुष, स्त्री अथवा नपुंसक कोई भी हो, राजाओं के लिये उसका मारना पाप नहीं है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

त्वां स्तब्धां दुर्मदां नीत्वा मायागां तिलशः शरैः ।
आत्मयोगबलेनेमा धारयिष्याम्यहं प्रजाः ॥२७॥

पदच्छेद—

त्वाम् स्तब्धाम् दुर्मदाम् नीत्वा मायागाम् तिलशः शरैः ।
आत्म योग बलेन इमाः धारयिष्यामि अहम् प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

त्वाम्	५.	तुझे	आत्म	९.	अपने
स्तब्धाम्	३.	गर्वीली एवं	योग	१०.	योग के
दुर्मदाम्	४.	मदोन्मत्ता	बलेन	११.	प्रभाव से
नीत्वा	८.	करके	इमाः	१२.	इन
मायागाम्	२.	माया से गोरूप धारिणी	धारयिष्यामि	१४.	पोषण करूँगा
तिलशः	७.	खण्ड-खण्ड	अहम्	१.	मैं
शरैः	६.	अपने बाणों से	प्रजाः ॥	१३.	प्रजाओं का

श्लोकार्थ—मैं माया से गोरूपधारिणी गर्वीली एवम् मदोन्मत्ता तुझे अपने बाणों से खण्ड-खण्ड करके अपने योग के प्रभाव से इन प्रजाओं का पोषण करूँगा ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

एवं मन्युमयीं मूर्तिं कृतान्तमिव बिभ्रतम् ।
प्रणता प्राञ्जलिः प्राह मही सञ्जातवेपथुः ॥२८॥

पदच्छेद—

एवम् मन्युमयीम् मूर्तिम् कृतान्तम् इव बिभ्रतम् ।
प्रणता प्राञ्जलिः प्राह मही सञ्जात वेपथुः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	प्रणता	१०.	विनीत भाव से
मन्युमयीम्	४.	क्रोधमयी	प्राञ्जलिः	११.	हाथ जोड़कर
मूर्तिम्	५.	मूर्ति	प्राह	१२.	बोली
कृतान्तम्	२.	काल की	मही	९.	पृथ्वी
इव	३.	भाँति	सञ्जात	८.	हुई
बिभ्रतम् ।	६.	धारण किये हुये पृथु से	वेपथुः ॥	७.	काँपती

श्लोकार्थ—इस प्रकार काल की भाँति क्रोधमयी मूर्ति धारण किये हुये पृथु से काँपती हुई पृथ्वी विनीतभाव से हाथ जोड़कर बोली ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

धरोवाच—नमः परस्मै पुरुषाय मायया विन्यस्तनानातनवे गुणात्मने ।
नमः स्वरूपानुभवेन निर्धुतद्रव्यक्रियाकारकविभ्रमोर्मये ॥२९॥

पदच्छेद— नमः परस्मै पुरुषाय मायया विन्यस्त नाना तनवे गुण आत्मने ।
नमः स्वरूप अनुभवेन निर्धुत द्रव्य क्रिया कारक विभ्रम ऊर्मये ॥

शब्दार्थ—

नमः	१८.	नमस्कार है	नमः	१७.	बार-बार
परस्मै	१५.	आप परम	स्वरूप	७.	आत्मस्वरूप के
पुरुषाय	१६.	पुरुष को	अनुभवेन	८.	अनुभव के कारण (आप)
मायया	१.	(अपनी) माया से	निर्धुत	१४.	सर्वथा रहित हैं
विन्यस्त	४.	धारण कर	द्रव्य	९.	अधिभूत
नाना	२.	अनेक प्रकार के	क्रिया	१०.	अध्यात्म (और)
तनवे	३.	शरीर	कारक	११.	अधिदेव के
गुण	६.	निर्गुण (जान पड़ते हैं)	विभ्रम	१२.	अभिमान (तथा)
आत्मने ।	५.	स्वयम्	ऊर्मये ॥	१३.	रागद्वेषादि तरंगों से

श्लोकार्थ—अपनी माया से अनेक प्रकार के शरीर धारण कर स्वयम् निर्गुण जान पड़ते हैं। वस्तुतः आत्मस्वरूप के अनुभव के कारण आप अधिभूत, अध्यात्म और अधिदेव के अभिमान तथा रागद्वेषादि तरंगों से सर्वथा रहित हैं। आप परम पुरुष को बार-बार नमस्कार है ॥

त्रिंशः श्लोकः

येनाहमात्मायतनं विनिर्मिता धात्रा यतोऽयं गुणसर्गसङ्ग्रहः ।
स एव मां हन्तुमुदायुधः स्वराडुपस्थितोऽन्यं शरणं कमाश्रये ॥३०॥

पदच्छेद— येन अहम् आत्म आयतनम् विनिर्मिता धात्रा यतः अयम् गुण सर्गसंग्रहः ।
सः एव माम् हन्तुम् उदायुधः स्वराड् उपस्थितः अन्यम् शरणम् कम् आश्रये ॥

शब्दार्थ—

येन	१.	जिस आप	सः	११.	वही
अहम् आत्म	३.	मुझे सम्पूर्ण जीवों का	एव	१०.	जब
आयतनम्	४.	आश्रय	माम् हन्तुम्	१४.	मुझे मारने के लिये
विनिर्मिता	५.	बनाया है (तथा)	उदायुधः	१३.	शस्त्र उठाकर
धात्रा	२.	विधाता ने	स्वराड्	१२.	स्वयम् प्रकाश प्रभु
यतः	६.	जिस आप से ही	उपस्थितः	१५	तैयार हो गये हैं
अयम्	७.	यह	अन्यम् शरणम्	१७	दूसरे की शरण में
गुण	८.	त्रिगुणात्मक	कम्	१६.	तब मैं किस
सर्गसंग्रहः ।	९.	सृष्टि निर्मित है	आश्रये ॥	१८.	जाऊँ

श्लोकार्थ—जिस आप विधाता ने मुझे सम्पूर्ण जीवों का आश्रय बनाया है तथा जिस आपसे ही यह त्रिगुणात्मक सृष्टि निर्मित है, जब वही स्वयं प्रकाश प्रभु शस्त्र उठाकर मुझे मारने लिये तैयार हो गये हैं तब मैं किस दूसरे की शरण में जाऊँ ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

य एतदादावसृजच्चराचरं स्वमाययाऽऽत्माश्रययाविचिन्त्यया ।
तयैव सोऽयं किल गोप्तुमुद्यतः कथं नु मां धर्मपरो जिघांसति ॥३१॥

पदच्छेद—यः एतद् आदौ असृजत् चर अचरम् स्व मायया आत्म आश्रयया अवितर्क्यया ।
तया एव सः अयम् किल गोप्तुम् उद्यतः कथम् नु माम् धर्मपरः जिघांसति ॥

शब्दार्थ—

यः	२.	जिस आपने	अवितर्क्यया	६.	अनिर्वचनीय
एतद्	८.	यह	तया एव	१३.	उस माया के द्वारा
आदौ	१.	कल्प के प्रारम्भ में	सः अयम्	१२.	और वही आप
असृजत्	११.	रचा है	किल गोप्तुम्	१४.	ही इसका पालन करने के लिये
चर	१०.	चेतन जगत्	उद्यतः	१५.	तैयार हुये हैं
अचरम्	९.	जड़	कथम्	१९.	किस प्रकार
स्व	५.	अपनी	नु	१६.	फिर भला
मायया	७.	माया से	माम्	१८.	मुझ गोरूपधारिणी को
आत्म	३.	अपने में	धर्मपरः	१७.	धर्म परायण (आप)
आश्रयया	४.	रहने वाली	जिघांसति ॥	२०.	मारना चाहते हैं

श्लोकार्थ—कल्प के प्रारम्भ में जिस आपने अपने में रहने वाली अनिर्वचनीय अपनी माया से यह जड़ चेतन-जगत् रचा है । और वही आप उस माया के द्वारा ही इसका पालन करने के लिये तैयार हुये हैं । फिर भला धर्मपरायण आप मुझ गोरूपधारिणी को किस प्रकार मारना चाहते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

नूनं बतेशस्य समीहितं जनैस्तन्मायया दुर्जययाकृतात्मभिः ।
न लक्ष्यते यस्त्वकरोदकारयद्योऽनेक एकः परतश्च ईश्वरः ॥३२॥

पदच्छेद—नूनम् बत ईशस्य समीहितम् जनैः तद् मायया दुर्जयया अकृत आत्मभिः ।
न लक्ष्यते यः तु अकरोत् अकारयत् यः अनेकः एकः परतः च ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	४.	अवश्य	न लक्ष्यते	५.	नहीं जान सकते हैं
बत	१.	खेद है कि	यः तु	११.	जिस आपने तो (ब्रह्मा जी को)
ईशस्य	२.	परमेश्वर (आपकी)	अकरोत्	१२.	उत्पन्न किया है (और उन से)
समीहितम् जनैः	३.	लीला को अज्ञानी लोग	अकारयत् यः	१३.	सृष्टि रचाई हैं जो आप
तद्	६.	क्योंकि आपकी	अनेकः	१५.	अनेक रूप जान पड़ते हैं
मायया	८.	माया से	एकः	१४.	एक होकर भी (माया से)
दुर्जयया	७.	अजेय	परतः	१७.	परात्पर
अकृत	१०.	भ्रान्त रहती है	च	१६.	अतः आप
आत्मभिः ।	९.	उनकी बुद्धि	ईश्वरः ॥	१८.	सर्वेश्वर हैं

श्लोकार्थ—खेद है कि परमेश्वर आपकी लीला को अज्ञानी लोग अवश्य नहीं जान सकते हैं । क्योंकि आपकी अजेय माया से उनकी बुद्धि भ्रान्त रहती है । जिस आपने तो ब्रह्मा जी को उत्पन्न किया है और उनसे सृष्टि रचाई है, जो आप एक होकर भी अनेक रूप जान पड़ते हैं । अतः आप परात्पर सर्वेश्वर हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

सर्गादि योऽस्यानुरुणद्धि शक्तिभिर्द्रव्यक्रियाकारकचेतनात्मभिः ।
तस्मै समुन्नद्धनिरुद्धशक्तये नमः परस्मै पुरुषाय वेधसे ॥३३॥

पदच्छेद—सर्ग आदि यः अस्य अनुरुणद्धि शक्तिभिः द्रव्य क्रिया कारक चेतन आत्मभिः ।
तस्मै समुन्नद्ध निरुद्ध शक्तये नमः परस्मै पुरुषाय वेधसे ॥

शब्दार्थ—

सर्ग आदि	७	सृष्टि स्थिति और संहार	तस्मै	१५.	उस आप को
यः	१.	जो आप	समुन्नद्ध	१०.	आविर्भाव और
अस्य	६.	इस जगत् की क्रमशः	निरुद्ध	११.	तिरोभाव से युक्त
अनुरुणद्धि	८.	करते हैं (तथा)	शक्तये	६.	यथा समय शक्तियों के
शक्तिभिः	५.	अपनी शक्तियों के द्वारा	नमः	१६	प्रणाम है
द्रव्य	२.	पञ्चमहाभूत	परस्मै	१३.	परम
क्रिया कारक	३.	इन्द्रिय उनके देवता	पुरुषाय	१४.	पुरुष
चेतन आत्मभिः ।	४	बुद्धि और अहंकार रूप	वेधसे ॥	१२.	जगत् विधाता

श्लोकार्थ—जो आप पञ्च महाभूत, इन्द्रिय, उनके देवता, बुद्धि और अहंकार रूप अपनी शक्तियों के द्वारा इस जगत् की क्रमशः सृष्टि, स्थिति और संहार करते हैं तथा यथा समय आविर्भाव और तिरोभाव से युक्त जगद्विधाता, परम पुरुष उस आपको प्रणाम है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

स वै भवानात्मविनिर्मितं जगद् भूतेन्द्रियान्तःकरणात्मकं विभो ।
संस्थापयिष्यन्नज मां रसातलादभ्युज्जहाराम्भस आदिसूकरः ॥३४॥

पदच्छेद—सः वै भवान् आत्म विनिर्मितम् जगत् भूत इन्द्रिय अन्तःकरण आत्मकम् विभो ।
संस्थापयिष्यन् अज माम् रसातलात् अभ्युज्जहार अम्भसः आदि सूकरः ॥

शब्दार्थ—

सः वै	३.	वही	संस्थापयिष्यन्	१०.	स्थिति के लिये
भवान् आत्म	४.	आप अपने	अज	१.	अजन्मा
तम्	५.	रचे हुये	माम्	१३.	मुझे
जगत्	६.	जगत् की	रसातलात्	१४.	रसातल से
भूत इन्द्रिय	६.	पञ्चमहाभूत इन्द्रिय और	अभ्युज्जहार	१६.	लाये थे
अन्तः करण	७.	अन्तःकरण	अम्भसः	१५	जल के बाहर
आत्मकम्	८.	स्वरूप	आदि	११.	आदि
विभो ।	२.	हे प्रभो	सूकर ॥	१२.	वराह रूप होकर

श्लोकार्थ—अजन्मा हे प्रभो ! वही आप अपने रचे हुये पञ्च महाभूत, इन्द्रिय और अन्तःकरण स्वरूप जगत् की स्थिति के लिये आदि वराह रूप होकर मुझे रसातल से जल के बाहर लाये थे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

अपामुपस्थे मयि नाव्यवस्थिताः प्रजा भवानद्य रिरक्षिषुः किल ।
स वीरमूर्तिः समभूद्धराधरो यो मां पयस्युग्रशरो जिघांससि ॥३५॥

पदच्छेद— अपाम् उपस्थे मयि नावि आस्थिताः प्रजाः भवान् अद्य रिरक्षिषुः किल ।
सः वीर मूर्तिः समभूत् धराधरः यः माम् पयसि उग्रशरः जिघांससि ॥

शब्दार्थ—

अपाम्	२.	जल से मेरा	वीर मूर्तिः	१३.	वीरभाव से
उपस्थे	३.	उद्धार किये थे	समभूत्	५.	पाये थे
मयि	१०.	मुझ पर	धराधरः	४.	(और) धरणी धर नाम
नावि	९.	नौका के समान	यः	१.	जो आप
आस्थिताः प्रजाः	११.	आश्रित प्रजा की	माम्	१५.	मुझे
भवान् अद्य	७.	आप आज	पयसि	८.	जल से
रिरक्षिषुः किल ।	१२.	रक्षा करने के लिये ही	उग्रशरः	१४.	तीखे बाण चढ़ाकर
सः	६.	वही	जिघांससि ॥	१६.	मारना चाहते हैं

श्लोकार्थ—जो आप जल से मेरा उद्धार किये थे और धरणीधर नाम पाये थे, वही आप आज जल में नौका के समान मुझ पर आश्रित प्रजा की रक्षा करने के लिये वीरभाव से तीखे बाण चढ़ाकर मारना चाहते हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

नूनं जनैरीहितमीश्वराणामस्मद्विधैस्तद्गुणसर्गमायया ।
न ज्ञायते मोहितचित्तवर्त्मभिस्तेभ्यो नमो वीरयशस्करेभ्यः ॥३६॥

पदच्छेद— नूनम् जनैः ईहितम् ईश्वराणाम् अस्मद् विधैः तद् गुण सर्ग मायया ।
न ज्ञायते मोहित चित्त वर्त्मभिः तेभ्यः नमः वीर यशस्करेभ्यः ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	११.	अवश्य	न	१२.	नहीं
जनैः	८.	लोग	ज्ञायते	१३.	जानते हैं
ईहितम्	१०.	लीला को	मोहित	४.	मोहित
ईश्वराणाम्	९.	परमात्मा की	चित्त	५.	चित्त
अस्मद् विधैः	७	हमारे जैसे	वर्त्मभिः	६.	वृत्ति वाले
तद्	२.	उन आपकी	तेभ्यः नमः	१६.	उन आप को नमस्कार है
गुण सर्ग	१.	त्रिगुणात्मक सृष्टि करने वाली	वीर	१४.	अतः वीरोचित
मायया ।	३.	माया से	यशस् करेभ्यः ॥	१५.	कीर्ति करने वाले

श्लोकार्थ—त्रिगुणात्मक सृष्टि करने वाली उन आपकी माया से मोहित चित्त वृत्ति वाले हमारे जैसे लोग परमात्मा की लीला को अवश्य नहीं जानते हैं; अतः वीरोचित कीर्ति करने वाले उन आपको नमस्कार है ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पृथुविजये धरित्रीनिग्रहो नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

अष्टादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इत्थं पृथुमभिष्टूय रुषा प्रस्फुरिताधरम् ।
पुनराहावनिर्भीता संस्तभ्यात्मानमात्मना ॥१॥

पदच्छेद—

इत्थम् पृथुम् अभिष्टूय रुषा प्रस्फुरित अधरम् ।
पुनः आह अवनिः भीता संस्तभ्य आत्मानम् आत्मना ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	५.	इस प्रकार	पुनः आह	१२.	फिर से बोली
पृथुम्	४.	महाराज पृथु की	अवनिः	८.	पृथ्वी
अभिष्टूय	६.	स्तुति करके	भीता	७.	डरी हुई
रुषा	१.	क्रोध से	संस्तभ्य	११.	ढाढस देकर
प्रस्फुरित	२.	फड़कते	आत्मानम्	१०.	मन को
अधरम् ।	३.	होंठ वाले	आत्मना ॥	९.	बुद्धि से

श्लोकार्थ—क्रोध से फड़कते होंठ वाले महाराज पृथु की इस प्रकार स्तुति करके डरी हुई पृथ्वी बुद्धि से मन को ढाढस देकर फिर से बोली ॥

द्वितीयः श्लोकः

संनियच्छाभिभो मन्युं निबोध श्रावितं च मे ।
सर्वतः सारमादत्ते यथा मधुकरो बुधः ॥२॥

पदच्छेद—

संनियच्छ अभि भो मन्युम् निबोध श्रावितम् च मे ।
सर्वतः सारम् आदत्ते यथा मधुकरः बुधः ॥

शब्दार्थ—

संनियच्छ	४.	शान्त कीजिये	मे ।	६.	मेरी
अभि	२.	प्रभो	सर्वतः	१२.	सभी जगह से
भो	१.	हे	सारम्	१३.	सार तत्त्व
मन्युम्	३.	अपना क्रोध	आदत्ते	१४.	ग्रहण कर लेते हैं
निबोध	८.	सुनिये	यथा	११.	समान
श्रावितम्	७.	प्रार्थना	मधुकरः	१०.	भ्रमर के
च	५.	और	बुधः ॥	९.	बुद्धिमान् जन

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! अपना क्रोध शान्त कीजिये और मेरी प्रार्थना सुनिये । बुद्धिमान् जन भ्रमर के समान सभी जगह से सार तत्त्व ग्रहण कर लेते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

अस्मिँल्लोकेऽथवामुष्मिन्मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
दृष्टा योगाः प्रयुक्ताश्च पुंसां श्रेयःप्रसिद्धये ॥३॥

पदच्छेद—

अस्मिन् लोके अथवा अमुष्मिन् मुनिभिः तत्त्व दर्शिभिः ।
दृष्टाः योगाः प्रयुक्ताः च पुंसां श्रेयः प्रसिद्धये ॥

शब्दार्थ—

अस्मिन्	४.	इस	दृष्टाः	१२.	बताये हैं
लोके	५.	लोक में	योगाः	११.	अनेक उपाय
अथवा	६.	और	प्रयुक्ताः	१४.	प्रयोग किये हैं
अमुष्मिन्	७.	परलोक में	च	१३.	और (उनका)
मुनिभिः	३.	मुनियों ने	पुंसां	८.	मनुष्यों के
तत्त्व	१.	वस्तु स्वरूप को	श्रेयः	९.	कल्याण की
दर्शिभिः ।	२.	साक्षात् करने वाले	प्रसिद्धये ॥	१०.	सिद्धि के लिये

श्लोकार्थ—वस्तु स्वरूप को साक्षात् करने वाले मुनियों ने इस लोक में और परलोक में मनुष्यों के कल्याण की सिद्धि के लिये अनेक उपाय बताये हैं और प्रयोग किये हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

तानातिष्ठति यः सम्यगुपायान् पूर्वदर्शितान् ।
अवरः श्रद्धयोपेत उपेयान् विन्दतेऽञ्जसा ॥४॥

पदच्छेद—

तान् आतिष्ठति यः सम्यग् उपायान् पूर्वदर्शितान् ।
अवरः श्रद्धया उपेतः उपेयान् विन्दते अञ्जसा ॥

शब्दार्थ—

तान्	१.	उन	अवरः	४.	इस समय (भी)
आतिष्ठति	९.	आचरण करता है	श्रद्धया	६.	श्रद्धा से
यः	५.	जो पुरुष	उपेतः	७.	युक्त होकर
सम्यग्	८.	भली भाँति	उपेयान्	११.	अभीष्ट फल
उपायान्	३.	उपायों का	विन्दते	१२.	प्राप्त करता है
पूर्वदर्शितान् ।	२.	प्राचीन ऋषियों के बताये हुये	अञ्जसा ॥	१०.	वह सुगमता से

श्लोकार्थ—उन प्राचीन ऋषियों के बताये हुये उपायों का इस समय भी जो पुरुष श्रद्धा से युक्त होकर भली भाँति आचरण करता है, वह सुगमता से अभीष्ट फल प्राप्त करता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

तान नादृत्य योऽविद्वानर्थानारभते स्वयम् ।
तस्य व्यभिचरन्त्यर्था आरब्धाश्च पुनः पुनः ॥५॥

पदच्छेद—

तान् अनादृत्य यः अविद्वान् अर्थान् आरभते स्वयम् ।
तस्य व्यभिचरन्ति अर्थाः आरब्धाः च पुनः पुनः ॥

शब्दार्थ—

तान्	२.	उन (शास्त्रोक्त) उपायों का	तस्य	७.	उसके
अनादृत्य	३.	अनादर करके	व्यभिचरन्ति	१२.	निष्फल होते हैं
यः अविद्वान्	१.	(परन्तु) जो अज्ञानी पुरुष	अर्थाः	८.	सभी उपाय
अर्थान्	५.	उपायों का	आरब्धाः	१०.	प्रयत्न
आरभते	६.	सहारा लेता है	च	९.	और
स्वयम् ।	४.	अपने मनः कल्पित	पुनः पुनः ॥	११.	बार-बार

श्लोकार्थ—परन्तु जो अज्ञानी पुरुष उन शास्त्रोक्त उपायों का अनादर करके अपने मनः कल्पित उपायों का सहारा लेता है, उसके सभी उपाय और प्रयत्न बार-बार निष्फल होते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

पुरा सृष्टा ह्योषधयो ब्रह्मणा या विशाम्पते ।
भुज्यमाना मया दृष्टा असद्भिरधृतव्रतैः ॥६॥

पदच्छेद—

पुरा सृष्टाः हि ओषधयः ब्रह्मणा याः विशाम्पते ।
भुज्यमाना मया दृष्टाः असद्भिः अधृत व्रतैः ॥

शब्दार्थ—

पुरा	२.	पूर्वकाल में	भुज्यमाना	१२.	खाये जा रहे हैं
सृष्टाः	५.	उत्पन्न किया	मया	६.	मैंने
हि	११.	ही (उन्हें)	दृष्टाः	७.	देखा कि
ओषधयः	४.	धान्य आदि को	असद्भिः	१०.	दुराचारी लोग
ब्रह्मणा याः	३.	ब्रह्मा जी ने जिन	अधृत	९.	पालन न करने वाले
विशाम्पते	१.	हे राजन्	व्रतैः ॥	८.	व्रतों का

श्लोकार्थ—हे राजन् ! पूर्वकाल में ब्रह्मा जी ने जिन धान्य आदि को उत्पन्न किया था, मैंने देखा कि व्रतों का पालन न करने वाले दुराचारी लोग ही उन्हें खाये जा रहे हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

अपालितानादृता च भवद्भिर्लोकपालकैः ।
चोरीभूतेऽथ लोकेऽहं यज्ञार्थेऽग्रसमोषधीः ॥७॥

पदच्छेद—

अपालिता अनादृता च भवद्भिः लोक पालकैः ।
चोरी भूते अथ लोके अहम् यज्ञार्थे अग्रसम् ओषधीः ॥

शब्दार्थ—

अपालिता	४.	पालन नहीं किया	चोरी भूते	८.	चोरों के सामान हो गये
अनादृता	६.	अनादर किया	अथ लोके	७.	तदन्तर सब लोग
च	५.	और	अहम्	९.	(इसी से) मैंने
भवद्भिः	१.	आप	यज्ञार्थे	१०.	यज्ञ के लिये
लोक	२.	प्रजा	अग्रसम्	१२.	(अपने में) छिपा लिया है
पालकैः ।	३.	पालकों ने (मेरा)	ओषधीः ॥	११.	ओषधियों को

श्लोकार्थ—आप प्रजा पालकों ने मेरा पालन नहीं किया । तदनन्तर सब लोग चोरों के समान हो गये । इसी से मैंने यज्ञ के लिये ओषधियों को अपने में छिपा लिया है ॥

अष्टमः श्लोकः

नूनं ता वीरुधः क्षीणा मयि कालेन भूयसा ।
तत्र योगेन दृष्टेन भवानादातुमर्हति ॥८॥

पदच्छेद—

नूनम् ताः वीरुधः क्षीणाः मयि कालेन भूयसा ।
तत्र योगेन दृष्टेन भवान् आदातुम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	५.	अवश्य	तत्र	१०.	उन्हें वहाँ से
ताः वीरुधः	४.	वे ओषधियाँ	योगेन	९.	उपायों के द्वारा
क्षीणाः	६.	नष्ट हो गईं हैं	दृष्टेन	८.	पूर्वाचार्यों के बतलाये
मयि	३.	मेरे उदर में	भवान्	७.	आप
कालेन	२.	समय हो जाने से	आदातुम्	११.	निकाल लेने में
भूयसा ।	१.	(अब) अधिक	अर्हति ॥	१२.	समर्थ हैं

श्लोकार्थ—अब अधिक समय हो जाने से मेरे उदर में वे ओषधियाँ अवश्य नष्ट हो गई हैं । आप पूर्वाचार्यों के बतलाये उपायों के द्वारा उन्हें वहाँ से निकाल लेने में समर्थ हैं ॥

नवमः श्लोकः

वत्सं कल्पय मे वीर येनाहं वत्सला तव ।
धोक्ष्ये क्षीरमयान् कामाननुरूपं च दोहनम् ॥९॥

पदच्छेद—

वत्सम् कल्पय मे वीर येन अहम् वत्सला तव ।
धोक्ष्ये क्षीरमयान् कामान् अनुरूपम् च दोहनम् ॥

शब्दार्थ—

वत्सम्	४.	बछड़ा	तव ।	११.	आपको
कल्पय	७.	व्यवस्था करें	धोक्ष्ये	१४.	दे दूँगी
मे	२.	मेरे	क्षीरमयान्	१२.	दूध के रूप में
वीर	१.	हे वीर (आप)	कामान्	१३.	सभी अभीष्ट वस्तुएँ
येन	८.	जिसमें	अनुरूपम्	३.	योग्य
अहम्	९.	मैं	च	५.	और
वत्सला	१०.	पिन्हाकर	दोहनम् ॥	६.	दोहनपात्र की

श्लोकार्थ—हे वीर ! आप मेरे योग्य बछड़ा और दोहनपात्र की व्यवस्था करें । जिससे पिन्हाकर आपको दूध के रूप में सभी अभीष्ट वस्तुएँ दे दूँगी ॥

दशमः श्लोकः

दोग्धारं च महाबाहो भूतानां भूतभावन ।
अन्नमीप्सितमूर्जस्वद्भगवान् वाञ्छते यदि ॥१०॥

पदच्छेद—

दोग्धारम् च महाबाहो भूतानाम् भूत भावन ।
अन्नम् ईप्सितम् ऊर्जस्वत् भगवान् वाञ्छते यदि ॥

शब्दार्थ—

दोग्धारम्	११.	दूहने की	अन्नम्	९.	अन्न
च	१२.	व्यवस्था करें	ईप्सितम्	७.	अभीष्ट (और)
महाबाहो	१.	लम्बी बाँह वाले	ऊर्जस्वत्	८.	शक्ति प्रद
भूतानाम्	६.	प्राणियों के लिये	भगवान्	५.	आप
भूत	२.	प्राणिमात्र के	वाञ्छते	१०.	चाहते हैं (तो)
भावनः ।	३.	रक्षक हे महाराज	यदि ॥	४.	अगर

श्लोकार्थ—लम्बी बाँह वाले प्राणिमात्र के रक्षक हे महाराज ! अगर आप प्राणियों के लिये अभीष्ट और शक्तिप्रद अन्न चाहते हैं तो दूहने की व्यवस्था करें ॥

एकादशः श्लोकः

समां च कुरु मां राजन्देववृष्टं यथा पयः ।
अपर्तावपि भद्रं ते उपावर्तेत मे विभो ॥११॥

पदच्छेद—

समाम् च कुरु माम् राजन् देव वृष्टम् यथा पयः ।
अपर्तौ अपि भद्रम् ते उपावर्तेत मे विभो ॥

शब्दार्थ—

समाम्	५.	समतल	पयः ।	११.	जल
च	१.	तथा	अपर्तौ	१२.	वर्षा ऋतु के बाद
कुरु	६.	कर दें	अपि	१३.	भी
माम्	४.	(आप) मुझे	भद्रम्	१५.	कल्याण
राजन्	३.	हे महाराज पृथु	ते	१४.	आपकी प्रजा का
देव	८.	वर्षा से	उपावर्तेत	१६.	कर सकें
वृष्टम्	९.	प्राप्त	मे	१०.	मेरा
यथा	७.	ताकि	विभो ॥	२.	सर्व समर्थ

श्लोकार्थ—तथा सर्व समर्थ हे महाराज पृथु ! आप मुझे समतल कर दें । ताकि वर्षा से प्राप्त मेरा जल वर्षा ऋतु के बाद भी आपकी प्रजा का कल्याण कर सके ॥

द्वादशः श्लोकः

इति प्रियं हितं वाक्यं भुव आदाय भूपतिः ।
वत्सं कृत्वा मनुं पाणावदुहत्सकलौषधीः ॥१२॥

पदच्छेद—

इति प्रियम् हितम् वाक्यम् भुवः आदाय भूपतिः ।
वत्सम् कृत्वा मनुम् पाणौ अदुहत् सकल ओषधीः ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	ऐसा	वत्सम्	९.	बछड़ा
प्रियम्	३.	मन पसन्द (व)	कृत्वा	१०.	बनाया (और)
हितम्	४.	हितकारी	मनुम्	८.	मनु महाराज को
वाक्यम्	५.	वचन	पाणौ	११.	अपने हाथ पर
भुवः	१.	पृथ्वी देवी का	अदुहत्	१४.	दुह लीं
आदाय	६.	सुनने पर	सकल	१२.	(उससे) सारी
भूपतिः ।	७.	महाराज पृथु ने	ओषधीः ॥	१३.	वनस्पतियाँ अन्नादि

श्लोकार्थ—पृथ्वी देवी का ऐसा मन पसन्द व हितकारी वचन सुनने पर महाराज पृथु ने मनु महाराज को बछड़ा बनाया और अपने हाथ पर उससे सारी अन्नादि वनस्पतियाँ दुह लीं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तथा परे च सर्वत्र सारमाददते बुधाः ।
ततोऽन्ये च यथाकामं दुदुहुः पृथुभाविताम् ॥१३॥

पदच्छेद—

तथा परे च सर्वत्र सारम् आददते बुधाः ।
ततः अन्ये च यथाकामम् दुदुहुः पृथु भाविताम् ॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	तथा (पृथु के)	ततः	८.	इसलिये
परे	३.	दूसरे	अन्ये	९.	दूसरे जन
च	२.	समान	च	१०.	भी
सर्वत्र	५.	सब जगह से	यथाकामम्	१३.	इच्छानुसार
सारम्	६.	सार अंश	दुदुहुः	१४.	दुहने लगे
आददते	७.	ग्रहण कर लेते हैं	पृथु	११.	महाराज पृथु के
बुधाः ।	४.	चतुर ज्ञानी लोग	भाविताम् ॥	१२.	वशीभूत वसुधा को

श्लोकार्थ—तथा राजा पृथु के समान दूसरे चतुर ज्ञानी लोग सब जगह से सार अंश ग्रहण कर लेते हैं । इसीलिये दूसरे जन भी महाराज पृथु के वशीभूत वसुधा को इच्छानुसार दुहने लगे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

ऋषयो दुदुहुर्देवीमिन्द्रियेष्वथ सत्तम ।
वत्सं बृहस्पतिं कृत्वा पयश्छन्दोमयं शुचि ॥१४॥

पदच्छेद—

ऋषयः दुदुहुः देवीम् इन्द्रियेषु अथ सत्तम ।
वत्सम् बृहस्पतिम् कृत्वा पयः छन्दोमयम् शुचि ॥

शब्दार्थ—

ऋषयः	३.	ऋषियों ने	वत्सम्	५.	बछड़ा
दुदुहुः	१२.	दुहा	बृहस्पतिम्	४.	आचार्य बृहस्पति को
देवीम्	८.	पृथ्वी देवी से	कृत्वा	६.	बनाकर
इन्द्रियेषु	७.	मन, वाणी और श्रवण में	पयः	११.	दूध
अथ	२.	तदनन्तर	छन्दोमयम्	९.	वेदस्वरूप
सत्तम ।	१.	साधु श्रेष्ठ हे विदुर	शुचि ॥	१०.	पवित्र

श्लोकार्थ—साधुश्रेष्ठ हे विदुर ! तदनन्तर ऋषियों ने आचार्य बृहस्पति को बछड़ा बनाकर मन, वाणी और श्रवण में वेद स्वरूप पवित्र दूध दुहा ॥

पञ्चदशः श्लोकः

कृत्वा वत्सं सुरगणा इन्द्रं सोममदूदुहन्।
हिरण्मयेन पात्रेण वीर्यमोजो बलं पयः ॥१५॥

पदच्छेद—

कृत्वा वत्सम् सुरगणाः इन्द्रम् सोमम् अदूदुहन् ।
हिरण्मयेन पात्रेण वीर्यम् ओजो बलम् पयः ॥

शब्दार्थ—

कृत्वा	४.	बनाकर	हिरण्मयेन	५.	सुवर्ण के
वत्सम्	३.	बछड़ा	पात्रेण	६.	पात्र में
सुरगणाः	१.	देवताओं ने	वीर्यम्	८.	मनोबल
इन्द्रम्	२.	इन्द्र को	ओजो	९.	इन्द्रियबल और
सोमम्	७.	अमृत	बलम्	१०.	शारीरिक बल रूप
अदूदुहन् ।	१२.	दुहा	पयः ॥	११.	दूध

श्लोकार्थ—देवताओं ने इन्द्र को बछड़ा बनाकर सुवर्ण के पात्र में अमृत, मनोबल, इन्द्रियबल और शारीरिक बल रूप दूध दुहा ॥

षोडशः श्लोकः

दैतेया दानवा वत्सं प्रह्लादमसुरर्षभम् ।
विधायादूदुहन् क्षीरमयःपात्रे सुरासवम् ॥१६॥

पदच्छेद—

दैतेयाः दानवाः वत्सम् प्रह्लादम् असुर ऋषभम् ।
विधाय अदूदुहन् क्षीरम् अयः पात्रे सुरा आसवम् ॥

शब्दार्थ—

दैतेयाः	१.	दैत्यों और	विधाय	७.	बनाकर
दानवाः	२.	दानवों ने	अदूदुहन्	१२.	दुहा
वत्सम्	६.	बछड़ा	क्षीरम्	११.	दूध
प्रह्लादम्	५.	प्रह्लाद जी को	अयः	८.	लोहे के
असुर	३.	असुरों में	पात्रे	९.	पात्र में
ऋषभम् ।	४.	श्रेष्ठ	सुरा आसवम् ॥	१०.	मदिरा और ताड़ी आदि के रूप में

श्लोकार्थ—दैत्यों और दानवों ने असुरों में श्रेष्ठ प्रह्लाद जी को बछड़ा बनाकर लोहे के पात्र में मदिरा और ताड़ी आदि के रूप में दूध दुहा ॥

सप्तदशः श्लोकः

गन्धर्वाप्सरसोऽधुक्षन् पात्रे पद्ममये पयः।
वत्सं विश्वावसुं कृत्वा गान्धर्वं मधु सौभगम् ॥१७॥

पदच्छेद—

गन्धर्व अप्सरसः अधुक्षन् पात्रे पद्ममये पयः।
वत्सम् विश्वावसुम् कृत्वा गान्धर्वम् मधु सौभगम् ॥

शब्दार्थ—

गन्धर्व	१. गन्धर्व और	वत्सम्	४. बछड़ा
अप्सरसः	२. अप्सराओं ने	विश्वावसुम्	३. विश्वावसु को
अधुक्षन्	१२. दुहा	कृत्वा	५. बनाकर
पात्रे	७. पात्र में	गान्धर्वम्	८. संगीत का (और)
पद्ममये	६. कमल के	मधु	९. मधुर
पयः।	११. दूध	सौभगम् ॥	१०. सौन्दर्य का

श्लोकार्थ—गन्धर्व और अप्सराओं ने विश्वावसु को बछड़ा बनाकर कमल के पात्र में संगीत और सौन्दर्य का दूध दुहा ॥

अष्टादशः श्लोकः

वत्सेन पितरोऽर्यम्णा कव्यं क्षीरमधुक्षत।
आमपात्रे महाभागाः श्रद्धया श्राद्धदेवताः ॥१८॥

पदच्छेद—

वत्सेन पितरः अर्यम्णा कव्यम् क्षीरम् अधुक्षत।
आम पात्रे महाभागाः श्रद्धया श्राद्ध देवताः ॥

शब्दार्थ—

वत्सेन	६. बछड़े से	आम	७. मिट्टी के कच्चे
पितरः	४. पितरों ने	पात्रे	८. पात्र में
अर्यम्णा	५. अर्यमा नाम के	महाभागः	१. बड़भागी
कव्यम्	१०. पितृ अन्न रूप	श्रद्धया	९. श्रद्धा के साथ
क्षीरम्	११. दूध	श्राद्ध	२. श्राद्ध कर्म के
अधुक्षत।	१२. दुहा	देवताः ॥	३. देवता

श्लोकार्थ—बड़भागी श्राद्ध कर्म के देवता पितरों ने अर्यमा नाम के बछड़े से मिट्टी के कच्चे पात्र में श्रद्धा के साथ पितृ अन्नरूप दूध दुहा ॥

एकोनविंशः श्लोकः

प्रकल्प्य वत्सं कपिलं सिद्धाः सङ्कल्पनामयीम् ।
सिद्धिं नभसि विद्यां च ये च विद्याधरादयः ॥१९॥

पदच्छेद—

प्रकल्प्य वत्सम् कपिलम् सिद्धाः संकल्पनामयीम् ।
सिद्धिम् नभसि विद्याम् च ये च विद्याधर आदयः ॥

शब्दार्थ—

प्रकल्प्य	४.	बनाकर	नभसि	५	आकाशरूप पात्र में
वत्सम्	३	बछड़ा	विद्याम्	१२.	अन्तर्धानादि विद्या को दुहा
कपिलम्	२	कपिलदेव जी को	च ये	८.	और जो
सिद्धाः	१.	सिद्धों ने	च	११.	उन्होंने
संकल्पनामयीम् ।	६.	अणिमादि	विद्याधर	९.	विद्याधर
सिद्धिम्	७.	अष्टसिद्धियों को	आदयः ॥	१०.	आदि यक्ष थे

श्लोकार्थ—सिद्धों ने कपिलदेव जी को बछड़ा बनाकर आकाशरूप पात्र में अणिमादि अष्ट सिद्धियों को, और जो विद्याधर आदि यक्ष थे उन्होंने अन्तर्धानादि विद्या को दुहा ॥

विंशः श्लोकः

अन्ये च मायिनो मायामन्तर्धानाद्भुतात्मनाम् ।
मयं प्रकल्प्य वत्सं ते दुदुहुर्धारणामयीम् ॥२०॥

पदच्छेद—

अन्ये च मायिनः मायाम् अन्तर्धान अद्भुत आत्मनाम् ।
मयम् प्रकल्प्य वत्सम् ते दुदुहुः धारणामयीम् ॥

शब्दार्थ—

अन्ये	२.	दूसरे	मयम्	५.	मयदानव को
च	१.	तथा (जो)	प्रकल्प्य	७.	बनाकर
मायिनः	३.	मायावी (थे)	वत्सम्	६.	बछड़ा
मायाम्	११.	मायारूप	ते	४.	उन्होंने
अन्तर्धान	८.	अन्तर्धानादि	दुदुहुः	१३.	दूध रूप से दुहा
अद्भुत	९.	विचित्र	धारणामयीम् ॥	१२.	संकल्पमयी माया को
आत्मनाम् ।	१०.	स्वरूप वाली			

श्लोकार्थ—तथा जो दूसरे मायावी थे, उन्होंने मयदानव को बछड़ा बनाकर अन्तर्धानादि विचित्र स्वरूप वाली संकल्पमयी माया को दूध रूप से दुहा ॥

एकविंशः श्लोकः

यक्षरक्षांसि भूतानि पिशाचाः पिशिताशनाः ।
भूतेशवत्सा दुदुहुः कपाले क्षतजासवम् ॥२१॥

पदच्छेद—

यक्ष रक्षांसि भूतानि पिशाचाः पिशित अशनाः ।
भूतेश वत्साः दुदुहुः कपाले क्षतज आसवम् ॥

शब्दार्थ—

यक्ष	३. यक्ष	भूतेश	७. रुद्र को
रक्षांसि	४. राक्षस	वत्साः	८. बछड़ा बनाकर
भूतानि	५. भूत (और)	दुदुहुः	१२. दुहा
पिशाचाः	६. पिशाचों ने	कपाले	९. खप्पर में
पिशित	१. मांस	क्षतज	१०. रक्त रूप
अशनाः ।	२. खाने वाले	आसवम् ॥	११. दूध

श्लोकार्थ—मांस खाने वाले यक्ष, राक्षस, भूत और पिशाचों ने रुद्र को बछड़ा बनाकर खप्पर में रक्त रूप दूध दुहा ॥

द्वाविंशः श्लोकः

तथाहयो दन्दशूकाः सर्पा नागाश्च तक्षकम् ।
विधाय वत्सं दुदुहुर्बिलपात्रे विषं पयः ॥२२॥

पदच्छेद—

तथा अहयः दन्दशूकाः सर्पाः नागाः च तक्षकम् ।
विधाय वत्सम् दुदुहुः बिलपात्रे विषम् पयः ॥

शब्दार्थ—

तथा	२. और	विधाय	८. बनाकर
अहयः	१. बिना फन वाले	वत्सम्	७. बछड़ा
दन्दशूकाः सर्पाः	३. फन वाले सांप	दुदुहुः	१२. दुहा
नागाः	५. नागों ने	बिल पात्रे	९. अपने मुखरूप पात्र में
च	४. तथा	विषम्	१०. विषरूप
तक्षकम् ।	६. तक्षक को	पयः ॥	११. दूध

श्लोकार्थ—बिना फन वाले और फन वाले सांप तथा नागों ने तक्षक को बछड़ा बनाकर अपने मुख रूप पात्र में विषरूप दूध दुहा ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

पशवो यवसं क्षीरं वत्सं कृत्वा च गोवृषम् ।
अरण्यपात्रे चाधुक्षन्मृगेन्द्रेण च दंष्ट्रिणः ॥२३॥

पदच्छेद—

पशवः यवसम् क्षीरम् वत्सम् कृत्वा च गोवृषम् ।
अरण्यपात्रे च अधुक्षन् मृगेन्द्रेण च दंष्ट्रिणः ॥

शब्दार्थ—

पशवः	२.	पशुओं ने	गोवृषम् ।	३.	नन्दीश्वर को
यवसम्	७.	घास रूप	अरण्यपात्रे	६.	वनरूप पात्र में
क्षीरम्	८.	दूध	च	१०.	तथा
वत्सम्	४.	बछड़ा	अधुक्षन्	९.	दुहा
कृत्वा	५.	बनाकर	मृगेन्द्रेण च	१२.	सिंह को बछड़ा बनाया
च	१.	और	दंष्ट्रिणः ॥	११.	दाढ़ वाले पशुओं ने

श्लोकार्थ—और पशुओं ने नन्दीश्वर को बछड़ा बनाकर वनरूप पात्र में घास रूप दूध दुहा तथा दाढ़ वाले पशुओं ने सिंह को बछड़ा बनाया ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

क्रव्यादाः प्राणिनः क्रव्यं दुदुहुः स्वे कलेवरे ।
सुपर्णवत्सा विहगाश्चरं चाचरमेव च ॥२४॥

पदच्छेद—

क्रव्यादाः प्राणिनः क्रव्यम् दुदुहुः स्वे कलेवरे ।
सुपर्ण वत्साः विहगाः चरम् च अचरम् एव च ॥

शब्दार्थ—

क्रव्यादाः	१.	मांस भक्षी	सुपर्ण	८.	गरुड़ को
प्राणिनः	२.	प्राणियों ने (सिंह को बछड़ा बनाकर)	वत्साः	९.	बछड़ा बनाकर
क्रव्यम्	५.	कच्चा मांस रूप	विहगाः	७.	पक्षियों ने
दुदुहुः	६.	दूध दुहा	चरम्	१०.	चर (कीटादि
स्वे	३.	अपने	च अचरम्	११.	और अचर (फलादि)
कलेवरे ।		शरीर में	एव च ॥	१२.	रूप दूध दुहा

श्लोकार्थ—मांस भक्षी प्राणियों ने सिंह को बछड़ा बनाकर अपने शरीर में कच्चा मांस रूप दूध दुहा । पक्षियों ने गरुड़ को बछड़ा बनाकर चर कीटादि और अचल फलादि रूप दूध दुहा ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

वटवत्सा वनस्पतयः पृथग्रसमयं पयः ।
गिरयो हिमवद्वत्सा नानाधातून् स्वसानुषु ॥२५॥

पदच्छेद—

वट वत्साः वनस्पतयः पृथक् रस मयम् पयः ।
गिरयः हिमवत् वत्साः नाना धातून् स्वसानुषु ॥

शब्दार्थ—

वट	२.	वट वृक्ष को	गिरयः	७.	पर्वतों ने
वत्साः	३.	बछड़ा बनाकर	हिमवत्	८.	हिमालय को
वनस्पतयः	१.	वनस्पतियों ने	वत्साः	९.	बछड़ा बनाकर
पृथक्	४.	भिन्न-भिन्न	नाना	११.	अनेक प्रकार के
रस मयम्	५.	रस रूप	धातून्	१२.	धातु रूप दूध (दुहा)
पयः ।	६.	दूध दुहा	स्वसानुषु ॥	१०.	अपने शिखरों पर

श्लोकार्थ—वनस्पतियों ने वट वृक्ष को भिन्न-भिन्न रसरूप दूध दुहा । पर्वतों ने हिमालय को बछड़ा बनाकर अपने शिखरों पर अनेक प्रकार के धातु रूप दूध दुहा ॥

षड्विंशः श्लोकः

सर्वे स्वमुख्यवत्सेन स्वे स्वे पात्रे पृथक् पयः ।
सर्वकामदुघां पृथ्वीं दुदुहुः पृथुभाविताम् ॥२६॥

पदच्छेद—

सर्वे स्वमुख्य वत्सेन स्वे-स्वे पात्रे पृथक् पयः ।
सर्वकाम दुघाम् पृथ्वीम् दुदुहुः पृथु भाविताम् ॥

शब्दार्थ—

सर्वे	१.	सभी लोगों ने	सर्वकाम	७.	सभी कामनाओं को
स्वमुख्य	२.	अपने मुखिया को	दुघाम्	८.	देने वाली
वत्सेन	३.	बछड़ा बनाकर	पृथ्वीम्	९.	पृथ्वी से
स्वे-स्वे पात्रे	४.	अपने-अपने पात्र में	दुदुहुः	१२.	दुहा
पृथक्	१०.	अलग-अलग	पृथु	५.	महाराज पृथु से
पयः ।	११.	दूध	भाविताम् ॥	६.	वश में की गई

श्लोकार्थ—सभी लोगों ने अपने मुखिया को बछड़ा बनाकर अपने-अपने पात्र में महाराज पृथु से वश में की गई सभी कामनाओं को देने वाली पृथ्वी से अलग-अलग दूध दुहा ॥

सप्तविंशः श्लोकः

एवं पृथ्वादयः पृथ्वीमन्नादाः स्वन्नमात्मनः ।
दोहवत्सादिभेदेन क्षीरभेदं कुरूद्वह ॥२७॥

पदच्छेद—

एवम् पृथु आदयः पृथ्वीम् अन्नादाः स्वन्नम् आत्मनः ।
दोह वत्स आदि भेदेन क्षीर भेदम् कुरूद्वह ॥

शब्दार्थ—

एवम्	७.	इस प्रकार	दोह	९.	दुहने का पात्र (और)
पृथु	२.	महाराज पृथु	वत्स	१०.	बछड़ा
आदयः	३.	आदि लोगों ने	आदि	११.	इत्यादि के
पृथ्वीम्	५.	पृथ्वी से	भेदेन	१२.	भेद से
अन्नादाः	१.	अन्न खाने वाले	क्षीर	१३.	दूध में
स्वन्नम्	६.	अपना-अपना अन्न दुहा	भेदम्	१४.	अन्तर (हो गया)
आत्मनः ।	४.	अपने लिये	कुरूद्वह ॥	८.	हे विदुर जी

श्लोकार्थ—अन्न खाने वाले महाराज पृथु आदि लोगों ने अपने लिये पृथ्वी से अपना-अपना अन्न दुहा । इस प्रकार हे विदुर जी ! दुहने का पात्र और बछड़ा इत्यादि के भेद से दूध में अन्तर हो गया ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

ततो महीपतिः प्रीतः सर्वकामदुघां पृथुः ।
दुहितृत्वे चकारेमां प्रेम्णा दुहितृवत्सलः ॥२८॥

पदच्छेद—

ततः महीपतिः प्रीतः सर्वकाम दुघाम् पृथुः ।
दुहितृत्वे चकार इमाम् प्रेम्णा दुहितृ वत्सलः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	दुहितृत्वे	१०.	पुत्री के रूप में
महीपतिः	५.	महाराज	चकार	१२.	स्वीकार किया
प्रीतः	२.	प्रसन्न होकर	इमाम्	९.	इस पृथ्वी को
सर्वकाम	७.	सभी मनोरथों को	प्रेम्णा	११.	बड़े प्रेम से
दुघाम्	८.	देने वाली	दुहितृ	३.	पुत्रियों पर
पृथुः ।	६.	पृथु ने	वत्सलः ॥	४.	वात्सल्य भाव रखने वाले

श्लोकार्थ—तदनन्तर प्रसन्न होकर पुत्रियों पर वात्सल्यभाव रखने वाले महाराज पृथु ने सभी मनोरथों को देने वाली इस पृथ्वी को पुत्री के रूप में बड़े प्रेम से स्वीकार किया ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

चूर्णयन् स्वधनुष्कोट्या गिरिकूटानि राजराट् ।
भूमण्डलमिदं वैन्यः प्रायश्चक्रे समं विभुः ॥२९॥

पदच्छेद—

चूर्णयन् स्व धनुः कोटया गिरि कूटानि राजराट् ।
भूमण्डलम् इदम् वैन्यः प्रायः चक्रे समम् विभुः ॥

शब्दार्थ—

चूर्णयन्	९.	चूर्ण करके	भूमण्डलम्	११.	पृथ्वी मण्डल को
स्व	४.	अपने	इदम्	१०.	इस
धनुः	५.	धनुष की	वैन्यः	३.	महाराज पृथु
कोटया	६.	नोक से	प्रायः	१२.	अधिकतर
गिरि	७.	पर्वतों के	चक्रे	१४.	बना दिया
कूटानि	८.	शिखरों को	समम्	१३.	समतल
राजराट् ।	१.	राजाधिराज	विभुः ॥	२.	सर्व समर्थ

श्लोकार्थ—राजाधिराज सर्व समर्थ महाराज पृथु ने अपने धनुष की नोक से पर्वतों के शिखरों को चूर्ण करके इस पृथ्वी मण्डल को अधिकतर समतल बना दिया ॥

त्रिंशः श्लोकः

अथास्मिन् भगवान् वैन्यः प्रजानां वृत्तिदः पिता ।
निवासान् कल्पयाञ्चक्रे तत्र तत्र यथार्हतः ॥३०॥

पदच्छेद—

अथ अस्मिन् भगवान् वैन्यः प्रजानाम् वृत्तिदः पिता ।
निवासान् कल्पयान् चक्रे तत्र तत्र यथा अर्हतः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	उसके बाद	निवासान्	१२.	अनेकों आवास
अस्मिन्	७.	उस पृथ्वी पर	कल्पयान्	१३.	निर्माण की योजना
भगवान्	५.	महाराज	चक्रे	१४.	बनायी
वैन्यः	६.	पृथु ने	तत्र	८.	जगह
प्रजानाम्	२.	प्रजाओं को	तत्र	९.	जगह पर
वृत्तिदः	३.	जीविका देने वाले	यथा	११.	अनुसार
पिताः ।	४.	पिता के समान रक्षक	अर्हतः ॥	१०.	के आवश्यकता

श्लोकार्थ—उसके बाद प्रजाओं को जीविका देने वाले पिता के समान रक्षक महाराज पृथु ने उस पृथ्वी पर जगह-जगह पर आवश्यकता के अनुसार अनेकों आवास निर्माण की योजना बनायी ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

ग्रामान् पुरः पत्तनानि दुर्गाणि विविधानि च।
घोषान् व्रजान् सशिबिरानाकरान् खेटखर्वटान् ॥३१॥

पदच्छेद—

ग्रामान् पुरः पत्तनानि दुर्गाणि विविधानि च।
घोषान् व्रजान् सशिविरान् आकरान् खेट-खर्वटान् ॥

शब्दार्थ—

ग्रामान्	१.	(उन्होंने) गांव	घोषान्	७.	अहीरों की बस्ती
पुरः	२.	कस्बे	व्रजान्	८.	पशु आवास
पत्तनानि	३.	नगर	स	१०.	सहित
दुर्गाणि	५.	किले	शिविरान्	९.	पडावों के
विविधानि	४.	अनेकों प्रकार के	आकरान्	११.	खाने
च।	६.	और	खेट-खर्वटान् ॥	१२.	पुरवे पहाड़ी गांव बसाये

श्लोकार्थ—उन्होंने कस्बे, नगर अनेकों प्रकार के किले और अहीरों की बस्ती, पशु आवास पडावों के सहित, खानें, पुरवे, पहाड़ी गांव बसाये ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

प्राक्पृथोरिह नैवैषा पुरग्रामादिकल्पना।
यथासुखं वसन्ति स्म तत्र तत्राकुतोभयाः ॥३२॥

पदच्छेद—

प्राक् पृथोः इह न एव एषा पुर ग्राम आदि कल्पना।
यथा सुखम् वसन्ति स्म तत्र तत्र अकुतो भयाः ॥

शब्दार्थ—

प्राक्	२.	पहले	यथा	१४.	पूर्वक
पृथोः	१.	महाराज पृथु के	सुखम्	१३.	सुख
इह	३.	इस पृथ्वी पर	वसन्ति	१५.	बस जाते
न एव	८.	नहीं हुआ था (लोग)	स्म	१६.	थे
एषा	६.	यह	तत्र	११.	जगह
पुर ग्राम	४.	कस्बा गांव	तत्र	१२.	जगह पर
आदि	५.	इत्यादि आवासों का	अकुतो	१०.	रहित होकर
कल्पना।	७.	निर्माण	भयाः ॥	९.	भय से

श्लोकार्थ—महाराज पृथु से पहले इस पृथ्वी पर कस्बा, गांव इत्यादि आवासों का निर्माण नहीं हुआ था। लोग भय से रहित होकर जगह-जगह पर सुख पूर्वक बस जाते थे ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पृथुविजये अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

एकोनविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—अथादीक्षत राजा तु हयमेधशतेन सः।
ब्रह्मावर्ते मनोः क्षेत्रे यत्र प्राची सरस्वती ॥१॥

पदच्छेद— अथ अदीक्षत राजा तु हयमेध शतेन सः।
ब्रह्मावर्ते मनोः क्षेत्रे यत्र प्राची सरस्वती ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	ब्रह्मावर्ते	५.	ब्रह्मावर्त
अदीक्षत	९.	दीक्षा ली थी	मनोः	४.	मनु महाराज के
राजा तु	३.	महाराज पृथु ने	क्षेत्रे	६.	क्षेत्र में
हयमेध	८.	अश्वमेध यज्ञ की	यत्र	१०.	जहाँ पर
शतेन	७.	एक सौ	प्राची	११.	पूर्वमुख बहती
सः।	२.	उन	सरस्वती ॥	११.	सरस्वती नदी

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन महाराज पृथु ने मनु महाराज के ब्रह्मावर्त क्षेत्र में एक सौ अश्वमेध यज्ञ की दीक्षा ली थी; जहाँ पर सरस्वती नदी पूर्वमुख बहती थी ॥

द्वितीयः श्लोकः

तदभिप्रेत्य भगवान् कर्मातिशयमात्मनः।
शतक्रतुर्न ममृषे पृथोर्यज्ञमहोत्सवम् ॥२॥

पदच्छेद— तद् अभिप्रेत्य भगवान् कर्म अतिशयम् आत्मनः।
शतक्रतुः न ममृषे पृथोः यज्ञ महोत्सवम् ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	उस कर्म को	शतक्रतुः	७.	इन्द्र
अभिप्रेत्य	५.	समझ कर	न	११.	नहीं
भगवान्	६.	देवराज	ममृषे	१२.	सह सके
कर्म	३.	पुण्य कर्म से	पृथोः	८.	पृथु महाराज के
अतिशयम्	४.	अधिक	यज्ञ	९.	अश्वमेध यज्ञ के
आत्मनः।	२.	अपने	महोत्सवम् ॥	१०.	समारोह को

श्लोकार्थ—उस कर्म को अपने पुण्यकर्म से अधिक समझकर देवराज इन्द्र पृथु महाराज के अश्वमेध यज्ञ के समारोह को नहीं सह सके ॥

तृतीयः श्लोकः

यत्र यज्ञपतिः साक्षाद्भगवान् हरिरीश्वरः ।
अन्वभूयत सर्वात्मा सर्वलोकगुरुः प्रभुः ॥३॥

पदच्छेद—

यत्र यज्ञ पतिः साक्षात् भगवान् हरिः ईश्वरः ।
अन्वभूयत सर्व आत्मा सर्वलोक गुरुः प्रभुः ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१.	जिस यज्ञ में	अन्वभूयत	१२.	दर्शन दिया था
यज्ञपतिः	२	यज्ञेश्वर	सर्व	४.	सब की
साक्षात्	११.	साक्षात् प्रत्यक्ष रूप से	आत्मा	५.	आत्मा
भगवान्	९.	भगवान्	सर्वलोक	६.	सारे लोकों के
हरिः	१०.	श्री हरि ने	गुरुः	७.	गुरु
ईश्वरः ।	३.	सबके स्वामी	प्रभुः ॥	८	सर्व समर्थ

श्लोकार्थ—जिस यज्ञ में यज्ञेश्वर, सबके स्वामी, सबकी आत्मा, सारे लोकों के गुरु, सर्वसमर्थ भगवान् श्री हरि ने साक्षात् प्रत्यक्ष रूप से दर्शन दिया था ॥

चतुर्थः श्लोकः

अन्वितो ब्रह्मशर्वाभ्यां लोकपालैः सहानुगैः ।
उपगीयमानो गन्धर्वैर्मुनिभिश्चाप्सरोगणैः ॥४॥

पदच्छेद—

अन्वितः ब्रह्म शर्वाभ्याम् लोक पालैः सह अनुगैः ।
उपगीयमानः गन्धर्वैः मुनिभिः च अप्सरो गणैः ॥

शब्दार्थ—

अन्वितः	६.	साथ थे (तथा)	उपगीयमानः	१२.	यशोगान कर रहे थे
ब्रह्म	१.	ब्रह्मा जी (और)	गन्धर्वैः	७.	गन्धर्व
शर्वाभ्याम्	२.	महादेव जी	मुनिभिः	८.	ऋषि
लोक पालैः	५.	आठों लोक पाल (उनके)	च	१०.	और
सह	४.	साथ	अप्सरो	११.	अपसरायें (उनका)
अनुगैः	३.	अपने अनुचरों के	गणैः ॥	९.	गण

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी और महादेव जी अपने अनुचरों के साथ आठों लोकपाल उनके साथ थे तथा गन्धर्व, ऋषिगण और अप्सरायें उनका यशोगान कर रहे थे ॥

पञ्चमः श्लोकः

सिद्धा विद्याधरा दैत्या दानवा गुह्यकादयः।
सुनन्दनन्दप्रमुखाः पार्षदप्रवरा हरेः ॥५॥

पदच्छेद—

सिद्धा विद्याधराः दैत्याः दानवाः गुह्यक आदयः।
सुनन्द नन्द प्रमुखाः पार्षद प्रवराः हरेः ॥

शब्दार्थ—

सिद्धाः	१.	वहाँ पर सिद्ध	सुनन्द	११.	सुनन्द (और)
विद्याधराः	२.	विद्याधर	नन्द	१२.	नन्द (भी आये)
दैत्याः	३.	दैत्य	प्रमुखाः	१०.	प्रधान
दानवाः	४.	दानव (और)	पार्षद	९.	पार्षदों में
गुह्यक	५.	यक्ष	प्रवराः	८	श्रेष्ठ
आदयः।	६.	इत्यादि देवगण (तथा)	हरेः ॥	७	भगवान् के

श्लोकार्थ—वहाँ पर सिद्ध, विद्याधर, दैत्य, दानव और यक्ष इत्यादि देवगण तथा भगवान् के श्रेष्ठ पार्षदों में प्रधान सुनन्द और नन्द भी आये ॥

षष्ठः श्लोकः

कपिलो नारदो दत्तो योगेशाः सनकादयः।
तमन्वीयुर्भागवता ये च तत्सेवनोत्सुकाः ॥६॥

पदच्छेद—

कपिलः नारदः दत्तः योगेशाः सनक आदयः।
अन्वीयुः भागवताः ये च तत् सेवन उत्सुका ॥

शब्दार्थ—

कपिलः	१.	भगवान् कपिल	अन्वीयुः	१२.	पीछे-पीछे पधारे
नारदः	२.	देवर्षि नारद	भागवताः	१०.	भगवद् भक्त
दत्तः	३.	भगवान् दत्तात्रेय	ये	६.	जो
योगेशाः	५.	योगेश्वर	च	९.	वे
सनक आदयः।	४.	सनकादि चारों	तत् सेवन	७.	उन् भगवान् की सेवा में
तम्	११.	भगवान् श्री हरि के	उत्सुकाः ॥	८.	तत्पर रहते हैं

श्लोकार्थ—भगवान् कपिल, देवर्षि नारद, भगवान् दत्तात्रेय, सनकादि चारों योगेश्वर, जो उन भगवान् की सेवा में तत्पर रहते हैं, वे भगवद्भक्त भगवान् श्री हरि के पीछे-पीछे पधारे ॥

सप्तमः श्लोकः

यत्र धर्मदुघा भूमिः सर्वकामदुघा सती ।
दोग्धि स्माभीप्सितानर्थान् यजमानस्य भारत ॥७॥

पदच्छेद—

यत्र धर्मदुघा भूमिः सर्वकाम दुघा सती ।
दोग्धि स्म अभीप्सितान् अर्थान् यजमानस्य भारत ॥

शब्दार्थ—

यत्र	२.	जिस यज्ञ में	दोग्धि स्म	१०.	प्रदान किया
धर्मदुघा	३.	यज्ञ सामग्रियों को देने वाली	अभीप्सितान्	८.	चाहे गये
भूमिः	४.	पृथ्वी	अर्थान्	९.	मनोरथों को
सर्वकाम	५.	सभी मनोरथों को	यजमानस्य	७.	महाराज पृथु के
दुघा सती ।	६.	पूर्ण करने वाली हुई (उसने)	भारत ॥	१.	हे विदुर जी

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! जिस यज्ञ में सामग्रियों को देने वाली पृथ्वी सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाली हुई । उसने महाराज पृथु के चाहे गये मनोरथों को प्रदान किया ॥

अष्टमः श्लोकः

ऊहुः सर्वरसान्नद्यः क्षीरदध्यन्नगोरसान् ।
तरवो भूरिवर्ष्माणः प्रासूयन्त मधुच्युतः ॥८॥

पदच्छेद—

ऊहुः सर्वरसान् नद्यः क्षीर दधि अन्न गोरसान् ।
तरवः भूरि वर्ष्माणः प्रासूयन्त मधु च्युतः ॥

शब्दार्थ—

ऊहुः	६.	बहाती थीं	तरवः	७.	वृक्षों ने
सर्वरसान्	५.	सभी रसों को	भूरि	८.	अधिक
नद्यः	१.	नदियाँ	वर्ष्माणः	९.	फल
क्षीर दधि	२.	दूध, दही	प्रासूयन्त	१०.	उत्पन्न किये
अन्न	३.	अन्न (और)	मधु	११.	जिनसे मधु
गोरसान् ।	४.	गोरस आदि	च्युतः ॥	१२.	चूता था

श्लोकार्थ—नदियाँ दूध दही, अन्न और गोरस आदि सभी रसों को बहाती थीं । वृक्षों ने अधिक फल उत्पन्न किये जिनसे मधु चूता था ॥

नवमः श्लोकः

सिन्धवो रत्ननिकरान् गिरयोऽन्नं चतुर्विधम् ।
उपायनमुपाजह्रुः सर्वे लोकाः सपालकाः ॥९॥

पदच्छेद—

सिन्धवः रत्न निकरान् गिरयः अन्नं चतुर्विधम् ।
उपायनम् उपाजह्रुः सर्वे लोकाः सपालकाः ॥

शब्दार्थ—

सिन्धवः	१.	समुद्र ने	उपायनम्	९.	उपहार
रत्न निकरान्	२.	रत्नों की राशि	उपाजह्रुः	१०.	भेंट किये
गिरयः	३.	पर्वतों ने	सर्वे	७.	सम्पूर्ण
अन्नं	५.	अन्न	लोकाः	८.	लोकों ने (अन्य)
चतुर्विधम् ।	४.	(भक्ष्य भोज्य चोष्य लेह्य) चार प्रकार के	सपालकाः ॥	६.	लोकपालों के सहित

श्लोकार्थ—समुद्र ने रत्नों की राशि, पर्वतों ने भोज्य, भक्ष्य, चोष्य, लेह्य चार प्रकार के अन्न और लोकपालों के सहित सम्पूर्ण लोकों ने अन्य उपहार भेंट किये ॥

दशमः श्लोकः

इति चाधोक्षजेशस्य पृथोस्तु परमोदयम् ।
असूयन् भगवानिन्द्रः प्रतिघातमचीकरत् ॥१०॥

पदच्छेद—

इति च अधोक्षज ईशस्य पृथोः तु परम उदयम् ।
असूयन् भगवान् इन्द्रः प्रतिघातम् अचीकरत् ॥

शब्दार्थ—

इति	५.	इस	परम उदयम् ।	६.	महान् उत्कर्ष को देखकर
च	१.	और	असूयन्	१०.	ईर्ष्या करते हुये
अधोक्षज	२.	भगवान् श्री हरि को ही	भगवान्	८.	देवराज
ईशस्य	३.	प्रभु मानने वाले	इन्द्रः	९.	इन्द्र ने
पृथोः	४.	महाराज पृथु के	प्रतिघातम्	११.	विघ्न डालने की
तु	७.	इधर	अचीकरत् ॥	१२.	चेष्टा की

श्लोकार्थ—और भगवान् श्री हरि को ही प्रभु मानने वाले महाराज पृथु के इस महान् उत्कर्ष को देखकर इधर देवराज इन्द्र ने ईर्ष्या करते हुये विघ्न डालने की चेष्टा की ।

एकादशः श्लोकः

चरमेणाश्वमेधेन यजमाने यजुष्पतिम् ।
वैन्ये यज्ञपशुं स्पर्धन्नपोवाह तिरोहितः ॥११॥

पदच्छेद—

चरमेण अश्वमेधेन यजमाने यजुष्पतिम् ।
वैन्ये यज्ञ पशुम् स्पर्धन् अपोवाह तिरोहितः ॥

शब्दार्थ—

चरमेण	२.	अन्तिम सौवें	यज्ञ	८.	यज्ञ के
अश्वमेधेन	३.	अश्वमेध यज्ञ से	पशुम्	९.	घोड़े को
यजमाने	५.	आराधना कर रहे थे	स्पर्धन्	६.	ईर्ष्यावश इन्द्र ने
यजुष्पतिम् ।	४.	यज्ञ पति श्री हरि की	अपोवाह	१०.	चुरा लिया
वैन्ये	१.	(जिस समय) महाराज पृथु	तिरोहितः ॥	७.	गुप्त रूप से

श्लोकार्थ—जिस समय महाराज पृथु अन्तिम सौवें अश्वमेध यज्ञ से यज्ञपति श्री हरि की आराधना कर रहे थे, उस समय ईर्ष्यावश इन्द्र ने गुप्तरूप से यज्ञ के घोड़े को चुरा लिया ।

द्वादशः श्लोकः

तमत्रिर्भगवानैक्षत्त्वरमाणं विहायसा ।
आमुक्तमिव पाखण्डं योऽधर्मे धर्मविभ्रमः ॥१२॥

पदच्छेद—

तम् अत्रिः भगवान् ऐक्षत् त्वर माणम् विहायसा ।
आमुक्तम् इव पाखण्डम् यः अधर्मे धर्म विभ्रमः ॥

शब्दार्थ—

तम्	६.	उस इन्द्र को	आमुक्तम्	१.	कवच के
अत्रिः	८.	अत्रि ऋषि ने	इव	२.	समान
भगवान्	७.	भगवान्	पाखण्डम्	३.	पाखण्डी वेश में
ऐक्षत्	९.	देखा	यः अधर्मे	१०.	जो अधर्म में
त्वरमाणम्	५.	तीव्र गति से जाते हुये	धर्म	११.	धर्म का
विहायसा ।	४.	आकाश मार्ग से	विभ्रमः ॥	१२.	भ्रम कर रहा था

श्लोकार्थ—कवच के समान पाखण्डी वेश में आकाश मार्ग से तीव्र गति से जाते हुये उस इन्द्र को भगवान् अत्रि ऋषि ने देखा, जो अधर्म में धर्म का भ्रम कर रहा था ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अत्रिणा चोदितो हन्तुं पृथुपुत्रो महारथः।
अन्वधावत संक्रुद्धस्तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत् ॥१३॥

पदच्छेद—

अत्रिणा चोदितः हन्तुम् पृथु पुत्रः महारथः ।
अन्वधावत संक्रुद्धः तिष्ठ-तिष्ठ इति च अब्रवीत् ॥

शब्दार्थ—

अत्रिणा	१.	अत्रि ऋषि के	अन्वधावत	८.	उसके पीछे दौड़ा
चोदितः	२.	कहने पर	संक्रुद्धः	७.	क्रोध करके
हन्तुम्	६.	मारने के लिये	तिष्ठ-तिष्ठ	१०.	ठहरो-ठहरो
पृथु	३.	महाराज पृथु का	इति	११.	ऐसा
पुत्रः	५.	पुत्र	च	९.	और (इन्द्र से)
महारथः।	४.	महारथी	अब्रवीत् ॥	१२.	बोला

श्लोकार्थ—अत्रि ऋषि के कहने पर महाराज पृथु का महारथी पुत्र मारने के लिये क्रोध करके उसके पीछे दौड़ा और इन्द्र से ठहरो-ठहरो ऐसा बोला ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तं तादृशाकृतिं वीक्ष्य मेने धर्मं शरीरिणम् ।
जटिलं भस्मनाच्छन्नं तस्मै बाणं न मुञ्चति ॥१४॥

पदच्छेद—

तम् तादृश आकृतिम् वीक्ष्य मेने धर्मम् शरीरिणम् ।
जटिलम् भस्मना छन्नम् तस्मै बाणम् न मुञ्चति ॥

शब्दार्थ—

तम्	४.	उस इन्द्र को	जटिलम्	१.	उसके सिर पर जटा (और)
तादृश	५.	उस प्रकार के	भस्मना	२.	शरीर में भस्म
आकृतिम्	६.	आकार में	छन्नम्	३.	लगाये हुये था
वीक्ष्य	७.	देखकर पृथु के (पुत्र ने)	तस्मै	११.	उस पर
मेने	१०.	समझा (अतः)	बाणम्	१२.	बाण
धर्मम्	९.	धर्म	न	१३.	नहीं
शरीरिणम्।	८.	शरीरधारी	मुञ्चति ॥	१४.	छोड़ा

श्लोकार्थ—वह सिर पर जटा और शरीर में भस्म लगाये हुये था। उस इन्द्र को उस प्रकार के आकार में देखकर पृथु के पुत्र ने शरीरधारी धर्म समझा। अतः उस पर बाण नहीं छोड़ा।

पञ्चदशः श्लोकः

वधान्निवृत्तं तं भूयो हन्तवेऽत्रिरचोदयत् ।
जहि यज्ञहनं तात महेन्द्रं विबुधाधमम् ॥१५॥

पदच्छेद—

वधात् निवृत्तम् तम् भूयः हन्तवे अत्रिः अचोदयत् ।
जहि यज्ञ हनम् तात महेन्द्रम् विबुध अधमम् ॥

शब्दार्थ—

वधात्	२.	इन्द्र के वध से	जहि	१४.	मारो
निवृत्तम्	३.	विमुख हुये	यज्ञ	११.	यज्ञ में
तम्	४.	पृथु पुत्र से	हनम्	१२.	विघ्न डालने वाले
भूयः	६.	फिर से	तात	८.	हे वत्स
हन्तवे	५.	मारने के लिये	महेन्द्रम्	१३.	इन्द्र को
अत्रिः	१.	अत्रि ऋषि ने	विबुध	९.	देवताओं में
अचोदयत् ।	७.	कहा	अधमम् ॥	१०.	नीच (तथा)

श्लोकार्थ—अत्रि ऋषि ने इन्द्र के वध से विमुख हुये पृथु पुत्र से मारने के लिये फिर से कहा—हे वत्स ! देवताओं में नीच तथा यज्ञ में विघ्न डालने वाले इन्द्र को मारो ॥

षोडशः श्लोकः

एवं वैन्यसुतः प्रोक्तस्त्वरमाणं विहायसा ।
अन्वद्रवदभिक्रुद्धो रावणं गृध्रराडिव ॥१६॥

पदच्छेद—

एवम् वैन्य सुतः प्रोक्तः त्वर माणम् विहायसा ।
अन्वद्रवद् अभिक्रुद्धः रावणम् गृध्रराट् इव ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	अत्रि ऋषि के इस प्रकार	अन्वद्रवद्	७.	ऐसे टूट पड़ा
वैन्यसुतः	३.	पृथु पुत्र	अभिक्रुद्धः	६.	(इन्द्र पर) क्रोध करके
प्रोक्तः	२.	कहने पर	रावणम्	९.	रावण के ऊपर
त्वरमाणम्	५.	तेज गति से जाते हुये	गृध्रराट्	१०.	जटायु टूट पड़ा था
विहायसा ।	४.	आकाश में	इव ॥	८.	जैसे

श्लोकार्थ—अत्रि ऋषि के इस प्रकार कहने पर पृथु-पुत्र आकाश में तेज गति से जाते हुये इन्द्र पर क्रोध करके ऐसे टूट पड़ा; जैसे रावण के ऊपर जटायु टूट पड़ा था ॥

सप्तदशः श्लोकः

सोऽश्वं रूपं च तद्धित्वा तस्मा अन्तर्हितः स्वराट् ।
वीरः स्वपशुमादाय पितुर्यज्ञमुपेयिवान् ॥१७॥

पदच्छेद—

सः अश्वम् रूपम् च तद् हित्वा तस्मै अन्तर्हितः स्वराट् ।
वीरः स्व पशुम् आदाय पितुः यज्ञम् उपेयिवान् ॥

शब्दार्थ—

सः अश्वम्	२.	वह इन्द्र घोड़े को	वीरः	८.	वीर पृथुपुत्र
रूपम्	४.	वेष को	स्व	९.	अपने
च तद्	३.	और उस	पशुम्	१०.	घोड़े को
हित्वा	५.	छोड़कर	आदाय	११.	लेकर
तस्मै	६.	पृथु पुत्र के सामने	पितुः	१२.	पिता के
अन्तर्हितः	७.	अन्तर्धान हो गया	यज्ञम्	१३.	यज्ञ में
स्वराट् ।	१.	मायावी	उपेयिवान् ॥	१४.	आ गये

श्लोकार्थ—मायावी वह इन्द्र घोड़े को और उस वेष को छोड़कर पृथु पुत्र के सामने अन्तर्धान हो गया । वीर पृथुपुत्र अपने घोड़े को लेकर पिता के यज्ञ में आ गये ॥

अष्टादशः श्लोकः

तत्तस्य चाद्भुतं कर्म विचक्ष्य परमर्षयः ।
नामधेयं ददुस्तस्मै विजिताश्व इति प्रभो ॥१८॥

पदच्छेद—

तत् तस्य च अद्भुतम् कर्म विचक्ष्य परम ऋषयः ।
नामधेयम् ददुः तस्मै विजिताश्वः इति प्रभो ॥

शब्दार्थ—

तत्	५.	उस	नामधेयम्	११.	नाम
तस्य	४.	पृथु पुत्र के	ददुः	१२.	रक्खा
च	३.	उस समय	तस्मै	८.	उसका
अद्भुतम् कर्म	६.	अलौकिक वीर कर्म को	विजिताश्वः	९.	विजिताश्व
विचक्ष्य	७.	देखकर	इति	१०.	यह
परम ऋषयः ।	२.	महर्षियों ने	प्रभो ॥	१.	हे विदुर जी

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! महर्षियों ने उस समय पृथुपुत्र के उस अलौकिक वीर कर्म को देखकर उसका विजिताश्व यह नाम रक्खा ॥

एकोनविंशः श्लोकः

उपसृज्य तमस्तीव्रं जहाराश्वं पुनर्हरिः।
चषालयूपतश्छन्नो हिरण्यरशनं विभुः ॥१९॥

पदच्छेद—

उपसृज्य तमः तीव्रम् जहार अश्वम् पुनः हरिः।
चषाल यूपतः छन्नः हिरण्य रशनम् विभुः ॥

शब्दार्थ—

उपसृज्य	५.	सृष्टि कर दी	चषाल	७	चपाल (और)
तमः	४.	अन्धकार की	यूपतः	८.	पशु स्तम्भ से बंधे
तीव्रम्	३.	घोर	छन्नः	६.	(तथा) उसमें छिपकर
जहार	१३.	चुरा लिया	हिरण्य	९.	सोने की
अश्वम्	१२.	घोड़े को	रशनम्	१०.	रस्सी के साथ
पुनः	११.	फिर से	विभुः ॥	१.	(तदनन्तर) समर्थ
हरिः।	२.	इन्द्र ने			

श्लोकार्थ—तदनन्तर समर्थ इन्द्र ने घोर अन्धकार की सृष्टि कर दी तथा उसमें छिप कर चषाल और पशु स्तम्भ से बँधे सोने की रस्सी के साथ फिर से घोड़े को चुरा लिया ॥

विंशः श्लोकः

अत्रिः सन्दर्शयामास त्वरमाणं विहायसा।
कपालखट्वाङ्गधरं वीरो नैनमबाधत ॥२०॥

पदच्छेद—

अत्रिः सन्दर्शयामास त्वरमाणम् विहायसा।
कपाल खट्वाङ्गधरम् वीरः न एनम् अबाधत ॥

शब्दार्थ—

अत्रिः	१.	अत्रि ऋषि ने	खट्वाङ्गधरम्	६.	खरताल धारण किये था
सन्दर्शयामास	४.	दिखलाया (जो)	वीरः	७.	(इसलिये) वीर पृथु पुत्र ने
त्वरमाणम्	३.	तेज गति से जाते हुये इन्द्र को	न	९.	नहीं
विहायसा	२.	आकाश में	एनम्	८.	इसे
कपाल	५.	कपाल (और)	अबाधत ॥	१०.	बाधा पहुँचाई

श्लोकार्थ—अत्रि ऋषि ने आकाश में तेज गति से जाते हुये इन्द्र को दिखलाया जो कपाल और खरताल लिये था। इसलिये वीर पृथु पुत्र ने इसे नहीं बाधा पहुँचाई ॥

एकविंशः श्लोकः

अत्रिणा चोदितस्तस्मै सन्दधे विशिखं रुषा ।
सोऽश्वं रूपं च तद्धित्वा तस्थावन्तर्हितः स्वराट् ॥२१॥

पदच्छेद—

अत्रिणा चोदितः तस्मै सन्दधे विशिखम् रुषा ।
सः अश्वम् रूपम् च तद् हित्वा तस्थौ अन्तर्हितः स्वराट् ॥

शब्दार्थ—

अत्रिणा	१.	अत्रि ऋषि के	रूपम्	११.	स्वरूप को
चोदितः	२.	कहने पर (पृथु पुत्र ने)	च	९.	और
तस्मै	४.	उस इन्द्र पर	तत्	१०.	उस
सन्दधे	६.	सन्धान किया (किन्तु)	हित्वा	१२.	छोड़कर
विशिखम्	५.	वाण का	तस्थौ	१४.	हो गया
रुषा ।	३.	क्रोध से	अन्तर्हितः	१३.	अन्तर्धान
सः अश्वम्	८.	वह इन्द्र घोड़े को	स्वराट् ॥	७.	मायावी

श्लोकार्थ—अत्रि ऋषि के कहने पर पृथु पुत्र ने क्रोध से उस इन्द्र पर वाण का सन्धान किया । किन्तु मायावी वह इन्द्र घोड़े को और उस स्वरूप को छोड़कर अन्तर्धान हो गया ॥

द्वाविंशः श्लोकः

वीरश्चाश्वमुपादाय पितृयज्ञमथाव्रजत् ।
तदवद्यं हरे रूपं जगृहुर्ज्ञानदुर्बलाः ॥२२॥

पदच्छेद—

वीरः च अश्वम् उपादाय पितृ यज्ञम् अथ आव्रजत् ।
तद् अवद्यम् हरेः रूपम् जगृहुः ज्ञान दुर्बलाः ॥

शब्दार्थ—

वीरः	२.	वीर पृथुपुत्र	तद्	९.	उस
च	७.	इधर	अवद्यम्	१०.	निन्दित
अश्वम्	३.	घोड़े को	हरेः	८.	इन्द्र के
उपादाय	४.	लेकर	रूपम्	११.	स्वरूप को
पितृयज्ञम्	५.	पिता की यज्ञशाला में	जगृहुः	१४.	अपना लिया
अथ	१.	तदनन्तर	ज्ञान	१२.	बुद्धि से
आव्रजत् ।	६.	आ गये	दुर्बलाः ॥	१३.	हीन मनुष्यों ने

श्लोकार्थ—तदनन्तर वीर पृथुपुत्र घोड़े को लेकर पिता की यज्ञशाला में आ गये । इधर इन्द्र के उस निन्दित स्वरूप को बुद्धि से हीन मनुष्यों ने अपना लिया ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

यानि रूपाणि जगृहे इन्द्रो हयजिहीर्षया ।
तानि पापस्य खण्डानि लिङ्गं खण्डमिहोच्यते ॥२३॥

पदच्छेद—

यानि रूपाणि जगृहे इन्द्रः हय जिहीर्षया ।
तानि पापस्य खण्डानि लिङ्गम् खण्डम् इह उच्यते ॥

शब्दार्थ—

यानि	४.	जिन-जिन	तानि पापस्य	७.	वे रूप पाप के
रूपाणि	५.	रूपों को	खण्डानि	८.	खण्ड कहलाये
जगृहे	६.	धारण किया था	लिङ्गम्	१०.	चिह्न को
इन्द्रः	१.	इन्द्र ने	खण्डम्	११.	खण्ड
हय	२.	घोड़े को	इह	९.	क्योंकि यहाँ
जिहीर्षया ।	३.	चुराने की इच्छा से	उच्यते ॥	१२.	कहा गया है

श्लोकार्थ—इन्द्र ने घोड़े को चुराने की इच्छा से जिन-जिन रूपों को धारण किया था, वे सब पाप के खण्ड कहलायें। क्योंकि यहाँ चिह्न को खण्ड कहा गया है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवमिन्द्रे हरत्यश्वं वैन्ययज्ञजिघांसया ।
तद्गृहीतविसृष्टेषु पाखण्डेषु मतिर्नृणाम् ॥२४॥

पदच्छेद—

एवम् इन्द्रे हरति अश्वम् वैन्य यज्ञ जिघांसया ।
तद् गृहीत विसृष्टेषु पाखण्डेषु मतिः नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	तद्	९.	उस
इन्द्रे	४.	इन्द्र ने	गृहीत	८.	धारण करके (छोड़ दिया)
हरति	६.	चुराते समय	विसृष्टेषु	७.	जिन रूपों को
अश्वम्	५.	घोड़े को	पाखण्डेषु	१०.	पाप खण्डों में
वैन्य यज्ञ	२.	महाराज पृथु के यज्ञ में	मतिः	१२.	बुद्धि जाती है
जिघांसया ।	३.	विघ्न डालने की इच्छा से	नृणाम् ॥	११.	मनुष्यों को

श्लोकार्थ—इस प्रकार महाराज पृथु के यज्ञ में विघ्न डालने की इच्छा से इन्द्र ने घोड़े को चुराते समय जिन रूपों को धारण करके छोड़ दिया, उन पाप खण्डों में मनुष्यों की बुद्धि जाती है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

धर्म इत्युपधर्मेषु नग्नरक्तपटादिषु ।
प्रायेण सज्जते भ्रान्त्या पेशलेषु च वाग्मिषु ॥२५॥

पदच्छेद—

धर्मः इति उपधर्मेषु नग्न रक्तपट आदिषु ।
प्रायेण सज्जते भ्रान्त्या पेशलेषु च वाग्मिषु ॥

शब्दार्थ—

धर्म	८.	यह धर्म है	प्रायेण	१०.	अधिकतर (लोग)
इति	६.	इस प्रकार	सज्जते	१२.	मानने लगते हैं
उपधर्मेषु	७.	उपधर्मों को	भ्रान्त्या	११.	भ्रम के कारण
नग्न	४.	निवस्त्र	पेशलेषु	१.	ऊपर से सुन्दर लगने वाले
रक्तपट	५.	लाल वस्त्र (और)	च	२.	और
आदिषु ।	६.	कापालिक इत्यादि	वाग्मिषु ॥	३.	तर्क युक्त प्रतीत होने वाले

श्लोकार्थ—ऊपर से सुन्दर लगने वाले और तर्कयुक्त प्रतीत होने वाले निवस्त्र, लाल वस्त्र और कापालिक इत्यादि उपधर्मों को यह धर्म है इस प्रकार अधिकतर लोग भ्रम के कारण मानने लगते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

तदभिज्ञाय भगवान् पृथुः पृथुपराक्रमः ।
इन्द्राय कुपितो बाणमादत्तोद्यतकार्मुकः ॥२६॥

पदच्छेद—

तद् अभिज्ञाय भगवान् पृथुः पृथु पराक्रमः ।
इन्द्राय कुपितः बाणम् आदत्त उद्यत कार्मुकः ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	इन्द्र की उस दुष्टता को	इन्द्राय	१०.	इन्द्र के मारने के लिये
अभिज्ञाय	२.	समझ कर	कुपितः	७.	क्रोध करके
भगवान्	५.	महाराज	बाणम्	११.	बाण
पृथुः	६.	पृथु ने	आदत्त	१२.	चढ़ाया
पृथु	३.	महान्	उद्यत	६.	उठाया और
पराक्रमः ।	४.	पराक्रमी	कार्मुकः ॥	८.	धनुष

श्लोकार्थ—इन्द्र की उस दुष्टता को समझकर महान् पराक्रमी महाराज पृथु ने क्रोध करके धनुष उठाया और इन्द्र को मारने के लिये बाण चढ़ाया ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तमृत्विजः शक्रवधाभिसन्धितं विचक्ष्य दुष्प्रेक्ष्यमसह्यरंहसम् ।
निवारयामासुरहो महामते न युज्यतेऽत्रान्यवधः प्रचोदितात् ॥२७॥

पदच्छेद— तम् ऋत्विजः शक्रवध अभिसन्धितम् विचक्ष्य दुष्प्रेक्ष्यम् असह्य रंहसम् ।
निवारयामासुः अहो महामते न युज्यते अत्र अन्यवधः प्रचोदितात् ॥

शब्दार्थ—

तम्	६.	उन महाराज पृथु को	निवारयामासुः	९.	रोक दिया और कहा
ऋत्विजः	८.	याजकों ने (उन्हें)	अहो	११.	हे राजन्
शक्रवध	४.	इन्द्र के वध के लिये	महामते	१०.	बुद्धिमान्
अभिसन्धितम्	५.	तत्पर	न	१५.	नहीं
विचक्ष्य	७.	देखकर	युज्यते	१६.	उचित है
दुष्प्रेक्ष्यम्	१.	न देखने योग्य	अत्र	१२.	इस यज्ञ में
असह्य	२.	असहनीय	अन्यवधः	१४.	दूसरे का वध
रंहसम् ।	३.	वेग वाले (तथा)	प्रचोदितात् ॥	१३.	यज्ञ पशु से भिन्न

श्लोकार्थ—न देखने योग्य असहनीय वेगवाले तथा इन्द्र के वध के लिये तत्पर उन महाराज पृथु को देखकर याजकों ने उन्हें रोक दिया। हे बुद्धिमान् राजा ! इस यज्ञ में यज्ञ पशु से भिन्न दूसरे का वध उचित नहीं है ।।

अष्टाविंशः श्लोकः

वयं मरुत्वन्तमिहार्थनाशनं ह्वयामहे त्वच्छ्रवसा हतत्विषम् ।
अयातयामोपहवैरनन्तरं प्रसह्य राजन् जुहवाम तेऽहितम् ॥२८॥

पदच्छेद— वयम् मरुत्वन्तम् इह अर्थ नाशनम् ह्वयामहे त्वत् श्रवसा हत त्विषम् ।
अयातयाम उपहवैः अनन्तरम् प्रसह्य राजन् जुहवाम ते अहितम् ॥

शब्दार्थ—

वयम्	२.	हम लोग	त्विषम् ।	७.	कान्ति वाले (तथा)
मरुत्वन्तम्	१०.	इन्द्र को	अयातयाम	११.	अमोघ
इह	३.	यहाँ	उपहवैः	१२.	मन्त्रों के द्वारा
अर्थ	८.	यज्ञ में	अनन्तरम्	१४.	उसके बाद
नाशनम्	९.	विघ्न डालने वाले	प्रसह्य	१५.	बलात्
ह्वयामहे	१३.	बुला लेते हैं (और)	राजन्	१.	हे राजन्
त्वत्	४.	आपकी	जुहवाम	१८.	हवन कर देंगे
श्रवसा	५.	कीर्ति से	ते	१६.	आपके
हत	६.	नष्ट	अहितम् ॥	१७.	शत्रु का

श्लोकार्थ—हे राजन् ! हम लोग यहाँ आपकी कीर्ति से नष्ट कान्ति वाले तथा यज्ञ में विघ्न डालने वाले इन्द्र को अमोघ मन्त्रों के द्वारा बुला लेते हैं। और उसके बाद बलात् आपके शत्रु का हवन कर देंगे ।।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

इत्यामन्त्र्य क्रतुपतिं विदुरास्यर्त्विजो रुषा ।
स्रुग्घस्तान्जुह्वतोऽभ्येत्य स्वयम्भूः प्रत्यषेधत ॥२९॥

पदच्छेद—

इति आमन्त्र्य क्रतु पतिम् विदुर अस्य ऋत्विजः रुषा ।
स्रुक् हस्तान् जुह्वतः अभ्येत्य स्वयम्भूः प्रत्यषेधत ॥

शब्दार्थ—

इति	३.	ऐसा	स्रुक्	७.	श्रुवा
आमन्त्र्य	४.	विचार करके	हस्तान्	८.	हाथ में लेकर
क्रतु पतिम्	२.	यजमान से	जुह्वतः	९.	आहुति डालने को तैयार ही थे (कि)
विदुर	१.	हे विदुर जी	अभ्येत्य	११.	सामने आकर
अस्य	५.	इसके	स्वयम्भूः	१०.	ब्रह्मा जी ने
ऋत्विजः रुषा ।	६.	याजक क्रोध से	प्रत्यषेधत ॥	१२.	रोक दिया

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! यजमान से ऐसा विचार करके इसके याजक क्रोध से श्रुवा हाथ में लेकर आहुति डालने के लिये तैयार ही थे कि ब्रह्मा जी ने सामने आकर रोक दिया ॥

त्रिंशः श्लोकः

न वध्यो भवतामिन्द्रो यद्यज्ञो भगवत्तनुः ।
यं जिघांसथ यज्ञेन यस्येष्टास्तनवः सुराः ॥३०॥

पदच्छेद—

न वध्यः भवताम् इन्द्रः यद् यज्ञः भगवत् तनुः ।
यम् जिघांसथ यज्ञेन यस्य इष्टाः तनवः सुराः ॥

शब्दार्थ—

न	३.	नहीं	यम्	८.	तुम लोग जिसे
वध्यः	४.	वध करना चाहिये	जिघांसथ	९.	मारना चाहते हो
भवताम्	१.	आपको	यज्ञेन	१०.	यज्ञ के द्वारा
इन्द्रः	२.	इन्द्र का	यस्य	१३.	उस इन्द्र के
यद्	५.	क्योंकि (इन्द्र)	इष्टाः	११.	पूजित
यज्ञः	६.	यज्ञ स्वरूप	तनवः	१४.	अंग है
भगवत् तनुः ।	७.	भगवान् का शरीर है	सुराः ॥	१२.	देवता

श्लोकार्थ—आपको इन्द्र का वध नहीं करना चाहिये; क्योंकि इन्द्र यज्ञ स्वरूप भगवान् का शरीर है । तुम लोग जिसे मारना चाहते हो; यज्ञ के द्वारा पूजित देवता उस इन्द्र के अंग हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तदिदं पश्यत महद्धर्मव्यतिकरं द्विजाः ।
इन्द्रेणानुष्ठितं राज्ञः कर्मैतद्विजिघांसता ॥३१॥

पदच्छेद—

तद् इदम् पश्यत महत् धर्म व्यतिकरम् द्विजाः ।
इन्द्रेण अनुष्ठितम् राज्ञः कर्म तद् विजिघांसता ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	इसलिये	इन्द्रेण	७.	इन्द्र के द्वारा
इदम्	६.	इस	अनुष्ठितम्	८.	उत्पादित
पश्यत	१३.	विचार करो	राज्ञः	३.	महाराज पृथु के
महत्	१०.	भयंकर	कर्म	५.	यज्ञानुष्ठान में
धर्म	११.	धर्म के	तद्	४.	इस
व्यतिकरम्	१२.	विनाश पर	विजिघांसता ॥	६.	विघ्न के इच्छुक
द्विजाः ।	२.	हे विप्रो			

श्लोकार्थ—इसलिये हे विप्रो ! महाराज पृथु के इस यज्ञानुष्ठान में विघ्न के इच्छुक इन्द्र के द्वारा उत्पादित इस भयंकर धर्म के विनाश पर विचार करो ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

पृथुकीर्तेः पृथोर्भूयात्तर्ह्येकोनशतक्रतुः ।
अलं ते क्रतुभिः स्विष्टैर्यद्भवान्मोक्षधर्मवित् ॥३२॥

पदच्छेद—

पृथु कीर्तेः पृथोः भूयात् तर्हि एकोनशतक्रतुः ।
अलम् ते क्रतुभिः स्विष्टैः यद् भवान् मोक्षधर्मवित् ॥

शब्दार्थ—

पृथु	२.	विशाल	अलम्	११.	पर्याप्त हैं
कीर्ति	३.	कीर्ति वाले	ते	९.	आपके
पृथोः	४.	महाराज पृथु के	क्रतुभिः	१०.	इतने ही यज्ञ
भूयात्	७.	पूर्ण होवें	स्विष्टैः	८.	विधि पूर्वक किये गये
तर्हि	१.	इसलिये	यद् भवान्	१२.	क्योंकि आप
एकोनशत	५.	निन्यानवे	मोक्षधर्म	१३.	मोक्ष धर्म को
क्रतुः ।	६.	यज्ञ ही	वित् ॥	१४.	जानने वाले हैं

श्लोकार्थ—इसलिये विशाल कीर्ति वाले महाराज पृथु के निन्यानवे यज्ञ ही पूर्ण होवें । विधि पूर्वक किये गये आपके इतने ही यज्ञ पर्याप्त हैं । क्योंकि आप मोक्षधर्म के जानने वाले हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

नैवात्मने महेन्द्राय रोषमाहर्तुमर्हसि ।
उभावपि हि भद्रं ते उत्तमश्लोकविग्रहौ ।।३३।।

पदच्छेद— न एव आत्मने महेन्द्राय रोषम् आहर्तुम् अर्हसि ।
उभौ अपि हि भद्रम् ते उत्तम श्लोक विग्रहौ ।।

शब्दार्थ—

न एव	५.	नहीं	उभौ, अपि	८.	आप दोनों ही
आत्मने	१.	आत्मस्वरूप	हि	७.	क्योंकि
महेन्द्राय	२.	इन्द्र पर	भद्रम्	१२.	कल्याण हो
रोषम्	३.	क्रोध	ते	११.	आपका
आहर्तुम्	४.	करना	उत्तमश्लोक	९.	महनीय कीर्ति श्री हरि के
अर्हसि ।	६.	उचित है	विग्रहौ ।।	१०.	शरीर हैं (अतः)

श्लोकार्थ—आत्मस्वरूप इन्द्र पर क्रोध करना उचित नहीं है । क्योंकि आप दोनों ही महनीय कीर्ति वाले श्री हरि के शरीर हैं । अतः आपका कल्याण हो ।।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

मास्मिन्महाराज कृथाः स्म चिन्तां निशामयास्मद्वच आदृतात्मा ।
यद्ध्यायतो दैवहतं नु कर्तुं मनोऽतिरुष्टं विशते तमोऽन्धम् ।।३४।।

पदच्छेद—मा अस्मिन् महाराज कृथाः स्म चिन्ताम्, निशामय अस्मद् वचः आदृत आत्मा ।
यत् ध्यायतः दैव हतम् नु कर्तुम्, मनः अतिरुष्टम् विशते तमः अन्धम् ।।

शब्दार्थ—

मा	५.	मत	यत्	१२.	क्योंकि (जो)
अस्मिन्	३.	इस विषय में	ध्यायतः	१६.	चिन्ता करता है
महाराज	१.	हे राजन्	दैव	१३.	विधाता के
कृथाः	६.	करो (तथा)	हतम्	१४.	बिगाड़े हुये काम को
स्म	२.	तुम	नु	१९.	अवश्य
चिन्ताम्	४.	चिन्ता	कर्तुम्	१५.	बनाने की
निशामय	११.	सुनो	मनः	१७.	उसका मन
अस्मद्	९.	मेरी	अतिरुष्टम्	१८.	अत्यन्त क्रोध के
वचः	१०.	बात	विशते	२२.	प्रवेश करता है
आदृत	७.	आदर के	तमः	२१.	अज्ञान में
आत्मा ।	८.	साथ	अन्धम् ।।	२०.	घोर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तुम इस विषय में चिन्ता मत करो, तथा आदर के साथ मेरी बात सुनो । क्योंकि जो विधाता के बिगाड़े हुये काम को बनाने की चिन्ता करता है । उसका मन अत्यन्त क्रोध के कारण अवश्य घोर अज्ञान में प्रवेश करता है ।।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

क्रतुर्विरमतामेष देवेषु दुरवग्रहः ।
धर्मव्यतिकरो यत्र पाखण्डैरिन्द्रनिर्मितैः ॥३५॥

पदच्छेद—

क्रतुः विरमताम् एषः देवेषु दुरवग्रहः ।
धर्म व्यतिकरः यत्र पाखण्डैः इन्द्र निर्मितैः ॥

शब्दार्थ—

क्रतुः	२.	यज्ञ	धर्म व्यतिकरः	१०.	धर्म का नाश हो रहा है
विरमताम्	३.	रोक दिया जाय	यत्र	६.	इसके कारण
एषः	१.	यह	पाखण्डैः	९.	पाखण्डों से
देवेषु	४.	क्योंकि देवताओं में	इन्द्र	७.	इन्द्र के द्वारा
दुरवग्रहः	५.	दुराग्रह होता है	निर्मितैः ॥	८.	फैलाये गये

श्लोकार्थ—यह यज्ञ रोक दिया जाय क्योंकि देवताओं में दुराग्रह होता है । इसके कारण इन्द्र के द्वारा फैलाये गये पाखण्डों से धर्म का नाश हो रहा है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

एभिरिन्द्रोपसंसृष्टैः पाखण्डैर्हारिभिर्जनम् ।
ह्रियमाणं विचक्ष्वैनं यस्ते यज्ञध्रुगश्वमुट् ॥३६॥

पदच्छेद—

एभिः इन्द्र उपसंसृष्टैः पाखण्डैः हारिभिः जनम् ।
ह्रियमाणम् विचक्ष्व एनम् यः ते यज्ञधुक् अश्वमुट् ॥

शब्दार्थ—

एभिः	६.	इन	ह्रियमाणम्	९.	फंसते हुये
इन्द्र	४.	उस इन्द्र से	विचक्ष्व	१२.	देखो
उपसंसृष्टैः	५.	निर्मित	एनम्	१०.	इन
पाखण्डैः	८.	पाखण्डों में	यः, ते	१.	जिस इन्द्र ने आपके
हारिभिः	७.	मनोहारि	वै यज्ञधुक्	२.	अश्वमेघ यज्ञ में विघ्न के लिये
जनम् ।	११.	लोगों को	अश्व मुट् ॥	३.	आपके घोड़े को चुराया है

श्लोकार्थ—जिस इन्द्र ने आपके अश्वमेघ यज्ञ में विघ्न डालने के लिये आपके घोड़े को चुराया है, उस इन्द्र से निर्मित इन मनोहारि पाखण्डों में फंसते हुये इन लोगों को देखो ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

भवान् परित्रातुमिहावतीर्णो धर्मं जनानां समयानुरूपम् ।
वेनापचारादवलुप्तमद्य तद्देहतो विष्णुकलासि वैन्य ॥३७॥

पदच्छेद— भवान् परित्रातुम् इह अवतीर्णः धर्मम् जनानाम् समय अनुरूपम् ।
वेन अपचारात् अवलुप्तम् अद्य तद् देहतः विष्णुकला असि वैन्य ॥

शब्दार्थ—

भवान्	१०.	आप	वेन	२.	राजा वेन के
परित्रातुम्	६.	रक्षा करने के लिये	अपचारात्	३	अत्याचार से
इह	११.	यहाँ पृथ्वी पर	अवलुप्तम्	४.	नष्ट हुये
अवतीर्णः	१३.	अवतार लिये हैं	अद्य	१.	इस समय
धर्मम्	८.	धर्म को	तद् देहतः	१२.	उस वेन के शरीर से
जनानाम्	५.	लोगों के	विष्णुकला	१५.	साक्षात् विष्णु के अंश
समय	६.	समय	असि	१६.	हैं
अनुरूपम् ।	७	अनुसार	वैन्य ॥	१४.	हे महाराज (आप)

श्लोकार्थ—इस समय राजा वेन के अत्याचार से नष्ट हुये लोगों के समयानुसार धर्म रक्षा करने के लिये आप यहाँ पृथ्वी पर उस वेन के शरीर से अवतार लिये हैं। हे महाराज ! आप साक्षात् विष्णु के अंश हैं ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

स त्वं विमृश्यास्य भवं प्रजापते सङ्कल्पनं विश्वसृजां पिपीपृहि ।
ऐन्द्रीं च मायामुपधर्ममातरं प्रचण्डपाखण्डपथं प्रभो जहि ॥३८॥

पदच्छेद—सः त्वम् विमृश्य अस्य भवम् प्रजापते सङ्कल्पनम् विश्वसृजाम् पिपीपृहि ।
ऐन्द्रीम् च मायाम् उपधर्म मातरम् प्रचण्ड पाखण्ड पथम् प्रभो जहि ॥

शब्दार्थ—

सः त्वम्	२.	सो आप	ऐन्द्रीम्	६.	इन्द्र की
विमृश्य	५.	विचार करें (और)	च	१२	अतः
अस्य	३	इस	मायाम् उपधर्म	१०.	माया अधर्म की
भवम्	४.	जन्म पर	मातरम्	११.	जननी है
प्रजापते	१.	प्रजाओं के स्वामी (हे राजन्)	प्रचण्ड	१४.	प्रबल
सङ्कल्पनम्	७.	संकल्प को	पाखण्ड पथम्	१५.	आडम्बर के मार्ग को
विश्वसृजाम्	६.	संसार के रचयिता	प्रभो	१३.	हे राजन्
पिपीपृहि ।	८.	पूर्ण करें	जहि ॥	१६.	नष्ट करें

श्लोकार्थ—प्रजाओं के स्वामी हे राजन् ! सो आप इस जन्म पर विचार करें और संसार के रचयिता संकल्प को पूर्ण करें। इन्द्र की माया अधर्म की जननी है। अतः हे राजन् ! प्रबल आडम्बर के मार्ग को नष्ट करें।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इत्थं स लोकगुरुणा समादिष्टो विशाम्पतिः ।
तथा च कृत्वा वात्सल्यं मघोनापि च सन्दधे ॥३९॥

पदच्छेद—

इत्थम् सः लोक गुरुणा समादिष्टः विशाम्पतिः ।
तथा च कृत्वा वात्सल्यम् मघोना अपि च सन्दधे ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१.	इस प्रकार	कृत्वा	९.	करके
सः	४.	उन	वात्सल्यम्	८.	प्रीति
लोक गुरुणा	२.	ब्रह्मा जी का	मघोना	७.	इन्द्र से साथ
समादिष्टः	३.	आदेश पाकर	अपि	१२.	भी
विशाम्पतिः ।	५.	महाराज पृथु ने	च	१०.	और
तथा च	६.	उसी प्रकार	सन्दधे ॥	११.	सन्धि कर ली

श्लोकार्थ—इस प्रकार ब्रह्माजी का आदेश पाकर उन महाराज पृथु ने उसी प्रकार इन्द्र के साथ प्रीति करके और सन्धि भी कर ली ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

कृतावभृथस्नानाय पृथवे भूरिकर्मणे ।
वरान्ददुस्ते वरदा ये तद्बर्हिषि तर्पिताः ॥४०॥

पदच्छेद—

कृत अवभृथ स्नानाय पृथवे भूरि कर्मणे ।
वरान् ददुः ते वरदाः ये तद् बर्हिषि तर्पिताः ॥

शब्दार्थ—

कृत	१२.	कर लेने पर	ददुः	१४.	दिये
अवभृथ	१०.	यज्ञान्त	ते	५.	वे
स्नानाय	११.	स्नान	वरदाः	६.	वर दायक देवता
पृथवे	९.	महाराज पृथु को	ये	१.	जो देवतागण
भूरि	७.	अत्यधिक	तद्	२.	उनके
कर्मणे ।	८.	यज्ञ कर्मों को करने वाले	बर्हिषि	३.	यज्ञ में
वरान्	१३.	वरदान	तर्पिताः ॥	४.	प्रसन्न किये गये थे

श्लोकार्थ—जो देवतागण उनके यज्ञ में प्रसन्न किये गये थे; उन वरदायक देवताओंने अत्यधिक यज्ञ कर्मों को करने वाले महाराज पृथु को यज्ञान्तस्नान कर लेने पर वरदान दिये ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

विप्राः सत्याशिषस्तुष्टाः श्रद्धया लब्धदक्षिणाः ।
आशिषो युयुजुः क्षत्तरादिराजाय सत्कृताः ॥४१॥

पदच्छेद—

विप्राः सत्य आशिषः तुष्टाः श्रद्धया लब्ध दक्षिणाः ।
आशिषः युयुजुः क्षत्तः आदि राजाय सत्कृताः ॥

शब्दार्थ—

विप्राः	४.	ब्राह्मणों ने	दक्षिणाः ।	६.	दक्षिणा
सत्य	२.	सत्य	आशिषः	११.	आशीर्वाद
आशिषः	३.	आशीर्वाद वाले	युयुजुः	१२	दिया
तुष्टाः	८.	प्रसन्न होकर	क्षत्तः	१.	हे विदुर जी
श्रद्धया	५.	श्रद्धा के साथ	आदिराजाय	९.	आदिराज पृथु को
लब्ध	७.	प्राप्त कर लेने पर	सत्कृताः ॥	१०.	सत्कार और

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! सत्य आशीर्वाद वाले ब्राह्मणों ने श्रद्धा के साथ दक्षिणा प्राप्त कर लेने पर आदिराज पृथु को सत्कार और आशीर्वाद दिया ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

त्वयाऽऽहूता महाबाहो सर्व एव समागताः ।
पूजिता दानमानाभ्यां पितृदेवर्षिमानवाः ॥४२॥

पदच्छेद—

त्वया आहूताः महाबाहो सर्वे एव समागताः ।
पूजिताः दान मानाभ्याम् पितृ देवर्षि मानवाः ॥

शब्दार्थ—

त्वया	२.	आपके	पूजिताः	१२.	पूजन किया है
आहूताः	३.	बुलाने पर	दान	१०.	दान और
महाबाहो	१.	हे महाबाहो पृथु जी	मानाभ्याम्	११.	मान से (उनका)
सर्वे	४.	सब	पितृ	६.	पितर
एव	५.	ही	देवर्षि	७.	देवता ऋषि और
समागताः ।	९.	आये (आपने)	मानवाः ॥	८.	मनुष्यगण

श्लोकार्थ—हे महाबाहो पृथु जी ! आपके बुलाने पर सब ही पितर, देवता, ऋषि और मनुष्यगण आये । आपने दान और मान से उनका पूजन किया ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पृथुविजये एकोनविंशः अध्यायः ॥१९॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

विंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—भगवानपि वैकुण्ठः साकं मघवता विभुः ।
यज्ञैर्यज्ञपतिस्तुष्टो यज्ञभुक् तमभाषत ॥१॥

पदच्छेद—

भगवान् अपि वैकुण्ठः साकम् मघवता विभुः ।
यज्ञैः यज्ञपतिः तुष्टः यज्ञभुक् तम् अभाषत ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	६.	भगवान्	यज्ञैः	१.	अश्वमेध यज्ञों से
अपि	८.	भी	यज्ञपतिः	३.	यज्ञेश्वर
वैकुण्ठः	७.	श्री हरि	तुष्टः	२.	प्रसन्न होकर
साकम्	१०.	साथ (वहाँ आये)	यज्ञभुक्	४.	यज्ञ के भोक्ता
मघवता	९.	इन्द्र के	तम्	११.	उन महाराज पृथु जी से
विभुः ।	५.	सर्व व्यापक	अभाषत ॥	१२.	बोले

श्लोकार्थ—अश्वमेध यज्ञों से प्रसन्न होकर यज्ञेश्वर यज्ञ के भोक्ता सर्व व्यापक भगवान् श्री हरि भी इन्द्र के साथ वहाँ आये और उन महाराज पृथु जी से बोले ॥

द्वितीयः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—एष तेऽकार्षीद्भङ्गं हयमेधशतस्य ह ।
क्षमापयत आत्मानममुष्य क्षन्तुमर्हसि ॥२॥

पदच्छेद—

एषः ते अकार्षीत् भङ्गम् हयमेध शतस्य ह ।
क्षमापयते आत्मानम् अमुष्य क्षन्तुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

एषः	१.	इस इन्द्र ने	ह ।	७.	अतः
ते	२.	आपके	क्षमापयते	९.	क्षमा माँग रहा है
अकार्षीत्	६.	उपस्थित किया है	आत्मानम्	८.	अपने लिये
भङ्गम्	५.	विघ्न	अमुष्य	१०.	इसे
हयमेध	४.	अश्वमेध यज्ञ में	क्षन्तुम्	११.	क्षमा करने में
शतस्य	३.	सौवें	अर्हसि ॥	१२.	तुम समर्थ हो

श्लोकार्थ—इस इन्द्र ने आपके सौवें अश्वमेध यज्ञ में विघ्न उपस्थित किया है । अतः अपने लिये क्षमा माँग रहा है । इसे क्षमा करने में तुम समर्थ हो ॥

तृतीयः श्लोकः

सुधियः साधवो लोके नरदेव नरोत्तमाः ।
नाभिद्रुह्यन्ति भूतेभ्यो यर्हि नात्मा कलेवरम् ॥३॥

पदच्छेद—

सुधियः साधवः लोके नरदेव नरोत्तमाः ।
न अभिद्रुह्यन्ति भूतेभ्यः यर्हि न आत्मा कलेवरम् ॥

शब्दार्थ—

सुधियः	३.	बुद्धिमान्	अभिद्रुह्यन्ति	८.	वैर करते हैं
साधवः	४.	साधु स्वभाव वाले	भूतेभ्यः	६.	अन्य प्राणियों से
लोके	२.	संसार में	यर्हि	९.	क्योंकि (यह)
नरदेव	१.	हे राजन्	न	१२.	नहीं
नरोत्तमः ।	५.	उत्तम पुरुष	आत्मा	११.	आत्मा
न	७.	नहीं	कलेवरम् ॥	१०.	शरीर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! संसार में बुद्धिमान् साधुस्वभाव वाले उत्तम पुरुष अन्य प्राणियों से वैर नहीं करते हैं। क्योंकि यह शरीर आत्मा नहीं है ॥

चतुर्थः श्लोकः

पुरुषा यदि मुह्यन्ति त्वादृशा देवमायया ।
श्रम एव परं जातो दीर्घया वृद्धसेवया ॥४॥

पदच्छेद—

पुरुषाः यदि मुह्यन्ति त्वादृशाः देव मायया ।
श्रमः एव परम् जातः दीर्घया वृद्ध सेवया ॥

शब्दार्थ—

पुरुषाः	२.	मनुष्य	श्रमः	१२.	परिश्रम (ही)
यदि	३.	यदि	एव	११.	केवल
मुह्यन्ति	६.	मोहित होते हैं	परम्	७.	तब तो
त्वादृशाः	१.	तुम्हारे जैसे	जातः	१३.	मिला
देव	४.	भगवान् की	दीर्घया	९.	लम्बी समय की
मायया ।	५.	माया से	वृद्ध	८.	ज्ञानी जनों की
			सेवया ॥	१०.	सेवा से

श्लोकार्थ—तुम्हारे जैसे मनुष्य यदि भगवान् की माया से मोहित होते हैं तब तो ज्ञानीजनों की लम्बी समय की सेवा से केवल परिश्रम ही मिला ॥

पञ्चमः श्लोकः

अतः कायमिमं विद्वानविद्याकामकर्मभिः ।
आरब्ध इति नैवास्मिन् प्रतिबुद्धोऽनुषज्जते ॥५॥

पदच्छेद—

अतः कायम् इमम् विद्वान् अविद्या काम कर्मभिः ।
आरब्धः इति न एव अस्मिन् प्रतिबुद्धः अनुषज्जते ॥

शब्दार्थ—

अतः	१.	इसलिये	आरब्धः	९.	बना है
कायम्	५.	शरीर	इति	१०.	ऐसा समझकर
इमम्	४.	यह	न	१२.	न
विद्वान्	२.	बुद्धिमान्	एव	१३.	ही
अविद्या	६.	अविद्या	अस्मिन्	११.	उसमें
काम	७.	वासना (और)	प्रतिबुद्धः	३.	जागरुक मनुष्य
कर्मभिः ।	८.	कर्मों से	अनुषज्जते ॥	१४.	आसक्त होता है

श्लोकार्थ—इसलिये बुद्धिमान् जागरुक मनुष्य यह शरीर अविद्या, वासना और कर्मों से बना है ऐसा समझ कर उसमें नहीं आसक्त होता है ॥

षष्ठः श्लोकः

असंसक्तः शरीरेऽस्मिन्नमुनोत्पादिते गृहे ।
अपत्ये द्रविणे वापि कः कुर्यान्ममतां बुधः ॥६॥

पदच्छेद—

असंसक्तः शरीरे अस्मिन् अमुनाः उत्पादिते गृहे ।
अपत्ये द्रविणे वा अपि कः कुर्यात् ममताम् बुधः ॥

शब्दार्थ—

असंसक्तः	३.	निर्लिप्त रहता हुआ	द्रविणे	११.	धन में
शरीरे	२.	शरीर में	वा	१०.	अथवा
अस्मिन्	१.	इस	अपि	१२.	भी
अमुना	६.	इससे	कः	४.	कौन
उत्पादिते	७.	उत्पन्न किये गये	कुर्यात्	१४.	करेगा
गृहे ।	८.	घर	ममताम्	१३.	ममता
अपत्ये	९.	सन्तान	बुधः ॥	५.	बुद्धिमान्

श्लोकार्थ—इस शरीर में निर्लिप्त रहता हुआ कौन बुद्धिमान् इससे उत्पन्न किये गये घर, सन्तान अथवा धन में भी ममता करेगा ।

सप्तमः श्लोकः

एकः शुद्धः स्वयंज्योतिर्निर्गुणोऽसौ गुणाश्रयः ।
सर्वगोऽनावृतः साक्षी निरात्माऽऽत्माऽऽत्मनः परः ॥७॥

पदच्छेद—

एकः शुद्धः स्वयम् ज्योतिः निर्गुणः असौ गुण आश्रयः ।
सर्वगः अनावृतः साक्षी निरात्मा आत्मा आत्मनः परः ॥

शब्दार्थ—

एकः	३.	एक	सर्वगः	९.	सर्व व्यापक
शुद्धः	४.	माया से रहित	अनावृतः	१०.	आवरण रहित
स्वयम्	५.	स्वयम्	साक्षी	११.	द्रष्टा
ज्योतिः	६.	प्रकाश	निरात्मा	१२.	शरीर से भिन्न (और)
निर्गुणः	७.	निर्गुण	आत्मा	२.	आत्मा
असौ	१.	वह	आत्मनः	१३.	मन से
गुण आश्रयः ।	८.	सत्त्वादि गुणों का आश्रय स्थान	परः ॥	१४.	परे है

श्लोकार्थ—वह आत्मा एक, माया से रहित, स्वयम् प्रकाश, निर्गुण, सत्त्वादिगुणों का आश्रय स्थान, सर्व व्यापक, आवरण रहित, द्रष्टा, शरीर से भिन्न और मन से परे है ॥

अष्टमः श्लोकः

य एवं सन्तमात्मानमात्मस्थं वेद पुरुषः ।
नाज्यते प्रकृतिस्थोऽपि तद्गुणैः स मयि स्थितः ॥८॥

पदच्छेद—

यः एवम् सन्तम् आत्मानम् आत्मस्थम् वेद पुरुषः ।
न अज्यते प्रकृतिस्थः अपि तद् गुणैः सः मयि स्थितः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	अज्यते	१३.	लिप्त होता है (क्योंकि)
एवम्	५.	इस प्रकार	प्रकृतिस्थः	८	प्रकृति में स्थित रहता हुआ
सन्तम्	६.	विद्यमान	अपि	९.	भी
आत्मानम्	४.	आत्मा को	तद्	१०.	प्रकृति के
आत्मस्थम्	३.	अपने में स्थित	गुणैः	११.	गुणों से
वेद	७.	जानता है वह	सः	१४.	वह
पुरुषः ।	२.	पुरुष	मयि	१५.	मुझ में
न	१२.	नहीं	स्थितः ॥	१६.	स्थित रहता है

श्लोकार्थ—जो पुरुष अपने में स्थित आत्मा को इस प्रकार विद्यमान जानता है, वह प्रकृति में स्थित रहता हुआ भी प्रकृति के गुणों में लिप्त नहीं होता है क्योंकि वह मुझ में स्थित रहता है ॥

नवमः श्लोकः

यः स्वधर्मेण मां नित्यं निराशीः श्रद्धयान्वितः ।
भजते शनकैस्तस्य मनो राजन् प्रसीदति ॥९॥

पदच्छेद—

यः स्वधर्मेण माम् नित्यम् निराशीः श्रद्धया अन्वितः ।
भजते शनकैः तस्य मनः राजन् प्रसीदति ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	भजते	८.	भजन करता है
स्वधर्मेण	३	अपने वर्णाश्रम धर्म से	शनकैः	१०.	धीरे-धीरे
माम्	७.	मेरा	तस्य	११.	उसका
नित्यम्	६.	सदा	मनः	१२.	मन
निराशीः	२.	निष्काम पुरुष	राजन्	९.	हे महाराज
श्रद्धया	४.	श्रद्धा के	प्रसीदति ॥	१३.	प्रसन्न हो जाता है
अन्वितः ।	५.	साथ			

श्लोकार्थ—जो निष्काम पुरुष अपने वर्णाश्रम धर्म से श्रद्धा के साथ सदा मेरा भजन करता है, हे महाराज ! धीरे-धीरे उसका मन प्रसन्न हो जाता है ॥

दशमः श्लोकः

परित्यक्तगुणः सम्यग्दर्शनो विशदाशयः ।
शान्तिं मे समवस्थानं ब्रह्म कैवल्यमश्नुते ॥१०॥

पदच्छेद—

परित्यक्त गुणः सम्यग् दर्शनः विशद आशयः ।
शान्तिम् मे समवस्थानम् ब्रह्म कैवल्यम् अश्नुते ॥

शब्दार्थ—

परित्यक्त	४.	छोड़कर	शान्तिम्	८.	शान्ति स्वरूप
गुणः	३.	विषयों को	मे	९.	मेरे
सम्यग्	५.	यथार्थ	समवस्थानम्	७.	तदनन्तर समता और
दर्शनः	६.	ज्ञान प्राप्त करता है	ब्रह्म	१०.	ब्रह्म पद
विशद	१.	निर्मल	कैवल्यम्	११.	मोक्ष को
आशयः ।	२.	मन-वाला-मनुष्य	अश्नुते ॥	१२.	प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—निर्मल मन वाला मनुष्य विषयों को छोड़कर यथार्थ ज्ञान प्राप्त करता है । तदनन्तर समता और शान्ति स्वरूप मेरे ब्रह्मपद मोक्ष को प्राप्त करता है ॥

एकादशः श्लोकः

उदासीनमिवाध्यक्षं द्रव्यज्ञानक्रियात्मनाम् ।
कूटस्थमिममात्मानं यो वेदाप्नोति शोभनम् ॥११॥

पदच्छेद— उदासीनम् इव अध्यक्षम् द्रव्य ज्ञान क्रिया आत्मनाम् ।
कूटस्थम् इमम् आत्मानम् यः वेद आप्नोति शोभनम् ॥

शब्दार्थ—

उदासीनम्	९.	निर्लिप्त के	कूटस्थम्	११.	निर्विकार
इव	१०.	समान	इमम्	७.	इस
अध्यक्षम्	६.	साक्षी	आत्मानम्	८.	आत्मा को
द्रव्य	२.	पञ्च महाभूत	यः	१.	जो मनुष्य
ज्ञान	३.	ज्ञान	वेद	१२.	जानता है (वह)
क्रिया	४.	क्रिया और	आप्नोति	१४.	प्राप्त करता है
आत्मनाम् ।	५.	मन के	शोभनम् ॥	१३.	श्रेयस्कर (मोक्ष को)

श्लोकार्थ—जो मनुष्य पञ्चमहाभूत ज्ञान, क्रिया और मन के साक्षी इस आत्मा को निर्लिप्त के समान निर्विकार जानता है, वह श्रेयस्कर मोक्ष को प्राप्त करता है ॥

द्वादशः श्लोकः

भिन्नस्य लिङ्गस्य गुणप्रवाहो द्रव्यक्रियाकारकचेतनात्मनः ।
दृष्टासु सम्पत्सु विपत्सु सूरयो न विक्रियन्ते मयि बद्धसौहृदाः ॥१२॥

पदच्छेद— भिन्नस्य लिङ्गस्य गुण प्रवाहः द्रव्य क्रिया कारक चेतन आत्मनः ।
दृष्टासु सम्पत्सु विपत्सु सूरयः न विक्रियन्ते मयि बद्ध सौहृदाः ॥

शब्दार्थ—

भिन्नस्य	१.	आत्मा से भिन्न (तथा)	दृष्टासु	१३.	आने पर भी
लिङ्गस्य	७.	सूक्ष्म शरीर की	सम्पत्सु	११.	सुख (और)
गुण	८.	त्रिगुणात्मक	विपत्सु	१२.	दुःख
प्रवाहः	९.	सृष्टि होती रहती है	सूरयः	१०.	बुद्धिमान् (मनुष्य)
द्रव्य	२.	पञ्च महाभूत	न	१४.	नहीं
क्रिया	३.	इन्द्रिय (और)	विक्रियन्ते	१५.	विकार को प्राप्त होते हैं
कारक	४.	(उनके) देवता	मयि	१६.	क्योंकि मेरे में (उनका)
चेतन	५.	मन	बद्ध	१८.	बंधा रहता है
आत्मनः ।	६.	स्वरूप	सौहृदाः ॥	१७.	अनुराग

श्लोकार्थ— आत्मा से भिन्न तथा पञ्च महाभूत इन्द्रियाँ और उनके देवता मनः स्वरूप सूक्ष्म शरीर की त्रिगुणात्मक सृष्टि होती रहती है । बुद्धिमान् मनुष्य सुख और दुःख आने पर भी विकार को नहीं प्राप्त होते हैं । क्योंकि मेरे में उनका अनुराग बंधा रहता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

समः समानोत्तममध्यमाधमः सुखे च दुःखे च जितेन्द्रियाशयः ।
मयोपक्लृप्ताखिललोकसंयुतो विधत्स्व वीराखिललोकरक्षणम् ॥१३॥

पदच्छेद— समः समान उत्तम मध्यम अधमः सुखे च दुःखे च जित इन्द्रिय आशयः ।
मया उपक्लृप्त अखिल लोक संयुतः विधत्स्व वीर अखिल लोक रक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

समः	१२.	समता के साथ (तुम)	आशयः ।	९.	मन (और)
समान	४.	समान होकर	मया	१३.	मेरे द्वारा
उत्तम मध्यम	२.	सात्त्विक राजस (और)	उपक्लृप्त	१४.	जुटाये गये
अधमः	३.	तामस मनुष्यों के प्रति	अखिल लोक	१५.	सम्पूर्ण मन्त्रियों के
सुखे	६.	सुख	संयुतः	१६.	साथ
च	५.	तथा	विधत्स्व	२०.	करो
दुःखे	८.	दुःख में	वीर	१.	हे वीर पृथु जी
च	७.	और	अखिल	१७.	सारी
जित	११.	वश में करके	लोक	१८.	प्रजा का
इन्द्रिय	१०.	इन्द्रियों को	रक्षणम् ॥	१९.	पालन

श्लोकार्थ—हे वीर ! पृथु जी सात्त्विक, राजस और तामस मनुष्यों के प्रति समान होकर तथा सुख और दुःख में मन और इन्द्रियों को वश में करके समता के साथ तुम मेरे द्वारा जुटाये गये सम्पूर्ण मन्त्रियों के साथ सारी प्रजा का पालन करो ॥

चतुर्दशः श्लोकः

श्रेयः प्रजापालनमेव राज्ञो यत्साम्पराये सुकृतात् षष्ठमंशम् ।
हर्तान्यथा हृतपुण्यः प्रजानामरक्षिता करहारोऽघमत्ति ॥१४॥

पदच्छेद— श्रेयः प्रजा पालनम् एव राज्ञः यत् साम्परायये सुकृतात् षष्ठम् अंशम् ।
हर्ता अन्यथा हृत पुण्यः प्रजानाम् अरक्षिता करहारः अघम् अत्ति ॥

शब्दार्थ—

श्रेयः	४.	श्रेयस्कर है	हर्ता	९.	प्राप्त करता है
प्रजा पालनम्	२.	प्रजा का पालन	अन्यथा	१०	नहीं तो
एव	३	ही	हृत	१५	क्षीण हो जाता है (और)
राज्ञः	१	राजा के लिये	पुण्यः	१४.	उसका पुण्य
यत्	५.	जिससे (वह)	प्रजानाम्	११.	प्रजाओं का
साम्पराये	६.	परलोक में	अरक्षिता	१२.	पालन न करके (उनसे)
सुकृतात्	७.	प्रजा के पुण्य से	करहारः	१३.	जो कर लेता है (उससे)
षष्ठम् अंशम् ।	८.	छठवां भाग	अघम् अत्ति ॥	१६.	(वह) पाप भोगता है

श्लोकार्थ—राजा के लिये प्रजा का पालन ही श्रेयस्कर है; जिससे वह परलोक में प्रजा के पुण्य से छठवां भाग प्राप्त करता है । नहीं तो प्रजाओं का पालन न करके उनसे जो कर लेता है उससे उसका पुण्य क्षीण हो जाता है और वह पाप भोगता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

एवं द्विजाग्र्यानुमतानुवृत्तधर्मप्रधानोऽन्यतमोऽवितास्याः ।
ह्रस्वेन कालेन गृहोपयातान् द्रष्टासि सिद्धाननुरक्तलोकः ॥१५॥

पदच्छेद—एवम् द्विज अग्र्य अनुमत अनुवृत्त धर्म प्रधानः अन्यतमः अविता अस्याः ।
ह्रस्वेन कालेन गृह उपयातान् द्रष्टासि सिद्धान् अनुरक्त लोकः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार (यदि तुम)	अस्याः ।	८.	इस पृथ्वी को
द्विज	२.	त्रिवर्ण	ह्रस्वेन	१३.	थोड़े
अग्र्य	३.	श्रेष्ठ विप्रों की	कालेन	१४.	समय के बाद
अनुमत	४.	सम्मति और	गृह	१५.	अपने घर
अनुवृत्त	५.	परम्परा प्राप्त	उपयातान्	१६.	पधारे हुये
धर्म	६.	धर्म को	द्रष्टासि	१८.	दर्शन करोगे
प्रधानः	७.	प्रमुख मानते हुये	सिद्धान्	१७.	सनकादि सिद्धों का
अन्यतमः	९.	अद्वितीय न्यायप्रिय	अनुरक्त	१२.	प्रेम करेगी (और)
अविता	१०.	पालक होंगे (तो)	लोकः ॥	११.	प्रजा तुमसे

श्लोकार्थ—इस प्रकार यदि तुम त्रिवर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) में श्रेष्ठ विप्रों की सम्मति और परम्परा से प्राप्त धर्म को प्रमुख मानते हुये अद्वितीय न्याय प्रिय पालक होंगे । तो प्रजा तुमसे प्रेम करेगी; और थोड़े समय के बाद अपने घर पधारे हुये सनकादि सिद्धों के दर्शन करोगे ॥

षोडशः श्लोकः

वरं च मत् कञ्चन मानवेन्द्र वृणीष्व तेऽहं गुणशीलयन्त्रितः ।
नाहं मखैर्वै सुलभस्तपोभिर्योगेन वा यत्समचित्तवर्ती ॥१६॥

पदच्छेद— वरम् च मत् कञ्चन मानवेन्द्र वृणीष्व ते अहम् गुण शील यन्त्रितः ।
न अहम् मखैः वै सुलभः तपोभिः योगेन वा मत् सम चित्तवर्ती ॥

शब्दार्थ—

वरम्	७.	वरदान	न	१४.	नहीं होता हूँ
च मत् कञ्चन	६.	अतः मुझसे कोई भी	अहम् मखैः	९.	मैं यज्ञों से
मानवेन्द्र	१.	हे राजन्	वै सुलभः	१३.	बिल्कुल सुलभ
वृणीष्व	८.	मांगो	तपोभिः	१०.	तपस्याओं से
ते	३.	तुम्हारे	योगेन	१२.	योग से
अहम्	२.	मैं	वा	११.	अथवा
गुण शील	४.	सद्गुणों और स्वभाव से	मत् सम	१५.	क्योंकि मैं समदर्शियों के
यन्त्रिताः	५.	वश में हूँ	चित्तवर्ती ।	१६.	हृदय में रहता हूँ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मैं तुम्हारे सद्गुणों और स्वभाव से वश में हूँ । अतः मुझसे कोई भी वरदान मांगों । मैं यज्ञों से, तपस्याओं से अथवा योग से बिल्कुल सुलभ नहीं हूँ । क्योंकि मैं समदर्शियों के हृदय में रहता हूँ ॥

सप्तदशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—स इत्थं लोकगुरुणा विष्वक्सेनेन विश्वजित्।
अनुशासित आदेशं शिरसा जगृहे हरेः ॥१७॥

पदच्छेद—

स: इत्थम् लोक गुरुणा विष्वक्सेनेन विश्वजित्।
अनुशासितः आदेशम् शिरसा जगृहे हरेः ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	उन महाराज पृथु ने	अनुशासितः	४.	कहने पर
इत्थम्	३.	इस प्रकार	आदेशम्	८.	आदेश
लोक गुरुणा	१.	जगद् गुरु (भगवान्)	शिरसा	९.	शिर से
विष्वकसेनेन	२.	श्री हरि के	जगृहे	१०.	ग्रहण किया
विश्वजित्।	५.	विश्व विजयी	हरेः ॥	७.	भगवान् का

श्लोकार्थ—जगद्गुरु भगवान् श्री हरि के इस प्रकार कहने पर विश्व विजयी उन महाराज पृथु ने भगवान् का आदेश शिर से ग्रहण किया ॥

अष्टादशः श्लोकः

स्पृशन्तं पादयोः प्रेम्णा व्रीडितं स्वेन कर्मणा।
शतक्रतुं परिष्वज्य विद्वेषं विससर्ज ह ॥१८॥

पदच्छेद—

स्पृशन्तम् पादयोः प्रेम्णा व्रीडितम् स्वेन कर्मणा।
शतक्रतुम् परिष्वज्य विद्वेषम् विससर्ज ह ॥

शब्दार्थ—

स्पृशन्तम्	६.	छूते ही	शतक्रतुम्	७.	इन्द्र का
पादयोः	५.	पैर	परिष्वज्य	९.	आलिंगन करके
प्रेम्णा	८.	प्रेम से	विद्वेषम्	१०.	मनो मालिन्य
व्रीडितम्	४.	लजा कर	विससर्ज	११.	निकाल दिया
स्वेन	२.	अपने	ह ॥	१.	उस समय
कर्मणा।	३.	कर्म से			

श्लोकार्थ—उस समय अपने कर्म से लजा कर पैर छूते ही इन्द्र का प्रेम से आलिंगन करके मनोमालिन्य निकाल दिया ॥

एकोनविंशः श्लोकः

भगवानथ विश्वात्मा पृथुनोपहृतार्हणः ।
समुज्जिहानया भक्त्या गृहीतचरणाम्बुजः ॥१९॥

पदच्छेद—

भगवान् अथ विश्व आत्मा पृथुना उपहृत अर्हणः ।
समुज्जिहानया भक्त्या गृहीत चरण अम्बुजः ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	५.	भगवान् श्री हरि की	अर्हणः ।	६.	पूजा का
अथ	१.	तदनन्तर	समुज्जिहानया	८.	उमड़ते
विश्व	३.	सबकी	भक्त्या	९.	भक्ति-भाव से
आत्मा	४.	आत्मा	गृहीत	१२.	पकड़ लिया
पृथुना	२.	महाराज पृथु ने	चरण	१०.	प्रभु के चरण
उपहृत	७.	विधान किया (और)	अम्बुजः ॥	११.	कमल को

श्लोकार्थ—तदनन्तर महाराज पृथु ने सब की आत्मा भगवान् श्री हरि की पूजा का विधान किया। और उमड़ते भक्ति-भाव से प्रभु के चरण कमल को पकड़ लिया ॥

विंशः श्लोकः

प्रस्थानाभिमुखोऽप्येनमनुग्रहविलम्बितः ।
पश्यन् पद्मपलाशाक्षो न प्रतस्थे सुहृत्सताम् ॥२०॥

पदच्छेद—

प्रस्थान अभिमुखः अपि एनम् अनुग्रह विलम्बितः ।
पश्यन् पद्म पलाश अक्षः न प्रतस्थे सुहृत् सताम् ॥

शब्दार्थ—

प्रस्थान	३.	वहाँ से जाना	पद्म	८.	(वे अपने) कमल
अभिमुखः	४.	चाहते थे	पलाश	९.	दल के समान
अपि	५.	किन्तु (पृथु के प्रति)	अक्षः	१०.	नेत्रों से
एनम्	११.	उन्हें	न	१३.	(और वहाँ से) न
अनुग्रह	६.	वात्सल्य भाव से	प्रतस्थे	१४.	जा सके
विलम्बितः ।	७.	(उन्हें) रोक दिया	सुहृत्	२.	प्रेमी भगवान् श्री हरि
पश्यन्	१२.	देखते ही रह गये	सताम् ॥	१.	सज्जनों के

श्लोकार्थ—सज्जनों के प्रेमी भगवान् श्री हरि वहाँ से जाना चाहते थे; किन्तु पृथु के प्रति वात्सल्य भाव ने उन्हें रोक दिया। वे अपने कमल दल के समान नेत्रों से उन्हें देखते ही रह गये। और वहाँ से न जा सके ॥

एकविंशः श्लोकः

स आदिराजो रचिताञ्जलिर्हरिं विलोकितुं नाशकदश्रुलोचनः ।
न किञ्चनोवाच स बाष्पविक्लवो हृदोपगुह्यामुमधादवस्थितः ॥२१॥

पदच्छेद—सः आदिराजः रचित अञ्जलिः हरिम् विलोकितुम् न अशकत् अश्रु लोचनः ।
न किञ्चन उवाच सः बाष्प विक्लवः हृदा उपगुह्य अमुम् अधात् अवस्थितः ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	वे महाराज पृथु	न	११.	नहीं
आदिराजः	१.	आदिराज	किञ्चन	१०.	कुछ
रचित	१९.	जोड़े	उवाच	१२.	बोल सके
अञ्जलिः	१८.	हाथ	सः	१३.	वे (केवल)
हरिम्	६.	भगवान् का	बाष्प विक्लवः	९.	कण्ठ गद्गद हो जाने से
विलोकितुम्	७	दर्शन करने में	हृदा	१४.	हृदय से
न	५.	न (तो)	उपगुह्य	१६.	आलिंगन कर
अशकत्	८.	समर्थ हो सके (और)	अमुम्	१५.	उनका
अश्रु	४.	आंसु भर आने से	अधात्	१७.	पकड़े रहे (और)
लोचनः ।	३.	नेत्रों में	अवस्थितः ॥	२०.	खड़े रहे

श्लोकार्थ—आदिराज वे महाराज पृथु नेत्रों में आंसू भर आने से न तो भगवान् का दर्शन करने में समर्थ हो सके और कण्ठ गद्गद हो जाने से कुछ नहीं बोल सके। वे केवल हृदय से उनका आलिंगन कर पकड़े रहे और हाथ जोड़े खड़े रहे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अथावमृज्याश्रुकला विलोकयन्नतृप्तदृग्गोचरमाह पूरुषम् ।
पदा स्पृशन्तं क्षितिमंस उन्नते विन्यस्तहस्ताग्रमुरङ्गविद्विषः ॥२२॥

पदच्छेद— अथ अवमृज्य अश्रुकलाः विलोकयन् अतृप्तदृग् गोचरम् आह पूरुषम् ।
पदा स्पृशन्तम् क्षितिम् अंसे उन्नते विन्यस्त हस्त अग्रम् उरङ्ग विद्विषः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर (पृथु जी)	पदा	९.	(भगवान्) अपने पैर से
अवमृज्य	३.	पोंछकर	स्पृशन्तम्	११.	छूते हुये
अश्रुकलाः	२.	(अपने) आंसुओं की धारा को	क्षितिम्	१०.	पृथ्वी को
विलोकयन्	७	देखते हुये (इस प्रकार)	अंसे	१४.	कन्धे पर
अतृप्तदृग्	४.	अतृप्त प्यासी दृष्टि से	उन्नते	१३.	ऊँचे
गोचरम्	५.	इन्द्रियों के विषय	विन्यस्त	१६.	रखे हुए
आह	८.	कहने लगे (उस समय)	हस्त अग्रम्	१५.	हाथ की अंगुलियों को
पूरुषम् ।	६.	आदि पुरुष को	उरङ्ग विद्विषः ॥	१२.	सर्प शत्रु गरुड़ के

श्लोकार्थ—तदनन्तर पृथु जी अपने आँसुओं की धारा को पोंछकर अतृप्त प्यासी दृष्टि से इन्द्रियों के विषय आदि पुरुष को देखते हुये इस प्रकार कहने लगे। उस समय भगवान् अपने पैर से पृथ्वी को छूते हुये सर्प के शत्रु गरुड़ के ऊँचे कन्धे पर हाथ की अंगुलियों को रखे हुए थे ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

पृथुरुवाच—वरान् विभो त्वद्वरदेश्वराद् बुधः कथं वृणीते गुणविक्रियात्मनाम् ।
ये नारकाणामपि सन्ति देहिनां तानीश कैवल्यपते वृणे न च ॥२३॥

पदच्छेद—वरान् विभो त्वद् वरद ईश्वरात् बुधः कथम् वृणोते गुण विक्रिया आत्मनाम् ।
ये नारकाणाम् अपि सन्ति देहिनाम् तान् ईश कैवल्यपते वृणे न च ॥

शब्दार्थ—

वरान्	८.	विषयों के मनोरथों को	ये नरकाणाम्	१०.	ये विषय तो नारकी
विभो	१.	हे प्रभो	अपि सन्ति	१२.	भी मिलते हैं
त्वद्	४.	आप से	देहिनाम्	११.	जीवों को
वरद	२.	वर देने वालों को (भी)	तान्	१६.	उन तुच्छ विषयों को
ईश्वरात्	३.	वर देने में समर्थ	ईश	१५.	हे स्वामिन् (मैं)
बुधः	५.	बुद्धिमान् मनुष्य	कैवल्यपते	१४.	मोक्ष देने वाले
कथम् वृणीते	६.	कैसे माँग सकता है	वृणे	१८.	माँगता हूँ
गुण विक्रिया	६.	विषयों से विकार को	न	१७.	नहीं
आत्मनाम्	७.	प्राप्त होने वाले लोगों के	च ॥	१३.	अतः

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! वर देने वालों को भी वर देने में समर्थ आपसे बुद्धिमान् मनुष्य विषयों से विकार को प्राप्त होने वाले लोगों के विषयों के मनोरथों को कैसे माँग सकता है ? ये विषय तो नारकी जीवों को भी मिलते हैं। अतः मोक्ष को देने वाले हे स्वामिन् ! मैं उन तुच्छ विषयों को नहीं मांगता हूँ ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

न कामये नाथ तदप्यहं क्वचिन्न यत्र युष्मच्चरणाम्बुजासवः ।
महत्तमान्तर्हृदयान्मुखच्युतो विधत्स्व कर्णायुतमेष मे वरः ॥२४॥

पदच्छेद—न कामये नाथ तद् अपि अहम् क्वचित् न यत्र युष्मत् चरण अम्बुज आसवः ।
महत्तम अन्तर् हृदयात् मुख च्युतः विधत्स्व कर्ण अयुतम् एष मे वरः ॥

शब्दार्थ—

न कामये	४.	नहीं चाहता हूँ	महत्तम	६.	महा पुरुषों के
नाथ	१.	हे स्वामिन्	अन्तर्	८.	अन्दर से
तद् अपि	३.	वह मोक्ष सुख भी	हृदयात्	७.	हृदय के
अहम्	२.	मैं	मुखच्युत	९.	उनके मुख द्वारा चूता हुआ
क्वचित्	१२.	बिल्कुल	विधत्स्व	१६.	दे दीजिये
न	१३	नहीं (है अतः)	कर्ण	१५.	कान
यत्र	५.	जिसमें	अयुतम्	१४	(मुझे) दस हजार
युष्मत् चरण	१०.	आपके चरण	एषः	१८.	यही
अम्बुज आसवः ।	११.	कमलों का पराग	मे	१७.	मेरा
			वरः ॥	१९.	प्रार्थना है

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! मैं वह मोक्ष सुख भी नहीं चाहता हूँ, जिसमें महापुरुषों के हृदय के अन्दर से उनके मुख द्वारा चूता हुआ आपके चरण कमलों का पराग बिल्कुल नहीं है । अतः मुझे दस हजार कान दे दीजिये । मेरी यही प्रार्थना है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

स उत्तमश्लोक महन्मुखच्युतो भवत्पदाम्भोजसुधाकणानिलः ।
स्मृतिं पुनर्विस्मृततत्त्ववर्त्मनां कुयोगिनां नो वितरत्यलं वरैः ॥२५॥

पदच्छेद— सः उत्तमश्लोक महत् मुखच्युतः भवत् पद अम्भोज सुधाकण अनिलः ।
स्मृतिम् पुनः विस्मृत तत्त्ववर्त्मनाम् कुयोगिनाम् नः वितरति अलम् वरैः ॥

शब्दार्थ—

सः	८.	वह	स्मृतिम्	१५.	स्मरण
उत्तमश्लोक	१.	पुण्य कीर्ति हे प्रभो	पुनः	१४.	फिर से (भगवान् का)
महत्	२.	महापुरुषों के	विस्मृत	११.	भूले हुये
मुखच्युतः	३.	मुख से निकली हुई	तत्त्ववर्त्मनाम्	१०.	भगवत् स्वरूप के मार्ग को
भवत्	४.	आपके	कुयोगिनाम्	१३.	कुयोगियों को
पद	५.	चरण	नः	१२.	हम
अम्भोज	६.	कमल के	वितरति	१६.	करा देती है (अतः)
सुधाकण	७.	पराग कण की	अलम्	१८.	प्रयोजन नहीं है
अनिलः ।	९.	वायु	वरैः ॥	१७.	अन्य वरदानों से (हमें कोई)

श्लोकार्थ—पुण्य कीर्ति हे प्रभो ! महापुरुषों के मुख से निकली हुई आपके चरण कमल के परागकण की वह वायु भगवत् स्वरूप के मार्ग को भूले हुये हम कुयोगियों को फिर से भगवान् का स्मरण करा देती है ! अतः अन्य वरदानों से हमें कोइ प्रयोजन नहीं है ॥

षड्विंशः श्लोकः

यशः शिवं सुश्रव आर्यसङ्गमे यदृच्छया चोपशृणोति ते सकृत् ।
कथं गुणज्ञो विरमेद्विना पशुं श्रीर्यत्प्रवव्रे गुणसंग्रहेच्छया ॥२६॥

पदच्छेद— यशः शिवम् सुश्रव आर्य सङ्गमे यदृच्छया च उपशृणोति ते सकृत् ।
कथम् गुणज्ञः विरमेत् विना पशुम् श्रीः यत् प्रवव्रे गुण संग्रह इच्छया ॥

शब्दार्थ—

यशः	७.	कीर्ति को	कथम्	१३.	(उससे) कैसे
शिवम्	६.	कल्याणमयी	गुणज्ञः	१२.	गुणग्राही (मनुष्य)
सुश्रव	४.	पवित्र	विरमेत्	१४.	विराम लेगा
आर्य सङ्गमे	१.	सत्सङ्ग में (जो मनुष्य)	विना	११.	छोड़कर
यदृच्छया	२.	अपने आप	पशुम्	१०.	पशुओं को
च	५.	और	श्रीः	१५.	लक्ष्मी जी भी
उपशृणोति	९.	सुन लेता है	यत्	१४.	क्योंकि
ते	३.	आपकी	प्रवव्रे	१७.	वरण करती हैं
सकृत् ।	८.	एक बार भी	गुण संग्रह इच्छया ॥	१६.	विभूतियों को पाने की इच्छा से (आपका ही)

श्लोकार्थ—सत्सङ्ग में जो मनुष्य अपने आप आपकी पवित्र और कल्याणमयी कीर्ति को [illegible]बार भी सुन लेता है, पशुओं को छोड़कर गुणग्राही मनुष्य उससे कैसे विराम लेगा । क्योंकि [illegible] जी भी विभूतियों को पाने की इच्छा से आपका ही वरण करती हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

अथाभजे त्वाखिलपुरुषोत्तमं गुणालयं पद्मकरेव लालसः ।
अप्यावयोरेकपतिस्पृधोः कलिर्न स्यात्कृतत्वच्चरणैकतानयोः ॥२७॥

पदच्छेद— अथ आभजे त्वा अखिल पूरुषोत्तमम् गुणालयम् पद्मकरा इव लालसः ।
अपि आवयोः एकपति स्पृधोः कलिः न स्यात् कृत त्वत् चरण एक तानयोः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	अब मैं	अपि	१५.	कहीं
आभजे	९.	भजन करता हूँ (किन्तु हे प्रभो)	आवयोः	१६.	हम दोनों में
त्वा	८.	आपका	एकपति	१३.	एक स्वामी के लिये
अखिल	५.	सम्पूर्ण	स्पृधोः	१४.	होड़ करने वाले
पुरुषोत्तमम्	६.	पुरुषों में श्रेष्ठ (और)	कलिः न	१७.	विवाद नहीं
गुणालयम्	७.	गुणागार	स्यात्	१८.	हो जावे
पद्मकरा	२.	लक्ष्मी जी के	कृत	१२.	करने वाले (अतः)
इव	३.	समान	त्वत् चरण	१०.	आपके चरणों में
लालसः ।	४.	उत्सुकता से	एक तानयोः ॥	११.	ध्यान

श्लोकार्थ—अब मैं लक्ष्मी जी के समान उत्सुकता से सम्पूर्ण पुरुषों में श्रेष्ठ और गुणागार आपका भजन करता हूँ। किन्तु हे प्रभो ! आपके चरणों में ध्यान करने वाले अतः एकस्वामी के लिये होड़ करने वाले कहीं हम दोनों में विवाद नहीं हो जावे ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

जगज्जनन्यां जगदीश वैशसं स्यादेव यत्कर्मणि नः समीहितम् ।
करोषि फल्ग्वप्युरु दीनवत्सलः स्व एव धिष्ण्येऽभिरतस्य किं तया ॥२८॥

पदच्छेद—जगत् जनन्याम् जगदीश वैशसम् स्यात् एव यत् कर्मणि नः समीहितम् ।
करोषि फल्गु अपि उरु दीन वत्सलः स्वे एव धिष्ण्ये अभिरतस्य किम् तया ॥

शब्दार्थ—

जगत्	२.	जगत्	अपि	९.	भी (गुण को)
जनन्याम्	३.	जननी लक्ष्मी जी के	उरु	१०.	बड़ा करके
जगदीश	१.	हे जगदीश्वर	दीन	१२.	दीनों के ऊपर
वैशसम्	४.	(मन में) विरोध	वत्सलः	१३.	वात्सल्य भाव रखने वाले हैं
स्यात् एव	५.	हो सकता है	स्वे एव	१४.	(आप) अपने ही
यत् कर्मणि	६.	क्योंकि उनके सेवा कर्म में	धिष्ण्ये	१५.	आत्माराम में
नः समीहितम् ।	७.	हमारा भी अनुराग है	अभिरतस्य	१६.	रमण करते हैं
करोषि	११.	मानते हैं (क्योंकि आप)	किम्	१८.	क्या प्रयोजन है
फल्गु	८.	आप भक्तों के छोटे से	तया ॥	१७.	आपको लक्ष्मी जी से

श्लोकार्थ—हे जगदीश्वर ! जगत् जननी लक्ष्मी जी के मन में विरोध हो सकता है। क्योंकि उनके सेवा कर्म में हमारा भी अनुराग है। आप भक्तों के छोटे से भी गुण को बड़ा करके मानते हैं। क्योंकि आप दीनों के ऊपर वात्सल्यभाव रखने वाले हैं। आप अपने ही आत्माराम में रमण करते हैं। आपको लक्ष्मी जी से क्या प्रयोजन ? ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

भजन्त्यथ त्वामत एव साधवो व्युदस्तमायागुणविभ्रमोदयम् ।
भवत्पदानुस्मरणादृते सतां निमित्तमन्यद्भगवन्न विद्महे ॥२९॥

पदच्छेद—भजन्ति अथ त्वाम् अतः एव साधवः व्युदस्त माया गुण विभ्रम उदयम् ।
भवत् पद अनुस्मरणात् ऋते सताम् निमित्तम् अन्यद् भगवन् न विद्महे ॥

शब्दार्थ—

भजन्ति	१०.	भजन करते हैं	भवत्	११.	(मुझे तो) आपके
अथ	१.	तथा	पद	१२.	चरण कमल के
त्वाम्	९.	आपका	अनुस्मरणात्	१३.	चिन्तन के
अतः एव	३.	इसीलिये	ऋते	१४.	अतिरिक्त
साधवः	४.	निष्काम पुरुष	सताम्	१५.	सत् पुरुषों का
व्युदस्त	८.	रहित	निमित्तम्	१७.	प्रयोजन
माया गुण	५.	माया के कार्य	अन्यद्	१६.	और कोई
विभ्रम	६.	अहंकार आदि की	भगवन्	२.	हे प्रभो
उदयम् ।	७.	उत्पत्ति से	न विद्महे ॥	१८.	नहीं जान पड़ता है

श्लोकार्थ—तथा हे प्रभो ! इसलिये निष्काम पुरुष माया के कार्य अहंकार आदि की उत्पत्ति से रहित आपका भजन करते हैं । हे प्रभो ! मुझे तो आपके चरण कमल के चिन्तन के अतिरिक्त सत्पुरुषों का और प्रयोजन नहीं जान पड़ता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

मन्ये गिरं ते जगतां विमोहिनीं वरं वृणीष्वेति भजन्तमात्थ यत् ।
वाचा नु तन्त्या यदि ते जनोऽसितः कथं पुनः कर्म करोति मोहितः ॥३०॥

पदच्छेद—मन्ये गिरम् ते जगताम् विमोहिनीम् वरम् वृणीष्व इति भजन्तम् आत्थ यत् ।
वाचा नु तन्त्या यदि ते जनः असितः कथम् पुनः कर्म करोति मोहितः ॥

शब्दार्थ—

मन्ये	१०.	मानता हूँ	वाचा	१५.	वेद वाणी रूप
गिरम्	७.	वाणी को (मैं)	नु	१८.	तो
ते	५.	आपकी	तन्त्या	१६.	रस्सी से
जगताम्	८.	संसार को	यदि	११.	(क्योंकि) यदि
विमोहिनीम्	९.	मोहित करने वाली	ते	१४.	आपकी
वरम् वृणीष्व	४.	वरदान माँगो	जनः	१३.	मनुष्य
इति	६.	इस	असितः	१२.	सकाम
भजन्तम्	१.	भजन करते हुये मुझसे	कथम्	२०.	कैसे
आत्थ	३.	कहा (कि)	पुनः	१९.	फिर
यत् ।	२.	आपने जो (यह)	कर्म करोति	२१.	सकाम कर्म करता
			मोहितः ॥	१७.	मोहित नहीं होता

श्लोकार्थ—भजन करते हुये मुझसे आपने जो यह कहा कि वरदान माँगो; आपकी इस वाणी को मैं संसार को मोहित करने वाली मानता हूँ । क्योंकि यदि सकाम मनुष्य आपकी वेदवाणी रूप रस्सी से मोहित नहीं होता तो फिर कैसे सकाम कर्म करता ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

त्वन्माययाद्धा जन ईश खण्डितो यदन्यदाशास्त ऋतात्मनोऽबुधः।
यथा चरेद्बालहितं पिता स्वयं तथा त्वमेवार्हसि नः समीहितुम् ॥३१॥

पदच्छेद—त्वद् मायया अद्धा जनः ईश खण्डितः यद् अन्यद् आशास्ते ऋत आत्मनः अबुधः।
यथा चरेत् बालहितम् पिता स्वयम् तथा त्वम् एव अर्हसि नः समीहितुम् ॥

शब्दार्थ—

त्वद् मायया	२.	आप को माया के कारण	यथा	९.	जैसे
अद्धा जनः	३.	ही मनुष्य	चरेत्	१२.	करता है
ईश	१.	हे ईश्वर	बालहितम्	११.	बालक का कल्याण
खण्डितः	६.	विमुख होकर	पिता स्वयम्	१०.	पिता अपने आप
यद् अन्यद्	७.	दूसरी वस्तु की	तथा	१३.	उसी प्रकार
आशास्ते	८.	आशा करता है	त्वम् एव	१४.	आप ही
ऋत आत्मनः	४.	सत्य स्वरूप आपको	अर्हसि	१६.	समर्थ हैं
अबुधः।	५.	न जानता हुआ (आपसे)	नः समीहितुम्	१५.	हमारा कल्याण करने में

श्लोकार्थ—हे ईश्वर ! आपकी माया के कारण ही मनुष्य सत्यस्वरूप आपको न जानता हुआ आपसे विमुख होकर दूसरी वस्तु की आशा करता है। जैसे पिता अपने आप बालक का कल्याण करता है, उसी प्रकार आप ही हमारा कल्याण करने में समर्थ हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

इत्यादिराजेन नुतः स विश्वदृक् तमाह राजन् मयि भक्तिरस्तु ते।
दिष्ट्येदृशी धीर्मयि ते कृता यया मायां मदीयां तरति स्म दुस्त्यजाम् ॥३२॥

पदच्छेद—इति आदिराजेन नुतः सः विश्वदृक् तम् आह राजन् मयि भक्तिः अस्तु ते।
दिष्ट्या ईदृशी धीः मयि ते कृता यया मायाम् मदीयाम् तरति स्म दुस्त्यजाम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	दिष्ट्या	१०.	सौभाग्य से
आदिराजेन	२.	आदिराज पृथु के द्वारा	ईदृशी	१२.	इस प्रकार की
नुतः	३.	स्तुति करने पर	धीः मयि	१३.	बुद्धि मुझमें
सः विश्वदृक्	४.	वे सर्वदर्शी श्रीहरि	ते	११.	आपकी
तम् आह	५.	उनसे बोले (कि)	कृता यया	१४.	हुई है जिससे मनुष्य
राजन्	६.	हे राजन्	मायाम्	१७.	माया को
मयि भक्तिः	८.	मुझमें भक्ति	मदीयाम्	१५.	मेरी
अस्तु	९.	होवे	तरति स्म	१८.	पार कर लेता है
ते।	७.	आपकी	दुस्त्यजाम् ॥	१६.	अपार

श्लोकार्थ—इस प्रकार आदिराज पृथु के द्वारा स्तुति करने पर वे सर्वदर्शी श्री हरि उनसे बोले कि हे राजन् ! आपकी मुझमें भक्ति होवे। सौभाग्य से आपकी इस प्रकार की बुद्धि मुझमें हुई है। जिससे मनुष्य मेरी अपार माया को पार कर लेता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तत्त्वं कुरु मयाऽऽदिष्टमप्रमत्तः प्रजापते।
मदादेशकरो लोकः सर्वत्राप्नोति शोभनम् ॥३३॥

पदच्छेद—

तत् त्वम् कुरु मया आदिष्टम् अप्रमत्तः प्रजापते ।
मद् आदेशकरः लोकः सर्वत्र आप्नोति शोभनम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	५.	उसका	मद्	७.	मेरे
त्वम्	३.	तुम	आदेशकरः	८.	आदेश का पालक
कुरु	६.	पालन करो	लोकः	९.	मनुष्य
मया आदिष्टम्	२.	मैंने जो आदेश दिया है	सर्वत्र	१०.	सब जगह
अप्रमत्तः	४.	सावधान होकर	आप्नोति	१२.	प्राप्त करता है
प्रजापते ।	१.	हे राजन्	शोभनम् ॥	११.	कल्याण को

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मैंने जो आदेश दिया है; तुम सावधान होकर उसका पालन करो। मेरे आदेश का पालक मनुष्य सब जगह कल्याण को प्राप्त करता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति वैन्यस्य राजर्षेः प्रतिनन्द्यार्थवद्वचः ।
पूजितोऽनुगृहीत्वैनं गन्तुं चक्रेऽच्युतो मतिम् ॥३४॥

पदच्छेद—

इति वैन्यस्य राजर्षेः प्रतिनन्द्य अर्थवद् वचः ।
पूजितः अनुगृहीत्वा एनम् गन्तुम् चक्रे अच्युतः मतिम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार (श्री हरि ने)	पूजितः	७.	श्री हरि की पूजा की
वैन्यस्य	२.	वेन पुत्र	अनुगृहीत्वा	१०.	कृपा करके
राजर्षेः	३.	राजर्षि पृथु के	एनम्	९.	उन पर
प्रतिनन्द्य	६.	स्वागत किया (और उन्होंने)	गन्तुम्	११.	जाने का
अर्थवद्	४.	सार गर्भित	चक्रे	१३.	किया
वचः ।	५.	वचनों का	अच्युतः	८.	भगवान् श्री हरि ने
			मतिम् ॥	१२.	विचार

श्लोकार्थ—इस प्रकार श्री हरि ने वेन पुत्र राजर्षि पृथु के सार गर्भित वचनों का स्वागत किया। और उन्होंने श्री हरि की पूजा की। तदनन्तर भगवान् श्री हरि ने उन पर कृपा करके जाने का विचार किया ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

देवर्षिपितृगन्धर्वसिद्धचारणपन्नगाः ।
किन्नराप्सरसो मर्त्याः खगा भूतान्यनेकशः ॥३५॥

पदच्छेद—

देवर्षि पितृ गन्धर्व सिद्ध चारण पन्नगाः ।
किन्नर अप्सरसः मर्त्याः खगाः भूतानि अनेकशः ॥

शब्दार्थ—

देवर्षि	१.	राजा पृथु ने देवर्षि	किन्नर	७.	किन्नर
पितृ	२.	पितर	अप्सरसः	८.	अप्सरा
गन्धर्व	३.	गन्धर्व	मर्त्याः	९.	मनुष्य
सिद्ध	४.	सिद्ध	खगाः	१०.	पक्षी
चारण	५.	चारण	भूतानि	१२.	प्राणियों का (सत्कार किया)
पन्नगाः ।	६.	नाग	अनेकशः ॥	११.	अनेक प्रकार के

श्लोकार्थ—राजा पृथु ने देवर्षि, पितर, गन्धर्व, सिद्ध, चारण, नाग, किन्नर अप्सरा, मनुष्य, पक्षी, अनेक प्रकार के प्राणियों का स्वागत किया ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

यज्ञेश्वरधिया राज्ञा वाग्वित्ताञ्जलिभक्तितः ।
सभाजिता ययुः सर्वे वैकुण्ठानुगतास्ततः ॥३६॥

पदच्छेद—

यज्ञेश्वर धिया राज्ञा वाग्वित्त अञ्जलि भक्तितः ।
सभाजिताः ययुः सर्वे वैकुण्ठ अनुगताः ततः ॥

शब्दार्थ—

यज्ञेश्वर	२.	सब में भगवान्	सभाजिताः	७.	सत्कार किया (तदनन्तर)
धिया	३.	बुद्धि करके (सबका)	ययुः	१२.	चले गये
राज्ञा	१.	राजा पृथु ने	सर्वे	८.	वे सभी
वाग्वित्त	६.	वाणी (और) धन से	वैकुण्ठ	९.	भगवान् श्री हरि के
अञ्जलि	५.	हाथ जोड़कर	अनुगतः	१०.	सेवक
भक्तितः ।	४.	भक्ति पूर्वक	ततः ॥	११.	वहाँ से

श्लोकार्थ—राजा पृथु ने सबमें भगवद् बुद्धि करके सबका भक्ति पूर्वक हाथ जोड़ कर वाणी और धन से सत्कार किया । तदनन्तर वे सभी भगवान् श्री हरि के सेवक वहाँ से चले गये ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

भगवानपि राजर्षेः सोपाध्यायस्य चाच्युतः ।
हरन्निव मनोऽमुष्य स्वधाम प्रत्यपद्यत ॥३७॥

पदच्छेद—

भगवान् अपि राजर्षेः स उपाध्यायस्य च अच्युतः ।
हरन् इव मनः अमुष्य स्व धाम प्रत्यपद्यत ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	१. भगवान्		हरन्	१०.	चुराते हुये
अपि	३. भी		इव	११.	से
राजर्षेः	६. राजा पृथु		मनः	९.	मन
स	५. साथ		अमुष्य	८.	उन सबका
उपाध्यायस्य	४. पुरोहितों के		स्व	१२.	अपने
च	७. तथा		धाम	१३.	लोक को
अच्युतः ।	२. श्री हरि		प्रत्यपद्यत ॥	१४.	पधारे

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि भी पुरोहितों के साथ राजा पृथु तथा उन सबका मन चुराते हुये से अपने लोक को पधारे ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

अदृष्टाय नमस्कृत्य नृपः सन्दर्शितात्मने ।
अव्यक्ताय च देवानां देवाय स्वपुरं ययौ ॥३८॥

पदच्छेद—

अदृष्टाय नमस्कृत्य नृपः सन्दर्शित आत्मने ।
अव्यक्ताय च देवानाम् देवाय स्व पुरम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

अदृष्टाय	३. अन्तर्धान हुये		च	९.	भी
नमस्कृत्य	७. नमस्कार करके		देवानाम्	५	देवों के
नृपः	८. राजा पृथु		देवाय	६.	देव भगवान् को
सन्दर्शित	२. दिखाकर		स्व	१०.	अपनी
आत्मने ।	१. अपना स्वरूप		पुरम्	११.	राजधानी में
अव्यक्ताय	४. अव्यक्त स्वरूप		ययौ ॥	१२.	चले गये

श्लोकार्थ—तदनन्तर अपना स्वरूप दिखाकर अन्तर्धान हुये अव्यक्त स्वरूप देवों के देव भगवान् को नमस्कार करके राजा पृथु भी अपनी राजधानी में चले गये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे विंशोऽध्यायः ॥२०॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

एकविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—मौक्तिकैः कुसुमस्रग्भिर्दुकूलैः स्वर्णतोरणैः ।
महासुरभिभिर्धूपैर्मण्डितं तत्र तत्र वै ॥१॥

पदच्छेद— मौक्तिकैः कुसुम स्रग्भिः दुकूलैः स्वर्ण तोरणैः ।
महा सुरभिभिः धूपैः मण्डितम् तत्र तत्र वै ॥

शब्दार्थ—

मौक्तिकैः	३.	मोती की झालरें	महा	९.	अत्यन्त
कुसुम	४.	फूलों की	सुरभिभिः	१०.	सुगन्धित
स्रग्भिः	५.	मालायें	धूपैः	११.	धूपों से
दुकूलैः	६.	रंग-बिरंगे वस्त्रों	मण्डितम्	१२.	सजाया गया था
स्वर्ण	७.	सोने की	तत्र तत्र	२.	स्थान-स्थान पर
तोरणैः ।	८.	बन्दन वारों (और)	वै ॥	१.	निश्चित ही पृथु का नगर

श्लोकार्थ—निश्चित ही पृथु का नगर स्थान-स्थान पर मोती की झालरों, फूलों की मालाओं, रंग-बिरंगे वस्त्रों और सोने की बन्दन वारों और अत्यन्त सुगन्धित धूपों से सजाया गया है ॥

द्वितीयः श्लोकः

चन्दनागुरुतोयार्द्ररथ्याचत्वरमार्गवत् ।
पुष्पाक्षतफलैस्तोक्मैर्लाजैरर्चिभिरर्चितम् ॥२॥

पदच्छेद— चन्दन अगुरु तोय आर्द्र रथ्या चत्वार मार्गवत् ।
पुष्प अक्षत फलैः तोक्मैः लाजैः अर्चिभिः अर्चितम् ॥

शब्दार्थ—

चन्दन	४.	चन्दन (और)	पुष्प	८.	(उन्हें) फूल
अगुरु	५.	अगर के	अक्षत	९.	चावल
तोय	६.	जल से	फलैः	१०.	फल
आर्द्र	७.	सींची गई थीं (तथा)	तोक्मैः	११.	अङ्कुर
रथ्या	१.	(उस नगर की) गलियाँ	लाजैः	१२.	खील और
चत्वार	२.	चौराहे (और)	अर्चिभिः	१३.	दीपकों से
मार्गवत् ।	३.	सड़कें	अर्चितम् ॥	१४.	सजाया गया था

श्लोकार्थ—उस नगर की गलियाँ, चौराहे और सड़कें चन्दन और अगुरु के जल से सींचीं गई थीं। तथा उन्हें फूल, चावल, फल, अङ्कुर, खील और दीपकों से सजाया गया था ॥

तृतीयः श्लोकः

सवृन्दैः कदलीस्तम्भैः पूगपोतैः परिष्कृतम् ।
तरुपल्लवमालाभिः सर्वतः समलंकृतम् ॥३॥

पदच्छेद—

सवृन्दैः कदली स्तम्भैः पूगपोतैः परिष्कृतम् ।
तरु पल्लव मालाभिः सर्वत्रः सम्‌अलंकृतम् ॥

शब्दार्थ—

सवृन्दैः	१. (वह नगर) फल के गुच्छों के साथ	तरु	७. आम्र वृक्ष के
कदली	२. केले के	पल्लव	८. पत्तों की
स्तम्भैः	३. खम्भों से (और)	मालाभिः	९. बन्दनवारों से
पूगपोतैः	४. सुपारी के गुच्छों से	सर्वत्रः	६. चारों ओर
परिष्कृतम् ।	५. सुसज्जित था (तथा)	सम्‌अलंकृतम् ॥	१०. अलंकृत था

श्लोकार्थ—वह नगर फल के गुच्छों के साथ केले के खम्भों से और सुपारी के गुच्छों से सुसज्जित था तथा चारों ओर आम्र वृक्ष के पत्तों की बन्दनवारों से अलंकृत था ॥

चतुर्थः श्लोकः

प्रजास्तं दीपबलिभिः सम्भृताशेषमङ्गलैः ।
अभीयुर्मृष्टकन्याश्च मृष्टकुण्डलमण्डिताः ॥४॥

पदच्छेद—

प्रजाः तम् दीप बलिभिः सम्भृत अशेष मङ्गलैः ।
अभीयुः मृष्ट कन्याः च मृष्ट कुण्डल मण्डिताः ॥

शब्दार्थ—

प्रजाः	६. जनता ने	अभीयुः	१४. अगवानी की
तम्	१३. उन महाराज पृथु की	मृष्ट	११. सुन्दरी
दीप	४. दीप	कन्याः	१२. कन्याओं ने
बलिभिः	५. मालाओं के साथ	च	७. और
सम्भृत	३. उपहार (और)	मृष्ट	८. सुन्दर
अशेष	१. सम्पूर्ण	कुण्डल	९. कुण्डलों से
मङ्गलैः ।	२. मांगलिक	मण्डिताः ॥	१०. विभूषित

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण मांगलिक उपहार और दीप मालाओं के साथ जनता ने और सुन्दर कुण्डलों से विभूषित सुन्दरी कन्याओं ने उन महाराज पृथु की अगवानी की ॥

पञ्चमः श्लोकः

शङ्खदुन्दुभिघोषेण ब्रह्मघोषेण चर्त्विजाम् ।
विवेश भवनं वीरः स्तूयमानो गतस्मयः ॥५॥

पदच्छेद—

शङ्ख दुन्दुभि घोषेण ब्रह्म घोषेण च ऋत्विजाम् ।
विवेश भवनम् वीरः स्तूयमानः गत स्मयः ॥

शब्दार्थ—

शङ्ख	२.	शंख (और)	विवेश	१०.	प्रवेश किया (उस समय)
दुन्दुभि	३.	नगाड़ों की	भवनम्	९.	अपने महल में
घोषेण	४.	आवाज	वीरः	१.	महाराज पृथु ने
ब्रह्मघोषेण	७.	वेदध्वनि के साथ	स्तूयमानः	८.	स्तुति सुनते हुये
च	५.	तथा	गत	१२.	नहीं था
ऋत्विजाम् ।	६.	वेद-पाठियों की	स्मयः ॥	११.	(उन्हें) अहंकार

श्लोकार्थ—महाराज पृथु ने शंख और नगाड़ों की आवाज तथा वेदपाठियों की वेदध्वनि के साथ स्तुति सुनते हुये अपने महल में प्रवेश किया । उस समय उन्हें अहंकार नहीं था ॥

षष्ठः श्लोकः

पूजितः पूजयामास तत्र तत्र महायशाः ।
पौराञ्जानपदांस्तांस्तान् प्रीतः प्रियवरप्रदः ॥६॥

पदच्छेद—

पूजितः पूजयामास तत्र तत्र महायशाः ।
पौरान् जानपदान् तान्-तान् प्रीतः प्रिय वर प्रदः ॥

शब्दार्थ—

पूजितः	३.	पूजित होकर	पौरान्	८.	पुरवासियों का (और)
पूजयामास	१०.	सम्मान किया	जानपदान्	९.	देशवासियों का
तत्र	१.	जगह	तान्-तान्	७.	उन-उन
तत्र	२.	जगह पर	प्रीतः प्रिय	४.	प्रसन्न एवम् इच्छित
महायशाः ।	६.	महान् यशस्वी पृथु जी ने	वर प्रदः ॥	५.	वरदान देने वाले

श्लोकार्थ—जगह-जगह पर पूजित होकर प्रसन्न एवम् इच्छित वरदान देने वाले महान् यशस्वी पृथु जी ने उन-उन पुरवासियों का और देशवासियों का सम्मान किया ॥

सप्तमः श्लोकः

स एवमादीन्यनवद्यचेष्टितः कर्माणि भूयांसि महान्महत्तमः ।
कुर्वन् शशासावनिमण्डलं यशः स्फीतं निधायारुरुहे परं पदम् ॥७॥

पदच्छेद— सः एवम् आदीनि अनवद्य चेष्टितः कर्माणि भूयांसि महान् महत्तमः ।
शशास अवनि मण्डलम् यशः स्फीतम् निधाय आरुरुहे परम् पदम् ॥

शब्दार्थ—

सः	५.	उन महाराज पृथु ने	शशास	१२.	शासन किया (तथा)
एवम् आदीनि	६.	इस प्रकार की	अवनि	१०.	पृथ्वी
अनवद्य	१.	पुण्य कर्म	मण्डलम्	११.	मण्डल का
चेष्टितः	२.	करने वाले (और)	यशः	१४.	कीर्ति
कर्माणि	८.	कर्मों को	स्फीतम्	१३.	अपनी निर्मल
भूयांसि	७.	अनेक	निधाय	१५.	स्थापित करके
महान्	४.	श्रेष्ठ	आरुरुहे	१८.	प्राप्त किया
महत्तमः ।	३.	महापुरुषों में	परम्	१६.	भगवान् के उत्तम
कुर्वन्	९.	करते हुये	पदम् ॥	१७.	लोक को

श्लोकार्थ—पुण्यकर्म करने वाले और महापुरुषों में श्रेष्ठ उन महाराज पृथु ने इस प्रकार के अनेक कर्मों को करते हुये पृथ्वी मण्डल का शासन किया तथा अपनी निर्मल कीर्ति स्थापित करके भगवान् के उत्तम लोक को प्राप्त किया ॥

अष्टमः श्लोकः

तदादिराजस्य यशो विजृम्भितं गुणैरशेषैर्गुणवत्सभाजितम् ।
क्षत्ता महाभागवतः सदस्पते कौषारविं प्राह गृणन्तमर्चयन् ॥८॥

पदच्छेद— तद् आदिराजस्य यशः विजृम्भितम् गुणैः अशेषैः गुणवत् सभाजितम् ।
क्षत्ता महा भागवतः सदस्पते कौषारविम् प्राह गृणन्तम् अर्चयन् ॥

शब्दार्थ—

तद्	८.	उस	क्षत्ता	१४.	विदुर जी ने
आदिराजस्य	७.	आदिराज पृथु की	महा	१२.	परम
यशः	९.	कीर्ति का	भागवतः	१३.	भगवत् भक्त
विजृम्भितम्	४.	बढ़ी हुई (तथा)	सदस्पते	१.	हे शौनक जी
गुणैः	३.	सद्‌गुणों से	कौषारविम्	११.	मैत्रेय जी से
अशेषैः	२.	सम्पूर्ण	प्राह	१६.	कहा
गुणवत्	५.	गुणवानों के द्वारा	गृणन्तम्	१०.	वर्णन करते हुये
सभाजितम् ।	६.	प्रशंसित	अर्चयन् ॥	१५.	अभिनन्दन करते हुये

श्लोकार्थ—हे शौनक जी ! सम्पूर्ण सद्‌गुणों से बढ़ी हुई गुणवानों के द्वारा प्रशंसित आदिराज पृथु की उस कीर्ति का वर्णन करते हुये मैत्रेय जी ने परम भगवत् भक्त विदुर जी से अभिनन्दन करते हुये कहा ॥

नवमः श्लोकः

विदुर उवाच—सोऽभिषिक्तः पृथुर्विप्रैर्लब्धाशेषसुरार्हणः ।
बिभ्रत् स वैष्णवं तेजो बाह्वोर्याभ्यां दुदोह गाम् ॥९॥

पदच्छेद— सः अभिषिक्तः पृथुः विप्रैः लब्ध अशेष सुर अर्हणः ।
बिभ्रत् सः वैष्णवम् तेजः बाह्वोः याभ्याम् दुदोह गाम् ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	उन	बिभ्रत्	१३.	धारण किया
अभिषिक्तः	४.	अभिषेक किया था	सः	५.	(तदनन्तर) उन्होंने
पृथुः	३.	महाराज पृथु का	वैष्णवम्	११.	भगवान् विष्णु के
विप्रैः	१.	ब्राह्मणों ने	तेजः	१२.	तेज को
लब्ध	९.	प्राप्त किया था (तथा)	बाह्वोः	१०.	उन भुजाओं में
अशेष	६.	सम्पूर्ण	याभ्याम्	१४.	जिन भुजाओं से
सुर	७.	देवताओं से	दुदोह	१६.	दोहन किया था
अर्हणः ।	८.	सम्मान	गाम् ॥	१५.	पृथ्वी का

श्लोकार्थ—ब्राह्मणों ने उन महाराज पृथु का अभिषेक किया था। तदनन्तर उन्होंने सम्पूर्ण देवताओं से सम्मान प्राप्त किया था। तथा उन भुजाओं में भगवान् विष्णु के तेज को धारण किया जिन भुजाओं से पृथ्वी का दोहन किया था ॥

दशमः श्लोकः

को न्वस्य कीर्तिं न शृणोत्यभिज्ञो यद्विक्रमोच्छिष्टमशेषभूपाः ।
लोकाः सपाला उपजीवन्ति काममद्यापि तन्मे वद कर्म शुद्धम् ॥१०॥

पदच्छेद—कः नु अस्य कीर्ति न शृणोति अभिज्ञः यद् विक्रम उच्छिष्टम् अशेष भूपाः ।
लोकाः सपालाः उपजीवन्ति कामम् अद्य अपि तद् मे वद कर्म शुद्धम् ॥

शब्दार्थ—

कः	२.	कौन	लोकाः	८.	सारे लोक (और)
नु	१.	भला	सपालाः	७.	लोक पालों के साथ
अस्य	४.	इन महाराज पृथु का	उपजीवन्ति	१३.	भोग करते हैं
कीर्ति	५.	यश	कामम्	१२.	विषय का
न शृणोति	६.	नहीं सुनेगा	अद्य अपि	१५.	अभी कुछ और भी
अभिज्ञः	३.	जानकार	तद्	१४.	उनके
यद् विक्रम	१०.	जिनके पराक्रम का	मे वद	१८.	मुझे सुनावें
उच्छिष्टम्	११.	जूठन रूप	कर्म	१७.	चरित्र
अशेष भूपाः ।	९.	सारे भूपाल	शुद्धम् ॥	१६.	पवित्र

श्लोकार्थ—भला कौन जानकार इन महाराज पृथु का यश नहीं सुनेगा लोकपालों के साथ सारे लोक और सारे भूपाल जिनके पराक्रम का जूठनरूप विषय का भोग करते हैं। उनके अभी कुछ और भी पवित्र चरित्र सुनावें ॥

एकादशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— गङ्गायमुनयोर्नद्योरन्तराक्षेत्रमावसन् ।
आरब्धानेव बुभुजे भोगान् पुण्यजिहासया ।।११।।

पदच्छेद—

गङ्गा यमुनयोः नद्योः अन्तरा क्षेत्रम् आवसन् ।
आरब्धान् एव बुभुजे भोगान् पुण्य जिहासया ।।

शब्दार्थ—

गङ्गा	१.	गंगा और	आरब्धान्	६.	भाग्य से प्राप्त
यमुनयोः	२.	यमुना	एव	१०.	ही
नद्योः	३.	नदी के	बुभुजे	१२.	भोगते रहे
अन्तरा	४.	मध्य	भोगान्	११.	भोगों को
क्षेत्रम्	५	क्षेत्र में	पुण्य	७.	पुण्य कर्मों के
आवसन् ।	६.	निवास करते हुये	जिहासया ।।	८.	क्षय की इच्छा से

श्लोकार्थ—महराज पृथु गंगा और यमुना नदी के मध्य क्षेत्र में निवास करते हुये पुण्य कर्मों के क्षय की इच्छा से भाग्य से प्राप्त ही भोगों को भोगते रहे ।।

द्वादशः श्लोकः

सर्वत्रास्खलितादेशः सप्तद्वीपैकदण्डधृक् ।
अन्यत्र ब्राह्मणकुलादन्यत्राच्युतगोत्रतः ।।१२।।

पदच्छेद—

सर्वत्र अस्खलित आदेशः सप्त-द्वीप एक दण्ड धृक् ।
अन्यत्र ब्राह्मण कुलात् अन्यत्र अच्युत गोत्रतः ।।

शब्दार्थ—

सर्वत्र	१०.	सब पर	अन्यत्र	६.	और
अस्खलित	११.	अबाध	ब्राह्मण	४.	विप्र
आदेशः	१२.	शासन था	कुलात्	५.	वंश
सप्त-द्वीप	१.	सातों द्वीपों के	अन्यत्र	६.	छोड़कर
एक दण्ड	२.	अखण्ड शासन के	अच्युत	७.	श्री हरि के
धृक् ।	३.	धारक महाराज पृथु का	गोत्रतः ।।	८.	भक्तों को

श्लोकार्थ—सातों द्वीपों के अखण्ड शासन के धारक महाराज पृथु का विप्र वंश और श्री हरि के भक्तों को छोड़कर सब पर अबाध शासन था ।।

त्रयोदशः श्लोकः

एकदाऽऽसीन्महासत्रदीक्षा तत्र दिवौकसाम् ।
समाजो ब्रह्मर्षीणां च राजर्षीणां च सत्तम ॥१३॥

पदच्छेद—

एकदा आसीत् महासत्र दीक्षा तत्र दिवौकसाम् ।
समाजः ब्रह्मर्षीणाम् च राजर्षीणाम् च सत्तम ॥

शब्दार्थ—

एकदा	२.	एक बार (उन्होंने)	समाजः	१२.	समाज जुटा
आसीत्	५.	ग्रहण की	ब्रह्मर्षिणाम्	८.	ब्रह्मर्षियों
महासत्र	३.	महासत्र की	च	९.	और
दीक्षा	४.	दीक्षा	राजर्षीणाम्	१०.	राजर्षियों का
तत्र	६.	उसमें	च	११.	भी
दिवौकसाम् ।	७.	देवताओं	सत्तम ॥	१.	साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी

श्लोकार्थ—साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी ! एक बार उन्होंने महासत्र की दीक्षा ग्रहण की उसमें देवताओं, ब्रह्मर्षियों और राजर्षियों का भी समाज जुटा ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तस्मिन्नर्हत्सु सर्वेषु स्वर्चितेषु यथार्हतः ।
उत्थितः सदसो मध्ये ताराणामुडुराडिव ॥१४॥

पदच्छेद—

तस्मिन् अर्हत्सु सर्वेषु सु अर्चितेषु यथा अर्हतः ।
उत्थितः सदसः मध्ये ताराणाम् उडुराट् इव ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१.	उस सभा में	उत्थितः	१२.	खड़े हो गये
अर्हत्सु	३.	पूजनीयों की	सदसः	१०.	सभा के
सर्वेषु	२.	सभी	मध्ये	११.	बीच में
सु	५.	भली भाँति	ताराणाम्	७.	नक्षत्रों में
अर्चितेषु	६.	पूजा कर लेने पर (महाराज पृथु)	उडुराट्	८.	चन्द्रमा के
यथा अर्हतः ।	४.	यथा-योग्य	इव ॥	९.	समान

श्लोकार्थ—उस सभा में सभी पूजनीयों की भली-भाँति पूजा कर लेने पर महाराज पृथु नक्षत्रों में चन्द्रमा के समान सभा के बीच में खड़े हो गये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

प्रांशुः पीनायतभुजो गौरः कञ्जारुणेक्षणः ।
सुनासः सुमुखः सौम्यः पीनांसः सुद्विजस्मितः ॥१५॥

पदच्छेद—

प्रांशुः पीन आयत भुजः गौरः कञ्ज अरुण ईक्षणः ।
सुनासः सुमुखः सौम्यः पीन अंसः सुद्विज स्मितः ॥

शब्दार्थ—

प्रांशुः	१. उनका ऊँचा शरीर	सुनासः	८. सुन्दर नासिका
पीन	२. मोटी (और)	सुमुखः	९. मनोहर मुख
आयत	३. लम्बी	सौम्यः	१०. मृदु-स्वभाव
भुजः	४. भुजायें	पीन	११. पुष्ट
गौरः	५. गौर वर्ण	अंसः	१२. कन्धे (और)
कञ्ज	६. कमल के समान	सुद्विज	१४. सुन्दर दन्त पंक्ति थी
अरुण ईक्षणः ।	७. लाल नेत्र	स्मितः ॥	१३. मुसकान से युक्त

श्लोकार्थ—उनका ऊँचा शरीर, मोटी और लम्बी भुजायें, गौर वर्ण, कमल के समान लाल नेत्र, सुन्दर नासिका, मनोहर मुख, मृदु-स्वभाव, पुष्ट कन्धे और मुसकान से युक्त सुन्दर दन्त-पंक्ति थी ॥

षोडशः श्लोकः

व्यूढवक्षा बृहच्छ्रोणिर्वलिवल्गुदलोदरः ।
आवर्तनाभिरोजस्वी काञ्चनोरुरुदग्रपात् ॥१६॥

पदच्छेद—

व्यूढ वक्षाः बृहत् श्रोणिः वलि वल्गु दल उदरः ।
आवर्त नाभिः ओजस्वी काञ्चन ऊरुः उदग्रपात् ॥

शब्दार्थ—

व्यूढ	१. (उनकी) चौड़ी	उदरः ।	८. पेट
वक्षाः	२. छाती	आवर्त	९. गहरी
बृहत्	३. विशाल	नाभिः	१०. नाभि
श्रोणिः	४. नितम्ब	ओजस्वी	१२. तेजस्वी
वलि	५. त्रिवलि के कारण	काञ्चन	११. सुवर्ण के समान
वल्गु	६. मनोहर	ऊरुः	१३. जंघायें (और)
दल	७. पीपल पत्ते के समान	उदग्रपात् ॥	१४. उठे हुये पञ्जे थे

श्लोकार्थ—उनकी चौड़ी छाती, विशाल नितम्ब, त्रिवलि के कारण मनोहर पीपल के पत्ते के समान पेट, गहरी नाभि, सुवर्ण के समान तेजस्वी जंघायें और उठे हुये पञ्जे थे ॥

सप्तदशः श्लोकः

सूक्ष्मवक्रासितस्निग्धमूर्धजः कम्बुकन्धरः ।
महाघने दुकूलाग्र्ये परिधायोपवीय च ॥१७॥

पदच्छेद—

सूक्ष्म वक्र असित स्निग्ध मूर्धजः कम्बु कन्धरः ।
महा घने दुकूल अग्र्ये परिधाय उपवीय च ॥

शब्दार्थ—

सूक्ष्म	२.	महीन	महा	८.	(वे) बहु
वक्र	३.	घुंघराले	घने	९.	मूल्य
असित	४.	काले (और)	दुकूल	११.	रेशमी वस्त्र
स्निग्ध	५.	चिकने थे	अग्र्ये	१०.	उत्तम
मूर्धजः	१.	उनके बाल	परिधाय	१२.	(नीचे) पहने थे
कम्बु	६.	शंख के समान	उपवीय	१४.	ऊपर धारण किये थे
कन्धरः ।	७.	गर्दन थी	च ॥	१३.	और

श्लोकार्थ—उनके बाल महीन घुंघराले और काले थे । शंख के समान गर्दन थी । वे बहुमूल्य उत्तम रेशमी वस्त्र नीचे पहने थे और ऊपर धारण किये थे ॥

अष्टादशः श्लोकः

व्यञ्जिताशेषगात्रश्रीर्नियमे न्यस्तभूषणः ।
कृष्णाजिनधरः श्रीमान् कुशपाणिः कृतोचितः ॥१८॥

पदच्छेद—

व्यञ्जित अशेष गात्र श्रीः नियमे न्यस्त भूषणः ।
कृष्ण अजिन धरः श्रीमान् कुशपाणिः कृत उचितः ॥

शब्दार्थ—

व्यञ्जित	७.	झलक रही थी	कृष्ण	९.	कृष्ण वर्ण का
अशेष	४.	उनके सभी	अजिन	१०.	मृग चर्म
गात्र	५.	अंगों से	धरः	११.	धारण करने से
श्रीः	६.	कान्ति	श्रीमान्	१२.	शोभा सम्पन्न थे (और)
नियमे	१.	दीक्षा नियम में	कुशपाणिः	८.	(वे) हाथ में कुशा (और)
न्यस्त	३.	उतार दिये थे	कृत	१३.	कर चुके थे
भूषणः ।	२.	(अपने सारे) आभूषण	उचितः ॥	१३.	नित्य क्रिया

श्लोकार्थ—उन्होंने दीक्षा नियम में अपने आभूषण उतार दिये थे । उनके सभी अंगों से कान्ति झलक रही थी । वे हाथ में कुश और कृष्ण वर्ण का मृग चर्म धारण करने से शोभा सम्पन्न थे । और नित्य क्रिया कर चुके थे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

शिशिरस्निग्धताराक्षः समैक्षत समन्ततः ।
ऊचिवानिदमुर्वीशः सदः संहर्षयन्निव ॥१९॥

पदच्छेद—

शिशिर स्निग्ध ताराक्षः समैक्षत समन्ततः ।
ऊचिवान् इदम् उर्वीशः सदः संहर्षयन् इव ॥

शब्दार्थ—

शिशिर	२. शीतल (और)	ऊचिवान्	१०. कहा
स्निग्ध	३. स्नेह युक्त	इदम्	९. यह
ताराक्षः	४. नेत्रों से	उर्वीशः	१. महाराज पृथु ने
समैक्षत	६. देखा (तथा)	सदः	७. सभा को
समन्ततः ।	५. सभा के चारों ओर	संहर्षयन् इव ॥	८. प्रसन्न करते हुये से

श्लोकार्थ—उस समय महाराज पृथु ने शीतल और स्नेह युक्त नेत्रों से सभा के चारों ओर देखा तथा सभा को प्रसन्न करते हुये से यह कहा ॥

विंशः श्लोकः

चारु चित्रपदं श्लक्ष्णं मृष्टं गूढमविक्लवम् ।
सर्वेषामुपकारार्थं तदा अनुवदन्निव ॥२०॥

पदच्छेद—

चारु चित्रपदम् श्लक्ष्णम् मृष्टम् गूढम् अविक्लवम् ।
सर्वेषाम् उपकारार्थम् तदा अनुवदन् इव ॥

शब्दार्थ—

चारु	५. अलंकृत शब्दों से युक्त	सर्वेषाम्	२. सबके
चित्रपदम्	४. अलंकृत शब्दों से युक्त	उपकारार्थम्	३. कल्याण के लिये
श्लक्ष्णम्	६. सुहावने	तदा	१. उस समय (वे)
मृष्टम्	७. मधुर	अनुवदन्	१०. अनुवाद करते हुये
गूढम्	८. गम्भीर (और)	इव ॥	११. से बोले
अविक्लवम् ॥	९. निर्भीक वाणी में (अनुभवों का)		

श्लोकार्थ—उस समय वे सबके कल्याण के लिये अलंकृत शब्दों से युक्त मनोहर, सुहावने, मधुर, गम्भीर और निर्भीक वाणी में अनुभवों का अनुवाद करते हुये से बोले ॥

एकविंशः श्लोकः

राजोवाच—सभ्याः शृणुत भद्रं वः साधवो य इहागताः ।
सत्सु जिज्ञासुभिर्धर्ममावेद्यं स्वमनीषितम् ॥२१॥

पदच्छेद—

सभ्याः शृणुत भद्रम् वः साधवः ये इह आगताः ।
सत्सु जिज्ञासुभिः धर्मम् आवेद्यम् स्व मनीषितम् ॥

शब्दार्थ—

सभ्याः	१.	हे सभासदों	आगताः ।	७.	आये हैं
शृणुत	८.	(वे) सुनें	सत्सु	१०.	सत्पुरुषों से
भद्रम्	३.	कल्याण हो	जिज्ञासुभिः	९.	जिज्ञासु मनुष्य को
वः	२.	आप लोगों का	धर्मम्	१३.	धर्म का
साधवः	६.	महात्मागण	आवेद्यम्	१४.	वर्णन करना चाहिये
ये	५.	जो	स्व	११.	अपने
इह	४.	यहाँ	मनीषितम् ॥	१२.	मनवांछित

श्लोकार्थ—हे सभासदों ! आप लोगों का कल्याण हो यहाँ जो महात्मागण आये हैं । वे सुनें । जिज्ञासु मनुष्य को सत्पुरुषों से अपने मन वांछित धर्म का वर्णन करना चाहिये ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अहं दण्डधरो राजा प्रजानामिह योजितः ।
रक्षिता वृत्तिदः स्वेषु सेतुषु स्थापिता पृथक् ॥२२॥

पदच्छेद—

अहम् दण्डधरः राजा प्रजानाम् इह योजितः ।
रक्षिता वृत्तिदः स्वेषु सेतुषु स्थापिता पृथक् ॥

शब्दार्थ—

अहम्	९.	मैं	रक्षिता	३.	रक्षा के लिये
दण्डधरः	१०.	शासन करने वाला	वृत्तिदः	४.	जीविका के लिये (तथा उन्हें)
राजा	११.	राजा	स्वेषु	५.	अपनी-अपनी
प्रजानाम्	२.	प्रजाओं की	सेतुषु	६.	मर्यादा में
इह	१.	यहाँ पृथ्वी पर	स्थापिता	८.	रखने के लिये
योजितः ।	१२.	नियुक्त किया गया हूँ	पृथक् ॥	७.	अलग-अलग

श्लोकार्थ—यहाँ पृथ्वी पर प्रजाओं की रक्षा के लिये, जीविका के लिये तथा उन्हें मर्यादा में अलग-अलग रखने के लिये मैं शासन करने वाला राजा नियुक्त किया गया हूँ ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

तस्य मे तदनुष्ठानाद्यानाहुर्ब्रह्मवादिनः ।
लोकाः स्युः कामसन्दोहा यस्य तुष्यति दिष्टदृक् ॥२३॥

पदच्छेद—

तस्य मे तद् अनुष्ठानात् यान् आहुः ब्रह्मवादिनः ।
लोकाः स्युः काम संदोहाः यस्य तुष्यति दिष्टदृक् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१२.	(क्योंकि) मैंने	लोकाः	६.	लोकों की प्राप्ति
मे	१०.	मुझे	स्युः	११.	मिलने चाहिये
तद्	१३.	उन कर्मों का	काम	८.	सभी मनोरथों को
अनुष्ठानात्	१४.	आचरण किया है	संदोहाः	९.	पूर्ण करने वाले (वे लोक)
यान्	५.	जिन	यस्य	१.	जिस पर
आहुः	७.	बतायी है	तुष्यति	३.	प्रसन्न होते हैं (उनके लिये)
ब्रह्मवादिनः ।	४.	ब्रह्मज्ञानियों ने	दिष्टदृक् ॥	२.	सर्वदर्शी श्री हरि

श्लोकार्थ—जिस पर सर्वदर्शी श्री हरि प्रसन्न होते हैं उसके लिये ब्रह्म ज्ञानियों ने जिन लोकों की प्राप्ति बतायी है, सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाले वे लोक मुझे मिलने चाहिये । क्योंकि मैंने उन कर्मों का आचरण किया है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

य उद्धरेत्करं राजा प्रजा धर्मेष्वशिक्षयन् ।
प्रजानां शमलं भुङ्क्ते भगं च स्वं जहाति सः ॥२४॥

पदच्छेद— यः उद्धरेत् करम् राजा प्रजा धर्मेषु अशिक्षयन् ।
प्रजानाम् शमलम् भुङ्क्ते भगम् च स्वम् जहाति सः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	प्रजानाम्	९.	प्रजा के
उद्धरेत्	७.	लेता है	शमलम्	१०.	पाप को
करम्	६.	केवल कर	भुङ्क्ते	११.	भोगता है
राजा	२.	राजा	भगम्	१३.	ऐश्वर्य
प्रजा	३.	प्रजा को	च स्वम्	१२.	और अपना
धर्मेषु	४.	धर्म की	जहाति	१४.	खो बैठता है
अशिक्षयन् ।	५.	शिक्षा न देकर	सः ॥	८.	वह

श्लोकार्थ—जो राजा प्रजा को धर्म की शिक्षा न देकर केवल कर लेता है, वह प्रजा के पाप को भोगता है और अपना ऐश्वर्य खो बैठता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

तत् प्रजा भर्तृपिण्डार्थं स्वार्थमेवानसूयवः ।
कुरुताधोक्षजधियस्तर्हि मेऽनुग्रहः कृतः ॥२५॥

पदच्छेद—

तत् प्रजा भर्तृ पिण्डार्थम् स्वार्थम् एव अनसूयवः ।
कुरुत अधोक्षज धियः तर्हि मे अनुग्रहः कृतः ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	इसलिये	कुरुत	१०.	लगानी चाहिये
प्रजा	२.	प्रजा को	अधोक्षज	८.	भगवान् श्री हरि में
भर्तृ	४.	अपने स्वामी के	धियः	९.	बुद्धि
पिण्डार्थम्	५.	कल्याण के लिये	तर्हि	११.	उससे
स्वार्थम्	६.	स्वार्थ समझकर	मे	१२.	मुझ पर
एव	७.	ही	अनुग्रहः	१३.	बड़ी कृपा
अनसूयवः ।	३.	ईर्ष्या न करके	कृतः ॥	१४.	होगी

श्लोकार्थ—इसलिये प्रजा को ईर्ष्या न करके अपने स्वामी के कल्याण के लिये स्वार्थ समझ कर ही भगवान् श्री हरि में बुद्धि लगानी चाहिये । उससे मुझपर बड़ी कृपा होगी ॥

षड्विंशः श्लोकः

यूयं तदनुमोदध्वं पितृदेवर्षयोऽमलाः ।
कर्तुः शास्तुरनुज्ञातुस्तुल्यं यत्प्रेत्य तत्फलम् ॥२६॥

पदच्छेद—

यूयम् तद् अनुमोदध्वम् पितृ देव ऋषयः अमलाः ।
कर्तुः शास्तुः अनुज्ञातुः तुल्यम् यत् प्रेत्य तत् फलम् ॥

शब्दार्थ—

यूयम्	५.	आप लोग	कर्तुः	९.	कर्ता
तद्	६.	उसका	शास्तुः	१०.	उपदेशक (और)
अनुमोदध्वम्	७.	अनुमोदन करें	अनुज्ञातुः	११.	समर्थक को
पितृ	२.	हे पितर	तुल्यम्	१३.	समान
देव	३.	देवता (और)	यत् प्रेत्य	८.	क्योंकि मरने के बाद
ऋषयः	४	ऋषिगण	तत्	१२.	उसका
अमलाः ।	१.	शुद्ध चित्त	फलम् ॥	१४.	फल मिलता है

श्लोकार्थ—शुद्ध चित्त हे पितर देवता और ऋषिगण ! आप लोग उसका अनुमोदन करें । क्योंकि मरने के बाद कर्ता, उपदेशक और समर्थक को उसका समान फल मिलता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

अस्ति यज्ञपतिर्नाम केषाञ्चिदर्हसत्तमाः ।
इहामुत्र च लक्ष्यन्ते ज्योत्स्नावत्यः क्वचिद्भुवः ॥२७॥

पदच्छेद—

अस्ति यज्ञपतिः नाम केषाञ्चित् अर्ह सत्तमाः ।
इह अमुत्र च लक्ष्यन्ते ज्योत्स्नावत्यः क्वचित् भुवः ॥

शब्दार्थ—

अस्ति	१२.	है	इह	२.	इस लोक में
यज्ञपतिः	१०.	वे भगवान् यज्ञेश्वर	अमुत्र	४.	परलोक में
नाम	११.	अंश	च	३.	और
केषाञ्चित्	१.	कुछ लोगों के अनुसार	लक्ष्यन्ते	९.	दिखलाई पड़ते हैं
अर्ह	७	पूज्य	ज्योत्स्नावत्यः	८.	तेजस्वी लोग
सत्तमाः ।	६.	महान्	क्वचित् भुवः ॥	५.	जहाँ-कहीं पृथ्वी पर

श्लोकार्थ—कुछ लोगों के अनुसार इस लोक में और परलोक में जहाँ-कहीं पृथ्वी पर महान्, पूज्य तेजस्वी लोग दिखलाई पड़ते हैं, वे भगवान् यज्ञेश्वर के अंश हैं ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

मनोरुत्तानपादस्य ध्रुवस्यापि महीपतेः ।
प्रियव्रतस्य राजर्षेरङ्गस्यास्मत्पितुः पितुः ॥२८॥

पदच्छेद—

मनोः उत्तानपादस्य ध्रुवस्य अपि महीपतेः ।
प्रियव्रतस्य राजर्षेः अङ्गस्य अस्मत् पितुः पितुः ॥

शब्दार्थ—

मनोः	१.	महाराज मनु	प्रियव्रतस्य	६.	प्रिय व्रत (और)
उत्तानपादस्य	२.	राजा उत्तानपाद	राजर्षेः	५.	राजर्षि
ध्रुवस्य	४.	ध्रुव जी	अङ्गस्य	९.	अङ्ग
अपि	१०.	भी (भगवान् के भक्त थे)	अस्मत्	७.	हमारे
महीपतेः ।	३.	महाराज	पितुः पितुः ॥	८.	पिता के पिता

श्लोकार्थ—महाराज मनु, राजा उत्तान पाद महाराज ध्रुव जी, राजर्षि प्रियव्रत और हमारे पिता के, अङ्ग भी भगवान् के भक्त थे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

ईदृशानामथान्येषामजस्य च भवस्य च ।
प्रह्लादस्य बलेश्चापि कृत्यमस्ति गदाभृता ॥२९॥

पदच्छेद—

ईदृशानाम् अथ अन्येषाम् अजस्य च भवस्य च ।
प्रह्लादस्य बलेः अपि कृत्यम् अस्ति गदाभृता ॥

शब्दार्थ—

ईदृशानाम्	२.	इस प्रकार के	प्रह्लादस्य	८.	प्रह्लाद जी
अथ	१.	तथा	बलेः	१०.	राजाबलि
अन्येषाम्	३.	दूसरे राजा	च	९.	और
अजस्य	५.	ब्रह्मा जी	अपि	११.	भी
च	४.	और	कृत्यम्	१३.	भक्ति रखते
भवस्य	७.	शंकर जी	अस्ति	१४.	हैं
च ।	६.	तथा	गदाभृता ॥	१२.	गदाधर भगवान् में

श्लोकार्थ—तथा इस प्रकार के दूसरे राजा और ब्रह्मा जी तथा शंकर जी, प्रह्लाद जी और राजा बलि भी गदाधर भगवान् में भक्ति रखते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

दौहित्रादीनृते मृत्योः शोच्यान् धर्मविमोहितान् ।
वर्गस्वर्गापवर्गाणां प्रायेणैकात्म्यहेतुना ॥३०॥

पदच्छेद—

दौहित्र आदीन् ऋते मृत्योः शोच्यान् धर्म विमोहितान् ।
वर्ग स्वर्ग अपवर्गाणाम् प्रायेण ऐकात्म्य हेतुना ॥

शब्दार्थ—

दौहित्र	५.	नाती राजा वेन	वर्ग	११.	(धर्म अर्थ काम) त्रिवर्ग
आदीन्	६.	इत्यादि को	स्वर्ग	१२.	उत्तम लोक (और)
ऋते	७.	छोड़कर (अन्य लोगों ने)	अपवर्गाणाम्	१३.	मोक्ष (प्राप्त किया है)
मृत्योः	४.	मृत्यु के	प्रायेण	८.	अधिकतर
शोच्यान्	३.	निन्दनीय	ऐकात्म्य	९.	अनन्य भक्ति के
धर्म	१.	धर्म से	हेतुना ॥	१०.	साधन से ही
विमोहितान् ।	२.	विमुख (अतः)			

श्लोकार्थ—धर्म से विमुख अतः निन्दनीय मृत्यु के नाती राजा वेन इत्यादि को छोड़कर अन्य लोगों ने अधिकतर अनन्य भक्ति के साधन से ही धर्म, अर्थ, काम रूप त्रिवर्ग, उत्तम लोक और मोक्ष प्राप्त किया है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

यत्पादसेवाभिरुचिस्तपस्विनामशेषजन्मोपचितं मलं धियः ।
सद्यः क्षिणोत्यन्वहमेधती सती यथा पदाङ्गुष्ठविनिःसृता सरित् ॥३१॥

पदच्छेद—यत् पादसेवा अभिरुचिः तपस्विनाम् अशेष जन्म उपचितम् मलम् धियः ।
सद्यः क्षिणोति अन्वहम् एधती सती यथा पद अङ्गुष्ठ विनिःसृता सरित् ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जिन भगवान् श्री हरि के	सद्यः	१७.	तत्काल
पादसेवा	२.	चरणों की भक्ति का	क्षिणोति	१८.	नष्ट कर देती है
अभिरुचिः	३.	अनुराग	अन्वहम्	९.	प्रतिदिन
तपस्विनाम्	११.	महात्माओं के	एधती सती	१०.	बढ़ती हुई
अशेष	१२.	सम्पूर्ण	यथा	८.	समान
जन्म	१३.	जन्मों में	पद	४.	भगवान् श्री हरि के चरण के
उपचितम्	१४.	उपार्जित	अङ्गुष्ठ	५.	अंगूठे से
मलम्	१६.	पाप को	विनिः सृता	६.	निकली
धियः ।	१५.	मन के	सरित् ॥	७.	गंगा नदी के

श्लोकार्थ—जिन भगवान् श्री हरि के चरणों की भक्ति का अनुराग भगवान् श्री हरि के अंगूठे से निकली हुई गंगा नदी के समान प्रतिदिन बढ़ती हुई महात्माओं के सम्पूर्ण जन्मों में उपार्जित मन के पाप को तत्काल नष्ट कर देती हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

विनिर्धुताशेषमनोमलः पुमानसङ्गविज्ञानविशेषवीर्यवान् ।
यदङ्घ्रिमूले कृतकेतनः पुनर्न संसृतिं क्लेशवहां प्रपद्यते ॥३२॥

पदच्छेद— विनिर्धुत अशेष मनो मलः पुमान् असङ्ग विज्ञान विशेष वीर्यवान् ।
यद् अङ्घ्रिमूले कृत केतनः पुनः न संसृतिम् क्लेशवहाम् प्रपद्यते ॥

शब्दार्थ—

विनिर्धुत	४.	रहित (तथा)	यद्	१०.	जिन भगवान् के
अशेष	१.	सारे	अङ्घ्रिमूले	११.	चरणों के मूल में
मनो	२.	मन के	कृत	१३.	बनाकर
मलः	३.	कलुष से	केतनः	१२.	घर
पुमान्	९.	मनुष्य	पुनः	१४.	फिर से
असङ्ग	५.	वैराग्य (और)	न	१७.	नहीं
विज्ञान	६.	आत्मज्ञान के प्रभाव से	संसृतिम्	१६.	जन्म मरण के चक्र को
विशेष	७.	अलौकिक	क्लेश वहाम्	१५.	कष्टदायी
वीर्यवान् ।	८.	पराक्रमी	प्रपद्यते ॥	१८.	प्राप्त करता

श्लोकार्थ—सारे मन के कलुष से रहित तथा वैराग्य और आत्मज्ञान के प्रभाव से अलौकिक पराक्रमी मनुष्य जिन भगवान् के चरणों के मूल में घर बनाकर फिर से कष्टदायी जन्म-मरण के चक्र को नहीं प्राप्त करता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तमेव यूयं भजतात्मवृत्तिभिर्मनोवचःकायगुणैः स्वकर्मभिः ।
अमायिनः कामदुघाङ्घ्रिपङ्कजं यथाधिकारावसितार्थसिद्धयः ॥३३॥

पदच्छेद—तम् एव यूयम् भजत आत्म वृत्तिभिः मनः वचः कामगुणैः स्वं कर्मभिः ।
अमायिनः कामदुध अङ्घ्रि पङ्कज यथा अधिकार अवसित अर्थ सिद्धयः ॥

शब्दार्थ—

तम एव	८.	उन्हीं श्री हरि का	अमायिनः	१०.	निष्कपट होकर
यूयम्	१.	आप लोग	कामदुध	११.	कामनाओं को पूर्ण करने वाले
भजत	६.	भजन करें	अङ्घ्रि	१२.	श्री हरि के चरण
आत्म	२.	अपने	पङ्कज	१३.	कमलों का (भजन करने से)
वृत्तिभिः	३	स्वभाव के अनुकूल	यथा	१५.	अनुसार
मनः वचः	४.	मन, वाणी (और)	अधिकार	१४.	वर्णाश्रम के अधिकारों के
कामगुणैः	५.	शरीर से होने वाली	अवसित	१८.	निश्चित है
स्व	६.	अपनी-अपनी	अर्थ	१६.	पदार्थों की
कर्मभिः ।	७.	क्रियाओं से	सिद्धयः ॥	१७.	प्राप्ति

श्लोकार्थ—आप लोग अपने स्वभाव के अनुकूल मन, वाणी और शरीर से होने वाली अपनी-अपनी क्रियाओं से उन्हीं श्री हरि का भजन करें। निष्कपट होकर कामनाओं को पूर्ण करने वाले श्री हरि के चरण कमलों का भजन करने से वर्णाश्रम के अधिकारों के अनुसार पदार्थों की प्राप्ति निश्चित है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

असाविहानेकगुणोऽगुणोऽध्वरः पृथग्विधद्रव्यगुणक्रियोक्तिभिः ।
सम्पद्यतेऽर्थाशयलिङ्गनामभिर्विशुद्धविज्ञानघनः स्वरूपतः ॥३४॥

पदच्छेद—असौ इह अनेक गुणः अध्वरः अगुण पृथग्विध द्रव्य गुण क्रिया उक्तिभिः ।
सम्पद्यते अर्थ आशय लिङ्ग नामभिः विशुद्ध विज्ञानघनः स्व रूपतः ॥

शब्दार्थ—

असौ	३.	वे श्री हरि	सम्पद्यते	१८.	प्रकट होते हैं
इह	७.	यहाँ (पृथ्वी पर)	अर्थ	१२.	पदार्थ
अनेक गुणः	१६.	अनेक नाम वाले	आशय	१३.	संकल्प
अगुण	६.	निर्गुण होकर भी	लिङ्ग	१४.	पदार्थ शक्ति (और)
अध्वरः	१७.	यज्ञ रूप में	नामभिः	१५.	नामों से
पृथग्विध	८.	अनेक प्रकार की	विशुद्ध	१.	केवल
द्रव्य	६.	सामग्री	विज्ञानघनः	२.	ज्ञान स्वरूप
गुण क्रिया	१०.	शुक्लादि गुण क्रिया (और)	स्व	४.	अपने
उक्तिभिः ।	११.	मन्त्रों के द्वारा	स्वरूपतः ॥	५.	स्वरूप से

श्लोकार्थ—केवल ज्ञान स्वरूप वे श्री हरि अपने स्वरूप से निर्गुण होकर भी यहाँ पृथ्वी पर अनेक प्रकार की सामग्री, शुक्लादिगुण, क्रिया और मन्त्रों के द्वारा, पदार्थ, संकल्प, पदार्थ शक्ति और नामों से अनेक नाम वाले यज्ञ रूप में प्रकट होते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

प्रधानकालाशयधर्मसंग्रहे शरीर एष प्रतिपद्य चेतनाम् ।
क्रियाफलत्वेन विभुर्विभाव्यते यथानलो दारुषु तद्गुणात्मकः ॥३५॥

पदच्छेद— प्रधान काल आशय धर्म संग्रहे शरीरे एषः प्रतिपद्य चेतनाम् ।
क्रिया फलत्वेन विभुः विभाव्यते यथा अनलः दारुषु तद् गुण आत्मकः ॥

शब्दार्थ—

प्रधान	६.	प्रकृति	क्रिया	१६.	कर्म के
काल	७	काल	फलत्वेन	१७.	फलरूप में
आशय	८.	वासना (और)	विभुः	१३.	श्री हरि
धर्म	९.	अदृष्ट से	विभाव्यते	१८.	प्रतीत होते हैं
संग्रहे	१०.	उत्पन्न	यथा	१.	जैसे
शरीरे	११.	शरीर में	अनलः दारुषु	२.	अग्नि काष्ठों में
एषः	१२.	ये भगवान्	तद्	३.	उन्हीं के
प्रतिपद्य	१५.	स्थित होकर	गुण	४.	आकार में
चेतनाम् ।	१४.	बुद्धि में	आत्मकः ॥	५	स्थित रहती है (उसी प्रकार)

श्लोकार्थ—जैसे अग्नि, काष्ठों में उन्हीं के आकार में स्थित रहती है उसी प्रकार प्रकृति, काल वासना और अदृष्ट से उत्पन्न शरीर में ये भगवान् श्री हरि बुद्धि में स्थित होकर कर्म के फल रूप में प्रतीत होते हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

अहो ममामी वितरन्त्यनुग्रहं हरिं गुरुं यज्ञभुजामधीश्वरम् ।
स्वधर्मयोगेन यजन्ति मामका निरन्तरं क्षोणितले दृढव्रताः ॥३६॥

पदच्छेद—अहो मम अमी वितरन्ति अनुग्रहम् हरिम् गुरुम् यज्ञ भुजाम् अधीश्वरम् ।
स्व धर्म योगेन यजन्ति मामकाः निरन्तरम् क्षोणितले दृढ व्रताः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१४.	सौभाग्य है कि	स्व	३.	अपने-अपने
मम	१५.	मेरी	धर्म	४.	धर्म के
अमी	१६.	वे प्रजायें (मुझ पर)	योगेन	५.	अनुसार
वितरन्ति	१८.	कर रही हैं	यजन्ति	१३.	पूजन करती हैं
अनुग्रहम्	१७.	कृपा	मामकाः	२.	(जो) मेरी प्रजा
हरिम्	९.	श्री हरि का	निरन्तरम्	१२.	सदा
गुरुम्	८.	सबके गुरु	क्षोणितले	१.	भूमण्डल पर
यज्ञभुजाम्	६.	यज्ञ भोक्ताओं के	दृढ	१०.	कठोर
अधीश्वरम् ।	७.	स्वामी	व्रताः ॥	११.	नियम पूर्वक

श्लोकार्थ—इस भूमण्डल पर जो मेरी प्रजा अपने-अपने धर्म के अनुसार यज्ञ भोक्ताओं के स्वामी सबके गुरु श्री हरि का कठोर नियम पूर्वक सदा पूजन करती हैं । सौभाग्य है कि मेरी वे प्रजायें मुझपर कृपा कर रही हैं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

मा जातु तेजः प्रभवेन्महर्द्धिभिस्तितिक्षया तपसा विद्यया च।
देदीप्यमानेऽजितदेवतानां कुले स्वयं राजकुलाद् द्विजानाम् ॥३७॥

पदच्छेद— मा जातु तेजः प्रभवेत् महर्द्धिभिः तितिक्षया तपसा विद्यया च।
देदीप्यमाने अजित देवतानाम् कुले स्वयम् राजकुलात् द्विजानाम् ॥

शब्दार्थ—

मा	१५. न		च।	४. और
जातु	१४. कभी		देदीप्यमाने	७. अत्यन्त उज्ज्वल
तेजः	१३. तेज अपना		अजित	८. विष्णु
प्रभवेत्	१६. प्रभाव कर सके		देवतानाम्	९. भक्त वैष्णवों के (और)
महर्द्धिभिः	१. महाविभूतियों		कुले	११. कुल में
स्तितिक्षया	२. सहन शीलता		स्वयम्	६. अपने-आप
तपसा	३. तपस्या		राजकुलात्	१२. राजवंश का
विद्यया	५. विद्या के द्वारा		द्विजानाम् ॥	१०. ब्राह्मणों के

श्लोकार्थ—महाविभूतियों, सहनशीलता, तपस्या, और विद्या के द्वारा अपने-आप अत्यन्त उज्ज्वल विष्णु भक्त वैष्णवों के और ब्राह्मणों के कुल में राजवंश का तेज अपना कभी प्रभाव न करे॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

ब्रह्मण्यदेवः पुरुषः पुरातनो नित्यं हरिर्यच्चरणाभिवन्दनात्।
अवाप लक्ष्मीमनपायिनीं यशो जगत्पवित्रं च महत्तमाग्रणीः ॥३८॥

पदच्छेद— ब्रह्मण्य देवः पुरुषः पुरातनः नित्यम् हरिः यत् चरण अभिवन्दनात्।
अवाप लक्ष्मीम् अनपायिनीम् यशः जगत् पवित्रम् च महत्तम अग्रणीः॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मण्य	३. ब्राह्मणों के		अवाप	१८. प्राप्त की
देवः	४. रक्षक		लक्ष्मीम्	१३. लक्ष्मी
पुरुषः	६. पुरुष		अनपायिनीम्	१२. स्थिर
पुरातनः	५. पुराण		यशः	१७. कीर्ति
नित्यम्	१०. नित्य		जगत्	१५. संसार को
हरिः	७. श्री हरि ने		पवित्रम्	१६. पवित्र करने वाली
यत्	८. जिनके		च	१४. और
चरण	९. चरणों की		महत्तम	१. महापुरुषों में
अभिवन्दनात्।	११. वन्दना से		अग्रणीः॥	२. अग्रण्य

श्लोकार्थ—महापुरुषों में अग्रगण्य, ब्राह्मणों के रक्षक, पुराण पुरुष श्री हरि ने जिनके चरणों की नित्य वन्दना से स्थिर लक्ष्मी और संसार को पवित्र करने वाली कीर्ति प्राप्त की॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

यत्सेवयाशेषगुहाशयः स्वराड् विप्रप्रियस्तुष्यति काममीश्वरः ।
तदेव तद्धर्मपरैर्विनीतैः सर्वात्मना ब्रह्मकुलं निषेव्यताम् ॥३९॥

पदच्छेद—यत् सेवया अशेष गुहाशयः स्वराड् विप्र प्रियः तुष्यति कामम् ईश्वरः ।
तद् एव तद् धर्म परैः विनीतैः सर्वात्मना ब्रह्म कुलम् निषेव्यताम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	६. जिनकी		तद् एव	१५. उसी
सेवया	७. सेवा से		तद्	१०. भगवद्
अशेष	१. सारे लोगों के		धर्म	११. धर्म
गुहाशयः	२. हृदय में स्थित		परैः	१२. परायण
स्वराड्	३. स्वयम् प्रकाश		विनीतैः	१३. विनम्र लोगों को
विप्रप्रियः	४. ब्राह्मण प्रेमी		सर्वात्मना	१४. सब प्रकार से
तुष्यति	९. प्रसन्न होते हैं		ब्रह्म	१६. ब्राह्मण
कामम्	८. अत्यन्त		कुलम्	१७. कुल की
ईश्वरः ।	५. भगवान् श्री हरि		निषेव्यताम् ॥	१८. सेवा करनी चाहिये

श्लोकार्थ—सारे लोगों के हृदय में स्थित, स्वयम् प्रकाश, ब्राह्मण प्रेमी, भगवान् श्री हरि जिनकी सेवा से अत्यन्त प्रसन्न होते हैं, भगवद्धर्मपरायण विनम्र लोगों को सब प्रकार से उस ब्राह्मण कुल की सेवा करनी चाहिये ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

पुमाँल्लभेतानतिवेलमात्मनः प्रसीदतोऽत्यन्तशमं स्वतः स्वयम् ।
यन्नित्यसम्बन्धनिषेवया ततः परं किमत्रास्ति मुखं हविर्भुजाम् ॥४०॥

पदच्छेद—पुमान् लभेत अनतिवेलम् आत्मनः प्रसीदतः अत्यन्त शमम् स्वतः स्वयम् ।
यत् नित्य सम्बन्ध निषेवया ततः परम् किम् अत्र अस्ति मुखम् हविर्भुजाम् ॥

शब्दार्थ—

पुमान्	७. मनुष्य		यत् नित्य	१. जिनके नित्य
लभेत	१२. प्राप्त कर लेता है (अतः)		सम्बन्ध	२. सम्बन्ध (और)
अनतिवेलम्	४. शीघ्र ही		निषेवया	३. सेवन से
आत्मनः	५. चित्त		ततः	१४. उन ब्राह्मणों से
प्रसीदतः	६. प्रसन्न हो जाने के कारण		परम् किम्	१५. बढ़कर (दूसरा) कौन
अत्यन्त	१०. परम		अत्र	१३. इस लोक में
शमम्	११. शान्ति रूप मोक्ष		अस्ति	१८. हो सकता है
स्वतः	९. अपने आप		मुखम्	१७. मुख
स्वयम् ।	८. स्वयं ही		हविर्भुजाम् ॥	१६. हविष्य भोजी देवताओं का

श्लोकार्थ—जिनके नित्य सम्बन्ध और सेवन से शीघ्र ही चित्त प्रसन्न हो जाने के कारण मनुष्य स्वयं ही अपने आप परम शान्ति रूप मोक्ष प्राप्त कर लेता है। अतः इस लोक में उन ब्राह्मणों से बढ़कर दूसरा कौन हविष्य भोजी देवताओं का मुख हो सकता है ? ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

अश्नात्यनन्तः खलु तत्त्वकोविदैः श्रद्धाहुतं यन्मुख इज्यनामभिः ।
न वै तथा चेतनया बहिष्कृते हुताशने पारमहंस्यपर्यगुः ॥४१॥

पदच्छेद—अश्नाति अनन्तः खलु तत्त्व कोविदैः श्रद्धा हुतम् यद् मुख इज्य नामभिः ।
न वै तथा चेतनया बहिष्कृते हुताशने पारमहंस्य पर्यगुः ॥

शब्दार्थ—

अश्नाति	१०.	ग्रहण करते हैं	न	१६.	नहीं ग्रहण करते हैं
अनन्त	३.	श्री हरि	वै	१५.	(पदार्थ को) कदापि
खलु	९.	जितनी रुचि से	तथा	११.	उतनी रुचि से
तत्त्व	४.	आत्म स्वरूप	चेतनया	१२.	चेतना
कोविदैः	५.	ज्ञानियों के द्वारा	बहिष्कृते	१३.	शून्य
श्रद्धा हुतम्	८.	श्रद्धा से होमे गये पदार्थ को	हुताशने	१४.	अग्नि में (होमे हुए)
यद् मुख	७.	जिनके मुख में	पारमहंस्य	१.	उपनिषद् ज्ञान के
इज्य नामभिः ॥	६.	यज्ञ के इन्द्रादि नामों से	पर्यगुः ॥	२.	परम तात्पर्य

श्लोकार्थ—उपनिषद् ज्ञान के परम तात्पर्य श्री हरि आत्म स्वरूप ज्ञानियों के द्वारा यज्ञ के इन्द्रादि नामों से जिनके मुख में होमे गये पदार्थ को जितनो रुचि से ग्रहण करते हैं। चेतना शून्य अग्नि में होमे गये पदार्थ को कदापि नहीं ग्रहण करते हैं ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

यद्ब्रह्म नित्यं विरजं सनातनं श्रद्धातपोमङ्गलमौनसंयमैः ।
समाधिना बिभ्रति हार्थदृष्टये यत्रेदमादर्श इवावभासते ॥४२॥

पदच्छेद— यद् ब्रह्म नित्यम् विरजम् सनातनम् श्रद्धा तपः मङ्गल मौन संयमैः ।
समाधिना बिभ्रति ह अर्थ दृष्टये यत्र इदम् आदर्शः इव अवभासते ॥

शब्दार्थ—

यद्	११.	जो ब्राह्मण कुल	समाधिना	१७.	समाधि के द्वारा
ब्रह्म	८.	वेद को	बिभ्रति	१८.	धारण करता है
नित्यम्	५.	(उस) नित्य	ह	१६.	और
विरजम्	६.	शुद्ध (और)	अर्थ	९.	परमार्थ तत्त्व के
सनातनम्	७.	सनातन	दृष्टये	१०.	ज्ञान के लिये
श्रद्धा तपः	१२.	श्रद्धा तपस्या	यत्र	१.	जिस वेद में
मङ्गल	१३.	पवित्र	इदम्	२.	यह जगत् प्रपञ्च
मौन	१४.	आचरण	आदर्शः इव	३.	दर्पण के समान स्पष्ट
संयमैः ।	१५.	संयम	अवभासते ॥	४.	प्रतीत होता है

श्लोकार्थ—जिस वेद में यह जगत् प्रपञ्च दर्पण के समान स्पष्ट प्रतीत होता है, उस नित्य शुद्ध और सनातन वेद को परमार्थ तत्त्व के ज्ञान के लिये जो ब्राह्मण कुल श्रद्धा, तपस्या पवित्र आचरण, संयम और समाधि के द्वारा धारण करता है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

तेषामहं पादसरोजरेणुमार्या वहेयाधिकिरीटमायुः ।
यं नित्यदा बिभ्रत आशु पापं नश्यत्यमुं सर्वगुणा भजन्ति ॥४३॥

पदच्छेद— तेषाम् अहम् पाद सरोज रेणुम् आर्याः वहेय अधि किरीटम् आयुः ।
यम् नित्यदा बिभ्रतः आशु पापम् नश्यति अमुम् सर्व गुणाः भजन्ति ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	३.	उन ब्राह्मणों के	यम् नित्यदा	१०.	जिसे सर्वदा
अहम्	२.	मैं	बिभ्रतः	११.	धारण करने से
पाद सरोज	४.	चरण कमलों की	आशु	१३.	तत्काल
रेणुम्	५.	धूलि को	पापम्	१२.	पाप
आर्याः	१.	हे सभ्यगण	नश्यति	१४.	नष्ट हो जाते हैं (और)
वहेय	९.	धारण करूँ	अमुम्	१७.	उसकी
अधि	८.	ऊपर	सर्व	१५.	सारे
किरीटम्	७.	अपने मुकुट के	गुणाः	१६.	गुण
आयुः ।	६.	जीवन भर	भजन्ति ॥	१८.	सेवा करने लगते हैं

श्लोकार्थ—हे सभ्यगण ! मैं उन ब्राह्मणों के चरण कमलों की धूलि को जीवनभर अपने मुकुट के ऊपर धारण करूँ; जिसे सर्वदा धारण करने से पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं। और सारे गुण उसकी सेवा करने लगते हैं ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

गुणायनं शीलधनं कृतज्ञं वृद्धाश्रयं संवृणते नु सम्पदः ।
प्रसीदतां ब्रह्मकुलं गवां च जनार्दनः सानुचरश्च मह्यम् ॥४४॥

पदच्छेद— गुण अयनम् शील धनम् कृतज्ञम् वृद्ध आश्रयम् संवृणते नु सम्पदः ।
प्रसीदताम् ब्रह्मकुलम् गवाम् च जनार्दनः स अनुचरः च मह्यम् ॥

शब्दार्थ—

गुण	१.	गुणों की	प्रसीदताम्	१८.	प्रसन्न रहें
अयनम्	२.	खान	ब्रह्मकुलम्	१०.	ब्राह्मणों का कुल
शील धनम्	३.	चरित सम्पन्न	गवाम्	१२.	गोवंश
कृतज्ञम्	४.	उपकार मानी (एवं)	च	११.	और
वृद्ध	५.	गुरुजन	जनार्दनः	१६.	श्री हरि
आश्रयम्	६.	सेवक पुरुष के पास	स	१५.	साथ
संवृणते	९.	आ जाती है (अतः)	अनुचरः	१४.	अपने भक्तों के
नु	८.	अपने आप	च	१३.	तथा
सम्पदः ।	७.	सारी सम्पदायें	मह्यम् ॥	१७.	मुझपर

श्लोकार्थ—गुणों की खान, चरित्रसम्पन्न, उपकारमानी एवं गुरुजनसेवक पुरुष के पास सारी सम्पदायें अपने आप आ जाती हैं। अतः ब्राह्मणों का कुल और गोवंश तथा अपने भक्तों के साथ श्री हरि मुझपर प्रसन्न रहें ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति ब्रुवाणं नृपतिं पितृदेवद्विजातयः ।
तुष्टुवुर्हृष्टमनसः साधुवादेन साधवः ॥४५॥

पदच्छेद—

इति ब्रुवाणम् नृपतिम् पितृ देव द्विजातयः ।
तुष्टुवुः हृष्ट मनसः साधु वादेन साधवः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	ऐसा	तुष्टुवुः	१२.	स्तुति करने लगे
ब्रुवाणम्	२.	कहते हुये	हृष्ट	८.	प्रसन्न
नृपतिम्	३.	राजा पृथु की	मनसः	९.	मन से
पितृ	४.	पितर	साधु	१०.	साधु-साधु
देव	५.	देवता (और)	वादेन	११.	कहते हुये
द्विजातयः।	६.	द्विज (तथा)	साधवः ॥	७.	सन्तगण

श्लोकार्थ—ऐसा कहते हुये राजा पृथु की पितर, देवता और द्विज तथा सन्तगण प्रसन्न मन से साधु-साधु कहते हुये स्तुति करने लगे ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

पुत्रेण जयते लोकानिति सत्यवती श्रुतिः ।
ब्रह्मदण्डहतः पापो यद्वेनोऽत्यतरत्तमः ॥४६॥

पदच्छेद—

पुत्रेण जयते लोकान् इति सत्यवती श्रुतिः ।
ब्रह्म दण्ड हतः पापः यद् वेनः अत्यतरत् तमः ॥

शब्दार्थ—

पुत्रेण	१.	पुत्र से	दण्ड	९.	शाप से
जायते	३.	प्राप्त करता है	हतः	१०.	मारा गया
लोकान्	२.	उत्तम लोकों को	पापः	११.	पापी
इति	४.	यह	यद्	७.	क्योंकि
सत्यवती	६.	सत्य है	वेनः	१२.	राजावेन ने
श्रुतिः।	५.	वेद वचन	अत्यतरत्	१४.	पार कर लिया
ब्रह्म	८.	ब्राह्मणों के	तमः ॥	१३.	नरक लोक को

श्लोकार्थ—पुत्र से उत्तम लोकों को प्राप्त करता है, यह वेद वचन सत्य है। क्योंकि ब्राह्मणों के शाप से मारा गया पापी राजा वेन ने नरक लोक को पार कर लिया ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

हिरण्यकशिपुश्चापि भगवन्निन्दया तमः ।
विविक्षुरत्यगात्सूनोः प्रह्लादस्यानुभावतः ॥४७॥

पदच्छेद—

हिरण्यकशिपुः च अपि भगवद् निन्दया तमः ।
विविक्षुः अत्यगात् सूनोः प्रह्लादस्य अनुभावतः ॥

शब्दार्थ—

हिरण्यकशिपु	२. हिरण्यकशिपु	विविक्षुः	६. प्रवेश करना ही चाहता था कि
च	१. तथा	अत्यगात्	१०. पार कर लिया
अपि भगवद्	३. भी, भगवान् की	सूनोः	७. अपने पुत्र
निन्दया	४. निन्दा करने के कारण	प्रह्लादस्य	८. प्रह्लाद के
तमः ।	५. नरक लोक में	अनुभावतः ॥	९. प्रभाव से (उसे)

श्लोकार्थ—तथा हिरण्यकशिपु भी भगवान् की निन्दा करने के कारण नरक लोक में प्रवेश करने ही वाला था कि अपने पुत्र प्रह्लाद के प्रभाव से उसे पार कर लिया ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

वीरवर्य पितः पृथ्व्याः समाः सञ्जीव शाश्वतीः ।
यस्येदृश्यच्युते भक्तिः सर्वलोकैकभर्तरि ॥४८॥

पदच्छेद—

वीरवर्य पितः पृथ्व्याः समाः सञ्जीव शाश्वतीः ।
यस्य ईदृशी अच्युते भक्तिः सर्व लोक एक भर्तरि ॥

शब्दार्थ—

वीरवर्य	१. वीरों में श्रेष्ठ	ईदृशी	१३. ऐसी (अटूट)
पितः	३. पिता (हे महाराज !)	अच्युते	१२. भगवान् श्री हरि में
पृथ्व्याः	२. पृथ्वी के	भक्तिः	१४. भक्ति है
समाः	५. वर्षों तक	सर्व	८. सारे
सञ्जीव	६. जीवित रहें	लोक	९. लोकों के
शाश्वतीः ।	४. (आप) अनेकों	एक	१०. एक मात्र
यस्य	७. जिस (आपकी)	भर्तरि ॥	११. स्वामी

श्लोकार्थ—वीरों में श्रेष्ठ पृथ्वी के पिता हे महाराज ! आप अनेकों वर्षों तक जीवित रहें; जिस आपकी सारे लोकों के एक मात्र स्वामी भगवान् श्री हरि में ऐसी अटूट भक्ति है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

अहो वयं ह्यद्य पवित्रकीर्ते त्वयैव नाथेन मुकुन्दनाथाः ।
य उत्तमश्लोकतमस्य विष्णोर्ब्रह्मण्यदेवस्य कथां व्यनक्ति ॥४९॥

पदच्छेद— अहो वयम् हि अद्य पवित्रकीर्ते त्वया एव नाथेन मुकुन्दनाथाः ।
यः उत्तम श्लोकतमस्य विष्णोः ब्रह्मण्य देवस्य कथाम् व्यनक्ति ॥

शब्दार्थ—

अहो	९. धन्य हुये हैं		यः	१०. जो आप
वयम्	६. हम लोग		उत्तम	११. महान्
हि	८. अवश्य		श्लोकतमस्य	१२. यशवाले (और)
अद्य	५. आज		विष्णोः	१५. श्री हरि की
पवित्रकीर्ते	१. उदारकीर्ति (हे महाराज)		ब्रह्मण्य	१३. ब्राह्मणों के
त्वया	२. आप (जैसे)		देवस्य	१४. रक्षक
एव	४. ही		कथाम्	१६. कथा का
नाथेन	३. स्वामी के कारण		व्यनक्ति ॥	१७. प्रचार कर रहे हैं
मुकुन्दनाथाः ।	७. भगवान् श्री हरि के सेवक			

श्लोकार्थ—उदारकीर्ति हे महाराज ! आप जैसे स्वामी के कारण ही आज हम लोग भगवान् श्री हरि के सेवक अवश्य धन्य हुये हैं । जो आप महान् यशवाले और ब्राह्मणों के रक्षक श्री हरि की कथा का प्रचार कर रहे हैं ॥

पञ्चाशः श्लोकः

नात्यद्भुतमिदं नाथ तवाजीव्यानुशासनम् ।
प्रजानुरागो महतां प्रकृतिः करुणात्मनाम् ॥५०॥

पदच्छेद— न अति अद्भुतम् इदम् नाथ तव आजीव्य अनुशासनम् ।
प्रजा अनुरागः महत्ताम् प्रकृतिः करुण आत्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

न	८. नहीं है (क्योंकि)	अनुशासनम्	४. उपदेश देना
अति	६. अति	प्रजा	१२. प्रजा के प्रति
अद्भुतम्	७. आश्चर्य	अनुरागः	११. प्रेम
इदम्	५. यह (कोई)	महत्ताम्	११. महान् लोगों का
नाथ	१. हे स्वामिन्	प्रकृतिः	१३. स्वभाविक है
तव	२. आप का	करुण	९. करुणा
आजीव्य	३. अनुचरों को	आत्मनाम् ॥	१०. करने वाले

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! आपका अनुचरों को उपदेश देना यह कोई अति आश्चर्य नहीं है क्योंकि करुणा करने वाले महान् लोगों का प्रजा के प्रति प्रेम स्वभाविक है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

अद्य नस्तमसः पारस्त्वयोपासादितः प्रभो ।
भ्राम्यतां नष्टदृष्टीनां कर्मभिर्दैवसंज्ञितैः ॥५१॥

पदच्छेद—

अद्य नः तमसः पारः त्वया उपासादितः प्रभो ।
भ्राम्यताम् नष्ट दृष्टीनाम् कर्मभिः दैव संज्ञितैः ॥

शब्दार्थ—

अद्य	१०.	आज	भ्राम्यताम्	७.	संसार चक्र में पड़े हुये
नः	८.	हम लोगों को	नष्ट	६.	रहित (तथा)
तमसः	११.	अज्ञान के	दृष्टीनाम्	५.	ज्ञान से
पारः	१२.	पार	कर्मभिः	४.	कर्मों के कारण
त्वया	९.	आपने	दैव	२.	भाग्य
उपासादितः	१३.	पहुँचा दिया है	संज्ञितैः ॥	३.	नामक
प्रभो ।	१	हे स्वामिन्			

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! भाग्य नामक कर्मों के कारण ज्ञान से रहित तथा संसार चक्र में पड़े हुये हमलोगों को आपने आज अज्ञान के पार पहुँचा दिया है ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

नमो विशुद्धसत्त्वाय पुरुषाय महीयसे ।
यो ब्रह्म क्षत्रमाविश्य बिभर्तीदं स्वतेजसा ॥५२॥

पदच्छेद—

नमः विशुद्ध सत्त्वाय पुरुषाय महीयसे ।
यः ब्रह्म क्षत्रम् आविश्य बिभर्ति इदम् स्वतेजसा ॥

शब्दार्थ—

नमः	५.	नमस्कार	ब्रह्म	८.	ब्राह्मण और
विशुद्ध	१.	(आप) शुद्ध	क्षत्रम्	९.	क्षत्रिय जाति में
सत्त्वाय	२.	सत्त्वमय	आविश्य	१०.	प्रवेश करके
पुरुषाय	४.	पुरुष को	बिभर्ति	१२.	रक्षा करते हैं
महीयसे ।	३.	परम्	इदम्	११.	इस विश्व की
यः	६.	जो आप	स्वतेजसा ॥	७.	अपने प्रभाव से

श्लोकार्थ—आप शुद्ध सत्त्वमय परम पुरुष को नमस्कार है; जो आप अपने प्रभाव से ब्राह्मण और क्षत्रिय जाति में प्रवेश करके इस विश्व की रक्षा करते हैं ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः
श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
चतुर्थः स्कन्धः
द्वाविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— जनेषु प्रगृणत्स्वेवं पृथुं पृथुलविक्रमम् ।
तत्रोपजग्मुर्मुनयश्चत्वारः सूर्यवर्चसः ॥१॥

पदच्छेद—

जनेषु प्रगृणत्सु एवम् पृथुम् पृथुल विक्रमम् ।
तत्र उपजग्मुः मुनयः चत्वारः सूर्य वर्चसः ॥

शब्दार्थ—

जनेषु	१.	लोगों के द्वारा	तत्र	७.	वहाँ पर
प्रगृणत्सु	६.	प्रार्थना करते समय ही	उपजग्मुः	१२.	पधारे
एवम्	५.	इस प्रकार	मुनयः	११.	मुनिजन
पृथुम्	४.	महाराज पृथु की	चत्वारः	१०.	चार
पृथुल	२.	परम	सूर्य	८.	सूर्य के समान
विक्रमम् ।	३.	पराक्रमी	वर्चसः ॥	९.	तेजस्वी

श्लोकार्थ—लोगों के द्वारा परम पराक्रमी महाराज पृथु की इस प्रकार प्रार्थना करते समय ही वहाँ पर सूर्य के समान तेजस्वी चार मुनिजन पधारे ॥

द्वितीयः श्लोकः

तांस्तु सिद्धेश्वरान् राजा व्योम्नोऽवतरतोऽर्चिषा ।
लोकानपापान् कुर्वत्या सानुगोऽचष्ट लक्षितान् ॥२॥

पदच्छेद—

तान् तु सिद्ध ईश्वरान् राजा व्योम्नः अवतरतः अर्चिषा ।
लोकान् अपापान् कुर्वत्या स अनुगः अचष्ट लक्षितान् ॥

शब्दार्थ—

तान्	१०.	उन	लोकान्	५.	सभी लोकों को
तु	१.	उस समय	अपापान्	६.	पाप रहित
सिद्ध	१२.	सिद्धों को	कुर्वत्या	७.	करती हुई
ईश्वरान्	११.	प्रधान	स	३.	साथ
राजा	४.	राजा पृथु ने	अनुगः	२.	अनुचरों के
व्योम्नः अवतरतः	९.	आकाश से उतरते हुये	अचष्ट	१४.	देखा
अर्चिषा ।	८.	कान्ति के सहित	लक्षितान् ॥	१३.	यह मानते हुए

श्लोकार्थ—उस समय अनुचरों के साथ राजा पृथु ने सभी लोकों को पाप रहित करती हुई कान्ति के सहित आकाश से उतरते हुये उन प्रधान सिद्धों को यह मानते हुये देखा ।

तृतीयः श्लोकः

तद्दर्शनोद्गतान् प्राणान् प्रत्यादित्सुरिवोत्थितः ।
ससदस्यानुगो वैन्य इन्द्रियेशो गुणानिव ॥३॥

पदच्छेद—

तद् दर्शन उद्गतान् प्राणान् प्रत्यादित्सुः इव उत्थितः ।
स सदस्य अनुगः वैन्यः इन्द्रियेशः गुणान् इव ॥

शब्दार्थ—

तद्	४.	उन सिद्धों के	स	१३.	साथ
दर्शन.	५.	दर्शन से (उनकी)	सदस्य	११.	सभासदों (और)
उद्गतान्	६.	ओर जाते हुये	अनुगः	१२.	अनुचरों के
प्राणान्	७.	प्राणों को	वैन्य	१०.	राजा पृथु
प्रत्यादित्सुः	९.	रोकने के लिये	इन्द्रियेशः	२.	विषयी जीव
इव	८.	मानो	गुणान्	३.	विषयों की ओर (दौड़ता है)
उत्थितः ।	१४.	खड़े हो गये	इव ॥	१.	जैसे

श्लोकार्थ—जैसे विषयी जीव विषयों की ओर दौड़ता है, उसी प्रकार उन सिद्धों के दर्शन से उनकी ओर जाते हुये प्राणों को मानों रोकने के लिये राजा पृथु सभासदों और अनुचरों के साथ खड़े हो गये ॥

चतुर्थः श्लोकः

गौरवाद्यन्त्रितः सभ्यः प्रश्रयानतकन्धरः ।
विधिवत्पूजयाञ्चक्रे गृहीताध्यर्हणासनान् ॥४॥

पदच्छेद—

गौरवात् यन्त्रितः सभ्यः प्रश्रय आनत कन्धरः ।
विधिवत् पूजयाञ्चक्रे गृहीत अधि अर्हण आसनान् ॥

शब्दार्थ—

गौरवात्	६.	उनकी महिमा से	विधिवत्	११.	विधि-विधान से
यन्त्रितः	७.	प्रभावित होकर	पूजयाञ्चक्रे	१२.	पूजा की
सभ्यः	५.	शिष्ट पृथु ने	गृहीत	२.	स्वीकार करके
प्रश्रयः	८.	विनय वश	अधि	४.	पर बैठ जाने के बाद
आनतः	१०.	झुका कर (उनकी)	अर्हण	१.	अर्घ्य
कन्धरः ।	९.	कन्धा	आसनान् ॥	३.	आसन

श्लोकार्थ—अर्घ्य स्वीकार करके आसन पर बैठ जाने के बाद शिष्ट पृथु ने उनकी महिमा से प्रभावित होकर विनयवश कन्धा झुकाकर उनकी विधि-विधान से पूजा की ।

पञ्चमः श्लोकः

तत्पादशौचसलिलैर्मार्जितालकबन्धनः ।
तत्र शीलवतां वृत्तमाचरन्मानयन्निव ॥५॥

पदच्छेद—

तत् पाद शौच सलिलैः मार्जित अलक बन्धनः ।
तत्र शीलवताम् वृत्तम् आचरन् मानयन् इव ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	उन मुनियों के	तत्र	७.	वहाँ पर
पाद	२.	चरणों के	शीलवताम्	१०.	सत्पुरुषों के
शौच	३.	धोवन के	वृत्तम्	११.	व्यवहार का
सलिलैः	४.	जल को (अपने)	आचरन्	१२.	आचरण किया
मार्जित	६.	छिड़का	मानयन्	९.	शिक्षा देने के लिये
अलक बन्धन ।	५.	सिर के बालों पर	इव ॥	८.	मानों (लोगों को)

श्लोकार्थ— महाराज पृथु ने उन मुनियों के चरणों के धोवन के जल को अपने सिर के बालों पर छिड़का । वहाँ पर मानों लोगों को शिक्षा देने के लिये सत् पुरुषों के व्यवहार का आचरण किया ॥

षष्ठः श्लोकः

हाटकासन आसीनान् स्वधिष्ण्येष्विव पावकान् ।
श्रद्धासंयमसंयुक्तः प्रीतः प्राह भवाग्रजान् ॥६॥

पदच्छेद—

हाटक आसने आसीनान् स्व धिष्ण्येषु इव पावकान् ।
श्रद्धा संयम संयुक्तः प्रीतः प्राह भव अग्रजान् ॥

शब्दार्थ—

हाटक	५.	सुवर्ण के	श्रद्धा	१०.	(महाराज पृथु ने) श्रद्धा (और)
आसने	६.	आसन पर	संयम	११.	धैर्य से
आसीनान्	७.	बैठे थे	संयुक्तः	१२.	युक्त होकर
स्व	१.	अपने-अपने	प्रीतः	१३.	प्रसन्नता पूर्वक
धिष्ण्येषु	२.	स्थान पर स्थित	प्राह	१४.	कहा
इव	४.	समान	भव	८.	शंकर जी के
पावकान् ।	३.	अग्नि के	अग्रजान् ॥	९.	बड़े भाई (सनकादिकों से)

श्लोकार्थ—अपने-अपने स्थान पर स्थित अग्नि के समान सुवर्ण के आसन पर बैठे थे । शंकर जी के बड़े भाई सनकादिकों से महाराज पृथु ने श्रद्धा पूर्वक धैर्य से युक्त होकर प्रसन्नता पूर्वक कहा ॥

सप्तमः श्लोकः

पृथुरुवाच— अहो आचरितं किं मे मङ्गलं मङ्गलायनाः ।
यस्य वो दर्शनं ह्यासीद्दुर्दर्शानां च योगिभिः ॥७॥

पदच्छेद—

अहो आचरितम् किम् मे मङ्गलम् मङ्गलायनाः ।
यस्य वः दर्शनम् हि आसीत् दुर्दर्शानाम् च योगिनाम् ॥

शब्दार्थ—

अहो	२.	आश्चर्य है	वः	११.	आप लोगों का
आचरितम्	६.	किया है	दर्शनम्	१२.	दर्शन
किम्	४.	क्या (कोई)	हि	९.	भी
मे	३.	मैंने	आसीत्	१४.	प्राप्त हुआ है
मङ्गलम्	५.	पुण्य कर्म	दुर्दर्शानाम्	१०.	दुर्लभ
मङ्गलायनाः ।	१	मंगलमूर्ति हे मुनीश्वरों	च	७.	(जिससे कि)
यस्य	१३.	मुझे	योगिनाम् ॥	८	योगियों को

श्लोकार्थ—मंगलमूर्ते हे मुनीश्वरों ! आश्चर्य है; मैंने क्या कोई पुण्य कर्म किया है ? जिससे कि योगियों को भी दुर्लभ आप लोगों का दर्शन मुझे प्राप्त हुआ है ॥

अष्टमः श्लोकः

किं तस्य दुर्लभतरमिह लोके परत्र च ।
यस्य विप्राःप्रसीदन्ति शिवो विष्णुश्च सानुगः ॥८॥

पदच्छेद—

किम् तस्य दुर्लभतरम् इह लोके परत्र च ।
यस्य विप्राः प्रसीदन्ति शिवः विष्णुः च स अनुगः ॥

शब्दार्थ—

किम्	१३.	क्या	यस्य	१.	जिसके ऊपर
तस्य	८.	उसको	विप्राः	२.	ब्राह्मण
दुर्लभतरम्	१४.	दुर्लभ है	प्रसीदन्ति	७.	प्रसन्न रहते हैं
इह	९.	इस	शिवः	३.	भगवान् शंकर
लोक	१०	लोक में	विष्णुः	५.	भगवान् श्री हरि
परत्र	१२.	परलोक में	च	४.	और
च ।	११.	और	स अनुगः ॥	६.	सेवकों के साथ

श्लोकार्थ—जिसके ऊपर ब्राह्मण, भगवान् शंकर और भगवान् श्री हरि सेवकों के साथ प्रसन्न रहते हैं, उसको इस लोक में और परलोक में क्या दुर्लभ है ।

नवमः श्लोकः

नैव लक्ष्यते लोके लोकान् पर्यटतोऽपि यान् ।
यथा सर्वदृशं सर्व आत्मानं येऽस्य हेतवः ॥९॥

पदच्छेद—

न एव लक्ष्यते लोके लोकान् पर्यटतः अपि यान् ।
यथा सर्वदृशम् सर्वं आत्मानम् ये अस्य हेतवः ॥

शब्दार्थ—

न एव	१३.	नहीं	यथा	५.	जैसे
लक्ष्यते	१४.	देख पाते हैं	सर्वदृशम्	६.	सर्वदृर्शी
लोके	८.	लोग	सर्व	४.	वे सभी (महत्तत्त्वादि)
लोकान्	९.	सभी लोकों में	आत्मानम्	७.	आत्मा को (नहीं देख पाते हैं)
पर्यटतः	१०.	घूमते रहने पर	ये	१.	जो
अपि	११.	भी	अस्य	२.	इस जगत् के
यान् ।	१२	जिन (सनकादिकों को)	हेतवः ॥	३.	कारण हैं

श्लोकार्थ—जो इस जगत् के कारण हैं; वे सभी महत्तत्त्वादि जैसे सर्वदर्शी आत्मा को नहीं देख पाते हैं; उसी प्रकार लोग सभी लोकों में घूमते रहने पर भी जिन सनकादिकों को नहीं देख पाते हैं।

दशमः श्लोकः

अधना अपि ते धन्याः साधवो गृहमेधिनः ।
यद्गृहा ह्यर्हवर्याम्बुतृणभूमीश्वरावराः ॥१०॥

पदच्छेद—

अधना अपि ते धन्याः साधवः गृहमेधिनः ।
यद् गृहाः हि अर्हवर्य अम्बु तृण भूमि ईश्वर अवराः ॥

शब्दार्थ—

अधनाः	१.	निर्धन होने पर	गृहाः	८.	घरों में
अपि	२.	भी	हि	१४.	स्वीकार करते है
ते	३.	वे	अर्हवर्य	९.	पूज्य पुरुष
धन्याः	६.	धन्य हैं	अम्बु तृण	१०.	जल, आसन
साधवः	५.	सत् पुरुष	भूमि	११.	भूमि
गृहमेधिनः ।	४.	गृहस्थ	ईश्वर	१२.	सम्पत्ति और
यद्	७.	जिनके	अवराः ॥	१३.	सेवकादि वस्तु को

श्लोकार्थ—निर्धन होने पर भी वे गृहस्थ धन्य हैं; जिनके घरों में पूज्य पुरुष जल, आसन, भूमि, सम्पत्ति और सेवकादि वस्तु को स्वीकार करते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

व्यालालयद्रुमा वै तेऽप्यरिक्ताखिलसम्पदः ।
यद्गृहास्तीर्थपादीयपादतीर्थविवर्जिताः ॥११॥

पदच्छेद—

व्याल आलाय द्रुमाः वै ते अपि अरिक्त अखिल सम्पदः ।
यद् गृहाः तीर्थ पादीय पाद तीर्थ विवर्जिताः ॥

शब्दार्थ—

व्याल	१२.	सर्पों से	सम्पदः ।	९.	सम्पदाओं से
आलय	१३.	लिपटे	यद्	१.	जिनके
द्रुमाः वै	१४.	वृक्षों के समान त्याज्य हैं	गृहाः	२.	घर
ते	७.	वे (घर)	तीर्थ पादीय	३.	भगवत् भक्तों के
अपि	११.	भी	पाद	४.	चरण रूपी
अरिक्त	१०.	भरपूर (होने पर)	तीर्थ	५.	तीर्थ से
अखिल	८.	सम्पूर्ण	विवर्जिताः ॥	६.	रहित हैं

श्लोकार्थ—जिनके घर भगवत् भक्तों के चरणरूपी तीर्थ से रहित हैं; वे घर सम्पूर्ण सम्पदाओं से भरपूर होने पर भी सर्पों से लिपटे वृक्षों के समान त्याज्य हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

स्वागतं वो द्विजश्रेष्ठा यद्व्रतानि मुमुक्षवः ।
चरन्ति श्रद्धया धीरा बाला एव बृहन्ति च ॥१२॥

पदच्छेद—

स्वागतम् वः द्विजश्रेष्ठाः यद् व्रतानि मुमुक्षवः ।
चरन्ति श्रद्धया धीराः बालाः एव बृहन्ति च ॥

शब्दार्थ—

स्वागतम्	३.	स्वागत है	चरन्ति	११.	पालन करते हैं
वः	२.	आप लोगों का	श्रद्धया	११.	श्रद्धा पूर्वक
द्विज श्रेष्ठाः	१.	विप्रों में महान्	धीराः	५.	धैर्य सम्पन्न (आप लोग)
यद्	४.	क्योंकि	बालाः	६.	बाल्यकाल से
व्रतानि	१०.	व्रत का	एव	७.	ही
मुमुक्षवः ।	८.	मोक्ष की इच्छा से	बृहन्ति च ॥	९.	महान् ब्रह्मचर्य

श्लोकार्थ—विप्रों में महान् आपलोगों का स्वागत है; क्योंकि धैर्य सम्पन्न आप लोग बाल्यकाल से ही मोक्ष की इच्छा से महान् ब्रह्मचर्य व्रत का श्रद्धा पूर्वक पालन करते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

कच्चिन्नः कुशलं नाथा इन्द्रियार्थार्थवेदिनाम् ।
व्यसनावाप एतस्मिन् पतितानां स्वकर्मभिः ॥१३॥

पदच्छेद—

कच्चित् नः कुशलम् नाथाः इन्द्रिय अर्थ-अर्थ वेदिनाम् ।
व्यसन अवाप एतस्मिन् पतितानाम् स्वकर्मभिः ॥

शब्दार्थ—

कच्चित्	१३.	क्या	**वेदिनाम् ।**	११.	समझने वाले
नः	१२.	हम लोगों का	**व्यसन**	४	विपत्तियों के
कुशलम्	१४.	कल्याण (हो सकता है)	**अवाप**	५.	क्षेत्र रूप
नाथाः	१.	हे स्वामियों !	**एतस्मिन्**	६.	इस संसार में
इन्द्रिय	८.	इन्द्रियों के	**पतितानाम्**	७.	पड़े हुये (तथा)
अर्थ	९.	भोगों को हो	**स्व**	२.	अपने
अर्थ	१०.	पुरुषार्थ	**कर्मभिः ॥**	३.	कर्मों के कारण

श्लोकार्थ—हे स्वामियों ! अपने कर्मों के कारण विपत्तियों के क्षेत्ररूप इस संसार में पड़े हुये तथा इन्द्रियों के भोगों को ही पुरुषार्थ समझने वाले हम लोगों का क्या कल्याण हो सकता है ।

चतुर्दशः श्लोकः

भवत्सु कुशलप्रश्न आत्मारामेषु नेष्यते ।
कुशलाकुशला यत्र न सन्ति मतिवृत्तयः ॥१४॥

पदच्छेद—

भवत्सु कुशल प्रश्नः आत्मारामेषु न इष्यते ।
कुशल अकुशलाः यत्र न सन्ति मति वृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

भवत्सु	२.	आप लोगों से	**कुशल**	८.	मंगल (और)
कुशल	३.	कुशल	**अकुशलाः**	९.	अमंगल इस प्रकार का
प्रश्नः	४.	पूछना	**यत्र**	७.	(क्योंकि) आप लोगों में
आत्मारामेषु	१.	आत्मानन्द में मग्न	**न**	११.	नहीं
न	५.	नहीं	**सन्ति**	१२.	है
इष्यते ।	६.	उचित है	**मति वृत्तयः ॥**	१०.	बुद्धि विचार

श्लोकार्थ—आत्मानन्द में मग्न आप लोगों से कुशल प्रश्न पूछना उचित नही है । क्योंकि आप लोगों में मगल और अमंगल इस प्रकार का बुद्धि विचार नहीं है ।

पञ्चदशः श्लोकः

तदहं कृतविश्रम्भः सुहृदो वस्तपस्विनाम् ।
संपृच्छेभव एतस्मिन् क्षेमः केनाञ्जसा भवेत् ॥१५॥

पदच्छेद—

तद् अहम् कृत विश्रम्भः सुहृदः वः तपस्विनाम् ।
संपृच्छे भव एतस्मिन् क्षेमः केन अञ्जसा भवेत् ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	इसलिये	संपृच्छे	८.	पूछता हूँ (कि)
अहम्	२.	मैं	भवे	१०.	संसार में
कृत	४.	करके	एतस्मिन्	६.	इस
विश्रम्भः	३.	विश्वास	क्षेमः	१३.	जीवों का कल्याण
सुहृदः	६.	परममित्र	केनः	११	किस
वः	७.	आप लोगों से	अञ्जसा	१२.	सरल उपाय से
तपस्विनाम् ।	५.	संतप्त जीवों के	भवेत् ॥	१४.	हो सकता है

श्लोकार्थ—इसलिये मैं विश्वास करके संतप्त जीवों के परम मित्र आप लोगों से पूछता हूँ कि इस संसार में किस सरल उपाय से जीवों का कल्याण हो सकता है ॥

षोडशः श्लोकः

व्यक्तमात्मवतामात्मा भगवानात्मभावनः ।
स्वानामनुग्रहायेमां सिद्धरूपी चरत्यजः ॥१६॥

पदच्छेद—

व्यक्तम् आत्मवताम् आत्मा भगवान् आत्म भावनः ।
स्वानाम् अनुग्रहाय इमाम् सिद्धरूपी चरति अजः ॥

शब्दार्थ—

व्यक्तम्	१.	यह सत्य है कि	स्वानाम्	८.	अपने भक्तों पर
आत्मवताम्	२.	धीर पुरुषों की	अनुग्रहाय	६.	कृपा करने के लिये
आत्मा	३.	आत्मा (एवं)	इमाम्	१०.	इस पृथ्वी पर
भगवान्	६.	भगवान्	सिद्धरूपी	११.	सिद्धों के रूप में
आत्म	४.	भक्तों के	चरति	१२.	घूमते रहते हैं
भावनः ।	५.	रक्षक	अजः ॥	७.	श्री हरि

श्लोकार्थ—यह सत्य है कि धीर पुरुषों की आत्मा एवम् भक्तों के रक्षक भगवान् श्री हरि अपने भक्तों पर कृपा करने के लिये इस पृथ्वी पर सिद्धों के रूप में घूमते रहते हैं ।

सप्तदशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—पृथोस्तत्सूक्तमाकर्ण्य सारं सुष्ठु मितं मधु ।
स्मयमान इव प्रीत्या कुमारः प्रत्युवाच ह ॥१७॥

पदच्छेद—

पृथोः तत् सूक्तम् आकर्ण्य सारम् सुष्ठु मितम् मधु ।
स्मयमान इव प्रीत्या कुमारः प्रत्युवाच ह ॥

शब्दार्थ—

पृथोः	२. महाराज पृथु के		मधु ।	६. मधुर
तत्	७. उस		स्मयमानः	११. मुसकराते हुये
सूक्तम्	८. सुन्दर वचन को		इव	१२. से
आकर्ण्य	६. सुनकर		प्रीत्या	१३. प्रेम पूर्वक
सारम्	३. सार युक्त		कुमारः	१०. सनत्कुमार
सुष्ठु	४. उचित		प्रत्युवाच	१४. बोले
मितम्	५. परिमित (और)		ह ॥	१. प्रसिद्ध है (कि)

श्लोकार्थ—प्रसिद्ध है कि महाराज पृथु के सार युक्त, उचित, परिमित और मधुर उस सुन्दर वचन को सुनकर सनत्कुमार मुसकराते हुये से प्रेम पूर्वक बोले ॥

अष्टादशः श्लोकः

सनत्कुमार उवाच—साधु पृष्टं महाराज सर्वभूतहितात्मना ।
भवता विदुषा चापि साधूनां मतिरीदृशी ॥१८॥

पदच्छेद—

साधु पृष्टम् महाराज सर्वभूत हित आत्मना ।
भवता विदुषा च अपि साधूनाम् मतिः ईदृशी ॥

शब्दार्थ—

साधु	७. उचित		भवता	६. आपने
पृष्टम्	८. पूछा है		विदुषा	५. परम बुद्धिमान्
महाराज	१. हे महाराज		च	९. क्योंकि
सर्वभूत	२. सभी प्राणियों का		अपि	१३. ही (होता है)
हित	३. कल्याण		साधूनाम्	१०. सत्पुरुषों का
आत्मना ।	४. चाहने वाले		मतिः	११. स्वभाव
			ईदृशी ॥	१२. ऐसा

श्लोकार्थ—हे महाराज ! सभी प्राणियों का कल्याण चाहने वाले परम बुद्धिमान् आपने उचित पूछा है । क्योंकि सत्पुरुषों का स्वभाव ऐसा ही होता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

सङ्गमः खलु साधूनामुभयेषां च सम्मतः ।
यत्सम्भाषणसम्प्रश्नः सर्वेषां वितनोति शम् ॥१९॥

पदच्छेद—

सङ्गमः खलु साधूनाम् उभयेषाम् च सम्मतः ।
यत् सम्भाषण सम्प्रश्नः सर्वेषां वितनोति शम् ॥

शब्दार्थ—

सङ्गमः	२.	समागम	यत्	७.	उनका
खलु	४.	ही	सम्भाषण	८.	प्रवचन (और)
साधूनाम्	१.	सन्तों का नाम	सम्प्रश्नः	९.	(उनसे) प्रश्न करना
उभयेषाम्	३.	श्रोता, वक्ता का नाम	सर्वेषाम्	१०.	सभी प्रणियों का
च	६.	क्योंकि	वितनोति	१२.	करता है
सम्मतः ।	५.	प्रिय है	शम् ॥	११.	कल्याण

श्लोकार्थ—सन्तों का समागम श्रोता और वक्ता दोनों को ही प्रिय है। क्योंकि उनका प्रवचन और उनसे प्रश्न करना सभी प्राणियों का कल्याण करता है ॥

विंशः श्लोकः

अस्त्येव राजन् भवतो मधुद्विषः पादारविन्दस्य गुणानुवादने ।
रतिर्दुरापा विधुनोति नैष्ठिकी कामं कषायं मलमन्तरात्मनः ॥२०॥

पदच्छेद—

अस्ति एव राजन् भवतः मधुद्विषः, पाद अरविन्दस्य गुणानुवादने ।
रतिः दुरापा विधुनोति नैष्ठिकी कामम् कषायम् मलम् अन्तरात्मनः ॥

शब्दार्थ—

अस्ति	१०.	है	रतिः	९.	प्रेमाभक्ति
एव	११.	ही जो	दुरापा	७.	दुर्लभ और
राजन्	१.	हे महाराज !	विधुनोति	१६.	दूर कर देती है
भवतः	६.	आपकी	नैष्ठिकी	८.	निरन्तर
मधुद्विषः,	२.	भगवान् श्री हरि	कामम्	१५.	बिल्कुल
पाद	३.	चरण	कषायम्	१४.	कलुष को
अरविन्दस्य	४.	कमलों के	मलम्	१३.	पाप (और)
गुणानुवादने ।	५.	गुणकथन में	अन्तरात्मनः ॥	१२.	हृदय के भीतर के

श्लोकार्थ—हे महाराज ! भगवान् श्री हरि के चरण कमलों के गुणकथन में आप की दुर्लभ और निरन्तर प्रेमाभक्ति है ही, जो हृदय के भीतर के पाप और कलुष को बिल्कुल दूर कर देती है ॥

एकविंशः श्लोकः

शास्त्रेष्वियानेव सुनिश्चितो नृणां क्षेमस्य सध्र्यग्विमृशेषु हेतुः।
असङ्ग आत्मव्यतिरिक्त आत्मनि दृढा रतिर्ब्रह्मणि निर्गुणे च या ॥२१॥

पदच्छेद— शास्त्रेषु इयान् एव सुनिश्चितः नृणाम् क्षेमस्य सध्र्यग् विमृशेषु हेतुः।
असङ्गः आत्म व्यतिरिक्ते आत्मनि दृढा रतिः ब्रह्मणि निर्गुणे च या ॥

शब्दार्थ—

शास्त्रेषु	१४.	शास्त्रों में	असङ्गः	४.	वैराग्य
इयान् इव	९.	बस यही	आत्म	१.	आत्मा से
सुनिश्चितः	१६.	माना गया है	व्यतिरिक्ते	२.	भिन्न
नृणाम्	१०.	मनुष्यों के	आत्मनि	३.	देहादि से
क्षेमस्य	११.	कल्याण के लिये	दृढा रतिः	८.	अनन्य अनुराग है
सध्र्यग्	१२.	भली भाँति	ब्रह्मणि	७.	परमात्मा में
विमृशेषु	१३	विचार करने वाले	निर्गुणे	६	निर्गुण
हेतुः।	१५.	साधन	च या ॥	५.	और

श्लोकार्थ—आत्मा से भिन्न देहादि से वैराग्य और जो निर्गुण परमात्मा में अनन्य अनुराग है; बस वही मनुष्यों के कल्याण के लिये भली-भाँति विचार करने वाले शास्त्रों में साधन माना गया है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

सा श्रद्धया भगवद्धर्मचर्यया जिज्ञासयाऽऽध्यात्मिकयोगनिष्ठया।
योगेश्वरोपासनया च नित्यं पुण्यश्रवः कथया पुण्यया च ॥२२॥

पदच्छेद— सा श्रद्धया भगवद् धर्म चर्यया जिज्ञासया आध्यात्मिक योग निष्ठया।
योगेश्वर उपासनया च नित्यम् पुण्यश्रवः कथया पुण्यया च ॥

शब्दार्थ—

सा	१६.	भगवान् में भक्ति (होती है)	योगेश्वर	९.	श्री हरि की
श्रद्धया	१.	(शास्त्रों में) विश्वास	उपासनया	१०.	उपासना
भगवद्	२.	भागवत	च	८.	और
धर्म	३.	धर्मों का	नित्यम्	१२.	नित्य
चर्यया	४.	आचरण	पुण्यश्रवः	१३.	पुण्य कीर्ति श्री हरि की
जिज्ञासया	५.	तत्त्व जिज्ञासा	कथया	१५.	कथाओं के श्रवण से
अध्यात्मिक	६.	ज्ञान	पुण्यया	१४.	पावन
योग निष्ठया।	७.	योग की निष्ठा	च ॥	११.	तथा

श्लोकार्थ—शास्त्रों में विश्वास, भागवत धर्मों के आचरण तत्त्व की जिज्ञासा, ज्ञान योग की निष्ठा और श्री हरि की उपासना तथा नित्य पुण्यकीर्ति श्री हरि की पावन कथाओं के श्रवण से भगवान् में भक्ति होती है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अर्थेन्द्रियारामसगोष्ठ्यतृष्णया तत्सम्मतानामपरिग्रहेण च ।
विविक्तरुच्या परितोष आत्मन् विना हरेर्गुणपीयूषपानात् ॥२३॥

पदच्छेद—अर्थ इन्द्रिय आराम स गोष्ठी अतृष्णया तत् सम्मतानाम् अपरिग्रहेण च ।
विविक्त रुच्या परितोषः आत्मन् विना हरेः गुण पीयूष पानात् ॥

शब्दार्थ—

अर्थ	१.	धन (और)	विविक्त	१७.	एकान्त सेवन की
इन्द्रिय	२.	इन्द्रियों में	रुच्या	१८.	रुचि होने से (भगवान् में भक्ति होती है ।
आराम	३.	रत लोगों की	परितोषः	१६.	सन्तुष्ट रहते हुये
स गोष्ठी	४.	और उनके समागम की	आत्मन्	१५.	आत्मा में
अतृष्णया	५.	चाह न रखने से	विना	१४.	सिवा अन्य समय
तत्	६.	उनके	हरेः	१०.	श्री हरि के
सम्मतानाम्	७.	रुचि कर पदार्थों का	गुण	११.	गुण
अपरिग्रहेण	८.	संग्रह न करने से	पीयूष	१२.	अमृत का
च ।	६.	एवम्	पानात् ॥	१३.	पान करने से

श्लोकार्थ—धन और इन्द्रियों में रत लोगों की और उनके समागम की चाह न रखने से उनके रुचिकर पदार्थों का संग्रह न करने से एवम् श्री हरि के गुण अमृत का पान करने से सिवा अन्य समय आत्मा में सन्तुष्ट रहते हुये एकान्त सेवन की रुचि होने से भगवान् में भक्ति होती है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अहिंसया पारमहंस्यचर्यया स्मृत्या मुकुन्दाचरिताग्र्यसीधुना ।
यमैरकामैर्नियमैश्चाप्यनिन्दया निरीहया द्वन्द्वतितिक्षया च ॥२४॥

पदच्छेद— अहिंसया पारमहंस्य चर्यया स्मृत्या मुकुन्द आचरित अग्र्य सीधुना ।
यमैः अकामैः नियमैः च अपि अनिन्दया निरीहया द्वन्द्व तितिक्षया च ॥

शब्दार्थ—

अहिंसया	१.	जीवों की हिंसा न करने से	यमैः	१०.	यम
पारमहंस्य	२.	निवृत्ति मार्ग का	अकामैः	६.	निष्काम भावना से
चर्यया	३.	आश्रय लेने से	नियमैः च	११.	नियम से और
स्मृत्या	४.	भगवान् के स्मरण से	अपि	१५.	भी
मुकुन्द	५.	श्री हरि के	अनिन्दया	१२.	पर निन्दा न करने से
आचरित	६.	चरित्र रूपी	निरीहया	१३.	संग्रह को न करने से
अग्र्य	७.	श्रेष्ठ	द्वन्द्व	१४	शीतादि कष्टों को
सीधुना ।	८.	अमृत का पान करने से	तितिक्षया च ॥	१६.	सहने से भगवान् में भक्ति होती है

श्लोकार्थ—जीवों की हिंसा न करने से, निवृत्ति मार्ग का आश्रय लेने से, भगवान् के स्मरण से, श्री हरि के चरित्र रूपी श्रेष्ठ अमृत का पान करने से, निष्कपट भावना से, यम, नियम से, और पर निन्दा न करने से, संग्रह को न करने से, शीतादि कष्टों को सहने से भगवान् में भक्ति होती है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

हरेर्मुहुस्तत्परकर्णपूरगुणाभिधानेन विजृम्भमाणया ।
भक्त्या ह्यसङ्गः सदसत्यनात्मनि स्यान्निर्गुणे ब्रह्मणि चाञ्जसा रतिः ॥२५॥

पदच्छेद—हरेः मुहुः तत्पर कर्णपूर गुण अभिधनेन विजृम्भमाणया ।
भक्त्या हि असङ्गः सत् असति अनात्मनि स्यात् निर्गुणे ब्रह्मणि च अञ्जसा रतिः ॥

शब्दार्थ—

हरेः	३.	श्री हरि के	सत्	१०.	कारण रूप
मुहुः	५.	बार-बार	असति	६.	कार्य
तत्पर	१.	भगवद् भक्तों के	अनात्मनि	११	जड़ प्रपञ्च से
कर्णपूर	२.	कानों को प्रिय लगने वाले	स्यात्	१८.	हो जाती है
गुण	४.	गुणों का	निर्गुणे	१४.	निर्गुण
अभिधानेन	६.	कीर्तन करने से (और)	ब्रह्मणि	१५.	भगवान् श्री हरि में
विजृम्भमाणयया ।	७.	बढ़ते हुये	च	१३.	और (उसकी)
भक्त्या हि	८.	भक्ति-भाव से, ही (मनुष्य)	अञ्जसा	१६.	सरलता से
असङ्गः	१२.	निर्लिप्त (हो जाता है)	रतिः ॥	१७.	प्रेमा भक्ति

श्लोकार्थ—भगवद् भक्तों के कानों को प्रिय लगने वाले गुणों का बार-बार कीर्तन करने से और बढ़े हुये भक्ति-भाव से ही मनुष्य कार्य कारण रूप जड़ प्रपञ्च से निर्लिप्त हो जाता है और उसकी निर्गुण भगवान् श्री हरि में सरलता से प्रेमा भक्ति हो जाती है ॥

षड्विंशः श्लोकः

यदा रतिर्ब्रह्मणि नैष्ठिकी पुमानाचार्यवान् ज्ञानविरागरंहसा ।
दहत्यवीर्यं हृदयं जीवकोशं पञ्चात्मकं योनिमिवोत्थितोऽग्निः ॥२६॥

पदच्छेद—यदा रतिः ब्रह्मणि नैष्ठिकी पुमान् आचार्यवान् ज्ञान विराग रंहसा ।
दहति अवीर्यम् हृदयम् जीवकोशम् पञ्चात्मकम् योनिम् इव उत्थितः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	दहति	१४.	भस्म कर देता है
रतिः	४.	प्रेमा भक्ति हो जाती है तब	अवीर्यम्	६.	अहंकार स्वरूप
ब्रह्मणि	२.	श्री हरि	हृदयम्	८.	आत्मा के
नैष्ठिकी	३.	अविरल	जीवकोशम्	१०.	सूक्ष्म शरीर को
पुमान्	५.	मनुष्य	पञ्चात्मकम्	७.	पाँच क्लेशों से युक्त
आचार्यवान्	६.	आचार्य की शरण लेता है	योनिम्	१८.	कारण काष्ठ को बल देती है
ज्ञान	११.	आत्मज्ञान (और वह)	इव	१५.	जैसे
विराग	१२.	वैराग्य	उत्थितः	१६.	काष्ठ से उत्पन्न
रंहसा ।	१३.	वेग से (ऐसे)	अग्निः ॥	१७.	अग्नि

श्लोकार्थ—जब श्री हरि में अविरल प्रेमा भक्ति हो जाती है तब मनुष्य आचार्य की शरण लेता है और वह पाँच क्लेशों से युक्त आत्मा के अहंकार स्वरूप सूक्ष्म शरीर को आत्म ज्ञान वैराग्य के वेग से ऐसे भस्म कर देता है, जैसे काष्ठ से उत्पन्न अग्नि कारण काष्ठ को जला देती है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

दग्धाशयो मुक्तसमस्ततद्गुणो नैवात्मनो बहिरन्तर्विचष्टे।
परात्मनोर्यद् व्यवधानं पुरस्तात् स्वप्ने यथा पुरुषस्तद्विनाशे ॥२७॥

पदच्छेद—दग्ध आशयः मुक्त समस्त तद् गुणः, न एव आत्मनः बहिः अन्तः विचष्टे ।
पर आत्मनः यद् व्यवधानम् पुरस्तात् स्वप्ने, यथा पुरुषः तद् विनाशे ॥

शब्दार्थ—

दग्धः	६.	भस्म हो जाने पर	विचष्टे ।	१५.	देखता है
आशयः	५.	सूक्ष्म शरीर के	पर	१७.	परमात्मा के (और)
मुक्त	१०.	रहित (मनुष्य)	आत्मनः	१८.	जीवात्मा के
समस्त	८.	सभी	यद्	१६.	जो
तद्	७.	उसके	व्यवधानम्,	२०.	भेद करते हैं
गुणः	९.	गुणों से	पुरस्तात्	१९.	बीच में
न, एव	१४.	नहीं	स्वप्ने	२.	स्वप्न में जो कुछ देखता है
आत्मनः	११.	आत्मा के	यथा, पुरुषः	१	जैसे मनुष्य
बहिः	१२.	बाहरी वस्तुओं के (और)	तद्	३	उसे स्वप्न के
अन्तः	१३.	आन्तरिक (सुख-दुःखादि को)	विनाशे ॥	४.	नष्ट हो जाने पर (नहीं देखता) उसी प्रकार

श्लोकार्थ—जैसे मनुष्य स्वप्न में जो कुछ देखता है उसे स्वप्न के नष्ट हो जाने पर नहीं देखता है, उसी प्रकार सूक्ष्म शरीर के भस्म हो जाने पर उसके सभी गुणों से रहित मनुष्य आत्मा के बाहरी वस्तुओं के और आन्तरिक सुख-दुःखादि को नहीं देखता है। जो परमात्मा के और जीवात्मा के बीच में भेद करते हैं।

अष्टाविंशः श्लोकः

आत्मानमिन्द्रियार्थं च परं यदुभयोरपि ।
सत्याशय उपाधौ वै पुमान् पश्यति नान्यदा ॥२८॥

पदच्छेद— आत्मानम् इन्द्रिय अर्थम् च परम् यद् उभयोः अपि ।
सति आशये उपाधौ वै पुमान् पश्यति न अन्यदा ॥

शब्दार्थ—

आत्मन्	५.	जीवात्मा का	सति	३.	रहने पर
इन्द्रिय	६.	इन्द्रियों के	आशये	१.	सूक्ष्म शरीर रूपी
अर्थम् च	७.	विषय को, और	उपाधौ	२.	उपाधि के
परम्	१०.	अहंकार (है उसका)	वै, पुमान्	४.	ही मनुष्य
यद्	९.	जो	पश्यति	१२.	अनुभव करता है
उभयोः	८.	इन दोनों का (सम्बन्धी)	न	१४.	नहीं (अनुभव करता है)
अपि ।	११.	भी	अन्यदा ॥	१३.	अन्यथा

श्लोकार्थ—सूक्ष्म शरीर रूपी उपाधि के रहने पर ही मनुष्य जीवात्मा इन्द्रियों के विषय और इन दोनों का सम्बन्धी जो अहंकार है उसका भी अनुभव करता है; अन्यथा नहीं अनुभव करता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

निमित्ते सति सर्वत्र जलादावपि पूरुषः ।
आत्मनश्च परस्यापि भिदां पश्यति नान्यदा ॥२९॥

पदच्छेद—

निमित्ते सति सर्वत्र जल आदौ अपि पूरुषः ।
आत्मनः च परस्य अपि भिदाम् पश्यति न अन्यदा ॥

शब्दार्थ—

निमित्ते	४.	कारण के	आत्मनः च	८.	अपने बिम्ब का (और)
सति	५.	रहने पर	परस्य	९.	प्रतिबिम्ब का
सर्वत्र	१.	सब जगह	अपि	१०.	भी
जल	२.	जल	भिदाम्	११	भेद
आदौ	३.	दर्पण इत्यादि	पश्यति	१२.	देखता है
अपि	६.	ही	न	१४.	नहीं (देखता है)
पूरुषः ।	७.	मनुष्य	अन्यदा ॥	१३.	अन्यथा

श्लोकार्थ—जैसे सब जगह जल, दर्पण इत्यादि कारण के रहने पर ही मनुष्य अपने बिम्ब का और प्रतिबिम्ब का भेद देखता है अन्यथा नहीं देखता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

इन्द्रियैर्विषयाकृष्टैराक्षिप्तं ध्यायतां मनः ।
चेतनां हरते बुद्धेः स्तम्बस्तोयमिव ह्रदात् ॥३०॥

पदच्छेद—

इन्द्रियैः विषय आकृष्टैः आक्षिप्तम् ध्यायताम् मनः ।
चेतनाम् हरते बुद्धेः स्तम्बः तोयम् इव ह्रदात् ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रियैः	१.	इन्द्रियों के	चेतनाम्	८.	विवेक को (ऐसे)
विषय	२.	विषयों में	हरते	९.	हर लेता है
आकृष्टैः	३.	फंस जाने पर	बुद्धेः	७.	बुद्धि के
आक्षिप्तम्	५.	अशान्त	स्तम्बः	१२.	कुशादि तृण
ध्यायताम्	४.	आसक्त (मनुष्यों का)	तोयम्	१३.	जल को (खींच लेता है)
मनः ।	६.	मन	इव	१०.	जैसे (किनारे के)
			ह्रदात् ॥	११.	जलाशय से

श्लोकार्थ—इन्द्रियों के विषयों में फंस जाने पर आसक्त मनुष्यों का अशान्त मन बुद्धि के विवेक को ऐसे हर लेता है ; जैसे किनारे के जलाशय से कुशादि तृण जल को खींच लेता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

अश्यत्यनु स्मृतिश्चित्तं ज्ञानभ्रंशः स्मृतिक्षये ।
तद्रोधं कवयः प्राहुरात्मापह्नवमात्मनः ॥३१॥

पदच्छेद—

भ्रश्यति अनु स्मृतिः चित्तम् ज्ञान भ्रंशः स्मृति क्षये ।
तद् रोधम् कवयः प्राहुः आत्म अपह्नवम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

भ्रश्यति	४.	नष्ट हो जाती है	तद्	८.	उस ज्ञान के
अनु	२.	पीछे-पीछे	रोधम्	९.	नाश को ही
स्मृतिः	३.	स्मरण शक्ति	कवयः	१०.	पंडित लोग
चित्तम्	१.	विवेक के	प्राहुः	१४.	कहते हैं
ज्ञानभ्रंशः	७.	आत्मज्ञान, जाता रहता है	आत्म	१२.	अपना
स्मृति	५.	स्मरण शक्ति के	अपह्नवम्	१३.	विनाश
क्षये ।	६.	नष्ट होने पर	आत्मनः ॥	११.	अपने-आप

श्लोकार्थ—विवेक के पीछे-पीछे स्मरण शक्ति नष्ट हो जाती है स्मरण शक्ति के नष्ट होने पर आत्मज्ञान जाता रहता है, उस ज्ञान के नाश को ही पण्डित लोग अपने-आप अपना विनाश करते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

नातः परतरो लोके पुंसः स्वार्थव्यतिक्रमः ।
यदध्यन्यस्य प्रेयस्त्वमात्मनः स्वव्यतिक्रमात् ॥३२॥

पदच्छेद—

न अतः परतरः लोके पुंसः स्वार्थ व्यतिक्रमः ।
यद् अधि अन्यस्य प्रेयस्त्वम् आत्मनः स्व व्यतिक्रमात् ॥

शब्दार्थ—

न	१४.	नहीं है	यद्	३.	जो
अतः	७.	इस	अधि	२.	विषयों में
परतरः	१०.	बढ़कर	अन्यस्य	१.	दूसरे
लोके	११.	संसार में	प्रेयस्त्वम्	५.	आसक्ति (है)
पुंसः	६.	मनुष्य की	आत्मनः	४.	अपनी
स्वार्थ	१२.	और किसी पुरुषार्थ की	स्व	८.	आत्म
व्यतिक्रमः ।	१३.	हानि	व्यतिक्रमात् ॥	९.	हानि से

श्लोकार्थ—दूसरे विषयों में जो अपनी आसक्ति है मनुष्य की इस आत्महानि से बढ़कर संसार में और किसी पुरुषार्थ की हानि नहीं है ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अर्थेन्द्रियार्थाभिध्यानं सर्वार्थापह्नवो नृणाम् ।
भ्रंशितो ज्ञानविज्ञानाद्येनाविशति मुख्यताम् ॥३३॥

पदच्छेद—

अर्थ इन्द्रिय अर्थ अभिध्यानम् सर्व अर्थ अपह्नवः नृणाम् ।
भ्रंशितः ज्ञान विज्ञानात् येन आविशति मुख्यताम् ॥

शब्दार्थ—

अर्थ	१.	धन (और)	नृणाम् ।	५.	मनुष्यों के
इन्द्रिय	२.	इन्द्रिय के	भ्रंशितः	११.	रहित हो जाता है
अर्थ	३.	विषयों में	ज्ञान	९.	शास्त्र ज्ञान (और)
अभिध्यानम्	४.	आसक्ति (ही)	विज्ञानात्	१०.	आत्मज्ञान से
सर्व	६.	सभी	येन	१२.	जिसके कारण
अर्थ	७.	पुरुषार्थों का	आविशति	१४.	प्राप्त करता है
अपह्नवः	८.	विनाश (है वह)	मुख्यताम् ॥	१३.	स्थावर योनि को

श्लोकार्थ—धन और इन्द्रियों के विषयों में आसक्ति ही मनुष्यों के सभी पुरुषार्थों का विनाश है, वह शास्त्रज्ञान और आत्मज्ञान से रहित हो जाता है । जिसके कारण स्थावर योनि को प्राप्त करता है ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

न कुर्यात्कर्हिचित्सङ्गं तमस्तीव्रं तितीरिषुः ।
धर्मार्थकाममोक्षाणां यदत्यन्तविघातकम् ॥३४॥

पदच्छेद—

न कुर्यात् कर्हिचित् सङ्गम् तमः तीव्रम् तितीरिषुः ।
धर्म अर्थ काम मोक्षाणाम् यद् अत्यन्त विघातकम् ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं	धर्म	९.	धर्म
कुर्यात्	२.	करना चाहिये	अर्थ	१०.	अर्थ
कर्हिचित्	४.	कभी भी	काम	११.	काम (और)
सङ्गम्	५.	विषयों में (अनुराग)	मोक्षाणाम्	१२.	मोक्ष का
तमः	२.	अन्धकार रूप संसार को	यद्	८.	क्योंकि वह
तीव्रम्	१.	घोर	अत्यन्त	१३.	अत्यन्त
तितीरिषुः ।	३	पार करने के इच्छुक (लोगों के)	विघातकम् ॥	१४.	बाधक है

श्लोकार्थ—घोर अन्धकार रूप संसार को पार करने के इच्छुक लोगों को कभी भी विषयों में अनुराग नहीं करना चाहिये । क्योंकि यह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अत्यन्त बाधक है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

तत्रापि मोक्ष एवार्थं आत्यन्तिकतयेष्यते ।
त्रैवर्ग्योऽर्थो यतो नित्यं कृतान्तभयसंयुतः ॥३५॥

पदच्छेद—

तत्र अपि मोक्षः एव अर्थः आत्यन्तिकतयाइष्यते ।
त्रैवर्ग्यः अर्थः यतः नित्यम् कृतान्त भय संयुतः ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	उन चारों पुरुषार्थों में	त्रैवर्ग्यः	६.	धर्म, अर्थ और कामरूप
अपि	२.	भी	अर्थः	१०.	पुरुषार्थ
मोक्षः	३.	मोक्षरूप	यतः	८.	क्योंकि
एव	५.	ही	नित्यम्	११.	सदा
अर्थः	४.	पुरुषार्थ	कृतान्त	१२.	काल के
आत्यन्तिकतया	६.	सबसे अधिक	भय	१३.	भय से
इष्यते ।	७.	अभीष्ट है	संयुतः ॥	१४.	भयभीत रहता है ।

श्लोकार्थ—उन चारों पुरुषार्थों में भी मोक्षरूप पुरुषार्थ ही सबसे अधिक अभीष्ट है। क्योंकि धर्म, अर्थ और कामरूप पुरुषार्थ ही काल के भय से भयभीत रहता है।

षट्त्रिंशः श्लोकः

परेऽवरे च ये भावा गुणव्यतिकरादनु ।
न तेषां विद्यते क्षेममीशविध्वंसिताशिषाम् ॥३६॥

पदच्छेद—

परे अवरे च ये भावाः गुण व्यतिकरात्] अनु ।
न तेषाम् विद्यते क्षेमम् ईश विध्वंसित आशिषाम् ॥

शब्दार्थ—

परे	३.	उत्तम	न	१०.	नहीं
अवरे	५.	मध्यम	तेषाम्	८.	उनका
च	४.	और	विद्यते	११.	है (क्योंकि)
ये	६.	जो	क्षेमम्	९.	कुशल
भावाः	७.	पदार्थ है	ईश	१२.	काल भगवान्
गुण	१०.	तीनों गुणों के	विध्वंसित	१४.	नष्ट करते रहते हैं
व्यतिकरात् अनु ।	२.	सम्बन्ध से, उनका	आशिषाम् ॥	१३.	उनके कुशल के

श्लोकार्थ—तीनों के सम्बन्ध से उत्पन्न उत्तम और मध्यम जो पदार्थ हैं उनका कुशल नहीं है क्योंकि काल भगवान् अपने कुशल को नष्ट करते रहते हैं।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तत्त्वं नरेन्द्र जगतामथ तस्थुषां च
देहेन्द्रियासुधिषणात्मभिरावृतानाम् ।
यः क्षेत्रवित्तपतया हृदि विश्वगाविः
प्रत्यक् चकास्ति भगवांस्तमवेहि सोऽस्मि ॥३७॥

पदच्छेद—तत् त्वम् नरेन्द्र जगताम् अथ तस्थुषाम् च, देह इन्द्रिय असुधिषणा आत्मभिः आवृ तानाम् । यः क्षेत्रवित् तपतया हृदि विश्वग् आविः, प्रत्यक् चकास्ति भगवान् तम् अवेहि सः अस्मि ॥

शब्दार्थ—

तत्	१. इसलिये	यः	१२. जो
त्वम्	४. तु	क्षेत्रवित्	१६. क्षेत्रज्ञ (और)
नरेन्द्र	२ हे राजन् ।	तपतया	१४. अपने प्रकाश से
जगताम्	१०. जंगम प्राणियों के	हृदि	११. हृदय में
अथ	३. अब	विश्वग, आविः	१५ सर्वत्र व्याप्त, रक्षक
तस्थुषाम्	९. स्थावर (और)	प्रत्यक्, चकास्ति	१७. अन्तरात्मा रूप से, प्रकाशित है
च	७. और	भगवान्	१३. भगवान्
देह, इन्द्रिय	५. शरीर, इन्द्रियाँ	तम्	१८. उसे
असुधिषणा	६. प्राण, बुद्धि	अवेहि	२०. जानो
आत्मभिः, आवृतानाम् ।	८. मन से, घिरे हुये	सः अस्मि ॥	१९. मैं हूँ ऐसा जानो ॥

श्लोकार्थ—इसलिये हे राजन् ! अब तुम शरीर, इन्द्रियों, प्राण, बुद्धि और मन से घिरे हुये स्थावर जंगम प्राणियों के हृदय में जो भगवान् अपने प्रकाश से सर्वत्र व्याप्त, रक्षक क्षेत्रज्ञ और अन्तरात्मा रूप से प्रकाशित हैं उसे मैं हूँ ऐसा जानो ।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

यस्मिन्निदं सदसदात्मतया विभाति माया विवेकविधुति स्रजि वाहिबुद्धिः ।
तं नित्यमुक्तपरिशुद्धविबुद्धतत्त्वं प्रत्यूढकर्मकलिलप्रकृतिं प्रपद्ये ॥३८॥

पदच्छेद—यस्मिन् इदम् सद् असद् आत्मतया विभाति, माया विवेक विधुति स्रजि वाअहि बुद्धिः । तम्नित्यमुक्त परिशुद्ध विबुद्ध तत्त्वम् प्रत्यूढ कर्म कलिल प्रकृतिम् प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन्	६. जिस परमात्मा में	वा	१. जैसे (विवेक ज्ञान से)
इदम्	५ यह संसार	अहि बुद्धिः ।	३. सर्प, बुद्धि (मिथ्या है उसी प्रकार)
सद्	८. कारण	तम् नित्यमुक्त	१२. उस, सदा मुक्त
असद्	७. कार्य	परिशुद्ध	१३. निर्मल
आत्मतया	९. रूप से	विबुद्ध	१४. ज्ञान
विभाति,	११. प्रतीत हो रहा है	तत्त्वम्	१५. स्वरूप (और)
माया	१०. माया रूप	प्रत्यूढ	१७. रहित
विवेक, विधुति	४. विवेके ज्ञान से, मिथ्या लगने वाला	कर्म, कलिल	१६ कर्म, कलुष से
		प्रकृतिम्,	१८ स्वभाव वाले श्री हरि के चरण
स्रजि	२. माला में	प्रपद्ये ॥	में हूँ ॥

श्लोकार्थ—जैसे विवेक ज्ञान से माला में सर्प बुद्धि मिथ्या है उसी प्रकार विवेक ज्ञान से मिथ्या लगने वाला यह संसार जिस परमात्मा में कार्य कारण रूप से माया रूप प्रतीत हो रहा है उस सदा मुक्त, निर्मल ज्ञान स्वरूप और कर्म कलुष से रहित स्वभाव वाले श्री हरि की शरण में हूं ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

यत्पादपङ्कजपलाशविलासभक्त्या कर्माशयं ग्रथितमुद्ग्रथयन्ति सन्तः।
तद्वन्न रिक्तमतयो यतयोऽपि रुद्धस्रोतोगणास्तमरणं भज वासुदेवम् ॥३६॥

पदच्छेद—यत् पाद पङ्कज पलाश विलास भक्त्या, कर्म आशयम् ग्रथितम् उद्ग्रथयन्ति सन्तः।
तद् वत् न रिक्त मतयः यतयः अपि रुद्ध स्रोतोगणाः तम् अरणम् भज वासुदेवम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	२	जिस भगवान् के	तद्वत् न	१४.	उतनी सुविधायें से नहीं कर पाते
पाद	३.	चरण	रिक्त मतयः	१२.	वैराग्य में बुद्धि रखने वाले
पङ्कज पलाश	४.	कमल दल की	यतयः अपि	१३.	संन्यासी लोग भी
विलाश	५.	कान्ति की	रुद्ध	११.	रोककर
भक्त्या	६.	भक्ति करके	स्रोतोगणः	१०.	इन्द्रियों के प्रवाह को
कर्म आशयम्	८.	कर्म की गांठ अहंकार को	तम्	१५.	(तुम) उन
ग्रथितम्	७	कर्मों से लिपटी हुई	अरणम्	१७.	शरण
उद्ग्रथयन्ति	९.	काट देते हैं (उसी प्रकार)	भज	१८.	ग्रहण करो
सन्तः।	१	भक्त जन (जिस प्रकार)	वासुदेवम् ॥	१६	भगवान् श्री हरि की

श्लोकार्थ—भक्त जन जिस प्रकार जिस भगवान् के चरण कमल दल की कान्ति की भक्ति करके कर्मों से लिपटी हुई कर्म की गांठ अहंकार को काट देते हैं, उस प्रकार इन्द्रियों के प्रवाह को रोककर वैराग्य में बुद्धि रखने वाले संन्यासी लोग भी उतनी सुविधा से नहीं कर पाते। तुम उन भगवान् श्री हरि वासुदेव की शरण ग्रहण करो ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

कृच्छ्रो महानिह भवार्णवमप्लवेशां षड्वर्गनक्रमसुखेन तितीर्षन्ति।
तत्त्वं हरेर्भगवतो भजनीयमङ्घ्रिं कृत्वोडुपं व्यसनमुत्तर दुस्तरार्णम् ॥४०॥

पदच्छेद—कृच्छ्रः महान् इह भव अर्णवम् अप्लव ईशाम् षड्वर्गनक्रम् असुखेन तितीर्षन्ति।
तत्त्वम् हरेः भगवतः भजनीयं अङ्घ्रिम् कृत्वा उडुपम् उत्तर दुस्तर अर्णम् ॥

शब्दार्थ—

कृच्छ्रः	९.	कठिन कार्य है	तत् त्वम्	१०.	इस जाल को पार करो
महान्	८.	बड़ा	हरेः	१२.	श्री हरि के
इह	७.	संसार में यह	भगवतः	११.	भगवान्
भव अर्णवम्	३.	संसार सागर को	भजनीयम्	१३.	भजन करने योग्य
अप्लव	५.	नौका के बिना ही (योग साधन रूपी)	अङ्घ्रिम्	१४.	चरणों को
ईशाम्	४.	श्री हरि की भक्तिरूपी	कृत्वा	१६.	बना करके
षड्वर्ग	१.	जो लोग इन्द्रिय और मनरूपी	उडुपम्	१५.	नौका
नक्रम्	२.	मगर मच्छ से युक्त	व्यसनम् उत्तर	१८.	इसलिये तुम
असुखेन तितीर्षन्ति।	६	कष्ट से पार करना चाहते हैं	दुस्तर अर्णम् ॥	१७.	अपार सागर रूप

श्लोकार्थ—जो लोग इन्द्रिय और मन रूपी मगर-मच्छ से युक्त संसार-सागर को श्री हरि की भक्ति रूपी नौका के बिना ही योग साधन रूपी कष्ट से पार करना चाहते हैं; संसार में यह बड़ा कठिन कार्य है। इसलिये तुम भगवान् श्री हरि के भजन करने योग्य चरणों को नौका बना करके अपार सागर रूप इस जाल को पार करो ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— स एवं ब्रह्मपुत्रेण कुमारेणात्ममेधसा ।
दर्शितात्मगतिः सम्यक्प्रशस्योवाच तं नृपः ॥४१॥

पदच्छेद—

सः एवम् ब्रह्म पुत्रेण कुमारेण आत्म मेधसा ।
दर्शित आत्मगतिः सम्यक् प्रशस्य उवाच तम् नृपः ॥

शब्दार्थ—

सः	९.	उन	दर्शित	८.	दिखाये जाने पर
एवम	६.	इस प्रकार	आत्मगतिः	७.	आत्म ज्ञान का मार्ग
ब्रह्म	१.	ब्रह्मा जी के	सम्यक्	११.	उनकी बहुत
पुत्रेण	२.	मानस पुत्र	प्रशस्य	१२.	प्रशंसा करके
कुमारेण	५.	सनत्कुमार के द्वारा	उवाच	१४.	कहा
आत्म	३.	आत्मज्ञ	तम्	१३.	उनसे
मेधसा ।	४.	ज्ञानी	नृपः ॥	१०.	महाराज पृथु ने

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के मानस पुत्र आत्मज्ञानी सनत्कुमार के द्वारा इस प्रकार आत्मज्ञान का मार्ग दिखाये जाने पर उन महाराज पृथु ने उनकी बहुत प्रशंसा करके कहा ।

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

राजोवाच— कृतो मेऽनुग्रहः पूर्वं हरिणाऽऽर्तानुकम्पिना ।
तमापादयितुं ब्रह्मन् भगवन् यूयमागताः ॥४२॥

पदच्छेद—

कृतः मे अनुग्रहः पूर्वम् हरिणा आर्त अनुकम्पिना ।
तम् आपादयितुंम् ब्रह्मन् भगवन् यूयम् आगताः ॥

शब्दार्थ—

कृतः	८.	की थी	तम्	९.	उसे ही
मे	५.	मेरे ऊपर	अपादयितुम्	१०.	पूर्ण करने के लिये
अनुग्रहः	७.	कृपा	ब्रह्मन्	१.	ब्रह्मज्ञानी
पूर्वम्	६.	पहले	भगवन्	२.	हे भगवन् !
हरिणा	४.	श्री हरि ने	यूयम्	११.	आप लोग
आर्त अनुकम्पिना ।	३.	दीनदयालु	आगताः ॥	१२.	(यहाँ) पधारे हैं

श्लोकार्थ—ब्रह्मज्ञानी हे भगवन् ! दीन दयालु श्री हरि ने मेरे ऊपर पहले कृपा की थी उसे ही पूर्ण करने के लिये आप लोग यहाँ पधारे हैं ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

निष्पादितश्च कात्स्न्येंन भगवद्भिर्घृणालुभिः ।
साधूच्छिष्टं हि मे सर्वमात्मना सह किं ददे ॥४३॥

पदच्छेद—

निष्पादितः च कात्स्न्येंन भगवद्भिः घृणालुभिः ।
साधु उच्छिष्टम् हि मे सर्वम् आत्मना सह किम् ददे ॥

शब्दार्थ—

निष्पादितः	५.	बताया है	उच्छिष्टम	१०.	प्रसाद है
च	४	आत्म ज्ञान	हि	११.	अतः (मैं आपको)
कात्स्न्येंन	३.	पूर्णरूप से	मे सर्वम्	८.	मेरा सब कुछ
भगवद्भिः	२.	आप लोगों ने	आत्मना	६.	शरीर के
घृणालुभिः ।	१.	दीनों पर दया करने वाले	सह	७.	साथ
साधु	९.	महापुरुषों का	किम् ददे ॥	१२.	क्या दे सकता हूँ

श्लोकार्थ—दीनों पर दया करने वाले आपलोगों ने पूर्णरूप से आत्मज्ञान बताया है । शरीर के साथ मेरा सब कुछ महापुरुषों का प्रसाद है । अतः मैं आप को क्या दे सकता हूँ ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

प्राणा दाराः सुता ब्रह्मन् गृहाश्च सपरिच्छदाः ।
राज्यं बलं मही कोश इति सर्वं निवेदितम् ॥४४॥

पदच्छेद—

प्राणाः दाराः सुताः ब्रह्मन् गृहाः च स परिच्छदाः ।
राज्यम् बलम् मही कोशः इति सर्वम् निवेदितम् ॥

शब्दार्थ—

प्राणाः	२.	प्राण	राज्यम्	७.	राज्य
दाराः सुताः	३.	पत्नी पुत्र	बलम्	८.	सेना
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्	मही	९.	पृथ्वी
गृहाः	६.	घर	कोशः	११.	खजाना
च	१०.	और	इति	१२.	यह
स	५.	साथ	सर्वम्	१३.	सब
परिच्छदाः ।	४.	सेवकों के	निवेदितम् ॥	१४.	आपको समर्पित है

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! प्राण, पत्नी, पुत्र सेवकों के साथ घर, राज्य, सेना पृथ्वी और खजाना यह सब आपको समर्पित है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

सैनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्वमेव च।
सर्वलोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदर्हति ॥४५॥

पदच्छेद—

सैनापत्यम् च राज्यम् च दण्ड नेतृत्वम् एव च।
सर्व लोक आधिपत्यम् च वेद शास्त्र विदर्हति ॥

शब्दार्थ—

सैनापत्यम्	५.	सेनापति का काम	सर्व	११.	सभी
च राज्यम्	६.	और राज्य कार्य	लोक	१२.	लोकों के
च	७.	तथा	आधिपत्यम्	१३.	स्वामी का कार्य
दण्ड	८.	दण्ड का	च	१०.	एवम्
नेतृत्वम्	९.	विधान	वेद	२.	वेद (और)
एव	४.	ही	शास्त्र	३.	शास्त्र का ज्ञाता
च।	१.	हे भगवन् !	विदर्हति ॥	१४.	निभा सकता है

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! वेद और शास्त्र का ज्ञाता ही सेनापति का काम और राज्य का कार्य तथा दण्ड का विधान एवम् सभी लोकों के स्वामी का कार्य निभा सकता है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

स्वमेव ब्राह्मणो भुङ्क्ते स्वं वस्ते स्वं ददाति च।
तस्यैवानुग्रहेणान्नं भुञ्जते क्षत्रियादयः ॥४६॥

पदच्छेद—

स्वमेव ब्राह्मणः भुङ्क्ते स्वम् वस्ते स्वम् ददाति च।
तस्य एव अनुग्रहेण अन्नम् भुञ्जते क्षत्रिय आदयः ॥

शब्दार्थ—

स्वम्	२.	अपना	तस्य	१०.	उस
एव	३.	ही	एव	११.	ही की
ब्राह्मणः	१.	ब्राह्मण	अनुग्रहेण	१२.	कृपा से
भुङ्क्ते	४.	खाता है	अन्नम्	१३.	अन्न
स्वम्, वस्ते	५.	अपना, पहनता है	भुञ्जते	१४.	खाते हैं
स्वम् ददाति	७.	अपना देता है	क्षत्रिय	८.	दूसरे क्षत्रिय
च।	६.	और	आदयः ॥	९.	इत्यादि लोग

श्लोकार्थ—ब्राह्मण अपना ही खाता; अपना पहनता है और अपना देता है। दूसरे क्षत्रिय इत्यादि लोग उसी की कृपा से अन्न खाते हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

यैरीदृशी भगवतो गतिरात्मवादे एकान्ततो निगमिभिः प्रतिपादिता नः ।
तुष्यन्त्वदभ्रकरुणाः स्वकृतेन नित्यं को नाम तत्प्रतिकरोति विनोदपात्रम् ॥४७॥

पदच्छेद—यैः ईदृशी भगवतः गतिः आत्मवादे, एकान्ततः, निगमिभिः प्रतिपादिता नः ।
तुष्यन्तु अदभ्र करुणाः स्वकृतेन नित्यम्, कः नाम तत् प्रतिकरोति विनोद पात्रम् ॥

शब्दार्थ—

यैः	२. जिन आप लोगों ने	तुष्यन्ति	१४. सन्तुष्ट रहें
ईदृशी	६. इस प्रकार की भक्ति को ही	अदभ्र	१०. परम
भगवतः	७. श्री हरि की	करुणाः	११. दयालु (आप लोग)
गतिः	८. प्राप्ति का उपाय	स्वकृतेन	१२. अपने किये उपकार से
आत्मवादे	३. आत्मा के विषय में	नित्यम्,	१३. सदा
एकान्ततः	४. निर्णय करके	कः	१७. कौन (व्यक्ति)
निगमिभिः	१. वेद ज्ञानी	नाम	१६. भला
प्रतिपादिता	९. बताया है	तत् प्रतिकरोति	१८. उसका, बदला चुका सकता है
नः ।	५ हमें	विनोद पात्रम् ॥	१५. हंसी का पात्र

श्लोकार्थ—वेदज्ञानी जिन आप लोगों ने आत्मा के विषय में निर्णय करके हमें इस प्रकार की भक्ति को ही श्री हरि की प्राप्ति का उपाय बताया है। पर दयालु आप लोग अपने किये गये उपकार से सदा सन्तुष्ट रहें; हंसी का पात्र भला कौन व्यक्ति उसका बदला चुका सकता है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—त आत्मयोगपतय आदिराजेन पूजिताः ।
शीलं तदीयं शंसन्तः खेऽभूवन्मिषतां नृणाम् ॥४८॥

पदच्छेद— त आत्म योग पतयः आदिराजेन पूजिताः ।
शीलम् तदीयम् शंसन्तः खे अभूवन् मिषताम् नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

त	४. उन (सनकादि कुमारों की)	तदीयम्	६. उनके
आत्मयोग	२. आत्म ज्ञानियों में	शंसन्तः	८. प्रशंसा करते हुये
पतयः	३ श्रेष्ठ	खे	११. आकाश मार्ग से
आदिराजेन	१. आदिराज पृथु ने	अभूवन्	१२. चले गये
पूजिताः ।	५. पूजा की (वे कुमार)	मिषताम्	१०. देखते-देखते
शीलम्	७. स्वभाव की	नृणाम् ॥	९. लोगों के

श्लोकार्थ—आदिराज पृथु ने आत्मज्ञानियों में श्रेष्ठ उन सनकादि कुमारों की पूजा की। वे कुमार उनके स्वभाव की प्रशंसा करते हुये लोगों के देखते-देखते आकाश मार्ग से चले गये ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

**वैन्यस्तु धुर्यो महतां संस्थित्याध्यात्मशिक्षया ।
आप्तकाममिवात्मानं मेन आत्मन्यवस्थितः ॥४९॥**

पदच्छेद—

वैन्यः तु धुर्यः महताम् संस्थित्या अध्यात्म शिक्षया ।
आप्तकामम् इव आत्मानम् मेने आत्मनि अवस्थितः ॥

शब्दार्थ—

वैन्यः	४.	महाराज पृथु	आप्तकामम्	११.	पूर्णकाम के
तु	१.	तदनन्तर	इव	१२.	समान
धुर्यः	३.	अग्रणी	आत्मनम्	१०.	अपने को
महताम्	२.	महापुरुषों में	मेने	१३.	समझने लगे
संस्थित्या	७.	चित्त की एकाग्रता से	आत्मनि	८	आत्मा में
अध्यात्म	५.	आत्मज्ञान की	अवस्थितः ॥	९.	स्थित होकर
शिक्षया ।	६.	शिक्षा पाकर			

श्लोकार्थ—तदनन्तर महापुरुषों में अग्रणी महाराज पृथु आत्मज्ञान की शिक्षा पाकर चित्त की एकाग्रता से आत्मा में स्थित होकर अपने को पूर्णकाम के समान समझने लगे ॥

पञ्चाशः श्लोकः

**कर्माणि च यथाकालं यथादेशं यथाबलम् ।
यथोचितं यथावित्तमकरोद्ब्रह्मसात्कृतम् ॥५०॥**

पदच्छेद—

कर्माणि च यथा कालम् यथा देशम् यथा बलम् ।
यथोचितम् यथा वित्तम् अकरोत् ब्रह्मसात् कृतम् ॥

शब्दार्थ—

कर्माणि	३.	अपने कर्मों को	बलम् ।	८.	शक्ति के
च	१०.	और	यथोचितम्	१३.	न्याय पूर्वक
यथा	५.	अनुसार	यथा	१०.	अनुसार
कालम्	४.	समय के	वित्तम्	११.	धन के
यथा	७.	अनुसार	अकरोत्	१४.	करते थे
देशम्	६.	स्थान के	ब्रह्मसात्	१.	ब्रह्मार्पण
यथा	९	अनुसार	कृतम् ॥	२.	भाव से

श्लोकार्थ—वे ब्रह्मार्पण भाव से अपने कर्मों को समयानुसार, स्थान के अनुसार, शक्ति के अनुसार और धन के अनुसार, न्यायपूर्वक करते थे ।

एकपञ्चाशः श्लोकः

फलं ब्रह्मणि विन्यस्य निर्विषङ्गः समाहितः ।
कर्माध्यक्षं च मन्वानः आत्मानं प्रकृतेः परम् ॥५१॥

पदच्छेद—

फलम् ब्रह्मणि विन्यस्य निर्विषङ्गः समाहितः ।
कर्म अध्यक्षम् च मन्वानः आत्मानम् प्रकृतेः परम् ॥

शब्दार्थ—

फलम्	२.	कर्म फल को	अध्यक्षम्	७.	साक्षी
ब्रह्मणि	३.	ब्रह्म में	च	८.	और
विन्यस्य	४.	समर्पित करके	मन्वानः	११.	मानते हुये
निर्विषङ्गः	१२.	निर्लिप्त हो गये	आत्मानम्	५.	आत्मा को
समाहितः ।	१.	वे सावधान मन से	प्रकृतेः	९.	प्रकृति से
कर्म	६.	कर्मों का	परम् ॥	१०.	भिन्न

श्लोकार्थ—वे सावधान मन से कर्म फल को ब्रह्म में समर्पित करके आत्मा को कर्मों का साक्षी और प्रकृति से भिन्न मानते हुये निर्लिप्त हो गये ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

गृहेषु वर्तमानोऽपि स साम्राज्यश्रियान्वितः ।
नासज्जतेन्द्रियार्थेषु निरहंमतिरर्कवत् ॥५२॥

पदच्छेद—

गृहेषु वर्तमानः अपि सः साम्राज्य श्रियान्वितः ।
न आसज्जत इन्द्रिय अर्थेषु निरहम् मतिः अर्कवत् ॥

शब्दार्थ—

गृहेषु	६.	गृहस्थाश्रम में	न	१३.	नहीं
वर्तमानः	७.	रहते हुये	आसज्जत	१४.	आसक्त हुये
अपि	८.	भी	इन्द्रिय	११.	इन्द्रियों के
सः	१.	वे (महाराज पृथु)	अर्थेषु	१२.	विषयों में
साम्राज्य	३.	सार्वभौम	निरहम्	९.	अहंकार रहित
श्रिया	४.	राज्य लक्ष्मी से	मतिः	१०.	बुद्धि होने के कारण
अन्वितः ।	५.	सम्पन्न होकर	अर्कवत् ॥	२.	सूर्य के समान

श्लोकार्थ—वे महाराज पृथु सूर्य के समान सार्वभौम राज्य लक्ष्मी से सम्पन्न होकर गृहस्थाश्रम में भी रहते हुये अहंकार रहित बुद्धि होने के कारण इन्द्रियों के विषयों में नहीं आसक्त हुए ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

एवमध्यात्मयोगेन कर्माण्यनुसमाचरन् ।
पुत्रानुत्पादयामास पञ्चार्चिष्यात्मसम्मतान् ॥५३॥

पदच्छेद—

एवम् अध्यात्म योगेन कर्माणि अनु समाचरन् ।
पुत्रान् उत्पादयामास पञ्च अर्चिषि आत्म सम्मतान् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	पुत्रान्	११.	पुत्रों के
अध्यात्म	२.	आत्म चिन्तन में	उत्पादयामास	१२.	उत्पन्न किया
योगेन	३.	मग्न रहने से	पञ्च	१०.	पाँच
कर्माणि	५.	कर्मों को	अर्चिषि	७.	अपनी भार्या अर्चि से
अनु	४.	यथोचित रीति से	आत्म	८.	अपने
समाचरन् ।	६.	करते हुये	सम्मतान् ॥	९.	समान

श्लोकार्थ—इस प्रकार आत्म चिन्तन में मग्न रहने से यथोचित रीति से कर्मों को करते हुये, अपनी भार्या अर्चि से अपने समान पांच पुत्रों को उत्पन्न किया ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

विजिताश्वं धूम्रकेशं हर्यक्षं द्रविणं वृकम् ।
सर्वेषां लोकपालानां दधारैकः पृथुर्गुणान् ॥५४॥

पदच्छेद—

विचिताश्वम् धूम्रकेशम् हर्यक्षम् द्रविणम् वृकम् ।
सर्वेषाम् लोक पालानाम् दधार एकः पृथुः गुणान् ॥

शब्दार्थ—

विजिताश्वम्	१.	(उनके नाम) विजिताश्व	लोक	९.	लोक
धूम्रकेशम्	२.	धूम्रकेश	पालानाम्	१०.	पालों के
हर्यक्षम्	३.	हर्यक्ष	दधार	१२.	धारण किये
द्रविणम्	४.	द्रविण (और)	एकः	६.	भगवत् अंश होने से अकेले ही
वृकम् ।	५.	वृक (थे)	पृथुः	७.	महाराज पृथु ने
सर्वेषाम्	८.	सभी	गुणान् ॥	११.	गुण

श्लोकार्थ—उनके नाम विजिताश्व, धूम्रकेश, हर्यक्ष, द्रविण, और वृक थे। भगवत् अंश होने से अकेले ही महाराज पृथु ने सभी लोकपालों के गुण धारण किये ॥

पञ्चपचाशः श्लोकः

गोपीथाय जगत्सृष्टेः काले स्वे स्वेऽच्युतात्मकः ।
मनोवाग्वृत्तिभिः सौम्यैर्गुणैः संरञ्जयन् प्रजाः ॥५५॥

पदच्छेद— गोपीथाय जगत् सृष्टेः काले स्वे स्वे अच्युत आत्मकः ।
मनः वाक् वृत्तिभिः सौम्यैः गुणैः संरञ्जयन् प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

गोपीथाय	७.	रक्षा करते थे	मनः	८.	(तथा) उदार मन
जगत्	५.	संसार के	वाक्	९.	मधुर वाणी (और)
सृष्टेः	६.	प्राणियों की	वृत्तिभिः	१०.	मृदु व्यवहार (एवम्)
काले	४.	समय पर (लोक पालरूप से)	सौम्यैः	११.	उत्तम
स्वे स्वे	३.	यथा अनुसार	गुणैः	१२.	गुणों से
अच्युत	१.	श्री हरि के	संरञ्जयन्	१४.	अनुरञ्जन करते थे
आत्मकः ।	२.	अंश (महाराज पृथु)	प्रजाः ॥	१३.	प्रजा का

श्लोकार्थ—श्री हरि के अंश महाराज पृथु यथा अनुसार समय पर लोकपालरूप से संसार के प्राणियों की रक्षा करते थे। तथा उदार मन, मधुरवाणी और मृदुव्यवहार एवम् उत्तम गुणों से प्रजा का अनुरञ्जन करते थे ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

राजेत्यधान्नामधेयं सोमराज इवापरः ।
सूर्यवद्विसृजन् गृह्णन् प्रतपंश्च भुवो वसु ॥५६॥

पदच्छेद— राजा इति अधात् नामधेयम् सोमराजः इव अपरः ।
सूर्यवत् विसृजन् गृह्णन् प्रतपन् च भुवः वसु ॥

शब्दार्थ—

राजा	४.	राजा	सूर्यवत्	८.	(वे) सूर्य के समान
इति	५.	यह	विसृजन्	९.	बरसा कर देने के लिये
अधात्	७.	धारण किया था	गृह्णन्	१२.	लेते थे
नामधेयम्	६.	नाम	प्रतपन्	१४.	प्रभाव रखते थे
सोमराजः	२.	चन्द्रमा के	च	१३.	और (उन पर अपना)
इव	३.	समान (उन्होंने)	भुवः	१०.	प्रजा से
अपरः ।	१.	इसलिये दूसरे	वसु ॥	११.	कर

श्लोकार्थ—इसलिये दूसरे चन्द्रमा के समान उन्होंने राजा यह नाम धारण किया था वे सूर्य के समान बरसा कर देने के लिये प्रजा से कर लेते थे और उन पर अपना प्रभाव रखते थे ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

दुर्धर्षस्तेजसेवाग्निर्महेन्द्र इव दुर्जयः ।
तितिक्षया धरित्रीव द्यौरिवाभीष्टदो नृणाम् ॥५७॥

पदच्छेद—

दुर्धर्षः तेजसा इव अग्निः महेन्द्र इव दुर्जयः ।
तितिक्षया धरित्री इव द्यौः इव अभीष्टदः नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

दुर्धषः	४.	असह्य	तितिक्षया	१०.	क्षमाशील (और)
तेजसा	१.	(वे) तेज में	धरित्री	८.	पृथ्वी के
इव	३.	समान	इव	९.	समान
अग्निः	२.	अग्नि के	द्यौः	११.	स्वर्ग के
महेन्द्रः	५.	इन्द्र के	इव	१२.	समान
इव	६.	समान	अभीष्टदः	१४.	मनोरथ पूर्ण करते थे
दुर्जयः ।	७.	अजेय	नृणाम् ॥	१३.	मनुष्यों के

श्लोकार्थ— वे तेज में अग्नि के समान असह्य, इन्द्र के समान अजेय, पृथ्वी के समान क्षमाशील और स्वर्ग के समान मनुष्यों के मनोरथ पूर्ण करते थे ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

वर्षति स्म यथाकामं पर्जन्य इव तर्पयन् ।
समुद्र इव दुर्बोधः सत्त्वेनाचलराडिव ॥५८॥

पदच्छेद—

वर्षति स्म यथा कामम् पर्जन्यः इव तर्पयन् ।
समुद्रः इव दुर्बोधः सत्त्वेन अचलराड् इव ॥

शब्दार्थ—

वर्षति स्म	६.	पूर्ण करते थे	समुद्रः	७.	वे समुद्र के
यथा	४.	उनके अभीष्ट	इव	८.	समान
कामम्	५.	अर्थों को	दुर्बोधः	९.	गम्भीर (और)
पर्जन्यः	२.	(वे) मेघ के	सत्त्वेन	१२.	धैर्यशाली (थे)
इव	३.	समान	अचलराड्	१०.	पर्वतराज हिमालय के
तर्पयन् ।	१.	प्रजा को तृप्त करने के लिये	इव ॥	११.	समान

श्लोकार्थ—प्रजा को तृप्त करने के लिये वे मेघ के समान उनके अभीष्ट अर्थों को पूर्ण करते थे । वे समुद्र के समान गम्भीर और पर्वतराज हिमालय के समान धैर्यशाली थे ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

धर्मराडिव शिक्षायामाश्चर्ये हिमवानिव ।
कुबेर इव कोशाढ्यो गुप्तार्थो वरुणो यथा ॥५९॥

पदच्छेद—

धर्मराड् इव शिक्षायाम् आश्चर्ये हिमवान् इव ।
कुबेरः इव कोश आढ्यः गुप्त अर्थः वरुणः यथा ॥

शब्दार्थ—

धर्मराड्	२. यमराज के	इव	१०. समान (तथा)
इव	३. समान	कोश	७. खजाने की
शिक्षायाम्	१. (दुष्टों को) दण्ड देने में	आढ्य	८. समृद्धि में
आश्चर्ये	४. आश्चर्य में	गुप्त	१२. छिपाने में
हिमवान्	५. हिमालय के	अर्थः	११. धन को
इव ।	६. समान	वरुणः	१३. वरुण के
कुबेरः	९. कुबेर के	यथा ॥	१४. समान थे

श्लोकार्थ—महाराज पृथु दुष्टों को दण्ड देने में धर्मराज के समान, आश्चर्य में हिमालय के समान खजाने की समृद्धि में कुबेर के समान, धन को छिपाने में वरुण के समान थे ।

षष्टितमः श्लोकः

मातरिश्वेव सर्वात्मा बलेन सहसौजसा ।
अविषह्यतया देवो भगवान् भूतराडिव ॥६०॥

पदच्छेद—

मातरिश्वा इव सर्वात्मा बलेन सहसा ओजसा ।
अविषह्यतया देवः भगवान् भूतराड् इव ॥

शब्दार्थ—

मातरिश्वा	६. वायु	ओजसा ।	३. पराक्रम में
इव	७. समान (और)	अविषह्यतया	८. असह्य तेज में
सर्व	४. सर्वत्र	देवः	११. शंकर के
आत्मा	५. व्याप्त	भगवान्	१०. भगवान्
बलेन	१. (वे) शरीर बल	भूतराड्	९. भूतनाथ
सहसा	२. इन्द्रिय बल (और)	इव ॥	१२. समान थे

श्लोकार्थ—वे शरीर बल, इन्द्रिय बल और पराक्रम में सर्वत्र व्याप्त वायु के समान और असह्य तेज में भूतनाथ भगवान् शंकर के समान थे ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

कन्दर्प इव सौन्दर्ये मनस्वी मृगराडिव।
वात्सल्ये मनुवन्नृणां प्रभुत्वे भगवानजः ॥६१॥

पदच्छेद— कन्दर्प इव सौन्दर्ये मनस्वी मृगराड् इव।
वात्सल्ये मनुवत् नृणाम् प्रभुत्वे भगवान् अजः ॥

शब्दार्थ—

कन्दर्पः	२. कामदेव के		वात्सल्ये	७. वात्सल्य में
इव	३. समान		मनुवत्	८. मनु के समान (और)
सौन्दर्ये	१. (वे) सुन्दरता में		नृणाम्	९. मनुष्यों पर
मनस्वी	४. उत्साह में		प्रभुत्वे	१० शासन करने में
मृगराड्	५. सिंह के		भगवान्	११. भगवान्
इव।	६. समान		अजः ॥	१२. ब्रह्मा के (समान थे)

श्लोकार्थ—वे सुन्दरता में कामदेव के समान, उत्साह में सिंह के समान, वात्सल्य में मनु के समान और मनुष्यों पर शासन करने में भगवान् ब्रह्मा के समान थे।

द्विषष्टितमः श्लोकः

बृहस्पतिर्ब्रह्मवादे आत्मवत्त्वे स्वयं हरिः।
भक्त्या गोगुरुविप्रेषु विष्वक्सेनानुवर्तिषु।
ह्रिया प्रश्रयशीलाभ्यामात्मतुल्यः परोद्यमे ॥६२॥

पदच्छेद— बृहस्पतिः ब्रह्मवादे आत्मवत्त्वे स्वयम् हरिः।
भक्त्या गो गुरु विप्रेषु विष्वक्सेन अनिवर्तिषु।
ह्रिया प्रश्रय शीलाभ्याम् आत्म तुल्यः परोद्य मे ॥

शब्दार्थ—

बृहस्पतिः	२. बृहस्पति के समान		विष्वक्सेन	८. भगवान् के
ब्रह्मवादे	१. (वे) ब्रह्म विचार में		अनुवर्तिषु	९. भक्तों की
आत्मवत्त्वे	३. इन्द्रिय जय में		ह्रिया	११. लज्जा
स्वयम्	४. साक्षात्		प्रश्रय	१२. विनय
हरिः।	५. श्री हरि (तथा)		शीलाभ्याम्	१३. स्वभाव (और)
भक्त्या	१०. भक्ति		आत्म	१५. अपने
गो, गुरु	६. गौ, गुरु जन		तुल्यः	१६. समान (अनुपम थे)
विप्रेषु	७. ब्राह्मण (एवम्)		परोद्यमे ;।	१४. परोपकार में

श्लोकार्थ—वे ब्रह्म विचार में बृहस्पति के समान, इन्द्रियजय में साक्षात् श्री हरि तथा गौ, गुरुजन, ब्रह्मा एवम् भगवान् के भक्तों की भक्ति, लज्जा, विनय, स्वभाव और परोपकार में अपने समान अनुपम थे ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

कीर्त्योर्ध्वंगीतया पुम्भिस्त्रैलोक्ये तत्र तत्र ह ।
प्रविष्टः कर्णरन्ध्रेषु स्त्रीणां रामः सतामिव ॥६३॥

पदच्छेद—

कीर्त्या ऊर्ध्व गीतया पुम्भिः त्रैलोक्ये तत्र-तत्र ह ।
प्रविष्टः कर्ण रन्ध्रेषु स्त्रीणाम् रामः सताम् इव ॥

शब्दार्थ—

कीर्त्या	४.	(उनकी) कीर्ति का	प्रविष्टः	११.	(वैसे ही) प्रवेश पार थे
ऊर्ध्व	५.	उच्च स्वर से	कर्ण	६.	कानों के
गीतया	६.	गान करते थे	रन्ध्रेषु	१०.	छिद्रों में
पुम्भिः	१.	लोग	स्त्रीणाम्	८.	स्त्रियों तक के
त्रैलोक्ये	२.	त्रिलोकी में	रामः	१४.	श्री राम
तत्र-तत्र	३.	सर्वत्र	सताम्	१३.	महापुरुषों के हृदय में
ह ।	७.	इससे	इव ॥	१२.	जैसे

श्लोकार्थ— लोग त्रिलोकी में सर्वत्र उनकी कीर्ति का उच्च स्वर से गान करते थे । इससे वे स्त्रियों के कानों के छिद्रों में वैसे ही प्रवेश पाये थे जैसे महापुरुषों के हृदय में भगवान् श्रीराम ।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पृथुचरिते द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

त्रयोविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—दृष्ट्वाऽऽत्मानं प्रवयसमेकदा वैन्य आत्मवान् ।
आत्मना वर्धिताशेषस्वानुसर्गः प्रजापतिः ॥१॥

पदच्छेद—

दृष्ट्वा आत्मानम् प्रवयसम् एकदा वैन्यः आत्मवान् ।
आत्मना वर्धित अशेष स्व अनुसर्गः प्रजापतिः ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	१२.	देखी	आत्मना	४.	स्वयम्
आत्मानम्	१०.	अपनी	वर्धित	५.	सुविधा करने के बाद
प्रवयसम्	११.	अवस्था ढली हुई	अशेष	२.	सारी
एकदा	६.	एक बार	स्व	१.	अपनी (पुर ग्रामादि)
वैन्यः	९.	पृथु ने	अनुसर्गः	३.	सृष्टि की
आत्मवान् ।	७.	महामनस्वी	प्रजापतिः ॥	६.	महाराज

श्लोकार्थ—अपनी पुर, ग्रामादि सारी सृष्टि की स्वयम् सुविधा करने के बाद एक बार महामनस्वी महाराज पृथु ने अपनी अवस्था ढलती देखी ।

द्वितीयः श्लोकः

जगतस्तस्थुषश्चापि वृत्तिदो धर्मभृत्सताम् ।
निष्पादितेश्वरादेशो यदर्थमिह जज्ञिवान् ॥२॥

पदच्छेद—

जगतः तस्थुषः च अपि वृत्तिदः धर्मभृत् सताम् ।
निष्पादित ईश्वर आदेशः यदर्थम् इह जज्ञिवान् ॥

शब्दार्थ—

जगतः	४.	जंगम	निष्पादित	१२.	पूर्ण कर दिया है
तस्थुषः च	३.	(उन्होंने) स्थावर और	ईश्वर	१०.	भगवान् का (वह)
अपि	५.	सभी प्राणियों की	आदेशः	११.	आदेश
वृत्तिदः	६.	जीविका कर दी थी	यदर्थम्	७.	जिसके लिये
धर्मभृत्	२.	धर्म का पालन करते हुये	इह	८.	इस भूलोक में
सताम् ।	१.	सत्पुरुषों के	जज्ञिवान् ॥	९.	जन्म लिया था

श्लोकार्थ—सत्पुरुषों के धर्म का पालन करते हुये उन्होंने स्थावर और जंगम सभी प्राणियों की जीविका कर दी थी । जिसके लिये भूलोक में जन्म लिया था, भगवान् का वह आदेश पूर्ण कर दिया था ।

तृतीयः श्लोकः

आत्मजेष्वात्मजां न्यस्य विरहाद्रुदतीमिव ।
प्रजासु विमनःस्वेकः सदारोऽगात्तपोवनम् ॥३॥

पदच्छेद—

आत्मजेषु आत्मजाम् न्यस्य विरहात् रुदतीम् इव ।
प्रजासु विमनः सु एकः सदारः अगात् तपोवनम् ॥

शब्दार्थ—

आत्मजेषु	५.	पुत्रों के	प्रजासु	७.	सारी प्रजा को
आत्मजाम्	४.	पृथ्वी का भार	विमनः सु	८.	उदास छोड़कर
न्यस्य	६.	सौंपकर (और)	एकः	९.	अकेले
विरहात्	१.	अपने विरह से	सदार	१०.	अपनी पत्नी सहित
रुदतीम्	३.	रोती हुई	अगात्	१२.	चल दिये
इव ।	२.	मानों	तपोवनम् ।	११.	तपोवन को

श्लोकार्थ—अपने विरह से मानों रोती हुई पृथ्वी का भार पुत्रों को सौंपकर और सारी प्रजा को उदास छोड़कर अकेले अपनी पत्नी के सहित तपोवन को चल दिये ॥

चतुर्थः श्लोकः

तत्राप्यदाभ्यनियमो वैखानससुसम्मते ।
आरब्ध उग्रतपसि यथा स्वविजये पुरा ॥४॥

पदच्छेद—

तत्र अपि अदाभ्य नियमः वैखानस सुसम्मते ।
आरब्ध उग्रतपसि यथा स्व विजये पुरा ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ	आरब्ध	७.	लग गये
अपि	२.	भी (वे)	उग्र	५.	कठोर
अदाभ्य	११.	अखण्ड	तपसि	६.	तपस्या में
नियमः	१२.	व्रत लिये थे	यथा	८.	जैसे
वैखानस	३.	वानप्रस्थ आश्रम के	स्वविजय	१०.	स्वयं (पृथ्वी को जीतने के लिए)
सुसम्मतः ।	४.	नियमानुसार	पुरा ॥	९.	पहले (गृहस्थाश्रम में)

श्लोकार्थ—वहाँ भी वे वानप्रस्थ आश्रम के नियमानुसार कठोर तपस्या में लग गये । जैसे पहले गृहस्थाश्रम में स्वयं पृथ्वी को जीतने के लिये अखण्ड व्रत लिये थे ॥

पञ्चमः श्लोकः

कन्दमूलफलाहारः शुष्कपर्णाशनः क्वचित्।
अब्भक्षः कतिचित्पक्षान् वायुभक्षस्ततः परम् ॥५॥

पदच्छेद— कन्द मूल फल आहारः शुष्क पर्ण अशनः क्वचित् ।
अप् भक्षः कतिचित् पक्षान् वायु भक्षः ततः परम् ॥

शब्दार्थ—

कन्द	२.	(वे) कन्द	अप्	११.	केवल जल
मूल	३.	मूल	भक्षः	१२.	पीकर (और)
फल	४.	फल	कतिचित्	६.	फिर कुछ
आहारः	५.	खाकर (और)	पक्षान्	१०.	पखवाड़े
शुष्क	६.	कुछ दिन सूखे	वायु	१५.	वायु से ही
पर्ण	७.	पत्ते	भक्षः	१६.	निर्वाह करने लगे
अशनः	८.	खाकर रहे	ततः	१३.	उसके
क्वचित् ।	१.	कुछ दिन	परम् ॥	१४.	बाद

श्लोकार्थ—कुछ दिन वे कन्द, मूल, फल, खाकर और कुछ दिन सूखे पत्ते खाकर रहे। फिर कुछ पखवाड़े केवल जल पीकर और उसके बाद वायु से ही निर्वाह करने लगे ॥

षष्ठः श्लोकः

ग्रीष्मे पञ्चतपा वीरो वर्षास्वासारषाण्मुनिः ।
आकण्ठमग्नः शिशिरे उदके स्थण्डिलेशयः ॥६॥

पदच्छेद— ग्रीष्मे पञ्च तपाः वीरः वर्षासु आसार षाट्मुनिः ।
आकण्ठ मग्नः शिशिरे उदके स्थण्डिले शयः ॥

शब्दार्थ—

ग्रीष्मे	३.	गर्मियों में	मुनिः ।	२.	मुनि वृत्ति से रहते हुये
पञ्च	४.	पांच अग्नियों का	आकण्ठ	१०.	गले तक
तपाः	५.	सेवन किया	मग्नः	१२.	खड़े रहे (वे प्रति दिन)
वीरः	१.	परम वीर पृथु ने	शिशिरे	६.	जाड़े में
वर्षासु	६.	वर्षा काल में	उदके	११.	जल में
आसार	७.	जल की धारायें	स्थण्डिले	१३.	मिट्टी की वेदी पर
षाट् ।	८.	सहीं (और)	शयः ॥	१४.	सोते थे

श्लोकार्थ—परम वीर पृथु ने मुनि वृत्ति से रहते हुये गर्मियों में पांच अग्नियों का सेवन किया, वर्षा काल में जल की धारायें सहीं और जाड़े में गले तक जल में खड़े रहे। वे प्रतिदिन मिट्टी की वेदी पर सोते थे।

सप्तमः श्लोकः

तितिक्षुर्यतवाग्दान्त ऊर्ध्वरेता जितानिलः ।
आरिराधयिषुः कृष्णमचरत्तप उत्तमम् ॥७॥

पदच्छेद— तितिक्षुः यत वाक् दान्तः ऊर्ध्वरेताः जितअनिलः ।
आरिराधयिषुः कृष्णम् अचरत् तपः उत्तमम् ॥

शब्दार्थ—

तितिक्षुः	१.	शीतादि द्वन्द्वों को सहा	अनिलः ।	६.	प्राण वायु को
यत	४.	संयम किया	अरिराधयिषुः	९.	आराधना करने के लिये
वाक्	३.	वाणी का	कृष्णम्	८.	(इस प्रकार) श्री कृष्ण की
दान्तः	२.	मन का (और)	अचरत्	१२.	अनुष्ठान किया
ऊर्ध्वरेताः	५.	ब्रह्मचर्य रखा (और)	तपः	११.	तप का
जित	७.	अपने अधीन किया	उत्तमम् ॥	१०.	उत्तम

श्लोकार्थ—उन्होंने शीतादि द्वन्द्वों को सहा, मन का और वाणी का संयम किया, ब्रह्मचर्यव्रत रखा और प्राण वायु को अपने अधीन किया इस प्रकार श्री कृष्ण की आराधना करने के लिये उत्तम तप का पालन किया ॥

अष्टमः श्लोकः

तेन क्रमानुसिद्धेन ध्वस्तकर्ममलाशयः ।
प्राणायामैः संनिरुद्धषड्वर्गश्छिन्नबन्धनः ॥८॥

पदच्छेद— तेन क्रम अनुसिद्धेन ध्वस्त कर्म अमल आशयः ।
प्राणायामैः संनिरुद्ध षड् वर्गः छिन्न बन्धनः ॥

शब्दार्थ—

तेन	३.	उस तपस्या से	प्राणायामैः	८.	प्राणायामों के द्वारा
क्रम	१.	इसी क्रम से	सन्निरुद्ध	११.	वश में कर लेने से
अनुसिद्धेन	२.	सिद्धि को प्राप्त	षड्	९.	मन और इन्द्रिय
ध्वस्त	५.	नष्ट हो गये (और)	वर्ग	१०.	समूह को
कर्म	४.	उनके कर्म मल	छिन्नः	१३.	कट गये थे
अमल	७.	शुद्ध हो गया	बन्धनः ॥	१२.	उनके सारे बन्धन
आशयः ।	६.	अन्तः करण			

श्लोकार्थ—इसी क्रम से सिद्धि को प्राप्त उस तपस्या से उनके कर्ममल नष्ट हो गये और अन्तःकरण शुद्ध हो गया । प्राणायामों के द्वारा मन और इन्द्रिय समूह को वश में कर लेने से उनके सारे बन्धन कट गये थे ॥

नवमः श्लोकः

सनत्कुमारो भगवान् यदाहाध्यात्मिकं परम् ।
योगं तेनैव पुरुषमभजत्पुरुषर्षभः ।।९।।

पदच्छेद—

सनत् कुमारः भगवान् यद् आह आध्यात्मिकम् परम् ।
योगम् तेन एव पुरुषम् अभजत् पुरुष ऋषभः ।।

शब्दार्थ—

सनत्कुमारः	२.	सनत्कुमार जी ने	योगम्	६.	ज्ञान की
भगवान्	१.	भगवान्	तेन एव	१०.	उसी के अनुसार
यद्	३.	जिस	पुरुषम्	११.	श्री हरि का
आह	७.	शिक्षा दी थी	अभजत्	१२.	भजन करने लगे
आध्यात्मिकम्	५.	आत्म	पुरुष	८.	पुरुषों में
परम् ।	४.	सर्वोत्तम	ऋषभः ।।	९.	श्रेष्ठ पृथु जी

श्लोकार्थ—भगवान् सनत्कुमार जी ने जिस सर्वोत्तम आत्मज्ञान की शिक्षा दी थी । पुरुषों में श्रेष्ठ पृथु जी उसी के अनुसार श्री हरि का भजन करने लगे ।।

दशमः श्लोकः

भगवद्धर्मिणः साधोः श्रद्धया यततः सदा ।
भक्तिर्भगवति ब्रह्मण्यनन्यविषयाभवत् ।।१०।।

पदच्छेद—

भगवद् धर्मिणः साधोः श्रद्धया यततः सदा ।
भक्तिःभगवति ब्रह्मणि अनन्य विषया अभवत् ।।

शब्दार्थ—

भगवद्	३.	भगवान् के	भक्तिः	१०.	भक्ति
धर्मिणः	४.	भक्त	भगवति	७.	परमात्मा के प्रति
साधोः	५.	महात्मा (पृथु में)	ब्रह्मणि	६.	पर ब्रह्म
श्रद्धया	१.	श्रद्धा पूर्वक	अनन्यविषया	९.	अनन्य
यततः	२.	प्रयत्न करने वाले (एवं	अभवत् ।।	११.	हो गई
सदा ।	८.	निरन्तर			

श्लोकार्थ—श्रद्धा पूर्वक प्रयत्न करने वाले एवं भगवान् के भक्त महात्मा पृथु में पर ब्रह्म परमात्मा के प्रति निरन्तर अनन्य भक्ति हो गई ।।

एकादशः श्लोकः

तस्यानया भगवतः परिकर्मशुद्धसत्त्वात्मनस्तदनु संस्मरणानुपूर्व्या ।
ज्ञानं विरक्तिमदभून्निशितेन येन चिच्छेद संशयपदं निजजीवकोशम् ॥११॥

पदच्छेद—तस्य अनया भगवतः परिकर्म शुद्ध सत्त्व आत्मनः तदनु संस्मरण अनुपूर्व्या ।
ज्ञानम् विरक्तिमत् अभूत् निशितेन येन, चिच्छेद संशय पदम् निज जीव कोशम् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	३.	उनका	ज्ञानम्	१२.	ज्ञान
अनया	२.	इस भक्ति के द्वारा	विरक्तिमत्	११.	वैराग्य के सहित
भगवतः	१.	श्री हरि की	अभूत्	१३.	उत्पन्न हो गया
परिकर्म	५	कर्मों से	निशितेन	१५.	तीक्ष्ण ज्ञान से
शुद्ध	६.	पवित्र (और)	येन	१४.	जिस
सत्त्व	७.	सत्त्वगुणी हो गया	चिच्छेद	२०.	नष्ट कर दिया
आत्मनः	४.	अन्तःकरण	संशय	१६.	संकल्प-विकल्प
तदनु	८.	उसके पश्चात्	पदम्	१७.	करने वाले
संस्मरण	९.	स्मरण के	निज	१८.	अपने
अनुपूर्व्या ।	१०.	प्रभाव से	जीवकोशम् ।	१९.	अहंकार को

श्लोकार्थ—श्री हरि की इस भक्ति के द्वारा उनका अन्तःकरण कर्मों से पवित्र और सत्त्वगुणी हो गया । उसके पश्चात् स्मरण के प्रभाव से वैराग्य के सहित ज्ञान उत्पन्न हो गया । जिस तीक्ष्ण ज्ञान से संकल्प-विकल्प करने वाले अपने अहंकार को नष्ट कर दिया ।

द्वादशः श्लोकः

छिन्नान्यधीरधिगतात्मगतिर्निरीहस्तत्तत्यजेऽच्छिनदिदं वयुनेन येन ।
तावन्न योगगतिभिर्यतिरप्रमत्तो यावद्गदाग्रजकथासु रतिं न कुर्यात् ॥१२॥

पदच्छेद—छिन्न अन्य धीः अधिगत आत्मगतिः निरीह; तत् तत्यजे अच्छिनत् इदम् वयुनेन येन ।
तावत् न योग गतिभिः अप्रमत्तः यावद्, गदाग्रज कथासु रतिम् न कुर्यात् ॥

शब्दार्थ—

छिन्न	२.	समाप्त हो जाने से (और)	येन ।	७.	जिस
अन्य धीः	१.	देहात्मक बुद्धि के	तावद्	१३.	तब-तक
अधिगतिः	४.	अनुभव कर लेने से	न	१५.	नहीं (हो सकता)
आत्मगतिः	३.	श्री हरि के स्वरूप को	योग, गतिभिः	१२.	योग, साधनों से
निरीह	५	इच्छा रहित होकर (उन्होंने)	यतिः	११.	योगी (पुरुष)
तत् तत्यजे	७.	उस ज्ञान को भी त्याग दिया	अप्रमत्तः	१४.	प्रमाद, रहित
अच्छिनत्	१०.	नष्ट किया था	यावद्, गदाग्रज	१६.	जब-तक वह श्री हरि की
इदम्	९.	इस (देहात्म बुद्धि को)	कथासु, रतिम्	१७.	कथाओं में अनुराग
वयुनेन	८.	ज्ञान से	न, कुर्यात् ॥	१८.	नहीं, करता

श्लोकार्थ—देहात्म बुद्धि के समाप्त हो जाने से और श्री हरि के स्वरूप का अनुभव कर लेने से इच्छा रहित होकर उन्होंने उस ज्ञान को भी त्याग दिया, जिस ज्ञान से इस देहात्म बुद्धि को नष्ट किया था । योगी पुरुष योग साधनों से तब-तक प्रमाद-रहित नहीं हो सकता जब-तक वह श्री हरि की कथाओं में अनुराग नहीं करता ।

त्रयोदशः श्लोकः

एवं स वीरप्रवरः संयोज्यात्मानमात्मनि ।
ब्रह्मभूतो दृढं काले तत्याज स्वां कलेवरम् ॥१३॥

पदच्छेद—

एवम् सः वीर प्रवरः संयोज्य आत्मानम् आत्मनि ।
ब्रह्मभूतः दृढम् काले तत्याज स्वम् कलेवरम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	ब्रह्मभूतः	८.	ब्रह्मभाव को प्राप्त होकर
सः	३.	उन महाराज पृथु ने	दृढम्	७.	दृढतापूर्वक
वीर प्रवरः	६.	वीरों में श्रेष्ठ	काले	११.	समयानुसार
संयोज्य	६.	मिलाकर	तत्याज	१२.	त्याग दिया
आत्मानम्	५.	अपने जीवात्मा को	स्वम्	८.	अपना
आत्मनि ।	४.	परमात्मा में	कलेवरम् ॥	१०.	शरीर

श्लोकार्थ—इस प्रकार वीरों में श्रेष्ठ उन महाराज पृथु ने अपने जीवात्मा को परमात्मा में मिलाकर दृढ़ता पूर्वक ब्रह्मभाव को प्राप्त होकर अपना शरीर त्याग दिया ॥

चतुर्दशः श्लोकः

सम्पीड्य पायुं पार्ष्णिभ्यां वायुमुत्सारयञ्छनैः ।
नाभ्यां कोष्ठेष्ववस्थाप्य हृदुरःकण्ठशीर्षणि ॥१४॥

पदच्छेद—

सम्पीड्य पायुम् पार्ष्णिभ्याम् वायुम् उत्सारयन् शनैः ।
नाभ्याम् कोष्ठेषु अवस्थाप्य हृद् उरः कण्ठ शीर्षणि ॥

शब्दार्थ—

सम्पीड्य	३.	दबाकर	नाभ्याम्	८.	नाभि
पायुम्	२.	गुदा को	कोष्ठेषु	५.	मूलाधार से
पार्ष्णिभ्याम्	१.	दोनों एड़ियों से	अवस्थाप्य	१०.	स्थित किया
वायुम्	४.	प्राण वायु को	हृद् उरः	६.	हृदय, वक्षः स्थल (और)
उत्सारयन्	९.	ऊपर उठाते हुये (उसे)	कण्ठ	१०.	कण्ठ मार्ग से
शनैः ।	६.	धीरे-धीरे	शीर्षणि ॥	११.	मस्तक में

श्लोकार्थ—दोनों एड़ियों में गुदा को दबाकर प्राण वायु को मूलाधार से धीरे-धीरे ऊपर उठाते हुये उसे नाभि, हृदय, वक्षः स्थल और कण्ठ मार्ग से मस्तक में स्थित किया ।

पञ्चदशः श्लोकः

उत्सर्पयंस्तु तं मूर्ध्नि क्रमेणावेश्य निःस्पृहः।
वायुं वायौ क्षितौ कायं तेजस्तेजस्ययूयुजत् ॥१५॥

पदच्छेद— उपसर्पयन् तु तम् मूर्ध्नि क्रमेण आवेश्य निः स्पृहः।
वायुम् वायोः क्षितौ कायम् तेजः तेजसि अयूयुजत् ॥

शब्दार्थ—

उत्सर्पयन्	४.	ऊपर उठाते हुये	वायुम्	८	प्राण वायु को
तु	१.	तदनन्तर (उन्होंने)	वायौ	६.	वायु में
तम्	२.	उस प्राण वायु को	क्षितौ	११.	पृथ्वी में (और)
मूर्ध्नि	५.	ब्रह्मरन्ध्र में	कायम्	१०.	शरीर को
क्रमेण	३.	क्रमशः	तेजः	१२.	तेज को
आवेश्य	६.	स्थापित किया (और)	तेजसि	१३.	तेज में
निः स्पृहः।	७.	इच्छारहित होकर	अयूयुजत् ॥	१४.	मिला दिया

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन्होंने उस प्राणवायु को क्रमशः ऊपर उठाते हुये ब्रह्मरन्ध्र में स्थापित किया और इच्छा रहित होकर प्राण वायु को वायु में, शरीर को पृथ्वी में और तेज को तेज में मिला दिया ॥

षोडशः श्लोकः

खान्याकाशे द्रवं तोये यथास्थानं विभागशः।
क्षितिमम्भसि तत्तेजस्यदो वायौ नभस्यमुम् ॥१६॥

पदच्छेद— खानि आकाशे द्रवम् तोये यथा स्थानम् विभागशः।
क्षितिम् अम्भसि तत् तेजसि अदः वायौ नभसि अमुम् ॥

शब्दार्थ—

खानि	४.	हृदयाकाश को	क्षितिम्	८.	तत्पश्चात् पृथ्वी को
आकाशे	५.	महाकाश में (और)	अम्भसि	६.	जल में
द्रवम्	६.	जल को	तत्	१०.	उस जल को
तोये	७.	जल में मिला दिया	तेजसि	११.	तेज में
यथा	२.	अनुसार	अदः	१२.	उस तेज को
स्थानम्	१.	(उन्होंने) स्थिति के	वायौ	१३.	वायु में (और)
विभागशः।	३.	विभाग करके	नभसि	१५.	आकाश में (लीन कर दिया)
			अमुम् ॥	१४.	उस वायु को

श्लोकार्थ—उन्होंने स्थिति के अनुसार विभाग करके हृदयाकाश को महाकाश में और जल को जल में मिला दिया। तत्पश्चात् पृथ्वी को जल में, उस जल को तेज में, उस तेज को वायु में, उस वायु को आकाश में मिला दिया ॥

सप्तदशः श्लोकः

इन्द्रियेषु मनस्तानि तन्मात्रेषु यथोद्भवम् ।
भूतादिनामून्युत्कृष्य महत्यात्मनि सन्दधे ।।१७।।

पदच्छेद— इन्द्रियेषु मनः तानि तन्मात्रेषु यथा उद्भवम् ।
भूतादिना अमूनि उत्कृष्य महति आत्मनि सन्दधे ।।

शब्दार्थ—

इन्द्रियेषु	४.	इन्द्रियों में	भूतादिना	८.	अहंकार के द्वारा
मनः	३.	मन को	अमूनि	७.	उन तन्मात्राओं को
तानि	५.	उन इन्द्रियों को	उत्कृष्य	९.	ऊपर उठाकर
तन्मात्रेषु	६.	सूक्ष्म तन्मात्राओं (तथा)	महति	१०.	महत्
यथा	२.	अनुसार	आत्मनि	११.	तत्त्व
अभवम् ।	१.	(उन्होंने) उत्पत्ति के	सन्दधे ।।	१२.	लीन किया

श्लोकार्थ—उन्होंने उत्पत्ति के अनुसार मन को इन्द्रियों में, उन इन्द्रियों को सूक्ष्म तन्मात्राओं में तथा उन तन्मात्राओं को अहंकार के द्वारा ऊपर उठाकर महत्तत्त्व में लीन किया ।।

अष्टादशः श्लोकः

तं सर्वगुणविन्यासं जीवे मायामये न्यधात् ।
तं चानुशयमात्मस्थमसावनुशयी पुमान् ।
ज्ञानवैराग्यवीर्येण स्वरूपस्थोऽजहात्प्रभुः ।।१८।।

पदच्छेद— तम् सर्वगुण विन्यासम् जीवे माया मये न्यधात् ।
तम् च अनुशयम् आत्मस्थम् असौ अनुशयी पुमान् ।
ज्ञानवैराग्य वीर्येण स्वरूपस्थः अजहात् प्रभुः ।।

शब्दार्थ—

तम्	५.	उस महत्तत्त्व को	आत्मस्थम्	१५.	आत्मा में स्थित
सर्वगुण	३.	सभी गुणों के	असौ	२.	उन्होंने
विन्यासम्	४.	उत्पत्ति स्थान	अनुशयी	१.	अहंकार में स्थित होकर
जीवे	७.	जीवात्मा में	पुमान्	१४.	पुरुष होने से
मायामये	६.	माया से निर्मित	ज्ञान वैराग्य	१०.	ज्ञान और वैराग्य के
न्यधात् ।	८.	लीन किया	वीर्येण	११.	प्रभाव से
तम्	१७.	उस जीव को	स्वरूपस्थः	१२.	आत्मा में स्थित होकर
च	९.	तदनन्तर	अजहात्	१८.	त्याग दिया
अनुशयम्	१६.	अहंकार रूप	प्रभुः ।।	१३.	समर्थ

श्लोकार्थ—अहंकार में स्थित उन्होंने सभी गुणों के उत्पत्ति स्थान उस महत्तत्त्व को माया से निर्मित जीवात्मा में लीन किया । तदनन्तर ज्ञान और वैराग्य के प्रभाव से आत्मा में स्थित होकर समर्थ पुरुष होने से आत्मा स्थित अहंकार रूप उस जीव को त्याग दिया ।।

एकोनविंशः श्लोकः

अर्चिर्नाम महाराज्ञी तत्पत्न्यनुगता वनम् ।
सुकुमार्यतदर्हा च यत्पद्भ्यां स्पर्शनं भुवः ॥१९॥

पदच्छेद—

अर्चिः नाम महाराज्ञी तत् पत्नी अनुगता वनम् ।
सुकुमारी अतदर्हा च यत् पद्भ्याम् स्पर्शनम् भुवः ॥

शब्दार्थ—

अर्चिः	३.	अर्चि	सुकुमारी	८.	वे बड़ी कोमल थीं
नाम	४.	नाम की	अतदर्हा	१४.	योग्य नहीं था
महाराज्ञी	५.	महारानी	च	१३.	उनके
तत्	१.	उन महाराज पृथु की	यत्	९.	क्योंकि
पत्नी	२.	भार्या	पद्भ्याम्	१०.	पैरों से
अनुगता	७.	उनके साथ गई थीं	स्पर्शनम्	१२.	स्पर्श (भी)
वनम् ।	६.	वन में	भुवः ॥	११.	भूमि का

श्लोकार्थ—उन महाराज पृथु की भार्या अर्चि नाम की महारानी वन में उनके साथ गई थीं । वे बड़ी कोमल थीं क्योंकि पैरों से भूमि का स्पर्श भी उनके योग्य नहीं था ॥

विंशः श्लोकः

अतीव भर्तुर्व्रतधर्मनिष्ठया शुश्रूषया चार्षदेहयात्रया ।
नाविन्दतार्तिं परिकर्शितापि सा प्रेयस्करस्पर्शनमाननिर्वृतिः ॥२०॥

पदच्छेद—

अतीव भर्तुः व्रत धर्म निष्ठया शुश्रूषया च आर्ष देह यात्रया ।
न अविन्दत आर्तिम् परिकर्शिता अपि सा प्रेयस्कर स्पर्शनमान निवृत्ति ॥

शब्दार्थ—

अतीव	५.	तथा अत्यन्त	न	१७.	नहीं
भर्तुः	१.	अपने पति के	अविन्दत	१८.	अनुभव किया
व्रत	२.	व्रत (और)	आर्तिम्	१६.	कष्ट का
धर्म	३.	नियमों का	परिकर्शिता	१०.	बहुत दुर्बल हो जाने पर
निष्ठया,	४.	पालन करने से	अपि	११.	भी
शुश्रूषया	२.	सेवा से	सा,	१२.	उन्होंने
च	७.	और	प्रेयस्कर	१३	प्रिय पति के, हाथ के
आर्ष	८.	मुनियों के समान	स्पर्शन	१४.	स्पर्श का
देह यात्रया ।	९.	जीवन, निर्वाह करने से	मान, निवृत्तिः॥	१५	सम्मान, पाकर

श्लोकार्थ—अपने पति के व्रत और नियमों का पालन करने से तथा अत्यन्त सेवा और मुनियों के समान जीवन निर्वाह करने से बहुत दुर्बल हो जाने पर भी उन्होंने प्रियतम पति के हाथ के स्पर्श का सम्मान पाकर कष्ट का अनुभव नहीं किया ॥

एकविंशः श्लोकः

देहं विपन्नाखिलचेतनादिकं पत्युः पृथिव्या दयितस्य चात्मनः ।
आलक्ष्य किञ्चिच्च विलप्य सा सती चितामथारोपयदद्रिसानुनि ॥२१॥

पदच्छेद—देहम् विपन्न अखिल चेतना आदिकम् पत्युः पृथिव्याः दयितस्य च आत्मनः ।
आलक्ष्य किञ्चित् च विलप्य सा सती चिताम् अथ आरोपयत् अद्रि सानुनि ॥

शब्दार्थ—

देहम्	५.	शरीर को	आलक्ष्य	१०.	देखकर
विपन्न	६.	रहित	किञ्चित्	११.	कुछ समय तक
अखिल	८.	सम्पूर्ण धर्मों से	च	१२.	पहले
चेतना	६.	चेतना	विलप्य	१३.	विलाप किया
आदिकम्	७.	इत्यादि जीव के	सा सती	१५.	उस पतिव्रता ने
पत्युः	२	स्वामी	चिताम्	१७.	चिता में (उसे)
पृथिव्याः	१.	पृथ्वी के	अथ	१४	तदनन्तर
दयितस्य	४.	प्रियतम (महाराज पृथु के)	आरोपयत्	१८.	रख दिया
च आत्मनः ।	३.	और अपने	अद्रि सानुनि ॥	१६.	मंदराचल पर्वत के शिखर पर निर्मित

श्लोकार्थ—पृथ्वी के स्वामी और अपने प्रियतम महाराज पृथु के शरीर को चेतना इत्यादि जीव के सम्पूर्ण धर्मों से रहित देखकर कुछ समय तक पहले विलाप किया । तदनन्तर उस पतिव्रता ने मंदराचल पर्वत के शिखर पर निर्मित चिता में उसे रख दिया ॥

द्वाविंशः श्लोकः

विधाय कृत्यं ह्रदिनीजलाप्लुता दत्त्वोदकं भर्तुरुदारकर्मणः ।
नत्वा दिविस्थांस्त्रिदशांस्त्रिः परीत्य विवेश वह्निं ध्यायती भर्तृपादौ ॥२२॥

पदच्छेद—विधाय कृत्यम् ह्रदिनी जल आप्लुता दत्त्वा उदकम् भर्तुः उदार कर्मणः ।
नत्वा दिविस्थान् त्रिदशान् त्रिः परीत्य विवेश वह्निम् ध्यायती भर्तृः पादौ ॥

शब्दार्थ—

विधाय	२.	सम्पन्न करके	नत्वा	११.	नमस्कार किया (तदनन्तर)
कृत्यम्	१.	समयोचित कर्म	दिविस्थान	६.	स्वर्ग में रहने वाले
ह्रदिनी	३.	नदी के	त्रिदशान्	१०.	देवताओं को
जल आप्लुता	४.	जल में स्नान किया (तथा)	त्रिः परीत्य	१२.	चिता की तीन बार परिक्रमा करके
दत्त्वा	८.	देकर	विवेश	१६.	प्रवेश किया
उदकम्	७.	जलाञ्जलि	वह्निम्	१५.	चिता की अग्नि में
भर्तुः	६.	अपने पति को	ध्यायती	१४.	ध्यान करती हुई
उदार कर्मणः ।	५.	परम पराक्रमी	भर्तृः पादौ ॥	१३.	अपने पति के चरणों का

श्लोकार्थ—समयोचित कर्म सम्पन्न करके नदी के जल में स्नान किया, तथा परम पराक्रमी अपने पति को जलाञ्जलि देकर स्वर्ग में रहने वाले देवताओं को नमस्कार किया । तदनन्तर चिता की तीन बार परिक्रमा करके अपने पति के चरणों का ध्यान करती हुई चिता की अग्नि में प्रवेश किया ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

विलोक्यानुगतां साध्वीं पृथुं वीरवरं पतिम् ।
तुष्टुवुर्वरदा देवैर्देवपत्न्यः सहस्रशः ॥२३॥

पदच्छेद—

विलोक्य अनुगताम् साध्वीम् पृथुम् वीर वरम् पतिम् ।
तुष्टुवुः वरदाः देवैः देव पत्न्यः सहस्रशः ॥

शब्दार्थ—

विलोक्य	६.	देखकर	तुष्टुवुः	१२.	उनकी स्तुति करने लगीं
अनुगताम्	४.	साथ जाती हुई	वरदाः	८.	वर दायक
साध्वीम्	५.	सती अर्चि को	देवैः	११.	देवताओं के साथ
पृथुम्	३.	महाराज पृथु के	देव	९.	देवताओं की
वीरवरम्	१.	परम वीर	पत्न्यः	१०.	पत्नियां
पतिम् ।	२.	अपने पति	सहस्रशः ॥	७.	हजारों

श्लोकार्थ—परम वीर अपने पति महाराज पृथु के साथ जाती हुई सती अर्चि को देखकर हजारों वर दायक देवताओं की पत्नियाँ देवताओं के साथ उनकी स्तुति करने लगीं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

कुर्वत्यः कुसुमासारं तस्मिन्मन्दरसानुनि ।
नदत्स्वमरतूर्येषु गृणन्ति स्म परस्परम् ॥२४॥

पदच्छेद—

कुर्वत्यः कुसुम आसारम् तस्मिन् मन्दर सानुनि ।
नदत्सु अमर तूर्येषु गृणन्ति स्म परस्परम् ॥

शब्दार्थ—

कुर्वत्यः	८.	करती हुई (देवपत्नियाँ)	नदत्सु	३.	बजने लगे (और)
कुसुम	६.	पुष्पों की	अमर	१.	देवताओं के
आसारम्	७.	वर्षा	तूर्येषु	२.	बाजे
तस्मिन् मन्दर	४.	उस मन्दरा चल के	गृणन्ति स्म	१०.	(इस प्रकार) कहने लगीं
सानुनि ।	५.	शिखर पर	परस्परम् ॥	९.	आपस में

श्लोकार्थ—उस समय देवताओं के बाजे-बजने लगे और उस मन्दराचल के शिखर पर पुष्पों की वर्षा करती हुई देव पत्नियाँ आपस में इस प्रकार कहने लगीं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

देव्य ऊचुः—अहो इयं वधूर्धन्या या चैवं भूभुजां पतिम् ।
सर्वात्मना पतिं भेजे यज्ञेशं श्रीर्वधूरिव ॥२५॥

पदच्छेद—

अहो इयम् वधूः धन्या या च एवम् भू भुजाम् पतिम् ।
सर्व आत्मना पतिम् भेजे यज्ञेशम् श्रीः वधूः इव ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	अहो !	सर्व	९.	सब
इयम्	२.	यह	आत्मना	१०.	तरह से
वधूः	३.	स्त्री	पतिम्	८.	अपने पति (पृथु की)
धन्या	४.	धन्य है	भेजे	१२.	सेवा की
या, च	५.	जिसने	यज्ञेशम्	१६.	यज्ञेश्वर (श्री हरि की) सेवा करती है
एवम्	११.	इस प्रकार	श्रीः	१५.	लक्ष्मी जी
भू	६.	पृथ्वी के	वधूः	१४.	महारानी
भुजाम् पतिम् ।	७.	राजाओं के स्वामी	इव ॥	१३.	जैसे

श्लोकार्थ—अहो ! यह स्त्री धन्य है, जिसने पृथ्वी के राजाओं के स्वामी अपने पति पृथु की सब तरह से इस प्रकार सेवा की है । जैसे महारानी लक्ष्मी यज्ञेश्वर श्री हरि की सेवा करती हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

सैषा नूनं व्रजत्यूर्ध्वमनु वैन्यं पतिं सती ।
पश्यतास्मानतीत्यार्चिर्दुर्विभाव्येन कर्मणा ॥२६॥

पदच्छेद—

सा एषा नूनम् व्रजति ऊर्ध्वम् अनु वैन्यम् पतिम् सती ।
पश्यत अस्मान् अतीत्य अर्चिः दुर्विभाव्येन कर्मणा ॥

शब्दार्थ—

सा एषा	२.	वही, यह	सती ।	३.	पतिव्रता
नूनम्	१२.	अवश्य	पश्यत	१.	देखो
व्रजति	१४.	जा रही है	अस्मान्	७.	हमें
ऊर्ध्वम्	१३.	ऊर्ध्व लोक को	अतीत्य	८.	लांघकर
अनु	११.	पीछे-पीछे	अर्चिः	४.	अर्चि
वैन्यम्	१०.	महाराज पृथु के	दुर्विभाव्येन	५.	अपने, अचिन्त्य
पतिम्	९.	अपने पति	कर्मणा ॥	६.	कर्मों के प्रभाव

श्लोकार्थ—देखो, वही यह पतिव्रता अर्चि अपने अचिन्त्य कर्मों के प्रभाव से हमें लांघकर अपने पति महाराज पृथु के पीछे-पीछे अवश्य ऊर्ध्व लोक को जा रही है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तेषां दुरापं किं त्वन्यन्मर्त्यानां भगवत्पदम्
भुवि लोलायुषो ये वै नैष्कर्म्यं साधयन्त्युत ॥२७॥

पदच्छेद—

तेषाम् दुरापम् किम् तु अन्यत् मर्त्यानाम् भगवत् पदम् ।
भुवि लोल आयुषः ये वै नैष्कर्म्यम् साधयन्ति उत ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	११.	उन	भुवि	१.	पृथ्वी पर
दुरापम्	१५.	दुर्लभ	लोल	२.	कम
किम्	१४.	क्या वस्तु	आयुषः	३.	आयुवाले
तु	१६.	हो सकती है	ये	४.	जो लोग
अन्यत्	१३.	दूसरी	वै	५.	निश्चय पूर्वक
मर्त्यानाम्	१२.	मनुष्यों को	नैष्कर्म्यम्	६.	निष्काम भाव से
भगवत्	७.	भगवान् श्री हरि के	साधयन्ति	९.	साधना करते हैं
पदम् ।	८.	चरण कमल की	उत ॥	१०.	भला

श्लोकार्थ—पृथ्वी पर कम वायु वाले जो लोग निश्चय पूर्वक निष्काम भाव से भगवान् श्री हरि के चरण कमलों की साधना करते हैं; भला उन मनुष्यों को दूसरी क्या वस्तु दुर्लभ हो सकती है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

स वञ्चितो बतात्मध्रुक् कृच्छ्रेण महता भुवि ।
लब्ध्वापवर्ग्यं मानुष्यं विषयेषु विषज्जते ॥२८॥

पदच्छेद—

सः वञ्चितः बत आत्मध्रुक् कृच्छ्रेण महता भुविः ।
लब्ध्वा अपवर्ग्यम् मानुष्यम् विषयेषु विषज्जते ॥

शब्दार्थ—

सः	१०.	वह	भुवि ।	१.	भू लोक में (जो)
वञ्चितः	११.	ठगा गया है	लब्ध्वा	६.	पाकर भी
बत	९.	खेद है कि	अपवर्ग्यम्	४.	मोक्ष प्रद
आत्मध्रुक्	१२.	आत्मघाती	मानुष्यम्	५.	मनुष्य शरीर
कृच्छ्रेण	३.	कष्ट से	विषयेषु	७.	शब्दादि विषयों में
महता	२.	बड़े	विषज्जते ॥	८.	आसक्त रहता है

श्लोकार्थ—भूलोक में जो बड़े कष्ट से मोक्षप्रद मनुष्य शरीर पाकर भी शब्दादि विषयों में असक्त रहते हैं । खेद है कि वह आत्मघाती ठगा गया ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

मैत्रय उवाच— स्तुवतीष्वमरस्त्रीषु पतिलोकं गता वधूः।
यं वा आत्मविदां धुर्यो वैन्यः प्रापाच्युताशयः ॥२६॥

पदच्छेद—

स्तुवतीषु अमर स्त्रीषु पति लोकम् गता वधूः।
यम् वा आत्म विदाम् धुर्यो वैन्यः प्राप अच्युत आशयः ॥

शब्दार्थ—

स्तुवतीषु	३.	स्तुति कर रहीं थीं	यम्	६.	जिस लोक में
अमर	१.	(जिस समय) देवताओं की	वा आत्मविदाम्	४.	उसी समय आत्म ज्ञानियों में
स्त्रीषु	२.	पत्नियाँ	धुर्यो	५.	प्रधान (तथा)
पति	१२.	अपने पति के	वैन्यः	८.	महाराज पृथु
लोकम्	१३.	लोक में	प्राप	१०.	गये
गता	१४.	चली गई	अच्युत	६.	भगवान् श्री हरि को
वधूः।	११.	महारानी अर्चि (भी)	आशयः ॥	७.	अन्तः करण में रखने वाले

श्लोकार्थ—जिस समय देवताओं की पत्नियाँ स्तुति कर रहीं थी उसी समय आत्म ज्ञानियों में प्रधान तथा भगवान् श्री हरि को अन्तःकरण में रखने वाले महाराज पृथु जिस लोक में गये; महारानी अर्चि भी अपने पति के लोक में चली गईं ॥

त्रिंशः श्लोकः

इत्थंभूतानुभावोऽसौ पृथुः स भगवत्तमः।
कीर्तितं तस्य चरितमुद्दामचरितस्य ते ॥३०॥

पदच्छेद—

इत्थंभूत अनुभावः असौ पृथुः सः भगवत्तमः।
कीर्तितम् तस्य चरितम् उद्दाम चरितस्य ते ॥

शब्दार्थ—

इत्थंभूत	३.	इस प्रकार के	कीर्तितम्	१२.	सुना दी
अनुभावः	४.	कर्म योगी	तस्य	६.	उन महाराज की
असौ	१.	वे	चरितम्	१०.	कथा
पृथुः	२.	महाराज पृथु	उद्दाम	७.	उदार
सः	५.	और	चरितस्य	८.	चरित वाले
भगवत्तमः।	६.	परम भागवत (थे) (एवम्)	ते ॥	११.	तुम्हें

श्लोकार्थ—वे महाराज पृथु इस प्रकार के कर्म योगी और परम भागवत थे। उदार चरित वाले उन महाराज की कथा तुम्हें सुना दी ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

य इदं सुमहत्पुण्यं श्रद्धयावहितः पठेत् ।
श्रावयेच्छृणुयाद्वापि स पृथोः पदवीमियात् ॥३१॥

पदच्छेद—

यः इदम् सुमहत् पुण्यम् श्रद्धया वहितम् पठेत् ।
श्रावयेत् शृणुयात् वा अपि सः पृथोः पदवीम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

यः	१. जो (मनुष्य)		श्रावयेत्	१०. सुनाता है	
इदम्	२. इस		शृणुयात्	८. सुनता	
सुमहत्	३. परम		वा अपि	९. अथवा	
पुण्यम्	४. पवित्र (कथा) को		सः	११. वह	
श्रद्धया	५. श्रद्धा पूर्वक		पृथोः	१२. महाराज पृथु के	
अवहितः	६. सावधान होकर		पदवीम्	१३. परमधाम को	
पठेत् ।	७. पढ़ता है		इयात् ॥	१४. प्राप्त करता है	

श्लोकार्थ—जो मनुष्य इस परम पवित्र कथा को श्रद्धा पूर्वक सावधान होकर पढ़ता है सुनता अथवा सुनाता है वह महाराज पृथु के परमधाम को प्राप्त करता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चस्वी राजन्यो जगतीपतिः ।
वैश्यः पठन् विट्पतिः स्याच्छूद्रः सत्तमतामियात् ॥३२॥

पदच्छेद—

ब्राह्मणः ब्रह्म वर्चस्वी राजन्यः जगती पतिः ।
वैश्यः पठन् विट्पतिः स्यात् शूद्रः सत्तमताम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मणः	२. ब्राह्मण	वैश्यः	८. वैश्य
ब्रह्म	३. ब्रह्म	पठन्	१. सकाम पाठ करने से
वर्चस्वी	४. तेजस्वी	विट्पतिः	९. व्यापारियों में प्रधान
राजन्यः	५. क्षत्रिय	स्यात्	१०. हो जाता है
जगती	६. पृथ्वी का	शूद्रः सत्तमताम्	११. शूद्र में, साधुता
पतिः ।	७. राजा (और)	इयात् ॥	१२. आ जाती है

श्लोकार्थ—सकाम पाठ करने से ब्राह्मण ब्रह्म तेजस्वी, क्षत्रिय पृथ्वी का राजा और वैश्य व्यापारियों में प्रधान हो जाता है । शूद्र में साधुता आ जाती है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

त्रिकृत्व इदमाकर्ण्य नरो नार्यथवाऽऽदृता ।
अप्रजः सुप्रजतमो निर्धनो धनवत्तमः ॥३३॥

पदच्छेद—

त्रिकृत्वः इदम् आकर्ण्य नरः नारी अथवा आदृता ।
अप्रजः सुप्रजातमः निर्धनः धनवत्तमः ॥

शब्दार्थ—

त्रिकृत्वः	६.	तीन बार
इदम्	४.	इसे
आकर्ण्य	७.	सुनता है
नरः	१.	पुरुष
नारी	३.	स्त्री (जो)
अथवा	२.	अथवा
आदृता ।	५.	आदर पूर्वक
अप्रजः	८.	(वह) सन्तान रहित
सुप्रजातमः	९.	(हो तो) सुपुत्र और
निर्धनः	१०.	धनहीन (हो तो)
धनवत्तमः ॥	११.	महाधनी (हो जाता है)

श्लोकार्थ—पुरुष अथवा स्त्री जो इसे आदर पूर्वक तीन बार सुनाता है वह सन्तान रहित हो तो सुपुत्र और धनहीन हो तो महाधनी हो जाता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अस्पष्टकीर्तिः सुयशा मूर्खो भवति पण्डितः ।
इदं स्वस्त्ययनं पुंसाममङ्गल्यनिवारणम् ॥३४॥

पदच्छेद —

अस्पष्ट कीर्तिः सुयशाः मूर्खः भवति पण्डितः ।
इदम् स्वस्त्ययनम् पुंसाम् अमङ्गल्य निवारणम् ॥

शब्दार्थ—

अस्पष्ट	२.	हीन (मनुष्य)
कीर्तिः	१.	कीर्ति
सुयशाः	३.	यशस्वी (और)
मूर्खः	४.	मूर्ख
भवति	६.	हो जाता है
पण्डितः ।	५	चतुर
इदम्	७.	यह चरित्र
स्वस्त्ययनम्	९.	मंगल भवन (और)
पुंसाम्	८.	मनुष्य मात्र का
अमङ्गल्य	१०.	अमंगल
निवारणम् ॥	११.	हारी है

श्लोकार्थ—कीर्ति हीन मनुष्य यशस्वी और मूर्ख चतुर हो जाता है । यह चरित्र मनुष्य मात्र का अमंगल भवन और अमंगल हारी है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वर्ग्यं कलिमलापहम् ।
धर्मार्थकाममोक्षाणां सम्यक् सिद्धिमभीप्सुभिः ।
श्रद्धयैतदनुश्राव्यं चतुर्णां कारणं परम् ॥३५॥

पदच्छेद— धन्यम् यशस्यम् आयुष्यम् स्वर्ग्यम् कलिमल अपहम् ।
धर्म अर्थ काम मोक्षाणाम् सम्यक् सिद्धिम् अभीप्सुभिः ।
श्रद्धया एतद् अनुश्राव्यम् चतुर्णाम् कारणम् परम् ॥

शब्दार्थ—

धन्यम् ।	१.	(यह) धन	सम्यक्	१०.	भली भांति
यशस्यम्	२.	यश	सिद्धिम्	११.	प्राप्ति
आयुष्यम्	३.	आयु (और)	अभीप्सुभिः	१२.	चाहने वाला (पुरुष)
स्वर्ग्यम्	४.	स्वर्ग प्रदाता (तथा)	श्रद्धया	१४.	श्रद्धा के साथ
कलि	५.	कलियुग के	एतद्	१३.	इसका
मल	६.	दोषों का	अनुश्राव्यम्	१५.	श्रवण करे (क्योंकि)
अपहम् ।	७.	नाशक है (अतः)	चतुर्णाम्	१६.	पुरुषार्थ की प्राप्ति में
धर्म अर्थ	८.	धर्म अर्थ	कारणम्	१८.	सहायक है
काम मोक्षाणाम्	९.	काम और मोक्ष की	परम् ॥	१७.	(यह) बड़ा

श्लोकार्थ—यह धन, यश, आयु और स्वर्ग प्रदाता तथा कलियुग के दोषों का नाशक है । अतः धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की भली भांति प्राप्ति चाहने वाला पुरुष इसका श्रद्धा के साथ श्रवण करे । क्योंकि पुरुषार्थ की प्राप्ति में यह बड़ा सहायक है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

विजयाभिमुखो राजा श्रुत्वैतदभियाति यान् ।
बलिं तस्मै हरन्त्यग्रे राजानः पृथवे यथा ॥३६॥

पदच्छेद— विजय अभिमुखः राजा श्रुत्वा एतद् अभियाति यान् ।
बलिम् तस्मै हरन्ति अग्रे राजानः पृथवे यथा ॥

शब्दार्थ—

विजय	२.	विजय की	बलिम्	११.	भेंट
अभिमुखः	३.	इच्छा से	तस्मै	१०.	उसे (उसी प्रकार)
राजा	१.	(जो) राजा	हरन्ति	१२.	अर्पित करते हैं
श्रुत्वा	५.	श्रवण करके	अग्रे	९.	पहले ही
एतद्	४.	इस चरित का	राजानः	८.	वे राजा गण
अभियाति	७.	चढ़ाई करता है	पृथवे	१४.	पृथु को (करते थे)
यान् ।	६.	जिन राजाओं पर	यथा ॥	१३.	जैसे

श्लोकार्थ—जो राजा विजय की इच्छा से इस चरित का श्रवण करके जिन राजाओं पर चढ़ाई करता है; वे राजागण पहले ही उसे उसी प्रकार भेंट अर्पित करते हैं जैसे पृथु को करते थे ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

मुक्तान्यसङ्गो भगवत्यमलां भक्तिमुद्वहन् ।
वैन्यस्य चरितं पुण्यं शृणुयाच्छ्रावयेत्पठेत् ॥३७॥

पदच्छेद—

मुक्त अन्य सङ्गः भगवति अमलाम् भक्तिम् उद्वहन् ।
वैन्यस्य चरितम् पुण्यम् शृणुयात् श्रावयेत् पठेत् ॥

शब्दार्थ—

मुक्त	३.	छोड़कर	वैन्यस्य	७.	महाराज पृथु के
अन्य	१.	दूसरी सब तरह की	चरितम्	६.	कथानक को
सङ्गः	२.	आसक्ति	पुण्यम्	८.	इस निर्मल
भगवति	४.	भगवान् में	शृणुयात्	१०.	सुनना
अमलाम् भक्तिम्	५.	निष्काम भक्ति	श्रावयेत्	११.	सुनाना (और)
उद्वहन् ।	६.	रखते हुये	पठेत्	१२.	पढ़ना चाहिये

श्लोकार्थ—दूसरी सब तरह की आसक्ति छोड़कर भगवान् में निष्काम भक्ति रखते हुये महाराज पृथु के इस निर्मल कथानक को सुनना, सुनाना और पढ़ना चाहिये ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

वैचित्रवीर्याभिहितं महन्माहात्म्यसूचकम् ।
अस्मिन् कृतमतिर्मर्त्यः पार्थवीं गतिमाप्नुयात् ॥३८॥

पदच्छेद—

वैचित्र वीर्य अभिहितम् महत् माहात्म्य सूचकम् ।
अस्मिन् कृतमतिः मर्त्यः पार्थवीम् गतिम् आप्नुयात् ॥

शब्दार्थ—

वैचित्र वीर्य	१.	हे विदुर जी	कृत	८.	करने वाला
अभिहितम्	५.	(तुम्हें) सुना दिया	मतिः	७.	प्रेम
महत्	२.	भगवान् की	मर्त्यः	९.	प्राणी
माहात्म्य	३.	महिमा	पार्थवीम्	१०.	पृथु की सी
सूचकम् ।	४.	बताने वाला (चरित्र)	गतिम्	११.	गति
अस्मिन्	६.	इसमें	आप्नुयात् ॥	१२.	पाता है

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! भगवान् की महिमा बताने वाला चरित्र तुम्हें सुना दिया । इसमें प्रेम करने वाला प्राणी पृथु की सी गति पाता है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

अनुदिनमिदमादरेण शृण्वन् पृथुचरितं प्रथयन् विमुक्तसङ्गः ।
भगवति भवसिन्धुपोतपादे स च निपुणां लभते रतिं मनुष्यः ॥३९॥

पदच्छेद—

अनुदिनम् इदम् आदरेण शृण्वन् पृथु चरितम् प्रथयन् विमुक्त सङ्गः ।
भगवति भव सिन्धु पोतपादे सः च निपुणम् लभते रतिम् मनुष्यः ॥

शब्दार्थ—

अनुदिनम्	७.	प्रतिदिन	भव	१३.	संसार
इदम्	४.	इस	सिन्धु	१४.	सागर की
आदरेण	८.	आदर पूर्वक	पोत	१५.	नौका
शृण्वन्	९.	सुनता है	पादे	१७.	चरणों में
पृथु	५.	महाराज पृथु की	सः	१२.	वह
चरितम्	६.	कथा को	च	१०.	और (उसका)
प्रथयन्	११.	कीर्तन करता है	निपुणम्	१८.	सुदृढ़
विमुक्त	३	छोड़कर	लभते	२०.	प्राप्त करता है
सङ्गः ।	२.	कामनाओं को	रतिम्	१९.	भक्ति
भगवति	१६.	भगवान् के	मनुष्यः ॥	१.	जो मनुष्य

श्लोकार्थ—जो मनुष्य कामनाओं को छोड़कर इस महाराज पृथु की कथा को प्रतिदिन आदर पूर्वक सुनता है और उसका कीर्तन करता है; वह संसार-सागर की नौका भगवान् के चरणों में सुदृढ़ भक्ति प्राप्त करता है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

चतुर्विंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—विजिताश्वोऽधिराजाऽऽसीत्पृथुपुत्रः पृथुश्रवाः ।
यवीयोभ्योऽददात्काष्ठा भ्रातृभ्यो भ्रातृवत्सलः ॥१॥

पदच्छेद—

विजिताश्वः अधिराजा आसीत् पृथु पुत्रः पृथु श्रवाः ।
यवीयोभ्यः अददात् काष्ठाः भ्रातृभ्यः भ्रातृ वत्सलः ॥

शब्दार्थ—

विजिताश्वः	४.	विजिताश्व	यवीयोभ्यो	९.	अपने छोटे
अधिराजा	५.	राजा	अददात्	१२.	सौंप दिया
आसीत्	६.	हुये	काष्ठाः	११.	चारों दिशाओं का अधिकार
पृथु	१.	महाराज पृथु के	भ्रातृभ्यः	१०.	भाइयों को
पुत्रः	२	पुत्र	भ्रातृ	७.	भाइयों के
पृथु श्रवाः ।	३.	परम यशस्वी	वत्सलः ॥	८.	बड़े प्रेमी (उन्होंने) (थे अतः)

श्लोकार्थ—महाराज पृथु के पुत्र परम यशस्वी विजिताश्व राजा हुये । भाइयों के बड़े प्रेमी थे, अतः उन्होंने अपने छोटे भाइयों को चारों दिशाओं का अधिकार सौंप दिया ॥

द्वितीयः श्लोकः

हर्यक्षायादिशत्प्राचीं धूम्रकेशाय दक्षिणाम् ।
प्रतीचीं वृकसंज्ञाय तुर्यां द्रविणसे विभुः ॥२॥

पदच्छेद—

हर्यक्षाय आदिशत् प्राचीम् धूम्रकेशाय दक्षिणाम् ।
प्रतीचीम् वृक संज्ञाय तूर्याम् द्रविणसे विभुः ॥

शब्दार्थ —

हर्यक्षाय	२.	भाई हर्यक्ष को	प्रतीचीम्	८.	पश्चिम देश (और)
आदिशत्	११.	राज्य दिया	वृक	६.	वृक
प्राचीम्	३.	पूर्व देश	संज्ञाय	७.	नाम के भाई को
धूम्रकेशाय	४.	धूम्रकेश को	तूर्याम्	१०.	उत्तर देश का
दक्षिणाम् ।	५.	दक्षिण देश	द्रविण से	९.	द्रविण को
			विभुः ॥	१.	राजा विजिताश्व ने

श्लोकार्थ—राजा विजिताश्व ने भाई हर्यक्ष को पूर्वदेश, धूम्रकेतु को दक्षिण देश, वृक नाम के भाई को पश्चिम देश और द्रविण को उत्तर देश का राज्य दिया ॥

तृतीयः श्लोकः

अन्तर्धानगतिं शक्राल्लब्ध्वान्तर्धानसंज्ञितः ।
अपत्यत्रयमाधत्त शिखण्डिन्यां सुसम्मतम् ॥३॥

पदच्छेद—

अन्तर्धान गतिम् शक्रात् लब्ध्वा अन्तर्धान संज्ञितः ।
अपत्य त्रयम् आधत्त शिखण्डिन्याम् सु सम्मतम् ॥

शब्दार्थ—

अन्तर्धान	२.	अन्तर्धान होने की	अपत्य	१०.	पुत्र
गतिम्	३.	शक्ति	त्रयम्	९.	तीन
शक्रात्	१.	(उन्होंने) इन्द्र से	आधत्त	११.	हुये थे
लब्ध्वा	४.	पायी थी (अतः)	शिखण्डिन्याम्	७.	अपनी पत्नी शिखण्डिनी से
अन्तर्धान	५.	(उन्हें) अन्तर्धान	सुसम्मतः ॥	८.	उनके इच्छा से
संज्ञितः ।	६.	कहते थे			

श्लोकार्थ—उन्होंने इन्द्र से अन्तर्धान होने की शक्ति पायी थी; अतः उन्हें अन्तर्धान कहते थे। अपनी पत्नी शिखण्डिनी से उनकी इच्छा से तीन पुत्र हुये थे ॥

चतुर्थः श्लोकः

पावकः पवमानश्च शुचिरित्यग्नयः पुरा ।
वसिष्ठशापादुत्पन्नाः पुनर्योगगतिं गताः ॥४॥

पदच्छेद—

पावकः पवमानः च शुचिः इति अग्नयः पुरा ।
वशिष्ठ शापात् उत्पन्नाः पुनः योग गतिम् गताः ॥

शब्दार्थ—

पावकः	१.	(उनके नाम) पावक	वशिष्ठ	८.	महर्षि वशिष्ठ के
पवमानः	२.	पवमान	शापात्	९.	शाप से (उनके रूप में)
च	३.	और	उत्पन्नाः	१०.	जन्म लिया था
शुचि	४.	शुचि (थे)	पुनः	११.	(वे) फिर
इति	५.	इन नामों के	योग	१२.	योग के प्रभाव से
अग्नयः	६	अग्नियों ने ही	गतिम्	१३.	अपने अग्नि रूप को
पुरा ।	७	पूर्व काल में	गताः ॥	१४.	प्राप्त हो गये

श्लोकार्थ—उनके नाम पावक, पवमान, और शुचि थे; इन नामों के अग्नियों ने ही पूर्वकाल में महर्षि वशिष्ठ के शाप से उनके रूप में जनम लिया था। वे फिर योग के प्रभाव से अपने अग्नि रूप को प्राप्त हो गये ॥

पञ्चमः श्लोकः

अन्तर्धानो नभस्वत्यां हविर्धानमविन्दत ।
य इन्द्रमश्वहर्तारं विद्वानपि न जघ्निवान् ॥५॥

पदच्छेद— अन्तर्धानः नभस्वत्याम् हविर्धानम् अविन्दत ।
यः इन्द्रम् अश्व हर्तारम् विद्वान् अपि न जघ्निवान् ॥

शब्दार्थ—

अन्तर्धानः	९.	(उस) अन्तर्धान को	अश्व	२.	यज्ञीय घोड़े को
नभस्वत्याम्	१०.	नभस्वती नाम की पत्नी से	हर्तारम्	३.	चुराने वाले
हविर्धानम्	११.	हविर्धान नाम का	विद्वान्	५.	पता लग जाने पर
अविन्दत ।	१२.	(पुत्र) प्राप्त हुआ	अपि	६.	(भी) उसका
यः	१.	जिसने अपने पिता के	न	७.	नहीं
इन्द्रम्	४.	इन्द्र का	जघ्निवान् ॥	८.	वध किया था

श्लोकार्थ—जिसने अपने पिता के यज्ञीय घोड़े को चुराने वाले इन्द्र का पता लग जाने पर भी उसका वध नहीं किया था, उस अन्तर्धान को नभस्वती नाम की पत्नी से हविर्धान नाम का पुत्र प्राप्त हुआ ॥

षष्ठः श्लोकः

राज्ञां वृत्तिं करादानदण्डशुल्कादिदारुणाम् ।
मन्यमानो दीर्घसत्रव्याजेन विससर्ज ह ॥६॥

पदच्छेद—

राज्ञाम् वृतिम् कर आदान दण्ड शुल्क आदि दारुणाम् ।
मन्यमानः दीर्घम् सत्र व्याजेन विससर्ज ह ॥

शब्दार्थ—

राज्ञाम्	१२.	राज्य का	दारुणाम्	६.	बहुत कठोर
वृत्तिम्	१३.	शासन कर्म	मन्यमानः	७.	समझ कर
कर	१.	(राजा अन्तर्धान ने) कर	दीर्घम्	९.	दीर्घ कालीन
आदान	२.	लेना	सत्र	१०.	यज्ञ में दीक्षित होने के
दण्ड	३.	दण्ड देना	व्याजेन	११.	बहाने
शुल्क	४.	जुरमाना करना	विससर्ज	१४.	छोड़ दिया था
आदि	५.	इत्यादि कर्मों को	ह ॥	८.	यह प्रसिद्ध है (कि)

श्लोकार्थ—राजा अन्तर्धान ने कर लेना, दण्ड देना, जुरमाना करना, इत्यादि कर्मों को बहुत कठोर समझकर यह प्रसिद्ध है कि दीर्घकालीन यज्ञ में दीक्षित होने के बहाने राज्य का शासन कर्म छोड़ दिया था ॥

सप्तमः श्लोकः

तत्रापि हंसं पुरुषं परमात्मानमात्मदृक् ।
यजंस्तल्लोकतामाप कुशलेन समाधिना ॥७॥

पदच्छेद—

तत्र अपि हंसम् पुरुषम् परमात्मानम् आत्मदृक् ।
यजन् तद् लोकताम् आप कुशलेन समाधिना ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	यज्ञानुष्ठान में	यजन्	७.	आराधना करके
अपि	२.	रहने पर भी	तद्	१०.	उन भगवान् के
हंसम्	४.	परात्पर	लोकताम्	११.	दिव्य लोक को
पुरुषम्	५.	पुरुष	आप	१२.	प्राप्त किया
परमात्मानम्	६.	परमात्मा की	कुशलेन	८.	सुदृढ़
आत्मदृक् ।	३.	आत्मज्ञानी राजा ने	समाधिना ॥	९.	समाधि के द्वारा

श्लोकार्थ—यज्ञानुष्ठान में रहने पर भी आत्मज्ञानी राजा अन्तर्धान ने परात्पर पुरुष परमात्मा की आराधना करके सुदृढ़ समाधि के द्वारा उन भगवान् के दिव्यलोक को प्राप्त किया ॥

अष्टमः श्लोकः

हविर्धानाद्धविर्धानी विदुरासूत षट् सुतान् ।
बर्हिषदं गयं शुक्लं कृष्णं सत्यं जितव्रतम् ॥८॥

पदच्छेद—

हविर्धानात् हविर्धानी विदुर असूत षट् सुतान् ।
बर्हिषदम् गयम् शुक्लम् कृष्णम् सत्यम् जितव्रतम् ॥

शब्दार्थ—

हविर्धानात्	२.	हविर्धान की	बर्हिषदम्	४.	बर्हिषद्
हविर्धानी	३.	पत्नी हविर्धानी ने	गयम्	५.	गय
विदुर	१.	हे विदुर जी	शुक्लम्	६.	शुक्ल
असूत	१२.	उत्पन्न किये	कृष्णम्	७.	कृष्ण
षट्	१०.	छः	सत्यम्	८.	सत्य और
सुतान् ।	११.	पुत्र	जित व्रतम् ॥	९.	जितव्रत नाम के

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! हविर्धान की पत्नी हविर्धानी ने बर्हिषद्, गय, शुक्ल, कृष्ण, सत्य और जितव्रत नाम के छः पुत्र उत्पन्न किये ॥

नवमः श्लोकः

बर्हिषत् सुमहाभागो हविर्धानिः प्रजापतिः ।
क्रियाकाण्डेषु निष्णातो योगेषु च कुरूद्वह ॥९॥

पदच्छेद—

बर्हिषत् सुमहाभागः हविर्धानिः प्रजापतिः ।
क्रिया काण्डेषु निष्णातः योगेषु च कुरूद्वह ॥

शब्दार्थ—

बर्हिषत्	४.	बर्हिषत्	काण्डेषु	७.	काण्ड में
सुमहाभागः	३.	महाभाग	निष्णातः	१०.	कुशल थे
हविर्धानिः	२.	इनमें हविर्धानि के पुत्र	योगेषु	९.	योग के अभ्यास में
प्रजापतिः ।	५.	प्रजापति (हुये)	च	८.	और
क्रिया	६.	(वे) कर्म	कुरूद्वह ॥	१.	कुरुश्रेष्ठ हे विदुर जी

श्लोकार्थ—कुरुश्रेष्ठ हे विदुर जी ! इनमें हविर्धान के पुत्र महाभाग बर्हिषत् प्रजापति हुये । वे कर्म काण्ड और योग के अभ्यास में कुशल थे ॥

दशमः श्लोकः

यस्येदं देवयजनमनु यज्ञं वितन्वतः ।
प्राचीनाग्रैः कुशैरासीदास्तृतं वसुधातलम् ॥१०॥

पदच्छेद—

यस्य इदम् देव यजनम् अनु यज्ञम् वितन्वतः ।
प्राचीन अग्रैः कुशैः आसीत् आस्तृतम् वसुधातलम् ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जिनके	प्राचीन	१०.	पूर्व
इदम्	७.	यह	अग्रैः	११.	मुख
देव	५.	देवताओं का	कुशैः	१२.	कुशाओं से
यजनम्	६.	यज्ञ स्थल	आसीत्	१४.	था
अनु	२.	एक के बाद एक स्थान पर	आस्तृतम्	१३.	पट गया
यज्ञम्	३.	यज्ञ	वसुधा	८.	सम्पूर्ण पृथ्वी
वितन्वतः ।	४.	करने से	तलम् ॥	९.	मण्डल

श्लोकार्थ—जिनके एक के बाद एक स्थान पर यज्ञ करने से देवताओं का यज्ञ स्थल यह सम्पूर्ण पृथ्वी मण्डल पूर्व मुख कुशाओं से पट गया था ॥

एकादशः श्लोकः

सामुद्रीं देवदेवोक्तामुपयेमे शतद्रुतिम् ।
यां वीक्ष्य चारुसर्वाङ्गीं किशोरीं सुष्ठ्वलङ्कृताम् ।
परिक्रमन्तीमुद्वाहे चकमेऽग्निः शुकीमिव ॥११॥

पदच्छेद— सामुद्रीम् देवदेव उक्ताम् उपयेमे शतद्रुतिम् ।
याम् वीक्ष्य चारु सर्वाङ्गीम् किशोरीम् सुष्ठु
अलंकृताम् परिक्रमन्तीम् उद्वाहे चकमे अग्निः शुकीम् इव ॥

शब्दार्थ—

सामुद्रीम्	३.	समुद्र की कन्या	किशोरीम्	१३.	किशोरी को
देव-देव	१.	देव-देव ब्रह्मा जी के	सुष्ठु	८.	अच्छी प्रकार
उक्ताम्	२.	कहने पर	अलंकृताम्	९.	सुसज्जित
उपयेमे	५.	विवाह किया	परिक्रमन्तीम्	७.	प्रदक्षिण करते समय
शतद्रुतिम्	४.	शतद्रुति से	उद्वाहे	६.	विवाह मण्डप में
याम्	१२.	जिस	चकमे	१६.	वैसे ही कामना की
वीक्ष्य	१४.	देखकर	अग्निः	१५.	अग्नि देव ने
चारु	११.	सुन्दरी	शुकीम्	१८.	शुकी की (कामना की थी)
सर्वाङ्गीम्	१०.	सर्वाङ्ग	इव ॥	१७.	जैसे

श्लोकार्थ—राजा प्राचीन बर्हि ने देव-देव ब्रह्मा जी के कहने पर समुद्र की कन्या शतद्रुति से विवाह किया। विवाह मण्डप में प्रदक्षिण करते समय अच्छी प्रकार सुसज्जित सर्वाङ्ग सुन्दरी जिस किशोरी को देखकर अग्नि देव ने वैसे ही कामना की जैसे शुकी की कामना की थी।

द्वादशः श्लोकः

विबुधासुरगन्धर्वमुनिसिद्धनरोरगाः ।
विजिताः सूर्यया दिक्षु क्वणयन्त्यैव नूपुरैः ॥१२॥

पदच्छेद— विबुध असुर गन्धर्व मुनि सिद्ध नर उरगाः ।
विजिताः सूर्यया दिक्षु क्वणयन्त्या एव नूपुरैः ॥

शब्दार्थ—

विबुध	६.	देवगण	विजिताः	१२.	मोहित कर लिया था
असुर	७.	असुर	सूर्यया	१.	जिस सुन्दरी ने अपने
गन्धर्व	८.	गन्धर्व	दिक्षु	५.	सभी दिशाओं के
मुनि सिद्ध	९.	मुनि-सिद्ध	क्वणयन्त्या	३.	झनकार से
नर	१०.	मनुष्य और	एव	४.	ही
उरगाः ।	११.	नागों को	नूपुरैः ॥	२.	नूपुरों की

श्लोकार्थ—जिस सुन्दरी ने अपने नूपुरों की झनकार से ही सभी दिशाओं के देवगण असुर, गन्धर्व, मुनि, सिद्ध, मनुष्य और नागों को मोहित कर लिया था॥

त्रयोदशः श्लोकः

प्राचीनबर्हिषः पुत्राः शतद्रुत्यां दशाभवन् ।
तुल्यनामव्रताः सर्वे धर्मस्नाताः प्रचेतसः ॥१३॥

पदच्छेद—

प्राचीन बर्हिषः पुत्राः शतद्रुत्याम् दश अभवन् ।
तुल्य नाम व्रताः सर्वे धर्म स्नाताः प्रचेतसः ॥

शब्दार्थ—

प्राचीनबर्हिषः	१. राजा प्राचीन बर्हि के		नाम	११. नाम (और) समान
पुत्राः	७. पुत्र		व्रताः	१२. आचरण वाले थे
शतद्रुत्याम्	२. शतद्रुति से		सर्वे	९. (जो) सभी
दश	६. दस		धर्म	४. धर्म में
अभवन् ।	८. उत्पन्न हुये		स्नाताः	५. तत्पर
तुल्य	१०. समान		प्रचेतसः ॥	३. प्रचेता नाम के

श्लोकार्थ—राजा प्राचीन बर्हि के शतद्रुति से प्रचेता नाम के धर्म में तत्पर दश पुत्र उत्पन्न हुये । जो सभी समान नाम और समान आचरण वाले थे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

पित्राऽऽदिष्टाः प्रजासर्गे तपसेऽर्णवमाविशन् ।
दशवर्षसहस्राणि तपसाऽऽर्चंस्तपस्पतिम् ॥१४॥

पदच्छेद—

पित्रा आदिष्टाः प्रजा सर्गे तपसे अर्णवम् आविशन् ।
दशवर्ष सहस्राणि तपसा अर्चन् तपस् पतिम् ॥

शब्दार्थ—

पित्रा	३. पिता का	दश	८. दश
आदिष्टाः	४. आदेश पाने पर	वर्ष	१०. वर्ष तक
प्रजा	१. उन्होंने प्रजा की	सहस्राणि	९. हजार
सर्गे	२. सृष्टि करने के लिये	तपसा	११. तपस्या से
तपसे	५. तपस्या करने को	अर्चन्	१४. आराधना की
अर्णवम्	६. समुद्र में	तपस्	१२. तपस्या के
आविशन् ।	७. प्रवेश किया (वहाँ पर)	पतिम् ॥	१३. स्वामी भगवान् श्री हरि की

श्लोकार्थ—उन्होंने प्रजा की सृष्टि करने के लिये पिता का आदेश पाने पर तपस्या करने को समुद्र में प्रवेश किया । वहाँ पर दश हजार वर्ष तक तपस्या से तपस्या के स्वामी भगवान् श्री हरि की आराधना की ॥

पञ्चदशः श्लोकः

यदुक्तं पथि दृष्टेन गिरिशेन प्रसीदता ।
तद्ध्यायन्तो जपन्तश्च पूजयन्तश्च संयताः ॥१५॥

पदच्छेद—

यद् उक्तम् पथि दृष्टेन गिरिशेन प्रसीदता ॥
तद् ध्यायन्तः जपन्तः च पूजयन्तः च संगताः ॥

शब्दार्थ—

यद्	६.	जिस तत्त्व का	तद् ध्यायन्तः	८.	उस तत्त्व का ध्यान करते हुये
उक्तम्	७.	उपदेश किया था	जपन्तः	९.	जप करते हुये
पथि	२.	मार्ग में	च	१०.	और
दृष्टेन्	४.	दिखाई पड़े (उन्होंने)	पूजयन्तः	१२.	पूजन करने लगे
गिरिशेन	३.	श्री महादेव जी	च	१.	जाते समय
प्रसीदता ।	५.	प्रसन्न होकर	संगताः ॥	११.	संयम पूर्वक

श्लोकार्थ—जाते समय मार्ग में श्री महादेव जी दिखाई पड़े। उन्होंने प्रसन्न होकर जिस तत्त्व का उपदेश किया था; उस तत्त्व का ध्यान करते हुये, जप करते हुये और संयम पूर्वक पूजन करने लगे ॥

षोडशः श्लोकः

विदुर उवाच—प्रचेतसां गिरित्रेण यथाऽऽसीत्पथि सङ्गमः ।
यदुताह हरः प्रीतस्तन्नो ब्रह्मन् वदार्थवत् ॥१६॥

पदच्छेद—

प्रचेतसाम् गिरित्रेण यथा आसीत् पथि सङ्गमः ।
यद् उत आह हरः प्रीतः तद् नः ब्रह्मन् वद अर्थ वत् ॥

शब्दार्थ—

प्रचेतसाम्	४.	प्रचेताओं को	आह	१२.	कहा था
गिरित्रेण	३.	भगवान् शिव के साथ	हरः	९.	भगवान् शिव ने
यथा	६.	जिस प्रकार	प्रीतः	१०.	प्रसन्न होकर
आसीत्	७.	हुई	तद्	१३.	वह
पथि	२.	मार्ग में	नः	१५.	हमें
सङ्गमः ।	५.	भेंट	ब्रह्मन्	१.	हे मैत्रेय जी
यद्	११.	जो	वद	१६.	बतावें
उत	८.	तथा	अर्थवत् ॥	१४.	सार्थक बात

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! मार्ग में भगवान् शिव के साथ प्रचेताओं की भेंट जिस प्रकार हुई तथा भगवान् शिव ने प्रसन्न होकर जो कहा था; वह सार्थक बात हमें बतावें ॥

सप्तदशः श्लोकः

सङ्गमः खलु विप्रर्षे शिवेनेह शरीरिणाम् ।
दुर्लभो मुनयो दध्युरसङ्गाद्यमभीप्सितम् ॥१७॥

पदच्छेद—

सङ्गमः खलु विप्रर्षे शिवेन इह शरीरिणाम् ।
दुर्लभः मुनयः दध्युः असङ्गात् यम् अभीप्सितम् ॥

शब्दार्थ—

सङ्गमः	५.	भेंट	दुर्लभः	७.	दुर्लभ है (क्योंकि)
खलु	६.	अवश्य	मुनयः	१०.	मुनिगण
विप्रर्षे	१.	हे मुनिवर	दध्युः	१२.	समाधि लगाते हैं
शिवेन	३.	भगवान् शिव के साथ	असङ्गात्	११.	आसक्ति छोड़कर
इह	२.	इस संसार में	यम्	८.	जिनको
शरीरिणाम् ।	४.	प्राणियों की	अभीप्सितम् ॥	९.	पाने की इच्छा से

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! इस संसार में भगवान् शिव के साथ प्राणियों की भेंट अवश्य दुर्लभ है। क्योंकि जिनको पाने की इच्छा से मुनिगण आसक्ति छोड़कर समाधि लगाते हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

आत्मारामोऽपि यस्त्वस्य लोककल्पस्य राधसे ।
शक्त्या युक्तो विचरति घोरया भगवान् भवः ॥१८॥

पदच्छेद—

आत्मारामः अपि यः तु अस्य लोक कल्पस्य राधसे ।
शक्त्या युक्तः विचरति घोरया भगवान् भवः ॥

शब्दार्थ—

आत्मारामः	५.	आत्मा में सन्तुष्ट	राधसे ।	१०.	रक्षा के लिये
अपि	६.	रहकर भी	शक्त्या	१२.	शक्ति के
यः	२.	जो	युक्तः	१३.	साथ
तु	१.	तथा	विचरति	१४.	घूमते रहते हैं
अस्य	७.	इस	घोरया	११.	अपनी घोर रूपा शिवा
लोक	८.	संसार की	भगवान्	३.	भगवान्
कल्याण	९.	सृष्टि की	भवः ॥	४.	शिव

श्लोकार्थ—तथा जो भगवान् शिव आत्मा में सन्तुष्ट रहकर भी इस संसार की सृष्टि की रक्षा के लिये अपनी घोर रूपा शिवा शक्ति के साथ घूमते रहते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—प्रचेतसः पितुर्वाक्यं शिरसाऽऽदाय साधवः।
दिशं प्रतीचीं प्रययुस्तपस्यादृतचेतसः ॥१९॥

पदच्छेद—

प्रचेतसः पितुः वाक्यम् शिरसा आदाय साधवः।
दिशम् प्रतीचीम् प्रययुः तपसि आदृत चेतसः ॥

शब्दार्थ—

प्रचेतसः	२.	प्रचेतागण	दिशम्	११.	दिशा में
पितुः	३.	पिता के	प्रतीचीम्	१०.	पश्चिम
वाक्यम्	४.	आदेश को	प्रययुः	१२.	चल दिये
शिरसा	५.	शिर पर	तपसि	७.	तपस्या में
आदाय	६.	धारण करके	आदृत	९.	लगाये हुये
साधवः।	१.	महात्मा	चेतसः ॥	८.	चित्त को

श्लोकार्थ—महात्मा प्रचेतागण पिता के आदेश को सिर पर धारण करके तपस्या में चित्त को लगाये हुये पश्चिम दिशा में चल दिये ॥

विंशः श्लोकः

समुद्रमुप विस्तीर्णमपश्यन् सुमहत्सरः।
महन्मन इव स्वच्छं प्रसन्नसलिलाशयम् ॥२०॥

पदच्छेद—

समुद्रम् उप विस्तीर्णम् अपश्यन् सुमहत् सरः।
महत् मनः इव स्वच्छम् प्रसन्न सलिल आशयम् ॥

शब्दार्थ—

समुद्रम्	१.	उन्होंने समुद्र के	महत्	७.	महात्माओं के
उप	२.	समान	मनः इव	८.	मन के समान
विस्तीर्णम्	३.	फैला हुआ	स्वच्छम्	९.	स्वच्छ (था)
अपश्यन्	६.	देखा (जो)	प्रसन्न	१२.	प्रसन्न दिखाई देते थे
सुमहत्	४.	बहुत विशाल	सलिल	१०.	उसका जल (और)
सरः।	५.	एक सरोवर	आशयम् ॥	११.	अन्दर रहने वाले जीव

श्लोकार्थ—उन्होंने समुद्र के समान फैला हुआ बहुत विशाल एक सरोवर देखा, जो महात्माओं के मन के समान स्वच्छ था। उसका जल और अन्दर रहने वाले जीव प्रसन्न थे ॥

एकविंशः श्लोकः

नीलरक्तोत्पलाम्भोजकह्लारेन्दीवराकरम् ।
हंससारसचक्राह्वकारण्डवनिकूजितम् ॥२१॥

पदच्छेद—

नील रक्त उत्पल अम्भोज कह्लार इन्दीवर आकरम् ।
हंस सारस चक्राह्व कारण्डव निकूजितम् ॥

शब्दार्थ—

नील	१. (वह सरोवर) नीले	आकरम् ।	७.	खान था
रक्त	२. लाल (तथा)	हंस	८.	(जिसके तट पर) हंस
उत्पल	३. सवेरे खिलने वाले	सारस	९.	सारस
अम्भोज	४. दोपहर में खिलने वाले	चक्राह्व	१०.	चकवा और
कह्लार	५ शाम को खिलने वाले (एवं)	कारण्डव	११.	जल कौवे
इन्दीवर	६. सफेद कमलों की	निकूजितम् ॥	१२.	कलरव कर रहे थे

श्लोकार्थ—वह सरोवहर नीले, लाल तथा सवेरे, दोपहर और शाम को खिलने वाले सफेद कमलों की खान था। उसके तट पर हंस, सारस, चकवा और जल कौवे कलख कर रहे थे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

मत्तभ्रमरसौस्वर्यहृष्टरोमलताङ्‌घ्रिपम् ।
पद्मकोशरजो दिक्षु विक्षिपत्पवनोत्सवम् ॥२२॥

पदच्छेद—

मत्तभ्रमर सौस्वर्य हृष्ट रोम लता अङ्‌घ्रिपम् ।
पद्म कोशरजः दिक्षु विक्षिपत् पवन उत्सवम् ॥

शब्दार्थ—

मत्त	३. मतवाले	पद्मकोश	८.	कमल दल के
भ्रमर	४. भौरों की	रजः	९.	पराग को
सौस्वर्य	५ गुञ्जार से	दिक्षु	१०.	दिशाओं में
हृष्ट रोम	६. प्रसन्न (और) रोमाञ्चित थे (तथा)	विक्षिपत्	११.	फैलाकर (मानों)
लता	१. वहाँ की लतायें (और)	पवन	६.	वायु
अङ्‌घ्रिपम् ।	२. वृक्ष	उत्सवम् ॥	१२.	उत्सव मना रहा था

श्लोकार्थ—वहाँ की लतायें और वृक्ष मतवाले भौरों की गुञ्जार से प्रसन्न और रोमाञ्चित थे; तथा वायु कमल दल के पराग को दिशाओं में फैला कर मानो उत्सव मना रहा था ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

तत्र गान्धर्वमाकर्ण्य दिव्यमार्गमनोहरम् ।
विसिस्म्यू राजपुत्रास्ते मृदङ्गपणवाद्यनु ॥२३॥

पदच्छेद—

तत्र गान्धर्वम् आकर्ण्य दिव्य मार्ग मनोहरम् ।
विसिस्म्युः राज पुत्राः ते मृदङ्ग पणव आदिअनु ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ पर	विसिस्म्युः	१२.	आश्चर्य में पड़ गये
गान्धर्वम्	१०.	संगीत को	राज पुत्राः	२.	राज कुमार
आकर्ण्य	११.	सुनकर	ते	३.	वे (प्रचेतागण)
दिव्य	७.	अलौकिक	मृदङ्ग पणव	४.	मृदङ्ग नगाड़े
मार्ग	८.	राग-रागिनियों के	आदि	५.	इत्यादि बाजों के
मनोहरम् ।	९.	सुन्दर	अनु ॥	६.	साथ-साथ

श्लोकार्थ—वहाँ पर राजकुमार वे प्रचेतागण मृदङ्ग, नगाड़े इत्यादि बाजों के साथ-साथ अलौकिक राग-रागिनियों के सुन्दर संगीत को सुनकर आश्चर्य में पड़ गये ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तर्ह्येव सरसस्तस्मान्निष्क्रामन्तं सहानुगम् ।
उपगीयमानममरप्रवरं विबुधानुगैः ॥२४॥

पदच्छेद—

तर्हि एव सरसः तस्मात् निष्क्रामन्तम् सह अनुगम् ।
उपगीय मानम् अमर प्रवरम् विबुध अनुगैः ॥

शब्दार्थ—

तर्हि एव	१.	उसी समय	उपगीयमानम्	१०.	स्तुति करने लगे
सरसः	५.	सरोवर से	अमर	८.	देवताओं में
तस्मात्	४.	उस	प्रवरम्	९.	प्रधान महादेव जी की
निष्क्रामन्तम्	७.	निकलते हुये	विबुध	२.	देवताओं के
सह अनुगम् ।	६.	साथ अनुचरों के	अनुगैः ॥	३.	अनुगामी गन्धर्वगण

श्लोकार्थ—उसी समय देवताओं के अनुगामी गन्धर्वगण उस सरोवर से अनुचरों के साथ निकलते हुये, देवताओं में प्रधान महादेव जी की स्तुति करने लगे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

तप्तहेमनिकायाभं शितिकण्ठं त्रिलोचनम् ।
प्रसादसुमुखं वीक्ष्य प्रणेमुर्जातकौतुकाः ॥२५॥

पदच्छेद—

तप्त हेम निकाय आभम् शिति कण्ठम् त्रिलोचनम् ।
प्रसाद सुमुखम् वीक्ष्य प्रणेमुः जात कौतुकाः ॥

शब्दार्थ—

तप्त	१.	तपे हुये	प्रसाद	८.	कृपा करने में
हेम	२.	सुवर्ण की	सुमुखम्	९.	तत्पर
निकाय	३.	राशि के समान	वीक्ष्य	१०.	देखकर (उन प्रचेताओं ने)
आभम्	४.	कान्तिमान्	प्रणेमुः	१३.	प्रणाम किया
शिति	५.	सफेद	जात	१२.	पूर्वक
कण्ठम्	६.	कण्ठ वाले (तथा)	कौतुकाः ॥	११.	आश्चर्य
त्रिलोचनम् ।	७.	तीन नेत्र वाले (भगवान् शिव को)			

श्लोकार्थ—तपे हुये सुवर्ण की राशि के समान कान्तिमान् सफेद कण्ठ वाले तथा तीन नेत्र वाले भगवान् शिव को कृपा करने में तत्पर देखकर उन प्रचेताओं ने आश्चर्य पूर्वक प्रणाम किया ॥

षड्विंशः श्लोकः

स तान् प्रपन्नार्तिहरो भगवान्धर्मवत्सलः ।
धर्मज्ञान् शील सम्पन्नान् प्रीतः प्रीतानुवाच ह ॥२६॥

पदच्छेद—

सः तान् प्रपन्न आर्तिहरः भगवान् धर्म वत्सलः ।
धर्म ज्ञान् शील सम्पन्नान् प्रीतः प्रीतान् उवाच ह ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	वे (भगवान्)	धर्मज्ञान्	९.	धर्म के ज्ञाता
तान्	१३.	उन प्रचेताओं से	शील	१०.	चरित्र से
प्रपन्न	२.	शरणागतों के	सम्पन्नान्	११.	युक्त (एवम्)
आर्ति	३.	दुःख को	प्रीतः	८.	प्रसन्न होकर
हरः	४.	हरने वाले (तथा)	प्रीतान्	१२.	अत्यन्त प्रिय
भगवान्	७.	महादेव	उवाच	१४.	बोले
धर्मवत्सलः ।	५.	धर्म-कर्म के प्रेमी	ह ॥	१.	उस समय

श्लोकार्थ—उस समय शरणागतों के दुःख को हरने वाले तथा धर्म कर्म के प्रेमी वे भगवान् महादेव प्रसन्न होकर धर्म के ज्ञाता, चरित्र से युक्त एवम् अत्यन्त प्रिय उन प्रचेताओं से बोले ॥

सप्तविंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—यूयं वेदिषदः पुत्रा विदितं वश्चिकीर्षितम् ।
अनुग्रहाय भद्रं व एवं मे दर्शनं कृतम् ॥२७॥

पदच्छेद—

यूयम् वेदिषदः पुत्राः विदितम् वः चिकीर्षितम् ।
अनुग्रहाय भद्रम् वः एवम् मे दर्शनम् कृतम् ॥

शब्दार्थ—

यूयम्	१.	तुम सब	अनुग्रहाय	६.	कृपा के लिये ही
वेदिषदः	२.	राजा प्राचीन बर्हि के	भद्रम्	८.	कल्याण हो (तुम सबने)
पुत्राः	३.	पुत्र हो	वः	७.	तुम लोगों का
विदितम्	६.	जानता हूँ	एवम्	१०.	इस प्रकार
वः	४.	तुम लोगों की	मे दर्शनम्	११.	मेरा दर्शन
चिकीर्षितम् ।	५.	इच्छा को (मैं)	कृतम् ॥	१२.	प्राप्त किया है

श्लोकार्थ—तुम सब राजा प्राचीन बर्हि के पुत्र हो; तुम लोगों की इच्छा को मैं जानता हूँ । तुम लोगों का कल्याण हो । तुम सबने कृपा के लिये ही मेरा दर्शन प्राप्त किया है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

यः परं रंहसः साक्षात्त्रिगुणाज्जीवसंज्ञितात् ।
भगवन्तं वासुदेवं प्रपन्नः स प्रियो हि मे ॥२८॥

पदच्छेद—

यः परम् रंहसः साक्षात् त्रिगुणात् जीव संज्ञितात् ।
भगवन्तम् वासुदेवम् प्रपन्नः सः प्रियः हि मे ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो प्राणी	भगवन्तम्	८.	भगवान्
परम्	६.	श्रेष्ठ	वासुदेवम्	९.	श्री हरि के
रंहसः	२.	प्रकृति तथा	प्रपन्नः	१०.	शरणागत है
साक्षात्	७.	साक्षात्	सः	११.	वह प्राणी
त्रिगुणात्	३.	त्रिगुणात्मक	प्रियः	१४.	प्यारा है
जीव	४.	पुरुष	हि	१३.	अवश्य ही
संज्ञितात् ।	५.	तत्त्व से	मे ॥	१२.	मुझे

श्लोकार्थ—जो प्राणी प्रकृति तथा त्रिगुणात्मक पुरुष तत्त्व से श्रेष्ठ साक्षात् भगवान् श्री हरि के शरणागत है वह प्राणी मुझे अवश्य ही प्यारा है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

स्वधर्मनिष्ठः शतजन्मभिः पुमान् विरिञ्चतामेति ततः परं हि माम् ।
अव्याकृतं भागवतोऽथ वैष्णवं पदं यथाहं विबुधाः कलात्यये ॥२६॥

पदच्छेद—स्वधर्म निष्ठः शतजन्मभिः पुमान् विरिञ्चताम् एति ततः परम् हि माम् ।
अव्याकृतम् भागवतः अथ वैष्णवम् पदम् यथा अहम् विबुधाः कलात्यये ॥

शब्दार्थ—

स्वधर्म	१.	अपने धर्म में	अव्याकृतम्	१३.	अविनाशी
निष्ठः	२.	निष्ठा रखने वाला	भागवतः	११.	भगवत् भक्त
शत जन्मभिः	४.	सैंकड़ों जन्मों के बाद	अथ	१०.	किन्तु
पुमान्	३.	पुरुष	वैष्णवम्	१२.	भगवान् विष्णु के
विरिञ्चताम्	५.	ब्रह्मा के पद को	पदम्	१४.	परम पद को प्राप्त करता है
एति	६.	प्राप्त करता है	यथा	१५.	जैसे
ततः परम्	८.	उससे श्रेष्ठ	अहम्	१६.	मैं (और)
हि	७.	तदनन्तर	विबुधाः	१७.	देवतागण
माम् ।	९.	मेरे पद को पाता है	कला अत्यये ॥	१८.	अधिकार की समाप्ति के बाद पाते हैं

श्लोकार्थ—अपने धर्म में निष्ठा रखने वाला पुरुष सैंकड़ों जन्मों के बाद ब्रह्मा के पद को प्राप्त करता है। किन्तु भगवत् भक्त भगवान् विष्णु के अविनाशी परम पद को प्राप्त करता है, जैसे मैं और देवतागण अधिकार की समाप्ति के बाद पाते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

अथ भागवता यूयं प्रियाः स्थ भगवान् यथा ।
न मद्भागवतानां च प्रेयानन्योऽस्ति कर्हिचित् ॥३०॥

पदच्छेद— अथ भागवताः यूयम् प्रियाः स्थ भगवान् यथा ।
न मद् भागवतानाम् च प्रेयान् अन्यः अस्ति कर्हिचित् ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	अब	न	१४.	नहीं
भागवताः	३.	भगवत् भक्त (वैसे ही)	मद्	१०.	मुझसे
यूयम्	२.	तुम सब	भागवतानाम्	९.	भगवत् भक्तों को
प्रियाः	४.	मेरे प्यारे	च	८.	अतः
स्थ	५.	हो	प्रेयान्	१२.	प्रिय
भगवान्	७.	भगवान् श्री हरि (प्यारे हैं)	अन्यः	११.	भिन्न कोई दूसरा
यथा ।	६.	जैसे	अस्ति	१५.	होना चाहिये
			कर्हिचित् ॥	१३.	कभी

श्लोकार्थ—अब तुम सब भगवत् भक्त वैसे ही मेरे प्यारे हो जैसे भगवान् श्री हरि प्यारे हैं। अतः भगवत् भक्तों को मुझसे भिन्न कोई दूसरा प्रिय कभी नहीं होना चाहिये ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

इदं विविक्तं जप्तव्यं पवित्रं मङ्गलं परम् ।
निःश्रेयसकरं चापि श्रूयतां तद्वदामि वः ॥३१॥

पदच्छेद—

इदम् विविक्तम् जप्तव्यम् पवित्रम् मङ्गलम् परम् ।
निः श्रेयसकरम् च अपि श्रूयताम् तद् वदामि वः ॥

शब्दार्थ—

इदम्	६.	यह	निःश्रेयसकरम्	११.	मोक्ष प्रद
विविक्तम्	४.	जिसे समझकर	च	१०.	और
जप्तव्यम्	५.	जपना	अपि	१२.	भी है
पवित्रम्	८.	पवित्र	श्रूयताम्	१.	सुनो (मैं)
मङ्गलम्	९.	कल्याणकारी	तद् वदामि	३.	वह स्तोत्र बता रहा हूँ
परम् ।	७.	अत्यन्त	वः ॥	२.	तुम लोगों को

श्लोकार्थ—सुनो, मैं तुम लोगों को यह स्तोत्र बता रहा हूं, जिसे समझ कर जपना । यह अत्यन्त कल्याणकारी और मोक्षप्रद भी है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— इत्यनुक्रोशहृदयो भगवानाह ताञ्शिवः ।
बद्धाञ्जलीन् राजपुत्रान्नारायणपरो वचः ॥३२॥

पदच्छेद—

इति अनुक्रोश हृदयः भगवान् आह तान् शिवः ।
बद्ध अञ्जलीन् राज पुत्रान् नारायण परः वचः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	बद्ध	९.	जोड़े हुये
अनुक्रोश	२.	दया से परिपूर्ण	अञ्जलीन्	८.	हाथ
हृदयः	३.	हृदय वाले (तथा)	राज पुत्रान्	११.	राज कुमारों से
भगवान्	६.	भगवान्	नारायण	४.	भगवान् नारायण के
आह	१३.	कहा	परः	५.	भक्त
तान्	१०.	उन	वचः ॥	१२.	यह स्तोत्र
शिवः ।	७.	शिव ने			

श्लोकार्थ—इस प्रकार दया से परिपूर्ण हृदय वाले तथा भगवान् नारायण के भक्त भगवान् शिव ने हाथ जोड़े हुये उन राज कुमारों से यह स्तोत्र कहा ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

श्रीरुद्र उवाच—जितं त आत्मविद्धुर्य स्वस्तये स्वस्तिरस्तु मे ।
भवता राधसा राद्धं सर्वस्मा आत्मने नमः ॥३३॥

पदच्छेद—

जितम् ते आत्मविद् धुर्य स्वस्तये स्वस्तिः अस्तु मे ।
भवता राधसा राद्धम् सर्वस्मै आत्मने नमः ॥

शब्दार्थ—

जितम्	४.	विजय	मे ।	६.	(उससे) हमारा
ते	३.	आपकी	भवता	९.	आप तो
आत्मविद्	१.	आत्म ज्ञानियों में	राधसा	१०.	आत्मानन्द में
धुर्य	२.	प्रधान (हे प्रभो)	राद्धम्	११.	मग्न रहते हैं (अतः)
स्वस्तये	५.	कल्याण के लिये (होती है)	सर्वस्मै	१२.	सर्व स्वरूप (एवम्)
स्वस्तिः	७.	कल्याण	आत्मने	१३.	आत्मारूप आप को
अस्तु	८.	होवे	नमः ॥	१४.	नमस्कार है

श्लोकार्थ—आत्मज्ञानियों में प्रधान हे प्रभो ! आपकी विजय कल्याण के लिये होती है । उससे हमारा कल्याण होवे । आप तो आत्मानन्द में मग्न रहते हैं अतः सर्व स्वरूप एवम् आत्मारूप आपको नमस्कार है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

नमः पङ्कजनाभाय भूतसूक्ष्मेन्द्रियात्मने ।
वासुदेवाय शान्ताय कूटस्थाय स्वरोचिषे ॥३४॥

पदच्छेद—

नमः पङ्कज नाभाय भूत सूक्ष्म इन्द्रिय आत्मने ।
वासुदेवाय शान्ताय कूटस्थाय स्वरोचिषे ॥

शब्दार्थ—

नमः	१०.	नमस्कार है	आत्मने ।	५.	नियन्ता
पङ्कज	२.	कमल को धारण करने वाले	वासुदेवाय	९.	(चित्त के अधिष्ठाता) वासुदेव को
नाभाय	१.	अपनी नाभि में	शान्ताय	६.	शान्त स्वरूप
भूतसूक्ष्म	३.	सूक्ष्म तन्मात्रा (और)	कूटस्थाय	७.	सदा एक रूप (तथा)
इन्द्रिय	४.	इन्द्रियों के	स्वरोचिषे ॥	८.	स्वयं प्रकाश

श्लोकार्थ—अपनी नाभि में कमल को धारण करने वाले सूक्ष्म तन्मात्रा और इन्द्रियों के नियन्ता, शान्त स्वरूप सदा एक रूप तथा स्वयं प्रकाश, चित्त के अधिष्ठाता भगवान् वासुदेव को नमस्कार है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

सङ्कर्षणाय सूक्ष्माय दुरन्तायान्तकाय च ।
नमो विश्वप्रबोधाय प्रद्युम्नायान्तरात्मने ॥३५॥

पदच्छेद—

सङ्कर्षणाय सूक्ष्माय दुरन्ताय अन्तकाय च ।
नमः विश्व प्रबोधाय प्रद्युम्नाय अन्तरात्मने ॥

शब्दार्थ—

सङ्कर्षणाय	५.	(अहंकार के अधिष्ठाता) सङ्कर्षण को तथा	नमः	१०.	नमस्कार है
सूक्ष्माय	१.	अव्यक्त	विश्व	६.	सारे संसार को
दुरन्ताय	२.	अनन्त	प्रबोधाय	७.	ज्ञान देने वाले
अन्तकाय	४.	लोकों का संहार करने वाले	प्रद्युम्नाय	९.	भगवान् प्रद्युम्न को
च ।	३.	और	अन्तरात्मने ॥	८.	बुद्धि के अधिष्ठाता

श्लोकार्थ—अव्यक्त, अनन्त और लोकों का कल्याण करने वाले अहंकार के अधिष्ठाता संङ्कर्षण को तथा ज्ञान देने वाले बुद्धि के अधिष्ठाता भगवान् प्रद्युम्न को नमस्कार है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

नमो नमोऽनिरुद्धाय हृषीकेशेन्द्रियात्मने ।
नमः परमहंसाय पूर्णाय निभृतात्मने ॥३६॥

पदच्छेद—

नमः नमः अनिरुद्धाय हृषीकेश इन्द्रिय आत्मने ।
नमः परम हंसाय पूर्णाय निभृत आत्मने ॥

शब्दार्थ—

नमः नमः	५.	बार-बार नमस्कार है	नमः	१०.	नमस्कार है
अनिरुद्धाय	४.	आप अनिरुद्ध को	परम हंसाय	९	भगवान् सूर्य को
हृषीकेशाय	१.	इन्द्रियों के स्वामी	पूर्णाय	८.	विश्व व्यापी
इन्द्रिय	२.	मन इन्द्रियों के	निभृत	६.	क्षेम और वृद्धि से
आत्मने ।	३.	अधिष्ठाता	आत्मने ॥	७.	रहित

श्लोकार्थ—इन्द्रियों के स्वामी; मन इन्द्रियों के अधिष्ठाता आप अनिरुद्ध को बार-बार नमस्कार है । क्षेम और वृद्धि से रहित विश्व व्यापी भगवान् सूर्य को नमस्कार है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

स्वर्गापवर्गद्वाराय नित्यं शुचिषदे नमः ।
नमो हिरण्यवीर्याय चातुर्होत्राय तन्तवे ॥३७॥

पदच्छेद—

स्वर्ग अपवर्ग द्वाराय नित्यम् शुचि षदे नमः ।
नमः हिरण्यवीर्याय चातुर्होत्राय तन्तवे ॥

शब्दार्थ—

स्वर्ग	१.	स्वर्ग (और)	नमः ।	७.	(आपको) नमस्कार है
अपवर्ग	२.	मोक्ष के	नमः	१२.	नमस्कार
द्वाराय	३.	द्वार (तथा)	हिरण्य	८.	सुवर्ण रूप
नित्यम्	४.	निरन्तर	वीर्याय	९.	शक्ति से युक्त
शुचि	५.	पवित्र	चातुर्होत्राय	१०.	यज्ञ कर्म का
षदे	६.	हृदय में रहने वाले	तन्तवे ॥	११.	विस्तार करने वाले (आप)

श्लोकार्थ—स्वर्ग और मोक्ष के द्वार तथा निरन्तर पवित्र हृदय में रहने वाले आपको नमस्कार है। सुवर्णरूप शक्ति से युक्त यज्ञकर्म का विस्तार करने वाले आपको नमस्कार है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

नम ऊर्जे इषे त्रय्याः पतये यज्ञरेतसे ।
तृप्तिदाय च जीवानां नमः सर्वरसात्मने ॥३८॥

पदच्छेद—

नमः ऊर्जे इषे त्रय्याः पतये यज्ञ रेतसे ।
तृप्तिदाय च जीवानाम् नमः सर्वरस आत्मने ॥

शब्दार्थ—

नमः	६.	नमस्कार है	तृप्तिदाय	९.	तृप्ति देने वाले
ऊर्जे	१.	शक्ति स्वरूप	च	७.	तथा
इषे	२.	इच्छा रूप	जीवानाम्	८.	सभी प्राणियों को
त्रय्याः पतये	३.	वेदत्रयी के रक्षक (एवम्)	नमः	१२.	नमस्कार है
यज्ञ	४.	यज्ञ के	सर्वरस	१०.	सभी रसों के अधिष्ठाता
रेतसे ।	५	पोषक (सोमस्वरूप आपको)	आत्मने ॥	११.	जल स्वरूप (आपको)

श्लोकार्थ—शक्ति स्वरूप, इच्छारूप वेद त्रयी के रक्षक एवम् यज्ञ के पोषक सोम स्वरूप आपको नमस्कार है। तथा सभी प्राणियों को तृप्ति देने वाले सभी रसों के अधिष्ठाता जल स्वरूप आपको नमस्कार है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

सर्वसत्त्वात्मदेहाय विशेषाय स्थवीयसे ।
नमस्त्रैलोक्यपालाय सहओजोबलाय च ॥३६॥

पदच्छेद—

सर्व सत्त्व आत्म देहाय विशेषाय स्थवीयसे ।
नमः त्रैलोक्य पालाय सहः ओजः बलाय च ॥

शब्दार्थ—

सर्व	१.	हे प्रभो ! आप सभी	नमः	१३.	नमस्कार है
सत्त्व	२.	जीवों के	त्रैलोक्य	११.	तीनों लोकों के
आत्म	३.	आत्मा (और)	पालाय	१२.	रक्षक हैं (आपको)
देहाय	४.	शरीर हैं	सहः	७.	मन
विशेषाय	५.	सूक्ष्म (और)	ओजः	८.	इन्द्रिय (और)
स्थवीयसे ।	६.	स्थूल रूप हैं	बलाय	६.	शरीर की शक्ति हैं
			च ॥	१०.	तथा

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप सभी जीवों के आत्मा और शरीर हैं; सूक्ष्म और स्थूल रूप हैं; मन इन्द्रिय और शरीर की शक्ति हैं तथा तीनों लोकों के रक्षक हैं। आपको नमस्कार है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

अर्थलिङ्गाय नभसे नमोऽन्तर्बहिरात्मने ।
नमः पुण्याय लोकाय अमुष्मै भूरिवर्चसे ॥४०॥

पदच्छेद—

अर्थ लिङ्गाय नभसे नमः अन्तः बहिः आत्मने ।
नमः पुण्याय लोकाय अमुष्मै भूरि वर्चसे ॥

शब्दार्थ—

अर्थ	४.	पदार्थ	नमः	१३.	नमस्कार है
लिङ्गाय	५.	बोधक शब्द गुण वाले	पुण्याय	१०.	पुण्य स्वरूप
नभसे	६.	आकाश स्वरूप (आपको)	लोकाय	१२.	लोक को
नमः	७.	नमस्कार है	अमुष्मै	११.	(आप) स्वर्ग
अन्तः	१.	अन्दर (और)	भूरि	८.	अत्यन्त
बहिः	२.	बाहर के	वर्चसे ॥	६.	प्रकाशमान
आत्मने ।	३.	व्यवहार नियामक (तथा)			

श्लोकार्थ—अन्दर और बाहर के व्यवहार नियामक तथा पदार्थ बोधक शब्द गुण वाले आकाश स्वरूप आपको नमस्कार है। अत्यन्त प्रकाशमान पुण्यस्वरूप आप स्वर्ग लोक को नमस्कार है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

प्रवृत्ताय निवृत्ताय पितृदेवाय कर्मणे।
नमोऽधर्मविपाकाय मृत्यवे दुःखदाय च ॥४१॥

पदच्छेद—

प्रवृत्ताय निवृत्ताय पितृ देवाय कर्मणे।
नमः अधर्म विपाकाय मृत्यवे दुःखदाय च ॥

शब्दार्थ—

प्रवृत्ताय	१.	हे प्रभो ! प्रवृत्ति मार्ग वाला	नमः	११.	नमस्कार है
निवृत्ताय	३.	निवृत्ति मार्ग वाला	अधर्म	७.	पाप के
पितृ	२.	पितर कर्म (और)	विपाकाय	८.	परिणाम स्वरूप
देवाय	४.	देव	मृत्यवे	१०.	मृत्यु रूप (आपको)
कर्मणे।	५.	कर्म (आप ही हैं)	दुःखदाय	६.	दुःख को देने वाले
			च ॥	६.	अतः

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! प्रवृत्ति मार्ग वाला पितर कर्म और निवृत्ति मार्ग वाला देव कर्म आप ही हैं। अतः पाप के परिणाम स्वरूप दुःख को देने वाले मृत्युरूप आप को नमस्कार है।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

नमस्त आशिषामीश मनवे कारणात्मने।
नमो धर्माय बृहते कृष्णायाकुण्ठमेधसे।
पुरुषाय पुराणाय सांख्ययोगेश्वराय च ॥४२॥

पदच्छेद—

नमः ते आशिषामीश मनवे कारण आत्मने।
नमः धर्माय बृहते कृष्णाय अकुण्ठ मेधसे।
पुरुषाय पुराणाय सांख्ययोग ईश्वराय च ॥

शब्दार्थ—

नमः	७.	नमस्कार	बृहते	१६.	और परम
ते	६.	आप को	कृष्णाय	१५.	आप श्री कृष्ण को
आशिषाम्	१.	मनोरथों को	अकुण्ठ	१३.	अबाधित
ईश	२.	पूर्ण करने वाले	मेधसे।	१४.	ज्ञान वाले
मनवे	३.	मन्त्ररूप (एवम्)	पुरुषाय	११.	पुरुष को
कारण	४.	आदि कारण	पुराणाय	१०.	प्राचीन
आत्मने	५.	स्वरूप	सांख्ययोग	८.	सांख्य और योग के
नमः	१८.	नमस्कार है	ईश्वराय	९.	अधिष्ठाता (आप)
धर्माय	१७.	धर्म स्वरूप आपको	च ॥	१२.	तथा

श्लोकार्थ—मनोरथों को पूर्ण करने वाले मन्त्र रूप एवम् आदि कारण स्वरूप आपको नमस्कार है। सांख्य और योग के अधिष्ठाता आप प्राचीन पुरुष को तथा अबाधित ज्ञान वाले आप श्री कृष्ण को और परम धर्म स्वरूप आपको नमस्कार है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

शक्तित्रयसमेताय मीढुषेऽहंकृतात्मने ।
चेतआकूतिरूपाय नमो वाचोविभूतये ॥४३॥

पदच्छेद—

शक्ति त्रय समेताय मीढुषे अहंकृत आत्मने ।
चेतः आकूति रूपाय नमः वाचः विभूतये ॥

शब्दार्थ—

शक्ति	२.	शक्तियों से	चेतः	४.	ज्ञान (और)
त्रय	१.	(कर्ता करण और कर्म) इन तीन	आकूति	५.	क्रिया
समेताय	३.	युक्त	रूपाय	६.	स्वरूप
मीढुषे	११.	रुद्ररूप (आपको)	नमः	१२.	नमस्कार है
अहंकृत	९.	अहंकार के	वाचः	७.	वाणी को
आत्मने ।	१०.	अधिष्ठाता	विभूतये ॥	८.	उत्पन्न करने वाले (तथा)

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! कर्ता, करण और कर्म इन तीन शक्तियों से युक्त ज्ञान और क्रिया स्वरूप, वाणी को उत्पन्न करने वाले तथा अहंकार के अधिष्ठाता रुद्ररूप आप को नमस्कार है ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

दर्शनं नो दिदृक्षूणां देहि भागवतार्चितम् ।
रूपं प्रियतमं स्वानां सर्वेन्द्रियगुणाञ्जनम् ॥४४॥

पदच्छेद—

दर्शनम् नः दिदृक्षूणाम् देहि भागवत अर्चितम् ।
रूपम् प्रियतमम् स्वानाम् सर्वइन्द्रिय गुण अञ्जनम् ॥

शब्दार्थ—

दर्शनम्	३.	दर्शन	रूपम्	५.	आपका स्वरूप
नः	२.	हमें आप	प्रियतमम्	९.	अत्यन्त प्रिय (और)
दिदृक्षूणाम्	१.	देखने के इच्छुक	स्वानाम्	८.	आपके भक्तों को
देहि	४.	देवें	सर्वइन्द्रिय	१०.	सभी इन्द्रियों की
भागवत	६.	भगवत् भक्तों से	गुण	११.	शक्ति को
अर्चितम् ।	७.	पूजित	अञ्जनम् ॥	१२.	बढ़ाने वाला है

श्लोकार्थ—देखने के इच्छुक हमें आप दर्शन देवें । आपका स्वरूप भगवत् भक्तों से पूजित, आपके भक्तों को अत्यन्त प्रिय और सभी इन्द्रियों की शक्ति को बढ़ाने वाला है ।।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

स्निग्धप्रावृड्घनश्यामं सर्वसौन्दर्यसंग्रहम् ।
चार्वायतचतुर्बाहुं सुजातरुचिराननम् ॥४५॥

पदच्छेद—

स्निग्ध प्रावृड् घन श्यामम् सर्व सौन्दर्य संग्रहम् ।
चारु आयत चतुर्बाहुम् सुजात रुचिर आननम् ॥

शब्दार्थ—

स्निग्ध	३.	चमकदार (और)	चारु	७.	(उसमें) मनोहर (तथा)
प्रावृड्	१.	(वह रूप) वर्षा ऋतु के	आयत	८.	विशाल
घन	२.	मेघ के समान	चतुर्बाहुम्	९.	चार भुजायें (और)
श्यामम्	४.	सांवला (तथा)	सुजात	१०.	सुन्दर (एवम्)
सर्व, सौन्दर्य	५.	सब प्रकार से सुन्दरता की	रुचिर	११.	मनोहर
संग्रहम् ।	६.	राशि (है)	आननम् ॥	१२.	मुख मण्डल है

श्लोकार्थ—वह रूप वर्षा ऋतु के मेघ के समान चमकदार और सांवला तथा सब प्रकार से सुन्दरता की राशि है । उसमें मनोहर तथा विशाल चार भुजायें और सुन्दर एवम् मनोहर मुख कमल हैं ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

पद्मकोशपलाशाक्षं सुन्दरभ्रु सुनासिकम् ।
सुद्विजं सुकपोलास्यं समकर्णविभूषणम् ॥४६॥

पदच्छेद—

पद्मकोश पलाशाक्षम् सुन्दरभ्रु सुनासिकम् ।
सुद्विजम् सुकपोल आस्यम् समकर्ण विभूषणम् ॥

शब्दार्थ—

पद्मकोश	१.	(उस रूप में) कमलदल की	सुद्विजम्	७.	सुन्दर दन्तावलि
पलाश	२.	पंखुड़ी के समान	सुकपोल	८.	मनोहर गाल (और)
अक्षम्	३.	विशाल नेत्र	आस्यम्	९.	मुख (तथा)
सुन्दर	४.	मनोहर	समकर्ण	१०.	समान कान
भ्रु	५.	भौंहें	विभूषितम् ॥	११.	सुशोभित हैं
सुनासिकम् ।	६.	सुघड़ नासिका			

श्लोकार्थ—उस रूप में कमल दल की पंखुड़ी के समान विशाल नेत्र, मनोहर भौंहें, सुघड़ नासिका, सुन्दर दन्तावली, मनोहर गाल और मुख तथा समान कान सुशोभित हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

प्रीतिप्रहसितापाङ्गमलकैरुपशोभितम् ।
लसत्पङ्कजकिञ्जल्कदुकूलं मृष्टकुण्डलम् ॥४७॥

पदच्छेद—

प्रीति प्रहसितअपाङ्गम् अलकैः उपशोभितम् ।
लसत् पङ्कज किञ्जल्क दुकूलम्, मृष्ट कुण्डलम् ॥

शब्दार्थ—

प्रीति	१.	(वह मुख) प्रीतिपूर्ण	लसत्	८.	फहराता हुआ
प्रहसित	२.	हास्य	पङ्कज	६.	कमल के
अपाङ्गम्	३.	तिरछी चितवन	किञ्जल्क	७.	पराग के समान
अलकैः	४.	घुंघराले बालों से	दुकूलम्	९.	पीताम्बर (और)
उपशोभितम् ।	५.	शोभायमान है (तथा)	मृष्टकुण्डलम् ॥	१०.	चमकदार कुण्डलों से शोभित है

श्लोकार्थ—वह मुख प्रीति पूर्ण हास्य, तिरछी चितवन, घुंघराले बालों से शोभायमान है तथा कमल के पराग के समान फहराता हुआ पीताम्बर और चमकदार कुण्डलों से शोभित है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

स्फुरत्किरीटवलयहारनूपुरमेखलम् ।
शङ्खचक्रगदापद्ममालामण्युत्तमर्द्धिमत् ॥४८॥

पदच्छेद—

स्फुरत् किरीट वलय हार नूपुर मेखलम् ।
शङ्ख चक्र गदा पद्म माला मणि उत्तमऋद्धिमत् ॥

शब्दार्थ—

स्फुरत्	६.	सुशोभित है (तथा)	चक्र	८.	चक्र
किरीट	१.	(वह रूप) मुकुट	गदा	९.	गदा
वलय	२.	कंकण	पद्म	१०.	कमल
हार	३.	हार	माला	११.	माला (और)
नूपुर	४.	पायजेब (और)	मणि	१२.	कौस्तुभ मणि से
मेखलम् ।	५.	करधनी की लड़ियों से	उत्तम	१३.	अत्यन्त
शङ्ख	७.	शङ्ख	ऋद्धिम् ॥	१४.	शोभा पा रहा है

श्लोकार्थ—वह रूप मुकुट, कंकण, हार, पायजेब और करधनी की लड़ियों से सुशोभित है । शङ्ख, चक्र, गदा, कमल, माला और कौस्तुभ मणि से अत्यन्त शोभा पा रहा है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

सिंहस्कन्धत्विषो बिभ्रत्सौभगग्रीवकौस्तुभम् ।
श्रियानपायिन्या क्षिप्तनिकषाश्मोरसोल्लसत् ॥४९॥

पदच्छेद—

सिंह स्कन्धत्विषः बिभ्रत् सौभगग्रीव कौस्तुभम् ।
श्रियाअनपायिन्या क्षिप्त निकष अश्म उरसा उल्लसत् ॥

शब्दार्थ—

सिंह	१.	(उस रूप में) सिंह के समान	श्रिया	८.	लक्ष्मी के कारण
स्कन्धत्विषः	२.	कन्धे की कान्ति	अनपायिन्या	७.	नित्य निवास करने वाली
बिभ्रत्	३.	विद्यमान है (तथा)	क्षिप्त	१०.	तिरस्कृत करने वाले
सौभग	६.	शोभाय मान है	निकषअश्म	९.	कसौटी की शोभा को
ग्रीव	४.	गर्दन में	उरसा	११.	वक्षः स्थल से
कौस्तुभम् ।	५.	कौस्तुभ मणि	उल्लसत् ॥	१२.	सुशोभित है

श्लोकार्थ—उस रूप में सिंह के समान कन्धे की कान्ति विद्यमान है तथा गर्दन में कौस्तुभमणि शोभायमान हैं। नित्य निवास करने वाली लक्ष्मी के कारण कसौटी की शोभा को तिरस्कृत करने वाले वक्षः स्थल से सुशोभित है ॥

पञ्चाशः श्लोकः

पूररेचकसंविग्नवलिवल्गुदलोदरम् ।
प्रतिसंक्रामयद्विश्वं नाभ्याऽऽवर्तगभीरया ॥५०॥

पदच्छेद—

पूर रेचक संविग्न वलि वल्गु दल उदरम् ।
प्रति संक्रामयद् विश्वम् नाभ्या आवर्त गभीरया ॥

शब्दार्थ—

पूर	१.	(उसमें) श्वास और	उदरम्	७.	उदर है (वह रूप)
रेचक	२.	उच्छ्वास से	प्रतिसंक्रामयद्	१२.	लीन कर लेना चाहता है
संविग्न	३.	चलायमान	विश्वम्	११.	मानों संसार को
वलि	४.	त्रिवली के कारण	नाभ्या	१०.	नाभि में
वल्गु	६.	मनोहर	आवर्त	८.	भंवर के समान
दल	५.	पीपल के पत्ते के समान	गभीरया ॥	९.	गहरी

श्लोकार्थ—उसमें श्वास और उच्छ्वास से चलायमान त्रिवली के कारण पीपल के पत्ते के समान मनोहर उदर है। वह रूप भंवर के समान गहरी नाभि में मानों संसार को लीन कर लेना चाहता है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

श्यामश्रोण्यधिरोचिष्णुदुकूलस्वर्णमेखलम् ।
समचार्वङ्घ्रिजङ्घोरुनिम्नजानुसुदर्शनम् ॥५१॥

पदच्छेद— श्याम श्रोणी अधिरोचिष्णु दुकूल स्वर्ण मेखलम् ।
समचारु अङ्घ्रि जङ्घाउरु निम्न जानु सुदर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

श्याम	१.	(वह रूप) मनोहर	चारु	८.	मनोहर
श्रोणी	२.	कटि भाग	अङ्घ्रि	९.	चरण
अधिरोचिष्णु	३.	चमकदार	जङ्घा	१०.	पिंडली
दुकूल	४	पीताम्बर	उरु	११.	जाँघें (और)
स्वर्ण	५.	सुवर्ण की	निम्न	१२.	दबे
मेखलम् ।	६.	करधनी	जानु	१३.	घुटनों से
सम	७.	समान (और)	सुदर्शनम् ॥	१४.	सुहावना है

श्लोकार्थ—वह रूप कटिभाग, चमकदार पीताम्बर, सुवर्ण की करधनी, समान और मनोहर, चरण, पिंडली, जाँघें और दबे घुटनों से सुहावना है ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

पदा शरत्पद्मपलाशरोचिषा नखद्युभिर्नोऽन्तरघं विधुन्वता ।
प्रदर्शय स्वीयमपास्तसाध्वसं पदं गुरो मार्गगुरुस्तमोजुषाम् ॥५२॥

पदच्छेद— पदाशरत् पद्म पलाश रोचिषा, नख द्युभिः नः अन्तरघम् विधुन्वता ।
प्रदर्शय स्वीयम् अपास्त साध्वसम्, पदम् गुरो मार्ग गुरुः तमः जुषाम् ॥

शब्दार्थ—

पदा	१०.	चरणों से (और)	प्रदर्शय	२०.	दर्शन करावें
शरत्	६.	शरद् ऋतु के	स्वीयम्	१८.	अपने
पद्म	७.	कमल	अपास्त	१७.	रहित
पलाश	८.	दल के समान	साध्वसम्	१६.	भय से
रोचिषा	९.	कान्तिमान्	पदम्	१९.	परमधाम का
नख	११.	नखों के	गुरो	१.	हे जगद्गुरो आप
द्युभिः	१२.	प्रकाश से	मार्ग	४.	मार्ग
नः	१३.	हमारे	गुरुः	५.	दर्शक हैं (आप)
अन्तरघम्	१४.	मन के पाप को	तमः	२.	अज्ञान में
विधुन्वता ।	१५.	दूर करें (तथा)	जुषाम् ॥	३.	रहने वाले प्राणियों के

श्लोकार्थ—हे जगद्गुरो ! आप अज्ञान में रहने वाले प्राणियों के मार्ग दर्शक हैं । आप शरद् ऋतु के कमल दल के समान कान्तिमान् चरणों से और नखों के प्रकाश से हमारे मन के पाप को दूर करें; तथा भय से रहित अपने परमधाम के दर्शन करावें ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

एतद्रूपमनुध्येयमात्मशुद्धिमभीप्सताम् ।
यद्भक्तियोगोऽभयदः स्वधर्ममनुतिष्ठताम् ॥५३॥

पदच्छेद—

एतद् रूपम् अनुध्येयम् आत्म शुद्धिम् अभीप्सताम् ।
यद् भक्ति योगः अभयदः स्वधर्मम् अनुतिष्ठताम् ॥

शब्दार्थ—

एतद्	४.	ऊपर कहे गये	यद्	७.	क्योंकि
रूपम्	५.	भगवान् के रूप का	भक्तियोगः	८.	भगवान् की भक्ति
अनुध्येयम्	६	ध्यान करना चाहिये	अभयदः	१२.	अभय पद देती है
आत्म	१	आत्मा की	स्व	९.	अपने
शुद्धिम्	२.	शुद्धि	धर्मम्	१०.	वर्णाश्रम धर्म का
अभीप्सताम् ।	३.	चाहने वाले मनुष्यों को	अनुतिष्ठताम् ॥	११.	पालन करने वालों को

श्लोकार्थ—आत्मा की शुद्धि चाहने वाले मनुष्यों को ऊपर कहे गये भगवान् के रूप का ध्यान करना चाहिये । क्योंकि भगवान् की भक्ति अपने वर्णाश्रम धर्म का पालन करने वालों को अभय पद देती है ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

भवान् भक्तिमता लभ्यो दुर्लभः सर्वदेहिनाम् ।
स्वाराज्यस्याप्यभिमत एकान्तेनात्मविद्गतिः ॥५४॥

पदच्छेद—

भवान् भक्तिमता लभ्यः दुर्लभः सर्वदेहिनाम् ।
स्वाराज्यस्य अपि अभिमतः एकान्तेन आत्मविद् गतिः ॥

शब्दार्थ—

भवान्	१.	आप (केवल)	स्वाराज्यस्य	७.	इन्द्र को
भक्तिमता	२.	भक्तिमान् पुरुष को	अपि	८.	भी
लभ्यः	३.	दर्शन देते हैं	अभिमतः	१०.	अभीष्ट है (तथा)
दुर्लभः	६.	दुर्लभ है (क्योंकि)	एकान्तेन	९.	एक मात्र आप ही
सर्व	४.	सभी	आत्मविद्	११.	आत्म ज्ञानियों के
देहिनाम् ।	५.	प्राणियों को (आप का दर्शन)	गतिः ॥	१२.	शरण दाता हैं

श्लोकार्थ—आप केवल भक्ति मान् पुरुष को दर्शन देते हैं । सभी प्राणियों को आपका दर्शन दुर्लभ है । क्योंकि इन्द्र को भी एक मात्र आप ही अभीष्ट हैं । आप ही आत्मज्ञानियों के शरण दाता हैं ॥

पञ्चपञ्चाश श्लोक

तं दुराराध्यमाराध्य सतामपि दुरापया।
एकान्तभक्त्या को वाञ्छेत्पादमूलं विना बहिः ॥५५॥

पदच्छेद—

तम् दुराराध्यम् आराध्य सताम् अपि दुरापया।
एकान्त भक्त्या कः वाञ्छेत् पाद मूलम् विना बहिः ॥

शब्दार्थ—

तम्	७.	उस (आपको)	भक्त्या	५.	भक्ति के द्वारा
दुराराध्यम्	६.	दुः साध्य	कः	६.	कौन पुरुष
आराध्य	८.	पाकर (भला)	वाञ्छेत्	१४.	इच्छा करेगा
सताम्	१.	सन्तों को	पाद	१०.	आपके चरण
अपि	२.	भी	मूलम्	११.	तल को
दुरापया।	३.	दुर्लभ	विना	१२.	छोड़कर
एकान्त	४.	अनन्य	बहिः ॥	१३.	बाहरी वस्तुओं की

श्लोकार्थ—सन्तो को भी दुर्लभ अनन्य भक्ति के द्वारा दुःसाध्य उस आपको पाकर भला कौन पुरुष आपके चरणतल को छोड़कर बाहरी वस्तुओं की इच्छा करेगा ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

यत्र निर्विष्टमरणं कृतान्तो नाभिमन्यते।
विश्वं विध्वंसयन् वीर्यशौर्यविस्फूर्जितभ्रुवा ॥५६॥

पदच्छेद—

यत्र निर्विष्टम् अरणम् कृतान्तः न अभिमन्यते।
विश्वम् विध्वंसयन् वीर्य शौर्य विस्फूर्जित भ्रुवा ॥

शब्दार्थ—

यत्र	८.	जिन चरणों की	विश्वम्	५.	संसार का
निर्विष्टम्	१०.	गये हुये (प्राणियों पर अपना)	विध्वंसयन्	६.	विनाश करने वाले हैं
अरणम	९.	शरण में	वीर्य	१.	अपनी शक्ति (और)
कृतान्तः	७.	यमराज (भी)	शौर्य	२.	उत्साह से
न	११.	नहीं	विस्फूर्जित	३.	फड़कती
अभिमन्यते।	१२.	अधिकार रखता है	भ्रुवा ॥	४.	भौंहों के द्वारा

श्लोकार्थ—अपनी शक्ति और उत्साह से फड़कती भौहों के द्वारा संसार का विनाश करने वाले हैं। यमराज भी जिन चरणों की शरण में गये हुये प्राणियों पर अपना अधिकार नहीं रखता है ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
भगवत्सङ्गिसङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिषः ॥५७॥

पदच्छेद— क्षण अर्धेन अपि तुलये न स्वर्गम् न अपुनर्भवम् ।
भगवत् सङ्गि सङ्गस्य मर्त्यानाम् किमुत आशिषः ॥

शब्दार्थ—

क्षण	५.	क्षण से	अपुनर्भवम्	१०.	मोक्ष की
अर्धेन	४.	आधे	भगवत्	१.	(मैं) भगवान् के
अपि	६.	भी	सङ्गि	२.	भक्तों की
तुलये	११.	तुलना करता हूँ (फिर)	सङ्गस्य	३.	संगति के
न	७.	न	मर्त्यानाम्	१२.	संसार के प्राणियों के
स्वर्गम्	८.	स्वर्ग की	किमुत	१४.	बात ही क्या है
न	९.	न	आशिषः ॥	१३.	मनोरथों की तो

श्लोकार्थ—मैं भगवान् के भक्तों की सत् संगति के आधे क्षण से भी न स्वर्ग की न मोक्ष की तुलना करता हूँ । फिर संसार के प्राणियों के मनोरथों की तो बात ही क्या है ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

अथानघाङ्घ्रेस्तव कीर्तितीर्थयोरन्तर्बहिःस्नानविधूतपाप्मनाम् ।
भूतेष्वनुक्रोशसुसत्त्वशीलिनां स्यात्सङ्गमोऽनुग्रह एष नस्तव ॥५८॥

पदच्छेद— अथ अनघअङ्घ्रेः तव कीर्ति तीर्थयोः अन्तः बहिः स्नानविधूत पाप्मनाम् ।
भूतेषु अनुक्रोशसुसत्त्व शीलिनाम्, स्यात् सङ्गमः अनुग्रहः एष नः तव ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	अब	भूतेषु	१३.	प्राणियों पर
अनघ अङ्घ्रेः	६.	पाप विनाशी चरणों के	अनुक्रोश	१४.	दया (और)
तव	५.	आपके	सुसत्त्व	१५.	सात्त्विक-भाव
कीर्ति	७.	यशोगान (और)	शीलिनाम्	१६.	रखने वाले भक्तों की
तीर्थयोः	८.	गंगादि तीर्थ में	स्यात्	१८.	मिलती रहे
अन्तः बहिः	१०.	मन के अन्दर और बाहर	सङ्गमः	१७.	संगति
स्नान	९.	स्नान करने के कारण	अनुग्रहः	४.	कृपा (हो कि) मुझे
विधूत	१२.	रहित (तथा)	एषः	३.	यही
पाप्मनाम् ।	११.	पापों से	नः तव ॥	२.	हम पर आप की

श्लोकार्थ—अब हम पर आपकी यही कृपा हो कि मुझे आपके पाप विनाशी चरणों के यशोगान और गंगादि तीर्थ में स्नान करने के कारण मन के अन्दर और बाहर पापों से रहित तथा प्राणियों पर दया और सात्त्विक-भाव रखने वाले भक्तों की संगति मिलती रहे ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

न यस्य चित्तं बहिरर्थविभ्रमं तमोगुहायां च विशुद्धमाविशत् ।
यद्भक्तियोगानुगृहीतमञ्जसा मुनिर्विचष्टे ननु तत्र ते गतिम् ॥५९॥

पदच्छेद— न यस्य चित्तम् बहिः अर्थविभ्रमम्, तमः गुहायाम् च विशुद्धम् आविशत् ।
यद् भक्तियोग अनुगृहीतम् अञ्जसा, मुनिः विचष्टे ननु तत्र ते गतिम् ॥

शब्दार्थ—

न	१२.	नहीं	यद्	१.	जिस आपके
यस्य	४.	जिसका	भक्तियोग	२.	भक्ति योग का
चित्तम् बहिः	६.	मन बाहरी	अनुगृहीतम्	३.	कृपा पात्र
अर्थ	७.	वस्तुओं के	अञ्जसा	१८.	सरलता से
विभ्रमम्	८.	जाल में	मुनिः	१४.	वह भक्त (अपने)
तमः	१०.	अज्ञान रूपी	विचष्टे	२०.	दर्शन करता है
गुहायाम्	११.	गुहा में	ननु	१९	अवश्य ही
च	९.	और	तत्र	१५.	उस चित्त में
विशुद्धम्	५.	निर्मल	ते	१६.	आप के
आविशत् ।	१३.	प्रवेश करता है	गतिम् ॥	१७.	स्वरूप का

श्लोकार्थ—जिस आपके भक्तियोग का कृपापात्र जिसका निर्मल मन बाहरी वस्तुओं के जाल में और अज्ञानरूपी गुहा में प्रवेश नहीं करता है, वह भक्त अपने उस चित्त में आपके स्वरूप का सरलता से अवश्य ही दर्शन करता है ॥

षष्टितमः श्लोकः

यत्रेदं व्यज्यते विश्वं विश्वस्मिन्नवभाति यत् ।
तत् त्वं ब्रह्म परं ज्योतिराकाशमिव विस्तृतम् ॥६०॥

पदच्छेद— यत्र इदं व्यज्यते विश्वं विश्वस्मिन्नवभाति यत् ।
तत् त्वम् ब्रह्म परम् ज्योतिः आकाशम् इव विस्तृतम् ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१.	जिस आप में	तत्	८.	वह
इदम्	२.	यह	त्वम्	१४.	आप (ही हैं)
व्यज्यते	४.	प्रकट होता है (और)	ब्रह्म	१३.	ब्रह्म
विश्वम्	३.	संसार	परम्ज्योतिः	१२.	परम प्रकाश
विश्वस्मिन्	५.	इस संसार में	आकाशम्	९.	आकाश के
अवभाति	७.	प्रकाशित हो रहे हैं	इव	१०.	समान
यत्	६.	जो (आप)	विस्तृतम् ॥	११.	व्यापक

श्लोकार्थ—जिस आप में यह संसार प्रकट होता है और इस संसार में जो आप प्रकाशित हो रहे हैं; वह आकाश के समान व्यापक परम प्रकाश ब्रह्म आप ही हैं ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

यो माययेदं पुरुरूपयासृजद् बिभर्ति भूयः क्षपयत्यविक्रियः ।
यद्भेदबुद्धिः सदिवात्मदुःस्थया तमात्मतन्त्रं भगवन् प्रतीमहि ॥६१॥

पदच्छेद—यः मायया इदम् पुरुरूपया असृजद् बिभर्ति भूयः क्षपयतिअविक्रियः ।
यद्भेद बुद्धिः सद् इव आत्म दुःस्थया तम् आत्मतन्त्रम् भगवन् प्रतीमहि ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	यद्	१०.	जिसकी माया के कारण
मायया	४.	माया से	भेद, बुद्धिः	११.	लोगों में बुद्धि होती है
इदम्	५.	इस संसार की	सद् इव	१२.	संसार सत्य प्रतीत होता है
पुरु, रूपया	३.	अपनी अनेक रूपों वाली	आत्म	१३.	और वह स्वयं आप में
असृजत्	६.	बनाता है	दुःस्थया	१४.	स्थित रहती है
बिभर्ति	७.	पालता है	तम् आत्म	१६.	उस आपको हम परम
भूयः	८.	और फिर	तन्त्रम्	१७.	स्वतंत्र
क्षपयति	९.	संहार करता है (तथा)	भगवन्	१५.	हे प्रभो
अविक्रियः ।	२.	निर्विकार परमात्मा	प्रतीमहि ॥	१८.	समझते हैं ।

श्लोकार्थ—जो निर्विकार परमात्मा अपनी अनेक रूपों वाली माया से इस संसार को बनाता है, पालता है और फिर संहार करता है तथा जिसकी माया के कारण लोगों में भेद बुद्धि होती है । संसार सत्य प्रतीत होता है और वह स्वयं आप में स्थित रहती है हे प्रभो ! उस आपको हम परम स्वतंत्र समझते हैं ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

क्रियाकलापैरिदमेव योगिनः श्रद्धान्विताः साधु यजन्ति सिद्धये ।
भूतेन्द्रियान्तःकरणोपलक्षितं वेदे च तन्त्रे च त एव कोविदाः ॥६२॥

पदच्छेद— क्रिया कलापैः इदम् एव योगिनः श्रद्धा अन्विताः साधु यजन्ति सिद्धये ।
भूत इन्द्रिय अन्तः करण उपलक्षितम् वेदे च तन्त्रे च ते एव कोविदाः ॥

शब्दार्थ—

क्रिया, कलापैः	४.	यज्ञादि अनुष्ठानों से	भूत, इन्द्रिय	८.	जो पञ्च महाभूत इन्द्रिय
इदम्, एव	६.	इस साकार रूप का ही	अन्तः करण	९.	अन्तःकरण से
योगिनः	१.	योगी पुरुष	उपलक्षितम्	१०.	ज्ञात होने वाले
श्रद्धा, अन्विताः	३.	भक्ति के साथ	वेदे, च	११.	(उस रूप को) वेद में और
साधु	५.	भली भांति	तन्त्रे, च	१२.	शास्त्र में (देखते हैं)
यजन्ति	७.	पूजन करते हैं	ते एव	१३.	वे ही
सिद्धये ।	२.	सिद्धि की प्राप्ति के लिये	कोविदाः ॥	१४.	विद्वान् हैं

श्लोकार्थ—योगी पुरुष सिद्धि की प्राप्ति के लिये भक्ति के साथ यज्ञादि अनुष्ठानों से भली भांति इस साकार रूप का ही पूजन करते हैं । जो पञ्च महाभूत एकादश इन्द्रिय और अन्तःकरण से ज्ञात होने वाले उस रूप को वेद में और शास्त्र में देखते हैं, वे ही विद्वान् हैं ॥

त्रिषष्टितम श्लोकः

त्वमेक आद्यः पुरुषः सुप्तशक्तिस्तया रजःसत्त्वतमो विभिद्यते ।
महानहं खं मरुदग्निवार्धराः सुरर्षयो भूतगणा इदं यतः ॥६३॥

पदच्छेद—त्वम् एकः आद्यः पुरुषः सुप्तशक्तिः, तया रजः सत्त्वतमो विभिद्यते ।
महान् अहम् खम् मरुत् अग्नि वाः धराः सुर ऋषयः भूत गणाः इदम् यतः ॥

शब्दार्थ—

त्वम् एकः	१.	आप, अद्वितीय	महान् अहम्	९.	जिनसे महत्तत्त्व, अहंतत्त्व
आद्यः पुरुषः	२.	आदि, पुरुष हैं	खम् मरुत्	१०.	आकाश, वायु
सुप्त	४.	सोई रहती है	अग्नि वाः धराः	११.	तेज जल पृथ्वी
शक्तिः	३.	आपकी शक्ति	सुर ऋषयः	१२.	देवता ऋषिगण (और)
तया	५.	उस शक्ति के द्वारा	भूतगणाः	१३.	प्राणियों का समूह
रजः सत्त्व	७.	रजोगुण सत्त्वगुण (और)	इदम्	१४.	यह संसार (उत्पन्न होता है)
तमः विभिद्यते ।	८.	तमोगुण प्रकट होते हैं	यतः ॥	६.	जिस आप से

श्लोकार्थ—आप अद्वितीय आदिपुरुष हैं ! आपकी शक्ति सोई रहती है । उस शक्ति के द्वारा जिस आपसे रजोगुण, सत्त्वगुण, तमोगुण प्रकट होते हैं । जिनसे महत्तत्त्व, अहंतत्त्व, आकाश, वायु, तेज, जल, पृथ्वी, देवता, ऋषिगण और प्राणियों का समूह यह संसार उत्पन्न होता है ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

सृष्टं स्वशक्त्येदमनुप्रविष्टश्चतुर्विधं पुरमात्मांशकेन ।
अथो विदुस्तं पुरुषं सन्तमन्तर्भुङ्क्ते हृषीकैर्मधु सारघं यः ॥६४॥

पदच्छेद—सृष्टम् स्वशक्त्या इदम् अनुप्रविष्टः, चतुर्विधम् पुरम् आत्मा अंशकेन ।
अथो विदुःतम् पुरुषम् सन्तम् अन्तः भुङ्क्ते हृषीकैः मधु सारघम् यः ॥

शब्दार्थ—

सृष्टम्	२.	रचे गये	पुरुषम्	१०.	पुरुष या जीव
स्वशक्त्या	१.	अपनी शक्ति से	सन्तम्	७.	वहाँ रहने वाले
इदम्	३.	इस	अन्तः	१५.	अन्दर
अनुप्रविष्टः	६.	प्रवेश करता है	भुङ्क्ते	१७.	भोग करता है
चतुर्विधम् पुरम्	४.	चार प्रकार के शरीरों में	हृषीकैः	१६.	इन्द्रियों से
आत्म, अंशकेन ।	५.	अपने अंश से	मधु	१३.	मधु का (आस्वाद लेने वाली)
अथो	९.	ही	सारघम्	१४.	मधुमक्खियों के (समान)
विदुः	११.	कहते हैं	यः ॥	१२.	जो
तम्	८.	उस अंश को			

श्लोकार्थ—अपनी शक्ति से रचे गये इस चार प्रकार के शरीरों में अपने अंश से प्रवेश करता है । वहाँ रहने वाले उस अंश को ही पुरुष या जीव कहते हैं । जो मधु का आस्वाद लेने वाली मधुमक्खियों के समान अन्दर इन्द्रियों से भोग करता है ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

स एष लोकानतिचण्डवेगो विकर्षसि त्वं खलु कालयानः ।
भूतानि भूतैरनुमेयतत्त्वो घनावलीर्वायुरिवाविषह्यः ॥६५॥

पदच्छेद— सः एषः लोकान् अति चण्डवेगः विकर्षसि त्वम् खलु कालयानः ।
भूतानि भूतैः अनुमेय तत्त्वः घन अवलीःवायुः इव अविषह्यः ॥

शब्दार्थ—

सः	७.	वही	भूतानि	१२.	प्राणियों का
एषः	६.	उसी प्रकार (इस समय)	भूतैः	११.	प्राणियों से
लोकान्	१४.	लोकों का	अनुमेय	१७.	अनुमान से ही आपके
अतिचण्ड	९.	(अपनी) प्रबल	तत्त्वः	१८.	स्वरूप का ज्ञान होता है
वेगः	१०.	गति के द्वारा	घन	४.	बादलों के
विकर्षसि	१५.	संहार करते हैं (तथा)	अवलीः	५.	झुण्ड को (अलग कर देती है)
त्वम्	८.	आप	वायुः	३.	हवा (आपसी टकराहट से)
खलु	१६.	हे प्रभो	इव	१.	जैसे
कालयानः ।	१३.	संघर्ष कराकर	अविषह्यः ॥	२.	तेज

श्लोकार्थ— जैसे तेज हवा आपसी टकराहट से बादलों के झुण्ड को अलग कर देती है उसी प्रकार इस समय वही आप अपनी प्रबल गति के द्वारा प्राणियों से, प्राणियों का संघर्ष कराकर सभी लोकों का संहार करते हैं । तथा हे प्रभो ! अनुमान से ही आपके स्वरूप का ज्ञान होता है ॥

षट्षष्टितमः श्लोकः

प्रमत्तमुच्चैरितिकृत्यचिन्तया प्रवृद्धलोभं विषयेषु लालसम् ।
त्वमप्रमत्तः सहसाभिपद्यसे क्षुल्लेलिहानोऽहिरिवाखुमन्तकः ॥६६॥

पदच्छेद—प्रमत्तम् उच्चैःइति कृत्य चिन्तया, प्रवृद्ध लोभम् विषयेषु लालसम् ।
त्वम् अप्रमत्तः सहसा अभिपद्यसे क्षुत् लेलिहानः अहिः इव आखुम् अन्तकः ॥

शब्दार्थ—

प्रमत्तम्	४.	प्रमादी	त्वम् अप्रमत्तः	१.	आप सावधान होकर
उच्चैः	३.	अधिक	सहसा	११.	अचानक (ऐसे)
इतिकृत्य	१.	अपने कार्यों की	अभिपद्यसे	१२.	लील जाते हैं
चिन्तया	२.	चिन्ता के कारण	क्षुत् लेलिहानः	१४.	भूख से जीभ लपलपाता हुआ
प्रवृद्ध	५.	बहुत बड़े	अहिः	१५.	सांप
लोभम्	६.	लोभी (तथा)	इव	१३.	जैसे
विषयेषु	७.	शब्दादि विषयों में	आखुम्	१७.	चूहे को (खा जाता है)
लालसम् ।	८.	आसक्त प्राणी को	अन्तकः ॥	९.	काल स्वरूप

श्लोकार्थ—अपने कर्मों की चिन्ता के कारण अधिक प्रमादी, बहुत बड़े लोभी तथा शब्दादि विषयों में आसक्त प्राणी को काल स्वरूप आप सावधान होकर अचानक ऐसे ही लील जाते हैं जैसे भूख से जीभ लपलपाता हुआ सांप चूहे को खा जाता है ॥

सप्तषष्टितमः श्लोकः

कस्त्वत्पदाब्जं विजहाति पण्डितो यस्तेऽवमानव्ययमानकेतनः ।
विशङ्कयास्मद्गुरुरर्चति स्म यद् विनोपपत्तिं मनवश्चतुर्दश ॥६७।

पदच्छेद—

कः त्वत् पद अब्जम् विजहाति पण्डितः यः ते अवमान व्यय मानकेतनः ।
विशङ्कया अस्मद् गुरुः अर्चति स्म यद् विना उपपत्तिम् मनवः चतुर्दश ॥

शब्दार्थ—

कः	५.	कौन	विशङ्कया	१६.	मृत्यु भय के कारण
त्वत्	७	आपके	अस्मद् गुरुः	११.	हमारे पिता ब्रह्मा जी
पदअब्जम्	८.	चरण कमल को	अर्चति	१७.	आपकी पूजा करते
विजहाति	९.	छोड़ेगा	स्म	१८.	हैं
पण्डितः यः	६.	ज्ञानी पुरुष (होगा) जो	यद्	१०.	क्योंकि
ते अवमान	१.	आपका अपमान करके	विना	१४.	बिना
व्यय	४.	नाश करने वाला	उपपत्तिम्	१५.	विचारे
मान	३.	आयु का	मनवः	१२.	स्वायम्भुव आदि
केतनः ।	२.	अपने शरीर की	चतुर्दश ॥	१३.	चौदहों मनु

श्लोकार्थ—आपका अपमान करके अपने शरीर की आयु नाश करने वाला कौन ज्ञानी पुरुष होगा जो आप के चरण कमल को छोड़ेगा । क्योंकि हमारे पिता ब्रह्मा जी स्वायम्भुव आदि चौदहों मनु बिना विचारे मृत्युभय के कारण आपकी पूजा करते हैं ।

अष्टषष्टितमः श्लोकः

अथ त्वमसि नो ब्रह्मन् परमात्मन् विपश्चिताम् ।
विश्वं रुद्रभयध्वस्तमकुतश्चिद्भया गतिः ॥६८॥

पदच्छेद—

अथ त्वम् असि नः ब्रह्मन् परमात्मन् विपश्चिताम् ।
विश्वम् रुद्र भय ध्वस्तम् अकुतश्चित् भया गतिः ॥

शब्दार्थ—

अथ	६.	अतः	विश्वम्	२.	सारा संसार
त्वम्	१०.	आप ही	रुद्र	३.	आपके रुद्र स्वरूप के
असि	१४.	हैं	भय	४.	भय से
नः	९.	हम लोगों के लिये	ध्वस्तम्	५,	व्याकुल है
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्	अकुतश्चित्	१२.	रहित
परमात्मन्	७.	हे भगवन् इसे	भया	११.	भय से
विपश्चितम् ।	८.	जानने वाले	गतिः	१३.	शरण दाता

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! सारा संसार आपके रुद्र स्वरूप के भय से व्याकुल हैं । अतः हे भगवन् ! इसे जानने वाले हम लोगों के लिये आप ही भय से रहित शरणदाता हैं ॥

एकोनसप्ततितमः श्लोकः

इदं जपत भद्रं वो विशुद्धा नृपनन्दनाः ।
स्वधर्ममनुतिष्ठन्तो भगवत्यर्पिताशयाः ॥६९॥

पदच्छेद—

इदम् जपत भद्रम् वः विशुद्धाः नृप नन्दनाः ।
स्वधर्मम् अनुतिष्ठन्तः भगवति अर्पित आशयाः ॥

शब्दार्थ—

इदम्	९.	इस स्तोत्र का	स्व	२.	अपने
जपत	१०.	पाठ करें	धर्मम्	३.	धर्म का
भद्रम्	१२.	कल्याण होगा	अनुतिष्ठन्तः	४.	आचरण करने से
वः	११.	आप लोगों का	भगवति	६.	भगवान् श्री हरि में
विशुद्धाः	५.	निर्मल मन (आप सब)	अर्पित	८.	लगाकर
नृपनन्दनाः ।	१.	हे राजकुमारों	आशयाः ॥	७.	चित्त

श्लोकार्थ— हे राजकुमारो ! अपने धर्म का आचरण करने से निर्मल मन आप सब भगवान् श्री हरि में चित्त लगाकर इस स्तोत्र का पाठ करें । आप लोगों का कल्याण होगा ॥

सप्ततितमः श्लोकः

तमेवात्मानमात्मस्थं सर्वभूतेष्ववस्थितम् ।
पूजयध्वं गृणन्तश्च ध्यायन्तश्चासकृद्धरिम् ॥७०॥

पदच्छेद—

तम् एव आत्मानम् आत्मस्थम् सर्व भूतेषु अवस्थितम् ।
पूजयध्वम् गृणन्तः च ध्यायन्तः च असकृत् हरिम् ॥

शब्दार्थ—

तम्, एव	६.	उसी	पूजयध्वम्	१२.	पूजन करो
आत्मानम्	७.	परमात्मा	गृणन्तः च	९.	स्तुति करते (हुये और)
आत्मस्थम्	५.	आत्मा में स्थित	ध्यायन्तः	११.	ध्यान करते हुये
सर्व	१.	सभी	च	४.	तथा
भूतेषु	२.	प्राणियों में	असकृत्	१०.	बार-बार
अवस्थितम् ।	३.	अन्तर्यामिरूप से व्याप्त	हरिम् ॥	८.	श्री हरि की

श्लोकार्थ—सभी प्राणियों में अन्तर्यामिरूप से व्याप्त तथा आत्मा में स्थित उसी परमात्मा श्री हरि की स्तुति करते हुये बार-बार ध्यान करते हुये पूजन करो ॥

एकसप्ततितम श्लोकः

योगादेशमुपासाद्य धारयन्तो मुनिव्रताः ।
समाहितधियः सर्वं एतदभ्यसताहताः ॥७१॥

पदच्छेद—

योगादेशम् उपासाद्य धारयन्तः मुनिव्रताः ।
समाहित धियः सर्व एतद् अभ्यसत आदृताः ॥

शब्दार्थ—

योगादेशम्	३	योगादेश नाम के	समाहितधियः	६.	एकाग्र बुद्धि में
उपासाद्य	६.	इसे समझें (और)	सर्वे	१	आप सभी लोग
धारयन्तः	१०.	धारण करें	एतद्	४.	इस स्तोत्र का
मुनि	७.	मुनियों के समान	अभ्यसत	५.	जप करें
व्रताः ।	८.	व्रत करते हुये	आदृताः ॥	२.	श्रद्धा के साथ

श्लोकार्थ—आप सभी लोग श्रद्धा के साथ योगादेश नाम के इस स्तोत्र का जप करें । इसे समझें और मुनियों के समान व्रत करते हुये एकाग्र बुद्धि से धारण करें ॥

द्विसप्ततितमः श्लोक

इदमाह पुरास्माकं भगवान् विश्वसृक्पतिः ।
भृग्वादीनामात्मजानां सिसृक्षुःसंसिसृक्षताम् ॥७२॥

पदच्छेद—

इदम् आह पुरा अस्माकम् भगवान् विश्वसृक् पतिः ।
भृगु आदीनाम् आत्मजानाम् सिसृक्षुः संसिसृक्ष ताम् ॥

शब्दार्थ—

इदम्	११.	यह स्तोत्र	पतिः ।	४.	स्वामी
आह	१२.	कहा था	भृगु	७.	महर्षि भृगु
पुरा	१.	पहले	आदीनाम्	८.	इत्यादि
अस्माकम्	९.	हम	आत्मजानाम्	१०.	पुत्रों से
भगवान्	५.	भगवान् ब्रह्मा जी ने	सिसृक्षुः	६.	सृष्टि करने के इच्छुक
विश्वसृक्	३.	प्रजापतियों के	संसिसृक्षताम् ॥	२.	सृष्टि करने की इच्छा वाले

श्लोकार्थ—पहले सृष्टि करने की इच्छा वाले प्रजापतियों के स्वामी भगवान् ब्रह्मा जी ने सृष्टि करने के इच्छुक महर्षि भृगु इत्यादि हम पुत्रों से यह स्तोत्र कहा था ॥

त्रिसप्ततितमः श्लोकः

ते वयं नोदिता: सर्वे प्रजासर्गे प्रजेश्वराः ।
अनेन ध्वस्ततमसः सिसृक्ष्मो विविधाः प्रजाः ।।७३।।

पदच्छेद—

ते वयम् नोदिताः सर्वे प्रजा सर्गे प्रजेश्वराः ।
अनेन ध्वस्त तमसः सिसृक्ष्मः विविधाः प्रजाः ।।

शब्दार्थ—

ते	१.	वे	अनेन	७.	इस स्तोत्र के पाठ से
वयम्	२.	हम	ध्वस्त	९.	नष्ट करके (हमने)
नोदिताः	६.	प्रेरित किये गये (तब)	तमसः	८.	अज्ञान को
सर्वे	३.	सभी	सिसृक्ष्मः	१२.	सृष्टि की थी
प्रजा सर्गे	५.	प्रजाओं की सृष्टि के लिये	विविधाः	१०.	अनेकों प्रकार के
प्रजेश्वराः ।	४.	प्रजापति (जब)	प्रजाः ।।	११.	प्राणियों की

श्लोकार्थ—वे हम सभी प्रजापति जब प्रजाओं की सृष्टि के लिये प्रेरित किये गये तब इस स्तोत्र के पाठ से अज्ञान को नष्ट करके हमने अनेकों प्रकार के प्राणियों की सृष्टि की थी ।।

चतुःसप्ततितमः श्लोकः

अथेदं नित्यदा युक्तो जपन्नवहितः पुमान् ।
अचिराच्छ्रेय आप्नोति वासुदेवपरायणः ।।७४।।

पदच्छेद—

अथ इदम् नित्यदा युक्तः जपन् अवहितः पुमान् ।
अचिरात् श्रेयः आप्नोति वासुदेव परायणः ।।

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसलिये	पुमान् ।	४.	(जो) मनुष्य
इदम्	७.	इस स्तोत्र का	अचिरात्	१०.	शीघ्र
नित्यदा	८.	प्रतिदिन	श्रेयः	११.	परम कल्याण को
युक्तः	५.	एकाग्र चित्त होकर	आप्नोति	१२.	प्राप्त करता है
जपन्	९.	जप करता है (वह)	वासुदेव	२.	भगवान् श्री हरि का
अवहितः	६.	सावधानी से	परायणः ।।	३.	भक्त

श्लोकार्थ—इसलिये भगवान् श्री हरि का भक्त जो मनुष्य एकाग्र चित्त होकर सावधानी से इस स्तोत्र का प्रतिदिन जप करता है । वह शीघ्र परम कल्याण को प्राप्त करता है ।।

पञ्चसप्ततितमः श्लोकः

श्रेयसामिह सर्वेषां ज्ञानं निःश्रेयसं परम् ।
सुखं तरति दुष्पारं ज्ञाननौर्व्यसनार्णवम् ।।७५।।

पदच्छेद— श्रेयसाम् इह सर्वेषाम् ज्ञानम् निः श्रेयसम् परम् ।
सुखम् तरति दुष्पारम् ज्ञान नौः व्यसन अर्णवम् ।।

शब्दार्थ—

श्रेयसाम्	३.	कल्याण साधनों में	सुखम्	१२.	अनायास
इह	१.	इस लोक में	तरति	१३.	पार कर लेता है
सर्वेषाम्	२.	सभी	दुष्पारम्	६.	दुस्तर
ज्ञानम्	४.	अध्यात्मक ज्ञान ही	ज्ञान	७.	(मनुष्य) ज्ञानरूपी
निः श्रेयसाम्	६.	कल्याण का साधन है अतः	नौः	८.	नौका के द्वारा
परम् ।	५.	परम	व्यसन	१०.	दुःखरूपी संसार
			अर्णवम् ।।	११.	सागर को

श्लोकार्थ—इस लोक में सभी कल्याण साधनों में आध्यात्मिक ज्ञान ही परम कल्याण का साधन है । अतः मनुष्य ज्ञानरूपी नौका के द्वारा दुस्तर दुःख रूपी संसार सागर को अनायास ही पर कर लेता है ।।

षट्सप्ततितमः श्लोकः

य इमं श्रद्धया युक्तो मद्गीतं भगवत्स्तवम् ।
अधीयानो दुराराध्यं हरिमाराधयत्यसौ ।।७६।।

पदच्छेद— यः इमम् श्रद्धया युक्तः मद् गीतम् भगवत् स्तवम् ।
अधीयानः दुराराध्यम् हरिम् आराधयति असौ ।।

शब्दार्थ—

यः	३.	जो प्राणी	स्तवम् ।	१०.	स्तोत्र का
इमम्	६.	इस	अधीयानः	११.	पाठ करता है
श्रद्धया	४.	श्रद्धा के	दुराराध्यम्	२.	आराधना कठिन है (किन्तु)
युक्तः	५.	साथ	हरिम्	१.	भगवान् श्री हरि की
मद्	६.	मेरे द्वारा	आराधयति	१३.	प्रसन्न कर लेता है
गीतम्	७.	कहे गये	असौ ।।	१२.	वह प्राणी (उन्हें)
भगवत्	८.	भगवान् के			

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि की आराधना कठिन है; किन्तु जो प्राणी श्रद्धा के साथ मेरे द्वारा कहे गये भगवान् के इस स्तोत्र का पाठ करता है वह प्राणी उन्हें प्रसन्न कर लेता है ।।

सप्तसप्ततितमः श्लोकः

विन्दते पुरुषोऽमुष्माद्यद्यदिच्छत्यसंत्वरन् ।
मद्गीतगीतात्सुप्रीताच्छ्रेयसामेकवल्लभात् ॥७७॥

पदच्छेद—

विन्दते पुरुषः अमुष्मात् यद्-यद् इच्छति असंत्वरन् ।
मद् गीत गीतात् सुप्रीतात् श्रेयसाम् एक वल्लभात् ॥

शब्दार्थ—

विन्दते	१२.	प्राप्त कर लेता है	यद्	४.	मेरे द्वारा
पुरुषः	३.	(जो) पुरुष	गीत	५.	कहे गये स्तोत्र का
अमुष्मात्	९.	उस परमात्मा से	गीतात्	७.	पाठ करने से
यद्-यद्	१०.	जिन-जिन वस्तुओं की	सुप्रीतात्	८.	परम प्रसन्न हुये
इच्छति	११.	इच्छा करता है (वह सब)	श्रेयसाम्	१.	भगवान् सभी कल्याण साधनों के
असंत्वरन् ।	६.	स्थिर भाव से	एकवल्लभात् ॥	२.	एक मात्र प्रिय (हैं अतः)

श्लोकार्थ— भगवान् सभी कल्याण-साधनों के एक मात्र प्रिय हैं। जो पुरुष अतः मेरे द्वारा कहे गये स्तोत्र का स्थिर भाव से पाठ करने से परम प्रसन्न हुये उस परमात्मा से जिन-जिन वस्तुओं की इच्छा करता है। वह सब प्राप्त कर लेता है ॥

अष्टसप्ततितमः श्लोकः

इदं यः कल्य उत्थाय प्राञ्जलिः श्रद्धयान्वितः ।
शृणुयाच्छ्रावयेन्मर्त्यो मुच्यते कर्मबन्धनैः ॥७८॥

पदच्छेद—

इदम् यः कल्ये उत्थाय प्राञ्जलिः श्रद्धया अन्वितः ।
शृणुयात् श्रावयेत् मर्त्यः मुच्यते कर्म बन्धनैः ॥

शब्दार्थ—

इदम्	६.	इस स्तोत्र का	शृणुयात्	७.	श्रवण करता है
यः	१.	जो मनुष्य	श्रावयेत्	८.	(अथवा) सुनाता है
कल्येउत्थाय	२.	प्रातः काल उठकर	मर्त्यः	९.	(वह) मनुष्य
प्राञ्जलिः	३.	हाथ जोड़ कर	मुच्यते	१२.	मुक्त हो जाता है
श्रद्धया	४.	श्रद्धा के	कर्म	१०.	सांसारिक कर्मों के
अन्वितः ।	५.	साथ	बन्धनैः ॥	११.	बन्धनों से

श्लोकार्थ— जो मनुष्य प्रातः काल उठकर हाथ जोड़कर श्रद्धा के साथ श्रवण करता है अथवा सुनाता है वह मनुष्य सांसारिक कर्मों के बन्धनों से मुक्त हो जाता है ॥

एकोनाशीतितमः श्लोकः

गीतं मयेदं नरदेवनन्दनाः परस्य पुंसः परमात्मनः स्तवम् ।
जपन्त एकाग्रधियस्तपो महत् चरध्वमन्ते तत आप्स्यथेप्सितम् ॥७९॥

पदच्छेद—

गीतम् मया इदम् नरदेव नन्दनाः परस्य पुंसः परमात्मनः स्तवम् ।
जपन्तः एकाग्र धियः तपः महत्, चरध्वम् अन्ते ततः आप्स्यथ ईप्सितम् ॥

शब्दार्थ—

गीतम्	३.	कहे गये	एकाग्र	९.	शान्त
मया	२.	मेरे द्वारा	धियः	१०.	बुद्धि से
इदम्	७.	इस	तपः	१३.	तपस्या
नरदेवनन्दनाः	१.	हे राज कुमारों	महत्	१२.	कठिन
परस्य	४.	परम	चरध्वम्	१४.	करो
पुंसः	५.	पुरुष	अन्ते	१६.	तपस्या के अन्त में
परमात्मनः	६.	भगवान् श्री हरि के	ततः	१५.	तदनन्तर
स्तवम् ।	८.	स्तोत्र का	आप्स्यथ	१८.	प्राप्त करोगे
जपन्तः	११.	पाठ करते हुये	ईप्सितम् ॥	१७.	अपने मनोरथ को

श्लोकार्थ—हे राज कुमारों ! मेरे द्वारा कहे गये परम पुरुष भगवान् श्री हरि के इस स्तोत्र का शान्त, बुद्धि से पाठ करते हुये कठिन तपस्या करो। तदनन्तर तपस्या के अन्त में अपने मनोरथ को प्राप्त करोगे ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे रुद्रगीतं नाम चतुर्विशोऽध्यायः ॥२४॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

पञ्चविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति सन्दिश्य भगवान् बार्हिषदैरभिपूजितः।
पश्यतां राजपुत्राणां तत्रैवान्तर्दधे हरः ॥१॥

पदच्छेद—

इति सन्दिश्य भगवान् बार्हिषदैः अभिपूजितः।
पश्यताम् राजपुत्राणाम् तत्र एव अन्तर्दधे हरः ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	पश्यताम्	७.	देखते-देखते
सन्दिश्य	३.	उपदेश देने पर	राजपुत्राणाम्	६.	राज कुमारों को
भगवान्	१.	भगवान् शिव के	तत्र-एव	८.	वहीं पर
बार्हिषदैः	४.	प्रचेताओं ने	अन्तर्दधे	१०.	अन्तर्ध्यान हो गये
अभिपूजितः।	५.	उनका पूजन किया	हरः ॥	९.	भगवान् महादेव

श्लोकार्थ— भगवान् शिव के इस प्रकार उपदेश देने पर प्रचेताओं ने उनका पूजन किया। तदनन्तर राज कुमारों को देखते-देखते वहीं पर भगवान् महादेव अन्तर्धान हो गये ॥

द्वितीयः श्लोकः

रुद्रगीतं भगवतः स्तोत्रं सर्वे प्रचेतसः।
जपन्तस्ते तपस्तेपुर्वर्षाणामयुतं जले ॥२॥

पदच्छेद—

रुद्र गीतम् भगवतः स्तोत्रम् सर्वे प्रचेतसः।
जपन्तः ते तपः तेपुः वर्षाणाम् अयुतम् जले ॥

शब्दार्थ—

रुद्र	१.	भगवान् महादेव के द्वारा	जपन्तः ते	५.	जप करते हुये वे
गीतम्	२.	कहे गये	तपः	११.	तपस्या का
भगवतः	३.	भगवान् श्री हरि की	तेपुः	१२.	अनुष्ठान किया
स्तोत्रम्	४.	स्तुति की	वर्षाणाम्	१०.	वर्षों तक
सर्वे	६.	सारी	अयुतम्	९.	दस हजार
प्रचेतसः।	७.	प्रचेतागण	जले ॥	८.	जल में रहकर

श्लोकार्थ—भगवान् महादेव के द्वारा कहे गये भगवान् श्री हरि की स्तुति की जप करते हुये वे सभी प्रचेतागण जल में रहकर दस हजार वर्षों तक तपस्या का अनुष्ठान किया ॥

तृतीयः श्लोकः

प्राचीनबर्हिषं क्षत्तः कर्मस्वासक्तमानसम् ।
नारदोऽध्यात्मतत्त्वज्ञः कृपालुः प्रत्यबोधयत् ॥३॥

पदच्छेद—

प्राचीन बर्हिषम् क्षत्तः कर्मसु आसक्त मानसम् ।
नारदः अध्यात्म तत्त्वज्ञः कृपालुः प्रत्यबोधयत् ॥

शब्दार्थ—

प्राचीनबर्हिषम्	२.	राजा प्राचीन बर्हि का	नारदः	९.	देवर्षि नारद ने (उन्हें)
क्षत्तः	१.	हे विदुर जी उधर	अध्यात्म	६.	परमात्मा के
कर्मसु	४.	कर्मों में (ही)	तत्त्वज्ञः	७.	स्वरूप को जानने वाले
आसक्त	५.	रत हो गया था	कृपालुः	८.	दयालु
मानसम् ।	३.	मन	प्रत्यबोधयत् ॥	१०.	उपदेश किया

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! उधर राजा प्राचीन बर्हि का मन कर्मों में ही रत हो गया था । परमात्मा के स्वरूप को जानने वाले दयालु देवर्षि नारद ने उन्हें उपदेश किया ॥

चतुर्थः श्लोकः

श्रेयस्त्वं कतमद्राजन् कर्मणाऽऽत्मन ईहसे ।
दुःखहानिः सुखावाप्तिः श्रेयस्तन्नेह चेष्यते ॥४॥

पदच्छेद—

श्रेयः त्वम् कतमद् राजन् कर्मणा आत्मनः ईहसे ।
दुःख हानिः सुख अवाप्तिः श्रेयः तत् न इह च इष्यते ॥

शब्दार्थ—

श्रेयः	६.	कल्याण	सुख	९.	सुख की
त्वम्	२.	तुम	अवाप्तिः	१०.	प्राप्ति (ही)
कतमद्	५.	कौन सा	श्रेयः	११.	कल्याण (है)
राजन्	१.	हे राजन्	तत्	१३.	वह
कर्मणा	४.	कर्मों से	न	१५.	नहीं
आत्मनः	३.	अपने	इह	१४.	इन कर्मों से
ईहसे ।	७.	चाहते हो	च	१२.	किन्तु
दुःखहानिः	८.	दुःख का नाश (और	इष्यते ॥	१६.	मिल सकता है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तुम अपने कर्मों से कौन सा कल्याण चाहते हो ? दुःख का नाश और सुख की प्राप्ति ही कल्याण है । किन्तु वह इन कर्मों से नहीं मिल सकता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

राजोवाच— न जानामि महाभाग परं कर्मापविद्धधीः ।
ब्रूहि मे विमलं ज्ञानं येन मुच्येय कर्मभिः ॥५॥

पदच्छेद—

न जानामि महाभाग परम् कर्म अपविद्ध धीः ॥
ब्रूहि मे विमलम् ज्ञानम् येन मुच्येय कर्मभिः ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं	ब्रूहि	११.	बतावें
जानामि	७.	जानता हूँ	मे	८.	मुझे
महाभाग	१.	हे देवर्षे	विमलम्	९.	निर्मल
परम्	५.	मैं मोक्ष को	ज्ञानम्	१०.	अध्यात्म ज्ञान
कर्म	३.	कर्मों से	येन	१२.	जिससे मैं
अपविद्ध	४.	अशान्त है (अतः)	मुच्येय	१४.	मुक्त हो सकूँ
धीः ।	२.	मेरी बुद्धि	कर्मभिः ॥	१३	कर्मों से

श्लोकार्थ—राजा ने कहा; हे देवर्षे ! मेरी बुद्धि कर्मों से अशान्त है; अतः मैं मोक्ष को नहीं जानता हूँ । मुझे निर्मल अध्यात्म ज्ञान बतावें; जिससे मैं कर्मों से मुक्त हो जाऊँ ॥

षष्ठः श्लोकः

गृहेषु कूटधर्मेषु पुत्रदारधनार्थधीः ।
न परं विन्दते मूढो भ्राम्यन् संसारवर्त्मसु ॥६॥

पदच्छेद—

गृहेषु कूटधर्मेषु पुत्रदार धनार्थधीः ।
न परम् विन्दते मूढः भ्राम्यन् संसार वर्त्मसु ॥

शब्दार्थ—

गृहेषु	२.	गृहस्थ आश्रम में	न	१३.	नहीं
कूटधर्मेषु	१.	कपट धर्म वाले	परम्	१२.	मोक्ष को
पुत्र	३.	मनुष्य पुत्र	विन्दते	१४.	प्राप्त करता है
दार	४.	पत्नी (और)	मूढः	११.	अज्ञानी प्राणी
धन	५.	सम्पत्ति (को ही)	भ्रामयन्	१०.	घूमता हुआ
अर्थ	६.	पुरुषार्थ	संसार	८.	संसार के
धीः ।	७.	समझता है (इसीलिये)	वर्त्मसु ॥	९.	मार्ग में

श्लोकार्थ—हे राजन् ! कपटधर्म वाले मनुष्य पुत्र, पत्नी और सम्पत्ति को ही पुरुषार्थ समझता है। इसीलिये संसार के मार्ग में घूमता हुआ अज्ञानी प्राणी मोक्ष को नहीं प्राप्त करता है ॥

सप्तमः श्लोकः

नारद उवाच—भो भोः प्रजापते राजन् पशून् पश्य त्वयाध्वरे ।
संज्ञापिताञ्जीवसङ्घान्निर्घृणेन सहस्रशः ॥७॥

पदच्छेद—

भो भोः प्रजापते राजन् पशून् पश्य त्वया अध्वरे ।
संज्ञापितान् जीव सङ्घान् निर्घृणेन सहस्रशः ॥

शब्दार्थ—

भोः भोः	२.	हे	अध्वरे	५.	यज्ञ में
प्रजापते	१.	प्रजाओं के पालक	संज्ञापितान्	१०.	मारा था
राजन्	३.	राजन्	जीव	७.	जीवों के
पशून्	११.	(उन) पशुओं को	सङ्घान्	८.	समूह को
पश्य	१२.	(सामने) देखो	निर्घृणेन	६.	निर्दयता पूर्वक
त्वया	४.	तुमने	सहस्रशः ॥	९.	हजारों की संख्या में

श्लोकार्थ—प्रजाओं के पालक हे राजन् ! तुमने यज्ञ में निर्दयता पूर्वक जीवों के समूह को हजारों की संख्या में मारा था । उन पशुओं को सामने देखो ॥

अष्टमः श्लोकः

एते त्वां सम्प्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वैशसं तव ।
सम्परेतमयःकूटैश्छिन्दन्त्युत्थितमन्यवः ॥८॥

पदच्छेद—

एते त्वाम् सम्प्रतीक्षन्ते स्मरन्तः वैशसम् तव ।
सम्परेतम् अयः कूटैः छिन्दन्ति उत्थित मन्यवः ॥

शब्दार्थ—

एते	१.	ये सब पशु	सम्परेतम्	७.	मरकर परलोक में जाने पर (तुम्हें)
त्वाम्	५.	तुम्हारी	अयः	१०.	लोहे की
सम्प्रतीक्षन्ते	६.	बाट देख रहे हैं	कूटैः	११.	सींगों से
स्मरन्तः	४.	स्मरण करते हुये	छिन्दन्ति	१२.	छेदेंगे
वैशसम्	३.	दी गई पीड़ा का	उत्थित	९.	भर कर (ये सब)
तव ।	२.	तुम्हारे द्वारा	मन्यवः ॥	८.	क्रोध में

श्लोकार्थ—ये सब पशु तुम्हारे द्वारा दी गई पीड़ा का स्मरण करते हुये तुम्हारी बाट देख रहे हैं । मर कर परलोक में जाने पर तुम्हें क्रोध में भर कर ये सब लोहे की सींगों छेदेंगे ॥

नवमः श्लोकः

अत्र ते कथयिष्येऽमुमितिहासं पुरातनम् ।
पुरञ्जनस्य चरितं निबोध गदतो मम ॥९॥

पदच्छेद—

अत्र ते कथयिष्ये अमुम् इतिहासम् पुरातनम् ।
पुरञ्जनस्य चरितम् निबोध गदतः मम ॥

शब्दार्थ—

अत्र	१.	इस विषय में मैं	पुरञ्जनस्य	७.	राजा पुरञ्जन का
ते	२.	तुम्हें	चरितम्	८	चरित है (तुम)
कथयिष्ये	६.	कहता हूं (जो)	निबोध	११.	समझो
अमुम्	३	एक	गदतः	१०.	कथन को
इतिहासम्	५.	कथानक	मम ॥	९.	मेरे इस
पुरातनम् ।	४.	पुराना			

श्लोकार्थ—इस विषय में तुम्हें एक पुराना कथानक कहता हूं, जो राजा पुरञ्जन का चरित है। तुम मेरे इस कथन को समझो ॥

दशमः श्लोकः

आसीत्पुरञ्जनो नाम राजा राजन् बृहच्छ्रवाः ।
तस्याविज्ञातनामाऽऽसीत्सखाविज्ञातचेष्टितः ॥१०॥

पदच्छेद—

आसीत् पुरञ्जनः नाम राजा राजन् बृहच्छ्रवाः ।
तस्य अविज्ञात नामा आसीत् सखा अविज्ञात चेष्टितः ॥

शब्दार्थ—

आसीत्	६.	था	तस्य	७.	उसका
पुरञ्जनः	२.	पुरञ्जन	अविज्ञात	८.	अविज्ञात
नामा	३.	नाम का	नामा	९.	नाम का
राजा	५.	एक राजा	आसीत्	११.	था
राजन्	१.	हे राजन्	सखा	१०.	एक मित्र
बृहच्छ्रवाः ।	४.	यशस्वी	अविज्ञात	१३.	रहस्यमय थीं
			चेष्टितः ॥	१२.	उस राजा की सारी क्रियायें

श्लोकार्थ—हे राजन् ! पुरञ्जन नाम का यशस्वी एक राजा था। उसका अविज्ञात नाम का एक मित्र था। उस राजा की सारी क्रियायें रहस्यमय थीं ॥

एकादशः श्लोकः

सोऽन्वेषमाणः शरणं बभ्राम पृथिवीं प्रभुः ।
नानुरूपं यदाविन्ददभूत्स विमना इव ॥११॥

पदच्छेद—

स: अन्वेषमाणः शरणम् बभ्राम पृथिवीम् प्रभुः ।
न अनुरूपम् यदा अविन्दत् अभूत् सः विमनाः इव ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	अनुरूपम्	८.	अपने योग्य स्थान
अन्वेषमाणः	४.	ढूंढ़ता हुआ	यदा	७.	जब
शरणम्	३.	रहने का स्थान	अविन्दत्	१०.	पाया (तब)
बभ्राम	६	घूमने लगा (किन्तु)	अभूत्	१४.	हो गया
पृथिवीम्	५.	पृथ्वी पर	सः	११.	वह
प्रभुः ।	२.	राजा अपने	विमनाः	१२.	उदास के
न	९.	नहीं	इव ॥	१३.	समान

श्लोकार्थ—वह राजा अपने रहने का स्थान ढूंढ़ता हुआ पृथ्वी पर घूमने लगा। किन्तु जब अपने योग्य स्थान नहीं पाया तब वह उदास के समान हो गया ॥

द्वादशः श्लोकः

न साधु मेने ताः सर्वा भूतले यावतीः पुरः ।
कामान् कामयमानोऽसौ तस्य तस्योपपत्तये ॥१२॥

पदच्छेद—

न साधु मेने ताः सर्वाः भूतले यावतीः पुरः ।
कामान् कामयमानः असौ तस्य तस्य उपपत्तये ॥

शब्दार्थ—

न	११.	नहीं	यावतीः पुरः ।	५.	जितनी। नगरियाँ (देखीं)
साधु	१०.	ठीक	कामान्	१.	कामनाओं को
मेने	१२.	समझा	कामयमानः	२.	भोगने की इच्छा से
ताः	६.	उन	असौ	३.	उन्होंने
सर्वाः	७.	सब को	तस्य तस्य	८.	उन-उन सभी भोगों की
भूतले	४.	पृथ्वी पर	उपपत्तये ॥	९.	प्राप्ति के लिये

श्लोकार्थ—कामनाओं को भोगने की इच्छा से उन्होंने पृथ्वी पर जितनी नगरियाँ देखीं, उन सबको उन-उन सभी भोगों की प्राप्ति के लिये ठीक नहीं समझा ॥

त्रयोदशः श्लोकः

स एकदा हिमवतो दक्षिणेष्वथ सानुषु ।
ददर्श नवभिर्द्वार्भिः पुरं लक्षितलक्षणाम् ॥१३॥

पदच्छेद—

सः एकदा हिमवतः दक्षिणेषु अथ सानुषु ।
ददर्श नवभिः द्वार्भिः पुरम् लक्षित लक्षणाम् ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	उन्होंने	ददर्श	१०.	देखी (जो)
एकदा	३.	एक दिन	नवभिः	७.	नव
हिमवतः	४.	हिमालय पर्वत के	द्वार्भिः	८.	दरवाजों से युक्त
दक्षिणेषु	५.	दक्षिण भाग के	पुरम्	९.	एक नगरी
अथ	१.	तदनन्तर	लक्षित	१२.	दिखाई पड़ती थी
सानुषु ।	६.	शिखरों पर	लक्षणाम् ॥	११.	शुभ लक्षणों से युक्त

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन्होंने एक दिन हिमालय पर्वत के दक्षिण भाग के शिखरों पर नव दरवाजों से युक्त एक नगरी देखी जो शुभ लक्षणों से युक्त दिखाई पड़ती थी ॥

चतुर्दशः श्लोकः

प्राकारोपवनाट्टालपरिखैरक्षतोरणैः ।
स्वर्णरौप्यायसैः शृङ्गैः संकुलां सर्वतो गृहैः ॥१४॥

पदच्छेद—

प्राकार उपवन अट्टाल परिखैः अक्ष तोरणैः ।
स्वर्ण रौप्य आयसैः शृङ्गैः संकुलाम् सर्वतो गृहैः ॥

शब्दार्थ—

प्राकार	२.	परकोटे	स्वर्ण	८.	सोने
उपवन	३.	बगीचे	रौप्य	९.	चाँदी (और)
अट्टाल	४.	अट्टालिकाओं	आयसैः	१०.	लोहे से बने
परिखैः	५.	खाई	शृङ्गैः	११.	शिखरों वाले
अक्ष	६.	झरोखे (और)	संकुलाम्	१३.	व्याप्त थी
तोरणैः ॥	७.	राज द्वारों से (तथा)	सर्वतो	१.	वह नगरी चारों ओर
			गृहैः ॥	१२.	भवनों से

श्लोकार्थ—वह नगरी चारों ओर परकोटे, बगीचे, अट्टालिकाओं, खाई, झरोखे और राजद्वारों से तथा सोने-चाँदी और लोहे से बने शिखरों वाले भवनों से व्याप्त था ॥

पञ्चदशः श्लोकः

नीलस्फटिकवैदूर्यमुक्तामरकतारुणैः ।
क्लृप्तहर्म्यस्थलीं दीप्तां श्रिया भोगवतीमिव ॥१५॥

पदच्छेद—

नील स्फटिक वैदूर्य मुक्ता मरकत अरुणैः ।
क्लृप्तहर्म्य स्थलीम् दीप्ताम् श्रिया भोगवतीम् इव ॥

शब्दार्थ—

नील	२.	नीलम	क्लृप्त	८.	बनी हुई थीं (अतः)
स्फटिक	३.	स्फटिक	हर्म्यस्थलीम्	१.	उन महलों की फर्शं
वैदूर्य	४.	मूंगा	दीप्ताम्	१२.	चमक रही थी
मुक्ता	५.	मोती	श्रिया	९.	शोभा में
मरकत	६.	पन्ना और	भोगवतीम्	१०.	नागों की भोग पुरी के
अरुणैः ।	७.	माणिक्य मणियों से	इव ॥	११.	समान

श्लोकार्थ—उन महलों की फर्श नीलम, स्फटिक, मूंगा, मोती, पन्ना और मणिक्य मणियों से बनी थी । अतः शोभा में नागों की भोगपुरी के समान चमक रही थी ॥

षोडशः श्लोकः

सभाचत्वररथ्याभिराक्रीडायतनापणैः ।
चैत्यध्वजपताकाभिर्युक्तां विद्रुमवेदिभिः ॥१६॥

पदच्छेद—

सभा चत्वर रथ्याभिः आक्रीड आयतन आपणैः ।
चैत्यध्वज पताकाभिः युक्ताम् विद्रुम वेदिभिः ॥

शब्दार्थ—

सभा	१.	(वह नगरी) सभा भवन	चैत्य	७.	विश्राम स्थान
चत्वर	२.	चौराहे (और)	ध्वज	८.	ध्वजाओं और
रथ्याभिः	३.	राज मार्गों से	पताकाभिः	९.	झण्डियों से (तथा)
आक्रीड	४	क्रीडा	युक्ताम्	१२.	सुशोभित थी
आयतन	५.	भवन (और)	विद्रुम	१०.	मूंगे के
आपणैः ।	६.	बाजारों से	वेदिभिः ॥	११.	चबूतरों से

श्लोकार्थ—वह नगरी सभाभवन, चौराहे और राजमार्गों से, क्रीडाभवन और बाजारों से, विश्राम-स्थल, ध्वजाओं और मूंगे के चबूतरों से सुशोभित थी ॥

सप्तदशः श्लोकः

पुर्यास्तु बाह्योपवने दिव्यद्रुमलताकुले ।
नदद्विहङ्गालिकुलकोलाहलजलाशये ॥१७॥

पदच्छेद—

पुर्याः तु बाह्य उपवने दिव्य द्रुमलता आकुले ।
नदत् विहङ्ग अलिकुल कोलाहल जल आशये ॥

शब्दार्थ—

पुर्याः	२.	उस नगरी के	आकुले।	७	पूर्ण था (उसके)
तु	१.	तथा	नदत्	१०.	कलरव कर रहे थे (और)
बाह्य	३.	बाहर का	विहङ्ग	९.	पक्षीगण
उपवने	४.	बगीचा	अलिकुल	११.	भौंरों का समूह
दिव्य	५.	अलौकिक	कोलाहल	१२.	गुञ्जार कर रहा था
द्रुम-लता	६.	वृक्ष-लताओं से	जल-आशये ॥	८.	सरोवर पर

श्लोकार्थ—तथा उस नगरी के बाहर का बगीचा अलौकिक वृक्ष-लताओं से पूर्ण था। उसके सरोवर पर पक्षीगण कलरव कर रहे थे और भौंरों का समूह गुञ्जार कर रहा था ॥

अष्टादशः श्लोकः

हिमनिर्झरविप्रुष्मत्कुसुमाकरवायुना ।
चलत्प्रवालविटपनलिनीतटसम्पदि ॥१८॥

पदच्छेद—

हिम निर्झर विप्रुष्मत् कुसुमाकर वायुना ।
चलत् प्रवाल विटपनलिनी तट सम्पदि ॥

शब्दार्थ—

हिम	१.	शीतल	चलत्	६.	हिलते हुये
निर्झर	२.	झरनों की	प्रवाल	७.	पत्तों (और)
विप्रुष्मत्	३.	बूंदों से युक्त	विटप	८.	शाखाओं वाले वृक्षों से
कुसुमाकर	४.	वसन्त ऋतु की	नलिनी	९.	सरोवर के किनारे पर
वायुनः।	५.	हवा से	सम्पदि ॥	१०.	बहुत शोभा हो रही थी

श्लोकार्थ—शीतल झरनों की बूंदों से युक्त वसन्त ऋतु की हवा से हिलते हुये पत्तों और शाखाओं वाले वृक्षों से सरोवर के किनारे पर बहुत शोभा हो रही थी ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नानारण्यमृगव्रातैरनाबाधे मुनिव्रतैः ।
आहूतं मन्यते पान्थो यत्र कोकिलकूजितैः ॥१९॥

पदच्छेद—

नाना अरण्य मृग व्रातैः अनाबाधे मुनिव्रतैः ।
आहूतम् मन्यते पान्थः यत्र कोकिल कूजितैः ॥

शब्दार्थ—

नाना	३.	उनके	आहूतम्	१०.	(हमें) बुला रहा है
अरण्य	४.	जंगली	मन्यते	१२.	ऐसा समझते थे
मृग	५.	पशुओं के	पान्थः	११.	बटोही जन
व्रातैः	६.	झुन्डों से (कोई)	यत्र	१.	जहाँ
अना बाधे	७.	बाधा नहीं थी	कोकिल	८.	कोयल की
मुनिव्रतैः ।	२.	मुनियों के समान अहिंसादि व्रत वाले	कूजितैः ॥	९.	कूक से (यह)

श्लोकार्थ—जहाँ मुनियों के समान अहिंसादि व्रत वाले अनेक जंगली पशुओं के झुन्डों से कोई बाधा नहीं थी। कोयल की कूक से यह हमें बुला रहा है, बटोही जन ऐसा समझते थे ॥

विंशः श्लोकः

यदृच्छयाऽऽगतां तत्र ददर्श प्रमदोत्तमाम् ।
भृत्यैर्दशभिरायान्तीमेकैकशतनायकैः ॥२०॥

पदच्छेद—

यदृच्छया आगताम् तत्र ददर्श प्रमदा उत्तमाम् ।
भृत्यैः दशभिः आयान्तीम् एकैक शत नायकैः ॥

शब्दार्थ—

यद्	२.	अपनी	भृत्यैः	९.	सेवकों के साथ
इच्छया	३.	इच्छा से	दशभिः	८.	दश
आगताम्	४.	आती हुई (एक)	आयान्तीम्	१०.	आ रही थी
तत्र	१.	वहाँ पर (उन्होंने)	एकैक	११.	जिनमें से प्रत्येक सेवक
ददर्श	७.	देखा (वह)	शत	१२	एक सौ
प्रमदा	६.	युवती	नायकैः ॥	१३.	स्त्रियों का पति था
उत्तमाम् ।	५.	सुन्दरी			

श्लोकार्थ—वहाँ पर उन्होंने अपनी इच्छा से आती हुई एक सुन्दरी युवती को देखा। वह दस सेवकों के साथ आ रही थी। जिनमें से प्रत्येक सेवक एक सौ स्त्रियों का पति था ॥

एकविंशः श्लोकः

पञ्चशीर्षाहिना गुप्तां प्रतीहारेण सर्वतः ।
अन्वेषमाणामृषभमप्रौढां कामरूपिणीम् ॥२१॥

पदच्छेद—

पञ्चशीर्ष अहिना गुप्ताम् प्रतीहारेण सर्वतः ।
अन्वेषमाणाम् ऋषभम् अप्रौढाम् काम रूपिणीम् ॥

शब्दार्थ—

पञ्चशीर्ष	१.	पाँच फन वाला	अन्वेषमाणाम्	१०.	ढूंढ़ रही थी
अहिना	२.	(एक) सांप	ऋषभम्	९	अपने लिये श्रेष्ठपति
गुप्ताम्	५.	रक्षा कर रहा था	अप्रौढाम्	६.	वह भोली-भाली
प्रतीहारेण	३.	द्वार पाल के समान	काम	७.	सुन्दरी
सर्वतः ।	४.	चारों ओर से उसकी	रूपिणीम् ॥	८.	किशोरी

श्लोकार्थ—पांच फन वाला एक सांप द्वारपाल के समान चारों ओर से उसकी रक्षा कर रहा था। वह भोली-भाली सुन्दरी किशोरी अपने लिये श्रेष्ठ पति ढूंढ़ रही थी ॥

द्वाविंशः श्लोकः

सुनासां सुदतीं बालां सुकपोलां वराननाम् ।
समविन्यस्तकर्णाभ्यां बिभ्रतीं कुण्डलश्रियम् ॥२२॥

पदच्छेद—

सुनासाम् सुदतीम् बालाम् सुकपोलाम् वराननाम् ।
सम विन्यस्त कर्णाभ्याम् बिभ्रतीम् कुण्डल श्रियम् ॥

शब्दार्थ—

सुनासाम्	२.	सुन्दर नासिका	सम	७.	उसके सामने रूप से
सुदतीम्	३.	सुन्दर दन्त पंक्ति	विन्यस्त	८.	बनाये गये
बालाम्	१.	वह किशोरी	कर्णाभ्याम्	९.	कानों में
सुकपोलाम्	४.	सुन्दर कपोल (और)	बिभ्रतीम्	१२.	झलक रही थी
वर	५.	सुन्दर	कुण्डल	१०.	कुण्डलों की
आननाम् ।	६.	मुख (वाली थी)	श्रियम् ॥	११.	शोभा

श्लोकार्थ—वह किशोरी सुन्दर नासिका, सुन्दर दन्त पंक्ति, सुन्दर कपोल और सुन्दर मुखवाली थी। उसके समान रूप से बनाये गये कानों में कुण्डलों की शोभा झलक रही थी ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

पिशङ्गनीवीं सुश्रोणीं श्यामां कनकमेखलाम् ।
पद्भ्यां क्वणद्भ्यां चलन्तीं नूपुरैर्देवतामिव ॥२३॥

पदच्छेद—

पिशङ्ग नीवीम् सुश्रोणीम् श्यामाम् कनक मेखलाम् ।
पद्भ्याम् क्वणद्भ्याम् चलन्तीम् नूपुरैः देवताम् इव ॥

शब्दार्थ—

पिशङ्ग	२.	पीले रंग की	पद्भ्याम्	८.	पैरों में
नीवीम्	४.	साड़ी (तथा)	क्वणद्भ्याम्	१०.	झंकार हो रही थी (वह)
सुश्रोणीम्	३.	अपने सुन्दर (कटिभाग में)	चलन्तीम्	७.	चलते समय
श्यामाम्	१.	वह सुन्दरी	नूपुरैः	९.	नूपुरों की
कनक	५.	सोने की	देवताम्	११.	साक्षात् देवी के
मेखलाम् ।	६.	करधनी (पहने थी)	इव ॥	१२.	समान लग रही थी

श्लोकार्थ—वह सुन्दरी पीले रंग की अपने सुन्दर कटिभाग में साड़ी तथा सोने की करधनी पहने थी। चलते समय पैरों में नूपुरों की झन्कार हो रही थी। वह साक्षात् देवी के समान लग रही थी ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

स्तनौ व्यञ्जितकैशोरौ समवृत्तौ निरन्तरौ ।
वस्त्रान्तेन निगूहन्तीं व्रीडया गजगामिनीम् ॥२४॥

पदच्छेद—

स्तनौ व्यञ्जित कैशोरौ सम वृत्तौ निरन्तरौ ।
वस्त्र अन्तेन निगूहन्तीम् व्रीडया गजगामिनीम् ॥

शब्दार्थ—

स्तनौ	४.	दोनों स्तन (उसकी)	वस्त्र	१०.	साड़ी के
व्यञ्जित	६.	प्रकट कर रहे थे	अन्तेन	११.	छोर से (उन्हें)
कैशोरौ	५.	किशोरावस्था को	निगूहन्तीम्	१२.	ढक रही थी
सम	१.	समान	व्रीडया	९.	(वह) लज्जा वश
वृत्तौ	२.	गोल (और)	गज	७.	हाथी के समान
निरंतरौ ।	३.	सटे हुये	गामिनीम् ॥	८.	धीरे-धीरे चलने वाली

श्लोकार्थ—समान, गोल और सटे हुये दोनों स्तन उसकी किशोरावस्था को प्रकट कर रहे थे। हाथी के समान धीरे-धीरे चलने वाली वह लज्जा वश उन्हें साड़ी के छोर से ढक रही थी ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

तामाह ललितं वीरः सव्रीडस्मितशोभनाम् ।
स्निग्धेनापाङ्गपुङ्खेन स्पृष्टः प्रेमोद्भ्रमद्भ्रुवा ॥२५॥

पदच्छेद—

ताम् आह ललितम् वीरः सव्रीड स्मित शोभनाम् ।
स्निग्धेन अपाङ्ग पुङ्खेन स्पृष्टः प्रेम उद्भ्रमद् भ्रुवा ॥

शब्दार्थ—

ताम्	१२.	उस (युवती से)	स्निग्धेन	४.	भोली
आह	१४.	बोला	अपाङ्ग	५.	तिरछी चितवन रूपी
ललितम्	१३.	मधुर वाणी में	पुङ्खेन	६.	बाण से
वीरः	८.	राजा पुरञ्जन	स्पृष्टः	७.	घायल हुआ
सव्रीड	९.	लज्जा (और)	प्रेम	१.	प्रेम के साथ
स्मित	१०.	मुसकान से	उद्भ्रमद्	३.	मटकन (और)
शोभनाम् ।	११.	अधिक सुन्दर लगने वाली	भ्रुवा ॥	२.	भौंहों की

श्लोकार्थ—प्रेम के साथ भौंहों की मटकन और भोली चितवन रूपी बाण से घायल हुआ राजा पुरञ्जन लज्जा और मुसकान से अधिक सुन्दर लगने वाली उस युवती से मधुर वाणी में बोला ॥

षड्विंशः श्लोकः

का त्वं कञ्जपलाशाक्षि कस्यासीह कुतः सति ।
इमामुपपुरीं भीरु किं चिकीर्षसि शंस मे ॥२६॥

पदच्छेद—

का त्वम् कञ्ज पलाश अक्षि कस्य असि इह कुतः सति ।
इमाम् उपपुरीम् भीरु किम् चिकीर्षसि शंस मे ॥

शब्दार्थ—

का	६.	कौन हो	सति ।	४.	हे सति
त्वम्	५.	तुम	इमाम्	११.	इस
कञ्ज	१.	कमल	उपपुरीम्	१२.	नगरी के पास (तुम)
पलाश	२.	दल के समान विशाल	भीरु	१०.	हे भीरु
अक्षि	३.	नेत्रों वाली	किम्	१३.	क्या
कस्य असि	७.	किसकी कन्या हो (और)	चिकीर्षसि	१४.	करना चाहती हो
इह	९.	यहाँ पर आई हो	शंस	१६.	बताओ
कुतः	८.	कहाँ से	मे ॥	१५.	यह मुझे

श्लोकार्थ—कमल दल के समान विशाल नेत्रों वाली हे सति ! तुम कौन हो ? किसकी कन्या हो और कहाँ से यहाँ पर आई हो ? हे भीरु ! इस नगरी के पास तुम क्या करना चाहती हो, यह मुझे बताओ ॥

सप्तविंशः श्लोकः

क एतेऽनुपथा ये त एकादश महाभटाः ।
एता वा ललनाः सुभ्रु कोऽयं तेऽहिः पुरःसरः ॥२७॥

पदच्छेद— के एते अनुपथाः ये ते एकादश महाभटाः ।
एताः वा ललनाः सुभ्रु कः अयम् ते अहिः पुरः सरः ॥

शब्दार्थ—

के	९.	कौन हैं	एताः	१०.	ये
एते	८.	ये	वा	१३.	तथा
अनुपथाः	७.	सेवक हैं	ललनाः	११.	सुन्दरियाँ
ये	२.	जो	सुभ्रु	१.	हे सुन्दरि
ते	६.	आपके	कः	१२.	कौन हैं
एकादश	३.	ग्यारह	अयम्	१६.	यह
महा	४.	महान्	ते	१४.	आपके
भटाः ।	५.	वीर	अहिः	१७.	सर्प (कौन हैं)
			पुरः सरः ॥	१५.	आगे चलने वाला

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! जो ग्यारह महान् वीर आपके सेवक हैं ये कौन हैं ? ये सुन्दरियाँ कौन हैं ? तथा आपके आगे चलने वाला यह सर्प कौन है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

त्वं ह्रीर्भवान्यस्यथ वाग्रमा पतिं विचिन्वती किं मुनिवद्रहो वने ।
त्वदङ्घ्रिकामाप्तसमस्तकामं क्व पद्मकोशः पतितः कराग्रात् ॥२८॥

पदच्छेद—त्वम् ह्रीः भवानी असि अथ वाक् रमा पतिम् विचिन्वती किम् मुनिवत् रहः वने ।
त्वद्‌अङ्घ्रिकाम आप्त समस्त कामम् क्व पद्मकोशः पतितः कराग्रात् ॥

शब्दार्थ—

त्वम् ह्रीः	१.	तुम साक्षात् लज्जा	त्वद्	१०.	तुम (पति के)
भवानी	३.	उमा	अङ्घ्रि	११.	चरणों की
असि अथ	२.	हो अथवा	काम	१२.	कामना करती हो,इसी से वह
वाक् रमा	४.	ब्राह्मणी और लक्ष्मी हो	आप्त	१४.	प्राप्त कर लिया है
पतिम्	८.	अपने पति को	समस्त कामम्	१३.	सम्पूर्ण कामनाओं को
विचिन्वती	९.	खोज रही हो	क्व	१७.	कहाँ
किम्	७.	क्या	पद्मकोशः	१६.	क्रीड़ाकमल
मुनिवत्	५.	मुनियों के समान	पतितः	१८.	गिर गया है
रहः वने ।	६.	एकान्त जंगल में	कराग्रात् ॥	१५.	तुम्हारे हाथ से

श्लोकार्थ—तुम साक्षात् लज्जा हो अथवा उमा, ब्राह्मणी और लक्ष्मी में से कोई हो ! मुनियों के समान एकान्त जंगल में क्या अपने पति को खोज रही हो ? तुम पति के चरणों की कामना करती हो इसी से वह सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त कर लिया है, यदि तुम लक्ष्मी हो तो तुम्हारे हाथ से क्रीड़ा कमल कहाँ गिर गया है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

नासां वरोर्वन्यतमा भुविस्पृक् पुरीमिमां वीरवरेण साकम् ।
अर्हस्यलङ्कर्तुमदभ्रकर्मणा लोकं परं श्रीरिव यज्ञपुंसा ॥२९॥

पदच्छेद— न आसाम् वरोरु अन्यतमा भुवि स्पृक् पुरीम् इमाम् वीर वरेण साकम् ।
अर्हसि अलङ्कर्तुम् अदभ्र कर्मणा लोकम् परम् श्रीः इव यज्ञ पुंसा ॥

शब्दार्थ—

न	४.	नहीं (हो क्योंकि)	वरेण साकम् ।	९.	प्रधान मेरे साथ
आसाम्	२.	इनमें से	अर्हसि	१३.	कर सकती हो
वरोरु	१.	हे सुभगे तुम	अलङ्कर्तुम्	१२.	सुशोभित
अन्यतमा	३.	कोई	अदभ्र कर्मणा	७.	बहुत कर्म करने वाले
भुवि	५.	पृथ्वी का	लोकम्	१८.	लोक का सुशोभित करती हैं
स्पृक्	६.	स्पर्श कर रही हो अतः	परम्	१७.	वैकुण्ठ
पुरीम्	११.	नगरी को	श्रीः	१६.	लक्ष्मी जी
इमाम्	१०.	इस	इव यज्ञ	१४.	जैसे यज्ञ पुरुष
वीर	८.	(तथा) वीरों में	पुंसा ॥	१५.	श्री हरि के साथ

श्लोकार्थ— हे सुभगे ! तुम इनमें से कोई नहीं हो । क्योंकि पृथ्वी का स्पर्श कर रही हो । अतः बहुत कर्म करने वाले तथा वीरों में प्रधान मेरे साथ इस नगरी को सुशोभित कर सकती हो । जैसे यज्ञ पुरुष श्री हरि के साथ लक्ष्मी जी वैकुण्ठ लोक को सुशोभित करती हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

यदेष मापाङ्गविखण्डितेन्द्रियं सव्रीडभावस्मितविभ्रमद्भ्रुवा ।
त्वयोपसृष्टो भगवान्मनोभवः प्रबाधतेऽथानुगृहाण शोभने ॥३०॥

पदच्छेद—यद् एषः मा अपाङ्ग विखण्डित इन्द्रियम् सव्रीड भावस्मित विभ्रमद् भ्रुवा ।
त्वया उपसृष्टः भगवान् मनोभवः प्रबाधते अथ अनुगृहाण शोभने ॥

शब्दार्थ—

यद्	१.	क्योंकि	भ्रुवा	७.	भौहों को
एषः	१२.	यह	त्वया	९.	तुम से
मा	१४.	मुझे	उपसृष्टः	१०.	प्रेरित होकर
अपाङ्ग	२.	(तुम्हारे) कटाक्ष से	भगवान्	११.	बलवान्
विखण्डित	४.	घायल (हो गया है इसलिये)	मनोभवः	१३.	कामदेव
इन्द्रियम्	३.	(मेरा) मन	प्रबाधते	१५.	पीड़ित कर रहा है
सव्रीड	५.	लज्जा पूर्वक	अथ	१६.	इसलिये
भावस्मित	६.	मधुर मुसकान के साथ	अनुगृहाण	१८.	कृपा करो
बिभ्रमद्	८.	चलाने वाली	शोभने ।	१७.	हे सुन्दरि मुझ पर

श्लोकार्थ—क्योंकि तुम्हारे कटाक्ष से मेरा मन घायल हो गया है । इसलिये लज्जा पूर्वक मधुर मुसकान के साथ भौहों को चलाने वाली तुमसे प्रेरित होकर बलवान् यह कामदेव मुझे पीड़ित कर रहा है । इसलिये हे सुन्दरि ! मुझ पर कृपा करो ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

त्वदाननं सुभ्रु सुतारलोचनं व्यालम्बिनीलालकवृन्दसंवृतम् ।
उन्नीय मे दर्शय वल्गुवाचकं यद्व्रीडया नाभिमुखं शुचिस्मिते ॥३१॥

पदच्छेद—

त्वद् आननम् सुभ्रु सुतार लोचनम् व्यालम्बि नील अलक वृन्द संवृतम् ।
उन्नीय मे दर्शय वल्गु वाचकम्, यद् व्रीडया न अभिमुखम् शुचिस्मिते ॥

शब्दार्थ—

त्वद्	२.	तुम्हारा	उन्नीय	१६.	ऊपर उठाकर
आननम्	३.	मुख	मे	१७.	मुझे
सुभ्रु	४.	सुन्दर भौहों	दर्शय	१८.	दिखाओ
सुतार	५.	विशाल	वल्गु	१४.	मनोहर
लोचनम्	६.	नेत्रों (और)	वाचकम्	१५.	वचन बोलने वाले मुख को
व्यालम्बि	७	लम्बी	यद्व्रीडया	११.	जो लज्जा वश
नील	८.	काली	न	१३.	नहीं (देख रहा है)
अलकवृन्द	९.	अलकावलियों से	अभिमुखम्	१२.	सामने
संवृतम् ।	१०.	घिरा हुआ है	शुचिस्मिते ॥	१.	हे सुन्दरि

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! तुम्हारा मुख, सुन्दर भौंहों, विशाल नेत्रों और लम्बी काली अलकावलियों से घिरा हुआ है, जो लज्जा वश सामने नहीं देख रहा है । मनोहर वचन बोलने वाले मुख को ऊपर उठाकर मुझे दिखाओ ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

नारद उवाच—इत्थं पुरञ्जनं नारी याचमानमधीरवत् ।
अभ्यनन्दत तं वीरं हसन्ती वीर मोहिता ॥३२॥

पदच्छेद—

इत्थम् पुरञ्जनं नारी याचमानम् अधीरवत् ।
अभ्यनन्दत तम् वीरम् हसन्ती वीर मोहिता ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	२	इस प्रकार	अभ्यनन्दत	१०.	स्वागत करने लगी
पुरञ्जनम्	३.	राजा पुरञ्जन	तम् वीरम्	९.	उन वीर का
नारी	६.	(वह) सुन्दरी भी (उन पर)	हसन्ती	८.	हँसती हुई
याचमानम्	५.	याचना करने लगे	वीर	१.	हे राजन्
अधीरवत् ।	४.	अधीर होकर	मोहिता ॥	७.	मोहित हो गयी (और)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार राजा पुरञ्जन अधीर होकर याचना करने लगे । वह सुन्दरी भी उन पर मोहित हो गई और हँसती हुई उन वीर का स्वागत करने लगी ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

न विदाम वयं सम्यक्कर्तारं पुरुषर्षभ।
आत्मनश्च परस्यापि गोत्रं नाम च यत्कृतम् ॥३३॥

पदच्छेद—

न विदाम वयम् सम्यक् कर्तारम् पुरुषर्षभ।
आत्मनः च परस्य अपि गोत्रम् नाम च यत् कृतम् ॥

शब्दार्थ—

न	१३.	नहीं	च	४.	और
विदाम	१४.	जानते हैं	परस्य	५.	दूसरे को
वयम्	२.	हम	अपि	६.	भी
सम्यक्	१२.	भली-भाँति	गोत्रम्	९.	गोत्र को (तथा)
कर्तारम्	७.	उत्पन्न करने वाले को	नाम	१०.	नाम
पुरुषर्षभ।	१.	हे पुरुष श्रेष्ठ	च यत्	८.	और जो
आत्मनः	३.	अपने	कृतम्	११.	रक्खा गया है (उसे भी)

श्लोकार्थ—हे पुरुषश्रेष्ठ ! हम अपने और दूसरे को भी उत्पन्न करने वाले को और जो गोत्र तथा नाम रक्खा गया है; उसे भी भली-भाँति नहीं जानते हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

इहाद्य सन्तमात्मानं विदाम न ततः परम्।
येनेयं निर्मिता वीर पुरी शरणमात्मनः ॥३४॥

पदच्छेद—

इह अद्य सन्तम् आत्मानम् विदाम न ततः परम्।
येन इयम् निर्मिता वीर पुरी शरणम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

इह	२.	यहाँ पर	येन	८.	जिसने
अद्य	३.	इस समय	इयम्	११.	इस
सन्तम्	४.	विद्यमान	निर्मिता	१३.	बनाया है (उसे भी)
आत्मानम्	५.	केवल अपने को	वीर	१.	हे राजन् हम
विदाम	६.	जानते हैं	पुरी	१२.	पुरी को
न	१४.	नहीं जानते हैं	शरणम्	१०.	रहने के लिये
ततः परम्।	७.	उसके अतिरिक्त	आत्मनः ॥	९.	हमारे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! हम यहाँ पर इस समय विद्यमान केवल अपने को जानते हैं। उसके अतिरिक्त जिसने हमारे रहने के लिये इस पुरी को बनाया है उसे भी नहीं जानते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एते सखायः सख्यो मे नरा नार्यश्च मानद ।
सुप्तायां मयि जागर्ति नागोऽयं पालयन् पुरीम् ॥३५॥

पदच्छेद—

एते सखायः सख्यः मे नराः नार्यः च मानद ।
सुप्तायाम् मयि जागर्ति नागः अयम् पालयन् पुरीम् ॥

शब्दार्थ—

एते	२.	ये	सुप्तायाम्	११.	सोने पर
सखायः सख्यः	७.	मित्र और सहेलियाँ (तथा)	मयि	१०.	मेरे
मे	६.	मेरे	जागर्ति	१४.	जागता है
नराः	३.	पुरुष	नागः	९.	सर्प
नार्यः	५.	स्त्रियाँ	अयम्	८.	यह
च	४.	और	पालयन्	१३.	रक्षा करता हुआ
मानद ।	१.	हे प्रिय	पुरीम् ॥	१२.	इस नगरी की

श्लोकार्थ—हे प्रिय ! ये पुरुष और स्त्रियाँ मेरे मित्र और सहेलियाँ हैं, तथा यह सर्प मेरे सोने पर इस पुरी की रक्षा करता हुआ जागता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

दिष्ट्याऽऽगतोऽसि भद्रं ते ग्राम्यान् कामानभीप्ससे ।
उद्वहिष्यामि तांस्तेऽहं स्वबन्धुभिररिन्दम ॥३६॥

पदच्छेद—

दिष्ट्या आगतः असि भद्रम् ते ग्राम्यान् कामान् अभीप्ससे ।
उद्वहिष्यामि तान् ते अहम् स्व बन्धुभिः अरिन्दम ॥

शब्दार्थ—

दिष्ट्या	२.	सौभाग्य से	उद्वहिष्यामि	१४.	प्रस्तुत करूँगी ।
आगतः असि	३.	आये हो	तान्	१३.	उन विषयों को
भद्रम्	५.	मङ्गल (हो तुम)	ते	१२.	तुम्हारे लिये
ते	४.	आपका	अहम्	९.	मैं
ग्राम्यान्	६.	विषय	स्व	१०.	अपने
कामान्	७.	सुख	बन्धुभिः	११.	सहायकों के साथ
अभीप्ससे ।	८.	चाहते हो	अरिन्दम ॥	१.	हे शत्रुदमन तुम

श्लोकार्थ—हे शत्रुदमन ! तुम सौभाग्य से आये हो ! आपका मङ्गल हो, तुम विषय सुख चाहते हो । मैं अपने सहायकों के साथ तुम्हारे लिये उन विषयों को प्रस्तुत करूँगी ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

इमां त्वमधितिष्ठस्व पुरीं नवमुखीं विभो ।
मयोपनीतान् गृह्णानः कामभोगान् शतं समाः ॥३७॥

पदच्छेद—

इमाम् त्वम् अधितिष्ठस्व पुरीम् नव मुखीम् विभो ।
मया उपनीतान् गृह्णानः काम भोगान् शतम् समाः ॥

शब्दार्थ—

इमाम्	६.	इस	मया	२.	मेरे द्वारा
त्वम्	११.	तुम	उपनीतान्	३.	दिये गये
अधितिष्ठस्व	१२.	निवास करो	गृह्णानः	५.	भोग करते हुये
पुरीम्	१०.	नगरी में	कामभोगान्	४.	यथेच्छ भोगों का
नव मुखीम्	८.	नौ दरवाजों वाली	शतम्	६.	एक सौ
विभो	१.	हे स्वामिन्	समाः ॥	७	वर्षों तक

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! मेरे द्वारा दिये गये यथेच्छ भोगों का भोग करते हुये एक सौ वर्षों तक नौ दरवाजों वाली इस नगरी में तुम निवास करो ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

कं नु त्वदन्यं रमये ह्यरतिज्ञमकोविदम् ।
असम्परायाभिमुखमश्वस्तनविदं पशुम् ॥३८॥

पदच्छेद—

कम् नु त्वद् अन्यम् रमये हि अरतिज्ञम् अकोविदम् ।
असम्पराये अभिमुखम् अश्वस्तन विदम् पशुम् ॥

शब्दार्थ—

कम्	३.	किसके साथ	अकोविदम् ।	७.	अपण्डित
नु	२.	भला (और)	असम्पराये	८.	परलोक से
त्वद् अन्यम्	१.	तुमसे भिन्न	अभिमुखम्	६.	विमुख (और)
रमये	४.	रमण करूँगी	अश्वस्तन	१०.	भविष्य को नहीं
हि	५.	क्योंकि दूसरे	विदम्	११.	सोचने वाले
अरतिज्ञम्	६.	रति सुख के अज्ञानी	पशुम् ॥	१२.	पशु के समान हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तुमसे भिन्न भला और किसके साथ रमण करूँगी । क्योंकि दूसरे रति-सुख के अज्ञानी, अपण्डित, परलोक से विमुख और भविष्य को नहीं सोचने वाले पशु के समान हैं ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

धर्मो ह्यत्रार्थकामौ च प्रजानन्दोऽमृतं यशः ।
लोका विशोका विरजा यान् न केवलिनो विदुः ॥३९॥

पदच्छेद—

धर्मो हि अत्र अर्थकामौ च प्रजा आनन्द अमृतं यशः ।
लोकाः विशोकाः विरजाः यान् न केवलिनो विदुः ॥

शब्दार्थ—

धर्मः	३.	धर्म	यशः	८.	कीर्ति
हि	२.	ही	लोकाः	१२.	स्वर्गादि लोक (मिलते हैं)
अत्र	१.	गृहस्थ आश्रम में	विशोकाः	११.	शोक रहित
अर्थ कामौ	४.	अर्थ-काम	विरजाः	१०.	शुद्ध
च	९.	और	यान्	१४	जिन्हें
प्रजा	५.	पुत्र	न	१५	नहीं
आनन्द	६.	सुख	केवलिनः	१३.	यति लोग
अमृतम्	७.	मोक्ष	विदुः ॥	१६.	जानते हैं

श्लोकार्थ—गृहस्थ आश्रम में ही धर्म, अर्थ, काम, पुत्र, सुख, मोक्ष, कीर्ति और शुद्ध शोक रहित स्वर्गादिलोक मिलते हैं । यति लोग जिन्हें नहीं जानते हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोक

पितृदेवर्षिमर्त्यानां भूतानामात्मनश्च ह ।
क्षेम्यं वदन्ति शरणं भवेऽस्मिन् यद् गृहाश्रमः ॥४०॥

पदच्छेद—

पितृ देवर्षि मर्त्यानां भूतानाम् आत्मनः च ह ।
क्षेम्यम् वदन्ति शरणम् भवे अस्मिन् यद् गृहाश्रमः ॥

शब्दार्थ—

पितृ	६.	पितर	क्षेम्यम्	१२.	कल्याणकारी
देव ऋषि	७.	देवता-ऋषिगण	वदन्ति	१४.	कहते हैं
मर्त्यानाम्	८.	मनुष्य	शरणम्	१३.	आश्रम
भूतानाम्	१०.	प्राणी	भवे	२.	संसार में
आत्मनः	११.	अपने लिये	अस्मिन्	१.	इस
च	९.	और	यद्	३.	जो
ह ।	५.	उसी को	गृहाश्रमः ॥	४.	गृहस्थाश्रम है

श्लोकार्थ—इस संसार में जो गृहस्थाश्रम है उसी को पितर, देवता, ऋषिगण मनुष्य और प्राणी अपने लिये कल्याणकारी आश्रम कहते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

का नाम वीर विख्यातं वदान्यं प्रियदर्शनम् ।
न वृणीत प्रियं प्राप्तं मादृशी त्वादृशं पतिम् ॥४१॥

पदच्छेद—

का नाम वीर विख्यातम् वदान्यम् प्रियदर्शनम् ।
न वृणीत प्रियम् प्राप्तम् मादृशी त्वादृशम् पतिम् ॥

शब्दार्थ—

का	३.	कौन स्त्री (होगी)	न वृणीत	१२.	नहीं वरण करेगी
नाम	४.	जो भला	प्रियम्	६.	अत्यन्त प्रिय
वीर	१.	हे राजन्	प्राप्तम्	११.	पाकर भी
विख्यातम्	६.	प्रसिद्ध	मादृशी	२.	मेरे जैसी
वदान्यम्	७.	उदार चरित	त्वादृशम्	५.	आप जैसे
प्रियदर्शनम् ।	८.	सुन्दर	पतिम् ॥	१०	पति को

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मेरे जैसी कौन स्त्री होगी जो भला आप जैसे प्रसिद्ध उदार चरित सुन्दर अत्यन्त प्रिय पति को पाकर भी नहीं वरण करेगी ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

कस्या मनस्ते भुवि भोगिभोगयोः स्त्रिया न सज्जेद्भुजयोर्महाभुज ।
योऽनाथवर्गाधिमलं घृणोद्धतस्मितावलोकेन चरत्यपोहितुम् ॥४२॥

पदच्छेद—

कस्याः मनः ते भुवि भोगिभोगयोः स्त्रियाः न सज्जेत् भुजयोः महाभुज ।
यः अनाथवर्ग अधिमलम् घृणा उद्धत स्मित अवलोकेन चरति अपोहितुम् ॥

शब्दार्थ—

कस्याः	६.	किस	यः	१०.	जो (आप)
मनः	८.	मन	अनाथवर्ग	१५.	दीन जनों के
ते	४.	आपकी	अधिमलम्	१६.	मानसिक दुःख को
भुवि	२.	संसार में	घृणा	१२.	कृपा वश
भोगि भोगयोः	३.	सर्प के समान गोलाकार	उद्धत	११.	अगाध
स्त्रियाः	७.	स्त्री का	स्मित	१३.	मुसकानभरी
न सज्जते	९.	नहीं, रमेगा	अवलोकेन	१४.	चितवन से
भुजयोः	५.	भुजाओं में	चरति	१८.	विचारण कर रहे हैं
महाभुजः ।	१.	हे महाबाहो	अपोहितुम् ॥	१७.	दूर करने के लिये

श्लोकार्थ—हे महाबाहो ! संसार में सर्प के समान गोलाकार आपकी भुजाओं में किस स्त्री का मन नहीं रमेगा । जो आप अगाध कृपा वश मुसकानभरी चितवन से दीन जनों के मानसिक दुःख को दूर करने के लिये विचरण कर रहे हैं ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

नारद उवाच—इति तौ दम्पती तत्र समुद्य समयं मिथः ।
तां प्रविश्य पुरीं राजन्मुमुदाते शतं समाः ॥४३॥

पदच्छेद—

इति तौ दम्पती तत्र समुद्य समयम् मिथः ।
ताम् प्रविश्य पुरीम् राजन् मुमुदाते शतम् समाः ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	ताम्	९.	उस
तौ	३.	वे दोनों	प्रविश्य	१०.	प्रवेश (किया और)
दम्पती	४.	स्त्री पुरुष	पुरीम्	१०.	नगरी में
तत्र	५.	वहाँ पर	राजन्	१.	हे राजन्
समुद्य	८.	स्वीकार करके	मुमुदाते	१४.	आनन्द किया
समयम्	७.	बात को	शतम्	१२.	एक सौ
मिथः ।	६.	एक दूसरे की	समाः ॥	१३.	वर्षों तक

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार उन दोनों स्त्री-पुरुषों ने वहाँ पर एक दूसरे की बात को स्वीकार करके उस नगरी में प्रवेश किया और एक सौ वर्षों तक आनन्द किया ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

उपगीयमानो ललितं तत्र तत्र च गायकैः ।
क्रीडन् परिवृतः स्त्रीभिर्ह्रदिनीमाविशच्छुचौ ॥४४॥

पदच्छेद—

उपगीयमानः ललितम् तत्र तत्र च गायकैः ।
क्रीडन् परिवृतः स्त्रीभिः ह्रदिनीम् आविशत् शुचौ ॥

शब्दार्थ—

उपगीयमानः	५.	यशोगान करते थे	क्रीडन्	८.	जल क्रीडा करने के लिये
ललितम्	४.	मधुर स्वर में (उनका)	परिवृतः	१०.	साथ
तत्र	१.	जगह	स्त्रीभिः	९.	स्त्रियों के
तत्र	२.	जगह पर	ह्रदिनीम्	११.	सरोवर में
च	६.	तदनन्तर	आविशत्	१२.	प्रवेश करता था
गायकैः ।	३.	गायक वृन्द	शुचौ ॥	७.	ग्रीष्म ऋतु में (वह राजा)

श्लोकार्थ—जगह-जगह पर गायक वृन्द मधुर स्वर में उसका यशोगान करते थे । तदनन्तर ग्रीष्म ऋतु में वह राजा जल क्रीडा करने के लिये स्त्रियों के साथ सरोवर में प्रवेश करता था ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

सप्तोपरि कृता द्वारः पुरस्तस्यास्तु द्वे अधः ।
पृथग्विषयगत्यर्थं तस्यां यः कश्चनेश्वरः ॥४५॥

पदच्छेद—

सप्त उपरि कृताः द्वारः पुरः तस्याः तु द्वे अधः ।
पृथग् विषय गत्यर्थम् तस्याम् यः कश्चन ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

सप्त	११.	सात	अधः ।	१३.	नीचे
उपरि	१०.	ऊपर	पृथग्	५.	भिन्न-भिन्न
कृताः	१६.	बनाये गये थे	विषय	६.	देशों में
द्वारः	१५.	दरवाजे	गत्यर्थम्	७.	जाने के लिये
पुरः	९.	नगरी के	तस्याम्	१.	उस नगरी में
तस्याः	८.	उस	यः	२.	जो
तु	१२.	तथा	कश्चन	३.	कोई
द्वे	१४.	दो	ईश्वरः ॥	४.	राजा हो (उसे)

श्लोकार्थ—उस नगरी में जो कोई राजा हो उसे भिन्न-भिन्न देशों में जाने के लिये उस नगरी के ऊपर सात तथा नीचे दो दरवाजे बनाये गये थे ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

पञ्च द्वारस्तु पौरस्त्या दक्षिणैका तथोत्तरा ।
पश्चिमे द्वे अमूषां ते नामानि नृप वर्णये ॥४६॥

पदच्छेद— पञ्च द्वारः तु पौरस्त्याः दक्षिणाः एका तथा उत्तरा ।
पश्चिमे द्वे अमूषाम् ते नामानि नृप वर्णये ॥

शब्दार्थ—

पञ्च द्वारः	२.	पाँच दरवाजे	पश्चिमे	८.	पश्चिम दिशा में
तु	३.	तथा	द्वे	९.	दो (दरवाजे थे)
पौरस्त्याः	१.	पूर्व दिशा में	अमूषाम्	११.	उनके
दक्षिण	४.	दक्षिण दिशा में (और)	ते	१३.	तुम्हें
एका	६.	एक-एक	नामानि	१२.	नाम
तथा	७.	तथा	नृप	१०.	हे राजन्
उत्तरा ।	५.	उत्तर दिशा में	वर्णये ॥	१४.	सुनाता हूँ

श्लोकार्थ—उनमें से पूर्व दिशा में पाँच दरवाजे तथा दक्षिण दिशा में और उत्तर दिशा में एक-एक तथा पश्चिम दिशा में दो दरवाजे थे। हे राजन् ! उनके नाम तुम्हें सुनाता हूँ ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

खद्योताऽऽविर्मुखी च प्राग्द्वारावेकत्र निर्मिते ।
विभ्राजितं जनपदं याति ताभ्यां द्युमत्सखः ॥४७॥

पदच्छेद—

खद्योत आविर्मुखी च प्राक् द्वारौ एकत्र निर्मिते ।
विभ्राजितम् जनपदम् याति ताभ्याम् द्युमत् सखः ॥

शब्दार्थ—

खद्योत	२.	खद्योत	विभ्राजितम्	१०.	विभ्राजित नाम के
आविर्मुखी	४.	आविर्मुखी (नाम के)	जनपदम्	११.	देश में
च	३.	और	याति	१२.	जाता है
प्राक्	१.	पूर्व दिशा में	ताभ्याम्	७.	उन दरवाजों से
द्वारौ एकत्र	५.	दो दरवाजे एक जगह	द्युमत्	८.	द्युमत् नाम के
निर्मिते ।	६.	बनाये गये हैं	सखः ॥	९.	मित्र के साथ

श्लोकार्थ—पूर्व दिशा में खद्योत और आविर्मुखी नाम के दो दरवाजे एक जगह बनाये गये हैं । उन दरवाजों से वह राजा पुरञ्जन द्युमत् नाम के मित्र के साथ विभ्राजित नाम के देश में जाता है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

नलिनी नालिनी च प्राग्द्वारावेकत्र निर्मिते ।
अवधूतसखस्ताभ्यां विषयं याति सौरभम् ॥४८॥

पदच्छेद—

नलिनी नालिनी च प्राक् द्वारौ एकत्र निर्मिते ।
अवधूत सखः ताभ्याम् विषयम् याति सौरभम् ॥

शब्दार्थ—

नलिनी	२.	नलिनी	अवधूत	८.	अवधूत नाम के
नालिनी	४.	नालिनी नाम के	सखः	९.	मित्र के साथ
च	३.	और	ताभ्याम्	७.	उन दोनों दरवाजों से वह
प्राक्	१.	पूर्व दिशा में	विषयम्	११.	देश को
द्वारौ एकत्र	५.	दो दरवाजे एक जगह	याति	१२.	जाता है
निर्मिते ।	६.	बनाये गये थे	सौरभम् ॥	१०.	सौरभ नाम के

श्लोकार्थ—पूर्व दिशा में नलिनी और नालिनी नाम के दो दरवाजे एक जगह बनाये गये थे । उन दोनों दरवाजों से वह राजा पुरञ्जन अवधूत नाम के मित्र के साथ सौरभ नाम के देश को जाता है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

मुख्या नाम पुरस्ताद् द्वास्तयाऽऽपणबहूदनौ ।
विषयौ याति पुरराड्रसज्ञविपणान्वितः ॥४९॥

पदच्छेद—

मुख्या नाम पुरस्ताद् द्वाः तया आपण बहूदनौ ।
विषयौ याति पुरराट् रसज्ञ विपण अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

मुख्यानाम	२.	मुख्या नाम का	विषयौ	११.	देशों में
पुरस्ताद्	१.	पूर्व दिशा में ही	याति	१२.	जाता है
द्वाः	३.	दरवाजा है	पुरराट्	५.	राजा पुरञ्जन
तया	४.	उस दरवाजे से	रसज्ञ	६.	रसज्ञ (और)
आपण	१०.	आपण नाम के	विपण	७.	विपण नाम के
बहूदनौ ।	९.	बहूदन और	अन्वितः ॥	८.	मित्र के साथ (क्रमशः)

श्लोकार्थ—पूर्व दिशा में ही मुख्या नाम का दरवाजा है । उस दरवाजे से राजा पुरञ्जन रसज्ञ और विपण नाम के मित्र के साथ क्रमशः बहूदन और आपण नाम के देशों में जाता है ॥

पञ्चाशः श्लोकः

पितृहूर्नृप पुर्या द्वार्दक्षिणेन पुरञ्जनः ।
राष्ट्रं दक्षिणपञ्चालं याति श्रुतधरान्वितः ॥५०॥

पदच्छेद—

पितृहूः नृप पुर्याः द्वाः दक्षिणेन पुरञ्जनः ।
राष्ट्रम् दक्षिण पञ्चालं याति श्रुतधर अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

पितृहूः	४.	पितृहू नाम का	राष्ट्रम्	११.	श्रुतधर नाम के
नृप	१.	हे राजन्	दक्षिण	९.	दक्षिण
पुर्याः	२.	उस नगरी के	पञ्चालम्	१०.	पाञ्चाल देश को
द्वाः	५.	दरवाजा है (जिससे)	याति	१२.	जाता है
दक्षिणेन	३.	दक्षिण दिशा की ओर	श्रुतधर	७.	श्रुतधर नाम के
पुरञ्जनः ।	६.	राजा पुरञ्जन	अन्वितः ॥	८.	मित्र के साथ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उस नगरी के दक्षिण दिशा की ओर पितृहू नाम का दरवाजा है जिससे राजा पुरञ्जन श्रुतधर नाम के मित्र के साथ दक्षिण पाञ्चाल देश को जाता है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

देवहूर्नाम पुर्या द्वा उत्तरेण पुरञ्जनः ।
राष्ट्रमुत्तरपञ्चालं याति श्रुतधरान्वितः ॥५१॥

पदच्छेद—

देवहूः नाम पुर्याः द्वाः उत्तरेण पुरञ्जनः ।
राष्ट्रम् उत्तर पञ्चालम् याति श्रुतधर अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

देवहूः	३. देवहू		राष्ट्रम्	११. देश को	
नाम	४. नाम का		उत्तर	९. उत्तर	
पुर्याः	१. उस नगरी के		पञ्चालम्	१०. पाञ्चाल	
द्वाः	५. दरवाजा है (जिससे)		याति	१२. जाता है	
उत्तरेण	२. उत्तर दिशा की ओर		श्रुतधर	७. श्रुतधर नाम के	
पुरञ्जनः ।	६. राजा पुरञ्जन		अन्वितः ॥	८. मित्र के साथ	

श्लोकार्थ—उस नगरी के उत्तर दिशा की ओर देवहू नाम का दरवाजा है। जिससे राजा पुरञ्जन श्रुतधर नाम के मित्र के साथ उत्तर पाञ्चाल देश को जाता है ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

आसुरी नाम पश्चाद् द्वास्तया याति पुरञ्जनः ।
ग्रामकं नाम विषयं दुर्मदेन समन्वितः ॥५२॥

पदच्छेद—

आसुरी नाम पश्चात् द्वाः तया याति पुरञ्जनः ।
ग्रामकं नाम विषयम् दुर्मदेन समन्वितः ॥

शब्दार्थ—

आसुरी	२. आसुरी	पुरञ्जनः	६. राजा पुरञ्जन
नाम	३. नाम का	ग्रामकम्	९. ग्रामक
पश्चात्	१. पश्चिम दिशा में	नाम	१०. नाम के
द्वाः	४. दरवाजा है	विषयम्	११. देश को
तया	५. उस दरवाजे से	दुर्मदेन	७. दुर्मदनाम के
याति	१२. जाता है	समन्वितः ॥	८. मित्र के साथ

श्लोकार्थ—उस नगरी के पश्चिम दिशा में आसुरी नाम का दरवाजा है, उस दरवाजे से राजा पुरञ्जन दुर्मद नाम के मित्र के साथ ग्रामक नाम के देश को जाता है ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

निर्ऋतिर्नाम पश्चाद् द्वास्तया याति पुरञ्जनः ।
वैशसं नाम विषयं लुब्धकेन समन्वितः ॥५३॥

पदच्छेद—

निर्ऋतिः नाम पश्चाद् द्वाः तया याति पुरञ्जनः ।
वैशसम् नाम विषयम् लुब्धकेन समन्वितः ॥

शब्दार्थ—

निर्ऋतिः	२.	निर्ऋति	पुरञ्जनः ।	६.	राजा पुरञ्जन
नाम	३.	नाम का	वैशसम्	९.	वैशस
पश्चाद्	१.	पश्चिम दिशा में	नाम	१०.	नाम के
द्वाः	४.	दरवाजा है	विषयम्	११.	देश को
तया	५.	उस दरवाजे से	लुब्धकेन	७.	लुब्धक नाम के
याति	१२.	जाता है	समन्वितः ॥	८.	मित्र के साथ

श्लोकार्थ—पश्चिम दिशा में निर्ऋति नाम का दरवाजा है । उस दरवाजे से राजा पुरञ्जन लुब्धक नाम के मित्र के साथ वैशस नाम के देश को जाता है ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

अन्धावमीषां पौराणां निर्वाक्पेशस्कृतावुभौ ।
अक्षण्वतामधिपतिस्ताभ्यां याति करोति च ॥५४॥

पदच्छेद—

अन्धौ अमीषाम् पौराणाम् निर्वाक्पेशस्कृतौ उभौ ।
अक्षण्वताम् अधिपतिः ताभ्याम् याति करोति च ॥

शब्दार्थ—

अन्धौ	६.	अन्धे हैं (राजा पुरञ्जन)	अक्षण्वताम्	७.	आँख वालों का
अमीषाम्	१.	उन	अधिपतिः	८.	शासक होकर भी वह
पौराणाम्	२.	नागरिकों में	ताभ्याम्	९.	उन दोनों के परामर्श से
निर्वाक्	३.	निर्वाक् और	याति	१०.	जाता है
पेशस्कृतौ	४.	पेशस्कृत नाम के	करोति	१२.	करता है
उभौ ।	५.	दो	च ॥	११.	और

श्लोकार्थ—उन नागरिकों में निर्वाक् और पेशस्कृत नाम के दो अन्धे हैं । राजा पुरञ्जन आँख वालों का शासक होकर भी वह उन दोनों के परामर्श से जाता है और करता है ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

स यर्ह्यन्तःपुरगतो विषूचीनसमन्वितः।
मोहं प्रसादं हर्षं वा याति जायात्मजोद्भवम् ॥५५॥

पदच्छेद—

सः यर्हि अन्तः पुर गतः विषूचीन समन्वितः।
मोहम् प्रसादम् हर्षम् वा याति जाया आत्मज उद्भवम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह राजा पुरञ्जन	प्रसादम्	११.	प्रसन्नता
यर्हि	४.	जब	हर्षम्	१३.	हर्ष को
अन्तः पुर	५.	महल में	वा	१२.	अथवा
गतः	६.	जाता है (तब)	याति	१४.	प्राप्त करता है
विषूचीन	२.	विषूचीन के	जाया	७.	अपनी पत्नी (और)
समन्वितः	३.	साथ	आत्मज	८.	पुत्रों के
मोहम्	१०.	मोह	उद्भवम् ॥	९.	कारण

श्लोकार्थ—वह राजा पुरञ्जन विषूचीन के साथ जब महल में जाता है। तब अपनी पत्नी और पुत्रों के कारण मोह, प्रसन्नता अथवा हर्ष को प्राप्त करता है।

षट्पञ्चाशः श्लोकः

एवं कर्मसु संसक्तः कामात्मा वञ्चितोऽबुधः।
महिषी यद्यदीहेत तत्तदेवान्ववर्तत ॥५६॥

पदच्छेद—

एवम् कर्मसु संसक्तः कामात्मा वञ्चितः अबुधः।
महिषी यद्-यद् ईहेत तत् तद् एव अनुअवर्तत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	महिषी	७.	उसकी पत्नी
कर्मसु	२.	कर्म जाल में	यद्-यद्	८.	जो-जो
संसक्तः	३.	फँसा हुआ (राजा पुरञ्जन)	ईहेत	९.	चाहती थी
कामात्मा	४.	कामुक	तद्	१०.	वह (वही)
वञ्चितः	६.	ठगा गया था	तद्-एव	११.	वही
अबुधः।	५.	अज्ञानी	अनुअवर्तत ॥	१२.	करता था

श्लोकार्थ—इस प्रकार कर्म जाल में फंसा हुआ राजा पुरञ्जन कामुक और अज्ञानी होकर ठगा गया था। उसकी पत्नी जो-जो चाहती थी वह वही-वही करता था ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

क्वचित्पिबन्त्यां पिबति मदिरां मदविह्वलः ।
अश्नन्त्यां क्वचिदश्नाति जक्षत्यां सह जक्षिति ॥५७॥

पदच्छेद—

क्वचित् पिबन्त्याम् पिबति मदिराम् मद विह्वलः ।
अश्नन्त्याम् क्वचित् अश्नाति जक्षत्याम् सह जक्षिति ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	जब (उनकी पत्नी)	अश्नन्त्याम्	८.	खाती थी (तब वह भी)
पिबन्त्याम्	३.	पीती थी (वह भी)	क्वचित्	७.	जब वह
पिबति	४.	पीता था (ततः)	अश्नाति	९.	खाता था
मदिराम्	२.	मदिरा	जक्षत्याम्	१०.	जब चबाती (तब वह भी)
मद	५.	मद से	सह	११.	उसके साथ
विह्वलः ।	६.	उन्मत्त होकर	जक्षिति ॥	१२.	चबाता था

श्लोकार्थ—जब उसकी पत्नी मदिरा पीती थी वह भी पीता था । ततः मद से उन्मत्त होकर जब वह खाती थी तब वह भी खाता था; जब चबाती तब वह भी चबाता था ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

क्वचिद्गायति गायन्त्यां रुदत्यां रुदति क्वचित् ।
क्वचिद्धसन्त्यां हसति जल्पन्त्यामनु जल्पति ॥५८॥

पदच्छेद—

क्वचित् गायति गायन्तीम् रुदत्याम् रुदति क्वचित् ।
क्वचित् हसन्त्याम् हसति जल्पन्त्याम् अनुजल्पति ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	जब (वह)	क्वचित्	७.	जब
गायति	३.	गाता था	हसन्त्याम्	८.	बोलती थी (तब)
गायन्त्याम्	२.	गाती थी (तब)	हसति	९.	हंसता था (और जब)
रुदत्याम्	५.	रोती थी (तब वह भी)	जल्पन्त्याम्	१०.	बोलती थी (तब)
रुदति	६.	रोता था	अनुजल्पति ॥	११.	बोलता था
क्वचित् ।	४.	जब			

श्लोकार्थ—जब वह गाती थी तब वह गाता था, जब रोती थी तब वह भी रोता था । जब हंसती थी तब वह हंसता था और जब बोलती थी तब वह भी बोलता था ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

क्वचिद्धावति धावन्त्यां तिष्ठन्त्यामनु तिष्ठति ।
अनु शेते शयानायामन्वास्ते क्वचिदासतीम् ॥५९॥

पदच्छेद—

क्वचित् धावति धावन्त्याम् तिष्ठन्त्याम् अनुतिष्ठति ।
अनुशेते शयानायाम् अन्वास्ते क्वचिद् आसतीम् ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	जब	अनुशेते	७.	सोता था (और)
धावति	३.	दौड़ता था	शयानायाम्	६.	जब सोती थी (तब)
धावन्त्याम्	२.	दौड़ती थी (तब)	अन्वास्ते	१०.	बैठता था
तिष्ठन्त्याम्	४.	जब खड़ी होती थी (तब)	क्वचित्	८.	जब
अनुतिष्ठति ।	५.	खड़ा होता था	आसतीम् ॥	९	बैठती थी (तब)

श्लोकार्थ—जब दौड़ती थी तब दौड़ता था, जब खड़ी होती थी तब खड़ा होता था, जब सोती थी तब सोता था, जब बैठती थी तब बैठता था ॥

षष्टितमः श्लोकः

क्वचिच्छृणोति शृण्वन्त्यां पश्यन्त्यामनु पश्यति ।
क्वचिज्जिघ्रति जिघ्रन्त्यां स्पृशन्त्यां स्पृशति क्वचित् ॥६०॥

पदच्छेद—

क्वचित् शृणोति शृण्वन्त्याम् पश्यन्त्याम् अनुपश्यति ।
क्वचित् जिघ्रति जिघ्रन्त्याम् स्पृशन्त्याम् स्पृशति क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	जब (वह)	क्वचित्	६.	जब (कुछ)
शृणोति	३.	सुनता था	जिघ्रति	८.	सूंघता था
शृण्वन्त्याम्	२.	सुनती थी (तब)	जिघ्नन्त्याम्	७.	सूंघती थी (तब)
पश्यन्त्याम्	४.	जब देखती थी (तब)	स्पृशन्त्याम्	१०.	छूती थी
अनुपश्यति ।	५.	देखता था	स्पृशति	११.	छूता था
			क्वचित् ॥	९.	जब (कुछ)

श्लोकार्थ—जब वह सुनती थी तब सुनता था, जब देखती थी तब देखता था, जब कुछ सूंघती थी तब सूंघता था, जब कुछ छूती थी तब छूता था ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

क्वचिच्च शोचतीं जायामनुशोचति दीनवत् ।
अनुहृष्यति हृष्यन्त्यां मुदितामनु मोदते ॥६१॥

पदच्छेद—

क्वचित् च शोचतीम् जायाम् अनुशोचति दीनवत् ।
अनुहृष्यति हृष्यन्त्याम् मुदिताम् अनु मोदते ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	जब	दीनवत् ।	४.	(वह) अनाथ के समान
च	८.	और (उसके)	अनुहृष्यति	७.	प्रसन्न होता था
शोचतीम्	३.	शोक करती थी (तब)	हृष्यन्त्याम्	६.	प्रसन्न होती थी (तब)
जायाम्	२.	उसकी पत्नी	मुदिताम्	९.	आनन्दित होने पर
अनुशोचति	५.	शोक करता था (जब)	अनुमोदते ॥	१०.	आनन्दित होता था

श्लोकार्थ—जब उसकी पत्नी शोक करती थी, तब वह अनाथ के समान शोक करता था। जब प्रसन्न होती थी तब प्रसन्न होता था। और उसके आनन्दित होने पर आनन्दित होता था ॥

द्वाषष्टितमः श्लोकः

विप्रलब्धो महिष्यैवं सर्वप्रकृतिवञ्चितः ।
नेच्छन्ननुकरोत्यज्ञः क्लैब्यात्क्रीडामृगो यथा ॥६२॥

पदच्छेद—

विप्रलब्धः महिष्या एवम् सर्व प्रकृति वञ्चितः ।
न इच्छन् अनुकरोति अज्ञः क्लैब्यात् क्रीडा मृगः यथा ॥

शब्दार्थ—

विप्रलब्धः	६.	ठगा गया था	इच्छन्	१३.	चाहता हुआ भी
महिष्या	५.	पत्नी के द्वारा	अनुकरोति	१४.	करता था
एवम्	१.	इस प्रकार (वह)	अज्ञः	११.	वह अज्ञानी
सर्व	२.	अपने सारे	क्लैब्यात्	१०.	परवश होने से
प्रकृति	३.	स्वभाव से	क्रीडा	७.	खेल के लिये
वञ्चितः ।	४.	विरुद्ध होने पर भी	मृग	८.	पालतू बन्दर के
न	१२.	नहीं	यथा ॥	९.	समान

श्लोकार्थ—इस प्रकार वह अपने सारे स्वभाव से विरुद्ध होने पर भी पत्नी के द्वारा ठगा गया था। खेल के लिये पालतू बन्दर के समान परवश होने से वह अज्ञानी नहीं चाहता हुआ भी करता था ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पुरञ्जनोपाख्याने
पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

षड्विंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच—स एकदा महेष्वासो रथं पञ्चाश्वमाशुगम् ।
द्वीषं द्विचक्रमेकाक्षं त्रिवेणुं पञ्चबन्धुरम् ॥१॥

पदच्छेद—

सः एकदा महेष्वासः रथम् पञ्चाश्वम् आशुगम् ।
द्वीषम् द्विचक्रम् एकाक्षम् त्रिवेणुम् पञ्चबन्धुरम् ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	वे (महाराज पुरञ्जन)	द्वीषम्	७.	(उसमें) दो ईषा दण्ड
एकदा	१.	एक बार	द्विचक्रम्	८.	दो पहिये
महेष्वासः	३.	बड़ा धनुष लेकर	एकाक्षम्	९.	एक धुरी
रथम्	६.	रथ से (वन को गये)	त्रिवेणुम्	१०.	तीन ध्वज दण्ड (और)
पञ्चाश्वम्	४.	पाँच घोड़ों वाले	पञ्च	११.	पाँच
आशुगम् ।	५.	शीघ्रगामी	बन्धुरम् ॥	१२.	डोरियाँ थीं

श्लोकार्थ—एक बार वे महाराज पुरञ्जन बड़ा धनुष लेकर पाँच घोड़ोंवाले शीघ्र गामी रथ से वन को गये । उसमें दो ईषा दण्ड, दो पहिये, तीन ध्वजदण्ड और पाँच डोरियाँ थीं ॥

द्वितीयः श्लोकः

एकरश्म्येकदमनमेकनीडं द्विकूबरम् ।
पञ्चप्रहरणं सप्तवरूथं पञ्चविक्रमम् ॥२॥

पदच्छेद—

एकरश्मि एकदमनम् एकनीडम् द्विकूबरम् ।
पञ्चप्रहरणम् सप्तवरूथम् पञ्च विक्रमम् ॥

शब्दार्थ—

एक	१.	उस रथ में एक	पञ्च	६.	पाँच
रश्मि	२.	लगाम	प्रहरणम्	७.	आयुध (और)
एकदमनम्	३.	एक सारथी	सप्तवरूथम्	८.	सात आवरण थे (तथा वह)
एकनीडम्	४.	एक बैठने का स्थान	पञ्च	९.	पाँच प्रकार से
द्विकूबरम् ।	५.	दो जुये	विक्रमम् ॥	१०.	चलता था

श्लोकार्थ—उस रथ में एक लगाम, एक सारथी, एक बैठने का स्थान, दो जुये, पाँच आयुध और सात आवरण थे, तथा वह पाँच प्रकार से चलता था ॥

तृतीयः श्लोकः

हैमोपस्करमारुह्य स्वर्णवर्माक्षयेषुधिः ।
एकादशचमूनाथः पञ्चप्रस्थमगाद्वनम् ॥३॥

पदच्छेद—

हैम उपस्करम् आरुह्य स्वर्णवर्मा अक्षय इषुधिः ।
एकादश चमूनाथः पञ्चप्रस्थम् अगाद् वनम् ॥

शब्दार्थ—

हैम	१.	(वह राजा) सोने का	एकादश	७.	ग्यारहवें
उपस्करम्	२.	आभूषण	चमूनाथः	८.	सेनापति के साथ
आरुह्य	६.	रथ पर चढ़कर	पञ्चप्रस्थम्	९.	पञ्चप्रस्थ नाम के
स्वर्णवर्मा	३.	सोने का कवच	अगाद्	११.	प्रस्थान किया
अक्षय	४.	अविनाशी	वनम् ॥	१०.	वन को
इषुधिः ।	५.	तरकश लेकर (तथा)			

श्लोकार्थ—उस राजा ने सोने का आभूषण, सोने का कवच, अविनाशी तरकश लेकर तथा रथ पर चढ़कर ग्यारहवें सेनापति के साथ वन को प्रस्थान किया ॥

चतुर्थः श्लोकः

चचार मृगयां तत्र दृप्त आत्तेषुकार्मुकः ।
विहाय जायामतदर्हां मृगव्यसनलालसः ॥४॥

पदच्छेद—

चचार मृगयाम् तत्र दृप्त आत्त इषु कार्मुकः ।
विहाय जायाम् अतदर्हाम् मृग व्यसन लालसः ॥

शब्दार्थ—

चचार	६.	किया (वह)	विहाय	९.	छोड़कर (आया था)
मृगयाम्	५.	शिकार	जायाम्	८.	पत्नी को
तत्र	१.	उस वन में (राजा ने)	अतदर्हाम्	७.	अत्याज्य होने पर भी
दृप्त	४.	अहंकार पूर्वक	मृग	१०.	(क्योंकि उसे) पशुओं के
आत्त	३.	लेकर	व्यसन	११.	शिकार का
इषु कार्मुकः ।	२.	बाण और धनुष	लालसः ॥	१२.	शौक हो आया

श्लोकार्थ—उन वन में राजा ने बाण और धनुष लेकर अहंकार पूर्वक शिकार किया । वह अत्याज्य होने पर भी पत्नी को छोड़कर आया था । (क्योंकि उसे) पशुओं के शिकार का शौक हो आया ॥

पञ्चमः श्लोकः

आसुरीं वृत्तिमाश्रित्य घोरात्मा निरनुग्रहः ।
न्यहनन्निशितैर्बाणैर्वनेषु वनगोचरान् ॥५॥

पदच्छेद—

आसुरीम् वृत्तिम् आश्रित्य घोर आत्मा निरनुग्रहः ।
न्यहनन् निशितैः बाणैः वनेषु वन गोचरान् ॥

शब्दार्थ—

आसुरीम्	२.	तामसी	न्यहनन्	१२.	वध किया
वृत्तिम्	३.	स्वभाव के	निशितैः	८.	तीखे
आश्रित्य	४.	कारण	बाणैः	९.	बाणों से
घोर	५.	कठोर (और)	वनेषु	१.	वन में
आत्मा	७.	राजा ने	वन	१०.	वन के
निरनुग्रहः ।	६.	दयाशून्य होकर	गोचरान् ॥	११.	पशुओं का

श्लोकार्थ—वन में तामसी स्वभाव के कारण दयाशून्य होकर राजा ने तीखे बाणों से वन के पशुओं का वध किया ॥

षष्ठः श्लोकः

तीर्थेषु प्रतिदृष्टेषु राजा मेध्यान् पशून् वने ।
यावदर्थमलं लुब्धो हन्यादिति नियम्यते ॥६॥

पदच्छेद—

तीर्थेषु प्रति दृष्टेषु राजा मेध्यान् पशून् वने ।
यावत् अर्थम् अलम् लुब्धः हन्यात् इति नियम्यते ॥

शब्दार्थ—

तीर्थेषु	७.	श्राद्धादि कार्यों के लिये ही	यावत्	९.	अनुसार
प्रतिदृष्टेषु	६.	शास्त्र विहित	अर्थम्	८.	आवश्यकता
राजा	५.	राजा	अलम्	३.	मांस में अत्यन्त
मेध्यान्	११.	पवित्र	लुब्धः	४.	आसक्त होने पर
पशून्	१२.	पशुओं का	हन्यात्	१३.	वध करे
वने ।	१०.	वन के	इति	१	शास्त्र ने ऐसा
			नियम्यते ॥	२.	नियम बनाया है कि

श्लोकार्थ—शास्त्र ने ऐसा नियम बनाया है कि मांस में अत्यन्त आसक्त होने पर राजा शास्त्र विहित श्राद्धादि कार्यों के लिये ही आवश्यकता के अनुसार वन के पशुओं का वध करे ॥

सप्तमः श्लोकः

य एवं कर्म नियतं विद्वान् कुर्वीत मानवः ।
कर्मणा तेन राजेन्द्र ज्ञानेन न स लिप्यते ॥७॥

पदच्छेद—

यः एवम् कर्म नियतम् विद्वान् कुर्वीत मानवः ।
कर्मणा तेन राजेन्द्र ज्ञानेन न स लिप्यते ॥

शब्दार्थ—

यः	२. जो	कर्मणा	११. कर्म से उत्पन्न
एवम्	५. इस प्रकार	तेन	१०. उस
कर्म	७. कर्म	राजेन्द्र	१. हे राजन्
नियतम्	६. शास्त्र नियत	ज्ञानेन	१२. ज्ञान के कारण
विद्वान्	३. विद्वान	न	१३. (उसमें) नहीं
कुर्वीत्	८. करता है	सः	६. वह
मानवः।	४. मनुष्य	लिप्यते ॥	१४. आसक्त होता है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जो विद्वान् मनुष्य इस प्रकार शास्त्रनियत कर्म करता है, वह उस कर्म से उत्पन्न ज्ञान के कारण उसमें नहीं आसक्त होता है ॥

अष्टमः श्लोकः

अन्यथा कर्म कुर्वाणो मानारूढो निबध्यते ।
गुणप्रवाहपतितो नष्टप्रज्ञो व्रजत्यधः ॥८॥

पदच्छेद—

अन्यथा कर्म कुर्वाणः मान आरुढः निबध्यते ।
गुण प्रवाह ।पतितः नष्ट प्रज्ञः व्रजति अधः ॥

शब्दार्थ—

अन्यथा	१. शास्त्र के विपरीत	गुणप्रवाह	७. संसार के प्रवाह में
कर्म	२. कर्म	पतितः	८. गिरकर (उसकी)
कुर्वाणः	३. करने वाला (मनुष्य)	नष्ट	१०. नष्ट हो जाती है (और वह)
मान	४. अभिमान से	प्रज्ञः	६. बुद्धि
आरूढः	५. युक्त होने के कारण	व्रजति	१२. जाता है
निबध्यते ।	६. बन्धन को प्राप्त होता है ।	अधः ॥	११. अधोलोक में

श्लोकार्थ—शास्त्र के विपरीत कर्म करने वाला मनुष्य अभिमान से युक्त होने के कारण बन्धन को प्राप्त होता है। संसार के प्रवाह में गिरकर उसकी बुद्धि नष्ट हो जाती है, और वह अधोलोक में जाता है।

नवमः श्लोकः

तत्र निर्भिन्नगात्राणां चित्रवाजैः शिलीमुखैः ।
विप्लवोऽभूद्दुःखितानां दुःसहः करुणात्मनाम् ॥९॥

पदच्छेद—

तत्र निर्भिन्न गात्राणाम् चित्र वाजैः शिलीमुखैः ।
विप्लवः अभूत् दुःखितानाम् दुःसहः करुणात्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	उस वन में
निर्भिन्न	६.	विंध जाने से
गात्राणाम्	५.	शरीर
चित्र	२.	विचित्र
वाजैः	३.	पंख वाले
शिलीमुखैः	४.	बाणों के द्वारा
विप्लवः	८.	विनाश
अभूत्	९.	हो गया (जो)
दुःखितानाम्	७.	दुःखी प्राणियों का
दुःसहः	११.	असह्य था
करुणात्मनाम् ॥	१०.	दयाशील जनों को

श्लोकार्थ—उस वन में विचित्र पंख वाले बाणों के द्वारा शरीर विंध जाने से दुःखी प्राणियों का विनाश हो गया जो दयाशील जनों को असह्य था ॥

दशमः श्लोकः

शशान् वराहान् महिषान् गवयान् रुरुशल्यकान् ।
मेध्यानन्यांश्च विविधान् विनिघ्नन् श्रममध्यगात् ॥१०॥

पदच्छेद—

शशान् वराहान् महिषान् गवयान् रुरुशल्यकान् ।
मेध्यान् अन्यान् च विविधान् विनिघ्नन् श्रमम् अध्यगात् ॥

शब्दार्थ—

शशान्	१.	वहाँ पर खरगोश
वराहान्	२.	सुअर
महिषान्	३.	भैंसे
गवयान्	४.	नील गाय
रुरु	५.	कृष्णमृग
शल्यकान् ।	६.	साही
मेध्यान्	१०.	पवित्र (पशुओं का)
अन्यान्	८.	दूसरे
च	७.	और
विविधान्	९.	बहुत से
विनिघ्नन्	११.	वध करने से (वे राजा)
श्रमम्	१२.	थकान को
अध्यगात् ॥	१३.	प्राप्त हो गये

श्लोकार्थ—वहाँ पर खरगोश, सुअर, भैंसे, नील गाय, कृष्ण मृग, साही और दूसरे बहुत से पवित्र पशुओं का वध करने से वे राजा पुरञ्जन थकान को प्राप्त हो गये ॥

एकादशः श्लोकः

ततः क्षुत्तृट्परिश्रान्तो निवृत्तो गृहमेयिवान्।
कृतस्नानोचिताहारः संविवेश गतक्लमः ॥११॥

पदच्छेद—

ततः क्षुत् तृट् परिश्रान्तः निवृत्तः गृहम् एयिवान्।
कृत स्नान उचित आहारः संविवेश गतक्लमः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर (वे राजा)	कृत	११.	करके
क्षुत्	२.	भूख (और)	स्नान	६.	स्नान (और)
तृट्	३.	प्यास से	उचित	८.	(वहाँ पर उन्होंने) यथोचित
परिश्रान्तः	४.	थकने के कारण	आहारः	१०.	भोजन
निवृत्तः	५.	लौटकर	संविवेश	१२.	विश्राम किया (जिससे)
गृहम्	६.	घर को	गत	१४.	दूर हो गयी
एयिवान्।	७.	चले आये	क्लमः ॥	१३.	उनकी थकान

श्लोकार्थ—तदनन्तर वे राजा पुरञ्जन भूख और प्यास से थकने के कारण लौट कर घर को चले आये। वहाँ पर उन्होंने यथोचित स्नान और भोजन करके विश्राम किया। जिससे उनकी थकान दूर हो गयी।

द्वादशः श्लोकः

आत्मानमर्हयाञ्चक्रे धूपालेपस्रगादिभिः।
साध्वलङ्कृतसर्वाङ्गो महिष्यामादधे मनः ॥१२॥

पदच्छेद—

आत्मानम् अर्हयाञ्चक्रे धूप आलेप स्रग् आदिभिः।
साधु अलंकृत सर्वअङ्गो महिष्याम् आदधे मनः ॥

शब्दार्थ—

आत्मानम्	५.	अपने को	साधु	८.	अच्छी प्रकार
अर्हयाञ्चक्रे	६.	सजाया (तथा)	अलंकृत	९.	आभूषण पहन कर
धूप	१.	(उन्होंने) गन्ध	सर्वअङ्गो	७.	सारे अङ्गों में
आलेप	२.	चन्दन और	महिष्याम्	१०.	अपनी पत्नी में
स्रग्	३.	माला	आदधे	१२.	लगाया
आदिभिः।	४.	इत्यादि सुगन्धित वस्तुओं से	मनः ॥	११.	मन को

श्लोकार्थ—उन्होंने गन्ध, चन्दन और माला इत्यादि सुगन्धित वस्तुओं से अपने को सजाया तथा सारे अङ्गों में अच्छी प्रकार आभूषण पहनकर अपनी पत्नी में मन को लगाया ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तृप्तो हृष्टः सुदृप्तश्च कन्दर्पाकृष्टमानसः ।
न व्यचष्ट वरारोहां गृहिणीं गृहमेधिनीम् ॥१३॥

पदच्छेद—

तृप्तः हृष्टः सुदृप्तः च कन्दर्प आकृष्ट मानसः ।
न व्यचष्ट वरारोहाम् गृहिणीम् गृहमेधिनीम् ॥

शब्दार्थ—

तृप्तः	१.	भोजन से तृप्त	मानसः ।	५.	(उनका) मन
हृष्टः	२.	हृदय में हर्षित	न	११.	वहाँ नहीं
सुदृप्तः	४.	खूब-सज-धज कर	व्यचष्ट	१२.	देखा
च	३.	और	वरारोहाम्	९.	अपनी सुन्दरी
कन्दर्प	६.	काम में	गृहिणीम्	१०.	भार्या को
आकृष्ट	७.	आसक्त हो गया (उस समय) उन्होंने	गृहमेधिनीम् ॥	८.	घर की स्वामिनी

श्लोकार्थ—भोजन से तृप्त हृदय में हर्षित और खूब सज-धज कर उनका मन काम में आसक्त हो गया। उस समय उन्होंने घर की स्वामिनी अपनी सुन्दरी भार्या को वहाँ नहीं देखा ॥

चतुर्दशः श्लोकः

अन्तःपुरस्त्रियोऽपृच्छद्विमना इव वेदिषत् ।
अपि वः कुशलं रामाः सेश्वरीणां यथा पुरा ॥१४॥

पदच्छेद—

अन्तःपुर स्त्रियः अपृच्छत् विमनाः इव वेदिषत् ।
अपि वः कुशलम् रामाः सेश्वरीणाम् यथा पुरा ॥

शब्दार्थ—

अन्तः पुर	४.	महल की	अपि	१२.	तो है
स्त्रियः	५.	स्त्रियों से	वः	९.	तुम लोगों का
अपृच्छत्	६.	पूछने लगे (कि)	कुशलम्	१२.	कुशल
विमनाः	२.	उदास के	रमाः	७.	हे सुन्दरियो
इव	३.	समान (राजा पुरञ्जन)	सेश्वरीणाम्	८.	अपनी स्वामिनो के साथ
वेदिषत् ।	१.	हे प्राचीनबर्हि	यथा	११.	जैसी
			पुरा ॥	१०.	पहले

श्लोकार्थ—हे प्राचीनबर्हि ! उदास के समान राजा पुरञ्जन महल की स्त्रियों से पूछने लगे कि हे सुन्दरियो ! अपनी स्वामिनी के साथ पहले जैसी कुशल तो है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

न तथैतर्हि रोचन्ते गृहेषु गृहसम्पदः ।
यदि न स्याद् गृहे माता पत्नी वा पतिदेवता ।
व्यङ्गे रथ इव प्राज्ञः को नामासीत दीनवत् ॥१५॥

पदच्छेद— न तथा एतर्हि रोचन्ते गृहेषु गृहसम्पदः ।
यदि न स्यात् गृहे माता पत्नी वा पति देवता ।
व्यङ्गे रथ इव प्राज्ञः कः नाम आसीत दीनवत् ॥

शब्दार्थ—

न	४. नहीं	वा	८.	अथवा
तथा	३. पहले जैसी	पतिदेवता ।	९.	पति को देवता मानने वाली
एतर्हि	१. इस समय	व्यङ्गे	१२.	बिना पहिये के
रोचन्ते	५. अच्छी लग रही हैं	रथे इव	१३.	रथ के समान हो जाता है
गृहेषु गृहसम्पदः	२. घर में घर की सम्पत्तियाँ	प्राज्ञः	१६.	बुद्धिमान् (मनुष्य)
यदि	६. यदि	कः	१५.	कौन
न स्यात्	११. नहीं रहें (तो वह घर)	नाम	१४.	उस घर में भला
गृहे माता	७. घर में माता	आसीत	१८.	रहेगा
पत्नी ।	१०. पत्नी	दीनवत् ॥	१७	दीन के समान

श्लोकार्थ—इस समय घर में घर की सम्पत्तियाँ पहले जैसी अच्छी नहीं लग रही हैं । यदि घर में माता अथवा पति को देवता मानने वाली पत्नी नहीं रहे तो वह घर बिना पहिये के रथ के समान हो जाता है । उस घर में भला कौन बुद्धिमान् मनुष्य दीन के समान रहेगा ॥

षोडशः श्लोकः

क्व वर्तते सा ललना मज्जन्तं व्यसनार्णवे ।
या मामुद्धरते प्राज्ञां दीपयन्ती पदे पदे ॥१६॥

पदच्छेद— क्व वर्तते सा ललना मज्जन्तम् व्यसन अर्णवे ।
या माम् उद्धरते प्रज्ञां दीपयन्ती पदे पदे ॥

शब्दार्थ—

क्व	२. कहाँ	या	४. जो
वर्तते	३. है	माम्	५. मुझे
सा ललना	१. वह सुन्दरी	उद्धरते	१२. उबारती है
मज्जन्तम्	८. डूबते हुये	प्रज्ञाम्	९. बुद्धि को
व्यसन	६. दुःख के	दीपयन्ती	१०. जगाती हुई
अर्णवे ।	७. सागर में	पदे पदे ॥	११. पग-पग पर

श्लोकार्थ—वह सुन्दरी कहाँ है जो मुझे दुःख के सागर में डूबते हुये, बुद्धि को जगाती हुई पग-पग पर उबारती है ॥

सप्तदशः श्लोकः

रामा ऊचुः—नरनाथ न जानीमस्त्वत्प्रिया यद्व्यवस्यति ।
भूतले निरवस्तारे शयानां पश्य शत्रुहन् ॥१७॥

पदच्छेद—

नरनाथ न जानीमः त्वत् प्रिया यद् व्यवस्यति ।
भूतले निरवस्तारे शयानाम् पश्य शत्रुहन् ॥

शब्दार्थ—

नर नाथ	१.	हे राजन्	व्यवस्यति ।	५.	करना चाहती हैं (उसे हम)
न	६.	नहीं	भूतले	१०.	भूमि पर
जानीमः	७.	जानती हैं	निरवस्तारे	११.	विस्तर से रहित
त्वत्	२.	आपकी	शयानाम्	१२.	सो रही हैं
प्रिया	३.	प्रिय पत्नी	पश्य	९.	देखो (वे)
यद्	४.	जो	शत्रुहन् ॥	८.	हे शत्रुदमन आप

श्लोकार्थ—हे राजन् ! आपकी प्रिय पत्नी जो करना चाहती हैं उसे हम नहीं जानती हैं । हे शत्रुदमन ! आप देखो वे विस्तर से रहित भूमि पर सो रही हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

नारद उवाच—पुरञ्जनः स्वमहिषीं निरीक्ष्यावधुतां भुवि ।
तत्सङ्गोन्मथितज्ञानो वैक्लव्यं परमं ययौ ॥१८॥

पदच्छेद—

पुरञ्जनः स्व महीषीम् निरीक्ष्य अवधुताम् भुवि ।
तत् सङ्ग उन्मथित ज्ञानः वैक्लव्यम् परमम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

पुरञ्जनः	१.	राजा पुरञ्जन का	तत् सङ्गः	३.	उस पत्नी के साथ से
स्व	५.	(वे) अपनी	उन्मथित	४.	नष्ट हो गया था
महीषीम्	६.	पत्नी को	ज्ञानः	२.	विवेक
निरीक्ष्य	९.	देखकर	वैक्लव्यम्	११.	विकलता को
अवधुताम्	८.	अस्त व्यस्त अवस्था में	परमम्	१०.	अत्यन्त
भुवि ॥	७.	पृथ्वी पर	ययौ ॥	१२.	प्राप्त हो गये

श्लोकार्थ—राजा पुरञ्जन का विवेक उस पत्नी के सङ्ग से नष्ट हो गया था । वे अपनी पत्नी को पृथ्वी पर अस्त-व्यस्त अवस्था में देखकर अत्यन्त विकलता को प्राप्त हो गये ॥

एकोनविंशः श्लोकः

सान्त्वयन् श्लक्ष्णया वाचा हृदयेन विदूयता ।
प्रेयस्याः स्नेहसंरम्भलिङ्गमात्मनि नाभ्यगात् ॥१६॥

पदच्छेद—

सान्त्वयन् श्लक्ष्णया वाचा हृदयेन विदूयता ।
प्रेयस्याः स्नेह संरम्भ लिङ्गम् आत्मनि न अभ्यगात् ॥

शब्दार्थ—

सान्त्वयन्	५.	समझने लगे (किन्तु)	स्नेह	८.	प्रणय
श्लक्ष्णया	३.	मधुर	संरम्भ	६.	कोप का
वाचा	४.	वाणी में	लिङ्गम्	१०.	चिह्न
हृदयेन	२.	मन से	आत्मनि	६.	अपने प्रति
विदूयता ।	१.	दुःखित	न	११.	नहीं
प्रेयस्याः	७.	प्रिय पत्नी के	अभ्यगात् ।	१२.	पाया

श्लोकार्थ—वे राजा दुःखित मन से मधुर वाणी में समझाने लगे । किन्तु अपने प्रति प्रिय पत्नी के प्रणय कोप का चिह्न नहीं पाया ॥

विंशः श्लोकः

अनुनिन्येऽथ शनकैर्वीरोऽनुनयकोविदः ।
पस्पर्श पादयुगलमाह चोत्सङ्गलालिताम् ॥२०॥

पदच्छेद—

अनुनिन्ये अथ शनकैः वीरः अनुनय कोविदः ।
पस्पर्श पाद युगलम् आह च उत्सङ्ग लालिताम् ॥

शब्दार्थ—

अनुनिन्ये	६.	अनुनय विनय करने लगे	पस्पर्श	६.	छुआ
अथ	१.	तदनन्तर	पाद	८.	चरणों को
शनकैः	५.	धीरे-धीरे	युगलम्	७.	उसके दोनों
वीरः	४.	महाराज पुरञ्जन	आह	१२.	बोले
अनुनय	२.	मनाने में	च उत्सङ्ग	१०.	फिर गोद में
कोविदः ।	३.	चतुर	लालिताम् ॥	११.	प्रेम से बैठाकर

श्लोकार्थ—तदनन्तर मनाने में चतुर महाराज पुरञ्जन धीरे-धीरे अनुनय विनय करने लगे । उसके दोनों चरणों को छुआ; फिर गोद में प्रेम से बैठाकर बोले ॥

एकविंशः श्लोकः

पुरञ्जन उवाच—नूनं त्वकृतपुण्यास्ते भृत्या येष्वीश्वराः शुभे ।
कृतागस्स्वात्मसात्कृत्वा शिक्षादण्डं न युञ्जते ॥२१॥

पदच्छेद—

नूनम् तु अकृत पुण्याः ते भृत्याः येषु ईश्वराः शुभे ।
कृत आगःसु आत्मसात् कृत्वा शिक्षा दण्डम् न युञ्जते ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	३.	अवश्य	कृत	६.	करने पर भी
तु	४.	ही	आगःसु	८.	अपराध
अकृत	५	मन्द	आत्म सात्	११.	अपना
पुण्याः	६	भाग्य हैं	कृत्वा	१२.	बनाकर
ते भृत्याः	२.	वे सेवक	शिक्षा	१३.	सीख देने के लिये
येषु	७.	जिनके	दण्डम्	१४.	दण्ड
ईश्वराः	१०.	स्वामी (उन्हें)	न	१५.	नहीं
शुभे ।	१.	हे सुन्दरि	युञ्जते ॥	१६.	देते हैं

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! वे सेवक अवश्य ही मन्द भाग्य हैं, जिनके अपराध करने पर भी स्वामी उन्हें अपना बनाकर सोख देने के देने के लिये दण्ड नहीं देते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

परमोऽनुग्रहो दण्डो भृत्येषु प्रभुणार्पितः ।
बालो न वेद तत्तन्वि बन्धुकृत्यममर्षणः ॥२२॥

पदच्छेद—

परमः अनुग्रहः दण्डः भृत्येषु प्रभुणा अर्पितः ।
बालः न वेद तत् तन्वि बन्धु कृत्यम् अमर्षणः ॥

शब्दार्थ—

परमः	६.	(उसकी) बहुत बड़ी	बालः	६.	मूर्ख
अनुग्रहः	७.	कृपा है	न वेद	१२.	नहीं जानता है
दण्डः	५.	दण्ड	तत्	१०.	उस
भृत्येषु	२.	सेवक को	तन्वि	१.	हे सुन्दरि
प्रभुणा	३.	स्वामी के द्वारा	बन्धु कृत्यम्	११.	उपकार को
अर्पितः ।	४.	दिया गया	अमर्षणः ॥	८.	क्रोध के कारण (वह)

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! सेवक को स्वामी के द्वारा दिया गया दण्ड उसकी बहुत बड़ी कृपा है । क्रोध के कारण वहमूर्ख उस उपकार को नहीं जानता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

सा त्वं मुखं सुदति सुभ्र्वनुरागभारव्रीडाविलम्बविलसद्धसितावलोकम् ।
नीलालकालिभिरुपस्कृतमुन्नसं नः स्वानां प्रदर्शय मनस्विनि वल्गुवाक्यम् ॥२३॥

पदच्छेद—

सा त्वाम् मुखम् सुदति सुभ्रु अनुराग भार व्रीडा विलम्ब विलसत् हसित अवलोकम् ।
नील अलक अलिभिः उपस्कृतम् उन्नसम् नः स्वानाम् प्रदर्शय मनस्विनि वल्गु वाक्यम् ॥

शब्दार्थ—

सा	५.	अब	नील	१८.	साँवले
ताम्	४.	तुम	अलक	१९.	घुँघराले बालों से
मुखम्	८.	मुख	अलिभिः	१७.	भौंरों के समान
सुदति	२.	सुन्दर दाँत (एवम्)	उपस्कृतम्	२०	सुसज्जित है (उसमें)
सुभ्रु	३.	सुन्दर भौहों वाली	उन्नसम्	२१.	उठी नासिका है (और)
अनुराग	१०.	प्रेम के	नः	६.	हम
भार	११.	जो भार के कारण	स्वानाम्	७.	अपनों को (अपना)
व्रीडा	१२.	लज्जा से	प्रदर्शय	९.	दिखाओ (जो)
विलम्ब	१३.	झुका हुआ (और)	मनस्विनि	१.	हे स्वाभिमानिनी
विलसत्	१६.	सुशोभित है	वल्गु	२२.	मीठे
हसित	१४.	मुसकान भरी	वाक्यम् ॥	२३.	वचन बोलता है
अवलोकम् ।	१५.	चितवन से			

श्लोकार्थ—हे स्वाभिमानिनी ! सुन्दर दाँत एवम् सुन्दर भौहों वाली तुम अब हम अपनों को अपना मुख दिखाओ जो प्रेम के भार के कारण लज्जा से झुका हुआ और मुसकान भरी चितवन से सुशोभित है और भौंरों के समान साँवले घुँघराले बालों से सुसज्जित है। उसमें उठी नासिका है, और मीठे वचन बोलता है ॥

चतुर्विंश श्लोकः

तस्मिन्दधे दममहं तव वीरपत्नि योऽन्यत्र भूसुरकुलात्कृतकिल्बिषस्तम् ।
पश्ये न वीतभयमुन्मुदितं त्रिलोक्यामन्यत्र वै मुररिपोरितरत्र दासात् ॥२४॥

पदच्छेद—

तस्मिन् दधे दमम् अहम् तव वीर पत्नी यः अन्यत्र भूसुर कुलात् कृत किल्बिषः तम् ।
पश्ये न वीत भयम् उन्मुदितम् त्रिलोक्याम् अन्यत्र वै मुररिपोः इतरत्र दासात् ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१३.	उसे	तम्	१६.	उसे
दधे	१५.	देता हूँ (किन्तु)	पश्ये	२४.	देख रहा हूँ
दमम्	१४.	दण्ड	न	२३.	नहीं
अहम्	१२.	मैं	वीत	२१.	रहित (और)
तव	९.	तुम्हारा	भयम्	२०.	भय से
वीर पत्नी	१.	हे वीर पत्नि	उन्मुदितम्	२२.	बहुत प्रसन्न
यः	८.	जिसने	त्रिलोक्याम्	१७.	त्रिलोकी में (अथवा)
अन्यत्र	४.	छोड़कर (और)	अन्यत्र	१८.	कहीं
भूसुर	२.	ब्राह्मण	वै	१९.	भी
कुलात्	३.	कुल को	मुररिपोः	५.	भगवान् विष्णु के
कृत	११.	किया है	इतरत्र	७.	छोड़ कर
किल्बिषः	१०.	अपराध	दासात् ॥	६.	भक्तों को

श्लोकार्थ—हे वीरपत्नि ! ब्राह्मण कुल को छोड़ कर और भगवान् विष्णु के भक्तों को छोड़कर जिसने तुम्हारा अपराध किया है, मैं उसे दण्ड देता हूँ किन्तु उसे त्रिलोकी में अथवा कहीं भी बहुत प्रसन्न नहीं देखता हूँ ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

वक्त्रं न ते वितिलकं मलिनं विहर्षं संरम्भभीममविमृष्टमपेतरागम् ।
पश्ये स्तनावपि शुचोपहतौ सुजातौ बिम्बाधरं विगतकुङ्कुमपङ्करागम् ॥२५॥

पदच्छेद—वक्त्रम् न ते वितिलकम् मलिनम् विहर्षम् संरम्भभीमम् अविमृष्टम् अपेतरागम् ।
पश्ये स्तनौ अपि शुचा उपहतौ सुजातौ बिम्ब अधरम् विगतकुङ्कुम पङ्करागम् ॥

शब्दार्थ—

वक्त्रम्	२.	मुख को	पश्ये	१०.	देखा है
न	९.	नहीं	स्तनौ अपि	१२.	स्तनों को भी
ते	१.	तुम्हारे	शुचा उपहतौ	१३.	शोक के आँसुओं से मलिन तथा
वितिलकम्	३.	तिलक से रहित	सुजातौ	११.	सुन्दर
मलिनम्	४.	उदास	बिम्बअधरम्	१४.	बिम्बाफल के समान अधर को
विहर्षम् संरम्भ	५.	अप्रसन्न क्रोध से	विगत	१८.	रहित (नहीं देखा है)
भीमम् अविमृष्टम्	६.	भयानक कान्ति हीन	कुङ्कुम	१६.	केशर की
अपेत	८.	शून्य	पङ्क	१५.	गीली
रागम् ।	७.	स्नेह	रागम् ॥	१७.	लालिमा से

श्लोकार्थ—इससे पहले मैंने तुम्हारे मुख को तिलक से रहित, उदास, अप्रसन्न, क्रोध से भयानक, कान्तिहीन और स्नेह-शून्य नहीं देखा है । शोक के आँसुओं से मलिन तथा बिम्बाफल के समान लाल अधर को गीली केशर की लालिमा से रहित नहीं देखा है ।

षड्विंशः श्लोकः

तन्मे प्रसीद सुहृदः कृतकिल्बिषस्य स्वैरं गतस्य मृगयां व्यसनातुरस्य ।
का देवरं वशगतं कुसुमास्त्रवेगविस्रस्तपौंस्नमुशती न भजेत कृत्ये ॥२६॥

पदच्छेद—तत् मे प्रसीद सुहृदः कृतकिल्बिषस्य स्वैरम् गतस्य मृगयाम् व्यसन आतुरस्य ।
का देवरम् वश गतम् कुसुम अस्त्र वेग विस्रस्त पौंस्नम् उशती न भजेत कृत्ये ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	इसलिये (हे सुन्दरि)	का	१५.	भला कौन
मे	४.	मुझ	देवरम्	१९.	प्रिय पति को
प्रसीद	६.	प्रसन्न होवो	वश गतम्	१८.	अपने अधीन
सुहृदः	५.	आत्मीय पर	कुसुम् अस्त्र	११.	इस समय काम के
कृत	३.	करने वाले	वेग	१२.	वेग से (मेरा)
किल्बिषस्य	२.	अपराध	विस्रस्त	१४.	समाप्त (हो गया है)
स्वैरम्	८.	अपनी इच्छा से ही	पौंस्नम्	१३.	धैर्य
गतस्य	१०.	चला गया था	उशती	१६.	कामुक (स्त्री)
मृगयाम्	९.	शिकार खेलने	न भजेत	२०.	नहीं चाहेगी
व्यसन आतुरस्य ।	७.	शिकार के प्रति आकुल होने से	कृत्ये ॥	१७.	उचित कार्य के लिये

श्लोकार्थ—इसलिये हे सुन्दरि ! अपराध करने वाले मुझ आत्मीय पर प्रसन्न होवो । शिकारके प्रति आकुल होने से अपनी इच्छा से ही शिकार खेलने चला गया था । इस समय काम के वेग से मेरा धैर्य समाप्त हो गया है । भला कौन कामुक स्त्री उचित कार्य के लिये अपने अधीन प्रिय पति को नहीं चाहेगी ॥

इतिश्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यांसंहितायांचतुर्थ स्कन्धे पुरञ्जनोपाख्याने षड्विंशःअध्यायः २६

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

सप्तविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच— इत्थं पुरञ्जनं सध्र्यग्वशमानीय विभ्रमैः ।
पुरञ्जनी महाराज रेमे रमयती पतिम् ॥१॥

पदच्छेद— इत्थम् पुरञ्जनम् सध्र्यक् वशम् आनीय विभ्रमैः ।
पुरञ्जनी महाराज रेमे रमयती पतिम् ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	२.	इस प्रकार	पुरञ्जनी	३.	पुरञ्जन की पत्नी ने
पुरञ्जनम्	५.	राजा पुरञ्जन को	महाराज	१.	हे महाराज
सध्र्यक्	६.	भली-भांति	रेमे	११.	रमण किया
वशम्	७.	अपने अधीन	रमयती	१०.	आनन्द देती हुई
आनीय	८.	करके (उन)	पतिम् ॥	९.	पति को
विभ्रमैः ।	४.	हाव-भाव से			

श्लोकार्थ—हे महाराज ! इस प्रकार पुरञ्जन की पत्नी ने हाव-भाव से राजा पुरञ्जन को भली-भांति अपने अधीन करके उन पति को आनन्द देती हुई रमण किया ॥

द्वितीयः श्लोकः

स राजा महिषीं राजन् सुस्नातां रुचिराननाम् ।
कृतस्वस्त्ययनां तृप्तामभ्यनन्ददुपागताम् ॥२॥

पदच्छेद— सः राजा महिषीम् राजन् सुस्नाताम् रुचिर आननाम् ।
कृत स्व स्त्ययनाम् तृप्ताम् अभ्यनन्दत् उपागताम् ॥

शब्दार्थ—

सः	७.	उन	आननाम् ।	१०.	मुखवाली
राजा	८.	महाराज पुरञ्जन ने	कृत	४.	किया (तदनन्तर)
महिषीम्	११.	उस रानी का	स्वस्त्ययनाम्	३.	मांगलिक शृङ्गार
राजन्	१.	हे राजन्	तृप्ताम्	५.	भोजनादि से तृप्त होकर
सुस्नाताम्	२.	अच्छी प्रकार स्नान करके	अभ्यनन्दत्	१२.	स्वागत किया
रुचिर	९.	मनोहर	उपागताम् ॥	६.	उनके पास आई

श्लोकार्थ—हे राजन् ! अच्छी प्रकार स्नान करके मांगलिक शृङ्गार किया । तदनन्तर भोजनादि से तृप्त होकर उनके पास आई । उन महाराज पुरञ्जन ने मनोहर मुख वाली उस रानी का स्वागत किया ॥

तृतीयः श्लोकः

तयोपगूढः परिरब्धकन्धरो रहोऽनुमन्त्रैरपकृष्टचेतनः ।
न कालरंहो बुबुधे दुरत्ययं दिवा निशेति प्रमदापरिग्रहः ॥३॥

पदच्छेद— तया उपगूढः परिरब्ध कन्धरः रहः अनुमन्त्रैः अपकृष्ट चेतनः ।
न काल रंहः बुबुधे दुरत्ययम् दिवा निशा इति प्रमदा परिग्रहः ॥

शब्दार्थ—

तया	१. उस सुन्दरी ने	न	१४. नहीं
उपगूढः	२. उनका आलिंगन किया	काल रंहः	१३. आयु के नाश को
परिरब्ध	४. लगाया	बुबुधे	१५. जान सके
कन्धरः	३. उन्होंने गले से	दुरत्ययम्	१२. दुस्तर
रहः	५. एकान्त में	दिवा निशा	११. दिन और रात
अनुमन्त्रैः	६. मनोनुकूल सम्भाषण से	इति	११. करके (बीतते हुये)
अपकृष्ट	८. समाप्त हो गया	प्रमदा	९. (इस प्रकार) पत्नी के
चेतनः ।	७. उनका विवेक	परिग्रहः ॥	१०. वश में रहने से

श्लोकार्थ—उस सुन्दरी ने उनका आलिंगन किया । उन्होंने उसे गले से लगाया । एकान्त में मनोनुकूल सम्भाषण से उनका विवेक समाप्त हो गया । इस प्रकार पत्नी के वश में रहने से दिन और रात करके बीतते हुये दुस्तर आयु के नाश को नहीं जान सके ॥

चतुर्थः श्लोकः

शयान उन्नद्धमदो महामना महार्हतल्पे महिषीभुजोपधिः ।
तामेव वीरो मनुते परं यतस्तमोऽभिभूतो न निजं परं च यत् ॥४॥

पदच्छेद—शयानः उन्नद्ध मदः महामनाः, महार्हं तल्पे महिषी भुज उपधिः ।
ताम् एव वीरः मनुते परम् यतः तमः अभिभूतः न निजम् परम् च यत् ॥

शब्दार्थ—

शयानः	६. सोते रहते थे (तथा)	परम्	९. परम (पुरुषार्थ)
उन्नद्ध मदः	२. बढ़े हुये मद के कारण	यतः	११. क्योंकि (वे)
महाभुजः	१. वे मनस्वी	तमः	१२. अज्ञान के
महार्हं तल्पे	३. बहुमूल्य शय्या पर	अभिभूतः	१३. वश में थे
महिषी भुज	४. रानी की भुजा को	न	१८. नहीं (जान सके)
उपधिः ।	५. तकिया बना कर	निजम्	१५. आत्मा
ताम् एव	८. उसी को	परम्	१७. परमात्मा (है उसे)
वीरः	७. वे वीर (पुरञ्जन)	च	१६. और
मनुते	१०. मानते थे	यत् ॥	१४. (अतः) जो

श्लोकार्थ—वे मनस्वी बढ़े हुये मद के कारण बहुमूल्य शय्या पर रानी की भुजा को तकिया बनाकर सोते रहते थे । तथा वे वीर पुरञ्जन उसी को परम पुरुषार्थ मानते थे । क्योंकि वे अज्ञान के वश में थे अतः जो आत्मा-परमात्मा है उसे नहीं जान सके ॥

पञ्चमः श्लोकः

तयैवं रममाणस्य कामकश्मलचेतसः ।
क्षणार्धमिव राजेन्द्र व्यतिक्रान्तं नवं वयः ॥५॥

पदच्छेद—

तया एवम् रममाणस्य काम कश्मल चेतसः ।
क्षणार्धम् इव राजेन्द्र व्यतिक्रान्तम् नवम् वयः ॥

शब्दार्थ—

तया	६.	उस सुन्दरी के साथ	क्षणार्धम्	१०.	आधे क्षण के
एवम्	५.	इस प्रकार	इव	११.	समान
रममाणस्य	७.	रमण करते हुये (उसकी)	राजेन्द्र	१.	हे राजन्
काम	३.	काम वासना से	व्यतिक्रान्तम्	१२.	बीत गई
कश्मल	४.	कलुषित था	नवम्	८.	युवा
चेतसः ।	२.	राजा का मन	वयः ॥	९.	अवस्था

श्लोकार्थ—हे राजन् ! राजा का मन काम वासना से कलुषित था । इस प्रकार उस सुन्दरी के साथ रमण करते हुये उसकी युवा अवस्था आधे क्षण के समान बीत गई ॥

षष्ठः श्लोकः

तस्यामजनयत्पुत्रान् पुरञ्जन्यां पुरञ्जनः ।
शतान्येकादश विराडायुषोऽर्धमथात्यगात् ॥६॥

पदच्छेद—

तस्याम् अजनयत् पुत्रान् पुरञ्जन्याम् पुरञ्जनः ।
शतानि एकादश विराड् आयुषः अर्धम् अथ अत्यगात् ॥

शब्दार्थ—

तस्याम्	२.	उस अपनी (पत्नी)	एकादश	४.	ग्यारह
अजनयत्	७.	उत्पन्न किये	विराड्	९.	लम्बी
पुत्रान्	६.	पुत्र	आयुषः	१०.	आयु का
पुरञ्जन्याम्	३.	पुरञ्जनी से	अर्धम्	११.	आधा भाग
पुरञ्जनः ।	१.	राजा पुरञ्जन ने	अथ	८.	इस प्रकार (उसकी)
शतानि	५.	सौ	अत्यगात् ॥	१२.	बीत गया

श्लोकार्थ—राजा पुरञ्जन ने उस अपनी पत्नी पुरञ्जनी से ग्यारह सौ पुत्र उत्पन्न किये । इस प्रकार लम्बी उसकी आयु का आधा भाग बीत गया ॥

सप्तमः श्लोकः

दुहितॄर्दशोत्तरशतं पितृमातृयशस्करीः ।
शीलौदार्यगुणोपेताः पौरञ्जन्यः प्रजापते ॥७॥

पदच्छेद—

दुहितॄः दश उत्तर शतम् पितृ-मातृ यशस्करीः ।
शील औदार्य गुण उपेतः पौरञ्जन्यः प्रजापते ॥

शब्दार्थ—

दुहितॄः	६	कन्यायें हुईं (जो)	शील	९.	चरित्र और
दश	५.	दश	औदार्य	१०.	उदारता के
उत्तर	३.	अधिक	गुण	११.	गुणों से
शतम्	४.	एक सौ	उपेतः	१२.	युक्त (थीं)
पितृ-मातृ	७.	पिता और माता की	पौरञ्जन्यः	२.	राजा पुरञ्जन की
यशस्करीः ।	८.	कीर्ति को बढ़ाने वाली (तथा)	प्रजापते ॥	१.	हे राजन् प्राचीन बर्हि

श्लोकार्थ—हे राजन् प्राचीनबर्हि ! राजा पुरञ्जन की एक सौ ग्यारह कन्यायें हुईं जो पिता और माता की कीर्ति को बढ़ाने वाली तथा चरित्र और उदारता से युक्त थीं ॥

अष्टमः श्लोकः

स पञ्चालपतिः पुत्रान् पितृवंशविवर्धनान् ।
दारैः संयोजयामास दुहितॄः सदृशैर्वरैः ॥८॥

पदच्छेद—

सः पञ्चालपतिः पुत्रान् पितृ वंश विवर्धनान् ।
दारैः संयोजयामास दुहितॄः सदृशैः वरैः ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	महाराज पुरञ्जन ने	दारैः	६	स्त्रियों से (और)
पञ्चालपतिः	१.	पाञ्चाल नरेश	संयोजयामास	१०.	विवाह किया
पुत्रान्	५.	पुत्रों का	दुहितॄः	७.	पुत्रियों का
पितृ वंश	३.	पिता के कुल का	सदृशैः	८.	उनके योग्य
विवर्धनान् ।	४.	विस्तार करने वाले	वरैः ॥	९.	वरों से

श्लोकार्थ—पाञ्चाल नरेश महाराज पुरञ्जन ने पिता के कुल का विस्तार करने वाले पुत्रों का स्त्रियों से और पुत्रियों का उनके योग्य वरों से विवाह किया ॥

नवमः श्लोकः

पुत्राणां चाभवन् पुत्रा एकैकस्य शतं शतम् ।
यैर्वै पौरञ्जनो वंशः पञ्चालेषु समेधितः ॥९॥

पदच्छेद—

पुत्राणाम् च अभवन् पुत्राः एकैकस्य शतम्-शतम् ।
यैः वै पौरञ्जनः वंशः पञ्चालेषु समेधितः ॥

शब्दार्थ—

पुत्राणाम्	२. उन पुत्रों से	यैः	७. जिनके कारण
च	१. तथा	वै	८. ही
अभवन्	६. उत्पन्न हुये	पौरञ्जनः	९. महाराज पुरञ्जन का
पुत्राः	५. पुत्र	वंशः	१०. कुल
एकैकस्य	३. एक-एक के	पञ्चालेषु	११. पूरे पाञ्चाल देश में
शतम्-शतम् ।	४. सौ-सौ	समेधितः ॥	१२. व्याप्त हो गया

श्लोकार्थ—तथा उन पुत्रों में एक-एक के सौ-सौ पुत्र उत्पन्न हुये, जिनके कारण ही महाराज पुरञ्जन का कुल पूरे पाञ्चाल देश में व्याप्त हो गया ॥

दशमः श्लोकः

तेषु तद्रिक्थहारेषु गृहकोशानुजीविषु ।
निरूढेन ममत्वेन विषयेष्वन्वबध्यत ॥१०॥

पदच्छेद—

तेषु तद्‌रिक्थहारेषु गृह कोश अनुजीविषु ।
निरूढेन ममत्वेन विषयेषु अन्वबध्यत ॥

शब्दार्थ—

तेषु	१. उन पुत्रों में	निरूढेन	७. बढ़ी हुई
तद्	२. उनके	ममत्वेन	७. ममता के कारण (वे)
रिक्थहारेषु	३. उत्तराधिकारी पौत्रों में	विषयेषु	८. विषयों में
गृहकोश	४. घर खजाना और	अन्वबध्यत ॥	९. बंध गये
अनुजीविषु ।	५. सेवकों में		

श्लोकार्थ—उन पुत्रों में, उनके उत्तराधिकारी पौत्रों में, घर, खजाना और सेवकों में बढ़ी हुई ममता के कारण वे विषयों में बंध गये ॥

एकादशः श्लोकः

ईजे च क्रतुभिर्घोरैर्दीक्षितः पशुमारकैः ।
देवान् पितॄन् भूतपतीन्नानाकामो यथा भवान् ॥११॥

पदच्छेद—

ईजे च क्रतुभिः घोरैः दीक्षितः पशु मारकैः ।
देवान् पितॄन् भूत पतीन् नाना कामः यथा भवान् ॥

शब्दार्थ—

ईजे	१४.	करने लगे	देवान्	१०.	देवताओं
च	१२.	तथा	पितॄन्	११.	पितरों
क्रतुभिः	९.	यज्ञों के द्वारा	भूत पतीन्	१३.	भूतनाथों की (आराधना)
घोरैः	८.	घोर	नाना	३.	अनेक
दीक्षित	५.	दीक्षा लेकर	कामः	४.	कामनाओं की इच्छा से
पशु	६.	पशुओं की	यथा	२.	समान
मारकैः ।	७.	हिंसा वाले	भवान् ॥	१.	हे राजन् आपके ही

श्लोकार्थ—हे राजन् ! आपके ही समान अनेक कामनाओं की इच्छा से दीक्षा लेकर पशुओं की हिंसा वाले घोर यज्ञों के द्वारा देवताओं, पितरों तथा भूतनाथों की आराधना करने लगे ।।

द्वादशः श्लोकः

युक्तेष्वेवं प्रमत्तस्य कुटुम्बासक्तचेतसः ।
आससाद स वै कालो योऽप्रियः प्रिययोषिताम् ॥१२॥

पदच्छेद—

युक्तेषु एवम् प्रमत्तस्य कुटुम्ब आसक्त चेतसः ।
आससाद स वै कालः यः अप्रियः प्रिय योषिताम् ॥

शब्दार्थ—

युक्तेषु	२.	आत्म कल्याण में	स वै	७.	वही
एवम्	१.	इस प्रकार	कालः	८.	समय
प्रमत्तस्य	३.	असावधान (तथा)	यः	१०.	जो
कुटुम्ब	५.	परिवार में	अप्रियः	१३.	अच्छा नहीं लगता है
आसक्त	६.	लिप्त किये हुये (उस राजा का)	प्रिय	१२.	प्रेमियों को
चेतसः ।	४.	मन को	योषिताम् ॥	११.	स्त्रियों के
आससाद	९.	आ गया			

श्लोकार्थ—इस प्रकार आत्म कल्याण में असावधान तथा मन को परिवार में लिप्त किये हुये उस राजा का वही समय आ गया जो स्त्रियों के प्रेमियों को अच्छा नहीं लगता है ।।

त्रयोदशः श्लोकः

चण्डवेग इति ख्यातो गन्धर्वाधिपतिर्नृप ।
गन्धर्वास्तस्य बलिनः षष्ट्युत्तरशतत्रयम् ॥१३॥

पदच्छेद—

चण्डवेग इति ख्यातः गन्धर्वाधिपतिःनृप ।
गन्धर्वाः तस्य बलिनः षष्टि उत्तर शत त्रयम् ॥

शब्दार्थ—

चण्डवेग	२. चण्डवेग		गन्धर्वाः	१२.	गन्धर्व हैं
इति	३. नाम से		तस्य	७.	उसके
ख्यातः	४. प्रसिद्ध		बलिनः	११.	बलवान्
गन्धर्व	५ गन्धर्वों का		षष्टि उत्तर	१०.	साठ
अधिपतिः	६. एक राजा है		शत	९.	सौ
नृप ।	१. हे राजन्		त्रयम् ॥	८.	तीन

श्लोकार्थ—हे राजन् ! चण्डवेग नाम से प्रसिद्ध गन्धर्वों का एक राजा है । उसके तीन सौ साठ बलवान् गन्धर्व हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

गन्धर्व्यस्तादृशीरस्य मैथुन्यश्च सितासिताः ।
परिवृत्त्या विलुम्पन्ति सर्वकामविनिर्मिताम् ॥१४॥

पदच्छेद—

गन्धर्व्यः तादृशीः अस्य मैथुन्यः च सित असिताः ।
परिवृत्त्या विलुम्पन्ति सर्वकाम विनिर्मिताम् ॥

शब्दार्थ—

गन्धर्व्यः	६. गन्धर्वियाँ		असितः ।	४.	कृष्ण वर्ण वाली
तादृशी	५. उतनी ही		परिवृत्त्या	८.	जो बारी-बारी से
अस्य	१. इसके साथ		विलुम्पन्ति	१२.	लूटती रहती हैं
मैथुन्यः	७. मिथुन भाव से (हैं)		सर्व	९.	सभी
च	३. और		काम	१०.	यथेच्छ वस्तुओं से
सित	२. शुक्ल		विनिर्मिताम्	११.	भरी-पुरी नगरी को

श्लोकार्थ—इस राजा के साथ शुक्ल और कृष्ण वर्ण वाली उतनी ही गन्धर्वियाँ मिथुन भाव से हैं । जो बारी-बारी से सभी यथेच्छ वस्तुओं से भरी-पुरी नगरी को लूटती रहती हैं ।

पञ्चदशः श्लोकः

ते चण्डवेगानुचराः पुरञ्जनपुरं यदा ।
हर्तुमारेभिरे तत्र प्रत्यषेधत्प्रजागरः ॥१५॥

पदच्छेद—

ते चण्डवेग अनुचराः पुरञ्जन पुरम् यदा ।
हर्तुम् आरेभिरे तत्र प्रत्यषेधत् प्रजागरः ॥

शब्दार्थ—

ते	२.	वे	हर्तुम्	७.	लूटना
चण्डवेग	१.	राजा चण्ड वेग के	आरिभिरे	८.	आरम्भ किया (तब)
अनुचराः	३.	सेवक	तत्र	९.	वहाँ पर
पुरञ्जन	५.	राजा पुरञ्जन	प्रत्यषेधत्	११.	(उन्हें) रोका
पुरम्	६.	पुरी को	प्रजागरः ॥	१०.	पाँच फन के सर्प ने
यदा ।	४.	जब			

श्लोकार्थ—जब राजा चण्ड वेग के वे सेवक राजा पुरञ्चन की पुरी को लूटना आरम्भ किया तब वहाँ पर पाँच फन के सर्प ने उन्हें रोका ॥

षोडशः श्लोकः

स सप्तभिः शतैरेको विंशत्या च शतं समाः ।
पुरञ्जनपुराध्यक्षो गन्धर्वैर्युयुधे बली ॥१६॥

पदच्छेद—

सः सप्तभिः शतैः एकः विंशत्या चशतम् समाः ।
पुरञ्जन पुर अध्यक्षः गन्धर्वैः युयुधे बली ॥

शब्दार्थ—

सः	४.	वह	समाः ।	८.	वर्ष तक
सप्तभिः	१०.	सात	पुरञ्जन	१.	पुरञ्जन की
शतैः	११.	सौ	पुर	२.	पुरी के
एकः	६.	अकेले ही	अध्यक्षः	३.	रक्षक
विंशत्या	१२.	बीस	गन्धर्वैः	१३.	गन्धर्वों के साथ
च	९.	तथा	युयुधे	१४.	युद्ध किया
शतम्	७.	एक सौ	बली ॥	५.	बलवान् सर्प ने

श्लोकार्थ—राजा पुरञ्जन पुरी के रक्षक बलवान् सर्प ने अकेले ही एक सौ वर्ष तक सात सौ बीस गन्धर्वों के साथ युद्ध किया ॥

सप्तदशः श्लोकः

क्षीयमाणे स्वसम्बन्धे एकस्मिन् बहुभिर्युधा ।
चिन्तां परां जगामार्तः सराष्ट्रपुरबान्धवः ॥१७॥

पदच्छेद—

क्षीयमाणे स्व सम्बन्धे एकस्मिन् बहुभिः युधा ।
चिन्ताम् पराम् जगाम आर्तः स राष्ट्रपुर बान्धवः ॥

शब्दार्थ—

क्षीयमाणे	७.	नष्ट होते देख (राजा पुरञ्जन)	चिन्ताम्	१३.	चिन्ता में
स्व	५.	अपने उस	पराम्	१२.	बहुत बड़ी
सम्बन्धे	६.	सम्बन्धी को	जगाम	१४.	पड़ गये
एकस्मिन्	२.	अकेले ही	आर्तः	११.	दुःखी होकर
	३.	ही	सह	१०.	साथ
बहुभिः	१.	अनेकों के साथ	राष्ट्रपुर	८.	देश के और पुरी के
युधा ।	४.	युद्ध करने के कारण	बान्धवः ॥	९.	बान्धवों के

श्लोकार्थ—अनेकों के साथ अकेले ही युद्ध करने के कारण अपने उस सम्बन्धी को नष्ट होते देख राजा पुरञ्जन देश के और पुरी के बान्धवों के साथ दुःखी होकर बहुत बड़ी चिन्ता मे पड़ गये ॥

अष्टादशः श्लोकः

स एव पुर्यां मधुभुक्पञ्चालेषु स्वपार्षदैः ।
उपनीतं बलिं गृह्णन् स्त्रीजितो नाविदद्भयम् ॥१८॥

पदच्छेद—

सः एव पुर्याम् मधुभुक् पञ्चालेषु स्वपार्षदैः ।
उपनीतम् बलिम् गृह्णन् स्त्री जितः न अविदत् भयम् ॥

शब्दार्थ—

सः	७.	वह	उपनीतम्	४.	लाये गये
एव	९.	ही	बलिम्	५.	कर को
पुर्याम्	८.	पुरी में	गृह्णन्	६.	स्वीकार करके
मधु	१०.	क्षुद्र सुखों का	स्त्री	१२.	वह अपनी स्त्री के
भुक्	११.	भोग कर रहे थे	जितः	१३.	वश में थे (इसलिये)
पञ्चालेषु	३.	पञ्चालदेश से	न	१५.	नहीं
स्व	१.	अपने	अविदत्	१६.	जान सके थे
पार्षदैः ।	२.	दूतों के द्वारा	भयम् ॥	१४.	इस भय को

श्लोकार्थ—अपने दूतों के द्वारा पञ्चाल देश से लाये गये कर को स्वीकार करके वह पुरी में ही क्षुद्र सुखों का भोग कर रहे थे । वह अपनी स्त्री के वश में थे, इसलिये इस भय को नहीं जान सके थे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

कालस्य दुहिता काचित्त्रिलोकीं वरमिच्छती ।
पर्यटन्ती न बर्हिष्मन् प्रत्यनन्दत कश्चन ॥१९॥

पदच्छेद—

कालस्य दुहिता काचित् त्रिलोकीम् वरम् इच्छती ।
पर्यटन्ती न बर्हिष्मन् प्रत्यनन्दत कश्चन ॥

शब्दार्थ—

कालस्य	२. (उस समय) काल की	पर्यटन्ती	७. घूम रही थी (किन्तु)
दुहिता	४. पुत्री	न	९. नहीं
काचित्	३. एक	बर्हिष्मन्	१. हे राजन् बर्हिष्मन्
त्रिलोकीम्	६. तीनों लोकों में	प्रत्यनन्दत	१०. स्वीकार किया
वरम् इच्छती ।	५. अपने लिये वर की इच्छा से	कश्चन ॥	८. उसे किसी ने भी

श्लोकार्थ—हे राजन् बर्हिष्मन् ! उस समय काल की एक पुत्री अपने लिये वर की इच्छा से तीनों लोकों में घूम रही थी । किन्तु उसे किसी ने भी स्वीकार नहीं किया ॥

विंशः श्लोकः

दौर्भाग्येनात्मनो लोके विश्रुता दुर्भगेति सा ।
या तुष्टा राजर्षये तु वृतादात्पूरवे वरम् ॥२०॥

पदच्छेद—

दौर्भाग्येन आत्मनः लोके विश्रुता दुर्भगा इति सा ।
या तुष्टा राजर्षये तु वृता अदात् पूरवे वरम् ॥

शब्दार्थ—

दौर्भाग्येन	२. दुर्भाग्य के कारण	या तुष्टा	१२. जिससे प्रसन्न होकर (उसने)
आत्मनः	१. अपने	राजर्षये	९. राजर्षि
लोके	४. संसार में	तु	८. एक बार
विश्रुता	७. प्रसिद्ध थी	वृता	११. वरण किया
दुर्भगा	५. दुर्भगा	अदात्	१४. दिया
इति	६. इस नाम से	पूरवे	१०. पूरु को
सा ।	३. वह	वरम् ॥	१३. राज्य प्राप्ति का वरदान

श्लोकार्थ—अपने दुर्भाग्य के कारण वह संसार में दुर्भगा इस नाम से प्रसिद्ध थी । एक बार राजर्षि पूरु ने उसका वरण किया । जिससे प्रसन्न होकर उसने पूरु को राज्य प्राप्ति का वरदान दिया ॥

एकविंशः श्लोकः

कदाचिदटमाना सा ब्रह्मलोकान्महीं गतम् ।
वव्रे बृहद्व्रतं मां तु जानती काममोहिता ॥२१॥

पदच्छेद—

कदाचित् अटमाना सा ब्रह्मलोकात् महीम् गतम् ।
वव्रे बृहद् व्रतम् माम् तु जानती काम मोहिता ॥

शब्दार्थ—

कदाचित्	१.	एक बार (मैं)	बृहद्	९.	नैष्ठिक
अटमाना	७.	घूमती हुई	व्रतम्	१०.	ब्रह्मचारी
सा	६.	वह	माम्	८.	मुझे
ब्रह्मलोकम्	२.	ब्रह्म लोक से	तु	५.	उस समय
महीम्	३.	पृथ्वी लोक में	जानती	११.	जान कर भी
गतम् ।	४.	आया	काम	१२.	काम से
वव्रे	१४.	वरण करने लगी	मोहिता ॥	१३.	मोहित होने के कारण

श्लोकार्थ—एक बार मैं ब्रह्मलोक से पृथ्वी लोक में आया। उस समय वह घूमती हुई मुझे नैष्ठिक ब्रह्मचारी जानकर भी काम से मोहित होने के कारण वरण करने लगी।

द्वाविंशः श्लोकः

मयि संरभ्य विपुलमदाच्छापं सुदुःसहम् ।
स्थातुमर्हसि नैकत्र मद्याच्ञाविमुखो मुने ॥२२॥

पदच्छेद—

मयि संरभ्य विपुलम् अदात् शापम् सुदुः सहम् ।
स्थातुम् अर्हसि न एकत्र मद् याच्ञा विमुखो मुने ॥

शब्दार्थ—

मयि	१.	मुझ पर	अर्हसि	१४.	रह सकते हो
संरम्भ	२.	क्रोध करके	न	१३.	नहीं
विपुलम्	३.	बहुत बड़ा	एकत्र	११.	एक जगह पर
अदात्	६.	दे दिया (कि)	मद्	८.	मेरी
शापम्	५.	शाप	याच्ञा	९.	प्रार्थना
सुदःसहम् ।	४.	अत्यन्त दुः सह	विमुखो	१०.	नहीं मानने के कारण (तुम)
स्थातुम्	१२.	स्थित	मुने ॥	७.	हे मुने

श्लोकार्थ—मुझ पर क्रोध करके बहुत बड़ा अत्यन्त दुःसह शाप दे दिया कि हे मुने ! मेरी प्रार्थना नहीं मानने के कारण तुम एक जगह पर स्थित नहीं रह सकते हो ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

ततो विहतसङ्कल्पा कन्यका यवनेश्वरम् ।
मयोपदिष्टमासाद्य वव्रे नाम्ना भयं पतिम् ॥२३॥

पदच्छेद—

ततः विहत सङ्कल्पा कन्यका यवनेश्वरम् ।
मया उपदिष्टम् आसाद्य वव्रे नाम्ना भयम् पतिम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तब	उपदिष्टम्	६.	सम्मति से
विहत	३.	नष्ट हो जाने से	आसाद्य	१०.	जाकर (उनका)
सङ्कल्पा	२.	आशा	वव्रे	१२.	वरण किया
कन्यका	४.	काल कन्या ने	नाम्ना	८.	नाम के
यवनेश्वरम् ।	९.	यवनराज के पास	भयम्	७.	भय
मया	५.	मेरी	पतिम् ॥	११.	पतिरूप से

श्लोकार्थ—तब आशा नष्ट हो जाने से कालकन्या ने मेरी सम्मति से भय नाम के यवनराज के पास जाकर उनका पति रूप में वरण किया ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

ऋषभं यवनानां त्वां वृणे वीरेप्सितं पतिम् ।
सङ्कल्पस्त्वयि भूतानां कृतः किल न रिष्यति ॥२४॥

पदच्छेद—

ऋषभम् यवनानाम् त्वाम् वृणे वीर ईप्सितम् न पतिम् ।
सङ्कल्पः त्वयि भूतानाम् कृतः किल न रिष्यति ॥

शब्दार्थ—

ऋषभम्	३.	प्रधान (एवं)	सङ्कल्पा	११.	आशा
यवनानाम्	२.	यवनों में	त्वयि	८.	तुम्हारे प्रति
त्वाम्	५.	तुम्हारा	भूतानाम्	१०.	प्राणियों की
वृणे	७.	वरण करती हूँ	कृतः	९.	की गई
वीर	१.	हे वीर वर	किल	१२.	कभी
ईप्सितम्	४.	अत्यन्त प्रिय	न	१३.	नहीं
पतिम् ।	६.	पतिरूप में	रिष्यति ॥	१४.	व्यर्थ होती है

श्लोकार्थ—हे वीरवर ! यवनों में प्रधान एवम् अत्यन्त प्रिय तुम्हारा पति रूप में वरण करती हूँ । तुम्हारे प्रति की गई प्राणियों की आशा कभी भी व्यर्थ नहीं होती है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

द्वाविमावनुशोचन्ति बालावसदवग्रहौ ।
यल्लोकशास्त्रोपनतं न राति न तदिच्छति ॥२५॥

पदच्छेद—

द्वौ इमौ अनुशोचन्ति बालौ असद् अवग्रहौ ।
यत् लोक शास्त्र उपनतम् न राति न तद् इच्छति ॥

शब्दार्थ—

द्वौ	११.	दोनों ही	शास्त्र	२.	वेद को
इमौ	१०.	वे	उपनतम्	३.	आज्ञा से
अनुशोचन्ति	१४.	शोचनीय हैं	न	५.	नहीं
बालौ	१२.	मूर्ख (और)	राति	६.	देता है (और जो अधिकारी होने पर भी)
असद् अवग्रहौ ।	१३.	दुराग्रही होने से	न	८.	नहीं
यत्	४.	जिस देने योग्य वस्तु को	तद्	७.	उसे
लोक	१.	जो व्यक्ति लोक (और)	इच्छति ॥	९.	ग्रहण करता है

श्लोकार्थ—जो व्यक्ति लोक और वेद की आज्ञा से जिस देने योग्य वस्तु को नहीं देता है और जो अधिकारी होने पर भी उसे नहीं ग्रहण करता है, वे दोनों ही मूर्ख और दुराग्रही होने से शोचनीय हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

अथो भजस्व मां भद्र भजन्तीं मे दयां कुरु ।
एतावान् पौरुषो धर्मो यदार्ताननुकम्पते ॥२६॥

पदच्छेद—

अथो भजस्व माम् भद्र भजन्तीम् मे दयाम् कुरु ।
एतावान् पौरुषः धर्मः यद् आर्तान् अनुकम्पते ॥

शब्दार्थ—

अथो	१.	इसलिये	कुरु ।	८.	करें
भजस्व	४.	स्वीकार करें	एतावान्	१०.	यही
माम्	३	मुझे	पौरुषः	९.	पुरुष का
भद्र	२.	हे भद्र आप	धर्मः	११.	धर्म है
भजन्तीम्	५.	मैं सेवा में आई हूँ	यद्	१२.	कि (वह)
मे	६.	मुझ पर	आर्तान्	१३.	दीनों पर
दयाम्	७.	दया	अनुकम्पते ॥	१४.	कृपा करें

श्लोकार्थ—इसलिये हे भद्र ! आप मुझे स्वीकार करें । मैं सेवा में आई हूँ, मुझ पर दया करें । पुरुष का यही धर्म है कि वह दीनों पर कृपा करे ॥

सप्तविंशः श्लोकः

कालकन्योदितवचो निशम्य यवनेश्वरः ।
चिकीर्षुर्देवगुह्यं स सस्मितं तामभाषत ॥२७॥

पदच्छेद—

कालकन्या उदित वचः निशम्य यवनेश्वरः ।
चिकीर्षुः देव गुह्यम् सः सस्मितम् ताम् अभाषत ॥

शब्दार्थ—

कालकन्या	१.	कालकन्या के द्वारा	देव	७.	भगवान के
उदित	२.	कही गई	गुह्यम्	८.	गुप्त कार्य को
वचः	३.	बात को	सः	५.	वे
निशम्य	४.	सुनकर	सस्मितम्	१०.	मुसकराते हुये
यवनेश्वरः ।	६.	यवनराज	ताम्	११.	उससे
चिकीर्षुः	९.	करने की इच्छा से	अभाषत ।	१२.	बोले

श्लोकार्थ—कालकन्या के द्वारा कही गई बात को सुनकर वे यवनराज भगवान् के गुप्त कार्य को करने की इच्छा से मुसकराते हुये उससे बोले ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

मया निरूपितस्तुभ्यं पतिरात्मसमाधिना ।
नाभिनन्दति लोकोऽयं त्वामभद्रामसम्मताम् ॥२८॥

पदच्छेद—

मया निरूपितः तुभ्यम् पतिः आत्म समाधिना ।
न अभिनन्दति लोकः अयम् त्वाम् अभद्राम् असम्मताम् ॥

शब्दार्थ—

मया	१.	मैंने	न अभिनन्दति	१०.	नहीं स्वीकार करता है
निरूपितः	६.	देखा है	लोकः	८.	संसार
तुभ्यम्	४.	तुम्हारे लिये	अयम्	७.	यह
पतिः	५.	एक पति	त्वाम्	९.	तुझे
आत्म	२.	अपनी	अभद्राम्	११.	अकल्याण कारिणी (और)
समाधिना ।	३.	योग दृष्टि से	असम्मताम् ॥	१२.	अप्रिय है

श्लोकार्थ—मैंने अपनी योग दृष्टि से तुम्हारे लिये एक पति देखा है । यह संसार तुझे नहीं स्वीकार करता है । क्योंकि तुम अकल्याणकारिणी और अप्रिय हो ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

त्वमव्यक्तगतिर्भुङ्क्ष्व लोकं कर्मविनिर्मितम् ।

याहि मे पृतनायुक्ता प्रजानाशं प्रणेष्यसि ॥२९॥

पदच्छेद— त्वम् अव्यक्त गतिः भुङ्क्ष्व लोकम् कर्म विनिर्मितम् ।
याहि मे पृतना युक्ता प्रजा नाशम् प्रणेष्यसि ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	१.	तुम	याहि	११.	जाओ (और)
अव्यक्त	२.	अलक्षित	मे	८.	मेरी
गतिः	३.	होकर	पृतना	९.	सेना के
भुङ्क्ष्व	७.	भोग करो	युक्ता	१०.	साथ
लोकम्	६.	इस संसार का	प्रजा	१२.	प्रजा के प्राणियों का
कर्म	४.	कर्म से	नाशम्	१३.	नाश
विनिर्मितम् ।	५.	उत्पन्न	प्रणेष्यति ॥	१४.	करो

श्लोकार्थ—तुम अलक्षित होकर कर्म से उत्पन्न इस संसार का भोग करो । मेरी सेना के साथ जाओ और प्रजा के प्राणियों का नाश करो ॥

त्रिंशः श्लोकः

प्रज्वारोऽयं मम भ्राता त्वं च मे भगिनी भव ।

चराम्युभाभ्यां लोकेऽस्मिन्नव्यक्तो भीमसैनिकः ॥३०॥

पदच्छेद— प्रज्वारः अयम् मम भ्राता त्वम् च मे भगिनी भव ।
चरामि उभाभ्याम् लोके अस्मिन् अव्यक्तः भीमसैनिकः ॥

शब्दार्थ—

प्रज्वारः	२.	प्रज्वार नाम का	भव ।	९.	हो
अयम्	१.	यह	चरामि	१६.	विचरण करूँगा
मम	३	मेरा	उभाभ्याम्	१०.	तुम दोनों के साथ
भ्राता	४.	भाई है	लोके	१२.	संसार में
त्वम्	६.	तुम	अस्मिन्	११.	इस
च	५.	और	अव्यक्तः	१३.	अलक्षित होकर
मे	७.	मेरी	भीम	१४.	भयंकर
भगिनी	८.	बहन	सैनिकः ॥	१५.	सेना लेकर

श्लोकार्थ—यह प्रज्वार नाम का मेरा भाई है; और तुम मेरी बहन हो; तुम दोनों के साथ इस संसार में अलक्षित होकर भयंकर सेना लेकर विचरण करूँगा ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पुरञ्जनोपाख्याने सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

अष्टाविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच—सैनिका भयनाम्नो ये बर्हिष्मन् दिष्टकारिणः।
प्रज्वारकालकन्याभ्यां विचेरुरवनीमिमाम् ॥१॥

पदच्छेद— सैनिकाः भय नाम्नः ये बर्हिष्मन् दिष्ट कारिणः।
प्रज्वार कालकन्याभ्याम् विचेरुः अवनीम् इमाम् ॥

शब्दार्थ—

सैनिकाः	६.	सैनिक थे (वे)	प्रज्वार	७.	प्रज्वार (और)
भय	२.	भय	काल	८.	काल
नाम्नः	३.	नामक यवनराज के	कन्याभ्याम्	९.	कन्या के साथ
ये	४.	जो	विचेरुः	१२.	घूमने लगे
बर्हिष्मन्	१.	हे राजन् प्राचीनबर्हि	अवनीम्	११.	पृथ्वी पर
दिष्टकारिणः।	५.	आज्ञाकारी	इमाम् ॥	१०.	इस

श्लोकार्थ—हे राजन् प्राचीन बर्हि ! भय नामक यवनराज के जो आज्ञाकारी सैनिक थे, वे प्रज्वार और कालकन्या के साथ इस पृथ्वी पर घूमने लगे ॥

द्वितीयः श्लोकः

त एकदा तु रभसा पुरञ्जनपुरीं नृप।
रुरुधुर्भौमभोगाढ्यां जरत्पन्नगपालिताम् ॥२॥

पदच्छेद— ते एकदा तु रभसा पुरञ्जन पुरीम् नृप।
रुरुधुः भौम भोगाढ्याम् जरत् पन्नग पालिताम् ॥

शब्दार्थ—

ते	४.	उन सैनिकों ने	रुरुधुः	१४.	घेर लिया
एकदा	३.	एक बार	भौम	५.	पृथ्वी के
तु	२.	तदनन्तर	भोग	६.	विषयों से
रभसा	१३.	बड़े वेग से	आढ्याम्	७.	परिपूर्ण (तथा)
पुरञ्जन	११.	राजा पुरञ्जन की	जरत्	८.	वृद्ध
पुरीम्	१२.	पुरी को	पन्नग	९.	सर्प से
नृप।	१.	हे राजन्	पालिताम् ॥	१०.	रक्षित

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तदनन्तर एक बार उन सैनिकों ने पृथ्वी के विषयों से परिपूर्ण तथा वृद्ध सर्प से रक्षित राजा पुरञ्जन की पुरी को बड़े वेग से घेर लिया ॥

तृतीयः श्लोकः

कालकन्यापि बुभुजे पुरञ्जनपुरं बलात् ।
ययाभिभूतः पुरुषः सद्यो निःसारतामियात् ॥३॥

पदच्छेद—

काल कन्या अपि बुभुजे पुरञ्जन पुरम् बलात् ।
यया अभिभूतः पुरुषः सद्यः निः सारताम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

कालकन्या	७.	कालकन्या	यया	१.	जिसके
अपि	८.	भी	अभिभूतः	२.	वश में होने पर
बुभुजे	१२.	भोग करने लगी	पुरुषः	३.	मनुष्य
पुरञ्जन	६.	राजा पुरञ्जन के	सद्यः	४.	तत्काल
पुरम्	१०.	पुरवासियों का	निःसारताम्	५.	बलहीन
बलात् ।	११.	बलात्कार से	इयात् ॥	६.	हो जाता है (वह)

श्लोकार्थ—जिसके वश में रहने पर मनुष्य तत्काल बलहीन हो जाता है, वह काल कन्या भी राजा पुरञ्जन के पुरवासियों का बलात्कार से भोग करने लगी ॥

चतुर्थः श्लोकः

तयोपभुज्यमानां वै यवनाः सर्वतोदिशम् ।
द्वार्भिः प्रविश्य सुभृशं प्रार्दयन् सकलां पुरीम् ॥४॥

पदच्छेद—

तया उपभुज्यमानाम् वै यवनाः सर्वतः दिशम् ।
द्वार्भिः प्रविश्य सुभृशम् प्रार्दयन् सकलाम् पुरीम् ॥

शब्दार्थ —

तया	१.	उस काल कन्या के	द्वार्भिः	७.	भिन्न-भिन्न दरवाजों से
उपभुज्यमानाम्	२.	भोग करते समय	प्रविश्य	८.	प्रवेश करके
वै	४.	भी	सुभृशम्	११.	अत्यन्त
यवनाः	३.	यवन राज के सैनिक	प्रार्दयन्	१२.	पीड़ित करने लगे
सर्वतः	५	चारों	सकलाम्	६.	सारी
दिशम् ।	६.	दिशाओं में	पुरीम् ॥	१०.	नगरी को

श्लोकार्थ—उस काल कन्या के भोग करते समय यवनराज के सैनिक भी चारों दिशाओं में भिन्न-भिन्न दरवाजों से प्रवेश करके सारी नगरी को अत्यन्त पीड़ित करने लगे ॥

पञ्चमः श्लोकः

तस्यां प्रपीड्यमानायामभिमानी पुरञ्जनः ।
अवापोरुविधांस्तापान् कुटुम्बी ममताकुलः ॥५॥

पदच्छेद—

तस्याम् प्रपीडय मानायाम् अभिमानी पुरञ्जनः ।
अवाप उरुविधान् तापान् कुटुम्बी ममता आकुलः ॥

शब्दार्थ—

तस्याम्	१.	उस नगरी को	अवाप	११.	प्राप्त किया
प्रपीडय	२.	पीड़ित	उरुविधान्	९.	अनेकों प्रकार के
मानायाम्	३.	होते देख कर	तापान्	१०.	सन्ताप को
अभिमानी	४.	उसके स्वामित्व का अभिमानी	कुटुम्बी	५.	बड़े कुटुम्ब वाला (तथा)
पुरञ्जनः ।	८.	राजा पुरञ्जन ने	ममता	६.	ममता से
			आकुलः ॥	७.	व्याकुल

श्लोकार्थ—उस नगरी को पीड़ित होते देखकर अपने स्वामित्व का अभिमानी बड़े कुटुम्ब वाला तथा ममता से व्याकुल राजा पुरञ्जन ने अनेकों प्रकार के सन्ताप को प्राप्त किया ॥

षष्ठः श्लोकः

कन्योपगूढो नष्टश्रीः कृपणो विषयात्मकः ।
नष्टप्रज्ञो हृतैश्वर्यो गन्धर्वयवनैर्बलात् ॥६॥

पदच्छेद—

कन्या उपगूढः नष्ट श्रीः कृपणः विषय आत्मकः ।
नष्ट प्रज्ञः हृत ऐश्वर्यः गन्धर्व यवनैः बलात् ॥

शब्दार्थ—

कन्या	१.	काल कन्या का	नष्ट	९.	जाता रहा (तथा)
उपगूढः	२.	आलिङ्गन करने से	प्रज्ञः	८.	(उनका) विवेक
नष्ट	३.	समाप्त हो गई	हृत	१४.	चुरा लिया
श्रीः	४.	उनकी शोभा	ऐश्वर्यः	१३.	सम्पत्ति को
कृपणः	७.	दीन हो गये	गन्धर्व	१०.	गन्धर्वों (और)
विषय	५.	भोगों में	यवनैः	११.	यवनों ने
आत्मकः ।	६.	आसक्ति होने से (वे)	बलात् ॥	१२.	बल पूर्वक (उनकी)

श्लोकार्थ—कालकन्या का आलिङ्गन करने से उनकी शोभा समाप्त हो गई । भोगों में आसक्ति होने से वे दीन हो गये । उनका विवेक जाता रहा तथा गन्धर्वों और यवनों ने बल पूर्वक उनकी सम्पत्ति को चुरा लिया ॥

सप्तमः श्लोकः

विशीर्णां स्वपुरीं वीक्ष्य प्रतिकूलाननादृतान् ।
पुत्रान् पौत्रानुगामात्याञ्जायां च गतसौहृदाम् ॥७॥

पदच्छेद—

विशीर्णाम् स्वपुरीम् वीक्ष्य प्रतिकूलान् अनादृतान् ।
पुत्र पौत्रान् अनुग अमात्यान् जायाम् च गत सौहृदाम् ॥

शब्दार्थ—

विशीर्णाम्	३.	नष्ट-भ्रष्ट (होते)	पौत्रान्	६.	पौत्र
स्व	१.	अपनी	अनुग	७.	सेवक
पुरीम्	२.	नगरी को	अमात्यान्	९.	मंत्रीगण
वीक्ष्य	४.	देखा	जायाम्	१२.	पत्नी ने
प्रतिकूलान्	१०.	विरोधी होकर	च	८.	और
अनादृतान्	११.	अनादर करने लगे (तथा)	गत	१४	छोड़ दिया
पुत्रान्	५.	पुत्र	सौहृदाम्	१३.	प्रेम करना

श्लोकार्थ—अपनी नगरी को नष्ट-भ्रष्ट होते देखा। पुत्र, पौत्र, सेवक और मंत्रीगण विरोधी होकर अनादर करने लगे। तथा पत्नी ने प्रेम करना छोड़ दिया ॥

अष्टमः श्लोकः

आत्मानं कन्यया ग्रस्तं पञ्चालानरिदूषितान् ।
दुरन्तचिन्तामापन्नो न लेभे तत्प्रतिक्रियाम् ॥८॥

पदच्छेद—

आत्मानम् कन्यया ग्रस्तम् पञ्चालान् अरि दूषितान् ।
दुरन्त चिन्ताम् आपन्नः न लेभे तत् प्रतिक्रियाम् ॥

शब्दार्थ—

आत्मानम्	१.	अपने को	दुरन्त	७.	(वे) अपार
कन्यया	२.	कालकन्या के	चिन्ताम्	८.	चिन्ता में
ग्रस्तम्	३.	वश में (तथा)	आपन्नः	९.	पड़ गये (और)
पञ्चालान्	४.	पाञ्चाल देश को	न लेभे	१२.	नहीं जान सके
अरि	५.	शत्रुओं से	तत्	१०.	उससे
दूषितान् ।	६.	घिरा हुआ (देखकर)	प्रतिक्रियाम् ॥	११.	छूटने का उपाय

श्लोकार्थ—अपने को काल कन्या के वश में तथा पाञ्चाल देश को शत्रुओं से घिरा हुआ देखकर वे अपार चिन्ता में पड़ गये और उससे छूटने का उपाय नहीं जान सके ॥

नवमः श्लोकः

कामाभिलषन्दीनो यातयामांश्च कन्यया।
विगतात्मगतिस्नेहः पुत्रदारांश्च लालयन् ॥९॥

पदच्छेद—

कामान् अभिलषन् दीनः यातयामान् च कन्यया।
विगत आत्मगति स्नेहः पुत्र दारान् च लालयन् ॥

शब्दार्थ—

कामान्	३.	भोगों की	विगत	१२.	रहित हो गये थे
अभिलषन्	४.	इच्छा करने पर भी	आत्मगति	९.	अपनी लौकिक-पारलौकिक गति
दीनः	५.	(वे) असमर्थ थे	स्नेहः	११.	स्नेह से
यातयामान्	२.	निःसार	पुत्र दाराः	७.	पुत्र और पत्नी का
च	६.	तथा	च	१०.	एवम्
कन्यया।	१.	काल-कन्या के कारण	लालयन् ॥	८.	पालन करने पर भी

श्लोकार्थ—काल-कन्या के कारण निःसार भोगों की इच्छा करने पर भी वे असमर्थ थे। तथा पुत्र और पत्नी का पालन करने पर भी अपनी लौकिक-पारलौकिक गति एवम् स्नेह से रहित हो गये थे ॥

दशमः श्लोकः

गन्धर्वयवनाक्रान्तां कालकन्योपमर्दिताम्।
हातुं प्रचक्रमे राजा तां पुरीमनिकामतः ॥१०॥

पदच्छेद—

गन्धर्व यवन आक्रान्ताम् काल कन्या उपमर्दिताम्।
हातुम् प्रचक्रमे राजा ताम् पुरीम् अनिकामतः ॥

शब्दार्थ—

गन्धर्व	१.	गन्धर्वों (और)	हातुम्	११.	छोड़ने की
यवन	२.	यवनों से	प्रचक्रमे	१२.	इच्छा करने लगे
आक्रान्ताम्	३.	घेरी गई (तथा)	राजा	१०.	राजा पुरञ्जन
काल	४.	काल	ताम्	७.	उस
कन्या	५.	कन्या से	पुरीम्	८.	नगरी को
उपमर्दिताम्।	६.	रौंदी गई	अनिकामतः ॥	९.	न चाहते हुये (भी)

श्लोकार्थ—गन्धर्वों और यवनों से घेरी गई तथा काल कन्या से रौंदी गई उस नगरी को न चाहते हुये भी राजा पुरञ्जन छोड़ने की इच्छा करने लगे ॥

एकादशः श्लोकः

भयनाम्नोऽग्रजो भ्राता प्रज्वारः प्रत्युपस्थितः ।
ददाह तां पुरीं कृत्स्नां भ्रातुः प्रियचिकीर्षया ॥११॥

पदच्छेद—

भय नाम्नः अग्रजः भ्राता प्रज्वारः प्रत्युपस्थितः ।
ददाह ताम् पुरीम् कृत्स्नाम् भ्रातुः प्रिय चिकीर्षया ॥

शब्दार्थ—

भय	१. भय	ददाह	१२.	जलाने लगा
नाम्नः	२. नाम के (यवनराज का)	ताम्	९.	उस
अग्रजः	३. बड़ा	पुरीम्	११.	पुरी को
भ्राता	४. भाई	कृत्स्नाम्	१०.	सारी
प्रज्वारः	५. प्रज्वार भी	भ्रातुः	७.	भाई का
प्रत्युपस्थितः ।	६. उपस्थित होकर	प्रियचिकीर्षया ॥	८.	प्रिय कार्य करने की इच्छा से

श्लोकार्थ—भय नाम के यवनराज का बड़ा भाई प्रज्वार भी उपस्थित होकर भाई का प्रिय कार्य करने की इच्छा से उस सारी पुरी को जलाने लगा ॥

द्वादशः श्लोकः

तस्यां सन्दह्यमानायां सपौरः सपरिच्छदः ।
कौटुम्बिकः कुटुम्बिन्या उपातप्यत सान्वयः ॥१२॥

पदच्छेद—

तस्याम् सन्दह्यमानायाम् सपौरः सपरिच्छदः ।
कौटुम्बिकः कुटुम्बिन्या उपातप्यत स अन्वयः ॥

शब्दार्थ—

तस्याम्	१. हे राजन् ! उस पुरी को	कौटुम्बिकः	५.	कुटुम्ब
सन्दह्यमानायाम्	२. जलते देखकर	कुटुम्बिन्या	६.	पत्नी (और)
सपौरः	३. पुरवासी	उपातप्यत	९.	सन्तप्त होने लगे
सपरिच्छदः ।	४. सेवक	स	८.	साथ (राजा पुरञ्जन)
		अन्वयः ॥	७.	पुत्र पौत्रादि के

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उस पुरी को जलते देखकर पुरवासी, सेवक, कुटुम्ब, पत्नी और पुत्र, पौत्रादि के साथ राजा पुरञ्जन सन्तप्त होने लगे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

यवनोपरुद्धायतनो ग्रस्तायां कालकन्यया ।
पुर्यां प्रज्वारसंसृष्टः पुरपालोऽन्वतप्यत ॥१३॥

पदच्छेद—

यवन उपरुद्ध आयतनः ग्रस्तायाम् काल कन्यया ।
पुर्याम् प्रज्वार संसृष्टः पुरपालः अन्वतप्यत ॥

शब्दार्थ—

यवन	७.	यवनों ने	पुर्याम्	१.	जब पुरी
उपरुद्ध	८.	घेर लिया था (तथा)	प्रज्वार	९.	प्रज्वार ने
आयतनः	६.	उसके घर को	संसृष्टः	१०.	आक्रमण कर दिया था
ग्रस्तायाम्	३.	हाथ में पड़ गई (तब)	पुरपालः	४.	पुरी के रक्षक सर्प को
कालकन्यया ।	२.	कालकन्या के	अन्वतप्यत ॥	५.	बड़ा दुःख हुआ

श्लोकार्थ—जब पुरी काल कन्या के हाथ में पड़ गई तब पुरी के रक्षक सर्प को बड़ा दुःख हुआ। उसके घर को यवनों ने घेर लिया था तथा प्रज्वार ने आक्रमण कर दिया था ॥

चतुर्दशः श्लोकः

न शेके सोऽवितुं तत्र पुरुकृच्छ्रोरुवेपथुः ।
गन्तुमैच्छत्ततो वृक्षकोटरादिव सानलात् ॥१४॥

पदच्छेद—

न शेके सः अवितुम् तत्र पुरुकृच्छ्र उरु वेपथुः ।
गन्तुम् ऐच्छत् ततः वृक्ष कोटरात् इव सानलात् ॥

शब्दार्थ—

न	४.	नहीं	गन्तुम्	११.	निकल जाने की
शेके	५.	समर्थ हो सका (जब)	ऐच्छत्	१२.	इच्छा की (उस समय वह)
सः	३.	वह सर्प	ततः	१०.	वहाँ से (उसने)
अवितुम्	२.	रक्षा करने में	वृक्ष	८.	वृक्ष के
तत्र	१.	जब उस पुरी की	कोटरात्	९.	खोखले से (सांप निकल जाता है) उसी प्रकार
पुरुकृच्छ्र	१३.	बड़े कष्ट से	इव	६.	जैसे
उरुवेपथुः ।	१४.	बहुत काँप रहा था	सानलात् ॥	७.	जलते हुये

श्लोकार्थ—जब उस पुरी की रक्षा करने में वह सर्प समर्थ नहीं हो सका तब जैसे जलते हुये वृक्ष के खोखले से सांप निकल जाता है, उसी प्रकार वहाँ से उसने निकल जाने की इच्छा की। उस समय वह बड़े ही कष्ट से बहुत कांप रहा था ॥

पञ्चदशः श्लोकः

शिथिलावयवो यर्हि गन्धर्वैर्हृतपौरुषः ।
यवनैररिभी राजन्नुपरुद्धो रुरोद ह ॥१५॥

पदच्छेद—

शिथिल अवयवः यर्हि गन्धर्वैः हृत पौरुषः ।
यवनैः अरिभिः राजन् उपरुद्धः रुरोद ह ॥

शब्दार्थ—

शिथिल	२.	ढीले पड़ गये थे (तथा)	यवनैः	६.	यवनों ने (उसे)
अवयवः	१.	उसके सारे अङ्ग	अरिभिः	८.	तब शत्रु
यर्हि	७.	जब वह जाने लगा	राजन्	६.	हे बर्हिष्मन्
गन्धर्वैः	३.	गन्धर्वों ने	उपरुद्धः	१०.	रोक दिया
हृत	५.	नष्ट कर दी थी	रुरोद	१२.	रोने लगा
पौरुषः ।	४.	उसकी सारी शक्ति	ह ॥	११.	जिससे (दुःखी होकर वह)

श्लोकार्थ—उसके सारे अङ्ग ढीले पड़ गये तथा गन्धर्वों ने उसकी सारी शक्ति नष्ट कर दी थी। हे बर्हिष्मन् ! जब वह जाने लगा तब शत्रु यवनों ने रोक दिया। जिससे दुःखी होकर वह रोने लगा ॥

षोडशः श्लोकः

दुहितः पुत्रपौत्रांश्च जामिजामातृपार्षदान् ।
स्वत्वावशिष्टंयत्किञ्चिद् गृहकोशपरिच्छदम् ॥१६॥

पदच्छेद—

दुहितॄः पुत्र पौत्रान् च जामि जामातृ पार्षदान् ।
स्वत्व अवशिष्टम् यत् किञ्चित् गृह कोश परिच्छदम् ॥

शब्दार्थ—

दुहितॄः	१.	(बिछुड़ते समय) पुत्री	स्वत्व	१३.	(केवल) अधिकार
पुत्र	२.	पुत्र	अवशिष्टम्	१४.	बचा था
पौत्रान्	३.	पौत्र	यत्	११.	जो
च	६.	और	किञ्चित्	१२.	कुछ था (उस पर)
जामि	४.	पुत्रवधू	गृह	७.	घर
जामातृ	५.	जामाता	कोश	८.	खजाना
पार्षदान् ।	६.	मंत्रीगण	परिच्छदम् ॥	१०.	सेवक गण

श्लोकार्थ—बिछुड़ते समय पुत्री, पुत्र, पौत्र, पुत्रवधू, जामाता, मंत्रीगण, घर, खजाना और सेवकगण जो कुछ था, उस पर केवल अधिकार बचा था ॥

सप्तदशः श्लोकः

अहं ममेति स्वीकृत्य गृहेषु कुमतिर्गृही ।
दध्यौ प्रमदया दीनो विप्रयोग उपस्थिते ॥१७॥

पदच्छेद—

अहम् मम इति स्वीकृत्य गृहेषु कुमतिः गृही ।
दध्यौ प्रमदया दीनः विप्रयोगे उपस्थिते ॥

शब्दार्थ—

अहम्	३.	मैं (और)	गृही ।	१.	गृहासक्त राजा पुरञ्जन
मम	४.	मेरा	दध्यौ	१२.	चिन्ता करने लगे
इति	५.	इस प्रकार का भाव	प्रमदया	८.	स्त्री के प्रेम पाश में फँस कर
स्वीकृत्य	६.	रखने से	दीनः	९.	दीन हो गये थे (अतः)
गृहेषु	२.	देह-गेहादि में	विप्रयोगे	१०.	बिछुड़ने का
कुमतिः	७.	बुद्धि हीन हो गये थे	उपस्थिते ॥	११.	समय आने पर

श्लोकार्थ—गृहासक्त राजा पुरञ्जन देह-गेहादि में मैं और मेरा इस प्रकार का भाव रखने से बुद्धिहीन हो गये थे । स्त्री के प्रेम पाश में फँस कर दीन हो गये थे । अतः बिछुड़ने का समय आने पर चिन्ता करने लगे ॥

अष्टादशः श्लोकः

लोकान्तरं गतवति मय्यनाथा कुटुम्बिनी ।
वर्तिष्यते कथं त्वेषा बालकाननुशोचती ॥१८॥

पदच्छेद—

लोकान्तरम् गतवति मयि अनाथा कुटुम्बिनी ।
वर्तिष्यते कथम् तु एषा बालकान् अनुशोचती ॥

शब्दार्थ—

लोकान्तरम्	२.	परलोक	वर्तिष्यते	७.	व्यवहार चलायेगी
गतवति	३.	चले जाने पर (यह मेरी)	कथम्	६.	कैसे
मयि	१.	मेरे	तु	९.	तो केवल
अनाथा	५.	असहाय (हो जायेगी अतः)	एषा	८.	यह
कुटुम्बिनी ।	४.	पत्नी	बालकान्	१०.	बालकों की
			अनुशोचती ॥	११.	चिन्ता करती रहेगी

श्लोकार्थ—मेरे परलोक चले जाने पर यह मेरी पत्नी असहाय हो जायेगी । अतः कैसे व्यवहार चलायेगी । यह तो केवल बालकों की चिन्ता करती रहेगी ॥

एकोनविंशः श्लोकः

न मय्यनाशिते भुङ्क्ते नास्नाते स्नाति मत्परा ।
मयि रुष्टे सुसंत्रस्ता भर्त्सिते यतवाग्भयात् ॥१६॥

पदच्छेद— न मयि अनाशिते भुङ्क्ते न अस्नाते स्नाति मत्परा ।
मयि रुष्टे सुसंत्रस्ता भर्त्सिते यत् वाक् भयात् ॥

शब्दार्थ—

न	३.	नहीं	परा ।	९.	सेवा में लगी रहती है
मयि	१.	मेरे	मयि	१०.	मेरे
अनाशिते	२.	भोजन किये बिना (वह)	रुष्टे	११.	रूठ जाने पर
भुङ्क्ते	४.	भोजन करती है (और)	सुसंत्रस्ता	१२.	बहुत डर जाती है (तथा मेरे)
न	६.	नहीं	भर्त्सिते	१३.	झिड़कने पर
अस्नाते	५.	नहाये बिना	यत	१६.	रह जाती है
स्नाति	७.	नहाती है	वाक्	१५.	चुप
मत्	८.	सदा मेरी	भयात् ॥	१४.	भय के कारण

श्लोकार्थ—मेरे भोजन किये बिना वह भोजन नहीं करती है और नहाये बिना नहीं नहाती है । सदा मेरी सेवा में लगी रहती है । मेरे रूठ जाने पर बहुत डर जाती है । तथा मेरे झिड़कने पर भय के कारण चुप रह जाती है ॥

विंशः श्लोकः

प्रबोधयति माविज्ञं व्युषिते शोककर्शिता ।
वर्त्मैतद् गृहमेधीयं वीरसूरपि नेष्यति ॥२०॥

पदच्छेद— प्रबोधयति मा अविज्ञम् व्युषिते शोक कर्शिता ।
वर्त्म एतद् गृहमेधीयम् वीरसूः अपि नेष्यति ॥

शब्दार्थ—

प्रबोधयति	३.	समझाती है	वर्त्म	११.	व्यवहार को
मा	२.	(यह) मुझे	एतद्	९.	इस
अविज्ञम्	१.	भूल हो जाने पर	गृहमेधीयम्	१०.	गृहस्थ धर्म के
व्युषिते	४.	परदेश चले जाने पर	वीरसूः	७.	वीर माता होने पर
शोक	५.	विरह-व्यथा में	अपि	८.	भी (क्या यह)
कर्शिता ।	६.	सूख जाती है	नेष्यति ॥	१२.	चला पायेगी

श्लोकार्थ—भूल हो जाने पर यह मुझे समझाती है, परदेश चले जाने पर विरह व्यथा में सूख जाती है । वीर माता होने पर भी क्या यह इस गृहस्थ धर्म के व्यवहार को चला पायेगी ॥

एकविंशः श्लोकः

कथं नु दारका दीना दारकीर्वापरायणाः ।
वर्तिष्यन्ते मयि गते भिन्ननाव इवोदधौ ॥२१॥

पदच्छेद—

कथम् दारकाः दीनाः दारकीः वा परायणाः ।
वर्तिष्यन्ते मयि गते भिन्न नाव इव उदधौ ॥

शब्दार्थ—

कथम्	१३.	कैसे	वर्तिष्यन्ते	१४.	निर्वाह करेंगे
नु	१२.	भला	मयि	१.	मेरे
दारकाः	६.	पुत्र	गते	२.	परलोक चले जाने पर
दीनाः	८.	अनाथ	भिन्न	६.	टूट जाये (उसी प्रकार)
दारकीः	११.	पुत्रियाँ	नाव	५.	नौका
वा	१०.	अथवा	इव	३.	जैसे
परायणाः ।	७.	केवल मेरे आश्रित (रहने वाले)	उदधौ ॥	४.	समुद्र के बीच में

श्लोकार्थ—मेरे परलोक चले जाने पर जैसे समुद्र के बीच में नौका टूट जाये उसी प्रकार केवल मेरे आश्रित रहने वाले अनाथ पुत्र अथवा पुत्रियाँ भला कैसे निर्वाह करेंगी ॥

द्वाविंशः श्लोकः

एवं कृपणया बुद्ध्या शोचन्तमतदर्हणम् ।
ग्रहीतुं कृतधीरेनं भयनामाभ्यपद्यत ॥२२॥

पदच्छेद—

एवम् कृपणया बुद्ध्या शोचन्तम् अतदर्हणम् ।
ग्रहीतुम् कृत धीः एनम् भयनामा अभ्यपद्यत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	कृत धीः	८.	निश्चय करके
कृपणया	३.	दीन	एनम्	६.	उस राजा पुरञ्जन को
बुद्ध्या	४.	बुद्धि के कारण	भय	९.	भय
शोचन्तम्	५.	शोक करते हुये	नामा	१०.	नाम का यवनराज
अतदर्हणम् ।	२.	शोचनीय न होने पर भी	अभ्य	११.	सामने
ग्रहीतुम्	७.	पकड़ने का	पद्यत ॥	१२.	आ पहुँचा

श्लोकार्थ—इस प्रकार शोचनीय न होने पर भी दीन बुद्धि के कारण शोक करते हुये उस राजा पुरञ्जन को पकड़ने का निश्चय करके भय नाम का यवनराज सामने आ पहुँचा ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

पशुवद्यवनैरेष नीयमानः स्वकं क्षयम् ।
अन्वद्रवन्ननुपथाः शोचन्तो भृशमातुराः ॥२३॥

पदच्छेद—

पशुवत् यवनैः एषः नीयमानः स्वकम् क्षयम् ॥
अन्व द्रवन् अनुपथाः शोचन्तः भृशम् आतुराः ॥

शब्दार्थ—

पशुवत्	३.	पशु के समान	अन्व	११.	पीछे-पीछे
यवनैः	१.	(जब) यवन लोग	द्रवन्	१२.	दौड़े
एषः	२.	इसे	अनुपथाः	७.	उसके अनुचर
नीयमानः	६.	ले जा रहे थे (तब)	शोचन्तः	१०.	शोक करते हुये
स्वकम्	४.	अपने	भृशम्	८.	बहुत
क्षयम् ।	५.	स्थान को	आतुराः ॥	९.	व्याकुल होकर

श्लोकार्थ—जब यवन लोग इसे पशु के समान अपने स्थान को ले जा रहे थे, तब उसके अनुचर बहुत व्याकुल होकर शोक करते हुये पीछे-पीछे दौड़े ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

पुरीं विहायोपगत उपरुद्धो भुजङ्गमः ।
यदा तमेवानु पुरी विशीर्णा प्रकृतिं गता ॥२४॥

पदच्छेद—

पुरीम् विहाय उपगतः उपरुद्धः भुजङ्गमः ।
यदा तम् एव अनुपुरी विशीर्णा प्रकृतिं गता ॥

शब्दार्थ—

पुरीम्	३.	पुरी को	तम् एव	७.	पुरञ्जन के ही
विहाय	४.	छोड़कर	अनु	८.	पीछे-पीछे जाने लगा(तब)
उपगतः	५.	पास चला गया (तथा)	पुरी	९.	वह नगरी
उपरुद्धः ।	१.	रोका गया	विशीर्णा	१०.	नष्ट होकर
भुजङ्गमः	२	सर्प भी	प्रकृतिम्	१२.	अपने कारणों में
यदा	६.	जब	गताः ॥	१२.	मिल गई

श्लोकार्थ—रोका गया सर्प भी पुरी को छोड़कर पास चला गया तथा जब पुरञ्जन के ही पीछे-पीछे जाने लगा तब वह नगरी नष्ट होकर अपने कारणों में मिल गई ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

विकृष्यमाणः प्रसभं यवनेन बलीयसा ।
नाविन्दत्तमसाऽऽविष्टः सखायं सुहृदं पुरः ॥२५॥

पदच्छेद—

विकृष्यमाणः प्रसभम् यवनेन बलीयसा ।
न अविन्दत् तमसा आविष्टः सखायम् सुहृदम् पुरः ॥

शब्दार्थ—

विकृष्यमाणः	४.	खिंचने पर भी (पुरञ्जन ने)	तमसा	५.	अज्ञान में
प्रसभम्	३.	बलपूर्वक	आविष्ट	६.	स्थित रहने से
यवनेन	२.	यवनराज के द्वारा	सखायम्	९.	मित्र (अविज्ञात को)
बलीयसा ।	१.	महाबली	सुहृदम्	८.	हितैषी (और)
न अविन्दत्	१०.	नहीं स्मरण किया	पुरः ॥	७.	अपने पुराने

श्लोकार्थ—महाबली यवनराज के द्वारा बलपूर्वक खिंचने पर भी पुरञ्जन ने अज्ञान में स्थित रहने से अपने पुराने हितैषी और मित्र अविज्ञात को स्मरण नहीं किया ॥

षड्विंशः श्लोकः

तं यज्ञपशवोऽनेन संज्ञप्ता येऽदयालुना ।
कुठारैश्चिच्छिदुः क्रुद्धाः स्मरन्तोऽमीवमस्य तत् ॥२६॥

पदच्छेद—

तम् यज्ञपशवः अनेन संज्ञप्ताः ये अदयालुना ।
कुठारैः चिच्छिदुः क्रुद्धाः स्मरन्तः अमीवम् अस्य तत् ॥

शब्दार्थ—

तम्	१३.	उसे	कुठारैः	१२.	फरसे से
यज्ञ	५.	यज्ञ	चिच्छिदुः	१४.	काटने लगे
पशवः	६.	पशु थे (वे सब)	क्रुद्धाः	११.	क्रोध पूर्वक
अनेन	२.	पुरञ्जन के द्वारा	स्मरन्तः	१०.	स्मरण करके
संज्ञप्ताः	३.	यज्ञ में मारे गये	अमीवम्	९.	अपराध का
ये	४.	जो	अस्य	७.	(उस समय) उसके
अदयालुना ।	१.	कठोर हृदय	तत् ॥	८.	उस पूर्व

श्लोकार्थ—कठोर हृदय पुरञ्जन के द्वारा यज्ञ में मारे गये जो यज्ञ पशु थे, वे सब उस समय उसके उस पूर्व अपराध का स्मरण करके क्रोध पूर्वक फरसे से उसे काटने लगे ।

सप्तविंशः श्लोकः

अनन्तपारे तमसि मग्नो नष्टस्मृतिः समाः ।
शाश्वतीरनुभूयार्तिं प्रमदासङ्गदूषितः ॥२७॥

पदच्छेद—

अनन्तपारे तमसि मग्नः नष्ट स्मृतिः समाः ।
शाश्वतीः अनुभूय आर्तिम् प्रमदा सङ्ग दूषितः ॥

शब्दार्थ—

अनन्तपारे	१.	अपार	शाश्वतीः	६.	बहुत
तमसि	२.	अन्ध लोक में	अनुभूय	९.	अनुभव किया
मग्नः	३.	पड़े रहने से (उसका)	आर्तिम्	८.	कष्ट का
नष्ट	५.	समाप्त हो गया (उसने)	प्रमदा	१०.	स्त्री में
स्मृतिः	४.	विवेक	सङ्ग	११.	आसक्ति होने से (उसकी)
समाः ।	७.	वर्षों तक	दूषितः ॥	१२.	दुर्गति हुई थी

श्लोकार्थ—अपार अन्ध लोक में पड़े रहने से उसका विवेक समाप्त हो गया । उसने बहुत वर्षों तक कष्ट का अनुभव किया । स्त्री में आसक्ति होने से उसकी दुर्गति हुई ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तामेव मनसा गृह्णन् बभूव प्रमदोत्तमा ।
अनन्तरं विदर्भस्य राजसिंहस्य वेश्मनि ॥२८॥

पदच्छेद—

ताम् एव मनसा गृह्णन् बभूव प्रमदा उत्तमा ।
अनन्तरम् विदर्भस्य राज सिंहस्य वेश्मनि ॥

शब्दार्थ—

ताम् एव	१.	मरते समय उस पत्नी का ही	अनन्तरम्	५.	अगले जन्म में
मनसा	२	मन से	विदर्भस्य	८.	विदर्भराज के
गृह्णन्	३.	स्मरण करता रहा	राज	६	राजाओं में
बभूव	१२.	उत्पन्न हुआ	सिंहस्य	७.	श्रेष्ठ
प्रमदा	११.	कन्या के रूप में	वेश्मनि ॥	९.	घर में
उत्तमा ।	१०.	एक सुन्दरी			

श्लोकार्थ—मरते समय उस पत्नी का ही मन से स्मरण करता रहा । अगले जन्म में राजाओं में श्रेष्ठ विदर्भ राज के घर में एक सुन्दरी कन्या के रूप में उत्पन्न हुआ ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

उपयेमे वीर्यपणां वैदर्भीं मलयध्वजः ।
युधि निर्जित्य राजन्यान् पाण्ड्यः परपुरञ्जयः ॥२९॥

पदच्छेद—

उपयेमे वीर्यपणाम् वैदर्भीम् मलयध्वजः ।
युधि निर्जित्य राजन्यान् पाण्ड्यः परपुरञ्जयः ॥

शब्दार्थ—

उपयेमे	१०.	विवाह किया	युधि	४.	युद्ध में
वीर्य	७.	सर्वश्रेष्ठ पराक्रम की	निर्जित्य	६.	जीतकर
पणाम्	८.	शर्त पूरी की और	राजन्यान्	५.	सभी राजाओं को
वैदर्भीम्	९.	विदर्भ पुत्री के साथ	पाण्ड्यः	२.	पाण्ड्य देश के
मलयध्वजः ।	३.	राजा मलयध्वज ने	पर पुरञ्जयः ॥	१.	शत्रुओं के नगर को जीतने वाले

श्लोकार्थ—शत्रुओं के नगर को जीतने वाले पाण्ड्य देश के राजा मलयध्वज ने युद्ध में सभी राजाओं को जीत कर सर्वश्रेष्ठ पराक्रम की शर्त पूरी की और विदर्भपुत्री के साथ विवाह किया ॥

त्रिंशः श्लोकः

तस्यां स जनयाञ्चक्रे आत्मजामसितेक्षणाम् ।
यवीयसः सप्त सुतान् सप्त द्रविडभूभृतः ॥३०॥

पदच्छेद—

तस्याम् सः जनयांचक्रे आत्मजाम् असित ईक्षणाम् ।
यवीयसः सप्त सुतान् सप्त द्रविड भूभृतः ॥

शब्दार्थ—

तस्याम्	२.	उस सुन्दरी से	यवीयसः	६.	उससे छोटे
सः	१.	उन्होंने	सप्त	७.	सात
जनयांचक्रे	९.	उत्पन्न किये	सुतान्	८.	पुत्र
आत्मजाम्	५.	एक पुत्री (तथा)	सप्त	१०.	(उन्होंने) सातों को
असित	३.	श्याम	द्रविड	११.	द्रविड़ देश का
ईक्षणाम् ।	४.	लोचना	भूभृतः ॥	१२.	राजा बनाया

श्लोकार्थ—उन्होंने उस सुन्दरी से श्यामलोचना एक पुत्री तथा उससे छोटे सात पुत्र उत्पन्न किये। उन्होंने उन सातों को द्रविड़ देश का राजा बनाया ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

एकैकस्याभवत्तेषां राजन्नर्बुदमर्बुदम् ।
भोक्ष्यते यद्वंशधरैर्मही मन्वन्तरं परम् ॥३१॥

पदच्छेद—

एकैकस्य अभवत् तेषाम् राजन् अर्बुदम् अर्बुदम् ।
भोक्ष्यते यद् वंशधरैः मही मन्वन्तरम् परम् ॥

शब्दार्थ—

एकैकस्य	३.	एक-एक के	भोक्ष्यते	१२.	शासन करेंगे
अभवत्	६.	उत्पन्न हुये	यद्	७.	जिनके
तेषाम्	२.	उनमें से	वंशधरैः	८.	वंशधर
राजन्	१.	हे बर्हिष्मन्	मही	११.	पृथ्वी का
अर्बुदम्	४.	बहुत	मन्वन्तरम्	९.	मन्वन्तर तक (और)
अर्बुदम् ।	५.	बहुत से पुत्र	परम् ॥	१०.	उसके बाद भी

श्लोकार्थ—हे बर्हिष्मन् ! उनमें से एक-एक के बहुत-बहुत से पुत्र उत्पन्न हुये; जिनके वंशधर मन्वन्तर तक और उसके बाद भी शासन करेंगे ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

अगस्त्यः प्राग्दुहितरमुपयेमे धृतव्रताम् ।
यस्यां दृढच्युतो जात इध्मवाहात्मजो मुनिः ॥३२॥

पदच्छेद—

अगस्त्यः प्राग् दुहितरम् उपयेमे धृत व्रताम् ।
यस्याम् दृढच्युतः जातः इध्मवाह आत्मजः मुनिः ॥

शब्दार्थ—

अगस्त्यः	१.	अगस्त्य ऋषि ने	यस्याम्	७.	जिससे
प्राग्	४.	प्रथम उत्पन्न	दृढच्युतः	८.	दृढच्युत नाम का पुत्र
दुहितरम्	५.	उस पुत्री के साथ	जातः	९.	उत्पन्न हुआ (उनके)
उपयेमे	६.	विवाह किया	इध्मवाहः	११.	इध्मवाह
धृत	३.	परायण	आत्मजः	१०.	पुत्र
व्रताम् ।	२.	व्रत	मुनिः ॥	१२.	मुनि (हुये)

श्लोकार्थ—अगस्त्य ऋषि ने व्रत परायण प्रथम उत्पन्न उस पुत्री के साथ विवाह किया । जिससे दृढच्युत नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके पुत्र इध्मवाह मुनि थे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

विभज्य तनयेभ्यः क्ष्मां राजर्षिर्मलयध्वजः ।
आरिराधयिषुः कृष्णं स जगाम कुलाचलम् ॥३३॥

पदच्छेद—

विभज्य तनयेभ्यः क्ष्माम् राजर्षिः मलयध्वजः ।
आरिराधयिषुः कृष्णम् सः जगाम कुल अचलम् ॥

शब्दार्थ—

विभज्य	६	विभक्त करके	आरिराधयिषुः	८.	आराधना करने
तनयेभ्यः	५.	पुत्रों में	कृष्णम्	७.	श्री कृष्ण की
क्ष्माम्	४.	राज्य को	सः	१.	वे
राजर्षि	२.	राजर्षिः	जगाम	११.	चले गये
मलयध्वजः ।	३.	मलयध्वज	कुलाचलम् ॥	१०.	श्री शैल पर्वत पर

श्लोकार्थ—वे राजर्षि मलयध्वज राज्य को पुत्रों में विभक्त करके श्री कृष्ण की आराधना करने की इच्छा से श्री शैल पर्वत पर चले गये ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

हित्वा गृहान् सुतान् भोगान् वैदर्भी मदिरेक्षणा ।
अन्वधावत पाण्ड्येशं ज्योत्स्नेव रजनीकरम् ॥३४॥

पदच्छेद—

हित्वा गृहान् सुतान् भोगान् वैदर्भी मदिर ईक्षणा ।
अन्वधावत पाण्ड्येशम् ज्योत्स्ना इव रजनीकरम् ॥

शब्दार्थ—

हित्वा	७.	छोड़कर	ईक्षणा ।	२.	लोचना
गृहान्	४.	घर	अन्वधावत	९.	पीछे-पीछे चल पड़ी
सुतान्	५.	पुत्र (और)	पाण्ड्येशम्	८.	पाण्ड्य नरेश के
भोगान्	६.	विषयभोग को	ज्योत्स्ना	११.	चाँदनी
वैदर्भी	३.	विदर्भ पुत्री	इव	१०.	जैसे
मदिर	१.	मत्त	रजनीकरम् ॥	१२.	चन्द्रमा के (पीछे जाती है)

श्लोकार्थ—मत्तलोचना विदर्भपुत्री घर, पुत्र और विषयभोग को छोड़कर पाण्ड्यनरेश मलयध्वज के पीछे-पीछे चल पड़ी, जैसे चाँदनी चन्द्रमा के पीछे जाती है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

तत्र चन्द्रवसा नाम ताम्रपर्णी वटोदका ।
तत्पुण्यसलिलैर्नित्यमुभयत्रात्मनो मृजन् ॥३५॥

पदच्छेद—

तत्र चन्द्रवसा नाम ताम्रपर्णी वटोदका ।
तत् पुण्यसलिलैः नित्यम् उभयत्र आत्मनः मृजन् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ	पुण्य	७.	पवित्र
चन्द्रवसा	२.	चन्द्रवसा	सलिलैः	८.	जल में
नाम	५.	नाम की (नदी थी)	नित्यम्	९.	प्रतिदिन (स्नान करके)
ताम्रपर्णी	३.	ताम्रपर्णी (और)	उभयत्र	१०.	अन्तःकरण (और)
वटोदका ।	४.	वटोदका	आत्मनः	११.	अपना शरीर
तत्	६.	(वे) उनके	मृजन् ॥	१२.	निर्मल करते थे

श्लोकार्थ—वहाँ चन्द्रवसा, ताम्रपर्णी और वटोदका नाम की नदियाँ थीं । वे राजर्षि उनके पवित्र जल में प्रतिदिन स्नान करके अन्तःकरण और अपना शरीर निर्मल करते थे ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

कन्दाष्टिभिर्मूलफलैः पुष्पपर्णैस्तृणोदकैः ।
वर्तमानः शनैर्गात्रकर्शनं तप आस्थितः ॥३६॥

पदच्छेद—

कन्द अष्टिभिः मूल फलैः पुष्पपर्णैः तृणउदकैः ।
वर्तमानः शनैः गात्र कर्शनम् तपः आस्थितः ॥

शब्दार्थ—

कन्द	१.	(वे) कन्द	उदकैः ।	८.	जल से
अष्टिभिः	२.	बीज	वर्तमानः	९.	आहार करके
मूल	३.	मूल	शनैः	१३.	धीरे-धीरे
फलैः	४.	फल	गात्र	१२.	उनका शरीर
पुष्प	५.	पुष्प	कर्शनम्	१४.	सूख गया
पर्णैः	६.	पत्ते	तपः	१०.	तपस्या में
तृण	७.	घास (और)	आस्थितः ॥	११.	स्थित थे (जिससे)

श्लोकार्थ—वे कन्द, बीज, मूल, फल, पुष्प, पत्ते, घास और जल से आहार करके तपस्या में स्थित रहते थे । जिससे उनका शरीर धीरे-धीरे सूख गया ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

शीतोष्णवातवर्षाणि क्षुत्पिपासे प्रियाप्रिये ।
सुखदुःखे इति द्वन्द्वान्यजयत्समदर्शनः ॥३७॥

पदच्छेद—

शीत उष्ण वात वर्षाणि क्षुत् पिपासे प्रिय अप्रिये ।
सुख दुःख इति द्वन्द्वानि अजयत् समदर्शनः ॥

शब्दार्थ—

शीत	२.	सर्दी	अप्रिये ।	९.	अप्रिय (और)
उष्ण	३.	गर्मी	सुख	१०.	सुख
वात	४.	हवा	दुःखे	११.	दुःख
वर्षाणि	५.	वर्षा	इति	१२.	इस प्रकार
क्षुत्	६.	भूख	द्वन्द्वानि	१३.	सारे द्वन्द्वों को
पिपासे	७.	प्यास	अजयत्	१४.	वश में कर लिया
प्रिय	८.	प्रिय	समदर्शनः ॥	१	समदर्शी राजर्षि मलयध्वज ने

श्लोकार्थ—समदर्शी राजर्षि मलयध्वज ने सर्दी, गर्मी, हवा, वर्षा, भूख, प्यास, प्रिय, अप्रिय, सुख और दुःख इस प्रकार सारे द्वन्द्वों को वश में कर लिया ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

तपसा विद्यया पक्वकषायो नियमैर्यमैः ।
युयुजे ब्रह्मण्यात्मानं विजिताक्षानिलाशयः ॥३८॥

पदच्छेद—

तपसा विद्यया पक्व कषायः नियमैः यमैः ।
युयुजे ब्रह्मणि आत्मानम् विजित अक्ष अनिल आशयः ॥

शब्दार्थ—

तपसा	१.	तपस्या (और)	युयुजे	१३.	करने लगे
विद्यया	२.	उपासना से (उनकी)	ब्रह्मणि	१२.	ब्रह्मभाव का दर्शन
पक्व	४.	जल गई थी	आत्मानम्	११.	आत्मा में
कषायः	३.	कामादि वासनायें	विजित	८.	वश में कर लिया
नियमैः	१०.	नियम के द्वारा	अक्ष	५.	उन्होंने इन्द्रियाँ
यमैः ।	९.	यम और	अनिल	६.	प्राण और
			आशयः ॥	७.	मन (को)

श्लोकार्थ—तपस्या और उपासना से उनकी कामादि वासनायें जल गई थी । उन्होंने इन्द्रियों, प्राणों और मन को वश में कर लिया तथा यम और नियम के द्वारा आत्मा में ब्रह्मभाव का दर्शन करने लगे ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

आस्ते स्थाणुरिवैकत्र दिव्यं वर्षशतं स्थिरः ।
वासुदेवे भगवति नान्यद्वेदोद्वहन् रतिम् ॥३९॥

पदच्छेद—

आस्ते स्थाणुः इव एकत्र दिव्यम् वर्ष शतम् स्थिरः ।
वासुदेवे भगवति न अन्यत् वेद उद्वहन् रतिम् ॥

शब्दार्थ—

आस्ते	८.	स्थित थे	वासुदेवे	१०.	वासुदेव में
स्थाणुः	१.	सूखे वृक्ष के	भगवति	९	भगवान्
इव	२.	समान (वे)	न	१४.	नहीं
एकत्र	६.	एक जगह	अन्यत्	१३.	उन्हें देहादि का
दिव्यम्	४.	दिव्य	वेद	१५.	ज्ञान रहा
वर्ष	५.	वर्षों तक	उद्वहन्	१२.	रहने के कारण
शतम्	३.	एक सौ	रतिम् ॥	११.	प्रेम
स्थिरः ।	७.	निश्चलभाव से			

श्लोकार्थ—सूखे वृक्ष के समान वे एक सौ दिव्य वर्षों तक एक जगह निश्चल भाव से स्थित थे। भगवान् वासुदेव में प्रेम रहने के कारण उन्हें देहादि का ज्ञान नहीं रहा ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

स व्यापकतयाऽऽत्मानं व्यतिरिक्ततयाऽऽत्मनि ।
विद्वान् स्वप्न इवामर्शसाक्षिणं विरराम ह ॥४०॥

पदच्छेद—

सः व्यापक तया आत्मानम् व्यतिरिक्त तया आत्मनि ।
विद्वान् स्वप्न इव आमर्श साक्षिणम् विरराम ह ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	राजर्षिमलयध्वज (अपनी)	स्वप्न	८.	स्वप्न में (भी)
व्यापकतया	१०.	(उसी प्रकार उस) व्यापक से	इव	७.	जैसे
आत्मानम्	५	परमात्मा का	आमर्श	३.	अन्तःकरण के
व्यतिरिक्ततया	११.	भिन्न देहादि के ज्ञान से	साक्षिणम्	४.	प्रकाशक
आत्मनि।	२.	आत्मा में	विरराम	१२	उदासीन हो गये
विद्वान्	६.	दर्शन करने लगे	ह ॥	९.	आत्मा का ज्ञान रहता है

श्लोकार्थ—राजर्षि मलयध्वज अपनी आत्मा में अन्तःकरण के प्रकाशक परमात्मा का दर्शन करने लगे। जैसे स्वप्न में भी आत्मा का ज्ञान रहता है उसी प्रकार उस व्यापक से भिन्न देहादि के ज्ञान से उदासीन हो गये ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

साक्षाद्भगवतोक्तेन गुरुणा हरिणा नृप।
विशुद्धज्ञानदीपेन स्फुरता विश्वतोमुखम् ॥४१॥

पदच्छेद—

साक्षात् भगवता उक्तेन गुरुणा हरिणा नृप।
विशुद्ध ज्ञान दीपेन स्फुरता विश्वतो मुखम् ॥

शब्दार्थ—

साक्षात्	३.	साक्षात्	विशुद्ध	१०.	निर्मल
भगवता	४	भगवान्	ज्ञान	११	ज्ञान
उक्तेन	६.	उपदेश से मिली	दीपेन	१२.	ज्योति (मे वह ज्योति मिल गई)
गुरुणा	२.	जगद् गुरु	स्फुरता	९.	देदीप्यमान
हरिणा	५.	श्री हरि के	विश्वतो	७.	सभी
नृप।	१.	हे राजन्! (उन्हें)	मुखम् ॥	८.	दिशाओं में

श्लोकार्थ—हे राजन्! उन्हें जगद्गुरु साक्षात् भगवान् श्री हरि के आदेश से मिली सभी दिशाओं में देदीप्यमान निर्मल ज्ञान-ज्योति से वह ज्योति मिल गई ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

परे ब्रह्मणि चात्मानं परं ब्रह्म तथाऽऽत्मनि।
वीक्षमाणो विहायेक्षामस्मादुपरराम ह ॥४२॥

पदच्छेद—

परे ब्रह्मणि च आत्मानम् परम् ब्रह्म तथा आत्मनि।
वीक्षमाणः विहाय ईक्षाम् अस्मात् उपरराम ह ॥

शब्दार्थ—

परे	१.	(इस प्रकार वे) पर	आत्मनि।	५.	अपने में
ब्रह्मणि	२.	ब्रह्म में	वीक्षमाणः	८.	दर्शन करते हुये
च	४.	और	विहाय	११.	छोड़कर
आत्मानम्	३.	अपने को	ईक्षाम्	१०.	देखने की भी इच्छा
परम्	६.	परम	अस्मात्	१२.	इस संसार से
ब्रह्म	७.	ब्रह्म का	उपरराम	१४.	शान्त हो गये
तथा	९.	तथा (अन्त में)	ह ॥	१३.	सदा के लिये

श्लोकार्थ—इस प्रकार वे पर ब्रह्म में अपने को और अपने में परम ब्रह्म का दर्शन करने लगे तथा अन्त में देखने की भी इच्छा छोड़कर इस संसार से सदा के लिये शान्त हो गये ॥

त्रिचत्वारिंश श्लोकः

पतिं परमधर्मज्ञं वैदर्भी मलयध्वजम् ।
प्रेम्णा पर्यचरद्धित्वा भोगान् सा पतिदेवता ॥४३॥

पदच्छेद—

पतिम् परमधर्मज्ञं वैदर्भी मलयध्वजम् ।
प्रेम्णा पर्यचरत् हित्वा भोगान् सा पति देवता ॥

शब्दार्थ—

पतिम्	९.	पति	पर्यचरत्	१२.	सेवा की (थी)
परम	७.	अपने महान्	हित्वा	६.	छोड़कर
धर्मज्ञम्	८	धार्मिक	भोगान्	५.	विषयों का भोग
वैदर्भी	४.	विदर्भ पुत्री ने	सा	३.	उस
मलयध्वजम् ।	१०.	राजा मलयध्वज की	पति	१.	पति को
प्रेम्णा	११.	प्रेम से	देवता ॥	२.	देवता मानने वाली

श्लोकार्थ—पति को देवता मानने वाली उस विदर्भ-पुत्री ने विषयों का भोग छोड़कर अपने महान् धार्मिक पति राजा मलयध्वज की प्रेम से सेवा की थी ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

चीरवासा व्रतक्षामा वेणीभूतशिरोरुहा ।
बभावुपपतिं शान्ता शिखा शान्तमिवानलम् ॥४४॥

पदच्छेद—

चीरवासाः व्रतक्षामा वेणीभूत शिरोरुहा ।
बभौ उपपतिम् शान्ता शिखा शान्तम् इव अनलम् ॥

शब्दार्थ—

चीर	१.	वह चीर	बभौ	१३.	सुशोभित हो रही थी
वासाः	२.	वस्त्र पहनती थी	उपपतिम्	११.	पति के समीप
व्रत	३.	व्रत करने से	शान्ता	१२.	शान्तभाव से
क्षामा	४.	दुर्बल हो गई थी	शिखा	९.	शिखा के
वेणीभूत	६.	लटें पड़ गई थीं (इस प्रकार)	शान्तम्	७.	शान्त भाव को प्राप्त
शिरोरुहा ।	५.	उसके सिर के बालों में	इव	१०.	समान वह
			अनलम् ॥	८.	अग्नि की

श्लोकार्थ—वह चीर वस्त्र पहनती थी, व्रत करने से दुर्बल हो गई थी, उसके सिर के बालों में लटें पड़ गई थीं। इस प्रकार शान्तभाव को प्राप्त अग्नि की शिखा के समान वह पति के समीप शान्तभाव से सुशोभित हो रही थी ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

अजानती प्रियतमं यदोपरतमङ्गना ।
सुस्थिरासनमासाद्य यथापूर्वमुपाचरत् ॥४५॥

पदच्छेद—

अजानती प्रियतमम् यदा उपरतम् अङ्गना ।
सुस्थिर आसनम् आसाद्य यथापूर्वम् उपाचरत् ॥

शब्दार्थ—

अजानती	५.	नहीं जानती थी (अतः)	सुस्थिर	६.	निश्चल भाव से
प्रियतमम्	३.	अपने पति को	आसनम्	७.	बैठे हुये
यदा	१.	अभी	आसाद्य	८.	उनके पास जाकर
उपरतम्	४.	मरा हुआ	यथा पूर्वम्	९.	पहले जैसी
अङ्गना ।	२.	वह विदर्भ पुत्री	उपाचरत् ॥	१०.	सेवा करने लगी

श्लोकार्थ—वह विदर्भ पुत्री अपने पति को मरा हुआ नहीं जानती थी । अतः निश्चलभाव से बैठे हुये उनके पास जाकर पहले जैसी सेवा करने लगी ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

यदा नोपलभेताङ्घ्रावूष्माणं पत्युरर्चती ।
आसीत्संविग्नहृदया यूथभ्रष्टा मृगी यथा ॥४६॥

पदच्छेद—

यदा न उपलभेत अङ्घ्रौ ऊष्माणम् पत्युः अर्चती ।
आसीत् संविग्न हृदया यूथ भ्रष्टा मृगी यथा ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	आसीत्	१४.	हो गई
न	६.	नहीं	संविग्न	१३.	बहुत व्याकुल
उपलभेत	७.	देखी (तब)	हृदया	१२.	चित्त में
अङ्घ्रौ	४.	चरणों में	यूथ	८.	झुण्ड से
ऊष्माणम्	५.	गर्मी	भ्रष्टा	९.	बिछुड़ी हुई
पत्युः	३.	पति के	मृगी	१०.	हरिणी के
अर्चंति ।	२.	सेवा करती हुई	यथा ॥	११.	समान

श्लोकार्थ—जब सेवा करती हुई पति के चरणों में गर्मी नहीं देखी तब झुण्ड से बिछुड़ी हुई हरिणी के समान चित्त में बहुत व्याकुल हो गई ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

आत्मानं शोचती दीनमबन्धुं विक्लवाश्रुभिः ।
स्तनावासिच्य विपिने सुस्वरं प्ररुरोद सा ॥४७॥

पदच्छेद —

आत्मानम् शोचती दीनम् अबन्धुम् विक्लव अश्रुभिः ।
स्तनौ आसिच्य विपिने सुस्वरम् प्ररुरोद सा ॥

शब्दार्थ—

आत्मानम्	३.	अपने को	स्तनौ	९.	स्तनो को
शोचती	६.	शोक करती हुई (तथा)	आसिच्य	१०.	भिगोती हुई
दीनम्	५.	अनाथ (समझ कर)	विपिने	२.	उस वन में
अबन्धुम्	४.	असहाय (वे)	सुस्वरम्	११.	यह कह कर
विक्लव	७	विकलता के	प्ररुरोद	१२.	रोने लगी
अश्रुभिः ।	८.	आँसुओं से	सा ॥	१.	वह

श्लोकार्थ—वह उस वन में अपने को असहाय व अनाथ समझ कर शोक करती हुई तथा विकलता के आँसुओं से स्तनों को भिगोती हुई यह कह कर रोने लगी ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ राजर्षे इमामुदधिमेखलाम् ।
दस्युभ्यः क्षत्रबन्धुभ्यो बिभ्यतीं पातुमर्हसि ॥४८॥

पदच्छेद—

उत्तिष्ठ उत्तिष्ठ राजर्षे इमाम् उदधि मेखलाम् ।
दस्युभ्यः क्षत्रबन्धुभ्यः बिभ्यतीम् पातुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

उत्तिष्ठ	२.	उठिये	दस्युभ्यः	६.	लुटेरों (और)
उत्तिष्ठ	३.	उठिये	क्षत्रबन्धुभ्	७.	अधार्मिक क्षत्रियों से
राजर्षे	१.	हे राजर्षे	बिभ्यतीम्	८	डरती हुई
इमाम्	९.	इस पृथ्वी की	पातुम्	१०.	रक्षा
उदधि	४.	समुद्र से	अर्हसि ॥	११.	करें
मेखलाम् ।	५.	घिरी हुई			

श्लोकार्थ --हे राजर्षि ! उठिये-उठिये समुद्र से घिरी हुई तथा लुटेरों और अधार्मिक क्षत्रियों से डरती हुई इस पृथ्वी की रक्षा करें ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

एवं विलपती बाला विपिनेऽनुगता पतिम् ।
पतिता पादयोर्भर्तु रुदत्यश्रूण्यवर्तयत् ॥४९॥

पदच्छेद—

एवम् विलपती बाला विपिने अनुगता पतिम् ।
पतिता पादयोः भर्तुः रुदती अश्रूणि अवर्तयत् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	पतिता	९.	गिर कर
विलपती	६.	विलाप करने लगी	पादयोः	८.	चरणों में
बाला	५.	वह अबला	भर्तुः	७.	पति के
विपिने	३.	वन में	रुदती	१०.	रोती हुई
अनुगता	४.	आई हुई	अश्रूणि	११.	आँसुओं की धारा
पतिम् ।	२.	पति के साथ	अवर्तयत् ॥	१२.	बहाने लगी

श्लोकार्थ—इस प्रकार पति के साथ वन में आई हुई वह अबला विलाप करने लगी तथा पति के चरणों में गिरकर रोती हुई आँसुओं की धारा बहाने लगी ॥

पञ्चाशः श्लोकः

चितिं दारुमयीं चित्वा तस्यां पत्युः कलेवरम् ।
आदीप्य चानुमरणे विलपन्ती मनो दधे ॥५०॥

पदच्छेद—

चितिम् दारुमयीम् चित्वा तस्याम् पत्युः कलेवरम् ।
आदीप्य च अनुमरणे विलपन्ती मनः दधे ॥

शब्दार्थ—

चितिम्	२.	चिता	आदीप्य	८.	आग लगा कर
दारुमयीं	१.	लकड़ी से	च	७.	और (उसमें)
चित्वा	३.	बनाकर	अनुमरणे	११.	सती होने का
तस्याम्	४.	उस पर	विलपन्ती	९.	विलाप करती हुई
पत्युः	५.	पति के	मनः	१०.	मन में
कलेवरम् ।	६.	शव को (रख दिया)	दधे ॥	१२.	निश्चय किया

श्लोकार्थ—लकड़ी से चिता बना कर उस पर पति के शव को रख दिया और उसमें आग लगाकर विलाप करती हुई मन में सती होने का निश्चय किया ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

तत्र पूर्वतरः कश्चित्सखा ब्राह्मण आत्मवान् ।
सान्त्वयन् वल्गुना साम्ना तामाह रुदतीं प्रभो ॥५१॥

पदच्छेद—

तत्र पूर्वतरः कश्चित् सखा ब्राह्मणः आत्मवान् ।
सान्त्वयन् वल्गुना साम्ना ताम् आह रुदतीम् प्रभो ॥

शब्दार्थ—

तत्र	२.	वहाँ पर	सान्त्वयन्	१०.	समझाते हुये
पूर्वतरः	४.	पहले का	वल्गुना	८.	मनोहर
कश्चित्	३.	कोई	साम्ना	९.	वचनों से
सखा	५.	मित्र	ताम्	१२.	उस अबला को
ब्राह्मणः	७.	ब्राह्मण (आया और वह)	आह	१३.	बोला
आत्मवान् ।	६.	आत्मज्ञानी	रुदतीम्	११.	रोती हुई
			प्रभो ॥	१.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वहाँ पर उसका कोई पहले का मित्र आत्मज्ञानी ब्राह्मण आया और वह मनोहर वचनों से समझाते हुए रोती हुई उस अबला से बोला ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

ब्राह्मण उवाच—का त्वं कस्यासि को वायं शयानो यस्य शोचसि ।
जानासि किं सखायं मां येनाग्रे विचचर्थ ह ॥५२॥

पदच्छेद—

का त्वम् कस्य असि कः वा अयम् शयानः यस्य शोचसि ।
जानासि किम् सखायम् माम् येन अग्रे विचचर्थ ह ॥

शब्दार्थ—

का	२.	कौन	जानासि	१२.	जानती हो
त्वम्	१.	तुम	किम्	९.	क्या
कस्य असि	३.	किसकी पुत्री हो	सखायम्	११.	मित्र को
कः	८.	कौन (है)	माम्	१०.	मुझ
वा अयम्	४.	तथा यह	येन	१४.	जिसके साथ
शयानः	५.	सोया हुआ	अग्रे	१५.	पहले
यस्य	६.	जिसके प्रति	विचचर्थ	१६.	विचरण करती
शोचसि ।	७.	शोक कर रही हो	ह ॥	१७.	थी

श्लोकार्थ—तुम कौन हो किसकी पुत्री हो तथा यह सोया हुआ, जिसके प्रति शोक कर रही हो, कौन है ? क्या मुझ मित्र को जानती हो ? जिसके साथ पहले विचरण करती थी ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

अपि स्मरसि चात्मानमविज्ञातसखं सखे।
हित्वा मां पदमन्विच्छन् भौमभोगरतो गतः ॥५३॥

पदच्छेद—

अपि स्मरसि च आत्मानम् अविज्ञात सखम् सखे।
हित्वा माम् पदम् अन्विच्छन् भौम भोगरतः गतः ॥

शब्दार्थ—

अपि	२.	क्या	हित्वा	१४.	छोड़ कर
स्मरसि	६.	स्मरण है	माम्	१३.	मुझे
च	७.	जो तुम	पदम्	११.	स्थान
आत्मानम्	४.	अपने	अन्विच्छन्	१२.	खोजते हुये
अविज्ञात	३.	अविज्ञात नाम के	भौम	८.	पृथ्वी के
सखम्	५.	मित्र का	भोगरतः	९.	विषय भोगों में
सखे।	१.	हे मित्र तुम्हें	गतः ॥	१०.	आसक्त होकर
				१५.	चले गये थे

श्लोकार्थ—हे मित्र ! तुम्हें क्या अविज्ञात नाम के अपने मित्र का स्मरण है ? जो तुम पृथ्वी के विषय-भोगों में आसक्त होकर स्थान खोजते हुये मुझे छोड़कर चले गये थे ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

हंसावहं च त्वं चार्य सखायौ मानसायनौ।
अभूतामन्तरा वौकः सहस्रपरिवत्सरान् ॥५४॥

पदच्छेद—

हंसौ अहम् च त्वम् च आर्य सखायौ मानस अयनौ।
अभूताम् अन्तरा वा ओकः सहस्र परिवत्सरान् ॥

शब्दार्थ—

हंसौ	७.	हंस थे	अयनौ।	५.	रहने वाले
अहम्	२.	मैं	अभूताम्	१४.	साथ-साथ रहे
च त्वम्	३.	और तुम	अन्तरा	१०.	बिना
च	८.	तथा	वा	११.	ही वहाँ
आर्य	१.	हे आर्य	ओकः	९.	घर के
सखायौ	६.	एक दूसरे के मित्र	सहस्र	१२.	हजारों
मानस	४.	मानसरोवर में	परिवत्सरान् ॥	१३.	वर्षों तक

श्लोकार्थ—हे आर्य ! मैं और तुम मान सरोवर में रहने वाले एक दूसरे के मित्र हंस थे। तथा घर के बिना ही वहाँ हजारों वर्षों तक साथ-साथ रहे ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

स त्वं विहाय मां बन्धो गतो ग्राम्यमतिर्महीम् ।
विचरन् पदमद्राक्षीः कयाचिन्निर्मितं स्त्रिया ॥५५॥

पदच्छेद—

स: त्वम् विहाय माम् बन्धो गतः ग्राम्य मतिः महीम् ।
विचरन् पदम् अद्राक्षीः कयाचित् निर्मितम् स्त्रिया ॥

शब्दार्थ—

स: त्वम्	२.	वह तुम	महीम् ।	८.	पृथ्वी पर
विहाय	४.	छोड़कर	विचरन्	९.	घूमते हुये (तुमने)
माम्	३.	मुझे	पदम्	१०.	एक स्थान
बन्धो	१.	हे मित्र	अद्राक्षीः	१४.	देखा था
गतः	५.	चले गये	कयाचित्	११.	किसी
ग्राम्य	६.	विषयों में (तुम्हारी)	निर्मितम्	१३.	बनाया गया
मतिः	७	आसक्ति होने से	स्त्रिया ।	१२.	स्त्री के द्वारा

श्लोकार्थ—हे मित्र ! वह तुम मुझे छोड़कर चले गये । विषयों में तुम्हारी आसक्ति होने से पृथ्वी पर घूमते हुये तुमने एक स्थान किसी स्त्री के द्वारा बनाया गया देखा था ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

पञ्चारामं नवद्वारमेकपालं त्रिकोष्ठकम् ।
षट्कुलं पञ्चविपणं पञ्चप्रकृति स्त्रीधवम् ॥५६॥

पदच्छेद—

पञ्च आरामम् नव द्वारम् एक पालम् त्रिकोष्ठकम् ।
षट् कुलम् पञ्चविपणम् पञ्च प्रकृति स्त्रीधवम् ॥

शब्दार्थ—

पञ्च	१.	उस पुरी में पाँच	षट्	८.	छः
आरामम्	२.	बगीचे	कुलम्	९.	वैश्य कुल
नव	३.	नौ	पञ्च	१०.	पाँच
द्वारम्	४.	दरवाजे थे	विपणम्	११.	बाजार
एक	५.	एक	पञ्च	१२.	पाँच
पालम्	६.	रक्षक	प्रकृति	१३.	कारण (और)
त्रिकोष्ठकम् ।	७.	तीन परकोटे	स्त्री	१५.	एक स्त्री थी
			धवम् ॥	१४.	उसकी स्वामिनी

श्लोकार्थ—उस पुरी में पाँच बगीचे नौ दरवाजे थे । एक रक्षक, तीन परकोटे, छः वैश्य कुल, पाँच बाजार, पांच कारण और उसकी स्वामिनी एक स्त्री थी ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

पञ्चेन्द्रियार्था आरामा द्वारः प्राणा नव प्रभो ।
तेजोऽबन्नानि कोष्ठानि कुलमिन्द्रियसंग्रहः ॥५७॥

पदच्छेद—

पञ्च इन्द्रिय अर्थाः आरामाः द्वारः प्राणाः नव प्रभो ।
तेजः अप् अन्नानि कोष्ठानि कुलम् इन्द्रिय संग्रहः ॥

शब्दार्थ—

पञ्च	२.	पांच	प्रभो ।	१.	हे महाराज
इन्द्रिय	३.	इन्द्रियों के	तेजः अप्	९.	तेज जल
अर्थाः	४.	विषय ही	अन्नानि	१०.	अन्न (ये)
आरामाः	५.	बगीचे हैं	कोष्ठानि	११.	परकोटे हैं
द्वारः	८.	दरवाजे हैं	कुलम्	१४.	वैश्य कुल हैं
प्राणः	७.	प्राण हैं	इन्द्रिय	१२.	ज्ञानेन्द्रिय और मन का
नव	६.	नव	संग्रह ॥	१३.	समूह ही

श्लोकार्थ—हे महाराज ! पाँच इन्द्रियों के विषय ही बगीचे हैं। नव प्राण दरवाजे हैं। तेज, जल, अन्न ये परकोटे हैं। ज्ञानेन्द्रिय और मन का समूह ही वैश्य कुल है ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

विपणस्तु क्रियाशक्तिर्भूतप्रकृतिरव्यया ।
शक्त्यधीशः पुमांस्त्वत्र प्रविष्टो नावबुध्यते ॥५८॥

पदच्छेद—

विपणः तु क्रिया शक्तिः भूत प्रकृतिः अव्यया ।
शक्ति अधीशः पुमान् तु अत्र प्रविष्टः न अवबुध्यते ॥

शब्दार्थ—

विपणः	३.	बाजार है	शक्ति	८.	बुद्धि
तु	४.	तथा	अधीशः	९.	स्वामिनी है
क्रिया	१.	कर्म	पुमान्	१३.	पुरुष (अपने को)
शक्तिः	२.	इन्द्रियां ही	तु	१०.	तथा
भूत	५.	पंच महाभूत	अत्र	११.	इस पुरी में
प्रकृतिः	७.	कारण हैं	प्रविष्टः	१२.	प्रवेश करके
अव्यया ।	६.	अविनाशी	न अवबुध्यते ॥	१४.	भूल जाता है

श्लोकार्थ—कर्मेन्द्रियाँ ही बाजार है; तथा पंच महाभूत अविनाशी कारण है। बुद्धि स्वामिनी है तथा इस पुरी में प्रवेश करके पुरुष अपने को भूल जाता है ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

तस्मिंस्त्वं रामया स्पृष्टो रममाणोऽश्रुतस्मृतिः ।
तत्सङ्गादीदृशीं प्राप्तो दशां पापीयसीं प्रभो ॥५९॥

पदच्छेद—

तस्मिन् त्वम् रामया स्पृष्टः रममाणः अश्रुत स्मृतिः ।
तत्सङ्गादीदृशीं प्राप्तः दशां पापीयसीम् प्रभो ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	२. उस पुरी में	तत्	९. उसी के
त्वम्	३. तुम	सङ्गात्	१०. संङ्ग से
रामया	४. स्त्री के	ईदृशीम्	१४. इस प्रकार
स्पृष्टः	५. वश में होकर	प्राप्तः	१४. प्राप्त हुये हो
रममाणः	६. रमण करते हुये	दशाम्	१३. दुर्दशा को
अश्रुत	८. भूल गये थे	पापीयसीम्	१२. कष्टमयी
स्मृतिः ।	७. अपने स्वरूप को	प्रभो ॥	१. हे महाराज

श्लोकार्थ—हे महाराज ! उस पुरी में तुम स्त्री के वश में होकर रमण करते हुये अपने स्वरूप को भूल गये थे । उसी के सङ्ग से इस प्रकार कष्टमयी दुर्दशा को प्राप्त हुये हो ॥

षष्टितमः श्लोकः

न त्वं विदर्भदुहिता नायं वीरः सुहृत्तव ।
न पतिस्त्वं पुरञ्जन्या रुद्धो नवमुखे यया ॥६०॥

पदच्छेद—

न त्वम् विदर्भ दुहिता नायम् वीरः सुहृत् तव ।
न पतिः त्वम् पुरञ्जन्याः रुद्धः नव मुखे यया ॥

शब्दार्थ—

न त्वम्	१. नहीं तुम	न	९. नहीं
विदर्भ	२. विदर्भ राज की	पतिः	१२. पति थे
दुहिता	३. पुत्री हो	त्वम्	१०. तुम
न	४. नहीं	पुरञ्जन्याः	११. पुरञ्जनी के
अयम्	५. यह	रुद्धः	१६. रोक रखा था
वीरः	६. वीर (मलयध्वज)	नव	१४. नौ
सुहृत्	८. पति है	मुखे	१५. दरवाजों वाली पुरी में
तव ।	७. तुम्हारा	यया ॥	१३. जिसने तुम्हें

श्लोकार्थ—नहीं तुम विदर्भ राज की पुत्री हो । नहीं यह वीर मलयध्वज तुम्हारा पति है । नहीं तुम पुरञ्जनी के पति थे, जिसने तुम्हें नौ दरवाजों वाली पुरी में रोक रखा था ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

माया ह्येषा मया सृष्टा यत्पुमांसं स्त्रियं सतीम् ।
मन्यसे नोभयं यद्वै हंसौ पश्यावयोर्गतिम् ॥६१॥

पदच्छेद— माया हि एषा मया सृष्टा यत् पुमांसम् स्त्रियम् सतीम् ।
मन्यसे न उभयम् यद् वै हंसो पश्य आवयोः गतिम् ॥

शब्दार्थ—

माया	४.	माया है	मन्यसे	९.	मानते हो (किन्तु)
हि	३.	ही	न	११.	नहीं हो
एषा	१.	यह	उभयम्	१०.	दोनों ही
मया सृष्टा	२.	मेरे द्वारा रचित	यद् वै	१२.	क्योंकि (हम दोनों ही)
यत्	५.	जो तुम अपने को	हंसो	१३.	हस हैं
पुमांसम्	६.	पुरुष (और)	पश्य	१६.	समझो
स्त्रियः	८.	स्त्री	आवयोः	१४.	हम दोनों का
सतीम् ।	७.	श्रेष्ठ	गतिम् ॥	१५.	स्वरूप

श्लोकार्थ—यह मेरे द्वारा रचित ही माया है । जो तुम अपने को पुरुष और श्रेष्ठ स्त्री मानते हो । किन्तु दोनों ही नहीं हो; क्योंकि हम दोनों ही हंस हैं । हम दोनों का स्वरूप समझो ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

अहं भवान्न चान्यस्त्वं त्वमेवाहं विचक्ष्व भोः ।
न नौ पश्यन्ति कवयश्छिद्रं जातु मनागपि ॥६२॥

पदच्छेद— अहम् भवान् न च अन्यः त्वम् एव अहम् विचक्ष्व भोः ।
न नौ पश्यन्ति कवयः छिद्रम् जातु मनाक् अपि ॥

शब्दार्थ—

अहम्	१.	मैं	भोः ।	९.	ऐ मित्र
भवान्	३.	आप	न	१७.	नहीं
न	५.	नहीं (हैं)	नौ	१२.	हम दोनों में
च	२.	और	पश्यन्ति	१८.	देखते हैं
अन्यः	४.	भिन्न	कवयः	११.	ज्ञानी जन
त्वम्	७.	तुम हो और	छिद्रम्	१६.	भेद
त्वम् एव	८.	तुम ही (मैं हूँ)	जातु	१३.	कभी
अहम्	६.	मैं	मनाक्	१४.	थोड़ा
विचक्ष्व	१०.	ऐसा समझो	अपि ॥	१५.	भी

श्लोकार्थ—मैं और आप भिन्न नहीं हैं । मैं तुम हो और तुम ही मैं हूं । ऐ मित्र ! ऐसा समझो । ज्ञानी जन हम दोनों में कभी थोड़ा भी भेद नहीं देखते हैं ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

यथा पुरुष आत्मानमेकमादर्शचक्षुषोः
द्विधाभूतमवेक्षेत तथैवान्तरमावयोः ॥६३॥

पदच्छेद—

यथा पुरुषः आत्मानम् एकम् आदर्श चक्षुषोः ।
द्विधा भूतम् अवेक्षेत तथैव अन्तरम् आवयोः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	द्विधा	७.	दो
पुरुषः	२.	पुरुष	भूतम्	८.	प्रकार का
आत्मानम्	४.	अपनी छाया को	अवेक्षेत	९.	देखता है
एकम्	३.	एक	तथैव	१०.	उसी प्रकार
आदर्श	५.	दर्पण में (और)	अन्तरम्	१२.	भेद है
चक्षुषोः ।	६.	दूसरे के नेत्र में	आवयोः ॥	११.	हम दोनों में

श्लोकार्थ—जैसे पुरुष एक अपनी छाया को दर्पण में और दूसरे के नेत्र में दो प्रकार का देखता है । उसी प्रकार हम दोनों में भेद है ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

एवं स मानसो हंसो हंसेन प्रतिबोधितः ।
स्वस्थस्तद्व्यभिचारेण नष्टामाप पुनः स्मृतिम् ॥६४॥

पदच्छेद—

एवम् सः मानसः हंसः हंसेन प्रतिबोधितः ।
स्वस्थः तद् व्यभि चारेण नष्टाम् आप पुनः स्मृतिम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	स्वस्थः	७.	अपने में स्थित होकर
सः	३.	उस	तद्	८.	ईश्वर के
मानसः	४.	मन के	व्यभिचारेण	९.	वियोग से
हंसः	५.	हंस (जीव को)	नष्टाम्	१०.	खोई हुई
हंसेन	२.	ईश्वर ने	आप	१३.	प्राप्त कर लिया
प्रतिबोधितः ॥	६.	समझाया (जिससे वह)	पुनः	१२.	फिर
			स्मृतिम् ॥	११.	स्मरण शक्ति को

श्लोकार्थ—इस प्रकार ईश्वर ने उस मन के हंस जीव को समझाया । जिससे वह अपने में स्थित होकर ईश्वर के वियोग से खोई हुई स्मरण शक्ति को प्राप्त कर लिया ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

बर्हिष्मन्नेतदध्यात्मं पारोक्ष्येण प्रदर्शितम् ।
यत्परोक्षप्रियो देवो भगवान् विश्वभावनः ॥६५॥

पदच्छेद—

बर्हिष्मन् एतद् अध्यात्मम् पारोक्ष्येण प्रदर्शितम् ।
यत् परोक्षप्रियः देवः भगवान् विश्व भावनः ॥

शब्दार्थ—

बर्हिष्मन्	१. हे प्राचीनबर्हि		परोक्ष	११.	परोक्ष वर्णन के
एतद्	२. इस		प्रियः	१२.	प्रेमी हैं
अध्यात्मम्	३. आत्मज्ञान को		देवः	१०.	श्री हरि
पारोक्ष्येण	४. परोक्ष रूप से		भगवान्	९.	भगवान्
प्रदर्शितम् ।	५. तुम्हें बताया		विश्व	७.	संसार के
यत्	६ क्योंकि		भावनः ॥	८.	रचयिता

श्लोकार्थ—हे प्राचीनबर्हि ! इस आत्मज्ञान को परोक्ष रूप से तुम्हें बताया, क्योंकि संसार के रचयिता भगवान् श्री हरि परोक्ष वर्णन के प्रेमी हैं ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पुरञ्जनोपाख्याने अष्टाविंशः अध्यायः ॥२८॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

एकोनत्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

प्राचीनबर्हिरुवाच—भगवंस्ते वचोऽस्माभिर्न सम्यगवगम्यते ।
कवयस्तद्विजानन्ति न वयं कर्ममोहिताः ॥१॥

पदच्छेद— भगवन् ते वचः अस्माभिः न सम्यग् अवगम्यते ।
कवयः तद् विजानन्ति नः वयम् कर्म मोहिताः ॥

शब्दार्थ—

भगवन्	१.	हे देवर्षे	कवयः	९.	ज्ञानीजन ही
ते	३.	आपकी	तद्	८.	उसे
वचः	४.	बात को	विजानन्ति	१०.	जानते हैं
अस्माभिः	२.	हम	न	१४.	नहीं (जानते है)
न	६.	नहीं	वयम्	१३.	हम लोग (तो)
सम्यग्	५.	भली प्रकार से	कर्म	११.	सांसारिक कर्मों से
अवगम्यते ।	७.	समझ पा रहे हैं	मोहिताः ॥	१२.	मोहित

श्लोकार्थ—हे देवर्षे ! हम आपकी बात को भली प्रकार से नहीं समझ पा रहे हैं । उसे ज्ञानीजन ही जानते हैं । सांसारिक कर्मों से मोहित हम लोग तो नहीं जानते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

नारद उवाच—पुरुषं पुरञ्जनं विद्याद्यद् व्यनक्त्यात्मनः पुरम् ।
एकद्वित्रिचतुष्पादं बहुपादमपादकम् ॥२॥

पदच्छेद— पुरुषम् पुरञ्जनम् विद्यात् यत् व्यनक्ति आत्मनः पुरम् ।
एकद्वि त्रि चतुष्पादम् बहु पादम् अपादकम् ॥

शब्दार्थ—

पुरुषम्	१.	जीव को	एक	६.	एक
पुरञ्जनम्	२.	पुरञ्जन	द्वि	७.	दो
विद्यात्	३.	समझना चाहिये	त्रिः	८.	तीन
यत्	४.	जो	चतुष्पादम्	९.	चार पैर का
व्यनक्ति	१४.	स्वीकार करता है	बहु	१०.	अनेक
आत्मनः	५.	अपने लिये	पादम्	११.	पैर का (या)
पुरम् ।	१३.	शरीर	अपादकम् ॥	१२.	बिना पैर का

श्लोकार्थ—जीव को पुरञ्जन समझना चाहिये जो अपने लिये एक, दो, तीन, चार पैर का, अनेक पैर का या बिना पैर का शरीर स्वीकार करता है ॥

तृतीयः श्लोकः

योऽविज्ञाताहृतस्तस्य पुरुषस्य सखेश्वरः ।
यन्न विज्ञायते पुम्भिर्नामभिर्वा क्रियागुणैः ॥३॥

पदच्छेद—

यः अविज्ञात आहृतः तस्य पुरुषस्य सखा ईश्वरः ।
यत् न विज्ञायते पुम्भिःनामभिः वा क्रिया गुणैः ॥

शब्दार्थ—

यः	४.	जो	यत्	८.	जिसे
अविज्ञात	५.	अविज्ञात नाम से	न	१४.	नहीं
आहृतः	६.	कहा गया है (वह)	विज्ञायते	१५.	जान सकता है
तस्य	१.	उस	पुम्भिः	९.	जीव
पुरुषस्य	२.	जीव का	नामभिः	१३.	नामों से
सखा	३.	मित्र	वा	१२.	अथवा
ईश्वरः।	७.	ईश्वर है	क्रिया	१०.	कर्म से
			गुणैः ॥	११.	गुणों से

श्लोकार्थ—उस जीव का मित्र जो अविज्ञात नाम से कहा गया है; वह ईश्वर है । जिसे जीव कर्म से गुणों से अथवा नामों से नहीं जान सकता है ॥

चतुर्थः श्लोकः

यदा जिघृक्षन् पुरुषः कार्त्स्न्येन प्रकृतेर्गुणान् ।
नवद्वारं द्विहस्ताङ्घ्रि तत्रामनुत साध्विति ॥४॥

पदच्छेद—

यदा जिघृक्षन् पुरुषः कार्त्स्न्येन प्रकृतेः गुणान् ।
नव द्वारम् द्विहस्त अङ्घ्रि तत्र अमनुत साधु इति ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	द्वारम्	९.	दरवाजों वाले
जिघृक्षन्	६.	भोगना चाहा (तब)	द्विहस्तम्	१०.	दो हाथ (और)
पुरुषः	२.	जीव ने	अङ्घ्रिम्	११.	दो पैर वाले शरीर को
कार्त्स्न्येन	३.	सभी प्रकार के	तत्र	७.	उन शरीरों में
प्रकृतेः	४.	प्रकृति के	अमनुत	१४.	माना
गुणान् ।	५.	विषयों को	साधु	१२.	ठीक है
नव	८.	नौ	इति ॥	१३.	ऐसा

श्लोकार्थ—जब जीव ने सभी प्रकार के प्रकृति के विषयों को भोगना चाहा, तब उन शरीरों में नौ दरवाजे वाले तथा दो हाथ और दो पैर वाले शरीर को ठीक है ऐसा माना ॥

पञ्चमः श्लोकः

बुद्धिं तु प्रमदां विद्यान्ममाहमिति यत्कृतम् ।
यामधिष्ठाय देहेऽस्मिन् पुमान् भुङ्क्तेऽक्षभिर्गुणान् ॥५॥

पदच्छेद—

बुद्धिम् तु प्रमदाम् विद्यात् मम अहम् इति यत् कृतम् ।
याम् अधिष्ठाय देहे अस्मिन् पुमान् भुङ्क्ते अक्षभिः गुणान् ॥

शब्दार्थ—

बुद्धिम्	३.	बुद्धि अथवा माया	याम्	१०.	जिसके
तु	२.	तो	अधिष्ठाय	११.	सहारे
प्रमदाम्	१.	उस स्त्री को	देहे	१३.	शरीर में
विद्यात्	४.	जानना चाहिये	अस्मिन्	१२.	इस
मम	७.	मेरा	पुमान्	१४	जीव
अहम्	६	मैं (और)	भुङ्क्ते	१७.	भोगता है
इति	८.	इस प्रकार का भेद	अक्षभिः	१५.	इन्द्रियों से
यत्	५.	जिसके कारण	गुणान् ॥	१६.	विषयों को
कृतम् ।	९.	होता है (तथा)			

श्लोकार्थ—उस स्त्री को तो बुद्धि अथवा माया जानना चाहिये। जिसके कारण, मैं और मेरा इस प्रकार का भेद होता है। तथा जिसके सहारे इस शरीर में जीव इन्द्रियों के विषयो को भोगता है ॥

षष्ठः श्लोकः

सखाय इन्द्रियगणा ज्ञानं कर्म च यत्कृतम् ।
सख्यस्तद्वृत्तयः प्राणः पञ्चवृत्तिर्यथोरगः ॥६॥

पदच्छेद—

सखायः इन्द्रियगणाः ज्ञानम् कर्म च यत् कृतम् ।
सख्यः तद् वृत्तयः प्राणः पञ्चवृत्तिः यथा उरगः ॥

शब्दार्थ—

सखायः	२.	मित्र है	सख्यः	१०.	सखियाँ हैं
इन्द्रियगणः	१.	इन्द्रिय समूह ही	तद्	८.	उन इन्द्रियों की
ज्ञानम्	४.	ज्ञान	वृत्तयः	९.	शक्तियाँ ही
कर्म	६.	कर्म	प्राणः	१३.	प्राण वायु
च	५.	और	पञ्चवृत्तिः	१२.	पांच वृत्ति वाला
यत्	३.	जिसके द्वारा (जीव)	यथा	११.	तथा
कृतम् ।	७.	करता है	उरगः ॥	१४.	पांच फन वाला सर्प है

श्लोकार्थ—इन्द्रिय समूह ही मित्र है जिसके द्वारा जीव ज्ञान और कर्म करता है। उन इन्द्रियों की शक्तियाँ ही सखियाँ हैं। तथा पाँचवृत्ति वाला प्राण वायु ही पाच फन वाला सर्प है ॥

सप्तमः श्लोकः

बृहद्बलं मनो विद्यादुभयेन्द्रियनायकम् ।
पञ्चालाः पञ्च विषया यन्मध्ये नवखं पुरम् ॥७॥

पदच्छेद—

बृहद् बलम् मनः विद्यात् उभय इन्द्रिय नायकम् ।
पञ्चालाः पञ्च विषयाः यद् मध्ये नवखम् पुरम् ॥

शब्दार्थ—

बृहद्	५.	महान्	पञ्चालाः	१४.	पाञ्चाल देश है
बलम्	६.	बली (ग्यारहवाँ योद्धा)	पञ्च	१२.	शब्दादि पाँच
मनः	४.	मन को	विषयाः	१३.	विषय ही
विद्यात्	७.	समझना चाहिये	यद्	८.	जो (मन)
उभय	१.	ज्ञान और कर्म (दोनों प्रकार की)	मध्ये	११.	बीच में रहता है
इन्द्रिय	२.	इन्द्रियों के	नवखम्	९.	नौ द्वारों वाले
नायकम् ।	३.	नेता	पुरम् ॥	१०.	शरीर के

श्लोकार्थ—ज्ञान और कर्म दोनों प्रकार की इन्द्रियों के नेता मन को महान् बली ग्यारहवाँ योद्धा समझना चाहिये । जो मन नौ द्वारों वाले शरीर के बीच में रहता है । शब्दादि पाँच विषय ही पाञ्चाल देश हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

अक्षिणी नासिके कर्णौ मुखं शिश्नगुदाविति ।
द्वे द्वे द्वारौ बहिर्याति यस्तदिन्द्रियसंयुतः ॥८॥

पदच्छेद—

अक्षिणी नासिके कर्णौ मुखम् शिश्न गुदौ इति ।
द्वे द्वे द्वारौ बहिः याति यः तद् इन्द्रिय संयुतः ॥

शब्दार्थ—

अक्षिणी	१.	दोनों आँख	द्वे-द्वे	४.	दो-दो
नासिके	२.	दोनों नाक	द्वारौ	५.	दरवाजे हैं (तथा)
कर्णौ	३.	दोनों कान (ये)	बहिः	१३.	बाहर
मुखम्	६.	मुख	याति	१४.	जाता है
शिश्न	७.	जननेन्द्रिय (और)	यः तद्	१०.	जिससे जीव उस मन
गुदौ	८.	गुदा	इन्द्रिय	११.	इन्द्रिय के
इति ।	९.	ये (तीन दरवाजे हैं)	संयुतः ॥	१२.	साथ

श्लोकार्थ—दोनों आँख, दोनों नाक, दोनों कान ये दो-दो दरवाजे हैं, तथा मुख, जननेन्द्रिय और गुदा ये तीन दरवाजे हैं । जिससे जीव उस मन इन्द्रिय के साथ बाहर जाता है ॥

नवमः श्लोकः

अक्षिणी नासिके आस्यमिति पञ्च पुरः कृताः ।
दक्षिणा दक्षिणः कर्ण उत्तरा चोत्तरः स्मृतः ॥९॥

पदच्छेद— अक्षिणी नासिके आस्यम् इति पञ्च पुरः कृताः ।
दक्षिणा दक्षिणः कर्णः उत्तरा च उत्तरः स्मृतः ॥

शब्दार्थ—

अक्षिणी	१.	दोनों आंख	दक्षिणा	१०.	दक्षिण दिशा का
नासिके	२.	दोनों नाक (और)	दक्षिणः	८.	दाहिना
आस्यम्	३	मुख	कर्णः	९.	कान
इति	४	ये	उत्तरा	१३.	उत्तर दिशा का दरवाजा
पञ्च	५.	पांच	च	११.	और
पुरः	६.	पूर्व दिशा के	उत्तरः	१२.	बांया कान
कृताः ।	७	दरवाजे हैं	स्मृतः ॥	१४.	कहा गया है

श्लोकार्थ—दोनों आंख, दोनों नाक और मुख ये पूर्व दिशा के दरवाजे हैं । दाहिना कान दक्षिण दिशा का और बांया कान उत्तर दिशा का दरवाजा कहा गया है ॥

दशमः श्लोकः

पश्चिमे इत्यधोद्वारौ गुदं शिश्नमिहोच्यते ।
खद्योताऽऽविर्मुखी चात्र नेत्रे एकत्र निर्मिते ।
रूपं विभ्राजितं ताभ्यां विचष्टे चक्षुषेश्वरः ॥१०॥

पदच्छेद— पश्चिमे इति अधः द्वारौ गुदम् शिश्नम् इह उच्यते ।
खद्योता आविर्मुखी च अत्र नेत्रे एकत्र निर्मिते ।
रूपम् विभ्राजितम् ताभ्याम् विचष्टे चक्षुषा ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

पश्चिमे	५.	पश्चिम दिशा में	अत्र	७.	इसमें
इति अधः	३.	ये नीचे के	नेत्रे	१२.	दोनों आंखें हैं
द्वारौ	४.	दो दरवाजे	एकत्र निर्मिते	११.	एक जगह बनाई गई
गुदम् शिश्नम्	२.	गुदा (और) जननेन्द्रिय	रूपम्	१०.	(वह) रूप
इह	१.	यहां	विभ्राजितम्	१८.	विभ्राजित देश है
उच्यते ।	६.	बताये गये हैं	ताभ्याम्	१४.	उन दोनों
खद्योता	८.	खद्योता	विचष्टे	१६.	देखता है
आविर्मुखी	१०.	आविर्मुखी (नाम से)	चक्षुषा	१५.	नेत्रों से
च	९.	और	ईश्वरः ॥	१३.	जिसे जीव

श्लोकार्थ—यहां गुदा और जननेन्द्रिय दो नीचे के दरवाजे पश्चिम दिशा में बताये गये हैं । इसमें खद्योता और आविर्मुखी नाम से एक जगह बनाई गयी दोनों आंखें हैं । जिसे जीव उन दोनों नेत्रों से देखता है । रूप विभ्राजित देश है ॥

एकादशः श्लोकः

नलिनी नालिनी नासे गन्धः सौरभ उच्यते ।
घ्राणोऽवधूतो मुख्यास्यं विपणो वाग्रसविद्रसः ॥११॥

पदच्छेद—

नलिनी नालिनी नासे गन्धः सौरभः उच्यते ।
घ्राणः अवधूतः मुख्य आस्यम् विपणः वाक् रसवित् रसः ॥

शब्दार्थ—

नलिनी	२.	नलिनी (और)	अवधूत	८.	अवधूत नामक मित्र है
नालिनी	३.	नालिनी नाम से (तथा)	मुख्य	१०.	प्रधान है
नासे	१.	दोनों नासा छिद्र	आस्यम्	९.	उसमें मुख
गन्धः	४.	गन्ध को	विपणः	१२.	विपण नाम का (तथा)
सौरभः	५.	सौरभ देश	वाक्	११.	वाणी
उच्यते ।	६.	कहा गया है	रसवित्	१४.	रसज्ञ नाम का मित्र है
घ्राणः	७.	घ्राणेन्द्रिय	रसः॥	१३.	रसनेन्द्रिय

श्लोकार्थ—दोनों नासा छिद्र नलिनी और नालिनी नाम से तथा गन्ध को सौरभ देश कहा गया है। घ्राणेन्द्रिय अवधूत नामक मित्र है। उसमें मुख प्रधान है वाणी विपण नाम का मित्र है। तथा रसनेन्द्रिय रसज्ञ नाम का मित्र है ॥

द्वादशः श्लोकः

आपणो व्यवहारोऽत्र चित्रमन्धो बहूदनम् ।
पितृहूर्दक्षिणः कर्ण उत्तरो देवहूः स्मृतः ॥१२॥

पदच्छेद—

आपणः व्यवहारः अत्र चित्रम् अन्धः बहूदनम् ।
पितृहूः दक्षिणः कर्णः उत्तरः देवहूः स्मृतः ॥

शब्दार्थ—

आपणः	३.	बाजार है (तथा)	पितृहूः	८.	पितृहू नाम से
व्यवहारः	२.	वाणी का व्यवहार ही	दक्षिणः	७.	दाहिना
अत्र	१.	यहाँ	कर्णः	८.	कान
चित्रम्	४.	अनेक प्रकार का	उत्तरः	१०.	बाँया कान
अन्धः	५.	अन्न	देवहूः	११.	देवहू नाम से
बहूदनम् ।	६.	बहूदन देश है	स्मृतः॥	१२.	कहा गया है

श्लोकार्थ—यहाँ वाणी का व्यवहार ही बाजार है तथा अनेक प्रकार का अन्न बहूदन देश है। दाहिना कान पितहू नाम से बाँया कान देवहू नाम से कहा गया है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

प्रवृत्तं च निवृत्तं च शास्त्रं पञ्चालसंज्ञितम् ।
पितृयानं देवयानं श्रोत्राच्छ्रुतधराद्व्रजेत् ॥१३॥

पदच्छेद—

प्रवृत्तम् च निवृत्तम् च शास्त्रम् पञ्चाल संज्ञितम् ।
पितृयानं देवयानम् श्रोत्रात् श्रुतधरात् व्रजेत् ॥

शब्दार्थ—

प्रवृत्तम्	१.	कर्म काण्ड	संज्ञितम् ।	६.	कहा गया है
च	२.	और	पितृयानम्	१०.	पितृ लोक (और)
निवृत्तम्	३.	संन्यास	देवयानम्	११.	देव लोक को
च	७.	जिनसे जीव	श्रोत्रात्	८.	कर्णेन्द्रिय रूप
शास्त्रम्	४.	शास्त्र	श्रुतधरात्	९.	श्रुतधर नाम के मित्र के साथ
पञ्चाल	५.	पाञ्चाल देश नाम से	व्रजेत् ॥	१२.	जाता है

श्लोकार्थ—कर्मकाण्ड और संन्यास शास्त्र पाञ्चाल देश नाम से कहा गया है । जिनसे जीव कर्णेन्द्रिय रूप श्रुतधर नाम के मित्र के साथ पितृलोक और देवलोक को जाता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

आसुरी मेढ्रमर्वाग्द्वार्व्यवायो ग्रामिणां रतिः ।
उपस्थो दुर्मदः प्रोक्तो निर्ऋतिर्गुद उच्यते ॥१४॥

पदच्छेद—

आसुरीम् मेढ्रम् अर्वाक् द्वाः व्यवायः ग्रामिणाम् रतिः ।
उपस्थः दुर्मदः प्रोक्तः निर्ऋतिः गुदः उच्यते ॥

शब्दार्थ—

आसुरी	२.	आसुरी नाम का	उपस्थः	८.	जननेन्द्रिय शक्ति
मेढ्रम्	१.	जननेन्द्रिय	दुर्मदः	९.	दुर्मद नाम से
अर्वाक्	३.	पश्चिमी	प्रोक्तः	१०.	कही गयी है (तथा)
द्वाः	४.	द्वार है	निर्ऋतिः	११.	निर्ऋति
व्यवायः	७.	देश है	गुदः	१२.	गुदा को
ग्रामिणाम्	६.	ग्रामक	उच्यते ॥	१३.	कहते हैं
रतिः ।	५.	स्त्री प्रसङ्ग			

श्लोकार्थ—जननेन्द्रिय आसुरी नाम का पश्चिमी द्वार है । स्त्री प्रसङ्ग ग्रामक देश है । जननेन्द्रिय शक्ति दुर्मद नाम से कही गयी है । तथा निर्ऋति गुदा को कहते हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

वैशसं नरकं पायुर्लुब्धकोऽन्धौ तु मे शृणु।
हस्तपादौ पुमांस्ताभ्यां युक्तो याति करोति च ॥१५॥

पदच्छेद— वैशसम् नरकम् पायुः लुब्धकः अन्धौ तु मे शृणु।
हस्तपादौ पुमान् ताभ्याम् युक्तः याति करोति च ॥

शब्दार्थ—

वैशसम्	१. वैशस नाम का देश	हस्त	९. (वे) हाथ (और)
नरकम्	२. नरक है	पादौ	१०. पैर हैं
पायुः	३. गुदा इन्द्रिय	पुमान्	११. जीव
लुब्धकः	४. लुब्धक नाम मित्र है	ताभ्याम्	१२. उन्हीं के
अन्धौ	५. दोनों अन्धों का रहस्य	युक्त	१३. सहारे
तु	६. अब	याति	१४. कहीं जाता है
मे	७. मुझसे	करोति	१६. काम करता है
शृणु।	८. सुनो	च ॥	१५. और

श्लोकार्थ—वैशस नाम का देश नरक है, गुदा इन्द्रिय लुब्धक नामक मित्र है। दोनों अन्धों का रहस्य अब मुझसे सुनो। वे हाथ और पैर हैं। जीव उन्हीं के सहारे कहीं जाता है और काम करता है ॥

षोडशः श्लोकः

अन्तःपुरं च हृदयं विषूचिर्मन उच्यते।
तत्र मोहं प्रसादं वा हर्षं प्राप्नोति तद्गुणैः ॥१६॥

पदच्छेद—

अन्तः पुरम् च हृदयम् विषूचिः मनः उच्यते।
तत्र मोहम् प्रसादम् वा हर्षम् प्राप्नोति तद्गुणैः ॥

शब्दार्थ—

अन्तः पुरम्	२. अन्तः पुर	मोहम्	१०. अज्ञान
च	३. और (उसमें रहने वाला)	प्रसादम्	११. प्रसन्नता
हृदयम्	१. हृदय को	वा	१२. अथवा
विषूचिः	४. विषूचि नाम के सेवक को	हर्षम्	१३. हर्ष को
मनः	५. मन	प्राप्नोति	१४. प्राप्त करता है
उच्यते।	६. कहा गया है	तद्	८. जीव मन के
तत्र	७. उस अन्तः पुर में	गुणैः ॥	९. तीनों गुणों के कारण

श्लोकार्थ—हृदय को अन्तः पुर और उसमें रहने वाले विषूचि नाम के सेवक को मन कहा गया है। उस अन्तः पुर में जीव मन के तीनों गुणों के कारण अज्ञान, प्रसन्नता, अथवा हर्ष को प्राप्त करता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

यथा यथा विक्रियते गुणाक्तो विकरोति वा।
तथा तथोपद्रष्टाऽऽत्मा तद्वृत्तीरनुकार्यते ॥१७॥

पदच्छेद— यथा यथा विक्रियते गुण आक्तः विकरोति वा।
तथा तथा उपद्रष्टा आत्मा तद् वृत्तीः अनुकार्यते ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	तथा	१०.	वैसे
यथा	२.	जैसे बुद्धि	तथा	११.	वैसे
विक्रियते	३.	विकार को प्राप्त होती है	उपद्रष्टा	६.	साक्षी (होने पर भी)
गुण	६.	उसके गुणों में	आत्मा	८.	जीवात्मा
आक्तः	७.	लिप्त हुआ	तद्	१२.	उस बुद्धि के
विकरोति	५.	विकार उत्पन्न करती है	वृत्तीः	१३.	व्यवहार का
वा	४.	अथवा (इन्द्रियों में)	अनुकार्यते ॥	१४.	अनुकरण करता है

श्लोकार्थ—जैसे-जैसे बुद्धि विकार को प्राप्त होती है अथवा इन्द्रियों में विकार उत्पन्न करती है; उसके गुणों में लिप्त हुआ जीवात्मा साक्षी होने पर भी वैसे-वैसे उस बुद्धि के व्यवहार का अनुकरण करता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

देहो रथस्त्विन्द्रियाश्वः संवत्सररयोऽगतिः।
द्विकर्मचक्रस्त्रिगुणध्वजः पञ्चासुबन्धुरः ॥१८॥

पदच्छेद— देहः रथः तु इन्द्रिय अश्वः संवत्सर रयः अगतिः।
द्विकर्म चक्रः त्रिगुण ध्वजः पञ्च असु बन्धुरः ॥

शब्दार्थ—

देहः	१.	शरीर	द्विकर्म	८.	पुण्य-पापरूप दोनों कर्म
रथः	२.	रथ है	चक्रः	९.	दो चक्के हैं
तु	३.	तथा	त्रिगुण	१०.	सत्त्वादि तीनों गुण
इन्द्रिय अश्व	४.	इन्द्रियाँ ही घोड़े हैं	ध्वजः	११.	पताकायें हैं (और)
संवत्सर	६.	वर्ष (के समान)	पञ्च	१२.	पांच
रयः	७.	वेग वाला (है)	असु	१३.	प्राण ही
अगतिः।	५.	वह गति हीन है (फिर भी)	बन्धुरः ॥	१४.	डोरियाँ हैं

श्लोकार्थ—शरीर रथ है तथा इन्द्रियाँ ही घोड़े; वह गति हीन है फिर भी वर्ष के समान वेग वाला है। पुण्य-पापरूप दोनों कर्म दो चक्के हैं; सत्त्वादि तीनों गुण पताकायें हैं और पाँच प्राण ही डोरियाँ हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

मनोरश्मिर्बुद्धिसूतो हृन्नीडो द्वन्द्वकूबरः ।
पञ्चेन्द्रियार्थप्रक्षेपः सप्तधातुवरूथकः ॥१६॥

पदच्छेद—

मनः रश्मिः बुद्धि सूतः हृत् नीडः द्वन्द्व कूबरः ।
पञ्च इन्द्रिय अर्थ प्रक्षेपः सप्त धातु वरूथकः ॥

शब्दार्थ—

मनः	१.	मन (उसका)	कूबरः ।	८.	दो जुये हैं
रश्मिः	२.	लगाम	पञ्च	१०.	पांच
बुद्धि	३.	बुद्धि	इन्द्रिय	६.	इन्द्रियों के
सूतः	४.	सारथी है	अर्थ प्रक्षेपः	११.	विषय आयुध हैं (और)
हृत्	५.	हृदय	सप्त	१२.	सात
नीडः	६.	बैठने का स्थान है	धातु	१३	धातुयें
द्वन्द्व	७.	सुख और दुःखादि के जोड़े	वरूथकः ॥	१४.	सात आवरण हैं

श्लोकार्थ—मन उसका लगाम है, बुद्धि सारथी है, हृदय बैठने का स्थान है और सुख और दुःखादि के जोड़े दो जुये हैं। इन्द्रियों के पांच विषय आयुध हैं और सात धातुयें सात आवरण हैं॥

विंशः श्लोकः

आकूतिर्विक्रमो बाह्यो मृगतृष्णां प्रधावति ।
एकादशेन्द्रियचमूः पञ्चसूनाविनोदकृत् ॥२०॥

पदच्छेद—

आकूतिः विक्रमः बाह्यः मृग तृष्णाम् प्रधावति ।
एकादश इन्द्रिय चमूः पञ्चसूना विनोद कृत् ॥

शब्दार्थ—

आकूतिः	१.	पांच कर्मेन्द्रियां	एकादश	७.	ग्यारह
विक्रमः	२.	पांच प्रकार की गति है	इन्द्रिय	८.	इन्द्रियां
बाह्यः	३.	उस पर चढ़कर (जीव)	चमूः	६.	सेना है
मृग	४.	मिथ्या	पञ्चसूना	१०.	पांच ज्ञानेन्द्रियों से विषयों का भोग
तृष्णाम्	५.	विषयों की ओर	विनोद	११.	उसका शिकार
प्रधावति ।	६.	दौड़ता है	कृत् ॥	१२.	करना है

श्लोकार्थ—पांच कर्मेन्द्रियां पांच प्रकार की गति है। उस पर चढ़कर जीव मिथ्या विषयों की ओर दौड़ता है। ग्यारह इन्द्रियां सेना हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियों से विषयों का भोग उसका शिकार करना है।

एकविंशः श्लोकः

संवत्सरश्चण्डवेगः कालो येनोपलक्षितः ।
तस्याहानीह गन्धर्वा गन्धर्व्यो रात्रयः स्मृताः ।
हरन्त्यायुः परिक्रान्त्या षष्ठ्युत्तरशतत्रयम् ॥२१॥

पदच्छेद— संवत्सरः चण्डवेगः कालः येन उपलक्षितः ।
तस्य अहानि इह गन्धर्वाः गन्धर्व्यः रात्रयः स्मृताः ।
हरन्ति आयुः परिक्रान्त्या षष्टिउत्तर शत त्रयम् ॥

शब्दार्थ—

संवत्सरः	४.	वर्ष	गन्धर्व्यः	१०.	गन्धर्वियाँ
चण्डवेगः	५.	चण्ड वेग	रात्रयः	११.	रात्रि
कालः	२.	समय का	स्मृताः	१२.	कही गयी हैं (ये)
येन	१.	जिससे	हरन्ति	१८.	हरण करती हैं
उपलक्षितः ।	३.	ज्ञान होता है (वह)	आयुः	१७.	जीव की आयु का
तस्य	८.	उस वर्ष के	परिक्रान्त्या	१६.	चक्कर लगाकर
अहानि	९.	दिन (हैं तथा)	षष्टिउत्तर	१५.	साठ
इह	६.	यहाँ	शत	१४.	सौ
गन्धर्वाः	७.	गन्धर्व	त्रयम् ॥	१३.	तीन

श्लोकार्थ—जिससे समय का ज्ञान होता है वह वर्ष चण्डवेग है । यहाँ गन्धर्व उस वर्ष के दिन हैं तथा गन्धर्वियाँ रात्री कही गयी हैं ये । तीन सौ साठ चक्कर लगाकर जीव की आयु का हरण करती हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

कालकन्या जरा साक्षाल्लोकस्तां नाभिनन्दति ।
स्वसारं जगृहे मृत्युः क्षयाय यवनेश्वरः ॥२२॥

पदच्छेद— कालकन्या जरा साक्षात् लोकः ताम् न अभिनन्दति ।
स्वसारम् जगृहे मृत्युः क्षयाय यवनेश्वरः ॥

शब्दार्थ—

कालकन्या	१.	काल कन्या	अभिनन्दति ।	७.	पसन्द करते हैं
जरा	३.	वृद्धावस्था है	स्वसारम्	११.	उसे बहन के रूप में
साक्षात्	२.	साक्षात्	जगृहे	१२.	स्वीकार किया था
लोकः	४.	लोग	मृत्युः	८.	मृत्यु रूप
ताम्	५.	उसे	क्षयाय	१०.	लोकों के विनाश के लिये
न	६.	नहीं	यवनेश्वरः ॥	९.	यवनराज ने

श्लोकार्थ—काल कन्या साक्षात् वृद्धावस्था है । लोग उसे पसन्द नहीं करते हैं । मृत्यु रूप यवनराज ने लोकों का विनाश करने के लिये उसे बहन के रूप में स्वीकार किया था ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

आधयो व्याधयस्तस्य सैनिका यवनाश्चराः ।
भूतोपसर्गाशुरयः प्रज्वारो द्विविधो ज्वरः ॥२३॥

पदच्छेद—

आधयः व्याधयः तस्य सैनिकाः यवनाः चराः ।
भूत उपसर्ग.आशु रयः प्रज्वारः द्विविधः ज्वरः ॥

शब्दार्थ—

आधयः	१.	मानसिक क्लेश (और)	भूत	७.	प्राणियों को
व्याधयः	२.	शारीरिक क्लेश (ही)	उपसर्ग	८.	पीड़ा पहुँचाकर
तस्य	३.	उस यवनराज के	आशुरयः	६.	तत्काल मृत्यु का कारण
सैनिकाः	६.	सैनिक हैं	प्रज्वारः	१२.	प्रज्वार है
यवनाः	५.	यवन	द्विविधः	१०.	उष्ण और शीत दो प्रकार का
चराः ।	४.	विचरण करने वाले	ज्वरः ॥	११.	ज्वर

श्लोकार्थ—मानसिक क्लेश और शारीरिक क्लेश ही उस यवनराज के विचरण करने वाले सैनिक हैं। प्राणियों को पीड़ा पहुँचाकर तत्काल मृत्यु का कारण उष्ण और शीत दो प्रकार का ज्वर प्रज्वार है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवं बहुविधैर्दुःखैर्दैवभूतात्मसम्भवैः ।
क्लिश्यमानः शतं वर्षं देहे देही तमोवृतः ॥२४॥

पदच्छेद—

एवम् बहुविधैः दुःखैः दैव भूत आत्म सम्भवैः ।
क्लिश्यमानः शतम् वर्षम् देहे देही तमः वृतः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	क्लिश्यमानः	८.	कष्ट पाता हुआ
बहुविधैः	६.	अनेक प्रकार के	शतम्	११.	एक सौ
दुःखैः	७.	दुःखों से	वर्षम्	१२.	वर्षों तक
दैव	२.	देवताओं से	देहे	१०.	शरीर में
भूत	३.	जीवों (और)	देही	९.	जीव
आत्म	४.	शरीर में	तमः	१३.	अज्ञान में
सम्भवैः ।	५.	उत्पन्न होने वाले	वृतः ॥	१४.	पड़ा रहता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार देवताओं से जीवों और शरीर में उत्पन्न होने वाले अनेक प्रकार के दुःखों से कष्ट पाता हुआ जीव शरीर में एक सौ वर्षों तक अज्ञान में पड़ा रहता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

प्राणेन्द्रियमनोधर्मानात्मन्यध्यस्य निर्गुणः ।
शेते कामलवान्ध्यायन्ममाहमिति कर्मकृत् ॥२५॥

पदच्छेद—

प्राणइन्द्रिय मनः धर्मान् आत्मनि अध्यस्य निर्गुणः ।
शेते कामलवान्ध्यायन् मम अहम् इति कर्मकृत् ॥

शब्दार्थ—

प्राण	२.	प्राण	शेते	१५.	पड़ा रहता है
इन्द्रिय	३.	इन्द्रिय (और)	काम	१२.	भोगों का
मनः	४.	मन के	लवान्	११.	क्षुद्र
धर्मान्	५.	धर्मों को	ध्यायन्	१३.	चिन्तन करता हुआ (और)
आत्मनि	६.	अपने में	मम	९.	मेरा
अध्यास्य	७.	आरोपित करके	अहम्	८.	मैं (और)
निर्गुणः ।	१.	निर्गुण होने पर भी (जीव)	इति ॥	१०.	इस प्रकार से
			कर्मकृत् ॥	१४.	कर्मों को करता हुआ

श्लोकार्थ—निर्गुण होने पर भी जीव, प्राण, इन्द्रिय और मन के धर्मों को अपने में आरोपित करके मैं और मेरा इस प्रकार से क्षुद्र भोगों का चिन्तन करता हुआ और कर्मों को करता हुआ पड़ा रहता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

यदाऽऽत्मानमविज्ञाय भगवन्तं परं गुरुम् ।
पुरुषस्तु विषज्जेत गुणेषु प्रकृतेः स्वदृक् ॥२६॥

पदच्छेद—

यदा आत्मानम् अविज्ञाय भगवन्तम् परम् गुरुम् ।
पुरुषस्तु विषज्जेत गुणेषु प्रकृतेः स्व दृक् ॥

शब्दार्थ—

यदा	३.	जब-तक	पुरुषः	२.	जीव
आत्मानम्	४.	आत्म स्वरूप	तु	९.	तब-तक
अविज्ञाय	८.	नहीं जानता है	विषज्जेत	१२.	आसक्त रहता है
भगवन्तम्	७.	भगवान् को	गुणेषु	११.	विषयों में
परम्	५.	परम	प्रकृतेः	१०.	प्रकृति के
गुरुम् ।	६.	गुरु	स्वदृक् ॥	१.	स्वयं प्रकाश होकर (भी)

श्लोकार्थ—स्वयं प्रकाश होकर भी जीव जब-तक आत्म स्वरूप परम गुरु भगवान् को नहीं जानता है तब-तक प्रकृति के विषयों में आसक्त रहता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

गुणाभिमानी स तदा कर्माणि कुरुतेऽवशः ।
शुक्लं कृष्णं लोहितं वा यथाकर्माभिजायते ॥२७॥

पदच्छेद —

गुण अभिमानी सः तदा कर्माणि कुरुते अवशः ।
शुक्लम् कृष्णम् लोहितम् वा यथा कर्म अभिजायते ॥

शब्दार्थ—

गुण	१.	प्रकृति के सत्त्वादि गुणों में	शुक्लम्	६.	सात्त्विक
अभिमानी	२.	अभिमान रखने वाला	कृष्णम्	९.	तामस
सः	३.	वह जीव	लोहितम्	७.	राजस
तदा	४.	उस समय	वा	८.	अथवा
कर्माणि	१०.	अनेकों प्रकार के कर्म	यथा	१३.	अनुसार (नाना योनियों में)
कुरुते	११.	करता है (ततः)	कर्म	१२.	कर्मों के
अवशः :	५.	विवश होकर	अभिजायते ॥	१४.	उत्पन्न होता है

श्लोकार्थ—प्रकृति के सत्त्वादि गुणों में अभिमान रखने वाला वह जीव उस समय विवश होकर सात्त्विक, राजस अथवा तामस अनेकों प्रकार के कर्म करता है। ततः कर्मों के अनुसार नाना योनियों में उत्पन्न होता है ॥

विंशः श्लोकः

शुक्लात्प्रकाशभूयिष्ठाँल्लोकानाप्नोति कर्हिचित् ।
दुःखोदर्कान् क्रियायासांस्तमःशोकोत्कटान् क्वचित् ॥२८॥

पदच्छेद— शुक्लात् प्रकाश भूयिष्ठान् लोकान् आप्नोति कर्हिचित् ।
दुःख उदर्कान् क्रिया आयासान् तमः शोक उत्कटान् क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

शुक्लात्	१.	(कभी जीव) सात्त्विक कर्म से	उदर्कान्	९.	दायी लोकों को
प्रकाश	२.	ज्ञान	क्रिया	६.	काम की
भूयिष्ठान्	३.	बहुल	आयासान्	७.	थकावट वाले (तथा)
लोकान्	४.	स्वर्गादिलोकों को	तमः	१२.	अज्ञान (और)
आप्नोति	१४.	प्राप्त करता है	शोक	१३.	शोक (वाले लोकों को)
कर्हिचित् ।	५.	कभी (राजस कर्म से)	उत्कटान्	११.	अत्यधिक
दुःख	८.	दुःख	क्वचित् ॥	१०.	कभी (तामस कर्म से)

श्लोकार्थ—कभी जीव सात्त्विक कर्म से ज्ञान बहुल स्वर्गादिलोकों को, कभी राजस कर्म से काम की थकावट वाले तथा दुःखदायी लोकों को, कभी तामस कर्म से अत्यधिक अज्ञान और शोक वाले लोकों को प्राप्त करता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

क्वचित्पुमान् क्वचिच्च स्त्री क्वचिन्नोभयमन्धधीः ।
देवो मनुष्यस्तिर्यग्वा यथाकर्मगुणं भवः ॥२९॥

पदच्छेद—

क्वचित् पुमान् क्वचित् च स्त्री क्वचित् नोभयम् अन्धधीः ।
देवः मनुष्यः तिर्यक् वा यथा कर्म गुणम् भवः ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१०.	कभी	देवः	४.	देवयोनि
पुमान्	११.	पुरुष	मनुष्य ।	५.	मनुष्य योनि
क्वचित्	१२.	कभी	तिर्यक्	७.	पशु-पक्षी योनि में
च	१४.	और	वा	६.	अथवा
स्त्री	१३.	स्त्री	यथा	३.	अनुसार
क्वचित्	१५.	कभी	कर्म	१.	अपने कर्मों और
नोभयम्	१६.	नपुंसक (होता है)	गुणम्	२.	गुणों के
अन्धधीः ॥	९	अज्ञानान्ध बुद्धि वाला (जीव)	भवः ॥	८.	जन्म लेकर

श्लोकार्थ—अपने कर्मों के और गुणों के अनुसार देवयोनि, मनुष्य योनि अथवा पशु-पक्षी योनि में जन्म लेकर अज्ञानान्ध बुद्धि वाला जीव कभी पुरुष, कभी स्त्री और कभी नपुंसक होता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

क्षुत्परीतो यथा दीनः सारमेयो गृहं गृहम् ।
चरन् विन्दति यद्दिष्टं दण्डमोदनमेव वा ॥३०॥

पदच्छेद—

क्षुत् परीतः यथा दीनः सारमेयः गृहम् गृहम् ।
चरन् विन्दति यद् दिष्टम् दण्डम् ओदनम् एव वा ॥

शब्दार्थ—

क्षुत्	२.	भूख से	विन्दति	१४.	पाता है
परीतः	३.	व्याकुल	यद्	९.	अनुसार
यथा	१.	जैसे	दिष्टम्	८.	भाग्य के
दीनः	४.	बेचारा	दण्डम्	११.	दण्डा
सारमेयः	५.	कुत्ता	ओदनम्	१३.	भात
गृहम्-गृहम् ।	६.	घर-घर	एव	१०.	कभी
चरन्	७.	भटकता हुआ (अपने)	वा ॥	१२.	अथवा

श्लोकार्थ—जैसे भूख से व्याकुल बेचारा कुत्ता घर-घर भटकता हुआ अपने भाग्य के अनुसार कभी डण्डा अथवा भात पाता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तथा कामाशयो जीव उच्चावचपथा भ्रमन् ।
उपर्यधो वा मध्ये वा याति दिष्टं प्रियाप्रियम् ॥३१॥

पदच्छेद—

यथा काम आशयः जीवः उच्चावच पथा भ्रमन् ।
उपरिअधः वा मध्ये वा याति दिष्टम् प्रिय अप्रियम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	उसी प्रकार	अधः	१०.	नीचे
काम	३.	काम वासना से युक्त	वा	११.	अथवा
आशयः	२.	हृदय में	मध्ये	१२.	बीच के लोकों में
जीवः	४.	जीव	वा	८.	कभी
उच्चावच	५.	ऊपर नीचे	याति	१६.	भोगता है
पथा	६.	मार्ग से	दिष्टम्	१३.	भाग्यानुसार
भ्रमन्	७.	भटकता हुआ	प्रिय	१४.	सुख
उपरि	९.	ऊपर	अप्रियम् ॥	१५.	दुःख

श्लोकार्थ—उसी प्रकार हृदय में काम-वासना से युक्त जीव ऊपर-नीचे मार्ग से भटकता हुआ कभी ऊपर-नीचे अथवा बीच के लोकों में भाग्यानुसार सुख दुःख को भोगता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

दुःखेष्वेकतरेणापि दैवभूतात्महेतुषु ।
जीवस्य न व्यवच्छेदः स्याच्चेत्तत्तत्प्रतिक्रिया ॥३२॥

पदच्छेद—

दुःखेषु एकतरेण अपि दैव भूत आत्म हेतुषु ।
जीवस्य न व्यवच्छेदः स्यात् चेत् तत् तत् प्रति क्रिया ॥

शब्दार्थ—

दुःखेषु	५.	दुःखों में	जीवस्य	८.	जीव का (बिल्कुल)
एकतरेण	६.	किसी एक से	न	१०.	नहीं
अपि	७.	भी	व्यवच्छेदः	९.	छुटकारा
दैव	१.	देवता	स्यात्	११.	हो सकता है
भूत	२.	प्राणी (और)	चेत्	१२.	यदि
आत्म	३.	शरीर के	तत्	१३.	उससे (छुटकारा है तो)
हेतुषु ।	४.	कारण होने वाले	तत्	१५.	वह (केवल)
			प्रतिक्रिया ॥	१५.	क्षणिक चिकित्सा (है)

श्लोकार्थ—देवता, प्राणी और शरीर के कारण होने वाले दुःखों में से किसी एक से भी जीव का बिल्कुल छुटकारा नहीं हो सकता है । यदि उससे छुटकारा है तो वह केवल क्षणिक चिकित्सा है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यथा हि पुरुषो भारं शिरसा गुरुमुद्वहन् ।
तं स्कन्धेन स आधत्ते तथा सर्वाः प्रतिक्रियाः॥३३॥

पदच्छेद—

यथाहि पुरुषः भारम् शिरसा गुरुम् उद्वहन् ।
तम् स्कन्धेन सः आधत्ते तथा सर्वाः प्रतिक्रियाः ॥

शब्दार्थ—

यथा	२.	जिस प्रकार	तम्	९.	उसे
हि	१.	क्योंकि	स्कन्धेन	१०.	कन्धे पर
पुरुषः	३.	मनुष्य	सः	८.	वह (थक कर)
भारम्	६.	बोझ को	आधत्ते	११.	रख लेता है
शिरसा	४.	सिर पर	तथा	१२.	उसी प्रकार
गुरुम्	५.	भारी	सर्वाः	१३.	(ये) सारे
उद्वहन् ।	७.	ढोता हुआ	प्रतिक्रियाः ॥	१४.	उपाय हैं

श्लोकार्थ—क्योंकि जिस प्रकार मनुष्य सिर पर भारी बोझ को ढोता हुआ वह थककर उसे कन्धे पर रख लेता है; उसी प्रकार ये सारे उपाय हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

नैकान्ततः प्रतीकारः कर्मणां कर्म केवलम् ।
द्वयं ह्यविद्योपसृतं स्वप्ने स्वप्न इवानघ ॥३४॥

पदच्छेद— न एकान्ततः प्रतीकारः कर्मणाम् कर्म केवलम् ।
द्वयम् हि अविद्या उपसृतम् स्वप्ने स्वप्न इव अनघ ॥

शब्दार्थ—

न	९.	नहीं	हि	११.	क्योंकि
एकान्ततः	८.	सदा-सदा के लिये	अविद्या	१३.	अज्ञान से
प्रतीकारः	१०.	दूर हो सकता है	उपसृताम्	१४.	प्राप्त होते हैं
कर्मणाम्	७.	कर्म फल	स्वप्ने	३.	स्वप्न से
कर्म	६.	कर्मों से	स्वप्न	४.	स्वप्न नहीं मिटता है
केवलम् ।	५.	(उसी प्रकार)	इव	२.	जैसे
द्वयम्	१२.	ये दोनों ही	अनघ ॥	१.	शुद्ध चित्त हे राजन्

श्लोकार्थ—शुद्ध चित्त हे राजन् ! जैसे स्वप्न से स्वप्न नहीं मिटता है, उसी प्रकार केवल कर्मों से कर्म फल सदा-सदा के लिये नहीं दूर हो सकता । क्योंकि ये दोनों ही अज्ञान से प्राप्त होते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

अर्थे ह्यविद्यमानेऽपि संसृतिर्न निवर्तते ।
मनसा लिङ्गरूपेण स्वप्ने विचरतो यथा ॥३५॥

पदच्छेद—

अर्थे हि अविद्यमाने अपि संसृतिर्न निवर्तते ।
मनसा लिङ्ग रूपेण स्वप्ने विचरतः यथा ॥

शब्दार्थ—

अर्थे	८.	देहादि वस्तुओं के	मनसा	५.	मन से
हि	७.	उसी प्रकार	लिङ्ग	३.	सूक्ष्म
अविद्यमाने	९.	असत्य होने पर	रूपेण	४.	रूप
अपि	१०.	भी (अविद्या वश)	स्वप्ने	२.	स्वप्न में
संसृतिः	११.	जन्म-मरण का चक्र	विचरतः	६.	विचरते हुये (जीव के)
न	१२.	नहीं	यथा ॥	१.	जैसे
निवर्तते ।	१३.	मिटता है			

श्लोकार्थ—जैसे स्वप्न में सूक्ष्म रूप मन से विचरते हुये जीव को असत् पदार्थ सत्य दिखाई देते हैं, उसी प्रकार देहादि वस्तुओं के असत्य होने पर भी अविद्यावश जन्म-मरण का चक्र नहीं मिटता है ॥

षट् त्रिंशः श्लोकः

अथात्मनोऽर्थभूतस्य यतोऽनर्थपरम्परा ।
संसृतिस्तद्व्यवच्छेदो भक्त्या परमया गुरौ ॥३६॥

पदच्छेद—

अथ आत्मनः अर्थ भूतस्य यतः अनर्थ परम्परा ।
संसृतिः तद् व्यवच्छेदः भक्त्या परमया गुरौ ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसलिये	संसृतिः	६.	जन्म-मरण रूप
आत्मनः	५.	जीवात्मा को	तद्	९.	उससे
अर्थ	३.	सत्य	व्यवच्छेदः	१०.	छुटकारा
भूतस्य	४.	स्वरूप	भक्त्या	१३.	भक्ति से ही (हो सकता है)
यतः	२.	जिस अज्ञान के कारण	परमया	१२.	अनन्य
अनर्थ	८.	दुःख (मिलते हैं)	गुरौ ॥	११.	भगवान् श्री हरि की
परम्परा ।	७.	अनन्त			

श्लोकार्थ—इसलिये जिस अज्ञान के कारण सत्यस्वरूप जीवात्मा को जन्म-मरण रूप अनन्त दुःख मिलते हैं, उससे छुटकारा भगवान् श्री हरि की अनन्य भक्ति से ही हो सकता है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

वासुदेवे भगवति भक्तियोगः समाहितः ।
सध्रीचीनेन वैराग्यं ज्ञानं च जनयिष्यति ॥३७॥

पदच्छेद—

वासुदेवे भगवति भक्तियोगः समाहितः ।
सध्रीचीनेन वैराग्यम् ज्ञानम् च जनयिष्यति ॥

शब्दार्थ—

वासुदेवे	२.	वासुदेव में	सध्रीचीनेन	३.	अच्छी प्रकार से
भगवति	१.	भगवान्	वैराग्यम्	६.	वैराग्य को
भक्ति	५.	भक्ति	ज्ञानम्	७.	ज्ञान
योगः	६.	भाव	च	८.	और
समाहितः ।	४.	किया गया	जनयिष्यति ॥	१०.	उत्पन्न करता है

श्लोकार्थ—भगवान् वासुदेव में अच्छी प्रकार से किया गया भक्ति-भाव ज्ञान और वैराग्य उत्पन्न करता है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

सोऽचिरादेव राजर्षे स्यादच्युतकथाश्रयः ।
शृण्वतः श्रद्दधानस्य नित्यदा स्यादधीयतः ॥३८॥

पदच्छेद—

सः अचिरादेव राजर्षे स्यात् अच्युत कथा आश्रयः ।
शृण्वतः श्रद्दधानस्य नित्यदा स्यात् अधीयतः ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	वह भक्ति-भाव	आश्रयः ।	५.	सहारे
अचिरादेव	६.	तत्काल ही	शृण्वतः	१०.	श्रवण करने वाले (और)
राजर्षे	१.	हे राजर्षे	श्रद्दधानस्य	६.	श्रद्धा पूर्वक
स्यात्	७.	प्राप्त होता है (तथा)	नित्यदा	८.	प्रति दिन
अच्युत	३.	श्री हरि की	स्यात्	१२.	प्राप्त होता है
कथा	४.	कथा के	अधीयतः ॥	११.	पाठ करने वाले को भी

श्लोकार्थ—हे राजर्षे ! वह भक्ति-भाव श्री हरि की कथा के सहारे तत्काल ही प्राप्त होता है । तथा प्रतिदिन श्रद्धा पूर्वक श्रवण करने वाले और पाठ करने वाले को भी प्राप्त होता है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

यत्र भागवता राजन् साधवो विशदाशयाः ।
भगवद्गुणानुकथनश्रवणव्यग्रचेतसः ॥३९॥

पदच्छेद— यत्र भागवताः राजन् साधवो विशदाशयाः ।
भगवद् गुण अनुकथन श्रवण व्यग्र चेतसः ॥

शब्दार्थ—

यत्र	२.	जहाँ	भगवद्	३.	भगवान् की
भागवताः	११.	भगवद भक्त	गुण	४.	कथा को
राजन्	१.	हे राजन्	अनुकथन	५.	कहने में (और)
साधवः	१२.	साधुजन (रहते हैं)	श्रवण	६.	सुनने में
विशद्	९	उदार	व्यग्र	७.	तत्पर
आशयः ।	१०.	हृदय वाले	चेतसः ॥	८.	चित्त वाले

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जहाँ भगवान् की कथा को कहने में और सुनने में तत्पर चित्त वाले उदार हृदय वाले भगवद्-भक्त साधुजन रहते हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

तस्मिन्महन्मुखरिता मधुभिच्चरित्र-पीयूषशेषसरितः परितः स्रवन्ति ।
ता ये पिबन्त्यवितृषो नृप गाढकर्णैस्तान्नस्पृशन्त्यशनतृड्भयशोकमोहाः ॥४०॥

पदच्छेद—तस्मिन् महत् मुखरिताः मधुभित् चरित्र, पीयूष शेष सरितः परितः स्रवन्ति ।
ता ये पिबन्ति अवितृषः नृप गाढ कर्णैः तान् न स्पृशन्ति अशन तृड्भयशोक मोहाः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१.	उस स्थान पर	पिबन्ति	१५.	पान करते हैं
महन्	२.	महात्माओं के	अवितृषः	११.	अतृप्त चित्त से
मुखरिताः	३.	मुख से निकली हुई	नृप	९.	हे राजन्
मधुभित्	४.	मधुसूदन के	गाढ	१२.	सावधान होकर
चरित्र	५.	चरित्र रूपी	कर्णैः	१३.	कर्णेन्द्रियों से
पीयूष	६.	अमृत से	तान्	१६.	उन भक्तों को
शेष सरितः	७.	परिपूर्ण नदियाँ	न स्पृशन्ति	२०.	नहीं छू सकते हैं
परितः स्रवन्ति ।	८.	चारों ओर बहती हैं	असन तृड्	१७.	भूख प्यास
ताः	१४.	उसका	भय शोक	१८.	भय शोक (और)
ये	१०.	जो (भक्त जन)	मोहाः ॥	१९.	अज्ञान

श्लोकार्थ—उस स्थान पर महात्माओं के मुख से निकली हुई मधुसूदन भगवान् के चरित्र रूपी अमृत से परिपूर्ण नदियाँ चारों ओर बहती हैं । हे राजन् ! जो भक्त जन अतृप्त चित्त से सावधान होकर कर्णेन्द्रियों से उसका पान करते हैं । उन भक्तों को भूख, प्यास, भय शोक और अज्ञान नहीं छू सकते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

एतैरुपद्रुतो नित्यं जीवलोकः स्वभावजैः ।
न करोति हरेर्नूनं कथामृतनिधौ रतिम् ॥४१॥

पदच्छेद—

एतैः उपद्रुतः नित्यम् जीवलोकः स्वभावजैः ।
न करोति हरेः नूनम् कथा अमृत निधौ रतिम् ॥

शब्दार्थ—

एतैः	२.	इन विघ्नों से	हरेः	७.	भगवान् श्री हरि के
उपद्रुतः	४.	घिरा हुआ	नूनम्	६.	अवश्य
नित्यम्	३.	सदैव	कथा	८.	चरित्र रूप
जीवलोकः	५.	जीव समूह	अमृत	९.	अमृत के
स्वभावजैः ।	१	स्वभाव से होने वाले	निधौ	१०.	समुद्र में
न करोति	१२.	नहीं करता है	रतिम् ॥	११	अनुराग

श्लोकार्थ—स्वभाव से होने वाले इन विघ्नों से सदैव घिरा हुआ जीव समूह अवश्य भगवान् श्री हरि के चरित्र रूप अमृत के समुद्र में अनुराग नहीं करता है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

प्रजापतिपतिः साक्षाद्भगवान् गिरिशो मनुः ।
दक्षादयः प्रजाध्यक्षा नैष्ठिकाः सनकादयः ॥४२॥

पदच्छेद—

प्रजापति पतिः साक्षात् भगवान् गिरिशः मनुः ।
दक्ष आदयः प्रजा अध्यक्षाः नैष्ठिकाः सनक आदयः ॥

शब्दार्थ—

प्रजापति	२.	प्रजापतियों के	दक्षादय	७.	दक्ष आदि
पतिः	३.	स्वामी (ब्रह्मा जी)	प्रजा	८.	प्रजाओं के
साक्षात्	१.	साक्षात्	अध्यक्षाः	९.	रक्षक (और)
भगवान्	४.	भगवान्	नैष्ठिकाः	१२.	नैष्ठिक ब्रह्मचारी भी भगवान् को नहीं देख पाते हैं
गिरिशः	५.	शंकर	सनक	१०.	सनक
मनुः	६.	स्वायम्भुव मनु	आदयः ॥	११.	इत्यादि

श्लोकार्थ—साक्षात् प्रजापतियों के स्वामी ब्रह्मा जी, भगवान् शंकर, स्वायम्भुव मनु, दक्ष आदि प्रजाओं के रक्षक और सनक इत्यादि नैष्ठिक ब्रह्मचारी भी भगवान् को नहीं देख पाते हैं ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

मरीचिरत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः।
भृगुर्वसिष्ठ इत्येते मदन्ता ब्रह्मवादिनः ॥४३॥

पदच्छेद—

मरीचिः अत्रि अङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः।
भृगुः वसिष्ठः इति एते मदन्ताः ब्रह्म वादिनः ॥

शब्दार्थ—

मरीचिः	१. मरीचि		भृगुः	७.	भृगु (और)
अत्रि	२. अत्रि		वसिष्ठः	८.	वसिष्ठ
अङ्गिरसौ	३. अङ्गिरा		इति एते	६.	ये सब
पुलस्त्यः	४. पुलस्त्य		मदन्ताः	१२.	मुझ तक (भी नहीं पहुँच पाते हैं)
पुलहः	५. पुलह		ब्रह्म	१०.	ब्रह्म
क्रतुः।	६. क्रतु		वादिनः ॥	११.	ज्ञानी

श्लोकार्थ—मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु और वशिष्ठ ये सब ब्रह्म ज्ञानी भी मुझ तक नहीं पहुँच पाते हैं ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

अद्यापि वाचस्पतयस्तपोविद्यासमाधिभिः।
पश्यन्तोऽपि न पश्यन्ति पश्यन्तं परमेश्वरम् ॥४४॥

पदच्छेद—

अद्य अपि वाचस्पतयः तपः विद्या समाधिभिः।
पश्यन्तः अपि न पश्यन्ति पश्यन्तम् परमेश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

अद्य	१.	अभी	पश्यन्तः	७.	देखते हुये
अपि	२.	भी	अपि	८.	भी
वाचः	३.	वाणी के	न	११.	नहीं
पतयः	४.	स्वामी (ये ऋषिगण)	पश्यन्ति	१२.	देख पाते हैं
तपः विद्या	५.	तपस्या उपासना और	पश्यन्तम्	६.	सर्व साक्षी (उस)
समाधिभिः।	६.	समाधि के द्वारा	परमेश्वरम् ॥	१०.	परमात्मा को

श्लोकार्थ—अभी भी वाणी के स्वामी ये ऋषिगण तपस्या, उपासना और समाधि के द्वारा देखते हुये भी सर्वसाक्षी परमात्मा को नहीं देख पाते हैं ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

शब्दब्रह्मणि दुष्पारे चरन्त उरुविस्तरे ।
मन्त्रलिङ्गैर्व्यवच्छिन्नं भजन्तो न विदुः परम् ॥४५॥

पदच्छेद—

शब्द ब्रह्मणि दुष्पारे चरन्त उरु :विस्तरे ।
मन्त्रलिङ्गैः व्यवच्छिन्नम् भजन्तः न विदुः परम् ॥

शब्दार्थ—

शब्द ब्रह्मणि	३.	वेद का	व्यवच्छिन्नम्	६.	गुणों से युक्त इन्द्रादि देवता का
दुष्पारे	२.	अपार	भजन्तः	७.	भजन करते हुये भी
चरन्तः	४.	अध्ययन करते हैं (किन्तु)	न	९.	नहीं
उरुविस्तरे।	१.	वे ऋषिगण अत्यन्त विस्तृत और	विदुः	१०.	जानते हैं
मन्त्रलिङ्गैः	५.	उन मन्त्रों में वर्णित	परम् ॥	८.	परमात्मा को

श्लोकार्थ—वे ऋषिगण अत्यन्त विस्तृत और अपार वेद का अध्ययन करते हैं। किन्तु उन मन्त्रों में वर्णित गुणों से युक्त इन्द्रादि देवता का भजन करते हुये भी परमात्मा को नहीं जानते हैं ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

यदा यमनुगृह्णाति भगवानात्मभावितः ।
स जहाति मतिं लोके वेदे च परिनिष्ठिताम् ॥४६॥

पदच्छेद—

यदा यम् अनुगृह्णाति भगवान् आत्म भावितः ।
सः जहाति मतिम् लोके वेदे च परिनिष्ठिताम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	४.	जब	सः	७.	वह
यम्	५.	जिस पर	जहाति	१३.	छोड़ देता है
अनुगृह्णाति	६.	कृपा करते हैं (तब)	मतिम्	९.	व्यवहार
भगवान्	३.	भगवान् श्री हरि	लोके	८.	लौकिक
आत्म	१.	मन में बार-बार	वेदे	११.	वैदिक
भावितः।	२.	चिन्तन किये जाने पर	च	१०.	और
			परिनिष्ठिताम् ॥	१२.	कर्म की आस्था को

श्लोकार्थ—मन में बार-बार चिन्तन किये जाने पर भगवान् श्री हरि जब जिस पर कृपा करते हैं। तब वह लौकिक व्यवहार और वैदिक कर्म की आस्था को छोड़ देता है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

तस्मात्कर्मसु बर्हिष्मन्नज्ञानादर्थकाशिषु ।
मार्थदृष्टिं कृथाः श्रोत्रस्पर्शिष्वस्पृष्टवस्तुषु ॥४७॥

तस्मात् कर्मसु बर्हिष्मन् अज्ञानात् अर्थ काशिषु ।
मा अर्थ दृष्टिम् कृथाः श्रोत्र स्पर्शिषु अस्पृष्ट वस्तुषु ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	अर्थ	७.	पुरुषार्थ
कर्मसु	६.	वैदिक कर्मों में	दृष्टिम्	८.	बुद्धि
बर्हिष्मन्	२.	हे प्राचीन बर्हि	कृथाः	१०.	करो
अज्ञानात्	३.	अविद्या के कारण	श्रोत्र	११.	ये केवल कानों को
अर्थ	४.	सत्यरूप	स्पर्शिषु	१२.	प्रिय लगते हैं (किन्तु)
काशिषु ।	५.	भासित होने वाले	अस्पृष्ट	१४.	स्पर्श तक नहीं करते हैं
मा	९.	मत	वस्तुषु ॥	१३.	परमार्थ ब्रह्म वस्तु का

श्लोकार्थ—इसलिये हे प्राचीनबर्हि ! अविद्या के कारण सत्यरूप भासित होने वाले वैदिक कर्मों में पुरुषार्थ बुद्धि मत करो । ये केवल कानों को प्रिय लगते हैं; किन्तु परमार्थ ब्रह्म वस्तु का स्पर्श तक नहीं करते हैं ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

स्वं लोकं न विदुस्ते वै यत्र देवो जनार्दनः ।
आहुर्धूम्रधियो वेदं सकर्मकमतद्विदः ॥४८॥

स्वम् लोकम् न विदुः ते वै यत्र देवः जनार्दनः ।
आहुः धूम्रधियः वेदम् सकर्मक अतद् विदः ॥

शब्दार्थ—

स्वम्	२.	अपने स्वरूप भूत	जनार्दनः ।	९.	श्री हरि (रहते हैं)
लोकम्	३.	आत्मा को	आहुः	१४.	कहते हैं (अतः)
न	५.	नहीं	धूम्र	१०.	मलिन
विदुः	६.	जानते हैं	धियः	११.	बुद्धि वाले (वे लोग)
ते	१.	वे कर्म वादी लोग	वेदम्	१२.	वेद को
वै	४.	अवश्य ही	सकर्मक	१३.	कर्म का बोधक
यत्र	७.	जहाँ	अतद्	१५.	उन्हें नहीं
देवः	८.	भगवान्	विदुः	१६.	जान सकते हैं

श्लोकार्थ—वे कर्मवादी लोग अपने स्वरूप भूत आत्मा को अवश्य ही नहीं जानते हैं । जहाँ भगवान् श्री हरि रहते हैं । मलिन बुद्धि वाले वे लोग वेद को कर्म का बोधक कहते हैं, अतः उन्हें नहीं जान सकते हैं ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

आस्तीर्य दर्भैः प्रागग्रैः कार्त्स्न्येन क्षितिमण्डलम् ।
स्तब्धो बृहद्वधान्मानी कर्म नावैषि यत्परम् ।
तत्कर्म हरितोषं यत्सा विद्या तन्मतिर्यया ॥४९॥

पदच्छेद— आस्तीर्य दर्भैः प्राग् अग्रैः कार्त्स्न्येन क्षिति मण्डलम् ।
स्तब्धः बृहद् वधात् मानी कर्म न अवैषि यत् परम् ।
तत् कर्म हरितोषम् यत् सा विद्या तद्मतिः यया ॥

शब्दार्थ—

आस्तीर्य	५.	बिछाकर (यज्ञ में)	न अवैषि	१२.	नहीं जानते हो
दर्भैः	४.	कुशाओं को	यत् परम् ।	१०.	जो विद्यास्वरूप
प्राग् अग्रैः	३.	पूर्व दिशा में अग्रभाग वाले	तत् कर्म	१६.	वही कर्म है (तथा)
कार्त्स्न्येन	१.	तुम सम्पूर्ण	हरि	१४.	भगवान् श्री हरि की
क्षिति मण्डलम्	२.	पृथ्वी मण्डल पर	तोषम्	१५.	प्रसन्नता हो
स्तब्धः	९.	उद्यत (हो गये हो) अतः	यत्	१३.	जिससे
बृहद्	६.	बहुत से पशुओं का	सा विद्या	१७.	वही विद्या है
वधात्	७.	वध करने से	तद्	१९.	श्री हरि में
मानी	८.	अहंकारी (और)	मतिः	२०	बुद्धि (उत्पन्न हो)
कर्म	११.	निष्काम कर्म (है उसे)	यया ॥	१८.	जिससे

श्लोकार्थ—तुम सम्पूर्ण पृथ्वी मण्डल पर पूर्वदिशा में अग्र भाग वाले कुशाओं को बिछाकर यज्ञ में बहुत से पशुओं का वध करने से अहंकारी और उद्यत हो गये हो । अतः जो विद्यास्वरूप निष्काम कर्म है उसे नहीं जानते हो । जिससे भगवान् श्री हरि की प्रसन्नता हो वही कर्म है, तथा वही विद्या है; जिससे श्री हरि में बुद्धि उत्पन्न हो ॥

पञ्चाशः श्लोकः

हरिर्देहभृतामात्मा स्वयं प्रकृतिरीश्वरः ।
तत्पादमूलं शरणं यतः क्षेमो नृणामिह ॥५०॥

पदच्छेद— हरिः देहभृताम् आत्मा स्वयम् प्रकृतिः ईश्वरः ।
तत् पाद मूलम् शरणम् यतः क्षेमः नृणाम् इह ॥

शब्दार्थ—

हरिः	१.	श्री हरि	तत् पाद	७.	उनका चरण
देहभृताम्	२.	शरीरधारियों की	मूलम् शरणम्	८.	तल ही आश्रय है
आत्मा	३.	आत्मा	यतः	९.	जिससे
स्वयम्	५.	स्वतन्त्र	क्षेमः	१२.	कल्याण होता है
प्रकृतिः	६.	कारण है	नृणाम्	११.	मनुष्यों का
ईश्वरः ।	४.	नियामक (और)	इह ॥	१०.	यहाँ

श्लोकार्थ— श्री हरि शरीर धारियों की आत्मा, नियामक और स्वतन्त्र कारण हैं । उनका चरणतल ही आश्रय है । जिससे यहाँ मनुष्यों का कल्याण होता है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

स वै प्रियतमश्चात्मा यतो न भयमण्वपि ।
इति वेद स वै विद्वान् यो विद्वान् स गुरुर्हरिः ॥५१॥

पदच्छेद—

स: वै प्रियतम: च आत्मा यत: न भयम् अणु अपि ।
इति वेद स: वै विद्वान् य: विद्वान् स: गुरु: हरि: ॥

शब्दार्थ—

स: वै	५.	वे ही श्री हरि	इति	८.	जो मनुष्य ऐसा
प्रियतम:	६.	अत्यन्त प्रिय	वेद	९.	जानता है
च आत्मा	७.	और सबकी आत्मा हैं	स: वै विद्वान्	१०.	वह ही ज्ञानी है (और)
यत:	१.	जिनसे	य:	११.	जो
न	४.	नहीं होता	विद्वान्	१२.	ज्ञानी है
भयम्	३.	भय	स: गुरु:	१३.	वही गुरु रूप
अणु अपि ।	२.	थोड़ा भी	हरि: ॥	१४.	परमात्मा है

श्लोकार्थ—जिनसे थोड़ा भी भय नहीं होता वे ही श्री हरि अत्यन्त प्रिय और सबकी आत्मा हैं । जो मनुष्य ऐसा जानता है, वही ज्ञानी है, और जो ज्ञानी है वही गुरु रूप परमात्मा है ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

नारद उवाच—प्रश्न एवं हि संछिन्नो भवतः पुरुषर्षभ ।
अत्र मे वदतो गुह्यं निशामय सुनिश्चितम् ॥५२॥

पदच्छेद—

प्रश्न: एवम् हि संछिन्न: भवत: पुरुष ऋषभ ।
अत्र मे वदत: गुह्यम् निशामय सुनिश्चितम् ॥

शब्दार्थ—

प्रश्न:	५.	प्रश्न का	अत्र	७.	इस विषय में
एवंहि	३.	इस प्रकार	मे	९.	मेरा
संछिन्न:	६.	उत्तर हो गया	वदत:	१०.	वचन
भवत:	४.	आपके	गुह्यम्	१२.	गुप्त साधन है
पुरुष	१.	पुरुष	निशामय	११.	सुनो जो (एक)
ऋषभ ।	२.	श्रेष्ठ हे राजन्	सुनिश्चितम् ॥	८.	निश्चय किया हुआ

श्लोकार्थ—पुरुषश्रेष्ठ हे राजन् ! इस प्रकार आपके प्रश्न का उत्तर हो गया । इस विषय में निश्चय किया हुआ मेरा वचन सुनो जो एक गुप्त साधन है ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

क्षुद्रश्चरं सुमनसां शरणे मिथित्वा रक्तं षडङ्घ्रिगणसामसु लुब्धकर्णम् ।
अग्रे वृकानसुतृपोऽविगणय्य यान्तं पृष्ठे मृगय लुब्धकबाणभिन्नम् ॥५३॥

पदच्छेद—

क्षुद्रम् चरम् सुमनसाम् शरणे मिथित्वा रक्तम् षडङ्घ्रि गण सामसु लुब्धकर्णम् ।
अग्रे वृकान् असु तृपः अविगणय्य यान्तम् पृष्ठे मृगम् मृगय लुब्धक बाण भिन्नम् ॥

शब्दार्थ—

क्षुद्रम्	७.	छोटी-छोटी घास	अग्रे	१५.	उसके आगे
चरम्	८.	चर रहा है	वृकान्	१६.	भेड़िये खड़े हैं (तथा)
सुमनसाम्	२.	पुष्पों की	असु तृपः	१५.	प्राणों के प्यासे
शरणे	३.	वाटिका में (अपनी)	अविगणय्य	२१.	विचार नहीं कर रहा है
मिथित्वा	४.	हरिणी के साथ	यान्तम्	६.	विहार कर रहा है
रक्तम्	५.	अनुरक्त होकर	पृष्ठे	१७.	पीछे से
षडङ्घ्रि	१०.	भौंरों के	मृगम्	१.	एक मृग
गण	११.	समूह की	मृगय	२२.	उसकी दशा पर विचार करो
सामसु	१२.	मधुर गुञ्जार सुनने में	लुब्धक	१८.	एक व्याध ने
लब्ध	१३.	लगे हुये हैं	बाण	१९.	तीर का
कर्णम् ।	९.	उसके कान	भिन्नम् ॥	२०.	निशाना बनाया फिर भी (वह)

श्लोकार्थ—एक मृग पुष्पों की वाटिका में अपनी हरिणी के साथ अनुरक्त होकर विहार कर रहा है। छोटी-छोटी घास चर रहा है। उसके कान भौंरों के समूह की मधुर गुञ्जार सुनने में लगे हुये हैं। उसके आगे प्राणों के प्यासे भेड़िये खड़े हैं तथा पीछे से एक व्याध ने तीर का निशाना बनाया; फिर भी वह विचार नहीं कर रहा है। हे राजन्! उसकी दशा पर विचार करो॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

[अस्यार्थः]

सुमनस्सधर्माणां स्त्रीणां शरण आश्रमे पुष्पमधुगन्धवत्क्षुद्रतमं काम्यकर्मविपाकजं कामसुखलवं जैह्व्यौपस्थ्यादि विचिन्वन्तं मिथुनीभूय तदभिनिवेशितमनसं षडङ्घ्रिगणसामगीतवदतिमनोहरवनितादिजनालापेष्वतितरामतिप्रलोभितकर्णमग्रे वृकयूथवदात्मन आयुर्हरतोऽहोरात्रान्तान् काललवविशेषानविगणय्य गृहेषु विहरन्तं पृष्ठत एव परोक्षमनुप्रवृत्तो लुब्धकः कृतान्तोऽन्तःशरेण यमिह पराविध्यति तमिममात्मानमहो राजन् भिन्नहृदयं द्रष्टुमर्हसीति ॥५४॥

पदच्छेद—

सुमनः सधर्माणाम् स्त्रीणाम् शरणे आश्रमे पुष्पमधु गन्धवत् क्षुद्रतमम् काम्यकर्म विपाकजम् काम सुखलवम् जैह्व्य औपस्थ्या आदि विचिन्वन्तं मिथुनीभूय तद् अभिनिवेशित मनसम् षडङ्घ्रि गण सामगीतवत् अति मनोहर वनिता आदि जन आलापेषु अतितराम् अति प्रलोभित कर्णम् अग्रे वृकयूथवत् आत्मनः आयुः हरतः अहोरात्र अन्तान् काल लव विशेषान् अविगणय्य गृहेषु विहरन्तम् पृष्ठतः एव परोक्षम् अनुप्रवृत्तः लुब्धकः कृतान्तः अन्तः शरेण यम् इह पराविध्यति तम् इमम् आत्मानम् अहो राजन् भिन्न हृदयम् द्रष्टुम् अर्हसि इति ॥

शब्दार्थ—

सुमनः	१०.	पुष्पों के	कर्णम्	४२	उसमें तुम्हारे कान
सधर्माणाम्	११.	समान कोमल	अग्रे	४५.	तुम्हारे आगे
स्त्रीणाम्	१२.	स्त्रियों के	वृक	४६.	भेड़ियों के
शरणे	१४.	पुष्प वाटिका है	यूथ	४७.	झुन्ड के
आश्रमे	१३.	रहने का स्थान ही	वत्	४८.	समान
पुष्प	१५.	उसमें पुष्प के	आत्मनः	५४.	तुम्हारी
मधु	१६.	पराग (और)	आयुः	५५.	आयु का
गन्ध	१७.	सुगन्ध के	हरत	५६.	हरण कर रहा है
वत्	१८.	समान	अहोरात्र	५२.	दिन और रात के
क्षुद्रतमम्	१९.	अत्यन्त तुच्छ	अन्तान्	५३.	रूप में
काम्यकर्म	२०.	सकाम कर्मों के	काल	४९.	समय का
विपाकजम्	२१.	फल रूप में प्राप्त	लव	५१.	क्षण
काम सुख	२३.	वासना सुख का	विशेषान्	५०.	एक-एक
लवम्	२२.	क्षणिक	अविगणय्य	५७.	उस पर विचार न करके (तुम)
जैह्व्य	२४.	जीभ और	गृहेषु	५८.	गृहस्थाश्रम में

औपस्थ्य	२५.	जननेन्द्रिय	विहरन्तम्	५९.	विहार कर रहे हो
आदि	२६.	इत्यादि इन्द्रियों से	पृष्ठतः	६०.	तुम्हारे पीछे से
विचिन्वन्तम्	२७.	भोग करते हुये (तुम)	एव	६१.	ही
मिथुनीभूय	२८	स्त्रियोंसे घिरे हो (और)	परोक्षम्	६२.	छिप कर
तद्	२९.	उसमें	अनुप्रवृत्तः	६३.	प्रवेश किया हुआ
अभिनिवेशितम्	३१.	लगाकर रक्खे हो	लुब्धकः	६४.	प्राण का लोभी
मनसम्	३०.	मन को	कृतान्तः	६५.	काल
षडङ्घ्रि	३६.	भौंरों के	अन्तःशरेण	६६.	छिपे बाण से तुम्हें
गण	३७.	झुन्ड के	यम्	५.	तुम
सामगीत	३८.	मधुर गुञ्जार के	इह	७.	इस दशा पर
वत्	३९.	समान	पराविध्यति	६७.	वींध रहा है (जिससे)
अति	४०.	अत्यन्त	तम् इमम्	३.	वह मृग ४. तुम्हीं हो
मनोहर	४१.	मनोहर (लगती है)	आत्मानम्	६.	अपनी
वनिता	३२.	स्त्री	अहो	२.	खेद है कि
आदि	३३.	पुत्रादि	राजन्	१.	हे राजन् ! बर्हिष्मन्
जन	३४.	लोगों के साथ	भिन्न	६९.	विदीर्ण हो रहा है
आलापेषु	३५.	बातचीत (तुम्हें)	हृदयम्	६८.	तुम्हारा हृदय
अतितराम्	४३.	अत्यन्त	द्रष्टुम्	८.	विचार
अति प्रलोभित	४४.	आसक्त है	अर्हसि	९.	करो
			इति ॥	७०.	इस रूपक का यह तात्पर्य है ॥

श्लोकार्थ—हे राजन् ! बर्हिष्मन् ! खेद है कि वह मृग तुम्हीं हो। तुम अपनी इस दशा पर विचार करो। पुष्पों के समान कोमल स्त्रियों के रहने का स्थान ही पुष्पवाटिका है। उसमें पुष्प के पराग और और सुगन्ध के समान अत्यन्त तुच्छ सकाम कर्मों के फलरूप में प्राप्त क्षणिक वासना सुख का जीभ और जननेन्द्रिय इत्यादि इन्द्रियों से भोग करते हुये तुम स्त्रियों से घिरे हो और उसमें मन को लगाकर रक्खे हो। स्त्री, पुत्रादि लोगों के साथ बातचीत तुम्हें भौंरों के झुन्ड के मधुर गुञ्जार के समान अत्यन्त मनोहर लगती है। उसमें तुम्हारे कान अत्यन्त आसक्त हैं। तुम्हारे आगे भेड़िये के झुन्ड के समान समय का एक-एक क्षण दिन और रात के रूप में तुम्हारी आयु का हरण कर रहा है। उस पर विचार न करके तुम गृहस्थाश्रम में विहार कर रहे हो। तुम्हारे पीछे से ही छिपकर प्रवेश किया हुआ प्राण का लोभी काल छिपे बाण से तुम्हें वींध रहा है। जिससे तुम्हारा हृदय विदीर्ण हो रहा है। इस रूपक का यह ही तात्पर्य है ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

स त्वं विचक्ष्य मृगचेष्टितमात्मनोऽन्तश्चित्तं नियच्छ हृदि कर्णधुनीं च चित्ते ।
जह्यङ्गनाश्रममसत्तमयूथगाथं प्रीणीहि हंसशरणं विरम क्रमेण ॥५५॥

पदच्छेद—सः त्वम् विचक्ष्य मृग चेष्टितम् आत्मनः अन्तः चित्तम् नियच्छ हृदि कर्णधुनीम् च चित्ते ।
जहि अङ्गना आश्रमम् असत्तम यूथगाथम् प्रीणीहि हंस शरणम् विरम क्रमेण ॥

शब्दार्थ—

सः	१. सो		च	९.	और
त्वम्	२. तुम हे राजन्		चित्ते ।	१२.	मन में
विचक्ष्य	५. विचार करके		जहि	१८.	त्याग दो
मृग	३. हरिन की सी		अङ्गना आश्रमम्	१७.	गृहस्थाश्रम को
चेष्टितम्	४. दशा पर		असत्तम	१५.	कामी पुरुषों की
आत्मनः	६. अपने		यूथ	१४.	जिस समुदाय में
अन्तःचित्तम्	७. मन को		गाथम्	१६.	चर्चा होती है (उस)
नियच्छ	१३. रोको		प्रीणीहि	२१.	प्रसन्न करो (और)
हृदि	८. हृदय में		हंस शरणम्	२०.	जीवों के आश्रय श्री हरि को
कर्ण	११. काम की वृत्ति को		विरम	१९.	विरत हो जाओ
धुनीम्	१०. नदी के प्रवाह के समान		क्रमेण ॥	२२.	क्रमशः विषयों से

श्लोकार्थ—अतः हे राजन् ! तुम हरिन की-सी दशा पर विचार करके अपने मनको हृदय में और नदी के प्रवाह के समान काम की वृत्ति को मन में रोको । जिस समुदाय में कामी पुरुषों की चर्चा होती है उस गृहस्थाश्रम को त्याग दो । जीवों के आश्रय श्री हरि को प्रसन्न करो और क्रमशः विषयों से विरत हो जाओ ॥

षटपञ्चाशः श्लोकः

राजोवाच—श्रुतमन्वीक्षितं ब्रह्मन् भगवान् यदभाषत ।
नैतज्जानन्त्युपाध्यायाः किं न ब्रूयुर्विदुर्यदि ॥५६॥

पदच्छेद— श्रुतम् अन्वीक्षितम् ब्रह्मन् भगवान् यद् अभाषत ।
न एतद् जानन्ति उपाध्यायाः किम् न ब्रूयुः विदुः यदि ॥

शब्दार्थ—

श्रुतम्	५. मैंने सुना (और)		एतद्	८. इस आत्मज्ञान को
अन्वीक्षितम्	६. विचार किया		जानन्ति	१०. जानते हैं
ब्रह्मन्	१. हे देवर्षे		उपाध्यायाः	७. हमारे शिक्षक
भगवान्	२. आपने		किम् न	१३. क्यों नहीं
यद्	३. जो		ब्रूयुः	१४. बताते
अभाषत ।	४. कहा है (उसे)		विदुः	१२. जानते (होते तो)
न	९. नहीं		यदि ॥	११. यदि वे

श्लोकार्थ—हे देवर्षे ! आपने जो कहा है उसे मैंने सुना और विचार किया । हमारे शिक्षक इस आत्मज्ञान को नहीं जानते हैं । यदि वे जानते होते तो क्यों नहीं बताते ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

संशयोऽत्र तु मे विप्र संछिन्नस्तत्कृतो महान् ।
ऋषयोऽपि हि मुह्यन्ति यत्र नेन्द्रियवृत्तयः ॥५७॥

पदच्छेद—

संशयः अत्र तु मे विप्र संछिन्नः तत् कृतः महान् ।
ऋषयः अपि हि मुह्यन्ति यत्र न इन्द्रिय वृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

संशयः	७.	सन्देह	महान् ।	६.	महान्
अत्र	२.	इस आत्मा के विषय में	ऋषयः	१४.	ऋषिगण
तु	८.	तो	अपि	१५.	भी
मे	५.	मेरा	हि	१०.	क्योंकि
विप्र	१.	हे विप्रवर	मुह्यन्ति	१६.	मोहित होते हैं
संछिन्नः	९.	दूर कर दिया (है)	यत्र	११.	उस आत्मा के विषय में
तत्	३.	उपाध्यायों के कारण	न	१३.	नहीं (होती अतः)
कृतः	४.	उत्पन्न हुआ	इन्द्रिय वृत्तयः ॥	१२.	इन्द्रियों की गति

श्लोकार्थ—हे विप्रवर ! इस आत्मा के विषय में उपाध्यायों के कारण उत्पन्न हुआ मेरा महान् सन्देह तो दूर कर दिया है । क्योंकि उस आत्मा के विषय में इन्द्रियों की गति नहीं होती । अतः उसमें ऋषिगण भी मोहित होते हैं ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

कर्माण्यारभते येन पुमानिह विहाय तम् ।
अमुत्रान्येन देहेन जुष्टानि स यदश्नुते ॥५८॥

पदच्छेद— कर्माणि आरभते येन पुमान् इह विहाय तम् ।
अमुत्र अन्येन देहेन जुष्टानि सः यद् अश्नुते ॥

शब्दार्थ—

कर्माणि	४.	यज्ञादि कर्मों को	अमुत्र	९.	परलोक में
आरभते	५.	करता है	अन्येन	११.	दूसरे
येन	३.	जिस शरीर में	देहेन	१२.	शरीर से
पुमान्	२.	मनुष्य	जुष्टानि	१३.	कर्म फल का
इह	७.	इस संसार में	सः	१०.	वह
विहाय	८.	छोड़कर	यद्	१.	क्योंकि
तम् ।	६.	उस शरीर को	अश्नुते ॥	१४.	भोग करता है

श्लोकार्थ—क्योंकि मनुष्य जिस शरीर में यज्ञादि कर्मों को करता है, उस शरीर को इस संसार में छोड़कर परलोक में वह दूसरे शरीर से कर्म-फल का भोग करता है ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

इति वेदविदां वादः श्रूयते तत्र तत्र ह ।
कर्म यत्क्रियते प्रोक्तं परोक्षं न प्रकाशते ॥५९॥

पदच्छेद—

इति वेद विदाम् वादः श्रूयते तत्र तत्र ह ।
कर्म यत्क्रियते प्रोक्तम् परोक्षम् न प्रकाशते ॥

शब्दार्थ—

इति	४. ऐसा	कर्म	१०. कर्म
वेद	१. वेद	यत्	९. जो
विदाम्	२. ज्ञानियों का	क्रियते	११. किया जाता है (वह)
वादः	६. कथन	प्रोक्तम्	८. वेद विहित
श्रूयते	७. सुना जाता है (किन्तु)	परोक्षम्	१२. बाद में
तत्र तत्र	३. जगह-जगह पर	न	१३. नहीं
ह ।	५. ही	प्रकाशते ॥	१४. फल दे सकता है

श्लोकार्थ—वेद-ज्ञानियों का जगह-जगह पर ऐसा ही कथन सुना जाता है। किन्तु वेद विहित जो कर्म किया जाता है, वह बाद में फल नहीं दे सकता है ॥

षष्टितमः श्लोकः

नारद उवाच—येनैवारभते कर्म तेनैवामुत्र तत्पुमान् ।
भुङ्क्ते ह्यव्यवधानेन लिङ्गेन मनसा स्वयम् ॥६०॥

पदच्छेद—

येन एव आरभते कर्म तेन एव अमुत्र तत् पुमान् ।
भुङ्क्ते हि अव्यवधानेन लिङ्गेन मनसा स्वयम् ॥

शब्दार्थ—

येन एव	२. जिस	भुङ्क्ते	११. भोगता है
आरभते	६. आरम्भ करता है	हि	१२. क्योंकि (सूक्ष्म शरीर का)
कर्म	५. कर्म	अव्यवधानेन	१३. नाश नहीं होता है
तेन एव	८. उसी (शरीर से)	लिङ्गेन	४. लिङ्ग शरीर से
अमुत्र	७. परलोक में	मनसा	३. मन रूप
तत्	१०. उसके फल को	स्वयम् ॥	९. साक्षात् स्वयम्
पुमान् ।	१. मनुष्य		

श्लोकार्थ—मनुष्य जिस मनरूप लिङ्ग शरीर से कर्म आरम्भ करता है। परलोक में उसी शरीर से साक्षात् स्वयम् उसके फल को भोगता है। क्योंकि सूक्ष्म शरीर का नाश नहीं होता है ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

शयानमिममुत्सृज्य श्वसन्तं पुरुषो यथा।
कर्मात्मन्याहितं भुङ्क्ते तादृशेनेतरेण वा ॥६१॥

पदच्छेद—

शयानम् इमम् उत्सृज्य श्वसन्तम् पुरुषः यथा।
कर्म आत्मनि आहितम् भुङ्क्ते तादृशेन इतरेण वा ॥

शब्दार्थ—

शयानम्	२.	स्वप्न की	कर्म	१२.	कर्म फल को
इमम्	४.	इस	आत्मनि	१०.	मन में
उत्सृज्य	६.	छोड़ कर	आहितम्	११.	संस्कार रूप में स्थित
श्वसन्तम्	५.	जीवित शरीर को	भुङ्क्ते	१३.	भोगता है
पुरुषः	१.	मनुष्य	तादृशेन	७.	उसी प्रकार के
यथा।	३.	भांति	इतरेण	९.	दूसरे शरीर से
			वा ॥	८.	अथवा

श्लोकार्थ—मनुष्य स्वप्न की भांति इस जीवित शरीर को छोड़कर उसी प्रकार के अथवा दूसरे शरीर में संस्कार रूप में स्थित कर्म-फल को भोगता है ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

ममैते मनसा यद्यदसावहमिति ब्रुवन्।
गृह्णीयात्तत्पुमान् राद्धं कर्म येन पुनर्भवः ॥६२॥

पदच्छेद—

मम एते मनसा यद् यद् असौ अहम् इति ब्रुवन्।
गृह्णीयात् तत् पुमान् राद्धम् कर्म येन पुनः भवः ॥

शब्दार्थ—

मम	६.	मेरे हैं,	गृह्णीयात्	१२.	स्वीकार करता है
एते	५.	ये	तत्	९.	उनके
मनसा	३.	मन के द्वारा	पुमान्	२.	जीव
यद् यद्	४.	जिन-जिन (स्त्री-पुत्रादि के)	राद्धम्	१०.	किये हुये
असौ	१.	वह	कर्म	१३.	कर्म को
अहम्	७.	ये मैं हूं	येन	१४.	जिससे (उसका)
इति ब्रुवम्।	८.	ऐसा कहकर (मानता है (और)	पुनर्भवः ॥	११.	फिर से पुनर्जन्म होता है

श्लोकार्थ—वह जीव मन को द्वारा जिन-जिन स्त्री पुत्रादि को ये मेरे हैं ये मैं हूं ऐसा कह कर मानता है और उनके किये हुये कर्म को स्वीकार करता है उनके कारण उसका फिर से पुनर्जन्म होता है ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

यथानुमीयते चित्तमुभयैरिन्द्रियेहितैः ।
एवं प्राग्देहजं कर्म लक्ष्यते चित्तवृत्तिभिः ॥६३॥

पदच्छेद—

यथा अनुमीयते चित्तम् उभयैः इन्द्रिय ईहितैः ।
एवम् प्राग् देहजम् कर्म लक्ष्यते चित्त वृत्तिभिः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	एवम्	७.	वैसे ही
अनुमीयते	६.	अनुमान किया जाता है	प्राक् देहजम्	१०.	पूर्व जन्म के
चित्तम्	५.	मन का	कर्म	११.	कर्मों का
उभयैः	२.	ज्ञान और धर्म (दोनों प्रकार की)	लक्ष्यते	१२.	अनुमान (होता है)
इन्द्रिय	३.	इन्द्रियों के	चित्त	८.	मन के
ईहितैः ।	४.	व्यवहार से	वृत्तिभिः ॥	११.	व्यवहार से

श्लोकार्थ—जैसे ज्ञान और धर्म दोनों प्रकार की इन्द्रियों के व्यवहार से मन का अनुमान किया जाता है वैसे ही मन के व्यवहार से पूर्व जन्म के कर्मों का अनुमान होता है ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

नानुभूतं क्व चानेन देहेनादृष्टमश्रुतम् ।
कदाचिदुपलभ्येत यद्रूपं यादृगात्मनि ॥६४॥

पदच्छेद—

न अनुभूतम् क्व च अनेन देहेन अदृष्टम् अश्रुतम् ।
कदाचित् उपलभ्येत यद् रूपम् यादृक् आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

न	४.	नहीं	श्रुतम् ।	८.	सुना नहीं गया है
अनुभूतम्	५.	अनुभव किया गया	कदाचित्	१३.	कभी
क्व	३.	कहीं पर	उपलभ्येत	१४.	अनुभव हो सकता है
च	७.	और	यद्	१०.	उसका (भी)
अनेन	१.	इस	रूपम्	९.	और जो रूप है
देहेन	२.	शरीर से (जिसका)	यादृक्	११.	जो प्रकार है उसका
अदृष्टम्	६.	देखा नहीं गया	आत्मनि ॥	१२	मन में

श्लोकार्थ—इस शरीर से जिसका कहीं पर अनुभव नहीं किया गया, देखा नहीं गया और सुना नहीं गया है और जो रूप है उसका भी, जो प्रकार है उसका मन में कभी अनुभव हो सकता है ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

तेनास्य तादृशं राजँल्लिङ्गिनो देहसम्भवम् ।
अश्रुतस्वानुभूतोऽर्थो न मनः स्प्रष्टुमर्हति ॥६५॥

पदच्छेद—

तेन अस्य तादृशम् राजन् लिङ्गिनः देह सम्भवम् ।
अश्रुतस्व अननुभूतः अर्थः न मनः स्प्रष्टुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

तेन	४.	इस	अश्रुतस्व	८.	मानो (क्योंकि)
अस्य	२.	वासनामय	अननुभूतः	६.	अनुभव
तादृशम्	७.	उन अनुभवों से युक्त	अर्थः	११.	वस्तु की
राजन्	१.	हे राजन्	न	१०.	नहीं की गई
लिङ्गिनः	३.	जीव के	मनः	१२.	मन में
देह	५.	शरीर को	स्प्रष्टुम्	१३.	वासना नहीं
सम्भवम् ।	६.	पूर्व जन्म में	अर्हसि ॥	१४.	हो सकती है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वासनामय जीव के इस शरीर को पूर्व जन्म में उन अनुभवों से युक्त मानो, क्योंकि अनुभव नहीं की गई वस्तु की मन में वासना नहीं हो सकती है ।

षट्षष्टितमः श्लोकः

मन एव मनुष्यस्य पूर्वरूपाणि शंसति ।
भविष्यतश्च भद्रं ते तथैव न भविष्यतः ॥६६॥

पदच्छेद—

मनः एव मनुष्यस्य पूर्व रूपाणि शंसति ।
भविष्यतश्च भद्रं ते तथैव न भविष्यतः ॥

शब्दार्थ—

मनः	३.	मन	भविष्यतः	८.	होने वाले जन्म को
एव	४.	ही	च	६.	और
मनुष्यस्य	५.	जीव के	भद्रम्	२.	कल्याण हो
पूर्व	६.	पहले	ते	१.	हे राजन् तुम्हारा
रूपाणि	७.	जन्मों के (शरीर को)	तथैव	१०.	उसी प्रकार उसके
शंसति ।	१२.	बता देता है	न भविष्यतः ॥	११.	मोक्ष को भी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तुम्हारा कल्याण हो; मन ही जीव के पहले जन्मों के शरीर को तथा होने वाले जन्म को और उसी प्रकार उसके मोक्ष को भी बता देता है ॥

सप्तषष्टितमः श्लोकः

अदृष्टमश्रुतं चात्र क्वचिन्मनसि दृश्यते ।
यथा तथानुमन्तव्यं देशकालक्रियाश्रयम् ॥६७॥

पदच्छेद—

अदृष्टम् अश्रुतम् च अत्र क्वचित् मनसि दृश्यते ।
यथा तथा अनुमन्तव्यम् देशकाल क्रिया आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

अदृष्टम्	८.	न देखी	यथा	१२.	(उसे) जैसे
अश्रुतम्	१०.	न सुनी हुई बात	तथा	१३.	तैसे (निद्रादि दोष)
च	९.	और	अनुमन्तव्यम्	१४.	मानना चाहिये
अत्र	१.	इस	देश	४.	देश
क्वचित्	३.	कभी स्वप्नादि दशा में	काल	५.	काल (और)
मनसि	२.	मन में	क्रिया	६.	क्रिया से
दृश्यते ।	११.	दिखाई पड़ती है	आश्रयम् ॥	७.	सम्बन्धित

श्लोकार्थ—इस मन में देश, काल और क्रिया से सम्बन्धित न देखी और न सुनी हुई बात दिखाई पड़ती है । उसे जैसे तैसे निद्रादि दोष मानना चाहिये ॥

अष्टषष्टितमः श्लोकः

सर्वे क्रमानुरोधेन मनसीन्द्रियगोचराः ।
आयान्ति वर्गशो यान्ति सर्वे समनसो जनाः ॥६८॥

पदच्छेद—

सर्वे क्रम अनुरोधेन मनसि इन्द्रिय गोचराः ।
आयान्ति वर्गशः यान्ति सर्वे समनसः जनाः ॥

शब्दार्थ—

सर्वे	३.	सभी	आयान्ति	७.	आते हैं (और)
क्रम	१.	अपने योग के	वर्गशः	८.	भोग समाप्त होने पर
अनुरोधेन	२.	अनुसार	यान्ति	९.	चले जाते हैं
मनसि	६.	मन में	सर्वे	१०.	अतः सभी
इन्द्रिय	४.	इन्द्रियों के	समनसः	१२.	मन से युक्त हैं
गोचराः ।	५.	शब्दादि विषय	जनाः ॥	११.	जीव

श्लोकार्थ—अपने योग के अनुसार सभी इन्द्रियों के शब्दादि विषय मन में आते हैं और भोग समाप्त होने पर चले जाते हैं । अतः सभी जीव मन से युक्त हैं ॥

एकोनसप्ततितमः श्लोकः

सत्त्वैकनिष्ठे मनसि भगवत्पार्श्ववर्तिनि ।
तमश्चन्द्रमसीवेदमुपरज्यावभासते ॥६९॥

पदच्छेद—

सत्त्व एक निष्ठे मनसि भगवत् पार्श्व वर्तिनि ।
तमः चन्द्रमसि इव इदम् उपरज्य अव भासते ॥

शब्दार्थ—

सत्त्व	८. सत्त्वगुण में	तमः	४. राहु (दिखाई देने लगता है)
एक	७. एक मात्रा	चन्द्रमसि	२. चन्द्रमा के
निष्ठे	९. स्थित	इव	१. जैसे
मनसि	१०. मन में (कभी)	इदम्	११. यह संसार (भी दिखाई देता है)
भगवत्	५. वैसे ही भगवान् के	उपरज्य	३. प्रकाश से
पार्श्व वर्तिनि ।	६. ध्यान में मग्न (अतः)	अवभासते ॥	१२. दिखाई देता है

श्लोकार्थ—जैसे चन्द्रमा के प्रकाश से राहु दिखाई देने लगता है वैसे ही भगवान् के ध्यान में मग्न अतः एक मात्र सत्त्वगुण में स्थित मन में कभी यह संसार भी दिखाई देता है ॥

सप्ततितमः श्लोकः

नाहं ममेति भावोऽयं पुरुषे व्यवधीयते ।
यावद् बुद्धिमनोऽक्षार्थगुणव्यूहो ह्यनादिमान् ॥७०॥

पदच्छेद—

न अहम् मम इति भावः अयम् पुरुषे व्यवधीयते ।
यावत् बुद्धि मनः अक्ष अर्थः गुण व्यूहः हि अनादिमान् ॥

शब्दार्थ—

न	१५. नहीं	यावत्	१. जब-तक
अहम्	१०. मैं (और)	बुद्धि	२. बुद्धि
मम	११. मेरा	मनः	३. मन
इति	१२. इस प्रकार की	अक्ष अर्थ	४. इन्द्रिय विषय (और)
भावः	१४. भावना	गुण	५. सत्त्वादि गुणों का
अयम्	१३. यह	व्यूह	६. परिणाम
पुरुषे	९. जीव में	हि	८. तब-तक
व्यवधीयते ।	१६. समाप्त होता है	अनादिमान् ॥	७. सूक्ष्म शरीर रहता है

श्लोकार्थ—जब-तक बुद्धि, मन, इन्द्रिय, विषय और सत्त्वादि गुणों का परिणाम सूक्ष्म शरीर रहता है तब-तक जीव में मैं और मेरा इस प्रकार की यह भावना नहीं समाप्त होती है ॥

एकसप्ततितमः श्लोकः

सुप्तिमूर्च्छोपतापेषु प्राणायनविघाततः ।
नेहतेऽहमिति ज्ञानं मृत्युप्रज्वारयोरपि ॥७१॥

पदच्छेद—

सुप्ति मूर्च्छा उपतापेषु प्राणायन विघाततः ।
नेहते अहम् इति ज्ञानम् मृत्यु प्रज्वारयोः अपि ॥

शब्दार्थ—

सुप्ति	१.	प्रगाढ निद्रा	ते	१४.	होता है
मूर्च्छा	२.	मूर्च्छा	अहम्	९.	मैं और मेरा
उपतापेषु	३.	अत्यन्त दुःख	इति	१०.	ऐसा
प्राणायन	७.	इन्द्रियों की	ज्ञानम्	११.	भाव
विघाततः ।	८.	व्याकुलता के कारण	मृत्यु	४.	मृत्यु के समय (और)
न	१२.	नहीं	प्रज्वारयोः	५.	तीव्र ज्वर में
ईह	१३.	उत्पन्न	अपि ॥	६.	भी (जीव को)

श्लोकार्थ—प्रगाढ़ निद्रा, मूर्च्छा, अत्यन्त दुःख, मृत्यु के समय और तीव्र ज्वर में भी जीव को इन्द्रियों की व्याकुलता के कारण मैं और मेरा ऐसा भाव नहीं उत्पन्न होता है ॥

द्विसप्ततितमः श्लोकः

गर्भे बाल्येऽप्यपौष्कल्यादेकादशविधं तदा ।
लिङ्गं न दृश्यते यूनः कुह्वां चन्द्रमसो यथा ॥७२॥

पदच्छेद—

गर्भे बाल्येऽपि अपौष्कल्यादेकादशविधं तदा ।
लिङ्गं न दृश्यते यूनः कुह्वाम् चन्द्रमसः यथा ॥

शब्दार्थ—

गर्भे	९.	गर्भावस्था (और)	लिङ्गम्	८.	लिङ्ग शरीर
बाल्ये	१०.	बाल्यावस्था में	न	१३.	नहीं
अपि	११.	भी (इन्द्रियों की)	दृश्यते	१४.	दिखाई देता है
अपौष्कल्यात्	१२.	अपूर्णता के कारण	यूनः	५.	युवावस्था में (स्पष्ट प्रतीत) होने वाला
एकादश	६.	ग्यारह	कुह्वाम्	२.	अमावस में
विधम्	७.	तत्त्वों का	चन्द्रमसः	३.	चन्द्रमा (नहीं दिखाई देता है)
तदा ।	४.	उसी प्रकार	यथा ॥	१.	जैसे

श्लोकार्थ—जैसे अमावस में चन्द्रमा नहीं दिखाई देता है, उसी प्रकार युवावस्था में स्पष्ट प्रतीत होने वाला ग्यारह तत्त्वों का लिङ्ग शरीर गर्भावस्था और बाल्यावस्था में भी इन्द्रियों की अपूर्णता के कारण नहीं दिखाई देता है ॥

त्रिसप्ततितमः श्लोकः

अर्थे ह्यविद्यमानेऽपि संसृतिर्न निवर्तते ।
ध्यायतो विषयानस्य स्वप्नेऽनर्थागमो यथा ॥७३॥

पदच्छेद—

अर्थे हि अविद्यमाने अपि संसृतिः न निवर्तते ।
ध्यायतः विषयान् अस्य स्वप्ने अनर्थ आगमः यथा ॥

शब्दार्थ—

अर्थे	६.	संसार के	ध्यायतः	१०.	चिन्तन करने वाले
हि	५.	उसी प्रकार	विषयान्	९.	शब्दादि विषयों का
अविद्यमाने	७.	असत्य होने पर	अस्य	११.	इस जीव का
अपि	८.	भी	स्वप्ने	२.	स्वप्न में
संसृतिः	१२.	जन्म-मरण का चक्र	अनर्थ	३.	अनिष्ट वस्तुओं का
न	१३.	नहीं	आगमः	४.	दर्शन होता है
निवर्तते ॥	१४.	छूटता है	यथा	१.	जैसे

श्लोकार्थ—जैसे स्वप्न में अनिष्ट वस्तुओं का दर्शन होता है उसी प्रकार संसार के असत्य होने पर भी शब्दादि विषयों का चिन्तन करने वाले इस जीव का जन्म-मरण का चक्र नहीं छूटता है ।

चतुःसप्ततितमः श्लोकः

एवं पञ्चविधं लिङ्गं त्रिवृत् षोडशविस्तृतम् ।
एष चेतनया युक्तो जीव इत्यभिधीयते ॥७४॥

पदच्छेद—

एवम् पञ्चविधम् लिङ्गम् त्रिवृत् षोडश विस्तृतम् ।
एवम् चेतनया युक्तः जीवः इति अभिधीयते ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	एवम्	७.	यह
पञ्चविधम्	३.	पांच तन्मात्राओं	चेतनया	८.	चेतना से
लिङ्गम्	२.	लिङ्ग शरीर	युक्तः	९.	युक्त होने पर
त्रिवृत्	४.	तीन गुणों (और)	जीवः	१०.	जीव
षोडश	५.	सोलह तत्त्वों से	इति	११.	इस नाम से
विस्तृतम् ।	६.	युक्त होता है	अभिधीयते ॥	१२.	कहा जाता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार लिङ्ग शरीर पाँच तन्मात्राओं, तीन गुणों और सोलह तत्त्वों से युक्त होता है । यह चेतना से युक्त होने पर जीव इस नाम से कहा जाता है ॥

पञ्चसप्ततितमः श्लोकः

अनेन पुरुषो देहानुपादत्ते विमुञ्चति ।
हर्षं शोकं भयं दुःखं सुखं चानेन विन्दति ॥७५॥

पदच्छेद—

अनेन पुरुषः देहान् उपादत्ते विमुञ्चति ।
हर्षम् शोकम् भयम् दुःखम् सुखम् च अनेन विन्दति ॥

शब्दार्थ—

अनेन	२.	इस लिङ्ग शरीर से	भयम्	८.	भय
पुरुषः	१.	जीव	दुःखम्	९.	दुःख
देहान्	३.	भिन्न-भिन्न शरीरों को	सुखम्	११.	सुख को
उपादत्ते	४.	ग्रहण करता है (और)	च	१०.	और
विमुञ्च ।	५.	छोड़ता है	अनेन	६.	इसी सूक्ष्म शरीर से (वह)
हर्षम् शोकम्	७.	हर्ष शोक	विन्दति ॥	१२.	प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—जीव इस लिङ्ग शरीर से भिन्न-भिन्न शरीरों को ग्रहण करता है और छोड़ता है। इसी सूक्ष्म शरीर से वह हर्ष, शोक, भय, दुःख और सुख को प्राप्त होता है।

षट्सप्ततितमः श्लोकः

यथा तृणजलूकेयं नापयात्यपयाति च ।
न त्यजेन्म्रियमाणोऽपि प्राग्देहाभिमतिं जनः ॥७६॥

पदच्छेद—

यथा तृण जलूका इयम् न अपयाति अपयाति च ।
न त्यजेत् म्रियमाणः अपि प्राक् देह अभिमतिम् जनः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	न	१५.	नहीं
तृण	२.	तिनके को पकड़े हुये	त्येजेत	१६.	छोड़ता है
जलूका	३.	जोंक	म्रियमाण	१०.	मरते समय
इयम्	७.	पाने पर (वह उसे)	अपि	११.	भी
न	४.	उसे नहीं	प्राक्	१२.	पूर्व
अपयाति	८.	छोड़ देती है	देह	१३.	शरीर का
अपयाति	५.	छोड़ती है (और)	अभिमतिम्	१४.	अभिमान
च ।	६.	दूसरा तिनका	जनः ॥	९.	(वैसे ही) जीव

श्लोकार्थ—जैसे तिनके को पकड़े हुये जोंक उसे नहीं छोड़ती है और दूसरा तिनका पकड़ने पर वह उसे छोड़ देती है, वैसे ही जीव मरते समय भी पूर्व शरीर का अभिमान नहीं छोड़ता है ॥

सप्तसप्ततितमः श्लोकः

यावदन्यं न विन्देत व्यवधानेन कर्मणाम् ।
मन एव मनुष्येन्द्र भूतानां भवभावनम् ॥७७॥

पदच्छेद—

यावद् अन्यम् न विन्देत व्यवधानेन कर्मणाम् ।
मनः एव मनुष्येन्द्र भूतानाम् भवभावनम् ॥

शब्दार्थ—

यावद्	३.	जब-तक	मनः	८.	मनः प्रधान
अन्यम्	४.	दूसरे शरीर को	एव	९.	लिङ्ग शरीर ही
न	५.	नहीं	मनुष्येन्द्र	७.	हे राजन्
विन्देत	६.	पाता है (तब-तक)	भूतानाम्	१०.	प्राणियों के
व्यवधानेन	२.	समाप्ति होने पर जीव	भव	११.	जन्म का
कर्मणाम् ।	१.	पूर्व कर्मों की	भावनम् ॥	१२.	कारण है

श्लोकार्थ—पूर्व कर्मों की समाप्ति होने पर जीव जब-तक दूसरे शरीर को नहीं पाता है, तब-तक हे राजन् ! मनः प्रधान लिङ्ग शरीर ही प्राणियों के जन्म का कारण है ॥

अष्टसप्ततितमः श्लोकः

यदाक्षैश्चरितान् ध्यायन् कर्माण्याचिनुतेऽसकृत् ।
सति कर्मण्यविद्यायां बन्धः कर्मण्यनात्मनः ॥७८॥

पदच्छेद—

यदा अक्षैः चरितान् ध्यायन् कर्माणि अचिनुते असकृत् ।
सति कर्मणि अविद्यायाम् बन्धः कर्मणि अनात्मनः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब (जीव)	सति	९.	रहने पर
अक्षैः	२.	इन्द्रियों से प्राप्त	कर्माणि	८.	कर्मों के
चरितानि	३.	शब्दादि विषयों का	अविद्यायाम्	१०.	अविद्या के कारण
ध्यायन्	४.	चिन्तन करता हुआ	बन्धः	१३.	बन्धन (हो जाता है)
कर्माणि	६.	कर्मों का	कर्मणि	११.	उन कर्मों से
आचिनुते	७.	करता है (तब)	अनात्मनः ॥	१२.	देहादि का
असकृत् ।	५.	बारम्बार			

श्लोकार्थ—जब जीव इन्द्रियों से प्राप्त शब्दादि विषयों का चिन्तन करता हुआ बारम्बार कर्मों को करता है तब कर्मों के रहने पर अविद्या के कारण उन कर्मों से देहादि का बन्धन हो जाता है ॥

एकोनाशीतितमः श्लोकः

अतस्तदपवादार्थं भज सर्वात्मना हरिम्।
पश्यंस्तदात्मकं विश्वं स्थित्युत्पत्त्यप्यया यतः ॥७९॥

पदच्छेद—

अतः तत् अपवाद अर्थम् भज सर्व आत्मना हरिम्।
पश्यन् तत् आत्मकम् विश्वम् स्थिति उत्पत्ति अप्ययाः यतः ॥

शब्दार्थ—

अतः	१.	इसलिये	पश्यन्	७.	देखते हुये
तत्	२.	उस कर्म बन्धन से	तत्	८.	उन्हीं
अपवाद	३.	छुटकारा	आत्मकम्	६.	भगवान् के स्वरूप में
अर्थम्	४.	पाने के लिये	विश्वम्	५.	संसार को
भज	१२.	भजन करो	स्थिति	१४.	स्थिति
सर्व	१०.	सब	उत्पत्ति	१५.	उत्पत्ति और
आत्मना	११.	प्रकार से	अप्ययाः	१६.	प्रलय होता है
हरिम्।	९.	भगवान् हरि का	यतः ॥	१३.	जिनसे संसार की

श्लोकार्थ—इसलिये उस कर्म-बन्धन से छुटकारा पाने के लिये संसार को भगवान् के स्वरूप में देखते हुये उन्हीं भगवान् हरि का सब प्रकार से भजन करो, जिनसे संसार की स्थिति, उत्पत्ति और प्रलय होता है।

अशीतितमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—भागवतमुख्यो भगवान्नारदो हंसयोर्गतिम्।
प्रदर्श्य ह्यमुमामन्त्र्य सिद्धलोकं ततोऽगमत् ॥८०॥

पदच्छेद—

भागवत मुख्यः भगवान् नारदः हंसयोः गतिम्।
प्रदर्श्य हि अमुम् आमन्त्र्य सिद्धलोकम् ततः अगमत् ॥

शब्दार्थ—

भागवत	१.	भगवद् भक्तों में	प्रदर्श्य	७.	दिखाकर
मुख्यः	२.	श्रेष्ठ	हि अमुम्	९.	उनसे
भगवान्	३.	भगवान्	आमन्त्र्य	१०.	बिदा लेकर
नारदः	४.	नारद	सिद्धलोकम्	११.	सिद्ध लोक को
हंसयोः	५.	जीव और ईश्वर के	ततः	८.	फिर
गतिम्।	६.	स्वरूप को	अगमत् ॥	१२.	चले गये

श्लोकार्थ—भगवद् भक्तों में श्रेष्ठ भगवान् नारद जीव और ईश्वर के स्वरूप को दिखाकर फिर उनसे बिदा लेकर सिद्ध लोक को चले गये ॥

एकाशीतितमः श्लोकः

प्राचीनबर्हीं राजर्षिः प्रजासर्गाभिरक्षणे ।
आदिश्य पुत्रानगमत्तपसे कपिलाश्रमम् ॥८१॥

पदच्छेद—

प्राचीनबर्हिः राजर्षिः प्रजासर्ग अभिरक्षणे ।
आदिश्य पुत्रान् अगमत् तपसे कपिलं आश्रमम् ॥

शब्दार्थ—

प्राचीनबर्हिः	२.	प्राचीनबर्हि	आदिश्य	७.	सौंपकर
राजर्षिः	१.	राजर्षि	पुत्रान्	६.	पुत्रों को
प्रजा	३.	प्रजा	अगमत्	११.	चले गये
सर्ग	४.	पालन का	तपसे	८.	तपस्या करने के लिये
अभिरक्षणे ।	५.	भार अपने	कपिल	९.	कपिल के
			आश्रमम् ॥	१०.	आश्रम को

श्लोकार्थ—राजर्षि प्राचीनबर्हि प्रजा-पालन का भार अपने पुत्रों को सौंप कर तपस्या करने के लिये कपिल के आश्रम को चले गये ॥

द्व्यशीतितमः श्लोकः

तत्रैकाग्रमना वीरो गोविन्दचरणाम्बुजम् ।
विमुक्तसङ्गोऽनुभजन् भक्त्या तत्साम्यतामगात् ॥८२॥

पदच्छेद—

तत्र एकाग्रमनाः वीरः गोविन्द चरण अम्बुजम् ।
विमुक्त सङ्गः अनुभजन् भक्त्या तत् साम्यताम् अगात् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ	विमुक्त	६.	रहित होकर
एकाग्र	३.	एकाग्र	सङ्गः	५.	आसक्ति से
मनाः	४.	चित्त तथा	अनुभजन्	११.	चिन्तन करते हुये
वीरः	२.	वीर राजा प्राचीनबर्हि ने	भक्त्या	७.	भक्ति पूर्वक
गोविन्द	८.	भगवान् गोविन्द के	तत्	१२.	उनके
चरण	९.	चरण	साम्यताम्	१३.	सारूप्य पद को
अम्बुजम् ।	१०.	कमल का	अगात् ॥	१४.	प्राप्त किया

श्लोकार्थ—वहाँ वीर राजा प्राचीनबर्हि एकाग्र चित्त तथा आसक्ति से रहित होकर भक्ति पूर्वक भगवान् गोविन्द के चरण कमल का चिन्तन करते हुये उनके सारूप्य पद को प्राप्त हो गये ॥

त्र्यशीतितमः श्लोकः

एतदध्यात्मपारोक्ष्यं गीतं देवर्षिणानघ ।
यः श्रावयेद्यः शृणुयात्स लिङ्गेन विमुच्यते ॥८३॥

पदच्छेद— एतद् अध्यात्म पारोक्ष्यम् गीतम् देवर्षिणा अनघ ।
यः श्रावयेत् यः शृणुयात् सः लिङ्गेन विमुच्यते ॥

शब्दार्थ—

एतद्	५.	इस	यः	७.	जो
अध्यात्म	६.	आत्मज्ञान को	श्रावयेत्	८.	सुनायेगा (और)
पारोक्ष्यम्	३.	परोक्ष रूप से	यः	९.	जो
गीतम्	४.	कहे हुये	शृणुयात्	१०.	सुनेगा
देवर्षि	२.	देवर्षि नारद के द्वारा	सः लिङ्गेन	११.	वह लिङ्ग शरीर के बन्धन से
अनघ ।	१.	हे निष्पाप विदुर जी	विमुच्यते ॥	१२.	मुक्त हो जायेगा

श्लोकार्थ—हे निष्पाप विदुर जी ! देवर्षि नारद के द्वारा परोक्ष रूप से कहे हुये इस आत्मज्ञान को जो सुनायेगा और जो सुनेगा वह लिङ्ग शरीर के बन्धन से मुक्त हो जायेगा ॥

चतुरशीतितमः श्लोकः

एतन्मुकुन्दयशसा भुवनं पुनानं
देवर्षिवर्यमुखनिःसृतमात्मशौचम् ।
यः कीर्त्यमानमधिगच्छति पारमेष्ठ्यं
नास्मिन् भवे भ्रमति मुक्तसमस्तबन्धः ॥८४॥

पदच्छेद—एतत् मुकुन्द यशसा भुवनम् पुनानम् देवर्षिवर्य मुखनिःसृतम् आत्म शौचम् ।
यः कीर्त्यमानम् अधिगच्छति पारमेष्ठ्यम् न अस्मिन्भवे भ्रमति मुक्त समस्त बन्धः ॥

शब्दार्थ—

एतत्	९.	इस अध्यात्मज्ञान का	यः	१०.	जो
मुकुन्द	१.	भगवान् के	कीर्त्यमानम्	११.	कीर्तन करता है वह
यशसा	२.	यश से सम्बन्धित होने	अधिगच्छति	१३.	प्राप्त करता है (और)
भुवनम् पुनानम्	३.	संसार को पवित्र करने वाले से	पारमेष्ठयम्	१२.	परम पद को
देवर्षिवर्य	४.	देवर्षियों में श्रेष्ठ नारद के	न	१७.	नहीं
मुख	५.	मुख से	अस्मिन् भवे	१६.	इस संसार में
निःसृतम्	६.	निकले हुये (तथा)	भ्रमति	१८.	भटकता है
आत्म	७.	अन्तःकरण को	मुक्त	१५.	मुक्त होकर
शौचम् ।	८.	पवित्र करने वाला	समस्तबन्धः ॥	१४.	समस्त बन्धनों से

श्लोकार्थ—भगवान् के यश से सम्बन्धित होने से संसार को पवित्र करने वाले देवर्षियों में श्रेष्ठ नारद के मुख से निकले हुये अन्तःकरण को पवित्र करने वाले इस अध्यात्मज्ञान का जो कीर्तन करता है, वह परमपद को प्राप्त करता है और समस्त बन्धनों से मुक्त होकर इस संसार में नहीं भटकता है ॥

पञ्चाशीतितमः श्लोकः

अध्यात्मपारोक्ष्यमिदं मयाधिगतमद्भुतम् ।
एवं स्त्रियाऽऽश्रमः पुंसश्छिन्नोऽमुत्र च संशयः ॥८५॥

पदच्छेद—

अध्यात्मपारोक्ष्यम् इदम् मया अधिगतम् अद्भुतम् ।
एवम् स्त्रिया आश्रमः पुंसः छिन्नः अमुत्र च संशयः ॥

शब्दार्थ—

अध्यात्म	४.	अध्यात्मज्ञान	स्त्रिया	९.	सांसारिक
पारोक्ष्यम्	३.	परोक्ष	आश्रमः	१०.	बन्धन
इदम्	१.	यह	पुंसः	८.	पुरुष का
मया	५.	मैंने (गुरु से)	छिन्नः	११.	कट जाता है
अधिगतम्	६.	प्राप्त किया	अमुत्र	१३.	परलोक विषयक
अद्भुतम् ।	२.	अद्भुत	च	१२.	और
एवम्	७.	इसके प्राप्त होने से	संशयः ॥	१४.	सन्देह मिट जाता है

श्लोकार्थ—यह अद्भुत परोक्ष अध्यात्म ज्ञान मैंने गुरु से प्राप्त किया। इसके प्राप्त होने से पुरुष का सांसारिक बन्धन कट जाता है और परलोक विषयक सन्देह मिट जाता है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे पुरञ्जनोपाख्याने अष्टाविंशः अध्यायः ॥२८॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

अथ त्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

विदुर उवाच—ये त्वयाभिहिता ब्रह्मन् सुता प्राचीनबर्हिषः ।
ते रुद्रगीतेन हरिं सिद्धिमापुः प्रतोष्य काम् ॥१॥

पदच्छेद— ये त्वया अभिहिता ब्रह्मन् सुताः प्राचीनर्बाहिषः ।
ते रुद्र गीतेन हरिं सिद्धिम् आपुः प्रतोष्य काम् ॥

शब्दार्थ—

ये	४.	जिन	रुद्र	८.	भगवान् शंकर के द्वारा
त्वया	२.	आपने	गीतेन	९.	कहे गये स्तोत्र से
अभिहिता	६.	बताया है	हरि	१०.	भगवान् श्री हरि को
ब्रह्मन्	१.	हे मैत्रेय जी	सिद्धिम्	१३.	सिद्धि
सुताः	५.	पुत्रों को	आपुः	१४.	प्राप्त की
प्राचीनर्बाहिषः ।	३.	राजा प्राचीनर्बाहि के	प्रतोष्य	११.	प्रसन्न करके
ते	७.	उन्होंने	काम् ॥	१२.	कौन सी

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! आपने राजा प्राचीन र्बाहि के जिन पुत्रों को बताया है, उन्होंने भगवान् शंकर द्वारा कहे गये स्तोत्र से भगवान् श्री हरि को प्रसन्न करके कौन सी-सिद्धि प्राप्त की ॥

द्वितीयः श्लोकः

किं बार्हस्पत्येह परत्र वाथ कैवल्यनाथप्रियपार्श्ववर्तिनः ।
आसाद्य देवं गिरिशं यदृच्छया प्रापुः परं नूनमथ प्रचेतसः ॥२॥

पदच्छेद— किम् बार्हस्पत्य इह परत्र वाअथ कैवल्यनाथ प्रिय पार्श्व वर्तिनः ।
आसाद्य देवम् गिरिशम् यदृच्छया प्रापुः परम् नूनम् अथ प्रचेतसः ॥

शब्दार्थ—

किम्	१८.	क्या पाया	आसाद्य	५.	पाकर
बार्हस्पत्य	१.	हे मैत्रेय जी मार्ग में	देवम्	३.	भगवान्
इह	१५.	इस लोक	गिरिशम्	४.	शंकर को
परत्र	१७.	परलोक में	यदृच्छया	२.	अपने आप
वा	१६.	अथवा	प्रापुः	१२.	पाई होगी
अथ	१४.	उसके अतिरिक्त	परम्	१०.	मुक्ति तो
कैवल्यनाथ	७.	मुक्ति के स्वामी श्री हरि की	नूनम्	११.	अवश्य ही
प्रिय	८.	प्रिय शंकर जी की	अथ	१३.	किन्तु
पार्श्ववर्तिनः	९.	कृपा से	प्रचेतसः ॥	६.	प्रचेताओं ने

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! अपने-आप भगवान् शंकर को पाकर प्रचेताओं ने मुक्ति के स्वामी श्री हरि की कृपा से मुक्ति तो अवश्य ही पाई होगी। किन्तु उसके अतिरिक्त इस लोक में अथवा परलोक में क्या पाया ॥

तृतीयः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—प्रचेतसोऽन्तरुदधौ पितुरादेशकारिणः ।
जपयज्ञेन तपसा पुरञ्जनमतोषयन् ॥३॥

पदच्छेद—

प्रचेतसः अन्तः उदधौ पितुः आदेश कारिणः ।
जपयज्ञे तपसा पुरञ्जनम् अतोषयन् ॥

शब्दार्थ—

प्रचेतसः	३.	प्रचेताओं ने	जप	६.	रुद्रगीत के जप रूप
अन्तः	५.	अन्दर	यज्ञेन	७.	यज्ञ से (और)
उदधौ	४.	समुद्र के	तपसा	८.	तपस्या से
पितुः आदेश	१.	पिता के आदेश का	पुरञ्जनम्	६.	भगवान् श्री हरि को
कारिणः ।	२.	पालन करने वाले	अतोषयन् ॥	१०.	प्रसन्न किया

श्लोकार्थ—पिता के आदेश का पालन करने वाले प्रचेताओं ने समुद्र के अन्दर रुद्रगीत के जपरूप यज्ञ से और तपस्या से भगवान् श्री हरि को प्रसन्न किया ॥

चतुर्थः श्लोकः

दशवर्षसहस्रान्ते पुरुषस्तु सनातनः ।
तेषामाविरभूत्कृच्छ्रं शान्तेन शमयन् रुचा ॥४॥

पदच्छेद—

दश वर्ष सह स्रान्ते पुरुषः तु सनातनः ।
तेषाम् आविः अभूत् कृच्छ्रम् शान्तेन शमयन् रुचा ॥

शब्दार्थ—

दश	२.	दश	तेषाम्	१२.	उनके सामने
वर्ष	४.	वर्ष के	आविरभूत्	१३.	प्रकट हुये
सहस्र	३.	हजार	कृच्छ्रम्	६.	तपस्या के क्लेश को
अन्ते	५.	बीतने पर	शान्तेन	११.	शुद्ध सत्त्व शरीर से
पुरुषः	७.	पुरुष (श्री हरि)	शमयन्	१०.	शान्त करते हुये
तु	१.	तदनन्तर	रुचा ॥	८.	आपनी कान्ति से
सनातन ।	६.	सनातन			

श्लोकार्थ—तदनन्तर दश हजार वर्ष के बीतने पर सनातन पुरुष श्री हरि अपनी कान्ति से तपस्या के क्लेश को शान्त करते हुये से शुद्ध सत्त्व शरीर से उनके सामने प्रकट हुये ॥

पञ्चमः श्लोकः

सुपर्णस्कन्धमारूढो मेरुश्रृङ्गमिवाम्बुदः ।
पीतवासा मणिग्रीवः कुर्वन् वितिमिरा दिशः ॥५॥

पदच्छेद— सुपर्ण स्कन्धम् आरूढः मेरु श्रृङ्गम् इव अम्बुदः ।
पीतवासाः मणि ग्रीवः कुर्वन् वितिमिरा दिशः ॥

शब्दार्थ—

सुपर्ण	१.	(भगवान् श्री हरि) गरुड़ के	पीत	८.	(वे) पीले वर्ण का
स्कन्धम्	२.	कन्धे पर	वासाः	९.	वस्त्र पहने थे
आरूढः	३.	ऐसे विराजमान थे	मणि	११.	कौस्तुभ मणि थी
मेरु	५.	सुमेरु पर्वत की	ग्रीवः	१०.	उनके गले में
श्रृङ्गम्	६.	चोटी पर	कुर्वन्	१४.	कर रहे थे
इव	४.	जैसे	वितिमिराः	१३.	अपनी कान्ति से प्रकाशित
अम्बुदः ।	७.	मेघ की (घटा घिरी हो)	दिशः ॥	१२.	(वे) दिशाओं को

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि गरुड़ के कन्धे पर ऐसे विराजमान थे, जैसे सुमेरु पर्वत की चोटी पर मेघ की घटा घिरी हो। वे पीले वर्ण का वस्त्र पहने थे। उनके गले में कौस्तुभ मणि थी। वे दिशाओं को अपनी कान्ति से प्रकाशित कर रहे थे ॥

षष्ठः श्लोकः

काशिष्णुना कनकवर्णविभूषणेन भ्राजत्कपोलवदनो विलसत्किरीटः ।
अष्टायुधैरनुचरैर्मुनिभिः सुरेन्द्रैरासेवितो गरुडकिन्नरगीतकीर्तिः ॥६॥

पदच्छेद—काशिष्णुना कनक वर्ण विभूषणेन भ्राजत् कपोल वदनः विलसत् किरीटः ।
अष्ट आयुधैः अनुचरैः मुनिभिः सुरेन्द्रैः आसेवितः गरुड किन्नर गीत कीर्तिः ॥

शब्दार्थ—

काशिष्णुना	३.	चमकदार	अष्ट	१०.	आठ भुजाओं में
कनक	१.	(उस समय) सुवर्ण के समान	आयुधैः	११.	शस्त्र लिये थे
वर्ण	२.	पीतवर्ण के	अनुचरैः	१४.	पार्षद गण
विभूषणेन	४.	आभूषणों से	मुनिभिः	१२.	मुनिजन
भ्राजत्	७.	सुन्दर लग रहा था	सुरेन्द्रैः	१३.	देवता (और)
कपोल	५.	भगवान् श्री हरि का कपोल (और)	आसेवितः	१५.	सेवा में उपस्थित थे
वदनः	६.	मुख मण्डल	गरुड़ किन्नर	१६.	गरुड़ जी किन्नरों के समान
विलसत्	९	सुशोभित था	गीत	१८.	गान कर रहे थे
किरीटः ।	८.	(उनके मस्तक पर) मुकुट	कीर्तिः ॥	१७.	उनकी कीर्ति का

श्लोकार्थ—उस समय सुवर्ण के समान पीत वर्ण के चमकदार आभूषणों से भगवान् श्री हरि का कपोल और मुख मण्डल सुन्दर लग रहा था। उनके मस्तक पर मुकुट सुशोभित था। आठ भुजाओं में शस्त्र लिये थे। मुनिजन, देवता और पार्षदगण सेवा में उपस्थित थे। गरुड़ जी किन्नरों के समान उनकी कीर्ति का गान कर रहे थे ॥

सप्तमः श्लोकः

पीनायताष्टभुजमण्डलमध्यलक्ष्म्या स्पर्धच्छ्रिया परिवृतो वनमालयाऽऽद्यः ।
बर्हिष्मतः पुरुष आह सुतान् प्रपन्नान् पर्जन्यनादरुतया सघृणावलोकः ॥७॥

पदच्छेद—पीन आयत अष्टभुज मण्डल मध्यलक्ष्म्या स्पर्धत्श्रिया परिवृतः वनमालया आद्यः
बर्हिष्मतः पुरुषः आह सुतान् प्रपन्नान् पर्जन्य नाद रुतया स घृण अवलोकः ॥

शब्दार्थ—

पीन	२.	स्थूल	बर्हिष्मतः	११.	राजा प्राचीन बर्हि के
आयत	१.	लम्बी-लम्बी	पुरुषः	१०.	पुरुष (श्री हरि)
अष्ट भुजमण्डल	३.	आठ भुजाओं के घेरे में	आह	१८.	बोले
मध्य लक्ष्म्या	४.	बीच में बैठी हुई लक्ष्मी जी की	सुतान्	१३.	पुत्रों को
स्पर्धत्	६.	मात करने वाली	प्रपन्नान्	१२.	शरणागत
श्रिया	५.	शोभा को	पर्जन्यनाद	१६.	मेघ की ध्वनि के समान
परिवृतः	८.	धारण किये हुये थे	रुतया	१७.	गम्भीर वाणी में
वनमालया	७.	वनमाला को	सघृण	१४.	कृपा पूर्वक
आद्यः ।	९.	(उस समय) आदि	अवलोकः ॥	१५.	देखकर

श्लोकार्थ—वे भगवान् लम्बी-लम्बी स्थूल आठ भुजाओं के घेरे के बीच में बैठी हुई लक्ष्मी जी की शोभा को मात करने वाली वनमाला धारण किये थे । उस समय आदि पुरुष श्री हरि शरणागत राजा प्राचीनबर्हि के पुत्रों को कृपा पूर्वक देखकर मेघ की ध्वनि के समान गम्भीर वाणी से बोले ॥

अष्टमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—वरं वृणीध्वं भद्रं वो यूयं मे नृपनन्दनाः ।
सौहार्देनापृथग्धर्मास्तुष्टोऽहं सौहृदेन वः ॥८॥

पदच्छेद— वरम् वृणीध्वम् भद्रम् वः यूयम् मे नृप नन्दनाः ।
सौहार्देन अपृथक् धर्माः तुष्टः अहम् सौहृदेन वः ॥

शब्दार्थ—

वरम्	११.	वरदान	सौहार्देन	३.	परस्पर प्रेम के कारण
वृणीध्वम्	१२.	माँगो	अपृथक्	४.	एक समान
भद्रम्	१४.	कल्याण हो	धर्माः	५.	धर्म का (पालन कर रहे हो)
वः	१३.	तुम लोगों का	तुष्टः	९.	प्रसन्न हूँ (अतः)
यूयम्	२.	तुम लोग	अहम्	६.	मैं
मे	१०.	मुझसे (कोई)	सौहृदेन	८.	प्रेम से
नृपनन्दनाः ।	१.	हे राज कुमारो	वः ॥	७.	तुम लोगों के

श्लोकार्थ—हे राज कुमारो ! तुम लोग परस्पर प्रेम के कारण एक समान धर्म का पालन कर रहे हो । मैं तुम लोगों के प्रेम से प्रसन्न हूँ । अतः मुझसे कोई वरदान माँगो । तुम्हारा कल्याण हो ॥

नवमः श्लोकः

योऽनुस्मरति सन्ध्यायां युष्माननुदिनं नरः।
तस्य भ्रातृष्वात्मसाम्यं तथा भूतेषु सौहृदम् ॥९॥

पदच्छेद—

यः अनुस्मरति सन्ध्यायाम् युष्मान् अनुदिनं नरः।
तस्य भ्रातृषु आत्म साम्यम् तथा भूतेषु सौहृदम् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	तस्य	७.	उसका
अनुस्मरति	६.	स्मरण करता है	भ्रातृषु	८.	भाइयों में
सन्ध्यायाम्	३.	सन्ध्या के समय	आत्म साम्यम्	९.	अपने समान प्रेम
युष्मान्	५.	तुम लोगों का	तथा	१०.	और
अनुदिनम्	४.	प्रतिदिन	भूतेषु	११.	प्राणियों के प्रति
नरः	२.	मनुष्य	सौहृदम् ॥	१२.	मैत्री भाव होता है

श्लोकार्थ—जो मनुष्य सन्ध्या के समय प्रतिदिन तुम लोगों का स्मरण करता है, उसका भाइयों में अपने समान प्रेम और प्राणियों के प्रति मैत्री-भाव होता है ॥

दशमः श्लोकः

ये तु मां रुद्रगीतेन सायं प्रातः समाहिताः।
स्तुवन्त्यहं कामवरान्दास्ये प्रज्ञां च शोभनाम् ॥१०॥

पदच्छेद—

ये तु माम् रुद्र गीतेन सायं प्रातः समाहिताः।
स्तुवन्ति अहम् कामवरान् दास्ये प्रज्ञाम् च शोभनाम् ॥

शब्दार्थ—

ये	२.	जो लोग	स्तुवन्ति	८.	स्तुति करते हैं
तु	१.	तथा	अहम्	९.	मैं
माम्	५.	मेरी	काम	११.	कामनाओं
रुद्र गीतेन	६.	रुद्र गीत से	वरान्	१०.	उन्हें उत्तम
सायम्	३.	सायंकाल (और)	दास्ये	१५.	देता हूँ
प्रातः	४.	प्रातः काल	प्रज्ञाम्	१४.	बुद्धि को
समाहिताः।	७.	एकाग्र मन होकर	च	१२.	और
			शोभनम् ॥	१३.	निर्मल

श्लोकार्थ—तथा जो लोग सायंकाल और प्रातः काल मेरी एकाग्र मन होकर स्तुति करते हैं, मैं उन्हें कामनाओं और निर्मल बुद्धि को देता हूँ ॥

एकादशः श्लोकः

यद्यूयं पितुरादेशमग्रहीष्ट मुदान्विताः ।
अथो व उशती कीर्तिर्लोकाननु भविष्यति ॥११॥

पदच्छेद—

यद्यूयम् पितुः आदेशम् अग्रहीष्ट मुदा अन्विता ।
अथो वः उशती कीर्तिः लोकान् अनु भविष्यति ॥

शब्दार्थ—

यद्	१. क्योंकि	अथो	८. इसलिये
यूयम्	२. तुम लोगों ने	वः	९. तुम लोगों की
पितुः	३. अपने पिता की	उशती	१०. कमनीय
आदेशम्	४. आज्ञा का	कीर्तिः	११. कीर्ति
अग्रहीष्ट	७. पालन किया है	लोकान्	१२. सारे लोकों में
मुदा	५. प्रसन्नता के	अनुभविष्यति ॥	१३. फैलेगी
अन्वितः ।	६. साथ		

श्लोकार्थ—क्योंकि तुम लोगों ने अपने पिता की आज्ञा का प्रसन्नता के साथ पालन किया है; इसलिये तुम लोगों की कमनीय कीर्ति सारे लोकों में फैलेगी ॥

द्वादशः श्लोकः

भविता विश्रुतः पुत्रोऽनवमो ब्रह्मणो गुणैः ।
य एतामात्मवीर्येण त्रिलोकीं पूरयिष्यति ॥१२॥

पदच्छेद—

भविता विश्रुतः पुत्रः अनवमः ब्रह्मणः गुणैः ।
य एताम् आत्म वीर्येण त्रिलोकीम् पूरयिष्यति ॥

शब्दार्थ—

भविता	६. होगा	यः	७. जो
विश्रुतः	२. प्रसिद्ध (और)	एताम्	१०. इस
पुत्रः	१. आपका पुत्र	आत्म	८. अपनी
अनवमः	५. कम नहीं	वीर्येण	९. सन्तान से
ब्रह्मणः	४. ब्रह्मा जी से	त्रिलोकीम्	११. त्रिलोकी को
गुणैः ।	३. गुणों में	पूरयिष्यति ।	१२. पूर्ण करेगा

श्लोकार्थ—आपका पुत्र प्रसिद्ध और गुणों में ब्रह्मा जी से कम नहीं होगा । जो अपनी सन्तान से इस त्रिलोकी को पूर्ण करेगा ॥

त्रयोदशः श्लोकः

कण्डोः प्रम्लोचया लब्धा कन्या कमललोचना ।
तां चापविद्धां जगृहुर्भूरुहा नृपनन्दनाः ॥१३॥

पदच्छेद—

कण्डोः प्रम्लोचया लब्धा कन्या कमल लोचना ।
ताम् चाप अपविद्धाम् जगृहुः भूरुहाः नृपनन्दनाः ॥

शब्दार्थ—

कण्डोः	२.	कण्डु ऋषि को	ताम्	१०.	उसे
प्रम्लोचया	३	प्रम्लोचा नाम की अप्सरा	च	८.	अप्सरा के
लब्धा	७.	उत्पन्न हुई थी	अपविद्धाम्	९.	छोड़कर चले जाने पर
कन्या	६.	एक कन्या	जगृहुः	१२.	पाला-पोसा था
कमल	४.	कमल के समान	भूरुहाः	११.	वृक्षों ने
लोचना ।	५.	नेत्रों वाली	नृपनन्दनाः ॥	१.	हे राजकुमारो

श्लोकार्थ—हे राजकुमारो ! कण्डु ऋषि को प्रम्लोचा नाम की अप्सरा से कमल के समान नेत्रों वाली एक कन्या उत्पन्न हुई थी । अप्सरा के छोड़कर चले जाने पर उसे वृक्षों ने पाला पोसा था ॥

चतुर्दशः श्लोकः

क्षुत्क्षामाया मुखे राजा सोमः पीयूषवर्षिणीम् ।
देशिनीं रोदमानाया निदधे स दयान्वितः ॥१४॥

पदच्छेद—

क्षुत् क्षामायाः मुखे राजा सोमः पीयूष वर्षिणीम् ।
देशिनीम् रोदमानाया निदधे स दया अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

क्षुत्	१.	भूख से	देशिनीम्	१२.	तर्जनी अंगुली
क्षामायाः	२.	व्याकुल होकर	रोदमानाया	३.	रोती हुई
मुखे	५.	मुख में	निदधे	१३.	रख दी
राजा	६.	वनस्पतियों के राजा	स	४.	उस कन्या के
सोमः	७.	चन्द्रमा ने	दया	८.	दया
पीयूष	१०.	अमृत की	अन्वितः ॥	९.	वश
वर्षिणीम् ।	११.	वर्षा करने वाली (अपनी)			

श्लोकार्थ—भूख से व्याकुल होकर रोती हुई उस कन्या के मुख में वनस्पतियों के राजा चन्द्रमा ने दया वश अमृत की वर्षा करने वाली अपनी तर्जनी अंगुली रख दी ॥

पञ्चदशः श्लोकः

प्रजाविसर्ग आदिष्टाः पित्रा मामनुवर्तता ।
तत्र कन्यां वरारोहां तामुद्वहत माचिरम् ॥१५॥

पदच्छेद—

प्रजाविसर्गे आदिष्टाः पित्रा माम् अनुवर्तता ।
तत्र कन्याम् वरारोहाम् ताम् उद्वहत माचिरम् ॥

शब्दार्थ—

प्रजा	४.	सन्तान की	तत्र	७.	वहाँ
विसर्गे	५.	उत्पत्ति का	कन्याम्	१०.	कन्या के साथ
आदिष्टाः	६	आदेश पाकर (तुम लोग)	वरारोहाम्	९.	सुन्दरी
पित्रा	३.	अपने पिता से	ताम्	८.	उस
माम्	१.	मेरा	उद्वहत	१२.	विवाह करो
अनुवर्तता ।	२.	अनुकरण करने वाले	माचिरम् ॥	११.	तत्काल

श्लोकार्थ—मेरा अनुकरण करने वाले अपने पिता से सन्तान की उत्पत्ति का आदेश पाकर तुम लोग वहाँ उस सुन्दरी कन्या के साथ तत्काल विवाह करो ॥

षोडशः श्लोकः

अपृथग्धर्मशीलानां सर्वेषां वः सुमध्यमा ।
अपृथग्धर्मशीलेयं भूयात्पत्न्यर्पिताशया ॥१६॥

पदच्छेद—

अपृथक् धर्म शीलानाम् सर्वेषाम् वः सुमध्यमा ।
अपृक्धर्म शीला इयम् भूयात् पत्नी अर्पित आशया ॥

शब्दार्थ—

अपृथक्	५.	एक समान	अपृथक्	१.	एक समान
धर्म	६.	धर्म और	धर्मशीला	२.	धर्म और स्वभाव वाली
शीलानाम्	७.	स्वभाव वालो	इयम्	३.	वह
सर्वेषाम्	९.	सभी की	भूयात्	११.	होगी
वः	८.	तुम	पत्नी	१०.	पत्नी
सुमध्यमा ।	४.	सुन्दरी	अर्पित	१२.	तुम्हारे प्रति उसका
			आशया ॥	१३.	अनुराग (होगा)

श्लोकार्थ—एक समान धर्म और स्वभाव वाली वह सुन्दरी एक समान धर्म और स्वभाव वाली तुम सभी की पत्नी होगी । तुम्हारे प्रति उनका अनुराग होगा ॥

सप्तदशः श्लोकः

दिव्यवर्षसहस्राणां सहस्रमहतौजसः ।
भौमान् भोक्ष्यथ भोगान् वै दिव्यांश्चानुग्रहान्मम ॥१७॥

पदच्छेद—

दिव्य वर्ष सहस्राणाम् सहस्रम् अहत ओजसः ।
भौमान् भोक्ष्यथ भोगान् वै दिव्यान् च अनुग्रहान् मम ॥

शब्दार्थ—

दिव्य	३.	देवताओं के	भोक्ष्यथ	१४.	भोग करोगे
वर्ष	६.	वर्षों तक	भोगान्	१२.	भोगों का
सहस्राणाम्	४.	हजारों के	वै	१३.	अवश्य
सहस्रम्	५.	हजार (दशलाख)	दिव्यान्	११.	परलोक के
अहत	७.	पूर्ण	च	१०.	और
ओजसः ।	८.	बलवान् रहकर	अनुग्रहात्	२.	कृपा से (तुम लोग)
भौमान्	९.	इस लोक के	मम ॥	१.	मेरी

श्लोकार्थ—मेरी कृपा से तुम लोग देवताओं के हजारों के हजार (दश लाख) वर्षों तक पूर्ण बलवान् रहकर इस लोक के और परलोक के भोगों का अवश्य भोग करोगे ॥

अष्टादशः श्लोकः

अथ मय्यनपायिन्या भक्त्या पक्वगुणाशयाः ।
उपयास्यथ मद्धाम निर्विद्य निरयादतः ॥१८॥

पदच्छेद—

अथ मयि अनपायिन्या भक्त्या पक्व गुण आशयाः ।
उपयास्यथ मद् धाम निर्विद्य निरयात् अतः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	अन्त में	उपयास्यथ	१३.	प्राप्त करोगे
मयि	२.	मेरी	मद्	११.	मेरे
अनपायिन्या	३.	अविचल	धाम	१२.	परमधाम को
भक्त्या	४.	भक्ति से	निर्विद्य	१०.	निर्लिप्त होकर
पक्व	७.	जल जायेंगे (तथा)	निरयात्	८.	नरक तुल्य
गुण	६.	कामादि दोष	अतः ॥	९.	सांसारिक भोगों से
आशयाः ।	५.	तुम्हारे चित्त के			

श्लोकार्थ—अन्त में मेरी अविचल भक्ति से तुम्हारे चित्त के कामादि दोष जल जायेंगे तथा नरक तुल्य सांसारिक भोगों से निर्लिप्त होकर मेरे परम धाम को प्राप्त करोगे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

गृहेष्वाविशतां चापि पुंसां कुशलकर्मणाम् ।
मद्वार्तायातयामानां न बन्धाय गृहा मताः ॥१९॥

पदच्छेद— गृहेषु आविशताम् च अपि पुंसाम् कुशल कर्मणाम् ।
मद् वार्ता यातयामानाम् न बन्धाय गृहाः मताः ॥

शब्दार्थ—

गृहेषु	१.	गृहस्थाश्रम में	मद्	६.	मेरी
आविशताम्	२.	रहने वाले	वार्ता	७.	कथा में
च	५.	और	यातयामानाम्	८.	समय बिताने वाले
अपि	११.	भी	न	१३.	नहीं
पुंसाम्	९.	लोगों को	बन्धाय	१२.	बन्धन
कुशल	४.	समर्पित करने वाले	गृहाः	१०.	गृहस्थाश्रम में रहते हुये
कर्मणाम् ।	३.	मुझमें कर्म	मताः ॥	१४.	होता है

श्लोकार्थ—गृहस्थाश्रम में रहने वाले मुझमें कर्म समर्पित करने वाले और मेरी कथा में समय बिताने वाले लोगों को गृहस्थाश्रम में रहते हुये भी बन्धन नहीं होता है ॥

विंशः श्लोकः

नव्यवद्धृदये यज्ज्ञो ब्रह्मैतद्ब्रह्मवादिभिः ।
न मुह्यन्ति न शोचन्ति न हृष्यन्ति यतो गताः ॥२०॥

पदच्छेद— नव्यवद् हृदये यत्ज्ञः ब्रह्म एतद् ब्रह्म वादिभिः ।
न मुह्यन्ति न शोचन्ति न हृष्यन्ति यतः गताः ॥

शब्दार्थ—

नव्यवद्	७.	नित्य नये रूप से	न	११.	नहीं
हृद्	६.	हृदय में	मुह्यन्ति	१२.	मोहित होते हैं
अये	८.	प्रकट होता हूँ	न	१३.	नहीं
यत्	१.	जिस कथा-श्रवण से	शोचन्ति	१४.	सोच करते हैं
ज्ञः	२.	मैं सर्वज्ञ	न	१५.	नहीं
ब्रह्म	३.	ब्रह्म	हृष्यन्ति	१६.	प्रसन्न होते हैं
एतद्	५.	इस श्रोता है	यतः	९.	जिस मुझ परमात्मा को
ब्रह्मवादिभिः ।	४.	ब्रह्मवादी वक्ताओं के द्वारा	गताः ॥	१०.	पाने वाले ज्ञानी जन

श्लोकार्थ—जिस कथा-श्रवण से मैं सर्वज्ञ ब्रह्म ब्रह्मवादी वक्ताओं के द्वारा इस श्रोता के हृदय में प्रकट होता हूँ । जिस मुझ परमात्मा को पाने वाले ज्ञानी जन मोहित नहीं होते हैं, सोच नहीं करते हैं, प्रसन्न नहीं होते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—एवं ब्रुवाणं पुरुषार्थभाजनं जनार्दनं प्राञ्जलयः प्रचेतसः ।
तद्दर्शनध्वस्ततमोरजोमला गिरागृणन् गद्गदया सुहृत्तमम् ॥२१॥

पदच्छेद—एवम् ब्रुवाणम् पुरुषार्थ भाजनम् जनार्दनम् प्राञ्जलयः प्रचेतसः ।
तद् दर्शन ध्वस्त तमः रजः मला गिरा अगृणन् गद्गदया सुहृत्तमम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	११.	इस प्रकार	दर्शन	६.	दर्शन से (प्रचेताओं के)
ब्रुवाणम्	१२.	कहते हुये श्री हरि की	ध्वस्त	९.	दूर हो गये थे
पुरुषार्थ	२.	सारे पुरुषार्थों के	तमः रजः	७.	तमोगुण रजोगुण के
भाजनम्	३.	एक मात्र आश्रय (और)	मलाः	८.	दोष
जनार्दनम्	१.	भगवान् श्री हरि	गिरा	१५.	वाणी में
प्राञ्जलयः	१३.	हाथ जोड़ कर	अगृणन्	१६.	स्तुति करने लगे
प्रचेतसः ।	१०.	वे प्रचेता गण	गद्गदया	१४.	प्रेम भरी
तद्	५.	उनके	सुहृत्तमम् ॥	४.	परम हितैषी हैं

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि सारे पुरुषार्थों के एक मात्र आश्रय और परम हितैषी हैं । उनके दर्शन से प्रचेताओं के तमोगुण और रजोगुण के दोष दूर हो गये थे । वे प्रचेता गण इस प्रकार कहते हुये श्री हरि की हाथ जोड़कर प्रेमभरी वाणी में स्तुति करने लगे ।

द्वाविंशः श्लोकः

प्रचेतस ऊचुः—नमो नमः क्लेशविनाशनाय निरूपितोदारगुणाह्वयाय ।
मनोवचोवेगपुरोजवाय सर्वाक्षमार्गैरगताध्वने नमः ॥२२॥

पदच्छेद— नमो नमः क्लेशविनाशनाय निरूपित उदार गुण आह्वयाय ।
मनः वचः वेग पुरः जवाय सर्व अक्ष मार्गैः अगत अध्वने नमः ॥

शब्दार्थ—

नमोनमः	७.	आपको बार-बार प्रणाम है	वेग	११.	गति से भी
क्लेश	१.	कष्ट को	पुरः	१२.	अधिक (हैं तथा)
विनाशाय	२.	दूर करने वाले	जवाय	८.	आपकी गति
निरूपित	६.	वेद में वर्णित हैं (आप)	सर्व	१४.	सभी
उदार	३.	आपके उदार	अक्ष	१५.	इन्द्रियों की
गुण	४.	गुणों (और)	मार्गैः	१६.	शक्ति से
आह्वयाय ।	५.	नामों की महिमा	अगत	१७.	परे है
मनः	९.	मन (और)	अध्वने	१३.	आपका स्वरूप
वचः	१०.	वाणी की	नमः	१८.	आपको प्रणाम है

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! कष्ट को दूर करने वाले आपके उदार गुणों और नामों की महिमा वेद में वर्णित है । अतः आपको बार-बार प्रणाम है । आपकी गति मन और वाणी की गति से भी अधिक है तथा आपका स्वरूप सभी इन्द्रियों की शक्ति से परे हैं । आपको प्रणाम है ।

त्रयोविंशः श्लोकः

शुद्धाय शान्ताय नमः स्वनिष्ठया मनस्यपार्थं विलसद्द्वयाय ।
नमो जगत्स्थानलयोदयेषु गृहीतमायागुणविग्रहाय ॥२३॥

पदच्छेद—

शुद्धाय शान्ताय नमः स्वनिष्ठया मनसि अपार्थम् विलसद् द्वयाय ।
नमः जगत् स्थान लय उदयेषु गृहीत माया गुण विग्रहाय ।

शब्दार्थ—

शुद्धाय	३.	नित्य शुद्ध और	नमः	१८.	आप को नमस्कार है
शान्ताय	४.	शान्त है (तथा)	जगत्	१०.	आप जगत् की
नमः	६.	आप को नमस्कार है	स्थान	१२.	स्थिति और
स्व	१.	अपने स्वरूप में	लय	१३.	संहार के लिये
निष्ठया	२.	स्थित रहने के कारण	उदयेषु	११.	उत्पत्ति
मनसि	५.	मन के कारण	गृहीत	१६.	स्वीकार करके
अपार्थम्	६.	(आप में हमें) मिथ्या	माया	१४.	माया के
विलसद्	८.	प्रतीति होती है	गुण	१५.	गुणों को
द्वयाय ।	७.	द्वैतभाव की	विग्रहाय ।।	१७.	त्रिदेवरूप को धारण करते हैं

श्लोकार्थ—अपने स्वरूप में स्थित रहने के कारण आप में हमें मिथ्या द्वैतभाव की प्रतीति होती है । आपको नमस्कार है । आप जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और संहार के लिये माया के गुणों को स्वीकार करके त्रिदेव रूप को धारण करते हैं । आपको नमस्कार है ।

चतुर्विंशः श्लोकः

नमो विशुद्धसत्त्वाय हरये हरिमेधसे ।
वासुदेवाय कृष्णाय प्रभवे सर्वसात्वताम् ॥२४॥

पदच्छेद—

नमः विशुद्ध सत्त्वाय हरये हरि मेधसे ।
वासुदेवाय कृष्णाय प्रभवे सर्व सात्वताम् ॥

शब्दार्थ—

नमः	१०.	प्रणाम है	वासुदेवाय	७.	वसुदेव के पुत्र
विशुद्ध	१.	शुद्ध	कृष्णाय	८.	श्री कृष्ण स्वरूप
सत्त्वाय	२.	सत्त्वगुण वाले	प्रभवे	६.	स्वामी
हरये	९.	श्री हरि को	सर्व	४.	सभी
हरिमेधसे ।	३.	भवभय हारी बुद्धि वाले	सात्वताम् ॥	५.	प्राणियों के

श्लोकार्थ—शुद्ध सत्त्वगुण वाले, भव-भय हारी बुद्धि वाले, सभी प्राणियों के स्वामी वसुदेव के पुत्र श्री कृष्ण स्वरूप श्री हरि को प्रणाम है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

नमः कमलनाभाय नमः कमलमालिने ।
नमः कमलपादाय नमस्ते कमलेक्षण ॥२५॥

पदच्छेद—

नमः कमल नाभाय नमः कमल मालिने ।
नमः कमल पादाय नमः ते कमल ईक्षण ॥

शब्दार्थ—

नमः	३. नमस्कार है	नमः	९. नमस्कार है
कमल	२. कमल वाले (आपको)	कमल	७. कमल के समान
नाभाय	१. नाभि में	पादाय	८. चरण वाले (आपको)
नमः	६. नमस्कार है	नमः	१२. नमस्कार है
कमल	४. कमलों की	ते	११. आप को
मालिने ।	५. मालाओं वाले (आपको)	कमल ईक्षण ॥	१०. कमल नयन हे प्रभो

श्लोकार्थ—नाभि में कमल वाले आपको नमस्कार है। कमलों की मालाओं वाले आपको नमस्कार है। कमल के समान चरण वाले आपको नमस्कार है। कमल नयन हे प्रभो! आपको नमस्कार है।

षड्विंशः श्लोकः

नमः कमलकिञ्जल्कपिशङ्गामलवाससे ।
सर्वभूतनिवासाय नमोऽयुङ्क्ष्महि साक्षिणे ॥२६॥

पदच्छेद—

नमः कमल किञ्जल्क पिशङ्ग अमल वाससे ।
सर्व भूत निवासाय नमः अयुङ्क्ष्महि साक्षिणे ॥

शब्दार्थ—

नमः	६. (आपको) नमस्कार है	सर्वभूत	७. सभी प्राणियों में
कमल	१. कमल के	निवासाय	८. रहने वाले (और)
किञ्जल्क	२. पराग के समान	नमः	१०. (आपको) प्रणाम
पिशङ्ग	३. पीले	अयुङ्क्ष्महि	११. करते है
अमल	४. निर्मल	साक्षिणे ॥	९. सबके साक्षी
वाससे ।	५. वस्त्रों वाले		

श्लोकार्थ—कमल के पराग के समान पीले निर्मल वस्त्रों वाले आपको प्रणाम है। सभी प्राणियों में रहने वाले और सबके साक्षी आपको (हम) प्रणाम करते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

रूपं भगवता त्वेतदशेषक्लेशसंक्षयम् ।
आविष्कृतं नः क्लिष्टानां किमन्यदनुकम्पितम्॥२७॥

पदच्छेद—

रूपम् भगवता तु एतद् अशेष क्लेश संक्षयम् ।
आविष्कृतम् नः क्लिष्टानाम् किम् अन्यद् अनु कम्पितम् ॥

शब्दार्थ—

रूपम्	५.	स्वरूप	आविष्कृतम्	६.	प्रकट किया है
भगवता	१.	भगवान् श्री हरि ने	नः	३.	हमारे लिये
तु	७.	वह	क्लिष्टानाम्	२.	कष्टों से घिरे
एतद्	४.	(जो) यह	किम्	१२.	क्या चाहिये
अशेष क्लेश	८.	सम्पूर्ण कष्टों को	अन्यद्	११.	अलावा (और)
संक्षयम् ।	९.	दूर करने वाला है	अनुकम्पितम् ॥	१०.	इस अनुकम्पा के

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि ने कष्टों से घिरे हमारे लिये जो यह स्वरूप प्रकट किया है वह सम्पूर्ण कष्टों को दूर करने वाला है । हमें इस अनुकम्पा के अलावा और क्या चाहिये ॥ (अर्थात कुछ भी नहीं)

अष्टाविंशः श्लोकः

एतावत्त्वं हि विभुभिर्भाव्यं दीनेषु वत्सलैः ।
यदनुस्मर्यते काले स्वबुद्ध्याभद्ररन्धन ॥२८॥

पदच्छेद—

एतावत्त्वम् हि विभुभिः भाव्यम् दीनेषु वत्सलैः ।
यद् अनुस्मर्यंते काले स्व बुद्ध्या अभद्र रन्धन ॥

शब्दार्थ—

एतावत्त्वम्	६.	इतना	यद्	९.	कि वे
हि	७.	ही	अनुस्मर्यंते	१२.	स्मरण करते रहें
विभुभिः	४.	स्वामियों को	काले	१०.	उचित समय पर
भाव्यम्	८.	करना चाहिये	स्व	११.	अपनी
दीनेषु	५.	दीनों पर	बुद्धया	१२.	बुद्धि से सेवकों का
वत्सलैः ।	३.	दयालु	अभद्र	१.	अमङ्गल
			रन्धन ॥	२.	हारी हे भगवन्

श्लोकार्थ— अमङ्गल हारी हे भगवन् ! दयालु स्वामियों को दीनों पर इतना ही करना चाहिये कि वे उचित समय पर अपनी बुद्धि से सेवकों का स्मरण करते रहें ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

येनोपशान्तिर्भूतानां क्षुल्लकानामपीहताम् ।
अन्तर्हितोऽन्तर्हृदये कस्मान्नो वेद नाशिषः ॥२९॥

पदच्छेद —

येन उपशान्तिः भूतानाम् क्षुल्लकानाम् अपि ईहताम् ।
अन्तर्हितः अन्तर्हृदये कस्मात् नः वेद नः आशिषः ॥

शब्दार्थ—

येन	१. आपके जिस स्मरण से		अन्तर्हितः	७.	छिपे हुये हैं (अतः)
उपशान्तिः	२. सुख प्राप्त होता है		अन्तर्हृदये	६.	हृदय के अन्दर
भूतानाम्	४. प्राणियों के		कस्मात्	११.	कैसे
क्षुल्लकानाम्	३. आप क्षुद्र		नः	९.	हम लोगों के
अपि	५. भी		वेद	१३.	जानते हैं
ईहताम् ।	८. इच्छा रखने वाले		न	१२.	नहीं
			आशिषः ॥	१०.	मनोरथों को (आप)

श्लोकार्थ—आपके जिस स्मरण से सुख प्राप्त होता है। आप क्षुद्र प्राणियों के भी हृदय के अन्दर छिपे हुये हैं। अतः इच्छा रखने वाले हम लोगों के मनोरथों को आप कैसे नहीं जानते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

असावेव वरोऽस्माकमीप्सितो जगतः पते ।
प्रसन्नो भगवान् येषामपवर्गगुरुर्गतिः ॥३०॥

पदच्छेद—

असौ एव वरः अस्माकम् ईप्सितः जगतः पते ।
प्रसन्नः भगवान् येषाम् अपवर्गः गुरुः गतिः ॥

शब्दार्थ—

असौ एव	७. यही		प्रसन्नः	५.	प्रसन्न रहें
वरः	८. वरदान		भगवान्	४.	भगवान् श्री हरि
अस्माकम्	६. हमें		येषाम्	३.	हम लोगों पर
ईप्सितः	९. चाहिये (क्योंकि वे)		अपवर्ग	१०.	मोक्ष मार्ग को
जगतः	१. संसार के		गुरुः	११.	दिखाने वाले
पते ।	२. स्वामी हे प्रभो		गतिः ॥	१२.	मोक्ष स्वरूप है

श्लोकार्थ—संसार के स्वामी हे प्रभो ! हम लोगों पर भगवान् श्री हरि प्रसन्न रहें। हमें यही वरदान चाहिये। क्योंकि वे मोक्ष मार्ग को दिखाने वाले मोक्ष-स्वरूप हैं।

एकत्रिंशः श्लोकः

वरं वृणीमहेऽथापि नाथ त्वत्परतः परात् ।
न ह्यन्तस्त्वद्विभूतीनां सोऽनन्त इति गीयसे ॥३१॥

पदच्छेद—

वरम् वृणीमहे अथापि नाथ त्वत् परतः परात् ।
न हि अन्तः त्वद् विभूतीनाम् सः अनन्तः इति गीयसे ॥

शब्दार्थ—

वरम्	६	वरदान	न हि	१०.	नहीं हैं
वृणीमहे	७.	माँगते हैं	अन्तः	९.	अन्त
अथापि	२.	फिर भी (हम)	त्वद्विभूतीनाम्	८.	आपकी विभूतियों क
नाथ	१.	हे स्वामिन्	सः	११.	इसीलिये आप
त्वत्	५.	आप से	अनन्तः	१२.	अनन्त
परतः	३	परम कारण से भी	इति	१३.	नाम से
परात् ।	४.	परे	गीयसे ॥	१४.	कहे जाते हैं

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! फिर भी हम परम कल्याण से भी परे आप से वरदान माँगते हैं । आपकी विभूतियों का अन्त नहीं है । इसीलिये आप अनन्त नाम से कहे जाते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

पारिजातेऽञ्जसा लब्धे सारङ्गोऽन्यन्न सेवते ।
त्वदङ्घ्रिमूलमासाद्य साक्षात्किं किं वृणीमहि ॥३२॥

पदच्छेद—

पारिजाते अञ्जसा लब्धे सारङ्गः अन्यत् न सेवते ।
त्वद् अङ्घ्रि मूलम् आसाद्य साक्षात् किम् किम् वृणीमहे ॥

शब्दार्थ—

पारिजाते	१.	कल्प वृक्ष के	त्वद्	९.	(उसी प्रकार) आपके
अञ्जसा	२.	सुख पूर्वक	अङ्घ्रि	१०.	चरणों के
लब्धे	३.	सुलभ हो जाने पर (जैसे)	मूलम्	११.	तलवे को
सारङ्गः	४.	भौंरा	आसाद्य	१२.	प्राप्त करके.
अन्यत्	५.	दूसरे पुष्पों पर	साक्षात्	८.	प्रत्यक्ष
न	६.	नहीं	किम्-किम्	१३.	क्या-क्या
सेवते ।	७.	जाता है	वृणीमहे ॥	१४.	वरदान मांगे

श्लोकार्थ—कल्प वृक्ष के सुख पूर्वक प्राप्त हो जाने पर जैसे भौंरा दूसरे पुष्पों पर नहीं जाता है । प्रत्यक्ष उसी प्रकार आपके चरणों के तलवे को प्राप्त करके क्या-क्या वरदान मांगें ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यावत्ते मायया स्पृष्टा भ्रमाम इह कर्मभिः।
तावद्भवत्प्रसङ्गानां सङ्गः स्यान्नो भवे भवे ॥३३॥

पदच्छेद—

यावत् ते मायया स्पृष्टाः भ्रमामः इह कर्मभिः।
तावद् भवत् प्रसङ्गानाम् सङ्गः स्यात् नः भवे भवे ॥

शब्दार्थ—

यावत्	५.	जब-तक	तावद्	८.	तब-तक
ते	२.	आपकी	भवत्	११.	आप के
मायया	३.	माया में	प्रसङ्गानाम्	१२.	भक्तों का
स्पृष्टाः	४.	फंसकर (हम)	सङ्गः	१३.	सत्सङ्ग
भ्रमामः	७.	घूमते रहे	स्यात्	१४.	मिलता रहे
इह	६.	इस संसार में	नः	१०	हमें
कर्मभिः।	१.	कर्मों के कारण	भवे भवे ॥	९.	प्रत्येक-जन्म में

श्लोकार्थ—कर्मों के कारण आपकी माया में फंसकर हम जब-तक इस संसार में घूमते रहें। तब-तक प्रत्येक जन्म में हमें आपके भक्तों का सत्सङ्ग मिलता रहे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
भगवत्सङ्गिसङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिषः ॥३४॥

पदच्छेद—

तुलयाम लवेन अपि न स्वर्गम् न अपुनर्भवम्।
भगवत् सङ्गि सङ्गस्य मर्त्यानाम् किमुत आशिषः ॥

शब्दार्थ—

तुलयाम	९.	तुलना करते हैं	भगवत्	१.	भगवान् के
लवेन अपि	४.	एक क्षण से भी	सङ्गी	२.	भक्तों के
न	५.	नहीं	सङ्गस्य	३.	सत्संग के
स्वर्गम्	६.	स्वर्ग (और)	मर्त्यानाम्	१०.	सामान्य मनुष्यों की तो
न	७.	नहीं	किमुत	१२.	बात ही क्या है
पुनर्भवम्।	८.	मोक्ष को	आशिषः ॥	११.	राज्यादि कामनाओं को

श्लोकार्थ—भगवान् के भक्तों के सत्संग के एक क्षण से भी नहीं स्वर्ग और नहीं मोक्ष की तुलना करते हैं, सामान्य मनुष्यों की तो राज्यादि कामनाओं की बात ही क्या है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

यत्रेड्यन्ते कथा मृष्टास्तृष्णायाः प्रशमो यतः।
निर्वैरं यत्र भूतेषु नोद्वेगो यत्र कश्चन ॥३५॥

पदच्छेद—

यत्र ईड्यन्ते कथाः मृष्टाः तृष्णायाः प्रशमः यतः।
निर्वैरम् यत्र भूतेषु न उद्वेगः यत्र कश्चन ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१.	जिस सत्सङ्गति में	निर्वैरम्	१०.	प्रेम, होता है (और)
ईड्यन्ते	४.	प्रशंसा होती है	यत्र	८.	जहाँ
कथाः	३.	कथाओं की	भूतेषु	९.	प्राणियों में
मृष्टाः	२.	मधुर	न	१४.	नहीं होता है
तृष्णायाः	६.	इच्छा की	उद्वेगः	१३.	भय
प्रशमः	७.	शान्ति होती है	यत्र	११.	जहाँ
यतः।	५.	जिन कथाओं से	कश्चन ॥	१२.	किसी प्रकार का

श्लोकार्थ—जिस सत्सङ्गति में मधुर कथाओं की प्रशंसा होती है, जिन कथाओं से इच्छा की शान्ति होती है जहाँ प्राणियों में प्रेम होता है और जहाँ किसी प्रकार का भय नहीं होता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

यत्र नारायणः साक्षाद्भगवान्न्यासिनां गतिः।
संस्तूयते सत्कथासु मुक्तसङ्गैः पुनः पुनः ॥३६॥

पदच्छेद—

यत्र नारायणः साक्षात् भगवान् न्यासिनाम् गतिः।
संस्तूयते सत् कथासु मुक्त सङ्गैः पुनः पुनः ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१.	जिन	संस्तूयते	१२.	स्तुति की जाती है
नारायणः	९.	नारायण की	सत्कथासु	२.	उत्तम कथाओं में
साक्षात्	७.	प्रत्यक्ष	मुक्त	३.	निष्काम
भगवान्	८.	भगवान्	सङ्गैः	४.	भक्तों के द्वारा
न्यासिनाम्	५.	सन्यासियों के	पुनः	१०.	बार
गतिः।	६.	शरण्य	पुनः ॥	११.	बार

श्लोकार्थ—जिन उत्तम कथाओं में निष्काम भक्तों के द्वारा संन्यासियों के शरण्य प्रत्यक्ष भगवान् नारायण की बार-बार स्तुति की जाती है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तेषां विचरतां पद्भ्यां तीर्थानां पावनेच्छया ।
भीतस्य किं न रोचेत तावकानां समागमः ॥३७॥

पदच्छेद— तेषाम् विचरताम् पद्भ्याम् तीर्थानाम् पावन इच्छया ।
भीतस्य किम् न रोचेत तावकानाम् समागमः ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	६.	उन	भीतस्य	१०.	संसार से डरे हुये को
विचरताम्	५.	विचरने वाले	किम्	९.	क्या
पद्भ्याम्	४.	पैदल	न	११.	नहीं
तीर्थानाम्	१.	तीर्थों को	रोचेत	१२	अच्छा लगेगा
पावन	२.	पवित्र करने की	तावकानाम्	७.	आपके भक्तों का
इच्छया ।	३.	इच्छा से	समागमः ॥	८.	सत्सङ्ग

श्लोकार्थ—तीर्थों को पवित्र करने की इच्छा से पैदल विचरने वाले उन आपके भक्तों का सत्सङ्ग क्या संसार में डरे हुये को नहीं अच्छा लगेगा ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

वयं तु साक्षाद्भगवन् भवस्य प्रियस्य सख्युः क्षणसङ्गमेन ।
सुदुश्चिकित्स्यस्य भवस्य मृत्योर्भिषक्तमं त्वाद्य गतिं गताः स्मः ॥३८॥

पदच्छेद— वयम् तु साक्षात् भगवन् भवस्य प्रियस्य सख्युः क्षण सङ्गमेन ।
सुदुश्चिकित्स्यस्य भवस्य मृत्योः भिषक्तमम् त्वा अद्य गतिम् गताः स्मः ॥

शब्दार्थ—

वयम्	१४.	हम	सुदुश्चिकित्स्यस्य	११.	दुःसाध्य रोग के
तु	७.	ही (हमें आपका)	भवस्य	९.	(आप) जन्म
साक्षात्	८.	प्रत्यक्ष दर्शन हुआ है	मृत्योः	१०.	मरण रूप
भगवन्	१.	हे प्रभो !	भिषक्तमम्	१२.	श्रेष्ठ वैद्य हैं
भवस्य	४.	भगवान् शंकर के	त्वा	१५.	आपकी
प्रियस्य	२.	आपके प्रिय	अद्य	१३.	(अतः) अब
सख्युः	३.	सखा	गतिम्	१६.	शरण में
क्षण	५.	क्षण भर के	गताः	१७.	गये
संगमेन ।	६.	समागम से	स्मः ॥	१८.	हैं

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आपके प्रिय सखा भगवान् शंकर के क्षण भर के समागम से ही हमें आपका प्रत्यक्ष दर्शन हुआ है । आप जन्म मरण रूप दुःसाध्य रोग के श्रेष्ठ वैद्य हैं । अतः अब हम आपकी शरण में गये हैं ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

यन्नः स्वधीतं गुरवः प्रसादिता विप्राश्च वृद्धाश्च सदानुवृत्त्या ।
आर्या नताः सुहृदो भ्रातरश्च सर्वाणि भूतान्यनसूययैव ॥३९॥

पदच्छेद— यत् नः सुअधीतम् गुरवः प्रसादिताः विप्राः च वृद्धाः च सदा अनुवृत्त्या ।
आर्याः नताः सुहृदः भ्रातरः च सर्वाणि भूतानि अनसूयया एव ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	(हे प्रभो) जो	आर्याः	१३.	श्रेष्ठ पुरुषों
नः सु	२.	हमने भली भाँति	नताः	१८.	वन्दना की है
अधीतम्	३.	अध्ययन किया है	सुहृदः	१४	मित्रों
गुरवः	६.	गुरुजनों	भ्रातरः	१५.	बन्धुजनों (और)
प्रसादिताः	९.	प्रसन्न किया है	च	१०.	एवम्
विप्राः	७.	ब्राह्मणों	सर्वाणि	१६.	सभी
च वृद्धाः	८.	और वृद्धजनों को	भूतानि	१७.	प्राणियों की
च	४.	तथा	अनसूयया	११.	दोषभाव को
सदा अनुवृत्त्या ।	५.	निरन्तर सेवा करके	एव ॥	१२.	त्याग कर

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! जो हमने भली भाँति अध्ययन किया है तथा निरन्तर सेवा करके गुरुजनों, ब्राह्मणों और वृद्धजनों को प्रसन्न किया है एवम् दोषभाव को त्याग कर श्रेष्ठ पुरुषों, मित्रों, बन्धुजनों और सभी प्राणियों की वन्दना की है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

यन्नः सुतप्तं तप एतदीश निरन्धसां कालमदभ्रमप्सु ।
सर्वं तदेतत्पुरुषस्य भूम्नो वृणीमहे ते परितोषणाय ॥४०॥

पदच्छेद— यत् नः सुतप्तम् तप एतद्ईश निरन्धसाम् कालम् अदभ्रम् अप्सु ।
सर्वम् तद् एतद् पुरुषस्य भूम्नः वृणीमहे ते परितोषणाय ॥

शब्दार्थ—

यत् नः	२.	जो हमने	अप्सु ।	६.	जल में
सुतप्तम्	९.	अनुष्ठान किया है	सर्वम्	११.	सब
तपः	८.	तपस्या का	तद् एतद्	१०.	सो यह
एतद्	७.	इस	पुरुषस्य	१४.	पुरुषोत्तम के
ईश	१.	हे स्वामिन्	भूम्नः	१२.	सर्व व्यापक
निरन्धसाम्	३.	अन्नादि छोड़कर	वृणीमहे	१६.	यही वर माँगते हैं
कालम्	५.	समय तक	ते	१३.	आप
अदभ्रम्	४	लम्बे	परितोषणाय ॥	१५.	सन्तोष का कारण

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! जो हमने अन्नादि छोड़कर लम्बे समय तक जल में इस तपस्या का अनुष्ठान किया है, सो यह सब सर्व व्यापक आप पुरुषोत्तम के सन्तोष का कारण हो । यही वर माँगते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

मनुः स्वयम्भूर्भगवान् भवश्च येऽन्ये तपोज्ञानविशुद्धसत्त्वाः ।
अदृष्टपारा अपि यन्महिम्नः स्तुवन्त्यथो त्वाऽऽत्मसमं गृणीमः ॥४१॥

पदच्छेद— मनुः स्वयम्भूः भगवान् भवः च ये अन्ये तपः ज्ञान विशुद्ध सत्त्वाः ।
अदृष्ट पाराः अपि यत् महिम्नः स्तुवन्ति अथो त्वा आत्मसमम् गृणीमः ॥

शब्दार्थ—

मनुः	५.	स्वायम्भुव मनु	अदृष्ट	३.	न पाकर
स्वयम्भूः	६.	ब्रह्मा जी	पाराः	२.	पार
भगवान् भवः	७.	भगवान् शिव	अपि	४.	भी
च	८.	तथा	यत् महिम्नः	१.	जिस आपकी महिमा का
ये अन्ये	१३.	जो दूसरे पुरुष हैं (वे)	स्तुवन्ति	१४.	स्तुति करते हैं
तपः	९.	तपस्या (और)	अथो	१५.	अतः (हम भी)
ज्ञान	१०.	ज्ञान से	त्वा	१७.	आपका
विशुद्ध	११.	शुद्ध	आत्मसमम्	१६.	अपनी बुद्धि के अनुसार
सत्त्वाः ।	१२.	चित्त वाले	गृणीमः ॥	१८.	यश गाते हैं

श्लोकार्थ— जिस आपकी महिमा का पार न पाकर भी स्वायम्भुव मनु, ब्रह्माजी, भगवान् शिव तथा तपस्या और ज्ञान से शुद्ध चित्त वाले जो दूसरे पुरुष हैं वे स्तुति करते हैं । अतः हम भी अपनी बुद्धि के अनुसार आपका यश गाते हैं ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

नमः समाय शुद्धाय पुरुषाय पराय च ।
वासुदेवाय सत्त्वाय तुभ्यं भगवते नमः ॥४२॥

पदच्छेद— नमः समाय शुद्धाय पुरुषाय पराय च ।
वासुदेवाय सत्त्वाय तुभ्यम् भगवते नमः ॥

शब्दार्थ—

नमः	६.	आपको नमस्कार है	वासुदेवाय	१०.	वासुदेव को
समाय	१.	सर्वत्र समान	सत्त्वाय	८.	सत्त्व मूर्ति
शुद्धाय	२.	शुद्ध स्वरूप	तुभ्यम्	७.	आप
पुरुषाय	५.	पुरुष हैं (अतः)	भगवते	९.	भगवान्
पराय	४.	परम	नमः ॥	११.	नमस्कार
च ।	३.	और			

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप सर्वत्र समान, शुद्ध स्वरूप और परम पुरुष हैं । अतः आपको नमस्कार है । आप सत्त्व मूर्ति भगवान् वासुदेव को नमस्कार है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति प्रचेतोभिरभिष्टुतो हरिः प्रीतस्तथेत्याह शरण्यवत्सलः।
अनिच्छतां यानमतृप्तचक्षुषां ययौ स्वधामानपवर्गवीर्यः ॥४३॥

पदच्छेद— इति प्रचेतोभिः अभिष्टुतः हरिः प्रीतः तथा इति आह शरण्य वत्सलः।
अनिच्छताम् यानम् अतृप्त चक्षुषाम् ययौ स्वधाम अनपवर्ग वीर्यः ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	वत्सलः।	५.	पालक
प्रचेतोभिः	१.	प्रचेताओं के	अनिच्छताम्	१६.	नहीं चाहते थे (तथापि वे)
अभिष्टुतः	३.	स्तुति करने पर	यानम्	१५.	(अतः उन्हें) जाने देना
हरिः	६.	श्री हरि ने	अतृप्त	१४.	तृप्त नहीं हुये थे
प्रीतः	७.	प्रसन्न होकर	चक्षुषाम्	१३.	प्रचेताओं के नेत्र
तथा	८.	तथास्तु	ययौ	१८.	चले गये
इति	९.	यह	स्वधाम	१७.	अपने परमधाम को
आह	१०.	कहा	अनपवर्ग	११.	अबाध
शरण्य	४.	शरणागत	वीर्यः ॥	१२.	प्रभावशाली श्री हरि के दर्शनों से

श्लोकार्थ—प्रचेताओं के इस प्रकार स्तुति करने पर शरणागत वत्सल भगवान् श्री हरि ने प्रसन्न होकर तथास्तु यह कहा। अबाध प्रभावशाली श्री हरि के दर्शनों से प्रचेताओं के नेत्र तृप्त नहीं हुये थे, अतः उन्हें जाने देना नहीं चाहते थे, तथापि वे अपने परमधाम को चले गये॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

अथ निर्याय सलिलात्प्रचेतस उदन्वतः।
वीक्ष्याकुप्यन्द्रुमैश्छन्नां गां गां रोद्धुमिवोच्छ्रितैः ॥४४॥

पदच्छेद— अथ निर्याय सलिलात् प्रचेतसः उदन्वतः।
वीक्ष्य अकुप्यन् द्रुमैः छन्नाम् गाम् गाम् रोद्धुम् इव उच्छ्रितैः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	द्रुमैः	१०.	वृक्षों से
निर्याय	४.	निकल कर	छन्नाम्	१२.	ढकी हुई
सलिलात्	३.	जल से बाहर	गाम्	११.	पृथ्वी को
प्रचेतसः	५.	प्रचेताओं ने	गाम्	७.	स्वर्ग का मार्ग
उदन्वतः।	२.	समुद्र के	रोद्धुम्	८.	रोकने के लिये
वीक्ष्य	१३.	देखकर (उन)	इव	६.	मानों
अकुप्यन्	१४.	उन पर क्रोध किया	उच्छ्रितैः ॥	९.	बढ़े हुये

श्लोकार्थ—इसके बाद समुद्र के जल से बाहर निकल कर प्रचेताओं ने मानों स्वर्ग का मार्ग रोकने के लिये बढ़े हुये वृक्षों से पृथ्वी को ढकी हुई देखकर उन वृक्षों पर क्रोध किया॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

ततोऽग्निमारुतौ राजन्नमुञ्चन्मुखतो रुषा ।
महीं निर्वीरुधं कर्तुं संवर्तक इवात्यये ॥४५॥

पदच्छेद—

ततः अग्नि मारुतौ राजन् अमुञ्चन् मुखतः रुषा ।
महीम् निर्वीरुधम् कर्तुम् संवर्तकः इव अत्यये ॥

शब्दार्थ—

ततः	२.	तब (उन्होंने)	महीम्	३.	पृथ्वी को
अग्नि	८.	अग्नि (और)	निर्वीरुधम्	४.	वृक्ष लतादि से रहित
मारुतौ	९.	वायु को	कर्तुम्	५.	कर देने के लिये
राजन्	१.	हे विदुर जी	संवर्तकः	१३.	कालाग्नि रुद्र (छोड़ते हैं)
अमुञ्चन्	१०.	(ऐसे) छोड़ा	इव	११.	जैसे
मुखतः	७.	अपने मुख से	अत्यये ॥	१२.	प्रलय काल में
रुषा ।	६.	क्रोध करके			

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! तब उन्होंने पृथ्वी को वृक्ष लतादि से रहित कर देने के लिये क्रोध करके अपने मुख से अग्नि और वायु को ऐसे छोड़ा जैसे प्रलय काल में कालाग्नि छोड़ते हैं ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

भस्मसात्क्रियमाणांस्तान्द्रुमान् वीक्ष्य पितामहः ।
आगतः शमयामास पुत्रान् बर्हिष्मतो नयैः ॥४६॥

पदच्छेद—

भस्मसात् क्रियमाणान् तान् द्रुमान् वीक्ष्य पितामहः ।
आगतः शमयामास पुत्रान् बर्हिष्मतः नयैः ॥

शब्दार्थ—

भस्मसात्	३.	राख	आगतः	७.	वहाँ आये
क्रियमाणान्	४.	बनाते	शमयामास	११.	शान्त किया
तान्	१.	उन	पुत्रान्	१०.	पुत्रों को
द्रुमान्	२.	वृक्षों को (जलाकर)	बर्हिष्मतः	९.	प्राचीनबर्हि के
वीक्ष्य	५	देख कर	नयैः ॥	८.	(और) युक्ति से
पितामहः ।	६.	ब्रह्मा जी			

श्लोकार्थ—उन वृक्षों को जलाकर राख बनाते देख कर ब्रह्माजी वहाँ पर आये और युक्ति से प्राचीनबर्हि के पुत्रों को शान्त किया ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

तत्रावशिष्टा ये वृक्षा भीता दुहितरं तदा ।
उज्जह्रुस्ते प्रचेतोभ्य उपदिष्टाः स्वयम्भुवा ॥४७॥

पदच्छेद—

तत्र अवशिष्टाः ये वृक्षाः भीताः दुहितरम् तदा ।
उज्जह्रुः ते प्रचेतोभ्यः उपदिष्टाः स्वयम्भुवा ॥

शब्दार्थ—

तत्र	२.	वहाँ	तदा ।	१.	उस समय
अवशिष्टाः	४.	बचे हुये	उज्जह्रुः	१२.	भेंट किया
ये	३.	जो	ते	६.	वे
वृक्षाः	५.	वृक्ष थे	प्रचेतोभ्यः	१०.	प्रचेताओं के लिये
भीताः	७.	डर कर	उपदिष्टाः	९.	कहने से
दुहितरम्	११	अपनी पुत्री को	स्वयम्भुवा ॥	८.	ब्रह्माजी के

श्लोकार्थ—उस समय वहाँ जो बचे हुये वृक्ष थे वे डरकर ब्रह्माजी के कहने से प्रचेताओं के लिये अपनी पुत्री को भेंट किया

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

ते च ब्रह्मण आदेशान्मारिषामुपयेमिरे ।
यस्यां महदवज्ञानादजन्यजनयोनिजः ॥४८॥

पदच्छेद—

ते च ब्रह्मणः आदेशात् मारिषाम् उपयेमिरे ।
यस्याम् महद् अवज्ञानाद् अजनि अजन योनिजः ॥

शब्दार्थ—

ते	१.	उन प्रचेताओं ने	यस्याम्	११.	जिसके गर्भ से
च	२.	भी	महद्	९.	(महादेव जी का) बड़ा
ब्रह्मणः	३.	ब्रह्माजी के	अवज्ञानाद्	१०.	अपमान करने के कारण
आदेशात्	४.	आदेश से	अजनि	१२.	जन्म लिया
मारिषाम्	५.	उस मरिषा नाम की	अजन	७.	ब्रह्माजी के
उपयेमिरे ।	६.	(कन्या से) विवाह किया	योनिजः ॥	८.	पुत्र दक्ष जी ने

श्लोकार्थ—उन प्रचेताओं ने भी ब्रह्मा जी के आदेश से उस मरिषा नाम की कन्या से विवाह किया । ब्रह्माजी के पुत्र दक्ष जी ने महादेव जी का बड़ा अपमान करने के कारण जिसके गर्भ से जन्म लिया ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

चाक्षुषे त्वन्तरे प्राप्ते प्राक्सर्गे कालविद्रुते ।
यः ससर्ज प्रजा इष्टाः स दक्षो दैवचोदितः ॥४९॥

पदच्छेद— चाक्षुषे अन्तरे प्राप्ते प्राक् सर्गे काल विद्रुते ।
यः ससर्ज प्रजाः इष्टाः सः दक्षः दैव चोदितः ॥

शब्दार्थ—

चाक्षुषे	५. चाक्षुष		यः	११.	प्रचेता पुत्र
तु	६. नाम के		ससर्ज	१६.	उत्पन्न किया
अन्तरे	७. मन्वन्तर के		प्रजाः	१५.	प्रजाओं को
प्राप्ते	८. आने पर		इष्टाः	१४.	इच्छित
प्राक्	१. जब पूर्व		सः	१२.	उन
सर्गे	२. सृष्टि		दक्षः	१३.	दक्ष जी ने
काल	३. काल-क्रम से		दैव	९.	भगवान् की
विद्रुते ।	४. नष्ट हो गयी (तब)		चोदितः ॥	१०.	प्रेरणा से

श्लोकार्थ—जब पूर्व सृष्टि काल-क्रम से नष्ट हो गयी तब चाक्षुष नाम के मन्वन्तर के आने पर भगवान् की प्रेरणा से प्रचेता-पुत्र उन दक्ष जी ने इच्छित प्रजाओं को उत्पन्न किया ॥

पञ्चाशः श्लोकः

यो जायमानः सर्वेषां तेजस्तेजस्विनां रुचा ।
स्वयोपादत्त दाक्ष्याच्च कर्मणां दक्षमब्रुवन् ॥५०॥

पदच्छेद— यः जायमानः सर्वेषाम् तेजः तेजस्विनाम् रुचा ।
स्वया उपादत्त दाक्ष्यात् च कर्मणाम् दक्षम् अब्रुवन् ॥

शब्दार्थ—

यः	१. जिन्होंने		स्वया	३.	अपने
जायमानः	२. उत्पन्न होते ही		उपादत्त	८.	छीन लिया था
सर्वेषाम्	५. सभी		दाक्ष्यात्	११.	कुशल होने से
तेजः	७. तेज		च	९.	लोग जिन्हें
तेजस्विनाम्	६. तेजस्वियों का		कर्मणाम्	१०.	कर्म करने में
रुचा ।	४. तेज से		दक्षम्	१२.	दक्ष
			अब्रुवन् ॥	१३.	कहते थे

श्लोकार्थ—जिन्होंने उत्पन्न होते ही अपने तेज से सभी तेजस्वियों का तेज छीन लिया था । लोग जिन्हें कर्म करने में कुशल होने से दक्ष कहते थे ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

तं प्रजासर्गरक्षायामनादिरभिषिच्य च ।
युयोज युयुजेऽन्यांश्च स वै सर्वप्रजापतीन् ॥५१॥

पदच्छेद—

तम् प्रजा सर्ग रक्षायाम् अनादिः अभिषिच्य च ।
युयोज युयुजे अन्यान् च सः वै सर्व प्रजा पतीन् ॥

शब्दार्थ—

तम्	३.	उन दक्ष को	युयोज	७.	लगाया
प्रजा	४.	प्रजाओं की	युयुजे	१४.	नियुक्त किया
सर्ग	५.	सृष्टि (और)	अन्यान्	११.	दूसरे
रक्षायाम्	६.	रक्षा में	च	१०.	मरीचि आदि
अनादिः	१.	ब्रह्मा जी	सः वै	९.	उन्होंने
अभिषिच्य	२.	अभिषेक करके	सर्व	१२.	सारे
च ।	८.	तथा	प्रजापतीन् ॥	१३.	प्रजापतियों को

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने अभिषेक करके उन दक्ष को प्रजाओं की सृष्टि और रक्षा में लगाया तथा उन्होंने मरीचि आदि दूसरे सारे प्रजापतियों को नियुक्त किया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे त्रिंशः अध्यायः ॥३०॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

चतुर्थः स्कन्धः

एकत्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—तत उत्पन्नविज्ञाना आश्वधोक्षजभाषितम् ।
स्मरन्त आत्मजे भार्यां विसृज्य प्राव्रजन् गृहात् ॥१॥

पदच्छेद— ततः उत्पन्न विज्ञानाः आशु अधोक्षज भाषितम् ।
स्मरन्तः आत्मजे भार्याम् विसृज्य प्राव्रजन् गृहात् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	दश लाख दिव्य वर्ष बीत जाने पर	स्मरन्तः	६.	स्मरण करते हुये
उत्पन्न	३.	हुआ (तब उन्होंने)	आत्मजे	७.	अपने पुत्र के पास
विज्ञानाः	२.	(उन प्रचेताओं के) विवेक	भार्याम्	८.	अपनी पत्नी को
आशु	११.	शीघ्र	विसृज्य	९.	छोड़ कर
अधोक्षज	४.	भगवान् श्री हरि के	प्राव्रजन्	१२.	संन्यास ले लिया
भाषितम् ।	५.	वाक्य का	गृहात् ॥	१०.	घर से

श्लोकार्थ—दश लाख दिव्य वर्ष बीत जाने पर जब प्रचेताओं को विवेक हुआ तब उन्होंने भगवान् श्री हरि के वाक्य का स्मरण करते हुये अपनी पत्नी को अपने पुत्र के पास छोड़कर घर से शीघ्र संन्यास ले लिया ॥

द्वितीयः श्लोकः

दीक्षिता ब्रह्मसत्रेण सर्वभूतात्ममेधसा ।
प्रतीच्यां दिशि वेलायां सिद्धोऽभूद्यत्र जाजलिः ॥२॥

पदच्छेद— दीक्षिताः ब्रह्मसत्रेण सर्वभूतात्म मेधसा ।
प्रतीच्यां दिशि वेलायाम् सिद्धः अभूत् यत्र जाजलिः ॥

शब्दार्थ—

दीक्षिताः	१३.	संकल्प लेकर (बैठ गये)	प्रतीच्याम्	१.	पश्चिम
ब्रह्मसत्रेण	१२.	ब्रह्मोपासना का	दिशि	२.	दिशा से (उस)
सर्व	८.	सभी	वेलायाम्	३.	समुद्र तट पर
भूत	९.	जीवों में	सिद्धः	६.	सिद्धि
आत्मा	१०.	एक ही आत्म तत्त्व है	अभूत्	७.	मिली थी (वहाँ प्रचेता गण)
मेधसः ।	११.	इस प्रकार के ज्ञान से	यत्र	४.	जहाँ
			जाजलिः ॥	५.	जाजलि मुनि को

श्लोकार्थ—पश्चिम दिशा के उस समुद्रतट पर जहाँ जाजलि मुनि को सिद्धि मिली थी, वहाँ प्रचेता-गण सभी जीवों में एक ही आत्मतत्त्व है, इस प्रकार के ज्ञान से ब्रह्मोपासना का संकल्प लेकर बैठ गये ।

तृतीयः श्लोकः

तान्निर्जितप्राणमनोवचोदृशो जितासनान् शान्तसमानविग्रहान् ।
परेऽमले ब्रह्मणि योजितात्मनः सुरासुरेड्यो ददृशे स्म नारदः ॥३॥

पदच्छेद—तान् निर्जित प्राण मनः वचः दृशः जित आसनान् शान्त समान विग्रहान् ।
परे अमले ब्रह्मणि योजित आत्मनः सुर असुर ईड्यः ददृशे स्म नारदः ॥

शब्दार्थ—

तान्	१७.	उन्हें	परे	११.	पर
निर्जित	४.	वश में किया (तदनन्तर)	अमले	१०.	शुद्ध
प्राण	१.	(प्रचेताओं ने) प्राण वायु	ब्रह्मणि	१२.	ब्रह्म में
मनः वचः	२.	मन वाणी और	योजित	१३.	लीनकर दिया (उस समय)
दृशः	३.	दृष्टि को	आत्मनः	९.	अपने चित्त को
जित	६.	सिद्ध करके	सुर	१४.	देवता और
आसनान्	५.	आसन	असुर ईड्यः	१५.	दानवों के पूजनीय
शान्त समान	८.	निश्चल और सीधा रखकर	ददृशे स्म	१८.	देखा था
विग्रहम् ।	७.	शरीर को	नारदः ॥	१६.	देवर्षि नारद ने

श्लोकार्थ—प्रचेताओं ने प्राणवायु, मन, वाणी और दृष्टि को वश में किया । तदनन्तर आसन सिद्ध करके शरीर को निश्चल और सीधा रखकर अपने चित्त को शुद्ध पर ब्रह्म में लीन कर दिया । उस समय देवता और दानवों के पूजनीय देवर्षि नारद ने उन्हें देखा था ॥

चतुर्थः श्लोकः

तमागतं त उत्थाय प्रणिपत्याभिनन्द्य च ।
पूजयित्वा यथादेशं सुखासीनमथाब्रुवन् ॥४॥

पदच्छेद— तम् आगतम् ते उत्थाय प्रणिपत्य अभिनन्द्य च ।
पूजयित्वा यथा आदेशम् सुख आसीनम् अथ अब्रुवन् ॥

शब्दार्थ—

तम्	१.	नारद जी को	पूजयित्वा	१०.	पूजन किया
आगतम्	२.	आया देखकर	यथा	९.	पूर्वक
ते	३.	प्रचेताओं ने	आदेशम्	८.	विधि
उत्थाय	४.	उठकर (उनको)	सुख	१२.	सुख पूर्वक
प्रणिपत्य	५.	प्रणाम	आसीनम्	१३.	बैठ जाने पर
अभिनन्द्य	७.	स्वागत करके	अथ	११.	और उनके
च ।	६.	और	अब्रुवन् ॥	१४.	कहा

श्लोकार्थ—नारद जी को आया देखकर प्रचेताओं ने उठकर उनको प्रणाम और स्वागत करके विधि-पूर्वक पूजन किया और उनके सुख पूर्वक बैठ जाने पर कहा ॥

पञ्चमः श्लोकः

प्रचेतस ऊचः—स्वागतं ते सुरर्षेऽद्य दिष्ट्या नो दर्शनं गतः ।
तव चङ्क्रमणं ब्रह्मन्नभयाय यथा रवेः ॥५॥

पदच्छेद—

स्वागतम् ते सुरर्षे अद्य दिष्ट्या नः दर्शनम् गतः ।
तव चङ्क्रमणम् ब्रह्मन् अभयाय यथा रवेः ॥

शब्दार्थ—

स्वागतम्	३. स्वागत है	गताः ।	८. हुआ है
ते	२. आपका	तव	१२. आपका
सुरर्षे	१. हे देवर्षे	चङ्क्रमणाम्	१३. घूमना
अद्य	४. आज	ब्रह्मन्	९. हे ब्रह्मन्
दिष्ट्या	५. बड़े भाग्य से	अभयाय	१४. अभयदान के लिये (होता है)
नः	६. हमें	यथा	११. समान
दर्शनम्	७. आपका दर्शन	रवेः ॥	१०. सूर्य के

श्लोकार्थ—हे देवर्षे ! आपका स्वागत है । आज बड़े भाग्य से हमें आपका दर्शन हुआ है । हे ब्रह्मन् ! सूर्य के समान आपका घूमना अभयदान के लिये होता है ।

षष्ठः श्लोकः

यदादिष्टं भगवता शिवेनाधोक्षजेन च ।
तद् गृहेषु प्रसक्तानां प्रायशः क्षपितं प्रभो ॥६॥

पदच्छेद—

यद् आदिष्टम् भगवता शिवेन अधोक्षजेन च ।
तद् गृहेषु प्रसक्तानाम् प्रायशः क्षपितम् प्रभो ॥

शब्दार्थ—

यद्	६. जो	तद्	८. उसे (हम)
आदिष्टम्	७. उपदेश दिया था	गृहेषु	९. गृहस्थी में
भगवता	२. भगवान्	प्रसक्तानाम्	१०. फंसे रहने से
शिवेन	३. शिव	प्रायशः	११. लगभग
अधोक्षजेन	५. श्री हरि ने	क्षपितम्	१२. भूल गये हैं
च ।	४. और	प्रभो ॥	१. हे भगवन्

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! भगवान् शिव और श्री हरि ने जो उपदेश दिया था, उसे हम गृहस्थी में फंसे रहने से लगभग भूल गये हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

तन्नः प्रद्योतयाध्यात्मज्ञानं तत्त्वार्थदर्शनम् ।
येनाञ्जसा तरिष्यामो दुस्तरं भवसागरम् ॥७॥

पदच्छेद—

तद् नः प्रद्योतय अध्यात्म ज्ञानम् तत्त्वार्थ दर्शनम् ।
येन अञ्जसा तरिष्यामः दुस्तरम् भव सागरम् ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	अतः (आप)	येन	८.	जिससे (हम)
नः	२.	हमारे हृदय में	अञ्जसा	९.	सुगमता से
प्रद्योतय	७.	प्रकाश करें	तरिष्यामः	१३.	पार कर सकें
अध्यात्म	५.	अध्यात्म	दुस्तरम्	१०.	अपार
ज्ञानम्	६.	ज्ञान का	भव	११.	संसार
तत्त्वार्थ	३.	परमार्थ तत्त्व का	सागराम् ॥	१२.	सागर को
दर्शनम् ।	४.	दर्शन कराने वाले			

श्लोकार्थ—अतः आप हमारे हृदय में परमार्थ तत्त्व का दर्शन कराने वाले अध्यात्म ज्ञान का प्रकाश करें । जिससे हम सुगमता से अपार संसार सागर को पार कर सकें ॥

अष्टमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति प्रचेतसां पृष्टो भगवान्नारदो मुनिः ।
भगवत्युत्तमश्लोक आविष्टात्माब्रवीन्नृपान् ॥८॥

पदच्छेद—

इति प्रचेतसाम् पृष्टः भगवान् नारदः मुनिः ।
भगवति उत्तमश्लोक आविष्ट आत्मा अब्रवीत् नृपान् ॥

शब्दार्थ—

इति	९.	इस प्रकार	भगवति	५.	भगवान् श्री हरि में
प्रचेतसाम्	८.	प्रचेताओं के	उत्तमश्लोक	४.	विशाल कीर्ति
पृष्टः	१०.	पूछने पर	आविष्ट	६.	लगा रहता है
भगवान्	७.	वे	आत्मा	३.	चित्त
नारदः	२.	नारद का	अब्रवीत्	१२.	कहने लगे
मुनिः ।	१.	देवर्षि	नृपान् ॥	११.	उन राजाओं से

श्लोकार्थ—देवर्षि नारद का चित्त विशाल कीर्ति भगवान् श्री हरि में लगा रहता है । वे प्रचेताओं के के [इस प्रकार पूछने पर उन राजाओं से कहने लगे ॥

नवमः श्लोकः

नारद उवाच—तज्जन्म तानि कर्माणि तदायुस्तन्मनो वचः ।
नृणां येनेह विश्वात्मा सेव्यते हरिरीश्वरः ॥९॥

पदच्छेद— तत् जन्म तानि कर्माणि तद् आयुः तद्मनः वचः ।
नृणाम् येन इह विश्वात्मा सेव्यते हरिः ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

तत्	२.	वह	वचः ।	१०.	वाणी (सफल है)
जन्म	३.	जन्म	नृणाम्	१.	मनुष्य का
तानि	४.	वे	येन	११.	जिससे
कर्माणि	५.	कर्म	इह	१२.	इस संसार में
तद्	६.	वह	विश्वात्मा	१३.	सबकी आत्मा
आयुः	७.	आयु	सेव्यते	१६.	सेवा की जाती है
तद्	८.	वह	हरिः	१५.	श्री हरि की
मनः	९.	मन (और)	ईश्वरः ॥	१४.	भगवान्

श्लोकार्थ—मनुष्यों का वह जन्म, वे कर्म, वह आयु, वह मन और वाणी सफल है, जिससे इस संसार में सबकी आत्मा भगवान् श्री हरि की सेवा की जाती है ।

दशमः श्लोकः

किं जन्मभिस्त्रिभिर्वेह शौक्लसावित्रयाज्ञिकैः ।
कर्मभिर्वा त्रयीप्रोक्तैः पुंसोऽपि विबुधायुषा ॥१०॥

पदच्छेद—

किम् जन्मभिः त्रिभिः वा इह शौक्ल सावित्र याज्ञिकैः ।
कर्मभिः वा त्रयी प्रोक्तैः पुंसः अपि विबुध आयुषा ॥

शब्दार्थ—

किम्	१६.	निष्फल है	कर्मभिः	१०.	कर्म
जन्मभिः	७.	जन्म	वा	११.	और
त्रिभिः	६.	तीन प्रकार का	त्रयी	८.	वेद
वा	४.	तथा	प्रोक्तैः	९.	विहित
इह	१.	इस संसार में	पुंसः	१२.	मनुष्यों की
शौक्ल	२.	विशुद्ध माता-पिता से	अपि	१५.	भी
सावित्र	३.	उपनयन संस्कार से	विबुध	१३.	देवताओं के समान
याज्ञिकैः ।	५.	गुरु दीक्षा से होने वाला	आयुषा ॥	१४.	लम्बी आयु

श्लोकार्थ—इस संसार में विशुद्ध माता-पिता से, उपनयन संस्कार से तथा गुरु दीक्षा से होने-वाला तीन प्रकार का जन्म, वेद विहित कर्म और मनुष्यों की देवताओं के समान लम्बी आयु निष्फल है ॥

एकादशः श्लोकः

श्रुतेन तपसा वा किं वचोभिश्चित्तवृत्तिभिः ।
बुद्ध्या वा किं निपुणया बलेनेन्द्रियराधसा ॥११॥

पदच्छेद—

श्रुतेन तपसा वा किम् वचोभिः चित्त वृत्तिभिः ।
बुद्ध्या वा किम् निपुणया बलेन इन्द्रिय राधसा ॥

शब्दार्थ—

श्रुतेन	१.	वेदाध्ययन	बुद्ध्या	१०.	बुद्धि
तपसा	२.	तपस्या	वा	८.	तथा
वा	४.	तथा	किम्	१४.	निष्फल है
किम्	७.	क्या प्रयोजन है	निपुणया	९.	कुशल
वचोभिः	३.	वाक् चातुरी	बलेन	११.	शारीरिक
चित्त	५.	चित्त की	इन्द्रिय	१२.	इन्द्रियों की
वृत्तिभिः ।	६.	एकाग्रता से	राधसा ॥	१३.	कुशलता भी

श्लोकार्थ—वेदाध्ययन, तपस्या, वाक् चातुरी तथा चित्त की एकाग्रता से क्या प्रयोजन है । तथा कुशल बुद्धि शारीरिक इन्द्रियों की कुशलता भी निष्फल है ॥

द्वादशः श्लोकः

किं वा योगेन सांख्येन न्यासस्वाध्याययोरपि ।
किं वा श्रेयोभिरन्यैश्च न यत्रात्मप्रदो हरिः ॥१२॥

पदच्छेद—

किम् वा योगेन सांख्येन न्यास स्वाध्याययोः अपि ।
किम् वा श्रेयोभिः अन्यैः च न यत्र आत्मप्रदः हरिः ॥

शब्दार्थ—

किम्	७.	निष्फल है	वा	८.	एवम्
वा	४.	तथा	श्रेयोभिः	९.	मोक्ष के साधक
योगेन	१.	अष्टांग योग	अन्यैः	१०.	दूसरे
सांख्येन	२.	आत्मज्ञान	च	११.	व्रतादि भी
न्यास	३.	संन्यास	न	१६.	नहीं हैं
स्वाध्याययोः	५.	वेदाध्ययन	यत्र	१३.	जिनमें
अपि ।	६.	भी	आत्मप्रदः	१४.	मुक्तिदाता
किम्	१२.	निष्फल है	हरिः ॥	१५.	भगवान् श्री हरि

श्लोकार्थ—अष्टांग योग, आत्मज्ञान, संन्यास तथा वेदाध्ययन भी निष्फल है । एवम् मोक्ष के साधक दूसरे व्रतादि भी निष्फल हैं । जिनमें मुक्तिदाता भगवान् श्री हरि नहीं हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

श्रेयसामपि सर्वेषामात्मा ह्यवधिरर्थतः ।
सर्वेषामपि भूतानां हरिरात्माऽऽत्मदः प्रियः ॥१३॥

पदच्छेद— श्रेयसाम् अपि सर्वेषाम् आत्मा हि अवधिः अर्थतः ।
सर्वेषाम् अपि भूतानाम् हरिः आत्मा आत्मदः प्रियः ॥

शब्दार्थ—

श्रेयसाम्	२.	कल्याण साधन	सर्वेषाम्	९.	सभी
अपि	७.	किन्तु	अपि	१३.	और
सर्वेषाम्	१.	सभी	भूतानाम्	१०.	प्राणियों की
आत्मा	४.	अपनी आत्मा को	हरिः	८.	भगवान् श्री हरि
हि	५.	ही	आत्मा	११.	आत्मा
अवधिः	६.	प्रिय लगने वाले हैं	आत्मदः	१२.	मुक्तिदाता
अर्थतः ।	३.	वस्तुतः	प्रियः ।	१४.	प्रिय है

श्लोकार्थ—सभी कल्याण साधन वस्तुतः अपनी आत्मा को ही प्रिय लगने वाले हैं । किन्तु भगवान् श्री हरि सभी प्राणियों की आत्मा, मुक्तिदाता और प्रिय हैं ।

चतुर्दशः श्लोकः

यथा तरोर्मूलनिषेचनेन तृप्यन्ति तत्स्कन्धभुजोपशाखाः ।
प्राणोपहाराच्च यथेन्द्रियाणां तथैव सर्वार्हणमच्युतेज्या ॥१४॥

पदच्छेद— यथा तरोः मूलनिषचनेन तृप्यन्ति तत् स्कन्ध भुज उपशाखाः ।
प्राण उपहारात् च यथा इन्द्रियाणाम् तथैव सर्व अर्हणम् अच्युत इज्या ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	प्राण	११	शरीर में
तरोः	२.	वृक्ष के	उपहारात्	१२.	भोजन करने से
मूल	३.	जड़ में	च यथा	१०.	और जैसे
निषचनेन	४.	सींचने से	इन्द्रियाणाम्	१३.	सभी इन्द्रियों की तृप्ति होती है
तृप्यन्ति	९.	तृप्त हो जाते हैं	तथैव	१४.	उसी प्रकार
तत्	५.	उस वृक्ष की	सर्व	१७.	सभी देवताओं की
स्कन्ध	६.	डालियाँ	अर्हणम्	१८.	पूजा है
भुज	७.	शाखायें (और)	अच्युत	१५.	भगवान् श्री हरि की
उपशाखाः ।	८.	तने	इज्या ॥	१६.	पूजा

श्लोकार्थ—जैसे वृक्ष की जड़ में सींचने से उस वृक्ष की डालियाँ, शाखायें और तने तृप्त हो जाते हैं और जैसे शरीर में भोजन करने से सभी इन्द्रियों की तृप्ति होती है, उसी प्रकार भगवान् श्री हरि की पूजा सभी देवताओं की पूजा है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

यथैव सूर्यात्प्रभवन्ति वारः पुनश्च तस्मिन् प्रविशन्ति काले।
भूतानि भूमौ स्थिरजङ्गमानि तथा हरावेव गुणप्रवाहः ॥१५॥

पदच्छेद— यथा एव सूर्यात् प्रभवन्ति वारः पुनः च तस्मिन् प्रविशन्ति काले।
भूतानि भूमौ स्थिर जङ्गमानि तथा हरौ एव गुण प्रवाहः ॥

शब्दार्थ—

यथा एव	१.	जैसे	भूतानि	१३.	प्राणी (लीन हो जाते हैं)
सूर्यात्	४.	सूर्य से	भूमौ	१०.	जैसे पृथ्वी
प्रभवन्ति	५.	उत्पन्न होता है	स्थिर	११.	स्थावर
वारः	२.	जल	जङ्गमानि	१२.	जङ्गम (सभी)
पुनः	७.	फिर मे	तथा	१४.	उसी प्रकार
च	६.	तथा	हरौ	१७.	भगवान् श्री हरि में
तस्मिन्	८	उस सूर्य में ही	एव	१८	ही समा जाती है
प्रविशन्ति	९.	प्रवेश कर जाता है (तथा)	गुण	१५.	सृष्टि का
काले।	३.	समय पर	प्रवाहः ॥	१६.	प्रवाह

श्लोकार्थ—जैसे जल समय पर सूर्य से उत्पन्न होता है तथा फिर मे उस सूर्य में ही प्रवेश कर जाता है तथा जैसे पृथ्वी में स्थावर जङ्गम सभी प्राणी लीन हो जाते हैं, उसी प्रकार सृष्टि का प्रवाह भगवान् श्री हरि में समा जाता है ॥

षोडशः श्लोकः

एतत्पदं तज्जगदात्मनः परं सकृद्विभातं सवितुर्यथा प्रभा।
यथासवो जाग्रति सुप्तशक्तयो द्रव्यक्रियाज्ञानभिदाभ्रमात्ययः ॥१६॥

पदच्छेद— एतद् पदम् तत् जगदात्मनः परम् सकृद् विभातम् सवितः यथा प्रभा।
यथा असवः जाग्रति सुप्त शक्तयः द्रव्य क्रिया ज्ञान भिदा भ्रम अत्ययः ॥

शब्दार्थ—

एतद्	२.	यह	यथा	१०.	जैसे
पदम्	५.	स्वरूप है	असवः	१२.	इन्द्रियाँ क्रियाशील रहती हैं तथा
तत्	३.	शास्त्र वर्णित	जाग्रति	११.	जाग्रत् अवस्था में
जगदात्मनः	१.	संसार की आत्मा (श्री हरि का)	सुप्त	१३.	सुप्तावस्था में
परम्	४.	सर्वोत्तम	शक्तयः	१४.	शक्तियाँ सोई रहती हैं (वस्तुतः)
सकृद्विभातम्	९.	कभी-कभी प्रकार हो जाने वाला	द्रव्य	१५.	अहंकार के कार्य द्रव्य
सवितुः	७.	सूर्य का	क्रिया ज्ञान	१६.	क्रिया ज्ञान तथा
यथा	६.	जैसे	भिदा भ्रम	१७.	भेद के सन्देह का
प्रभा।	८.	प्रकाश (उससे भिन्न नहीं है)	अत्ययः ॥	१८.	सर्वथा अभाव है

श्लोकार्थ—संसार की आत्मा भगवान् श्री हरि का यह शास्त्र वर्णित सर्वोत्तम स्वरूप है। जैसे सूर्य का प्रकाश उससे भिन्न नहीं है। कभी-कभी प्रकट हो जाने वाला यह संसार प्रभु से भिन्न नहीं है। जैसे जाग्रत् अवस्था में इन्द्रियाँ क्रियाशील रहती हैं तथा सुप्तावस्था में उनकी शक्तियाँ सोई रहती हैं। वस्तुतः भगवान् में अहंकार के कार्य द्रव्य, क्रिया, ज्ञान तथा भेद के सन्देह का सर्वथा अभाव है ॥

सप्तदशः श्लोकः

यथा नभस्यभ्रतमः प्रकाशा भवन्ति भूपा न भवन्त्यनुक्रमात् ।
एवं परे ब्रह्मणि शक्तयस्त्वमू रजस्तमःसत्त्वमिति प्रवाहः ॥१७॥

पदच्छेद— यथा नभसि अभ्र तमः प्रकाशाः भवन्ति भूपाः न भवन्ति अनुक्रमात् ।
एवम् परे ब्रह्मणि शक्तयः तु अमूः रजः तमः सत्त्वम् इति प्रवाहः ॥

शब्दार्थ—

यथा	२.	जैसे	एवम्	१०.	उसी प्रकार
नभसि	३.	आकाश से	परे ब्रह्मणि	१५.	परब्रह्म में लीन होती है
अभ्र	४.	बादल	शक्तयः	१४.	शक्तियां
तमः	५.	अन्धकार (और)	तु	१६.	तथा
प्रकाशाः	६.	प्रकाश	अमूः	१३.	ये
भवन्ति	७.	उत्पन्न होते हैं (और)	रज तमः	११.	रजोगुण तमोगुण (और)
भूपाः	१.	हे प्रचेतागण	सत्त्वम्	१२.	सत्त्वगुण को
न भवन्ति	९.	लीन हो जाते हैं	इति	१७.	इसी प्रकार (यह)
अनुक्रमात् ।	८.	क्रम से (उसी में)	प्रवाहः ॥	१८.	जगत् प्रवाह (चलता रहता है)

श्लोकार्थ—हे प्रचेतागण ! जैसे आकाश से बादल, अन्धकार और प्रकाश उत्पन्न होते हैं और क्रम से उसी में लीन हो जाते हैं, उसी प्रकार रजोगुण, तमोगुण और सत्त्वगुण की ये शक्तियाँ परब्रह्म में लीन होती हैं, तथा इसी प्रकार यह जगत् प्रवाह चलता रहता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

तेनैकमात्मानमशेषदेहिनां कालं प्रधानं पुरुषं परेशम् ।
स्वतेजसा ध्वस्तगुणप्रवाहमात्मैकभावेन भजध्वमद्धा ॥१८॥

पदच्छेद— तेन एकम् आत्मानम् अशेष देहिनाम् कालम् प्रधानम् पुरुषम् परेशम् ।
स्वतेजसा ध्वस्त गुण प्रवाहम् आत्म एक भावेन भजध्वम् अद्धा ॥

शब्दार्थ—

तेन	१.	इसलिये (तुम लोग)	स्वतेजसा	५.	अपने तेज से
एकम्	१३.	अद्वितीय	ध्वस्त	८.	नष्ट करने वाले (तथा)
आत्मानम्	४.	आत्मा	गुण	६.	तीनों गुण के
अशेष	२.	सम्पूर्ण	प्रवाहम्	७.	प्रवाह को
देहिनाम्	३.	प्राणियों की	आत्म	१६.	परमात्म
कालम्	९.	काल	एक	१५.	केवल
प्रधानम्	१०.	प्रधान और	भावेन	१७.	भाव
पुरुषम्	११.	कर्ता स्वरूप	भजध्वम्	१८.	भजन करो
परेशम्	१४.	श्री हरि का	अद्धा ॥	१२.	साक्षात्

श्लोकार्थ—इसलिये तुम लोग सम्पूर्ण प्राणियों की आत्मा, अपने तेज से तीनों गुणों के प्रवाह को नष्ट करने वाले, काल प्रधान और कर्ता स्वरूप साक्षात् अद्वितीय श्री हरि का केवल परमात्म भाव से भजन करो ॥

एकोनविंशः श्लोकः

दयया सर्वभूतेषु सन्तुष्ट्या येन केन वा।
सर्वेन्द्रियोपशान्त्या च तुष्यत्याशु जनार्दनः ॥१९॥

पदच्छेद— दयया सर्व भूतेषु सन्तुष्ट्या केन येन वा।
सर्व इन्द्रिय उपशान्त्या च तुष्यति आशु जनार्दनः ॥

शब्दार्थ—

दयया	४.	दया करने से	सर्व	११.	सभी
सर्व	२.	सब	इन्द्रिय	१०.	इन्द्रियों के
भूतेषु	३.	प्राणियों पर	उपशान्त्या	१२.	विषयों से अलग रखने से
सन्तुष्ट्या	८.	सन्तुष्ट रहने से	च	९.	और
येन	५.	जो	तुष्यति	१४.	प्रसन्न होते हैं
केन	६.	कुछ मिल जाय	आशु	१३.	शीघ्र
वा।	७.	उससे	जनार्दनः ॥	१.	भगवान श्री हरि

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि सब प्राणियों पर दया करने से, जो कुछ मिल जाय उससे सन्तुष्ट रहने से और इन्द्रियों के सभी विषयों से अलग रखने से शीघ्र प्रसन्न होते हैं ॥

विंशः श्लोकः

अपहतसकलैषणामलात्मन्यविरतमेधितभावनोपहूतः ।
निजजनवशगत्वमात्मनोऽयन्न सरति छिद्रवदक्षरः सतां हि ॥२०॥

पदच्छेद— अपहत सकल एषणाम् अमल आत्मनि अविरतम् एधित भावना उपहूतः।
निज जन वश गत्वम् आत्मनः अयन् न सरति छिद्रवत् अक्षरः सताम् हि ॥

शब्दार्थ—

अपहत	३.	समाप्त हो जाने के कारण	निजजन	११.	भक्तों की
सकल	१.	सब प्रकार की	वशगत्वम्	१२.	अधीनता को
एषणाम्	२.	कामनाओं के	आत्मनः	१०.	अपने
अमल	४.	भक्तों के शुद्ध	अयम्	१३.	स्वीकार करके (ये)
आत्मनि	५.	चित्त में (भगवान् श्री हरि)	न सरति	१८.	नहीं निकलते हैं
अविरतम्	६.	निरन्तर	छिद्रवत्	१५.	हृदयाकाश के समान
एधित	७.	बढ़ते हुये	अक्षरः	१४.	अविनाशी पुरुष
भावना	८.	चिन्तन से	सताम्	१६.	(उन) सन्तों के हृदय से
उपहूतः।	९.	विराजमान हो जाते हैं (तथा)	हि।	१७.	कभी

श्लोकार्थ—सब प्रकार की कामनाओं के समाप्त हो जाने के कारण भक्तों के शुद्ध चित्त में भगवान् श्री हरि निरन्तर बढ़ते हुये चिन्तन से विराजमान हो जाते हैं तथा अपने भक्तों की अधीनता को स्वीकार करके ये अविनाशी पुरुष हृदयाकाश के समान उन सन्तों के हृदय से कभी नहीं निकलते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

न भजति कुमनीषिणां स इज्यां हरिरधनात्मधनप्रियो रसज्ञः ।
श्रुतधनकुलकर्मणां मदैर्ये विदधति पापमकिञ्चनेषु सत्सु ॥२१॥

पदच्छेद—न भजति कुमनीषिणाम् सः इज्याम् हरिः अधन आत्मधन प्रियः रसज्ञः ।
श्रुत धन कुल कर्मणाम् मदैः ये विदधति पापम् अकिञ्चनेषु सत्सु ॥

शब्दार्थ—

न	८.	नहीं	श्रुत	११.	शास्त्राध्ययन में
भजति	९.	स्वीकार करते हैं	धन	१२.	सम्पत्ति
कुमनीषिणाम्	६.	कुबुद्धि लोगों की	कुल	१३.	उच्च कुल (और)
सः	४.	वे भगवान्	कर्मणाम्	१४.	कर्मों के
इज्याम्	७.	पूजा को	मदैः	१५.	अभिमान से
हरिः	५.	श्री हरि (उन)	ये	१०.	जो
अधन	२.	निर्धनों के	विदधति	१८.	करते हैं
आत्मधन	१.	भगवान् को धन मानने वाले	पापम्	१७.	तिरस्कार
प्रियरसज्ञः ।	३.	प्रेमी भक्ति रस के मर्मज्ञ	अकिञ्चनेषु सत्सु ॥	१६.	निर्धन संतों का

श्लोकार्थ—भगवान् को धन मानने वाले निर्धनों के प्रेमी, भक्तिरस के मर्मज्ञ भगवान् श्री हरि उन कुबुद्धि लोगों की पूजा को नहीं स्वीकार करते हैं। जो शास्त्राध्ययन में सम्पत्ति, उच्च कुल और कर्मों के अभिमान से निर्धन सन्तों का तिरस्कार करते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

श्रियमनुचरतीं तदर्थिनश्च द्विपदपतीन् विबुधांश्च यत्स्वपूर्णः ।
न भजति निजभृत्यवर्गतन्त्रः कथममुमुद्विसृजेत्पुमान् कृतज्ञः ॥२२॥

पदच्छेद— श्रियम् अनुचरतीम् तद् अर्थिनः च द्विपदपतीन् विबुधान् च यत् स्वपूर्णः ।
न भजति निज भृत्यवर्ग तन्त्रः कथम् अमुम् उद्विसृजेत् पुमान् कृतज्ञः ॥

शब्दार्थ—

श्रियम्	५.	लक्ष्मी जी	न	११.	नहीं
अनुचरतीम्	४.	सेवा करने वाली	भजति	१२.	चाहते हैं
तद् अर्थिनः	७.	लक्ष्मी को चाहने वाले	निज	१.	अपने
च	९.	और	भृत्यवर्ग	२.	सेवकों के
द्विपदपतीन्	८.	राजाओं	तन्त्रः	३.	अधीन रहने वाले (श्री हरि)
विबुधान्	१०.	देवताओं को भी	कथम् अमुम्	१७.	कैसे उन श्री हरि को
च	६.	तथा	उद्विसृजेत्	१८.	छोड़ सकता है
यत्	१३.	क्योंकि	पुमान्	१६.	मनुष्य
स्वपूर्णः ।	१४.	वे अपने में परिपूर्ण हैं	कृतज्ञः ॥	१५.	भक्त

श्लोकार्थ—अपने सेवकों के अधीन रहने वाले श्री हरि सेवा करने वाली लक्ष्मी जी तथा लक्ष्मी को चाहने वाले राजाओं और देवताओं को भी नहीं चाहते हैं। क्योंकि वे अपने में परिपूर्ण हैं। अतः भक्त मनुष्य कैसे उन श्री हरि को छोड़ सकता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति प्रचेतसो राजन्नन्याश्च भगवत्कथाः।
श्रावयित्वा ब्रह्मलोकं ययौ स्वायम्भुवो मुनिः ॥२३॥

पदच्छेद—

इति प्रचेतसः राजन् अन्याः च भगवत् कथाः।
श्रावयित्वा ब्रह्मलोकम् ययौ स्वायम्भुवः मुनिः ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	कथाः।	५.	कथायें
प्रचेतसः	३.	प्रचेताओं के	श्रावयित्वा	८.	सुनाकर
राजन्	१.	हे विदुर जी	ब्रह्मलोकम्	११.	ब्रह्मलोक को
अन्याः	७.	दूसरी कथायें	ययौ	१२.	चले गये
च	६.	और	स्वायम्भुवः	१०.	नारद जी
भगवत्	४.	भगवत् सम्बन्धि	मुनिः ॥	९.	देवर्षि

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! इस प्रकार प्रचेताओं को भगवत् सम्बन्धि कथायें और दूसरी कथायें सुनाकर देवर्षि नारद जी ब्रह्मलोक को चले गये ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तेऽपि तन्मुखनिर्यातं यशो लोकमलापहम्।
हरेर्निशम्य तत्पादं ध्यायन्तस्तद्गतिं ययुः ॥२४॥

पदच्छेद—

ते अपि तन्मुखनिर्यातं यशो लोक मल अपहम्।
हरेः निशम्य तत् पादम् ध्यायन्तः तद् गतिम् ययुः ॥

शब्दार्थ—

ते	१.	वे प्रचेतागण	हरेः	८.	भगवान् श्री हरि के
अपि	२.	भी	निशम्य	१०.	सुनकर
तद् मुख	३.	नारद जी के मुख से	तत्	११.	उनके
निर्यातम्	४.	निकले हुये	पादम्	१२.	चरणों का
यशः	९.	यश को	ध्यायन्तः	१३.	ध्यान करते हुये
लोक	५.	संसार के	तद्	१४.	उनके
मल	६.	दोष को	गतिम्	१५.	धाम को
अपहम्।	७.	दूर करने वाले	ययुः ॥	१६.	प्राप्त हो गये

श्लोकार्थ—वे प्रचेतागण भी नारद जी के मुख से निकले हुये संसार के दोष को दूर करने वाले भगवान् श्री हरि के यश को सुनकर उनके चरणों का ध्यान करते हुये उनके धाम को प्राप्त हो गये ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

एतत्तेऽभिहितं क्षत्तर्यन्मां त्वं परिपृष्टवान् ।
प्रचेतसां नारदस्य संवादं हरिकीर्तनम् ॥२५॥

पदच्छेद—

एतत् ते अभिहितम् क्षत्तः यद् माम् त्वम् परिपृष्टवान् ।
प्रचेतसाम् नारदस्य संवादम् हरिकीर्तनम् ॥

शब्दार्थ—

एतत्	१०. यह		परिपृष्टवान् ।	५. पूछा था
ते	१२. तुम्हें		प्रचेतसाम्	८. प्रचेताओं (और)
अभिहितम्	१३. सुना दिया		नारदस्य	९. देवर्षि नारद का
क्षत्तः	१. हे विदुर जी		संवादम्	११. संवाद
यद्	४. जो		हरि	६. भगवान् श्री हरि के
माम्	३. मुझसे		कीर्तनम् ॥	७. चरित्र से सम्बन्धित
त्वम्	२. तुमने			

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! तुमने मुझसे जो पूछा था, सो भगवान् श्री हरि के चरित्र से सम्बन्धित प्रचेताओं और देवर्षि नारद का यह संवाद तुम्हें सुना दिया ॥

षड्विंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—य एष उत्तानपदो मानवस्यानुवर्णितः ।
वंशः प्रियव्रतस्यापि निबोध नृपसत्तम ॥२६॥

पदच्छेद—

यः एषः उत्तानपदः मानवस्य अनु वर्णितः ।
वंशः प्रियव्रतस्य अपि निबोध नृपसत्तम ॥

शब्दार्थ—

यः	३. जो		वंशः	८. वंश का
एषः	५. यह (उसका)		प्रियव्रतस्य	७. अब प्रियव्रत के
उत्तानपदः	४. उत्तानपाद पुत्र थे		अपि	९. भी (वर्णन)
मानवस्य	२. स्वायम्भुवमनु के		निबोध	१०. सुनो
अनुवर्णितः ।	६. वर्णन किया		नृपसत्तम ॥	१. हे परीक्षित्

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! स्वायम्भुवमनु के जो उत्तानपाद पुत्र थे, यह उसका वर्णन किया । अब प्रियव्रत के वंश का भी वर्णन सुनो ॥

सप्तविंशः श्लोकः

यो नारदादात्मविद्यामधिगम्य पुनर्महीम् ।
भुक्त्वा विभज्य पुत्रेभ्य ऐश्वरं समगात्पदम् ॥२७॥

पदच्छेद— यः नारदात् आत्म विद्याम् अधिगम्य पुनः महीम् ।
भुक्त्वा विभज्य पुत्रेभ्यः ऐश्वरम् समगात् पदम् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	राजा प्रियव्रत ने	भुक्त्वा	७.	भोग किया (तथा)
नारदात्	२.	देवर्षि नारद से	विभज्य	१०.	बाँट कर
आत्मविद्यात्	३.	आत्मज्ञान का	पुत्रेभ्यः	९.	पुत्रों में
अधिगम्य	४.	उपदेश पाकर	ऐश्वरम्	६.	राज्य का
पुनः	५.	फिर से	समगात्	१२.	प्राप्त किया
महीम् ।	८.	(अन्त में) पृथ्वी को	पदम् ॥	११.	भगवान् के धाम को

श्लोकार्थ—राजा प्रियव्रत ने देवर्षिनारद से आत्मज्ञान का उपदेश पाकर फिर से राज्य का भोग किया। तथा अन्त में पृथ्वी को पुत्रों में बाँट कर भगवान् के धाम को प्राप्त किया ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

इमां तु कौषारविणोपवर्णितां क्षत्ता निशम्याजितवाद सत्कथाम् ।
प्रवृद्धभावोऽश्रुकलाकुलो मुनेर्दधार मूर्ध्ना चरणं हृदा हरेः ॥२८॥

पदच्छेद— इमाम् तु कौषारविणा उपवर्णिताम् क्षत्ता निशम्य अजितवाद सत्कथाम् ।
प्रवृद्ध भावः अश्रु कला आकुलः मुनेः दधार मूर्ध्ना चरणम् हृदा हरेः ॥

शब्दार्थ—

इमाम्	६.	इस	प्रवृद्ध	१२.	वृद्धि होने से
तु	१.	इधर	भावः	११.	भक्ति-भाव की
कौषारविणा	२.	मैत्रेय जी से	अश्रुकला	१३.	आँसुओं की धारा
उपवर्णिताम्	३.	कही गयी	आकुलः	१४.	बहने लगी
क्षत्ता	९.	विदुर जी में	मुनेः	१८.	मुनिवर मैत्रेय जी के
निशम्य	८.	सुनकर	दधार	२०.	रख दिया
अजित वाद	४.	भगवद् गुणानुवाद से	मूर्ध्ना	१७.	(अपना) मस्तक
सत्	५.	पवित्र	चरणम्	१९.	चरणों पर
कथाम् ।	७.	कथा को	हृदा	१५.	उन्होंने हृदय में
			हरेः ।	१६.	भगवान् श्री हरि का स्मरण करते हुये

श्लोकार्थ—इधर मैत्रेय जी से कही गयी भगवद् गुणानुवाद से पवित्र इस कथा को सुनकर विदुर जी में भक्ति-भाव की वृद्धि होने से आँसुओं की धारा बहने लगी। उन्होंने हृदय में भगवान् श्री हरि का स्मरण करते हुये अपना मस्तक मुनिवर मैत्रेय जी के चरणों पर रख दिया ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

विदुर उवाच—सोऽयमद्य महायोगिन् भवता करुणात्मना ।
दर्शितस्तमसः पारो यत्राकिञ्चनगो हरिः ॥२९॥

पदच्छेद—

स: अयम् अद्य महायोगिन् भवता करुण आत्मना ।
दर्शितः तमसः पारः यत्र अकिंचनगः हरिः ॥

शब्दार्थ—

सः	७.	शास्त्र वर्णित	दर्शितः	१०.	दिखा दिया है
अयम्	८.	यह	तमसः	६.	अज्ञान का
अद्य	५.	आज (अपने)	पारः	९.	पार
महायोगिन्	१.	महायोगी हे मैत्रेय जी	यत्र	११.	जहाँ
भवता	२.	आप बड़े ही	अकिञ्चन	१२.	दीनों के
करुण	३.	करुणा	गः	१३.	सर्वस्व
आत्मनः ।	४.	करने वाले हैं	हरिः ॥	१४.	श्री हरि रहते हैं

श्लोकार्थ—महायोगी हे मैत्रेय जी ! आप बड़े ही करुणा करने वाले हैं । आज आपने अज्ञान का शास्त्र वर्णित यह पार दिखा दिया है, जहाँ दीनों के सर्वस्व श्री हरि रहते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इत्यानम्य तमामन्त्र्य विदुरो गजसाह्वयम् ।
स्वानां दिदृक्षुः प्रययौ ज्ञातीनां निर्वृताशयः ॥३०॥

पदच्छेद—

इति आनम्य तम् आमन्त्र्य विदुरः गज साह्वयम् ।
स्वानाम् दिदृक्षुः प्रययौ ज्ञातीनाम् निर्वृत आशयः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार (मैत्रेय जी को)	स्वानाम्	८.	अपने
आनम्य	२.	प्रणाम करके (और)	दिदृक्षुः	१०.	देखने की इच्छा से
तम्	३.	उनसे	प्रययौ	१२.	चले गये
आमन्त्र्य	४.	आज्ञा लेकर	ज्ञातीनाम्	९.	बन्धुजनों को
विदुरः	५.	विदुर जी	निर्वृत	६.	शान्त
गजसाह्वयम् ।	११.	हस्तिनापुर	आशयः ॥	७.	चित्त होकर

श्लोकार्थ—इस प्रकार मैत्रेय जी को प्रणाम करके और उनसे आज्ञा लेकर विदुर जी शान्त चित्त होकर अपने बन्धुजनों को देखने की इच्छा से हस्तिनापुर चले गये ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

एतद्यः शृणुयाद्राजन् राज्ञां हर्यर्पितात्मनाम् ।
आयुर्धनं यशः स्वस्ति गतिमैश्वर्यमाप्नुयात् ॥३१॥

पदच्छेद—

एतद् यः शृणुयात् राजन् राज्ञाम् हरि अर्पित आत्मनाम् ।
आयुः धनम् यशः स्वस्ति गतिम् ऐश्वर्यम् आप्नुयात् ॥

अन्वार्थ—

एतद्	१.	यह चरित	आयुः	६	(उसे लम्बी) आयु
यः	२.	जो पुरुष	धनम्	१०.	धन
शृणुयात्	३.	सुनेगा	यशः	११.	सुयश
राजन्	४.	हे राजन्	स्वस्ति	१२.	मंगल
राज्ञाम्	५.	राजाओं का	गतिम्	१३.	सद्गति
हरि	६.	भगवान् की	ऐश्वर्यम्	१४.	और ऐश्वर्य की
अर्पित	७.	शरण में	आप्नुयात् ।	१५.	प्राप्ति होती है
आत्मनाम् ।	८.	आये हुये			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जो पुरुष, भगवान् की शरण में आये हुये राजाओं का यह चरित्र सुनेगा, उसे लम्बी आयु, धन, सुयश, मंगल, सद्गति और ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां चतुर्थस्कन्धे एकत्रिंशोऽध्यायः ॥३१॥

इति चतुर्थः स्कन्धः परिपूर्णः

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

पञ्चमः स्कन्धः

संविदानन्दसन्दोहसान्द्रमिन्दीवरेक्षणम् ।
इन्दिरामन्दिरं देवं वन्दे तं नन्दनन्दनम् ॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पञ्चमः स्कन्धः

प्रथमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच— प्रियव्रतो भागवत आत्मारामः कथं मुने।
गृहेऽरमत यन्मूलः कर्मबन्धः पराभवः ॥१॥

पदच्छेद—

प्रियव्रतः भागवतः आत्मारामः कथम् मुने।
गृहे अरमत यत् मूलः कर्म बन्धः पराभवः ॥

शब्दार्थ—

प्रियव्रतः	५.	राजा प्रियव्रत	गृहे	७.	गृहस्थाश्रम में
भागवतः	४.	परम भगवद्भक्त	अरमत	८.	आसक्त रहे
आत्मा	१.	आत्मा में	यत्	९.	जिसके
रामः	३.	रमण करने वाले	मूलः	१०.	कारण
कथम्	६.	कैसे	कर्मबन्धः	११.	कर्मों का बन्धन और
मुने।	१.	हे शुकदेव जी !	पराभवः॥	१२.	स्वरूप की विस्मृति होती है

श्लोकार्थ—हे शुकदेव जी ! आत्मा में रमण करने वाले परम भगवद् भक्त राजा प्रियव्रत कैसे गृहस्थाश्रम में आसक्त रहे, जिसके कारण कर्मों के बन्धन और स्वरूप की विस्मृति होती है ॥

द्वितीयः श्लोकः

न नूनं मुक्तसङ्गानां तादृशानां द्विजर्षभ ।
गृहेष्वभिनिवेशोऽयं पुंसां भवितुमर्हति ॥२॥

पदच्छेद—

न नूनम् मुक्त सङ्गानाम् तादृशानाम् द्विज ऋषभ ।
गृहेषु अभिनिवेशः अयम् पुंसाम् भवितुम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

न	१०.	नहीं	गृहेषु	६.	गृहस्थाश्रम के प्रति
नूनम्	९.	अवश्य	अभिनिवेशः	८.	आसक्ति
मुक्त	४.	रहित	अयम्	७.	यह
सङ्गानाम्	३.	संगदोष से	पुंसाम्	५.	मनुष्यों का
तादृशानाम्	२.	इस प्रकार के	भवितुम्	११.	हो
द्विजऋषभ ।	१.	हे विप्रवर	अर्हति ॥	१२.	सकती है

श्लोकार्थ—हे विप्रवर ! इस प्रकार के संगदोष से रहित मनुष्यों का गृहस्थाश्रम के प्रति यह आसक्ति अवश्य नहीं हो सकती है ॥

तृतीयः श्लोकः

महतां खलु विप्रर्षे उत्तमश्लोकपादयोः ।
छायानिर्वृतचित्तानां न कुटुम्बे स्पृहामतिः ॥३॥

पदच्छेद—

महताम् खलु विप्रर्षे उत्तम श्लोक पादयोः ।
छाया निर्वृत चित्तानाम् न कुटुम्बे स्पृहामतिः ॥

शब्दार्थ—

महताम्	८.	महापुरुषों की	छाया	५.	सन्ताप हारिणी छाया से
खलु	१०.	अवश्य	निर्वृत	६.	शान्त
विप्रर्षे	१.	हे मुनिवर	चित्तानाम्	७.	चित्त वाले
उत्तम	२.	पवित्र	न	१२.	नहीं होती है
श्लोक	३.	कीर्ति श्री हरि के	कुटुम्बे स्पृहा	११.	गृहस्थाश्रम में आसक्त
पादयोः ।	४.	चरणों की	मतिः ॥	९.	बुद्धि

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! पवित्रकीर्ति श्री हरि के चरणों की सन्तापहारिणी छाया से शान्त चित्त वाले महापुरुषों की बुद्धि अवश्य गृहस्थाश्रम में आसक्त नहीं होती है ॥

चतुर्थः श्लोकः

संशयोऽयं महान् ब्रह्मन्दारागारसुतादिषु ।
सक्तस्य यत्सिद्धिरभूत्कृष्णे च मतिरच्युता ॥४॥

पदच्छेद—

संशयः अयम् महान् ब्रह्मन् दारा आगार सुत आदिषु ।
सक्तस्य यत् सिद्धिः अभूत् कृष्णे च मतिः अच्युता ॥

शब्दार्थ—

संशयः	१६.	सन्देह (होता है)	सक्तस्य	६.	फंसे हुये (उस राजा को)
अयम्	१४.	इससे मुझे	यत्	७.	जो
महान्	१५.	बहुत बड़ा	सिद्धिः	१२.	मोक्ष की प्राप्ति
ब्रह्मन्	१.	हे महर्षे	अभूत्	१३.	हुई
दारा	३.	पत्नी	कृष्णे	८.	भगवान् श्री हरि में
आगार	२.	घर	च	११.	और
सुत	४.	पुत्र	मतिः	१०.	भक्ति
आदिषु ।	५.	इत्यादि में	अच्युता ॥	९.	अनन्य

श्लोकार्थ—हे महर्षे ! घर, पुत्र, पत्नी इत्यादि में फंसे हुये (उस राजा को) जो भगवान् श्री हरि में अनन्य भक्ति और मोक्ष की प्राप्ति हुई, इसमें मुझे बहुत बड़ा सन्देह होता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—बाढमुक्तं भगवत उत्तमश्लोकस्य श्रीमच्चरणारविन्दमकरन्दरस आवेशितचेतसो भागवतपरमहंसदयितकथां किञ्चिदन्तराय-विहतां स्वां शिवतमां पदवीं न प्रायेण हिन्वन्ति ॥५॥

पदच्छेद—

बाढम् उक्तम् भगवतः उत्तमश्लोकस्य श्रीमत् चरण अरविन्द मकरन्दरसे आवेशित चेतसः भागवत परमहंस दयित कथाम् किञ्चित् अन्तराय विहताम् स्वाम् शिवतमाम् पदवीम् न प्रायेण हिन्वन्ति ॥

शब्दार्थ—

बाढम्	२.	ठीक है	परमहंस	१७.	परम हंसों के
उक्तम्	१.	आपका कथन	दयित	१८.	प्रिय श्री हरि की
भगवतः	५.	भगवान् श्री हरि के	कथाम्	१९.	कथा श्रवणरूपी
उत्तम	३.	पवित्र	किञ्चित्	१३.	किसी
श्लोकस्य	४.	कीर्ति	अन्तराय	१४.	विघ्न-बाधा के कारण
श्रीमत्	६.	शोभा सम्पन्न	विहताम्	१५.	रुकावट पड़ने पर भी
स्वाम्	७.	चरण	चरण	२०.	अपने
अरविन्द	८.	कमलों के	शिव	२१.	कल्याण
मकरन्द	९.	पराग के	तमाम्	२२.	कारी
रसे	१०.	मधुर रस में	पदवीम्	२३.	मार्ग को
आवेशित	१२.	लगा रक्खा है (वे लोग)	न	२५.	नहीं
चेतसः	११.	जिन्होंने चित्त को	प्रायेण	२४.	प्रायः
भागवत	१६.	भगवान् के भक्त	हिन्वन्ति ॥	२६.	छोड़ते हैं

श्लोकार्थ—आपका कथन ठीक है। पवित्र कीर्ति भगवान् श्री हरि के शोभासम्पन्न चरणकमलों के पराग के मधुर रस में जिन्होंने चित्त को लगा रक्खा है, वे लोग किसी विघ्न-बाधा के कारण रुकावट पड़ने पर भी भगवान् के भक्त परमहंसों के प्रिय भगवान् श्री हरि की कथा श्रवणरूपी अपने कल्याणकारी मार्ग को प्रायः नहीं छोड़ते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

यर्हि वाव ह राजन् स राजपुत्रः प्रियव्रतः परमभागवतो नारदस्य चरणोपसेवयाञ्जसावगतपरमार्थसतत्त्वो ब्रह्मसत्रेण दीक्षिष्यमाणोऽवनितलपरिपालनायाम्नातप्रवरगुणगणैकान्तभाजनतया स्वपित्रोपामन्त्रितो भगवति वासुदेव एवाव्यवधानसमाधियोगेनसमावेशितसकलकारकक्रियाकलापो नैवाभ्यनन्दद्यद्यपि तदप्रत्याम्नातव्यंतदधिकरणआत्मनोऽन्यस्मादसतोऽपि पराभवमन्वीक्षमाणः ॥६॥

पदच्छेद—यर्हि वाव ह राजन् सः राजपुत्रः प्रियव्रतः परम भागवतः नारदस्य चरण उपसेवया अञ्जसा अवगत परमार्थ सतत्त्वः ब्रह्मसत्रेण दीक्षिष्यमाणः अवनितल परिपालनाय आम्नात प्रवर गुण-गण एकान्त भाजनतया स्वपित्रा उपमन्त्रितः भगवति वासुदेवे एव अव्यवधान समाधि योगेन समावेशित सकल कारक क्रिया कलापः न एव अभ्यनन्दत् यद्यपि तद् अप्रत्याम्नातव्यम् तद् अधिकरणे आत्मनः अन्यस्मात् असतः अपि पराभवम् अन्वीक्षमाणः ॥

शब्दार्थ—

यर्हि	३.	जिस समय	स्वपित्रा	१४.	उनके पिता ने
वाव ह	२.	प्रसिद्ध है कि	उपमन्त्रितः	२१.	आज्ञा दी (किन्तु उन्होंने)
राजन्	१.	हे परीक्षित्	भगवति वासुदेवे	२४.	भगवान् श्री हरि में
सः राजपुत्रः	४.	वे राजकुमार	एव	२५.	ही (अपनी)
प्रियव्रतः	५.	प्रियव्रत	अव्यवधान	२२.	निरन्तर
परमभागवतः	६.	महान् भगवद् भक्त	समाधियोगेन	२३.	समाधि योग के द्वारा
नारदस्य	७.	देवर्षि नारद के	समावेशित	२८.	लीन कर दिया था
चरण उपसेवया	८. ९.	चरणों की सेवा से	सकलकारक क्रिया	२६.	सभी इन्द्रियों के कर्मों के
अञ्जसा	९.	सहज में ही	कलापः	२७.	समूह को
अवगत	१०.	जान लिया (उस समय)	न एव	३७.	उसे नहीं
परमार्थसतत्त्व	११.	परमार्थ के स्वरूप को	अभ्यनन्दत्	८०.	पसन्द किया
ब्रह्मसत्रेण	१२.	ब्रह्मोपासना की	यद्यपि तद्	३१	यद्यपि पिता की आज्ञा
दीक्षिष्यमाण	१३.	दीक्षा लेने वाले थे कि	अप्रत्याम्नातव्यम्	२९.	शिरोधार्य होती है
अवनितल	१९.	भूमण्डल की	तद् अधिकरणे	३०.	फिर भी उस राज्यासन में
परिपालनाय	२०.	रक्षा करने के लिये	आत्मनः	३१.	आत्मा से
आम्नात	१५.	शास्त्रों में वर्णित	अन्यस्मात्	३२	भिन्न
प्रवर गुण गण	१६.	उत्तम गुणों की खान	असतः अपि	३३.	मिथ्या पदार्थों का ही
एकान्त	१७.	एक मात्र	पराभवम्	३५.	आवरण
भाजनतया।	१८.	आश्रय समझ कर (उन्हें)	अन्वीक्षमाणः ॥	३६.	देखकर उन्होंने

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! प्रसिद्ध है कि जिस समय वे राजकुमार प्रियव्रत महान् भगवद् भक्त देवर्षि नारद के चरणों की सेवा से सहज में ही परमार्थ के स्वरूप को जान लिया, उस समय ब्रह्मोपासना की दीक्षा लेने ही वाले थे कि उनके पिता ने शास्त्रों में वर्णित उत्तम गुणों की खान, एक मात्र आश्रय समझ कर उन्हें भूमण्डल की रक्षा करने के लिये आज्ञा दी। किन्तु उन्होंने निरन्तर समाधि योग के द्वारा भगवान् श्री हरि में ही अपनी सभी इन्द्रियों के कर्मों के समूह को लीन कर दिया था। यद्यपि पिता की आज्ञा शिरोधार्य होती है। फिर भी उस राज्यासन में आत्मा से भिन्न मिथ्या पदार्थों का ही आवरण देखकर उन्होंने उसे नहीं पसन्द किया।

सप्तमः श्लोकः

अथ ह भगवानादिदेव एतस्य गुणविसर्गस्य परिबृंहणानुध्यानव्यवसित-सकलजगदभिप्राय आत्मयोनिरखिलनिगमनिजगणपरिवेष्टितः स्वभवना-दवततार ॥७॥

पदच्छेद—

अथ ह भगवान् आदिदेवः एतस्य गुण विसर्गस्य परिबृंहण अनुध्यान व्यवसित सकल जगत् अभिप्रायः आत्मयोनिः अखिल निगम निजगण परिवेष्टितः स्वभवनात् अवततार ॥

शब्दार्थ—

अथ	११.	एक बार	अभिप्रायः	७.	इच्छा को
ह	६.	अतः	आत्मयोनिः	१०.	स्वयम्भू ब्रह्माजी
भगवान् आदिदेवः	१.	भगवान् ब्रह्माजी	अखिल	१२.	चारों
एतस्य गुण	२.	इस त्रिगुणात्मक	निगम	१३.	वेदों (और)
विसर्गस्य	३.	सृष्टि की	निज	१४.	अपने
परिबृंहण	४.	वृद्धि के	गण	१५.	मरीचि आदि पार्षदों के
अनुध्यान	५.	विचार से	परिवेष्टितः	१६.	साथ
व्यवसित	८.	जानते हैं	स्वभवनात्	१७.	अपने लोक से
सकल जगत् ।	६.	सम्पूर्ण विश्व की	अवततार ॥	१८.	उतरे

श्लोकार्थ—भगवान् ब्रह्माजी इस त्रिगुणात्मक सृष्टि की वृद्धि के विचार से सम्पूर्ण विश्व की इच्छा को जानते हैं। अतः स्वयम्भूः ब्रह्माजी एक बार चारो वेदों और अपने मरीचि आदि पार्षदों के साथ अपने भवन से उतरे ॥

अष्टमः श्लोकः

स तत्र तत्र गगनतल उडुपतिरिव विमानावलिभिरनुपथममरपरिवृढैर-भिपूज्यमानःपथि पथि च वरूथशः सिद्धगन्धर्वसाध्यचारणमुनिगणैरुपगीय-मानो गन्धमादनद्रोणीमवभासयन्नुपससर्प ॥८॥

पदच्छेद—

स तत्र-तत्र गगनतले उडुपतिः इव विमान अवलिभिः अनुपथम् अमरपरिवृढैः अभिपूज्यमानः पथि पथि च वरूथशः सिद्ध गन्धर्व साध्य चारण मुनिगणैः उपगीयमानः गन्धमादन द्रोणीम् अवभासयन् उपससर्प ॥

शब्दार्थ—

सः	१४.	इस प्रकार (वे ब्रह्मा जी)	पथि पथि	८.	प्रत्येक मार्ग में
तत्र तत्र	१.	जहाँ जहाँ	च	७.	और
गगनतले	१५.	आकाश में	वरूथशः	९.	झुण्ड के झुण्ड
उडुपतिः इव	१६.	साक्षात् चन्द्रमा के समान	सिद्ध गन्धर्व	१०	सिद्ध गन्धर्व
विमान	४.	विमानों पर आरुढ	साध्य चारण	११.	साध्य, चारण और
अवलिभिः	३.	अनेक	मुनिगणैः	१२.	मुनिजनों ने
अनुपथम्	२.	मार्ग में	उपगीयमान	१३.	यशोगान किया
अमरपरिवृढैः	५.	इन्द्रादि प्रधान देवताओं ने	गन्धमादन	१७.	गन्धमादन पर्वत की
अभि पूज्यमानः।	६.	उनका पूजन किया	द्रोणीम् अवभासयन्	१८.	घाटी को प्रकाशित करते हुये
			उपससर्प ॥	१९.	प्रियव्रत के पास पहुँचे

श्लोकार्थ— जहाँ-तहाँ मार्ग में अनेकों विमानों पर आरुढ इन्द्रादि प्रधान देवताओं ने उनका पूजन किया और प्रत्येक मार्ग में झुण्ड के झुण्ड सिद्ध, गन्धर्व, साध्य, चारण और मुनिजनों ने यशोगान किया। इस प्रकार वे ब्रह्माजी आकाश में साक्षात् चन्द्रमा के समान गन्धमादन पर्वत की घाटी को प्रकाशित करते हुये प्रियव्रत के पास पहुँचे ॥

नवमः श्लोकः

**तत्र ह वा एनं देवर्षिर्हंसयानेन पितरं भगवन्तं हिरण्यगर्भमुपलभमानः ।
सहसैवोत्थायार्हणेन सह पितापुत्राभ्यामवहिताञ्जलिरुपतस्थे ॥९॥**

पदच्छेद—तत्र ह वा एनम् देवर्षिः हंसयानेन पितरम् भगवन्तम् हिरण्यगर्भम् उपलभमानः ।
सहसा एव उत्थाय अर्हणेन सह पिता पुत्राभ्याम् अवहित अञ्जलिः उपतस्थे ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ पर	उपलभमानः	९.	देखकर
ह	२.	पहले से ही	सहसा एव	१२.	तत्काल ही
वा	३.	उपस्थित	उत्थाय	१४.	खड़े हो गये (तथा)
एनम्	१७.	इनकी	अर्हणेन	१३.	पूजा सामग्री लेकर
देवर्षिः	४.	देवर्षि नारद जी	सह	११.	साथ
हंसयानेन	५.	हंस वाहन पर	पिता पुत्राभ्याम्	१०.	स्वायम्भुवमनु और प्रियव्रत के
पितरम्	६.	अपने पिता	अवहित	१६.	जोड़कर
भगवन्तम्	७.	भगवान्	अञ्जलिः	१५.	हाथ
हिरण्यगर्भम्	८.	ब्रह्माजी को	उपतस्थे ॥	१८.	स्तुति करने लगे

श्लोकार्थ—वहाँ पर पहले से ही उपस्थित देवर्षिनारद जी हंस वाहन पर अपने पिता भगवान् ब्रह्मा जी को देखकर स्वायम्भुव मनु और प्रियव्रत के साथ तत्काल ही पूजा सामग्री लेकर खड़े हो गये तथा हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे ॥

दशमः श्लोकः

**भगवानपि भारत तदुपनीतार्हणः सूक्तवाकेनातितरामुदितगुणगणा-
वतारसुजयः प्रियव्रतमादिपुरुषस्तं सदयहासावलोक इति होवाच ॥१०॥**

पदच्छेद—भगवान् अपि भारत तद् उपनीत अर्हणः सूक्त वाकेन अतितराम् उदित
गुण गण अवतार सुजयः प्रियव्रतम् आदि पुरुषः तम् सदयहास अवलोकः इति हउवाच ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	२.	भगवान् ब्रह्माजी की	अवतार	६.	अवतारों का
अपि	१०.	भी	सुजयः	१५.	उत्तम
भारततद्	१.	हे परीक्षित् ! नारद जी ने	प्रियव्रतम्	१४.	प्रियव्रत से
उपनीत	४.	प्राप्त की (और)	आदिपुरुषः	९.	आदि पुरुष ब्रह्माजी
अर्हणः	३.	पूजा	तम्	१३.	राजा
सूक्त	१७.	सुन्दर	सदयहास	११.	दयापूर्ण मुसकान के साथ
वाकेन	१८.	वचनों में	अवलोकः	१२.	देखकर
अतितराम्	१६.	अत्यन्त	इति	१९	इस प्रकार
उदित	७.	वर्णन किया	ह	८.	उसके बाद
गुण गण	५	उनके गुणों की खान (तथा)	उवाच ॥	२०.	बोले

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! नारद जी ने भगवान् ब्रह्माजी की पूजा प्राप्त की; और उनके गुणों की खान तथा अवतारों का वर्णन किया । उसके बाद आदि पुरुष ब्रह्माजी भी दयापूर्ण मुसकान के साथ देखकर राजा प्रियव्रत से उत्तम अत्यन्त सुन्दर वचनों में इस प्रकार बोले ॥

एकादशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—निबोध तातेदमृतं ब्रवीमि मासूयितुं देवमर्हस्यप्रमेयम् ।
वयं भवस्ते तत एष महर्षिर्वहाम सर्वे विवशा यस्य दिष्टम् ॥११॥

पदच्छेद—निबोध तात इदम् अमृतम् ब्रवीमि मा असूयितुम् देवम् अर्हसि अप्रमेयम् ।
वयम् भवः ते ततः एषः महर्षिः वहाम सर्वे विवशाः यस्य दिष्टम् ॥

शब्दार्थ—

निबोध	२.	ध्यान से सुनो	अप्रमेयम् ।	६.	अज्ञात रहस्य वाले
तात	१.	हे पुत्र	वयम् भवः	११.	क्योंकि हम भगवान् शंकर
इदम्	३.	मैं यह	ते ततः	१६.	तुम्हारे पिता स्वायम्भुवमनु
अमृतम्	४.	सत्य सिद्धान्त	एषः	१३.	और ये
ब्रवीमि	५.	बता रहा हूँ	महर्षिः	१४.	देवर्षि नारद जी
मा	९.	नहीं	वहाम	१८.	पालन करते हैं
असूयितुम्	८.	तुम्हें ईर्ष्या	सर्वे	१५.	सभी
देवम्	७.	भगवान् श्री हरि से	विवशाः	१६.	विवश होकर
अर्हसि	१०.	करनी चाहिये	यस्य दिष्टम् ॥	१७.	जिन श्री हरि के आदेश का

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! ध्यान से सुनो, मैं यह सत्य सिद्धान्त बता रहा हूँ कि अज्ञात रहस्य वाले भगवान् श्री हरि से तुम्हें ईर्ष्या नहीं करनी चाहिये । क्योंकि हम, भगवान् शंकर, तुम्हारे पिता स्वायम्भुवमनु और ये देवर्षि नारद जी सभी विवश होकर उन श्री हरि के आदेश का पालन करते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

न तस्य कश्चित्तपसा विद्यया वा न योगवीर्येण मनीषया वा ।
नैवार्थधर्मैः परतः स्वतो वा कृतं विहन्तुं तनुभृद्विभूयात् ॥१२॥

पदच्छेद— न तस्य कश्चित् तपसा विद्यया वा न योग वीर्येण मनीषया वा ।
न एव अर्थ धर्मैः परतः स्वतः वा कृतम् विहन्तुम् तनुभृद् विभूयात् ॥

शब्दार्थ—

न	३.	नहीं	न एव	११.	नहीं
तस्य	१७.	उन श्री हरि के	अर्थ	१२.	अर्थ
कश्चित्	१.	कोई भी	धर्मैः	१३.	धर्म
तपसा	४.	तपस्या	परतः	१४.	दूसरे
विद्यया	६.	ज्ञान से	स्वतः	१६.	स्वयम् के प्रभाव से
वा	५.	अथवा	वा	१५.	अथवा
न योग	७.	न योग की	कृतम्	१८.	विधान को
वीर्येण	८.	शक्ति	विहन्तुम्	१९.	टालने में
मनीषया	१०.	बुद्धि से (और)	तनुभृद्	२.	शरीरधारी
वा ।	९.	अथवा	विभूयात् ॥	२०.	समर्थ हो सकता है

श्लोकार्थ—कोई भी शरीरधारी नहीं तपस्या अथवा ज्ञान से न योग की शक्ति अथवा बुद्धि से और नहीं अर्थ, धर्म दूसरे अथवा स्वयम् के प्रभाव से भगवान् श्री हरि के विधान को टालने में समर्थ हो सकता है ॥

त्रयोदशः श्लोक

भवाय नाशाय च कर्म कर्तुं शोकाय मोहाय सदा भयाय ।
सुखाय दुःखाय च देहयोगमव्यक्तदिष्टं जनताङ्ग धत्ते ॥१३॥

पदच्छेद— भवाय नाशाय च कर्म कर्तुम् शोकाय मोहाय सदा भयाय ।
सुखाय दुःखाय च देह योगम् अव्यक्त दिष्टम् जनता अङ्ग धत्ते ॥

शब्दार्थ—

भवाय	२.	जन्म	सुखाय	११.	सुख
नाशाय	३.	मरण	दुःखाय	१२.	दुःख भोगने के लिये
च	७.	और	च	१०.	तथा
कर्म	८.	कर्म	देह	१६.	शरीर से
कर्तुम्	९.	करने के लिये	योगम्	१८.	सम्बन्ध
शोकाय	४.	शोक	अव्यक्त	१४.	अव्यक्त ईश्वर के
मोहाय	५.	मोह	दिष्टम्	१५.	दिये हुये
सदा	१७.	सदा	जनता	१३.	सब जीव
भयाय	६.	भय	अङ्ग	१.	हे विप्रवर
			धत्ते ॥	१९.	रखते हैं

श्लोकार्थ—हे विप्रवर ! जन्म-मरण, शोक, मोह, भय और कर्म, करने के लिये तथा सुख, दुःख भोगने के लिये सब जीव अव्यक्त ईश्वर के दिये हुये शरीर से सदा सम्बन्ध रखते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यद्वाचि तन्त्यां गुणकर्मदामभिः सुदुस्तरैर्वत्स वयं सुयोजिताः ।
सर्वे वहामो बलिमीश्वराय प्रोता नसीव द्विपदे चतुष्पदः ॥१४॥

पदच्छेद— यद् वाचि तन्त्याम् गुण कर्म दामभिः सुदुस्तरैः वत्स वयम् सुयोजिताः ।
सर्वे वहामः बलिम् ईश्वराय प्रोता नसो इव द्विपदे चतुष्पदः ॥

शब्दार्थ—

यद्	१.	जिन श्री हरि की	सर्वे	८.	सब
वाचि तन्त्याम्	२.	वेद वाणी रूप डोरी में	वहामः	१३.	सेवा करते हैं
गुण	३.	सत्त्वादि गुण (और)	बलिम्	१२.	सत्कर्मों से
कर्म	४.	कर्म बोधक	ईश्वराय	११.	ईश्वर की (वैसे ही)
दामभिः	६.	रस्सी से	प्रोता	१६.	नथा हुआ
सुदुस्तरैः	५.	मजबूत	नसी	१५.	नाक में
वत्स	१०.	हे तात (हम)	इव	१४.	जैसे
वयम्	७.	हम	द्विपदे	१८.	मनुष्य की (सेवा करता है)
सुयोजिताः ।	९.	बाँधे गये हैं	चतुष्पदः ॥	१७.	बैल

श्लोकार्थ—जिन श्री हरि की वेद वाणी रूप डोरी में सत्त्वादि गुण और कर्म बोधक मजबूत रस्सी से हम सब बाँधे गये हैं । हे तात ! हम ईश्वर की वैसे ही सत्कर्मों से सेवा करते हैं, जैसे नाक में नथा हुआ बैल मनुष्य की सेवा करता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

ईशाभिसृष्टं ह्यवरुन्ध्महेऽङ्ग दुःखं सुखं वा गुणकर्मसङ्गात् ।
आस्थाय तत्तद्यदयुङ्क्त नाथश्चक्षुष्मतान्धा इव नीयमानाः ॥१५॥

पदच्छेद—ईशा अभिसृष्टम् हि अवरुन्ध्महे अङ्ग दुःखम् सुखम् वा गुण कर्म सङ्गात् ।
आस्थाय तत् तद् यद् अयुङ्क्त नाथः चक्षुष्मता अन्धा इव नीयमानाः ॥

शब्दार्थ—

ईशा	१०.	ईश्वर के द्वारा	आस्थाय	९.	स्वीकार करके हम लोग
अभिसृष्टम्	११.	दिये गये	तत्	७.	उस
हि	१५.	ही	तद्	८.	उस योनि को
अवरुन्ध्महे	१६	स्वीकार करते हैं	यद्	५.	जो शरीर
अङ्ग	१.	हे प्रियव्रत	अयुङ्क्त	६.	दिया है
दुःखम्	१२.	दुःख	नाथः	४.	स्वामी श्री हरि ने हमें
सुखम्	१४.	सुख को	चक्षुष्मता	१९.	आँख वाले का
वा	१३.	अथवा	अन्धाः	१८.	अन्धे पुरुष
गुणकर्म	२.	सत्त्वादिगुण और कर्मों के	इव	१७.	जैसे
सङ्गात् ।	३.	अनुसार	नीयमानाः ॥	२०.	अनुसरण करता है

श्लोकार्थ—हे प्रियव्रत ! सत्त्वादिगुण और कर्मों के अनुसार स्वामी श्री हरि ने हमें जो शरीर दिया है । उस-उस योनि को स्वीकार करके हम लोग ईश्वर के द्वारा दिये गये दुःख अथवा सुख को ही स्वीकार करते हैं । जैसे अन्धा मनुष्य आँख वाले का अनुसरण करता है ॥

षोडशः श्लोकः

मुक्तोऽपि तावद्बिभृयात्स्वदेहमारब्धमश्नन्नभिमानशून्यः ।
यथानुभूतं प्रतियातनिद्रः किं त्वन्यदेहाय गुणान्न वृङ्क्ते ॥१६॥

पदच्छेद— मुक्तः अपि तावद् बिभृयात् स्वदेहम् आरब्धम् अश्नन् अभिमान शून्यः ।
यथा अनुभूतम् प्रतियात निद्रः किम् तु अन्य देहाय गुणान् न वृङ्क्ते ॥

शब्दार्थ—

मुक्तः अपि	५.	मुक्त पुरुष भी	यथा	१.	जैसे
तावद्	११.	मृत्यु तक	अनुभूतम्	४.	मनुष्य स्वप्न का अनुभव करता है
बिभृयात्	१२.	धारण किये रहता है	प्रतियात	३.	समाप्त हो जाने पर भी
स्वदेहम्	१०.	अपने शरीर को	निद्रः	२.	नींद के
आरब्धम्	६.	प्रारब्ध के कर्मों का	किम् तु	१३.	परन्तु
अश्नन्	७.	भोग करता हुआ	अन्य देहाय	१४.	दूसरे जन्म के लिये
अभिमान	८.	अहंकार से	गुणान्	१५.	कर्मों को
शून्यः ।	९.	रहित होकर	न वृङ्क्ते ॥	१६.	नहीं करता है

श्लोकार्थ—जैसे नींद के समाप्त हो जाने पर भी मनुष्य स्वप्न का अनुभव करता है; उसी प्रकार मुक्त पुरुष भी प्रारब्ध के कर्मों का भोग करता हुआ अहंकार से रहित होकर अपने शरीर को मृत्यु तक धारण किये रहता रहता है । परन्तु दूसरे जन्म के लिये कर्मों को नहीं करता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

भयं प्रमत्तस्य वनेष्वपि स्याद् यतः स आस्ते सहषट्सपत्नः ।
जितेन्द्रियस्यात्मरतेर्बुधस्य गृहाश्रमः किं नु करोत्यवद्यम् ॥१७॥

पदच्छेद— भयम् प्रमत्तस्य वनेषु अपि स्याद् यतः सः आस्ते सह षट् सपत्नः ।
जितेन्द्रियस्य आत्मरतेः बुधस्य गृहाश्रमः किम् नु करोति अवद्यम् ॥

शब्दार्थ—

भयम्	३.	संसार का भय	जितेन्द्रियस्य	९.	इन्द्रियों को वश में रखने वाले
प्रमत्तस्य	१.	इन्द्रियों से असावधान पुरुष को	आत्मरतेः	१०.	आत्माराम
वनेषु अपि	२.	वनों में भी	बुधस्य	११.	ज्ञानी पुरुष में
स्याद्	४.	हो सकता है	गृहाश्रमः	१३.	गृहस्थाश्रम
यतः सः	५.	क्योंकि वह	किम् नु	१२.	क्या
आस्ते	८.	रहता है (किन्तु)	करोति	१५.	उत्पन्न कर सकता है
सह	७.	साथ	अवद्यम् ॥	१४.	रागादि दोष
षट्सपत्नः ।	६.	छः शत्रुओं के			

श्लोकार्थ—इन्द्रियों से असावधान पुरुष को वनों में भी संसार का भय हो सकता है। क्योंकि वह छः शत्रुओं के साथ रहता है। किन्तु इन्द्रियों को वश में रखने वाले आत्माराम ज्ञानी पुरुष में गृहस्थाश्रम क्या रागादि दोष उत्पन्न कर सकता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

यः षट् सपत्नान् विजिगीषमाणो गृहेषु निर्विश्य यतेत पूर्वम् ।
अत्येति दुर्गाश्रित ऊर्जितारीन् क्षीणेषु कामं विचरेद्विपश्चित् ॥१८॥

पदच्छेद— यः षट् सपत्नान् विजिगीषमाणः गृहेषु निर्विश्य यतेत पूर्वम् ।
अति एति दुर्ग आश्रित ऊर्जित अरीन् क्षीणेषु कामम् विचरेत् विपश्चित् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो पुरुष मन बुद्धि इन्द्रियादि	अति एति	१२.	जीत लेता है (फिर)
षट्	२.	छः	दुर्ग आश्रित	९.	जैसे राजा किले में रहकर ही
सपत्नान्	३.	शत्रुओं को	ऊर्जित	१०.	बलवान्
विजिगीषमाणः	४.	जीतना चाहता है (वह)	अरीन्	११.	शत्रुओं को
गृहेषु	६.	गृहस्थाश्रम में	क्षीणेषु	१३.	शत्रुओं के नष्ट हो जाने पर
निर्विश्य	७.	रहकर ही	कामम्	१५.	इच्छानुसार
यतेत	८.	उन्हें जीतने का प्रयत्न करे	विचरेत्	१६.	विचरण करे
पूर्वम् ।	५.	पहले	विपश्चित् ॥	१४.	ज्ञानी पुरुष

श्लोकार्थ— जो पुरुष मन, बुद्धि, इन्द्रियादि छः शत्रुओं को जीतना चाहता है, वह पहले गृहस्थाश्रम में रहकर ही उन्हें जीतने का प्रयत्न करे, जैसे राजा किले में रहकर ही बलवान् शत्रुओं को जीत लेता है। फिर शत्रुओं के नष्ट हो जाने पर ज्ञानी पुरुष इच्छानुसार विचरण करे ॥

एकोनविंशः श्लोक

त्वं त्वब्जनाभाङ्घ्रिसरोजकोशदुर्गाश्रितो निर्जितषट्सपत्नः ।
भुङ्क्ष्वेह भोगान् पुरुषातिदिष्टान् विमुक्तसङ्गः प्रकृतिं भजस्व ॥१९॥

पदच्छेद—त्वम् तु अब्जनाभ अङ्घ्रि सरोज कोश दुर्ग आश्रितः निर्जित षट् सपत्नः ।
भुङ्क्ष्व इह भोगान् पुरुष अतिदिष्टान् विमुक्त सङ्गः प्रकृतिम् भजस्व ॥

शब्दार्थ—

त्वम् तु	१.	तुम तो	भुङ्क्ष्व	१४.	भोग करो (तथा)
अब्जनाभ	२.	कमलनाभ भगवान् श्री हरि के	इह	१०.	यहाँ
अङ्घ्रि	३.	चरण	भोगान्	१३.	भोगों का
सरोज	४.	कमल के	पुरुष	११.	आदि पुरुष के द्वारा
कोष	५.	घेरे रूपी	अतिदिष्टान्	१२.	दिये गये
दुर्ग आश्रितः	६.	किले का सहारा लेकर	विमुक्त	१६.	छोड़कर
निर्जित	९.	जीत चुके हो (फिर भी)	सङ्गः	१५.	आसक्ति को
षट्	७.	छहों	प्रकृतिम्	१७.	आत्म स्वरूप का
सपत्नः ।	८.	शत्रुओं को	भजस्व ॥	१८.	भजन करना

श्लोकार्थ—तुम तो कमलनाभ भगवान् श्री हरि के चरण कमल के घेरेरूपी किले का सहारा लेकर छहों शत्रुओं को जीत चुके हो । फिर भी यहाँ आदि पुरुष के द्वारा दिये गये भोगों का भोग करो । तथा आसक्ति को छोड़कर आत्मस्वरूप का भजन करना ॥

विंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इति समभिहितो महाभागवतो भगवतस्त्रिभुवनगुरोर-नुशासनमात्मनो लघुतयावनतशिरोधरो बाढमिति सबहुमानमुवाह ॥२०॥

पदच्छेद—इति समभिहितः महाभागवतः भगवतः त्रिभुवन गुरोः अनुशासनम् आत्मनः ।
लघु तया अवनत शिरोधरः बाढम् इति सबहुमानम् उवाह ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	ऐसा	लघुतया	५.	छोटा होने से
समभिहितः	२.	कहने पर	अवनत	११.	झुकाकर
महाभागवतः	३.	परम भगवद् भक्त (राजा प्रियव्रत)	शिरोधरः	१०.	कन्धा
भगवतः	८.	भगवान् (ब्रह्माजी के)	बाढम्	१२.	ठीक है
त्रिभुवन	६.	त्रिलोकी के	इति	१३.	ऐसा कहते हुये
गुरोः	७	गुरु	सबहुमानम्	१४.	आदर के साथ
अनुशासनम्	९.	आदेश को	उवाह ॥	१५.	स्वीकार कर लिया
आत्मनः ।	४.	स्वयम्			

श्लोकार्थ—ऐसा कहने पर परम भगवद् भक्त राजा प्रियव्रत ने स्वयम् छोटा होने से त्रिलोकी के गुरु भगवान् ब्रह्मा जी के आदेश को कन्धा झुकाकर ठीक है ऐसा कहते हुये आदर के साथ स्वीकार कर लिया ॥

एकविंशः श्लोकः

भगवानपि मनुना यथावदुपकल्पितापचितिः प्रियव्रतनारदयोरविषममभिसमीक्षमाणयोरात्मसमवस्थानमवाङ्मनसं क्षयमव्यवहृतं प्रवर्तयन्नगमत् ॥२१॥

पदच्छेद—भगवान् अपि मनुना यथावत् उपकल्पित अपचितिः प्रियव्रत नारदयोः अविषमम् अभि समीक्षमाणयोः आत्म समवस्थानम् अवाङ्मनसम् क्षयम् अव्यवहृतम् प्रवर्तयन् अगमत् ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	१.	भगवान ब्रह्मा जी	अविषमम्	९.	सरल भाव से
अपि	२.	भी	अभिसमीक्षमाणयो	१०.	देखे जाते हुये (तथा स्वयं)
मनुना	३.	मनु के द्वारा	आत्म	१४.	अपने
यथावत्	४.	विधि पूर्वक	समवस्थानम्	१५.	सत्य धाम
उपकल्पित	६.	प्राप्त करके	अवाङ् मनसम्	११.	वाणी और मन से परे (श्री हरि को)
अपचितिः	५.	पूजा	क्षयम्	१६.	ब्रह्मलोक को
प्रियव्रत	७.	राजा प्रियव्रत (और)	अव्यवहृतम्	१२.	निरन्तर
नारदयोः	८.	देवर्षि नारद के द्वारा	प्रवर्तयन्	१३.	चिन्तन करते हुये
			अगमत् ॥	१७.	चले गये

श्लोकार्थ—भगवान् ब्रह्माजी भी मनु के द्वारा विधि पूर्वक पूजा प्राप्त करके राजा प्रियव्रत और देवर्षि-नारद के द्वारा सरल भाव से देखे जाते हुये तथा स्वयं वाणी और मन से परे श्री हरि के निरन्तर चिन्तन करते हुये अपने सत्यधाम ब्रह्मलोक को चले गये ॥

द्वाविंशः श्लोकः

मनुरपि परेणैवं प्रतिसन्धितमनोरथः सुरर्षिवरानुमतेनात्मजमखिलधरामण्डलस्थितिगुप्तय आस्थाप्य स्वयमतिविषम विषयविषजलाशयाशाया उपरराम॥२२॥

पदच्छेद—मनुः अपि परेण एवम् प्रतिसन्धित मनोरथः सुरर्षिवर अनुमतेन आत्मजम् अखिल धरामण्डलस्थिति गुप्तये आस्थाप्य स्वयम् अतिविषम विषय विष जलाशय आशायाः उपरराम ॥

शब्दार्थ—

मनुः अपि	५.	स्वायम्भुव मनु ने भी	धरामण्डल	१०.	पृथ्वी मण्डल के
परेण	२.	ब्रह्माजी के द्वारा	स्थिति	११.	पालन (और)
एवम्	१.	इस प्रकार	गुप्तये	१२.	रक्षा के लिये
प्रतिसन्धित	४.	पूर्ण कर दिये जाने पर	आस्थाप्य	१३.	सिंहासन पर बैठाकर
मनोरथः	३.	मनोरथ	स्वयम्	१४.	अपने आप
सुरर्षिवर	६.	देवर्षिनारद जी की	अतिविषम	१५.	अत्यन्त दुस्तर
अनुमतेन	७.	आज्ञा से	विषयविष	१६.	विषय रूपी विष के
आत्मजम्	८.	अपने पुत्र प्रियव्रत को	जलाशय	१७.	तालाब रूपी राज्य की
अखिल	९.	सम्पूर्ण	आशायाः	१८.	ओर से
			उपरराम ॥	१९.	विराम ले लिया

श्लोकार्थ—इस प्रकार ब्रह्मा जी के द्वारा मनोरथ पूर्णकर दिये जाने पर देवर्षिनारद जी की आज्ञा से अपने पुत्र प्रियव्रत को सम्पूर्ण पृथ्वी मण्डल के पालन और रक्षा के लिये सिंहासन पर बैठाकर अपने आप अत्यन्त दुस्तर विषय रूपी विष के तालाब रूपी राज्य की ओर से विराम ले लिया ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

इति ह वाव स जगतीपतिरीश्वरेच्छयाधिनिवेशितकर्माधिकारोऽखिल-जगद्बन्धध्वंसनपरानुभावस्य भगवत आदिपुरुषस्याङ्घ्रियुगलानवरत-ध्यानानुभावेन परिरन्धितकषायाशयोऽवदातोऽपि मानवर्धनो महतां महीतलमनुशशास ॥२३॥

पदच्छेद—

इति ह वाव सः जगतीपतिः ईश्वरेच्छया अधिनिवेशितकर्म अधिकारः अखिल जगद्बन्ध ध्वसंन पर अनुभावस्य भगवतः आदि पुरुषस्य अङ्घ्रि युगल अनवरतध्यान अनुभावेन परिरन्धित कषाय आशयः अवदातः अपि मान वर्धनः महताम् महीतलम् अनुशशास ॥

शब्दार्थ—

इति	२१.	इस प्रकार	अङ्घ्रि	८.	चरण
ह वाव	२२.	प्रसिद्ध है कि	युगल	९.	कमलों के
सः	२५.	उस राजा प्रियव्रत ने	अनवरत	१०.	निरन्तर
जगती	२३.	पृथ्वी के	ध्यान	११.	चिन्तन के
पतिः	२४.	स्वामी	अनुभावेन	१२.	प्रभाव से (राजा प्रियव्रत के)
ईश्वरेच्छया	२६.	भगवान् की इच्छा से	परिरन्धित	१५.	जल गये थे (अतः)
अधिनिवेशित	२९.	प्रवेश करके	कषाय	१४.	सारे दोष
कर्म	२७.	कर्म के	आशयः	१३.	चित्त के रागादि
अधिकारः	२८.	क्षेत्र में	अवदातः	१६.	वे निर्मल होकर
अखिल	१.	सम्पूर्ण	अपि	१७.	भी
जगतः	२.	संसार के	मान	१९.	मान को
बन्ध	३.	बन्धन को	वर्धनः	२०.	बढ़ाने वाले थे
ध्वंसन	४.	मिटाने की	महताम्	१८.	बड़े लोगों के
पर अनुभावस्य	५.	कृपा करने वाले	मही	३०.	पृथ्वी
भगवतः	७.	भगवान् श्री हरि के	तलम्	३१.	तल पर
आदि पुरुष	६.	आदि पुरुष	अनुशशास ॥	३२.	शासन किया

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण संसार के बन्धन को मिटाने की कृपा करने वाले आदि पुरुष भगवान् श्री हरि के चरण कमलों के निरन्तर चिन्तन के प्रभाव से राजा प्रियव्रत के सारे दोष जल गये थे। अतः वे निर्मल होकर भी बड़े लोगों के मान को बढ़ाने वाले थे। इस प्रकार प्रसिद्ध है कि पृथ्वी के स्वामी उस राजा प्रियव्रत ने भगवान् की इच्छा से कर्म के क्षेत्र में प्रवेश करके पृथ्वी तल पर शासन किया ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अथ च दुहितरं प्रजापतेर्विश्वकर्मण उपयेमे बर्हिष्मतीं नाम तस्यामु ह वाव आत्मजानात्मसमानशील गुणकर्मरूपवीर्योदारान्दश भावयाम्बभूव कन्यां च यवीयसीमूर्जस्वतीं नाम ॥२४॥

पदच्छेद—अथ च दुहितरम् प्रजापतेः विश्वकर्मणः उपयेमे बर्हिष्मतीं नाम तस्याम् उह वाव आत्म जानात्म समानशील गुणकर्मरूपवीर्योदारान्दश भावयाम्बभूव कन्याम् च यवीयसीम् ऊर्जस्वतीम् नाम ॥

शब्दार्थ—

अथ च	१.	तदनन्तर (उन्होंने)	आत्मसमान	९	अपने समान
दुहितरम्	५.	पुत्री से	शील गुण	१०.	चरित्र गुण
प्रजापतेः	२.	प्रजापति	कर्म रूप	११.	कर्म सौन्दर्य और
विश्वकर्मणः	३.	विश्वकर्मा की	वीर्य उदारान्	१२.	पराक्रम से परिपूर्ण
उपयेमे	६.	विवाह किया	दश	१४.	दस
बर्हिष्मतींनाम	४.	बर्हिष्मती नाम की	भावयाम्बभूव	२०.	उत्पन्न किया
तस्याम्	८.	उससे	कन्याम्	१९.	कन्या को
उ ह	१३.	अलौकिक और प्रसिद्ध	च	१६.	और
वाव	७.	और	यवीयसीम्	१७.	सबसे छोटी
आत्मजान्	१५.	पुत्रों को	ऊर्जस्वतीम् नाम ॥	१८.	ऊर्ज स्वती नाम की

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन्होंने प्रजापति विश्वकर्मा की बर्हिष्मती नाम की पुत्री से विवाह किया। और उससे अपने समान चरित्र, गुण, कर्म, सौन्दर्य और पराक्रम से परिपूर्ण अलौकिक और प्रसिद्ध दस पुत्रों को और सबके छोटी ऊर्जस्वती नाम की कन्या को उत्पन्न किया ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

आग्नीध्रेध्मजिह्वयज्ञबाहुमहावीरहिरण्यरेतोघृतपृष्ठसवनमेधातिथिवीतिहोत्रकवय इति सर्व एवाग्निनामानः ॥२५॥

पदच्छेद—आग्नीध्र इध्मजिह्व यज्ञबाहु महावीर हिरण्यरेतः घृत पृष्ठ सवन मेधातिथि वीतिहोत्र कवयः इति सर्वे एव अग्निः नामानः ॥

शब्दार्थ—

आग्नीध्र	५.	(क्रमशः) आग्नीध्र	मेधातिथि	१२.	मेधा तिथि
इध्मजिह्व	६.	इध्मजिह्व	वीतिहोत्र	१३.	वीति होत्र
यज्ञबाहु	७.	यज्ञ बाहु	कवयः इति	१४.	कवि ये (नाम थे)
महावीर	८.	महावीर	सर्वे	४.	उन सबके
हिरण्यरेतः	९.	हिरण्यरेतः	एव	३.	ही
घृत पृष्ठ	१०.	घृत पृष्ठ	अग्निः	१.	अग्नि के
सवन	११.	सवन	नामानः ॥	२.	दस नामों पर

श्लोकार्थ—अग्नि के दस नामों पर ही उन सबके क्रमशः आग्नीध्र, इध्मजिह्व यज्ञ बाहु, महावीर, हिरण्यरेतः, घृतपृष्ठ, सवन, मेधातिथि, वीतिहोत्र, कवि ये नाम थे ॥

षड्विंशः श्लोकः

एतेषां कविर्महावीरः सवन इति सर्व त्रय आसन्नूर्ध्वरेतसस्त आत्मविद्यायामर्भभावादारभ्य कृतपरिचयाः पारमहंस्यमेवाश्रममभजन् ॥२६॥

पदच्छेद—

एतेषाम् कविः महावीरः सवनः इति त्रयः आसन् ऊर्ध्वरेतसः ते आत्मविद्यायाम् अर्भभावात् आरम्य कृत परिचयाः पारमहंस्यम् एव आश्रमम् अभजन् ॥

शब्दार्थ—

एतेषाम्	१.	इन दसों पुत्रों में	आत्मविद्यायाम्	१२.	ब्रह्म विद्या का
कविः	२.	कवि	अर्भभावात्	१०.	बाल्यकाल से
महावीरः	३	महावीर और	आरम्य	११.	लेकर बहुत दिनों तक
सवनः	४.	सवन	कृत	१४.	करने के कारण
इति	५.	ये	परिचयाः	१३.	अभ्यास
त्रयः	६.	तीन	पारमहंस्यम्	१५.	अन्त में संन्यास
आसन्	८.	थे	एव	१७.	ही
ऊर्ध्वरेतसः	७.	बाल ब्रह्मचारी	आश्रमम्	१६.	आश्रम को
ते	९.	उन्होंने	अभजन् ॥	१८.	स्वीकार किया

श्लोकार्थ—इन दसों पुत्रों में से कवि, महावीर, सवन ये तीन बाल ब्रह्मचारी थे। उन्होंने बाल्यावस्था से लेकर बहुत दिनों तक ब्रह्मविद्या का अभ्यास करने के कारण अन्त में संन्यास आश्रम को ही स्वीकार किया ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तस्मिन्नु ह वा उपशमशीलाः परमर्षयः सकलजीवनिकायावासस्य भगवतो वासुदेवस्य भीतानां शरणभूतस्य श्रीमच्चरणारविन्दाविरतस्मरणाविगलितपरमभक्तियोगानुभावेन परिभावितान्तर्हृदयाधिगते भगवति सर्वेषां भूतानामात्मभूते प्रत्यगात्मन्येवात्मनस्तादात्म्यमविशेषेण समीयुः ॥२७॥

पदच्छेद—

तस्मिन् उह वा उपशमशीलाः परमर्षयः सकल जीव निकाय आवासस्य भगवतः वासुदेवस्य भीतानाम् शरण भूतस्य श्रीमत् चरणारविन्द अविरत स्मरण अविगलित परम भक्तियोग अनुभावेन परिभावित अन्तः हृदय अधिगते भगवति सर्वेषाम् भूतानाम् आत्मभूते प्रत्यगात्मनि एव आत्मनः तादात्म्यम् अविशेषेण समीयुः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	२.	उस संन्यास आश्रम में	स्मरण	१५.	चिन्तन से प्राप्त
उ	२९.	तदनन्तर उन्होंने	अविगलित	१६.	अखण्ड}
ह	२८.	प्रसिद्ध है कि	परम	१८.	अनन्य
वा	१७.	तथा	भक्तियोग	१९	भक्तिभाव के
उपशमशीलाः	३.	निवृत्तिस्वभाव वाले थे	अनुभावेन	२०.	प्रभाव से उनके
परमर्षयः	१.	वे तीनों महर्षि	परिभावित	२१.	निर्मल
सकल	४.	सम्पूर्ण	अन्तः हृदय	२२.	अन्तः करण में
जीव	५.	प्राणी	अधिगते	२७.	प्रकट हो गये
निकाय	६.	समूह के	भगवति	२६.	भगवान् श्री हरि,
आवासस्य	७.	आश्रय	सर्वेषाम्	२३.	सभी
भगवतः	९.	भगवान्	भूतानाम्	२४.	प्राणियों के
वासुदेवस्य	१०.	श्री हरि के	आत्मभूते	२५.	आत्म स्वरूप
भीतानाम्	७.	संसार से डरे हुये को	प्रत्यगात्मनि	३२.	अन्तरात्मा में
शरणभूतस्य	८.	शरण देने वाले	एव	३३.	ही
श्रीमत्	११.	शोभाशाली	आत्मनः	३१.	अपनी आत्मा को;
चरण	१२.	चरण	तादात्म्यम्	३४.	एकरूप से
अरविन्द	१३.	कमलों में	अविशेषेण	३०.	उपाधि से रहित
अविरत	१४.	निरन्तर	समीयुः ॥	३५.	मिला दिया

श्लोकार्थ—वे तीनों महर्षि उस संन्यास आश्रम में निवृत्ति स्वभाव वाले थे। सम्पूर्ण प्राणि-समूह के आश्रय, संसार से डरे हुये को शरण देने वाले भगवान् श्री हरि के शोभाशाली चरण कमलों में निरन्तर चिन्तन से प्राप्त अखण्ड तथा अनन्य भक्तिभाव के प्रभाव से उनके निर्मल अन्तः करण में सभी प्राणियों के आत्मस्वरूप भगवान् श्री हरि प्रकट हो गये। प्रसिद्ध है कि तदनन्तर उन्होंने उपाधि से रहित अपनी आत्मा को अन्तरात्मा में ही एक रूप से मिला दिया ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

अन्यस्यामपि जायायां त्रयः पुत्रा आसन्नुत्त-
मस्तामसो रैवत इति मन्वन्तराधिपतयः ॥२८॥

पदच्छेद—

अन्यस्याम् अपि जायायाम् त्रयः पुत्रा आसन् उत्तमः
तामसः रैवतः इति मन्वन्तर अधिपतयः ॥

शब्दार्थ—

अन्यस्याम्	१.	राजा प्रियव्रत की दूसरी	उत्तमः	४.	उत्तम
अपि	३.	भी	तामसः	५.	तामस और
जायायाम्	२.	पत्नी से	रैवतः	६.	रैवत
त्रयः	८.	तीन	इति	७.	इस नाम से
पुत्राः	९.	पुत्र	मन्वन्तर	११.	जो इस नाम वाले मन्वन्तरों के
आसन् ।	१०.	उत्पन्न हुये	अधिपतयः ॥	१२.	स्वामी हुये

श्लोकार्थ—राजा प्रियव्रत की दूसरी पत्नी से भी उत्तम, तामस, रैवत इस नाम के तीन पुत्र उत्पन्न हुये । जो इस नाम वाले मन्वन्तरों के स्वामी हुये ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

एवमुपशमायनेषु स्वतनयेष्वथ जगतीपतिर्जगतीमर्बुदान्येकादश परिवत्सराणामव्याहताखिलपुरुषकारसारसम्भृतदोर्दण्डयुगलापीडितमौर्वीगुणस्तनितविरमितधर्मप्रतिपक्षो बर्हिष्मत्याश्चानुदिनमेधमानप्रमोदप्रसरणयौषिण्यव्रीडाप्रमुषितहासावलोकरुचिरक्ष्वेल्यादिभिः पराभूयमानविवेक इवानवबुध्यमान इव महामना बुभुजे ॥२९॥

पदच्छेद—एवम् उपशमायनेषु स्वस्तनयेषु अथ जगतीपतिः जगतीम् अर्बुदानि एकादश परिवत्सराणाम् अव्याहत अखिल पुरुषकार सार सम्भृत दोर्दण्ड युगल आपीडित मौर्वीगुण स्तनित विरमित धर्म प्रतिपक्षः बर्हिष्मतयाः च अनुदिनम् एधमान प्रमोद प्रसरण यौषिण्य व्रीडा प्रमुषित हास अवलोक रुचिरक्ष्वेल्यादिभिः पराभूयमान विवेक इव अनव बुद्ध्यमानः इव महामनाः बुभुजे ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	प्रतिपक्षः	२१.	विरोधी राजा लोग
उपशमायनेषु	३.	संन्यास मार्गानुयायी हो जाने पर	बर्हिष्मत्याः	२४.	अपनी पत्नी बर्हिष्मती के साथ
स्वतनयेषु	२.	अपने तीनों पुत्रों के	च अनुदिनम्	२३.	और प्रतिदिन
अथ	४.	तदनन्तर	एधमान	२५.	बढ़ते हुये
जगतीपतिः	५.	राजा प्रियव्रत ने	प्रमोद	२६.	आमोद-प्रमोद और
जगतीम्	९.	पृथ्वी का	प्रसरण	२७.	अभ्युत्थानादि
अर्बुदानि	७.	अरब	यौषिण्य	२८.	क्रीडा में
एकादश	६.	ग्यारह	व्रीडा	२९.	लज्जा
परिवत्सराणाम्	८.	वर्षों तक	प्रमुषित	३०.	संकोच
अव्याहत	११.	निरन्तर	हास	३१.	हास
अखिल	१२.	सम्पूर्ण	अवलोक	३२.	कटाक्ष और
पुरुषकार	१३.	पुरुषार्थ साधक	रुचिर	३३.	मनोहर
सारसम्भृत	१४.	बल से परिपूर्ण	क्ष्वेल्यादिभिः	३४.	परिहास वचनों से
दोर्दण्ड	१६.	भुजाओं से	पराभूयमानः	३६.	हीन के
युगल	१५.	दोनों	विवेकः	३५.	विवेक
आपीडित	१९.	खींचने पर (उसकी)	इव	३७.	समान (तथा)
मौर्वीगुण	१७.	धनुष की डोरी	अनवबुद्ध्यमानः	३८.	अज्ञानी के
स्तनित	१९.	टंकार से ही	इव	३९.	समान
विरमित	२२.	पराजित हो जाते थे	महामनाः	४०.	वे महामनस्वी राजा प्रियव्रत भोग करने लगे
धर्म	२०.	धर्म के	बुभुजे ॥	१०.	भोग किया

श्लोकार्थ—इस प्रकार अपने तीनों पुत्रों के संन्यास मार्गानुयायी हो जाने पर तदनन्तर राजा प्रियव्रत ने ग्यारह अरब वर्षों तक पृथ्वी का भोग किया। निरन्तर सम्पूर्ण पुरुषार्थ साधक बल से परिपूर्ण दोनों भुजाओं से धनुष की डोरी खींचने पर उसकी टंकार से ही धर्म के विरोधी राजा लोग पराजित हो जाते थे। और प्रतिदिन अपनी पत्नी बर्हिष्मती के बढ़ते हुये आमोद-प्रमोद से और अभ्युथानादि क्रीडा में लज्जा, संकोच, हास, कटाक्ष और परिहास वचनों से विवेक हीन के समान तथा अज्ञानी के समान वे महा मनस्वी राजा प्रियव्रत भोग करने लगे॥

त्रिंशः श्लोकः

यावदवभासयति सुरगिरिमनुपरिक्रामन् भगवानादित्यो वसुधातलमर्धेनैव प्रतपत्यर्धेनावच्छादयति तदा हि भगवदुपासनोपचितातिपुरुष प्रभावस्तदनभिनन्दन् समजवेन रथेन ज्योतिर्मयेन रजनीमपि दिनं करिष्यामीति सप्तकृत्वस्तरणिमनुपर्यक्रामद् द्वितीय इव पतङ्ग ॥३०॥

पदच्छेद—

यावत् अवभासयति सुरगिरिम् अनुपरिक्रामन् भगवान् आदित्यः वसुधातलम् अर्धेन एव प्रपतति अर्धेन एव अवच्छादयति तदा हि भगवत् उपासना उपचित अतिपुरुष प्रभावः तद् अनभिनन्दन् समजवेन रथेन ज्योतिर्मयेन रजनीम् अपि दिनम् करिष्यामि इति सप्तकृत्वः तरणिम् अनुपर्यक्रामत् द्वितोय इव पतङ्गः ॥

शब्दार्थ—

यावत्	६.	जितने भाग को	प्रभावः	१९.	प्रभाव वाले (राजाप्रियव्रत)
अवभासयति	७.	प्रकाशित करते हैं (उसमें)	तद्	२०.	उसे
सुरगिरिम्	३.	सुमेरु पर्वत की	अनभिनन्दन्	२१.	न चाहते हुये कहने लगे
अनुपरिक्रामन्	४.	प्रदक्षिणा करते हुये	समजवेन	२७.	सूर्य के समान वेग वाले
भगवान्	१.	भगवान्	रथेन	२९.	रथ से
आदित्यः	२.	सूर्य	ज्योतिर्मयेन	२८.	प्रकाश स्वरूप
वसुधातलम्	५.	पृथ्वी लोक के	रजनीम्	२२.	रात को
अर्धेन	८.	आधे भाग को	अपि	२३.	भी
एव	९.	ही	दिनम्	२४.	दिन
प्रतपति	१०.	प्रकाशित करते हैं (और)	करिष्यामि	२५.	बना दूंगा
अर्धेन	११.	आधे भाग को	इति	२६.	ऐसी प्रतिज्ञा करके
अवच्छादयति	१२.	अन्धकार में रखते हैं	सप्तकृत्वः	३५.	सात बार
तदा	१३.	उस समय	तरणिम्	३३.	सूर्य के
हि	१४.	ही	अनुपरि	३४.	पीछे-पीछे
भगवत्	१५.	भगवान् श्री हरि की	अक्रामत्	३६.	परिक्रमा की
उपासना	१६.	उपासना भक्ति से	द्वितीयः	३०.	दूसरे
उपचित	१७.	प्राप्त	इव	३२.	समान
अति पुरुष	१८.	अलौकिक	पतङ्गः ॥	३१.	सूर्य के

श्लोकार्थ—भगवान् सूर्य सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते हुये पृथ्वी लोक के जितने भाग को प्रकाशित करते हैं उसमें आधे भाग को ही प्रकाशित करते हैं और आधे भाग को अन्धकार में रखते हैं। उस समय ही भगवान् श्री हरि की उपासना भक्ति से प्राप्त अलौकिक प्रभाव वाले राजा प्रियव्रत उसे न चाहते हुये कहने लगे कि रात को भी दिन बना दूंगा, ऐसी प्रतिज्ञा करके सूर्य के समान वेग वाले प्रकाश स्वरूप रथ से दूसरे सूर्य के समान सूर्य के पीछे-पीछे सात बार परिक्रमा की ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

ये वा उ ह तद्रथचरणनेमिकृतपरिखातास्ते सप्त सिन्धव आसन् यत एव कृताः सप्त भुवो द्वीपाः ॥३१॥

पदच्छेद—ये वा उ ह तद् रथ चरण नेमिकृत परिखाताःते सप्तसिन्धवः आसन् यत एव कृताः सप्त भुवः द्वीपाः ॥

शब्दार्थ—

ये	५.	जो	सप्त	९.	सात
वा	१२.	तथा	सिन्धवः	१०.	समुद्र
उ ह	१.	प्रसिद्ध है कि	आसन्	११.	हुये
तद्	२.	उन राजा प्रियव्रत के	यतः	१३.	जिसके कारण
रथ चरण	३.	रथ के पहिये के	एव	१४.	ही
नेमि	४.	अग्र भाग से	कृताः	१८.	बन गये
कृत	७.	बनी थी	सप्त	१६.	सात
परिखाताः	६.	लकीरें	भुवः	१५.	पृथ्वी के
ते	८.	वे	द्वीपाः ॥	१७.	द्वीप

श्लोकार्थ—प्रसिद्ध है कि उन राजा प्रियव्रत के रथ के पहिये के अग्रभाग से जो लकीरें बनी थीं वे सात समुद्र हुये तथा जिसके कारण ही पृथ्वी के सात द्वीप बन गये ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

जम्बूप्लक्षशाल्मलिकुशक्रौञ्चशाकपुष्करसंज्ञास्तेषां परिमाणं पूर्वस्मात्पूर्वस्मादुत्तर उत्तरो यथासंख्यं द्विगुणमानेन बहिः समन्तत उपक्लृप्ताः ॥३२॥

पदच्छेद—जम्बूप्लक्ष शाल्मलि कुश क्रौञ्च शाक पुष्कर संज्ञाः तेषाम् परिमाणम् पूर्वस्मात् पूर्वस्मात् उत्तरः उत्तरः यथासंख्यम् द्विगुण मानेन बहिः समन्तत उपक्लृप्ताः ॥

शब्दार्थ—

जम्बू, प्लक्ष	१.	जम्बू, प्लक्ष	पूर्वस्मात्	१३.	पहले के द्वीप के
शाल्मलि	२.	शाल्मलि	उत्तरः	१४.	बाद
कुश, क्रौञ्च	३.	कुश, क्रौञ्च	उत्तरः	१५.	बाद के द्वीप
शाक	४.	शाक द्वीप और	यथासंख्यम्	१६.	क्रमशः
पुष्कर	५.	पुष्कर	द्विगुण	१७.	दुगने
संज्ञाः	६.	नाम के द्वीप	मानेन	१८.	परिमाण के थे
तेषाम्	१०.	उनका	बहिः	७.	बाहर
परिमाणम्	११.	विस्तार	समन्ततः	८.	चारों ओर
पूर्वस्मात्	१२.	पहले	उपक्लृप्ताः ॥	९.	बने थे

श्लोकार्थ—जम्बू, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौञ्च, शाक द्वीप और पुष्कर नाम के द्वीप बाहर चारों ओर बने थे। उनका विस्तार पहले-पहले के द्वीप से बाद-बाद के द्वीप क्रमशः दुगने परिमाण के थे।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

क्षारोदेक्षुरसोदसुरोदघृतोदक्षीरोददधिमण्डोदशुद्धोदाः सप्त जलधयः सप्त द्वीपपरिखा इवाभ्यन्तरद्वीपसमाना एकैकश्येन यथानुपूर्वं सप्तस्वपि बहिर्द्वीपेषु पृथक्परित उपकल्पितास्तेषु जम्ब्वादिषु बर्हिष्मतीपतिरनुव्रतानात्मजानाग्नीध्रेध्मजिह्वयज्ञबाहुहिरण्यरेतोघृतपृष्ठमेधातिथिवीतिहोत्रसंज्ञान् यथासंख्येनैकैकस्मिन्नेकमेवाधिपतिं विदधे ॥३३॥

पदच्छेद—क्षारोद इक्षुरसोद सुरोद घृतोद क्षीरोद दधि मण्डोद शुद्ध उदाः सप्त जलधयः सप्त द्वीप परिखाः इव अभ्यन्तर द्वीप समानाः एक एकश्येन यथा अनुपूर्वम् सप्त सु अपि बहिः द्वीपेषु पृथक् परितः उपकल्पिताः तेषु जम्बू आदिषु बर्हिष्मतीपतिः अनुव्रतान् आत्मजान् आग्नीध्र इध्मजिह्व यज्ञबाहु हिरण्यरेतः घृतपृष्ठ मेधातिथि वीतिहोत्र संज्ञान् यथा संख्येन एकैकस्मिन् एकम् एव अधिपतिम् विदधे ॥

शब्दार्थ—

क्षारोद	५.	खारे पानी के	परितः	१९.	चारों ओर
इक्षुरसोद	६.	गन्ने के रस के	उपकल्पिताः	२०.	बनाये गये थे
सुरोद	७.	मदिरा के जल के	तेषु	२१.	उन
घृतोद	८.	घी के	जम्बू	२२.	जम्बू
क्षीरोद	९.	दूध के	आदिषु	२३.	इत्यादि सातों द्वीपों में
दधिमण्डोद	१०.	मट्ठा और	बर्हिष्मती	२४.	बर्हिष्मती के
शुद्ध उदाः	११.	शुद्ध जल के	पतिः	२५.	पति राजा प्रियव्रत ने अपने
सप्त जलधयः	१२.	सात समुद्र	अनुव्रतान्	३०.	आज्ञाकारी
सप्तद्वीप	१.	सातों द्वीपों की	आत्मजान्	३१.	पुत्रों को
परिखाः इव	२.	खाई के समान	आग्नीध्र इध्मजिह्व	२६.	आग्नीध्र इध्मजिह्व
अभ्यन्तर द्वीप	३.	अन्दर घिरे हुये द्वीप के	यज्ञबाहु हिरण्यरेतः	२७.	यज्ञबाहु हिरण्यरेतः
समानाः	४.	समान परिमाण में	घृतपृष्ठ मेधातिथि	२८.	घृतपृष्ठ मेधातिथि
एक एकश्येन	१६.	प्रत्येक द्वीप के	वीतिहोत्र संज्ञान्	२९.	वीतिहोत्र नाम के
यथा अनुपूर्वम्	१३.	क्रम से	यथा संख्येन	३२.	क्रम से
सप्तसु अपि	१४.	सातो ही	एकैकस्मिन्	३३.	प्रत्येक द्वीप में
बहिः	१७.	बाहर	एकम् एव	३४.	एक को ही
द्वीपेषु	१५.	द्वीपों में से	अधिपतिम्	३५.	राजा
पृथक्	१८.	अलग-अलग	विदधे ॥	३६.	बनाया

श्लोकार्थ—सातों द्वीपों की खाई के समान अन्दर घिरे हुये द्वीप के समान परिमाण में खारे पानी के, गन्ने के रस के, मदिरा के जल के, घी के, दूध के, मट्ठा के और शुद्ध जल के सात समुद्र क्रम से सातों ही बाहर द्वीपों में से प्रत्येक द्वीप के बाहर अलग-अलग चारों ओर बनाये गये थे। उन जम्बू इत्यादि सातों द्वीपों में बर्हिष्मती के पति राजा प्रियव्रत ने अपने आग्नीध्र, इध्मजिह्व, यज्ञबाहु, हिरण्यरेतः घृतपृष्ठ, मेधातिथि. वीतिहोत्र नाम के आज्ञाकारी पुत्रों को क्रम से प्रत्येक द्वीप में एक-एक को राजा बनाया ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

दुहितरं चोर्जस्वतीं नामोशनसे प्रायच्छद्यस्यामासीद् देवयानी नाम काव्यसुता ॥३४॥

पदच्छेद— दुहितरम् च ऊर्जस्वतीम् नाम उशनसे प्रायच्छत् ।
यस्याम् आसीत् देवयानी नाम काव्य सुता ॥

शब्दार्थ—

दुहितरम्	५. पुत्री का		यस्याम्	७. जिससे
च	१. तथा		आसीत्	१२. उत्पन्न हुई
ऊर्जस्वतीम्	३. ऊर्जस्वती		देवयानी	८. देवयानी
नाम	४. नाम की		नाम	९. नाम की
उशनसे	२. शुक्राचार्य से		काव्य	१०. शुक्राचार्य की
प्रायच्छत्	६. विवाह किया		सुता ॥	११. पुत्री

श्लोकार्थ—शुक्राचार्य से ऊर्जस्वती नाम की पुत्री का विवाह किया। जिससे देवयानी नाम की शुक्राचार्य की पुत्री उत्पन्न हुई ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

नैवंविधः पुरुषकार उरुक्रमस्य पुंसां तदङ्घ्रिरजसा जितषड्गुणानाम् ।
चित्रं विदूरविगतः सकृदाददीत यन्नामधेयमधुना स जहाति बन्धम् ॥३५॥

पदच्छेद—न एवम् विधः पुरुषकारः उरुक्रमस्य पुंसाम् तद् अङ्घ्रिरजसा जितषड्गुणानाम् ।
चित्रम् विदूर विगतः सकृद् आददीत यत् नाम धेयम् अधुना सः जहाति बन्धम् ॥

शब्दार्थ—

न	६. नहीं है	विदूर	११. भगवान् की भक्ति से दूर
एवम्	३. इस प्रकार का	विगतः	१२. अधम मनुष्य भी
पुरुषकारः	४. पुरुषार्थ	सकृद्	१५. एक बार
उरुक्रमस्य	१. भगवान् श्री हरि के	आददीत	१६. उच्चारण कर लेता है
पुंसाम्	२. भक्तों का	यत्	१३. जिन श्री हरि के
तद्	७. उन भगवान् के	नामधेयम्	१४. नाम का
अङ्घ्रिरजसा	८. चरणों की धूली से जिसने	अधुना	१९. तत्काल
जित	१०. जीत लिया है	सः	१७. वह संसार के
षड्गुणानाम् ।	९. छहों इन्द्रियों को	जहाति	२०. मुक्त हो जाती है
चित्रम्	५. आश्चर्यकारी	बन्धम् ॥	१८. बन्धन से

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के भक्तों का इस प्रकार का पुरुषार्थ आश्चर्यकारी नहीं है। उन भगवान् के चरणों की धूली से जिसने छहों इन्द्रियों को जीत लिया है। भगवान् की भक्ति से दूर अधम मनुष्य भी जिन श्री हरि के नाम का एक बार उच्चारण कर लेता है वह संसार के बन्धन से तत्काल मुक्त हो जाता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

स एवमपरिमितिबलपराक्रम एकदा तु देवर्षिचरणानुशयनानुपतितगुण-विसर्गसंसर्गेणानिर्वृतमिवात्मानं मन्यमान आत्मनिर्वेद इदमाह ॥३६॥

पदच्छेद— सः एवम् अपरिमित बलपराक्रमः एकदा तु देवर्षि चरण अनुशयन अनुपतित गुणविसर्ग ससंर्गेन अनिर्वृतम् इव आत्मानम् मन्यमानः आत्मनिर्वेदः इदम् आह ॥

शब्दार्थ—

सः	४.	राजा प्रियव्रत ने	विसर्ग	९.	प्रपञ्च के
एवम्	१.	इस प्रकार	संसर्गेण	१०.	संसर्ग से
अपरिमित	२.	असीमित	अनिर्वृतम्	१२.	अशान्त
बल पराक्रम	३.	सहायक और शक्ति शाली	इव	१३.	सा
एकदा तु	१६.	एक बार	आत्मानम्	११.	अपने को
देवर्षि चरण	५.	नारद जी के चरणों की	मन्य मानः	१४.	मानते हुये
अनुशयन	६.	सन्निधि से	आत्मनिर्वेदः	१५.	मन से दुःखी होकर
अनुपतित	७.	प्राप्त	इदम्	१७.	यह
गुण	८.	राज्यादि	आह ॥	१८.	कहा

श्लोकार्थ—इस प्रकार असीमित सहायक और शक्तिशाली राजा प्रियव्रत ने नारद जी के चरणों की सन्निधि से प्राप्त राज्यादि प्रपञ्च के संसर्ग से अपने को अशान्त सा मानते हुये मन से दुःखी होकर एक बार यह कहा ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

अहो असाध्वनुष्ठितं यदभिनिवेशितोऽहमिन्द्रियैरविद्यारचितविषम-विषयान्धकूपे तदलमलममुष्या वनिताया विनोदमृगं मां धिग्धिगिति गर्हयाञ्चकार ॥३७॥

पदच्छेद—अहो असाधु अनुष्ठितम् यद् अभिनिवेशितः अहम् इन्द्रियैः अविद्या रचित विषम विषय अन्धकूपे तद् अलम्-अलम् अमुष्याः वनितायाः विनोदमृगम् मां धिक्-धिक् इति गर्हयाञ्चकार ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	अहो मैंने	अलम्-अलम्	१०.	उचित नहीं है
असाधु	२.	बड़ा अपराध	अमुष्याः	११.	(मैं) उस
अनुष्ठितम् यद्	३.	किया है क्योंकि	वनितायाः	१२.	अविद्या कामिनी के
अभिनिवेशितः	८.	फंसा रखा है	विनोद	१३.	मनोरञ्जन का
अहम्	७.	मुझे	मृगम्	१४.	खिलौना बना हुआ हूँ
इन्द्रियैः अविद्या	४.	इन्द्रियों ने अज्ञान से	मां धिक्-धिक्	१५.	मुझे धिक्कार है
रचित विषम	५.	निर्मित दुस्तर	इति	१६.	इस प्रकार (राजा प्रियव्रत)
विषय अन्धकूपे	६.	विषयों के अन्धे कुयें में	गर्हयाञ्-	१७.	अपनी निन्दा
तद्	९.	तो फंसे रहना	चकार ॥	१८.	करने लगे

श्लोकार्थ—अहो मैंने बड़ा अपराध किया है। क्योंकि इन्द्रियों ने अज्ञान से निर्मित दुस्तर विषयों के अन्धे कुयें में मुझे फंसा रखा है। तो फँसे रहना उचित नहीं है। मैं उस अविद्या कामिनी के मनोरञ्जन का खिलौना बना हुआ हूँ। मुझे धिक्कार है, धिक्कार है इस प्रकार राजा प्रियव्रत अपनी निन्दा करने लगे ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

परदेवताप्रसादाधिगतात्मप्रत्यवमर्शेनानुप्रवृत्तेभ्यः पुत्रेभ्य इमां यथादायं विभज्य भुक्तभोगां च महिषीं मृतकमिव सहमहाविभूतिमपहाय स्वयं निहितनिर्वेदो हृदि गृहीतहरिविहारानुभावो भगवतो नारदस्य पदवीं पुनरेवानुससार ॥३८॥

पदच्छेद—परदेवता प्रसाद अधिगत आत्म प्रत्यवमर्शेन अनुप्रवृत्तेभ्यः पुत्रेभ्यः इमाम् यथादायम् विभज्य भुक्त भोगान् च महिषीम् मृतकम् इव सह महाविभूतीम् अपहाय स्वयम् निहित निर्वेदः हृदि गृहीत हरि विहार अनुभावः भगवतः नारदस्य पदवीम् पुनरेव अनुससार ॥

शब्दार्थ—

परदेवता	१.	भगवान् श्री हरि की	सह	१८.	साथ
प्रसाद	२.	कृपा से	महाविभूतिम्	१२.	सारी राज्य सम्पत्ति के
अधिगत	५.	प्राप्त हो जाने के कारण प्रियव्रत	अपहाय	१९.	छोड़ दिया (तथा)
आत्म	३.	आत्मा का	स्वयम्	२०.	अपने आप
प्रत्यवमर्शेन	४.	ज्ञान	निहित	२२.	धारण करके
अनुप्रवृत्तेभ्यः	६.	अपने आज्ञाकारी	निर्वेदः	२१.	वैराग्य को
पुत्रेभ्यः	७.	पुत्रों में	हृदि	२३.	हृदय में
इमाम्	९.	इस पृथ्वी को	गृहीत	२८.	चिन्तन करते हुये
यथादायम्	८.	यथा योग्य	हरि	२५.	श्री हरि की
विभज्य	१०.	बाँट दिया	विहार	२६.	लीलाओं (और)
भुक्त	१२.	भोगों को	अनुभावः	२७.	कर्मों का
भोगान्	१३.	भोग कर	भगवतः	२४.	भगवान्
च	११.	और	नारदस्य	२९.	देवर्षि नारद के कहे
महिषीम्	१४.	रानी बर्हिष्मती को	पदवीम्	३०.	मार्ग का
मृतकम्	१५.	मृतक के	पुनरेव	३१.	फिर से
इव	१६.	समान	अनुससार ॥	३२.	अनुसरण किया

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि की कृपा से आत्मा का ज्ञान प्राप्त हो जाने के कारण राजा प्रियव्रत अपने आज्ञाकारी पुत्रों में यथा योग्य इस पृथ्वी को बाँट दिया और भोगों को भोगकर रानी बर्हिष्मती को मृतक के समान सारी राज्य सम्पत्ति के साथ छोड़ दिया अपने आप वैराग्य को धारण करके हृदय में भगवान् श्री हरि की लीलाओं का और कर्मों का चिन्तन करते हुये देवर्षि नारद के कहे मार्ग का फिर से अनुसरण किया ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

तस्य ह वा एते श्लोकाः—

प्रियव्रतकृतं कर्म को नु कुर्याद्विनेश्वरम् ।
यो नेमिनिम्नैरकरोच्छायां घ्नन् सप्त वारिधीन् ॥३९॥

पदच्छेद— तस्य ह वा एते श्लोकाः, प्रियव्रत कृतम् कर्म कः नु कुर्यात् विना ईश्वरम् ।
यः नेमि निम्नैः अकरोत् छायाम् घ्नन् सप्त वारिधीन् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१. उनके विषय में	विना	८. सिवाय
ह वा	४. प्रसिद्ध है कि	ईश्वरम्	९. भगवान् के
एते	२. ये	यः	१२. जिन्होंने
श्लोकाः	३. श्लोक	नेमि	१५. रथ के पहिये की
प्रियव्रत	५. राजा प्रियव्रत के द्वारा	निम्नैः	१६. लकीरों से
कृतम्	६. किये गये	अकरोत्	१८. बना दिया
कर्म	७. कार्य को	छायाम्	१३. रात्रि के अन्धकार को
कः नु	१०. भला कौन पुरुष	घ्नन्	१५. मिटाने की इच्छा से
कुर्यात्	११. कर सकता है	सप्तवारिधीन् ॥	१७. सात समुद्र

श्लोकार्थ—उनके विषय में ये श्लोक प्रसिद्ध है कि राजा प्रियव्रत के द्वारा किये गये कार्य को सिवाय भगवान् के भला कौन पुरुष कर सकता है । जिन्होंने रात्रि के अन्धकार को मिटाने के लिये रथ के पहिये की लकीरों से सात समुद्र बना दिये ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

भूसंस्थानं कृतं येन सरिद्गिरिवनादिभिः ।
सीमा च भूतनिर्वृत्यै द्वीपे द्वीपे विभागशः ॥४०॥

पदच्छेद— भूसंस्थानं कृतं येन सरिद्गिरि वनआदिभिः ।
सीमा च भूत निर्वृत्यै द्वीपे द्वीपे विभागशः ॥

शब्दार्थ—

भू संस्थानम्	२. पृथ्वी की रचना	सीमा	१४. सीमा बना दी
कृतम्	३. की	च	४. और
येन	१. जिन्होंने	भूत	५. प्राणियों के
सरित्	१०. नदियों	निर्वृत्यै	६. सुख के लिये
गिरि	११. पर्वतों	द्वीपे	७. प्रत्येक
वन	१२. वनों	द्वीपे	८. द्वीप में
आदिभिः	१३. इत्यादि के द्वारा	विभागशः ॥	९. अलग-अलग

श्लोकार्थ—जिन्होंने पृथ्वी की रचना की और प्राणियों के सुख के लिये प्रत्येक द्वीप में अलग-अलग नदियों, पर्वतों, वनों इत्यादि की सीमा बना दी ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

भौमं दिव्यं मानुषं च महित्वं कर्मयोगजम्।
यश्चक्रे निरयौपम्यं पुरुषानुजनप्रियः ॥४१॥

पदच्छेद—

भौमम् दिव्यम् मानुषम् च महित्वम् कर्म योगजम्।
यः चक्रे निरय औपम्यम् पुरुष अनुजन प्रियः ॥

शब्दार्थ—

भौमम्	४.	पाताल लोक के	यः	१.	जिन्होंने
दिव्यम्	५.	स्वर्ग लोक के	चक्रे	११.	समझा (क्योंकि वे)
मानुषम्	७.	मर्त्य लोक के	निरय	९.	नरक के
च	६.	और	औपम्यम्	१०.	समान
महित्वम्	८.	वैभव को	पुरुष	१२.	भगवान् श्री हरि के
कर्म	२.	कर्म (और)	अनुजन	१३.	भक्तों के
योगजम्।	३.	योग से होने वाले	प्रियः ॥	१४.	प्रेमी थे।

श्लोकार्थ—जिन्होंने कर्म और योग से होने वाले पाताल लोक के, स्वर्ग के और मर्त्य लोक के वैभव को नरक के समान समझा, क्योंकि वे भगवान् श्री हरि के भक्तों के प्रेमी थे ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे प्रथमः अध्यायः ॥१॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पंचमः स्कन्धः

द्वितीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुकउवाच—एवं पितरि सम्प्रवृत्ते तदनुशासने वर्तमान आग्नीध्रो जम्बू द्वीपौकसः प्रजा औरसवद्धर्मावेक्षमाणः पर्यगोपायत् ॥१॥

पदच्छेद— एवम् पितरि सम्प्रवृत्ते तद् अनुशासने वर्तमानः आग्नीध्रः जम्बूद्वीप ओकसः प्रजाः औरसवत् धर्मं अवेक्षमाणः पर्यगोपायत् ॥

शब्दार्थ—

एवम् पितरि	१ २.	इस प्रकार पिता प्रियव्रत के	द्वीप ओकसः	९. १०.	द्वीप में
सम्प्रवृत्ते	३.	भक्ति में प्रवृत्त हो जाने पर	प्रजाः	११.	रहने वाली
तद्	४.	उनकी	औरसवत्	१२.	पुत्र के समान
अनुशासने	५.	आज्ञा का	धर्मं	१३.	धर्म पूर्वक
वर्तमानः	६.	पालन करते हुये	अवेक्षमाणः	१४.	पालन करते हुये
आग्नीध्रः जम्बू	७. ८.	राजा आग्नीध्र जम्बू	पर्यगोपायत् ॥	१५.	उसकी रक्षा करने लगे

श्लोकार्थ—इस प्रकार अपने पिता प्रियव्रत के भक्ति में प्रवृत्त हो जाने पर उनकी आज्ञा का पालन करते हुये राजा आग्नीध्र जम्बू द्वीप में रहने वाली प्रजाओं का पुत्र के समान धर्म पूर्वक पालन करते हुये उसकी रक्षा करने लगे ॥

द्वितीयः श्लोक

स च कदाचित्पितृलोककामः सुरवरवनिताक्रीडाचलद्रोण्यां भगवन्तं विश्वसृजां पतिमाभृतपरिचर्योपकरण आत्मैकाग्र्येण तपस्व्याराधयाम्बभूव ॥२॥

पदच्छेद—स च कदाचित् पितृ लोक कामः सुरवर वनिता क्रीडा अचल द्रोण्याम् भगवन्तम् विश्वसृजाम् पतिम् आभृत परिचर्या उपकरण आत्म ऐकाग्र्येण तपस्वी आराधयाम् बभूव ॥

शब्दार्थ—

स	४.	वे महाराज आग्नीध्र	पतिम्	१५.	स्वामी
च कदाचित्	१.२.	तदन्तर एक बार	आभृत	१०.	इकट्ठा करके
पितृलोक कामः	३.	पुत्र प्राप्ति की कामना से	परिचर्या उपकरण	८.९.	पूजा की सामग्री को
सुरवर वनिता	५.	देवताओं की पत्नियों के	आत्म	१२.	चित्त से
क्रीडा	६.	क्रीडा स्थल	एकाग्र्येण	११.	एकाग्र
अचल द्रोण्याम्	७.	मंदराचल की घाटी में	तपस्वी	१३.	तपस्या की भावना लेकर
भगवन्तम्	१६	भगवान् ब्रह्मा जी की	आराधयाम्	१७.	आराधना
विश्वसृजाम्	१४.	प्रजापतियों के	बभूव ॥	१८.	करने लगे

श्लोकार्थ—तदनन्तर एक बार पुत्र प्राप्ति की कामना से वे महाराज आग्नीध्र देवताओं की पत्नियों के क्रीडा स्थल मंदराचल की घाटी में पूजा की सामग्री को इकट्ठा करके एकाग्र चित्त से तपस्या की भावना लेकर प्रजापतियों के स्वामी भगवान् ब्रह्मा जी की आराधना करने लगे ॥

तृतीयः श्लोकः

तदुपलभ्य भगवानादिपुरुषः सदसि गायन्तीं पूर्वचित्तिं नामाप्सरसमभियापयामास ॥३॥

पदच्छेद— तद् उपलभ्य भगवान् आदिपुरुषः सदसि गायन्तीम् । पूर्व चित्तिम् नाम अप्सरसम् अभियापयामास ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	यह	गायन्तीम्	६.	गाने वाली
उपलभ्य	२.	जान कर	पूर्वचित्तिम्	७.	पूर्वचित्ति
भगवान्	४.	भगवान् ब्रह्मा जी ने	नाम	८.	नाम की
आदि पुरुषः	३.	आदि पुरुष	अप्सरसम्	९.	अप्सरा को
सदसि	५.	अपनी सभा में	अभियापयामास ॥	१०.	भोग के लिये भेजा

श्लोकार्थ—यह जानकर आदि पुरुष भगवान् ब्रह्मा जी ने अपनी सभा में गाने वाली पूर्वचित्ति नाम की अप्सरा को भोग के लिये भेजा ॥

चतुर्थः श्लोकः

सा च तदाश्रमोपवनमतिरमणीयं विविधनिबिडविटपिविटपनिकरसंश्लिष्टपुरटलतारूढस्थलविहङ्गमभिथुनैः प्रोच्यमानश्रुतिभिः प्रतिबोध्यमानसलिलकुक्कुटकारण्डवकलहंसादिभिर्विचित्रमुपकूजितामलजलाशयकमलाकरमुप बभ्राम ॥४॥

पदच्छेद—स च तद् आश्रम उपवनम् अतिरमणीयम् विविधनिविडविटपि विटप निकर संश्लिष्ट पुरट लता आरूढ स्थल विहंगम मिथुनैः प्रोच्यमान श्रुतिभिः प्रतिबोध्यमान सलिल कुक्कुट कारण्डव कलहंस आदिभिः विचित्रम् उपकूजित अमल जलाशय कमलाकरम् उप बभ्राम ॥

शब्दार्थ—

स च	१.	वह अप्सरा	स्थलविहंगममिथुनैः	१०.	मयूरादि पक्षियों का जोड़ा
तद्	२.	आग्नीध्र जी के	प्रोच्यमान श्रुतिभिः	१२.	उनकी सुरीली आवाज से
आश्रम	३.	आश्रम के समीप	प्रतिबोध्यमान	१६.	जग कर
उपवनम्	५.	बगीचे में	सलिल कुक्कुट	१३.	जल मुर्गे
अतिरमणीयम्	४.	अत्यन्त मनोहर	कारण्डव कलहंस	१४.	सारस और हंस
विविध निविड	७.	अनेकों सघन	आदिभिः	१५.	इत्यादि जल पक्षी
विटपिविटपनिकर	८.	वृक्षों की शाखा समूह पर	विचित्रम्	१७	अनेकों आवाज कर रहे थे
संश्लिष्ट	९.	फैली हुई थी (तथा)	उपकूजित	२०.	गूंज रहा था
पुरट लता	८.	स्वर्ण लतायें	अमलजलाशय	१९.	निर्मल सरोवर
आरूढ	११.	बैठा हुआ था	कमला करम्	१८	जिससे कमलों के समूह से भरा
			उपबभ्राम ॥	६.	विचर रही थी (उस बगीचे में)

श्लोकार्थ—वह अप्सरा आग्नीध्र जी के आश्रम के समीप अत्यन्त मनोहर बगीचे में विचर रही थी। उस बगीचे में अनेकों सघन वृक्षों की शाखा समूह पर स्वर्ण लतायें फैली हुई थीं। तथा मयूरादि पक्षियों का जोड़ा बैठा हुआ था। उनकी सुरीली आवाज से जलमुर्गे, सारस और हंस इत्यादि जल पक्षी जग कर अनेकों आवाज कर रहे थे। जिससे कमलों के समूह से भरा निर्मल सरोवर गूंज रहा था ॥

पञ्चमः श्लोकः

तस्याः सुललितगमनपदविन्यासगतिविलासायाश्चानुपदं खणखणायमानरुचिरचरणाभरणस्वनमुपाकर्ण्य नरदेवकुमारः समाधियोगेनामीलितनयननलिनमुकुलयुगलमीषद्विकचय्य व्यचष्ट ॥५॥

पदच्छेद—तस्याः सुललित गमन पदविन्यास गतिविलासायाः च अनुपदम् खण खणायमान रुचिर चरणाभरणस्वनम् उपाकर्ण्य नरदेव कुमारः समाधि योगेन आमीलित नयन नलिन मुकुल युगलम् ईषद् विकचय्य व्यचष्ट ॥

शब्दार्थ—

तस्याः	१.	वह सुन्दरी	उपाकर्ण्य	१४.	सुनकर
सुललित	२.	मनोहर	नरदेव	१५.	राजकुमार
गमन	३.	चाल में	कुमारः	१६.	आग्नीध्र ने
पदविन्यास	४.	पैरों को रखकर	समाधि	१७.	समाधि
गति	६.	चल रही थी	योगेन	१८.	योग से
विलासायाः	५.	विलास पूर्वक	आमीलित	१९.	बन्द किये हुये
च	७.	तथा	नयन	२३.	नेत्रों को
अनुपदम्	८.	पग-पग पर उसके	नलिन	२०.	कमल की
खणखणायमान	१२.	झंकार कर रहे थे	मुकुल	२१.	कली के समान
रुचिर	१०.	मनोहर	युगलम्	२२.	दोनों
चरण	९.	पैरों के	ईषद्	२४.	थोड़ा
आभरण	११.	पायजेब	विकचय्य	२५.	खोलकर
स्वनम्	१३.	उस ध्वनि को	व्यचष्ट ॥	२६.	देखा

श्लोकार्थ—वह सुन्दरी मनोहर चाल में पैरों को रखकर विलास पूर्वक चल रही थी। तथा पग-पग पर उसके पैरों के मनोहर पायजेब झंकार कर रहे थे। उस ध्वनि को सुनकर राजकुमार आग्नीध्र ने समाधि योग से बन्द किये हुये कमल की कली के समान दोनों नेत्रों को थोड़ा खोलकर उसे देखा।

षष्ठः श्लोकः

तामेवाविदूरे मधुकरीमिव सुमनस उपजिघ्रन्तीं दिविजमनुजमनोनयनाह्लाददुघैर्गतिविहारव्रीडाविनयावलोकसुस्वराक्षरावयवैर्मनसि नृणां कुसुमायुधस्य विदधतीं विवरं निजमुखविगलितामृतासवसहासभाषणामोदमदान्धमधुकरनिकरोपरोधेन द्रुतपदविन्यासेन वल्गुस्पन्दनस्तनकलशकबरभाररशनां देवीं तदवलोकनेन विवृतावसरस्य भगवतो मकरध्वजस्य वशमुपनीतो जडवदिति होवाच ॥६॥

पदच्छेद—ताम् एव अविदूरे मधुकरीम् इव सुमनसः उपजिघ्रन्तीम् दिविज मनुज मनो नयन आह्लाद दुघैः गति विहार व्रीडा विनय अवलोक सुस्वर अक्षर अवयवैः मनसि नृणाम् कुसुम आयुधस्य विदधतीम् विवरम् निजमुख विगलित अमृत आसव सहास भाषण आमोद मदान्ध मधुकरनिकर उपरोधेन द्रुत पद विन्यासेन वल्गुस्पन्दन स्तन कलशकबर भार रशनाम् देवीम् तद् अवलोकनेन विवृत अवसरस्य भगवतः मकरध्वजस्य वशम् उपनीतो जडवत् इति ह उवाच ॥

शब्दार्थ—

ताम् एव	१. वही अप्सरा	अमृत आसव	२१ अमृत रस रूपी
अविदूरे	२. समीप में	सहासभाषण	२२. मुसकान भरे वचनों की
मधुकरीम् इव	३. भौंरों के समान	आमोदमदान्ध	२३. सुगन्ध से मतवाले
सुमनसः	४. पुष्पों को	मधुकर निकर	२४. भौंरों के झुण्ड ने (उसे)
उपजिघ्रन्तीम्	५. सूंघ रही थी	उपरोधेन	२५ घेर लिया था (अतः)
दिविज मनुज	६. देवता और मनुष्यों के	द्रुतपद विन्यासेन	२६. जल्दी जल्दी पैर बढ़ाने से उसके
मनोनयन	७. मन और नेत्रों के	वल्गु स्पन्दन	३०. मनोहर रूप से हिल रहे थे
आह्लाद दुघैः	८. आनन्द देने वाली	स्तन कलश	२७. स्तन कलश
गति	१०. चाल	कबर भार	२८. जूड़े का घेरा
विहार	९. बांकी	रशनाम्	२९. करधनी
व्रीडा विनय	११. लज्जा नम्रता	देवीम्	३२. उस देवी को
अवलोक सुस्वर	१२. चितवन सुन्दर आवाज	तद्	३१. उस समय
अक्षर अवयवैः	१३. मधुरवाणी तथा अङ्गों से	अवलोकनेन	३३. देखने से
मनसि	१५. मन में	विवृत	३७. मिल गया था (अतः उनके)
नृणाम्	१४. मनुष्यों के	अवसरस्य	३६. प्रवेश का समय
कुसुम आयुधस्य	१६. कामदेव के लिये	भगवतः	३४. भगवान्
विदधतीम्	१८. बना रही थी	मकरध्वजस्य	३५. कामदेव को
विवरम्	१७. द्वार	वशम् उपनीतो	३८ वश में हुये राजा आग्नीध्र
निजमुख	१९. उसके मुख से	जडवत् इति	३९ पागल की भांति इस प्रकार
विगलित	२०. निकलते हुये	ह उवाच ॥	४०. कहने लगे

श्लोकार्थ—वही अप्सरा समीप में भौंरों के समान पुष्पों को सूंघ रही थी। देवता और मनुष्यों के मन और नेत्रों को आनन्द देने वाली बांकी चाल, लज्जा, नम्रता, चितवन, सुन्दर आवाज, मधुर वाणी तथा अपने अङ्गों से मनुष्यों के मन में कामदेव के लिये द्वार बना रही थी। उसके मुख से निकलते हुये अमृत रस रूपी मुसकान भरे वचनों की सुगन्ध से मतवाले भौंरों के झुण्ड ने उसे घेर लिया था। अतः जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाने से उसके स्तन-कलश, जूड़े का घेरा, करधनी मनोहर रूप से हिल रहे थे। उस समय उस देवी को देखने से भगवान् कामदेव को प्रवेश का समय मिल गया, अतः उनके वश में हुये राजा आग्नीध्र पागल की भांति इस प्रकार कहने लगे ॥

सप्तमः श्लोकः

का त्वं चिकीर्षसि च किं मुनिवर्य शैले मायासि कापि भगवत्परदेवतायाः।
विज्ये बिभर्षि धनुषी सुहृदात्मनोऽर्थे किं वा मृगान्मृगयसे विपिने प्रमत्तान्॥७॥

पदच्छेद—का त्वम् चिकीर्षसि च किम् मुनिवर्य शैले माया असि कापि भगवत् परदेवतायाः।
विज्ये बिभर्षि धनुषी सुहृद् आत्मनः अर्थे किम् वा मृगान् मृगयसे विपिने प्रमत्तान्॥

शब्दार्थ—

का	३.	कौन हो	परदेवतायाः	८.	परात्पर
त्वम्	२.	तुम	विज्ये	१३.	डोरी से रहित
चिकीर्षसि	७.	चाहते हो (अथवा)	बिभर्षि	१५.	धारण किये हो
च	४.	और	धनुषी	१४.	दो धनुष
किम्	६.	क्या करना	सुहृद्	१२.	हे मित्र तुम
मुनिवर्य	१.	हे मुनिवर	आत्मनः अर्थे	१७.	अपने लिये
शैले	५.	इस पर्वत में	किम्	१६.	क्या तुम
माया असि	११.	माया हो	वा मृगान्	१६.	मुझ जैसे मृगों को
कापि	१०.	कोई	मृगयसे	२०.	ढूंढ रही हो
भगवत्	६.	भगवान् की	विपिने प्रमत्तान्॥	१८.	जंगल में असावधान

श्लोकार्थ—हे मुनिवर! तुम कौन हो और इस पर्वत में क्या करना चाहते हो। अथवा परात्पर भगवान् की कोई माया हो। हे मित्र! तुम डोरी से रहित दो धनुष धारण किये हो। क्या तुम अपने लिये जंगल में असावधान मुझ जैसे मृगों को ढूंढ रहे हो॥

अष्टमः श्लोकः

बाणाविमौ भगवतः शतपत्रपत्रौ शान्तावपुङ्खरुचिरावतितिग्मदन्तौ।
कस्मै युयुङ्क्षसि वने विचरन्न विद्मः क्षेमाय नो जडधियां तव विक्रमोऽस्तु॥८

पदच्छेद—बाणौ इमौ भगवतः शतपत्रपत्रौ शान्तौ अपुङ्खौ रुचिरौ अति तिग्म दन्तौ।
कस्मै युयुङ्क्षसि वने विचरन् न विद्मः क्षेमाय नः जडधियाम् तव विक्रमः अस्तु॥

शब्दार्थ—

बाणौ	३.	नयन बाण	कस्मै	१२.	किस पर
इमौ	०.	ये दोनों	युयुङ्क्षसि	११.	प्रहार करना चाहते हो
भगवतः	१.	आप के	वने विचरन्	१०.	वन में घूमते हुये
शतपत्रपत्रौ	४.	कमल पत्र के समान पंख वाले हो कर भी	न विद्मः	१३.	हम नहीं जानते हैं
शान्तौ	५.	शान्त	क्षेमाय	१७.	कल्याणकारी
अपुङ्खौ	६.	पंख हीन हैं	नः	१५.	हमारे लिये
रुचिरौ	७.	सुन्दर	जडधियाम्	१४.	मन्द बुद्धि
अतितिग्म	६.	बहुत तीखे हैं	तव विक्रमः	१६.	तुम्हारा पराक्रम
दन्तौ।	८.	अग्र भाग में	अस्तु॥	१८.	हो

श्लोकार्थ—आपके ये दोनों नयन बाण कमल पत्र के समान पंख वाले होकर भी शान्त पंख हीन हैं, सुन्दर और अग्रभाग में बहुत तीखे हैं। वन में घूमते हुये किस पर प्रहार करना चाहते हो? हम नहीं जानते हैं, मन्दबुद्धि हमारे लिये तुम्हारा पराक्रम कल्याणकारी हो॥

नवमः श्लोकः

शिष्या इमे भगवतः परितः पठन्ति गायन्ति साम सरहस्यमजस्रमीशम् ।
युष्मच्छिखाविलुलिताः सुमनोऽभिवृष्टीः सर्वे भजन्त्यृषिगणा इव वेदशाखाः॥९॥

पदच्छेद—शिष्याः इमे भगवतः परितः पठन्ति गायन्ति साम सरहस्यम् अजस्रम् ईशम् ।
युष्मत् शिखा विलुलिताः सुमनः अभिवृष्टीः सर्वे भजन्ति ऋषिगणाः इव वेद शाखाः ॥

शब्दार्थ—

शिष्याः	३.	शिष्यों के समान	युष्मत् शिखा	११.	आपकी चोटी से
इमे	४.	ये भौंरें	विलुलिताः	१२.	झरते हुये
भगवतः	१.	आपके	सुमनः	१३.	पुष्पों की
परितः	२.	चारों ओर	अभिवृष्टीः	१४.	वर्षा का ऐसे
पठन्ति	७.	पाठ कर रहे हैं मानों	सर्वे	१०.	ये सभी
गायन्ति	९.	गानकर रहे हैं	भजन्ति	१५.	सेवन कर रहे हैं
साम	६.	साम वेद का	ऋषिगणाः	१७.	मुनिजन
सरहस्यम्	५.	रहस्यों के साथ	इव	१६.	मानों
अजस्रम् ईशम् ।	८.	निरन्तर भगवान् का	वेदशाखाः ॥	१८.	वेद की शाखाओं का पाठ करते हैं

श्लोकार्थ—आपके चारों ओर शिष्यों के समान ये भौंरें रहस्यों के साथ सामवेद का पाठ कर रहे हैं। मानों निरन्तर भगवान् का गान कर रहे हैं। ये सभी आपकी चोटी से झरते हुये पुष्पों की वर्षा का सेवन कर रहे हैं। मानों मुनिजन वेद की शाखाओं का पाठ करते हैं ॥

दशमः श्लोकः

वाचं परं चरणपञ्जरतित्तिरीणां ब्रह्मन्नरूपमुखरां शृणवाम तुभ्यम् ।
लब्धा कदम्बरुचिरङ्कविटङ्कबिम्बे यस्यामलातपरिधिः क्व च वल्कलं ते ॥१०॥

पदच्छेद—वाचम् परम् चरण पञ्जर तित्तिरीणाम् ब्रह्मन् अरूप मुखराम् शृणवाम तुभ्यम् ।
लब्धा कदम्ब रुचिर अङ्क विटङ्क बिम्बे यस्याम् अलात परिधिः क्व च वल्कलं ते ॥

शब्दार्थ—

वाचम्	६.	ध्वनि	लब्धा	१३.	मिली है
परम्	५.	केवल	कदम्ब रुचिर	१२.	कहाँ से कदम्ब पुष्पों की कान्ति
चरण पञ्जर	३.	चरण रूपी पिंजरे में बन्द	अङ्क विटङ्क	१०.	नितम्ब
तित्तिरीणाम्	४.	पायजेब के रत्नों की	बिम्बे	११.	मण्डल पर
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्	यस्याम्	१४.	जिसके (चारो ओर)
अरूप	८.	किसी वक्ता के बिना ही	अलातपरिधिः	१५.	लाल घेरा है
मुखराम्	१०.	अत्यन्त स्पष्ट हैं (तुम्हारे)	क्व	१९.	कहाँ है
शृणवाम	७.	सुन रहे हैं जो	च	१६.	अरे
तुभ्यम्	२.	तुम्हारे	वल्कलम्	१८.	वल्कल वस्त्र
			ते ॥	१७.	तुम्हारा

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन्! तुम्हारे चरण रूपी पिंजरे में बन्द पायजेब के रत्नों की केवल ध्वनि सुन रहे हैं, जो किसी वक्ता के बिना ही अत्यन्त स्पष्ट है। तुम्हारे नितम्ब मण्डल पर कहाँ से कदम्ब-पुष्पों की कान्ति मिली है, जिसके चारों ओर लाल घेरा है। अरे तुम्हारा वल्कल वस्त्र कहाँ है ?॥

एकादशः श्लोकः

किं सम्भृतं रुचिरयोर्द्विज श्रृङ्गयोस्ते मध्ये कृशो वहसि यत्र दृशिः श्रिता मे ।
पङ्कोऽरुणः सुरभिरात्मविषाण ईदृग् येनाश्रमं सुभग मे सुरभीकरोषि ॥११॥

पदच्छेद—किम् सम्भृतम् रुचिरयोः द्विज श्रृङ्गयोः ते मध्ये कृशः वहसि यत्र दृशिः श्रिता मे ।
पङ्कः अरुणः सुरभिः आत्म विषाणे ईदृग् येन आश्रमम् सुभग मे सुरभी करोषि ॥

शब्दार्थ—

किम् सम्भृतम्	५.	क्या भर रक्खा है (जिससे)	पङ्क	१४.	लेप लगाये हो
रुचिरयोः	३.	सुन्दर	अरुण	१३.	लाल
द्विजः	१.	हे द्विजवर	सुरभिः	१२.	सुगन्धित
शृङ्गयोः	४.	दोनों सींगों में	आत्मविषाणे	१०.	अपने इन दोनों सींगों में
ते	२.	तुमने	ईदृग्	११.	ऐसा
मध्ये कृशः	६.	मध्यभाग दुर्बल होने पर भी इन्हें	येन	१५.	जिससे
वहसि यत्र	७.	ढो रही हो, जहाँ पर	आश्रमम्	१७	आश्रम को
दृशिः श्रिता	९.	दृष्टि लगी हुई है	सुभग, मे	१६.	हे सुभग ! मेरे
मे ।	८.	मेरी	सुरभी करोषि ॥	१८.	सुगन्धित कर रही हो

श्लोकार्थ—हे द्विजवर ! तुमने सुन्दर दोनों सींगों में क्या भर रक्खा है । जिससे मध्य भाग दुर्बल होने पर भी उन्हें ढो रहे हो । जहाँ पर मेरी दृष्टि लगी हुई है । अपने इन दोनों सींगों में ऐसा सुगन्धित लाल लेप लगाये हो । जिससे हे सुभग ! मेरे आश्रम को सुगन्धित कर रहे हो ॥

द्वादशः श्लोकः

लोकं प्रदर्शय सुहृत्तम तावकं मे यत्रत्य इत्थमुरसावयवावपूर्वौ ।
अस्मद्विधस्य मनउन्नयनो बिभर्ति बह्वद्भुतं सरसरासुसुधादि वक्त्रे ॥१२॥

पदच्छेद—लोकम् प्रदर्शय सुहृत्तम तावकम् मे यत्रत्यः इत्थम् उरसा अवयवौ अपूर्वौ ।
अस्मद् विधस्य मनः उन्नयनः बिभर्ति बहु अद्भुतम् सरस रास सुधादि वक्त्रे ॥

शब्दार्थ—

लोकम् प्रदर्शय	४.	स्थान दिखाओ	अस्मद्	१०.	जिससे हमारे जैसे
सुहृत्तम	१.	हे मित्रवर	विधस्य	११.	लोगों के
तावकम्	३.	अपना	मनः	१२.	मन में
मे	२.	मुझे	उन्नयनः	१३.	क्षोभ उत्पन्न होता है
यत्रत्यः	५.	जहाँ के लोग	बिभर्ति	१९.	धारण किये हो
इत्थम्	६.	इस प्रकार अपने	बहु अद्भुत	१५.	अत्यन्त अलौकिक
उरसा	७.	हृदय में	सरस	१७.	मधुरालाप रूपी
अवयवौ	९.	अङ्गों को (धारण करते हैं)	रास	१६.	विलास के साथ
अपूर्वौ ।	८.	अलौकिक	सुधादि	१८	अमृत इत्यादि
			वक्त्रे ।।	१४.	अपने मुख में

श्लोकार्थ—हे मित्रवर ! मुझे अपना स्थान दिखाओ जहाँ के लोग इस प्रकार अपने हृदय में अलौकिक अङ्गों को धारण करते हैं । जिससे हमारे जैसे लोगों के मन में क्षोभ उत्पन्न होता है । अपने मुख में अत्यन्त अलौकि विकास के साथ मधुरालाप रूपी अमृत इत्यादि धारण किये हों ॥

त्रयोदशः श्लोकः

का वाऽऽत्मवृत्तिरदनाद्धविरङ्ग वाति विष्णोः कलास्यनिमिषोन्मकरौ च कर्णौ ।
उद्विग्नमीनयुगलं द्विजपङ्क्तिशोचिरासन्नभृङ्गनिकरं सर इन्मुखं ते ॥१३॥

पदच्छेद—का वा आत्मवृत्तिः अदनात् हविः अङ्ग वाति विष्णोः कला असि अनिमिष उन्मकरौ च कर्णौ ।
उद्विग्न मीन युगलम् द्विज पङ्क्ति शोचिः आसन्न भृङ्ग निकरम् सर इन् मुखं ते ॥

शब्दार्थ—

का	४.	क्या है	उद्विग्न	१५.	जिसमें चञ्चल
वा	६.	अथवा तुम	मीन	१७.	दो मछलियाँ हैं
आत्म वृत्तिः	२.३.	तुम्हारा आहार	युगलम्	१६.	दोनों नेत्र
अदनाद्धविः	४.	जिसके खाने से होम जैसी	द्विजपङ्क्ति	१८.	दाँतों की पङ्क्तियों की
अङ्ग	१.	हे मित्रवर	शोचिः	१९.	कान्ति हंस के समान हैं (तथा)
वाति	५.	सुगन्ध बह रही है	आसन्न	२०.	सिर पर स्थित केशपाश
विष्णोः	७.	भगवान् विष्णु की	भृङ्ग	२१.	भौंरों के
कला असि	८.	कला हो	निकरम्	२२.	झुंड के समान हैं
अनिमिष	१०.	अपलक नेत्र रूपी	सर इन्	१४.	तालाव के समान है
उन्मकरौ	११.	मकराकृत कुण्डल हैं	मुख	१३.	मुख
च कर्णौ ।	९.	जिससे दोनों कानों में	ते ॥	१२.	तुम्हारा

श्लोकार्थ—हे मित्रवर ! तुम्हारा आहार क्या है । जिसके खाने से होम के समान सुगन्ध बह रही है । अथवा तुम भगवान् विष्णु की कला हो । जिससे दोनों कानों में अपलक नेत्र रूपी मकराकृत कुण्डल हैं । तुम्हारा मुख तालाव के समान है । जिसमें चञ्चल दोनों नेत्र दो मछलियाँ हैं । दाँतों की पङ्क्तियों की कान्ति हंस के समान है । तथा सिर पर केशपास भौंरों के झुंड के समान है ॥

चर्तुदशः श्लोकः

योऽसौ इमे त्वया करसरोजहतः पतङ्गो दिक्षु भ्रमन् भ्रमत एजयतेऽक्षिणी मे ।
मुक्तं न ते स्मरसि वक्रजटावरूथं कष्टोऽनिलो हरति लम्पट एष नीवीम् ॥१४॥

पदच्छेद—यः असौ त्वया कर सरोज हतः पतङ्गः दिक्षु भ्रमन् भ्रमतः एजयते अक्षिणी मे ।
मुक्तम् न ते स्मरसि वक्र जटा वरुथं कष्टः अनिलः हरति लम्पटः एषः नीवीम् ।

शब्दार्थ—

यः असौ	७.८.	जो यह	न	१९.	नहीं
त्वया कर	१२.	तुम्हारे हस्त	ते	१५.	अपने
सरोज हतः	३.४.	कमल की मार खा कर	स्मरसि	२०.	सम्हाल रही हो
पतङ्गः	९.	गेंद है (वह)	वक्र	१६.	कुटिल
दिक्षु भ्रमन्	५.६.	दिशाओं में घूमता हुआ	जटा वरुथम्	१७.१८.	केश पाश को
भ्रमतः	१०.	भ्रम में पड़े हुये	कष्टः	२१.	बड़ा दुःख है कि
एजयते	१३.	चञ्चल बना रहा है	अनिलः	२४.	वायु तुम्हारे
अक्षिणी	१२.	आँखों को	हरति	२६.	उड़ा रहा है
मे ।	११.	मेरी	लम्पटः एष	२३.२२.	धूर्त यह
मुक्तम्	१४.	तुम खुले हुये	नीवीम् ॥	२५.	अधोवस्त्र

श्लोकार्थ—तुम्हारे हस्त कमल की मार खाकर दिशाओं में घूमता हुआ जो यह गेंद है । वह भ्रम में पड़े हुये मेरी आँखों को चञ्चल बना रहा है । तुम खुले हुये अपने कुटिल केश पाश को नहीं सम्हाल रही हो । बड़ा दुःख है कि यह धूर्त वायु तुम्हारे अधोवस्त्र को उड़ा रहा है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

रूपं तपोधन तपश्चरतां तपोघ्नं ह्येतत्तु केन तपसा भवतोपलब्धम् ।
चर्तुं तपोऽर्हसि मया सह मित्र मह्यं किं वा प्रसीदति स वै भवभावनो मे ।१५।

पदच्छेद—रूपम् तपोधन तपः चरताम् तपोघ्नम् हि एतत् तु केन तपसा भवता उपलब्धम् ।
चर्तुम् तपः अर्हसि मया सह मित्र मह्यम् किम् वा प्रसीदति सः वै भवभावनः मे ।।

शब्दार्थ—

रूपम्	२	तुम्हारा स्वरूप तो
तपोधनम्	१.	हे तपस्वी
तपः चरताम्	३.	तपस्या करने वालों के
तपोघ्नम्	५.	तप में विघ्न डालने वाला है
हि	४.	अवश्य ही
तत्	८.	यह
तु	१०.	तथा
केन तपसा	७.	किस तपस्या से
भवता	६.	आपने
उपलब्धम् ।	९.	प्राप्त किया है
चर्तुम्	१४	कर
तपः अर्हसि	१३.१४.	तपस्या सकते हो
मया सह	१२.	मेरे साथ
मित्र	११.	हे मित्र तुम
मह्यम्	१९.	मुझे देने के लिये
किम्	१६.	क्या
वा	१५.	अथवा
प्रसीदति	२३.	प्रसन्न हुये हैं
सः	१७.	वे
वै	२०.	ही
भवभावनः	१८.	ब्रह्मा जी
मे ।।	२२.	मुझ पर

श्लोकार्थ—हे तपस्वी ! तुम्हारा स्वरूप तो अवश्य ही तपस्या करने वालों के तप में विघ्न डालने वाला है । आपने किस तपस्या से यह प्राप्त किया है । हे मित्र ! तुम मेरे साथ तपस्या कर सकते हो ! अथवा क्या वे ब्रह्मा जी मुझे देने के लिये ही मुझ पर प्रसन्न हुये हैं ।।

षोडशः श्लोकः

न त्वां त्यजामि दयितं द्विजदेवदत्तं यस्मिन्मनो दृगपि नो न वियाति लग्नम् ।
मां चारुशृङ्ग्यर्हसि नेतुमनुव्रतं ते चित्तं यतः प्रतिसरन्तु शिवाः सचिव्यः॥१६॥

पदच्छेद—न त्वाम् त्यजामि दयितम् द्विजदेव दत्तम् यस्मिन् मनः दृगपिनः न वियाति लग्नम् ।
माम् चारु शृङ्गि अर्हसि नेतुम् मनुव्रतम् ते चित्तम् यतः प्रतिसरन्तु शिवाः सचिव्यः।।

शब्दार्थ—

न	४.	नहीं
त्वाम्	२.	तुझ
त्यजामि	५.	छोड़ना चाहता हूँ
दयितम्	३.	प्रिय वस्तु को
द्विजदेवदत्तम्	१.	ब्रह्मा जी के द्वारा दी हुई
यस्मिन्	६.	जिस तुम्हारे में
मनः	८.	मन (और)
दृगपि नः	९.१०.	हमारी दृष्टि भी
न वियाति	११.	नहीं हट रही है
लग्नम् माम्	७.	लगा हुआ मेरा
चारुशृङ्गि	१२.	हे सुन्दर स्तनों वाली
अर्हसि	१६.	सकती हो
नेतुम्	१५.	ले जा
अनुव्रतम्	१४.	मुझ आज्ञाकारी
यतः ते चित्तम्	१३.	जहाँ तुम्हारा हृदय है (वहीं पर)
प्रतिसरन्तु	१९.	साथ चलें
शिवाः	१७.	ये मङ्गल मयी
सचिव्यः ।।	१८.	सखियाँ भी

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के द्वारा दी हुई तुझ प्रिय वस्तु को नहीं छोड़ना चाहता हूँ । जिस तुम्हारे में लगा हुआ मेरा मन और हमारी दृष्टि भी नहीं हट रही है । हे सुन्दर स्तनों वाली ! जहाँ तुम्हारा हृदय है वहीं पर मुझ आज्ञाकारी को ले जा सकती हो । ये मङ्गलमयी सखियाँ भी साथ चलें ।।

सप्तदशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इति ललनानुनयातिविशारदो ग्राम्यवैदग्ध्यया परिभाषया तां विबुधवधूं विबुधमतिरधिसभाजयामास ॥१७॥

पदच्छेद— इति ललना अनुनय अतिविशारदः ग्राम्य वैदग्ध्यया परिभाषया। ताम् विबुध वधूं विबुध मतिः अधि सभाजयामास ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	परिभाषया	१०.	वाणी से
ललना	२.	उस सुन्दरी को	ताम्	११.	उस
अनुनय	३.	प्रसन्न करने में	विबुधवधूं	१२	अप्सरा को
अति	४.	अत्यन्त	विबुध	६.	देवताओं के समान चतुर
विशारदः	५.	चतुर (तथा)	मतिः	७.	बुद्धि वाले आग्नीध्र ने
ग्राम्य	८.	इस प्रकार	अधिसभाजयामास ॥	१३.	प्रसन्न कर लिया
वैदग्ध्यया	९.	चतुरता पूर्ण			

श्लोकार्थ—इस प्रकार उस सुन्दरी को प्रसन्न करने में चतुर तथा देवताओं के समान चतुर बुद्धि वाले आग्नीध्र ने इस प्रकार चातुरतापूर्ण वाणी से उस अप्सरा को प्रसन्न कर लिया ॥

अष्टादशः श्लोकः

सा च ततस्तस्य वीरयूथपतेर्बुद्धिशीलरूपवयःश्रियौदार्येण पराक्षिप्तमनास्तेन सहायुतायुतपरिवत्सरोपलक्षणं कालं जम्बूद्वीपपतिना भौमस्वर्गभोगान् बुभुजे ॥१८॥

पदच्छेद—सा च ततः तस्य वीर यूथपतेः बुद्धि शील रूप वयः श्रिया औदार्येण पराक्षिप्तमनाः तेन सह अयुत-अयुत परिवत्सरः उपलक्षणम् कालम् जम्बूद्वीपपतिना भौम स्वर्ग भोगान् बुभुजे ॥

शब्दार्थ—

सा	११.	उस अप्सरा ने	पराक्षिप्त	९.	खिच गया था
च	१०.	अतः	मनाः	२.	उस अप्सरा का मन
ततः	१.	तदनन्तर	तेन सह	१३.	उस राजा आग्नीध्र के साथ
तस्य	४.	उस राजा की	अयुत अयुत	१४.	कई हजार
वीरयूथपतेः	३.	वीरों के अधिपति	परिवत्सरः	१५.	वर्षों से
बुद्धि शील	५.	बुद्धि स्वभाव	उपलक्षणम्कालम्	१६.	युक्त समय तक
रूप वयः	६	सौन्दर्य अवस्था	जम्बूद्वीपपतिना	१२.	जम्बूद्वीप के स्वामी
श्रिया	७.	शोभा और	भौम	१७	पृथ्वी लोक के और
औदार्येण।	८.	उदारता से	स्वर्ग	१८.	स्वर्ग लोक के
			भोगान् बुभुजे	१९.	भोगों का भोग किया

श्लोकार्थ—तदनन्तर उस अप्सरा का मन वीरों के अधिपति उस राजा की बुद्धि, स्वभाव, सौन्दर्य, अवस्था, शोभा और उदारता से खिच गया था। अतः उस अप्सरा ने जम्बूद्वीप के स्वामी उस राजा आग्नीध्र के साथ कई हजार वर्षों से युक्त समय तक पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक और भोगों का भोग किया ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तस्यामु ह वा आत्मजान् स राजवर आग्नीध्रो नाभिकिम्पुरुषहरिवर्षे लावृतरम्यकहिरण्मयकुरुभद्राश्वकेतुमालसंज्ञान्नव पुत्रानजनयत् ॥१९॥

पदच्छेद—तस्याम् उ ह वा आत्मजान् सः राजवरः आग्नीध्रः नाभि किम्पुरुष हरिवर्ष इलावृत रम्यक हिरण्मय कुरुभद्राश्वकेतुमाल संज्ञान् नव पुत्रान् अजनयत् ॥

शब्दार्थ—

तस्याम्	४.	उस अप्सरा से	रम्यक	८.	रम्यक
उ ह	१४.	अलौकिक प्रसिद्ध (और)	हिरण्मय	९.	हिरण्मय
वा	१	तदनन्तर	कुरु	१०.	कुरु
आत्मजान्	१५	अपने	भद्राश्व	११.	भद्राश्व और
सः राजवर	२.	उस श्रेष्ठ राजा	केतुमाल	१२.	केतुमाल
आग्नीध्रः	३.	आग्नीध्र ने	संज्ञान्	१३.	नाम के
नाभि किम्पुरुष	५.	नाभि किम्पुरुष	नव	१६.	नौ
हरिवर्ष	६.	हरिवर्ष	पुत्रान्	१७.	पुत्रों को
इलावृत	७.	इलावृत	अजनयत् ॥	१८.	उत्पन्न किया

श्लोकार्थ—तदनन्तर उस श्रेष्ठ राजा आग्नीध्र ने उस अप्सरा से नाभि, किम्पुरुष हरिवर्ष, इलावर्त, रम्यक, हिरण्मय, कुरु, भद्राश्व और केतुमाल नाम के नौ पुत्रों को उत्पन्न किया ॥

विंशः श्लोकः

सा सूत्वाथ सुतान्नवानुवत्सरं गृह एवापहाय पूर्वचित्तिर्भूय एवाजं देवमुपतस्थे ॥२०॥

पदच्छेद—सा सूत्वा अथ सुतान् नव अनुवत्सरम् गृह एव अपहाय पूर्वचित्तिः भूय एव अजम् देवम्-उपतस्थे ॥

शब्दार्थ—

सा	२.	उस अप्सरा ने	अपहाय	९.	छोड़कर
सूत्वा	६.	उत्पन्न करके	पूर्वचित्तिः	१.	पूर्व चित्ति नाम की
अथ	७.	तदनन्तर	भूयः	१०.	फिर से
सुतान्	५.	पुत्रों को	एव	१३.	ही
नव	४.	नौ	अजम्	१२.	ब्रह्मा जी की
अनुवत्सरम्	३.	एक-एक वर्ष में	देवम्	११.	भगवान्
गृह एव	८.	घर में ही	उपतस्थे ॥	१४.	सेवा में उपस्थित हो गई

श्लोकार्थ—पूर्व चित्ति नाम की उस अप्सरा ने एक-एक वर्ष में नौ पुत्रों को उत्पन्न करके तदनन्तर घर में ही छोड़कर फिर से भगवान् ब्रह्मा जी की सेवा में उपस्थित हो गई ॥

एकविंशः श्लोकः

आग्नीध्रसुतास्ते मातुरनुग्रहादौत्पत्तिकेनैव संहननबलोपेताः पित्रा विभक्ता आत्मतुल्यनामानि यथाभागं जम्बूद्वीपवर्षाणि बुभुजुः ॥२१॥

पदच्छेद—आग्नीध्र सुताः ते मातुः अनुग्रहात् औत्पत्तिकेन एव संहनन बल उपेताः ।
पित्रा विभक्ताः आत्मतुल्य नामानि यथा भागम् जम्बूद्वीप वर्षाणि बुभुजे ॥

शब्दार्थ—

आग्नीध्र	७.	राजा आग्नीध्र के	पित्रा	१२.	पिता के द्वारा
सुताः	९.	पुत्रों ने	विभक्ताः	१३.	बाँट कर दिये गये
ते	८.	उन	आत्मतुल्य	१४	अपने समान
मातुः	१.	माता पूर्व चित्ति की	नामानि	१५.	नाम वाले
अनुग्रहात्	२.	कृपा से	यथा	१०.	अपने
औत्पत्तिकेन	३.	जन्म से	भागम्	११.	भाग के अनुसार
एव	४.	ही	जम्बूद्वीप	१६.	जम्बूद्वीप
संहनन्	५.	पुष्ट अंग और	वर्षाणि	१७.	भूखण्डों का
बलउपेताः।	६.	पराक्रम से युक्त	बुभुजे ॥	१८.	शासन किया

श्लोकार्थ—माता पूर्वचित्ति की कृपा से जन्म से ही पुष्ट अंग और पराक्रम से युक्त राजा आग्नीध्र के उन पुत्रों ने अपने भाग के अनुसार पिता के द्वारा बाँट कर दिये गये अपने समान नाम वाले जम्बूद्वीप के भूखण्डों का शासन किया ॥

द्वाविंशः श्लोकः

आग्नीध्रो राजातृप्तः कामानामप्सरसमेवानुदिनमधिमन्यमानस्तस्याः सलोकतां श्रुतिभिरवारुन्ध यत्र पितरो मादयन्ते ॥२२॥

पदच्छेद—आग्नीध्रः राजा अतृप्तः कामानाम् अप्सरसम् एव अनुदिनम् अधिमन्यमानः तस्याः सलोकताम् श्रुतिभिः अवारुन्ध यत्र पितरो मादयन्ते ॥

शब्दार्थ—

आग्नीध्रः	४.	आग्नीध्र	तस्याः	९.	उस अप्सरा के
राजा	३.	राजा	सलोकताम्	१०.	लोक को
अतृप्तः	२.	तृप्त न होकर	श्रुतिभिः	८	शास्त्रों से वर्णित
कामानाम्	१.	भोगों से	अवारुन्ध	११.	प्राप्त किया
अप्सरसम् एव	६.	अप्सरा का ही	यत्र	१२.	जहाँ पर
अनुदिनम्	५.	प्रतिदिन	पितरो	१३.	पितर गण
अधिमन्यमानः	७.	चिन्तन करता हुआ	मादयन्ते ॥	१४.	प्रसन्न रहते हैं

श्लोकार्थ—भोगों से तृप्त न होकर राजा आग्नीध्र प्रतिदिन अप्सरा का ही चिन्तन करता हुआ शास्त्रों से वर्णित उस अप्सरा के लोक को प्राप्त किया, जहाँ पर पितरगण प्रसन्न रहते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोक

सम्परेते पितरि नव भ्रातरो मेरुदुहितॄर्मेरुदेवीं प्रतिरूपामुग्रदंष्ट्रीं लतां रम्यां श्यामां नारीं भद्रां देववीतिमिति संज्ञा नवोदवहन् ॥२३॥

पदच्छेद—

सम्परेते पितरि नव भ्रातरः मेरु दुहितॄः मेरुदेवीम् प्रतिरूपाम् उग्रदंष्ट्रीम् लताम् रम्याम् श्यामाम् नारीम् भद्राम् देववीतिम् इति संज्ञा नव उदवहन् ॥

शब्दार्थ—

सम्परेते	२.	मृत्यु को प्राप्त हो जाने पर	लताम्	८.	लता
पितरि	१.	पिता आग्नीध्र के	रम्याम्	९.	रम्या
नव	३.	नौ	श्यामाम्	१०.	श्यामा
भ्रातरः	४.	भाइयों ने	नारीम् भद्रा	११.	नारी भद्रा और
मेरु	१५.	राजा मेरु की	देववीतिम्	१२.	देववीति
दुहितॄः	१७.	पुत्रियों से	इति	१३.	इन
मेरुदेवीम्	५.	मेरु देवी	संज्ञा	१४.	नामों वाली
प्रतिरूपाम्	६.	प्रतिरूपा	नव	१६.	नव
उग्रदंष्ट्रीम्	७.	उग्रदंष्ट्री	उदवहन् ॥	१८.	विवाह किया

श्लोकार्थ—पिता आग्नीध्र के मृत्यु को प्राप्त हो जाने पर नौ भाइयों ने मेरुदेवी, प्रतिरूपा, उग्रदंष्ट्री, लता, रम्या, श्यामा, नारी, भद्रा और देववीति इन नामों वाली राजा मेरु की नव कन्यायों से विवाह किया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे आग्नीध्र-वर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पञ्चमः स्कन्धः

तृतीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

—नाभिरपत्यकामोऽप्रजया मेरुदेव्या
भगवन्तं यज्ञपुरुषमवहितात्मायजत ॥१॥

पदच्छेद—

नाभिः अपत्यकामः अप्रजया मेरुदेव्या ।
भगवन्तम् यज्ञपुरुषम् अवहित आत्मा अयजत ॥

शब्दार्थ—

नाभिः	२. राजा नाभि ने	भगवन्तम्	६. भगवान्
अपत्य	३. पुत्र की	यज्ञपुरुषम्	७. यज्ञपुरुष का
कामः	४. कामना से	अवहित	८. सावधान
अप्रजया	१. सन्तान न होने के कारण	आत्मा	९. मन से
मरुदेव्या ।	५. मेरु देवी के साथ	अयजत ॥	१०. यज्ञ किया

श्लोकार्थ—सन्तान न होने के कारण राजा नाभि ने पुत्र की कामना से मेरु देवी के साथ भगवान् यज्ञ पुरुष का सावधान मन से यज्ञ किया ॥

द्वितीयः श्लोकः

तस्य ह वाव श्रद्धया विशुद्धभावेन यजतः प्रवर्ग्येषु प्रचरत्सु द्रव्यदेशकालमन्त्रर्त्विग्दक्षिणाविधानयोगोपपत्त्या दुरधिगमोऽपि भगवान् भागवतवात्सल्यतया सुप्रतीक आत्मानमपराजितं निजजनाभिप्रेतार्थविधित्सया गृहीतहृदयो हृदयङ्गमं मनोनयनानन्दनावयवाभिराममाविश्चकार ॥२॥

पदच्छेद—तस्य ह वाव श्रद्धया विशुद्ध भावेन यजतः प्रवर्ग्येषु प्रचरत्सु द्रव्य देश काल मन्त्र ऋत्विग् दक्षिणा विधान योग उपपत्त्या दुरधिगमः अपि भगवान् भागवत वात्सल्यतया सुप्रतीकः आत्मानम् अपराजितम् निजजन अभिप्रेत अर्थ विधित्सया गृहीत हृदयः हृदयङ्गमम् मनोनयन आनन्दन अवयव अभिरामम् अविश्चकार ॥

शब्दार्थ—

तस्य	३.	वे राजा नाभि	अपि	८.	यद्यपि
ह	२.	कि	भगवान्	९.	भगवान् श्री हरि का
वाव	१.	प्रसिद्ध है	भागवत	२१.	भक्तों पर
श्रद्धया	४.	श्रद्धा (और)	वात्सल्यतया	२३.	स्नेह होने के कारण
विशुद्ध	५.	विशुद्ध	सुप्रतीकः	३०.	सुन्दर रूप वाले श्री हरि ने
भावेन	६.	मन से	आत्मानम्	२४.	अपने
यजत	७.	यज्ञ कर रहे थे	अपराजितम्	३१.	स्वतंत्र
प्रवर्ग्येषु	१०.	उसमें प्रवर्ग्य नामक कर्म का	निजजन	२५.	भक्तों के
प्रचरत्सु	११.	अनुष्ठान हो रहा था	अभिप्रेत अर्थ	२६.	मनोरथों को
द्रव्य	१२.	सामग्री	विधित्सया	२७.	पूर्ण करने की इच्छा से
देश	१३.	स्थान	गृहीत	२९.	खिच जाता है
काल	१४.	मुहूर्त	हृदयः	२८.	उनका हृदय (अतः)
मन्त्र	१५.	मन्त्र	हृदयङ्गमम्	३२.	सुखकारी (तथा)
ऋत्विग्	१६.	यज्ञकर्ता	मनो	३३.	मन (और)
दक्षिणा	१२.	दक्षिणा	नयन	३४.	नेत्रों को
विधान	१८.	पद्धति के	आनन्दन	३५.	आनन्द देने वाले
योग	१९.	योग की	अवयव	३६.	अङ्गों से
उपपत्त्या	२०.	सिद्धि होने पर भी	अरिामम्	३७.	मनोहर रूप को वहाँ
दुरधिगमः	२१.	दुर्लभ है (फिर भी)	आविश्चकार ॥	३८.	प्रकट किया

श्लोकार्थ—प्रसिद्ध है कि वे राजा नाभि विशुद्ध मन से यज्ञ कर रहे थे। यद्यपि भगवान् श्री हरि का उसमें प्रवर्ग्य नामक कर्म का अनुष्ठान हो रहा था। जो सामग्री, स्थान, मुहूर्त, मन्त्र, यज्ञकर्ता, दक्षिणा पद्धति के योग की सिद्धि होने पर भी दुर्लभ है। फिर भी भक्तों पर स्नेह होने के कारण अपने भक्तों के मनोरथों को पूर्ण करने की इच्छा से उनका हृदय खिच जाता है। अतः सुन्दर रूप वाले श्री हरि ने स्वतंत्र, सुखकारी तथा मन और नेत्रों को आनन्द देने वाले अङ्गों से मनोहर रूप को वहाँ प्रकट किया ॥

तृतीयः श्लोकः

अथ ह तमाविष्कृतभुजयुगलद्वयं हिरण्मयं पुरुषविशेषं कपिशकौशेयाम्बरधरमुरसि विलसच्छ्रीवत्सललामं दरवरवनरुहवनमालाच्छूर्यमृतमणिगदादिभिरुपलक्षितं स्फुटकिरणप्रवरमुकुटकुण्डलकटककटिसूत्रहारकेयूरनूपुराद्यङ्गभूषणविभूषितमृत्विक्सदस्यगृहपतयोऽधना इवोत्तमधनमुपलभ्य सबहुमानमर्हणेनावनतशीर्षाण उपतस्थुः ॥३॥

पदच्छेद—अथ ह तम् आविष्कृत भुज युगल द्वयम् हिरण्मयम् पुरुषविशेषम् कपिश कौशेय अम्बर धरम् उरसि विलसत् श्रीवत्स ललामम् दरवरवनरुह वनमाला अच्छूरि अमृतमणिगदा आदिभिः उपलक्षितम् स्फुट किरण प्रवर मुकुट कुण्डल कटक कटिसूत्र हार केयूर नूपुर आदि अङ्ग भूषण विभूषितम् ऋत्विक् सदस्य गृहपतयः अधना इव उत्तमधनम् उपलभ्य सबहुमानम् अर्हणेन अवनत शीर्षाणः उपतस्थुः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. उस समय	स्फुटकिरण	२०. चमकती किरणों वाली
ह	२. प्रसिद्ध है कि	प्रवर	२१. मणियों से निर्मित
तम्	३५. उन यज्ञ भगवान् का	मुकुट	२२. मुकुट
आविष्कृत	७. दिखलाई दे रही थीं	कुण्डल	२३. कुण्डल
भुज	६. भुजायें	कटककटिसूत्र	२४. कङ्कण करधनी
युगल द्वयम्	५. चार (दो जोडे)	हारकेयूर	२५. मणियों का हार बाजूबन्द
हिरणमयम्	४. तेजोमय रूप में	नूपुर आदि	२६. पायजेब इत्यादि
पुरुष विशेषम्	३. भगवान् पुरुषोत्तम के	अङ्ग भूषण	२७. आभूषणों से
कपिश	८. (वे) पीले वर्ण का	विभूषितम्	२८. वे सुन्दर लग रहे थे
कौशेय	९. रेशमी	ऋत्विक् सदस्य	३३. यज्ञकर्ता होता
अम्बरधरम्	१०. वस्त्र धारण किये थे (उनके)	गृह पतयः	३४. यजमान
उरसि	११. वक्षः स्थल पर	अधना	३०. निर्धन
विलसत्	१४. सुशोभित हो रहा था (तथा)	इव	२९. जैसे
श्रीवत्स	१२. श्रीवत्स का	उत्तम धनम्	३१. बहुमूल्य सम्पत्ति
ललामम्	१३. चिह्न	उपलभ्य	३२. पाकर (प्रसन्न होता है) वैसे ही
दरवरवनरुह	१५. श्रेष्ठ शंख कमल	सबहुमानम्	३६. बड़े आदर के साथ
वनमाला	१६. वनमाला	अर्हणेन	३९. अर्घ्य इत्यादि से
अच्छूरि अमृतमणि	१७. चक्र कौस्तुभमणि (और)	अवनत	३८ झुका कर
गदा आदिभिः	१८. गदा इत्यादि आयुध	शीर्षाणः	३७. मस्तक
अलक्षितम्	१९. दिखाई पड़ रहे थे	उपतस्थुः ॥	४०. पूजन किया

श्लोकार्थ—उस समय प्रसिद्ध है कि भगवान् पुरुषोत्तम के तेजोमय रूप में चार भुजायें दो जोड़े दिखलाई दे रही थीं। वे पीले वर्ण का रेशमी वस्त्र धारण किये थे। उनके वक्षः स्थल पर श्रीवत्स का चिह्न सुशोभित हो रहा था। तथा श्रेष्ठ शंख, कमल, वनमाला, चक्र, कौस्तुभमणि और गदा इत्यादि आयुध दिखाई पड़ रहे थे। चमकती किरणों वाली मणियों से निर्मित मुकुट, कुण्डल, कङ्कण, करधनी, मणियों का हार, बाजूबन्द, पायजेब इत्यादि आभूषणों से वे सुन्दर लग रहे थे। जैसे निर्धन बहुमूल्य सम्पत्ति पाकर प्रसन्न होता है वैसे ही यज्ञकर्ता, होता, यजमान ने उन यज्ञ भगवान् का बड़े आदर के साथ मस्तक झुकाकर अर्घ्य इत्यादि से पूजन किया ॥

चतुर्थः श्लोकः

ऋत्विज ऊचुः—अर्हसि मुहुरर्हत्तमार्हणमस्माकमनुपथानां नमो नम इत्येतावत्सदुपशिक्षितं कोऽर्हति पुमान् प्रकृतिगुणव्यतिकरमतिरनीश ईश्वरस्य परस्य प्रकृतिपुरुषयोरर्वाक्तनाभिर्नामरूपाकृतिभी रूपनिरूपणम् ॥४॥

पदच्छेद—अर्हसि मुहुः अर्हत्तम अर्हणम् अस्माकम् अनुपथानाम् नमो नमः इति एतावत् सद उपशिक्षितम् कः अर्हति पुमान् प्रकृति गुण व्यतिकर मतिः अनीशः ईश्वरस्य परस्य प्रकृति पुरुषयोः अर्वाक्तनाभिः नामरूप आकृतिभिः रूप निरूपणम् ॥

शब्दार्थ—

अर्हसि	५.	स्वीकार करें (क्योंकि)	गुण	१२.	सत्त्वादि गुणों के
मुहुः	४.	बार-बार	व्यतिकर	१३.	प्रपञ्च में
अर्हणम्	१.	हे पूज्यतम आप	मतिः	१४.	बुद्धि रखने वाला
अर्हत्तम	३.	पूजन को	अनीशः	१५.	असमर्थ
अस्माकम्	२.	हमारे	ईश्वरस्य	२४.	सर्वसमर्थ आपके
अनुपथानाम्	६.	हम सेवकों को	परस्य	२३.	परे
नमो नमः	८.	नमो नमः	प्रकृति	२१.	प्रकृति और
इति एतावत्	९.	यही शब्द केवल	पुरुषयोः	२२.	पुरुष से
सद्	७.	महापुरुषों ने	अर्वाक्तनाभिः	१८.	संसार के
उपशिक्षितम्	१०.	सिखाया है (अतः)	नामरूप	१९.	नाम रूप और
कः	१६.	कौन	आकृतिभिः	२०.	आकारों से
अर्हति	२७.	कर सकता है	रूप	२५.	स्वरूप का
पुमान्	१७.	पुरुष	निरूपणम्	२६.	वर्णन
प्रकृतिः ॥	११.	प्रकृति के			

श्लोकार्थ—हे पूज्यतम ! आप हमारे पूजन को बार-बार स्वीकार करें। क्योंकि हम सेवकों को महापुरुषों ने नमो नमः यही शब्द केवल सिखाया है। अतः प्रकृति के सत्त्वादि गुणों के प्रपञ्च में बुद्धि रखने वाला असमर्थ कौन पुरुष संसार के नामरूप और आकारों से प्रकृति और पुरुष से परे सर्वसमर्थ आपके स्वरूप का वर्णन कर सकता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

सकलजननिकायवृजिननिरसनशिवतमप्रवरगुणगणैकदेशकथनादृते ॥५॥

पदच्छेद—

सकल जन निकाय वृजिन निरसन शिवतम
प्रवर गुण गण एकदेश कथनात् ऋते ॥

शब्दार्थ—

सकलजन	२.	सम्पूर्ण प्राणियों के	प्रवर	७.	उत्तम
निकाय	३.	समूह के	गुण गण	८.	गुणों के समूह के
वृजिन	४	अपराध को	एक देश	९.	एक भाग का
निरसन	५.	दूर करने वाले	कथनात्	१०.	कथन कर सकता है
शिवतम	६.	अत्यन्त कल्याण कर	ऋते ॥	१.	यह मनुष्य केवल

श्लोकार्थ—यह मनुष्य केवल सम्पूर्ण प्राणियों के समूह के अपराध को दूर करने वाले अत्यन्त कल्याण कर उत्तम गुणों के समूह के एक भाग का कथन कर सकता है ॥

षष्ठः श्लोकः

परिजनानुरागविरचितशबलसंशब्दसलिलसितकिसलयतुलसिकादूर्वाङ्कुरैरपि सम्भृतया सपर्यया किल परम परितुष्यसि ॥६॥

पदच्छेद—

परिजन अनुराग विरचित शबल संशब्द सलिल सित किसलय-
तुलसिका दूर्वा अङ्कुरैः अपि सम्भृतया सपर्यया किल परम परितुष्यसि ॥

शब्दार्थ—

परिजन	२.	भक्तों के द्वारा	तुलसिका	१०.	तुलसी (और)
अनुराग	३.	भक्ति से	दूर्वाङ्कुरैः	११.	दूब के अंङ्कुर से
विरचित	४.	की जाती हुई	अपि	१२.	भी
शबल	५.	करुणा पूर्ण	सम्भृतया	१३.	सम्पादित
संशब्द	६.	स्तुति	सपर्यया	१४.	पूजा के
सलिल	७.	जल	किल	१५.	अवश्य
सित	८.	शुद्ध	परम	१.	हे पुरुषोत्तम आप
किसलय	९.	पल्लव	परितुष्यसि ॥	१६.	प्रसन्न होते हैं

श्लोकार्थ—हे पुरुषोत्तम ! आप भक्तों के द्वारा भक्ति से की जाती हुई करुणापूर्ण स्तुति, जल, शुद्ध पल्लव, तुलसी और दूब के अंङ्कुर से भी सम्पादित पूजा से अवश्य प्रसन्न होते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

अथानयापि न भवत इज्ययोरुभारभरया समुचितमर्थमिहोपलभामहे ॥७॥

पदच्छेद— अथ अनया अपि न भवतः इज्यया उरुभार भरया
समुचितम् अर्थम् इह उपलभामहे ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. हे भगवान् फिर भी	उरुभार	३.	अनेक प्रकार की सामग्रियों से
अनया	५. इस	भरया	४.	परिपूर्ण
अपि	७. भी	समुचितम्	९.	विशेष
न	११. नहीं	अर्थम्	१०.	प्रयोजन
भवतः	८. आपका कोई	इह	२.	यहाँ
इज्यया	६. यज्ञ पूजन से	उपलभामहे ॥	१२.	देखते हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! फिर भी यहाँ अनेक प्रकार की सामग्रियों से परिपूर्ण इस यज्ञ पूजन से भी आपका कोई विशेष प्रयोजन नहीं देखते हैं ।

अष्टमः श्लोकः

आत्मन एवानुसवनमञ्जसाव्यतिरेकेण बोभूयमानाशेषपुरुषार्थस्वरूपस्य किन्तु नाथाशिष आशासानानामेतदभिसंराधनमात्रं भवितुमर्हति ॥८॥

पदच्छेद—आत्मनः एव अनुसवनम् अञ्जसा अव्यतिरेकेण बोभूयमान अशेष पुरुषार्थ स्वरूपस्य किन्तु नाथ आशिषः आशासानानाम् एतद् अभिसंराधन मात्रम् भवितुम् अर्हति ।

शब्दार्थ—

आत्मनः	६. स्वतः	किन्तु	११. फिर भी
एव	७. ही	नाथ	१. हे स्वामी यद्यपि आप
अनुसवनम्	८. सर्वदा	आशिषः	१२. कामनाओं की
अञ्जसा	९. साक्षात्	आशासानानाम्	१३. इच्छा रखने वाले हम लोगों लिये
अव्यतिरेकेण	२. निरन्तर	एतद्	१४. यह
बोभूयमान	३. अत्यधिकरूप में उत्पन्न होने वाले	अभिसंराधन	१५. आराधना ही
अशेष	४. सम्पूर्ण	मात्रम्	१६. केवल
पुरुषार्थ	५. पुरुषार्थों के	भवितुम्	१७. कल्याणकारी साधन
स्वरूपस्य	१०. स्वरूप हैं	अर्हति ॥	१८. हो सकता है

श्लोकार्थ—हे स्वामी ! यद्यपि आप निरन्तर अत्यधिक रूप में उत्पन्न होने वाले सम्पूर्ण पुरुषार्थों के स्वतः ही सर्वदा साक्षात् स्वरूप हैं । फिर भी कामनाओं की इच्छा रखने वाले हम लोगों के लिये यह आराधना ही केवल कल्याणकारी साधन हो सकता है ॥

नवमः श्लोकः

तथ्यथा बालिशानां स्वयमात्मनः श्रेयः परमविदुषां परमपरमपुरुष प्रकर्षकरुणया स्वमहिमानं चापवर्गाख्यमुपकल्पयिष्यन् स्वयं नापचित एवेतरवदिहोपलक्षितः ॥९॥

पदच्छेद—तद् यथा बालिशानाम् स्वयम् आत्मनः श्रेयः परम विदुषाम् परम परम पुरुष प्रकर्ष करुणया स्वमहिमानम् च अपवर्ग आख्यम् उपकल्पयिष्यन् स्वयम् न अप चित एव इतरवत् इह उपलक्षितः ॥

शब्दार्थ—

तद्	८.	उसी प्रकार	च अपवर्ग	११.	और मोक्ष
यथा	३.	जैसे	आख्यम्	१२.	नाम की (परम वस्तु को)
बालिशानाम्	६.	मूढ बुद्धि लोगों को	उपकल्पयिष्यन्	१३.	देते हुये
स्वयम्	५.	अपने आप	स्वयम्	१४.	अपने आप
आत्मनः श्रेयः	७.	आत्मा का परम कल्याण बताते हैं	न अपचितः	१६.	अपूजित
परम विदुषाम्	४.	महान् ज्ञानी पुरुष	एव	१८.	ही
परम	२.	हे पुरुषोत्तम	इतरवत्	१७.	दूसरे लोगों की तरह
परम पुरुष	१.	हे परात्पर	इह	१५.	यहाँ यज्ञ में
प्रकर्ष करुणया	९.	अपार करुणा से	उपलक्षितः ॥	२०.	प्रकट हुये हैं
स्व महिमानम्	१०.	अपनी महिमा को			

श्लोकार्थ—हे परात्पर ! हे पुरुषोत्तम ! जैस महान् ज्ञानी पुरुष अपने आप मूढ बुद्धि लोगों को आत्मा का परम कल्याण बताते हैं। उसी प्रकार अपार करुणा से अपनी महिमा को और मोक्ष नाम को परम वस्तु को देते हुये अपने आप यहाँ यज्ञ में अपूजित दूसरे लोगों की तरह ही प्रकट हुये हैं ॥

दशमः श्लोकः

अथायमेव वरो ह्यर्हत्तम यर्हि बर्हिषि राजर्षेर्वरदर्षभो भवान्निजपुरुषेक्षणविषय आसीत् ॥१०॥

पदच्छेद—अथ अयम् एव वरः हि अर्हत्तम यर्हि बर्हिषि राजर्षेः वरदऋषभः भवान् निज पुरुष ईक्षण विषय आसीत् ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तथापि	राजर्षेः	५.	राजर्षि नाभि के
अयम्	१२.	यह	वरदऋषभ	४.	वर देने वालों में प्रधान हैं
एव	१३.	ही सब से बड़ा	भवान्	८.	आप
वरःहि	१४.	वरदान है	निजपुरुष	७.	अपने भक्तों को
अर्हत्तम	२.	हे पूज्यतम	ईक्षण	९.	दर्शन
यर्हि	३.	आप	विषय	१०.	दे रहे
बर्हिषि	६.	यज्ञ में	आसीत् ॥	११.	हैं

श्लोकार्थ—तथापि हे पूज्यतम ! आप वर देने वालों में प्रधान हैं। राजर्षि नाभि के यज्ञ में अपने भक्तों को आप दर्शन दे रहे हैं। यह ही सबसे बड़ा वरदान है ॥

एकादशः श्लोकः

असङ्गनिशितज्ञानानलविधूताशेषमलानां भवत्स्वभावानामात्मारामाणां मुनीनामनवरतपरिगुणितगुणगण परममङ्गलायनगुणगणकथनोऽसि ॥११॥

पदच्छेद—असङ्ग निशित ज्ञान अनल विधूत अशेष मलानाम् भवत् स्वभावानाम् आत्मारामाणाम् मुनीनाम् अनवरत परिगुणित गुण गण परम मङ्गलायन गुण गण कथनः असि ॥

शब्दार्थ—

असङ्ग	१. हे भगवन् वैराग्य के कारण	आत्मारामाणाम्	१०. आत्मा में रमण करने वाले
निशित	२. तेज	मुनीनाम्	११. मुनिजन भी
ज्ञान	३. ज्ञानरूपी	अनवरत	१२. निरन्तर
अनल	४ अग्नि से (जिनके)	परिगुणित	१४. वर्णन करते हैं (क्योंकि)
विधूत	७. जल गये हैं (अतः)	गुण-गण	१३. गुणों के समूह का
अशेषम्	५. सारे	परम मङ्गलायन	१७ परम कल्याण का मार्ग
मलानाम्	६. दोष	गुण-गण	१५. आपके गुणों के समूह का
भवत्	८. आपके समान	कथनः	१६. वर्णन ही
स्वभावानाम्	९. स्वभाव वाले (और)	असि ॥	१८. हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! वैराग्य के कारण तेज ज्ञानरूपी अग्नि से जिनके सारे दोष जल गये हैं। अतः आपके समान स्वभाव वाले और आत्मा में रमण करने वाले मुनिजन भी निरन्तर गुणों के समूह का वर्णन करते हैं। क्योंकि आपके गुणों के समूह का वर्णन ही परम कल्याण का साधन है ॥

द्वादशः श्लोकः

अथ कथञ्चित्स्खलनक्षुत्पतनजृम्भणदुरवस्थानादिषु विवशानां नः स्मरणाय ज्वरमरणदशायामपि सकलकश्मलनिरसनानि तव गुणकृतनामधेयानि वचनगोचराणि भवन्तु ॥१२॥

पदच्छेद—अथ कथञ्चित् स्खलन क्षुत् पतनजृम्भणदुरवस्थान आदिषु विवशानाम् नः स्मरणाय ज्वर मरणदशायामपि सकलकश्मल निरसनानि तव गुण कृत नाम धेयानि वचन गोचराणि भवन्तु ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. तथापि हे भगवन्	ज्वर मरण	८. ज्वर मृत्यु की
कथञ्चित्	१०. किसी तरह	दशायाम् अपि	९. स्थिति में भी
स्खलन क्षुत्	४. गिरने में भूख प्यास में	सकल कश्मल	११. सारे पाप दोषों को
पतन जृम्भण	५. ठोकर खाने में जम्भाई में	निरसनानि तव	१२. दूर करने वाले आपके
दुरव स्थान्	६. बुरे समय	गुणकृत	१३. उदारता आदि गुण लीला
आदिषु	७. इत्यादि में भी (तथा)	नामधेयानि	१४. नाम ही
विवशानाम् नः	३. असमर्थ हम लोगों को	वचनगोचराणि	१५. हमारी वाणी से उच्चरित
स्मरणाय	२. आपका स्मरण करने में	भवन्तु ॥	१६. होते रहें

श्लोकार्थ—तथापि हे भगवन् ! आपका स्मरण करने में असमर्थ हम लोगों को गिरने में, भूख प्यास में, ठोकर खाने में, जम्भाई में, बुरे समय इत्यादि में भी तथा ज्वर, मृत्यु की स्थिति में भी किसी तरह सारे पाप दोषों को दूर करने वाले आपके उदारता आदि गुण, लीला और नाम ही हमारी वाणी से उच्चरित होते रहें ॥

त्रयोदशः श्लोकः

किञ्चायं राजर्षिरपत्यकामः प्रजां भवादृशीमाशासान ईश्वरमाशिषां स्वर्गापवर्गयोरपि भवन्तमुपधावति प्रजायामर्थप्रत्ययो धनदमिवाधनः फलीकरणम् ॥१३॥

पदच्छेद—किञ्च अयम् राजर्षिः अपत्यकामः प्रजाम् भवादृशीम् आशासानः ईश्वरम् आशिषाम् स्वर्ग अपवर्गयोः अपि भवन्तम् उपधावति प्रजायाम् अर्थ प्रत्ययः धनदम् इव अधनः फलीकरणम् ॥

शब्दार्थ—

किञ्च	१. हमारी बात है	स्वर्ग अपवर्गयोः	९. स्वर्ग और मोक्ष को
अयम्	२. कि यह	अपि	१०. भी
राजर्षिः	३. राजर्षि नाभि	भवन्तम्	१२. आपके
अपत्यकामः	४. सन्तान की कामना से	उपधावति	१३. पास आये हैं
प्रजाम्	६. पुत्र	प्रजायाम्	१७. इन्होंने पुत्र को ही
भवादृशीम्	५. आपके समान	अर्थ प्रत्ययः	१८. परम पुरुषार्थ मान रक्खा है
आशासानः	७. चाहते हैं (अतः)	धनदम्	१६. धनी पुरुष के पास जाता है
ईश्वरम्	११. देने में समर्थ	इव अधनः	१४. जैसे निर्धन
आशिषाम्	८ कामनाओं	फलीकरणम् ॥	१५. चावल की कनी के लिये

श्लोकार्थ—हमारी बात है कि राजर्षिनाभि सन्तान की कामना से आपके समान पुत्र चाहते हैं। अतः कामनाओं, स्वर्ग और मोक्ष को भी देने में समर्थ आपके पास आये हैं जैसे निर्धन चावल की कनी के लिये धनी पुरुष के पास जाता है। इन्होंने पुत्र को ही परम पुरुषार्थ मान रक्खा है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

को वा इह तेऽपराजितोऽपराजितया माययानवसितपदव्यानावृतमतिर्विषयविषरयानावृतप्रकृतिरनुपासितमहच्चरणः ॥१४॥

पदच्छेद—कः वा इह ते अपराजितः अपराजितया मायया अनवसित पदव्या अनावृत मतिः विषय विषरय अनावृत प्रकृतिः अनुपासित महत् चरणः ॥

शब्दार्थ—

कः	४. कौन पुरुष	अनावृत	१२. आसक्त नहीं है उसका
वा इह	१. अथवा इस संसार में (जिसने)	मतिः	११. बुद्धि
ते	५. आपकी	विषय	१४. शब्दादि विषयरूपी
अपराजितः	१०. वश में नहीं हुआ है (उसकी)	विष रय	१५. विष के प्रभाव से
अपराजितया	८. अजेय	अनावृत	१६. रहित है
मायया	९. माया के	प्रकृतिः	१३. स्वभाव
अनवसित	६. अलक्षित	अनुपासित	३. उपासना नहीं की है (ऐसा)
पदव्या	७ स्वरूप वाली	महत् चरणः ॥	२. महापुरुषों के चरणों की

श्लोकार्थ—अथवा इस संसार में जिसने महापुरुषों के चरणों की उपासना नहीं की है, ऐसा कौन पुरुष आपकी अलक्षित स्वरूप वाली अजेय माया के वश में नहीं हुआ है ? उसकी बुद्धि आसक्त नहीं है ? उसका स्वभाव शब्दादि विषयरूपी विष के प्रभाव से रहित है ? ॥

पञ्चदशः श्लोकः

यदु ह वाव तव पुनरदभ्रकर्तरिह समाहूतस्तत्रार्थधियां मन्दानां नस्तद्यद्देवहेलनं देवदेवार्हसि साम्येन सर्वान् प्रतिवोढुमविदुषाम् ॥१५॥

पदच्छेद—यद् उ ह वाव तव पुनः अदभ्रकर्तः इह समाहूतः तत्र अर्थधियाम् मन्दानाम् नः तद यद् देवहेलनम् देवदेव अर्हसि साम्येन सर्वान् प्रतिवोढुम् अविदुषाम् ॥

शब्दार्थ—

यद्	५. जो	नः	१०.	हम लोगों ने
उ ह वाव	६. वह अवश्य ही	तद्	१२.	उसे
तव	३. आपको	यद् देवहेलनम्	११.	जो आपका अपमान किया है
पुनः	२. फिर से	देवे वेव	१३.	हे देवाधिदेव
अदभ्रकर्तः	१. बहुत कार्य करने वाले (हे भगवन्)	अर्हसि	१८.	समर्थ हैं
इह समाहूतः	४. इस यज्ञ में बुलाया है	साम्येन	१५.	समता के कारण
तत्र	७. उस पुत्र कामना में	सर्वान्	१४.	सब के प्रति
अर्थ धियाम्	८. बुद्धि रखने वाले	प्रतिवोढुम्	१७.	सहने में आप
मन्दानाम्	९. मूढ	अविदुषाम् ॥	१६.	अज्ञानियों के अपराध

श्लोकार्थ—बहुत कार्य करने वाले हे भगवन् ! फिर भी आपको इस यज्ञ में बुलाया है। जो वह अवश्य ही उस पुत्र कामना में बुद्धि रखने वाले मूढ हम लोगों ने जो आपका अपमान किया है, उसे हे देवाधिदेव ! सब के प्रति समता के कारण अज्ञानियों के अपराध सहने में आप समर्थ हैं ॥

षोडशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इति निगदेनाभिष्टूयमानो भगवाननिमिषर्षभो वर्षधराभिवादिताभिवन्दितचरणः सदयमिदमाह ॥१६॥

पदच्छेद—इति निगदेन अभिष्टूयमानः भगवान् अनिमिष ऋषभः वर्षधर अभिवादित अभिवन्दित चरणः सदयम् इदम् आह ॥

शब्दार्थ—

इति	९. इस प्रकार	धर	२.	स्वामी राजा नाभि से
निगदेन	१०. स्तोत्र से	अभिवादित	३.	पूज्य ऋत्विजों के द्वारा
अभिष्टूयमानः	११. स्तुति करने पर (उन्होंने)	अभिवन्दित	७.	पूजित
भगवान्	६. भगवान् श्री हरि के	चरणः	८.	चरणों को
अनिमिष	४. देवताओं में	सदयम्	१२.	कृपा पूर्वक
ऋषभः	५. श्रेष्ठ	इदम्	१३.	यह
वर्ष	१. भारत वर्ष के	आह ॥	१४.	कहा

श्लोकार्थ—भारत वर्ष के स्वामी राजा नाभि से पूज्य ऋत्विजों के द्वारा देवताओं में श्रेष्ठ भगवान् श्री हरि के पूजित चरणों को इस प्रकार स्तोत्र से स्तुति करने पर उन्होंने कृपा पूर्वक यह कहा ॥

सप्तदशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—अहो बताहमृषयो भवद्भिरवितथगीर्भिर्वरमसुलभमभियाचितो यदमुष्यात्मजो मया सदृशो भूयादिति ममाहमेवाभिरूपः कैवल्यादथापि ब्रह्मवादो न मृषा भवितुमर्हति ममैव हि मुखं यद् द्विजदेवकुलम् ॥१७॥

पदच्छेद—

अहो बत अहम् ऋषयः भवद्भिः अवितथ गीर्भिः वरम् असुलभम् अभियाचितः यद् अमुष्य आत्मजः मया सदृशः भूयादिति मम अहम् एव अभिरूपः कैवल्याद् अथापि ब्रह्मवादः न मृषा भवितुम् अर्हसि मम एव हि मुखम् यद् द्विज देव कुलम् ॥

शब्दार्थ—

अहो	६.	आश्चर्य है	एव	१६.	ही हूँ
बत	५.	बड़ा	अभिरूपः	१६.	समान
अहम्	८.	मुझसे	कैवल्याद्	१७.	अद्वितीय होने से
ऋषयः	१.	हे ऋषियों	अथापि	२०.	फिर भी
भवद्भिः	२.	आप लोगों का	ब्रह्मवादः	२१.	ब्राह्मणों का वचन
वितथ	४.	सत्य होता है (यह)	न	२३.	नहीं
गीर्भिः	३.	वचन	मृषा	२४.	झूठा
वरम्	१०.	वरदान	भवितुम्	२४.	हो सकता
असुलभम्	६.	अत्यन्त दुर्लभ	अर्हसि	१५.	है
अभियाचित	११.	माँगा है कि	मम	३०.	मेरा
यद्	७.	कि (आप लोगों ने)	एव	३१.	ही
अमुष्यआत्मजः	१२.	राजा नाभि का पुत्र	हि	२६.	क्योंकि
मया सदृशः	१३.	मेरे समान	मुखम्	३२.	मुख है
भूयादिति	१४.	होवे किन्तु	यद्	२७.	जो
मम	१५.	मेरे	द्विजदेव	२८.	ब्राह्मणों का
अहम्	१८.	मैं	कुलम् ॥	२६.	कुल है (वह)

श्लोकार्थ—हे ऋषियों ! आप लोगों का वचन सत्य होता है। यह बड़ा आश्चर्य है, आप लोगों ने मुझसे अत्यन्त दुर्लभ वरदान माँगा है। कि राजा नाभि का पुत्र मेरे समान होवे। किन्तु मेरे समान अद्वितीय होने से मैं ही हूँ। फिर भी ब्राह्मणों का वचन झूठा नहीं हो सकता है। क्योंकि जो ब्राह्मणों का कुल है वह मेरा ही मुख है ॥

अष्टादश श्लोकः

तत आग्नीध्रीयेंऽशकलयावतरिष्याम्यात्मतुल्यमनुपलभमानः ॥१८॥

पदच्छेद—

ततः आग्नीध्रीये अंश कलया अवतरिष्यामि आत्मतुल्यम् अनुपलभमानः ॥

शब्दार्थ—

ततः	४.	इसलिये	अवतरिष्यामि	८.	अवतार लूँगा
आग्नीध्रीये	५.	राजा नाभि के यहाँ	आत्म	१.	मेरे
अंश	६.	अपने अंश	तुल्यम्	२.	समान
कलया	७.	कला से मैं ही	उपलभमानः ॥	३.	कोई नहीं है

श्लोकार्थ—मेरे समान कोई नहीं है। इसलिये राजा नाभि के यहाँ अपने अंशकला से मैं ही अवतार लूँगा ॥

एकोनविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इति निशामयन्त्या मेरुदेव्याः पतिमभिधायान्तर्दधे भगवान् ॥१९॥

पदच्छेद—

इति निशामयन्त्या मेरु देव्याः पतिम्
अभिधाय अन्तर्दधे भगवान् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	पतिम्	६.	उनके पति नाभि से ऐसा
निशाम	३.	सुनते	अभिधाय	७.	कहकर
यन्त्या	४.	रहने पर	अन्तर्दधे	८.	अन्तर्धान हो गये
मेरुदेव्याः	२.	महारानी मेरुदेवी के	भगवान् ॥	५.	भगवान् श्री हरि

श्लोकार्थ—इस प्रकार महारानी मेरुदेवी के सुनते रहने पर भगवान् श्री हरि उनके पति नाभि से ऐसा कहकर अन्तर्धान हो गये ॥

विंशः श्लोकः

बर्हिषि तस्मिन्नेव विष्णुदत्त भगवान् परमर्षिभिः प्रसादितो नाभेः प्रियचिकीर्षया तदवरोधायने मेरुदेव्यां धर्मान्दर्शयितुकामो वातरशनानां श्रमणानामृषीणामूर्ध्वमन्थिनां शुक्लया तनुवावततार ॥२०॥

पदच्छेद—

बर्हिषि तस्मिन् एव विष्णुदत्त भगवान् परमर्षिभिः प्रसादितः नाभेः प्रिय चिकीर्षया तद् अवरोधायने मेरु देव्याम् धर्मान् दर्शयितु कामः वातरशनानाम् श्रमणानाम् ऋषीणाम् ऊर्ध्व मन्थिनाम् शुक्लया तनुवा अवततार ॥

शब्दार्थ—

बर्हिषि	४.	यज्ञ में	मेरुदेव्याम्	१४.	मेरुदेवी के गर्भ से (भगवान् ने)
तस्मिन्	२.	उस	धर्मान्	२०.	धर्मों को
एव	३.	ही	दर्शयितु	२१.	दिखाने की
विष्णुदत्त	१.	हे परीक्षित्	कामः	२२.	इच्छा से
भगवान्	७.	भगवान् श्री हरि को	वात रशनानाम्	१५.	दिगम्बर
परम	५.	परम	श्रमणानाम्	१६.	तपस्वियों के
ऋषिभिः	६.	ऋषियों ने	ऋषीणाम्	१८.	ज्ञानी
प्रसादितः	८	प्रसन्न किया	ऊर्ध्व	१६.	बाल
नाभेः	९.	राजा नाभि का	मन्थिनाम्	१७.	ब्रह्मचारी
प्रिय	१०.	प्रिय	शुक्लया	२३.	विशुद्ध सत्त्व
चिकीर्षया	११.	करने की इच्छा से	तनुवा	२४.	शरीर से
तद्	१२.	उनके	अवततार ॥	२५.	अवतार लिया
अवरोधायने	१३.	रनिवास में			

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! उस ही यज्ञ में परम ऋषियों ने भगवान् श्री हरि को प्रसन्न किया । राजा-नाभि को प्रिय करने की इच्छा से उनके रनिवास में मेरुदेवी के गर्भ से भगवान् ने दिगम्बर, बाल ब्रह्मचारी, ज्ञानी तपस्वियों के धर्मों को दिखाने की इच्छा से विशुद्ध सत्त्व शरीर से अवतार लिया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे नाभिचरिते ऋषभावतारो नाम तृतीयो ऽध्यायः ॥३॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पंचमः स्कन्धः

चतुर्थः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—अथ ह तमुत्पत्त्यैवाभिव्यज्यमानभगवल्लक्षणं साम्योपशम-वैराग्यैश्वर्यमहाविभूतिभिरनुदिनमेधमानानुभावं प्रकृतयः प्रजा ब्राह्मणा देवताश्चावनितलसमवनायातितरां जगृधुः ॥१॥

पदच्छेद—अथ ह तम् उत्पत्त्या एव अभिव्यज्यमान भगवत् लक्षणम् साम्य उपशम वैराग्य ऐश्वर्य महाविभूतिभिः अनुदिनम् एधमान अनुभावम् प्रकृतयः प्रजाः ब्राह्मणाः देवताः च अवनितल समवनाय अतितराम् जगृधुः ॥

शब्दार्थ—

अथ ह	१. तदनन्तर प्रसिद्ध है कि	अनुभावम्	९. प्रभाव
तम् उत्पत्त्या एव	२. उन नाभिनन्दन के शरीर में जन्म से ही	प्रकृतयः	११. मन्त्री वर्ग
अभिव्यज्यमान	४. प्रकट थे	प्रजाः ब्राह्मणाः	१२. प्रजा ब्राह्मण
भगवत् लक्षणम्	३. भगवान् के वज्र अंकुशादि चिह्न	देवताः	१४. देवता
साम्य, उपशम	५. समता शान्ति	च	१३. और
वैराग्य ऐश्वर्य	६. वैराग्य और ऐश्वर्य की	अवनितल	१७. पृथ्वी मण्डल का
महाविभूतिभिः	७. महान् सम्पत्तियों से	समवनाय	१८. शासन करें
अनुदिनम्	८. प्रतिदिन (उनका)	अतितराम्	१५. अत्यन्त
एधमान	१०. बढ़ रहा था	जगृधुः ॥	१६. चाहने लगे कि वे

श्लोकार्थ—तदनन्तर प्रसिद्ध है कि उननाभिनन्दन के शरीर में जन्म से ही भगवान् के वज्र, अंकुशादि चिह्न प्रकट थे। समता, शान्ति, वैराग्य और ऐश्वर्य की महान् सम्पत्तियों से प्रतिदिन उनका प्रभाव बढ़ रहा था। मन्त्री वर्ग, प्रजा, ब्राह्मण और देवता अत्यन्त चाहने लगे थे कि वे पृथ्वी मण्डल का शासन करें ॥

द्वितीयः श्लोकः

तस्य ह वा इत्थं वर्ष्मणा वरीयसा बृहच्छ्लोकेन चौजसा बलेन श्रिया यशसा वीर्यशौर्याभ्यां च पिता ऋषभ इतीदं नाम चकार ॥२॥

पदच्छेद—तस्य ह वा इत्थम् वर्ष्मणा वरीयसा बृहत् श्लोकेन च ओजसा बलेन श्रिया यशसा वीर्यशौर्याभ्याम् च पिता ऋषभः इति इदम् नाम चकार ॥

शब्दार्थ—

तस्य	२. उनके	बलेन श्रिया	९. बल से सौन्दर्य से
ह वाव	१. प्रसिद्ध है कि	यशसा वीर्य	१०. यश से पराक्रम
इत्थम्	३. इस प्रकार	शौर्याभ्याम्	१२ प्रभाव से
वर्ष्मणा	५. शरीर	च	११. और
वरीयसा	४. सुन्दर सुडोल	पिता	१३. पिता राजा नाभि ने (उनका)
बृहत् श्लोकेन	६. महान् कीर्ति से	ऋषभः	१४. ऋषभ
च	७. और	इति इदम्	१५. ऐसा
ओजसा	८. कान्ति से	नाम चकार ॥	१६. नाम रक्खा.

श्लोकार्थ—प्रसिद्ध है कि उनके इस प्रकार सुन्दर सुडोल शरीर से, महान् कीर्ति से और कान्ति से, बल से, सौन्दर्य से, यश से, पराक्रम और प्रभाव से पिता राजा नाभि ने उनका ऋषभ ऐसा नाम रक्खा ॥

तृतीयः श्लोकः

तस्य हीन्द्रः स्पर्धमानो भगवान् वर्षे न ववर्ष तदवधार्य भगवानृषभदेवो योगेश्वरः प्रहस्यात्मयोगमायया स्ववर्षमजनाभं नामाभ्यवर्षत् ॥३॥

पदच्छेद—तस्य हि इन्द्रः स्पर्धमानः भगवान् वर्षे न ववर्ष तद् अवधार्य भगवान् ऋषभ देवः योगेश्वरः प्रहस्य आत्म योग मायया स्व वर्षम् अजनाभम् नाम अभ्यवर्षत् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	२.	उनसे	भगवान् ऋषभदेवः	११.	भगवान् ऋषभदेव ने
हि	१.	एक बार	योगेश्वरः	१०.	योगिराज
इन्द्रः	५.	इन्द्र ने	प्रहस्य	१२.	उस पर हंसे (और)
स्पर्धमानः	३.	ईर्ष्या करके	आत्मयोग	१३.	अपनी योग
भगवान्	४.	भगवान्	मायया	१४.	माया के प्रभाव से
वर्षे	६.	भारत वर्ष में	स्ववर्षम्	१५.	अपने भारत वर्ष
न	८.	नहीं की	अजनाभम्	१६.	अजनाभ
ववर्ष	७.	वर्षा	नाम	१७.	नाम के राज्य में खूब
तद् अवधार्य	९.	यह जानकर	अभ्यवर्षत् ॥	१८.	वर्षा की

श्लोकार्थ—एक बार उनसे ईर्ष्या करके भगवान् इन्द्र ने भारत वर्ष में वर्षा नहीं की। यह जान कर योगिराज भगवान् ऋषभदेव ने उस पर हंसे और अपनी योग माया के प्रभाव से अपने भारत वर्ष अजनाभ नाम के राज्य में खूब वर्षा की ॥

चतुर्थः श्लोकः

नाभिस्तु यथाभिलषितं सुप्रजस्त्वमवरुध्यातिप्रमोदभरविह्वलो गद्गदाक्षरया गिरा स्वैरं गृहीतनरलोकसधर्मं भगवन्तं पुराणपुरुषं मायाविलसितमतिर्वत्स तातेति सानुरागमुपलालयन् परां निर्वृतिमुपगतः ॥४॥

पदच्छेद—नाभिः तु यथा अभिलषितम् सुप्रजस्त्वम् अवरुध्य अतिप्रमोदभरविह्वलः गद्गदया अक्षरया गिरा स्वैरम् गृहीत नरलोक सधर्मम् भगवन्तम् पुराण पुरुषम् माया विलसित मतिः वत्स तात इति सानुरागम् उपलालयन् पराम् निर्वृतिम् उपगतः ॥

शब्दार्थ—

नाभिः तु	१.	राजा नाभि तो	गृहीत	१४.	धारण करने वाले
यथा	३	अनुसार	नरलोकसधर्मम्	१३.	मनुष्य के आकार को
अभिलषितम्	२.	अपनी इच्छा के	भगवन्तम्	१६.	भगवान् का
सुप्रजस्त्वम्	४.	सत्पुत्र को	पुराण पुरुषम्	१५.	आदि पुरुष
अवरुध्य	५.	पाकर	मायाविलसितम्	१०.	माया के प्रभाव से युक्त
अति प्रमोदभर	६.	अत्यन्त आनन्द भर जाने से	मतिः	११.	बुद्धि हो जाने से
विह्वलः	७.	विभोर थे (तथा)	वत्स तात इति	१७.	हे वत्स हे तात इस प्रकार
गद्गदयाक्षरम्	८.	गद् गद् शब्दों वाली	सानुरागम्	१८.	बड़े प्रेम से
गिरा	९.	वाणी से	उपलालयन्	१९.	लालन-पालन करते हुये
स्वैरम्	१०.	अपनी इच्छा से	पराम् निर्वृतिम्	२०.	अत्यन्त आनन्द को
			उपगतः ॥	२१.	प्राप्त हुये

श्लोकार्थ—राजा नाभि तो अपनी इच्छा के अनुसार सत्पुत्र को पाकर अत्यन्त आनन्द भर जाने से विभोर थे। तथा गद्-गद् शब्दों वाली वाणी से माया के प्रभाव से युक्त बुद्धि हो जाने से अपनी इच्छा से मनुष्य के आकार को धारण करने वाले आदि पुरुष भगवान् का हे वत्स ! हे तात ! इस प्रकार बड़े प्रेम से लालन-पालन करते हुये अत्यन्त आनन्द को प्राप्त हुये ॥

पञ्चमः श्लोकः

विदितानुरागमापौरप्रकृति जनपदो राजा नाभिरात्मजं समयसेतुरक्षायामभिषिच्य ब्राह्मणेषूपनिधाय सह मेरुदेव्या विशालायां प्रसन्ननिपुणेन तपसा समाधियोगेन नरनारायणाख्यं भगवन्तं वासुदेवमुपासीनः कालेन तन्महिमानमवाप ॥५॥

पदच्छेद—विदित अनुरागम् आपौर प्रकृति जनपदः राजा नाभिः आत्मजम् समयसेतुरक्षायाम् अभिषिच्य ब्राह्मणेषु उपनिधाय सह मेरुदेव्या विशालायाम् प्रसन्न निपुणेन तपसा समाधि योगेन नर नारायण आख्यम् भगवन्तम् वासुदेवम् उपासीनः कालेन तत् महिमानम् अवाप ॥

शब्दार्थ—

विदित	३.	जान लिया कि	विशालायाम्	१७.	बदरिकाश्रम में
अनुरागम्	७.	ऋषभदेव के प्रति प्रेम है (उन्होंने)	प्रसन्न	१८.	हिंसा रहित
आपौर	५.	पुरवासी और	निपुणेन	१९.	कठोर
प्रकृति	६.	मन्त्री वर्ग का अपने पुत्र	तपसा	२०.	तपस्या से (और)
जनपदः	४.	राज्य के	समाधि	२१.	समाधि
राजा	१.	महाराज	योगेन	२२.	योग से
नाभिः	२.	नाभि ने	नर नारायण	२३.	नर और नारायण के
आत्मजम्	८.	अपने पुत्र को	आख्यम्	२४	नाम के
समय	९.	धर्म की	भगवन्तम्	२५.	भगवान्
सेतु	१०.	मर्यादा की	वासुदेवम्	२६.	वासुदेव को
रक्षायाम्	११.	रक्षा करने के लिये	उपासीनः	२७.	उपासना करते हुये
अभिषिच्य ।	१२.	अभिषेक करके	कालेन	२८.	समय पाकर
ब्राह्मणेनषु	१३.	ब्राह्मणों की देख-रेख में	तत्	२९.	उनके
उपनिधाय	१४.	रख दिया (तदनन्तर)	महिमानम्	३०.	स्वरूप को
सह	१६.	साथ	अवाप ॥	३१.	प्राप्त कर लिया
मेरुदेव्या	१५.	(अपनी पत्नी) मेरुदेवी के			

श्लोकार्थ—महाराज नाभि ने जान लिया कि राज्य के पुरवासी और मन्त्री वर्ग का अपने पुत्र ऋषभदेव के प्रति प्रेम है। उन्होंने अपने पुत्र को धर्म की मर्यादा की रक्षा करने के लिये अभिषेक करके ब्राह्मणों की देख-रेख में रख दिया। तदनन्तर अपनी पत्नी मेरु देवी के साथ बदरिकाश्रम में हिंसा रहित कठोर तपस्या से और समाधि योग से नर और नारायण के नाम के भगवान् वासुदेव की उपासना करते हुये समय पाकर उनके स्वरूप को प्राप्त किया ॥

षष्ठः श्लोकः

यस्य ह पाण्डवेय श्लोकावुदाहरन्ति—
को नु तत्कर्म राजर्षेर्नाभेरन्वाचरेत्पुमान् ।
अपत्यतामगाद्यस्य हरिः शुद्धेन कर्मणा ॥६॥

पदच्छेद—यस्य ह पाण्डवेय श्लोकौ उदाहरन्ति कः नु तत् कर्म राजर्षेः नाभेः अन्वाचरेत् पुमान् । अपत्यताम् अगात् यस्य हरिः शुद्धेन कर्मणा ॥

शब्दार्थ—

यस्य	२.	जिस राजानाभि के विषय में	राजर्षेः नाभेः	१.	राजर्षि नाभि के
ह	३.	प्रसिद्ध	अन्वाचरेत्	११.	कर सकता है
पाण्डवेय	१.	हे परीक्षित्	पुमान्	८.	पुरुष
श्लोकौ	४.	दो श्लोकों का	अपत्यताम्	१५.	पुत्ररूप में
उदाहरन्ति	५.	उदाहरण देते हैं	अगात्	१६.	प्राप्त हुये थे
कः	७.	कौन	यस्य	१०.	जिसके
नु	६.	भला	हरिः	१४.	भगवान् श्री हरि
तत् कर्म	१०.	उस कार्य को	शुद्धेन कर्मणा ॥	१३.	शुद्ध कर्मों से

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! जिस राजा नाभि के विषय में प्रसिद्ध दो श्लोकों का उदाहरण देते हैं । भला कौन पुरुष राजर्षि नाभि के उस कार्य को कर सकता है । जिनके शुद्ध कर्मों से भगवान् श्री हरि पुत्र रूप में प्रकट हुये थे ॥

सप्तमः श्लोकः

ब्रह्मण्योऽन्यः कुतो नाभेर्विप्रा मङ्गलपूजिताः ।
यस्य बर्हिषि यज्ञेशं दर्शयामासुरोजसा ॥७॥

पदच्छेद— ब्रह्मण्यः अन्यः कुतः नाभेः विप्राः मङ्गल पूजिताः ।
यस्य बर्हिषि यज्ञेशम् दर्शयामासुः ओजसा ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मण्यः	४.	ब्राह्मण भक्त हो सकता है	पूजिताः	८.	पूजित हुये
अन्यः	०.	अन्य दूसरा	यस्य	५.	जिसके
कुतः	३.	कौन	बर्हिषि	६.	यज्ञ में
नाभेः	१.	राजा नाभि से	यज्ञेशम्	११.	यज्ञों के स्वामी भगवान् श्री हरि का
विप्राः	९.	ब्राह्मणों ने	दर्शयामासुः	१०.	दर्शन कराया
मङ्गल	७.	सम्मान पूर्वक	ओजसा ॥	१०.	अपने मन्त्र बल से

श्लोकार्थ—राजा नाभि से अन्य दूसरा कौन ब्राह्मण-भक्त हो सकता है । जिसके यज्ञ में सम्मान पूर्वक पूजित हुये ब्राह्मणों ने अपने मन्त्र-बल से यज्ञों के स्वामी भगवान् श्री हरि का दर्शन कराया ॥

अष्टमः श्लोकः

अथ ह भगवानृषभदेवः स्ववर्षं कर्मक्षेत्रमनुमन्यमानः प्रदर्शितगुरुकुलवासो लब्धवरैर्गुरुभिरनुज्ञातो गृहमेधिनां धर्माननुशिक्षमाणो जयन्त्यामिन्द्रदत्तायामुभयलक्षणं कर्म समाम्नायाम्नातमभियुञ्जन्नात्मजानामात्मसमानानां शतं जनयामास ॥८॥

पदच्छेद—अथ ह भगवान् ऋषभदेवः स्ववर्षं कर्मक्षेत्रमनुमन्यमानः प्रदर्शित गुरुकुल वासः लब्धवरैः गुरुभिः अनुज्ञातः गृहमेधिनाम् धर्मान् अनुशिक्षमाणः जयन्त्याम् इन्द्रदत्तायाम् उभयलक्षणम् कर्म समाम्नाय आम्नातम् अभियुञ्जन आत्मजानाम् आत्मसमानानाम् शतम् जनयामास ॥

शब्दार्थ—

अथ ह	१. उसके बाद प्रसिद्ध है कि	धर्मान् अनुशिक्षमाणः	११. धर्मों की शिक्षा देने के लिए
भगवान् ऋषभदेवः	२. भगवान् ऋषभदेव ने	जयन्त्याम्	१८ जयन्ती के गर्भ से
स्ववर्षं, कर्मक्षेत्रम्	३. अपने राज्य को कर्म का क्षेत्र	इन्द्रदत्तायाम्	१७. इन्द्र के द्वारा दी गई
अनुमन्य मानः	४. मानते हुये	उभय लक्षणम्	१४. (श्रौत, स्मार्त) दोनों प्रकार के
प्रदर्शित	६. आचरण किया (तथा)	कर्म	१५. कर्मों का आचरण
गुरुकुलवासः	५. गुरुकुल में रहने का	समाम्नाय	१२. शास्त्रों में
लब्ध वरैः	७. दक्षिणा प्राप्त किये हुये	आम्नातम्	१३. वर्णित
गुरुभिः	८. गुरुओं से	अभियुञ्जन्	१६. करते हुये
अनुज्ञातः	९. आदेश पाकर	आत्मजानाम्	२०. पुत्रों को
गृहमेधिनाम्	१०. गृहस्थों के	आत्मसमानानांशतम्	१९. अपने समान एक सौ
		जनयामास ॥	२१. उत्पन्न किया

श्लोकार्थ—उसके बाद प्रसिद्ध है कि भगवान् ऋषभ देव ने अपने राजा को कर्मों का क्षेत्र मानते हुये गुरुकुल में रहने का आचरण किया तथा दक्षिणा प्राप्त किये हुये गुरुओं से आदेश पाकर गृहस्थों के धर्मों की शिक्षा देने के लिये शास्त्रों में वर्णित श्रौत-स्मार्त दोनों प्रकार के कर्मों का आचरण करते हुये इन्द्र के द्वारा दी गई जयन्ती के गर्भ से अपने समान एक सौ पुत्रों को उत्पन्न किया ॥

नवमः श्लोकः

येषां खलु महायोगी भरतो ज्येष्ठः श्रेष्ठगुण आसीद्येनेदं वर्षं भारतमिति व्यपदिशन्ति ॥९॥

पदच्छेद—येषाम् खलु महायोगी भरतः ज्येष्ठः श्रेष्ठ गुणः आसीत् येनेदम् वर्षम् भारतम् इति व्यपदिशन्ति ॥

शब्दार्थ—

येषाम्	१. जिनमें	गुणः	४. गुणों में
खलु	६. अवश्य ही	आसीत्	८. थे
महायोगी	७. महान् योगी	येनेदम्	९. जिनके कारण इस
भरतः	२ भरत	वर्षम्	१०. भू भाग को
ज्येष्ठः	३. सबसे बड़े	भारतम्	११. भारत
श्रेष्ठ	५ श्रेष्ठ और	इति व्यपदिशन्ति ॥	१२. इस नाम से कहते हैं

श्लोकार्थ—जिसमें भरत सबसे बड़े श्रेष्ठ और अवश्य ही महान् योगी थे। जिनके कारण इस भू भाग को भारत इस नाम से कहते हैं ॥

दशमः श्लोकः

तमनु कुशावर्त इलावर्तो ब्रह्मावर्तो मलयः केतुर्भद्रसेन
इन्द्रस्पृग्विदर्भः कीकट इति नव नवति प्रधानाः ॥१०॥

पदच्छेद—

तम् अनु कुशावर्तः इलावर्तः ब्रह्मावर्तः मलयः केतुः भद्रसेनः
इन्द्रस्पृक् विदर्भः कीकटः इति नव नवति प्रधानाः ॥

शब्दार्थ—

तम्	१.	उन भरत जी के	भद्रसेनः	८.	भद्रसेन
अनु	२.	बाद	इन्द्रस्पृक्	९.	इन्द्रस्पृक्
कुशावर्तः	३.	कुशावर्त	विदर्भः	१०.	विदर्भ
इलावर्तः	४.	ब्रह्मावर्त	कीकट	११.	कीकट
ब्रह्मावर्तः	५.	ब्रह्मावर्त	इति नव	१२.	ये नव पुत्र
मलयः	६.	मलय	नवति	१३.	नब्बे पुत्रों में
केतुः	७.	केतु	प्रधानाः ॥	१४.	बड़े थे

श्लोकार्थ—उन भरत जी के बाद कुशावर्त, इलावर्त, ब्रह्मावर्त, मलय, केतु, भद्रसेन इन्द्रस्पृक्, विदर्भ, कीकट ये नौ पुत्र नब्बे पुत्रों में बड़े थे ॥

एकादशः श्लोकः

कविर्हरिरन्तरिक्षः प्रबुद्धः पिप्पलायनः ।
आविर्होत्रोऽथ द्रुमिल चमसः करभाजनः ॥११॥

पदच्छेद— कविः हरिः अन्तरिक्षः प्रबुद्धः पिप्पलायनः ।
आवहोत्रः अथ द्रुमिलः चमसः करभाजनः ॥

शब्दार्थ—

कविः	२.	कवि	आविर्होत्रः	७.	आविर्होत्र
हरिः	३.	हरि	अथ	१.	उसके बाद
अन्तरिक्षः	४.	अन्तरिक्ष	द्रुमिलः	८.	द्रुमिल
प्रबुद्धः	५.	प्रबुद्ध	चमसः	९.	चमस
पिप्पलायनः ।	६.	पिप्पलायन	करभाजनः ॥	१०.	करभाजन ये नौ पुत्र बड़े थे

श्लोकार्थ—उसके बाद कवि, हरि, अन्तरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस, कर भाजन ये नौ पुत्र बड़े थे ॥

द्वादशः श्लोकः

इति भागवतधर्मदर्शना नव महाभागवतास्तेषां सुचरितं भगवन्महिमोपबृंहितं वसुदेवनारदसंवादमुपशमायनमुपरिष्टाद्वर्णयिष्यामः ॥१२॥

पदच्छेद—इति भागवत धर्मदर्शना नव महाभागवताः तेषाम् सुचरितम् भगवत् महिमा उपबृंहितम् वसुदेव नारद संवादम् उपशमायनम् उपरिष्टात् वर्णयिष्यामः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	ये	महिमा	१०.	प्रभाव को
भागवत	४.	भागवत	उपबृंहितम्	११.	वढ़ाने वाला और
धर्म	५.	धर्म के	वसुदेव	१४.	वसुदेव
दर्शना	६.	जानकार हुये	नारद	१५.	देवर्षि नारद के
नव	२	नौ पुत्र	संवादम्	१६.	संवाद में
महाभागवताः	३.	महान् भागवत और	उपशमायनम्	१२.	शान्ति देने वाला है (उसका)
तेषाम्	७.	उनके	उपरिष्टात्	१३.	आगे
सुचरितम्	८.	सुन्दर चरित्र	वर्ण	१७.	वर्णन
भगवत्	९.	भगवान् के	यिष्यामः ॥	१८.	करेंगे

श्लोकार्थ—ये नौ पुत्र महान् भागवत और भागवत धर्म के जानकार हुये। उनके सुन्दर चरित्र भगवान् के प्रभाव को वढ़ाने वाला और शान्ति देने वाला है। उसका आगे वसुदेव-नारद के संवाद में वर्णन करेंगे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

यवीयांस एकाशीतिर्जायन्तेयाः पितुरादेशकरा महाशालीना महाश्रोत्रिया यज्ञशीलाः कर्मविशुद्धा ब्राह्मणा बभूवुः ॥१३॥

पदच्छेद—

यवीयांसः एकाशीतिः जायन्तेयाः पितुः आदेशकराः महाशालीनाः महाश्रोत्रियाः यज्ञ शीलाः कर्म विशुद्धाः ब्राह्मणाः बभूवुः ॥

शब्दार्थ—

यवीयांसः	१.	उनसे छोटे	महाश्रोत्रिया	६.	महान् वेद ज्ञानी
एकाशीतिः	३.	इक्यासी पुत्र	यज्ञ शीलाः	७.	यज्ञ करने वाले (तथा)
जायन्तेयाः	२.	जयन्ती के	कर्म विशुद्धाः	८.	कर्मानुष्ठान से शुद्ध होकर
पितुः आदेशकरा	४.	पिता के आदेश का पालन करने वाले	ब्राह्मणाः	९.	ब्राह्मण
महाशालीनाः	५.	बड़े सच्चरित	बभूवुः ॥	१०.	हो गये थे

श्लोकार्थ—उनसे छोटे जयन्ती के इक्यासी पुत्र पिता के आदेश का पालन करने वाले, बड़े सच्चरित, महान् वेद ज्ञानी, यज्ञ करने वाले तथा कर्मानुष्ठान से शुद्ध होकर ब्राह्मण हो गये ॥

चतुर्दशः श्लोकः

भगवानृषभसंज्ञ आत्मतन्त्रः स्वयं नित्यनिवृत्तानर्थपरम्परः केवलानन्दानुभव ईश्वर एव विपरीतवत्कर्माण्यारभमाणः कालेनानुगतं धर्ममाचरणेनोपशिक्षयन्नतद्विदां सम उपशान्तो मैत्रः कारुणिको धर्मार्थयशःप्रजानन्दामृतावरोधेन गृहेषु लोकं नियमयत् ॥१४॥

पदच्छेद—

भगवान् ऋषभ संज्ञः आत्मतन्त्रः स्वयम् नित्यनिवृत्त अनर्थ परम्परः केवल आनन्द अनुभवः ईश्वरः एव विपरीतवत् कर्माणि आरभमाणः कालेन अनुगतम् धर्मम् आचरणेन उपशिक्षयन् अतद्विदाम् समः उपशान्तः मैत्रः कारुणिकः धर्मार्थयशः प्रजानन्द अमृत अवरोधेन गृहेषु लोकम् नियमयत् ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	१. यद्यपि भगवान्	धर्मम् आचरणेन	१३. धर्म का आचरण करके
ऋषभ संज्ञः	२. ऋषभदेव	उप शिक्षयन्	१५. शिक्षा देते हुये
आत्मतन्त्रः	३. परम स्वतन्त्र	अतद्विदाम्	१४. अज्ञानी लोगों का
स्वयम्नित्य	४. अपने आप सदा	समः	१६. समता से युक्त
निवृत्त	६. रहित	उपशान्तः मैत्रः	१७. शान्त सुहृद्
अनर्थ परम्परः	५. अनर्थों की परम्परा से	कारुणिकः	१८. करुणा पूर्ण होकर
केवल आनन्द	७. अखण्ड आनन्द का	धर्मार्थ यशः	१९. धर्म, अर्थ, यश और
अनुभवः	८. अनुभव करने वाले	प्रजानन्द	२०. पुत्र का भोग करते हुये
ईश्वर एव	९. ईश्वर ही थे (किन्तु)	अमृत अवरोधे	२१. मोक्ष को प्राप्त करके
विपरीतवत्	१०. मनुष्य के समान	गृहेषु	२३. गृहस्थाश्रम का
कर्माणि, आरभमणाः	११. कार्यों को करते हुये	लोकम्	२२. लोगों के लिये
कालेन अनुगतम्	१२. समयानुसार प्राप्त	नियमयत् ॥	२४. नियम बताया

श्लोकार्थ—यद्यपि भगवान् ऋषभदेव परम स्वतन्त्र, अपने आप सदा अनर्थों की परम्परा से रहित अखण्ड आनन्द का अनुभव करने वाले ईश्वर ही थे। किन्तु मनुष्य के समान कार्यों को करते हुये समयानुसार प्राप्त धर्म का आचरण करके अज्ञानी लोगों को शिक्षा देते हुये समता से युक्त, शान्त, सुहृद, करुणा पूर्ण होकर अर्थ, धर्म, यश और पुत्र का भोग करते हुये मोक्ष को प्राप्त करके लोगों के लिये गृहस्थाश्रम का नियम बताया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

यद्यच्छीर्षण्याचरितं तत्तदनुवर्तते लोकः ॥१५॥

पदच्छेद —

यद् यत् शीर्षण्य आचरितम् तत् तद् अनुवर्तते लोकः ॥

शब्दार्थ—

यद्	२. जो	तत्	६. उस
यत्	३. जो आचरण	तद्	७. उसका
शीर्षण्य	१. बड़े लोग	अनुवर्तते	८. अनुकरण करते हैं
आचरितम्	४. करते हैं	लोकः ॥	५. दूसरे लोग

श्लोकार्थ—बड़े लोग जो जो आचरण करते हैं दूसरे लोग उस उसका अनुसरण करते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

यद्यपि स्वविदितं सकलधर्मं ब्राह्मं गुह्यं ब्राह्मणैर्दर्शितमार्गेण सामादिभिरुपायैर्जनतामनुशशास ॥१६॥

पदच्छेद—

यद्यपि स्वविदितम् सकल धर्मम् ब्राह्मम् गुह्यम् ब्राह्मणैः दर्शित मार्गेण सामादिभिः उपायैः जनताम् अनुशशास ॥

शब्दार्थ—

यद्यपि	१. यद्यपि वे	ब्राह्मणैः	७. फिर भी ब्राह्मणों के द्वारा
स्वविदितम्	६. स्वयम् जानते थे	दर्शित मार्गेण	८. दिखाये गये रास्ते से
सकल	२. सम्पूर्ण	सामादि	९. साम दान दण्ड भेद नीतियों के
धर्मम्	३. धर्मों के आश्रय	निरुपायैः	१०. उपायों से
ब्राह्मम्	४. वेद के	जनताम्	११. जनता पर
गुह्यम् ।	५. गुप्त रहस्य को	अनुशशास ॥	१२. शासन किया

श्लोकार्थ—यद्यपि वे सम्पूर्ण धर्मों के उपायों के आश्रय वेद के गुप्त रहस्य को जानते थे, फिर भी ब्राह्मणों के द्वारा दिखाये गये रास्ते से साम-दान-दण्ड-भेद नीतियों के उपायों से जनता पर शासन किया ॥

सप्तदशः श्लोकः

द्रव्यदेशकालवयः श्रद्धर्त्विग्विविधोद्देशोपचितैः सर्वैरपि क्रतुभिर्यथोपदेशं शतकृत्व इयाज ॥१७॥

पदच्छेद—द्रव्यदेशकालवयः श्रद्धा ऋत्विग् विविध उद्देशउपचितैः सर्वैः अपि क्रतुभिः यथाउपदेशम् शतकृत्वः इयाज ॥

शब्दार्थ—

द्रव्य	३. सामग्री	उपचितैः	९. किये गये
देश, काल	४. देश समय	सर्वैः अपि	१०. सभी प्रकार के
वयः	५. अवस्था	क्रतुभिः	११. यज्ञों का
श्रद्धाऋत्विग्	६. श्रद्धा और यज्ञकर्ता द्वारा	यथा	२. अनुसार
विविध	७. अनेक	उपदेशम्	१. उन्होंने गुरुओं और शास्त्र के कहे
उपदेशम्	८. देवताओं के निमित्त	शतकृत्वः इयाज ॥	१२. सौ-सौवार अनुष्ठान किया

श्लोकार्थ—उन्होंने गुरुओं और शास्त्र के कहे अनुसार सामग्री, देश, काल, अवस्था श्रद्धा और यज्ञकर्ता के द्वारा अनेक देवताओं के निमित्त किये गये सभी प्रकार के यज्ञों का सौ-सौ बार अनुष्ठान किया ॥

अष्टादशः श्लोकः

भगवतर्षभेण परिरक्ष्यमाण एतस्मिन् वर्षे न कश्चन पुरुषो वाञ्छत्यविद्यमानमिवात्मनोऽन्यस्मात्कथञ्चन किमपि कर्हिचिदवेक्षते भर्तर्यनुसवनं विजृम्भितस्नेहातिशयमन्तरेण ॥१८॥

पदच्छेद—भगवता ऋषभेण परिरक्ष्यमाणे एतस्मिन् वर्षे न कश्चन पुरुषः वाञ्छति अविद्यमानम् इव आत्मनः अन्यस्मात् कथञ्चन किम् अपि कर्हिचित् अवेक्षते भर्तरि: अनुसवनम् विजृम्भित स्नेह अतिशयम् अन्तरेण ॥

शब्दार्थ—

भगवता	१. भगवान्	अन्यस्मात्	१२. दूसरे से
ऋषभेण	२. ऋषभदेव के द्वारा	कथञ्चन किम् अपि	१३. किसी प्रकार का कुछ भी
परिरक्ष्यमाणे	३. रक्षा किये जाते हुये	कर्हिचित्	१४. कभी भी
एतस्मिन् वर्षे	४. इस राज्य में	अवेक्षते	१८. देखता था
न	१५. नहीं	भर्तरि	६. स्वामी ऋषभदेव के प्रति
कश्चन पुरुषः	५. कोई भी पुरुष	अनुसवनम्	७. प्रतिक्षण
वाञ्छति	१६. चाहता था (दूसरे को वस्तु को)	विजृम्भित स्नेह	८. बढ़ते हुये प्रेम को
अविद्यमानम् इव	१७. आकाश पुष्प के समान मिथ्या	अतिशयम्	९. अधिकता के
आत्मनः	११. अपने लिये	अन्तरेण ॥	१०. अलावा

श्लोकार्थ—भगवान् ऋषभदेव के द्वारा रक्षा किये जाते हुये इस राज्य में कोई भी पुरुष स्वामी ऋषभदेव के प्रति प्रतिक्षण बढ़ते हुये प्रेम की अधिकता के अलावा अपने लिये दूसरे से किसी प्रकार का कुछ भी कभी भी नहीं चाहता था। दूसरे की वस्तु को आकाश पुष्प के समान मिथ्या देखता था ॥

एकोनविंशः श्लोकः

स कथाचिदटमानो भगवानृषभो ब्रह्मावर्तगतो ब्रह्मर्षिप्रवरसभायां प्रजानां निशामयन्तीनामात्मजानवहितात्मनः प्रश्रयप्रणयभरसुयन्त्रितानप्युपशिक्षयन्निति होवाच ॥१९॥

पदच्छेद—सः कदाचित् अटमानः भगवान् ऋषभः ब्रह्मावर्त गतः ब्रह्मर्षि प्रवर सभायाम् प्रजानाम् निशामयन्तीनाम् आत्मजान् अवहित आत्मनः प्रश्रय प्रणय भर सुयन्त्रितान् अपि उपशिक्षयन् इति ह उवाच ॥

शब्दार्थ—

सः	३.	वे	आत्मजान	२०.	अपने पुत्रों को
कदाचित्	१.	एक बार	अवहित	१३.	सावधान
अटमानः	२.	घूमते हुये	आत्मनः	१४.	मन तथा
भगवान्	४.	भगवान्	प्रश्रय	१५.	विनय (और)
ऋषभः	५.	ऋषभदेव	प्रणय	१६.	स्नेह के
ब्रह्मावर्त	६.	ब्रह्मावर्त देश में	भर	१७.	भार से
गतः	७.	पहुँचकर	सुयन्त्रितान्	१८.	वशीभूत होने पर
ब्रह्मर्षि	९.	ब्रह्मर्षियों को	अपि	१९.	भी
प्रवर	८.	प्रधान	उपशिक्षयन्	२१.	शिक्षा देते हुये
सभायाम	१०.	सभा में	इति	२२.	ऐसा
प्रजानाम	११.	प्रजाओं के	ह	२४.	ये प्रसिद्ध है
निशामयन्तीनाम	१२.	सुनते रहने पर	उवाच ॥	२३.	कहने लगे

श्लोकार्थ—एक बार घूमते हुये वे भगवान् ऋषभदेव ब्रह्मावर्त देश में पहुँचकर प्रधान ब्रह्मर्षियों को सभा में प्रजाओं के सुनते रहने पर सावधान मन तथा विनय और स्नेह के भार से वशीभूत होने पर भी अपने पुत्रों को शिक्षा देते हुये ऐसा कहने लगे, यह प्रसिद्ध है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे चतुर्थः अध्यायः ॥४॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पञ्चमः स्कन्धः

पंचमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

ऋषभ उवाच—नायं देहो देहभाजां नृलोके कष्टान् कामानर्हते विड्भुजां ये।
तपो दिव्यं पुत्रका येन सत्त्वं शुद्ध्येद्यस्माद् ब्रह्मसौख्यं त्वनन्तम् ॥१॥

पदच्छेद—नायम् देहः देह भाजाम् नृलोके कष्टान् कामान् अर्हते विड्भुजाम् ये।
तपः दिव्यम् पुत्रकाः येन सत्त्वम् शुद्ध्येत् यस्माद् ब्रह्मसौख्यम् तु अनन्तम् ॥

शब्दार्थ—

नायम्	६.	नहीं है	दिव्यम्	१०.	अलौकिक
देहः	३.	यह शरीर	पुत्रकाः	९.	हे पुत्रों
देह भाजाम्	२.	शरीरधारी मनुष्यों का	येन	१३.	जिससे
नृलोके	१.	मनुष्य लोक में	सत्त्वम्	११.	सात्त्विक
कष्टान्	४.	कष्ट देने वाले	शुद्ध्येत्	१४.	अन्तःकरण शुद्ध होता है
कामान् अर्हते	५.	विषयों के योग्य	यस्माद्	१६.	जिससे
विड्भुजाम्	८.	विष्ठा खाने वाले शूकरादि हैं	ब्रह्मसौख्यम्	१८.	ब्रह्मानन्द प्राप्त होता है
ये।	७.	जो	तु	१५.	और
तपः	१२.	तपस्या करनी चाहिये	अनन्तम् ॥	१७.	अपार

श्लोकार्थ—मनुष्य लोक में शरीरधारी मनुष्यों का यह शरीर कष्ट देने वाले विषयों के योग्य नहीं है, जो विष्ठा खाने वाले शूकरादि को भी मिलते हैं। पुत्रों! अलौकिक सात्त्विक तपस्या करनी चाहिये। जिससे अन्तःकरण शुद्ध होता है और अपार ब्रह्मानन्द की प्राप्ति होती है॥

द्वितीयः श्लोकः

महत्सेवां द्वारमाहुर्विमुक्तेस्तमोद्वारं योषितां सङ्गिसङ्गम्।
महान्तस्ते समचित्ताः प्रशान्ता विमन्यवः सुहृदः साधवो ये ॥२॥

पदच्छेद—महत् सेवाम् द्वारम् आहुः विमुक्तेः तमः द्वारम् योषिताम् सङ्गिसङ्गम्।
महान्तः ते समचित्ताः प्रशान्ताः विमन्यवः सुहृदः साधवः ये ॥

शब्दार्थ—

महत्	१.	महापुरुषों की	सङ्गिसङ्गम्।	६.	साथी (कामियों) का साथ
सेवाम्	२.	सेवा को	महान्तः ते	१४.	वे महान् पुरुष हैं
द्वारम् आहुः	४.	द्वार कहा गया है (तथा)	समचित्ताः	१०.	समान भाव रखने वाले
विमुक्तेः	३.	मुक्ति का	प्रशान्ताः	११.	अत्यन्त शान्त
तमः	७.	संसार का	विमन्यवः	१२.	क्रोध से रहित
द्वारम्	८.	द्वार है	सुहृदः साधवः	१३.	सबके हितैषी और सदाचारी है
योषिताम्	५.	स्त्रियों के	ये ॥	९.	जो लोग

श्लोकार्थ—महापुरुषों की सेवा को मुक्ति का द्वार कहा गया है। तथा स्त्रियों के साथी कामियों का साथ संसार का द्वार है। जो लोग समान भाव रखने वाले अत्यन्त शान्त क्रोध से रहित सबके हितैषी और सदाचारी हैं, वे महान् पुरुष हैं॥

तृतीयः श्लोकः

ये वा मयीशे कृतसौहृदार्था जनेषु देहम्भरवार्तिकेषु।
गृहेषु जायात्मजरातिमत्सु न प्रीतियुक्ता यावदर्थाश्च लोके ॥३॥

पदच्छेद—ये वा मयि ईशे कृत सौहृद अर्थाः जनेषु देहम्भर वार्तिकेषु।
गृहेषु जाया आत्मज रातिमत्सु न प्रीतियुक्ताः यावद् अर्थाः च लोके ॥

शब्दार्थ—

ये	२.	जो लोग	गृहेषु	१२.	घर के प्रति
वा	१.	अथवा	जाया आत्मज	१०.	पत्नी, पुत्र और
मयि ईशे	३.	मुझ परमात्मा के प्रति	रातिमत्सु	११.	धन सम्पत्ति से युक्त
कृत	६.	करते हैं (तथा)	न	१४.	नहीं
सौहृद	४.	मित्रता रूप	प्रीति	१३.	प्रेम-भाव
अर्थाः	५.	पुरुषार्थ	युक्ताः	१५.	रखते हैं
जनेषु	९.	लोगों के प्रति	यावद्	१७.	आवश्यकतानुसार
देहम्भर	७.	विषयों की ही	अर्थाः	१८.	धन संग्रह करते हैं (वे महान् पुरुष हैं)
वार्तिकेषु।	८.	बात करने वाले हैं	च लोके ॥	१६.	और संसार में

श्लोकार्थ—अथवा जो लोग मुझ परमात्मा के प्रति मित्रता रूप पुरुषार्थ करते हैं, तथा विषयों की ही बात करने वाले हैं तथा लोगों के प्रति एवं पत्नी, पुत्र और धन-सम्पत्ति से युक्त घर के प्रति प्रेम भाव नहीं रखते हैं और संसार में आवश्यकतानुसार धन संग्रह करते हैं, वे महान् पुरुष हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

नूनं प्रमत्तः कुरुते विकर्म यदिन्द्रियप्रीतय आपृणोति।
न साधु मन्ये यत आत्मनोऽयमसन्नपि क्लेशद आस देहः ॥४॥

पदच्छेद— नूनम् प्रमत्तः कुरुते विकर्म यद् इन्द्रिय प्रीतये आपृणोति।
न साधु मन्ये यत् आत्मनः अयम् असन् अपि क्लेशद आस देहः ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	५.	अवश्य ही	न	१०.	नहीं
प्रमत्तः	६.	असावधान होकर	साधु	९.	मैं उसे उचित
कुरुते	८.	करता है	मन्ये	११.	मानता हूँ (क्योंकि)
विकर्म	७.	बुरे कर्म	यत् आत्मनः	१२.	उस असत् कर्म से आत्मा को
यद्	१.	मनुष्य जब	अयम्	१५.	यह
इन्द्रिय	२.	इन्द्रियों को	असत् अपि	१३.	मिथ्या होने पर भी
प्रीतये	३.	प्रसन्न करने के लिये	क्लेशदः	१४.	कष्टकारी
आपृणोति।	४.	प्रयास करता है (तब)	आस	१७.	प्राप्त होता है
			देहः ॥	१६.	शरीर

श्लोकार्थ—मनुष्य जब इन्द्रियों को प्रसन्न करने के लिये प्रयास करता है, तब अवश्य ही असावधान होकर बुरे कर्म करता है। मैं उसे उचित नहीं मानता हूँ। क्योंकि उस असत् कर्म से आत्मा के मिथ्या होने पर भी कष्टकारी यह शरीर प्राप्त होता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

पराभवस्तावदबोधजातो यावन्न जिज्ञासत आत्मतत्त्वम् ।
यावत्क्रियास्तावदिदं मनो वै कर्मात्मकं येन शरीरबन्धः ॥५॥

पदच्छेद— पराभवः तावद् अबोध जातः यावत् न जिज्ञासते आत्मतत्त्वम् ।
यावत् क्रियाः तावद् इदम् मनः वै कर्म आत्मकम् येन शरीरबन्धः ॥

शब्दार्थ—

पराभवः	९.	छिपा रहता है	यावत्	१०.	जब तक
तावद्	६.	तब तक	क्रिया	११.	कर्म है
अबोध	७.	अज्ञान के	तावद्	१२.	तक तक
जातः	८.	कारण उसका स्वरूप	इदम् मनः	१३.	इस मन का
यावत्	१.	जब तक मनुष्य	वै	१४.	अवश्य
न	४.	नहीं	कर्म	१५.	कर्मों से
जिज्ञासते	५.	जानता है	आत्मकम्	१६.	वासना रहती हैं
आत्म	२.	आत्मा के	येन	१७.	जिससे
तत्त्वम् ।	३.	स्वरूप को	शरीरबन्धः ॥	१८.	शरीर का बन्धन होता है

श्लोकार्थ—जब-तक मनुष्य आत्मा के स्वरूप को नहीं जानता है, तब-तक अज्ञान के कारण उसका स्वरूप छिपा रहता है । जब तक कर्म है तब तक इस मन का अवश्य कर्मों से वासना रहती है । जिससे शरीर का बन्धन होता है ॥

षष्ठः श्लोकः

एवं मनः कर्मवशं प्रयुङ्क्ते अविद्ययाऽऽत्मन्युपधीयमाने ।
प्रीतिर्न यावन्मयि वासुदेवे न मुच्यते देहयोगेन तावत् ॥६॥

पदच्छेद— एवम् मनः कर्म वशम् प्रयुङ्क्ते अविद्यया आत्मनि उपधीयमाने ।
प्रीतिःन यावत् मयि वासुदेवे न मुच्यते देह योगेन तावत् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	४.	इस प्रकार	प्रीतिःन	१२.	प्रेम नहीं होता
मनः	५.	मन और	यावत्	९.	जब तक
कर्म वशम्	६.७.	कर्म के वश में	मयि वासुदेवे	१०.११.	मुझ वासुदेव में
प्रयुङ्क्ते	८.	रहता है	न मुच्यते	१६.	नहीं मुक्त होता
अविद्यया आत्मनि	१.२.	अज्ञान से आत्मा का	देह योगेन	१४.१५.	शरीर के सम्बन्ध से
उपधीयमाने ।	३.	आवरण हो जाने पर	तावत् ॥	१३.	तब तक

श्लोकार्थ—अज्ञान से आत्मा का आवरण हो जाने पर इस प्रकार मन और कर्म के वश में रहता है । जब-तक मुझ वासुदेव में प्रेम नहीं होता तब-तक शरीर के सम्बन्ध से मुक्त नहीं होता है ॥

सप्तमः श्लोकः

यदा न पश्यत्ययथा गुणेहां स्वार्थे प्रमत्तः सहसा विपश्चित् ।
गतस्मृतिर्विन्दति तत्र तापानासाद्य मैथुन्यमगारमज्ञः ॥७॥

पदच्छेद— यदा न पश्यति अयथा गुण ईहाम् स्वार्थे प्रमत्तः सहसा विपश्चितः ।
गतः स्मृतिः विन्दति तत्र तापान् आसाद्य मैथुन्यम् अगारम् अज्ञः ॥

शब्दार्थ—

यदा	३.	जब	गत	११.	रहित
न	८.	नहीं	स्मृतिः	१०.	आत्म स्वरूप के स्मरण से
पश्यति	९.	देखता है (तब)	विन्दति	१८.	प्राप्त करता है
अयथा	७.	मिथ्या	तत्र	१६.	वहाँ
गुण ईहाम्	६.	इन्द्रियों की चेष्टाओं को	तापान्	१७.	कष्टों को
स्वार्थे	१.	स्वार्थ के विषय में	आसाद्य	१५.	पाकर
प्रमत्तः	२.	प्रमादी (मनुष्य)	मैथुन्यम्	१३.	मैथुन सुख वाले
सहसा	५.	अचानक	अगारम्	१४.	घर को
विपश्चित् ।	४.	विवेकी होकर	अज्ञः ॥	१२.	अज्ञानी पुरुष

श्लोकार्थ—स्वार्थ के विषय में प्रमादी मनुष्य जब विवेकी होकर अचानक इन्द्रियों की चेष्टाओं को मिथ्या नहीं देखता है [तब आत्मस्वरूप के स्मरण से रहित अज्ञानी पुरुष मैथुन सुखवाले घर को पाकर वहाँ कष्टों को प्राप्त करता है ॥

अष्टमः श्लोकः

पुंसः स्त्रिया मिथुनीभावमेतं तयोर्मिथो हृदयग्रन्थिमाहुः ।
अतो गृहक्षेत्रसुताप्तवित्तैर्जनस्य मोहोऽयमहं ममेति ॥८॥

पदच्छेद— पुंसः स्त्रिया मिथुनीभावम् एतम् तयोः मिथः हृदयग्रन्थिम् आहुः ।
अतः गृहक्षेत्र सुतआप्त वित्तैः जनस्य मोहः अयम् अहम् मम इति ॥

शब्दार्थ—

पुंसः	१.	पुरुष और	अतः	९.	इसलिये
स्त्रिया	२.	स्त्री	गृहक्षेत्र	११.	घर अधिकार
मिथुनी-भाव	५.	संयोग रूप को	सुत-आप्त	१२.	पुत्र सम्बन्ध और
एतम्	४.	इस	वित्तैः	१३.	धन के कारण
तयोः मिथः	३.	उन दोनों के परस्पर	जनस्य	१०.	मनुष्य को
हृदय	६.	हृदय की	मोहः	१६.	मोह होता है
ग्रन्थिम्	७.	ग्रन्थि	अयम्	१५.	यह
आहुः ।	८.	कहते हैं	अहम् मम इति ॥	१४.	मैं और मेरा इस प्रकार का

श्लोकार्थ—पुरुष और स्त्री उन दोनों के परस्पर इस संयोग रूप को हृदय की ग्रन्थि कहते हैं । इसीलिये मनुष्य को घर-अधिकार-पुत्र-सम्बन्ध और धन के कारण मैं और मेरा इस प्रकार का यह मोह होता है ॥

नवमः श्लोकः

यदा मनोहृदयग्रन्थिरस्य कर्मानुबद्धो दृढ आश्लथेत ।
तदा जनः सम्परिवर्ततेऽस्माद् मुक्तः परं यात्यतिहाय हेतुम् ॥६॥

पदच्छेद— यदा मनः हृदय ग्रन्थिः अस्य कर्म अनुबद्धः दृढः आश्लथेत ।
तदा जनः सम्परिवर्तते अस्माद् मुक्तः परं याति अतिहाय हेतुम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	तदा	१०.	तब
मनः	६.	मन रूप	जनः	११.	मनुष्य
हृदय	७.	हृदय की	सम्परिवर्तते	१३.	निवृत्त हो जाता है (और)
ग्रन्थि	८.	ग्रन्थि	अस्माद्	१२.	इस मिथुनी भाव से
अस्य	२	इस मनुष्य की	मुक्तः	१६.	मुक्ति पाकर
कर्म	३.	कर्मों के द्वारा	परम	१७.	परमात्मा के परमपद को
अनुबद्धः	५.	बंधी हुई	याति	१८.	प्राप्त करता है
दृढ	४.	मजबूती के	अतिहाय	१५.	छोड़कर
आश्लथेत ।	१.	शिथिल हो जाती है	हेतुम् ॥	१४.	अहंकार को

श्लोकार्थ—जब इस मनुष्य की कर्मों के द्वारा बंधी हुई मनरूप हृदय की ग्रन्थि शिथिल हो जाती है। तब मनुष्य इस मिथुनी भाव से निवृत्त हो जाता है और अहंकार को छोड़कर मुक्ति पाकर परमात्मा के परमपद को प्राप्त करता है ॥

दशमः श्लोकः

हंसे गुरौ मयि भक्त्यानुवृत्त्या वितृष्णया द्वन्द्वतितिक्षया च ।
सर्वत्र जन्तोर्व्यसनावगत्या जिज्ञासया तपसेहानिवृत्त्या ॥१०॥

पदच्छेद— हंसे गुरौ मयि भक्त्या अनुवृत्त्या वितृष्णया द्वन्द्व तितिक्षया च ।
सर्वत्र जन्तोः व्यसन अवगत्या जिज्ञासया तपसा ईहा निवृत्त्या ॥

शब्दार्थ—

हंसे	१.	आत्मारूप	सर्वत्र	९.	सब जगह
गुरौ	३.	गुरू की	जन्तोः	१०.	प्राणी को
मयि	२.	मुक्त	व्यसन	११.	दुःख है
भक्त्या	४.	भक्ति से	अवगत्या	१२.	इसको जानने से
अनुवृत्त्या	५.	तत्परता से	जिज्ञासया	१३.	आत्म स्वरूप की जिज्ञासा से
वितृष्णया	६.	तृष्णा छोड़ देने से	तपसा	१४.	तपस्या से
द्वन्द्व तितिक्षया	७.८.	सुख दुःख को सहने से	ईहा	१६.	सकाम कर्म के
च	१५.	और	निवृत्त्या ॥	१७.	त्याग से (मुक्ति होती है।

श्लोकार्थ—आत्म रूप मुक्त गुरु की भक्ति से, तत्परता से तृष्णा छोड़ देने से, सुख-दुःख को सहने से सब जगह प्राणी को दुःख है। इसको जानने से आत्म स्वरूप को जिज्ञासा से, तपस्या से और सकाम कर्म के त्याग से मुक्ति होती है ॥

एकादशः श्लोकः

मत्कर्मभिर्मत्कथया च नित्यं मद्देवसङ्गाद् गुणकीर्तनान्मे ।
निर्वैरसाम्योपशमेन पुत्रा जिहासया देहगेहात्मबुद्धेः ॥११॥

पदच्छेद— मत् कर्मभिःमत् कथया च नित्यम् मत् देव सङ्गात् गुणकीर्तनात् मे ।
निर्वैर साम्य उपशमेन पुत्राः जिहासया देह गेह आत्मबुद्धेः ॥

शब्दार्थ—

मत्	२. मेरी	निर्वैर	११. वैर भाव के त्याग से
कर्मभिः	३. प्रसन्नता के लिये	साम्यः	१२. समता और
मत्	४ मेरी	उपशमेन	१३. शान्ति से (तथा)
कथया	५. कथायें कहने से	पुत्राः	१. हे पुत्र
च नित्यम्	६. और सदैव	जिहासया	१८. छोड़ने की इच्छा से मुक्ति होती है
मत् देव	७. मुझे ही देवता मानने वाले लोगों का	देह	१४. शरीर और
सङ्गात्	८. साथ करने से	गेह	१५. घर के प्रति
गुणकीर्तनात्	१०. गुणों का कीर्तन करने से	आत्म	१६. आत्मा की
मे ।	९. मेरे	बुद्धेः	१७. आसक्ति को

श्लोकार्थ—हे पुत्रों ! मेरी प्रसन्नता के लिये मेरी कथायें कहने से और सदैव मुझे ही देवना मानने वाले लोग का साथ करने से मेरे गुणों का कीर्तन करने से, वैर-भाव के त्याग से, समता और शान्ति से तथा शरीर और घर के प्रति आत्मा की आसक्ति को छोड़ने की इच्छा से मुक्ति से होती है ॥

द्वादशः श्लोकः

अध्यात्मयोगेन विविक्तसेवया प्राणेन्द्रियात्माभिजयेन सध्र्यक् ।
सच्छ्रद्धया ब्रह्मचर्येण शश्वद् असम्प्रमादेन यमेन वाचाम् ॥१२॥

पदच्छेद— अध्यात्म योगेन विविक्त सेवया प्राणेन्द्रिय आत्म अभिजयेन सध्र्यक् ।
सत् श्रद्धया ब्रह्मचर्येण शश्वद् असम्प्रमादेन यमेन वाचाम् ॥

शब्दार्थ—

अध्यात्म	१. अध्यात्म शास्त्र का	सत्	९. सन्तों के प्रति
योगेन	२. अभ्यास करने से	श्रद्धया	१०. श्रद्धा भाव रखने से
विविक्त	३. एकान्त में	ब्रह्मचर्येण	११. ब्रह्मचर्य से
सेवया	४. रहने से	शश्वद्	१२. निरन्तर
प्राणेन्द्रिय	५. प्राण इन्द्रिय और	असम्	१३. कर्तव्य का पालन
आत्म	६. मन को	प्रमादेन	१४. करने से (और)
अभिजयेन	७. वश में करने से	यमेन	१६. संयम से (मुक्ति होती है)
सध्र्यक् ।	८. भली भांति	वाचाम् ॥	१५. वाणी के

श्लोकार्थ—अध्यात्म शास्त्र का अभ्यास करने से, एकान्त में रहने से, प्राग-इन्द्रिय और मन को वश में करने से भली-भांति सन्तों के प्रति श्रद्धा भाव रखने से, ब्रह्मचर्य से, निरन्तर कर्तव्य का पालन करने से और वाणी के संयम से मुक्ति होती है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

सर्वत्र मद्भावविचक्षणेन ज्ञानेन विज्ञानविराजितेन ।
योगेन धृत्युद्यमसत्त्वयुक्तो लिङ्गं व्यपोहेत्कुशलोऽहमाख्यम् ॥१३॥

पदच्छेद—

सर्वत्र मत् भाव विचक्षणेन ज्ञानेन विज्ञान विराजितेन ।
योगेन धृति उद्यम सत्त्वयुक्तः लिङ्गम् व्यपोहेत् कुशलः अहम् आख्यम् ॥

शब्दार्थ—

सर्वत्र	१.	सभी जगह	धृति	९.	धैर्य से
मत्-भाव	२.	मेरी भावना	उद्यम	१०.	प्रयत्न (और)
विचक्षणेन	३.	करने से	सत्त्वयुक्तः	११.	विवेक के युक्त
ज्ञानेन	६.	ज्ञान से (और)	लिङ्गम्	१४.	सूक्ष्म शरीर को
विज्ञान	४.	अनुभव से	व्यपोहेत्	१५.	छोड़ सकता है
विराजितेन ।	५.	युक्त	कुशलः	१२.	चतुर प्राणी
योगेन	७.	समाधि से	अहम् आख्यम् ॥	१३.	अहंकार रूप

श्लोकार्थ—सभी जगह मेरी-भावना करने से अनुभव से युक्त ज्ञान से और विवेक से युक्त चतुरप्राणी अहंकार रूप सूक्ष्म शरीर को छोड़ सकता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

कर्माशयं हृदयग्रन्थिबन्धमविद्ययाऽऽसादितमप्रमत्तः ।
अनेन योगेन यथोपदेशं सम्यग्व्यपोह्योपरमेत योगात् ॥१४॥

पदच्छेद—

कर्म आशयम् हृदय ग्रन्थिबन्धम् अविद्यया आसादितम् अप्रमत्तः ।
अनेन योगेन यथा उपदेशम् व्यपोह्य उपरमेत योगात् ॥

शब्दार्थ—

कर्म आशयम्	४.५.	कर्मों का स्थान	अनेन योगेन	११.१२.	इस उपाय से
हृदय	६.	हृदय की	यथा	१०.	अनुसार
ग्रन्थि	७.	गांठ के	उपदेशम्	९.	उपदेश के
बन्धम्	८.	बन्धन को	सम्यक्	१३.	अच्छी प्रकार से
अविद्यया	२.	अज्ञान से	व्यपोह्य	१४.	दूर करके (तदनन्तर)
आसादितम्	३.	प्राप्त हुये	उपरमेत	१६.	छोड़ देता है
अप्रमत्तः ।	१.	विवेकी मनुष्य	योगात् ॥	१५.	उस उपाय को भी

श्लोकार्थ—विवेकी मनुष्य अज्ञान से प्राप्त हुये कर्मों का स्थान हृदय की गांठ के बन्धन को उपदेश के अनुसार इस उपाय से अच्छी प्रकार से दूर करके तदनन्तर उस उपाय को भी छोड़ देता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

पुत्रांश्च शिष्यांश्च नृपो गुरुर्वा मल्लोककामो मदनुग्रहार्थः ।
इत्थं विमन्युरनुशिष्यादतज्ज्ञान् न योजयेत्कर्मसु कर्ममूढान् ।
कं योजयन्मनुजोऽर्थं लभेत निपातयन्नष्टदृशं हि गर्ते ॥१५॥

पदच्छेद—

पुत्रान् च शिष्यान् च नृपः गुरुः वा मत् लोक कामः मद् अनुग्रहार्थः ।
इत्थम् विमन्युः अनु शिष्याद् अतज्ज्ञान् न योजयेत् कर्मसु कर्ममूढान् ।
कं योजयन् मनुजः अर्थम् लभेत निपातयन् नष्ट दृशम् हि गर्ते ॥

शब्दार्थ—

पुत्रान्	१३. पुत्रों को	न	११. नहीं
च शिष्यान्	१४. और शिष्यों को	योजयेत्	२२. लगाना चाहिये
च	१८. तथा	कर्मसु	२१. कर्मों में (नहीं)
नृपः	६. राजा	कर्म	१९. कर्मों से
गुरुः	८. गुरु	मूढान्	२० मूर्ख लोगों को
वा	७. अथवा	क.	२५. किस
मत् लोक	३.४. मेरे लोक की	योजयन्	२४. कर्मों में लगाता हुआ
कामः	५. कामना से	मनुजः	२३. मनुष्य
मद्	१. मेरी	अर्थम्	२६ पुरुषार्थ को
अनुग्रहार्थः ।	२. कृपा के लिये	लभेत	२७. प्राप्त करता है (किन्तु)
इत्थम्	१६. इस प्रकार	निपातयन्	३२. गिराता है
विमन्युः	९. क्रोध रहित होकर	नष्ट	२९. रहित (उस प्राणी को वह)
अनुशिष्याद्	१७. उपदेश देवे	दृशम्	२८. विवेक से
अतद्	१०. तत्त्व को	हि	३१. ही
ज्ञान्	१२. जानने वाले	गर्ते ॥	३०. गड्ढे में

श्लोकार्थ—मेरी कृपा के लिये मेरे लोक की कामना से राजा अथवा गुरु क्रोध रहित होकर तत्त्व को जानने वाले पुत्रों को और शिष्यों को इस प्रकार उपदेश देवे। तथा कर्मों से मूर्ख लोगों को कर्मों में नहीं लगाना चाहिये। मनुष्य कर्मों में लगाता हुआ किस पुरुषार्थ को प्राप्त करता है। किन्तु विवेक से रहित उस प्राणी को वह गड्ढे में ही गिराता है ॥

षोडशः श्लोकः

लोकः स्वयं श्रेयसि नष्टदृष्टिर्योऽर्थान् समीहेत निकामकामः।
अन्योन्यवैरः सुखलेशहेतोरनन्तदुःखं च न वेद मूढः ॥१६॥

पदच्छेद— लोकः स्वयम् श्रेयसि नष्ट दृष्टिः यः अर्थान् समीहेत निकाम कामः।
अन्योन्य वैरः सुखलेश हेतोः अनन्त दुःखम् च न वेद मूढः ॥

शब्दार्थ—

लोकः स्वयम्	५. मनुष्य अपने आप	अन्योन्य वैरः	१०.११. परस्पर वैर भाव रखने वाला
श्रेयसि	१. परम कल्याण के प्रति	सुख	१४. सुख के
नष्ट	३. हीन	लेश	१३ थोड़े
दृष्टिः	२. विवेक	हेतोः अनन्त दुःखम्	१५.१६. कारण आपार दुःख को
यः	४. जो		
अर्थान् समीहेत	८.९. पुरुषार्थ को चाहता है	च न वेद	१७.१८. नहीं समझ रहा है
निकाम कामः।	६.७. अत्यन्त कामना से	मूढः ॥	१२. वह अज्ञानी

श्लोकार्थ—परम कल्याण के प्रति विवेक हीन जो मनुष्य अपने-आप अत्यन्त कामना से पुरुषार्थ को चाहता है परस्पर वैर-भाव रखने वाला वह अज्ञानी थोड़े से सुख के कारण अपार दुःख को नहीं समझ रहा है ॥

सप्तदशः श्लोकः

कस्तं स्वयं तदभिज्ञो विपश्चिद् अविद्यायामन्तरे वर्तमानम्।
दृष्ट्वा पुनस्तं सघृणः कुबुद्धिं प्रयोजयेदुत्पथगं यथान्धम् ॥१७॥

पदच्छेद— कः तम् स्वयम् तद् अभिज्ञः विपश्चित् अविद्यायाम् अन्तरे वर्तमानम्।
दृष्ट्वा पुनः तम् सघृणः कुबुद्धिम् प्रयोजयेत् उत्पथगम् यथा अन्धम् ॥

शब्दार्थ—

कः	२.	कौन	दृष्ट्वा	१२.	देखकर भी
तम्	१०.	इस प्रकार के	पुनः तम्	१३.	फिर से उसे
स्वयम्	८.	अपने आप	सघृणः	४.	दयालु (एवम्)
तद् अभिज्ञः	१.	उसे जानने वाला	कुबुद्धिम्	११.	दुष्ट बुद्धि मनुष्य को
विपश्चित्	३.	ज्ञानी पुरुष	प्रयोजयेत्	१४.	प्रेरित करेगा
अविद्यायाम्	५.	अज्ञान के	उत्पथगम्	९.	उलटे रास्ते पर चलने वाले
अन्तरे	६.	बीच में	यथा	१५.	जैसे
वर्तमानम्।	७.	रहने वाले (तथा)	अन्धम् ॥	१६.	अन्धे मनुष्य को (उलटी राह पर जाने दें)

श्लोकार्थ—उसे जानने वाला कौन ज्ञानी पुरुष दयालु एवम् अज्ञान के बीच में रहने वाले तथा अपने आप उलटे रास्ते पर चलने वाले दुष्ट बुद्धि मनुष्य को देखकर भी फिर से उसे प्रेरित करेगा। जैसे अन्धे मनुष्य को उल्टे राह पर जाने दें ॥

अष्टादशः श्लोकः

गुरुर्न स स्यात्स्वजनो न स स्यात् पिता न स स्याज्जननी न सा स्यात् ।
दैवं न तत्स्यान्न पतिश्च स स्यान्न मोचयेद्यः समुपेतमृत्युम् ॥१८॥

पदच्छेद— गुरुः न स स्यात् स्वजनः न स स्यात् पिता न स स्यात् जननी न सा स्यात् । दैवम् न तत् स्यात् न पतिः च स स्यात् न मोचयेत् यः समुपेत मृत्युम् ॥

शब्दार्थ—

गुरुः न	५.	गुरु नहीं	स्यात्	१५.	हो सकती है
स	४.	वह	दैवम् न	१७.	इष्ट देव नहीं
स्यात्	६.	हो सकता है	तत्	१६.	वह
स्वजनः न	८.	सम्बन्धी नहीं	स्यात्	१८.	हो सकता है
स	७.	वह	न	२१.	नहीं
स्यात्	९.	हो सकता है	पतिः च स	२०.१९.	पति और वह
पिता न स	११.१०.	पिता नहीं वह	स्यात् न	२२.	हो सकता है
स्यात्	१२.	हो सकता है	मोचयेत्	३.	नहीं छुड़ाता है
जननी न	१४.	माता नहीं	यः	१.	जो मनुष्य जानकर भी
सा	१३.	वह	समुपेत मृत्युम् ॥	२.	उपस्थित हुये मृत्यु पाश से

श्लोकार्थ—जो मनुष्य जान कर भी उपस्थित हुये मृत्यु पाश से नहीं छुड़ाता है, वह गुरु नहीं हो सकता है। वह सम्बन्धी नहीं हो सकता है। वह पिता नहीं हो सकता है। वह माता नहीं हो सकती है। वह इष्ट देव नहीं हो सकता है। और वह पति नहीं हो सकता है॥

एकोनविंशः श्लोकः

इदं शरीरं मम दुर्विभाव्यं सत्त्वं हि मे हृदयं यत्र धर्मः ।
पृष्ठे कृतो मे यदधर्म आराद् अतो हि मामृषभं प्राहुरार्याः ॥१९॥

पदच्छेद—इदम् शरीरम् मम दुर्विभाव्यम् सत्त्वम् हि मे हृदयम् यत्र धर्मः । पृष्ठे कृतः मे यद् अधर्मः आरात् अतः हि माम् ऋषभम् प्राहुः आर्याः ॥

शब्दार्थ—

इदम्	१.	यह	मे	९	अपने से
शरीरम्	३.	शरीर	यद्	८.	क्योंकि (मैंने)
मम	२.	मेरा	अधर्मः	१०.	अधर्म को
दुर्विभाव्यम्	४.	अज्ञात रहस्य वाला है	आरात्	११.	बहुत दूर
सत्त्वम् हि	५.	सत्त्वगुण ही	अतः हि	१३.	इसीलिये ही
मे हृदयम्	६.	मेरा हृदय है	माम्	१५	मुझे
यत्र धर्मः ।	७.	जिसमें धर्म का वास है	ऋषभम् प्राहुः	१६.	ऋषभ कहते हैं
पृष्ठे कृतः	१२.	पीछे कर दिया	आर्याः ॥	१४.	श्रेष्ठ जन

श्लोकार्थ—यह मेरा शरीर अज्ञात रहस्य वाला है। सत्त्व गुण ही मेरा हृदय है। जिसमें धर्म का वास है। क्योंकि मैंने अपने से अधर्म को बहुत दूर पीछे कर दिया है। इसलिये ही श्रेष्ठ जन मुझे ऋषभ कहते हैं॥

विंशः श्लोकः

तस्माद्भवन्तो हृदयेन जाताः सर्वे महीयांसममुं सनाभम् ।
अक्लिष्टबुद्ध्या भरतं भजध्वं शुश्रूषणं तद्भरणं प्रजानाम् ॥२०॥

पदच्छेद— तस्मात् भवन्तः हृदयेन जाताः सर्वे महीयांसम् अमुम् सनाभम् ।
अक्लिष्ट बुद्ध्या भरतम् भजध्वम् शुश्रूषणम् तद् भरणम् प्रजानाम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात् भवन्तः	१.२. इसलिये आप लोग मेरे	अक्लिष्ट बुद्ध्या	१०.११. निष्कपट भाव से
हृदयेन जाताः	४.५. शुद्ध सत्त्वमन से उत्पन्न हुये हो	भरतम्	९. भरत की
सर्वे	३. सभी	भजध्वम्	१२. सेवा करो
महीयांसम्	८. बड़े भाई	शुश्रूषणम् तद्	१४.१३. सेवा ही क्योंकि यह
अमुम् सनाभम् ।	६.७. इस सहोदर	भरणम् प्रजानाम् ॥	१६.१५. पालन है प्रजाओं का

श्लोकार्थ——इसलिये आपलोग सभी मेरे शुद्ध सत्त्वमन से उत्पन्न हुये हो । इस सहोदर बड़े भाई भरत की निष्कपट भाव से सेवा करो । क्योंकि यह सेवा ही प्रजाओं का पालन है ।

एकविंशः श्लोकः

भूतेषु वीरुद्भ्य उदुत्तमा ये सरीसृपास्तेषु सबोधनिष्ठाः ।
ततो मनुष्याः प्रमथास्ततोऽपि गन्धर्वसिद्धा विबुधानुगा ये ॥२१।

पदच्छेद— भूतेषु वीरुद्भ्यः उदुत्तमा ये सरीसृपाः तेषु सबोध निष्ठाः ।
ततः मनुष्याः प्रमथाः ततः अपि गन्धर्व सिद्धाः विबुधा अनुगाः ये ॥

शब्दार्थ——

भूतेषु	१. चेतन प्राणियों में	ततः	९. उनसे भी
वीरुद्भ्यः	२. वृक्ष और उससे	मनुष्याः	१०. मनुष्य और उनसे
उदुत्तमाः	५. अधिक उत्तम हैं	प्रमथाः	११. (शिव के) प्रमथगण
ये	३. जो	ततः	१२. उनसे
सरीसृपाः	४. रेंगने वाले प्राणी हैं वे	अपि	१३. भी
तेषु सबोध	६.७. उनमें भी ज्ञान में	गन्धर्व सिद्धाः	१४.१५. गन्धर्व और उनसे सिद्ध (तथा)
निष्ठाः ।	८ रहने वाले पशु तथा	विबुधा अनुगाः	१६. देवताओं के सेवक
		ये ॥	१७. जो किन्नर इत्यादि हैं (वे अधिक उत्तम हैं)

श्लोकार्थ——चेतन प्राणियों में वृक्ष और उससे जो रेंगने वाले प्राणी हैं वे अधिक उत्तम हैं । उनमें भी ज्ञान में रहने वाले पशु तथा उनसे भी मनुष्य और उनसे प्रमथगण, उनसे भी गन्धर्व और सिद्ध तथा देवताओं के सेवक जो किन्नर इत्यादि हैं अधिक उत्तम हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

देवासुरेभ्यो मघवत्प्रधाना दक्षादयो ब्रह्मसुतास्तु तेषाम् ।
भवः परः सोऽथ विरिञ्चवीर्यः स मत्परोऽहं द्विजदेवदेवः ॥२२॥

पदच्छेद— देव असुरेभ्यो मघवत् प्रधानाः दक्ष आदयः ब्रह्मसुताः तु तेषाम् ।
भवः परः सः अथ विरिञ्च वीर्यः सः मत् परः अहम् द्विज देवदेवः ॥

शब्दार्थ—

देव	२.	देवता और उनसे	भवः	११.	भगवान् शंकर
असुरेभ्यो	१.	असुर उनसे	परः	१२.	श्रेष्ठ हैं
मघवत्	३.	इन्द्र और उससे	सः	१४.	वे
प्रधानाः	८.	प्रधान हैं	अथ	१३.	क्योंकि
दक्ष आदयाः	४.५.	दक्ष इत्यादि दस	विरिञ्च वीर्यः	१५.१६.	ब्रह्मा जी से उत्पन्न हुये हैं
ब्रह्म	६.	ब्रह्मा जी के	सः	१७.	वे ब्रह्मा जी भी
सुताः	७.	पुत्र	मत् परः	१८.	मेरी सेवा करते हैं (किन्तु)
तु	९.	तथा	अहम् द्विज	१९.	मैं ब्राह्मणों को
तेषाम्	१०.	उनमें भी	देव देवः ॥	२०.	देवता मानता हूँ

श्लोकार्थ—असुर, उनसे देवता और उनसे इन्द्र और उनसे दक्ष इत्यादि दस ब्रह्मा जी के पुत्र प्रधान हैं। तथा उनमें भी भगवान् शंकर श्रेष्ठ हैं। क्योंकि वे ब्रह्मा जी से उत्पन्न हुये हैं। वे ब्रह्मा जी भी मेरी सेवा करते हैं। किन्तु मैं ब्राह्मणों को देवता मानता हूँ ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

न ब्राह्मणैस्तुलये भूतमन्यत् पश्यामि विप्राः किमतः परं तु ।
यस्मिन्नृभिः प्रहुतं श्रद्धयाहमश्नामि कामं न तथाग्निहोत्रे ॥२३॥

पदच्छेद—न ब्राह्मणैः तुलये भूतम् अन्यत् पश्यामि विप्राः किमतः परं तु ।
यस्मिन् नृभिः प्रहुतम् श्रद्धयाअहम् अश्नामि कामम् न तथा अग्निहोत्रे ॥

शब्दार्थ—

न	५.	नहीं	यस्मिन्	१०.	जिनके मुख में
ब्राह्मणैः	२.	ब्राह्मणों से	नृभिः	११.	मनुष्य के द्वारा
तुलये	६.	तुलना कर सकता हूँ	प्रहुतम्	१२.	दिये गये अन्न को
भूतम्	४.	प्राणी की	श्रद्धया अहम्	१३.	श्रद्धा पूर्वक मैं
अन्यत्	३.	और किसी	अश्नामि	१५.	खाता हूँ
पश्यामि	९.	देखता हूँ	कामम्	१४.	यथेच्छ रूप से
विप्राः	१.	हे विप्रो मैं	न	१८.	नहीं ग्रहण करता हूँ
किम् अतः	७.	किसी को ब्राह्मणों से	तथा	१६	उस प्रकार से
परम् तु	८.	श्रेष्ठ नहीं	अग्निहोत्रे ॥	१७.	अग्नि में डाली गई आहुति को

श्लोकार्थ—हे विप्र ! मैं ब्राह्मणों से और किसी प्राणी की नहीं तुलना कर सकता हूँ। किसी को ब्राह्मणों से श्रेष्ठ नहीं देखता हूँ। जिनके मुख में मनुष्यों के द्वारा दिये गये अन्न को मैं श्रद्धा पूर्वक यथेच्छ रूप से खाता हूँ। उस प्रकार अग्निहोत्र में डाली गई आहुति को नहीं ग्रहण करता हूँ।

चतुर्विंशः श्लोकः

धृता तनूरुशती मे पुराणी येनेह सत्त्वं परमं पवित्रम् ।
शमो दमः सत्यमनुग्रहश्च तपस्तितिक्षानुभवश्च यत्र ॥२४॥

पदच्छेद— धृताः तनूः उशतीः मे पुराणीः येन इह सत्त्वम् परमम् पवित्रम् ।
शमः दमः सत्यम् अनुग्रहः च तपः तितिक्षा अनुभवः च यत्र ॥

शब्दार्थ—

धृताः	७.	धारण कर रक्खा है	पवित्रम् ।	१०.	पवित्र
तनूः	३.	शरीर में	शमः दमः	१२.	शान्ति संयम
उशती	५.	सुन्दर	सत्यम्	१३.	सत्य
मे	४.	मेरी	अनुग्रहः च	१४.	कृपा और
पुराणी	६.	पुरातन वेद वाणी को	तपः	१५.	तपस्या
येन	२.	जिन्होंने (अपने)	तितिक्षा	१६.	सहनशीलता
इह	१.	इस लोक में	अनुभवः	१८.	अनुभव रहते हैं
सत्त्वम्	११	सत्त्वादि आठ गुण	च	१७.	और
परमम्	९.	अत्यन्त	यत्र ॥	८.	जिनमें

श्लोकार्थ—इस लोक में जिन्होंने अपने शरीर से मेरी सुन्दर पुरातन वेद वाणी को धारण कर रक्खा है । जिनमें अत्यन्त पवित्र सत्त्वादि आठ गुण, शान्ति, संयम, कृपा और तपस्या, सहनशीलता और अनुभव रहते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

मत्तोऽप्यनन्तात्परतः परस्मात् स्वर्गापवर्गाधिपतेर्न किञ्चित् ।
येषां किमु स्यादितरेण तेषामकिञ्चनानां मयि भक्तिभाजाम् ॥२५॥

पदच्छेद—मत्तः अपि अनन्तात् परतः परस्मात् स्वर्ग अपवर्ग अधिपतेः न किञ्चित् ।
येषाम् किमु स्यात् इतरेण तेषाम् अकिञ्चनानाम् मयि भक्ति भाजाम् ॥

शब्दार्थ—

मत्तः	४.	मुझ	येषाम्	७.	जो निर्लिप्त ब्राह्मण लोग
अपि	६.	भी	किमु	१५.	क्या प्रयोजन
अनन्तात्	५.	अनन्त से	स्यात्	१६.	हो सकता है
परतः	१.	ब्रह्मा जी से भी	इतरेण	१४.	दूसरे राज्यादि से
परस्मात् स्वर्ग	२.	श्रेष्ठ स्वर्ग और	तेषाम्	१२.	उन
अपवर्ग अधिपतेः	३.	मोक्ष के स्वामी	अकिञ्चनानाम्	१३.	निर्धन ब्राह्मणों को
न	९.	नहीं (चाहते हैं अतः)	मयि भक्ति	१०.	केवल मेरे ये भक्ति भाव
किञ्चित् ।	८.	कुछ	भाजाम् ॥	११.	रखने वाले

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी से भी श्रेष्ठ स्वर्ग और मोक्ष के स्वामी मुझ अनन्त से भी जो निर्लिप्त ब्राह्मण लोग कुछ नहीं चाहते हैं, अतः केवल मुझमें भक्ति-भाव रखने वाले उन निर्धन ब्राह्मणों को दूसरे राज्यादि से क्या प्रयोजन हो सकता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

सर्वाणि मद्धिष्ण्यतया भवद्भिश्चराणि भूतानि सुता ध्रुवाणि।
सम्भावितव्यानि पदे पदे वो विविक्तदृग्भिस्तदु हार्हणं मे ॥२६॥

पदच्छेद— सर्वाणि मद्धिष्ण्यतया भवद्भिः चराणि भूतानि सुताः ध्रुवाणि।
सम्भावितव्यानि पदे पदे वां विविक्त दृग्भिः तदु ह अर्हणम् मे ॥

शब्दार्थ—

सर्वाणि	३.	सम्पूर्ण	पदे	१०.	पद
मद्धिष्ण्यतया	६.	मेरा ही बुद्धि के द्वारा	पदे	११.	पद पर
भवद्भिः	२.	आप लोग	वा	१२.	उनकी
चराणि	४.	चराचर	विविक्त	७.	शुद्ध
भूतानि	५.	प्राणियों को	दृग्भिः	९.	समझ कर
सुताः	१.	हे पुत्रों	तदुह	१४.	यही
ध्रुवाणि।	८.	शरीर	अर्हणम्	१६.	सच्ची पूजा है
सम्भावितव्यानि	१३.	सेवा करो	मे ॥	१५.	मेरी

श्लोकार्थ—हे पुत्रों! आप लोग सम्पूर्ण चराचर प्राणियों को मेरा ही, बुद्धि के द्वारा शुद्ध शरीर समझ कर पद-पद पर उनकी सेवा करो यही मेरी सच्ची पूजा है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

मनोवचोदृक्करणेहितस्य साक्षात्कृतं मे परिबर्हणं हि।
विना पुमान् येन महाविमोहात् कृतान्तपाशान्न विमोक्तुमीशेत् ॥२७॥

पदच्छेद—मनः वचः दृक् करण ईहितस्य साक्षात् कृतम् मे परिबर्हणम् हि।
विना पुमान् येन महा विमोहात् कृतान्त पाशात् न विमोक्तुम् ईशेत् ॥

शब्दार्थ—

मनः वचः	१.२.	मन से वचन से	विना पुमान्	११.१२.	बिना मनुष्य
दृक् करण	३.४.	दृष्टि से (और) इन्द्रियों की	येन	१०.	जिसके
ईहितस्य	५.	चेष्टाओं का	महा विमोहात्	१३.१४.	महान् मोहमय
साक्षात्	६.	साक्षात्	कृतान्त	१५.	काल के
कृतम् मे	७.	फल मेरी	पाशात्	१६.	पाश से (अपने को)
परिबर्हणम्	९.	पूजा है	न	१७.	नहीं
हि।	८.	ही	विमोक्तुम् ईशेत ॥	१८.१९.	छुड़ा सकता है

श्लोकार्थ—मन से, वचन से, दृष्टि से और इन्द्रियों की चेष्टाओं का साक्षात् फल मेरी ही पूजा है। जिसके बिना मनुष्य महान् मोहमय काल के पाश से अपने को नहीं छुड़ा सकता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—एवमनुशास्यात्मजान् स्वयमनुशिष्टानपि लोकानुशासनार्थं महानुभावः परमसुहृद्भगवानृषभापदेश उपशमशीलानामुपरतकर्मणां महामुनीनां भक्तिज्ञानवैराग्यलक्षणं पारमहंस्यधर्ममुपशिक्षमाणः स्वतनयशतज्येष्ठं परमभागवतं भगवज्जनपरायणं भरतं धरणिपालनायाभिषिच्य स्वयं भवन एवोर्वरितशरीरमात्रपरिग्रह उन्मत्त इव गगनपरिधानः प्रकीर्णकेश आत्मन्यारोपिताहवनीयो ब्रह्मावर्तात्प्रवव्राज ॥२८॥

पदच्छेद—एवम् अनुशास्य आत्मजान् स्वयम् अनुशिष्टान् अपि लोक अनुशासनार्थम् महानुभावः परम सुहृद् भगवान् ऋषभ अपदेश उपशमशीलानाम् उपरत कर्मणाम् महामुनीनाम् भक्तिज्ञानवैराग्य लक्षणम् पारमहंस्य धर्मम् उपशिक्षमाणः स्वतनय शत ज्येष्ठम् परम भागवतम् भगवत् जन परायणम् भरतम् धरणि पालनाय अभिषिच्य स्वयम् भवन एव उर्वरित शरीरमात्र परिग्रहः उन्मत्त इव गगन परिधानः प्रकीर्ण केशः आत्मनि आरोपित आहवनीयः ब्रह्मावर्तान् प्रवव्राज ।।

शब्दार्थ—

एवम्	९. इस प्रकार	शत	१२. सौ
अनुशास्य	१०. शिक्षा दी (तदनन्तर)	ज्येष्ठम्	१४. सबसे बड़े
आत्मजान्	८. अपने पुत्रों को	परम भागवतम्	१५. महान् भगवत् भक्त (तथा)
स्वयम्	६. अपने आप	भगवत् जन परायणम्	१६. भक्तों के सेवक
अनुशिष्टान् अपि	७. अत्यन्त शिक्षित होने पर भी	भरतम् धरणि	१७. भरत को पृथ्वी की
लोक अनुशासनार्थम्	५. संसार को शिक्षा देने के लिये	पालनाय	१८ रक्षा के लिये
महानुभावः	१. परम उदार	अभिषिच्य स्वयम्	१९. राज्याभिषेक किया अपने आप
परम सुहृदः	२. परम हितैषी	भवन एव उर्वरित	२८ घर पर ही केवल
भगवान्	४. भगवान् ने	शरीरमात्र परिग्रह	२९ शरीरमात्र धारण करके
ऋषभ अपदेशः	३. ऋषभ नाम वाले	उन्मत्त इव	३०. पागल के समान
उपशमशीलानाम्	२०. शान्ति परायण	गगन	३१. दिगम्बर
उपरत	२२. विरत	परिधानः	३२. वेष में
कर्मणाम्	२१. कर्मों के अनुष्ठान	प्रकीर्ण	३२. बिखेरे हुये
महामुनीनाम्	२३. महामुनियों के	केश	३३. केश
भक्ति-ज्ञान	२४. भक्ति ज्ञान और	आत्मनि	३५. अपने में
वैराग्य लक्षणम्	२५. वैराग्य स्वरूप वाले	आरोपित	३७. लीन करके
पारमहंस्य धर्मम्	२६. परमहंसों के धर्म की	आहवनीय	३६. अग्निहोत्र को
उपशिक्षमाण	२७. शिक्षा देने के लिये	ब्रह्मावर्तान्	३८. ब्रह्मावर्त देश से
स्व	११. अपने	प्रवव्राज ।।	३९. निकल गये
तनय	१३. पुत्रों में		

श्लोकार्थ—परम उदार, परम हितैषी, ऋषभ नाम वाले भगवान् ने संसार को शिक्षा देने के लिये अपने आप अपने पुत्रों को इस प्रकार शिक्षा दी। तदनन्तर अपने सौ पुत्रों में सबसे बड़े महान् भगवत् भक्त तथा भक्तों के सेवक भरत का पृथ्वी की रक्षा के लिये राज्याभिषेक किया और अपने-आप शान्ति-परायण कर्मों के अनुष्ठान से विरत महामुनियों के भक्ति-ज्ञान और वैराग्य स्वरूप वाले परमहंसों के धर्म की शिक्षा देने के लिये घर पर ही केवल शरीर मात्र धारण करके पागल के समान दिगम्बर वेष में केश बिखेरे हुये अपने में अग्निहोत्र को लीन करके ब्रह्मावर्त देश से निकल गये ।।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

जडान्धमूकबधिरपिशाचोन्मादकवदवधूतवेषोऽभिभाष्यमाणोऽपि जनानां गृहीतमौनव्रतस्तूष्णीं बभूव ॥२९॥

पदच्छेद—

जड़ अन्ध मूक बधिर पिशाच उन्मादकवत्; अवधूत वेषः।
अभिभाष्यमाणः अपि जनानाम् गृहीत मौनव्रतः तूष्णीम् बभूव ॥

शब्दार्थ—

जड़	१. मूर्ख	वेषः	९. धारण करके
अन्ध	२. अन्धे	अभिभाष्यमाणः	१३. बुलाने पर
मूक	३. गूंगे	अपि	१४. भी
बधिर	४. बहिरे	जनानाम्	१०. लोगों के
पिशाच	५. पिशाच (और)	गृहीत	११. वेष में
उन्माद	६. पागल के	मौनव्रत	१०. मौनव्रत को
वत्	७. समान	तूष्णीम्	१५. चुप
अवधूत	८. अवधूत	बभूव ॥	१६. रहते थे

श्लोकार्थ—मूर्ख, अन्धे, गूंगे, बहिरे, पिशाच और पागल के समान अवधूत वेष में मौनव्रत को धारण करके लोगों के बुलाने पर भी चुप रहते थे ॥

त्रिंशः श्लोकः

तत्र तत्र पुरग्रामाकरखेटवाटखर्वटशिबिरव्रजघोषसार्थगिरिवनाश्रमादिष्वनुपथमवनिचरापसदैः परिभूयमानो मक्षिकाभिरिव वनगजस्तर्जनताडनावमेहनष्ठीवनग्रावशकृद्रजःप्रक्षेपपूतिवातदुरुक्तैस्तदविगणयन्नेवासत्संस्थान एतस्मिन् देहोपलक्षणे सदपदेश उभयानुभवस्वरूपेण स्वमहिमावस्थानेनासमारोपिताहंममाभिमानत्वादविखण्डितमनाः पृथिवीमेकचरः परिबभ्राम ॥३०॥

पदच्छेद—तत्र तत्र पुर ग्राम आकर खेट वाट खर्वट शिबिर व्रज घोष सार्थ गिरि वन आश्रम आदिषु अनुपथम् अवनिचर अपसदैः परिभूय मानः मक्षिकाभिः इव वन गज तर्जन ताडन अवमेहन ष्ठीवन ग्राव शकृद्रजः प्रक्षेप पूतिवात दुरुक्तैः तद् अविगणयन् एव असत् संस्थान एतस्मिन् देह उपलक्षणे सदपदेशः उभय अनुभव स्वरूपेण स्वमहिमा अवस्थानेन असमारोपित अहम् मम अभिमानत्वाद् अविखण्डितमनाः पृथिवीम् एकचरः परिबभ्राम ॥

शब्दार्थ—

तत्र तत्र	१. वे जहाँ-जहाँ	पूतिवातदुरुक्तैः	१८. अपान वायु और गालियों से
पुर ग्राम आकर	२. नगर गांव खान	तद्	२०. वे उसका
खेटवाट	३. किसानों की बस्ती बगीचा	अविगणयन्	२१. विचार न करते थे
खर्वट शिबिर	४. पहाड़ी गांव सैनिक पड़ाव	एव	२४ ही
व्रज घोष	५. गोशाला अहीरों की बस्ती	असत् संस्थान	२२. मिथ्या आकार वाले
सार्थ गिरि	६. सराय, पर्वत	एतस्मिन् देहः	२३. इस शरीर रूप में
वन आश्रम	७. जंगल आश्रम	उपलक्षणे	२५. दिखाई देने वाले
आदिषु	८. इत्यादि स्थानों में	सद् अपदेशः	२८. सत्य कहलाने वाले
अनुपथम्	९. मार्ग में घूमने लगे	उभय अनुभव	२६. सत्य और असत्य से भिन्न
अवनिचर	१२. पृथ्वी पर घूमने वाले	स्वरूपेण	२७. स्वरूप होने के कारण
अपसदैः	१३. दुष्ट लोग	स्वमहिमा	२९ अपनी महिमा में
परिभूयमानः	१९. तिरस्कार करते थे	अवस्थानेन	३०. प्रतिष्ठित रहते थे
मक्षिकाभिः	११. मक्खियां तंग करती हैं (उसी प्रकार)	असमारोपित	३३. न होने से
इव वनगज	१०. जैसे जंगली हाथी को	अहम् मम	३१. मैं और मेरे का
तर्जन ताड़न	१४. डाट फटकार कर मारते	अभिमानत्वाद्	३२. अहंकार
अवमेहन	१५. पेशाब करते	अविखण्डितमनाः	३४. अखण्ड मन से
ष्ठीवन ग्राव	१६. थूक देते पत्थर मारते	पृथिवीम् एकचरः	३५ पृथ्वी पर अकेले ही
शकृद् रजः प्रक्षेप	१७. विष्ठा और धूल फेंककर	परिबभ्राम ॥	३६. विचरने लगे

श्लोकार्थ—वे जहाँ-जहाँ नगर, गांव, खान, किसानों की बस्ती, बगीचा, पहाड़ी गाँव, सैनिक पड़ाव, गोशाला अहीरों की बस्ती, धर्मशाला, पर्वत, जंगल, आश्रम, इत्यादि स्थानों में मार्ग में घूमने लगे। जैसे जंगली हाथी को मक्खियां तंग करती हैं, उसी प्रकार पृथ्वी पर घूमने वाले दुष्ट लोग डाट-फटकार कर मारते, पेशाब करते, थूक देते, पत्थर मारते, विष्ठा और धूल फेंककर अपान वायु और गालियों से तिरस्कार करते थे। वे उसका विचार नहीं करते थे। मिथ्या आकार वाले इस शरीर रूप में ही दिखाई देने वाले सत्य और असत्य से भिन्न स्वरूप के कारण सत्य कहलाने वाले अपनी महिमा में प्रतिष्ठित रहते थे। मैं और मेरे का अहंकार न होने से अखण्ड मन से पृथ्वी पर अकेले ही विचरने लगे ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

अतिसुकुमारकरचरणोरःस्थलविपुलबाह्वंसगलवदनाद्यवयवविन्यासः प्रकृतिसुन्दरस्वभावहाससुमुखो नवनलिनदलायमानशिशिरतारारुणायतनयनरुचिरः सदृशसुभगकपोलकर्णकण्ठनासो विगूढस्मितवदनमहोत्सवेन पुरवनितानां मनसि कुसुमशरासनमुपदधानः पराागवलम्बमानकुटिलजटिलकपिशकेशभूरिभारोऽवधूतमलिननिजशरीरेण ग्रहगृहीत इवादृश्यत ॥३१॥

पदच्छेद—अति सुकुमार कर चरणः उरः स्थल विपुल बाहु अंसगल वदन आदि अवयव विन्यासः प्रकृति सुन्दर स्वभाव हास सुमुखः नवनलिन दलायमान शिशिरतारा अरुण आयत नयन रुचिरः सदृश सुभग कपोल कर्ण कण्ठनासः विगूढस्मित वदन महोत्सवेन पुरवनितानाम् मनसि कुसुम शरासनम् उपदधानः पराक् अवलम्बमान् कुटिल जटिल कपिश केशभूरिभारः अवधूत मलिन निज शरीरेण ग्रह गृहीत इव अदृश्यत ॥

शब्दार्थ—

अति सुकुमार	७. अत्यन्त कोमल थी	विगूढ स्मित	२०. अस्पष्ट मुसकान युक्त
कर चरण	१. उनके हाथ पैर	वदन	२१. मुख
उरः स्थल	२. छाती आदि अंग	महोत्सवेन	२२. अत्यधिक शोभायुक्त था (जो)
विपुल बाहु	३ लम्बी लम्बी भुजायें	पुरवनितानाम्	२३. नगर की स्त्रियों के
अंसग वदन	४. कन्धे, गला, मुख	मनसि कुसुम	२४. मन में पुष्पों के
आदि	५. इत्यादि	शरासनम्	२५. धनुष वाले (कामदेव का)
अवयव विन्यास	६. अङ्गों की बनावट	उपदधानः	२६. प्रवेश कराता था
प्रकृति सुन्दर	८. स्वभाव से ही सुन्दर	पराक्	२७. आगे
स्वभाव हास	९. सहज मुसकान	अवलम्बमान	२८. लटकती हुई
सुमुखः	१०. सुन्दर मुख	कुटिल	३१. घुंघराली अलकें थीं
नव नलिन	११. नवीन कमल	जटिल	२९. टेढ़ी तथा
दलायमान	१२. दल के समान	कपिश केश	३०. भूरे रंग की केश राशि
शिशिर	१५. शीतल	भूरिभारः	३२. अत्यधिक भार तथा
तारा	१६. पुतलियाँ थी	अवधूत	३५. अवधूतों के समान
अरुण	१३. लाल तथा	मलिननिज	३३. मैले होने के कारण वे अपने
आयत नयन	१४. चौड़े नेत्र थे	शरीरेण	३४. शरीर से
रुचिरः सदृश	१७. सुन्दर समान	ग्रह गृहीत	३६. ग्रह से ग्रस्त (मनुष्य के)
सुभग कपोल	१८. शोभाशाली गाल	इव	३७. समान
कर्ण कण्ठ नासः	१९. कान गला और नासिका थी	अदृश्यत ॥	३८. दिखाई पड़ते थे

श्लोकार्थ—उनके हाथ, पैर, छाती आदि अंग, लम्बी-लम्बी भुजायें, कन्धे, गला इत्यादि अङ्गों की बनावट अत्यन्त कोमल थी स्वभाव से ही सुन्दर सहज मुसकान सुन्दर मुख नवीन कमल दल के समान लाल तथा चौड़े नेत्र थे। शीतल पुतलियाँ थीं। सुन्दर समान शोभाशाली गाल, कान गला और नासिका थी। अस्पष्ट मुसकान युक्त मुख अत्यधिक शोभायुक्त था। जो नगर की स्त्रियों के मन में पुष्पों के धनुष वाले कामदेव का प्रवेश कराता था। आगे लटकती हुई टेढ़ी भूरे रंग की केशराशी घुंघराली अलकें थीं। अत्यधिक भार तथा मैले होने के कारण वे अपने शरीर से अवधूत के समान तथा ग्रह से ग्रस्त मनुष्य के समान दिखाई पड़ते थे॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

यर्हि वाव स भगवान् लोकमिमं योगस्याद्धा प्रतीपमिवाचक्षाणस्तत्प्रतिक्रिया कर्म बीभत्सितमिति व्रतमाजगरमास्थितः शयान एवाश्नाति पिबति खादत्यवमेहति हदति स्म चेष्टमान उच्चरित आदिग्धोद्देशः ॥३२॥

पदच्छेद—यर्हि वाव स भगवान् लोकम् इमम् योगस्य अद्धा प्रतीपम् इव आचक्षाणः तत् प्रति क्रिया कर्म बीभत्सितम् इति व्रतम् आजगरम् आस्थितः शयानाः एव अश्नाति पिबति खादति अवमेहति हदति स्म चेष्टमानः उच्चरितः आदिग्ध उद्देशः ॥

शब्दार्थ—

यर्हि	१.	जब	इति	१६.	इस प्रकार उन्होंने
वाव	२.	निश्चित रूप से	व्रतम्	१८.	वृत्ति
सः	३.	उन	आजगरम्	१७.	अजगर की
भगवान्	४.	भगवान् ऋषभदेव ने (जाना) कि	आस्थितः	१९	धारण कर ली
लोकम्	६.	संसार	शयानः	२०.	वे लेटे लेटे
इमम्	५.	यह	एव	२१.	ही
योगस्य	७.	योग की साधना में	अश्नाति	२२.	खाने
अद्धा	८.	स्पष्ट रूप से	पिबति	२३.	पीने लगे
प्रतीपम्	९.	विघ्न के	खादति	२४.	खाते हुये
इव	१०.	समान	अवमेहति स्म	२५.	मल मूत्र त्यागने लगे
आचक्षाणः	११.	व्यवहार करने वाला है	हदति	२६.	त्यागे हुये मल मूत्र में ही
तत्	१२.	इससे	चेष्टमानः	२७.	लोटने लगे
प्रति क्रिया	१३.	बचने का	उच्चरितः	२८.	विष्ठा से
कर्म	१४.	उपाय	आदिग्ध	३०.	सान लेते
बीभत्सितम्	१५.	घृणित रूप से रहना है (तब)	उद्देशः ॥	२९.	शरीर को

श्लोकार्थ—जब निश्चित रूप से उन भगवान् ऋषभ देव ने जाना कि यह संसार योग की साधना में स्पष्ट रूप से विघ्न के समान व्यवहार करने वाला है और इससे बचने का उपाय घृणित रूप से रहना है। तब इस प्रकार उन्होंने अजगर की वृत्ति धारण कर ली। वे लेटे-लेटे ही खाने-पीने लगे खाते हुये मल-मूत्र त्यागने लगे तथा त्यागे हुये मल-मूत्र में ही लोटने लगे और बोलते हुये अपने शरीर को उसी में सानने लगे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तस्य ह यः पुरीषसुरभिसौगन्ध्यवायुस्तं देशं दशयोजनं समन्तात् सुरभिं चकार ॥३३॥

पदच्छेद—

तस्य ह यः पुरीष सुरभि सौगन्ध्य वायुः
तम् देशम् दशयोजनम् समन्तात् सुरभिम् चकार ॥

शब्दार्थ—

तस्य ह	१.	उनके शरीर से	ताम्	६.	उसकी
यः	२.	जो	देशम्	६.	स्थान को
पुरीष	३.	मल (निकला)	दशयोजनम्	८.	दश योजना तक के
सुरभि	४.	वह सुगन्धित था	समन्तात्	१०.	चारों ओर
सौगन्ध्य	७.	सुगन्ध को (लेकर)	सुरभिम्	११.	सुगन्धित
वायुः ।	५.	वायु	चकार ॥	१२.	करने लगी

श्लोकार्थ—उनके शरीर से जो मल निकला वह सुगन्धित था । वायु उसकी सुगन्धित को लेकर दश योजन तक के स्थान को चारों ओर सुगन्धित करने लगी ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

एवं गोमृगकाकचर्यया व्रजंस्तिष्ठन्नासीनः शयानः काकमृगगोचरितः पिबति खादत्यवमेहति स्म ॥३४॥

पदच्छेद—

एवम् गो मृग काकचर्यया व्रजन् तिष्ठन् आसीनः शयानः
काकमृग गोचरितः पिबति खादति अवमेहति स्म ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	आसीनः	८.	बैठे हुये (और)
गो	२.	गाय	शयानः	६.	सोते हुये
मृग	३.	मृग और	काक मृग	१०.	(और) कौवे मृग (और)
काक	४.	कौवे इत्यादि की	गोचरितः	११.	गाय के आचरण के समान
चर्यया	५.	क्रिया	पिबति	१२.	पीने लगे
व्रजन्	६.	चलते हुये	खादति	१३.	खाने लगे
तिष्ठन्	७.	खड़े खड़े	अवमेहति स्म ॥	१४.	मल-मूत्र त्यागने लगे ।

श्लोकार्थ—इस प्रकार गाय, मृग और कौवे इत्यादि की क्रिया, चलते हुये, खड़े-खड़े, बैठे हुये और सोते हुये, कौवे, मृग और गाय के आचरण के समान, पीने लगे, खाने लगे, मल-मूत्र त्यागने लगे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

इति नानायोगचर्याचरणो भगवान् कैवल्यपतिर्ऋषभोऽविरतपरम-महानन्दानुभव आत्मनि सर्वेषां भूतानामात्मभूते भगवति वासुदेव आत्मनोऽव्यवधानानन्तरोदरभावेन सिद्धसमस्तार्थपरिपूर्णो योगैश्वर्याणि वैहायसमनोजवान्तर्धानपरकायप्रवेशदूरग्रहणादीनि यदृच्छयोपगतानि नाञ्जसा नृप हृदयेनाभ्यनन्दत् ॥३५॥

पदच्छेद—इति नाना योगचर्या आचरणः भगवान् कैवल्यपतिः ऋषभः अविरत परम महानन्द अनुभवः आत्मनि सर्वेषाम् भूतानाम् आत्मभूते भगवति वासुदेवे आत्मनः अव्यवधान अनन्तर उदर भावेन सिद्ध समस्तअर्थ परिपूर्ण योगैश्वर्याणि वैहायस मनोजव अन्तर्धान परकाय प्रवेश दूर ग्रहण आदीनि यदृच्छया उपगतानि न अञ्जसा नृप हृदयेन अभ्यनन्दत् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार के	उदर	२२.	कार्यों
नाना	२	अनेकों	भावेन	२१.	शरीर के
योगचर्या	३.	योगों का	सिद्ध	२७.	सिद्ध हो चुके थे
आचरणः	४.	आचरण करते हुये	समस्त	२३.	समस्त
भगवान्	५.	भगवान्	अर्थ	२४.	पुरुषार्थों को (और)
कैवल्यपतिः	६.	मोक्ष के स्वामी	परिपूर्ण	२६.	पूर्ण करके
ऋषभः	७.	ऋषभ देव ने	योगैश्वर्याणि	२५.	योग के ऐश्वर्यों को
अविरत	८.	निरन्तर	वैहायस	२८.	आकाश गमन
परम	९.	अत्यधिक (तथा)	मनोजव	२९.	मन के वेग के समान चलना
महानन्द	१०.	सर्वश्रेष्ठ आनन्द का	अन्तर्धान	३०.	अदृश्य होना
अनुभव	११.	अनुभव किया	परकाय	३१.	दूसरे के शरीर में
आत्मनि	१२.	वे अपनी आत्मा में (और)	प्रवेश	३२.	प्रवेश करना
सर्वेषाम्	१३.	सभी	दूरग्रहण	३३.	दूर के दृश्यों को देखकर समझना
भूतानाम्	१४.	प्राणियों में	आदीनि	३४.	इत्यादि
आत्मभूते	१५.	आत्मस्वरूप	यदृच्छया	३५.	स्वेच्छा से
भगवति	१६.	भगवान्	उपगतानि	३६.	प्राप्त हुई सिद्धियों का
वासुदेवे	१७.	वासुदेव में (भेद नहीं मानते थे	न	३९.	नहीं
आत्मनः	१८.	अपने में	अञ्जसा	३७.	थोड़ा सा भी
अव्यवधान	१९.	निरन्तर	नृप हृदयेन	३७.	राजन् ! हृदय से
अनन्तर	२०.	बिना किसी भेद के	अभ्यनन्दत् ॥	४०.	आदर किया

श्लोकार्थ—इस प्रकार अनेको योगों का आचरण करते हुये भगवान् मोक्ष के स्वामी ऋषभदेव ने निरन्तर अत्यधिक तथा सर्व श्रेष्ठ आनन्द का अनुभव किया। वे अपनी आत्मा में और सभी प्राणियों में आत्म स्वरूप भगवान् वासुदेव में भेद नहीं मानते थे। अपने निरन्तर बिना भेद के शरीर के कार्यों समस्त पुरुषार्थों को और योग के ऐश्वर्यों को पूर्ण करके सिद्ध हो चुके थे। आकाश गगन, मन के वेग के समान चलना अदृश्य होना, दूसरे के शरीर में प्रवेश करना, दूरके दृश्यों को देखकर समझना इत्यादि स्वेच्छा से प्राप्त हुई सिद्धियों का राजन् !, हृदय से थोड़ा सा भी आदर नहीं किया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे ऋषभानुचरिते पञ्चमः अध्यायः ॥२॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पञ्चमः स्कन्धः

षष्ठः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच—न नूनं भगव आत्मारामाणां योगसमीरितज्ञानावभर्जितकर्मबीजानामैश्वर्याणि भवितुमर्हन्ति यदृच्छयोपगतानि ॥१॥

पदच्छेद—न नूनम् भगवन् आत्मा रामाणाम् योग समीरित ज्ञान अवभर्जित कर्म बीजनाम् ऐश्वर्यं चर्याणि पुनः क्लेशदानि भवितुम् अर्हन्ति यदृच्छया उपगतानि ॥

शब्दार्थ—

न	१६.	नहीं है	कर्म बीजानाम्	७.	कर्म के रागादि बीज वाले
नूनम्	१२.	निश्चय ही	ऐश्वर्याणि	६.	ऐश्वर्य
भगव	१.	हे भगवन्	पुनः	११.	फिर से
आत्मा	७.	आत्मा में ही	क्लेशदानि	१३.	दुःखों के कारण
रामाणाम्	८.	रमण करने वाले मुनियों को	भवितुम्	१४.	होने
योग समीरित	२.	योग के द्वारा प्राप्त	अर्हन्ति	१५.	योग्य
ज्ञान	३.	ज्ञानरूपी अग्नि से	यदृच्छया	६.	स्वेच्छा से
अवभर्जित	४.	विनष्ट हुये	उपगतानि ॥	१०.	प्राप्त होने पर

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! योग के द्वारा प्राप्त ज्ञानरूपी अग्नि से विनष्ट हुये कर्म के रागादिबीज वाले ऐश्वर्य आत्मा में ही रमण करने वाले मुनियों को स्वेच्छा से प्राप्त होने पर फिर से निश्चय ही दुःखों के कारण होने योग्य नहीं है ॥

द्वितीयः श्लोकः

ऋषिरुवाच—सत्यमुक्तं किन्त्विह वा एके न मनसोऽद्धा विश्रम्भमनवस्थानस्य शठकिरात इव सङ्गच्छन्ते ॥२॥

पदच्छेद—

सत्यमुक्तम् किन्तु इह वा एकेन मनसः अद्धा विश्रम्भम् अनवस्थानस्य शठ किरात इव सङ्गच्छन्ते ॥

शब्दार्थ—

सत्यम्	१.	तुमने ठीक ही	अद्धा	१४.	विश्वास नहीं करते हैं
उक्तम्	२.	कहा है	विश्रम्भम्	८.	विश्वास
किन्तु इह	३.	किन्तु इस संसार में	अनवस्थानस्य	१२.	चञ्चल
वा	१०.	उसी प्रकार	शठ	५.	चालाक
एक	११.	बुद्धिमान् लोग	किरात	६.	बहेलिया अपने
न	९.	नहीं करता है	इव	४.	जैसे
मनसः	१३.	मन का	सङ्गच्छन्ते ॥	७.	साथ-साथ चलते हुये (मृग का)

श्लोकार्थ—तुमने ठीक ही कहा है। किन्तु इस संसार में जैसे चालाक बहेलिया अपने साथ-साथ चलते हुये मृग का विश्वास नहीं करता है, उसी प्रकार बुद्धिमान् लोग चञ्चल मन का विश्वास नहीं करते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

तथा चोक्तम्— न कुर्यात्कर्हिचित्सख्यं मनसि ह्यनवस्थिते।
यद्विश्रम्भाच्चिराच्चीर्णं चस्कन्द तप ऐश्वरम् ॥३॥

पदच्छेद— तथा च उक्तम् न कुर्यात् कर्हिचित् सख्यम् मनसि हि अनवस्थिते।
यद् विश्रम्भात् चिरात् चचीर्णम् च स्कन्द तप ऐश्वर्यम् ॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	ऐसा ही	अनवस्थिते	३.	चञ्चल
च उक्तम्	२.	कहा भी है	यद्	१०.	उसमें
न	७.	नहीं	विश्रम्भात्	११.	विश्वास करने से
कुर्यात्	८.	करनी चाहिये	चिरात्	१२.	बहुत समय का (एकत्रित)
कर्हिचित्	५.	कभी भी	चीर्णम्	१६.	नष्ट हो गया था
सख्यम्	६.	मित्रता	चस्कन्द	१३.	महादेव जी का
मनसि	४.	मन से	तपः	१४.	तपस्या (और)
हि	९.	क्योंकि	ऐश्वर्यम् ॥	१५.	एश्वर्य

श्लोकार्थ—ऐसा ही कहा भी है। चञ्चल मन से कभी भी मित्रता नहीं करनी चाहिये। क्योंकि उसमें विश्वास करने से बहुत समय से एकत्रित महादेव जी की तपस्या का ऐश्वर्य नष्ट हो गया था॥

चतुर्थः श्लोकः

नित्यं ददाति कामस्यच्छिद्रं तमनु येऽरयः।
योगिनाः कृतमैत्रस्य पत्युर्जायेव पुंश्चली ॥४॥

पदच्छेद— नित्यम् ददाति कामस्य च्छिद्रम् तम् अनु ये अरयः।
योगिनः कृत मैत्रस्य पत्युः जाया इव पुंश्चली ॥

शब्दार्थ—

नित्यम्	११.	नित्य	अरयः	९.	शत्रुओं को
ददाति	१२.	देते हैं (जिस प्रकार)	योगिनः	२.	योगीजन
कामस्य	३.	काम (और)	कृत	८.	करते हैं (वे)
च्छिद्रम्	६.	अवसर	मैत्रस्य	७.	मित्रता
तम्	४.	उसके	पत्युः	१५.	पति को (मारने का मौका देती है)
अनु	५.	पीछे चलने वाले	जाया	१४.	स्त्री
ये	१.	जो	इव	१०.	उसी प्रकार
			पुंश्चली ॥	१३.	व्यभिचारिणी

श्लोकार्थ—जो योगीजन मन से मित्रता करते हैं, वे काम और उसके पीछे चलने वाले शत्रुओं को उसी प्रकार नित्य अवसर देते हैं, जिस प्रकार व्यभिचारिणी स्त्री पति को मारने का मौका देती है॥

पञ्चमः श्लोकः

कामो मन्युर्मदो लोभः शोकमोहभयादयः।
कर्मबन्धश्च यन्मूलः स्वीकुर्यात्को नु तद् बुधः ॥५॥

पदच्छेद— कामः मन्युः मदः लोभः शोक मोह भय आदयः।
कर्म बन्धः च यत् मूलः स्वीकुर्यात् कः नु तद् बुधः ॥

शब्दार्थ—

कामः मन्युः	१.२.	काम क्रोध	च	८.	और
मदः लोभः	३ ४.	मतवालापन लोभ	यत् मूलः	११.	जो कारण
शोक मोह	५.६.	दुःख अज्ञान	स्वीकुर्यात्	१६.	स्वीकार कर सकता है
भय	७.	भय	कः	१४.	कौन
आदयः।	१०.	इत्यादि का	नु तद्	१३.१२.	निश्चय ही ऐसे मन को
कर्मबन्धः	९.	कर्म बन्धन	बुधः॥	१५.	विद्वान्

श्लोकार्थ—काम, क्रोध, मतवालापन, लोभ, दुःख, अज्ञान, भय और कर्म बन्धन इत्यादि का जो कारण है, ऐसे मन को निश्चय ही कौन विद्वान् स्वीकार कर सकता है॥

षष्ठः श्लोकः

अथैवमखिललोकपाललामोऽपि विलक्षणैर्जडवदवधूतवेषभाषाचरितैरविलक्षितभगवत्प्रभावो योगिनां साम्परायविधिमनुशिक्षयन् स्वकलेवरं जिहासुरात्मन्यात्मानमसंव्यवहितमनर्थान्तरभावेनान्वीक्षमाण उपरतानुवृत्तिरुपरराम ॥६॥

पदच्छेद—अथ एवम् अखिल लोक पाल ललामः अपि विलक्षणैः जडवत् अवधूतवेष भाषा चरितैः अविलक्षित भगवत् प्रभावः योगिनाम् साम्पराय विधिम् अनुशिक्षयन् स्वकलेवरम् जिहासुः आत्मनि आत्मानम् असंव्यवहितम् अनर्थान्तर भावेन अन्वीक्षमाणः उपरत अनुवृत्तिः उपरराम ॥

शब्दार्थ—

अथ एवम्	१. इसीलिये	साम्पराय विधिम्	१०. देह त्याग की क्रिया
अखिल लोकपाल	२. सम्पूर्ण लोक पालों के	अनुशिक्षयन्	११. सिखाने के लिये
ललामः अपि	३. भूषण स्वरूप होने पर भी	स्वकलेवरम् जिहासुः	१२. अपना शरीर छोड़ना चाहा
विलक्षणैः जडवत्	४. विचित्र जड़ पुरुषों की भाँति	आत्मनि आत्मानम्	१३. अपने अन्तःकरण में परमात्मा को
अवधूतवेष	५. अवधूतों के समान वेष	असंव्यवहितम्	१४. अभिन्न रूप से (देखते हुये)
भाषाचरितैः	६. भाषा और आचरण से	अनर्थान्तर भावेन	१५. अन्य किसी भी वस्तु को
अविलक्षित	८. छिपाये रहते थे	अन्वीक्षमाणः	१६. दूसरे रूप में न देखते हुये
भगवत् प्रभावः	७. अपने ईश्वरीय प्रभाव को	उपरत	१९. मुक्त हो गये
योगिनाम्	९. उन्होंने योगियों को	अनुवृत्ति	१७. वासनाओं की
		उपरराम॥	१८. आवृत्ति से छूट कर

श्लोकार्थ—इसीलिये सम्पूर्ण लोकपालों के भूषण स्वरूप होने पर भी विचित्र जड़ पुरुषों की भाँति अवधूतों के समान वेष, भाषा और आचरण से अपने ईश्वरीय प्रभाव को छिपाये रहते थे। उन्होंने योगियों को देह त्याग की क्रिया सिखाने के लिये अपना शरीर छोड़ना चाहा और अपने अन्तः करण में परमात्मा को अभिन्न रूप से देखते हुये अन्य किसी भी वस्तु को दूसरे रूप में न देखते हुये वासनाओं की आवृत्ति से छूट कर मुक्त हो गये॥

सप्तमः श्लोकः

तस्य ह वा एवं मुक्तलिङ्गस्य भगवत ऋषभस्य योगमायावासनया देह इमां जगतीमभिमानाभासेन संक्रममाणः कोङ्कवेङ्ककुटकान्दक्षिणकर्णाटकान्देशान् यदृच्छयोपगतः कुटकाचलोपवन आस्यकृताश्मकवल उन्माद इव मुक्तमूर्धजोऽसंवीत एव विचचार ॥७॥

पदच्छेद—तस्य ह वा एवम् मुक्त लिङ्गस्य भगवतः ऋषभस्य योगमाया वासनया देह इमाम् जगतीम् अभिमान आभासेन संक्रममाणः कोङ्क वेङ्क कुटकान् दक्षिण कर्णाटकान् देशान् यदृच्छया उपगतः कुटकाचल उपवन आस्यकृत अश्मकवल उन्माद इव मुक्त मूर्धजः असंवीत एव विचचार ॥

शब्दार्थ—

तस्य	४.	वह	वेङ्क	१९.	वेङ्क
ह	२.	निश्चय	कुटकान्	२०.	कुटक आदि देशों में (तथा)
वा	३.	ही	दक्षिण	२१.	दक्षिण
एवम्	१.	इस प्रकार	कर्णाटकान्	२२.	कर्णाटक के
मुक्त	६.	मुक्त होकर	देशान्	२३.	देशों में
लिङ्गस्य	५.	लिङ्ग शरीर के अभिमान से	यदृच्छया	१७.	स्वेच्छा से
भगवतः	७.	भगवान्	उपगतः	२४.	गया (और)
ऋषभस्य	८.	ऋषभ देव जी का	कुटकाचल	३१.	कुटकाचल के
योगमाया	१०.	योग माया की	उपवन	३२.	वन में
वासनया	११.	वासना से	आस्यकृत	२५.	मुख में
देह	९.	शरीर	अश्मकवल	२६.	पत्थर का टुकड़ा डाले
इमाम्	१२.	इस	उन्माद	२९.	उन्मत्त के
जगतीम्	१३.	पृथ्वी पर	इव	३०.	समान
अभिमान	१४.	अभिमान के	मुक्त	२८.	बिखेरे
आभासेन	१५.	आभास से	मूर्धजः	२७.	बाल
संक्रममाणः	१६.	विचरता रहा	असंवीत एव ।	३३.	दिगम्बर जैसे
कोङ्क	१८.	कोङ्क	विचचार ॥	३४.	विचरण करने लगे

श्लोकार्थ—इस प्रकार निश्चय ही वह लिङ्ग शरीर के अभिमान से मुक्त होकर भगवान् ऋषभ देव जी का शरीर योग माया की वासना से इस पृथ्वी पर अभिमान के आभास से विचरता रहा। वह स्वेच्छा से कोङ्क, वेङ्क, कुटक आदि देशों में गया और मुख में पत्थर का टुकड़ा डाले बाल बिखेरे उन्मत्त के समान कुटकाचल के वन में दिगम्बर जैसे विचरण करने लगा ॥

अष्टमः श्लोकः

अथ समीरवेगविधूतवेणुविकर्षणजाताग्रदावानलस्तद्वनमालेलिहानः सह तेन ददाह ॥८॥

पदच्छेद—अथ समीर वेग विधूत वेणु विकर्षण जात उग्रदावानलः तद् वनम् आलेलिहानः सह तेन ददाह ॥

शब्दार्थ—

अथ समीर	१.२. तदनन्तर वायु के	उग्रदावानलः तद्	७.८. प्रबल दावाग्नि (जलने लगी) उसने
वेग विधूत	३.४. वेग से झकझोरे हुये	वनम् आलेलिहानः	९.१०. उस वन को जलाते हुये
वेणु	५. बाँसों के	सह तेन	११. उसके साथ ऋषभ देव जी के शरीर को
विकर्षजात	६. घर्षण से उत्पन्न	ददाह ॥	१२. भस्म कर दिया

श्लोकार्थ—तदनन्तर वायु के वेग से झकझोरे हुये बाँसों के घर्षण से उत्पन्न प्रबल दावाग्नि जलने लगी। उसने उस वन को जलाते हुये उसके साथ ऋषभ देव जी के शरीर को भी भस्म कर दिया ॥

नवमः श्लोकः

यस्य किलानुचरितमुपाकर्ण्य कोङ्कवेङ्ककुटकानां राजार्हन्नामोपशिक्ष्य कलावधर्म उत्कृष्यमाणे भवितव्येन विमोहितः स्वधर्मपथमकुतोभयमपहाय कुपथपाखण्डमसमञ्जसं निजमनीषया मन्दः सम्प्रवर्तयिष्यते ॥९॥

पदच्छेद—यस्य किल अनुचरितम् उपाकर्ण्य कोङ्क वेङ्क कुटकानाम् राजा अर्हत्नाम उपशिक्ष्य कलौ अधर्मे उत्कृष्यमाणे भवितव्येन विमोहितः स्वधर्म पथम् अकुतोभयम् अपहाय कुपथपाखण्डम् असमञ्जसम् निजमनीषया मन्दः सम्प्रवर्तयिष्यते ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१. हे राजन् जिस समय	विमोहितः	१२. वश में होकर
किल	१०. निश्चय ही	स्वधर्मपथम्	१४. अपने धर्म के मार्ग को
अनुचरितम्	८. आचरण का वृत्तान्त	अकुतोभयम्	१३. भय रहित
उपाकर्ण्य	९. सुनकर	अपहाय	१५. छोड़कर
कोङ्क वेङ्क	४. कोङ्क, वेङ्क और	कुपथ	२१. कुमार्ग ! को
कुटकानाम् राजा	५. कुटक देश का राजा	पाखण्डम्	१६. पाखण्ड से भरे हुये
अर्हत् नाम	६. अर्हत् नाम वाला	असमञ्जसम्	१७. अनुचित मार्ग पर चलेगा और
उपशिक्ष्य	७. वहाँ के लोगों से (ऋषभ देव जी के) निज		१८. अपनी
कलौ अधर्मे	२. कलियुग में अधर्म की	मनीषिया	२०. बुद्धि से
उत्कृष्यमाणे	३. वृद्धि होगी (तब)	मन्दः	१९. अनुचित
भवितव्येन ।	११. होनहार के	सम्प्रवर्तयिष्यते ॥	२२. प्रचार करेगा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जिस समय कलियुग में अधर्म की वृद्धि होगी तब कोङ्क,वेङ्क और कुटक देश का राजा अर्हत् नाम वाला वहाँ के लोगों से ऋषभ देव जी के आचरण का वृत्तान्त सुनकर निश्चय ही होनहार के वश में होकर भय रहित अपने धर्म के मार्ग को छोड़कर पाखण्ड से भरे हुये अनुचित मार्ग पर चलने लगेगा और अपनी अनुचित बुद्धि से प्रचार करेगा ॥

दशमः श्लोकः

येन ह वाव कलौ मनुजापसदा देवमायामोहिताःस्वविधिनियोगशौच-चारित्रविहीना देवहेलनान्यपव्रतानि निजनिजेच्छया गृह्णाना अस्नानाचमनाशौचकेशोल्लुञ्चनादीनि कलिनाधर्मबहुलेनोपहतधियो ब्रह्मब्राह्मणयज्ञपुरुषलोकविदूषकाः प्रायेण भविष्यन्ति ॥१०॥

पदच्छेद—

येन ह वाव कलौ मनुज अपसदा देवमायाः मोहिता स्वविधि नियोग शौच चारित्र विहीना देव हेलनानि अपव्रतानि निज निजेच्छया गृह्णाना अस्नान आचमन अशौच केश उल्लुञ्चन आदीनि कलिना अधर्म बहुलेन उपहत धियः ब्रह्मब्राह्मण यज्ञ पुरुष लोक विदूषकाः प्रायेण भविष्यन्ति ॥

शब्दार्थ—

येन	१.	उससे
ह वाव	२.	निश्चय ही
कलौ	३.	कलियुग के
मनुज	७.	मनुष्य
अपसदाः	६.	अनेक अधम
देवमाया	४.	देव की माया से
मोहिताः	५.	मोहित
स्वविधि	६.	अपने शास्त्रों में
नियोग	७.	बताये गये
शौच	८.	पवित्रता (और)
चरित्र	९.	आचरण को
विहीना	१०.	छोड़ देंगे
देव	१८.	देवताओं को
हेलनानि	१९.	उपेक्षा करेंगे
अपव्रतानि	२०.	व्रतों का पालन न करेंगे
निज	२४.	अपनी
निजेच्छया	२५.	स्वेच्छा से
गृह्णानाः	२६.	स्वीकार करेंगे
अस्नान	१६.	स्नान न करेंगे
आचमन	१७.	आचमन न करेंगे
अशौच	१८.	अशुद्ध रहेंगे
केश	२१.	केश
उल्लुञ्चन	२२.	नुचवाना
आदीनि	२३.	इत्यादि (पाखण्डधर्मों को)
कलिना	१३.	कलियुग के प्रभाव से
अधर्म	१२.	अधर्मों से युक्त
बहुलेन	११.	बहुत से
अपहृत	१४.	नष्ट
धियः	१५.	बुद्धि (वे लोग)
ब्रह्म ब्राह्मण	१७.	वेद-ब्राह्मण
यज्ञ पुरुष	२८.	भगवान् विष्णु (और)
लोक	२९.	संसार की
विदूषकाः	३०.	निन्दा करने वाले
प्रायेण	३१.	प्रायः
भविष्यन्ति ॥	३२.	हो जायेंगे

श्लोकार्थ—उससे निश्चय ही कलियुग में देव की माया से मोहित अपने शास्त्रों में बताये गये पवित्रता और आचरण को छोड़ देंगे। बहुत से अधर्मों से युक्त कलियुग के प्रभाव से नष्ट बुद्धि वे लोग स्नान न करेंगे, आचमन न करेंगे, अशुद्ध रहेंगे, देवताओं की उपेक्षा करेंगे। व्रतों का पालन न करेंगे। केश नुचवाना इत्यादि पाखण्ड धर्मों को अपनी स्वेच्छा से स्वीकार करेंगे। वेद, ब्राह्मण, भगवान् विष्णु और संसार की प्रायः निन्दा करने वाले हो जायेंगे॥

एकादशः श्लोकः

ते च ह्यर्वाक्तनया निजलोकयात्रयान्धपरम्परयाऽऽश्वस्तास्तमस्यन्धे स्वयमेव प्रपतिष्यन्ति ॥११॥

पदच्छेद—

ते च हि अर्वाक्तनया निज लोक यात्रया, अन्ध परम्परया आश्वस्ताः तमसि अन्धे स्वयम् एव प्रपतिष्यन्ति ॥

शब्दार्थ—

ते	२.	वे	अन्ध	८.	अन्ध
च	१.	और	परम्परया	९.	परम्परा से
हि	७.	ही	आश्वस्ताः	१०.	विश्वास करके
अर्वाक्तनया	४.	इस नवीन	तमसि	११.	मोह में
			अन्धे	१२.	अन्धे होने के कारण
निज	३.	अपनी	स्वयम्	१३.	अपने आप
लोक	५.	संसार	एव	१४.	ही
यात्रया	६.	यात्रा में	प्रपतिष्यन्ति ॥	१५.	नरकों में गिरेंगे

श्लोकार्थ—और वे अपनी इस नवीन संसार यात्रा में ही अन्ध परम्परा से विश्वास करके मोह में अन्धे होने के कारण अपने आप ही नरकों में गिरेंगे ॥

द्वादशः श्लोकः

अयमवतारो रजसोपप्लुतकैवल्योपशिक्षणार्थः ॥१२॥

पदच्छेद—

अयम् अवतारः रजसा उपप्लुत कैवल्य उपशिक्षणार्थः ॥

शब्दार्थ—

अयम् अवतारः	१.२.	भगवान् का यह अवतार	कैवल्य	५.	मोक्ष मार्ग की
रजसाः	३.	रजोगुण से	उपशिक्षणार्थः ॥	६.	शिक्षा देने के लिये हुआ था ॥
उपप्लुत	४.	भरे हुये लोगों को			

श्लोकार्थ—भगवान् का यह अवतार रजोगुण से भरे हुये लोगों को मोक्ष मार्ग की शिक्षा देने के लिये हुआ था ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तस्यानुगुणान् श्लोकान् गायन्ति—

अहो भुवः सप्तसमुद्रवत्या द्वीपेषु वर्षेष्वधिपुण्यमेतत् ।
गायन्ति यत्रत्यजना मुरारेः कर्माणि भद्राण्यवतारवन्ति ॥१३॥

पदच्छेद—यस्य अनुगुणान् श्लोकान् गायन्ति अहोभुवः सप्तसमुद्रवत्या द्वीपेषु वर्षेषु अधिपुण्यम् एतत् गायन्ति यत्रत्य जनाः मुरारेः कर्माणि भद्राणि अवतार वन्ति ॥

शब्दार्थ—

तस्य अनुगुणान्	१.२. इसके गुणों को	अधिपुण्यम्	११. भारतवर्ष बहुत पुण्य भूमि है क्योंकि
श्लोकान् गायन्ति	३.४. श्लोकों में गाते हैं	एतत् ।	१०. यह
अहो	५. अहो	गायन्ति	१८. गान करते हैं
भुवः	७. पृथ्वी के	यत्रत्य जनाः	१२.१३. यहाँ के मनुष्य
सप्तसमुद्रवत्याः	६. सात समुद्रों वाली	मुरारेः	१४. श्री कृष्ण भगवान् के
द्वीपेषु	८. समस्त द्वीप (और)	कर्माणि	१५. चरित्रों का (तथा)
वर्षेषु	९. वर्षों में	भद्राणि अवतारवन्ति ॥	१६.१७. मङ्गलमय अवतारों का

श्लोकार्थ—इसके गुणों को श्लोकों में गाते हैं। अहो सात समुद्रों वाली पृथ्वी के समस्त द्वीप और वर्षों में यह भारत वर्ष बहुत पुण्य भूमि है। क्योंकि यहाँ के मनुष्य श्रीकृष्ण भगवान् के चरित्रों का तथा मङ्गलमय अवतारों का गान करते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

अहो नु वंशो यशसावदातः प्रैयव्रतो यत्र पुमान् पुराणः ।
कृतावतारः पुरुषः स आद्यः चचार धर्मं यदकर्महेतुम् ॥१४॥

पदच्छेद— अहो नु वंशो यशसा अवदातः।प्रैयव्रतो यत्र पुमान् पुराणः ।
कृत अवतारः पुरुषः स आद्यः चचार धर्मं यद् कर्म हेतुम् ॥

शब्दार्थ—

अहो नु	१.२. अहो निश्चय ही	कृत अवतारः	१३.१२. लेकर अवतार
वंशो यशसा	४.५. वंश सुयश से	पुरुषः	११. नारायण ने (ऋषभ रूप में)
अवदातः	६. परिपूर्ण है	स आद्यः	१०. उन आदि
प्रैयव्रतो	३. प्रियव्रत का	चचार धर्मम्	१७.१६. आचरण किया धर्म का
यत्र	७. जहाँ	यद्	८. जो
पुमान् पुराणः ।	९.८. पुरुष पुराण	अकर्म हेतुम् ॥	१४.१५. मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले

श्लोकार्थ—अहो निश्चय ही प्रियव्रत का वंश सुयश से परिपूर्ण है। जहाँ पुराण-पुरुष उन आदि नाराण ने ऋषभ रूप में अवतार लेकर जो मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले धर्म का आचरण किया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

कोन्वस्य काष्ठामपरोऽनुगच्छेन्मनोरथेनाप्यभवस्य योगी ।
यो योगमायाः स्पृहयत्युदस्ता ह्यसत्तया येन कृतप्रयत्नाः ॥१५॥

पदच्छेद—कः नु अस्य काष्ठाम् अपरः अनुगच्छेत् मनोरथेन अपि अभवस्य योगी यः योग मायाः स्पृहयति उदस्ताः हि असत्तया येन कृत प्रयत्नाः ॥

शब्दार्थ—

कः	७. कैसे	योगी	२. योगिराज (भगवान्)
नु	९. निश्चय ही	यः योगमायाः	१०. योगी लोग जिन सिद्धियों की
अस्य	१. इन	स्पृहयति उदस्ताः	११.१२. इच्छा रखकर अत्यधिक
काष्ठाम् अपरः	४. मार्ग पर कोई दूसरा	हि	१५. उन्हें ही
अनुगच्छेत्	८. चल सकता है	असत्तया	१७. असत् समझकर त्याग दिया
मनोरथेन अपि	५.६. मन से भी	येन	१६. जिन्होंने
अभवस्य	३. जन्म रहित (ऋषभदेव के)	कृत प्रयत्नाः ॥	१४.१३. करते रहते हैं प्रयत्न

श्लोकार्थ—इन योगिराज भगवान् जन्म रहित ऋषभदेव के मार्ग पर कोई दूसरा मन से भी कैसे चल सकता है । निश्चय ही योगी लोग जिन सिद्धियों की इच्छा रखकर अत्यधिक प्रयत्न करते रहते हैं, उन्हें ही जिन्होंने असत् समझकर त्याग दिया ॥

षोडशः श्लोकः

इति ह स्म सकलवेदलोकदेवब्राह्मणगवां परमगुरोर्भगवत ऋषभाख्यस्य विशुद्धाचरितमीरितं पुंसां समस्तदुश्चरिताभिहरणं परममहामङ्गलायनमिदमनुश्रद्धयोपचितयानुशृणोत्याश्रावयति वावहितो भगवति तस्मिन् वासुदेव एकान्ततो भक्तिरनयोरपि समनुवर्तते ॥१६॥

पदच्छेद—इति ह स्म सकल वेद लोक देव ब्राह्मण गवाम् परम गुरोः भगवत् ऋषभ आख्यस्य विशुद्ध आचरितम् ईरितम् पुंसाम् समस्त दुश्चरित अभिहरणम् परम महा मङ्गलायनम् इदम् अनुश्रद्धया उपचितया अनुशृणोति आश्रावयति वा अवहितः भगवति तस्मिन् वासुदेवे एकान्ततः अनयोः अपि समनुवर्तते ॥

शब्दार्थ—

इति ह स्म सकल	१.२. इस प्रकार से ही सम्पूर्ण	परम	२०. अत्यधिक
वेद लोक	३.४. वेद संसार	महामङ्गलायनम्	२१. मङ्गलकारी है
देव ब्राह्मण	५.६. देवता ब्राह्मण (और)	इदम्	२२. इसे (जो)
गवाम् परम	७.८. गऊओं के परम	अनुश्रद्धया	२३. श्रद्धा पूर्वक
गुरोः भगवत्	९.१०. गुरु भगवान्	उपचितया	२४. निरन्तर
ऋषभ	११. ऋषभ	अनुशृणोति	२६. सुनते हैं
आख्यस्य	१२. नाम वाले देव का	आश्रावयति	२८. सुनाते हैं
विशुद्ध	१३. विशुद्ध	वा	२७. अथवा
आचरितम्	१४. चरित	अवहितः	२५. एकाग्रचित्त से
ईरितम्	१५. मैंने सुनाया	भगवति	२९. भगवान्
पुंसाम्	१६. यह मनुष्यों के	तस्मिन् वासुदेवे	३१.३०. उन श्री कृष्ण में
समस्त	१७. सम्पूर्ण	एकान्ततः भक्तिः	३४.३५. पूर्णरूप से भक्ति
दुश्चरित	१८. पापों को	अनयोः अपि	३२.३३. दोनों की ही
अभिहरणम्	१९. हरण करने वाले हैं	समनुवर्तते ॥	३६. हो जाती है

श्लोकार्थ—इस प्रकार से ही सम्पूर्ण वेद, संसार, देवता, ब्राह्मण और गऊओं के परम गुरु भगवान् ऋषभ नाम वाले देव का विशुद्ध चरित मैंने सुनाया। यह मनुष्यों के सम्पूर्ण पापों को हरण करने वाला है और अत्यधिक मङ्गलकारी है। इसे जो श्रद्धा पूर्वक निरन्तर एकाग्रचित्त से सुनते हैं अथवा सुनाते हैं, भगवान् श्री कृष्ण में उन दोनों की ही पूर्णरूप से भक्ति हो जाती है ॥

सप्तदशः श्लोकः

यस्यामेव कवय आत्मानमविरतं विविधवृजिनसंसारपरितापोपतप्यमानमनुसवनं स्नापयन्तस्तयैव परया निर्वृत्या ह्यपवर्गमात्यन्तिकं परमपुरुषार्थमपि स्वयमासादितं नो एवाद्रियन्ते भगवदीयत्वेनैव परिसमाप्तसर्वार्थाः ॥१७॥

पदच्छेद—

यस्याम् एव कवयः आत्मानम् अविरतम् विविधवृजिन संसार परितापः उपतप्यमानम् अनुसवनम् स्नापयन्तः तयैव परया निर्वृत्या हि अपवर्गम् आत्यन्तिकम् परम पुरुषार्थम् अपि स्वयम् आसादितम् नो एव आद्रियन्ते भगवदीयत्वेन एव परिसमाप्त सर्वार्थाः ॥

शब्दार्थ—

यस्याम्	८.	जिस भक्ति सरिता में	निर्वृत्या हि	१५.	शान्ति प्राप्त होती है
एव	९.	ही	अपवर्गम्	१६.	मोक्ष का
कवयः	७.	विद्वत् जन	आत्यन्तिकम्	१९.	सदा-सदा के लिये
आत्मानम्	६.	अपने अन्तः करण को	परमपुरुषार्थम्	२१.	चरम लक्ष्य
अविरतम्	११.	निरन्तर	अपि	२१.	भी
विविध	१.	तरह तरह के	स्वयम्	१७.	अपने आप
वृजिन	२.	पापों से पूर्ण	आसादितम्	१८.	प्राप्त हुये
संसार	३.	संसार के	नो एव	२२.	नहीं
परितापः	४.	तापों से	आद्रियन्ते	२३.	(वे) आदर करते हैं
उपतप्यमानम्	५.	अत्यन्त तपे हुये	भगवदीयत्वेन	२४.	आपके हो जाने से
अनुसवनम्	१०.	नित्य	एव	२५.	ही
स्नापयन्तः	१२.	नहलाते रहते हैं	परिसमाप्त	२७.	सिद्ध हो जाते हैं
तयैव	१३.	इसी से उन्हें	सर्वार्थाः ॥	२६.	उनके सभी पुरुषार्थ
परया	१४.	परम			

श्लोकार्थ—तरह-तरह के पापों से पूर्ण संसार के तापों से अत्यन्त तपे हुये अपने अन्तः करण को विद्वत्जन जिस भक्ति सरिता में ही नित्य निरन्तर नहलाते रहते हैं। इसी से उन्हें परम शान्ति प्राप्त होती है। सदा-सदा के लिये अपने आप प्राप्त हुये चरम-लक्ष्य मोक्ष का भी वे आदर नहीं करते हैं। आपके हो जाने से ही उनके सभी पुरुषार्थ सिद्ध हो जाते हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

**राजन् पतिर्गुरुरलं भवतां यदूनां दैवं प्रियः कुलपतिः क्व च किङ्करो वः ।
अस्त्वेवमङ्ग भगवान् भजतां मुकुन्दो मुक्तिं ददाति कर्हिचित्स्म न भक्तियोगम् ॥१८॥**

पदच्छेद—राजन् पतिः गुरुः अलम् भवताम् यदूनाम् दैवम् प्रियः कुलपतिः क्व च किङ्करः वः ।
अस्तु एवम् अङ्ग भगवान् भजताम् मुकुन्दः मुक्तिम् ददाति कर्हिचित् स्म न भक्तियोगम् ॥

शब्दार्थ—

राजन्	१. हे राजन्	किङ्करः	१४. सेवक भी बनाते थे
पतिः	८. रक्षक	वः	४. आपके
गुरुः	६. गुरु	अस्तु	१७. हैं किन्तु
अलम् भवताम्	६.५. और पाण्डवों के	एवम् अङ्ग	१५. इस प्रकार के अनेकों भक्तों को
यदूनाम्	७. यदुवंशियों के	भगवान्	३. भगवान्श्री कृष्ण
दैवम् प्रियः	१०. इष्टदेव मित्र	भजताम् मुकुन्दः	२. भक्तों के
कुलपतिः	११. कुलपति थे	मुक्तिम् ददाति	१६. मक्ति देते हैं
क्व	१३. कभी-कभी तो	कर्हिचित्स्म न	१८. कभी नहीं
च	१२. और	भक्तियोगम् ॥	१९.२०. भक्ति योग देते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! भक्तों के भगवान् श्री कृष्ण आपके पाण्डवों के और यदुवंशियों के रक्षक, गुरु, इष्टदेव, मित्र, कुलपति थे और कभी-कभी तो वे सेवक भी बनते थे । इस प्रकार के अनेकों भक्तों को वे मुक्ति देते हैं । किन्तु कभी भक्ति योग नहीं देते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

**नित्यानुभूतनिजलाभनिवृत्ततृष्णः श्रेयस्यतद्रचनया चिरसुप्तबुद्धेः ।
लोकस्य यः करुणयाभयमात्मलोकमाख्यान्नमो भगवते ऋषभाय तस्मै ॥१९॥**

पदच्छेद—नित्य अनुभूत निजलाभ निवृत्त तृष्णः श्रेयस्य तद् रचनया निज सुप्त बुद्धेः ।
लोकस्य यः करुणया अभयम् आत्म लोकम् आख्यात् नमो भगवते ऋषभाय तस्मै ॥

शब्दार्थ—

नित्य	१. जो निरन्तर	लोकस्य	१२. संसार को
अनुभूत	२. अनुभव होने वाले	यः	११. जिन्होंने
निजलाभ	३. आत्म स्वरूप की प्राप्ति से	करुणया	१०. करुणा के कारण
निवृत्त	५. मुक्त थे	अभयम् आमत्लोकम्	१३ १४. निर्भय आत्मतत्त्व का
तृष्णः	४ सब तृष्णाओं से	आख्यात्	१५. उपदेश दिया
श्रेयस्य	६. कल्याणकारी थी	नमो	१८. नमस्कार है
तद् रचनया	७.८. जिनकी रचना	भगवते ऋषभाय	१७. भगवान् ऋषभदेव को
चिरसुप्तबुद्धेः ।	६. बहुत समय से बेसुध हुये लोगों के लिए	तस्मै ॥	१६ उन

श्लोकार्थ—जो निरन्तर अनुभव होने वाले आत्म स्वरूप की प्राप्ति से सब तृष्णाओं से मुक्त थे । बहुत समय से बेसुध हुये लोगों के लिए जिनकी रचना कल्याणकारी थी । करुणा के कारण जिन्होंने संसार को निर्भय आत्मतत्त्व का उपदेश दिया उन भगवान् ऋषभदेव को नमस्कार है ॥

इति श्री मद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे ऋषभदेवानुचरिते षष्ठोऽध्यायः ।६।

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पंचमः स्कन्धः

सप्तमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—भरतस्तु महाभागवतो यदा भगवतावनितलपरिपालनाय सञ्चिन्तितस्तदनुशासनपरः पञ्चजनीं विश्वरूपदुहितरमुपयेमे ॥१॥

पदच्छेद—भरतः तु महाभागवतः यदा भगवता अवनितल परिपालनाय सञ्चिन्तितः तद् अनुशासनपरः पञ्चजनीम् विश्वरूप दुहितरम् उपयेमे ॥

शब्दार्थ—

भरतः	१.	हे राजन् ! महाराज भरत	सञ्चिन्तितः	८.	नियुक्त किया (तब)
तु	२.	तो	तद्	९.	उनकी
महाभागवतः	३.	महान् भगवत् भक्त थे	अनुशासनपरः	१०.	आज्ञा में रहकर (उन्होंने)
यदा	४.	जब	पञ्चजनीम्	१३.	पञ्चजनी से
भगवतः	५.	भगवान् ऋषभदेव ने (उनको)	विश्वरूप	११.	विश्वरूप की
अवनितल	६.	पृथ्वीतल की	दुहितरम्	१२.	कन्या
परिपालनाय।	७.	रक्षा करने के लिये	उपयेमे ॥	१४.	विवाह किया

श्लोकार्थ—हे राजन् ! महाराज भरत तो महान् भगवत् भक्त थे। जब भगवान् ऋषभ देव ने उनको पृथ्वीतल की रक्षा करने के लिये नियुक्त किया। तब उनकी आज्ञा में रहकर उन्होंने विश्वरूप की कन्या पञ्चजनी से विवाह किया ॥

द्वितीयः श्लोकः

तस्यामु ह वा आत्मजान् कार्त्स्न्येनानुरूपानात्मनः पञ्च जनयामास भूतादिरिव भूतसूक्ष्माणि ॥२॥

पदच्छेद— तस्याम् उ ह वा आत्मजान् कार्त्स्न्येन अनुरूपान् आत्मनः पञ्च जनयामास भूतादिः इव भूत सूक्ष्माणि ॥

शब्दार्थ —

तस्याम्	१.	उससे	पञ्च	६.	पांच
उ ह वा	५.	उसी प्रकार	जनयामास	८.	उत्पन्न किये
आत्मजान्	७.	पुत्र	भूतादिः	१२.	पांच महाभूतों की (उत्पत्ति होती है)
कार्त्स्न्येन	२.	सर्वथा	इव	९.	जैसे
अनुरूपान्	४.	समान	भूत	१०.	पांच
आत्मनः।	३.	अपने ही	सूक्ष्माणि ॥	११.	तन्मात्राओं से

श्लोकार्थ—उससे सर्वथा अपने ही समान उसी प्रकार पांच पुत्र उत्पन्न किये, जैसे पांच तन्मात्राओं से पांच महाभूतों की उत्पत्ति होती है ॥

तृतीयः श्लोकः

सुमतिं राष्ट्रभृतं सुदर्शनमावरणं धूम्रकेतुमिति।
अजनाभं नामैतद्वर्षं भारतमिति यत आरभ्य व्यपदिशन्ति ॥३॥

पदच्छेद—

सुमतिम् राष्ट्रभृतम् सुदर्शनम् आवरणम् धूम्रकेतुम् ।इति।
अजनाभम नाम एतद् वर्षम् भारतम् इति यत् आरभ्य व्यपदिशन्ति ॥

शब्दार्थ—

सुमतिम्	१.	उनके नाम सुमति	एतद्	७.	इस
राष्ट्रभृतम्	२.	राष्ट्रभृत	वर्षम्	१२.	वर्ष
सुदर्शनम्	३.	सुदर्शन	भारतम्	११.	भारत
आवरणम्	४.	आवरण	इति	१३.	ऐसा
धूम्रकेतुम्	५.	धूम्रकेतु	यत्	९.	तभी से
इति।	६.	इस प्रकार थे	आरभ्य	१०.	लेकर लोग
अजनाभम्नाम	८.	अजनाम नामक वर्ष को	व्यपदिशन्ति ॥	१४.	कहते है

श्लोकार्थ—उनके नाम सुमति, राष्ट्रभृत, सुदर्शन, आवरण, धूम्रकेतु इस प्रकार थे। इस अजनाम नामक वर्ष को तभी से लेकर लोग भारत वर्ष ऐसा कहते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

स बहुविन्महीपतिः पितृपितामहवदुरुवत्सलतया स्वे स्वे कर्मणि वर्तमानाः प्रजाः स्वधर्ममनुवर्तमानः पर्यपालयत् ॥४॥

पदच्छेद—

सः बहुवित् महीपतिः पितृपितामहवत् उरु वत्सलतया स्वे स्वे कर्मणि वर्तमानाः प्रजाः स्वधर्मम् अनुवर्तमानः पर्यपालयत् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वे	कर्मणि	५.	कार्यों में
बहुवित्	३.	बहुत विद्वान् थे (वे)	वर्तमानाः	६.	लगी हुई
महीपतिः	२.	महाराज भरत	प्रजाः	७.	प्रजा का
पितृ-पितामह	८.	बाप-दादों के	स्व	१०.	अपने-अपने
वत्	९.	समान	धर्मम्	११.	धर्म में
उरु	१४.	अत्यन्त	अनु	१२.	स्थित
वत्सलतया	१५.	वात्सल्यभाव से	वर्तमानः	१३.	रहते हुये
स्वे स्वे	४.	अपने-अपने	पर्यपालयत् ॥	१६.	पालन करने लगे

श्लोकार्थ—वे महाराज भरत बहुत विद्वान् थे। वे बाप-दादों के समान अपने-अपने कार्यों में लगी हुई प्रजाओं का अपने-अपने धर्म में लगाते हुये, अत्यन्त वात्सल्य भाव से पालन करने लगे ॥

पञ्चमः श्लोकः

ईजे च भगवन्तं यज्ञक्रतुरूपं क्रतुभिरुच्चावचैः श्रद्धयाऽऽहृताग्निहोत्र दर्शपूर्णमासचातुर्मास्यपशुसोमानां प्रकृतिविकृतिभिरनुसवनं चातुर्होत्रविधिना ॥५॥

पदच्छेद—

ईजे च भगवन्तम् यज्ञक्रतुरूपम् क्रतुभिः उच्चावचैः श्रद्धया आहृत अग्निहोत्र दर्श पूर्णमास चातुर्मास्य पशु सोमानाम् प्रकृतिविकृतिभिः अनुसवनम् चातुर्होत्रविधिना ॥

शब्दार्थ—

ईजे	२२.	पूजन किया	दर्श	८.	दर्श
च	१.	और	पूर्णमास	९.	पूर्णमास
भगवन्तम्	२१.	श्री कृष्ण भगवान् का	चातुर्मास्य	१०.	चातुर्मास्य
यज्ञ	१८.	यज्ञ और	पशु	११.	पशु
क्रतु	१९.	क्रतु	सोमानाम्	१२.	सोमादि
रूपम्	२०.	रूप	प्रकृति	५.	प्रकृति और
क्रतुभिः	१४.	यज्ञों के द्वारा	विकृतिभिः	६.	विकृत के साथ (दोनों प्रकार के)
उच्चावचैः	१३.	बड़े छोटे	अनुसवनम्	१५.	निरन्तर
श्रद्धया	१६.	श्रद्धा पूर्वक	चातु	२.	चार
आहृत	१७.	उपस्थित होकर	र्होत्र	३.	ऋत्विजों द्वारा
अग्निहोत्र ॥	७.	अग्निहोत्र	विधिना ॥	४.	कराये जाने वाले

श्लोकार्थ—और चार ऋत्विजों द्वारा कराये जाने वाले प्रकृति और विकृति के साथ दोनों प्रकार के अग्निहोत्र, दर्श, पूर्णमास, चातुर्मास्य, पशु, सोमादि बड़े-छोटे यज्ञों के द्वारा निरन्तर श्रद्धापूर्वक उपस्थित होकर यज्ञ और क्रतु रूप श्रीकृष्ण भगवान् का पूजन किया ॥

षष्ठः श्लोकः

सम्प्रचरत्सु नानायागेषु विरचिताङ्गक्रियेष्वपूर्वं यत्तत्क्रियाफलं धर्माख्यं परे ब्रह्मणि यज्ञपुरुषे सर्वदेवतालिङ्गानां मन्त्राणामर्थनियामकतया साक्षात्कर्तरि परदेवतायां भगवति वासुदेव एव भावयमान आत्मनैपुण्यमृदितकषायो हविःष्वध्वर्युभिर्गृह्यमाणेषु स यजमानो यज्ञभाजो देवांस्तान् पुरुषावयवेष्वभ्यध्यायत् ॥६॥

पदच्छेद—सम्प्रचरत्सु नानायोगेषु विरचित अङ्ग क्रियेषु अपूर्वम् यत् तत् क्रिया फलम् धर्माख्यम् परे ब्रह्मणि यज्ञ पुरुषे सर्वदेवता लिङ्गानाम् मन्त्राणाम् अर्थ नियामकतया साक्षात् कर्तरि परदेवतायाम् भगवति वासुदेवे एव भावयमानः आत्मनैपुण्यम् मृदित कषायः हविःषु अध्वर्युभिः गृह्यमाणेषु सः यजमानः यज्ञभाजः देवान् तान् पुरुष अवयेषु अभ्यध्यायत् ॥

शब्दार्थ—

सम्प्रचरत्सु	४. अनुष्ठान के समय	साक्षात् कर्तरि	२०. पुरुषकर्ता (तथा)
नानायोगेषु	३. भिन्न-भिन्न यज्ञों के	परदेवतायाम्	२१. प्रधान देव हैं
विरचित अङ्ग	१. बनाये गये अङ्ग और	भगवति वासुदेवे	२२. भगवान् वासुदेव की
क्रियेषु	२. क्रियाओं के साथ	एव भावयमानः	२३. ही भावना करते हुये
अपूर्वम्	९. अपूर्व होता उसका	आत्मनैपुण्यम्	२४. अपनी चतुराई से
यत्	८. जो	मृदित	२५. हृदय को स्वच्छ
तत् क्रिया	१०. वही यज्ञरूप क्रिया का	कषाय	२६. करते हुये से तब
फलम्	११. फल है	हविः षु	७. हवि की आहुति को देवें
धर्माख्यम्	१२. उसका नाम धर्म है (उसेवे)	अध्वर्युभिः	५. अध्वर्युगणों द्वारा
परेब्रह्मणि	१४. परमब्रह्म को अर्पण करते थे	गृह्यमाणेषु	६. ली हुई
यज्ञ पुरुषे	१३. यज्ञ पुरुष	सः यजमानः	२७. वह यजमान
सर्व देवता	१५. सभी देवताओं के	यज्ञ भाजः	२८. यज्ञ के भोक्ता
लिङ्गानाम्	१६. प्रकाशक	देवान्	३०. देवताओं का
मन्त्राणाम्	१७. मन्त्रों के	तान्	२९. उन
अर्थ	१८. अर्थ के	पुरुष अवयवेषु	३१. भगवान् के अङ्गों के रूप में
नियामकतया	१९. वास्तविक प्रतिपाद्य	अभ्यध्यायत् ॥	३२. ध्यान करते हैं

श्लोकार्थ—बनाये गये अङ्ग और क्रियाओं के साथ भिन्न-भिन्न यज्ञों के अनुष्ठान के समय अध्वर्युगणों द्वारा ली हुई हवि की आहुति को देवें। जो अपूर्व होता उसका वही यज्ञ रूप क्रिया का फल है। उसका नाम धर्म है। उसे वे यज्ञ पुरुष परम ब्रह्म को अर्पण करते थे। सभी देवताओं के प्रकाशक मन्त्रों के अर्थ के वास्तविक प्रतिपाद्य पुरुषकर्ता तथा प्रधान देव हैं। भगवान् वासुदेव की ही भावना करते हुये अपनी चतुराई से हृदय को स्वच्छ करते हुये से तब वह यजमान यज्ञ के भोक्ता उन देवताओं का भगवान् के अङ्गों के रूप में ध्यान करते हैं॥

सप्तमः श्लोकः

एवं कर्मविशुद्ध्या विशुद्धसत्त्वस्यान्तर्हृदयाकाशशरीरे ब्रह्मणि भगवति वासुदेवे महापुरुषरूपोपलक्षणे श्रीवत्सकौस्तुभवनमालारिदरगदादिभिरु-पलक्षिते निजपुरुषहृल्लिखितेनात्मनि पुरुषरूपेण विरोचमान उच्चैस्तरां भक्तिरनुदिनमेधमानरयाजायत ॥७॥

पदच्छेद—

एवम् कर्म विशुद्ध्या सत्त्वस्य अन्तः हृदयाकाश शरीरे ब्रह्मणि भगवति वासुदेवे महापुरुषरूप उपलक्षणे श्रीवत्स कौस्तुभ बनमाला अरिदर गदाबिभिः उपलक्षिते निज पुरुष हृल्लिखितेन आत्मनि पुरुषरूपेण विरोचमानः उच्चैः तराम् भक्तिः अनुदिनम् एधमानरया अजायत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	वनमाला	१७. वनमाला
कर्म	२. कर्म की	अरिदर	१८. चक्र, शङ्ख और
विशुद्ध्या	३. शुद्धि से	गदादिभिः	१९. गदा आदि से
विशुद्ध	६. शुद्ध हो गया (उन्हें)	उपलक्षिते	२०. सुशोभित हैं (तथा)
सत्त्वस्य	४. उनका	निज	२१. अपने
अन्तः	५. अन्तः करण	पुरुष	२२. भक्तजनों के
हृदयाकाश	७. हृदयाकाश रूप	हृल्लिखितेन	२३. हृदय में मित्र के समान लिखे हैं
शरीरे	८. शरीर में	आत्मनि	२४. उनकी
ब्रह्मणि	१०. ब्रह्म	पुरुष	२५. पुरुष
भगवति	१२. भगवान्	रूपेण	२६. रूप में
वासुदेवे	१३. वासुदेव में	विरोचमानः	२७. पूजा करने से
महापुरुष	९. महापुरुषों के	उच्चैः तराम्	३०. उत्कृष्ट
रूप	११. स्वरूप	भक्तिः	३१. भक्ति
उपलक्षणे	१४. लक्षणों से लक्षित	अनुदिनम्	२८. प्रतिदिन
श्रीवत्स	१५. श्रीवत्स	एधमानरया	२९. वेग पूर्वक बढ़ने वाली
कौस्तुभ	१६. कौस्तुभ मणि	अजायत ॥	३२. प्राप्त हुई

श्लोकार्थ—इस प्रकार कर्म की शुद्धि से उनका अन्तःकरण शुद्ध हो गया। उन्हें हृदयाकाश रूप शरीर में, महापुरुषों के ब्रह्म स्वरूप भगवान् वासुदेव जो लक्षणों से लक्षित श्रीवत्स, कौस्तुभमणि, वनमाला चक्र, शङ्ख और गदा आदि से सुशोभित हैं, तथा अपने भक्तजनों के हृदय में मित्र के समान लिखे हुये हैं, उनकी पुरुष रूप में पूजा करने से प्रतिदिन वेग पूर्वक बढ़ने वाली उत्कृष्ट भक्ति प्राप्त हुई ॥

अष्टमः श्लोकः

एवं वर्षायुतसहस्रपर्यन्तावसितकर्मनिर्वाणावसरोऽधिभुज्यमानं स्वतनयेभ्यो रिक्थं पितृपैतामहं यथादायं विभज्य स्वयंसकलसम्पन्निकेतात्स्वनिकेतात् पुलहाश्रमं प्रवव्राज ॥८॥

पदच्छेद—एवम् वर्ष अयुत सहस्र पर्यन्त अवसितकर्म निर्वाण अवसरः अधिभुज्यमानम् स्वतनयेभ्यः रिक्थम् पितृपैतामहम् यथादायम् विभज्य स्वयम् सकल सम्यक्निकेतात् स्वनिकेतात् पुलहाश्रमम् प्रवव्राज ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	स्वतनयेभ्यः	१३.	अपने पुत्रों में
वर्ष	२.	वर्ष	रिक्थम्	११.	सम्पत्ति को उन्होंने
अयुतसहस्र	३.	एक करोड़	पितृ पैतामहम्	१०.	बाप-दादों की
पर्यन्त	४.	तक के	यथादायम्	१२.	यथा योग्य
अवसित	५.	निकल जाने पर	विभज्य	१४.	बाँट दिया (और)
कर्म	६.	प्रारब्ध कर्म	स्वयम् सकल	१५.	अपने आप सम्पूर्ण
निर्वाण	७.	क्षीण हुआ	सम्यक् निकेतात्	१६.	सम्पत्तियों के भाण्डार
अवसरः	८.	जानकर	स्वनिकेतात्	१७.	अपने महल से
अधिभुज्यमानम्	९.	अपनी भोगी हुई	पुलहाश्रमं प्रव्राज ॥	१८.	पुलहाश्राम चले गये

श्लोकार्थ—इस प्रकार एक करोड़ वर्ष तक के निकल जाने पर प्रारब्ध कर्म को क्षीण हुआ जानकर अपनी भोगी हुई बाप दादों की सम्पत्ति को उन्होंने अपने पुत्रों में यथा-योग्य बाँट दिया और अपने आप सम्पूर्ण सम्पत्तियों के भाण्डार अपने महल से पुलहाश्रम चले गये ॥

नवमः श्लोकः

यत्र ह वाव भगवान् हरिरद्यापि तत्रत्यानां निजजनानां वात्सल्येन संनिधाप्यत इच्छारूपेण ॥१०॥

पदच्छेद— यत्र ह वाव भगवान् हरिः अद्यापि तत्रत्यानाम् निज जनानाम् वात्सल्येन संनिधाप्यते इच्छारूपेण ॥

शब्दार्थ—

यत्र ह वाव	१.	जहाँ निश्चित ही	निजजनानाम्	६.	अपने भक्तों से
भगवान्	२.	भगवान्	वात्सल्येन	७.	अतिवात्सल्य के कारण
हरिः	३.	श्री हरि	संनिधाप्यते	१०.	मिलते रहते हैं
अद्यापि	४.	आज भी	इच्छा	८.	अपनी इच्छा के
तत्रत्यानाम्	५.	वहाँ रहने वाले	रूपेण ॥	९.	अनुसार

श्लोकार्थ—जहाँ निश्चित ही भगवान् श्री हरि आज भी वहाँ रहने वाले अपने भक्तों से अतिवात्सल्य के कारण अपनी इच्छा के अनुसार मिलते रहते हैं ॥

दशमः श्लोकः

यत्राश्रमपदान्युभयतो नाभिभिर्दृषच्चक्रैश्चक्रनदी नाम सरित्प्रवरा सर्वतः पवित्रीकरोति ॥१०॥

पदच्छेद—यत्र आश्रमपदानि उभयतः नाभिभिः दृषत् चक्रैः चक्र नदी नाम सरित् प्रवरा सर्वतः पवित्री करोति ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१. वहाँ	सरित्	४. नदी
आश्रमपदानि	५. आश्रमों के	प्रवरा	३. श्रेष्ठ
उभयतः नाभिभिः	६. दोनों ओर नाभि के समान	सर्वतः	८. सब ओर से
दृषत् चक्रैः	७. दिखाई देने वाली चक्राकार	पवित्री	९. पवित्र
चक्रनदी नाम	२. गण्डकी नाम की	करोति ॥	१०. करती रहती है

लोकार्थ—वहाँ गण्डकी नाम की श्रेष्ठ नदी आश्रमों के दोनों ओर नाभि के समान दिखाई देने वाली चक्राकार श्रेष्ठ नदी सब ओर से पवित्र करती रहती है ॥

एकादशः श्लोकः

तस्मिन् वाव किल स एकलः पुलहाश्रमोपवने विविधकुसुमकिसलय-तुलसिकाम्बुभिः कन्दमूलफलोपहारैश्च समीहमानो भगवत आराधनं विविक्त उपरतविषयाभिलाष उपभृतोपशमः परां निर्वृतिमवाप ॥११॥

पदच्छेद—तस्मिन् वाव किल सः एकलः पुलहाश्रम उपवने विविध कुसुम किसलय तुलसिका अम्बुभिः कन्द मूल फल उपहारैः च समीहमानः भगवतः आराधनम् विविक्त उपरत विषय अभिलाषः उपभृत उपशमः पराम् निर्वृतिम् अवाप ॥

शब्दार्थं—

तस्मिन्	४. उस	कन्द मूलफल	११. कन्द, मूल, फलादि
वाव	२. ही	उपहारैः	१२. उपहारों से
किल	१. निश्चय	चसमीहमानः	१३. पूजा करते हुये
सः	३. वे	भगवतः आराधनम्	१४. भगवान् की आराधना करने लगे
एकलः	८. अकेले ही रहकर	विविक्त	७. समस्त
पुलहाश्रमः	५. पुलहाश्रम के	उपरत	१६. निवृत्त होने पर
उपवने विविध	६. उपवने में अनेक प्रकार	विषय अभिलाषः	१५. विषयों की इच्छा से
कुसुम किसलय	९ पुष्प-पत्र	उपभृत उपशमः	१७. उन्हें शान्ति प्राप्त हो गई
तुलसिका अम्बुभिः	१०. तुलसीदल जल और	पराम् निर्वृतिम् अवाप ॥	और परम आनन्द प्राप्त हुआ

श्लोकार्थ—निश्चय ही वे उस पुलहाश्रम के उपवन में एकान्त स्थान में अकेले ही रहकर अनेक प्रकार के पुष्प, पत्र, तुलसीदल, जल और कन्द, मूल, फलादि उपहारों से पूजा करते हुये भगवान् की आराधना करने लगे। समस्त विषयों की इच्छा से निवृत्त होने पर उन्हें शान्ति प्राप्त हो गई और परम आनन्द प्राप्त हुआ ॥

द्वादशः श्लोकः

तयेत्थमविरतपुरुषपरिचर्यया भगवति प्रवर्धमानानुरागभरद्रुतहृदयशैथिल्यः प्रहर्षवेगेनात्मन्युद्भिद्यमानरोमपुलककुलक औत्कण्ठ्यप्रवृत्तप्रणयबाष्पनिरुद्धावलोकनयन एवं निजरमणारुणचरणारविन्दानुध्यानपरिचितभक्तियोगेन परिप्लुतपरमाह्लादगम्भीरहृदयह्रदावगाढधिषणस्तामपि क्रियमाणां भगवत्सपर्यां न सस्मार ॥१२॥

पदच्छेद तया इत्थम् अविरत पुरुष परिचर्यया भगवति प्रवर्धमान् अनुरागभरद्रुत हृदय शैथिल्यः प्रहर्षवेगेन आत्मनि उद्भिद्यमान रोम पुलक कुलक औत्कण्ठ्य प्रवृत्त प्रणयबाष्प निरुद्ध अवलोक नयनः एवम् निजरमण अरुण चरण अरविन्द अनुध्यान परिचित भक्तियोगेन परिप्लुत परम आह्लाद गम्भीर हृदय ह्रद अवगाढधिषणः ताम् अपि क्रियमाणाम् भगवत् सपर्याम् न सस्मार ॥

शब्दार्थ—

तया इत्थम्	१. उनके द्वारा इस प्रकार	नयन	१५. नेत्रों की
अविरत पुरुष	२. नियम पूर्वक भगवान् की	एवम्	१८. इस प्रकार
परिचर्यया	३. सेवा होने लगी	निजरमण	१९. अपने प्रियतम के
भगवति प्रवर्धमान	४. तब परमात्मा में बढ़ते हुये	अरुण चरण	२०. लाल-लाल चरण
अनुरागभर	५. प्रेम से भर जाने के कारण	अरविन्द अनुध्यान	२१. कमलों का ध्यान करते हुये
द्रुतहृदय	६. जल्दी ही उनका हृदय	परिचित	२३. सम्बन्ध हो गया
शैथिल्यः	७. द्रवित हो गया	भक्तियोगेन	२२. भक्तियोग से उनका
प्रहर्षवेगेन	८. अति प्रवलवेग से	परिप्लुत	२५. सरावोर
आत्मनि	९. उनके शरीर में	परम आह्लाद	२४. परम आनन्द से
उद्भिद्यमान	१२. होने लगा (और)	गम्भीर हृदयह्रद	२६. गहरे हृदय सरोवर में
रोमपुलककुलक	१०. रोमाञ्च पुलका वलि का समूह	अवगाढ	२८. डूब जाने से
औत्कण्ठ्य	१३. उत्कण्ठा के कारण	धिषणः	२७. नियम पूर्वक बुद्धि के
प्रवृत्त	११. उत्पन्न	ताम्	२९. उन्हें उस
प्रणयबाष्प	१४. प्रेम के आंसुओं से	अपि	३२. भी
निरुद्ध	१७. रुक गई	क्रियमाणाम्	३०. की जाने वाली
अवलोक	१६. दृष्टि	भगवत् सपर्याम्	३१. भगवान् की सेवा का
		न सस्मार ॥	३३. स्मरण नहीं रहा

श्लोकार्थ—उनके द्वारा इस प्रकार नियम पूर्वक भगवान् की सेवा होने लगी। तब परमात्मा में बढ़ते हुये प्रेम से भर जाने के कारण जल्दी ही उनका हृदय द्रवित हो गया। अति प्रबल वेग से उनके शरीर में रोमाञ्च, पुलका वलि का समूह उत्पन्न होने लगा। और उत्कण्ठा के कारण प्रेम के आंसुओं से नेत्रों की दृष्टि रुक गई। इस प्रकार अपने प्रियतम के लाल-लाल चरण कमलों का ध्यान करते हुये भक्ति योग से उनका सम्बन्ध हो गया। परम आनन्द से सरोबार गहरे हृदय सरोवर में नियम पूर्वक बुद्धि के डूब जाने से उन्हें उसकी जाने वाली भगवान् की सेवा का भी स्मरण नहीं रहा ॥

त्रयोदशः श्लोकः

इत्थं धृतभगवद्व्रतऐणेयाजिनवाससानुसवनाभिषेकार्द्रकपिशकुटिलजटा-कलापेन च विरोचमान सूर्यर्चा भगवन्तं हिरण्मयं पुरुषमुज्जिहाने सूर्य-मण्डलेऽभ्युपतिष्ठन्नेतदु होवाच ॥१३॥

पदच्छेद—इत्थम् धृतभगवद् व्रत ऐणेय अजिनवाससा अनुसवन अभिषेक आर्द्रकपिश कुटिल जटाकलापेन विरोचमानः सूर्य ऋचा भगवन्तम् हिरण्मयम् पुरुषम् उज्जिहाने सूर्य मण्डले अभ्युपतिष्ठम् एतद् ह उवाच ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१. इस प्रकार (उन्होंने)	विरोचमानः	९. शोभायमान वे
धृत	३. धारण किया था	सूर्य ऋचा	१३. सूर्य की ऋचा से
भगवद् व्रत	२. परमात्मा की सेवा का नियम	भगवन्तम्	१६. भगवान्
ऐणेय अजिन	४. वे शरीर पर कृष्ण मृग चर्म	हिरण्मयं	१५. प्रकाशमान
वाससा	५. का वस्त्र धारण करते थे	पुरुषम्	१७. नारायण की पूजा करते हुये
अनुसवन अभिषेक	६. त्रिकाल स्नान करने से	उज्जिहाने	१०. उदित हुये
आर्द्रकपिशकुटिल	७. गीली भूरी घुंघराली	सूर्यमण्डले	११. सूर्य मण्डल में
जटा कलापेन	८. जटाराशि से भी	अभ्युपतिष्ठन्	१२. उपस्थित हुये
		एतद् ह उवाच ॥	१८. ऐसा कहने लगे

श्लोकार्थ—इस प्रकार उन्होंने परमात्मा की सेवा का नियम धारण किया था। वे शरीर पर कृष्ण मृग चर्म का वस्त्र धारण करते थे। त्रिकाल स्नान करने से गीली, भूरी, घुंघराली, जटाराशि से भी शोभायमान वे उदित हुये सूर्य मण्डल में सूर्य की ऋचा से प्रकाशमान भगवान् नारायण की पूजा करते हुये ऐसा कहने लगे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

परोरजः सवितुर्जातवेदो देवस्य भर्गो मनसेदं जजान।
सुरेतसादः पुनराविश्य चष्टे हंसं गृध्राणं नृषद्रिङ्गिरामिमः ॥१४॥

पदच्छेद— परोरजः सवितुः जातवेदः देवस्य भर्गः मनसा इदम् जजान।
सुरेतसा अदः पुनः आविश्य चष्टे हंसम् गृध्राणम् नृषद्रिम् गिरा ।मिमः ॥

शब्दार्थ—

परोरजः	५. प्रकृति से परे हैं जिसने	जजान।	८.	उत्पत्ति की है
सवितुः	१. भगवान् सूर्य	सुरेतसा	९.	चित्त शक्ति के द्वारा
जातवेदः	३. कर्म फल देने वाला।	अदः पुनः	१०.	वही इसमें फिर से
देवस्य	२. देव का	आविश्य चष्टे	११.	प्रवेश करके रक्षा करते हैं
भर्गः	४. तेज	हंसम्	१२.	जीवों की
मनसः	६. संकल्प द्वारा	गृध्राणम्	१३.	विषयों की इच्छा रखने वाले
इदम्।	७. इस संसार की	नृषद्रिम् गिरा |मिमः ॥	१४.	मनुष्यों को गति देते हैं

श्लोकार्थ—भगवान् सूर्य देवका कर्मफल देने वाला तेज प्रकृति से परे हैं। जिसने संकल्प द्वारा इस संसार की उत्पत्ति की है। चित्त शक्ति के द्वारा वही फिर से इसमें प्रवेश करके जीवों की रक्षा करते हैं और मनुष्यों को गति देते हैं ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे सप्तमः अध्यायः ॥७॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पञ्चमः स्कन्धः

अष्टमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—एकदा तु महानद्यां कृताभिषेकनैयमिकावश्यको ब्रह्माक्षर-मभिगृणानो मुहूर्तत्रयमुदकान्त उपविवेश ॥१॥

पदच्छेद—

एकदा तु महानद्याम् कृत अभिषेक नैयमिक आवश्यकः
ब्रह्माक्षरम् अभिगृणानः मुहूर्त त्रयम् उदकान्ते उपविवेश ॥

शब्दार्थ—

एकदा	१.	एक बार	ब्रह्माक्षरम्	८.	ओंकार का
तु	२.	वे	अभिगृणानः	९.	जप करते हुये
महानद्याम्	३.	गण्डकी नदी में	मुहूर्त	११.	मुहूर्त तक
कृत	७.	निवृत्त होकर	त्रयम्	१०.	तीन
अभिषेक	४.	स्नान	उदकान्ते	१२.	नदी की धारा के पास
नैयमिक	५.	नित्य नैमित्तिक तथा	उपविवेश ॥	१३.	बैठे रहे
आवश्यकः	६.	शौचादि आवश्यक कृत्यों से			

श्लोकार्थ—एक बार वे गण्डकी नदी में स्नान, नित्य नैमित्तिक तथा शौचादि आवश्यक कृत्यों से निवृत्त होकर ओंकार का जप करते हुये तीन मुहूर्त तक नदी की धारा के पास बैठे रहे ॥

द्वितीयः श्लोकः

तत्र तदा राजन् हरिणी पिपासया जलाशयाभ्याशमेकैवोपजगाम ॥२॥

पदच्छेद—

तत्र तदा राजन् हरिणी पिपासया जलाशय अभ्याशम् एका एव उप जगाम ॥

शब्दार्थ—

तत्र	३.	वहाँ पर	जलाशय	६.	तालाब के
तदा	२.	उसी समय	अभ्याशम्	७.	पास
राजन्	१.	हे राजन्!	एक	८.	अकेली
हरिणी	४.	एक हरिणी	एव	९.	ही
पिपासया	५.	जल पीने की इच्छा से	उप जगाम ॥	१०.	गई

श्लोकार्थ—हे राजन्! उसी समय वहाँ पर एक हरिणी जल पीने की इच्छा से तालाब के पास अकेली ही गई ॥

तृतीयः श्लोकः

तया पेपीयमान उदके तावदेवाविदूरेण नदतो मृगपतेरुन्नादो लोकभयङ्कर उदपतत् ॥३॥

पदच्छेद—तया पेपीयमाने उदके तावद् एव विदुरेण नदतः मृगपतेः उन्नादः लोक भयङ्करः उदपतत् ॥

शब्दार्थ—

तया	१.	अभी वह	नदतः	७.	गरजते हुए
पेपीयमान	३.	पी ही रही थी कि	मृगपतेः	८.	सिंह की
उदके	२.	जल	उन्नादः	११.	गर्जना
तावद्	४.	तभी	लोक	९.	संसार को
एव	६.	ही	भयङ्करः	१०.	भयभीत करने वाली
अविदूरेण।	५.	अत्यन्त पास	उदपतत् ॥	१२.	सुनाई पड़ी

श्लोकार्थ—अभी वह जल पी ही रही थी कि तभी अत्यन्त पास ही गरजते हुए सिंह की संसार को भयभीत करने वाली गर्जना सुनाई पड़ी ॥

चतुर्थः श्लोकः

तमुपश्रुत्य सा मृगवधूः प्रकृतिविक्लवा चकितनिरीक्षणा सुतरामपि हरिभयाभिनिवेशव्यग्रहृदया पारिप्लवदृष्टिरगततृषा भयात् सहसैवोच्चक्राम ॥४॥

पदच्छेद—तम् उपश्रुत्य सा मृगवधूः प्रकृति विक्लवा चकित निरीक्षणा सुतराम् अपि हरिभय अभिनिवेश व्यग्र हृदया पारिप्लव दृष्टिः अगततृषा भयात् सहसा एव उच्चक्राम ॥

शब्दार्थ—

तम्, उपश्रुत्य	१.२.	उसे, सुनकर	अभिनिवेश, व्यग्र	१०.११.	मरणासन्न सी, बेचैन
सा	३.	वह	हृदया	१२.	हृदयवाली
मृगवधूः	४.	हरिणी	पारिप्लव दृष्टिः	१४.	भयभीत दृष्टि से उसने
प्रकृति	५.	स्वभाव से	अगत	१६.	बिना बुझाये
विक्लवा	६.	डरपोक होने के कारण	तृषा	१५.	प्यास
चकित	७.	चौकन्नी होकर	भयात्	१९.	भयभीत होकर
निरीक्षणा	८.	इधर-उधर देखती हुई	सहसा	१८.	अचानक
सुतराम् अपि।	१३.	अत्यधिक	एव	१७.	ही
हरिभय	९.	सिंह के भय से उत्पन्न	उच्चक्राम ॥	२०.	छलांग लगा दी

श्लोकार्थ—उसे सुनकर वह हरिणी स्वभाव से डरपोक होने के कारण चौकन्नी होकर इधर-उधर देखती हुई सिंह के भय से उत्पन्न मरणासन्न सी बेचैन हृदय वाली अत्यधिक भयभीत दृष्टि से उसने प्यास बिना बुझाये ही अचानक भयभीत होकर छलांग लगा दी ॥

पञ्चमः श्लोकः

तस्या उत्पतन्त्या अन्तर्वत्न्या उरुभयावगलितो योनिनिर्गतो गर्भः स्रोतसि निपपात ॥५॥

पदच्छेद—

तस्याः उत्पतन्त्या अन्तर्वत्न्याः उरुभय अवगलितः योनि निर्गतः गर्भः स्रोतसि निपपात ॥

शब्दार्थ—

तस्याः	१.	उस	योनि	७.	योनि मार्ग से
उत्पतन्त्याः	३.	उछलने (और)	निर्गतः	८.	निकल कर
अन्तर्वत्न्याः	२.	गर्भवती के	गर्भः	५.	वह गर्भ
उरुभय	४.	अत्यधिक भय के कारण	स्रोतसि	९.	नदी में
अवगलितः	६.	अपने स्थान से हटकर	निपपात ॥	१०.	गिर गया

श्लोकार्थ—उस गर्भवती के उछलने और अत्यधिक भय के कारण गर्भ अपने स्थान से हटकर योनि मार्ग से निकल कर नदी में गिर गया ॥

षष्ठः श्लोकः

तत्प्रसवोत्सर्पणभयखेदातुरा स्वगणेन वियुज्यमाना कस्याञ्चिद्दर्यां कृष्णसारसती निपपाताथ च ममार ॥६॥

पदच्छेद—

तत् प्रसव उत्सर्पण भयखेद आतुरा स्वगणेन वियुज्यमाना
कस्याश्चित् दर्याम् कृष्णसार सती निपपात अथ च ममार ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	वह	कस्याञ्चित्	११.	किसी
प्रसव	४.	गर्भ के	दर्याम्	१२.	गुफा में
उत्सर्पण	५.	गिर जाने से	कृष्णसार	२.	कृष्णसार मृग की
भयखेद	६.	भय और दुःख के कारण	सती	३.	पत्नी
आतुरा	७.	पीड़ित हो गई	निपपात	१३.	गिर पड़ी
स्व	८.	अपने	अथ	१५.	इसके बाद
गणेन	९.	झुंड से	च	१४.	और
वियुज्यमाना	१०.	बिछुड़ी हुई वह	ममार ॥	१६.	मर गई

श्लोकार्थ—वह कृष्णसार मृग की पत्नी गर्भ के गिर जाने से भय और दुःख के कारण पीड़ित हो गई। अपने झुंड से बिछुड़ी हुई वह किसी गुफा में गिर पड़ी और इसके बाद मर गई ॥

सप्तमः श्लोकः

तं त्वेणकुणकं कृपणं स्रोतसानूह्यमानमभिवीक्ष्यापविद्धं बन्धुरिवानुकम्पया राजर्षिर्भरत आदाय मृतमातरमित्याश्रमपदमनयत् ॥७॥

पदच्छेद—तम् तु एण कुणकम् कृपणम् स्रोतसा अनुउह्यमानम् अभिवीक्ष्य अपविद्धम् बन्धुः इव अनुकम्पया राजर्षिः भरतः आदाय मृतमातरम् इति आश्रमपदम् अनयत् ॥

शब्दार्थ—

तम् तु	१. उस	बन्धुः इव	८. बन्धुजनों के समान
एण	३. हरिण के	अनुकम्पया	९. दया से
कुणकम्	४. बच्चे को	राजर्षिर्भरतः	११. राजर्षि भरत
कृपणम्	२. बेचारे	आदाय	१४. उस बालक को लेकर
स्रोतसा	५. नदी के प्रवाह में	मृतमातरम्	१३. मातृहीन
अनुऊह्यमानम्	६. बहते हुये	इति	१२. इस प्रकार
अभिवीक्ष्य	७. देखकर	आश्रमपदम्	१५. आश्रम पर
अपविद्धम्	१०. भरे हुये	अनयत् ॥	१६. आ गये

श्लोकार्थ—और बेचारे उस हरिणी के बच्चे को नदी के प्रवाह में बहते हुये देखकर बन्धुजनों के समान दया से भरे हुये राजर्षि भरत इस प्रकार मातृहीन उस बालक को लेकर आश्रम पर आ गये।

अष्टमः श्लोकः

तस्य ह वा एणकुणक उच्चैरेतस्मिन् कृतनिजाभिमानस्याहरहस्तत्पोषणपालनलालनप्रीणनानुध्यायेनात्मनियमाः सहयमाः पुरुषपरिचर्यादय एकैकशः कतिपयेनाहर्गणेन वियुज्यमानाः किल सर्व एवोदवसन् ॥८॥

पदच्छेद—तस्य ह वा एण कुणकः उच्चैः एतस्मिन् कृतनिज अभिमानस्य अहः अहः तत् पोषण पालन लालन प्रीणन अनुध्यानेन आत्मनियमाः सहयमाः पुरुष परिचर्या आदयः एकैकशः कतिपयेन अहर्गणेन वियुज्यमानाः किल सर्व एव उदवसन् ॥

शब्दार्थ—

तस्य ह वा	१. इस प्रकार उस	अनुध्यानेन	१०. ध्यान रखने आदि से
एणकुणकः	२. मृग के बच्चे के प्रति	आत्मनियमाः	११. उनके नियम और
उच्चैः	३. उत्तरोत्तर (ममता बढ़ती गई)	सहयमाः पुरुष	१२. यम, भगवान् की
एतस्मिन्	४. इससे (उसमें)	परिचर्या आदयः	१३. पूजा आदि
कृत	६. हो गया	एकैकशः कतिपयेन	१४. एक-एक करके कुछ ही
निज अभिमानस्य	५. अपनेपन का अभिमान	अहर्गणेन	१६. दिनों में
अहः अह तत्	७. प्रति दिन उसको	वियुज्यमानाः	१६. छूट गये
पोषण पालन	८. पोसने पालने	किल सर्व एव	१७. निश्चय ही बाद में तो सब ही
लालन प्रीणन	९ पुचकारने प्यार करने	उदवसन् ॥	१८. छूट गया

श्लोकार्थ—इस प्रकार उस मृग के बच्चे के प्रति उत्तरोत्तर ममता बढ़ती गई। इससे उसमें अपनेपन का अभिमान हो गया। प्रतिदिन उसको पोसने, पालने, पुचकारने प्यार करने, ध्यान करने आदि से उनके नियम, यम, भगवान् की पूजा आदि एक-एक करके कुछ ही दिनों में छूट गये। निश्चय ही बाद में तो सब कुछ ही छूट गया ॥

नवमः श्लोकः

अहो बतायं हरिणकुणकः कृपण ईश्वररथचरणपरिभ्रमणरयेण स्वगणसुहृद्‌बन्धुभ्यः परिवर्जितः शरणं च मोपसादितो मामेव मातापितरौ भ्रातृज्ञातीन् यौथिकांश्चैवोपेयाय नान्यं कञ्चन वेद मय्यतिविस्रब्धश्चात एव मया मत्परायणस्य पोषणपालनप्रीणनलालनमनसूयुनानुष्ठेयं शरण्योपेक्षादोषविदुषा ॥९॥

पदच्छेद—अहो बत अयम् हरिण कुणकः कृपणः ईश्वररथ चरण परिभ्रमण रयेण स्वगणसुहृद् बन्धुभ्यः परिवर्जितः शरणम् च मा उपसादितः माम् एव माता पितरौ भ्रातृज्ञातीन् यौथिकांश्च एव उपेयाय नअन्यम् कञ्चन वेद मयि अति विस्रब्धः च अत एव मया मत् परायणस्य पोषण पालन प्रीणन लालनम् अनसूयुना अनुष्ठेयम् शरण्य उपेक्षादोष विदुषा ॥

शब्दार्थ—

अहो	२.	आश्चर्य है कि	यौथिकांश्च	१७.	यूथ का साथी
बत अयम्	१.	यह कितना	च एव	१८.	ही
हरिण कुणक	४.	मृग के बच्चे को	उपेयाय	१९.	जानता है
कृपण	३.	बेचारे	न	२२.	नहीं
ईश्वर-रथ	५.	काल	अन्यम्	२०.	अन्य
चरण	७.	चक्र के	कञ्चन	२१.	किसी को
परिभ्रमण	६.	घूमने के	वेद	२३.	जानता है
रयेण		वेग ने	मयि-अति	२४.	इसका मेरे प्रति अत्यधिक
स्वगण सुहृद	७.	अपने झुण्ड परिजनों और	विस्रब्धः च	२५.	विश्वास है
बन्धुभ्यः	८.	बन्धुओं से	अतएव	२६.	इसलिये
परिर्वजितः	९.	दूर करके	मया-मत्	२७.	मुझ अपने
शरणम्	११.	शरण में	परायणस्य	२८.	आश्रित को
च	१३.	और	पोषण पालन	२९.	खिलाना-पिलाना-पालना
मे	१०.	मेरी	प्रीणन लालनम्	३०	दुलार प्यार करना
उपसादितः	१२.	पहुँचा दिया है	अनसूयुना	३२.	दोष बुद्धि छोड़कर
माम्-एव	१४.	यह मुझे ही	अनुष्ठेयम्	३३.	करना चाहिये-क्योंकि
माता-पितरौ	१५.	माता-पिता	शरण्य-उपेक्षा	३५.	शरणागत की उपेक्षा को
भ्रातृ ज्ञातीन् ।	१६.	भाई-बन्धु	दोष	३६.	दोष माना है
			विदुषा ॥	३४.	विद्वानों ने

श्लोकार्थ—यह कितना आश्चर्य है कि बेचारे मृग के बच्चे को काल चक्र के घूमने के वेग ने अपने झुण्ड परिजनों और बन्धुओं से दूर करके मेरी शरण में पहुँचा दिया है ! और यह मुझे ही माता-पिता-भाई बन्धु-यूथ का स्वामी जानता है, अन्य किसी को नहीं जानता है। इसका मेरे प्रति अत्यधिक विश्वास है। इसलिये मुझे अपने आश्रित को खिलाना-पिलाना-प्यार करना-दुलार करना चाहिये। क्योंकि विद्वानों ने शरणागत की उपेक्षा को दोष माना है ॥

दशम श्लोकः

नूनं ह्यार्याः साधव उपशमशीलाः कृपणसुहृद एवं विधार्थे स्वार्थानपि गुरुतरानुपेक्षन्ते ॥१०॥

पदच्छेद—

नूनम् हि आर्याः साधवः उपशम शीलाः कृपण सुहृदः
एवम् विध अर्थे स्वार्थान् अपि गुरुतरान् उपेक्षन्ते ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	१.	निश्चय	सुहृदः	८.	रक्षा करने वाले
हि	२.	ही	एवम्	९.	ऐसी
आर्याः	३.	सज्जन	विधअर्थे	१०.	परिस्थिति में
साधवः	४.	साधु पुरुष	स्वार्थान्	१२.	स्वार्थ की
उपशम	५.	शान्त	अपि	१३.	भी
शीलाः	६.	स्वभाव	गुरुतरान्	११.	बड़े से बड़े
कृपण	७.	दीनों को	उपेक्षन्ते ॥	१४.	परवाह नहीं करते हैं

श्लोकार्थ—निश्चय ही सज्जन, साधु पुरुष, शान्त स्वभाव, दीनों की रक्षा करने वाले ऐसी परिस्थिति में बड़े से बड़े स्वार्थ की भी परवाह नहीं करते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

इति कृतानुषङ्ग आसनशयनाटनस्थानाशनादिषु सह मृगजहुना स्नेहानुबद्धहृदय आसीत् ॥११॥

पदच्छेद—

इतिकृत अनुषङ्ग आसन शयन अटन स्थान अशनं आदिषु
सह मृग जहुना स्नेह अनुबद्ध हृदयः आसीत् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	आदिषु	११.	उस बच्चे के
कृत	५.	बढ़ जाने से	सह	१२.	साथ
अनुषङ्ग	४.	आसक्ति के	मृग	२.	मृग के
आसन	६.	बैठते	जहुना	३.	बच्चे में
शयन	७.	लेटते	स्नेह	१४.	स्नेह से
अटन	८.	टहलते	अनुबद्ध	१५.	बंधा
स्थान	९.	ठहरते	हृदय	१३.	उनका हृदय
अशन	१०.	भोजन करते समय भी	आसीत् ॥	१६.	रहता था

श्लोकार्थ—इस प्रकार मृग के बच्चे में आसक्ति के बढ़ जाने से बैठते-लेटते-टहलते-ठहरते-भोजन करते समय भी उस बच्चे के साथ उनका हृदय स्नेह से बंधा रहता था ॥

द्वादशः श्लोकः

कुशकुसुमसमित्पलाशफलमूलोदकान्याहरिष्यमाणो वृकसालावृकादिभ्यो भयमाशंसमानो यदा सह हरिणकुणकेन वनं समाविशति ॥१२॥

पदच्छेद—कुश कुसुम समित् पलाश फल मूल उदकानि आहरिष्यमाणः वृक सालावृक आदिभ्यः भयम् आसंशमानः यदा सह हरिण कुणकेन वनम् समाविशति ॥

शब्दार्थ—

कुश कुसुम	१.२.	कुश, पुष्प	आदिभ्यः भयम्	१०.११.	इत्यादि के भय की
समित्	३.	समिधा	आसंशमानः	१२.	आशंका करते हुये
पलाश फल	४.५.	पलाश फल	यदा	१३.	जब वह जाते तब
मूल	६.	जड़ और	सह हरिण	१४.१५.	अपने साथ ही हरिणी के
उदकानि	७.	जल आदि	कुणकेन	१६.	बच्चे को भी
आहरिष्यमाणः	८.	लाते समय	वनम्	१७.	वन को
वृक सालावृक	९.	भेड़ियों कुत्तों	समाविशति ॥	१८.	ले जाते थे

श्लोकार्थ—कुश, पुष्प, समिधा, पलाश, फल, जड़ और जल आदि लाते समय भेड़ियों, कुत्तों इत्यादि के भय की आशंका करते हुये जब वह जाते तब अपने साथ ही हिरन के बच्चे को भी वन को ले जाते थे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

पथिषु च मुग्धभावेन तत्र तत्र विषक्तमतिप्रणयभरहृदयः कार्पण्यात्स्कन्धेनोद्वहति एवमुत्सङ्ग उरसि चाधायोपलालयन्मुदं परमामवाप ॥१३॥

पदच्छेद—पथिषु च मुग्ध भावेन तत्र तत्र विषक्त मति प्रणयभर हृदयः कार्पण्यात् स्कन्धेन उद्वहति एवम् उत्सङ्गे उरसि च आधाय उपलालयन् मुदम् परमाम् अवाप ॥

शब्दार्थ—

पथिषु च	२.१.	मार्ग में और	उद्वहति	१०.	चढ़ा लेते थे
मुग्धभावेन	३.	मुग्ध भाव से	एवम् उत्सङ्गः	११.	इस प्रकार गोद में लेकर
तत्र तत्र	४.	जहाँ-तहाँ वह	उरसि च	१३.१२.	हृदय से और
विषक्तम्	५.	अटक जाता तब	आधाय	१४.	लगाकर
अति प्रणयभर	६.	अत्यन्त प्रेम से भरे हुये	उपलालयन्	१५.	दुलार करने में (उन्हें)
हृदयः	७.	हृदय से	मुदम्	१७.	सुख
कार्पण्यात्	८.	दया के कारण वे उसे	परमाम्	१६.	अत्यधिक
स्कन्धेन	९.	कन्धे पर	अवाप ॥	१८.	प्राप्त होता

श्लोकार्थ—और मार्ग में मुग्ध भाव से जहाँ-तहाँ वह अटक जाता तब अत्यन्त प्रेम से भरे हुये हृदय से दया के कारण वे उसे कन्धे पर चढ़ा लेते थे। इस प्रकार गोद में लेकर और हृदय से लगाकर दुलार करने में उन्हें अत्यधिक सुख प्राप्त होता ॥

चतुर्दशः श्लोकः

क्रियायां निर्वर्त्यमानायामन्तरालेऽप्युत्थायोत्थाय यदैनमभिचक्षीत तर्हि वाव स वर्षपतिः प्रकृतिस्थेन मनसा तस्मा आशिष आशास्ते स्वस्ति स्ताद्वत्स ते सर्वत इति ॥१४॥

पदच्छेद—क्रियायाम् निर्वर्त्यमानायाम् अन्तराले अपि उत्थाय उत्थाय यदा एनम् अभिचक्षीत तर्हि वाव सः वर्षपतिः प्रकृतिस्थेन मनसा तस्मै आशिषः आशास्ते स्वस्ति स्तात् वत्स ते सर्वतः इति ॥

शब्दार्थ—

क्रियायाम्	१. नित्य और नैमित्तिक कर्मों के	मनसा	१०. मन से
निवर्त्यमानायाम्	२. करते समय	तस्मै	११. उसे
अन्तराले अपि	३. बीच-बीच में भी	आशिषः	१२. आशीर्वाद देते हुये
उत्थाय उत्थाय	४. उठ-उठकर	आशास्ते	१३. कामना करते कि
यदा-एनम्	५. जब वे उसे	स्वस्ति	१५. कल्याण
अभिचक्षीत	६. देखते	स्तात्	१६. होवे
तर्हि वाव	७. तब निश्चय ही	वत्स	१४. हे वत्स
सः वर्षपतिः	८. उन राजा भरत को शान्ति मिलती	ते सर्वतः इति ॥	१७. तुम्हें सब जगह सुख मिले
प्रकृतिस्थेन	९. वे अपने में स्थित रहकर		

श्लोकार्थ—नित्य और नैमित्तिक कर्मों के करते समय बीच-बीच में उठ-उठकर जब वे उसे देखते तब निश्चय ही उन राजा भरत को अति शान्ति मिलती। वे अपने में स्थित रहकर मन से उसे आशीर्वाद देते हुये कामना करते कि हे वत्स ! तेरा कल्याण होवे। तुम्हें सब जगह सुख मिले ॥

पञ्चदशः श्लोकः

अन्यदा भृशमुद्विग्नमना नष्टद्रविण इव कृपणः सकरुणमतितर्षेण हरिणकुणकविरहविह्वलहृदयसन्तापस्तमेवानुशोचन् किल कश्मलं महदभिरम्भित इति होवाच ॥१५॥

पदच्छेद—अन्यदा भृशम् उद्विग्नमनाः नष्ट द्रविण इव कृपणः सकरुणम् अति तर्षेण हरिण कुणक विरह विह्वल हृदय सन्तापः तम् एव अनुशोचन् किल कश्मलम् महत् अभिरम्भितः इति ह उवाच ॥

शब्दार्थ—

अन्यदा	१. कभी कभी जब (वह दिखाई न देता) तब	विरहविह्वल हृदयः	१०. वियोग से व्याकुल हृदय वाले
भृशम्	२. अत्यधिक	सन्तापः	११. सन्तप्त होकर
उद्विग्नमनाः	३. बेचैन मन वाले होकर	तम् एव	१२. उसी के बारे में
नष्ट द्रविण	४. लुटे हुये धन वाले तथा	अनुशोचन्	१३. सोचते हुये
इव कृपणः	६.५. समान दीन मनुष्य के	किल	१४. वे
सकरुणम्	७. दुःख के कारण	कश्मलम् महत्	१६.१५. मोह से अत्यन्त
अतितर्षेण	८. वे अधिक व्याकुल होते और	अभिरम्भितः	१७. भर जाते
हरिण-कुणक	९. हरिण के बच्चे के	इति ह उवाच ॥	१८. और ऐसा कहने लगते

श्लोकार्थ—कभी-कभी जब वह दिखाई न देता तब अत्यधिक बेचैन मन वाले होकर लुटे हुये धन वाले तथा दीन मनुष्य के समान दुःख के कारण वे अधिक व्याकुल होते और हरिण के बच्चे के वियोग से व्याकुल हृदय वाले, सन्तप्त होकर उसी के बारे में सोचते हुये वे मोह से अत्यन्त भर जाते और ऐसा कहने लगते ॥

षोडशः श्लोकः

अपि बत स वै कृपण एणबालको मृतहरिणीसुतोऽहो ममानार्यस्य शठकिरातमतेरकृतसुकृतस्य कृतविस्रम्भ आत्मप्रत्ययेन तदविगणयन् सुजन इवागमिष्यति ॥१६॥

पदच्छेद—अपि बत सः वै कृपणः एण बालकः मृत हरिणी सुतः अहो मम अनार्यस्य शठ किरात मतेः अकृत सुकृतस्य कृत विस्तम्भ आत्म प्रत्ययेन तद् अविगणयन् सुजनः इव आगमिष्यति ॥

शब्दार्थ—

अपि	१.	यह भी	मतेः	११.	बुद्धि वाले
बत	२.	आश्चर्य है कि	अकृत	१३.	न करने वाले
सः वै	३.	वह	सुकृतस्य	१२.	पुण्य
कृपणः	४.	दीन	कृत	१७.	करके
एणबालकः	५.	हरिणी का बच्चा	विस्रम्भ	१६.	विश्वास
मृत हरिणी	६.	मातृ हीन	आत्म	१८.	अपने
सुतः	७.	बालक होने पर भी	प्रत्ययेन	१९.	विश्वास के कारण
अहो	८.	ओह !	तद्	२०.	उन अपराधों को
मम	१४.	मुझ	अविगणयन्	२१.	न सोचते हुये
अनार्यस्य	१५.	अनार्य का	सुजनः इव	२२.२३.	सत्पुरुषों के समान
शठ किरात	९.१०.	दुष्ट बहेलिये की सी	आगमिष्यसि ॥	२४.	आ जावेगा

श्लोकार्थ—यह भी आश्चर्य है कि वह दीन हरिणी का बच्चा मातृहीन बालक होने पर भी अहो ! दुष्ट बहेलिये की सी बुद्धि वाले, पुण्य न करने वाले मुझ अनार्य का विश्वास करके अपने विश्वास के कारण उन अपराधों को न सोचते हुये सत्पुरुषों के समान आ जावेगा ।

सप्तदशः श्लोकः

अपि क्षेमेणास्मिन्नाश्रमोपवने शष्पाणि चरन्तं देवगुप्तं द्रक्ष्यामि ॥१७॥

पदच्छेद—

अपि क्षेमेण अस्मिन् आश्रम उपवने शष्पाणि चरन्तम् देवगुप्तम् द्रक्ष्यामि ॥

शब्दार्थ—

अपि	१.	क्या कभी मैं	शष्पाणि	८.	घास
क्षेमेण	२.	भगवान् की कृपा से सुरक्षित उस	चरन्तम्	९.	चरते हुये
अस्मिन्	५.	इस	देव	३.	देव
आश्रम	६.	आश्रम के	गुप्तम्	४.	गुप्त को
उपवने ॥	७.	उपवन में	द्रक्ष्यासि ॥	१०.	देखूंगा

श्लोकार्थ—क्या कभी मैं भगवान् की कृपा से सुरक्षित उस देव गुप्त को इस आश्रम के उपवन में घास चरते हुये देखूंगा ॥

अष्टादशः श्लोकः

अपि च न वृकः सालावृकोऽन्यतमो वा नैकचर एकचरो वा भक्षयति ॥१८॥

पदच्छेद—

अपि च न वृकः सालावृकः अन्य तमः वा न एकचरः वा एकचरः भक्षयति ॥

शब्दार्थ—

अपि	२.	ऐसा भी	तमः	८.	कोई
च	१.	और	वा	७.	अथवा
न	३.	न हो कि	न एकचरः	९.	गोल बाँधकर घूमने वाले सूकरादि
वृकः	४.	कोई भेड़िया	वा	१०.	या
सालावृकः	५.	कुत्ता	एकचरः	११.	अकेले घूमने वाले व्याघ्र आदि
अन्य	६.	अन्य	भक्षति ॥	१२.	उसे खा जावें

श्लोकार्थ—और ऐसा भी न हो कि कोई भेड़िया कुत्ता अथवा अन्य कोई गोल बाँधकर घूमने वाले (सूकरादि) या अकेले घूमने वाले व्याघ्र आदि उसे खा जावें ॥

एकोनविंशः श्लोकः

निम्लोचति ह भगवान् सकलजगत्क्षेमोदयस्त्रय्यात्माद्यापि मम न मृगवधून्यास आगच्छति ॥१९॥

पदच्छेद—

निम्लोचति ह भगवान् सकल जगत् क्षेम उदयः त्रयी आत्मा अद्यापि मम न मृगवधू न्यास आगच्छति ॥

शब्दार्थ—

निम्लोचति	८.	अस्त होना चाहते हैं (किन्तु)	आत्मा	६.	स्वरूप
ह	१.	अरे	अद्यापि	९.	अभी भी
भगवान्	७.	भगवान् सूर्य	मम	१०.	मेरी वह
सकल जगत्	२.	सारे संसार की	न	१३.	नहीं
क्षेम	३.	कुशल के लिये	मृगवधू	११.	मृगी की
उदयः	४.	प्रकट होने वाले	न्यास	१२.	धरोहर
त्रयी	५.	वेदत्रयी	आगच्छति ॥	१४.	आई

श्लोकार्थ—अरे सारे संसार के कुशल के लिये प्रकट होने वाले वेदत्रयी स्वरूप भगवान् सूर्य अस्त होना चाहते हैं किन्तु अभी भी मेरी वह मृगी की धरोहर नहीं आई ॥

विंशः श्लोकः

अपिस्विदकृतसुकृतमागत्य मां सुखयिष्यति हरिणराजकुमारो विविधरुचिरदर्शनीयनिजमृगदारकविनोदैरसन्तोषं स्वानामपनुदन् ॥२०॥

पदच्छेद—अपिस्वित् अकृत सुकृतम् आगत्य माम् सुखयिष्यति हरिण राजकुमारः विविध रुचिर दर्शनीय निज मृग दारक विनोदैः असन्तोषम् स्वानाम् अपनुदन् ॥

शब्दार्थ—

अपि	२.	कभी	रुचिर	१०.	मनोहर तथा
स्वित्	१.	क्या	दर्शनीय	११.	देखने योग्य
अकृत	५.	न करने वाले के पास	निज	१२.	अपनी
सुकृतम्	४.	पुण्य	मृग	८.	मृग
आगत्य	६.	आकर	दारक	९.	शावकोचित
माम्	१७.	मुझे	विनोदैः	१३.	क्रीडाओं से
सुखयिष्यति	१८.	आनन्दित करेगा	असन्तोषम्	१५.	शोक को
हरिण राजकुमारः	३.	वह हरिण राजकुमार मुझ	स्वानाम्	१४.	स्वजनों के
विविध	७.	भाँति-भाँति की	अपनुदन् ॥	१६.	दूर करते हुये

श्लोकार्थ—क्या कभी वह हरिण राजकुमार मुझ पुण्य न करने वाले के पास आकर भाँति-भाँति की मृग शावकोचित मनोहर तथा देखने योग्य अपनी क्रीडाओं से स्वजनों के शोक को दूर करते हुये मुझे आनन्दित करेगा ॥

एकविंशः श्लोकः

क्ष्वेलिकायां मां मृषासमाधिनाऽऽमीलितदृशं प्रेमसंरम्भेण चकितचकित आगत्य पृषदपरुष विषाणाग्रेण लुठति ॥२१॥

पदच्छेद—क्ष्वेलिकायाम् माम् मृषा समाधिना आमीलित दृशम् प्रेम संरम्भेण चकित चकितः आगत्य पृषद् अपरुष विषाण अग्रेण लुठति ॥

शब्दार्थ—

क्ष्वेलिकायाम्	१.	क्रीडा के समय	चकित-चकितः	८.	चञ्चल चित्त से
माम्	२.	मेरे द्वारा	आगत्य	९.	मेरे पास आकर
मृषा	४.	झूठ-मूठ ही	पृषद्	११.	कुछ
समाधिना	५.	समाधि लगाने और	अपरुष	१२.	कोमल
आमीलित	७.	मूंद लेने पर	विषाण	१०.	सींगों के
दृशम्	६.	आँख	अग्रेण	१३.	अग्र भाग से
प्रेमसंरम्भेण	३.	प्रणय कोप से	लुठति ॥	१४	मुझे खुजलाता था

श्लोकार्थ—क्रीड़ा के समय मेरे द्वारा प्रणय कोप से झूठ-मूठ ही समाधि लगाने और आँख मूंद लेने पर चञ्चल चित्त से मेरे पास आकर सींगों के अग्रभाग से मुझे खुजलाता था ॥

द्वाविंशः श्लोकः

आसादितहविषि बर्हिषि दूषिते मयोपालब्धो भीतभीतः
सपद्युपरतरास ऋषिकुमारवदवहितकरणकलाप आस्ते ॥२२॥

पदच्छेद—

आसादित हविषि बर्हिषि दूषिते मया उपलब्धः भीतभीतः
सपदि उपरतरासः ऋषिकुमार वत् अवहित करणकलापः आस्ते ॥

शब्दार्थ—

आसादित	३. रख देने पर	सपदि	८. तत्काल
हविषि	२. हवन सामग्री	उपरतरासः	९. उछल-कूद छोड़ देता
बर्हिषि	१. कुशों पर	ऋषिकुमार वत्	१०. ऋषि कुमार के समान
दूषिते	४. वह उसे अपवित्र करता	अवहित	१३. रोक कर
मया	५. और मेरे द्वारा	करण	११. इन्द्रियों के
उपलब्धः	६. डांट देने पर	कलापः	१२. समूह को
भीतभीतः	७. भयभीत होकर	आस्ते ॥	१४. चुपचाप बैठ जाता

श्लोकार्थ—कुशों पर हवनसामग्री रख देने पर वह उसे अपवित्र करता और मेरे द्वारा डांट देने पर भयभीत होकर तत्काल उछल कूद छोड़ देता और ऋषिकुमार के समान इन्द्रियों के समूह को रोककर चुपचाप बैठ जाता ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

किं वा अरे आचरितं तपस्तपस्विन्यानया यदियमवनिः सविनयकृष्ण-सारतनयतनुतरसुभगशिवतमाखरखुरपदपङ्क्तिभिर्द्रविणविधुरातुरस्य कृपणस्य मम द्रविणपदवीं सूचयन्त्यात्मानं च सर्वतः कृतकौतुकं द्विजानां स्वर्गापवर्गकामानां देवयजनं करोति ॥२३॥

पदच्छेद—

किम् वा अरे आचरितम् तपः तपस्विन्या अनया यत् इयम् अवनिः सविनय कृष्णसार तनय तनुतर सुभग शिवतम अखर खुर पद पङ्क्तिभिः द्रविण विधुर आतुरस्य कृपणस्य मम द्रविण पदवीम् सूचयन्ती आत्मानम् च सर्वतः कृत कौतुकम् द्विजानाम् स्वर्ग अपवर्ग कामानान् देव यजनम् करोति ॥

शब्दार्थ—

किम्	५.	कौन सा	द्रविण	२१.	धन से
वा अरे	१.	अथवा अहो	विधुर	२२.	रहित
आचरितम्	७.	किया है	आतुरस्य	२३.	व्याकुल और
तपः	६.	तप	कृपणस्य	२४.	दीन का
तपस्विन्या	३.	तपस्विनी	मम	२०.	मुझ
अनया	२.	इस	द्रविण	२५.	धन की
यत्	८	जो	पदवीम्	२६.	प्राप्ति का मार्ग
इयम्	९.	यह	सूचयन्ती	२७.	दिखा रही है
अवनिः	४.	पृथ्वी ने	आत्मानम्	३६.	एवम् अपने शरीर को
सविनय	१०.	अत्यन्त विनम्र	च	२८.	और
कृष्णसार	११.	कृष्ण सार	सर्वतः	२९.	सर्वत्र
तनय	१२.	किशोर के	कृत	३१.	करके
तनुतर	१३.	छोटे-छोटे	कौतुकम्	३०.	क्रीडा
सुभग	१४.	सुन्दर	द्विजानाम्	३५.	ब्राह्मणों के लिये
शिवतम	१५.	सुखकारी	स्वर्ग	३२.	स्वर्ग और
अखर	१६.	सुकोमल	अपवर्ग	३३.	मोक्ष के
खुर	१७.	खुरों वाले	कामानाम्	३४.	इच्छुक
पद	१८.	चरणों के	देवयजनम्	३७.	यज्ञ स्थल
पङ्क्तिभिः	१९.	चिह्नों से	करोति ॥	३८.	बना रही है

श्लोकार्थ—अथवा अहो इस पृथ्वी ने कौन सा तप किया है, जो यह अत्यन्त विनम्र कृष्णसार किशोर के छोटे-छोटे सुन्दर सुखकारी सुकोमल खुरों वाले चरणों के चिह्नों से मुझ धन से रहित, व्याकुल और दीन को धन की प्राप्ति का मार्ग दिखा रही है और सर्वत्र क्रीड़ा करके स्वर्ग और मोक्ष के इच्छुक ब्राह्मणों के लिये यज्ञ स्थल बना रही है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अपिस्विदसौ भगवानुडुपतिरेनं मृगपतिभयान्मृतमातरं मृगबालकं स्वाश्रमपरिभ्रष्टमनुकम्पया कृपणजनवत्सलः परिपाति ॥२४॥

पदच्छेद— अपि स्वद् असौ भगवान् उडुपतिः एनम् मृगपति भयात् मृत मातरम् मृग बालकम् स्व आश्रम परिभ्रष्टम् अनुकम्पया कृपण जनवत्सलः परिपाति ॥

शब्दार्थ—

अपिस्विद्	१.	ऐसा भी हो सकता है कि	मृग	९.	हरिण के
असौ	२.	यह	बालकम्	१०.	बालक पर
भगवान्	१४.	भगवान्	स्व आश्रम	७.	अपने स्थान से
उडुपतिः एनम्	१५.	नक्षत्रों के स्वामी चन्द्रमा इसकी	परिभ्रष्टम्	८.	बिछुड़े हुये
मृगपति	३.	सिंह के	अनुकम्पया	११.	कृपा करके
भयात्	४.	भय से	कृपण	१२.	दीन
मृत	५.	मरी हुई	जनवत्सलः	१३.	जनों से स्नेह करने वाले
मातरम्।	६.	माँ वाले	परिपाति ।।	१६.	रक्षा कर रहे हैं

श्लोकार्थ—ऐसा भी हो सकता है कि यह सिंह के भय से मरी हुई माँ वाले अपने स्थान से बिछुड़े हुये हरिण के बालक पर कृपा करके दीन जनों से स्नेह करने वाले भगवान् नक्षत्रों के स्वामी चन्द्रमा इसकी रक्षा कर रहे हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

किं वाऽऽत्मजविश्लेषज्वरदवदहनशिखाभिरुपतप्यमानहृदयस्थलनलिनीकं मामुपसृतमृगीतनयं शिशिरशान्तानुरागगुणितनिजवदनसलिलामृतमय-गभस्तिभिः स्वधयतीति च ॥२५॥

पदच्छेद—किम् वा आत्मज विश्लेष ज्वर दव दहन शिखाभिः उपतप्यमान हृदय स्थल नलिनीकम् माम् उपसृत मृगीतनयम् शिशिरशान्त अनुराग गुणित निजवदन सलिल अमृतमय गभस्तिभिः स्वधयति इति च ॥

शब्दार्थ—

किम् वा आत्मज	१. अथवा अपने पुत्र के	तनयम्	१०. बच्चा (चन्द्रमा में पहुंच गया है)
विश्लेष-ज्वर	२. वियोग रूप-ज्वर की	शिशिर शान्त	११. शीतल-शान्त
दव-दहन	३. दावाग्नि की ज्वाला की	अनुराग गुणित	१२. स्नेह से परिपूर्ण और
शिखाभिः	४. शिखाओं से	निजवदन	१३. अपने शरीर को
उतपप्यमान	५. जलते हुये	सलिल	१४. शीतलता रूपी
हृदय-स्थल	६. हृदय	अमृतमय	१५. अमृत मयी
नलिनीकम्	७. कमल वाले	गभिस्तिभिः	१६. किरणों से मुझे
माम् उपसृत	८. मुझे-छोड़कर	स्वधयति	१७. शान्त कर रहा है
मृगी	९. यह मृगी का	इति च ॥	१८ इति

श्लोकार्थ—अथवा अपने पुत्र के वियोग रूप ज्वर की दावाग्नि की ज्वालाओं की शिखाओं से जलते हुये हृदय कमल वाले मुझे छोड़कर यह मृगी का बच्चा चन्द्रमा में पहुंच गया है और शीतल-शान्त स्नेह से परिपूर्ण अपने शरीर की शीतलता रूपी अमृतमयी किरणों से मुझे शान्त कर रहा है ॥

षड्विंशः श्लोकः

एवमघटमानमनोरथाकुलहृदयो मृगदारकाभासेन स्वारब्धकर्मणा योगारम्भणतो विभ्रंशितः स योगतापसो भगवदाराधनलक्षणाच्च कथमितरथा जात्यन्तर एणकुणक आसङ्गः साक्षान्निःश्रेयसप्रतिपक्षतया प्राक्परित्यक्तदुस्त्यजहृदयाभिजातस्य तस्यैवमन्तरायविहतयोगारम्भणस्य राजर्षेर्भरतस्य तावन्मृगार्भकपोषणपालनप्रीणनलालनानुषङ्गेणाविगणयत आत्मानमहिरिवाखुबिलं दुरतिक्रमः कालः करालरभस आपद्यत ॥२६॥

पदच्छेद—एवम् अघटमान मनोरथ आकुल हृदयः मृगदारक आभासेन स्वारब्ध कर्मणा योगारम्भणतः विभ्रंशितः सः योगतापसः भगवत् आराधन लक्षणात् च कथम् इतरथा जाति अन्तरे एणकुणके आसङ्गः साक्षात् निःश्रेयस प्रतिपक्षतया प्राक्परित्यक्त दुस्त्यज हृदय अभिजातस्य तस्य एवम् अन्तरायविहत योगारम्भणस्य राजर्षेःभरतस्य तावत् मृग अर्भक पोषण पालन प्रीणनलालन अनुषङ्गेण अविगणयतः आत्मानम् अहिरिव आखुबिलम् दुरतिक्रमः कालः करालरभसः आपद्यत ॥

शब्दार्थ—

एवम् अघटमान	१. इस प्रकार पूरे न होने वाले	प्राक्परित्यक्त	१७. पहले ही छोड़ दिया था तथा
मनोरथ आकुल	३. मनोरथों से व्याकुल रहने लगा	दुस्त्यज	१३. कठिनाई से छोड़ने योग्य
हृदयः	२. उनका हृदय	हृदय अभिजातस्य	१४. अपने हृदय से उत्पन्न पुत्रादि को
मृगदारकः	४. मृग के बच्चे के रूप में	तस्य एवम्	२० उन्हीं की इस प्रकार
आभासेन	५. प्रतीत होने वाले	अन्तरायविहत	२३. विघ्नों के वश में होकर
स्वारब्धकर्मणा	६. अपने प्रारब्ध कर्म के कारण	योगारम्भणस्य	२४. योग के साधन से भ्रष्ट हो गये
योगरम्भणतः	११. योग के अनुष्ठान से	राजर्षेः भरतस्य	२२. राजर्षि भरत
विभ्रंशितः	१२. पतित हो गये	तावत् मृग अर्भक	२५. तब वे मृग के बच्चे को
सः	८. वे भरत	पोषणपालनप्रीणन	२६. खिलाने पिलाने पालने
योगतापसः	७. योग की तपस्या वाले	लालन अनुषङ्गेण	२७. प्यार करने में लगे रहकर
भगवत् आराधन	९. भगवान् की पूजा	अविगणयतः	२९. भूल गये
लक्षणात् च	१०. रूपकर्म और	आत्मानम्	२८. अपने आत्म-स्वरूप को
कथम् इतरथा	२१ कैसे हो सकती थी	अहिरिवआखुबिलम्	३३. सांप चूहे के बिल में आ जाये
जाति अन्तरे	१८. अन्य जाति वाले	दुरतिक्रमः	३०. जिसका टालना कठिन है
एण कुणके आसङ्गः	१९. हरिण के बच्चे में आसक्ति	कालः	३२. काल
साक्षात् निःश्रेयस	१५. साक्षात् मोक्ष मार्ग में	करालरभसः	३१. ऐसा भयंकर वेगशाली
प्रतिपक्षतया	१६. विघ्नरूप जानकर	आपद्यत ॥	३४. वैसे सिर पर आ गया

श्लोकार्थ—इस प्रकार पूरे न होने वाले उनका हृदय मनोरथों से व्याकुल रहने लगा। मृग के बच्चे के रूप में प्रतीत होने वाले अपने प्रारब्ध कर्म के कारण योग की तपस्या वाले वे भरत भगवान् की पूजा रूप कर्म और योग के अनुष्ठान से पतित हो गये। कठिनाई से छोड़ने योग्य अपने हृदय से उत्पन्न पुत्रादि को साक्षात् मोक्ष मार्ग में विघ्नरूप जानकर पहले ही छोड़ दिया था। तथा अन्य जाति वाले हरिण के बच्चे में आसक्ति उन्हीं की इस प्रकार कैसे हो सकती थी! राजर्षि भरत विघ्नों के वश में होकर योग के साधन से भ्रष्ट हो गये। तब वे मृग के बच्चे को खिलाने, पिलाने, पालने, प्यार करने में लगे रहकर अपने आत्म स्वरूप को भूल गये जिसका टालना कठिन है, ऐसा भयंकर वेगशाली काल जैसे सांप चूहे के बिल में आ जाये वैसे सिर पर आ गया ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तदानीमपि पार्श्ववर्तिनमात्मजमिवानुशोचन्तमभिवीक्षमाणो मृग एवाभिनिवेशितमना विसृज्य लोकमिमं सह मृगेण कलेवरं मृतमनु न मृतजन्मानुस्मृतिरितरवन्मृगशरीरमवाप ॥२७॥

पदच्छेद—तदानीम् अपि पार्श्ववर्तिनम् आत्मजम् इव अनुशोचन्तम् अभिवीक्षमाणः मृगे एव अभिनिवेशित मना विसृज्य लोकम् इमम् सह मृगेण कलेवरम् मृतम् अनु न मृत जन्मअनु स्मृतिः इतरवत् मृग शरीरम् अवाप ॥

शब्दार्थ—

तदानीम् अपि	१.२. उस समय भी	लोकम् इमम्	१३.१२. संसार को (और) इस
पार्श्ववर्तिनम्	३. वह हिरन पास बैठा था सह		११. साथ ही
आत्मज इव	४. पुत्र के समान	मृगेण	१०. मृग के
अनुशोन्तम्	५. शोकातुर हो रहा था	कलेवरम्	१४. शरीर को
अभिवीक्षमाणः	६. उसे देखते हुये	मृतम् अनु	१७. मरने के बाद उन्हें नहीं नष्ट हुई थी
मृगे-एव	७. मृग में ही	न मृतजन्म	१८. पूर्व जन्म की
अनिवेशित	८. लगे हुये	अनुस्मृतिः	१९. स्मृति
मना	९. मन वाले (उन भरत ने)	इतरवत् मृगशरीरम्	२०. अन्य साधारण पुरुषों के समान
विसृज्य	१६. छोड़ दिया	अवाप ॥	२१. मृग का शरीर मिला

श्लोकार्थ—उस समय भी वह हिरन पास बैठा था। पुत्र के समान शोकातुर हो रहा था। उसे देखते हुये मृग में ही लगे हुये मन वाले उन भरत ने मृग के साथ ही इस संसार को और शरीर को छोड़ दिया। मरने के बाद उन्हें पूर्व जन्म को स्मृति नष्ट नहीं हुई थी। अन्य साधारण पुरुषों के समान मृग का शरीर ही मिला ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तत्रापि ह वा आत्मनो मृगत्वकारणं भगवदाराधनसमीहानुभावेनानुस्मृत्य भृशमनुतप्यमान आह ॥२८॥

पदच्छेद—तत्र अपि ह वा आत्मनः मृगत्व कारणम् भगवत् आराधन समीहा अनुभावेन अनुस्मृत्य भृशम् अनुतप्यमानः आह ॥

शब्दार्थ—

तत्र अपि	१. उस योनि में भी	आराधन	३. आराधना की
ह वा	८. वे महाराज भरत	समीहा	४. सदिच्छा के
आत्मनः	५. अपने	अनुभावेन	९. प्रभाव से
मृगत्व	६. मृग रूप होने के	अनुस्मृत्य	११. पश्चाताप करके
कारणम्	७. कारण को	भृशम्	१०. अत्यधिक
भगवत्	२. (पूर्व जन्म की) भगवान् की	अनुतप्यमान आह ॥	१२. दुःखी होकर कहने लगे

श्लोकार्थ—उस योनि में भी पूर्व जन्म की भगवान् को आराधना की सदिच्छा के प्रभाव से अपने मृग रूप होने के कारण को वे महाराज भरत जानकर तथा अत्यधिक पश्चात्ताप करते हुये दुःखी होकर कहने लगे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोक

अहो कष्टं भ्रष्टोऽहमात्मवतामनुपथाद्यद्विमुक्तसमस्तसङ्गस्य विविक्त-पुण्यारण्यशरणस्यात्मवत आत्मनि सर्वेषामात्मनां भगवति वासुदेवे तदनुश्रवणमननसङ्कीर्तनाराधनानुस्मरणाभियोगेनाशून्यसकलयामेन । कालेन समावेशितं समाहितं कार्त्स्न्येन मनस्तत्तु पुनर्ममाबुधस्यारान्मृगसुतमनु परिसुस्राव ॥२९॥

पदच्छेद—अहो कष्टम् भ्रष्टः अहम् आत्मवताम् अनुपथात् यत् विमुक्त समस्त सङ्गस्य विविक्त पुण्यारण्य शरणस्य आत्मवतः आत्मनि सर्वेषाम् आत्मनाम् भगवति वासुदेवे तद् अनुश्रवण मनन संकीर्तन आराधन अनुस्मरण अभियोगेन अशून्य सकल यामेन कालेन समावेशितम् समाहितम् कार्त्स्न्येन मनः तत् तु पुनः मम अबुधस्य आरात् मृगसुतम् अनु परि सुस्राव ॥

शब्दार्थ—

अहो कष्टम्	१.२. अहो बड़े खेद की बात है कि	मनन संकीर्तन	२२.२३. मनन और संकीर्तन करके
भ्रष्टः	६. पतित हो गया	आराधन	२४. उन्हीं की आराधना और
अहम्	३. मैं	अनुस्मरण	२५. स्मरणादि से
आत्मवताम्	४. संयमशील महापुरुषों के	अभियोगेन	२६. सफल करके
अनुपथात्	५. मार्ग से	अशून्य	२७. पूर्णतया
यत्	७. जो कि मैंने	सकल	२८. सारे
विमुक्त	१०. छोड़कर	यामेन	२९. समय को उन्हीं में
समस्त	८. सब प्रकार की	कालेन	३१. कुछ समय बाद
सङ्गस्य	९. आसक्ति को	समावेशितम्	३०. लगा दिया था
विविक्त	११. एकान्त	समाहितम्	३५. एकाग्र और
पुण्यारण्य	१२. पवित्र वन का	कार्त्स्न्येन	३६. सम्पूर्ण
शरणस्य	१३. आश्रय लिया था	मनः	३७. मन
आत्मवत्	१४. अपने	तत् तु	३४. वही
आत्मनि	१५. चित्त को	पुनः	३८. फिर से
सर्वेषाम्	१६. सबके	मम	३२. मुझ
आत्मनाम्	१७. आत्म स्वरूप	अबुधस्य	३३. अज्ञानी का
भगवति	१८. भगवान्	आरात्	३९. अकस्मात्
वासुदेव	१९. वासुदेव में (लगाकर)	मृग	४०. मृगी के बच्चे के
तद्	२०. उन्हीं के गुणों का	सुतम्	४१. पीछे
अनुश्रवण	२१. श्रवण	अनु	४२. लक्ष्य से
		परिसुस्राव ॥	४३. पतित हो गया

श्लोकार्थ—अहो बड़े खेद की बात है कि मैं संयम शील महा पुरुषों के मार्ग से पतित हो गया। जो कि मैंने सब प्रकार की आसक्ति को छोड़कर एकान्त पवित्र वन का आश्रय लिया था। अपने चित्त को सब के आत्म स्वरूप भगवान् वासुदेव में लगाकर उन्हीं के गुणों का श्रवण, मनन और संकीर्तन करके उन्हीं की आराधना और स्मरणादि से सफल करके पूर्णतया सारे समय को उन्हीं में लगा दिया था। कुछ समय बाद मुझ अज्ञानी का वही एकाग्र और सम्पूर्णमन फिर से अकस्मात् मृगी के बच्चे के पीछे लक्ष्य से पतित हो गया ॥

त्रिंशः श्लोकः

इत्येवं निगूढनिर्वेदो विसृज्य मृगीं मातरं पुनर्भगवत्क्षेत्रमुपशमशील-मुनिगणदयितं शालग्रामं पुलस्त्यपुलहाश्रमं कालञ्जरात्प्रत्याजगाम ॥३०॥

पदच्छेद—इति एवम् निगूढ निर्वेदः विसृज्य मृगीम् मातरम् पुनः भगवत् क्षेत्रम् उपशम शील मुनिगण दयितम् शालग्रामम् पुलस्त्य पुलहाश्रमम् कालञ्जरात् प्रत्या जगाम ॥

शब्दार्थ—

इति एवम्	१. इस प्रकार		उपशमशीलः	९. शान्त स्वभाव वाले
निगूढ	३ छिपाये हुये (उन्होंने)		मुनिगण	१०. मुनियों के समूह को
निर्वेदः	२. वैराग्य की भावना को		दयितम्	११. प्रिय लगने वाले
विसृज्य	६. त्याग दिया		शालग्राम	१३. शालग्राम तीर्थ में
मृगीम्	५. मृगी को		पुलस्त्य	१४. पुलस्त्य और
मातरम्	४. अपनी माता		पुलहाश्रमम्	१५. पुलह ऋषि के आश्रम
पुनः	७. फिर वे		कालञ्जरात्	८. कालञ्जर पर्वत से
भगवत् क्षेत्रम्	१२. जो भगवान् का क्षेत्र है ऐसे		प्रतिआजगाम ॥	१६. की ओर चले आये

श्लोकार्थ—इस प्रकार वैराग्य की भावना को छिपाये हुये उन्होंने अपनी माता मृगी को त्याग दिया फिर से कालञ्जर पर्वत से शान्त स्वभाव वाले मुनियों के समूह को प्रिय लगने वाले जो भगवान् का क्षेत्र है ऐसे शालग्राम तीर्थ में पुलस्त्य और पुलह ऋषि के आश्रम की ओर चले आये ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तस्मिन्नपि कालं प्रतीक्षमाणः सङ्गाच्च भृशमुद्विग्न आत्मसहचरः शुष्कपर्णतृणवीरुधा वर्तमानो मृगत्वनिमित्तावसानमेव गणयन्मृगशरीरं तीर्थोदकक्लिन्नमुत्ससर्ज ॥३१॥

पदच्छेद—तस्मिन् अपि कालम् प्रतीक्षमाणः सङ्गात् च भृशम् उद्विग्न आत्म सहचरः शुष्कपर्ण तृण वीरुधा वर्तमानः मृगत्वनिमित्त अवसानम् एव गणयन् मृगशरीरम् तीर्थोदक क्लिन्नम् उत्ससर्ज ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१. वहाँ रहकर	तृण वीरुधा	१०. घास और झाड़ियों द्वारा
अपि	२. भी	वर्तमानः	११. निर्वाह करते हुये
कालम्	३. वे काल की	मृगत्व	१२. मृग योनि की प्राप्ति के कारण
प्रतीक्षमाणः	४. प्रतीक्षा करने लगे	निमित्त	१३. प्रारब्ध के
सङ्गात् च	५. और आसक्ति से	अवसानम्	१४. क्षय की
भृशम्	६. अत्यधिक	एव	१५. ही
उद्विग्न	७. भयभीत होकर	गणयत् मृगशरीरम्	१६. बाट देखते रहे अन्त में मृग शरीर को
आत्म सहचरः	८. अकेले ही रहकर	तीर्थोदक क्लिन्नम्	१७. तीर्थ के जल में डुबाये रखकर
शुष्कपर्ण	९. सूखे पत्ते	उत्ससर्ज ॥	१८ त्याग दिया

श्लोकार्थ—वहाँ रहकर भी वे काल की प्रतीक्षा करने लगे और आसक्ति से अत्यधिक भयभीत होकर अकेले ही रहकर सूखे पत्ते घास और झाड़ियों द्वारा निर्वाह करते हुये मृग योनि की प्राप्ति के कारण प्रारब्ध के क्षय की बाट देखते रहे। अन्त में मृग शरीर को तीर्थ के जल में डुबाये रखकर त्याग दिया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे भरतचरिते अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पञ्चमः स्कन्धः

नवमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—अथ कस्यचिद् द्विजवरस्याङ्गिरःप्रवरस्य शमदमतपःस्वाध्यायाध्ययनत्यागसंतोषतितिक्षाप्रश्रयविद्यानसूयात्मज्ञानानन्दयुक्तस्यात्मसदृश - श्रुतशीलाचाररूपौदार्यगुणा नव सोदर्या अङ्गजा बभूवुर्मिथुनं च यवीयस्यां भार्यायाम् ॥१॥

पदच्छेद—अथ कस्यचित् द्विजवरस्य अङ्गिरः प्रवरस्य शम दम तपः स्वाध्याय अध्ययन त्याग संतोष तितिक्षा प्रश्रय विद्या अनसूया आत्मज्ञान आनन्द युक्तस्य आत्म सदृश श्रुतशील आचार रूप औदार्य गुणाः नव सोदर्याः अङ्गजाः बभूवुः मिथुनम् च यवीयस्याम् भार्यायाम् ॥

शब्दार्थ—

अथ	०. तदनन्तर	युक्तस्य	१४. युक्त
कस्यचित्	१५. कोई एक	आत्म	१७. उनकी बड़ी स्त्री से
द्विजवरस्य	१६. श्रेष्ठ ब्राह्मण थे	सदृश श्रुत	१८ अपने समान विद्या
अङ्गिरः	१. हे राजन् ! आंगिरस	शील	१९. सदाचार
प्रवरस्य	२. गोत्र में	आचार	२०. आचरण
शमदमतपः	३. शम-दम-तपस्या	रूप	२१. स्वरूप
स्वाध्याय	४. स्वाध्याय	औदार्य	२२. उदारता
अध्ययन	५. वेदाध्ययन	गुणाः	२३. आदि गुणों वाले
त्याग	६. अतिथि को अन्नादि देना	नव	२४. नौ
संतोष	७. मानसिक संतोष	सोदर्या	२५. सहोदर
तितिक्षा	८. सर्दी-गर्मी आदि द्वन्द्वों को सहना	अङ्गजाः	२६. पुत्र
प्रश्रय	९. विनम्रता	बभूवुः	२७. उत्पन्न हुये
विद्या	१०. कर्म विद्या	मिथुनम्	३१. एक पुत्र एक कन्या हुई
अनसूया	११. दूसरों के गुणों में दोष नहीं ढूढ़ना	च	२८. और उनकी
आत्मज्ञान	१२. आत्मा का ज्ञान	यवीयस्याम्	२९. छोटी
आनन्द	१३. सुख आदि गुणों से	भार्यायाम् ॥	३०. पत्नी से

श्लोकार्थ—तदनन्तर हे राजन् ! आंगिरस गोत्र में शम, दम, तपस्या, स्वाध्याय, वेदाध्ययन, अतिथि को अन्नादि देना, मानसिक संतोष, सर्दी, गर्मी आदि द्वन्द्वों को सहना, विनम्रता, कर्म, विद्या, दूसरों के गुणों में दोष नहीं ढूंढ़ना, आत्मा का ज्ञान, सुख आदि गुणों से युक्त कोई एक श्रेष्ठ ब्राह्मण थे। उनकी बड़ी स्त्री से अपने समान सदाचार, आचरण स्वरूप उदारता आदि गुणों वाले नौ सहोदर पुत्र उत्पन्न हुये। और उनकी छोटी पत्नी से एक पुत्र और एक कन्या हुई ॥

द्वितीयः श्लोकः

यस्तु तत्र पुमांस्तं परमभागवतं राजर्षिप्रवरं
भरतमुत्सृष्टमृगशरीरं चरमशरीरेण विप्रत्वं गतमाहुः ॥२॥

पदच्छेद—

यः तु पुमान् तम् परम भागवतम् राजर्षि प्रवरम्
भरतम् उत्सृष्ट मृगशरीरम् चरम शरीरेण विप्रत्वम गतम् आहुः ॥

शब्दार्थ—

यः	२.	जो	भरतम्	९.	भरत ही थे वे
तु	१.	इन दोनों में	उत्सृष्ट मृग	१०.	परित्याग करके मृग के
पुमान्	३.	पुरुष था	शरीरम्	११.	शरीर का
तम्	४.	वह	चरम	१२.	अन्तिम
परम	५.	परम	शरीरेण	१३.	जन्म में
भागवतम्	६.	भगवत् भक्त	विप्रत्वम्	१४.	ब्राह्मण
राजर्षि	७.	राजर्षि	गतम्	१५.	हुये थे
प्रवरम्	८.	शिरोमणि	आहुः ॥	१६.	ऐसा महापुरुषों का कथन है

श्लोकार्थ—इन दोनों में जो पुरुष था वह परम भगवत् भक्त राजर्षि शिरोमणि भरत ही थे। वे मृग के शरीर का परित्याग करके अन्तिम जन्म में ब्राह्मण हुये थे, ऐसा महापुरुषों का कथन है ॥

तृतीयः श्लोकः

तत्रापि स्वजनसङ्गाच्च भृशमुद्विजमानो भगवतः कर्मबन्धविध्वंसनश्रवणस्मरणगुणविवरणचरणारविन्दयुगलं मनसा विदधदात्मनः प्रतिघातमाशङ्कमानो भगवदनुग्रहेणानुस्मृतस्वपूर्वजन्मावलिरात्मानमुन्मत्तजडान्धबधिरस्वरूपेण दर्शयामास लोकस्य ॥३॥

पदच्छेद—तत्र अपि स्वजन सङ्गात् च भृशम् उद्विजमानः भगवतः कर्मबन्ध विध्वंसन श्रवण स्मरण गुण विवरण चरण अरविन्द युगलम् मनसा विदधत् आत्मनः प्रतिघातम् आशङ्कमानः भगवत् अनुग्रहेण अनुस्मृत स्वपूर्व जन्मावलिः आत्मानम् उन्मत्त जडअन्ध बधिरस्वरूपेण दर्शयामास लोकस्य ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	इस जन्म में	विदधत्	२७.	धारण किये हुये
अपि	२.	भी	आत्मनः	८.	अपने ऊपर
स्वजन	११.	अपने स्वजनों के	प्रतिघातम्	९.	विघ्न की
सङ्गात्	१२.	सङ्ग से	आशङ्कमानः	१०.	आशङ्का करते हुये
च	१९.	और	भगवत्	३.	भगवान् की
भृशम्	१३.	वे बहुत अधिक	अनुग्रहेण	४.	कृपा से
उद्विजमानः	१४.	डरते थे	अनुस्मृत	७.	स्मरण रहने के कारण
भगवतः	१५.	जिन भगवान् की	स्वपूर्व	५.	अपनी पूर्व
कर्मबन्ध	२१.	कर्म बन्धन को	जन्मावलिः	६.	जन्म की परम्परा का
विध्वंसन	२२.	काट देता है उनको	आत्मानम्	२९.	अपने को
श्रवण	१६.	श्रवण	उन्मत्त	३०.	पागल
स्मरण	१७.	स्मरण	जड	३१.	मूर्ख
गुण	१८.	गुण	अन्ध	३२.	अन्धे और
विवरण	२०.	कीर्तन	बधिर	३३.	बहिर के
चरण	२३.	चरण	स्वरूपेण	३४.	समान
अरविन्द	२५.	कमलों की	दर्शयामास	३५.	दिखाते थे
युगलम्	२४.	दोनों	लोकस्य	२८.	संसार में
मनसा ॥	२६.	हृदय में			

श्लोकार्थ—इस जन्म में भी भगवान् की कृपा से अपनी पूर्व जन्म की परम्परा का स्मरण रहने के कारण अपने ऊपर विघ्न की आशङ्का करते हुये अपने स्वजनों के सङ्ग से वे बहुत डरते थे। जिन भगवान् के श्रवण, स्मरण, गुण, कीर्तन, कर्म बन्धन को काट देता है। उनके दोनों चरण-कमलों को हृदय में धारण किये हुये संसार में अपने को पागल, मूर्ख, अन्धे और बहिरे के समान दिखाते थे ॥

चतुर्थः श्लोकः

तस्यापि ह वा आत्मजस्य विप्रः पुत्रस्नेहानुबद्धमना आ समावर्तनात्संस्कारान् यथोपदेशं विदधान उपनीतस्य च पुनः शौचाचमनादीन् कर्मनियमाननभिप्रेतानपि समशिक्षयदनुशिष्टेन हि भाव्यं पितुः पुत्रेणेति ॥४॥

पदच्छेद—

तस्य अपि ह वा आत्मजस्य विप्रः पुत्र स्नेह अनुबद्ध मनाः आ समावर्तनात् संस्कारान् यथा उपदेशम् विदधानः उपनीतस्य च पुनः शौच आचमन आदीन् कर्म नियमान् अनभिप्रेतान् अपि समशिक्षयत् उनुशिष्टेन हि भाव्यम् पितुः पुत्रेण इति ॥

शब्दार्थ—

तस्य	६.	उस	उपनीतस्य	१६.	उपनय संस्कार करके
अपि	८.	भी	च पुनः	१७.	और फिर
ह वा	९.	स्नेह था (अतः उन्होंने)	शौच	१८.	शौच
आत्मजस्य	७.	पुत्र में	आचमन	१९.	आचमन
विप्रः	५.	ब्राह्मण का	आदीन्	२०.	इत्यादि
पुत्र	१.	पुत्र के प्रति	कर्म	२२.	कर्मों की
स्नेह	२.	स्नेह से	नियमान्	२१.	आवश्यक
अनुबद्ध	३.	युक्त	अनभिप्रेतान्	२३.	न चाहते हुये
मनाः	४.	मन वाले	अपि	२४.	भी
आ	१३.	पर्यन्त	समशिक्षयत्	२५.	शिक्षा दी (क्योंकि)
समावर्तनात्	१२.	समावर्तन	अनुशिष्टेन	२८.	शिक्षा देनी
संस्कारान्	१४.	सभी संस्कार	हि	२९.	ही
यथा	११.	अनुसार	भाव्यम्	३०.	चाहिये
उपदेशम्	१०.	शास्त्र विधि के	पितुः	२६.	पिता को
विदधानः	१५.	करते हुये	पुत्रेण इति ॥	२७.	पुत्र के लिये

श्लोकार्थ—पुत्र के प्रति स्नेह से युक्त मन वाले ब्राह्मण का उस पुत्र में भी स्नेह था अतः उन्होंने शास्त्र विधि के अनुसार समावर्तन पर्यन्त सभी संस्कार करते हुये उपनयन संस्कार करके और फिर शौच, आचमन इत्यादि आवश्यक कर्मों की शिक्षा दी। क्योंकि पिता को पुत्र के लिये शिक्षा देनी ही चाहिये।

पञ्चमः श्लोकः

स चापि तदु ह पितृसंनिधावेवासध्रीचीनमिव स्म करोति छन्दांस्यध्यापयिष्यन् सह व्याहृतिभिः सप्रणवशिरस्त्रिपदीं सावित्रीं ग्रैष्मवासन्तिकान्मासानधीयानमप्यसमवेतरूपं ग्राहयामास ॥५॥

पदच्छेद—

स च अपि तदु ह पितृ संनिधौ एव सध्रीचीनम् इव स्म करोति छन्दांसि अध्यापयिष्यन् सह व्याहृतिभिः सप्रणव शिरःत्रिपदीम् सावित्रीम् ग्रैष्म वासन्तिकान् मासान् अधीयानम् अपि असमवेत-रूपम् ग्राहयामास ॥

शब्दार्थ—

स	२. वे	सह	१८. सहित
च अपि	६. और भी	व्याहृतिभिः	१६. वे व्याहृतियों के और
तदु ह	१. किन्तु	स प्रणव	१७. प्रणव सहित
पितृ	३. पिता के	शिरः	२०. प्रधान मन्त्र
संनिधौ	४. सामने	त्रिपदीम् सावित्रीम्	२१. तीन चरणों वाली गायत्री को भी
इव	५. ही	ग्रैष्म वासन्तिकम्	१२. ग्रीष्म ऋतु और बसन्त ऋतु के
असध्रीचीनम्	७. विरुद्ध आचरण	मासान्	१३. (चार) महीनों तक
एव	८. ही	अधीयानम्	१४. पढ़ते रहने पर
स्म करोति	९. करने लगते थे	अपि	१५. भी (पुत्र को)
छन्दांसि	१०. वेदों के	असमवेतरूपम्	२३. ठीक-ठीक से नहीं
अध्यापयिष्यन्	११. पढ़ाते हुए पिता	ग्राहयामास ॥	२४. याद कर सके

श्लोकार्थ—किन्तु वे पिता के सामने ही और भी विरुद्ध आचरण करने लगते थे। वेदों को पढ़ाते हुये पिता ग्रीष्म ऋतु और वसन्त ऋतु के चार महीनों तक पढ़ते रहने पर भी पुत्र को व्याहृतियों और प्रणव सहित प्रधानमन्त्र—तीन चरणों वाली गायत्री को भी ठीक-ठीक से नहीं याद कर सके ॥

षष्ठः श्लोकः

एवं स्वतनुज आत्मन्यनुरागावेशितचित्तः शौचाध्ययनव्रतनियमगुर्वनलशुश्रूषणाद्यौपकुर्वाणककर्माण्यनभियुक्तान्यपि समनुशिष्टेन भाव्यमित्यसदाग्रहः पुत्रमनुशास्य स्वयं तावदनधिगतमनोरथः कालेनाप्रमत्तेन स्वयं गृह एव प्रमत्त उपसंहृतः ॥६॥

पदच्छेद—

एवम् स्व तनुज आत्मनि अनुराग उपवेशितचित्तः शौच अध्ययन व्रत नियम गुरु अनल शुश्रूषण आदि औपकुर्वाणक कर्माणि अनभियुक्तानि अपि समनुशिष्टेन भाव्यम् इति असद् आग्रहः पुत्रम् अनुशास्य स्वयम् तावत् अनधिगत मनोरथः कालेन अप्रमत्तेन स्वयम् गृह एव प्रमत्तः उपसंहृतः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	अपि	१९.	भी
स्व	२.	अपने	समनुशिष्टेन	२०.	मुख्य रूप से
तनुज	३.	पुत्र में	भाव्यम्	२२.	करना चाहिये इस प्रकार
आत्मनि	४.	आत्मा के समान	इति	२१.	ऐसा
अनुराग	५.	प्रेम से	असद्	२३.	असावधान
आवेशित	७.	भरा हुआ था (अतः)	आग्रहः	२४.	रह करके
चित्तः	६.	उनका हृदय	पुत्रम्	२५.	पुत्र को
शौच	८.	शौच	अनुशास्य	२६.	शिक्षा दे ही रहे थे
अध्ययन	९.	वेदाध्ययन	स्वयम्	२७.	अपने आप
व्रत	१०.	व्रत	तावत्	२८.	तब-तक
नियम	११.	नियम तथा	अनधिगत	२९.	बिना पूरा किये ही
गुरु	१२.	गुरु और	मनोरथः	३०.	कामनाओं को
अनल	१३.	अग्नि की	कालेन	३१.	काल भगवान् ने
शुश्रूषण	१४.	सेवा	अप्रमत्तेन	३२.	सदैव सतर्क रहने वाले
आदि	१५.	आदि से	स्वयम्	३३.	अपने आप ही
औपकुर्वाणक	१६.	उपकार करते हुये	गृहे एव	३४.	शरीर में ही
कर्माणि	१८.	कर्मों को	प्रमत्तः	३५.	आक्रमण करके उनको
अनभियुक्तानि	१७.	प्रधानभूत	उपसंहृतः ॥	३६.	समाप्त कर दिया

श्लोकार्थ—इस प्रकार अपने पुत्र में आत्मा के समान प्रेम से उनका हृदय भरा हुआ था। अतः शौच, वेदाध्ययन, व्रत, नियम तथा गुरु और अग्नि की सेवा आदि से उपकार करते हुये प्रधानभूत कर्मों को भी मुख्यरूप से ऐसा करना चाहिये इस प्रकार असावधान रह करके पुत्र को शिक्षा दे ही रहे थे कि अपने-आप तब-तक बिना कामनाओं को पूर्ण किये, काल भगवान् ने सदैव सतर्क रहने वाले अपने आप ही शरीर में ही आक्रमण करके उनको समाप्त कर दिया ॥

सप्तमः श्लोकः

अथ यवीयसी द्विजसती स्वगर्भजातं मिथुनं सपत्न्या उपन्यस्य स्वयमनुसंस्थया पतिलोकमगात् ॥७॥

पदच्छेद—अथ यवीयसी द्विजसती स्वगर्भ जातम् मिथुनम् सपत्न्यै उपन्यस्य स्वयम् अनुसंस्थया पतिलोकम् अगात् ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	सपत्न्यै	७.	अपनी सौत को
यवीयसी	२.	उनकी छोटी	उपन्यस्य	८.	सौंप कर
द्विजसती	३.	पत्नी	स्वयम्	१०.	स्वयं
स्वगर्भ	४.	अपने गर्भ से	अनुसंस्थया	९	सती होकर
जातम्	५.	उत्पन्न हुये	पतिलोकम्	११.	पति लोक को
मिथुनम् ।	६	एक पुत्र और एक कन्या को	अगात् ॥	१२.	चली गई

श्लोकार्थ—इसके बाद उनकी छोटी पत्नी अपने गर्भ से उत्पन्न हुये एक पुत्र और एक कन्या को अपनी सौत को सौंप कर सती होकर स्वयं पति लोक को चली गई ॥

अष्टमः श्लोकः

पितर्युपरते भ्रातर एनमतत्प्रभावविदस्त्रय्यां विद्यायामेव पर्यवसितमतयो न परविद्यायां जडमतिरिति भ्रातुरनुशासननिर्बन्धान्न्यवृत्सन्त ॥८॥

पदच्छेद—पितरि उपरते भ्रातरः एनम् अतत् प्रभाव विदः त्रय्याम् विद्यायाम् एव पर्यवसित मतयः न पर विद्यायाम् जडमतिः इति भ्रातुः अनुशासन निर्बन्धात् न्यवृत्सन्त ॥

शब्दार्थ—

पितरि	१.	पिता के	पर्यवसित	७.	होने के कारण
उपरते	२.	परलोक सिधारने पर	मतयः	६.	उनकी बुद्धि
भ्रातरः	१०.	भाइयों ने	न	९.	प्रवेश न होने से
एनम्	११.	इन्हें	पर विद्यायाम्	८.	ब्रह्म विद्या में
अतत्	१२.	इनके दिव्य	जड़मतिः	१५.	यह मूर्ख है
प्रभाव	१३.	प्रभाव को	इति	१६.	ऐसा मानकर
विदः	१४.	न जानने के कारण	भ्रातुः	१७.	भाई को
त्रय्याम्	३.	वेदत्रयी	अनुशासन	१८.	पढ़ाने लिखाने का
विद्यायाम्	४.	विद्या में	निर्बन्धात्	१९.	आग्रह
एव	५.	ही	न्यवृत्सन्त ॥	२०.	छोड़ दिया

श्लोकार्थ—पिता के परलोक सिधारने पर वेदत्रयी विद्या में ही उनकी बुद्धि होने के कारण ब्रह्म विद्या में प्रवेश न होने से भाइयों ने इन्हें इनके उस दिव्य प्रभाव को न जानने के कारण यह मूर्ख है, ऐसा मान कर भाई को पढ़ाने-लिखाने का आग्रह छोड़ दिया ॥

नवमः श्लोकः

स च प्राकृतैर्द्विपदपशुभिरुन्मत्तजडबधिरेत्यभिभाष्यमाणो यदा तदनुरूपाणि प्रभाषते कर्माणि च स कार्यमाणः परेच्छया करोति विष्टितो वेतनतो वा याच्ञया यदृच्छया वोपसादितमल्पं बहु मृष्टं कदन्नं वाभ्यवहरति परं नेन्द्रियप्रीतिनिमित्तम्। नित्यनिवृत्तनिमित्तस्वसिद्धविशुद्धानुभवानन्दस्वात्मलाभाधिगमः सुखदुःखयोर्द्वन्द्वनिमित्तयोरसम्भावितदेहाभिमानः ॥९॥

पदच्छेद—सः च प्राकृतैः द्विपद पशुभिः उन्मत्त जड बधिर इति अभिमाष्यमाणः यदा तद् अनुरूपाणि प्रभाषते कर्माणि च सः कार्यमाणः परेच्छया करोति विष्टितः वेतनतः वा याच्ञया यदृच्छया वा उपसादितम् अल्पम् बहु मृष्टम् कदन्नम् वा अभ्यवहरति परम् न इन्द्रिय प्रीतिनिमित्तम्। नित्यनिवृत्त निमित्त स्वसिद्ध विशुद्धअनुभव आनन्द स्व आत्मलाभ अधिगमः सुखदुःखयोः द्वन्द निमित्तयोः असम्भावित देहअभिमानः।

शब्दार्थ—

सः	३. उन्हें	यदृच्छया वा	१८. या स्वेच्छा मे
च	२६. और	उपसादितम्	१९. प्राप्त हुये
प्राकृतैः	२. साधारणजनों द्वारा	अल्पम् बहुमृष्टम्	२०. थोड़ा या बहुत अच्छे
द्विपद पशुभिः	४. नर पशु	कदन्नम् वा	२१. या बुरे अन्न से अपनी
उन्मत्त जड	५. पागल मूर्ख	अभ्यवहरति	२२. जीविका चलाते
बधिर इति	६. बहरा आदि	परम्	२३. लेकिन वह
अभिभाष्यमाणः	७. कहा जाता	न	२५. नहीं था
यदा	१. जब	इन्द्रियप्रीतिनिमित्तम्	२४. इन्द्रियों की प्रसन्नता के लिये
तद्	८. तब वे उसके	नित्य निवृत्त	२७. नित्य-प्राप्त
अनुरूपाणि	९. अनुरूप	निमित्ति स्वसिद्ध	२८. स्वतः सिद्ध केवल
प्रभावते	१०. बोलने लगते	विशुद्धः	२९. शुद्ध
कर्माणि	१३. कार्यों को	अनुभवानन्द	३०. ज्ञानानन्द
च सः	११. और वे	स्वात्मलाभ	३१. स्वरूप आत्म लाभ
कार्यमाणः	१४. करते हुये	अधिगतः	३२. उन्हें प्राप्त था
परेच्छया	१२. दूसरों की इच्छा से	सुःख दुःखयो	३३. सुःख-दुःख आदि
करोति विष्टितः	१५ व्यवहार करते बेगार से	द्वन्द्वनिमित्तयोः	३४. द्वन्द्वों के कारण
वेतनतो वा	१६. वेतन से अथवा	असम्भावित	३५. नहीं होने वाला
याच्ञया	१७. मांगने पर	देह अभिमानः ॥	३६. देह का अभिमान

श्लोकार्थ—जब साधारणजनों द्वारा उन्हें नर पशु, पागल, मूर्ख, बहरा आदि कहा जाता तब वे उसके अनुरूप बोलने लगते। और वे दूसरों की इच्छा से कार्यों को करते हुये व्यवहार करते, बेगार से, वेतन से अथवा मांगने पर या स्वेच्छा से प्राप्त हुये थोड़े या बहुत अच्छे या बुरे अन्न से अपनी जीविका चलाते। लेकिन वह इन्द्रियों की प्रसन्नता के लिये नहीं था। और स्वतः सिद्ध केवल ज्ञानानन्द स्वरूप आत्मलाभ उन्हें प्राप्त था। सुख दुःख आदि द्वन्द्वों के कारण होने वाला देह का अभिमान नहीं था ॥

दशमः श्लोकः

शीतोष्णवातवर्षेषु वृष इवानावृताङ्गः पीनः संहननाङ्गः स्थण्डिलसंवेशनानुन्मर्दनामज्जनरजसा महामणिरिवानभिव्यक्तब्रह्मवर्चसः कुपटावृतकटिरुपवीतेनोरुमषिणा द्विजातिरिति ब्रह्मबन्धुरिति संज्ञयातज्ज्ञजनावमतो विचचार ॥१०॥

पदच्छेद—

शीत उष्णवात वर्षेषु वृषः इव अनावृत अङ्गः पीनः संहनन अङ्गः स्थण्डिल संवेशन अनुन्मर्दन अमज्जन रजसा महामणिः इव अनभिव्यक्त ब्रह्म वर्चसः कुपट आवृत कटिः उपवीतेन उरुमषिणा द्विजातिः इति ब्रह्मबन्धुः इति संज्ञया अतज्ज्ञजन अवमतः विचचार ॥

शब्दार्थ—

शीत	१.	वे सर्दी	इव	१९.	के समान
उष्ण	२.	गर्मी	अनभिव्यक्त	२०.	ढक गया था (उनकी)
वात	३.	आँधी और	ब्रह्म	१६.	ब्रह्म
वर्षेषु	४.	वर्षा के समय	वर्चसः	१७.	तेज
वृषः	५.	बैल	कुपट	२२.	मैला कुचैला वस्त्र
इव	६.	के समान	आवृत	२३.	लिपटा रहता था
अनावृत	७.	नंगे	कटि	२१.	कमर में
अङ्ग	८.	शरीर रहते थे	उपवीतेन	२६.	यज्ञोपवीत के कारण
पीनः	१०.	हृष्ट-पुष्ट	उरुमषिणा	२५.	अत्यधिक मलिन
संहनन	११.	(और) गठे हुये थे	द्विजातिः	२७.	द्विज
अङ्ग	९.	उनके अङ्ग	इति	२८.	और
स्थण्डिल	१२.	भूमि पर	ब्रह्मबन्धुः	२९.	अधम ब्राह्मण
संवेशन	१३.	शयन करने	इति	३०.	ऐसे
अनुन्मर्दन	१४.	उबटन न करने	संज्ञया	३१.	नामों से पुकारे जाने पर
अमज्जन	१५.	स्नान न करने से (उनका)	अतज्ज्ञजन	२४.	उन्हें न जानने वाले लोगों के द्वारा
रजसा	१७.	धूल ढकी	अवमतः	३२.	उनकी उपेक्षा करके
महामणिः	१८.	मूल्यवान् मणि	विचचार ॥	३३.	विचरण करते रहते थे

श्लोकार्थ—वे सर्दी, गर्मी, आँधी और वर्षा के समय बैल के समान नंगे शरीर रहते थे। उनके अङ्ग हृष्ट-पुष्ट और गठे हुये थे। भूमि पर शयन करने, उबटन न लगाने, स्नान न करने से उनका ब्रह्म तेज धूल ढकी मूल्यवान् मणि के समान ढक गया था। उनकी कमर में मैला-कुचैला कपड़ा लपटा रहता था। उन्हें न जानने वाले लोगों के द्वारा अत्यधिक मलिन यज्ञोपवीत के कारण द्विज और अधम ब्राह्मण ऐसे नामों से पुकारे जाने पर उनकी उपेक्षा करके विचरण करते रहते थे ॥

एकादशः श्लोकः

यदा तु परत आहारं कर्मवेतनत ईहमानः स्वभ्रातृभिरपि केदारकर्मणि निरूपितस्तदपि करोति किन्तु न समं विषमं न्यूनमधिकमिति वेद कणपिण्याकफलीकरणकुल्माषस्थालीपुरीषादीन्यप्यमृतवदभ्यवहरति ॥११॥

पदच्छेद—

यदा तु परत आहारम् कर्मवेतनतः ईहमानः स्वभ्रातृभिः अपि केदार कर्मणि निरूपितः तदपि करोति किन्तु न समम् विषमम् न्यूनम् अधिकम् इति वेद कण पिण्याक फलीकरण कुल्माष स्थाली पुरीष आदीनि अपि अमृत वद् अभ्यवहरति ॥

शब्दार्थ—

यदा	२.	जब	न	१७.	न रहा कि
तु	१.	और	समम्	१८.	भूमि समतल है
परतः	३.	दूसरों की	विषमम्	१९.	ऊँची-नीची है
आहारम्	५.	पेट पालने की	न्यूनम्	२०.	छोटी है या
कर्मवेतनतः	४.	मजदूरी करके	अधिकम्	२१.	बड़ी है (उन्हें)
ईहमानः	६.	चेष्टा करते (देखकर)	इति	१५.	यह भी
स्वभ्रातृभिः	७.	अपने भाइयों ने	वेद	१६.	ध्यान
अपि	८.	भी (उन्हें)	कणपिण्या	२२.	चावल की कनी-खली
केदार	९.	खेत की	फलीकरणम्	२३.	भूसी
कर्मणि	१०.	क्यारियाँ बनाने में	कुल्माष	२४.	घुने हुये उड़द
निरूपितः	११.	लगा दिया	स्थालीपुरीष	२५.	बर्तनों में लगा जला अन्न
तदपि	१२.	वे उसे भी	आदीनि अपि	२६.	आदि जो मिलता उसे भी
करोति	१३.	करने लगे	अमृतवद्	२७.	वे अमृत के समान
किन्तु	१४.	परन्तु उन्हें	अभ्यवहरति ॥	२८	प्रेम से खाते थे

श्लोकार्थ—और जब दूसरों की मजदूरी करके पेट पालने की चेष्टा करते देख कर अपने भाइयों ने भी उन्हें खेत की क्यारियाँ बनाने में लगा दिया। वे उसे भी करने लगे, परन्तु उन्हें यह भी ध्यान न रहा कि भूमि समतल है, ऊँची-नीची है, छोटी है या बड़ी है उन्हें चावल की कनी, भूसी, खली, घुने हुये उड़द, बर्तनों में लगा-जला अन्न आदि जो मिलता उसे भी वे अमृत के समान प्रेम से खाते थे ॥

द्वादशः श्लोकः

अथ कदाचित्कश्चिद् वृषलपतिर्भद्रकाल्यै पुरुषपशुमालभतापत्यकामः ॥१२॥

पदच्छेद—अथ कदाचित् कश्चिद् वृषलपति भद्रकाल्यैः पुरुष पुशम् आलभत अपत्य कामः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. इसके बाद	पुरुष	८. मनुष्य की
कदाचित्	२. कभी	पशुम्	९. बलि देने की
कश्चिद्	३. किसी	आलभत	१०. इच्छा की
वृषलपतिः	४. डाकुओं के सरदार ने	अपत्य	५. पुत्र प्राप्ति की
भद्रकाल्यै	७. भद्र काली को	कामः ॥	६. कामना से

श्लोकार्थ—इसके बाद कभी किसी डाकुओं के सरदार ने पुत्र-प्राप्ति की कामना से भद्रकाली को मनुष्य की बलि देने की इच्छा की ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तस्य ह दैवमुक्तस्य पशोः पदवीं तदनुचराः परिधावन्तो निशि निशीथसमये तमसाऽऽवृतायामनधिगतपशव आकस्मिकेन विधिना केदारान् वीरासनेन मृगवराहादिभ्यः संरक्षमाणमङ्गिरःप्रवरसुतमपश्यन् ॥१३॥

पदच्छेद—तस्य ह दैव मुक्तस्य पशोः पदवीम् तत् अनुचराः परिधावन्तः निशि निशीथ समये तमसा आवृतायाम् अनधिगत पशवः आकस्मिकेन विधिना केदारान् वीरासनेन मृगवराह आदिभ्यः संरक्षमाणम् अङ्गिरः प्रवर सुतम् अपश्यन् ॥

तस्य	३. उसके द्वारा	तमसा	१३. घनघोर अन्धकार
ह	१. इस प्रकार	आवृतायाम्	१४. व्याप्त होने के कारण
दैव	२. दैव वश	अनधिगत	१६. प्राप्त न हुआ
मुक्तस्य	४. छूटे हुये	पशवः	१५. वह पुरुष पशु
पशोः	५. पुरुष पशु को	आकस्मिकेन	१७. उन्होंने अकस्मात्
पदवीम्	८. बलि के लिये खोजते हुये	विधिना	२१. विधि पूर्वक
तत्	६. उसके	केदारान्	१९. खेतों की
अनुचराः	७. सेवक	वीरासनेन	२२. वीरासन से बैठे हुये
परिधावन्तः	९. चारों ओर दौड़े	मृगवराहादिभ्यः	१८. मृग तथा वाराह आदि से
निशि	१०. रात में	संरक्षमाणम्	२०. रख वाली करते हुये
निशीथ	११. अर्धरात्रि का	अङ्गिरः प्रवर	२३. आङ्गिरस गोत्रीय
समये	१२. समय होने के कारण	सुतम् पश्यन् ॥	२४. ब्राह्मण कुमार को देखा

श्लोकार्थ—इस प्रकार दैववश उसके द्वारा छूटे हुये पुरुष पशु को उसके सेवक बलि के लिये खोजते हुये चारों ओर दौड़े । रात में घनघोर अन्धकार व्याप्त होने के कारण वह पुरुष पशु प्राप्त न हुआ । उन्होंने अकस्मात् मृग तथा वाराह आदि से खेतों को रखवाली करते हुये विधिपूर्वक वीरासन से बैठे हुये आङ्गिरस गोत्रीय ब्राह्मण कुमार को देखा ॥

चतुर्दशः श्लोकः

अथ त एनमनवद्यलक्षणमवमृश्य भर्तृकर्मनिष्पत्तिं मन्यमाना बद्ध्वा रशनया चण्डिकागृहमुपनिन्युर्मुदा विकसितवदनाः ॥१४॥

पदच्छेद—अथ ते एनम् अनवद्य लक्षणम् अवमृश्य भृंत कर्म निष्पत्तिम् मन्यमाना बद्ध्वा रशनया चण्डिका गृहम् उपनिन्युः मुदा विकसित वदनाः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	मन्यमाना	८.	समझते हुये उसे
ते	२.	उन्होंने	बद्ध्वा	१०.	बाँध कर
एनम्	३.	इसे	रशनया	९.	रस्सी से
अनवद्य	४.	शुभ	चण्डिका गृहम्	१३.१४.	चण्डिका के मन्दिर में
लक्षणम्	५.	लक्षणों वाला	उपनिन्युः	१५.	ले गये
अवमृश्य भर्तृ	६.	जानकर स्वामी के	मुदा विकसित	११.	प्रसन्न और खिले हुये
कर्मनिष्पत्तम् ।	७.	काम की सिद्धि	वदनाः ॥	१२.	मुख से

श्लोकार्थ—इसके बाद उन्होंने उसे शुभ लक्षणों वाला जानकर स्वामी के काम की सिद्धि समझते हुये उसे रस्सी से बांध कर प्रसन्न और खिले हुये मुख से चण्डिका के मन्दिर में ले गये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

अथ पणयस्तं स्वविधिनाभिषिच्याहतेन वाससाऽऽच्छाद्य भूषणालेपस्रक्तिलकादिभिरुपस्कृतं भुक्तवन्तं धूपदीपमाल्यलाजकिसलयाङ्कुरफलोपहारोपेतया वैशससंस्थया महता गीतस्तुतिमृदङ्गपणवघोषेण च पुरुषपशुं भद्रकाल्याः पुरत उपवेशयामासुः ॥१५॥

पच्छेद— अथ पणयः तम् स्वविधिना अभिषिच्य आहतेन वाससा आच्छाद्य भूषण आलेपस्रक् तिलकादिभिः उपस्कृतम् भुक्तवन्तम् धूप दीप माल्य लाज किसलय अङ्कुर फलउपहार उपेतया वैशससंस्थया महता गीतस्तुति मृदङ्ग पणव घोषेण च पुरुष पशुम् भद्रकाल्याः पुरतः उपवेशयामासुः ॥

शब्दार्थ—

अथ पणयः तम्	१.	इसके बाद-चोरों ने उन्हें	धूपदीपमाल्य	१०.	धूप, दीप, माला
स्वविधिना	२.	अपनी विधि से स्नान कराकर	लाज किसलय	११.	खील पत्ते
अभिषिच्य	३.	अभिषेक किया	अङ्कुर फलोपहार	१२.	अङ्कुर फल तथा उपहार के
आहतेन-वाससा	४.	नवीन वस्त्र से	उपेतया	१३.	साथ
आच्छाद्य-भूषण	५.	सज्जित करके-आभूषण	वैशस-संस्थया	१४.	बलिदान की विधि से
आलेपस्रक्	६	चन्दन-माला	महता-गीतस्तुति	१५.	अत्यधिक गीत स्तुति
तिलकादिभिः	७.	तिलक आदि से	मृदङ्ग पणव घोषेण	१६.	मृदङ्ग एवं ढोल के घोष से
उपस्कृतम्	८.	विभूषित करके	च पुरुष पशुम्	१७.	पुरुष पशु को
भुक्तवन्तम् ।	९.	भोजन कराया	भद्रकाल्याः पुरतः	१८.	भद्र काली के सामने
			उपवेशयामासुः ॥	१९.	बैठा दिया

श्लोकार्थ—इसके बाद चोरों ने उन्हें अपनी विधि से स्नान कराकर अभिषेक किया, नवीन वस्त्रों से सज्जित करके आभूषण, चन्दन, माला, तिलक आदि से विभूषित करके भोजन कराया, धूप, दीप, माला, खील, पत्ते अङ्कुर, फल तथा उपहार के साथ बलिदान की विधि से अत्यधिक गीत, स्तुति, मृदङ्ग एवं ढोल के घोष से पुरुष पशु को भद्रकाली के सामने बैठा दिया ॥

षोडशः श्लोकः

अथ वृषलराजपणिः पुरुषपशोरसृगासवेन देवीं भद्रकालीं यक्ष्यमाणस्त-दभिमन्त्रितमसिमतिकरालनिशितमुपाददे ॥१६॥

पदच्छेद—

अथ वृषल राजपणिः पुरुष पशोः असृग् आसवेन देवीम् भद्रकालीम् यक्ष्यमाणः तद् अभिमन्त्रितम् असिम् अतिकराल निशितम् उपाददे ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. इसके बाद	यक्ष्यमाणः	८. तृप्त करने के लिये
वृषलराज	२. दस्युराज के	तद्	९. उस
पणिः	३. पुरोहित ने	अभिमन्त्रितम्	१०. मन्त्रों से अभिमन्त्रित
पुरुष	४. पुरुष	असिम्	१३. तलवार को
पशोः असृग्आसवेन	५. पशु के रुधिर से	अतिकराल	११. अत्यन्त
देवीम्	६. देवी	निशितम्	१२. तीक्ष्ण
भद्रकालीम् ।	७. भद्रकाली को	उपाददे ॥	१४. उठा लिया

श्लोकार्थ—इसके बाद दस्युराज के पुरोहित ने पुरुष पशु के रुधिर से देवी भद्रकाली को तृप्त करने के लिये उस मन्त्रों से अभिमन्त्रित अत्यन्त तीक्ष्ण तलवार को उठा लिया ॥

सप्तदशः श्लोकः

इति तेषां वृषलानां रजस्तमः प्रकृतीनां धनमदरजउत्सिक्तमनसां भगवत्कलावीरकुलं कदर्थीकृत्योत्पथेन स्वैरं विहरतां हिंसाविहाराणां कर्मातिदारुणं यद्ब्रह्मभूतस्य साक्षाद्ब्रह्मर्षिसुतस्य निर्वैरस्य सर्वभूतसुहृदः सूनायामप्यननुमतमालम्भनं तदुपलभ्य ब्रह्मतेजसातिदुर्विषहेण दन्दह्यमानेन वपुषा सहसोच्चचाट सैव देवी भद्रकाली ॥१७॥

पदच्छेद—इति तेषाम् वृषलानाम् रजः तमः प्रकृतीनाम् धनमदरज उत्सिक्त मनसाम् भगवत् कला वीर कुलम् कदर्थीकृत्य उत्पथेन स्वैरम् विहरताम् हिंसा विहाराणाम् कर्मातिदारुणम् यद्ब्रह्मभूतस्य साक्षात् ब्रह्मर्षिसुतस्य निर्वैरस्य सर्वभूत सुहृदः सूनायाम् अपि अननुमतम् आलम्भनम् उपलभ्य ब्रह्मतेजसा अतिदुर्विषहेण दन्ह्यमानेन वपुषा सहसा उच्चचाट सा एव देवी भद्रकाली ॥

शब्दार्थ—

इतितेषाम्	१. इस प्रकार उन	साक्षात्	२२. साक्षात्
वृषलानाम्	२. चोरों के	ब्रह्मर्षि	२३. ब्रह्मर्षि
रजः तमः	३. रजोगुणी-तमोगुणी	सुतस्य	२४. कुमार की बलि देना चाहते थे
प्रकृतीनाम्	४. स्वभाव से	निर्वैरस्य	१९. वैर-हीन
धनमदरज	५. धन के मद से रजोगुण के कारण	सर्वभूत	२०. समस्त प्राणियों के
उत्सिक्त	७. मर्यादा को त्याग दिया	सुहृदः	२१. प्रिय
मनसाम्	६. मन से भी	सूनायाम् अपि	२५. आपत्ति काल में भी
भगवत् कला	८ वे भगवान् के अंश स्वरूप	अननुमतम्	२७. आज्ञा नहीं है
वीर कुलम्	९. ब्राह्मण कुल का	आलम्भननम्	२६. ब्राह्मणकुमार की हिंसा की
कदर्थीकृत्य	१०. तिरस्कार करके	तद् उपलभ्य	२८. वही स्थिति प्राप्त होने पर
उत्पथेन	१२. कुमार्ग की ओर	ब्रह्मतेजसा	३४. ब्रह्मतेज के कारण
स्वैरम्	११. स्वच्छन्दता पूर्वक	अतिदुर्विषहेण	३३. अत्यन्त कठिन
विहारताम्	१३. बढ़ रहे थे	दन्ह्यमानेन	३५. दाह होने लगा और
हिंसा	१४. हिंसा का	वपुषा सहसा	३२. शरीर में एकाएक
विहाराणाम्	१५. व्यवहार	उच्चचाट	३८. प्रकट हो गईं
कर्म	१७. कर्म है	सा	३६. वे
अतिदारुणम्	१६. अत्यधिक भयंकर	एव	३७. ही
यद्ब्रह्मभूतस्य	१८. फिर भी ब्रह्म-भाव को प्राप्त हुये	देवी	३०. देवी
		भद्रकाली ॥	३१. भद्रकाली के

श्लोकार्थ—इस प्रकार उन चोरों के रजोगुणी-तमोगुणी स्वभाव से धन के मद से रजोगुण के कारण मन से भी मर्यादा को त्याग दिया। वे भगवान् के अंश स्वरूप ब्राह्मण कुल का तिरस्कार करके स्वच्छन्दता पूर्वक कुमार्ग की ओर बढ़ रहे थे। हिंसा का व्यवहार अत्यधिक भयंकर कर्म है। फिर भी ब्रह्मभाव को प्राप्त हुये वैरहीन समस्त प्राणियों के प्रिय साक्षात्-ब्रह्मर्षिकुमार की बलि देना चाहते थे। आपत्ति काल में भी ब्राह्मण की हिंसा की आज्ञा नहीं है। वही स्थिति प्राप्त होने पर देवी भद्रकाली के शरीर में एकाएक दाह होने लगा और वे ही प्रकट हो गईं ॥

अष्टादशः श्लोकः

भृशममर्षरोषावेशरभसविलसितभ्रुकुटिविटपकुटिलदंष्ट्रारुणेक्षणाटोपाति-भयानकवदना हन्तुकामेवेदं महाट्टहासमतिसंरम्भेण विमुञ्चन्ती तत उत्पत्य पापीयसां दुष्टानां तेनैवासिना विवृक्णशीर्ष्णां गलात्स्रवन्तमसृगासवमत्युष्णं सह गणेन निपीयातिपानमदविह्वलोच्चैस्तरां स्वपार्षदैः सह जगौ ननर्त च विजहार च शिरःकन्दुकलीलया ॥१८॥

पदच्छेद—भृशम् अमर्षरोष आवेश रभस 'विलसित भ्रुकुटि विटप कुटिल दंष्ट्रा अरुण ईक्षण आटोपाति भयानक वदना हन्तुकाम एव इदम् महाट्ट हासम् अति संरम्भेण विमुञ्चन्ती तत् उत्पत्य पापीयसाम् दुष्टानाम् तेन एव असिना विवृक्ण शीर्ष्णां गलात् स्रवन्तम् असृक आसवम् अति उष्णम् सह गणेन निपीयाति पानमद विह्वलः उच्चैस्तराम् स्वपार्षदैः सह जगौ ननर्त च विजहार च शिरः कन्दुक लीलया ॥

शब्दार्थ—भृशम्	१. अत्यन्त	तत	१९. वहाँ से
अमर्ष	२. असहनशीलता और	उत्पत्य	२०. उछल कर
रोष आवेश	३ क्रोध के वशीभूत होकर	पापीयसाम्	२१ पापियों के और
रभस	४. अतिवेग से	दुष्टानाम्	२२. दुष्टों के
विलसित	५. चढ़ी हुई	तेन एव असिना	२४. उसी खड्ग से
भ्रुकुटि	६. भौंहों	विवृक्ण	२५. अलग कर दिये
विटप-कुटिल दंष्ट्रा	७. तीक्ष्ण और कराल डाढ़ों	शीर्ष्णां	२३. सिर
अरुण	९ लाल-लाल	गलात्	२६. गले से
ईक्षण	१०. आँखों से	स्रवन्तम्	२७. बहता हुआ
आटोपाति	८. अति चढ़ी हुई	असृक आसवम्	२९. रुधिररूप-आसव
अतिभयानक	११. अत्यन्त भयानक	अति-उष्णम्	२८. अति-गर्म-गर्म
वदना	१२. मुख वाली	सह	३१. साथ
हन्तुकामः	१३. मारने की इच्छावाली	गणेन	३०. अपने गणों के
एव	१४. प्रतीत होती थीं	निपीय अतिपान	३२. पीकर अधिक पीने के कारण
इदम्	१५. यह	मद विह्वल	३३. मदमत्त होकर
महाट्ट हासम्	१७. भीषण अट्टहास और	उच्चैः तराम्	३५. ऊँचे स्वर से
अति-सरम्भेण	१६. अत्यन्त क्रोध के कारण	स्वपार्षदैः	३४. अपने सहायकों के
विमुञ्चन्ती	१८. निःश्वास छोड़ती हुई	सह जगौ	३६. साथ गाती हुई और
		ननर्त च विजहार	३७. नाचती हुई और खेलने लगीं
		च शिरः कन्दुक ।	३८. सिरों को गेंद बनाकर
		लीलया ॥	३९ लीला के साथ

श्लोकार्थ—अत्यन्त असहनशीलता और क्रोध के वशीभूत होकर अतिवेग से चढ़ी हुई भौंहों, तीक्ष्ण और कराल डाढ़ों, अति चढ़ी हुई लाल-लाल आँखों से अत्यन्त भयानक मुख वाली तथा मारने की इच्छा वाली प्रतीत होती थीं। उन्होने अत्यन्त क्रोध के कारण भीषण अट्टहास और निःश्वास छोड़ती हुई वहाँ से उछल कर पापियों और दुष्टों के सिर उसी खड्ग से अलग कर दिये। गले से बहता हुआ अति गर्म-गर्म रुधिर रूप आसव अपने गणों के साथ पीकर अधिक पीने के कारण मदमत्त होकर अपने सहायकों के साथ ऊँचे स्वर से गाती हुई और नाचती हुई सिरों को गेंद बनाकर लीला के साथ खेलने लगीं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

एवमेव खलु महदभिचारातिक्रमः कार्त्स्न्येनात्मने फलति ॥१९॥

पदच्छेद एवम् एव खलु महद् अभिचार अतिक्रमः कार्त्स्न्येन आत्मने फलति ॥

शब्दार्थ—					
एवम्	३.	इस प्रकार	अभिचार	५.	अत्याचार रूप
एव	२.	ही	अतिक्रमः	६	अपराध
खलु	१	निश्चय	कार्त्स्न्येन	७.	पूरा का पूरा
महद्	४.	महापुरुषों के प्रति किया हुआ	आत्मने	८.	अपने ही ऊपर
			फलति ॥	९.	आ पड़ता है

श्लोकार्थ——निश्चय ही इस प्रकार महा पुरुषों के प्रति किया हुआ अत्याचाररूप अपराध पूरा का पूरा अपने ही ऊपर आ पड़ता है ॥

विंशः श्लोकः

न वा एतद्विष्णुदत्त महदद्भुतं यदसम्भ्रमः स्वशिरश्छेदन आपतितेऽपि विमुक्तदेहाद्यात्मभावसुदृढहृदयग्रन्थीनां सर्वसत्त्वसुहृदात्मनां निर्वैराणां साक्षाद्भगवतानिमिषारिवरायुधेनाप्रमत्तेन तैस्तैर्भावैः परिरक्ष्यमाणानां तत्पादमूलमकुतश्चिद्भयमुपसृतानां भागवतपरमहंसानाम् ॥२०॥

पदच्छेद—न वा एतत् द्विष्णुदत्त महद् अद्भुतम् यद् असंभ्रमः स्व शिरश्छेदने आपतिते अपि विमुक्त देहादि आत्मभाव सुदृढ हृदयग्रन्थीनाम् सर्वसत्त्व सुहृद् आत्मनाम् निर्वैराणाम् साक्षात् भगवता अनिमिष अरिवर इव आयुधेन अप्रमत्तेन तैः तैः भावैः परिरक्ष्यमाणानाम् तत् पाद मूलम् अकुतश्चिद्भयम् उपसृतानाम् भागवत परमहंसानाम् ॥

शब्दार्थ—				
न	४. नहीं है		सर्वसत्त्व सुहृद्	२०. जो समस्त प्राणियों के प्रिय
वा	९. क्योंकि		आत्मनाम्	२१. आत्मा एवम्
एतद्विष्णुदत्त	१. परीक्षित् ! यह		निर्वैराणाम्	२२. वैरहीन हैं (और जो)
महद् अद्भुतम्	३. अत्यधिक-आश्चर्य		साक्षात् भगवता	१०. साक्षात् भगवान् ही
यद्	५. जो कि		अनिमिषअरिवर	१३. चक्ररूप काल के शस्त्र के समान
असम्भ्रमः	८. वे व्याकुल नहीं होते		आयुधेन	११. कभी न चूकने वाले
स्वशिरश्छेदने	६. अपना सिर कटने का अवसर		अप्रमत्तेन	१२. सदा सजग रहने वाले
आपतिते अपि	७. आने पर भी		तैः तैः भावैः	१४. उन-उन स्थितियों में उनकी
विमुक्त	१९. छूट गई है		परिरक्ष्यमाणानाम्	१५. रक्षा करते हैं जिसकी
देहादि आत्मभाव	१६. देहादि के प्रति-आत्म बुद्धि को		तत् पाद मूलम्	२३. उन(भगवान्)के चरण कमलों का
सुदृढ हृदय	१७. मजबूत हृदय की		अकुतश्चिद्भयम्	२४. निर्भय
ग्रन्थीनाम्	१८. गांठें		उपसृतानाम्	२५. आश्रय लेने वाले हैं
			भागवत परमहंसानाम् ॥	२६. भगवत् भक्त परमहंसों के लिये

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! भगवत् भक्त परमहंसों के लिये यह अत्यधिक आश्चर्य नहीं है, जो कि अपना सिर कटने का अवसर आने पर भी वे व्याकुल नहीं होते। क्योंकि साक्षात् भगवान् ही कभी न चूकने वाले, सदा सजग रहने वाले चक्ररूप काल के शस्त्र के समान उन-उन स्थितियों में उनकी रक्षा करते हैं, जिनकी देहादि के प्रति आत्मबुद्धि की मजबूत हृदय की गांठें छूट गई हैं, जो समस्त प्राणियों के प्रिय आत्मा एवम् वैर हीन हैं और जो उन (भगवान् के) चरण कमलों का निर्भय आश्रय लेते हैं ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे जड़भरतचरिते नवमोऽध्यायः ॥९॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पंचमः स्कन्धः

दशमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—अथ सिन्धुसौवीरपते रहूगणस्य व्रजत इक्षुमत्यास्तटे तत्कुलपतिना शिबिकावाहपुरुषान्वेषणसमये दैवेनोपसादितः स द्विजवर उपलब्ध एष पीवा युवा संहननाङ्गो गोखरवद्धुरं वोढुमलमिति पूर्वविष्टि-गृहीतैः सह गृहीतः प्रसभमतदर्ह उवाह शिबिकां स महानुभावः ॥१॥

पदच्छेद—अथ सिन्धुसौवीरपतेः रहूगणस्य व्रजतः इक्षुमत्यास्तटे तत्कुल पतिना शिबिका वाह पुरुषान्वेषण समये दैवेनोपसादितः स द्विजवरः उपलब्धः एषः पीवा युवा संहननाङ्गः गोखरवद् धुरम् वोढुम् अलम्, इति पूर्व विष्टि गृहीतैः सह गृहीतः प्रसभम् अतदर्हः उवाह शिबिकाम् सः महानुभावः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	युवा	१९.	जवान और
सिन्धु	२.	सिन्धु	संहनन	२०.	गठीले
सौवीरपतेः	३.	सौवीर देश का स्वामी	अङ्गः	२१.	अङ्गों वाला होने से
रहूगणस्य	४.	राजा रहूगण	गो	२२.	बैल तथा
व्रजतः	७.	जा रहा था	खरवत्	२३.	गधे के समान
इक्षुमत्याः	५.	इक्षुमती नदी के	धुरम्	२४.	अत्यधिक
तटे	६.	किनारे पर	वोढुंम्	२५.	बोझा ढोने में
तत् कुल	८	पालकी ढोने वालों के	अलम्	२६.	समर्थ है
पतिना	९.	स्वामी द्वारा	इति	२७.	ऐसा सोचकर
शिबिकावाह	१०.	पालकी ढोने वाले	पूर्व	२८.	पहले से
पुरुष अन्वेषण	११.	एक व्यक्ति को खोजते	विष्टिगृहीतैः	२९.	बेगार में पकड़े हुये
समये	१२.	समय	सह	३०.	साथ लोगों के
दैवेन	१३.	दैव योग से	गृहीतः	३१.	इन्हें भी पकड़ कर
उपसादितः	१६.	मिल गये	प्रसभम्	३२.	बलपूर्वक पालकी में लगा दिया
सः	१४.	वे	अतदर्हः	३५.	इस कार्य के योग्य न होने पर भी
द्विजवरः	१५.	ब्राह्मण देवता	उवाह	३७.	उठा कर ले चले
उपलब्धः	१७.	मिला हुआ	शिबिकाम्	३६.	पालकी को
एषः पीवा	१८.	यह व्यक्ति-हृष्ट-पुष्ट	सः	३३.	वे
			महानुभावः ॥	३४.	महात्मा भरत

श्लोकार्थ—तदनन्तर सिन्धु सौवीर देश का स्वामी राजा रहूगण इक्षुमती नदी के किनारे पर जा रहा था। पालकी ढोने वालों के स्वामी द्वारा पालकी ढोने वाले एक व्यक्ति को खोजते समय दैवयोग से वे ब्राह्मण देवता मिल गये। मिला हुआ यह व्यक्ति हृष्ट-पुष्ट जवान और गठीले अङ्गों वाला होने से बैल तथा गधे के समान अत्यधिक बोझा ढोने में समर्थ है ऐसा सोचकर पहले से बेगार में पकड़े हुये लोगों के साथ इन्हें भी पकड़ कर बलपूर्वक पालकी में लगा दिया। वे महात्मा भरत इस कार्य के योग्य न होने पर भी पालकी को उठाकर ले चले ॥

द्वितीयः श्लोकः

यदा हि द्विजवरस्येषुमात्रावलोकानुगतेर्न समाहिता पुरुषगतिस्तदा विषमगतां स्वशिबिकां रहूगण उपधार्य पुरुषानधिवहत आह हे वोढारः साध्वतिक्रमत किमिति विषममुह्यते यानमिति ॥२॥

पदच्छेद—यदा हि द्विजवरस्य इषुमात्र अवलोक अनुगतेः न समाहिता पुरुष गतिः तदा विषम गताम् स्व शिबिकाम् रहूगणः उपधार्य पुरुषान् अधिवहत आह हे वोढारः साधु अतिक्रमत किम् इति विषमम् उह्यते यानम् इति ॥

शब्दार्थ—

यदा हि	१. जब	उपधार्य	१३. देखकर
द्विजवरस्य	२. ब्राह्मण कुमार	पुरुषान्	१४. लोगों से
इषु मात्र	३. एक बाण के बराबर	अधिवहतः	१३. ढोने वाले
अवलोक	४. पृथ्वी को देखते हुये	आह हे वोढारः	१५.१६. कहा अरे कहारों
अनुगतेः	६. पीछे चलने में	साधु अतिक्रमत	१७. अच्छी प्रकार से चलो
न समाहिता	७. नहीं समर्थ हुये	किम्	२२. क्यों
पुरुषगतिः	५. लोगों की चाल के	इति	१९. इस प्रकार
तदा	८. तब	विषमम्	२१. ऊँची नीची करके
विषम गताम्	११. टेढ़ी-मेढ़ी होने वाली	उह्यते	२३. चलते हो
स्व शिबिकाम्	१०. अपनी पालकी को	यानम्	१८. पालकी को
रहूगण	९. रहूगण ने	इति ॥	२०. ऐसी

श्लोकार्थ—जब ब्राह्मण कुमार एक बाण के बराबर पृथ्वी को देखते हुये लोगों की चाल के पीछे चलने में समर्थ नहीं हुये। तब रहूगण ने अपनी पालकी को टेढ़ो-मेढ़ी होने वाली देखकर ढोने वाले लोगों से कहा—अरे कहारो! अच्छी प्रकार से चलो। पालकी को इस प्रकार से ऐसी ऊँची-नीची करके क्यों चलते हो ॥

तृतीयः श्लोकः

अथ त ईश्वरवचः सोपालम्भमुपाकर्ण्योपायतुरीयाच्छङ्कितमनसस्तं विज्ञापयाम्बभूवुः ॥३॥

पदच्छेद—अथ तु ईश्वर वचः सोपालम्भम् उपाकर्ण्य उपाय तुरीयात् शङ्कित मनसः तम् विज्ञापपयाम्बभूवुः ॥

शब्दार्थ—

अथ ते	१. तदनन्तर उन्होंने	तुरीयात्	५. अन्य
ईश्वर वचः	३. स्वामी का वचन	शङ्कित	८. विचार करते हुये
सोपालम्भम्	२. आक्षेप युक्त	मनसः	७. मन से
उपाकर्ण्य	४. सुनकर	तम्	९. उन राजा से ऐसा
उपाय	६. उपाय का	विज्ञापयाम्	१०. निवेदन
		बभूवुः ॥	११. किया

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन्होंने आक्षेप युक्त स्वामी का वचन सुनकर अन्य उपाय का मन से विचार करते हुये उन राजा से ऐसा निवेदन किया ॥

चतुर्थः श्लोकः

न वयं नरदेव प्रमत्ता भवन्नियमानुपथाः साध्वेव वहामः । अयमधुनैव नियुक्तोऽपि न द्रुतं व्रजति नानेन सह वोढुमु ह वयं पारयाम इति ॥४॥

पदच्छेद—

न वयम् नरदेव प्रमत्ताः भवत् नियम अनुपथाः साधु एव वहामः । अयम् अधुना एव नियुक्तः अपि न द्रुतं व्रजति न अनेन सह वोढुम् उ ह वयम् पारयामः इति ॥

शब्दार्थ—

न	४.	नहीं हैं (हम तो)	अधुना एव	११.	अभी-अभी
वयम्	२.	हम लोगों का	नियुक्तः अपि	१३.	लगाया गया है फिर भी
नरदेव	१.	महाराज ! यह	न	१५.	नहीं
प्रमत्ताः	३.	प्रमाद	द्रुतम्	१४.	जल्दी-जल्दी
भवत्	५.	आपके	व्रजति	१६.	चलता
नियम	६.	नियम (और)	न	२२.	नहीं है
अनुपथाः	७.	मर्यादा के अनुसार	अनेन सह	१९.	इसके साथ
साधु	८.	ठीक-ठीक	वोढुम्	२०.	पालकी ढोने में
एव	९.	ही	उ ह	१७.	निश्चित रूप से
वहामः	१०.	चल रहे हैं	वयम्	१८.	हम लोग
अयम्	१२.	यह नया व्यक्ति	पारयामः इति ॥	२१.	समर्थ

श्लोकार्थ—महाराज हम लोगों का प्रमाद नहीं है । हम लोग तो आपके नियम और मर्यादा के अनुसार ठीक-ठीक ही चल रहे हैं । अभी-अभी यह नया व्यक्ति लगाया गया है । फिर भी जल्दी-जल्दी नहीं चलता । हम लोग इसके साथ पालकी ढोने में समर्थ नहीं हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

सांसर्गिको दोष एव नूनमेकस्यापि सर्वेषां सांसर्गिकाणां भवितुमर्हतीति निश्चित्य निशम्य कृपणवचो राजा रहूगण उपासितवृद्धोऽपि निसर्गेण बलात्कृत ईषदुत्थितमन्युरविस्पष्टब्रह्मतेजसं जातवेदसमिव रजसाऽऽवृतमतिराह ॥५॥

पदच्छेद—

सांसर्गिकः दोषः एव नूनम् एकस्य अपि सर्वेषाम् सांसर्गिकाणाम् भवितुम् अर्हति इति निश्चित्य निशम्य कृपण वचः राजा रहूगणः उपासित वृद्धः अपि निसर्गेण बलात् कृतः ईषद् उत्थितमन्युः अविस्पष्ट ब्रह्मतेजसम् जातवेदसम् इव रजसा आवृत मतिः आह ॥

शब्दार्थ—

सांसर्गिकः	१.	संसर्ग के कारण उत्पन्न	उपासित	१७.	सेवन करने पर
दोषः	२.	दोष	वृद्धः	१६.	महापुरुषों का
एव	६.	ही	अपि	१८.	भी
नूनम्	५.	निश्चय	निसर्गेण	१९.	क्षत्रिय स्वभाव के कारण
एकस्य	३.	एक व्यक्ति में होने पर	बलात् कृतः	२०.	बल पूर्वक
अपि	४.	भी	ईषद् उत्थित	२१.	कुछ-कुछ
सर्वेषाम्	७.	सभी	मन्युः	२३.	क्रोध से
सांसर्गिकाणाम्	८.	सम्बन्ध रखने वालों में	अविस्पष्ट	२२.	प्रकट न होने वाले
भवितुम्	९.	हो	ब्रह्म तेजसम्	२८.	ब्रह्मतेज वाले (श्री भरत से)
अर्हति	१०.	सकता है	जातवेदसम्	२६.	अग्नि के
इति	११.	ऐसा	इव	२७.	समान
निश्चित्य	१२.	निश्चय करके (और)	रजसा	२४.	धूल से
निशम्य	१४.	सुनकर	आवृत	२५.	ढकी हुई
कृपण वचः	१३.	कहारों के दीन वचन	मतिः	२९.	रजोगुणी बुद्धि होने से
राजा रहूगणः	१५.	राजा रहूगण ने	आह ॥	३०.	ऐसा कहा

श्लोकार्थ— संसर्ग के कारण उत्पन्न दोष एक व्यक्ति में होने पर भी निश्चय ही सभी सम्बन्ध रखने वालों में हो सकता है। ऐसा निश्चय करके और कहारों के दीन वचन सुनकर राजा रहूगण ने महापुरुषों का सेवन करने पर भी क्षत्रिय स्वभाव के कारण बलपूर्वक कुछ-कुछ प्रकट न होने वाले क्रोध से धूल से ढकी हुई अग्नि के समान ब्रह्मतेज वाले श्री भरत से, रजोगुणी बुद्धि होने से ऐसा कहा ॥

षष्ठः श्लोकः

अहो कष्टं भ्रातर्व्यक्तमुरु परिश्रान्तो दीर्घमध्वानमेक एव ऊहिवान् सुचिरं नातिपीवा न संहननाङ्गो जरसा चोपद्रुतो भवान् सखे नो एवापर एते सङ्घट्टिन इति बहु विप्रलब्धोऽप्यविद्यया रचितद्रव्यगुणकर्माशयस्वचरमकलेवरेऽवस्तुनि संस्थानविशेषेऽहं ममेत्यनध्यारोपितमिथ्याप्रत्ययो ब्रह्मभूतस्तूष्णीं शिबिकां पूर्ववदुवाह ॥६॥

पदच्छेद—अहो कष्टम् भ्रातः व्यक्तम् उरु परिश्रान्तः दीर्घम् अध्वानम् एक एव ऊहिवान् सुचिरम् न अति पीवा न संहनन अङ्गः जरसा च उपद्रुतः भवान् सखे नो एव अपरे एते सङ्घट्टिनः इति बहुविप्रलब्धः अपि विद्यया रचित द्रव्य गुणकर्म आशय स्व चरम कलेवरे अवस्तुनि संस्थान विशेषे अहम् मम इति अनध्यारोपित मिथ्या प्रत्ययः ब्रह्मभूतः तूष्णीम् शिबिकाम् पूर्ववत् उवाह ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	अरे	एते	१८.	ये
कष्टम्	३.	बड़ा कष्ट है	सङ्घट्टिनः	२०.	साथी
भ्रातः	२.	भाई	इति	२१.	इस प्रकार
व्यक्तम्	५.	दिखाई दे रहे हो	बहुविप्रलब्धः	२२.	बहुत ताना मारने पर
उरुपरिश्रान्तः	४.	अत्यधिक थके हुये	अपि	२३.	भी (वे)
दीर्घम्	६.	इतने लम्बे	अविद्यया रचित	२४.	अविद्या से बनाया गया
अध्वानम्	७.	मार्ग पर	द्रव्य	२५.	पञ्चभूत
एक-एव	८.	अकेले ही	गुण	२६.	सत्त्व-रज-तम तथा
ऊहिवान्	१०.	पालकी ढो रहे हो	कर्म आशय	२७.	पूर्व कर्म का परिणाम
सुचिरम्	६.	बहुत देर से	स्व चरम कलेवर	२८.	यह अन्तिम शरीर है जो
न	१२.	नहीं हो	अवस्तुनि	२९.	वस्तुतः था ही नहीं ऐसा समझकर
अतिपीवा	११.	बहुत मोटे-ताजे	संस्थान	३०.	समूह
न	१४.	नहीं है	विशेषे	३१.	विशेष में
संहनन अङ्गः	१३.	हृष्ट-पुष्ट शरीर	अहम् मम इति	३२.	मैं मेरा इस प्रकार
जरसा	१५.	वृद्धावस्था के कारण	अनध्यारोपित	३४.	निवृत्त हो जाने से
उपद्रुतः	१६.	परेशान हो	मिथ्या प्रत्ययः	३३.	मिथ्यापन का अभ्यास
भवान्	१५.	आप	ब्रह्मभूतः तूष्णीम्	३५.	ब्रह्म स्वरूप चुपचाप
सखे	१७.	हे मित्र	शिबिकाम्	३८.	पालकी को
नो	२२.	नहीं है	पूर्व	३६.	पहले की
एव	२१.	ऐसे	वत्	३७.	तरह
अपरे	१९.	दूसरे	उवाह ॥	३९.	ढोते रहे

श्लोकार्थ—अरे ! भाई बड़ा कष्ट है। अत्यधिक थके हुये दिखाई दे रहे हो। इतने लम्बे मार्ग पर अकेले ही बहुत देर से पालकी ढो रहे हो। बहुत मोटे-ताजे नहीं हो, हृष्ट-पुष्ट शरीर नहीं है वृद्धावस्था के कारण आप परेशान हो। हे मित्र ! ये दूसरे साथी ऐसे नहीं हैं। इस प्रकार बहुत ताना मारने पर भी वे अविद्या द्वारा बनाया गया पञ्चभूत, सत्त्व-रज-तमोगुण तथा पूर्व कर्म का परिणाम यह अन्तिम शरीर है, जो वस्तुतः था ही नहीं, ऐसा समझकर समूह विशेष में मैं मेरा इस प्रकार मिथ्यापन का अभ्यास निवृत्त हो जाने से ब्रह्मस्वरूप चुप-चाप पहले की तरह पालकी को ढोते रहे ॥

सप्तम श्लोकः

अथ पुनः स्वशिबिकायां विषमगतायां प्रकुपित उवाच रहूगणः किमिदमरे त्वं जीवन्मृतो मां कदर्थीकृत्य भर्तृशासनमतिचरसि प्रमत्तस्य च ते करोमि चिकित्सां दण्डपाणिरिव जनताया यथा प्रकृतिं स्वां भजिष्यस इति ॥७॥

पदच्छेद—

अथ पुनः स्वशिबिकायाम् विषम गतायाम् प्रकुपित उवाच रहूगणः किम् इदम् अरे त्वम् जीवन्मृतः माम् कदर्थीकृत्य भर्तृ शासनम् अति चरसि प्रमत्तस्य च ते करोमि चिकित्साम् दण्डपाणिः इव जनताया यथा प्रकृतिम् स्वाम् भजिष्यसे इति ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	भर्तृ	१७.	स्वामी की
पुनः	२.	फिर से	शासनम्	१८.	आज्ञा का
स्व	४.	अपनी	अतिचरसि	१९.	उल्लंघन कर रहा है
शिबिकायाम्	५.	पालकी के	प्रमत्तस्य	२०.	ओ प्रमादी
विषम	६.	ऊँची नीची	च	२४.	और
गतायाम्	७.	होने पर	ते	२४.	तेरी
प्रकुपित	८	अत्यधिक क्रोधित होकर	करोमि	२६.	किये देता हूँ
उवाच	९.	बोला	चिकित्साम्	२५.	चिकित्सा
रहूगणः	३.	राजा रहूगण	दण्डपाणिः	२१.	दण्ड को हाथ में लिये हुये यमराज द्वारा
किम्	१२.	क्या	इव	२३.	समान (मैं)
इदम्	११.	यह	जनतायाः	२२.	जनता के
अरे	१०.	अरे	यथा	२७.	जिससे
त्वम्	१३.	तू	प्रकृतिम्	२९.	होश
जीवन् मृतः	१४.	जीता ही मर गया है	स्वाम्	२८.	तुम्हारा
माम्	१५.	जो मेरा	भजिष्यसे	३१.	ठिकाने आ जायेगा
कदर्थीकृत्य	१६.	निरादर करके (मुझ)	इति ॥	३२.	ऐसा कहा

श्लोकार्थ—तदनन्तर फिर से राजा रहूगण अपनी पालकी के ऊँची-नीची होने पर अत्यधिक क्रोधित होकर बोला—अरे यह क्या तू जीता ही मर गया है जो मेरा निरादर करके मुझ स्वामी की आज्ञा का उल्लंघन कर रहा है। ओ प्रमादी! दण्ड को हाथ में लिये हुये यमराज द्वारा जनता के समान मैं तेरी चिकित्सा किये देता हूँ जिससे तुम्हारा होश ठिकाने आ जायेगा, ऐसा कहा ॥

अष्टमः श्लोकः

एवं बह्वबद्धमपि भाषमाणं नरदेवाभिमानं रजसा तमसानुविद्धेन मदेन तिरस्कृताशेषभगवत्प्रियनिकेतं पण्डितमानिनं स भगवान् ब्राह्मणो ब्रह्मभूतः सर्वभूतसुहृदात्मा योगेश्वरचर्यायां नातिव्युत्पन्नमतिं स्मयमान इव विगतस्मय इदमाह ॥८॥

पदच्छेद—एवम् बहु अबद्धम् अपि भाषमाणम् नर देव अभिमानम् रजसा तमसा अनुविद्धेन मदेन तिरस्कृत अशेष भगवत् प्रियनिकेतम् पण्डित मानिनम् सः भगवान् ब्राह्मणः ब्रह्मभूतः सर्वभूत सुहृद् आत्मा योगेश्वर चर्यायाम् न अति व्युत्पन्नमतिम् स्मयमानः इव विगतस्मयः इदम् आह ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इसी प्रकार	भगवान्	२१. देवता का
बहु	२. बहुत सी	ब्राह्मणः	२०. ब्राह्मण
अबद्धम् अपि	३. अनाप-शनाप बातें	ब्रह्मभूतः	१९. ब्रह्मस्वरूप
भाषमाणम्	४. बोलते हुये	सर्वभूत	००. सम्पूर्ण प्राणियों के
नरदेव	५. राजा होने के	सुहृदः	२३. मित्र
अभिमानम्	६. अभिमान से	आत्मा	०४. आत्मा (तथा)
रजसा	७. रजोगुण और	योगेश्वर	१३. योगेश्वरों की
तमसा	८. तमोगुण के	चर्यायाम्	१४. विचित्र जीवन चर्या को
अनुविद्धेन	९. वशीभूत और	न	१६. नहीं
मदेन	१०. मदमत्त होकर	अति	१५. अधिक
तिरस्कृत	२८. तिरस्कार कर दिया (फिर भी वे)	व्युत्पन्नमतिम्	१७. जानने के कारण
अशेष	२६. अनन्य	स्मयमानः	२९. मुसकारते हुये
भगवत्	२५. भगवान् के	इव	३०. जैसे होकर
प्रियनिकेतम्	२७. प्रीति-पात्र (ब्राह्मणदेव का)	विगत	३२. रहित
पण्डित	११. अपने को पण्डित	स्मयः	३१. अभिमान से
मानिनम्	१२. मानने वाले	इदम्	३४. इस प्रकार
सः	१८. उस राजा रहूगण ने	आह ॥	३५. बोले

श्लोकार्थ—इसी प्रकार बहुत सी अनाप-शनाप बातें बोलते हुये राजा होने के अभिमान से रजोगुण और तमोगुण के वशीभूत और मदमत्त होकर अपने को पण्डित मानने वाले योगेश्वरों की विचित्र जीवनचर्या को अधिक नहीं जानने के कारण उस राजा रहूगण ने ब्रह्म स्वरूप ब्राह्मण देवता का सम्पूर्ण प्राणियो के मित्र आत्मा तथा भगवान् के अनन्य प्रीति पात्र-ब्राह्मणदेव का तिरस्कार कर दिया। फिर भी वे मुस्कराते हुये अभिमान से रहित जैसे होकर इस प्रकार बोले ॥

नवमः श्लोकः

ब्राह्मण उवाच—त्वयोदितं व्यक्तमविप्रलब्धं भर्तुः स मे स्याद्यदि वीर भारः ।
गन्तुर्यदि स्यादधिगम्यमध्वा, पीवेति राशौ न विदां प्रवादः ॥९॥

पदच्छेद त्वया उदितम् व्यक्तम् अविप्रलब्धम् भर्तुः स मे स्यात् यदि वीरभारः ।
गन्तुः यदि स्याद् अधिगम्यम् अध्वा पीवा इति राशौ न विदाम् प्रवादः ॥

शब्दार्थ—

त्वया उदितम्	२ तुमने जो कहा है	गन्तुः	१३. जाने वाले के
व्यक्तम्	३. वह ठीक ही है	यदि	१०. यदि
अविप्रलब्धम्	४. उसमें कोई उलहना नहीं है	स्याद्	१२. है तो
भर्तुः	९. ढोने वाले के लिये	अधिगम्यम्	१४. लिये है
सः	८. वह	अध्वा	११. मार्ग
मे	१७. मेरा (और)	पीवा इति	१५. मोटापन यदि है तो
स्यात्	७. है (तो)	राशौ	१६. शरीर का है (इस विषय में)
यदि	५. यदि	न	२०. नहीं है
वीर	१. हे राजन् !	विदाम्	१८. विद्वानों का
भारः ।	६. भार	प्रवादः ॥	१९. किसी प्रकार का विवाद

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तुमने जो कहा है, वह ठीक ही है, उसमें कोई उलहना नहीं है । यदि भार है तो वह ढोने वाले के लिये है । यदि मार्ग है तो जाने वाले के लिये है । मोटापन यदि है तो शरीर का है । इस विषय में मेरा और विद्वानों का किसी प्रकार का विवाद नहीं है ॥

दशमः श्लोकः

स्थौल्यं कार्श्यं व्याधय आधयश्च क्षुत्तृड् भयं कलिरिच्छा जरा च ।
निद्रा रतिर्मन्युरहंमदः शुचो देहेन जातस्य हि मे न सन्ति ॥१०॥

पदच्छेद—स्थौल्यम् कार्श्यम् व्याधयः आधयः च क्षुत् तृड् भयम् कलिः इच्छा जरा च ।
निद्रा रतिः मन्युः अहम् मदः शुचः देहेन जातस्य हि मे न सन्ति ॥

शब्दार्थ—

स्थौल्यम्	१. हे राजन् ! स्थूल होना	निद्रा, रति	९. निद्रा, रति
कार्श्यम्	२. कृश होना	मन्युः	१०. क्रोध
व्याधयः	३. शरीर के रोग	अहम् मदः	११. अभिमान मतवालापन और
आधयः	४. मन के रोग	शुचः देहेन	१२. शोक शरीर के अभिमान से
च क्षुत्तृड्	५. और भूख-प्यास	जातस्य	१३. उत्पन्न होने वाले (जीव में)
भयम्	६. भय	हि	१४. ही रहते हैं
कलिः इच्छा	७. कलह-इच्छा	मे	१५. मुझमें
जरा च	८. बुढ़ापा और	न सन्ति ॥	१६. नहीं हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! स्थूल होना, कृश होना, शरीर के रोग, मन के रोग और भूख-प्यास, भय, कलह, इच्छा, बुढ़ापा और निद्रा, रति, क्रोध, अभिमान, मतवालापन और शोक शरीर के अभियान से उत्पन्न होने वाले जीव में ही रहते हैं, मुझमें नहीं हैं ॥

एकादशः श्लोकः

जीवन्मृतत्वं नियमेन राजन् आद्यन्तवद्यद्विकृतस्य दृष्टम् ।
स्वस्वाम्यभावो ध्रुव ईड्य यत्र तर्ह्युच्यतेऽसौ विधिकृत्ययोगः ॥११॥

पदच्छेद— जीवन् मृतत्वम् नियमेन राजन्, आद्यन्त वत् यत् विकृतस्य दृष्टम् ।
स्वस्वाम्य भावः ध्रुव ईड्य यत्र, तर्हि उच्यते असौ विधि कृत्य योगः ॥

शब्दार्थ—

जीवन्	२.	जीवन	स्वस्वाम्य	११.	स्वामी, सेवक
मृतत्वम्	३.	मरण	भावः	१२.	भाव
नियमेन	४.	नियमित रूप से	ध्रुवः	१३.	निश्चित रूप से
राजन्	१.	हे राजन् !	ईड्यः	१४.	स्थिर हो
आद्यन्त	७.	आदि अन्त	यत्र	१०.	जहाँ
वत्	८.	वाले हैं	तर्हि	१५.	वहीं
यत्	५.	जो	उच्यते	१८.	माना जाता है
विकृतस्य	६.	विकारी पदार्थ	असौ विधि	१६.	यह, नियमों के द्वारा
दृष्टम् ।	९.	उनमें दिखाई देते हैं	कृत्य योगः ॥	१७	बनाया गया सम्बन्ध

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जीवन-मरण नियमित रूप से जो विकारी पदार्थ आदि अन्त वाले हैं, उनमें दिखाई देते हैं । जहाँ स्वामी, सेवक, भाव निश्चित रूप से स्थिर हो वहीं यह नियमों के द्वारा बनाया गया सम्बन्ध माना जाता है ॥

द्वादशः श्लोकः

विशेषबुद्धेर्विवरं मनाक् च, पश्याम यन्न व्यवहारतोऽन्यत् ।
क ईश्वरस्तत्र किमीशितव्यं तथापि राजन् करवाम किं ते ॥१२॥

पदच्छेद— विशेष बुद्धेः विवरम् मनाक् च, पश्याम यत् न व्यवहारतः अन्यत् ।
कः ईश्वरः तत्र किम् ईशितव्यम् तथापि राजन् करवाम किम् ते ॥

शब्दार्थ—

विशेषबुद्धेः	१.	भेद बुद्धि के लिये (मैं)	कः ईश्वरः	१०.	कौन स्वामी है
विवरम्	५.	अवकाश	तत्र	९.	वहाँ (परमार्थ स्थिति में)
मनाक्	४.	थोड़ा सा भी	किम्	१२.	कौन
च	११.	और	ईशितव्यम्	१३.	सेवक है
पश्याम	७.	देखता हूँ	तथापि	१४.	फिर भी मैं
यत्	८.	जो कि	राजन्	०.	हे राजन् !
न	६.	नहीं	करवाम	१७.	करूँ
व्यवहारतः	२.	व्यावहार के सिवाय	किम्	१६.	क्या सेवा
अन्यत् ।	३.	और कहीं	ते ॥	१५.	तुम्हारी

श्लोकार्थ—भेद-बुद्धि के लिये मैं व्यवहार के सिवाय और कहीं थोड़ा-सा भी अवकाश नहीं देखता हूँ ; जो कि वहाँ परमार्थ स्थिति में कौन स्वामी है और कौन सेवक है । फिर भी मैं तुम्हारी क्या सेवा करूँ ॥

त्रयोदशः श्लोकः

उन्मत्तमत्तजडवत्स्वसंस्थां गतस्य मे वीर चिकित्सितेन ।
अर्थः कियान् भवता शिक्षितेन स्तब्धप्रमत्तस्य च पिष्टपेषः ॥१३॥

पदच्छेद— उन्मत्त मत्त जड़वत् स्व संस्थाम् गतस्य मे वीर चिकित्सितेन ।
अर्थः कियान् भवता शिक्षितेन स्तब्ध प्रमत्तस्य च पिष्टपेषः ॥

शब्दार्थ—

उन्मत्त, मत्त	२. उन्मत्त, मतवाले	अर्थः	१३	प्रयोजन है (यह तो)
जड़वत्	३. जड़ के समान	कियान्	१२.	क्या
स्वसंस्थाम्	४. अपनी ही स्थिति में रहने वाले	भवता	१०.	आपके द्वारा
गतस्य	७. क्या मिलेगा	शिक्षितेन	११.	शिक्षा देने का
मे	५. मेरा	स्तब्ध	८.	जड़
वीर	१. हे राजन् !	प्रमत्तस्य च	९.	प्रमादी को
चिकित्सितेन ।	६. इलाज करके	पिष्ट पेषः ॥	१४.	पिसे हुये को पीसना है

श्लोकार्थ—हे राजन् !,उन्मत्त, मतवाले और जड़ के समान अपनी ही स्थिति में रहने वाले मेरा इलाज करके क्या मिलेगा । जड़-प्रमादी को आपके द्वारा शिक्षा देने का क्या प्रयोजन है । यह तो पिसे हुये को पीसना है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

एतावदनुवादपरिभाषया प्रत्युदीर्य मुनिवर उपशमशील उपरतानात्म्य-निमित्त उपभोगेन कर्मारब्धं व्यपनयन् राजयानमपि तथोवाह ॥१४॥

पदच्छेद—एता वद् अनुवाद परिभाषया प्रत्युदीर्य मुनिवर उपशम शील उपरत अनात्म्य निमित्त उपभोगेन कर्म आरब्धम् व्यपनयन् राजयानम् अपि तथा उवाह ॥

शब्दार्थ—

एतावद्	१. इतना	निमित्त	८.	कारण भूत अज्ञान
अनुवाद	२. उपदेश करते हुये	उपभोगेन	१०.	भोग के द्वारा
परिभाषया	३. भाषण के द्वारा	कर्म	१२.	कर्म का
प्रत्युदीर्य	४. उत्तर देकर	आरब्धम्	११.	प्रारब्ध
मुनिवर	५. जड़ भरत	व्यपनयन्	१३.	क्षय करने के लिये
उपशमशील	६. परम शान्त हो गये (उनका)	राजयानम्	१४.	पालकी को
उपरत	९ निवृत्त हो चुका था (अतः)	अपि तथा	१५.	फिर पहले की तरह
अनात्म्य	७. देहात्म बुद्धि का	उवाह ॥	१६.	ढोने लगे

श्लोकार्थ—इतना उपदेश करते हुये भाषण के द्वारा उत्तर देकर जड़ भरत परम शान्त हो गये । उनका देहात्म बुद्धि का कारण भूत अज्ञान निवृत्त हो चुका था । योग के द्वारा प्रारब्ध कर्म का क्षय करने के लिये पालकी को फिर पहले की तरह ढोने लगे ॥

पञ्चदशः श्लोकः

स चापि पाण्डवेय सिन्धुसौवीरपतिस्तत्त्वजिज्ञासायां सम्यक्श्रद्धयाधिकृताधिकारस्तद्धृदयग्रन्थिमोचनं द्विजवच आश्रुत्य बहुयोगग्रन्थसम्मतं त्वरयावरुह्य शिरसा पादमूलमुपसृतः क्षमापयन् विगतनृपदेवस्मय उवाच ॥१५॥

पदच्छेद—

स च अपि पाण्डवेय सिन्धु सौवीर पतिः तत्त्वजिज्ञासायाम् सम्यक् श्रद्धया अधिकृत अधिकारः तद् हृदय ग्रन्थिमोचनम् द्विजवच आश्रुत्य बहुयोग ग्रन्थ सम्मतम् त्वरया अवरुह्य शिरसा पादमूलम् उपसृतः क्षमापयन् विगत नृप देवस्मयः उवाच ॥

शब्दार्थ—

स	३.	वह	द्विज	१७.	ब्राह्मण को
च	२.	और	वचः	१८.	वचनों को
अपि	६.	भी	आश्रुत्य	१९.	सुना (जो)
पाण्डवेय	१.	हे परीक्षित्	बहुयोग	२०.	बहुत से योग के
सिन्धुसौवीर	४.	सिन्धु सौवीर	ग्रन्थ	२१.	ग्रन्थों के
पतिः	५.	नरेश रहूगण	सम्मतम्	२२.	अनुकूल थे
तत्त्व	९	आत्मतत्त्व की	त्वरया	२३.	उसने तत्काल
जिज्ञासायाम्	१०.	जिज्ञासा का	अवरुह्य	२४.	पालकी से उतर कर
सम्यक्	७.	उत्तम	शिरसा	२५.	अपने सिर को
श्रद्धया	८.	श्रद्धा के कारण	पादमूलम्	२६.	उनके चरणों में
अधिकृत	११.	पूर्ण	उपसृतः	२७.	रखकर
अधिकारः	१२	अधिकारी हो गया था	क्षमापयन्	२८.	क्षमा माँगते हुये
तद्	१३.	उसने	विगत	३०.	रहित
हृदय	१४.	हृदय की	नृप देवस्मयः	२९.	राजमद से
ग्रन्थि	१५.	ग्रन्थि का	उवाच ॥	३१.	इस प्रकार कहा
मोचनम् ।	१६.	छेदन करने वाले			

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! और वह सिन्धु सौवीर-नरेश राजा रहूगण भी उत्तम श्रद्धा के कारण आत्मतत्त्व की जिज्ञासा का पूर्ण अधिकारी हो गया था। उसने हृदय की ग्रन्थि का छेदन करने वाले ब्राह्मण के वचनों को सुना, जो बहुत से योग के ग्रन्थों के अनुकूल थे। उसने तत्काल पालकी से उतर कर अपने सिर को उनके चरणों में रखकर क्षमा मांगते हुये राजमद से रहित हो इस प्रकार कहा ॥

षोडशः श्लोकः

कस्त्वं निगूढश्चरसि द्विजानां बिभर्षि सूत्रं कतमोऽवधूतः।
कस्यासि कुत्रत्य इहापि कस्मात् क्षेमाय नश्चेदसि नोत शुक्लः ॥१६॥

पदच्छेद— कः त्वम् निगूढः चरसि द्विजानाम्, बिभर्षि सूत्रम् कतमः अवधूतः।
कस्य असि कुत्रत्यः इह अपि कस्मात्, क्षेमाय नः चेद् असि न उत शुक्लः ॥

शब्दार्थ—

कः	२. कौन हो	कस्य असि	१०. किसके पुत्र हो
त्वम्	१. तुम	कुत्रत्यः	११. कहाँ से आये हुये हो
निगूढः	६. छिपे हुये	इह अपि	१२. यहाँ पर भी
चरसि	७. विचरण कर रहे हो	कस्मात्	१३. किस कारण से हो
द्विजानाम्	३. आप ब्राह्मणों के	क्षेमाय	१६. कल्याण के लिये तो
बिभर्षि	५. धारण किये हो	नः	१५. हमारे
सूत्रम्	४. चिह्न यज्ञोपवीत को	चेत्	१४. कहीं
कतमः	८. आप कोई	असि	१८. पधारे हो
अवधूतः।	९. अवधूत तो नहीं हो	न	१७. नहीं
		उत शुक्लः ॥	१९.२०. अथवा, सत्त्वमूर्ति कपिल जी तो नहीं हो

श्लोकार्थ—तुम कौन हो ? आप ब्राह्मणों के चिह्न यज्ञोपवीत को धारण किये हो। छिपे हुये विचरण कर रहे हो। आप कोई अवधूत तो नहीं हो। किसके पुत्र हो, कहाँ से आये हो, यहाँ पर भी किस कारण से हो ? कहीं हमारे कल्याण के लिये तो नहीं पधारे हो ? अथवा सत्त्वमूर्ति कपिल जी तो नहीं हो ?

सप्तदशः श्लोकः

नाहं विशङ्के सुरराजवज्रान्न त्र्यक्षशूलान्न यमस्य दण्डात्।
नाग्न्यर्कसोमानिलवित्तपास्त्राच्छङ्के भृशं ब्रह्मकुलावमानात् ॥१७॥

पदच्छेद—न अहम् विशङ्के सुरराज वज्रात् न त्र्यक्ष शूलात् न यमस्य दण्डात्।
न अग्नि अर्क सोम अनिल वित्तप अस्त्रात् शङ्के भृशम् ब्रह्मकुल अवमानात् ॥

शब्दार्थ—

न	१४. नहीं डरता हूँ	दण्डात्	९. दण्ड से भी
अहम्	१. मैं	न	१०. नहीं डरता हूँ
विशङ्के	४. डरता हूँ	अग्नि अर्क सोम	११. अग्नि सूर्य चन्द्र
सुरराज	२. इन्द्र के	अनिल वित्तप	१२. वायु और कुबेर के
वज्रात् न	३. वज्र से नहीं	अस्त्रात्	१३. अस्त्र-शस्त्रों से भी
त्र्यक्ष	५. महादेव जी के	शङ्के	१८. डरता हूँ
शूलात्	६. त्रिशूल से भी	भृशम्	१७. बहुत
न	७. नहीं डरता हूँ	ब्रह्म कुल	१५. किन्तु ब्राह्मण कुल के
यमस्य	८. यमराज के	अवमानात् ॥	१६. अपमान से

श्लोकार्थ—मैं इन्द्र के वज्र से नहीं डरता हूँ। महादेव जी के त्रिशूल से भी नहीं डरता हूँ। यमराज के दण्ड से भी नहीं डरता हूँ। अग्नि, सूर्य, चन्द्र, वायु और कुबेर के अस्त्र-शस्त्रों से भी नहीं डरता हूँ। किन्तु ब्राह्मण कुल के अपमान से बहुत डरता हूँ ॥

अष्टादशः श्लोकः

तद् ब्रूह्यसङ्गो जडवन्निगूढविज्ञानवीर्यो विचरस्यपारः ।
वचांसि योगग्रथितानि साधो न नः क्षमन्ते मनसापि भेत्तुम् ॥१८॥

पदच्छेद — तद् ब्रूहि असङ्गः जडवत् निगूढ विज्ञान वीर्यः विचरसि अपारः ।
वचांसि योग ग्रथितानि साधो न नः क्षमन्ते मनसा अपि भेत्तुम् ॥

शब्दार्थ—

तद्	१. इसलिये		वचांसि	१३. वाक्यों को
ब्रूहि	२. बताइये कि		योग	११. योग से
असङ्गः	३. विषयों से अनासक्त होकर		ग्रथितानि	१२. युक्त
जडवत्	७. मूर्खों के समान आप क्यों		साधो	१०. हे साधो ! आपके
निगूढ	६. छिपाकर		न	१७. नहीं
विज्ञान	४. आत्मज्ञान और		नः	१४. हम
वीर्यः	५. शक्ति को		क्षमन्ते	१८. समर्थ हो रहे हैं
विचरसि	८. भ्रमण कर रहे हैं		मनसा अपि	१५. के द्वारा भी
अपारः ।	९. आप अथाह हैं		भेत्तुम् ॥	१६. समझने में

श्लोकार्थ—इसलिये बताइये कि विषयों से अनासक्त होकर आत्मज्ञान और शक्ति को छिपाकर मूर्खों के समान आप क्यों भ्रमण कर रहे हैं ? आप अथाह हैं । हे साधो ! आप के योग से युक्त वाक्यों को हम बुद्धि के द्वारा भी समझने में समर्थ नहीं हो रहे हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अहं च योगेश्वरमात्मतत्त्वविदां मुनीनां परमं गुरुं वै ।
प्रष्टुं प्रवृत्तः किमिहारणं तत् साक्षात् हरिं ज्ञानकलावतीर्णम् ॥१९॥

पदच्छेद — अहम् च योगेश्वरम् आत्मतत्त्व विदाम् मुनीनाम् परमम् गुरुम् वै ।
प्रष्टुम् प्रवृत्तः किम् इह अरणम् तत् साक्षात् हरिम् ज्ञान कला अवतीर्णम् ॥

शब्दार्थ—

अहम्	२. मैं		प्रवृत्तः	१५. जा रहा था
च	१. और		किम् इह	१७. कौन इस लोक में
योगेश्वरम्	१३. योगेश्वर (कपिल जी के पास)		अरणम्	१८. शरण लेने योग्य है
आत्मतत्त्व	३. आत्म तत्त्व को		तत्	१६. कि
विदाम्	४. जानने वाले		साक्षात्	८. साक्षात्
मुनीनाम्	६. मुनियों के		हरिम्	१२. भगवान्
परमम् गुरुम्	७. परम गुरु		ज्ञान	९. ज्ञान और
वै ।	५. तथा		कला	१०. शक्ति के
प्रष्टुम्	१४. पूछने के लिये		अवतीर्णम् ॥	११. अवतार

श्लोकार्थ—और मैं आत्म-तत्त्व को जानने वाले तथा मुनियों के परम गुरु साक्षात् ज्ञान और शक्ति के अवतार भगवान् योगेश्वर कपिल जी के पास पूछने के लिये जा रहा था कि इस लोक में कौन शरण लेने योग्य है ॥

विंशः श्लोकः

स वै भवाँल्लोकनिरीक्षणार्थमव्यक्तलिङ्गो विचरत्यपिस्वित्।
योगेश्वराणां गतिमन्धबुद्धिः कथं विचक्षीत गृहानुबन्धः ॥२०॥

पदच्छेद— स वै भवान् लोक निरीक्षणार्थम् अव्यक्त लिङ्गः विचरति अपिस्वित्।
योगेश्वराणाम् गतिम् अन्धबुद्धिः कथम् विचक्षीत गृह अनुबन्धः ॥

शब्दार्थ—

स	३.	वही कपिल मुनि	अपिस्वित्।	२.	शायद कहीं
वै	१.	अथवा	योगेश्वराणाम्	१३.	योगेश्वरों की
भवान्	४.	आप	गतिम्	१४.	स्थिति को (भला)
लोक	५.	संसार का	अन्ध बुद्धिः	१२.	विवेकहीन पुरुष
निरीक्षणार्थम्	६.	निरीक्षण करने के लिये	कथम्	१५.	कैसे
अव्यक्त	८.	छिपा कर तो (नहीं)	विचक्षीत	१६.	जान सकता है
लिङ्गो	७.	अपना रूप	गृह	१०.	घर में
विचरति	९.	घूम रहे हैं	अनुबन्धः ॥	११.	आसक्त रहने वाला

श्लोकार्थ—अथवा शायद कहीं वही कपिल मुनि आप संसार का निरीक्षण करने के लिये अपना रूप छिपा कर तो नहीं घूम रहे हैं। घर में आसक्त रहने वाला विवेकहीन पुरुष योगेश्वरों की स्थिति को भला कैसे जान सकता है ॥

एकविंशः श्लोकः

दृष्टः श्रमः कर्मत आत्मनो वै भर्तुर्गन्तुर्भवतश्चानुमन्ये।
यथासतोदानयनाद्यभावात् समूल इष्टो व्यवहारमार्गः ॥२१॥

पदच्छेद— दृष्टः श्रमः कर्मतः आत्मनः वै भर्तुः गन्तुः भवतः च अनुमन्ये।
यथा असता उद् आनयन आदि अभावात् समूलः इष्टः व्यवहार मार्गः ॥

शब्दार्थ—

दृष्टः	५.	देखा है (इसीलिये)	यथा	१२.	क्योंकि
श्रमः	४.	श्रम होते	असता	१३.	मिथ्या घड़े से
कर्मतः आत्मनः	२.३.	युद्धादि कर्मों में अपने को	उद्	११.	जला
वै	१.	निश्चित रूप से मैंने	आनयन	१४.	लाना
भर्तुः	६.	बोझा ढोने वाले	आदि	१५.	आदि कार्य
गन्तुः	८.	जाने वाले	अभावात्	१६.	नहीं होते हैं, अतः
भवतः	९.	आप में भी इसका	समूल	१९.	पूरा का पूरा
च	७.	और	इष्टः	२०.	सत्य प्रतीत होता है
अनुमन्ये।	१०.	अनुमान करता हूं	व्यवहार	१७.	व्यवहार का
			मार्गः ॥	१८.	मार्ग

श्लोकार्थ—निश्चित रूप से मैंने युद्धादि कर्मों में अपने को श्रम होते देखा है। इसीलिये बोझा ढोने वाले और जाने वाले आप में भी इसका अनुमान करता हूं। क्योंकि जैसे मिथ्या घड़े से जल लाना आदि कार्य नहीं होते हैं। अतः व्यवहार का मार्ग पूरा का पूरा सत्य प्रतीत होता है ॥

द्वाविंश श्लोकः

स्थाल्यग्नितापात्पयसोऽभितापस्तत्तापतस्तण्डुलगर्भरन्धिः ।
देहेन्द्रियास्वाशयसन्निकर्षात् तत्संसृतिः पुरुषस्यानुरोधात् ॥२२॥

पदच्छेद— स्थाली अग्नि तापात् पयसः अभितापः तत् तापतः तण्डुलगर्भरन्धिः ।
देह इन्द्रिय असु आशय सन्निकर्षात् तत् संसृतिः पुरुषस्य अनुरोधात् ॥

शब्दार्थ—

स्थाली	१.	बटलोई जब	गर्भरन्धिः ।	९.	भीतरी भाग भी पक जाता है
अग्नि	२.	अग्नि से	देहइन्द्रियअसु	१०.	शरीर इन्द्रिय, प्राण और
तापात्	३.	तपती है तब	आशय	११.	मन के
पयसः	४.	जल भी	सन्निकर्षात्	१२.	सम्बन्ध से
अभितापः	५.	तपता है	तत्	१३.	उसकी
तत्	६.	उस	संसृतिः	१४.	सन्निधि में
तापतः	७.	जल के तपने से	पुरुषस्य	१५.	आत्मा को भी
तण्डुल	८.	चावलों का	अनुरोधात् ॥	१६.	वैसा ही अनुभव होता है

श्लोकार्थ—बटलोई जब अग्नि से तपती है, तब जल भी तपता है, उस जल के तपने से चावलों का भीतरी भाग भी पक जाता है। इसी प्रकार शरीर, इन्द्रिय, प्राण और मन के सम्बन्ध से उसकी सन्निधि में आत्मा को भी वैसा ही अनुभव होता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

शास्ताभिगोप्ता नृपतिः प्रजानां यः किङ्करो वै न पिनष्टि पिष्टम् ।
स्वधर्ममाराधनमच्युतस्य　　यदीहमानो　विजहात्यघौघम् ॥२३॥

पदच्छेद— शास्ता अभिगोप्ता नृपतिः प्रजानाम्, यः किङ्करः वै न पिनष्टि पिष्टम् ।
स्वधर्मम् आराधनम् अच्युतस्य यत् ईहमानः विजहाति अघ ओघम् ॥

शब्दार्थ—

शास्ता	३.	शासन और	पिष्टम्	९.	पीसता
अभिगोप्ता	४.	पालन करने के लिये ही है	स्वधर्मम्	११.	अपने धर्म का आचरण
नृपतिः	१.	राजा तो	आराधनम्	१३.	सेवा में
प्रजानाम्	२.	प्रजा का	अच्युतस्य	१२.	भगवान् की ही
यः	५.	जो प्रजा का	यत्	१४.	जिसे
किङ्करः	६.	दास है	ईहमानः	१५.	करने वाला मनुष्य
वै	७.	निश्चित रूप से (वह)	विजहाति	१८.	नष्ट कर देता है
न	१०.	नहीं है	अघ	१६.	पापों के
पिनष्टि	८.	पिसे हुये को	ओघम् ॥	१७.	समूह को

श्लोकार्थ—राजा तो प्रजा का शासन और पालन करने के लिये ही है। जो प्रजा का दास है, निश्चित रूप से वह पिसे हुये को पीसता नहीं है। अपने धर्म का आचरण भगवान् की ही सेवा है। जिसे करने वाला मनुष्य पापों के समूह को नष्ट कर देता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तन्मे भवान्नरदेवाभिमानमदेन तुच्छीकृतसत्तमस्य ।
कृषीष्ट मैत्रीदृशमार्तबन्धो यथा तरे सदवध्यानमंहः ॥२४॥

पदच्छेद— तत् मे भवान् नरदेव अभिमान मदेन तुच्छीकृत सत्तमस्य ।
कृषीष्ट मैत्रीदृशम् आर्तबन्धो यथा तरे सद्‌अवध्यानम् अंहः ॥

शब्दार्थ—

तत्	६. इस प्रकार	कृषीष्ट	११. कीजिये
मे	५. मैंने	मैत्रीदृशम्	१०. स्नेह युक्त दृष्टि
भवान्	८. आपकी	आर्तबन्धो	१. हे दीन बन्धो !
नरदेव	२. राजा होने के	यथा	१२. जिससे मैं
अभिमान	३. अभिमान से	तरे	१६. मुक्त हो जाऊँ
मदेन	४. उन्मत्त होकर	सद्	१३. सत्पुरुषों का
तुच्छीकृत	९. अवज्ञा की है (मुझपर)	अवध्यानम् ।	१४. अवज्ञा रूप
सत्तमस्य ।	७. परम साधु	अंहः ॥	१५. अपराध से

श्लोकार्थ—हे दीनबन्धो ! राजा होने के अभिमान से उन्मत्त होकर मैंने इस प्रकार परम साधु आपकी अवज्ञा की है । मुझ पर स्नेह युक्त दृष्टि कीजिये । जिससे मैं सत्पुरुषों की अवज्ञारूप अपराध से मुक्त हो जाऊँ ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

न विक्रिया विश्वसुहृत्सखस्य साम्येन वीताभिमतेस्तवापि ।
महद्विमानात् स्वकृताद्धि मादृङ् नङ्क्ष्यत्यदूरादपि शूलपाणिः ॥२५॥

पदच्छेद—न विक्रिया विश्वसुहृत् सखस्य साम्येन वीत अभिमतेः तव अपि ।
महद् विमानात् स्वकृतात् हि मादृङ् नङ्क्ष्यति अदूरात् अपि शूलपाणिः ॥

शब्दार्थ—

न	९. नहीं हो सकता (फिर भी)	महद्	१०. महापुरुषों के
विक्रिया	८. कोई विकार	विमानात्	११. अपमान के कारण
विश्व	३. समस्त संसार के	स्वकृतात्	१२. अपने किये हुये
सुहृत् सखस्य	४. प्रिय और मित्र	हि	१३. ही अपराध से
साम्येन	५. सब में समान दृष्टि होने से	मादृङ्	१४. मेरे जैसा व्यक्ति
वीत	२. शून्य	नङ्क्ष्यति	१६. नष्ट हो जायेगा चाहे वह
अभिमतेः	१. देहाभिमान से	अदूरात्	१५ शीघ्र
तव	६. आप में	अपि	१८. ही (क्यों न हो)
अपि ।	७. भी	शूलपाणिः ॥	१७. भगवान् शंकर

श्लोकार्थ—देहाभिमान से शून्य समस्त संसार के प्रिय और मित्र सब में समान दृष्टि होने से आप में भी कोई विकार नहीं हो सकता, फिर भी महापुरुषों के अपमान के कारण अपने किये हुये ही अपराध से मेरे जैसा व्यक्ति शीघ्र नष्ट हो जायेगा । चाहे वह भगवान् शंकर ही क्यों न हो ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पञ्चमः स्कन्धः

एकादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

ब्राह्मण उवाच—अकोविदः कोविदवादवादान् वदस्यथो नातिविदां वरिष्ठः ।
न सूरयो हि व्यवहारमेनं तत्त्वावमर्शेन सहामनन्ति ॥१॥

पदच्छेद— अकोविदः कोविदवाद वादान् वदसि अथो न अति विदाम् वरिष्ठः ।
न सूरयः हि व्यवहारम् एनम् तत्त्व अवमर्शेन सह आमनन्ति ॥

शब्दार्थ—

अकोविदः	१.	अज्ञानी होने पर भी	वरिष्ठः ।	९.	गिनने योग्य
कोविदः	२.	पण्डितों के समान	न	१७.	नहीं
वाद	३.	तर्क-वितर्क युक्त	सूरयः हि	११.	विद्वान् मनुष्य
वदान्	४.	बातें	व्यवहारम्	१३.	व्यवहार को
वदसि	५.	कह रहे हो	एनम्	१२.	इस अविचार युक्त
अथो	६.	इसलिए	तत्त्व	१४.	तत्त्व
न	१०.	नहीं हो	अवमर्शेन	१५.	विचार के समान
अति	७.	श्रेष्ठ	सह	१६.	सत्य रूप से
विदाम्	८.	ज्ञानियों में	आमनन्ति ॥	१८.	स्वीकार करते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तुम अज्ञानी होने पर भी पण्डितों के समान तर्क-वितर्क युक्त बातें कह रहे हो। इसलिये श्रेष्ठ ज्ञानियों में गिनने योग्य नहीं हो। विद्वान् मनुष्य इस अविचार युक्त व्यवहार को तत्त्व विचार के समान सत्य रूप से नहीं स्वीकर करते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

तथैव राजन्नुरुगार्हमेधवितानविद्योरुविजृम्भितेषु ।
न वेदवादेषु हि तत्त्ववादः प्रायेण शुद्धो नु चकास्ति साधुः ॥२॥

पदच्छेद— तथा एव राजन् उरु गार्हमेध वितानविद्या उरु विजृम्भितेषु ।
न वेद वादेषु हि तत्त्ववादः प्रायेण शुद्धः नु चकास्ति साधुः ॥

शब्दार्थ—

तथा एव	२. उसी प्रकार (अधिकतर)	वेद वादेषु हि	७. तत्त्व ज्ञान में
राजन् उरु	१. हे राजन् ! निश्चित ही	तत्त्ववादः	८. विचार वितर्क करते हुये
गार्हमेध	३. गृहस्थ जन यज्ञ विधि के	प्रायेण	९. प्रायः
वितान	४. विस्तार रूप	शुद्धः	१३. हिंसादि से शून्य ज्ञान उनमें
विद्याः	५. विद्या (कर्म काण्ड में ही)	नु	११. तथा
उरु विजृम्भितेषु ।	६. अधिक व्यस्त रहते हैं	चकास्ति	१५. होता है
न	१४. नहीं	साधुः ॥	१०. राग द्वेषादि से रहित

श्लोकार्थ—हे राजन् ! निश्चित ही उसी प्रकार अधिकतर गृहस्थजन यज्ञ विधि के विस्तार रूप विद्या कर्म काण्ड में ही अधिक व्यस्त रहते हैं। तत्त्व ज्ञान में ही विचार वितर्क करते हुये प्रायः राग द्वेषादि से रहित तथा हिंसादि से शून्य ज्ञान उनमें नहीं होता है ॥

तृतीयः श्लोकः

न तस्य तत्त्वग्रहणाय साक्षाद् वरीयसीरपि वाचः समासन् ।
स्वप्ने निरुक्त्या गृहमेधिसौख्यं नयस्य हेयानुमितं स्वयं स्यात् ॥३॥

पदच्छेद— न तस्य तत्त्व ग्रहणाय साक्षात् वरीयसीः अपि वाचः समासन् ।
स्वप्ने निरुक्त्या गृहमेधि सौख्यम् न यस्य हेय अनुमितम् स्वयम् स्यात् ॥

शब्दार्थ—

न	१६. नहीं है	गृह मेधि	१. गृहस्थ जनोचित यज्ञादि का
तस्य	११. उसे	सौख्यम्	२. सुख
तत्त्व ग्रहणाय	१२. तत्त्वज्ञान कराने में	न	६. नहीं
साक्षात्	१३. साक्षात्	यस्य	३. जिसे
वरीयसीः अपि	१४. उपनिषद् वाक्य भी	हेय	५. तुच्छ
वाचः समासन् ।	१५. स्पष्ट रूप से समर्थ	अनुमितम्	७. जान पड़ता है
स्वप्ने	९. जो स्वप्न के समान	स्वयम्	४. अपने आप
निरुक्त्या	१०. बताया गया है	स्यात् ॥	८. आता है

श्लोकार्थ—गृहस्थोचित यज्ञादि का सुख जिसे अपने आप तुच्छ नहीं जान पड़ता है, जो स्वप्न के समान बताया गया है, उसे तत्त्व ज्ञान कराने में साक्षात् उपनिषद् वाक्य भी स्पष्ट रूप से समर्थ नहीं है ॥

चतुर्थः श्लोकः

यावन्मनो रजसा पूरुषस्य सत्त्वेन वा तमसा वानुरुद्धम् ।
चेतोभिराकूतिभिरातनोति निरङ्कुशं कुशलं चेतरं वा ॥४॥

पदच्छेद— यावत् मनः रजसा पूरुषस्य सत्त्वेन वा तमसः वा अनुरुद्धम् ।
चेतोभिः आकूतिभिः आतनोति निरङ्कुशम् कुशलम् च इतरम् वा ॥

शब्दार्थ—

यावत्	१. जब-तक	चेतोभिः	१०. ज्ञानेन्द्रियाँ
मनः	३. मन	आकूतिभिः	१२. कर्मेन्द्रियों के द्वारा
रजसा	४. रजोगुण	आतनोति	१६. कराता रहता है
पूरुषस्य	२. मनुष्य का	निरङ्कुशम्	८. बिना किसी अङ्कुश के
सत्त्वेन	५. सत्त्वगुण	कुशलम्	१३ शुभ
वा तमसा	६. अथवा, तमोगुण के	च	११. और
वा	९. वह	इतरम्	१५. अशुभ कर्म
अनुरुद्धम् ।	७. वशीभूत रहता है (तब-तक)	वा ॥	१४. अथवा

श्लोकार्थ—जब-तक मनुष्य का मन रजोगुण, सत्त्वगुण अथवा तमोगुण के वशीभूत रहता है, तब-तक बिना किसी अङ्कुश के वह ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों के द्वारा शुभ अथवा अशुभ कर्म कराता रहता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

स वासनात्मा विषयोपरक्तो गुणप्रवाहो विकृतः षोडशात्मा ।
बिभ्रत्पृथङ्नामभि रूपभेदमन्तर्बहिष्ट्वं च पुरैस्तनोति ॥५॥

पदच्छेद— सः वासना आत्मा विषय उपरक्तः गुण प्रवाहः विकृतः षोडश आत्मा ।
बिभ्रत् पृथक् नामभिः रूप भेदम् अन्तः बहिष्ट्वम् च पुरः तनोति ॥

शब्दार्थ—

सः वासना	१.	यह मन वासना	बिभ्रत्	१२.	धारण करके
आत्मा	२.	स्वरूप	पृथक्	१०.	भिन्न-भिन्न
विषय	३.	विषयों में	नामभिः	११.	नामों से (अनेकरूप)
उपरक्तः	४.	आसक्त	रूप भेदम्	१३.	उपाधियों के भेद से
गुण	५.	गुणों से	अन्तः	१५.	उत्तमता
प्रवाहः	६.	प्रेरित	बहिष्ट्वम्	१७.	अधमता का
विकृतः	७.	विकारी और	च	१६.	और
षोडश	८.	सोलह तत्त्वों में	पुरः	१४.	इसी शरीर में
आत्मा ।	९.	प्रधान है (यह)	तनोति ॥	१८.	कारण होता है

श्लोकार्थ—यह मन वासना स्वरूप विषयों में आसक्त, गुणों से प्रेरित, विकारी और सोलह तत्त्वों में प्रधान है। यह भिन्न-भिन्न नामों से अनेकरूप धारण करके उपाधियों के भेद से इसी शरीर में उत्तमता और अधमता का कारण होता है ॥

षष्ठः श्लोकः

दुःखं सुखं व्यतिरिक्तं च तीव्रं कालोपपन्नं फलमाव्यनक्ति ।
आलिङ्ग्य मायारचितान्तरात्मा स्वदेहिनं संसृतिचक्रकूटः ॥६॥

पदच्छेद— दुःखम् सुखम् व्यतिरिक्तम् च तीव्रम्, काल उपपन्नम् फलम् आव्यनक्ति ।
आलिङ्ग्य माया रचित अन्तरात्मा स्वदेहिनाम् संसृति चक्र कूटः ॥

शब्दार्थ—

दुःखम्	१०.	दुःख	आव्यनक्ति ।	१६.	अभिव्यक्ति करता है
सुखम्	११.	सुख	आलिङ्ग्य	७.	मिलकर
व्यतिरिक्तम्	१३.	अतिरिक्त (मोहरूप)	मायारचित	१.	माया मय
च	१२.	और (उसके)	अन्तरात्मा	२.	मन
तीव्रम्	१४.	तीव्र	स्वदेहिनाम्	६.	अपने देह के अभिमानी (जीव से)
काल	८.	समय से	संसृति	३.	संसार
उपपन्नम्	९.	प्राप्त हुये	चक्र	४.	चक्र में
फलम्	१५.	फलों की	कूटः ॥	५.	छलने वाला है

श्लोकार्थ—मायामय मन संसार चक्र में छलने वाला है। अपने देह के अभिमानी जीव से मिलकर समय से प्राप्त हुये दुःख-सुख और उसके अतिरिक्त मोहरूप तीव्र फलों की अभिव्यक्ति करता है ॥

सप्तमः श्लोकः

तावानयं व्यवहारः सदाविः क्षेत्रज्ञसाक्ष्यो भवति स्थूलसूक्ष्मः।
तस्मान्मनो लिङ्गमदो वदन्ति गुणागुणत्वस्य परावरस्य ॥७॥

पदच्छेद— तावान् अयम् व्यवहारः सत्आविः क्षेत्रज्ञ साक्ष्यः भवति स्थूलसूक्ष्मः।
तस्मात्मनः लिङ्गम् अदः वदन्ति गुणअगुणत्वस्य पर अवरस्य ॥

शब्दार्थ—

तावान् अयम्	१.	जब-तक यह मन रहता है तभी तक	लिङ्गम्	१३.	कारण
व्यवहारः	२.	व्यवहार	अदः	८.	इस
सत्आविः	३.	प्रकाशित होकर	वदन्ति	१४.	कहते हैं
क्षेत्रज्ञ	५.	जीव का	गुण	९.	त्रिगुणमय
साक्ष्यः भवति	६.	दृश्य बनता है	अगुणत्वस्य	१२.	गुणातीत
स्थूलसूक्ष्मः।	४.	जाग्रत् और स्वप्नावस्था का	पर	११.	मोक्ष का
तस्मात्मनः	७.	इसलिये मन को	अवरस्य ॥	१०.	संसार का और

श्लोकार्थ—जब-तक यह मन रहा है तभी तक जाग्रत् और स्वप्नावस्था का व्यवहार प्रकाशित होकर जीव का दृश्य बनता है। इसलिये मन को इस त्रिगुणमय संसार का और मोक्ष का गुणातीत कारण कहते हैं।

अष्टमः श्लोकः

गुणानुरक्तं व्यसनाय जन्तोः क्षेमाय नैर्गुण्यमथो मनः स्यात्।
यथा प्रदीपो घृतवर्तिमश्नन् शिखाः सधूमा भजति ह्यन्यदा स्वम्।
पदं तथा गुणकर्मानुबद्धं वृत्तीर्मनः श्रयतेऽन्यत्र तत्त्वम् ॥८॥

पदच्छेद—गुणअनुरक्तम् व्यसनाय जन्तोः क्षेमाय नैर्गुण्यम् अथो मनः स्यात्।
यथा प्रदीपः घृतवर्तिम् अश्नन् शिखाः सधूमाः भजति हि अन्यदा स्वम् ॥
पदम् तथा गुणकर्म अनुबद्धम् वृत्तीः मनः श्रयते अन्यत्र तत्त्वम् ॥

शब्दार्थ—

गुणअनुरक्तम्	१.	विषयों में आसक्त मन	भजति	१०.	निकलती रहती है और
व्यसनायजन्तोः	२.	जीव को संकट में डाल देता है	हि अन्यदा	११.	घी के समाप्त होने पर
क्षेमाय	४.	मोक्ष पद प्राप्ति का	स्वम्।	१२.	अपने में लीन हो जाती है
नैर्गुण्यम् अथोमनः	३.	विषयहीन होने पर वही मन	पदम्	१७.	ब्रह्मपद
स्यात्	५	कारण होता है	तथागुण	१३.	उसी प्रकार विषयों और
यथा प्रदीपः	६.	जैसे दीपक में	कर्मअनुबद्धम्	१४.	कर्मों में आसक्त हुआ
घृतवर्तिम्	७.	घी से भीगी बत्ती को	वृत्तीः मनः	१५.	मन तरह-तरह की वृत्तियों
अश्नन्	८.	खाने वाले	श्रयते अन्यत्र	१६.	आश्रय लेता इनसे मुक्त का
शिखाः सधूमाः	९.	धुयें से युक्त शिखा	तत्त्वम् ॥	१८.	तत्त्व में लीन हो जाता है

श्लोकार्थ—विषयों में आसक्त मन जीव को संकट में डाल देता है। विषयहीन होने पर वही मन मोक्षपद प्राप्ति का कारण होता है। जैसे घी से भीगीबत्ती को खाने वाले दीपक धुयें से युक्त शिखा निकलती रहती है और घी के समाप्त होने पर अपने में लीन हो जाती है। उसी प्रकार विषयों और कर्मों में आसक्त हुआ मन तरह-तरह की वृत्तियों का आश्रय लेता है। इनसे मुक्त होने पर ब्रह्मपद तत्त्व में लीन हो जाता है ॥

नवमः श्लोकः

एकादशासन्मनसो हि वृत्तय आकूतयः पञ्चधियोऽभिमानः ।
मात्राणि कर्माणि पुरं च तासां वदन्ति हैकादश वीर भूमिः ॥६॥

पदच्छेद— एकादश आसन् मनसः हि वृत्तयः आकूतयः पञ्चधियः अभिमानः ।
मात्राणि कर्माणि पुरं च तासाम् वदन्ति ह एकादशवीर भूमिः ॥

शब्दार्थ—

एकादश	६. ये ग्यारह	मात्राणि	११.	पांच तन्मात्रायें
आसन्	१०. हैं	कर्माणि	१३.	पांच प्रकार के कर्म (तथा)
मनसः	७. मन की	पुरम्	१४.	एक शरीर
हि	८. ही	च	१२.	और
वृत्तयः	६. वृत्तियां	तासाम्	१६.	उनके
आकूतयः	३. कर्मेन्द्रियां	वदन्ति	१८.	कहे जाते हैं
पञ्च	२. पांच	ह एकदश	१५.	ये ग्यारह
धियः	४. पांच ज्ञानेन्द्रियां और	वीर	१.	हे वीरवर !
अभिमानः ।	५. अभिमान	भूमिः ॥	१७.	आधारभूत विषय

श्लोकार्थ—हे वीरवर ! पांच कर्मेन्द्रियां, पांच ज्ञानेन्द्रियां और अभिमान ये ग्यारह मन की ही वृत्तियां हैं। पांच तन्मात्रायें और पांच प्रकार के कर्म तथा एक शरीर ये ग्यारह उनके आधारभूत विषय कहे जाते हैं।

दशमः श्लोकः

गन्धाकृतिस्पर्शरसश्रवांसि विसर्गरत्यर्त्यभिजल्पशिल्पाः ।
एकादशं स्वीकरणं ममेति शय्यामहं द्वादशमेक आहुः ॥१०॥

पदच्छेद— गन्धाकृति स्पर्शरसश्रवांसि विसर्गरतिअर्ति अभिजल्प शिल्पाः ।
एकादशम् स्वीकरणम् मम इति शय्याम् अहम् द्वादशम् एके आहुः ॥

शब्दार्थ—

गन्ध	१. गन्ध	एकादशम्	११.	ग्यारहवां
आकृति	२. रूप	स्वीकरणम्	१०.	स्वीकार करना
स्पर्श	३. स्पर्श	मम इति	६.	यह मेरा इस प्रकार
रस श्रवांसि	४. रस और शब्द (ये ज्ञानेन्द्रियो के विषय हैं)	शय्याम्	१३.	विषय है
विसर्ग	५. मल त्याग	अहम्	१२.	अहंकार का
रति अर्ति	६. सम्भोग गमन	द्वादशम्	१५.	बारहवां
अभिजल्प	७. भाषण	एके	१४.	कुछ लोग शरीर को भी
शिल्पाः ।	८. लेन-देन आदि व्यापार	आहुः ॥	१६.	विषय कहते हैं

श्लोकार्थ—गन्ध, रूप, स्पर्श, रस और शब्द ये ज्ञानेन्द्रियों के विषय हैं। मल त्याग सम्भोग, गमन, भाषण, लेन-देन आदि व्यापार ये कर्मेन्द्रियों के विषय हैं। यह मेरा इस प्रकार स्वीकार करना ग्यारहवां अहंकार का विषय है। कुछ लोग शरीर को भी बारहवां विषय कहते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

द्रव्यस्वभावाशयकर्मकालैरेकादशामी मनसो विकाराः।
सहस्रशः शतशः कोटिशश्च क्षेत्रज्ञतो न मिथो न स्वतः स्युः ॥११॥

पदच्छेद— द्रव्य स्वभाव आशय कर्म कालैः एकादश अमी मनसः विकाराः।
सहस्रशः शतशः कोटिशः च क्षेत्रज्ञतः न मिथः न स्वतः स्युः ॥

शब्दार्थ—

द्रव्य	५. विषय	सहस्रशः	११. हजारों		
स्वभाव	६. स्वभाव	शतशः	१०. सैंकड़ों		
आशय	७. संस्कार	कोटिशः	१३. करोड़ों (रूपों में बदलती रहती हैं)		
कर्म	८. कर्म (और)	च	१२. और		
कालैः	९. काल के द्वारा	क्षेत्रज्ञतः	१४. इनकी सत्ता आत्मा से है		
एकादश	३. ग्यारह	न	१६. नहीं है (और)		
अमी	२. ये	मिथः	१५. परस्पर मिलकर		
मनसः	१. मन की	न	१७. नहीं		
विकाराः।	४. वृत्तियाँ	स्वतः	१८. स्वयम् से भी		
		स्युः ॥	१९. होती है		

श्लोकार्थ—मन की ये ग्यारह वृत्तियाँ विषय स्वभाव, संस्कार, कर्म और काल के द्वारा सैंकड़ों हजारों और करोड़ों रूपों में बदलती हैं। इनकी सत्ता आत्मा से है। परस्पर मिल कर नहीं है। और स्वयम् से भी नहीं होती है ॥

द्वादशः श्लोकः

क्षेत्रज्ञ एता मनसो विभूतीर्जीवस्य मायारचितस्य नित्याः।
आविर्हिताः क्वापि तिरोहिताश्च शुद्धो विचष्टे ह्यविशुद्धकर्तुः ॥१२॥

पदच्छेद— क्षेत्रज्ञः एताः मनसः विभूतीः, जीवस्य माया रचितस्य नित्याः।
आविर्हिताः क्वापि तिरोहिताः च, शुद्धः विचष्टे हि अविशुद्ध कर्तुः ॥

शब्दार्थ—

क्षेत्रज्ञः	२. आत्मा	हिताः	१४. जाग्रत् और स्वप्नावस्था में
एताः	९. इन	क्वापि	१७. सुषुप्ति काल में
मनसः	८. मनकी	तिरोहिताः	१८. छिप जाती हैं
विभूतीः	११. वृत्तियों को	च	१६. और
जीवस्य	७. जीव के	शुद्धः	१. विशुद्ध चिन्मात्र
माया	५. माया के द्वारा	विचष्टे	१२. साक्षीरूप में देखता है (जो)
रचितस्य	६. बनाये गये	हि	१३. निश्चय ही
नित्याः	१०. नित्य	अशुद्ध	३. अशुद्ध
आविः	१५. प्रकट हो जाती हैं	कर्तुः ॥	४. कर्मों में प्रवृत्त रहने वाले

श्लोकार्थ—विशुद्ध चिन्मात्र आत्मा अशुद्ध कर्मों में प्रवृत्त रहने वाले माया के द्वारा बनाये गये जीव के मन की इन नित्य वृत्तियों को साक्षी रूप में देखता है। जो निश्चय ही जाग्रत् और स्वप्नावस्था में प्रकट हो जाती हैं और सुषुप्ति काल में छिप जाती हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

क्षेत्रज्ञ आत्मा पुरुषः पुराणः साक्षात्स्वयंज्योतिरजः परेशः ।
नारायणो भगवान् वासुदेवः स्वमाययाऽऽत्मन्यवधीयमानः ॥१३॥

पदच्छेद— क्षेत्रज्ञः आत्मा पुरुषः पुराणः साक्षात् स्वयम् ज्योतिः अजः परेशः ।
नारायणः भगवान् वासुदेवः स्व मायया आत्मनि अवधीयमानः ॥

शब्दार्थ—

क्षेत्रज्ञः	१.	क्षेत्रज्ञ	परेशः ।	९.	दूसरों पर नियंत्रण करने वाले
आत्मा	२.	परमात्मा सर्व व्यापक	नारायणः	१०.	जीवों को प्रेरित करने वाले
पुरुषः	३.	परिपूर्ण	भगवान्	१२.	भगवान्
पुराणः	४.	जगत् का आदि कारण	वासुदेवः	११.	सभी प्राणियों के आश्रय
साक्षात्	५.	साक्षात्	स्व	१३.	अपनी
स्वयम्	६.	स्वयम्	मायया	१४.	माया के द्वारा
ज्योतिः	७.	प्रकाश	आत्मनि	१५.	सभी जीवों को
अजः	८.	अजन्मा	अवधीयमानः ॥	१६.	प्रेरित करने वाले हैं

श्लोकार्थ—क्षेत्रज्ञ परमात्मा सर्वव्यापक, परिपूर्ण, जगत् के आदि कारण, साक्षात् स्वयम् प्रकाश, अजन्मा दूसरों पर नियंत्रण करने वाले, जीवों को प्रेरित करने वाले सभी प्राणियों के आश्रय भगवान् अपनी माया के द्वारा सभी जीवों को प्रेरित करने वाले हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यथानिलः स्थावरजङ्गमानामात्मस्वरूपेण निविष्ट ईशेत् ।
एवं परो भगवान् वासुदेवः क्षेत्रज्ञ आत्मेदमनुप्रविष्टः ॥१४॥

पदच्छेद— यथा अनिलः स्थावर जङ्गमानाम् आत्म स्वरूपेण निविष्टः ईशेत् ।
एवम् परः भगवान् वासुदेवः, क्षेत्रज्ञः आत्मा इदम् अनुप्रविष्टः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जिस प्रकार	एवम्	९.	उसी प्रकार
अनिलः	२.	वायु समस्त	परः	१०.	परमेश्वर
स्थावर	३.	अचर	भगवान्	११.	भगवान्
जङ्गमानाम्	४.	चर-प्राणियों में	वासुदेवः	१२.	वासुदेव
आत्म	५.	प्राण	क्षेत्रज्ञ	१३.	सर्व साक्षी
स्वरूपेण	६.	रूप से	आत्मा	१४.	आत्म स्वरूप से
निविष्ट	७.	प्रविष्ट होकर	इदम्	१५.	इस सम्पूर्ण संसार में
ईशेत् ।	८.	उन्हें प्रेरित करता है	अनुप्रविष्टः ॥	१६.	छिपे रूप से ओत-प्रोत हैं

श्लोकार्थ—जिस प्रकार वायु समस्त चर-अचर प्राणियों में प्राणरूप से प्रविष्ट होकर उन्हें प्रेरित करता है, उसी प्रकार परमेश्वर भगवान् वासुदेव, सर्व साक्षी आत्मा स्वरूप से इस सम्पूर्ण संसार में छिपे रूप से ओत-प्रोत हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

न यावदेतां तनुभृन्नरेन्द्र विधूय मायां वयुनोदयेन ।
विमुक्तसङ्गो जितषट्सपत्नो वेदात्मतत्त्वं भ्रमतीह तावत् ॥१५॥

पदच्छेद— न यावत् एताम् तनुभृत् नरेन्द्र विधूय मायाम् वयुना उदयेन ।
विमुक्त सङ्गः जितषट् सपत्नः वेद आत्म तत्त्वम् भ्रमति।इह तावत् ॥

शब्दार्थ—

न	१५.	नहीं	विमुक्त	१०.	छोड़कर
यावत्	२.	जब-तक	सङ्गः	९.	सबकी आसक्ति को
एताम्	६.	इस	जित	१३.	जानकर
तनुभृत्	३.	मनुष्य	षट्	११.	काम क्रोधादि छः
नरेन्द्र	१.	हे राजन् !	सपत्नः	१२.	शत्रुओं को
विधूय	८.	तिरस्कार करके	वेद	१६.	जान लेता
मायाम्	७.	माया का	आत्मतत्त्वम्	१४.	आत्म तत्त्व को
वयुना	४.	ज्ञान के	भ्रमति	१९.	भटकता रहता है
उदयेन ।	५.	उदय के द्वारा	इह	१८.	इस संसार में
			तावत् ॥	१७.	तब-तक

श्लोकार्थ —हे राजन् ! जब-तक मनुष्य ज्ञान के द्वारा इस माया का तिरस्कार करके सबकी आसक्ति को छोड़कर काम, क्रोधादि छः शत्रुओं को जीत कर आत्मतत्त्व को।नहीं जान लेता तब-तक इस संसार में भटकता रहता है ॥

षोडशः श्लोकः

न यावदेतन्मन आत्मलिङ्गं संसारतापावपनं जनस्य ।
यच्छोकमोहामयरागलोभवैरानुबन्धं ममतां विधत्ते ॥१६॥

पदच्छेद— न यावत् एतत् मनः आत्मलिङ्गम् संसार ताप आवपनम् जनस्य ।
यत् शोक मोह आमय-राग-लोभ वैर अनुबन्धम् ममताम् विधत्ते ॥

शब्दार्थ—

न	८.	नहीं	यत्	१०.	जो
यावत्	१.	जब-तक	शोक	११.	शोक
एतत्	४.	इस	मोह-आमय	१२.	मोह-रोग,
मन	५.	मन को	राग	१३.	राग
आत्मलिङ्गम्	३.	आत्मा की उपाधिरूप	लोभ	१४.	लोभ और
संसार	६.	संसार के	वैर	१५.	शत्रुता
ताप	७.	दुःख का	अनुबन्धम्	१६.	आदि के कारण
आवपनम्	९.	क्षेत्र समझता है	ममताम्	१७.	ममता की
जनस्य ।	२.	प्राणी	विधत्ते ॥	१८.	वृद्धि करता है (तब-तक इस लोक में भटकता रहता है)

श्लोकार्थ—जब-तक प्राणी आत्मा की उपाधिरूप इस मन को संसार के दुःख का क्षेत्र नहीं समझता है जो शोक, मोह, रोग, राग, लोभ और शत्रुता आदि के कारण ममता की वृद्धि करता है, (तब तक इस लोक में भटकता रहता है)

सप्तदशः श्लोकः

भ्रातृव्यमेनं तददभ्रवीर्यमुपेक्षयाध्येधितमप्रमत्तः ।
गुरोर्हरेश्चरणोपासनास्त्रो जहि व्यलीकं स्वयमात्ममोषम् ॥१७॥

पदच्छेद—

भ्रातृव्यम् एनम् तद् अदभ्र वीर्यम् उपेक्षया अध्येधितम् अप्रमत्तः ।
गुरोः हरेः चरण उपासना अस्त्रः जहि व्यलीकम् स्वयम् आत्ममोषम् ॥

शब्दार्थ—

भ्रातृव्यम्	३. शत्रु है	हरेः	१४. हरि के
एनम्	१. यह	चरण	१५. चरणों की
तद्	४. इसकी	उपासना	१६. उपासना के
अदभ्र	६. बढ़ गई है	अस्त्रः	१७. अस्त्र से
वीर्यम्	५. शक्ति	जहि	१८. मार डालो
उपेक्षया	७. उपेक्षा करने पर	व्यलीकम्	१९. मिथ्या मन को
अध्येधितम्	८. शक्ति और बढ़ जाती है	स्वयम्	९. अपने आप
अप्रमत्तः ।	२. बड़ा बलवान्	आत्म	१०. आत्म स्वरूप को
गुरोः	१३. श्री गुरु और	मोषम् ॥	११. ढकेलने वाले इस

श्लोकार्थ—यह बड़ा बलवान् शत्रु है । इसकी शक्ति बढ़ गई है । उपेक्षा करने पर शक्ति और बढ़ जाती है । अपने आप आत्म स्वरूप को ढकेलने वाले इस मिथ्या मन को श्री गुरु और हरि के चरणों की उपासना के अस्त्र से मार डालो ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे ब्राह्मणरहूगणसंवादे एकादशोऽध्यायः ॥११॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पञ्चमः स्कन्धः

द्वादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

रहूगण उवाच—नमो नमः कारणविग्रहाय स्वरूपतुच्छीकृतविग्रहाय ।
नमोऽवधूत द्विजबन्धुलिङ्गनिगूढनित्यानुभवाय तुभ्यम् ॥१॥

पदच्छेद— नमो नमः कारण विग्रहाय स्वरूपतुच्छीकृत विग्रहाय ।
नमो अवधूत द्विज बन्धुलिङ्ग निगूढनित्य अनुभवाय तुभ्यम् ॥

शब्दार्थ—

नमो	८.	नमस्कार है	अवधूत	१.	हे योगेश्वर !
नमः	७.	नमस्कार है	द्विज	९.	ब्राह्मणों के
कारण	५.	कारण	बन्धु	१०.	प्रिय
विग्रहाय	६.	स्वरूप (आपको)	लिङ्ग	११.	चिह्न को धारण करने वाले
स्वरूप	२.	अपने स्वरूप से	निगूढ	१४.	अपने तेज से छिपाये हुये
तुच्छीकृत	४.	तुच्छ बनाने वाले	नित्य	१२.	अपने नित्य
विग्रहाय ।	३.	अन्य रूपों को	अनुभवाय	१३.	ज्ञानमय स्वरूप को
नमो	१६.	नमस्कार है	तुभ्यम् ॥	१५.	तुम्हें

श्लोकार्थ—हे योगेश्वर ! अपने स्वरूप से अन्य रूपों को तुच्छ बनाने वाले कारण स्वरूप आपको नमस्कार है, नमस्कार है। ब्राह्मणों के प्रिय चिह्न को धारण करने वाले अपने नित्य ज्ञानमय स्वरूप को अपने तेज से छिपाये हुये तुम्हें नमस्कार है ॥

द्वितीयः श्लोकः

ज्वरामयार्तस्य यथागदं सत् निदाघदग्धस्य यथा हिमाम्भः ।
कुदेहमानाहिविदष्टदृष्टेः ब्रह्मन् वचस्तेऽमृतमौषधं मे ॥२॥

पदच्छेद— ज्वरआमय आर्तस्य यथा अगदम् सत् निदाघदग्धस्य यथा हिम अम्भः ।
कुदेह मान अहि विदष्ट दृष्टेः, ब्रह्मन् वचः ते अमृतम् ओषधम् मे ॥

शब्दार्थ—

ज्वर	३.	ज्वर से	कुदेहमानअहि	१०.	घृणित देहाभिमानी विषैले सर्प द्वारा
आमय	५.	रोगी के लिये	विदष्ट दृष्टेः	११.	विशेषरूप से डसी गई बुद्धि वाले
आर्तस्य	४.	पीड़ित	ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन् !
यथा	२.	जिस प्रकार	वचः	१४.	वचन
अगदम् सत्	६.	ओषधि होती है	ते	१३.	तुम्हारे
निदाघ दग्धस्य	८.	धूप से तपे हुये पुरुष के लिये	अमृतम्	१५.	अमृतमय
यथा	७.	जैसे	ओषधम्	१६.	ओषधि के समान हैं
हिम अम्भः ।	९.	शीतल जल होता है उसी प्रकार	मे ॥	१२.	मेरे लिये

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! जिस प्रकार ज्वर से पीड़ित रोगी के लिये ओषधि होती है। जैसे धूप से तपे हुये पुरुष के लिये शीतल जल होता है उसी प्रकार घृणित देहाभिमान रूप विषैले सर्प द्वारा विशेष रूप से डसी गई बुद्धि वाले मेरे लिये तुम्हारे वचन अमृतमय ओषधि के समान हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

तस्माद्भवन्तं मम संशयार्थं प्रक्ष्यामि पश्चादधुना सुबोधम् ।
अध्यात्मयोगग्रथितं तवोक्तमाख्याहि कौतूहलचेतसो मे ॥३॥

पदच्छेद— तस्मात् भवन्तम् मम संशय अर्थम् प्रक्ष्यामि पश्चात् अधुना सुबोधम् ।
अध्यात्म योग ग्रथितम् तव उक्तम् आख्याहि कौतूहल चेतसः मे ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	अध्यात्म	९.	अध्यात्म
भवन्तम्	२.	मैं आपसे	योग	१०.	योग के
मम	३.	अपने	ग्रथितम्	११.	अनुकूल
संशय	४.	संशयों को	तव	१२.	अपने द्वारा
अर्थम्	५.	निवृत्ति के लिये तो	उक्तम्	१३.	किये गये उपदेश को
प्रक्ष्यामि	७.	पूछूंगा	आख्याहि	१४.	कहिये (और)
पश्चात्	६.	बाद में	कौतूहल	१८.	उत्कण्ठा है
अधुना	८.	इस समय	चेतसः	१७.	मन में अत्यन्त
सुबोधम् ।	१५.	समझाइये (क्योंकि)	मे ॥	१६.	मेरे

श्लोकार्थ—इसलिये मैं आपसे अपने संशयों की निवृत्ति के लिये तो बाद में पूछूंगा । इस समय अध्यात्म योग के अनुकूल अपने द्वारा किये गये उपदेश को कहिये और समझाइये । क्योंकि मेरे मन में अत्यन्त उत्कण्ठा है ॥

चतुर्थः श्लोकः

यदाह योगेश्वर दृश्यमानं क्रियाफलं सद्व्यवहारमूलम् ।
न ह्यञ्जसा तत्त्वविमर्शनाय भवानमुष्मिन् भ्रमते मनो मे ॥४॥

यत् आह योगेश्वर दृश्यमानम् क्रिया फलम् सद् व्यवहार मूलम् ।
न हि अञ्जसा तत्त्व विमर्शनाय भवान् अमुष्मिन् भ्रमते मनः मे ॥

शब्दार्थ—

यत् आह	२.	यह जो कहा है कि	हि	९.	निश्चय ही
योगेश्वर	१.	हे योगेश्वर	अञ्जसा	१२.	सत्य
दृश्यमानम्	३.	प्रत्यक्ष होने पर भी	तत्त्व	१०.	तत्त्व
क्रिया	४	क्रिया और	विमर्शनाय	११.	विचार के समय यह
फलम्	५.	उसका फल	भवान्	१४.	आपके
सद्	८.	है	अमुष्मिन्	१५.	इस कथन से
व्यवहार	६	व्यवहार	भ्रमते	१८.	भ्रम में पहुँचाया है
मूलम् ।	७.	स्वरूप ही	मनः	१७.	मन
न	१३.	नहीं है	मे ॥	१६.	मेरा

श्लोकार्थ—हे योगेश्वर ! आपने यह जो कहा है कि प्रत्यक्ष होने पर भी उसका फल व्यवहार स्वरूप ही है । निश्चय ही तत्त्व विचार के समय यह सत्य नहीं है । आपके इस कथन से मेरा मन भ्रम में पड़ गया है ।

पञ्चमः श्लोकः

ब्राह्मण उवाच—अयं जनो नाम चलन् पृथिव्यां यः पार्थिवः पार्थिव कस्य हेतोः।
तस्यापि चाङ्घ्र्योरधि गुल्फजङ्घाजानूरुमध्योरशिरोधरांसाः ॥५॥

पदच्छेद—अयम् जनः नाम चलन् पृथिव्याम् यः पार्थिवः पार्थिव कस्य हेतोः।
तस्य अपि च अङ्घ्र्योः अधि गुल्फ जङ्घा जानु ऊरु मध्य उर शिरोधरा अंसाः ॥

शब्दार्थ—

अयम्	४.	यह	तस्य अपि	११.	उसके भी
जनः	५.	देह	च	१०.	और
नाम	६.	निश्चय ही	अङ्घ्र्योः	१२.	चरणों के
चलन्	३.	चलता हुआ	अधि	१३.	ऊपर
पृथिव्याम्	२.	पृथ्वी पर	गुल्फ	१४.	टखने
यः	८.	जो	जङ्घा	१५.	पिंडली
पार्थिवः	७.	पृथ्वी का विकार है	जानु ऊरु	१६.	घुटने, जाँघ
पार्थिव	१.	हे पृथ्वीपति !	मध्य उर	१७.	कमर, वक्षः स्थल
कस्य हेतोः।	९.	किस कारण उससे भिन्न है	शिरोधरा अंसाः ॥	१८.	गर्दन कन्धे-आदि अङ्ग हैं

श्लोकार्थ—हे पृथ्वीपति ! पृथ्वी पर चलता हुआ यह देह निश्चय ही पृथ्वी का विकार है। जो किस कारण उससे भिन्न है ? और उसके भी चरणों के ऊपर टखने, पिंडली, वक्षःस्थल, गर्दन और कन्धे आदि अंग हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

अंसेऽधि दार्वी शिबिका च यस्यां सौवीरराजेत्यपदेश आस्ते।
यस्मिन् भवान् रूढनिजाभिमानो राजास्मि सिन्धुष्विति दुर्मदान्धः ॥६॥

पदच्छेद—अंसे अधि दार्वी शिबिका च यस्याम् सौवीर राजा इति अपदेशः आस्ते।
यस्मिन् भवान् रूढ निज अभिमानः राजा अस्मि सिन्धुषु इति दुर्मद अन्धः ॥

शब्दार्थ—

अंसे अधि	१.	कन्धों के ऊपर	यस्मिन्	९.	जिस शरीर में
दार्वी	२.	लकड़ी की	भवान्	१०.	आप
शिबिका	३.	पालकी है	रूढ	१२.	करने से (मैं)
च	४.	और	निज अभिमानः	११.	अपने अभिमान
यस्याम्	५.	उसमें भी	राजा अस्मि	१४.	राजा हूँ
सौवीर राजा	६.	सौवीर राजा	सिन्धुषु	१३.	सिन्धु देश का
इति, अपदेशः	७.	इस नाम का	इति दुर्मद	१५.	इस प्रकार प्रबल मद से
आस्ते।	८.	पार्थिव शरीर है	अन्धः ॥	१६.	अन्धे हो रहे हो

श्लोकार्थ—कन्धों के ऊपर लकड़ी की पालकी है और उसमें भी सौवीर राजा इस नाम का पार्थिव शरीर है। जिस शरीर में आप अपने अभिमान करने से मैं सिन्धु देश का राजा हूँ, इस प्रकार प्रबल मद से अन्धे हो रहे हो ॥

सप्तमः श्लोकः

शोच्यानिमांस्त्वमधिकष्टदीनान् विष्ट्या निगृह्णन्निरनुग्रहोऽसि ।
जनस्य गोप्तास्मि विकत्थमानो न शोभसे वृद्धसभासु धृष्टः ॥७॥

पदच्छेद— शोच्यान् इमान् त्वम् अधिकष्ट दीनान् विष्ट्या निगृह्णन् निर् अनुग्रहः असि ।
जनस्य गोप्ता अस्मि विकत्थमानः न शोभसे वृद्ध सभासु धृष्टः ॥

शब्दार्थ—

शोच्यान्	१.	शोक करने योग्य	जनस्य	१०.	(मैं) लोकों की
इमान्	३.	इन	गोप्ता	११.	रक्षा करने वाला है
त्वम्	२.	तुमने	अस्मि	१२.	हूँ
अधिकष्ट	४.	कष्ट में पड़े हुये	विकत्थमानः	१३.	ऐसा कहते हुये (तुम)
दीनान्	५.	दुखियों को	न	१५.	नहीं
विष्टया	६.	बेगार में	शोभसे	१६.	सुशोभित होते हो (तुम)
निगृह्णन्	७.	पकड़ रक्खा है (अतः तुम)	वृद्ध	१३.	महापुरुषों की
निर् अनुग्रहः	८.	कृपा से रहित	सभासु	१४.	सभा में
असि ।	९.	हो	धृष्टः ॥	१७.	कठोर हो

श्लोकार्थ—हे राजन्! शोक करने योग्य तुमने इन लोगों को बेगार में पकड़ रक्खा है। अतः तुम कृपा से रहित हो। मैं लोकों की रक्षा करने वाला हूँ, ऐसा कहते हुये तुम महापुरुषों की सभा में सुशोभित नहीं होते हो। तुम कठोर हो ॥

अष्टमः श्लोकः

यदा क्षितावेव चराचरस्य विदाम निष्ठां प्रभवं च नित्यम् ।
तन्नामतोऽन्यद् व्यवहारमूलं निरूप्यतां सत् क्रिययानुमेयम् ॥८॥

पदच्छेद— यदा क्षितौ एव चर अचरस्य विदाम निष्ठाम् प्रभवम् च नित्यम् ।
तत् नामतः अन्यद् व्यवहार मूलम् निरूप्यताम् सत् क्रियया अनुमेयम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	२.	जब	तत्	१०.	इसलिये
क्षितौ	४.	पृथ्वी में	नामतः	१२.	नाम के
एव	५.	ही	अन्यद्	१३.	अतिरिक्त
चर	६.	चलने वाले और	व्यवहार	१४.	व्यवहार का
अचरस्य	७.	स्थित रहने वाले पदार्थ	मूलम्	१५.	आधार (और क्या है)
विदाम्	१.	हम जानते हैं	निरूप्यताम्	११.	बताओ
निष्ठाम्	८.	नष्ट होते हैं	सत्	१६.	इनकी सत्ता
प्रभवम् च	९.	उत्पन्न होते हैं, और	क्रियया	१७.	क्रिया के द्वारा ही
नित्यम् ।	३.	सर्वदा	अनुमेयम ॥	१८.	जान पड़ती है

श्लोकार्थ—हम जानते हैं कि जब सर्वदा पृथ्वी में ही चलने वाले और स्थित रहने वाले पदार्थ नष्ट होते हैं और उत्पन्न होते हैं इसीलिये बताओ नाम के अतिरिक्त व्यवहार का आधार और क्या है। इनकी सत्ता क्रिया के द्वारा ही जान पड़ती है ॥

नवमः श्लोकः

एवं निरुक्तं क्षितिशब्दवृत्तमसन्निधानात्परमाणवो ये ।
अविद्यया मनसा कल्पितास्ते येषां समूहेन कृतो विशेषः ॥९॥

पदच्छेद— एवम् निरुक्तम् क्षिति शब्द वृत्तम् असत् निधानात् परमाणवः ये ।
अविद्यया मनसा कल्पिताः ते येषाम् समूहेन कृतः विशेषः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	अविद्यया	१५. अविद्यावश
निरुक्तम्	२. कहा गया	मनसा	१५. मन से ही
क्षिति	३. पृथ्वी	कल्पिताः	१६. कल्पना किये हुये हैं
शब्द	४. शब्द का	ते	१३. वे परमाणु
वृत्तम् असत्	५. व्यवहार भी मिथ्या ही है	येषाम्	९. जिनके
निधानात्	७. लय होता है	समूहेन	१०. समूह के द्वारा
परमाणवः	६. उसका परमाणुओं में	कृतः	१२. बनाया जाता है
ये ।	८. जो परमाणु हैं (और)	विशेषः ॥	११. पदार्थ विशेष

श्लोकार्थ—इस प्रकार कहा गया पृथ्वी शब्द का व्यवहार भी मिथ्या ही है। उसका परमाणुओं में लय होता है। जो परमाणु हैं और जिनके समूह के द्वारा पदार्थ विशेष बनाया जाता है, वे परमाणु अविद्या वश मन से ही कल्पना किये गये हैं ॥

दशमः श्लोकः

एवं कृशं स्थूलमणुर्बृहद्यद् असच्च सज्जीवमजीवमन्यत् ।
द्रव्यस्वभावाशयकालकर्मनाम्नाजयावेहि कृतं द्वितीयम् ॥१०॥

पदच्छेद— एवम् कृशम् स्थूलम् अणुः बृहत् यद् असत् च सज्जीवम् अजीवम् अन्यत् ।
द्रव्य स्वभाव आशय काल कर्म नाम्ना अजया अवेहि कृतम् द्वितीयम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इसी प्रकार	द्रव्य	१०. द्रव्य
कृशम्-स्थूलम्	४. पतला-मोटा	स्वभाव	११. स्वभाव
अणुः बृहत्	५. छोटा-बड़ा	आशय-काल	१२. आशय-काल]
यद्	३. जो कुछ	कर्म	१४. कर्म
असत्	६. मिथ्या (और)	नाम्ना	१५. इन नामों वाली
च	१३. और	अजया	१६. भगवान् की माया का ही
सज्जीवम्	७. सत्-चेतन	अवेहि	१८. समझो
अजीवम्	८. अचेतन	कृतम्	१७. कार्य
अन्यत् ।	२. और भी	द्वितीयम् ॥	९. माया का प्रपञ्च है (उसे भी)

श्लोकार्थ—इसी प्रकार और भी जो कुछ पतला, मोटा, छोटा, बड़ा, मिथ्या और सत्-चेतन और अचेतन माया का प्रपञ्च है उसे भी द्रव्य, स्वभाव, आशय, काल और कर्म इन नामों वाली भगवान् की माया का ही कार्य समझो ॥

एकादशः श्लोकः

ज्ञानं विशुद्धं परमार्थमेकमनन्तरं त्वबहिर्ब्रह्म सत्यम् ।
प्रत्यक् प्रशान्तं भगवच्छब्दसंज्ञं यद्वासुदेवं कवयो वदन्ति ॥११॥

पदच्छेद— ज्ञानम् विशुद्धम् परमार्थम् एकम् अनन्तरम् तु अबहिः ब्रह्म सत्यम् ।
प्रत्यक् प्रशान्तम् भगवत् शब्द संज्ञम् यत् वासुदेवम् कवयः वदन्ति ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानम्	८. ज्ञान ही	प्रत्यक्	१०. सबके अन्दर रहने वाला
विशुद्धम्	१. विशुद्ध	प्रशान्तम्	११. निर्विकार
परमार्थम्	२. परमार्थ रूप	भगवत्	१२. भगवान्
एकम्	३. अद्वितीय	शब्द	१३. शब्द उसी का
अनन्तरम्	४. अन्दर	संज्ञम्	१४. नाम है
तु	५. और	यत्	१५. उसी को
अबहिः	६. बाहर के भेद से रहित	वासुदेवम्	१७. वासुदेव
ब्रह्म	७ ब्रह्म	कवयः	१६. पण्डित जन
सत्यम् ।	९. सत्य है	वदन्ति ॥	१८. कहते हैं

श्लोकार्थ—विशुद्ध परमार्थ रूप अद्वितीय तथा अन्दर और बाहर के भेद से रहित ब्रह्मज्ञान ही सत्य है। सबके अन्दर रहने वाला निर्विकार भगवान् शब्द उसी का नाम है। उसी को पण्डित जन वासुदेव कहते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

रहूगणैतत्तपसा न याति न चेज्यया निर्वपणाद् गृहाद्वा ।
नच्छन्दसा नैव जलाग्निसूर्यैर्विना महत्पादरजोऽभिषेकम् ॥१२॥

पदच्छेद— रहूगण एतत् तपसा न याति न च इज्यया निर्वपणात् गृहात् वा ।
न छन्दसा न एव जल अग्नि सूर्यैः विना महत् पादरजः अभिषेकम् ॥

शब्दार्थ—

रहूगण	१. हे रहूगण !	न	१५. नहीं प्राप्त होता है
एतत्	६. यह परमार्थ ज्ञान	छन्दसा	१४. वेदाध्ययन से भी
तपसा न	७. तपस्या के द्वारा नहीं	न एव	१८. नहीं मिलता है
याति	८. प्राप्त होता है	जलअग्नि	१६. जल अग्नि और
न	१३. नहीं प्राप्त होता है (और)	सूर्यैः	१७. सूर्य की उपासना से भी
च	९. और	विना	५. बिना
इज्यया	१२. वैदिक कर्म काण्ड के द्वारा भी	महत्	२. महापुरुषों के
निर्वपणात्	११. अन्नादि से किये गये परोपकार से	पादरजः	३ चरणों की धूली से
गृहाद् वा।	१०. गृहस्थ जनों द्वारा अथवा	अभिषेकम् ॥	४. अपने को नहलाये

श्लोकार्थ—हे रहूगण ! महापुरुषों के चरणों की धूली से अपने को नहलाये बिना यह परमार्थ ज्ञान तपस्या के द्वारा नहीं प्राप्त होता है। और गृहस्थ जनों द्वारा अन्नादि से किये गये परोपकार से तथा वैदिक कर्मकाण्ड के द्वारा भी नहीं प्राप्त होता है। और वेदाध्ययन से भी नहीं प्राप्त होता है। तथा जल, अग्नि और सूर्य की उपासना से भी नहीं मिलता है।

त्रयोदशः श्लोकः

यत्रोत्तमश्लोकगुणानुवादः प्रस्तूयते ग्राम्यकथाविघातः ।
निषेव्यमाणोऽनुदिनं मुमुक्षोर्मतिं सतीं यच्छति वासुदेवे ॥१३॥

पदच्छेद— यत्र उत्तमश्लोक गुण अनुवादः प्रस्तूयते ग्राम्य कथा विघातः ।
निषेव्यमाणः अनुदिनम् मुमुक्षोः मतिम् सतीम् यच्छति वासुदेवे ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१.	जहाँ	निषेव्यमाणः	९.	सेवन करने वाले
उत्तम श्लोक	४.	पवित्र कीर्ति श्री हरि के	अनुदिनम्	८.	प्रति दिन
गुण	५.	गुणों की	मुमुक्षोः	१०.	मोक्ष की कामना
अनुवादः	६.	चर्चा	मतिम्	१२.	मनुष्य की बुद्धि को
प्रस्तूयते	७.	होती रहती है (जो)	सतीम्	११.	शुद्ध
ग्राम्यकथा	२.	विषय वार्ता को	यच्छति	१४.	लगा देती है
विघातः ।	३.	नष्ट करने वाली	वासुदेवे ॥	१३.	वासुदेव में

श्लोकार्थ—जहाँ विषय वार्ता को नष्ट करने वाली पवित्र कीर्ति श्री हरि के गुणों की चर्चा होती रहती है । जो प्रतिदिन सेवन करने से मोक्ष की कामना वाले मनुष्य की शुद्ध बुद्धि को भगवान् वासुदेव में लगा देती है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

अहं पुरा भरतो नाम राजा विमुक्तदृष्टश्रुतसङ्गबन्धः ।
आराधनं भगवत ईहमानो मृगोऽभवं मृगसङ्गाद्धतार्थः ॥१४॥

पदच्छेद— अहम् पुरा भरतः नाम राजा विमुक्त दृष्ट श्रुत सङ्ग बन्धः ।
आराधनम् भगवतः ईहमानः मृगः अभवम् मृग सङ्गात् हत अर्थः ॥

शब्दार्थ—

अहम् पुरा	१.	मैं पहले	आराधनम्	१०.	आराधना में ही
भरतः नाम	२.	भरत नाम का	भगवतः	९.	भगवान् की
राजा	३.	राजा था	ईहमानः	११.	लगा रहता था (तो भी)
विमुक्त	८.	मुक्त होकर	मृगः अभवम्	१६.	पूर्व जन्म में मृग हो गया था
दृष्ट	४.	इस लोक के और	मृग	१२.	मृग में
श्रुत	५.	परलोक के	सङ्गात्	१३.	आसक्ति हो जाने से
सङ्ग	७.	आसक्ति से	हत	१५.	भ्रष्ट होकर
बन्धः ।	६.	विषयों की	अर्थः ॥	१४.	परमार्थ से

श्लोकार्थ—मैं पहले भरत नाम का राजा था । इस लोक के और परलोक के विषयों की आसक्ति से मुक्त होकर भगवान् की आराधना में ही लगा रहता था । तो भी मृग में आसक्ति हो जाने से परमार्थ से भ्रष्ट होकर पूर्व जन्म में मृग हो गया था ॥

पञ्चदशः श्लोकः

सा मां स्मृतिर्मृगदेहेऽपि वीर कृष्णार्चनप्रभवा नो जहाति ।
अथो अहं जनसङ्गादसङ्गो विशङ्कमानोऽविवृतश्चरामि ॥१५॥

पदच्छेद— सा माम् स्मृतिः मृगदेहे अपि वीर कृष्ण अर्चन प्रभवा नो जहाति ।
अथो अहम् जनसङ्गात् असङ्गः विशंकमानः अविवृतः चरामि ॥

शब्दार्थ—

सा	६. वह	अथो	६. इसीलिये
माम्	५. मेरी	अहम्	१०. अब मैं
स्मृतिः	७. पूर्व जन्म की स्मृति	जन	११. लोगों के
मृग देहे अपि	४. मृग देह में भी	सङ्गात्	१२. सङ्ग से
वीर	१. हे वीर	असङ्गः	१४. दूर रहकर
कृष्ण	२. श्री कृष्ण की	विशंकमानः	१३. डर कर
अर्चन प्रभवा	३. आराधना के प्रभाव से	अविवृतः	१५. गुप्तरूप से
नो जहाति ।	८. नहीं लुप्त हुई	चरामि ॥	१६. विचरता हूँ

श्लोकार्थ—हे वीर ! श्री कृष्ण की आराधना के प्रभाव से मृग, देह में भी मेरी पूर्व जन्म की स्मृति नहीं लुप्त हुई । इसीलिये अब मैं लोगों के सङ्ग से डर कर दूर रहकर गुप्त रूप से विचरता हूँ ॥

षोडशः श्लोकः

तस्मान्नरोऽसङ्गसुसङ्गजातज्ञानासिनेहैव विवृक्णमोहः ।
हरिं तदीहाकथनश्रुताभ्यां लब्धस्मृतिर्यात्यतिपारमध्वनः ॥१६॥

पदच्छेद—तस्मात् नरः असङ्ग सुसङ्गजात ज्ञान असिना इह एव विवृक्ण मोहः ।
हरिम् तद् ईहा कथन श्रुताभ्याम् लब्ध स्मृतिः याति अतिपारम् अध्वनः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१. इसलिये	हरिम्	१०. श्री हरि की
नरः	२. मनुष्य को	तद्-ईहा	११. उन लीलाओं के
असङ्ग	३. विरक्त	कथन	१२. कथन और
सुसङ्गजात	४. महापुरुषों के सत्सङ्ग से प्राप्त	श्रुताभ्याम्	१३. श्रवण से
ज्ञान	५. ज्ञानरूपी	लब्ध	१५. प्राप्त करके
असिना	६. खड्ग के द्वारा	स्मृतिः	१४. भगवत् स्मृति
इह एव	७. इस लोक में ही	याति	१८. चला जाना चाहिये
विवृक्ण	६. काट कर	अतिपारम्	१७. उस पार
मोहः ।	८. मोह बन्धन को	अध्वनः ॥	१६. संसार मार्ग के

श्लोकार्थ—इसलिये मनुष्य को विरक्त महापुरुषों के सत्सङ्ग से प्राप्त ज्ञानरूपी खड्ग के द्वारा इस लोक में ही मोह बन्धन को काटकर श्री हरि की उन लीलाओं के कथन और श्रवण से भगवत् स्मृति प्राप्त करके संसार मार्ग के उस पार चला जाना चाहिये ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे ब्राह्मणरहूगण-संवादे द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पंचमः स्कन्धः

त्रयोदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—दुरत्ययेऽध्वन्यजया निवेशितो रजस्तमः सत्त्वविभक्तकर्मदृक्।
स एष सार्थोऽर्थपरः परिभ्रमन् भवाटवीं याति न शर्म विन्दति ॥१॥

पदच्छेद— दुरत्यये अध्वनि अजया निवेशितः रजः तमः सत्त्वविमुक्त कर्म दृक्।
सः एषः सार्थः अर्थ परः परिभ्रमन् भव अटवीम् याति न शर्म विन्दति ॥

शब्दार्थ—

दुरत्यये	२.	दुस्तर	सः एवः	१०.	ऐसा यह (जीव)
अध्वनि	३.	प्रवृत्ति मार्ग में	सार्थाः	१२.	व्यापारियों के दल के समान
अजया	१.	माया ने इसे	अर्थपरः	११.	अर्थ परायण होकर
निवेशितः	४.	लगा दिया है (इसलिये)	परिभ्रमन्	१३.	घूमता हुआ
रजः तमः	५.	रजोगुण-तमोगुण	भव अटवीम्	१४.	संसार रूपी जंगल में
सत्त्व	६.	सत्त्वगुण	याति	१५.	पहुँच जाता है (और)
विमुक्त	७.	के भेद से	न	१७.	नहीं
कर्म	८.	ये नाना प्रकार के कर्मों को	शर्म	१६.	शान्ति को
दृक्।	९.	देखता है	विन्दति ॥	१८.	प्राप्त होता है

श्लोकार्थ—माया ने इसे दुस्तर प्रवृत्ति मार्ग में लगा दिया है। इसीलिये रजोगुण, तमोगुण और सत्त्वगुण के भेद से ये नाना प्रकार के कर्मों को देखता है। ऐसा यह जीव अर्थ परायण होकर घूमता हुआ संसार रूपी जंगल में पहुँच जाता है और शान्ति को नहीं प्राप्त होता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

यस्यामिमे षण्नरदेव दस्यवः सार्थं विलुम्पन्ति कुनायकं बलात्।
गोमायवो यत्र हरन्ति सार्थिकं प्रमत्तमाविश्य यथोरणं वृकाः ॥२॥

पदच्छेद— यस्याम् इमे षट् नरदेव दस्यवः सार्थम् विलुम्पन्ति कुनायकं बलात्।
गोमायवः यत्र हरन्ति सार्थिकम् प्रमत्तम् आविश्य यथा उरणम् वृकाः ॥

शब्दार्थ—

यस्याम्	२.	उस जंगल में	गोमायवः	१४.	गीदड़
इमे	३.	ये	यत्र	१२.	उसी प्रकार
षट्	४.	छः	हरन्ति	१७.	हरण कर लेते हैं
नरदेव	१.	हे महाराज !	सार्थिकम्	१५.	झुंड में
दस्यवः सार्थम्	५.	डाकू हैं जो वणिक् समाज के	प्रमत्तम्	१३.	ये उन्मत्त
विलुम्पन्ति	८.	चुरा लेते हैं	आविश्य	१६.	घुस कर (मन का)
कुनायकम्	६.	दुष्ट बुद्धि रूपी नायक को	यथा	९.	जैसे
बलात्	७.	जबर्दस्ती	उरणम्	११.	भेड़ों को हर लेता है
			वृकाः ॥	१०.	भेड़िये

श्लोकार्थ—हे महाराज ! उस जंगल में ये छः डाकू हैं। जो वणिक् समाज के दुष्ट बुद्धिरूपी नायक को जबर्दस्ती चुरा लेते हैं। जैसे भेड़िये भेड़ों को हर लेते हैं, उसी प्रकार ये उन्मत्त गीदड़ झुंड में घुसकर मन का हरण कर लेते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

प्रभूतवीरुत्तृणगुल्मगह्वरे कठोरदंशैर्मशकैरुपद्रुतः।
क्वचित्तु गन्धर्वपुरं प्रपश्यति क्वचित्क्वचिच्चाशुरयोल्मुकग्रहम् ॥३॥

पदच्छेद— प्रभूत वीरुत् तृण गुल्म गह्वरे कठोर दंशैः मशकैः उपद्रुतः। क्वचित् तु गन्धर्व पुरम् प्रपश्यति क्वचित् क्वचित् च आशुरय उल्मुक ग्रहम् ॥

शब्दार्थ—

प्रभूत	१.	बहुत सी	क्वचित् तु	९.	कभी-कभी तो यह
वीरुत्	२.	लताओं	गन्धर्व पुरम्	१०.	गन्धर्व नगर को
तृण	३.	घास	प्रपश्यति	११.	देखता है और
गुल्म	४.	झाड़-झंखाड़ के कारण	क्वचित्	१२.	कभी
गह्वरे	५.	दुर्गम बने हुये (वन में)	क्वचित् च	१३.	कभी
कठोर-दंशैः	१६.	तीव्र डांस और	आशुरय	१४.	अत्यन्त वेगवान्
मशकैः	७.	मच्छर	उल्मुक	१५.	उल्मुक नामक
उपद्रुतः।	८.	इस जीव को परेशान करते हैं	ग्रहम् ॥	१६.	पिशाच को देखता है

श्लोकार्थ—बहुत सी लताओं, घास, झाड़-झंखाड़ के कारण दुर्गम बने हुये वन में तीव्र डांस और मच्छर इस जीव को परेशान करते हैं। कभी-कभी तो यह गन्धर्व नगर को देखता है और कभी-कभी अत्यन्त वेगवान् उल्मुक नामक पिशाच को देखता है ॥

चतुर्थः श्लोकः

निवासतोयद्रविणात्मबुद्धिस्ततस्ततोधावति भो अटव्याम्।
क्वचिच्च वात्योत्थितपांसुधूम्रा दिशो न जानाति रजस्वलाक्षः ॥४॥

पदच्छेद— निवासतोय द्रविण आत्म बुद्धिः ततः ततः धावति भोः अटव्याम्। क्वचित् च वात्या उत्थित पांसुधूम्रा दिशः न जानाति रजस्वलाक्षः ॥

शब्दार्थ—

निवास	३.	निवास स्थान	क्वचित्	१०.	कभी तो
तोय	४.	जल और	च	९.	और
द्रविण	५.	धन आदि में	वात्या	११.	बवन्डर के द्वारा
आत्मबुद्धिः	६.	आसक्त होकर	उत्थित पांसु	१२.	उठी हुई धूल से
ततः ततः	७.	वहां-वहां	धूम्रा	१३.	धूमिल
धावति	८.	भटकता रहता है	दिशः न	१५.	दिशाओं को भी नहीं
भोः	१.	अरे!	जानाति	१६.	जानता है
अटव्याम्।	२.	इस जंगल में	रजस्वलाक्षः ॥	१४.	आँखों में धूल भर जाने से

श्लोकार्थ—अरे इस जंगल में निवास, स्थान, जल और धन आदि में आसक्त होकर वहां-वहां भटकता रहता है। और कभी तो बवंडर के द्वारा उठी हुई धूल से धूमिल आँखों में धूल भर जाने से दिशाओं को भी नहीं जानता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

अदृश्यझिल्लीस्वनकर्णशूल उलूकवाग्भिर्व्यथितान्तरात्मा ।
अपुण्यवृक्षान् श्रयते क्षुधार्दितो मरीचितोयान्यभिधावति क्वचित् ॥५॥

पदच्छेद— अदृश्यझिल्ली स्वन कर्ण शूलः उलूक वाग्भिः व्यथित अन्तरात्मा ।
अपुण्य वृक्षान् श्रयते क्षुधा अर्दितः मरीचितोयानि अभिधावति क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

अदृश्य	२.	दिखाई न देने वाले	अपुण्य	१४.	पुण्य से रहित
झिल्ली	३.	झींगुरों का	वृक्षान्	१५.	पाप कर्मों का
स्वन	५.	शब्द (सुनाई देता है)	श्रयते	१६.	सहारा लेता है
कर्ण-शूलः	४.	कानों को कड़ुवा लगने वाला	क्षुधा	१०.	कभी भूख से
उलूक	६.	कभी उल्लुओं की	अर्दितः	११.	व्याकुल होकर कभी प्यास
वाग्भिः	७.	बोली से	मरीचितोयानि	१२.	मृगतृष्णा की ओर लगने पर
व्यथित	६	व्यथित हो जाता है	अभिधावति	१३.	दौड़ लगाता है
अन्तरात्मा ।	८.	इस जीव का चित्त	क्वचित् ॥	१.	कभी इसे

श्लोकार्थ—कभी इसे दिखाई न देने वाले झींगुरों का कानों को कड़ुवा लगने वाला शब्द सुनाई देता है । कभी उल्लुओं की बोली से व्यथित हो जाता है । कभी भूख से व्याकुल होकर कभी प्यास लगने पर मृगतृष्णा की ओर दौड़ लगाता है ॥

षष्ठः श्लोकः

क्वचिद्वितोयाः सरितोऽभियाति परस्परं चालषते निरन्धः ।
आसाद्य दावं क्वचिदग्नितप्तो निर्विद्यते क्व च यक्षैर्हृतासुः ॥६॥

पदच्छेद— क्वचित् वितोयाः सरितः अभियाति परस्परम् च आलषते निरन्धः ।
आसाद्य दावम् क्वचिद् अग्नितप्तः, निर्विद्यते क्व च यक्षैः हृत असुः ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	कभी	दावम्	१०.	दावानल में
वितोयाः	२.	जल हीन	क्वचित्	६.	कभी
सरितः	३.	नदियों की ओर	अग्नि-तप्तः	१२.	अग्नि में झुलस जाता है
अभियाति	४.	जाता है	निर्विद्यते	१८.	खिन्न होने लगता है
परस्परम्	७.	आपस में	क्व	१४.	कभी
च	५.	और	च	१३.	और
आलषते	८.	भोजन प्राप्ति की इच्छा करता है	यक्षैः	१५.	यक्षों के द्वारा
निरन्धः	६.	अन्न न मिलने पर	हृत	१७.	खींचने पर
आसाद्य ।	११.	घुस कर	असुः ॥	१६.	प्राण

श्लोकार्थ—कभी जल हीन नदियों की ओर जाता है और अन्न न मिलने पर आपस में भोजन प्राप्ति की इच्छा करता है । कभी दावानल में घुस कर अग्नि में झुलस जाता है और कभी यक्षों के द्वारा प्राण खींचने पर खिन्न होने लगता है ॥

सप्तमः श्लोकः

शूरैर्हृतस्वः क्व च निर्विण्णचेताः शोचन् विमुह्यन्नुपयाति कश्मलम् ।
क्वचिच्च गन्धर्वपुरं प्रविष्टः प्रमोदते निर्वृतवन्मुहूर्तम् ॥७॥

पदच्छेद— शूरैः हृतस्वः क्व च निर्विण्ण चेताः शोचन् विमुह्यन् उपयाति कश्मलम् ।
क्वचित् च गन्धर्व पुरम् प्रविष्टः प्रमोदते निर्वृत वत् मुहूर्तम् ॥

शब्दार्थ—

शूरैः	२.	बलवान् लोग	उपयाति	११.	प्राप्त करता है
हृत	४.	हरण कर लेते हैं (जिससे)	कश्मलम् ।	१०.	मूर्च्छा को
स्वः	३.	इसका धन	क्वचित्	१३.	कभी
क्व	१.	कभी	च	१२.	और
च	८.	और	गन्धर्वपुरम्	१४.	गन्धर्व नगर में
निर्विण्ण	५.	दुःखी	प्रविष्टः	१५.	पहुँच कर
चेताः	६.	मन होकर	प्रमोदते	१८.	प्रसन्न होता है
शोचन्	७.	शोक	निर्वृतवत्	१७.	विरक्त मनुष्य के समान
विमुह्यन्	९.	मोह से	मुहूर्तम् ॥	१६.	घड़ी भर के लिये

श्लोकार्थ—कभी बलवान् लोग इसका धन हरण कर लेते हैं। जिसमें दुःखी मन होकर शोक-मोह से मूर्च्छा को प्राप्त करता है और कभी गन्धर्व नगर में पहुँच कर घड़ी भर के लिये विरक्त मनुष्य के समान प्रसन्न होता है ॥

अष्टमः श्लोकः

चलन् क्वचित्कण्टकशर्कराङ्घ्रिर्नगारुरुक्षुर्विमना इवास्ते ।
पदे पदेऽभ्यन्तरवह्निनार्दितः कौटुम्बिकः क्रुध्यति वै जनाय ॥८॥

पदच्छेद— चलन् क्वचित् कण्टक शर्करा अङ्घ्रिः नग आरुरुक्षुः विमनाः इव आस्ते ।
पदे-पदे अभ्यन्तर वह्निना अर्दितः कौटुम्बिकः क्रुध्यति वै जनाय ॥

शब्दार्थ—

चलन्	२.	चलते हुये	पदे	१०.	पग
क्वचित्	१.	कभी	पदे	११.	पग पर
कण्टक	३.	काँटे और	अभ्यन्तर	१२.	आन्तरिक
शर्कराअङ्घ्रिः	४.	कंकड़ों के द्वारा पैर छिल जाने से	वह्निना	१३.	अग्नि से
नग	५.	पर्वत पर	अर्दितः	१४.	पीड़ित होकर
आरुरुक्षुः	६.	चढ़ने की इच्छा वाला यह जीव	कौटुम्बिकः	१६.	बन्धु बान्धवों पर तथा
विमनाः	७.	उदास	क्रुध्यति	१८.	क्रोधित होता है
इव	८.	जैसा	वै	१५.	निश्चय ही
आस्ते ।	९.	हो जाता है	जनाय ॥	१७.	अन्य लोगों पर

श्लोकार्थ—कभी चलते हुये काँटे और कंकड़ों के द्वारा पैर छिल जाने से पर्वत पर चढ़ने की इच्छा वाला यह जीव उदास जैसा हो जाता है और पग-पग पर आन्तरिक अग्नि से पीड़ित होकर निश्चय ही बन्धु-बान्धवों पर तथा अन्य लोगों पर क्रोधित होता है ॥

नवमः श्लोकः

क्वचिन्निगीर्णोऽजगराहिना जनो नावैति किञ्चिद्विपिनेऽपविद्धः ।
दष्टः स्म शेते क्व च दन्दशूकैरन्धोऽन्धकूपे पतितस्तमिस्रे ॥९॥

पदच्छेद— क्वचित् निगीर्णः अजगर अहिना जनः, न अवैति किञ्चित् विपिने अपविद्धः ।
दष्टः स्म शेते क्व च दन्द शूकैः, अन्धः अन्धकूपे पतितः तमिस्रे ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी	दष्टः	१३. काटा हुआ
निगीर्णः	४. ग्रास बनकर	स्म शेते	१४. पड़ा रहता है (तथा)
अजगर	२. अजगर	क्व च	१०. कभी और
अहिना	३. सर्प का	दन्द	११. हिंसक
जनः	५. यह मनुष्य	शूकैः	१२. जीवों के द्वारा
न अवैति	९. नहीं प्राप्त करता है	अन्धः	१५. अन्धा होकर
किञ्चित्	८. कुछ भी	अन्धकूपे	१७. अन्धेरे कुयें में
विपिने	६. वन में	पतितः	१८. गिर पड़ता है
अपविद्धः ।	७. पड़ा हुआ	तमिस्रे ॥	१६. घोर दुःख से

श्लोकार्थ—कभी अजगर सर्प का ग्रास बन कर यह मनुष्य वन में पड़ा हुआ कुछ भी नहीं प्राप्त करता है । कभी और हिंसक जीवों के द्वारा काटा हुआ पड़ा रहता है, तथा अन्धा होकर घोर दुःख से अन्धेरे कुयें में गिर पड़ता है ॥

दशमः श्लोकः

कर्हि स्म चित्क्षुद्ररसान् विचिन्वंस्तन्मक्षिकाभिर्व्यथितो विमानः ।
तत्रातिकृच्छ्रात्प्रतिलब्धमानो बलाद्विलुम्पन्त्यथ तं ततोऽन्ये ॥१०॥

पदच्छेद— कर्हि स्म चित् क्षुद्र रसान् विचिन्वन् तत् मक्षिकाभिः व्यथितः विमानः ।
तत्र अति कृच्छ्रात् प्रतिलब्धमानः बलात् विलुम्पन्ति अथ तम् ततः अन्ये ॥

शब्दार्थ—

कर्हि स्म चित्	१. और कभी	तत्र	९. वहाँ भी
क्षुद्र	२. तुच्छ	अतिकृच्छ्रात्	१०. अत्यन्त कठिनाई से
रसान्	३. विषयानन्द रूपी मधु	प्रतिलब्धमानः	११. यह विषय मिल गया तो
विचिन्वन्	४. खोजते हैं	बलात्	१५. बल पूर्वक
तत्	५. तो	विलुम्पन्ति	१६. छीन लेते हैं
मक्षिकाभिः	६. मक्खियों के द्वारा	अथ	१४. इस प्रकार
व्यथितो	७. दुःखी और	तम्	१३. उससे
विमानः ।	८. मान रहित (कर दिया जाता है)	ततः अन्ये ॥	१२. तब अन्य लोग

श्लोकार्थ—और कभी तुच्छ विषयानन्द रूपी मधु को खोजता है तो मक्खियों के द्वारा दुःखी और मान रहित कर दिया जाता है । वहाँ भी अत्यन्त कठिनाई से यह विषय मिल गया तो अन्य लोग उससे इस प्रकार बल पूर्वक छीन लेते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

क्वचिच्च शीतातपवातवर्षप्रतिक्रियां कर्तुमनीश आस्ते।
क्वचिन्मिथो विपणन् यच्च किञ्चिद् विद्वेषमृच्छत्युत वित्तशाठ्यात् ॥११॥

पदच्छेद— क्वचित् च शीत आतपवात वर्ष प्रतिक्रियाम् कर्तुम् अनीशः आस्ते।
क्वचित् मिथः विपणन् यत् च किञ्चित् विद्वेषम् ऋच्छति उत वित्तशाठ्यात् ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	कभी	क्वचित् मिथः	१२.	कभी, आपस में
च	४.	और	विपणन्	१४.	व्यापार करता है तो
शीत आतप	२.	शीत-घाम	यत् च	११.	यदि
वात	३.	आँधी	किञ्चित्	१३.	कुछ
वर्ष	५.	वर्षा से	विद्वेषम्	१७.	वैर को
प्रतिक्रियाम्	६.	अपनी रक्षा	ऋच्छति	१८.	प्राप्त होता है
कर्तुम्	७.	करने में	उत	१०.	अथवा
अनीश	८.	असमर्थ	वित्त	१५.	धन के
आस्ते।	९.	हो जाता है	शाठ्यात् ॥	१६.	लोभ से

श्लोकार्थ—कभी शीत, घाम, आँधी और वर्षा से अपनी रक्षा करने में असमर्थ हो जाता है। अथवा यदि कुछ कभी आपस में व्यापार करता है तो धन के लोभ से वैर को प्राप्त होता है ॥

द्वादशः श्लोकः

क्वचित्क्वचित्क्षीणधनस्तु तस्मिन् शय्यासनस्थानविहारहीनः।
याचन् परादप्रतिलब्धकामः पारक्यदृष्टिर्लभतेऽवमानम् ॥१२॥

पदच्छेद— क्वचित् क्वचित् क्षीणधनः तु तस्मिन् शय्या आसन स्थान विहार हीनः।
याचन् परात् अप्रतिलब्ध कामः पारक्य दृष्टिः लभते अवमानम् ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी	याचन्	१०. याचना करता है
क्वचित्	२. कभी	परात्	९. दूसरों से
क्षीण	५. नष्ट हो जाने पर	अप्रतिलब्ध	१२. नहीं प्राप्त होती (तथा)
धनः तु	४. धन के	कामः	११. तब भी इच्छित वस्तुयें
तस्मिन्	३. इस संसार वन में	पारक्य	१३. अनुचित
शय्या-आसन	६. शय्या-आसन	दृष्टिः	१४. दृष्टि के कारण
स्थान	७. रहने के लिये स्थान	लभते	१६. प्राप्त होता है
विहार हीनः।	८. भ्रमण इत्यादि से रहित होकर	अवमानम् ॥	१५. इसे तिरस्कार

श्लोकार्थ—कभी-कभी इस संसार वन में धन के नष्ट हो जाने पर शय्या, आसन, रहने के लिये स्थान भ्रमण इत्यादि से रहित होकर दूसरों से याचना करता है। तब भी इच्छित वस्तुयें नहीं प्राप्त होती हैं तथा अनुचित दृष्टि के कारण इसे तिरस्कार प्राप्त होता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अन्योन्यवित्तव्यतिषङ्गवृद्धवैरानुबन्धो विवहन्मिथश्च ।
अध्वन्यमुष्मिन्नुरुकृच्छ्रवित्तबाधोपसर्गैर्विहरन् विपन्नः ॥१३॥

पदच्छेद— अन्योन्य वित्त व्यतिषङ्ग वृद्ध वैरअनुबन्धः विवहन् मिथः च ।
अध्वनि अमुष्मिन् उरु कृच्छ्रवित्त बाधः उपसर्गैः विहरन् विपन्नः ॥

शब्दार्थ—

अन्योन्य	१.	आपस में	अध्वनि	११.	मार्ग में
वित्त	२.	धन का	अमुष्मिन्	१०.	इस
व्यतिषङ्ग	३.	व्यवहार	उरु	१२.	अत्यधिक
वृद्ध	४.	बढ़ जाने पर	कृच्छ्र	१३.	श्रम के कारण
वैर	५.	द्वेषभाव के कारण	वित्त	१४.	धन के
अनुबन्धः	७.	सम्बन्ध	बाधः	१५.	नष्ट होने से
विवहन्	८.	करता है	उपसर्गैः	१६.	कष्ट प्राप्त करके
मिथः	६.	परस्पर	विहरन्	१८.	भटकता रहता है
च ।	९.	और	विपन्नः ॥	१७.	दुःखी होकर

श्लोकार्थ—आपस में धन का व्यवहार बढ़ जाने पर द्वेषभाव के कारण परस्पर सम्बन्ध करता है और इस मार्ग में अत्यधिक श्रम के कारण धन के नष्ट होने से कष्ट प्राप्त करके दुःखी होकर भटकता रहता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तांस्तान् विपन्नान् स हि तत्र तत्र विहाय जातं परिगृह्य सार्थः ।
आवर्ततेऽद्यापि न कश्चिदत्र वीराध्वनः पारमुपैति योगम् ॥१४॥

पदच्छेद— तान् तान् विपन्नान् स हि तत्र तत्र विहाय जातम् परिगृह्य सार्थः ।
आवर्तते अद्यापि न कश्चिद् अत्र, वीर अध्वनः पारम् उपैति योगम् ॥

शब्दार्थ—

तान्	३.	उन	आवर्तते	११.	आगे बढ़ता रहता है
तान्	४	उन	अद्यापि	१२.	उनमें से आज भी
विपन्नान्	५.	दुःखी प्राणियों को	न	१५.	नहीं लौटा
स हि	२.	वह व्यक्ति	कश्चिद्	१३.	कोई प्राणी
तत्र-तत्र	६.	वहाँ-वहाँ	अत्र	१४.	यहाँ
विहाय	७.	छोड़कर	वीर	१.	हे वीरवर !
जातम्	८.	उत्पन्न हुओं के	अध्वनः	१७.	मार्ग के
परिगृह्य	१०.	साथ लेकर	पारम् उपैति	१८.	उस पार पहुँचता है
सार्थः ।	९.	समूह को	योगम् ॥	१६.	वह जीव योग के द्वारा ही

श्लोकार्थ—हे वीरवर ! वह व्यक्ति उन-उन दुःखी प्राणियों को वहाँ-वहाँ छोड़कर उत्पन्न हुओं के समूह को साथ लेकर आगे बढ़ता है । उनमें से आज भी कोई प्राणी यहाँ नहीं लौटा । वह जीव योग के द्वारा ही मार्ग के उस पार पहुँचता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

मनस्विनो निर्जितदिग्गजेन्द्रा ममेति सर्वे भुवि बद्धवैराः ।
मृधे शयीरन्न तु तद्व्रजन्ति यन्न्यस्तदण्डो गतवैरोऽभियाति ॥१५॥

पदच्छेद— मनस्विनः निर्जित दिक् गजेन्द्राः मम इति सर्वे भुवि बद्ध वैराः ।
मृधे शयीरन् न तु तद् व्रजन्ति यत् न्यस्त दण्डः गतवैरः अभियाति ॥

शब्दार्थ—

मनस्विनः	२.	धीर वीर पुरुष	मृधे	११.	संग्राम में
निर्जित	५.	जीत कर	शयीरन्	१२.	जूझ जाते हैं
दिक्	३.	दिशाओं के	न तु	१३.	तो भी
गजेन्द्राः	४.	हाथियों को	तद्	१४.	उस पद को (नहीं)
मम	६.	यह मेरी है	व्रजन्ति यत्	१५.	प्राप्त कर पाते हैं, जो
इति	७.	इस प्रकार (अभिमान करके)	न्यस्त	१७.	धारण करने वाले
सर्वे	१.	सभी	दण्डः	१६.	दण्ड
भुवि	८.	पृथ्वी पर	गत	१९.	हीन (परमहंसों को)
बद्ध	१०.	ठान लेते हैं (और)	वैरः	१८.	वैर
वैराः ।	९.	वैर	अभियाति ॥	२०.	प्राप्त होता है

श्लोकार्थ—सभी धीरवीर पुरुष दिशाओं के हाथियों को जीतकर यह मेरी है इस प्रकार अभिमान करके पृथ्वी पर वैर ठान लेते हैं और संग्राम में जूझ जाते हैं । तो भी उस पद को प्राप्त नहीं कर पाते हैं, जो दण्ड धारण करने वाले वैरहीन परमहंसों को प्राप्त होता है ॥

षोडशः श्लोकः

प्रसज्जति क्वापि लताभुजाश्रयस्तदाश्रयाव्यक्तपदद्विजस्पृहः ।
क्वचित्कदाचिद्धरिचक्रतस्त्रसन् सख्यं विधत्ते बककङ्कगृध्रैः ॥१६॥

पदच्छेद— प्रसज्जति क्वापि लता भुज आश्रयः तद् आश्रय अव्यक्त पद द्विज स्पृहः ।
क्वचित् कदाचित् हरि चक्रतः त्रसन् सख्यम् विधत्ते बक कङ्क गृध्रैः ॥

शब्दार्थ—

प्रसज्जति	८.	आसक्त हो जाता है	क्वचित्	९.	कभी
क्वापि	१.	कभी-कभी यह जीव	कदाचित्	१०.	किसी
लता-भुज	२.	लताओं की डालियों का	हरिचक्रतः	१२.	सिंहों के समूह से
आश्रयः	३.	आश्रय लेकर (कभी)	त्रसन्	११.	डर कर
तद् आश्रयः	४.	उस पर रहने वाले	सख्यम्	१५.	प्रीति
अव्यक्त	५.	अस्पष्ट	विधत्ते	१६.	करता है
पद	६.	शब्दों में बोलने वाले	बककङ्क	१३.	बगुला, कङ्क (चील्ह)
द्विज स्पृहः ।	७.	पक्षियों के मोह में	गृध्रैः ॥	१४.	और गीधों से

श्लोकार्थ—कभी-कभी यह जीव लताओं की डालियों का आश्रय लेकर कभी उस पर रहने वाले पक्षियों के मोह में आसक्त हो जाता है । कभी किसी सिंहों के समूह से डरकर बगुला, कङ्क (चील्ह) और गीधों से प्रीति करता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

तैर्वञ्चितो हंसकुलं समाविशन्नरोचयन् शीलमुपैति वानरान् ।
तज्जातिरासेन सुनिर्वृतेन्द्रियः परस्परोद्वीक्षणविस्मृतावधिः ॥१७॥

पदच्छेद— तैः वञ्चितः हंस कुलम् समाविशन् अरोचयन् शीलम् उपैति वानरान् ।
तत् जाति रासेन सुनिर्वृ त इन्द्रियः परस्पर उद्वीक्षण विस्मृत अवधिः ॥

शब्दार्थ—

तैः वञ्चितः	१.२. उनके द्वारा धोखा देने पर	तत् जाति	१०.११. उनकी जाति के
हंस कुलम्	३.४. हंसों के कुल में	रासेन सुनिर्वृ त	१२.१३. अनुसार भली भांति
समाविशन्	५. प्रवेश करता है	इन्द्रियः	१४. इन्द्रियों को तृप्त करता है (और)
अरोचयन्	७. नहीं अच्छा लगता (तब)	परस्पर	१५. एक दूसरे का
शीलम्	६. उनका आचरण	उद्वीक्षण	१६. मुख देख-देख कर
उपैति	९. जाता है	विस्मृत	१८. भूल जाता है
वानरान् ।	८. वानरों के कुल में	अवधिः ॥	१७. अपनी आयु को भी

श्लोकार्थ—उनके द्वारा धोखा देने पर हंसों के कुल में प्रवेश करता है। उनका आचरण नहीं अच्छा लगता। तब वानरों के कुल में जाता है। उनकी जाति के अनुसार भली-भांति इन्द्रियों को तृप्त करता है। और एक दूसरे का मुख देख-देखकर अपनी आयु को भी भूल जाता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

द्रुमेषु रंस्यन् सुतदारवत्सलो व्यवायदीनो विवशः स्वबन्धने ।
क्वचित्प्रमादाद्गिरिकन्दरे पतन् वल्लीं गृहीत्वा गजभीत आस्थितः ॥१८॥

पदच्छेद—द्रुमेषु रंस्यन् सुतदार वत्सलः व्यवाय दीनः विवशः स्वबन्धने ।
क्वचित् प्रमादात् गिरि कन्दरे पतन् वल्लीम् गृहीत्वा गजभीत आस्थितः ॥

शब्दार्थ—

द्रुमेषु	१. वृक्षों में	क्वचित्	९. और कभी
रंस्यन्	२. क्रीडा करता हुआ	प्रमादात्	१०. असावधानी के कारण
सुतदार	३. पुत्र और स्त्री के	गिरिकन्दरे	११. पर्वत की गुफा में
वत्सलः	४. स्नेह में बंधकर	पतन्	१२. गिरते हुये
व्यवाय	५. वासना के कारण	वल्लीम्	१३. लता को
दीनः	६. दीन बनकर	गृहीत्वा	१४. पकड़ कर
विवशः	८. विवश हो जाता है	गजभीतः	१५. हाथी से डर कर
स्वबन्धने ।	७. अपने बन्धन को तोड़ने में	आस्थितः ॥	१६. लटका रहता है

श्लोकार्थ—वृक्षों में क्रीडा करता हुआ, पुत्र और स्त्री के स्नेह में बंधकर वासना के कारण दीन बन कर अपने बन्धन को तोड़ने में विवश हो जाता है। और कभी असावधानी के कारण पर्वत की गुफा में गिरते हुये लता को पकड़कर हाथी से डर कर लटका रहता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अतः कथञ्चित्स विमुक्त आपदः पुनश्च सार्थं प्रविशत्यरिन्दम ।
अध्वन्यमुष्मिन्नजया निवेशितो भ्रमञ्जनोऽद्यापि न वेद कश्चन ॥१९॥

पदच्छेद— अतः कथञ्चित् स विमुक्त आपदः पुनः च सार्थम् प्रविशति अरिन्दम ।
अध्वनि अमुष्मिन् अजया निवेशितः भ्रमन् जनः अद्यापि न वेद कश्चन ॥

शब्दार्थ—

अतः	२.	इसलिये यदि
कथञ्चित्स	३.	किसी प्रकार वह
विमुक्त	५.	छूट जाता है (तो)
आपदः	४.	उस आपत्ति से
पुनः	६.	फिर से
च	९.	और
सार्थम्	७.	अपने समूह में
प्रविशति	८.	मिल जाता है !
अरिन्दम ।	१.	हे शत्रुदमन
अध्वनि	१२.	मार्ग, में
अमुष्मिन्	११.	इस संसार रूपी
अजया	१०.	माया की प्रेरणा से
निवेशितः	११.	पहुँचा हुआ
भ्रमन्	१५.	भटकते- भटकते
जनः	१४.	यह प्राणी
अद्यापि	१६.	अन्त तक
न वेद	१८.	नहीं जानता है
कश्चन ॥	१७.	कुछ भी

श्लोकार्थ—हे शत्रुदमन ! इसलिये यदि किसी प्रकार वह उस आपत्ति से छूट जाता है । तो फिर से अपने समूह में मिल जाता है । और माया की प्रेरणा से इस संसार रूपी मार्ग में पहुँचा हुआ यह प्राणी भटकते-भटकते अन्त तक कुछ भी नहीं जानता है ॥

विंशः श्लोकः

रहूगण त्वमपि ह्यध्वनोऽस्य संन्यस्तदण्डः कृतभूतमैत्रः ।
असज्जितात्मा हरिसेवया शितं ज्ञानासिमादाय तरातिपारम् ॥२०॥

पदच्छेद— रहूगण त्वम् अपि हि अध्वनः अस्य, संन्यस्त दण्डः कृत भूत मैत्रः ।
असज्जित आत्मा हरि सेवया शितम् ज्ञान असिम् आदाय तर अति पारम् ॥

शब्दार्थ—

रहूगण त्वम् अपि	१.	हे रहूगण ! तुम भी
हि	४.	ही
अध्वनः	२.	मार्ग में भटक रहे हो
अस्य	३.	इसलिये
संन्यस्त	६.	छोड़कर
दण्डः	५.	प्रजा को दण्ड देने का कार्य
कृत	९.	करके
भूत	७.	समस्त प्राणियों से
मैत्रः ।	८.	मित्रता
असज्जित	१०.	अनासक्त
आत्मा	११.	चित्त होकर
हरि सेवया	१२.	भगवत् सेवा से
शितम्	१३.	तीखी की हुई धार वाली
ज्ञान-असिम्	१४.	ज्ञानरूपी-तलवार को
आदाय	१५.	लेकर
तर	१८.	पार कर लो
अति	१६.	इस दुस्तर
पारम् ॥	१७.	मार्ग को

श्लोकार्थ—हे रहूगण ! तुम भी मार्ग में भटक रहे हो । इसलिये ही प्रजा को दण्ड देने का कार्य छोड़कर समस्त प्राणियों से मित्रता करके अनासक्त चित्त होकर भगवत् सेवा से तीखी की हुई धार वाली ज्ञानरूपी-तलवार को लेकर इस दुस्तर मार्ग को पार लो ॥

एकविंशः श्लोकः

राजोवाच—अहो नृजन्माखिलजन्मशोभनं किं जन्मभिस्त्वपरैरप्यमुष्मिन् ।
न यद्धृषीकेशयशः कृतात्मनां महात्मनां वः प्रचुरः समागमः ॥२१॥

पदच्छेद—अहो नृ जन्म अखिल जन्म शोभनम् किम् जन्मभिः तु अपरैः अपि अमुष्मिन् ।
न यद् हृषीकेश यशः कृत आत्मनाम् महात्मनाम् वः प्रचुरः समागमः ॥

शब्दार्थ—

अहोनृजन्म	१. अहो मनुष्य का जन्म	न	१८. नहीं मिलता है
अखिल	२. समस्त	यद् हृषीकेश	१०. जहाँ भगवान् श्री कृष्ण के
जन्म	३. योनियों में	यशः	११. पवित्र यश से
शोभनम्	४. श्रेष्ठ है	कृत	१२. शुद्ध
किम्	८. क्या लाभ है	आत्मनाम्	१३. अन्तःकरण वाले
जन्मभिः	७. जन्मों से	महात्मनाम्	१५. महात्माओं का
तु अपरे	५. दूसरे	वः	१४. आप जैसे
अपि	८. भी	प्रचुरः	१६. अधिकाधिक
अमुष्मिन् ।	६. देवादि उत्तम	समागमः ॥	१७. सामीप्य

श्लोकार्थ—अहो मनुष्य का जन्म समस्त योनियों में श्रेष्ठ है । दूसरे देवादि उत्तम जन्मों से भी क्या लाभ है । जहाँ भगवान् श्री कृष्ण के पवित्र यश से शुद्ध अन्तःकरण वाले आप जैसे महात्माओं का अधिकाधिक समीप्य नहीं मिलता है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

न ह्यद्भुतं त्वच्चरणाब्जरेणुभिर्हतांहसो भक्तिरधोक्षजेऽमला ।
मौहूर्तिकाद्यस्य समागमाच्च मे दुस्तर्कमूलोऽपहतोऽविवेकः ॥२२॥

पदच्छेद—न हि अद्भुतम् त्वत्चरणअब्ज रेणुभिः हत अंहसः भक्तिः अधोक्षजे अमला ।
मौहूर्तिकात् यस्य समागमात् च मे दुस्तर्क मूलः अपहतः अविवेकः ॥

शब्दार्थ—

न	९. नहीं है (क्योंकि)	मौहूर्तिकम्	११. दो घड़ी के
हि अद्भुतम्	८. इसमें आश्चर्य	यस्य	१०. जिनके
त्वत् चरण	१. तुम्हारे चरण	समागमात्	१२. सत् सङ्ग से ही
अब्ज रेणुभिः	२. कमलों की धूली से जिनके	च	१३. और
हत	४. नष्ट हो गये हैं (और)	मे	१४. मेरा सारा
अंहसः	३. पाप-ताप	दुस्तर्क	१५. कुतर्क
भक्तिः	७. भक्ति (प्राप्त हो गई है)	मूलः	१६. मूलक
अधोक्षजे	५. भगवान् श्री कृष्ण की	अपहतः	१८. नष्ट हो गया है
अमला ।	६. निर्मल	अविवेकः ॥	१७. अज्ञान

श्लोकार्थ—तुम्हारे चरण कमलों की धूली से जिनके पाप-ताप नष्ट हो गये हैं और भगवान् श्री कृष्ण की निर्मल भक्ति प्राप्त हो गई है । इसमें आश्चर्य नहीं हैं । क्योंकि जिनके दो घड़ी के सत् सङ्ग से ही मेरा सारा कुतर्क मूलक अज्ञान नष्ट हो गया है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

नमो महद्भ्योऽस्तु नमः शिशुभ्यो नमो युवभ्यो नम आ वटुभ्यः ।
ये ब्राह्मणा गामवधूतलिङ्गाश्चरन्ति तेभ्यः शिवमस्तु राज्ञाम् ।।२३।।

पदच्छेद— नमो महद्भ्यः अस्तु नमः शिशुभ्यः नमः युवभ्यः नमः आ वटुभ्यः ।
ये ब्राह्मणाः गाम् अवधूत लिङ्गाः चरन्ति तेभ्यः शिवम् अस्तु राज्ञाम् ।।

शब्दार्थ—

नमः	२. नमस्कार है		आ वटुभ्यः	८.	ब्रह्मवादियों को
महद्भ्यः	१. ब्रह्म ज्ञानी महापुरुषों को		ये ब्राह्मणाः	१०.	जो ब्राह्मण
अस्तु	५. हो		गाम् अवधूत	११.	पृथ्वी पर अवधूत
नमः	४. नमस्कार		लिङ्गाः	१२.	वेष में
शिशुभ्यः	३. शिशुओं को		चरन्ति	१३.	विचरण करते हैं
नमः	७. नमस्कार है		तेभ्यः	१४.	उनके द्वारा
युवभ्यः	६. युवकों को		शिवम् अस्तु	१६.	कल्याण हो
नमः	९. नमस्कार है		राज्ञाम् ।।	१५.	राजाओं का

श्लोकार्थ—ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों को नमस्कार है। शिशुओं को नमस्कार हो। युवकों को नमस्कार है। ब्रह्मवादियों को नमस्कार है। जो ब्राह्मण पृथ्वी पर अवधूत वेष में विचरण करते हैं, उनके द्वारा राजाओं का कल्याण हो ।।

चतुर्विंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इत्येवमुत्तरामातः स वै ब्रह्मर्षिसुतः सिन्धुपतय आत्मसतत्त्वं विगणयतः परानुभावः परमकारुणिकतयोपदिश्य रहूगणेन सकरुणमभिवन्दितचरण आपूर्णार्णव इव निभृतकरणोर्म्याशयो धरणिमिमां विचचार ।।२४।।

पदच्छेद—इति एवम् उत्तरामातः स वै ब्रह्मर्षि सुतः सिन्धु पतये आत्म सतत्त्वम् विगणयतः परानुभावः परमकारुणिकतया उपदिश्य रहूगणेन सकरुणम् अभिवन्दितचरणः आपूर्ण अर्णव इव निभृतकरण ऊर्मि आशयः धरणिम् इमाम् विचचार ।।

शब्दार्थ—

इति एवम्	२. इस प्रकार		रहूगणेन सकरुणम्	९. रहूगण ने दीन भाव से
उत्तरामातः	१. हे परीक्षित् !		अभिवन्दित चरण	१०. वन्दना की उनके चरणों की
स वै ब्रह्मर्षिसुतः	४. उन ब्रह्मर्षि पुत्र ने		आपूर्ण अर्णव इव	११. वे परिपूर्ण समुद्र के समान
सिन्धुपतय आत्म	५. सिन्धु नरेश से अपने		निभृत करण	१२. शान्त होकर इन्द्रियों रूपी
सतत्त्वम् विगणयतः	६. अपमान का विचार करते हुये		ऊर्मि आशयः	१३. लहरों और मन से
परानुभावः	३. परम प्रभावशाली		धरणिम्	१५. धरणी पर
परम कारुणिकतया	७. अत्यन्त करुणा के कारण		इमाम्	१४. इस
उपदिश्य	८. उपदेश दिया		विचचार ।।	१६. विचरने लगे

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! इस प्रकार परम प्रभाव शाली उन ब्रह्मर्षि पुत्र ने सिन्धु नरेश से अपने अपमान का विचार न करते हुये अत्यन्त करुणा के कारण उपदेश दिया। रहूगण ने दीन भाव से उनके चरणों की वन्दना की। वे परिपूर्ण समुद्र के समान शान्त होकर इन्द्रिय रूपी लहरों और मन से इस धरणी पर विचरण करने लगे ।।

पञ्चविंशः श्लोकः

सौवीरपतिरपि सुजनसमवगतपरमात्मसतत्त्व आत्मन्यविद्याऽध्यारोपितां च देहात्ममतिं विससर्ज । एवं हि नृप भगवदाश्रिताश्रितानुभावः ॥२५॥

पदच्छेद—सौवीर पतिः अपि सुजन समवगत परमात्मसतत्त्व आत्मनि अविद्या अध्यारोपिताम् च देहात्ममतिम् विससर्ज एवम् हि नृप भगवत् आश्रित आश्रित अनुभावः ॥

शब्दार्थ—

सौवीरपतिः	१.	सौवीर पति रहूगण ने	देहात्म	१०.	देहात्म
अपि	२.	भी	मतिम्	११.	बुद्धि को
सुजन	३.	सत्सङ्ग से	विससर्ज	१२.	त्याग दिया
समवगत	६.	ज्ञान पाकर	एवम् इह	१९.	ऐसा ही है
परमात्मसतत्त्व	४.५.	परमात्म तत्त्व का	नृप	१४.	हे राजन् !
आत्मनि	७.	अन्तःकरण में	भगवत्	१५.	भगवान् के
अविद्या	८.	अज्ञान के द्वारा	आश्रित	१६.	आश्रित
अध्यारोपिताम्	९.	आरोपित	आश्रित	१६.	भक्तों की शरण का
च	१३.	और	अनुभावः॥	१८.	प्रभाव

श्लोकार्थ—सौवीरपति रहूगण ने भी सत्सङ्ग से परमात्म तत्त्व का ज्ञान पाकर अन्तः करण में अज्ञान के द्वारा आरोपित देहात्म बुद्धि को त्याग दिया। और हे राजन् ! भगवान् के आश्रित भक्तों की शरण का प्रभाव हो ऐसा है ॥

षड्विंशः श्लोकः

यो ह वा इह बहुविदा महाभागवत त्वयाभिहितः परोक्षेण वचसा जीवलोकभवाध्वा स ह्यार्यमनीषया कल्पितविषयो नाञ्जसाव्युत्पन्नलोकसमधिगमः। अथ तदेवैतद्दुरवगमं समवेतानुकल्पेन निर्दिश्यतामिति ॥२६॥

पदच्छेद—यः ह वा इह बहुविदा महा भागवत त्वया अभिहितः परोक्षेण वचसा जीव लोक भव अध्वा सः हि आर्य मनीषया कल्पित विषयः न अञ्जसा व्युत्पन्न लोक समधिगमः। अथ तद् एव एतद् दुर वगमम् समवेत अनुकल्पेन निर्दिश्यताम् इति ॥

शब्दार्थ—

यः	३.	जो	आर्य	१७.	विवेकी पुरुषों की
ह वा	४.	निश्चय ही	मनीषया	१८.	बुद्धि के द्वारा
इह	५.	इस संसार में	कल्पित	१९.	कल्पना किया हुआ है
बहु	६.	परम	विषयः	२०.	विषय है (अतः)
विदा	७.	विद्वान्	न	२४.	नहीं आता
महा	१.	महान्	अञ्जसा	२२.	थोड़ा भी
भागवत	२.	भगवत् भक्त (मुनि श्रेष्ठ)	व्युत्पन्नलोक	२१.	अल्प बुद्धि वाले पुरुषों को
त्वया	८.	आपके द्वारा	समधिगमः	२३.	समझ में
अभिहितः	११.	कहा गया है	अथ	२५.	इसलिये
परोक्षेण	९.	अप्रत्यक्ष	तद् एव	२६.	उसी
वचसा	१०.	वाणी से	एतद्	२७.	इस विषय को
जीव	१३.	जीवों के	दुरवगमम्	२८.	दुर्बोध
लोक	१४.	संसार रूपी	समवेत	२९.	अनेक
भवअध्वा	१५.	मार्ग का वर्णन है	अनुकल्पेन	३०.	शब्दों के द्वारा
सः	१२.	वह	निर्दिश्यताम्	३१.	स्पष्ट रूप से समझाइये
हि	१६.	निश्चय ही	इति ॥	३२.	इति

श्लोकार्थ—महाभागवत मुनिश्रेष्ठ ! जो निश्चय ही इस संसार में आपके द्वारा अप्रत्यक्ष वाणी से कहा गया है, वह जीवों के संसार रूपी मार्ग का वर्णन है। निश्चय ही विवेकी पुरुषों की बुद्धि के द्वारा कल्पना किया हुआ विषय है। अतः अल्प बुद्धि वाले पुरुषों को थोड़ा भी समझ में नहीं आता। इसलिये इस दुर्बोध विषय को अनेक शब्दों के द्वारा स्पष्ट रूप से समझाइये ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः
श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
पञ्चमः स्कन्धः
चतुर्दशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

स होवाच—य एष देहात्ममानिनां सत्त्वादिगुणविशेषविकल्पितकुशलाकुशलसमवहारविनिर्मितविविधदेहावलिभिर्वियोगसंयोगाद्यनादिसंसारानुभवस्य द्वारभूतेन षडिन्द्रियवर्गेण तस्मिन्दुर्गाध्ववदसुगमेऽध्वन्यापतित ईश्वरस्य भगवतो विष्णोर्वशवर्तिन्या मायया जीवलोकोऽयं यथा वणिक्सार्थोऽर्थपरः स्वदेहनिष्पादितकर्मानुभवः श्मशानवदशिवतमायां संसाराटव्यां गतो नाद्यापि विफलबहुप्रतियोगेहस्तत्तापोपशमनीं हरिगुरुचरणारविन्दमधुकरानुपदवीमवरुन्धे यस्यामु ह वा एते षडिन्द्रियनामानः कर्मणा दस्यव एव ते ॥१॥

पदच्छेद—य एष देहात्म मानिनां सत्त्वादिगुण विशेष विकल्पित कुशल अकुशल समवहार विनिर्मित विविधदेह आवलिभिः वियोग संयोग आदि अनादि संसार अनुभवस्य द्वार भूतेन षडिन्द्रिय वर्गेण तस्मिन् दुर्ग अध्ववत् असुगमे अध्वनि आपतित ईश्वरस्य भगवतः विष्णोः वशवर्तिन्या मायया जीवलोकः अयम् यथा वणिक् सार्थ अर्थपरः स्वदेह निष्पादित कर्म अनुभवः श्मशानवत् अशिव तमायाम् संसार अटव्याम् गतः न अद्यापि विफल बहुप्रतियोग ईहः तत् ताप उपशमनीम् हरि गुरु चरण अरविन्द मधुकर अनुपदवीम् अवरुन्धे यस्याम् उ ह वा एते षडिन्द्रिय नामानः कर्मणा दस्यवः एव ते ॥

शब्दार्थ—

य एष	१.	जो यह	यथा	३४.	समान
देहात्ममानिनाम्	२.	देहाभिमानी	वणिक् सार्थः	३३.	वनिजारों के
सत्त्वादि	३.	सत्त्वादि	अर्थ	३१.	धन के
गुण	४.	गुणों के	परः	३२.	लोभी
विशेष	५.	भेद से	स्वदेह	४०.	अपने शरीर से
विकल्पित	६.	कल्पना किये गये	निष्पादित	४१.	किये गये
कुशल	७.	शुभ	कर्म	४२.	कर्मों का
अकुशल	८.	अशुभ और	अनुभवः	४३.	फल भोगते हुये
समवहार	९.	मिश्र कर्मों के द्वारा	श्मशानवत्	४४.	श्मशान के समान
विनिर्मित	१०.	बनाया गया	अशिव	४५.	अशुभ
विविध	११.	नाना प्रकार के	तमायाम्	४६.	अत्यन्त
देह	१२.	शरीर के साथ	संसार	४७.	संसार रूपी
आवलिभिः	१३.	होने वाला	अटव्याम्	४८.	जङ्गल में

वियोग	१४. वियोग	गतः न	४६. पहुँच गया है
संयोग	१५. संयोग	अद्यापि	५३. आज भी उसे
आदि	१६. आदि	विफल	५४. सफलता नहीं मिली है
अनादि	१७. अनादि	बहु	५०. बहुत सी
संसार	१८. संसार का	प्रति योग	५१. प्रतियोगिताओं की
अनुभवस्य	१९. अनुभव जीव को प्राप्त होता है	ईहः	५२. कामना में
द्वारभूतेन	२२. द्वार स्वरूप है.	तत् तापः ॥	५५. अपने श्रम को
षड् इन्द्रिय	२०. छः इन्द्रियों का	उपशमनीम्	५६. शान्त करने वाले
वर्गेण	२१. समूह इसका	हरि	५७. श्री हरि एवम्
तस्मिन्	२३. इस	गुरु	५८. गुरुदेव के
दुर्ग	२४. किले के	चरण	५९. चरण
अध्ववत्	२५. मार्ग के समान	अरविन्द	६०. कमलरूपी
असुगमे	२६. अत्यन्त कठिन	मधुकर	६१. मकरन्द का
अध्वनि	२७. मार्ग में	अनुपदवीम्	६२. अनुसरण
अपतित	२८. पड़ा हुआ	अवरुन्धे	६३. नहीं करता है
ईश्वरस्य	३५. परमात्मा	यस्याम्	६४. इस संसार रूपी
भगवतः	३६. भगवान्	उ ह वा एते	६५. वन में ये
विष्णोः	३७. विष्णु के	षडिन्द्रिय	६६. छः इन्द्रिय
वशवर्तिन्या	३८. आश्रित रहने वाली	नामानः	६७. नाम वाले
मायया	३९. माया की प्रेरणा से	कर्मणा	६८. कर्मरूपी
जीवलोकः	३०. जीव समूह	दस्यवः एव	७०. डाकू ही हैं
अयम्	२९. यह	ते ॥	६९. वे

श्लोकार्थ—यह जो देहाभिमानी सत्त्वादि गुणों के भेद से कल्पना किये गये शुभ, अशुभ और मिश्र कर्मों के द्वारा बनाया गया नाना प्रकार के शरीरों के साथ होने वाला वियोग, संयोग, आदि, अनादि संसार का अनुभव जीव को प्राप्त होता है। छः इन्द्रियों का समूह इसका द्वार स्वरूप है। उस किले के मार्ग के समान अत्यन्त कठिन मार्ग में पड़ा हुआ यह जीव समूह धन के लोभी वनिजारों के समान परमात्मा भगवान् विष्णु के आश्रित रहने वाली माया की प्रेरणा से अपने शरीर से किये गये कर्मों का फल भोगते हुये श्मशान के समान अत्यन्त अशुभ संसार रूपी जङ्गल में पहुँच गया है। बहुत सी प्रतियोगिताओं की कामना में आज भी उसे सफलता नहीं मिली है। अपने श्रम को शान्त करने वाले श्री हरि एवम् गुरुदेव के चरण कमलरूपी मकरन्द का अनुसरण नहीं करता है। इस संसार रूपी वन में ये छः इन्द्रिय नाम वाले कर्मरूपी वे डाकू ही हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

तद्यथा पुरुषस्य धनं यत्किञ्चिद्धर्मौपयिकं बहुकृच्छ्राधिगतं साक्षात्परमपुरुषाराधनलक्षणो योऽसौ धर्मस्तं तु साम्पराय उदाहरन्ति । तद्धर्म्यं धनं दर्शनस्पर्शनश्रवणास्वादनावघ्राणसङ्कल्पव्यवसायगृहग्राम्योपभोगेन कुनाथस्याजितात्मनो यथा सार्थस्य विलुम्पन्ति ॥२॥

पदच्छेद—तत् यथा पुरुषस्य धनम् यत् किञ्चित् धर्मः औपयिकम् बहुकृच्छ्र अधिगतम् साक्षात् परम पुरुष आराधन लक्षणः यः असौ धर्मः तम् तु साम्पराये उदाहरन्ति तद्धर्म्यं धनम् दर्शन स्पर्शन श्रवण आस्वादन अवघ्राण सङ्कल्प व्यवसाय गृह ग्राम्य उपभोगेन कुनाथस्य अजित आत्मनः यथा सार्थस्य विलुम्पन्ति ॥

शब्दार्थ—

तत्	३३. वह	साम्पराये	१७. परलोक में
यथा	३२. जैसे	उदाहरन्ति	१८. कल्याण का हेतु बताया गया है
पुरुषस्य	३. पुरुष का	तद्धर्म्यं	१९. उसी धर्म में उपयोगी
धनम्	६. धन है उसका	धनम्	२०. धन को
यत्	४. जो	दर्शन स्पर्शन	२१. देखना, स्पर्श करना
किञ्चित्	५. कुछ	श्रवण	२२. सुनना
धर्म	७. धर्म में	आस्वादन	२३. स्वाद लेना
औपयिकम्	८. उपयोग होना चाहिये	अवघ्राण	२४ सूंघना
बहुकृच्छ्र	१. अत्यधिक कष्ट के द्वारा	सङ्कल्प	२५. सङ्कल्प करना
अधिगतम्	२. कमाया हुआ	व्यवसाय	२६. निश्चय करना
साक्षात्	९. साक्षात्	गृह-ग्राम्य	२७. गृहस्थोचित विषय
परमपुरुष	१०. परमात्मा की	उपभोगेन	२८. भोगों में फंसकर
आराधन	११. आराधना के	कुनाथस्य	३१. दुष्ट स्वामी वाले
लक्षणः	१२. रूप में प्रयोग होने वाला	अजित	२९. असावधान
यः	१३. जो	आत्मनः	३०. आत्मा तथा
असौ	१४. यह	यथा	३५. समान
धर्मः	१५. धर्म है	सार्थस्य	३४. दल के धन के
तम् तु	१६. उसे ही	विलुम्पन्ति ॥	३६. चुरा लेते हैं

श्लोकार्थ—अत्यधिक कष्ट के द्वारा कमाया हुआ पुरुष का जो कुछ धन है उसका धर्म में उपयोग होना चाहिये। साक्षात् परमात्मा की आराधना के रूप में प्रयोग होने वाला जो यह धर्म है, उसे ही परलोक में कल्याण का हेतु बताया गया है। उसी धर्म में उपयोगी धन को देखना, स्पर्श करना, सुनना, स्वाद लेना, सूंघना, संकल्प करना, निश्चय करना गृहस्थोचित विषय भोगों में फंसकर असावधान आत्मा तथा दुष्ट स्वामी वाले जैसे वह दल के धन के समान चुरा लेते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

अथ च यत्र कौटुम्बिका दारापत्यादयो नाम्ना कर्मणा वृकसृगाला एवानिच्छतोऽपि कदर्यस्य कुटुम्बिन उरणकवत्संरक्ष्यमाणं मिषतोऽपि हरन्ति ॥३॥

पदच्छेद—अथ च कौटुम्बिकाः दारा अपत्य आदयः नाम्ना कर्मणा वृक सृगाला एव अनिच्छतः अपि कदर्यस्य कुटुम्बिनः उरणकवत् संरक्ष्यमाणम् मिषतः अपि हरन्ति ॥

शब्दार्थ—

अथ च	१. इतना ही नहीं	एव अनिच्छतः	८. ही हैं वे न चाहने पर
यत्र	२. इस संसार वन में	अपि कदर्यस्य	९. भी अत्यधिक लोभी
कौटुम्बिकाः	३. कुटुम्बी जन	कुटुम्बिनः	१०. कुटुम्बी जनों के
दारा अपत्य	४. स्त्री पुत्र	उरणकवत्	१३. गड़ेरियों से
आदयः नाम्ना	५. आदि नाम से (कहे जाते हैं)	संरक्ष्यमाणम्	११. सुरक्षित भेड़ों को भेड़िया ले जाता है
कर्मणा वृक	६. जो कर्म से भेड़िये और	मिषतः अपि	११. धन का उसी प्रकार
सृगालाः	७. गीदड़ों के समान	हरन्ति ॥	१२. हरण कर लेते हैं (जैसे)

श्लोकार्थ—इतना ही नहीं, इस संसार वन में कुटुम्बीजन स्त्री पुत्रादि नाम से कहे जाते हैं। जो कर्म से भेड़िये और गीदड़ों के समान ही हैं। वे न चाहने पर भी अत्यधिक लोभी कुटुम्बीजनों के धन का उसी प्रकार हरण कर लेते हैं, जैसे गड़ेरिये से सुरक्षित भेड़ों को भेड़िया ले जाता है।

चतुर्थः श्लोकः

यथा ह्यनुवत्सरं कृष्यमाणमप्यदग्धबीजं क्षेत्रं पुनरेवावपनकाले गुल्मतृणवीरुद्भिर्गह्वरमिव भवत्येवमेव गृहाश्रमः कर्मक्षेत्रं यस्मिन्न हि कर्माण्युत्सीदन्ति यदयं कामकरण्ड एष आवसथः ॥४॥

पदच्छेद—यथा हि अनुवत्सरम् कृष्यमाणम् अपि अदग्धबीजम् क्षेत्रम् पुनः एव आवपन काले गुल्मलता वीरुद्भिः गह्वरम् इव भवति एवम् एव गृहाश्रमः कर्मक्षेत्रम् यस्मिन् नहि कर्माणि उत्सीदन्ति यद् अयम् कामकरण्डः एषः आवसथः ॥

शब्दार्थ—

यथा हि	१. जैसे हि	एव	११. ही
अनुवत्सरम्	२. प्रत्येक वर्ष	गृहाश्रमः	१०. गृहस्थाश्रम
कृष्यमाणम् अपि	३ जोतने पर भी	कर्मक्षेत्रम्	१२. कर्म भूमि
अदग्धबीजम्	४. बिना जले हुये बीज वाला	यस्मिन्	१४. जिसमें
क्षेत्रम् पुनः एव	५. खेत फिर से ही	नहि	१६. नहीं है
आवपनकाले	६. खेती का समय आने पर	कर्माणि उत्सीदन्ति	१५. कर्मों की समाप्ति
गुल्मतृणवीरुद्भिः	७. लता घास	यद् अयम्	१७. क्योंकि
गह्वरम् इव	८. गहन जैसा हो जाता है	कामकरण्डः	२०. कामनाओं की पिटारी है
भवति	१३. होता है	एषः	१८. यह
एवम्	९. इसी प्रकार	आवसथः ॥	१९ घर

श्लोकार्थ—जैसे हि प्रत्येक वर्ष जोतने पर भी बिना जले हुये बीज वाला खेत फिर से ही खेती का समय आने पर लता, घास, झाड़, झंखाड़ से गहन हो जाता है, इसी प्रकार गृहस्थाश्रम ही कर्म भूमि होता है। जिसमें कर्मों की समाप्ति नहीं है। क्योंकि यह घर कामनाओं की पिटारी है॥

पञ्चमः श्लोकः

तत्रगतो दंशमशकसमापसदैर्मनुजैः शलभशकुन्ततस्करमूषकादिभिरुपरुध्यमानबहिः प्राणः क्वचित् परिवर्तमानोऽस्मिन्नध्वन्यविद्याकामकर्मभिरुपरक्तमनसानुपपन्नार्थं नरलोकं गन्धर्वनगरमुपपन्नमिति मिथ्यादृष्टिरनुपश्यति ॥५॥

पदच्छेद—तत्र गतः दंशमशकसम अपसदैः मनुजैः शलभ शकुन्ततस्कर मूषक आदिभिः उपरुध्यमान-बहिः प्राणः क्वचित् परिवर्तमानः अस्मिन् अध्वनि अविद्याकामकर्मभिः उपरक्त मनसा अनुपपन्न अर्थम् नरलोकम् गन्धर्व नगरम् उपपन्नम् इति मिथ्या दृष्टिः अनुपश्यति ॥

शब्दार्थ—

तत्रगतः	१. उस गृहस्थाश्रमें आसक्त	अस्मिन्	१०. इस
दंशमशक	३. डाँस और मच्छरों के	अध्वनि	११. मार्ग में
समअपसदैः	४. समान-नीच	अविद्या काम	१३. यह अज्ञान-कामना और
मनुजैः शलभ	५. पुरुषों से, टिड्ढी	कर्मभिः उपरक्त	१४. कर्मों से कलुषित
शकुन्ततस्कर	६. पक्षी, चोर और	मनसा अनुपपन्नम्	१५. चित्त होकर, सिद्ध न करने वाले
मूषक आदिभिः	७. चूहे आदि से	अर्थम् नरलोकम्	१६. प्रयोजन, मृत्यु लोक को
उपरुध्यमान	८. नुकसान पहुँचाता है	गन्धर्व नगरम्	१७. गन्धर्व नगर के
बहिः प्राणः	२ इस व्यक्ति के धन रूप बाहरी प्राण को	उपपन्नम् इति	१८. समान समझता है और
क्वचित्	९. कभी	मिथ्या दृष्टिः	१९ दोष दृष्टि के कारण
परिवर्तमानः	१२. भटकते-भटकते	अनुपश्यति ॥	२०. असत्य को सत्य रूप देखता है

श्लोकार्थ—उस गृहस्थाश्रम में आसक्त इस व्यक्ति के धनरूप बाहरी प्राण को डाँस और मच्छरों के समान नीच पुरुषों से टिड्ढी-पक्षी-चोर और चूहे आदि से नुकसान पहुँचता है। कभी इस मार्ग में भटकते-भटकते यह अज्ञान, कामना और कर्मों से कलुषित चित्त होकर प्रयोजन सिद्ध न करने वाले मृत्यु लोक को गन्धर्व नगर के समान समझता है और दोष दृष्टि के कारण असत्य को सत्य देखता है ॥

षष्ठः श्लोकः

तत्र च क्वचिदातपोदकनिभान् विषयानुपधावति पानभोजनव्यवायादिव्यसनलोलुपः ॥६॥

पदच्छेद—तत्र च क्वचित् आतपउदक निभान् विषयान् उपधावति पान भोजन व्यवायादि व्यसन लोलुपः ॥

शब्दार्थ—

तत्र	२. उस गृहस्थाश्रम में	उपधावति	१२. दौड़ने लगता है
च	१. और	पान	७. पान
क्वचित्	३. कभी	भोजन	८. भोजन आदि
आतपउदक	९. मृगतृष्णा के	व्यवायादि	४. स्त्री प्रसङ्गादि से
निभान्	१०. समान	व्यसन	५. व्यसनों में
विषयान्	११. मिथ्या विषयों की ओर	लोलुपः ॥	६. फंस कर

श्लोकार्थ—और उस गृहस्थाश्रम में कभी व्यसनों में फंसकर पान, भोजन आदि मृगतृष्णा के समान मिथ्या विषयों की ओर दौड़ने लगता है ॥

सप्तमः श्लोकः

क्वचिच्चाशेषदोषनिषदनं पुरीषविशेषं तद्वर्णगुणनिर्मितमतिः सुवर्णमुपादित्सत्यग्निकामकातर इवोल्मुकपिशाचम् ॥७॥

पदच्छेद— क्वचित् च अशेष दोष निषदनम् पुरीष विशेषम् तद् वर्ण गुणनिर्मित मतिः सुवर्णम् उपादित्सति अग्निकाम कातरः इव उल्मुक पिशाचम् ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी	गुणनिर्मित	४. रजोगुण से प्रभावित
च	१३. और	मतिः	५. बुद्धि वाला होकर
अशेष	६. सारे	सुवर्णम्	११. सोने को
दोष	७. अनर्थों की	उपादित्सति	१३. पाने की चेष्टा करता है
निषदनम्	८. जड़	अग्नि काम	१४. जैसे अग्नि के लिए
पुरीष	९. अग्नि के मलरूप	कातरः	१५. व्याकुल पुरुष
विशेषम्	१०. धातु विशेष	इव	१२. उसी प्रकार
तद्	२. अग्नि के	उल्मुक	१७. उल्मुक
वर्ण	३. रंग वाले	पिशाचम् ॥	१८. पिशाच की ओर भागता है

श्लोकार्थ—कभी अग्नि के रंग वाले रजोगुण से प्रभावित बुद्धि वाला होकर सारे अनर्थों की जड़ अग्नि के मलरूप धातु विशेष सोने को उसी प्रकार पाने की चेष्टा करता है जैसे वन में अग्नि के लिये व्याकुल पुरुष उल्मुक अगिया वेताल की ओर भागता है ॥

अष्टमः श्लोकः

अथ कदाचिन्निवासपानीयद्रविणाद्यनेकात्मोपजीवनाभिनिवेश एतस्यां संसाराटव्यामितस्ततः परिधावति ॥८॥

पदच्छेद— अथ कदाचित् निवास पानीय द्रविण आदि अनेकात्म उपजीवन अभिनिवेशः एतस्याम् संसार अटव्याम् इतस्ततः परिधावति ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. तदनन्तर	उपजीवन	३. जीवित रखने वाले
कदाचित्	२. कभी	अभिनिवेश	९. आसक्त होकर
निवास	४. घर	एतस्याम्	१०. इस
पानीय	५. अन्न-जल और	संसार	११. संसार रूपी
द्रविण	६. धन	अटव्याम्	१२. जंगल में
आदि	७. आदि	इतस्ततः	१३. इधर-उधर
अनेकात्म	८. अनेक पदार्थों में	परिधावति ॥	१४. दौड़ता रहता है

श्लोकार्थ—तदनन्तर, कभी जीवित रखने वाले घर अन्न-जल और धन-आदि अनेक पदार्थों में आसक्त होकर इस संसार रूपी जङ्गल में इधर-उधर दौड़ता रहता है ॥

नवमः श्लोकः

क्वचिच्च वात्यौपम्यया प्रमदयाऽऽरोहमारोपितस्तत्कालरजसा रजनीभूत इवासाधुमर्यादो रजस्वलाक्षोऽपि दिग्देवता अतिरजस्वलमतिर्न विजानाति ॥९॥

पदच्छेद—क्वचित् च वात्या औपम्यया प्रमदया आरोहम् आरोपितः तत् काल रजसा रजनी भूतः इव असाधु मर्यादः रजस्वलाक्षः अपि दिग्देवता अति रजस्वलमतिः न विजानाति ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	२.	कभी	इव	११.	जैसा
च	१.	और	असाधुः	१२.	अनुचित
वात्या	३.	बवंडर के	मर्यादः	१३.	आचरण करता है
उपम्यया	४.	समान	रजस्वलाक्षः	१४.	आँखों में रजोगुण की धूल भर जाने से
प्रमदया	५.	स्त्री	अपि	१९.	भी
आरोहम्	६.	गोद में	दिग्देवता	१८.	दिशाओं के देवताओं को
आरोपितः	७.	बैठा लेती है	अति	१५.	अत्यधिक
तत् काल	८.	तो तत्काल	रजस्वल	१६.	रजोगुणी
रजसा	९.	राग के कारण	मतिः	१७.	बुद्धि हो जाने के कारण
रजनीभूतः	१०.	मोहान्धकार के	न विजानाति ॥	२०.	नहीं जानता है

श्लोकार्थ—और कभी बवंडर के समान स्त्री गोद में बैठा लेती है तो तत्काल राग के कारण मोहान्धकार के जैसा अनुचित आचरण करता है। आँखों में रजोगुण की धूल भर जाने से अत्यधिक रजोगुणी बुद्धि हो जाने के कारण दिशाओं के देवताओं को भी नहीं जानता है ॥

दशमः श्लोकः

क्वचित्सकृदवगतविषयवैतथ्यः स्वयं पराभिध्यानेन विभ्रंशितस्मृतिस्तयैव मरीचितोयप्रायांस्तानेवाभिधावति ॥१०॥

पदच्छेद—क्वचित् सकृत् अवगत विषय वैतथ्यः स्वयम् पराभिध्यानेन विभ्रंशित स्मृतिः तयैव मरीचितोय प्रायान् तान् एव अभिधावति ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	कभी	विभ्रंशित	९.	नष्ट हो जाने से
सकृत्	३.	एक बार	स्मृतिः	८.	विवेक बुद्धि के
अवगत	६.	जान लेने पर	तयैव	१०.	उसी (भ्रष्ट बुद्धि) से
विषय	४.	विषयों का	मरचितोय	११.	मृग तृष्णा के समान
वैतथ्यः	५.	मिथ्यात्व	प्रायान्	१३.	विषयों की ओर
स्वयम्	२.	अपने आप	तान्-एव	१२.	उन्हीं
पराभिध्यानेन	७.	देहात्म बुद्धि के कारण	अभिधावति ॥	१४.	दौड़ने लगता है

श्लोकार्थ—कभी अपने आप एक बार विषयों का मिथ्यात्व जान लेने पर देहात्म बुद्धि के कारण विवेक बुद्धि के नष्ट हो जाने से उसी भ्रष्ट बुद्धि से मृग तृष्णा के समान उन्हीं विषयों की ओर दौड़ने लगता है ॥

एकादशः श्लोकः

क्वचिदुलूकझिल्लीस्वनवदतिपरुषरभसाटोपं प्रत्यक्षं परोक्षं वा रिपुराजकुलनिर्भर्त्सितेनातिव्यथितकर्णमूलहृदयः ॥११॥

पदच्छेद— क्वचित् उलूक-झिल्ली स्वनवत् अति परुष रभस आटोपम् प्रत्यक्षम् परोक्षम् वा रिपु राजकुल निर्भर्त्सितेन अतिव्यथित कर्णमूल हृदयः ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी	रिपु	९. शत्रुओं
उलूक-झिल्ली	६. उल्लू और झींगुरों के	राजकुल	१०. तथा राजा की
स्वनत् अति	५. शब्द करने वाले	निर्भर्त्सितेन	११. डरावनी बातें
परुष-रभस	७. कठोर-तीक्ष्ण	अति	१४. अधिक
आटोपम्	८. शब्द समूह के समान	व्यथित	१५. कष्ट देती हैं
प्रत्यक्षम्	२. प्रत्यक्ष रूप से	कर्णमूल	१२. कान और
परोक्षम्	४. परोक्षरूप से	हृदयः ॥	१३. हृदय को
वा	३. अथवा		

श्लोकार्थ—कभी प्रत्यक्षरूप से अथवा परोक्षरूप से शब्द करने वाले उल्लू और झींगुरों के कठोर-तीक्ष्ण शब्द-समूह के समान शत्रुओं तथा राजा की डरावनी बातें कान और हृदय को अधिक कष्ट देती हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

स यदा दुग्धपूर्वसुकृतस्तदा कारस्करकाकतुण्डाद्यपुण्यद्रुमलताविषोदपानवदुभयार्थशून्यद्रविणान् जीवन्मृतान् स्वयं जीवन्म्रियमाण उपधावति ॥१२॥

पदच्छेद—सः यदा दुग्धपूर्व सुकृतः तदा कारस्कर काक तुण्ड आदि अपुण्य द्रुमलता विष उदपानवत् उभयार्थ शून्य द्रविणान् जीवन्मृतान् स्वयम् जीवन् म्रियमाणः उपधावति ॥

शब्दार्थ—

सः	२. उसके	उदपानवत्	११. कुयें के समान
यदा	१. जब	उभयार्थ	१२. इस लोक और परलोक दोनों से ही
दुग्ध	४. क्षीण हो जाते हैं	शून्य	१३ वह रहित हो जाता है (और)
पूर्व-सुकृतः	३. पहले के किये हुये पुण्य	द्रविणान्	१४. धन हीन के समान
तदा	५. तब	जीवन्	१५. जीवित ही
कारस्कर	६. कारस्कर	मृतान्	१६. मुर्दे के जैसा हो जाता है
काकतुण्ड	७ काक तुण्ड	स्वयम्	१८. अपने आप
आदि अपुण्य	८. आदि पाप	जीवन्	१७. जीते जी
द्रुमलता	९. वृक्षों-लताओं तथा	म्रियमाणः	१९. मरे हुये जैसा
विष	१०. विषैले	उपधावति ॥	२०. इधर-उधर भटकता रहता है

श्लोकार्थ—जब उसके पहले के किये पुण्य क्षीण हो जाते हैं तब कारस्कर काकतुण्ड आदि पाप वृक्षों, लताओं तथा विषैले कुयें के समान इस लोक और परलोक दोनों से ही वह रहित हो जाता है। और धनहीन के समान जीवित ही मुर्दे के जैसा हो जाता है। जीते जी अपने आप मरे हुये जैसा इधर-उधर भटकता रहता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

एकदासत्प्रसङ्गान्निकृतमतिर्व्युदकस्रोतः स्खलनवदुभयतोऽपि दुःखदं पाखण्डमभियाति ॥१३॥

पदच्छेद—एकदा असत् प्रसङ्गात् निकृतमतिः व्युदकस्रोतः स्खलन वत् उभयतः अपि दुःखदम् पाखण्डम् अभियाति ॥

शब्दार्थ—

एकदा	१.	कभी-कभी	स्खलन	८.	गिरे हुये के
असत्	२.	असत् पुरुषों के	वत्	९.	समान
प्रसङ्गात्	३.	सङ्ग से	उभयतः	१०.	लोक-परलोक में
निकृत	५.	बिगड़ जाने से	अपि	११.	भी
मतिः	४.	बुद्धि के	दुःखदम्	१२.	दुःख देने वाले
व्युदक	६.	सूखी	पाखण्डम्	१३.	पाखण्ड में
स्रोतः	७.	नदी में	अभियाति ॥	१४.	फंस जाता है

श्लोकार्थ—कभी-कभी असत् पुरुषों के सङ्ग से बुद्धि के बिगड़ जाने से सूखी नदी में गिरे हुये के समान लोक-परलोक में दुःख देने वाले पाखण्ड में फंस जाता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यदा तु परबाधयान्ध आत्मने नोपनमति तदा हि पितृपुत्रबर्हिष्मतः पितृपुत्रान् वा स खलु भक्षयति ॥१४॥

पदच्छेद—यदा तु परबाधया अन्धः आत्मने न उपनमति तदा हि पितृपुत्र बर्हिष्मतः पितृपुत्रान् वा स खलु भक्षयति ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	पितृ	८.	पिता
तु	९.	और	पुत्र	१०.	पुत्र का
परबाधया	३.	दूसरों को सताने से	बर्हिष्मतः	११.	धन रखने वालों को
अन्धः	४.	अन्न	पितृ पुत्रान्	१३.१४.	पिता या पुत्र को
आत्मने	२.	उसे	वा	१२.	अथवा
न उपनमति	५ ६.	नहीं प्राप्त होता है	सः	१६.	वह
तदा	७.	तब	खलु	१७.	निश्चय ही
हि	१५.	ही	भक्षयति ॥	१८.	खा जाना चाहता है

श्लोकार्थ—जब उसे दूसरों को सताने से अन्न नहीं प्राप्त होता है तब पिता और पुत्र का धन रखने वालों को अथवा पिता या पुत्र को वह निश्चय ही खा जाना चाहता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

क्वचिदासाद्य गृहं दाववत्प्रियार्थविधुरमसुखोदर्कं शोकाग्निना दह्यमानो भृशं निर्वेदमुपगच्छति ॥१५॥

पदच्छेद—क्वचित् आसाद्य गृहम् दाववत् प्रिय अर्थ विधुरम् सुख उदर्कम् शोक अग्निना दह्यमानः भृशम् निर्वेदम् उपगच्छति ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी		असुख	७. दुःख रूप	
आसाद्य	९. पहुँचता है (तो वहाँ)		उदर्कम्	६. परिणाम में	
गृहम्	८. घर में		शोक	१०. शोक की	
दाववत्	२. दावानल के समान		अग्निना	११. आग से	
प्रिय	३. प्रिय		दह्यमानः	१२. जलता हुआ	
अर्थ	४. विषयों से		भृशम्	१३. अत्यधिक	
विधुरम्	५. शून्य एवं		निर्वेदम्	१४. खिन्नता को	
			उपगच्छति ॥	१५. प्राप्त होता है	

श्लोकार्थ—कभी दावानल के समान प्रिय विषयों से शून्य एवं परिणाम में दुःख रूप घर में पहुँचता है तो वहाँ शोक की अग्नि से जलता हुआ अत्यधिक खिन्नता को प्राप्त होता है ॥

षोडशः श्लोकः

क्वचित्कालविषमितराजकुलरक्षसापहृतप्रियतमधनासुः प्रमृतक इव विगतजीवलक्षण आस्ते ॥१६॥

पदच्छेद—क्वचित् काल विषमित राजकुल रक्षसा अपहृत प्रियतम धन असुः प्रमृतक इव विगत जीवलक्षणः आस्ते ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी	धन	७. धनरूपी
काल	२. काल के द्वारा	असुः	८. प्राणों को
विषमित	३. प्रतिकूल किये गये	प्रमृतक	१०. मरे हुये के
राजकुल	४. राजकुल रूपी	इव	११. समान
रक्षसा	५. राक्षस	विगत जीव	१२. निर्जीव
अपहृत	९. हरण कर लेते हैं (और यह)	लक्षण	१३. जैसा
प्रियतम	६. इसके परम प्रिय	आस्ते ॥	१४. हो जाता है

श्लोकार्थ—कभी काल के द्वारा प्रतिकूल किये गये राजकुल रूपी राक्षस इसके परम प्रिय धन रूपी प्राणों को हरण कर लेते हैं और यह मरे हुये के समान निर्जीव जैसा हो जाता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

कदाचिन्मनोरथोपगतपितृपितामहाद्यसत्सदिति स्वप्ननिर्वृ तिलक्षण-मनुभवति ॥१७॥

पदच्छेद—कदाचित् मनोरथ उपगतपितृपितामह आदि असत् सत् इति स्वप्न निर्वृ ति लक्षणम् अनुभवति ॥

शब्दार्थ—

कदाचित्	१. और कभी	असत्	७. मिथ्या पदार्थों को ही
मनोरथ	२. मनोरथ के	सत्-इति	९. सत्य-ऐसा
उपगत	३. पदार्थों के समान	स्वप्न	८. स्वप्न के समान
पितृ	४. पिता	निर्वृ ति	११. सुख का
पितामह	५. पितामह	लक्षणम्	१०. क्षणिक
आदि	६. आदि	अनुभवति ॥	१२. अनुभव करता है

श्लोकार्थ—और कभी मनोरथ के पदार्थों के समान पिता-पितामह आदि मिथ्या पदार्थों को ही स्वप्न के समान सत्य ऐसा क्षणिक सुख का अनुभव करता है ।

अष्टादशः श्लोकः

क्वचित् गृहाश्रमकर्मचोदनातिभरगिरिमारुरुक्षमाणो लोकव्यसनकर्षितमनाः कण्टकशर्कराक्षेत्रं प्रविशन्निव सीदति ॥१८॥

पदच्छेद—क्वचित् गृहाश्रम कर्म चोदनातिभरगिरिम् आरुरुक्षमाणः लोकव्यसन कर्षितमनाः कण्टक शर्करा क्षेत्रम् प्रविशन् इव सीदति ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी	व्यसन	१०. व्यवहार से
गृहाश्रम	२. गृहस्थाश्रम के लिये	कर्षित	११. आकर्षित
कर्म	४. कर्म विधि का	मनाः	१२. मन वाला (वह कर्म करता हुआ)
चोदना	३. बताये गये	कण्टक	१३. कांटे और
अति	७. अत्यधिक	शर्करा	१४. कंकड़ों से
भर	८. विस्तार किया गया है	क्षेत्रम्	१५. भरे हुये खेत में
गिरिम्	५. पर्वत को	प्रविशन्	१६. प्रवेश किये हुये व्यक्ति के
आरुरुक्षमाणः ।	६. चढ़ाई के समान	इव	१७. समान
लोक	९. लोगों के	सीदति ॥	१८. दुःखी होता है

श्लोकार्थ—कभी गृहस्थाश्रम के लिये बताये गये कर्म विधिका पर्वत की चढ़ाई के समान अत्यधिक विस्तार किया गया है। लोगों के व्यवहार से आकर्षित मनवाला वह कर्म करता हुआ कांटे और कंकड़ों से भरे हुये खेत में प्रवेश करते हुये व्यक्ति के समान दुःखी होता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

क्वचिच्च दुःसहेन कायाभ्यन्तरवह्निना गृहीतसारः स्वकुटुम्बाय क्रुध्यति ॥१९॥

पदच्छेद—क्वचित् च दुःसहेन काय अभ्यन्तर वह्निना गृहीतसारः स्व कुटुम्बाय क्रुध्यति ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	२. कभी	वह्निना	६. अग्नि (जठराग्नि से)
च	१. और	गृहीतसारः	७. अधीर होकर
दुःसहेन	३. कठिन	स्व	८. अपने
काय	४. पेट की	कुटुम्बाय	९. परिवार पर ही
अभ्यन्तर	५. आन्तरिक	क्रुध्यति ॥	१०. क्रोध करता है

श्लोकार्थ—और कभी कठिन पेट की आन्तरिक अग्नि (जठराग्नि) से अधीर होकर अपने परिवार पर ही क्रोध करता है ॥

विंशः श्लोकः

स एव पुनर्निद्राजगरगृहीतोऽन्धे तमसि मग्नः शून्यारण्य इव शेते नान्यत् किञ्चन वेद शव इवापविद्धः ॥२०॥

पदच्छेद—सः एव पुनः निद्रा अजगर गृहीतः अन्धे तमसि मग्नः शून्य अरण्य इव शे तेन अन्यत् किञ्चन वेद शव इव अपविद्धः ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वह	अरण्य	११. वन में
एव	२. ही	इव	१५. जैसा
पुनः	३. फिर से जब	शेते	१६. सोया पड़ा रहता है
निद्रा	४. निद्रारूपी	न	१९. नहीं
अजगर	५. अजगर के द्वारा	अन्यत्	१७. और
गृहीतः	६. पकड़ा जाता है (तब)	किञ्चन	१८. कुछ भी
अन्धे	७. अज्ञानरूप	वेद	२०. जानता है
तमसि	८. अन्धकार में	शव	१२. मुर्दे के
मग्नः	९. डूबकर	इव	१३. समान
शून्य	१०. सूने	अप विद्धः ॥	१४. त्यागा हुआ

श्लोकार्थ—वह ही फिर से जब निद्रारूपी अजगर के द्वारा पकड़ा जाता है तब अज्ञानरूप अन्धकार में डूबकर सूने वन में मुर्दे के समान त्यागा हुआ जैसा सोया पड़ा रहता है। और कुछ भी नहीं जानता है ॥

एकविंशः श्लोकः

कदाचिद्भग्नमानदंष्ट्रो दुर्जनदन्दशूकैरलब्धनिद्राक्षणो व्यथितहृदयेनानुक्षीयमाणविज्ञानोऽन्धकूपेऽन्धवत्पतति ॥२१॥

पदच्छेद—कदाचित् भग्न मानदंष्ट्रो दुर्जन दन्दशूकैः अलब्धनिद्राक्षणः व्यथित हृदयेन अनुक्षीयमाण विज्ञानः अन्धकूपे अन्धवत् पतति ॥

शब्दार्थ—

कदाचित्	१. कभी	व्यथित	११.	दुःखी
भग्न	७. टूट जाते हैं (और)	हृदयेन	१२.	हृदय से
मान	५. गर्वरूपी	अनुक्षीय	१३.	क्षण-क्षण में
दंष्ट्रः	६. दाँत	माण	१५.	क्षीण होते रहने से
दुर्जन	२. दुष्ट रूपी	विज्ञानः	१४.	विवेक शक्ति के
दन्द	३. हिंसक	अन्ध	१६.	अन्धेरे
शूकैः	४. जीवों के द्वारा (इसके)	कूपे	१७.	कुयें में
अलब्ध	१०. न आने पर	अन्ध	१८.	अन्धे की
निद्रा	९. नींद	वत्	१९.	भाँति
क्षणः	८. एक क्षण भी	पतति ॥	२०.	जा गिरता है

श्लोकार्थ—कभी दुष्ट रूपी हिंसक जीवों के द्वारा इसके गर्वरूपी दाँत टूट जाते हैं और एक क्षण भी नींद न आने पर दुःखी हृदय से क्षण-क्षण में विवेक शक्ति के क्षीण होते रहने से अन्धेरे कुयें में अन्धे की भाँति जा गिरता है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

कर्हि स्म चित्काममधुलवान् विचिन्वन् यदा परदारपरद्रव्याण्यवरुन्धानो राज्ञा स्वामिभिर्वा निहतः पतत्यपारे निरये ॥२२।

पदच्छेद—कर्हि स्म चित् काम मधुलवान् विचिन्वन् यदा परदार परद्रव्याणि अवरुन्धानः राज्ञा स्वामिभिर्वा निहतः पतति अपारे निरये ॥

शब्दार्थ—

कर्हि स्म चित्	१. कभी	अवरुन्धान	९.	उड़ाना चाहता है
काम	२. विषय सुख रूपी	राज्ञा	१०.	तो राजा
मधु	३. मधु	स्वामिभिः	१२.	स्वामी के द्वारा
लवान्	४. कणों को	वा	११.	अथवा
विचिन्वन्	५. ढूंढते-ढूंढते	निहतः	१३.	मार दिया जाने पर
यदा	६. जब ये	पतति	१६.	गिर पड़ता है
परदार	७. पर स्त्री या	अपारे	१४.	अपार
परद्रव्याणि	८. दूसरे के धन को	निरये ॥	१५.	नरक में

श्लोकार्थ—कभी विषय सुख रूपी मधु कणों को ढूंढते-ढूंढते जब ये परस्त्री या दूसरे के धन को उड़ाना चाहता है तो राजा अथवा स्वामी के द्वारा मार दिया जाने पर अपार नरक में गिर पड़ता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अथ च तस्मादुभयथापि हि कर्मास्मिन्नात्मनः संसारावपनमुदाहरन्ति ॥२३॥

पदच्छेद—अथ च तस्मात् उभयथा अपि हि कर्म अस्मिन् आत्मनः संसार आवपनम् उदाहरन्ति ॥

शब्दार्थ—

अथ च	२.	कहा गया है कि	अस्मिन्	६.	इस
तस्मात्	१.	इसीलिए	आत्मनः	७.	जीव को
उभयथा	३.	दोनों प्रकार के	संसार	८.	संसाररूपी
अपि हि	४.	ही	आवपनम्	९.	कर्म क्षेत्र की
कर्म	५.	कर्म	उदाहरन्ति ॥	१०.	प्राप्ति कराने वाले हैं

श्लोकार्थ—इसी लिये कहा गया है कि दोनों प्रकार के ही कर्म इस जीव को संसार रूपी कर्म-क्षेत्र की प्राप्ति कराने वाले हैं।

चतुर्विंशः श्लोकः

मुक्तस्ततो यदि बन्धाद्देवदत्त उपाच्छिनत्ति तस्मादपि विष्णुमित्र इत्यनवस्थितिः ॥२४॥

पदच्छेद—मुक्तः ततो यदि बन्धात् देवदत्तः उपाच्छिनत्ति तस्मात् अपि विष्णु मित्रः इति अनवस्थितिः ॥

शब्दार्थ—

मुक्तः ततो	३.	छूट भी गया तो	तस्मात्	६.	उससे
यदि	१.	यदि	अपि	७.	भी
बन्धात्	२.	बन्धन से	विष्णुमित्रः	८.	विष्णुमित्र (छीन लेता है)
देवदत्तः	४.	देवदत्त (उसके धन को)	इति	९.	इस प्रकार
उपाच्छिनत्ति	५.	छीन लेता है	अनवस्थितिः ॥	१०.	कोई निश्चय नहीं है

श्लोकार्थ—यदि बन्धन से छूट भी गया तो देवदत्त उसके धन को छीन लेता है। उससे भी विष्णुमित्र छीन लेता है। इस प्रकार कोई निश्चय नहीं है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

क्वचिच्च शीतवाताद्यनेकाधिदैविकभौतिकात्मीयानां दशानां प्रतिनिवारणेऽकल्पो दुरन्तचिन्तया विषण्ण आस्ते ॥२५॥

पदच्छेद—क्वचित् शीतवात आदि अनेक आधिदैविक भौतिकआत्मीयानाम् दशानाम् प्रतिनिवारणे अकल्पः दुरन्त चिन्तया विषण्णः आस्ते ॥

शब्दार्थ—

क्वचित् च	१.	कभी-कभी	दशानाम्	७.	स्थितियों के
शीत-वात	२.	शीत वायु	प्रतिनिवारणे	८.	निवारण करने में
आदि अनेक	३.	आदि अनेकों	अकल्पः	९	असमर्थ होने पर
आधिदैविक	४.	आधिदैविक	दुरन्तचिन्तया	१०.	अपार चिन्ताओं के कारण
भौतिक	५.	आधिभौतिक (और)	विषण्णः	११.	उदास
आत्मीयानाम्	६.	आध्यात्मिक दुःख को	आस्ते ॥	१२.	हो जाता है

श्लोकार्थ—कभी-कभी शीत, वायु आदि अनेकों आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक स्थितियों के निवारण करने में असमर्थ होने पर अपार चिन्ताओं के कारण उदास हो जाता है।

षड्विंशः श्लोकः

क्वचिन्मिथो व्यवहरन् यत्किञ्चिद्धनमन्येभ्यो वा काकिणिकामात्रमप्यपहरन् यत्किञ्चिद्वा विद्वेषमेति वित्तशाठ्यात् ॥२६॥

पदच्छेद—क्वचित् मिथः व्यवहरन् यत्किञ्चित् धनम् अन्येभ्यो वा काकिणिका मात्रम् अपि अपहरन् यत् किञ्चित् वा विद्वेषम् एति वित्तशाठ्यात् ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	कभी	मात्रम्	९.	भर
मिथः	२.	परस्पर	अपि	१०.	भी
व्यवहरन्	३.	व्यवहार करते समय	अपहरन्	१३.	चुरा लेता है तो
यत्किञ्चित्	५.	थोड़ा सा	यत्किञ्चित्	१२.	थोड़ा सा भी धन
धनम्	६.	धन	वा	११.	अथवा
अन्येभ्यः	४.	दूसरे का	विद्वेषम्	१५.	वैर
वा	७.	अथवा	इति	१६.	ठन जाता है
काकिणिका	८.	दमड़ी	वित्तशाठ्यात् ॥	१४.	बेईमानी के कारण

श्लोकार्थ—कभी परस्पर व्यवहार करते समय दूसरे का थोड़ा सा धन अथवा दमड़ी भर भी धन चुरा लेता है तो बेईमानी के कारण वैर ठन जाता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

अध्वन्यमुष्मिन्निम उपसर्गास्तथा सुखदुःखरागद्वेषभयाभिमानप्रमादोन्मादशोकमोहलोभमात्सर्येर्ष्यावमानक्षुत्पिपासाधिव्याधिजन्मजरामरणादयः॥२७॥

पदच्छेद—अध्वनि अमुष्मिन् इमे उपसर्गाः तथा सुखदुःख राग द्वेष भय अभिमान प्रमाद उन्माद शोक मोह लोभ मात्सर्य ईर्ष्या अवमान क्षुत्पिपासा आधिव्याधिजन्म जरामरणआदयः ॥

शब्दार्थ—

अध्वनि	२.	मार्ग में	शोक-मोह	९.	शोक-मोह
अमुष्मिन्	१.	इस	लोभ-मात्सर्य	१०.	लोभ-मात्सर्य
इमे	१९.	ये	ईर्ष्या अवमान	११.	ईर्ष्या-अपमान
उपसर्गाः	२०.	विघ्न हैं	क्षुत्-पिपासा	१२.	भूख-प्यास
तथा	३.	इसी प्रकार के	आधि	१३.	मनोरोग
सुखदुःख	४.	सुख-दुःख	व्याधि	१४.	शरीर रोग
रागद्वेष	५.	राग-द्वेष	जन्म	१५.	जन्म
भय-अभिमान	६.	भय-अभिमान	जरा	१६.	बुढ़ापा (और)
प्रमाद	७.	प्रमाद	मरण	१७.	मृत्यु
उन्माद	८.	उन्माद	आदयः ॥	१८.	आदि

श्लोकार्थ—इस मार्ग में उसी प्रकार के सुख, दुख, राग, द्वेष, भय अभिमान, प्रमाद, उन्माद, शोक मोह, लोभ, मात्सर्य, ईर्ष्या, अपमान, भूख, प्यास, मनोरोग, शरीररोग, जन्म, बुढ़ापा और मृत्यु आदि ये विघ्न हैं ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

क्वापि देवमायया स्त्रिया भुजलतोपगूढः प्रस्कन्नविवेकविज्ञानो यद्विहारगृहारम्भाकुलहृदयस्तदाश्रयावसक्तसुतदुहितृकलत्रभाषितावलोकविचेष्टितापहृतहृदय आत्मानमजितात्मापारेऽन्धे तमसि प्रहिणोति ॥२८॥

पदच्छेद—

क्वापि देव मायया स्त्रिया भुजलता उपगूढः प्रस्कन्नविवेक विज्ञानः यद्विहारगृहारम्भ आकुल हृदयः तद् आश्रय अवसक्त सुत दुहितृ कलत्र भाषित अवलोक विचेष्टित अपहृत हृदयः आत्मानम् अजित आत्मा अपारे अन्धेतमसि प्रहिणोति ॥

शब्दार्थ—

क्वापि	१.	किसी समय	अवसक्त	२२.	आसक्त होकर
देव मायया	२.	देव माया रूपिणी	सुत	१६.	पुत्र
स्त्रिया	३.	स्त्री की	दुहितृ	१७.	पुत्री
भुजलता	४.	भुजा रूपी लता में	कलत्र	१८.	स्त्री के
उपगूढः	५.	बँधकर	भाषित	१९.	वचनों में तथा
प्रस्कन्न	८.	रहित हो जाता है	अवलोक	२०.	चितवन और
विवेक	६.	विवेक	विचेष्टित	२१.	चेष्टाओं में
विज्ञानः	७.	ज्ञान से	अपहृत	२१.	हरण किये गये
यद्	९.	तब उसी के लिये	हृदय	२३.	हृदय वाला हो जाता है
विहार	१०.	क्रीडा	आत्मानम्	२६.	अपने को
गृहारम्भ	११.	गृह बनवाने में	अजितात्मा	२५.	इस प्रकार अजितेन्द्रिय व्यक्ति
आकुल	१३.	व्याकुल रहता है	अपारे	२७.	अपार
हृदयः	१२.	उसका हृदय	अन्धे	२८.	अन्धकार मय
तद्	१४.	उसी के	तमसि	२९.	नरक में
आश्रय	१५.	आश्रित	प्रहिणोति ॥	३०.	गिरा देता है

श्लोकार्थ——किसी समय देव माया रूपिणी स्त्री की भुजारूपी लता में बंधकर विवेक ज्ञान से रहित हो जाता है। तब उसी के लिये क्रीडागृह बनवाने में उसका हृदय व्याकुल रहता है। उसी के आश्रित पुत्र, पुत्री, स्त्री के वचनों में तथा चितवन और चेष्टाओं में आसक्त होकर हरण किये गये हृदय वाला हो जाता है। इस प्रकार अजितेन्द्रिय व्यक्ति अपने को अपार अन्धकारमय नरक में गिरा देता है।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

कदाचिदीश्वरस्य भगवतो विष्णोश्चक्रात्परमाण्वादिद्विपरार्धापवर्गकालोपलक्षणात्परिवर्तितेन वयसा रंहसा हरत आब्रह्मतृणस्तम्बादीनां भूतानामनिमिषतो मिषतां वित्रस्तहृदयस्तमेवेश्वरं कालचक्रनिजायुधं साक्षाद्भगवन्तं यज्ञपुरुषमनादृत्य पाखण्डदेवताः कङ्कगृध्रबकवटप्रायाः आर्यसमयपरिहृताः साङ्केत्येनाभिधत्ते ॥२९॥

पदच्छेद—कदाचित् ईश्वरस्य भगवतः विष्णोः चक्रात् परमाणु आदि द्विपरार्ध अपवर्ग काल उपलक्षणात् परिवर्तितेन वयसा रंहसा हरते आब्रह्म तृणस्तम्ब आदीनाम् भूतानाम् अनिमिषतः मिषताम् वित्रस्त हृदयः तम् एव ईश्वरम् कालचक्र निज आयुधम् साक्षात् भगवन्तम् यज्ञ पुरुषम् अनादृत्य पाखण्ड देवताः कङ्क गृध्र बक वट प्रायाः आर्य समय परिहृताः साङ्केत्येन अभिधत्ते ॥

शब्दार्थ—

कदाचित्	१.	कभी	अनिमिषतः	२१.	निरन्तर (संहार करता है)
ईश्वरस्य	२.	परमात्मा	मिषताम्	२२.	कोई उसकी गति में
भगवतः	३.	भगवान्	वित्रस्तहृदयः	२३.	बाधा नहीं डाल सकता
विष्णोः	४.	विष्णु का	तम् एव	२७.	उसी
चक्रात्	५.	चक्र (जो)	ईश्वरम्	२४.	ईश्वररूप
परमाणु	६.	परमाणु से लेकर	कालचक्र	२५.	काल-चक्र ही
आदि	८.	आदि	निज आयुधम्	२६.	जिनका अपना शस्त्र है
द्विपरार्ध	७.	दो परार्ध	साक्षात्	२८.	साक्षात्
अपवर्ग	९.	मोक्ष	भगवन्तम्	२९.	भगवान्
काल	१०.	काल	यज्ञपुरुषम्	३०.	यज्ञ पुरुष की
उपलक्षणात्	११.	स्वरूप	अनादृत्य	३१.	आराधना छोड़कर
परिवर्तितेन	१२.	निरन्तर बदलने वाली	पाखण्ड	३२.	पाखण्डी बनकर
वयसा	१३.	अवस्थाओं के	देवताः	३९.	देवताओं का
रंहसा	१४.	वेग से	कङ्क-गृध्र	३३.	कङ्क-गीध
हरते	१५.	संहार करता रहता है	बक-वट	३४.	बगुला बटेर के
आब्रह्म	१६.	ब्रह्मा से लेकर	प्रायाः	३५.	समान
तृण	१७.	तृण	आर्य समय	३६.	आर्य शास्त्र से
स्तम्ब	१८.	पर्यन्त	परिहृताः	३७.	बहिष्कृत
आदीनाम्	१९.	सभी	साङ्केत्येन	३८.	प्रमाण रहित
भूतानाम्	२०	प्राणियों का	अभिधत्ते ॥	४०.	आश्रय लेता है

श्लोकार्थ—कभी परमात्मा भगवान् विष्णु का चक्र जो परमाणु से लेकर दो परार्ध आदि मोक्ष काल स्वरूप निरन्तर बदलने वाली अवस्थाओं के वेग से संहार करता रहता है, ब्रह्मा से लेकर तृण पर्यन्त सभी प्राणियों का निरन्तर संहार करता है। कोई उसकी गति में बाधा नहीं डाल सकता। ईश्वररूप काल-चक्र ही जिनका अपना शस्त्र है उसी साक्षात् भगवान् यज्ञ पुरुष की आराधना छोड़कर पाखण्डी बनकर कङ्क, गीध, बगुला, बटेर के समान आर्यशास्त्र से बहिष्कृत एवं प्रमाण रहित देवताओं का आश्रय लेता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

यदा पाखण्डिभिरात्मवञ्चितैस्तैरुरु वञ्चितो ब्रह्मकुलं समावसंस्तेषां शीलमुपनयनादिश्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानेन भगवतो यज्ञपुरुषस्याराधनमेव तदरोचयन् शूद्रकुलं भजते निगमाचारेऽशुद्धितो यस्य मिथुनीभावः कुटुम्बभरणं यथा वानरजातेः ॥३०॥

पदच्छेद—यदा पाखण्डिभिः आत्मवञ्चितैः उरु वञ्चितः ब्रह्मकुलम् समावसन् तेषाम् शीलम् उपनयन आदि श्रौत स्मार्त कर्म अनुष्ठानेन भगवतः यज्ञ पुरुषस्य आराधनम् एव तद् अरोचयन् शूद्रकुलम् भजते निगम आचारे अशुद्धितः यस्य मिथुनीभावः कुटुम्ब भरणम् यथा वानर जातेः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	पुरुषस्य	१९.	पुरुष की
पाखण्डिभिः	२.	पाखण्डियों के द्वारा	आराधनम्	२०.	आराधना
आत्म	३.	स्वयम्	एव	२१.	ही
वञ्चितैः	४.	ठगे हुये	तद्	२२.	उसे
तैः उरु	५.	उन लोगों के द्वारा (अत्यधिक)	अरोचयन्	२३.	अच्छी नहीं लगती (वह)
वञ्चितः	६.	ठगा जाता है तो	शूद्र	२७.	शूद्र के
ब्रह्मकुलम्	७.	ब्राह्मणों की	कुलम्	२८.	कुल में
समावसन्	८.	शरण लेता है	भजते	२९.	प्रवेश करता है
तेषाम्	९.	उनके	निगम	२४.	वेदों में वर्णित
शीलम्	१०.	संस्कार	आचारे	२५.	आचरण के अनुकूल
उपनयन	११.	उपनयन	अशुद्धितः	२६.	शुद्धि न होने से
आदि	१२.	इत्यादि	यस्य	३०.	उसका स्वभाव
श्रौत	१३.	श्रुतियों और	मिथुनी	३५.	स्त्री
स्मार्त	१४.	स्मृतियों में बताये गये	भावः	३६.	सेवन ही है
कर्म	१५.	कर्मों के	कुटुम्ब	३३.	परिवार का
अनुष्ठानेन	१६.	अनुष्ठान और	भरणम्	३४.	पालन-पोषण करना और
भगवतः	१७.	भगवान्	यथा	३२.	समान
यज्ञ	१८.	यज्ञ	वानर जातेः ॥	३१.	वानर जाति के

श्लोकार्थ—जब पाखण्डियों के द्वारा स्वयम् ठगे हुये उन लोगों के द्वारा अत्यधिक ठगा जाता है तो ब्राह्मणों की शरण लेता है। उनके संस्कार उपनयन इत्यादि, श्रुतियों और स्मृतियों में बताये गये कर्मों के अनुष्ठान और भगवान् यज्ञ पुरुष की आराधना ही इसे अच्छी नहीं लगती है। वह वेदों में वर्णित आचरण के अनुकूल शुद्धि न होने से शूद्र के कुल में प्रवेश करता है। उसका स्वभाव वानर जाति के समान परिवार का पालन-पोषण करना और स्त्री सेवन ही है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तत्रापि निरवरोधः स्वैरेण विहरन्नतिकृपणबुद्धिरन्योन्यमुखनिरीक्षणादिना ग्राम्यकर्मणैव विस्मृतकालावधिः ॥३१॥

पदच्छेद—तत्र अपि निरवरोधः स्वैरेण विहरन् अतिकृपणबुद्धिः अन्योन्य मुख निरीक्षण आदिना ग्राम्य कर्मणा एव विस्मृत काल अवधिः ॥

शब्दार्थ—

तत्र-अपि	१.	वहाँ पर भी	मुख	९.	मुख
निरवरोधः	२.	बिना रोक-टोक के	निरीक्षण	१०.	देखना
स्वैरेण	३	स्वच्छन्द	आदिना	११.	इत्यादि
विहरन्	४.	विहार करने से	ग्राम्य	१२.	विषय
अति	६.	अत्यन्त	कर्मणा	१३.	भोगों में
कृपण	७.	दीन हो जाती है (और)	एव	१४.	ही
बुद्धिः	५.	इसकी बुद्धि	विस्मृत	१६.	भूल जाता है
अन्योन्य	८.	एक दूसरे का	काल अवधिः ॥	१५.	मृत्यु काल का समय

श्लोकार्थ—वहाँ पर भी बिना रोक टोक के स्वच्छन्द विहार करने से इसकी बुद्धि अत्यन्त दीन हो जाती है और एक दूसरे का मुख देखना इत्यादि विषय भोगों में ही मृत्युकाल का समय भूल जाता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

क्वचित् द्रुमवदैहिकार्थेषु गृहेषु रंस्यन् यथा वानरः सुतदारवत्सलो व्यवायक्षणः ॥३२॥

पदच्छेद—क्वचित् द्रुमवत् ऐहिक अर्थेषु रंस्यन् यथा वानरः सुतदार वत्सलः व्यवायक्षणः ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१	कभी	यथा	८.	समान
द्रुमवत्	२.	वृक्षों के समान	वानरः	७.	बन्दरों के
ऐहिक	३.	लौकिक	सुतदार	९.	पुत्र-स्त्री आदि से
अर्थेषु	४.	सुख रूप फल वाले	वत्सलः	१०.	प्रेम करके
गृहेषु	५	घरों में ही	व्यवाय	११.	मैथुनादि विषयों में ही
रंस्यन्	६.	आसक्त होकर	क्षणः ॥	१२.	समय व्यतीत करता है

श्लोकार्थ—कभी वृक्षों के समान लौकिक सुख रूप फल वाले घरों में ही आसक्त होकर बन्दरों के समान पुत्र-स्त्री आदि से प्रेम करके मैथुनादि विषयों में ही समय व्यतीत करता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

एवमध्वन्यवरुन्धानो मृत्युगजभयात्तमसि गिरिकन्दरप्राये ॥३३॥

पदच्छेद— एवम् अध्वनि अवरुन्धानः मृत्युगजभयात् तमसि गिरिकन्दर प्राये ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	भयात्	१०. भयभीत होता है
अध्वनि	२. प्रवृत्ति मार्ग में	तमसि	४. रोगरूपी
अवरुन्धानः	३. पड़कर	गिरि	५. पर्वत की
मृत्यु	८. मृत्युरूपी	कन्दर	६. गुफा में
गज	९. हाथी से	प्राये ॥	७. फँस कर

श्लोकार्थ—इस प्रकार प्रवृत्ति मार्ग में पड़कर रोगरूपी पर्वत की गुफा में फंसकर मृत्युरूपी हाथी से भयभीत होता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

क्वचिच्छीतवाताद्यनेकदैविकभौतिकात्मीयानां दुःखानां प्रतिनिवारणेऽकल्पो दुरन्तविषयविषण्ण आस्ते ॥३४॥

पदच्छेद—क्वचित् शीत वात आदि अनेक दैविक भौतिक आत्मीयानाम् दुःखानाम् प्रतिनिवारणे अकल्पः दुरन्त विषय विषण्णः आस्ते ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी-कभी	दुःखानाम्	७. दुःखों की
शीतवात	२. शीत, वायु	प्रतिनिवारणे	८. निवृत्ति करने में
आदि अनेक	३. आदि-अनेक प्रकार	अकल्पः	९. असमर्थ होने पर
दविक	४. आधि दविक	दुरन्तविषय	१०. अपार विषयों की चिन्ता से
भौतिक	५. आधि भौतिक	विषण्णः	११. खिन्न
आत्मीयानाम्	६. आध्यात्मिक	आस्ते ॥	१२. हो जाता है

श्लोकार्थ—कभी-कभी शीत, वायु आदि अनेक प्रकार के आदि दैविक, आदि भौतिक और आध्यात्मिक दुःखों की निवृत्ति करने में असमर्थ होने पर अपार विषयों की चिन्ता से खिन्न हो जाता है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

क्वचिन्मिथो व्यवहरन् यत्किञ्चिद्धनमुपयाति वित्तशाठ्येन ॥३५॥

पदच्छेद—क्वचित् मिथः व्यवहरन् यत् किञ्चित् धनम् उपयाति वित्त शाठ्येन ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी	धनम्	५. धन
मिथः	२. आपस में	उपयाति	८. प्राप्त हो जाता है
व्यवहरन्	३. व्यापार करने पर	वित्तशाठ्येन ॥	७. कंजूसी करने से
यत् किञ्चित्	४. थोड़ा बहुत		

श्लोकार्थ—कभी आपस में व्यापार करने पर थोड़ा धन कंजूसी करने से प्राप्त हो जाता है ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

क्वचित्क्षीणधनः शय्यासनाशनाद्युपभोगविहीनो यावदप्रतिलब्धमनोरथोपगतादानेऽवसितमतिस्ततस्ततोऽवमानादीनि जनादभिलभते ॥३६॥

पदच्छेद - क्वचित् क्षीण धनः शय्या आसन अशन आदि उपभोग विहीनः यावद् प्रतिलब्ध मनोरथ उपगत आदाने अवसितमतिः ततः ततः अवमान आदीनि जनात् अभिलभते ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	कभी	अप्रतिलब्ध	१२.	नहीं प्राप्त करता है (तब उसे)
क्षीण	३.	नष्ट हो जाने पर	मनोरथ	११.	मनोरथों को
धनः	२.	धन के	उपगत	१३.	पाने की ही
शय्या	४.	सोने	आदाने	१४.	चेष्टा में ही
आसन	५.	बैठने और	अवसितमतिः	१५.	लगा रहता है
अशन	६.	खाने	ततः ततः	१६.	और जहाँ-तहाँ
आदि	७.	आदि	अवमान	१८.	अपमान
उपभोग	८.	उपभोग की सामग्री से	आदीनि	१९.	आदि वही
विहीनः	९.	रहित होकर	जनात्	१७.	लोगों के द्वारा
यावद् ॥	१०.	जब	अभिलभते	२०.	प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—कभी धन के नष्ट हो जाने पर सोने, बैठने और खाने आदि उपभोग की सामग्री से रहित होकर जब मनोरथों को नहीं प्राप्त करता है तब उसे पाने की चेष्टा में ही लगा रहता है और जहाँ तहाँ लोगों के द्वारा अपमान आदि प्राप्त करता है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

एवं वित्तव्यतिषङ्गविवृद्धवैरानुबन्धोऽपि पूर्ववासनया मिथ उद्वहत्यथापवहति ॥३७॥

एवम् वित्त व्यतिषङ्गविवृद्ध वैरानुबन्धः अपि पूर्व वासनया मिथः उद्वहति अथ अपवहति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	पूर्व	७.	पहले की
वित्त	२.	धन की	वासनया	८.	वासना से (विवश होकर)
व्यतिषङ्ग	३.	आसक्ति से	मिथः	९.	आपस में
विवृद्ध	५.	बैठ जाने पर	उद्वहति	१०.	सम्बन्ध बनाता है
वैरानुबन्धः	१४.	वैर-भाव	अथ	११.	और
अपि	६.	भी	अपवहति ॥	१२.	छोड़ता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार धन की आसक्ति से वैर-भाव बढ़ जाने पर भी पहले की वासना से विवश होकर आपस में सम्बन्ध बनाता है और छोड़ता है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

एतस्मिन् संसाराध्वनि नानाक्लेशोपसर्गबाधित आपन्नविपन्नो यत्र यस्तमु ह वावेतरस्तत्र विसृज्य जातं जातमुपादाय शोचन्मुह्यन् बिभ्यद्विवदन् क्रन्दन् संहृष्यन् गायन्नह्यमानःसाधुवर्जितो नैवावर्ततेऽद्यापि यत आरब्ध एष नरलोकसार्थो यमध्वनः पारमुपदिशन्ति ॥३८॥

पदच्छेद—एतस्मिन् संसार अध्वनि नाना क्लेश उपसर्ग बाधित आपन्न विपन्नः यत्र यः तम् उ ह वाव इतरः तत्र विसृज्य जातम् जातम् उपादाय शोचन् मुह्यन् बिभ्यत् विवदन् क्रन्दन् संहृष्यन् गायन् नह्यमानः साधु वर्जितः न एव आवर्तते अद्यापि यतः आरब्धः एषः नरलोक सार्थःयम् अध्वनः पारम् उपदिशन्ति ॥

शब्दार्थ—

एतस्मिन्	१.	इस	मुह्यन्	२१.	दुःखी होता है
संसार	२.	संसार रूपी	बिभ्यत्	२२.	भयभीत होता है
अध्वनि	३.	मार्ग में	विवदन्	२३.	झगड़ता है
नाना	४.	अनेक प्रकार के	क्रन्दन्	२४.	रोता है
क्लेश	५.	क्लेश और	संहृष्यन्	२५.	प्रसन्न होता है
उपसर्ग	६.	विघ्नबाधाओं से	गायन्	२६.	गाता है
बाधित	७.	बाधित होने पर	नह्यमानः	२७.	बंधता है और
आपन्न	८.	आपत्ति से	साधु	२८.	साधुओं से
विपन्नः	९.	दुःखी होता है	वर्जितः	१९.	वंचित होकर
यत्र	११.	जहाँ	न एव	३९.	नहीं ही
यः	१२	जो (मर जाता है)	आवर्तते	४०.	लौटा है
तम्	१३.	उसे	अद्यापि	३८.	अभी तक
उ ह वाव	१०.	और	यतः	३०.	जहाँ से
इतरः	१६.	दूसरे को	आरब्धः	३४.	आरम्भ हुई और
तत्र	१४	वहीं	एषः	३१.	इस जीव की
विसृज्य	१५	छोड़कर	नरलोक	३२.	मृत्यु लोक की
जातम्	१८.	जन्मे हुए को	सार्थः	३३.	यात्रा
जातम्	१७.	नये-नये	यमध्वनि	३५.	जिसे मार्ग की
उपादाय	१९.	साथ लेकर	पारम्	३६.	अन्तिम
शोचन्	२०.	शोक करता है	उपदिशन्ति ॥	३७.	स्थिति कहते हैं वहाँ

श्लोकार्थ—इस संसार रूपी मार्ग में अनेक प्रकार के क्लेश और विघ्नबाधाओं से बाधित होने पर आपत्ति से दुःखी होता है और जहाँ जो मर जाता है वहीं छोड़कर दूसरे नये-नये जन्मे हुए को साथ लेकर शोक करता है, दुःखी होता है, भयभीत होता है, झगड़ता है, रोता है, प्रसन्न होता है, गाता है, बंधता है और साधुओं से वंचित होता है। जहाँ से इस जीव की मृत्युलोक की यात्रा आरंभ हुई है और जिसे मार्ग की अन्तिम स्थिति कहते हैं वहाँ (उस परमात्मा तक) अभी तक नहीं ही लौटा है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

यदिदं योगानुशासनं न वा एतदवरुन्धते यन्न्यस्तदण्डा मुनय उपशमशीला उपरतात्मानः समवगच्छन्ति ॥३६॥

पदच्छेद—यद् इदम् योग अनुशासनम् न वा एतद् अवरुन्धते यत् न्यस्त दण्डाः मुनयः उपशमशीलाः उपरत आत्मानः समवगच्छन्ति ॥

शब्दार्थ—

यद्	२.	जो	न्यस्त	१०.	त्याग कर दिया है (ऐसे)
इदम्	१.	यह	दण्डाः	६.	शासन का
योग	३.	योग	मुनयः	१५.	मुनि जन (ही)
अनुशासनम्	४.	शास्त्र है	उपशमशीलाः	११.	निवृत्ति पारायण
न वा	६.	नहीं	उपरत	१२.	संयमी
एतद्	५.	इस परमात्मा तक	आत्मानः	१३.	स्वभाव वाले
अवरुन्धते	७.	पहुँच पाते हैं	समव	१५.	उसे प्राप्त
यत्	८.	जिन्होंने	गच्छन्ति ॥	१६.	कर पाते हैं

श्लोकार्थ—यह जो योग शास्त्र हैं, वह परमात्मा तक नहीं पहुँच पाता है। जिन्होंने शासन का त्याग कर दिया है ऐसे निवृत्ति-परायण संयमी स्वभाव वाले मुनिजन ही उसे प्राप्त कर पाते हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

यदपि दिगिभजयिनो यज्विनो ये वै राजर्षयः किं तु परं मृधे शयीरन्नस्यामेव ममेयमिति कृतवैरानुबन्धायां विसृज्य स्वयमुपसंहृताः ॥४०॥

पदच्छेद—यद् अपि दिगिभजयिनो यज्विनः ये वं राजर्षयः किम् तु परम् मृधे शयीरन् न अस्याम् एव मम इयम् इति कृत वैर अनुबन्धायाम् विसृज्य स्वयम् उपसंहृताः ॥

शब्दार्थ—

यद् अपि	१.	जो भी	अस्याम्	११.	इस पृथ्वी में
दिगिभ	३.	दिशाओं के हाथियों को	एव	१२.	ही
जयिनो	४.	जीतने वाले	मम	१४.	मेरी है
यज्विनः	५.	बड़े-बड़े यज्ञ करने वाले	इयम्	१३.	यह
ये वै	२.	जो	इति	१५.	इस प्रकार
राजर्षयः	६.	राजर्षि हैं	कृत	१६.	अहंकार करके
किम् तु	७.	उनकी भी	वैर	१७.	वैर के कारण
परम्	८.	वहाँ तक गति नहीं है	अनुबन्धायाम्	१८.	स्वरूप शरीर
मृधे	६.	वे संग्राम भूमि में	विसृज्य	१६.	छोड़ कर
शयीरन्	१०.	शरीर छोड़कर	स्वयम्	२०.	अपने आप
			उपसंहृताः ॥	२१.	परलोक चले जाते हैं

श्लोकार्थ— जो भी दिशाओं के हाथियों को जीतने वाले राजर्षि हैं, उनकी भी वहाँ तक गति नहीं है। वे संग्राम-भूमि में शरीर छोड़कर इस पृथ्वी में ही यह मेरी है इस प्रकार अहंकार करके वैर के कारणस्वरूप शरीर छोड़कर अपने आप परलोक चले जाते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

कर्मवल्लीमवलम्ब्य तत आपदः कथञ्चिन्नरकाद्विमुक्तः पुनरप्येवं संसाराध्वनि वर्तमानो नरलोकसार्थमुपयाति एवमुपरि गतोऽपि ॥४१॥

पदच्छेद—कर्मवल्लोम् अवलम्ब्य ततः आपदः कथञ्चित् नरकात् विमुक्तः पुनः अपि एवम् संसार अध्वनि वर्तमानः नरलोक सार्थम् उपयाति एवम् उपरिगतः अपि ॥

शब्दार्थ—

कर्म	१. अपने पुण्य कर्मों की	एवम्	१०. इसी प्रकार
वल्लीम्	२. लता का	संसार	११. संसार रूपी
अवलम्ब्य	३. आश्रय लेकर	अध्वनि	१२. मार्ग में
ततः	५. उन	वर्तमानः	१३. भटकता हुआ
आपदः	६. विपत्तियों से	नरलोक	१४. मृत्यु लोक के
कथञ्चित्	४. किसी प्रकार	सार्थम्	१५. साथियों में
नरकात्	७. नरक से	उपयाति	१६. मिल जाता है
विमुक्तः	८. छुटकारा पा जाता है	एवम्	१७. इसी प्रकार की स्थिति
पुनः अपि	९. तो फिर भी	उपरिगतः अपि॥	१८. ऊपर के लोकों की भी है

श्लोकार्थ—अपने पुण्य कर्मों की लता का आश्रय लेकर किसी प्रकार विपत्तियों से छुटकारा पा जाता है। तो फिर भी इसी प्रकार संसाररूपी मार्ग में भटकता हुआ मृत्यु लोक के साथियों में मिल जाता है। इसी प्रकार की स्थिति ऊपर के लोकों की भी है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

तस्येदमुपगायन्ति—

आर्षभस्येह राजर्षेर्मनसापि महात्मनः ।
नानुवर्त्मार्हति नृपो मक्षिकेव गरुत्मतः ॥४२॥

तस्य इदम् उपगायन्ति आर्षभस्य इह राजर्षेः मनसा अपि महात्मनः ।
न अनुवर्त्म अर्हति नृपः मक्षिका इव गरुत्मतः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१. उन भरत के विषय में	महात्मनः	८. महात्मा
इदम्	२. यह	न	१५ नहीं
उपगायन्ति	३. पण्डित जन कहते हैं कि	अनुवर्त्म	१४. अनुसरण
आर्षभस्य	१०. भरत के मार्ग का कोई भी	अर्हति	१६. कर सकता है
इह	७. इस संसार में	नृपः	११. राजा
राजर्षेः	९. राजर्षि	मक्षिका	५. मक्खी के
मनसा	१२. मन से	इव	६. समान
अपि	१३. भी	गरुत्मतः ॥	४. गरुड़ जी की होड़ में

श्लोकार्थ—उन भरत के विषय में पण्डित जन यह कहते हैं कि गरुड़ जी की होड़ में मक्खी के समान इस संसार में महात्मा राजर्षि भरत के मार्ग का कोई भी राजा मन से भी अनुसरण नहीं कर सकता है।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

यो दुस्त्यजान्दारसुतान् सुहृद्राज्यं हृदिस्पृशः ।
जहौ युवैव मलवदुत्तमश्लोकलालसः ॥४३॥

पदच्छेद— यः दुस्त्यजान् दार सुतान् सुहृत् राज्यम् हृदि स्पृशः ।
जहौ युवा एव मलवत् उत्तम श्लोक लालसः ॥

शब्दार्थ—

यः	१. जिन्होंने	जहौ	१२. त्याग दिया था
दुस्त्यजान्	६. कठिनाई से त्यागने योग्य	युवा एव	१०. युवावस्था में ही
दार, सुतान्	७. स्त्री, पुत्रादि	मलवत्	११ विष्ठा के समान
सुहृत्	८. स्वजन (और)	उत्तम	२. पुण्य
राज्यम्	९. राज्य को भी	श्लोक	३. कीर्ति (भगवान् श्री कृष्ण को)
हृदि-स्पृशः	५. अत्यन्त-मनोरम (तथा)	लालसः ॥	४. प्राप्त करने की इच्छा से

श्लोकार्थ—जिन्होंने पुण्य कीर्ति भगवान् श्री कृष्ण को प्राप्त करने की इच्छा से अत्यन्त मनोरम तथा कठिनाई से त्यागने योग्य स्त्री-पुत्रादि, स्वजन और राज्य को भी युवावस्था में ही विष्ठा के समान त्याग दिया था ।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

यो दुस्त्यजान् क्षितिसुतस्वजनार्थदारान् प्रार्थ्यां श्रियं सुरवरैः सदयावलोकाम् ।
नैच्छन्नृपस्तदुचितं महतां मधुद्विट्सेवानुरक्तमनसामभवोऽपि फल्गुः ॥४४॥

पदच्छेद—यः दुस्त्यजान् क्षिति सुत स्वजन अर्थ दारान् प्रार्थ्याम् श्रियम् सुरवरैः सदय अवलोकाम् ।
न ऐच्छन् नृपः तद् उचितम् महताम् मधुद्विट् सेवा अनुरक्त मनसाम् अभवः अपि फल्गुः ॥

शब्दार्थ—

यः	११. जिन्होंने	न	१२. नहीं की
दुस्त्यजान्	६. जिन्होंने, कठिनाई छोड़ने योग्य	इच्छन्	१३. इच्छा
क्षिति-सुत	७. पृथ्वी-पुत्र	नृपः तद्	१४. राजा भरत के लिये यह
स्वजन	८. सम्बन्धी	उचितम्	१५. उचित ही है (क्योंकि जिन)
अर्थ	१०. सम्पत्ति की भी	महताम्	१६. महानुभावों का
दारान्	१९. स्त्री-और	मधुद्विट्	१८. मधुसूदन की
प्रार्थ्याम्	३. लालायित रहते हैं (और)	सेवा	१९. सेवा में
श्रियम्	२. जिस लक्ष्मी लिये	अनुरक्त	२०. अनुरक्त हो गया है (उनके लिये)
सुरवरैः	१. बड़े-बड़े देवता	मनसाम्	१७. चित्त
सदय	४. जो दया दृष्टि के लिये	अभवः	२१. मोक्ष पद
अवलोकाम्	५. उनपर निहारती रहती थी ऐसी लक्ष्मी की तथा	अपि-फल्गुः॥	२२. भी तुच्छ हैं

श्लोकार्थ—बड़े-बड़े देवता जिस लक्ष्मी के लिये लालायित रहते और जो दया दृष्टि के लिये उन को निहारती रहती थी ऐसी लक्ष्मी की तथा कठिनाई से छोड़ने योग्य पृथ्वी, पुत्र, सम्बन्धी, स्त्री और सम्पत्ति की भी जिन्होंने इच्छा नहीं की । राजा भरत के लिये यह उचित ही है । क्योंकि जिन महानुभावों का चित्त भगवान् मधुसूदन की सेवा में अनुरक्त हो गया है, उनके लिए मोक्ष पद भी तुच्छ है ।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

यज्ञाय धर्मपतये विधिनैपुणाय योगाय सांख्यशिरसे प्रकृतीश्वराय ।
नारायणाय हरये नम इत्युदारं हास्यन्मृगत्वमपि यः समुदाजहार ॥४५॥

पदच्छेद—यज्ञाय धर्म पतये विधि नैपुणाय योगाय सांख्य शिरसे प्रकृति ईश्वराय ।
नारायणाय हरये नमः इति उदारम् हास्यन् मृगत्वम् अपि यः सम् उदाजहार ॥

शब्दार्थ—

यज्ञाय	१६.	यज्ञमूर्ति	नारायणाय	१७.	सर्वान्तर्यामी
धर्मपतये	८.	धर्म की रक्षा करने वाले	हरये	१८.	श्री हरि को
विधि	९.	धर्म के अनुष्ठान में	नमः	१९.	नमस्कार है
नैपुणाय	१०.	निपुण	इति	६.	इस प्रकार
योगाय	११.	योग के द्वारा जानने योग्य	उदारम्	५.	उच्च स्वर से
सांख्य	१२.	सांख्य के	हास्यन्	४.	छोड़ने की इच्छा होने पर
शिरसे	१३.	प्रतिपाद्य	मृगत्वम्	२.	मृग शरीर के
प्रकृति	१४.	प्रकृति के	अपि	३.	भी
ईश्वराय ।	१५.	अधीश्वर	यः	१.	उन्होंने
			समुदाजहार ॥	७.	कहा था कि

श्लोकार्थ—उन्होंने मृग शरीर के भी छोड़ने की इच्छा होने पर उच्च स्वर से इस प्रकार कहा था कि धर्म की रक्षा करने वाले, धर्म के अनुष्ठान में निपुण, योग के द्वारा जानने योग्य, सांख्य के प्रतिपाद्य, प्रकृति के अधीश्वर, यज्ञ मूर्ति, सर्वान्तर्यामी श्री हरि को नमस्कार हैं ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

य इदं भागवतसभाजितावदातगुणकर्मणो राजर्षेर्भरतस्यानुचरितं स्वस्त्ययनमायुष्यं धन्यं यशस्यं स्वर्ग्यापवर्ग्यं वानुश्रृणोत्याख्यास्यत्यभिनन्दति च सर्वा एवाशिष आत्मन आशास्ते न काञ्चन परत इति ॥४६॥

पदच्छेद—यः इदम् भागवत सभाजित अवदात गुणकर्मणः राजर्षेः भरतस्य अनुचरितम् स्वस्त्ययनम् आयुष्यम् धन्यम् यशस्यम् स्वर्ग्यम् अपवर्ग्यम् वा अनुश्रृणोति आख्यास्यति अभिनन्दति चसर्वा एव आशिष आत्मनः आशास्तेन काञ्चन परतः इति ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो व्यक्ति	वा	१८.	अथवा
इदम्	२.	इस	अनुशृणोति	१७.	सुनता है
भागवत	६.	भक्तजनों द्वारा	आख्यास्यति	१६.	सुनाता है (तथा)
सभाजित	१०.	प्रशंसित	अभिनन्दति	२०.	अभिनन्दन करता है
अवदात	११.	पवित्र	च	२८.	उसकी
गुण	१२.	गुणा और	सर्वाः	२१.	सारी
कर्मणः	१३.	कर्मों वाले	एव	२४.	ही
राजर्षेः	१४.	राजर्षि	आशिषः	२२.	कामनायें
भरतस्य	१५.	भरत के	आत्मनः	२३.	स्वयम्
अनुचरितम्	३.	चरित को	आशास्ते	२५.	पूर्ण हो जाती है
स्वस्त्ययनम्	४.	कल्याणकारी	न	२८.	नहीं (मागना पड़ता है)
आयुष्यम्	४.	आयु और	काञ्चन	२७.	कुछ भी
धन्यम्	५.	धन की वृद्धि करने वाले	परतः	२६.	दूसरों से
यशस्यम्	६.	यश देने वाले	इति	२६.	यह निश्चित है
स्वर्ग्यं	७.	स्वर्ग (और)			
अपवर्ग्यम् ॥	८.	मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले			

श्लोकार्थ—जो व्यक्ति इस कल्याणकारी आयु और धन की वृद्धि करने वाले, यश देने वाले, स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्त कराने वाले, भक्त जनों द्वारा प्रशंसित, पवित्र, गुण और कर्मों वाले राजर्षि भरत के चरित को सुनता है अथवा सुनाता है और अभिनन्दन करता है, उसकी सारी कामनायें स्वयम् ही पूर्ण हो जाती हैं। दूसरों से कुछ भी नहीं माँगना पड़ता है, यह निश्चित है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे भरतोपाख्याने पारोक्ष्यविवरणं नाम चतुर्दशः अध्यायः ॥१४॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पञ्चमः स्कन्धः

पञ्चदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— भरतस्यात्मजः सुमतिर्नामाभिहितो यमु ह वाव केचित्पाखण्डिन ऋषभपदवीमनुवर्तमानं चानार्या अवेदसमाम्नातां देवतां स्वमनीषया पापीयस्या कलौ कल्पयिष्यन्ति ॥१॥

पदच्छेद—भरतस्य आत्मजः सुमतिः नाम अभिहितः यम् उ ह वाव केचित् पाखण्डिनः ऋषभ पदवीम् अनुवर्तमानम् च अनार्याः अवेद समाम्नाताम् देवताम् स्वमनीषया पापीयस्या कलौ कल्पयिष्यन्ति ॥

शब्दार्थ—

भरतस्य	१.	भरत जी का	अनुवर्तमानम्	९.	अनुसरण किया
आत्मजः	२.	पुत्र	च	१८.	और
सुमतिः	३.	सुमति था	अनार्याः	१३.	अनार्य पुरुष
नाम	४.	जिसका नाम	अवेद	१६.	वेद विरुद्ध
अभिहितः	५.	पहले कहा जा चुका है	समाम्नाताम्	१७.	कल्पना करके
यम् उ ह वाव	६.	उसने	देवताम्	१९.	देवता की
केचित्	११.	कुछ	स्वमनीषया	१५.	अपनी बुद्धि से
पाखण्डिनः	१२.	पाखण्डी	पापीयस्या	१४.	पाप से भरी हुई
ऋषभ	७.	ऋषभदेव जी के	कलौ	१०.	कलियुग में
पदवीम्	८.	मार्ग का	कल्पयिष्यन्ति ॥	२०.	कल्पना करेंगे ।

श्लोकार्थ—भरत जी का पुत्र सुमति था। जिसका नाम पहले कहा जा चुका है। उसने ऋषभ जी के मार्ग का अनुसरण किया। कलियुग में कुछ पाखण्डी अनार्य पुरुष पाप से भरी हुई अपनी बुद्धि से वेद विरुद्ध कल्पना करके और देवता की कल्पना करेंगे ॥

द्वितीयः श्लोकः

तस्मात् वृद्धसेनायां देवताजिन्नाम पुत्रोऽभवत् ॥२॥

पदच्छेद— तस्मात् वृद्ध सेनायाम् देवताजित् नाम पुत्रः अभवत् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	उसकी पत्नी	नाम	४.	नामक
वृद्धसेनायाम्	२.	वृद्धसेना से	पुत्रः	५.	पुत्र
देवताजित्	३.	देवताजित्	अभवत् ॥	६.	उत्पन्न हुआ

श्लोकार्थ—उसकी पत्नी वृद्धसेना से देवताजित् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ ॥

तृतीयः श्लोकः

अथासुर्याम् तत्तनयो देवद्युम्नस्ततो धेनुमत्यां सुतः परमेष्ठी तस्य सुवर्चलायां प्रतीह उपजातः ॥३॥

पदच्छेद - अथ असुर्याम् तत् तनयः देवद्युम्नः ततः धेनुमत्याम् सुतः परमेष्ठी तस्य सुवर्चलायाम् प्रतीह उपजातः ॥

शब्दार्थ—

अथ असुर्याम्	१.	तदनन्तर असुरी और	सुतः	६.	पुत्र
ततः	२.	देवताजित् से	परमेष्ठी	५.	परमेष्ठी नामक
तनयः	६.	पुत्र (और)	तस्य सुवर्चलायाम्	७.	उसके सुवर्चला से
देवद्युम्नः ततः	३.	देव द्युम्न और	प्रतीह	८.	प्रतीह नामक
धेनुमत्याम्	४	धेनुमती से	उपजातः ॥	१०.	उत्पन्न हुआ

श्लोकार्थ—तदनन्तर असुरी और देवताजित् से देवद्युम्न और धेनुमती से परमेष्ठी नामक पुत्र और उसके सुवर्चला से प्रतीह नामक पुत्र उत्पन्न हुआ ॥

चतुर्थः श्लोकः

यः आत्मविद्यामाख्याय स्वयं संशुद्धो महापुरुषमनुसस्मार ॥४॥

पदच्छेद—यः आत्मविद्याम् आख्याय स्वयम् संशुद्धः महा पुरुषम् अनुसस्मार ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जिसने	संशुद्ध	५.	शुद्ध चित्त होकर
आत्मविद्याम्	२.	अध्यात्म विद्या का	महा	६.	परम
आख्याय	३.	उपदेश करके	पुरुषम्	७.	पुरुष नारायण का
स्वयम्	४.	अपने-आप	अनुसस्मार ॥	८.	साक्षात् अनुभव किया

श्लोकार्थ—जिसने अध्यात्म विद्या का उपदेश करके अपने आप शुद्ध चित्त होकर परम पुरुष नारायण का साक्षात् अनुभव किया ।

पञ्चमः श्लोकः

प्रतीहात्सुवर्चलायां प्रतिहर्त्रादयस्त्रय आसन्निज्याकोविदाः सूनवः प्रतिहर्तुः स्तुत्यामजभूमानावजनिषाताम् ॥५॥

प्रतीहात् सुवर्चलायाम् प्रतिहर्तृ आदयः त्रयः आसन् इज्याकोविदाः सूनवः प्रतिहर्तुः स्तुत्याम् अज भूमानौ अजनिषाताम् ॥

शब्दार्थ—

प्रतीहात्	१.	प्रतीह और	कोविदाः	८.	निपुण थे
सुवर्चलायाम्	२.	सुवर्चला से	सूनवः	१३.	पुत्र
प्रतिहर्तृ	३.	प्रतिहर्ता	प्रतिहर्तु	९.	प्रतिहर्ता की पत्नी
आदयः	४.	आदि	स्तुत्याम्	१०.	स्तुति से
त्रयः	५.	प्रस्तोता, उद्गाता ये तीन अज		११.	अज और
आसन्	६.	पुत्र उत्पन्न हुये	भूमानौ	१२.	भूमा नामक दो
इज्या	७.	ये यज्ञादि कर्मों में	अजनिषाताम् ॥	१४.	उत्पन्न हुये

श्लोकार्थ—प्रतीह और सुवर्चला से प्रतिहर्ता आदि प्रस्तोता, उद्गाता ये तीन पुत्र उत्पन्न हुये । ये यज्ञादि कर्मों में निपुण थे । प्रतिहर्ता की पत्नी स्तुति से अज और भूमा नामक दो पुत्र उत्पन्न हुये ॥

षष्ठः श्लोकः

भूम्न ऋषिकुल्यायामुद्गीथस्ततः प्रस्तावो देवकुल्यायां प्रस्तावान्नियुत्सायां हृदयज आसीद्विभुर्विभो रत्यां च पृथुषेणस्तस्मान्नक्त आकूत्यां जज्ञे नक्ताद् द्रुतिपुत्रो गयो राजर्षिप्रवर उदारश्रवा अजायत साक्षाद्भगवतो विष्णोर्जगद्रिरक्षिषया गृहीतसत्त्वस्य कलाऽऽत्मवत्त्वादिलक्षणेन महापुरुषतां प्राप्तः ॥६॥

पदच्छेद—भूम्नः ऋषिकुल्यायाम् उद्गीथः ततः प्रस्तावः देवकुल्यायाम् प्रस्तावात् नियुत्सायाम् हृदयज आसीत् विभुः विभोः रत्याम् च पृथुषेणः तस्मात् नक्तः आकूत्याम् जज्ञे नक्ताद् द्रुतिपुत्रः गयः राजर्षि प्रवरः उदारश्रवाः अजायत साक्षाद् भगवतः विष्णोः जगद्रिरक्षिषया गृहीत सत्त्वस्य कलात्मवत्त्व आदि लक्षणेन महापुरुषताम् प्राप्तः ॥

भूम्नः	१. भूमा और	द्रुति	२१. द्रुति से
ऋषिकुल्यायाम्	२. ऋषि कुल्या के	पुत्रः	२६. पुत्र
उद्गीथः	३. उद्गीथ	गयः	२५. गय नामक
ततः	४. उससे और	राजर्षि	२३. राजर्षि
प्रस्तावः	६. प्रस्ताव तथा	प्रवर	२४. प्रवर
देवकुल्यायाम्	५ देव कुल्या से	उदारश्रवाः	२२. उदार कीर्ति
प्रस्तावात्	७. प्रस्ताव से	अजायत	२७. उत्पन्न हुआ
नियुत्सायाम्	८. नियुत्सा से	साक्षाद्	३०. साक्षात्
हृदयज	१०. पुत्र उत्पन्न	भगवतः	३१. भगवान्
आसीत्	११. हुआ	विष्णोः	३२. विष्णु के
विभुः	९. विभु नामक	जगद्	२८. ये संसार की
विभोः	१२. विभु	रिरक्षिषया	२९. रक्षा करने के लिये
रत्याम्	१४. रति से	गृहीत	३५. स्वीकार करने वाले इनकी
च	१३. और	सत्त्वस्य	३४. सत्त्व गुण को
पृथुषेणः	१५. पृथुषेण	कलात्मवत्त्व	३३. अंश माने जाते थे
तस्मात्	१६. उससे और	आदि	३६. अनेकों
नक्तः	१८. नक्त	लक्षणेन	३७. गुणों के कारण
आकूत्याम्	१७. आकूति से	महापुरुषताम्	३८. महापुरुषों में
जज्ञे	१९. उत्पन्न हुआ	प्राप्तः ॥	३९. गणना की जाती है
नक्ताद्	२०. नक्त और		

श्लोकार्थ—भूमा और ऋषिकुल्या के उद्गीथ उससे और देवकुल्या से प्रस्ताव तथा प्रस्ताव के नियुत्सा से विभु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, विभु और रति से पृथुषेण, उससे और आकूति से नक्त उत्पन्न हुआ। नक्त और द्रुति से उदारकीर्ति राजर्षि प्रवर गय नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। ये संसार की रक्षा करने के लिए साक्षात् भगवान् विष्णु के अंश माने जाते थे। सत्त्वगुण को स्वीकार करने वाले इनकी अनेकों गुणों के कारण महापुरुषों में गणना की जाती है ॥

सप्तमः श्लोकः

स वै स्वधर्मेण प्रजापालनपोषणप्रीणनोपलालनानुशासनलक्षणेनेज्यादिना च भगवति महापुरुषे परावरे ब्रह्मणि सर्वात्मनार्पितपरमार्थलक्षणेन ब्रह्मविच्चरणानुसेवयाऽऽपादितभगवद्भक्तियोगेन चाभीक्ष्णशः परिभावितातिशुद्धमतिरुपरतानात्म्य आत्मनि स्वयमुपलभ्यमानब्रह्मात्मानुभवोऽपि निरभिमान एवावनिमजूगुपत् ॥७॥

पदच्छेद—सः वै धर्मेण प्रजा पालन पोषण प्रीणन उपलालन अनुशासन लक्षणेन इज्या आदिना च भगवति महापुरुषे पर अवरे ब्रह्मणि सर्व आत्मना अर्पित परमार्थ लक्षणेन ब्रह्मवित् चरण अनुसेवया अपादित भगवत् भक्ति योगेन च अभीक्ष्णशः परिभावित अतिशुद्ध मतिः उपरत अनात्म्ये आत्मनि स्वयम् उपलभ्यमान ब्रह्म आत्म अनुभवः अपि निरभिमान एव अवनिम् अजूगुपत् ॥

शब्दार्थ—

सः व	१. उन महाराज गय ने	आपादित	२१. प्राप्त हुये
स्व-धमण	१०. अपने धर्म का (पालन किया)	भगवत्	२२. भगवान् की
प्रजापालन	२. प्रजा का पालन	भक्ति	२३. भक्ति
पोषण, प्रीणन	३. पोषण, रञ्जन	योगेन	२४. योग से
उप लालन	४. लाड़-प्यार और	च	२६. और
अनुशासन	५. शासनादि	अभीक्ष्णशः	२५. निरन्तर
लक्षणेन	६. के द्वारा	परिभावित	२६ भगवत् चिन्तन से
इज्याआदिना	८. यज्ञ-आदि का अनुष्ठान करके	अतिशुद्ध	२८. अत्यन्त शुद्ध किया
च	७. और	मति	२१. अपनी बुद्धि को
भगवति	९. भगवान् की प्रीति के लिये	उपरत	३२. हटाकर
महापुरुषे	११. परम पुरुष	अनात्म्य	३१. अनात्म वस्तुओं से
पर-अवरे	१२. कार्य-कारण रूप	आत्मनि	३०. स्वयम् को
ब्रह्मणि	१३. परमात्मा में	स्वयम्	३३. अपने-आप
सर्व आत्मना	१४. पूर्ण रूप से	उपलभ्यमान	३४. प्राप्त हुये
अर्पित	१५. अर्पित होकर	ब्रह्मआत्म	३५. ब्रह्मात्मभाव को
परमार्थ	१६. परमार्थ रूप	अनुभवः	३६. अनुभव करने लगे
लक्षणेन	१७. बन गये (और)	अपि	३७. फिर भी
ब्रह्मवित्	१८. ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों के	निरभिमानः	३८. निरभिमान होकर
चरण	१९. चरणों की	एव अवनिम्	३९. ही पृथ्वी का
अनुसेवया	२०. सेवा से	अजूगुपत् ॥	४१. पालन करते रहे

श्लोकार्थ—उन महाराज गय ने प्रजा का पालन, पोषण, रञ्जन, लाड़ प्यार और शासन आदि के द्वारा और यज्ञादि का अनुष्ठान करके भगवान् की प्रीति के लिये अपने धर्म का पालन किया। परम पुरुष, कार्य-कारण रूप, परमात्मा में पूर्णरूप से अर्पित होकर परमार्थ रूप बन गये और ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों के चरणों की सेवा से प्राप्त हुये भगवान् की भक्ति योग से निरन्तर भगवत् चिन्तन करके अपनी बुद्धि को अत्यन्त शुद्ध किया। स्वयम् को अनात्म वस्तुओं से हटाकर अपने आप प्राप्त हुये ब्रह्मात्म भाव का अनुभव करने लगे। फिर भी निरभिमान होकर ही पृथ्वी का पालन करते रहे ॥

अष्टमः श्लोकः

तस्येमां गाथां पाण्डवेय पुराविद उपगायन्ति ।।८।।

पदच्छेद— तस्य इमाम् गाथाम् पाण्डवेय पुराविद उपगायन्ति ।।

शब्दार्थ—

तस्य	२.	उन राजर्षि गय की	पाण्डवेय	१.	हे परीक्षित् !
इमाम्	३.	इस	पुराविदः	५.	प्राचीन इतिहास को जानने वाले
गाथाम्	४.	गाथा को	उपगायन्ति ।।	६.	इस प्रकार कहते हैं

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! उन राजर्षि गय की इस गाथा को प्राचीन इतिहास को जानने वाले इस प्रकार कहते हैं ।

नवमः श्लोकः

गयं नृपः कः प्रतियाति कर्मभिर्यज्वाभिमानी बहुविद्धर्मगोप्ता ।
समागतश्रीः सदसस्पतिः सतां सत्सेवकोऽन्यो भगवत्कलामृते ।।९।।

पदच्छेद— गयम् नृपः कः प्रतियाति कर्मभिः यज्वा अभिमानी बहुवित् धर्म गोप्ता ।
समागत श्रीः सदसः पतिः सताम् सत् सेवकः अन्यः भगवत् कलाम् ऋते ।।

शब्दार्थ—

गयम्	३.	गय की	समागत	१६.	प्रिय पात्र
नृपः	२.	महाराज	श्रीः	१५.	लक्ष्मी का
कः	४.	कौन	सदसः	१८.	सभा का
प्रतियाति	५.	बराबरी कर सकता है	पतिः	१९.	शिरोमणि
कर्मभिः	१.	कर्मों के द्वारा	सताम्	१७.	साधुओं की
यज्वा	९.	यज्ञों का	सत्	२०.	सत्पुरुषों का
अभिमानी	१०.	अनुष्ठान करने वाला	सेवकः	२१.	सेवक
बहु	११.	बहुत	अन्यः	२२.	दूसरा कौन हो सकता है
वित्	१२.	जानने वाला	भगवत्	६.	भगवान् की
धर्म	१३.	धर्म की	कलाम्	७.	कला को
गोप्ता ।	१४.	रक्षा करने वाला	ऋते ।।	८.	छोड़ कर

श्लोकार्थ—कर्मों के द्वारा महाराज गय की कौन बराबरी कर सकता है । भगवान् की कला को छोड़ कर उनके समान यज्ञों का अनुष्ठान करने वाला, बहुत जानने वाला, धर्म की रक्षा करने वाला, लक्ष्मी का प्रियपात्र, साधुओं की सभा का शिरोमणि और सत् पुरुषों का सेवक दूसरा कौन हो सकता है ।।

दशमः श्लोकः

यमभ्यषिञ्चन् परया मुदा सतीः सत्याशिषो दक्षकन्याः सरिद्भिः ।
यस्य प्रजानां दुदुहे धराऽऽशिषो निराशिषो गुणवत्सस्नुतोधाः ॥१०॥

पदच्छेद— यम् अभ्यषिञ्चन् परया मुदा सतीः सत्य आशिषः दक्षकन्याः सरिद्भिः ।
यस्य प्रजानाम् दुदुहे धरा आशिषो, निराशिषः गुणवत्स स्नुत ऊधाः ॥

शब्दार्थ—

यम्	८. जिसका	यस्य	१०.	जिसकी
अभ्यषिञ्चन्	९. अभिषेक किया था	प्रजानाम्	१६.	प्रजाओं को
परया	५. अत्यधिक	दुदुहे	१८.	दूध देती थी
मुदा	६. प्रसन्नता से	धरा	१५.	पृथ्वी रूपी गाय
सतीः	७. साध्वी	आशिषो	१७.	इच्छा की पूर्ति करने हेतु
सत्य	१. सत्य	निराशिषः	११.	इच्छा न होने पर भी
आशिषः	२. आशीर्वाद वाली	गुणवत्स	१२.	गुणरूपी बछड़े के
दक्षकन्याः	३. दक्ष की कन्यायों ने	स्नुत	१३.	स्नेह से
सरिद्भिः ।	४. गंगादि नदियों के साथ	ऊधाः ॥	१४.	पिन्हाई गई

श्लोकार्थ—सत्य आशीर्वाद वाली साध्वी दक्ष कन्याओं ने गंगादि नदियों के साथ अत्यधिक प्रसन्नता से जिसका अभिषेक किया था। जिसकी इच्छा न होने पर भी गुणरूपी बछड़े के स्नेह से पिन्हाई गई पृथ्वी रूपी गाय प्रजाओं की इच्छा की पूर्ति करने हेतु दूध देती थी ॥

एकादशः श्लोकः

छन्दांस्यकामस्य च यस्य कामान् दुदूहुराजह्रुरथो बलिं नृपाः ।
प्रत्यञ्चिता युधि धर्मेण विप्रा यदाशिषां षष्ठमंशं परेत्य ॥११॥

छन्दांसि अकामस्य च यस्य कामान् दुदूहुः आजह्रुः अथो बलिम् नृपाः ।
प्रत्यञ्चिताः युधि धर्मेण विप्राः यत् आशिषाम् षष्ठम् अंशम् परेत्य ॥

शब्दार्थ—

छन्दांसि	३. वेदोक्त कर्मों ने	प्रत्यञ्चिताः	१२.	सन्तुष्ट होकर
अकामस्य	२. इच्छा न होने पर भी	युधि	७.	युद्ध स्थल में
च	१. और	धर्मेण	११.	धर्म से
यस्य	४. उनको	विप्राः	१०.	ब्राह्मणों ने
कामान् दुदूहुः	५. सब प्रकार के भोग दिये	यत्	१२.	उन्हें
आजह्रुः	१८. भेंट किये	आशिषाम्	१४.	धर्म रूप फल का
अथो	६. तदनन्तर	षष्ठम्	१५.	छठा
बलिम्	९. भेंट दी (और)	अंशम्	१६.	अंश
नृपाः ।	८. राजाओं ने	परेत्य ॥	१३.	परलोक

श्लोकार्थ—और इच्छा न होने पर भी वेदोक्त कर्मों ने उनको सब प्रकार के भेंट दिये। तदनन्तर युद्धस्थल में राजाओं ने भेंट दी। और ब्राह्मणों ने धर्म से सन्तुष्ट होकर परलोक में मिलने वाले धर्म रूप फल का छठा अंश उन्हें भेंट किया।

द्वादशः श्लोकः

यस्याध्वरे भगवानध्वरात्मा मघोनि माद्यत्युरुसोमपीथे ।
श्रद्धाविशुद्धाचलभक्तियोगसमर्पितेज्याफलमाजहार ॥१२॥

पदच्छेद— यस्य अध्वरे भगवान् अध्वरात्मा, मघोनि माद्यति उरु सोमपीथे ।
श्रद्धाविशुद्ध अचल भक्तियोग समर्पित इज्या फलम् आजहार ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	उनके	श्रद्धा	७.	अत्यन्त श्रद्धा (तथा)
अध्वरे	२.	यज्ञ में	विशुद्ध	८.	विशुद्ध और
भगवान्	१४.	भगवान्	अचल	९.	निश्चल
अध्वरात्मा	१५.	यज्ञ पुरुष ने	भक्तियोग	१०.	भक्ति भाव से
मघोनि	५.	इन्द्र	समर्पित	११.	समर्पित किये गये
माद्यति	६.	उन्मत्त हो गये	इज्या	१२.	यज्ञ रूप
उरु	३.	अधिक	फलम्	१३.	फल को
सोमपीथे ।	४.	सोमपान करने से	आजहार ॥	१६.	ग्रहण किया था

श्लोकार्थ—उनके यज्ञ में अधिक सोमपान करने से इन्द्र उन्मत्त हो गये थे । अत्यन्त श्रद्धा तथा विशुद्ध और निश्चल भक्ति-भाव से समर्पित किये गये यज्ञ रूप फल को भगवान् यज्ञ पुरुष ने ग्रहण किया था ।

त्रयोदशः श्लोकः

यत्प्रीणनाद्बर्हिषि देवतिर्यङ्मनुष्यवीरुत्तृणमाविरिञ्चात् ।
प्रीयेत सद्यः स ह विश्वजीवः प्रीतः स्वयं प्रीतिमगाद्गयस्य ॥१३॥

पदच्छेद— यत् प्रीणनात् बर्हिषि देवतिर्यक् मनुष्य वीरुत् तृणम् आविरिञ्चात् ।
प्रीयेत सद्यः स ह विश्व जीवः प्रीतः स्वयम् प्रीतिम् अगात् गयस्य ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जिनके	प्रीयेत	९.	तृप्त हो जाते हैं
प्रीणनात्	२.	तृप्त होने से	सद्यः	८.	तत्काल
बर्हिषि	१२.	उस यज्ञ में	स ह	१०.	वे
देव	४.	देवता.	विश्वजीवः	११.	विश्वात्मा
तिर्यक्	६.	पशु-पक्षी	प्रीतः स्वयम्	१३.	स्वयं तृप्त हो गये
मनुष्य	५.	मनुष्य	प्रीतिम्	१५.	बराबरी
वीरुत् तृणम्	७.	वृक्ष एवं तृण पर्यन्त	अगात्	१६.	कोई कैसे कर सकता है
आविरिञ्चात् ।	३.	ब्रह्मा से लेकर सभी जीव	गयस्य ॥	१५.	तो गय की

श्लोकार्थ—जिनके तृप्त होने से ब्रह्मा से लेकर सभी जीव, देवता, मनुष्य, पशु-पक्षी वृक्ष एवं तृण पर्यन्त तत्काल तृप्त हो जाते हैं । वे विश्वात्मा उस यज्ञ में स्वयं तृप्त हो गये तो गय की बराबरी कौन कर सकता है ।

चतुर्दशः श्लोकः

गयाद्गयन्त्यां चित्ररथः सुगतिरवरोधन इति त्रयः पुत्रा बभूवुश्चित्ररथा-दूर्णायां सम्राऽजनिष्ट ॥१४॥

पदच्छेद—गयाद् गयन्त्याम् चित्ररथः सुगतिः अवरोधनः इति त्रयः पुत्राः बभूवुः चित्ररथात् ऊर्णायाम् सम्राट् अजनिष्ट ॥

शब्दार्थ—

गयाद्	१.	महाराज गय (और)	त्रयः पुत्राः	७.	तीन पुत्र
गयन्त्याम्	२.	गयन्ती से	बभूवुः	८.	उत्पन्न हुये
चित्ररथः	३.	चित्ररथ	चित्ररथात्	९.	चित्ररथ की पत्नी
सुगतिः	४.	सुगति और	ऊर्णायाम्	१०.	ऊर्णा से
अवरोधनं	५.	अवरोधन	सम्राट्	११.	सम्राट् का
इति	६.	ये	अजनिष्ट ॥	१२.	जन्म हुआ

श्लोकार्थ—महाराज गय और गयन्ती से चित्ररथ, सुगति और अवरोधन के तीन पुत्र उत्पन्न हुये। चित्ररथ की पत्नी ऊर्णा से सम्राट् का जन्म हुआ ॥

पञ्चदशः श्लोकः

नत उत्कलायां मरीचिर्मरीचेर्बिन्दुमत्यां बिन्दुमानुदपद्यत तस्मात्सरघायां मधुर्नामाभवन्मधोः सुमनसि वीरव्रतस्ततो भोजायां मन्थु-प्रमन्थू जज्ञाते मन्थोः सत्यायां भौवनस्ततो दूषणायां त्वष्टाजनिष्ट त्वष्टुर्विरोचनायां विरजो विरजस्य शतजित्प्रवरं पुत्रशतं कन्या च विषूच्यां किल जातम् ॥१५॥

पदच्छेद—तत उत्कलायाम् मरीचिः मरीचेः बिन्दुमत्याम् बिन्दुमान् उदपद्यत तस्मात् सरघायाम् मधुः नाम अभवत् मधोः सुमनसि वीर व्रतः ततः भोजायाम् मन्थुप्रमन्थू जज्ञाते मन्थोः सत्यायाम् भौवनः ततः दूषणायाम् त्वष्टा अजनिष्ट त्वष्टुः विरोचनायाम् विरजः विरजस्य शतजित् प्रवरम् पुत्रशतम् कन्या च विषूच्याम् किल जातम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१. उससे (और)	मन्थोः	१९. मन्थु और
उत्कलायाम्	२. उत्कला से	सत्यायाम्	२०. सत्या से
मरीचिः	३. मरीचिका और	भौवनः	२१. भौवन
मरीचे.	४. मरीचि (तथा)	ततः	२२. उससे और
बिन्दुमत्याम्	५. बिन्दुमती से	दूषणायाम्	२३. दूषणा से
बिन्दुमान्	६. बिन्दुमान् का	त्वष्टा	२४. त्वष्टा
उदपद्यत तस्मात्	७. जन्म हुआ उससे	अजनिष्ट	२५. उत्पन्न हुआ
सरघायाम्	८. और सरघा से	त्वष्टुः	२६. त्वष्टा और
मधुः नाम	९. मधु नामक	विरोचनायाम्	२७. विरोचना
अभवत्	१०. पुत्र हुआ	विरज	१८. विरज उत्पन्न हुआ
मधोः	११. मधु और	विरजस्य	२९. विरज और
सुमनसि	१२. सुमना से	शतजित् प्रवरम्	३२. शतजित् आदि
वीरव्रतः	१३. वीरव्रत हुआ	पुत्रशतम्	३३. सौ पुत्र
ततः	१४. उससे और	कन्या	३५. एक कन्या
भोजायाम्	१५. भोजा से	च	३४. और
मन्थु	१६. मन्थु और	विषूच्याम्	३०. विषूची से
प्रमन्थू	१७. प्रनन्थु	किल	३१. निश्चय ही
जज्ञाते	१८. उत्पन्न हुये	जातम् ॥	३६. जन्म हुआ

श्लोकार्थ—उससे और उत्कला से मरीचिका और मरीचि तथा बिन्दुमती से बिन्दुमान् का जन्म हुआ। उससे और सरघा से मधु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। मधु और सुमना से वीरव्रत हुआ। उससे और भोजा से नन्थु और प्रमन्थु उत्पन्न हुए। त्वष्टा और विरोचना से विरज उत्पन्न हुआ। विरज और विषूची से निश्चय ही शतजित् आदि सौ पुत्र और एक कन्या का जन्म हुआ।

षोडशः श्लोकः

तत्रायं श्लोकः—

प्रैयव्रतं वंशमिमं विरजश्चरमोद्भवः ।
अकरोदत्यलं कीर्त्या विष्णुः सुरगणं यथा ॥१६॥

पदच्छेद— तत्र अयं श्लोकः प्रैयव्रतम् वंशम् इमम् विरजः चरम उद्भवः ।
अकरोत् अतिअलम् कीर्त्या विष्णुः सुर गणम् यथा ॥

शब्दार्थ—

तत्र अयम्	१.	इस विषय में	अकरोत्	१४.	किया
श्लोकः	२.	यह श्लोक प्रसिद्ध है	अत्यलम्	१३.	विभूषित
प्रैयव्रतम्	७.	वैसे ही प्रियव्रत	कीर्त्या	१२.	सुयश से
वंशम्	८.	वंश को	विष्णुः	४.	भगवान् विष्णु
इमम्	१०.	इस	सुर	५.	देवताओं के
विरजः	११.	विरज ने अपने	गणम्	६.	समूह की शोभा बढ़ाते हैं
चरम	८.	सबसे पीछे	यथा ॥	३.	जिस प्रकार
उद्भवः ॥	९.	उत्पन्न			

श्लोकार्थ—इस विषय में यह श्लोक प्रसिद्ध है। जिस प्रकार भगवान् विष्णु देवताओं के समूह की शोभा बढ़ाते हैं, वैसे ही प्रियव्रत वंश को, सबसे पीछे उत्पन्न इस विरज ने अपने सुयश से विभूषित किया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
पञ्चमः स्कन्धः
षोडशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच—उक्तस्त्वया भूमण्डलायामविशेषो यावदादित्यस्तपति यत्र चासौ ज्योतिषां गणैश्चन्द्रमा वा सह दृश्यते ॥१।

पदच्छेद—उक्तः त्वया भूमण्डल आयाम् विशेषः यावत् आदित्यः तपति यत्र च असौ ज्योतिषां गणैः चन्द्रमाः वा सह दृश्यते ॥

शब्दार्थ—

उक्तः	१३.	बताया है	यत्र च	५.	और जहाँ तक
त्वया	१.	हे मुनिवर ! आपने	असौ	६.	यह
भूमण्डल	११.	भूमण्डल का	ज्योतिषां गणैः	८.	तारा गणों के
आयामविशेषः	१४.	विस्तार	चन्द्रमाः	७.	चन्द्रमा
यावत्	२.	जहाँ-तक	वा	१२.	अथवा
आदित्यः	३.	सूर्य का	सह	९.	सहित
तपति	४.	प्रकाश है	दृश्यते ॥	१०.	दिखाई देते हैं वहाँ तक

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! आपने जहाँ-तक सूर्य का प्रकाश है अथवा जहाँ-तक यह चन्द्रमा तारा गणों के सहित दिखाई देते हैं वहाँ-तक भूमण्डल का विस्तार बताया है ॥

द्वितीयः श्लोकः

तत्रापि प्रियव्रतरथचरणपरिखातैः सप्तभिः सप्त सिन्धव उपक्लृप्ता यत एतस्याः सप्तद्वीपविशेषविकल्पस्त्वया भगवन् खलु सूचित एतदेवाखिल-महं मानतो लक्षणतश्च सर्वं विजिज्ञासामि ॥२॥

पदच्छेद—तत्र अपि प्रियव्रत रथचरण परिखातैः सप्तभिः सप्तसिन्धवः उपक्लृप्ताः यत् एतस्याः सप्तद्वीप विशेष विकल्पः त्वया भगवन् खलु सूचितः एतद् एव अखिलम् अहम् मानतः लक्षणतः च सर्वं विजिज्ञासामि ॥

शब्दार्थ—

तत्रअपि	४.	उसमें भी	विशेषविकल्पः	१३.	विशेषतया विभाग हो गया
प्रियव्रत	५.	महाराज प्रियव्रत के	त्वया	२.	आपने
रथचरण	६.	रथ के पहियों की	भगवन्	१.	हे भगवन् !
परिखातैः	८	लीकों से	खलु सूचितः	३.	निश्चय ही बतलाया है कि
सप्तभिः	७.	सात	एतद् एव अखिलम्	१५.	इनही सबका
सप्तसिन्धवः	९.	सात समुद्र	अहम्	१४.	मैं
उपक्लृप्ताः	१०.	बन गये थे	मानतः	१६.	परिमाण
यत् एतस्याः	११.	जिनके कारण इस भूमण्डल में	लक्षणतः	१७.	और लक्षणों के सहित
सप्तद्वीप	१२.	सात द्वीपों का	सर्वं विजिज्ञासामि ॥	१८.	सब कुछ जानना चाहता हूँ

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपने निश्चय ही बतलाया है कि उसमें भी महराज प्रियव्रत के रथ के पहियों की सात लीकों से सात समुद्र बन गये थे । जिसके कारण इस भूमण्डल में सात द्वीपों का विशेषतया विभाग हो गया । मैं इनही सबका परिणाम और लक्षणों के सहित सब कुछ जानना चाहता हूँ ।

तृतीयः श्लोकः

भगवतो गुणमये स्थूलरूप आवेशितं मनो ह्यगुणेऽपि सूक्ष्मतम आत्मज्योतिषि परे ब्रह्मणि भगवति वासुदेवाख्ये क्षममावेशितुं तदु हैतद् गुरोऽर्हस्यनुवर्णयितुमिति ॥३॥

पदच्छेद—भगवतः गुणमये स्थूलरूपे आवेशितम् मनः हि अगुणे अपि सूक्ष्मतमे आत्मज्योतिषि परे ब्रह्मणि भगवतः वासुदेव आख्ये क्षमम् आवेशितुम् तत् उ ह एतद् गुरो अर्हसि अनुवर्णयितुम् इति ॥

शब्दार्थ—

भगवतः	२.	भगवान् के	परे ब्रह्मणि	९.	परब्रह्म रूप
गुणमये	३.	गुणमय	भगवति	१०.	भगवान्
स्थूलरूपे	४.	स्थूल शरीर में	वासुदेव आख्ये	११.	वासुदेव नाम वाले रूप में
आवेशितम्	५.	लग सकता है (वही मन)	क्षमम्	१४.	समर्थ है
मनः हि	१.	जो मन	आवेशितुम्	१३.	लगने में
अगुणे	६.	निर्गुण	तत् उह एतद्	१६.	उस इस विषय का और
अपि	१२.	भी	गुरो	१५	हे गुरुवर ! आप
सूक्ष्मतमे	७.	अतिसूक्ष्म	अर्हसि	१९.	समर्थ हैं
आत्म ज्योतिषि	८.	स्वयम् प्रकाश	अनुवर्णयितुम्	१८.	वर्णन करने में
			इति ॥	१७.	उसका

श्लोकार्थ—जो मन भगवान् के गुणमय स्थूल शरीर में लग सकता है, वही मन निर्गुण, अति सूक्ष्म स्वयम् प्रकाश पर ब्रह्मरूप भगवान् वासुदेव नाम वाले रूप में भी लगने में समर्थ है। हे गुरुवर ! आप उस विषय का और इसका वर्णन करने में समर्थ हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

ऋषिरुवाच—न वै महाराज भगवतो मायागुणविभूतेः काष्ठां मनसा वचसा वाधिगन्तुमलं विबुधायुषापि पुरुषस्तस्मात्प्राधान्येनैव भूगोलकविशेषं नामरूप-मानलक्षणतो व्याख्यास्यामः ॥४॥

पदच्छेद—न वै महाराज भगवतः मायागुण विभूतेः काष्ठाम् मनसा वचसा वा अधिगन्तुम् अलम् विबुध आयुषा अपि पुरुषः तस्मात् प्राधान्येन एव भूगोलक विशेषम् नामरूप मानलक्षणतः व्याख्यास्यामः ॥

शब्दार्थ—

न वै	११.	नहीं है	आयुषा अपि	५.	आयु पाकर भी
महाराज भगवतः	१.	हे महाराज ! भगवान् की	पुरुषः	६	पुरुष
मायागुणविभूतेः	२.	माया के गुणों की विभूति	तस्मात्	१२.	इसलिये
काष्ठाम्	३.	विस्तार	प्राधान्येन	१५.	मुख्य रूप से
मनसा	७.	मन से	एव भूगोलक	१६.	ही इस भूमण्डल की
वचसा वा	८.	अथवा वाणी से	विशेषम्	१७.	विशेषताओं का
अधिगन्तुम्	९.	जानने में	नामरूपमान	१३.	नाम, रूप परिणाम और
अलम्	१०.	समर्थ	लक्षणतः	१४.	लक्षणों के द्वारा
विबुध	४.	देवताओं के नाम	व्याख्यास्यामः ॥	१८.	वर्णन करेंगे

श्लोकार्थ—हे महाराज ! भगवान् की माया के गुणों की विभूति का विस्तार देवताओं के समान आयु पाकर भी पुरुष मन से अथवा वाणी से जानने में समर्थ नहीं है। इसलिये नाम, रूप परिमाण और लक्षणों के द्वारा मुख्य रूप से ही इस भूमण्डल की विशेषताओं का वर्णन करेंगे ॥

पञ्चमः श्लोकः

यो वायं द्वीपः कुवलयकमलकोशाभ्यन्तरकोशो नियुतयोजनविशालः समवर्तुलो यथा पुष्करपत्रम् ॥५॥

पदच्छेद— यः वा अयम् द्वीपः कुवलय कमल कोश आभ्यन्तर कोशः । नियुत योजन विशालः समवर्तुलः यथा पुष्कर पत्रम् ॥

शब्दार्थ—

यः	२.	जो	कोशः	९.	कोश है (इसका)
वा	१.	अथवा	नियुत	१०.	एक लाख
अयम्	३.	यह	योजन	११.	योजन
द्वीपः	४.	जम्बूद्वीप है	विशालः	१२.	विस्तार है (यह)
कुवलय	५.	भूमण्डलरूप	समवर्तुलः	१६.	गोलाकार है
कमल	६.	कमल के	यथा	१५.	समान
कोशः	७.	कोश के	पुष्कर	१३.	कमल
आभ्यन्तर	८.	सबसे अन्दर का	पत्रम् ॥	१४.	पत्र के

श्लोकार्थ—अथवा जो यह जम्बूद्वीप है भूमण्डल रूप कमल के कोश के सबसे अन्दर का कोश है। इसका एक लाख योजन विस्तार है। यह कमल पत्र के समान गोलाकार है ॥

षष्ठः श्लोकः

यस्मिन्नव वर्षाणि नवयोजनसहस्रायामान्यष्टभिर्मर्यादागिरिभिः सुविभक्तानि भवन्ति ॥६॥

पदच्छेद— यस्मिन् नव वर्षाणि नव योजन सहस्र आयामानि । अष्टभिः मर्यादा गिरिभिः सुविभक्तानि भवन्ति ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन्	१.	इसमें	आयामानि	५.	विस्तार वाले
नव	६.	नौ	अष्टभिः	८.	(जो) आठ
वर्षाणि	७.	वर्ष हैं	मर्यादा	१०.	सीमा से
नव	२.	नौ	गिरिभिः	९.	पर्वतों की
योजन	४	योजन	सुविभक्तानि	११.	बँटे हुये
सहस्र	३.	हजार	भवन्ति ॥	१२.	हैं

श्लोकार्थ—इसमें नौ हजार योजन विस्तार वाले नौ वर्ष हैं। जो आठ पर्वतों की सीमा से बँटे हुये हैं।

सप्तमः श्लोकः

एषां मध्ये इलावृतं नामाभ्यन्तरवर्षं यस्य नाभ्यामवस्थितः सर्वतः सौवर्णः कुलगिरिराजो मेरुर्द्वीपायामसमुन्नाहः कर्णिकाभूतः कुवलयकमलस्य मूर्धनि द्वात्रिंशत् सहस्रयोजनविततो मूले षोडशसहस्रं तावतान्तर्भूम्यां प्रविष्टः ॥७॥

पदच्छेद—एषाम् मध्ये इलावृतम् नाम आभ्यन्तर वर्षम् यस्य नाभ्याम् अवस्थितः सर्वतः सौवर्णः कुलगिरिराजः मेरुः द्वीप आयाम समुन्नाहः कर्णिकाभूतः कुवलय कमलस्य मूर्धनि द्वात्रिंशत् सहस्र योजन विततः मूले षोडश सहस्रम् तावता अन्तः भूम्याम् प्रविष्टः ॥

शब्दार्थ—

एषाम्	१.	इनके	समुन्नाहः	१०	(एक लाख योजन) ऊँचा
मध्ये	२.	बीचों बीच	कर्णिकाभूतः	२०.	कर्णिका तुल्य है,
इलावृतम्	३.	इलावृत	कुवलय	१८.	भूमण्डल रूप
नाम	४.	नाम का	कमलस्य	१९.	कमल की
आभ्यन्तर	५.	दसवां आन्तरिक	मूर्धनि	२१.	शिखर पर
वर्षम्	६.	वर्ष है	द्वात्रिंशत्	२९.	बत्तीस
यस्य	७.	जिसके	सहस्र	२३.	हजार
नाभ्याम्	८.	मध्य में	योजन	२४.	योजन
अवस्थितः	१५.	स्थित है। यह	विततः	२५.	विस्तार वाला है और
सर्वतः	९.	सारा का सारा	मूले	२६.	नीचे की ओर
सौवर्णः	१०.	सोने से बना हुआ	षोडश	२७.	सोलह
कुल	११.	कुल	सहस्र	२८.	हजार योजन है और
गिरि	१२.	पर्वतों का	तावत्	२९.	उतना ही
राजः	१३.	राजा	अन्तः	३१.	अन्दर
मेरुः	१४.	सुमेरु पर्वत	भूम्याम्	३०.	भूमि के
द्वीपआयाम	१६.	द्वीप की लम्बाई इतना	प्रविष्टः ॥	३२.	घुसा हुआ है

श्लोकार्थ—इनके बीचों बीच इलावृत नाम का दसवां आन्तरिक वर्ष है। जिसके मध्य में सारा का सारा सोने से बना हुआ, कुल पर्वतों का राजा सुमेरू पर्वत स्थित है। यह द्वीप की लम्बाई इतना (एक लाख योजन) ऊँचा, भूमण्डल रूप कमल की कर्णिका तुल्य है, शिखर पर बत्तीस हजार योजन विस्तार वाला है, नीचे की ओर सोलह हजार योजन है और उतना ही भूमि के अन्दर घुसा हुआ है।

अष्टमः श्लोकः

उत्तरोत्तरेणेलावृतं नीलः श्वेतः शृङ्गवानिति त्रयो रम्यकहिरण्मयकुरूणां वर्षाणां मर्यादागिरयः प्रागायता उभयतः क्षारोदावधयो द्विसहस्रपृथव एकैकशः पूर्वस्मात्पूर्वस्मादुत्तर उत्तरो दशांशाधिकांशेन दैर्घ्य एव ह्रसन्ति ॥८॥

पदच्छेद—उत्तरोत्तरेण इलावृतम् नीलः श्वेतः शृङ्गवान् इति त्रयः रम्यक हिरण्मय कुरूणाम् वर्षाणाम् मर्यादा गिरयः प्राक् आयताः उभयतः क्षारोद अवधयः द्विसहस्र पृथवः एकैकशः पूर्वस्मात् पूर्वस्मात् उत्तरः उत्तरः दशांश अधिकअंशेन दैर्घ्ये एव ह्रसन्ति ॥

शब्दार्थ—

उत्तर उत्तरेण	२.	उत्तर में क्रमशः	आयताः	१६.	फैले हुये
इलावृतम्	१.	इलावृत के	उभयतः	१५.	दोनों ओर
नीलः	३.	नील	क्षारोद	१७.	खारे जल के समुद्र की
श्वेतः	४.	श्वेत और	अवधयः	१८.	सीमा वाले हैं और
शृङ्गवान्	५.	शृङ्गवान्	द्विसहस्र	१९.	दो सहस्र योजन
इति	६.	इस नाम के	पृथवः	२०.	विस्तार वाले हैं
त्रयः	७.	तीन	एकैकशः	२१.	प्रत्येक
रम्यक	९.	रम्यक	पूर्वस्मात्	२३.	पहले की अपेक्षा बाद का
हिरण्मय	१०.	हिरण्मय और	पूर्वस्मात्	२२.	पहले
कुरूणाम्	११.	कुरु नाम के	उत्तरः उत्तरः	२४.	पिछला हिस्सा
वर्षाणाम्	१२.	वर्षों की	दशांश	२५.	दशवें भाग से कुछ
मर्यादा	१३.	सीमा को बाँधते हैं	अधिकांशेन	२६.	अधिक कम है
गिरयः	८.	पर्वत हैं (जो)	दैर्घ्ये एव	२७.	लम्बाई में ही
प्राक्	१४.	पूर्व से पश्चिम तक	ह्रसन्ति ॥	२८.	कम पड़ते हैं

श्लोकार्थ—इलावृत के उत्तर में क्रमशः नील, श्वेत और शृङ्गवान् इस नाम के तीन पर्वत हैं। जो रम्यक, हिरण्मय और कुरु नाम के वर्षों की सीमा को बाँधते हैं। और पूर्व से पश्चिम तक दोनों ओर फैले हुये हैं। तथा खारे जल के समुद्र की सीमा वाले हैं। दो सहस्र योजन विस्तार वाले हैं। प्रत्येक पहले-पहले की, अपेक्षा बाद का पिछला हिस्सा दशवें भाग से कुछ अधिक अंश से लम्बाई में ही कम पड़ते हैं (चौड़ाई-ऊँचाई सबकी समान है)॥

नवमः श्लोकः

एवं दक्षिणेनेलावृतं निषधो हेमकूटो हिमालय इति प्रागायता यथा नीलादयोऽयुतयोजनोत्सेधा हरिवर्षकिम्पुरुषभारतानां यथासंख्यम् ॥९॥

पदच्छेद—एवम् दक्षिणेन इलावृतम् निषधः हेमकूटः हिमालयः इति प्राक् आयताः यथा नील आदयः अयुत योजन उत्सेधाः हरि वर्ष किम्पुरुष भारतानाम् यथा संख्यम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इसी प्रकार	नील आदयः	९.	नील आदि पर्वतों के
दक्षिणेन	३.	दक्षिण की ओर	अयुत	११.	दस-दस हजार
इलावृतम्	२.	इलावृत के	योजन	१२.	योजन
निषधः हेमकूटः	४.	निषध, हेमकूट और	उत्सेधाः	१३.	ऊँचे हैं
हिमालय	५.	हिमालय	हरिवर्ष	१४.	हरि वर्ष
इति	६.	इस प्रकार	किम्पुरुष	१५.	किम्पुरुष
प्राक्	७.	पूर्व से पश्चिम की ओर	भारतानाम्	१६.	भारतवर्ष की सीमाओं का
आयताः	८.	फैल हुये हैं	यथा	१७.	क्रमशः
यथा	१०.	समान	संख्यम् ॥	१८.	विभाग करते हैं

श्लोकार्थ—इसी प्रकार इलावृत के दक्षिण की ओर निषध, हेमकूट और हिमालय इस प्रकार पूर्व से पश्चिम की ओर फैल हुये हैं। नील आदि पर्वतों के समान दस-दस हजार योजन ऊँचे हैं। हरिवर्ष, किम्पुरुष, भारतवर्ष की सीमाओं का क्रमशः विभाग करते हैं ॥

दशमः श्लोकः

तथैवेलावृतमपरेण पूर्वेण च माल्यवद्गन्धमादनावानीलनिषधायतौ द्विसहस्रं पप्रथतुः केतुमालभद्राश्वयोः सीमानं विदधाते ॥१०॥

पदच्छेद—तथा एव इलावृतम् अपरेण पूर्वेण च माल्यवत् गन्धमादनौ आनील निषध आयतौ द्विसहस्रम् पप्रथतुः केतुमाल भद्राश्वयोः सीमानम् विदधाते ॥

शब्दार्थ—

तथा एव	१.	उसी प्रकार	निषध	९.	निषध पर्वत तक
इलावृतम्	२.	इलावृत के	आयतौ	१०.	फैले हुये
अपरेण	४.	पश्चिम की ओर	द्विसहस्रम्	११.	दो सहस्र योजन
पूर्वेण	३.	पूर्व से	पप्रथतुः	१२.	चौड़े हैं जो
च	६.	और	केतुमाल	१३.	केतुमाल और
माल्यवत्	५.	माल्यवान्	भद्राश्वयोः	१४.	भद्राश्व नाम के दो वर्षों की
गन्धमादनौ	७.	गन्धमादन	सीमानम्	१५.	सीमा को
आनील।	८.	नील	विदधाते ॥	१६.	बाँधते हैं

श्लोकार्थ—उसी प्रकार इलावृत के पूर्व से पश्चिम की ओर माल्यवान् और गन्धमादन नील-निषध पर्वत तक फैले हुये दो सहस्र योजन चौड़े हैं जो केतुमाल और भद्राश्व नाम के दो वर्षों की सीमा को बाँधते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

मन्दरो मेरुमन्दरः सुपार्श्वः कुमुद इत्ययुतयोजनविस्तारोन्नाहा मेरोश्चतुर्दिशमवष्टम्भगिरय उपक्लृप्ताः ॥११॥

पदच्छेद—मन्दरः मेरुमन्दरः सुपार्श्वः कुमुद इति अयुत योजन विस्तार उन्नाहाः मेरोः चतुर्दिशम् अवष्टम्भ गिरयः उपक्लृप्ताः ॥

शब्दार्थ—

मन्दरः	२.	मन्दर	विस्तार	८.	चौड़े विस्तार वाले और
मेरुमन्दरः	३.	मेरु-मन्दा	उन्नाहा	९.	उतने ही लम्बे ऊँचे
सुपार्श्व	४.	सुपार्श्व और	मेरोः	१०.	मेरु पर्वत से
कुमुद'	५.	कुमुद (थे)	चतुर्दिशम्	११.	चारों ओर
इति	१.	इस प्रकार	अवष्टम्भ	१२.	आधारभूत
अयुत	६.	दस-दस हजार	गिरयः	१३.	पर्वत के समान
योजन	७.	योजन	उपक्लृप्ताः ॥	१४.	बने हुये हैं

श्लोकार्थ—इस प्रकार मन्दर, मेरु मन्दर, सुपार्श्व और कुमुद ये दस-दस हजार योजन चौड़े विस्तार वाले और उतने ही लम्बे ऊँचे मेरु पर्वत के चारों ओर आधारभूत पर्वत के समान बने हुये हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

चतुर्ष्वेतेषु चूतजम्बूकदम्बन्यग्रोधाश्चत्वारः पादपप्रवराः पर्वतकेतव इवाधिसहस्रयोजनोन्नाहास्तावद् विटपविततयः शतयोजनपरिणाहाः ॥१२॥

पदच्छेद—चतुर्षु एतेषु चूत जम्बू कदम्ब न्यग्रोधाः चत्वारः पादप प्रवराः पर्वत केतवः इव अधिसहस्र योजन उन्नाहाः तावद् विटप विततयः शत योजन परिणाहाः ॥

शब्दार्थ—

चतुर्षु	२.	चारों के ऊपर	केतवः	४.	ध्वजाओं के
एतेषु	१.	इन	इव	५.	समान
चूत	६.	आम	अधिसहस्र	१३.	प्रत्येक ग्यारह सौ
जम्बू	७.	जामुन	योजन	१४.	योजन
कदम्ब	८.	कदम्ब (और)	उन्नाहाः	१५.	ऊँचे हैं (और)
न्यग्रोधाः	९.	बड़ के	तावद्	१६.	उतना ही
चत्वारः	१०.	चार	विटप	१७.	वृक्षों की
पादप	१२.	पेड़	विततयः	१८.	शाखाओं का विस्तार है
प्रवराः	११.	विशाल	शतयोजन	१९.	सौ योजन
पर्वत	३.	पर्वतों की	परिणाहाः ॥	२०.	इनकी मोटाई

श्लोकार्थ—इन चारों के ऊपर पर्वतों की ध्वजाओं के समान आम, जामुन, कदम्ब और बड़ के चार विशाल पेड़ हैं। प्रत्येक ग्यारह सौ योजन ऊँचे हैं, उतना ही वृक्षों की शाखाओं का विस्तार है। सौ योजन इनकी मोटाई है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

ह्रदाश्चत्वारः पयोमध्विक्षुरसमृष्टजला यदुपस्पर्शिन उपदेवगणा योगैश्वर्याणिस्वाभाविकानि भरतर्षभ धारयन्ति ॥१३॥

पदच्छेद— ह्रदाः चत्वारः पयः मधु इक्षुरस मृष्ट जलाः यद् उपस्पर्शिनः । उपदेवगणाः योगैश्वर्याणि स्वाभाविकानि भरतर्षभ धारयन्ति ॥

शब्दार्थ—

ह्रदाः	३.	सरोवर हैं (जो)	उपस्पर्शिनः	९.	सेवन करनेवाले
चत्वारः	२.	चार	उपदेव	११.	उपदेवों को
पयः	४.	दूध	गणा	१०.	यक्ष किन्नरादि
मधु	५.	शहद	योगैश्वर्याणि	१३.	योग की सिद्धियाँ
इक्षुरस	६.	ईख के रस (और)	स्वाभाविकानि	१२.	स्वभाव से ही
मृष्टजलाः	७.	मीठे जल से भरे हैं	भरतर्षभ	१.	हे भरतश्रेष्ठ ! इन पर्वतों पर
यद्	८.	इनका	धारयन्ति ॥	१४.	प्राप्त होती है

श्लोकार्थ—हे भरत श्रेष्ठ ! इन पर्वतों पर चार सरोवर हैं, जो दूध, सहद, ईख के रस, और मीठे जल से भरे हैं। इनका सेवन करने वाले यक्ष, किन्नरादि उपदेवों को योग की सिद्धियाँ प्राप्त होती है।

चतुर्दशः श्लोकः

देवोद्यानानि च भवन्ति चत्वारि नन्दनं चैत्ररथं वैभ्राजकं सर्वतोभद्रमिति ॥१४॥

पदच्छेद— देव उद्यानानि च भवन्ति चत्वारि नन्दनम् । चैत्ररथम् वैभ्राजकम् सर्वतो भद्रम् इति ॥

शब्दार्थ—

देव	८.	दिव्य	नन्दनम्	१.	इन पर नन्दन
उद्यानानि	९.	उपवन भी	चैत्ररथम्	२.	चैत्ररथ
च	४.	और	वैभ्राजकम्	३.	वैभ्राजिक
भवन्ति	१०.	हैं	सर्वतो	५.	सर्वतो
चत्वारि	७.	चार	भद्रम् इति ॥	६.	भद्र नाम के

श्लोकार्थ—इन पर नन्दन, चैत्ररथ, वैभ्राजिक और सर्वतोभद्र नाम के चार दिव्य उपवन भी हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

येष्वमरपरिवृढाः सह सुरललनाललामयूथपतय उपदेवगणैरुपगीय-मानमहिमानः किल विहरन्ति ॥१५॥

पदच्छेद— येषु अमर परिवृढाः सह सुर ललना ललाम यूथ पतयः उपदेव गणैः उपगीयमान महिमानः किल विहरन्ति ॥

शब्दार्थ—

येषु	१.	इन पर	ललाम	४.	श्रेष्ठ
अमर	३.	देवगण	यूथपतयः	८.	नायक बन कर
परिवृढाः	२.	प्रधान-प्रधान	उपदेवगणैः	६.	गन्धर्वादि उपदेव गणों के साथ
सह	७.	साथ	उपगीयमान	११.	बखान सुनते हुये
सुर	५.	देव	महिमानः	१०	महिमा का
ललना	६.	सुन्दरियों के	किल विहरन्ति ॥	११.	निश्चय ही, विहार करते हैं

श्लोकार्थ—इन पर प्रधान-प्रधान देवगण श्रेष्ठ देव सुन्दरियों के साथ नायक बनकर गन्धर्वादि उपदेव गणों के साथ महिमा का बखान सुनते हुये निश्चय ही विहार करते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

मन्दरोत्सङ्ग एकादशशतयोजनोत्तुङ्गदेवचूतशिरसो गिरिशिखरस्थूलानि फलान्यमृतकल्पानि पतन्ति ॥१६॥

पदच्छेद— मन्दर उत्सङ्गे एकादश शतयोजन उत्तुङ्ग देव चूत शिरसः गिरि शिखर स्थूलानि अमृत कल्पानि फलानि पतन्ति ॥

शब्दार्थ—

मन्दरः	१.	मन्दिरा चल की	गिरि	८.	पर्वत के
उत्सङ्ग	२.	गोद में (जो)	शिखर	९.	शिखर के समान
एकादश	३.	ग्यारह	स्थूलानि	१०.	बड़े-बड़े और
शतयोजन	४.	सो योजन	फलानि	१३.	फल
उत्तुङ्ग	५.	ऊँचा	अमृत	१२.	अमृत के समान
देव	६.	देवताओं का	कल्पानि	१०.	स्वादिष्ठ
चूत शिरसः	७.	आम्र वृक्ष है (उसमें)	पतन्ति ॥	१४.	गिरते हैं

श्लोकार्थ—मन्दराचल की गोद में जो ग्यारह सो योजन, ऊँचा देवताओं का आम्र वृक्ष है, उससे पर्वत के शिखर के समान बड़े-बड़े और अमृत के समान स्वादिष्ठ फल गिरते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

तेषां विशीर्यमाणानामतिमधुरसुरभिसुगन्धिबहुलारुणरसोदेनारुणोदा नाम नदी मन्दरगिरिशिखरान्निपतन्ती पूर्वेणेलावृतमुपप्लावयति ॥१७॥

पदच्छेद—तेषाम् विशीर्यमाणानाम् अति मधुर सुरभि सुगन्धि बहुल अरुण रस उदेन अरुणोदा नाम नदी मन्दर गिरि शिखरात् निपतन्ती पूर्वेण इलावृतम् उपप्लावयति ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	१. उनके	अरुणोदा	९. वही अरुणोदा
विशीर्यमाणानाम्	२. फटने पर	नाम	१०. नाम की
अति मधुर	३. अत्यन्त मीठा	नदी	११. नदी है (जो)
सुरभि	४. सुहावना	मन्दर गिरि	१२. मन्दराचल पर्वत के
सुगन्धि	५. सुगन्ध से	शिखरात्	१३. शिखर से
बहुल	६. युक्त	निपतन्ती	१४. गिरकर
अरुण	७. लाल-लाल	पूर्वेण	१६. पूर्वी भाग को
रसउदेन	८. रस बहने लगता है	इलावृतम्	१५. इलावृत्त के
		उपप्लावयति ॥	१७. सींचती है

श्लोकार्थ—उनके फटने पर अत्यन्त मीठा, सुहावना, सुगन्ध से युक्त, लाल-लाल रस बहने लगता है। वही अरुणोदा नाम की नदी है। जो मन्दराचल पर्वत के शिखर से गिरकर इलावृत के पूर्वी भाग को सींचती है ॥

अष्टादशः श्लोकः

यदुपजोषणाद्भवान्या अनुचरीणां पुण्यजनवधूनामवयवस्पर्शसुगन्धवातो दशयोजनं समन्तादनुवासयति ॥१८॥

पदच्छेद—यद् उपजोषणात् भवान्या अनुचरीणाम् पुण्यजन वधूनाम् अवयव स्पर्श सुगन्ध वातः दश योजनम् समन्ताद् अनुवासयति ॥

शब्दार्थ—

यद्	१. जिसका	स्पर्श	८. स्पर्श करके बहने वाली
उपजोषणात्	२. सेवन करने पर	सुगन्ध	९. सुगन्धित
भवान्या	३. पार्वती जी की	वातः	१०. वायु
अनुचरीणाम्	४. अनुचरी	दश	११. दश
पुण्यजन	५. यक्षों की	योजनम्	१२. योजन तक
वधूनाम्	६. पत्नियों के	समन्ताद्	१४. चारों ओर
अवयव	७. अङ्गों से	अनुवासयति॥	१२. सुगन्ध से भर देती है

श्लोकार्थ—जिसका सेवन करने पर पार्वती जी की अनुचरी यक्षों की पत्नियों के अङ्गों का स्पर्श करके बहने वाली सुगन्धित वायु दश योजन तक चारों ओर सुगन्ध से भर देती है।

एकोनविंशः श्लोकः

एवं जम्बूफलानामत्युच्चनिपातविशीर्णानामनस्थिप्रायाणामिभकायनिभानां रसेन जम्बूनाम नदी मेरुमन्दरशिखरादयुतयोजनादवनितले निपतन्ती दक्षिणेनात्मानं यावदिलावृतमुपस्यन्दयति ॥१९॥

पदच्छेद—एवम् जम्बू फलानाम् अति उच्च निपात विशीर्णानाम् अनस्थिप्रायाणाम् इभकाय निभानाम् रसेन जम्बूनाम नदी मेरु मन्दर शिखरात् अयुत योजनात् अवनितले निपतन्ती दक्षिणेन आत्मानम् यावद् इलावृतम् उपस्यन्दयति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इसी प्रकार	मेरु मन्दर	१२.	मेरु मन्दर पर्वत के
जम्बू	२.	जामुन के वृक्ष से	शिखरात्	१३.	शिखर से
फलानाम्	३.	फल गिरते है	अयुत	१४.	दश हजार
अतिउच्च	४.	बहुत ऊँचे से	योजनात्	१६.	योजन ऊँचे हैं
निपात	५.	गिरने के कारण	अवनितले	१७.	पृथ्वी पर
विशीर्णानाम्	६.	वे फट जाते हैं	निपतन्ती	१८.	गिर कर
अनस्थिप्रायाणाम्	७.	वे बिना गुठली के	दक्षिणेन	२०.	दक्षिणी
इभकाय	८.	हाथी के शरीर के	आत्मानम्	२१.	भू भाग को
निभानाम्	९.	समान हैं	यावद्	१४.	जो
रसेन	१०.	उनके रस से	इलावृतम्	१९.	इलावृत के
जम्बूनाम नदी	११.	जम्बू नाम की नदी निकल कर	उपस्यन्दयति ॥	२२.	सींचती है

श्लोकार्थ—इसी प्रकार जामुन के वृक्ष से फल गिरते हैं। बहुत ऊँचे से गिरने के कारण वे फट जाते हैं। वे बिना गुठली के हैं। हाथी के शरीर के समान हैं, उनके रस से जम्बू नाम की नदी निकलकर मेरुमन्दर पर्वत के शिखर से, जो दस हजार योजन ऊँचे हैं, पृथ्वी पर गिर कर इलावृत के दक्षिणी भूभाग को सींचती हैं ॥

विंशः श्लोकः

तावदुभयोरपि रोधसोर्या मृत्तिका तद्रसेनानुविध्यमाना वाय्वर्कसंयोग-विपाकेन सदामरलोकाभरणं जाम्बूनदं नाम सुवर्णं भवति ॥२०॥

पदच्छेद—तावद् उभयोः अपि रोधसः या मृत्तिका तद्रसेन अनुविध्यमाना वायु अर्क संयोग विपाकेन सदा अमर लोक आभरणम् जाम्बूनदम् नाम सुवर्णम् भवति ॥

शब्दार्थ—

तावद्	१. उस नदी के	संयोग	१०. संयोग से
उभयोः	२. दोनों	विपाकेन	११. सूख जाती है
अपि	३. ही	सदा	१२. तब वही
रोधसः	४. किनारों की	अमरलोक	१३. देवलोक को
या	५. जो	आभरणम्	१४. विभूषित करने वाला
मृत्तिका	६. मिट्टी है	जाम्बूनदम्	१५. जाम्बूनद
तद्रसेन	७. वह उस रस से	नाम	१६. नाम का
अनुविध्यमाना	८. भीग कर (जब)	सुवर्णम्	१७. सोना बन जाता
वायु अर्क	९. वायु और सूर्य के	भवति ॥	१८. है

श्लोकार्थ—उस नदी के दोनों ही किनारों की जो मिट्टी है वह उस रस से भीग कर जब वायु और सूर्य के संयोग से सूख जाती है। तब वही देव लोक को विभूषित करने वाला जाम्बूनद नाम का सोना बन जाता है ॥

एकविंशः श्लोकः

यदु ह वाव विबुधादयः सह युवतिभिर्मुकुटकटककटिसूत्राद्याभरणरूपेण खलु धारयन्ति ॥२१॥

पदच्छेद—यद् उ ह वाव विबुध आदयः सह युवतिभिः मुकुट कटक कटिसूत्र आदि आभरण रूपेण खलु धारयन्ति ॥

शब्दार्थ—

यद् उ ह वाव	१. जिसे	कटिसूत्र	७. करधनी
विबुध	२. देवता	आदि	८. इत्यादि
आदयः	३. गन्धर्व आदि	आभरण	९. अभूषणों के
सह	५. सहित	रूपेण	१०. रूपों में
युवतिभिः	४. अपनी स्त्रियों के	खलु	११. निश्चय ही
मुकुट-कटक	६. मुकुट-कङ्कण और	धारयन्ति ॥	१२. धारण करते हैं

श्लोकार्थ—जिसे देवता, गन्धर्व आदि अपनी स्त्रियों के सहित मुकुट-कङ्कण और करधनी इत्यादि आभूषणों के रूपों में निश्चय ही धारण करते हैं।

द्वाविंशः श्लोकः

यस्तु महाकदम्बः सुपार्श्वनिरूढो यास्तस्य कोटरेभ्यो विनिःसृताः पञ्चायामपरिणाहाः पञ्च मधुधाराः सुपार्श्वशिखरात्पतन्त्योऽपरेणात्मानमिलावृतमनुमोदयन्ति ॥२२॥

पदच्छेद—यः तु महा कदम्बः सुपार्श्व निरूढः याः तस्य कोटरेभ्यः विनिसृताः पञ्चआयाम परिणाहाः पञ्चमधुधाराः सुपार्श्व शिखरात् पतन्त्यः अपरेण आत्मानम् इलावृतम् अनुमोदयन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः तु	३.	जो	परिणाहाः	१३.	पुर से जितनी
महाकदम्बः	४.	विशाल कदम्ब वृक्ष	पञ्च	१२.	पांच
सुपार्श्व	१.	सूपार्श्व पर्वत पर	मधुधाराः	८.	मधु की धारायें
निरूढः	२.	लगा हुआ	सुपार्श्व	१४.	ये सुपार्श्व के
याः	१०.	जिनकी	शिखरात्	१५.	शिखर से
तस्य	५.	उसकी	पतन्त्यः	१६.	गिरकर
कोटरेभ्यः	६.	कोटरों से	अपरेण	१८.	पश्चिमी भाग को
विनिःसृताः	९.	निकलती हैं	आत्मानम्	१९.	अपनी सुगन्ध से
पञ्च	७.	पांच	इलावृतम्	१७.	इलावृत वर्ष के समान
आयाम	११.	मोटाई	अनुमोदयन्ति ॥	२०.	सुवासित करती है

श्लोकार्थ—सुपार्श्व पर्वत पर लगा हुआ जो विशाल कदम्ब वृक्ष है उसकी कोटरों से पांच मधु की धारायें निकलती हैं। जिनकी मोटाई पांच पुर से जितनी हैं। ये सुपार्श्व के शिखर से गिर कर इलावृत के पश्चिमी भाग को अपनी सुगन्ध से सुवासित करती हैं।

त्रयोविंशः श्लोकः

या ह्युपयुञ्जानानां मुखनिर्वासितो वायुः समन्ताच्छतयोजनमनुवासयति ॥२३॥

पदच्छेद—याः हि उपयुञ्जानानाम् मुखनिर्वासितः वायुः समन्तात् शतयोजनम् अनुवासयति ॥

शब्दार्थ—

याः हि	१.	जो	वायु	५.	वायु
उपयुञ्जानानाम्	२.	इनका मधुपान करते हैं	समन्तात्	६.	अपने चारों ओर
मुख	३.	उनके मुख से	शतयोजनम्	७.	सौ योजन तक
निर्वासितः	४.	निकली हुई	अनुवासयति ॥	८.	सुगन्ध फैला देती है

श्लोकार्थ—जो उनका मधुपान करते हैं, उनके मुख से निकली हुई वायु अपने चारों ओर सौ योजन तक सुगन्ध फैला देती है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवं कुमुदनिरूढो यः शतवल्शो नाम वटस्तस्य स्कन्धेभ्यो नीचीनाः पयोदधिमधुघृतगुडान्नाद्यम्बरशय्यासनाभरणादयः सर्व एव कामदुघा नदाः कुमुदाग्रात्पतन्तस्तमुत्तरेणेलावृतमुपयोजयन्ति । २४॥

पदच्छेद—एवम् कुमुद निरूढः यः शतवल्शः नाम वटः तस्य स्कन्धेभ्यः नीचीनाः पयः दधि मधुघृत गुड अन्नादि अम्बर शय्या आसन आभरण आदयः सर्वे एव काम दुघा नदाः कुमुद अग्रात् पतन्तः तम् उत्तरेण इलावृतम् उपयोजयन्ति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	अम्बर	२०.	वस्त्र
कुमुद	२.	कुमुद पर्वत पर	शय्या	२१.	शय्या
निरूढः	३.	लगा हुआ	आसन	२२.	आसन (और)
यः	४.	जो	आभरण	२३.	आभूषण
शतवल्शः	५.	शतवल्श	आदयः	२४.	आदि
नाम	६.	नामका	सर्वे	२५.	सब
वटः	७.	वट-वृक्ष है	एव	२६.	ही पदार्थ देने वाले
तस्य	८.	उसकी	काम	११.	इच्छानुसार
स्कन्धेभ्यः	९.	जटाओं से	दुघाः	१२.	भोग देने वाले
नीचीनाः	१०.	नीचे की ओर बहने वाले	नदाः	२७.	नद निकलते हैं (जो)
पयः	१३.	दूध	कुमुद	२८.	कुमुद के
दधि	१४.	दही	अग्रात्	२९.	शिखर से
मधु	१५.	शहद	पतन्तः	३०.	गिर कर
घृत	१६.	घी	तम्	३१.	उस
गुड	१७.	गुड़	उत्तरेण	३३.	उत्तरी भाग को
अन्न	१८.	अन्न	इलावृतम्	३२.	इलावृत के
आदि	१९.	इत्यादि	उपयोजयन्ति ॥	३४.	सींचते हैं

श्लोकार्थ—इस प्रकार कुमुद पर्वत पर लगा हुआ जो शतवल्श नाम का वट वृक्ष है उसकी जटाओं से नीचे की ओर बहने वाले इच्छानुसार भोग देने वाले दूध, दही, शहद, घी, गुण, अन्न इत्यादि वस्त्र, शय्या, आसन और आभूषण आदि सभी पदार्थ देने वाले नद निकलते हैं। जो कुमुद के शिखर से गिरकर उस इलावृत के उत्तरी भाग को सींचते हैं।

पञ्चविंशः श्लोकः

यानुपजुषाणानां न कदाचिदपि प्रजानां वलीपलितक्लमस्वेददौर्गन्ध्यजरामयमृत्युशीतोष्णवैवर्ण्योपसर्गादयस्तापविशेषा भवन्ति यावद् जीवं सुखं निरतिशयमेव ॥२५॥

पदच्छेद – यान् उपजुषाणानाम् न कदाचित् अपि प्रजानाम् वली पलित क्लमस्वेददौर्गन्ध्य जरा आमय मृत्यु शीत उष्ण वैवर्ण्य उपसर्ग आदयः ताप विशेषा भवन्ति यावद् जीवम् सुखम् निरतिशयम् एव ॥

शब्दार्थ—

यान्	१.	जिन पदार्थों का	उष्ण	१०.	गर्मी लगना
उपजुषाणानाम्	२.	उपयोग करने से	वैवर्ण्य	११.	शरीर का कान्तिहीन होना
न	१५.	नहीं	उपसर्ग	१२.	अङ्गों का टूटना
कदाचित् अपि	३.	कभी भी	आदयः	१३.	इत्यादि
प्रजानाम्	४.	प्रजा की त्वचा में	तापविशेषाः	१४.	कष्ट
वली-पलित	५.	झुर्रियाँ पड़ना, बाल पकना	भवन्ति	१६.	होते हैं
क्लम-स्वेद	६.	थकान होना, पसीना आना	यावद्	१८.	पर्यन्त
दौर्गन्ध्य	७.	दुर्गन्ध निकलना	जीवम्	१७.	जीवन
जरा-आमय	८.	बुढ़ापा-रोग	सुखम्	२०.	सुख
मृत्यु-शीत	९.	मृत्यु-सर्दी लगना	निरतिशयम्	१९.	अत्यधिक
			एव ॥	२१.	ही (प्राप्त होता है)

श्लोकार्थ—जिन पदार्थों का उपभोग करने से कभी भी प्रजा की त्वचा में झुर्रियाँ पड़ना, बाल पकना, थकान होना, पसीना आना, दुर्गन्ध निकलना, बुढ़ापा, रोग, मृत्यु, सर्दी लगना, गर्मी लगना शरीर का कान्ति हीन होना, अङ्गों का टूटना इत्यादि कष्ट नहीं होते हैं जीवन पर्यन्त अत्यधिक सुख ही प्राप्त होता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

कुरङ्गकुररकुसुम्भवैकङ्कत्रिकूटशिशिरपतङ्गरुचकनिषधशिनीवासकपिलशङ्खवैदूर्यजारुधिहंसर्षभनागकालञ्जरनारदादयो विंशतिगिरयो मेरोः कर्णिकाया इव केसरभूता मूलदेशे परित उपक्लृप्ताः ॥२६॥

पदच्छेद – कुरङ्ग कुरर कुसुम्भवैकङ्क त्रिकूट शिशिर पतङ्ग रुचक निषध शिनीवास कपिल शङ्ख वैदूर्य जारुधि हंस ऋषभ नाग कालञ्जर नारद आदयः विंशति गिरयः मेरोः कर्णिकाया इव केसर भूता मूलदेशे परितः उपक्लृप्ताः ॥

शब्दार्थ—

कुरङ्ग-कुरर	६.	कुरङ्ग कुरर	नाग-कालञ्जर	१५.	नाग-कालञ्जर (और)
कुसुम्भ-वैकङ्क	७.	कुसुम्भ-वैकङ्क	नारद आदयः	१६.	नारद आदि
त्रिकूट-शिशिर	८.	त्रिकूट-शिशिर	विंशतिगिरयः	१७.	बीस पर्वत
पतङ्ग-रुचक	९.	पतङ्ग-रुचक	मेरोः	३.	मेरु के
निषध-शिनीवास	१०.	निषध-शिनीवास	कर्णिकायाः	१.	कमल की कर्णिका के
कपिल-शङ्ख	१२.	कपिल-शङ्ख	इव केशरभूता	२.	जैसे केशर होता है (उसी प्रकार
वैदूर्य-जारुधि	१३.	वैदूर्य-जारुधि	मूलदेशे	४.	मूलदेश में
हंस-ऋषभ	१४.	हंस-ऋषभ	परितः	५.	उसके चारों ओर
			उपक्लृप्ताः ॥	१८.	ओर हैं

श्लोकार्थ—कमल की कर्णिका के जैसे केसर होता है उसी प्रकार मेरु के मूल देश में उसके चारों ओर कुरङ्ग, कुरर, कुसुम्भ, वैकङ्क, त्रिकूट, शिशिर, पतङ्ग, रुचक, निषध, शिनीवाल, कपिल, शङ्ख, वैदूर्य, जारुधि, हंस ऋषभ, नाग, कालञ्जर और नारद आदि बीस पर्वत ओर हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

जठरदेवकूटौ मेरुं पूर्वेणाष्टादशयोजनसहस्रमुदगायतो द्विसहस्रं पृथुतुङ्गौ भवतः। एवमपरेण पवनपारियात्रौ दक्षिणेन कैलासकरवीरो प्रागायतावेवमुत्तरस्त्रिशृङ्गमकरावष्टभिरेतैः परिस्तृतोऽग्निरिव परितश्चकास्ति काञ्चनगिरिः ॥२७॥

पदच्छेद—जठर देव कूटौ मेरुम् पूर्वेण अष्टादश योजन सहस्रम् उद गायतः द्विसहस्रम् पृथुतुङ्गौ भवतः। एवम् अपरेण पवन पारियात्रौ दक्षिणेन कैलासकरवीरौ प्राक् आयतौ एवम् उत्तरः त्रिशृङ्ग मकरौ अष्टभिः एतैः परिस्तृतः अग्निः इव परितः चकास्ति काञ्चन गिरिः ॥

शब्दार्थ—

जठर	३.	जठर और	कैलाश	१८.	कैलाश और
देवकूटौ	४.	देतकूट नाम के पर्वत हैं (जो)	करवीरौ	१९.	करवीर
मेरुम्	१.	मेरु के	प्राक्	२१.	पूर्व से
पूर्वेण	२.	पूर्व की ओर	आयतौ	२३.	फैल हुये
अष्टादश	५.	अठारह	एवम्	२०.	इसी प्रकार
योजन	७.	योजन	उत्तरः	२२.	उत्तर की ओर
सहस्रम्	६.	हजार	त्रिशृङ्ग	२४.	त्रिशृङ्ग और
उदगायतः	८.	लम्बे (तथा)	मकरौ	२५.	मकर नाम के पर्वत हैं
द्विसहस्रम्	९.	दो हजार योजन	अष्टभिः	२७.	आठ पहाड़ों से
पृथु	१०	चौड़े और	एतैः	२६.	इन
तुङ्गौ	११.	ऊँचे	परिस्तृतः	२९.	घिरा हुआ
भवतः	१२.	हैं	अग्निः	३१.	अग्नि के
एवम्	१३.	इसी प्रकार	इव	३३.	समान
अपरेण	१४.	पश्चिम की ओर	परितः	२८.	चारों ओर
पवन	१५.	पवन और	चकास्ति	३४.	जगमगाता रहता है
पारियात्रौ	१६.	पारियात्र (तथा)	काञ्चन	३०.	सुवर्ण
दक्षिणेन	१७.	दक्षिण की ओर	गिरिः ॥	३२.	गिरि मेरु

श्लोकार्थ—मेरु के पूर्व की ओर जठर और देवकूट नाम के पर्वत हैं। जो अठारह हजार योजन लम्बे तथा चौड़े और ऊँचे हैं। इसी प्रकार पश्चिम की ओर पवन और पारियात्र तथा दक्षिण की ओर कैलाश और करवीर इसी प्रकार पूर्व से उत्तर की ओर फैले हुये त्रिशृङ्ग और मकर नाम के पर्वत हैं। इन आठ पर्वतों से चारों ओर घिरा हुआ सुवर्णगिरि मेरु अग्नि के समान जगमगाता रहता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

मेरोर्मूर्धनि भगवत आत्मयोनेर्मध्यत उपक्लृप्तां पुरीमयुतयोजनसाहस्रीं समचतुरस्रां शातकौम्भीं वदन्ति ॥२८॥

पदच्छेद—मेरोः मूर्धनि भगवतः आत्मयोनेः मध्यतः उपक्लृप्ताम् पुरीम् अयुत योजन साहस्रीम् समचतुरस्राम् शातकौम्भीम् वदन्ति ॥

शब्दार्थ—

मेरोः	१. मेरु पर्वत के	पुरीम्	७. पुरी
मूर्धनि	२. शिखर पर	अयुत	६. करोड़
भगवतः	४. भगवान्	योजनसाहस्रीम्	१०. योजन विस्तार वाली
आत्मयोनेः	५. ब्रह्माजी की	समचतुरस्राम्	११. आकार में सम तथा चौरस
मध्यतः	३. बीचों-बीच	शातकौम्भीम्	६. सुवर्णमयी
उपक्लृप्ताम् ।	८. स्थित है (जो)	वदन्ति ॥	१२. बताई जाती है

श्लोकार्थ—मेरु पर्वत के शिखर पर बीचों-बीच भगवान् ब्रह्माजी की सुवर्णमयी पुरी स्थित है। जो करोड़ योजन विस्तार वाली, आकार में चौरस तथा सम बताई जाती है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तामनु परितो लोकपालानामष्टानां यथादिशं यथारूपं तुरीयमानेन पुरोऽष्टावुपक्लृप्ताः ॥२९॥

पदच्छेद—ताम् अनु परितः लोक पालानाम् अष्टानाम् यथा दिशम् यथारूपम् तुरीय मानेन पुरः अष्टौ उपक्लृप्ताः ॥

शब्दार्थ—

ताम्	१. उसके	यथा	६. उसी
अनु परितः	२. नीचे चारों ओर	रूपम्	७. रूप की ब्रह्माजी की पुरी से
लोकपालानाम्	४. लोकपालों की	तुरीयमानेन	८. चौथाई
अष्टानाम्	३. आठ	पुरः	१०. पुरियाँ
यथा दिशम्	५. उन्हीं-उन्हीं दिशाओं में	अष्टौ	९. आठ
		उपक्लृप्ताः ॥	११. स्थित हैं

श्लोकार्थ—उसके नीचे चारों ओर आठ लोकपालों की उन्हीं-उन्हीं दिशाओं में उसी रूप की ब्रह्माजी की पुरी से चौथाई परिमाण में आठ पुरियाँ स्थित हैं ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे षोडशोऽध्यायः ॥१६॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—तत्र भगवतः साक्षाद्यज्ञलिङ्गस्य विष्णोर्विक्रमतो वामपादाङ्गुष्ठनखनिर्भिन्नोर्ध्वाण्डकटाहविवरेणान्तःप्रविष्टा या बाह्यजलधारा तच्चरणपङ्कजावनेजनारुणकिञ्जल्कोपरञ्जिताखिलजगदघमलापहोपस्पर्शनामला साक्षाद्भगवत्पदीत्यनुपलक्षितवचोऽभिधीयमानातिमहता कालेन युगसहस्रोपलक्षणेन दिवो मूर्धन्यवततार यत्तद्विष्णुपदमाहुः ॥१॥

पदच्छेद—तत्र भगवतः साक्षात् यज्ञलिङ्गस्य विष्णोः विक्रमतः वामपाद अङ्गुष्ठनख निर्भिन्न ऊर्ध्व अण्ड कटाह विवरेण अन्तः प्रविष्टा या बाह्यजलधारा तत् चरण पङ्कज अवनेजन अरुण किञ्जल्क उपरञ्जित अखिल जगत् अघमल आपह उपस्पर्शन अमला साक्षात् भगवत् पदी इति अनुपलक्षितवचः अभिधीयमान अतिमहता कालेन युगसहस्र उपलक्षणेन दिवः मूर्धनि अवततार यत् तद् विष्णु पदम् आहुः ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१. वहाँ	अखिल जगत्	२०. सम्पूर्ण संसार के
भगवतः साक्षात्	२. भगवान् साक्षात्	अघमल	२१. पाप और मलों को
यज्ञलिङ्गस्य	३. यज्ञमूर्ति	आपह	२२. नष्ट करने वाली हुई (उसे)
विष्णोः	४. विष्णु में त्रिलोकी को	उपस्पर्शन	१९. स्पर्श होते ही (वह)
विक्रमतः	५. नापने के लिये अपने पैर को बढ़ाया	अमला	१८. निर्मलधारा का
वामपाद	६. बायें पैर के	साक्षात्भगवत्पदी	२३. साक्षात् भगवत्पदी ही
अंगुष्ठनख	७. अंगूठे के नख से	इति	२४. ऐसा कहते हैं
निर्भिन्न	१०. फट गया (उस)	अनुपलक्षित	२५. पहले और किसी नाम से
ऊर्ध्व	९. ऊपर का भाग	वचः	२६. वाणी द्वारा न
अण्डकटाह	८. ब्रह्माण्ड कटाह का	अभिधीयमान	२७. पुकार कर
विवरेण	११. छिद्र से होकर	अतिमहता कालेन	२८. बहुत समय से
अन्तःप्रविष्टा	१३. अन्दर आई	युग सहस्र	२९. हजारों युग के
या बाह्यजलधारा	१२. जो बाहर की जल धारा	उपलक्षणेन दिवः	३०. बीत जाने पर स्वर्ग के
तत्चरणपङ्कज	१४. उससे चरण कमल को	मूर्धनि अवततार	३१. शिरोभाग में उतरी
अवनेजल	१५. धोने से उसमें लगी	यत् तद्	३२. जो यह गंगा है (उसे)
अरुण	१७. लाल (हो गई उस)	विष्णुपदम्	३३. विष्णुपदी भी
किञ्जल्क उपरञ्जित	१६. केसर के मिलने से	आहुः ॥	३४. कहते हैं

श्लोकार्थ—वहाँ साक्षात् भगवान् यज्ञमूर्ति विष्णु ने त्रिलोकी को नापने के लिये अपने पैर को बढ़ाया। बाँये पैर के अंगूठे के नख से ब्रह्माण्डकटाह का ऊपर का भाग फट गया। उस छिद्र से होकर जो बाहर की जलधारा अन्दर आई उसमे चरण कमल को धोने से उसमें लगी केसर के मिलने से वह लाल हो गई। उस निर्मलधारा का स्पर्श होते ही वह सम्पूर्ण संसार के पाप और मलों को नष्ट करने वाली हुई। उसे साक्षात् भगवत्पदी ऐसा कहते हैं। पहले और किसी नाम से वाणी द्वारा न पुकार कर बहुत समय से हजार युग के बीत जाने पर स्वर्ग के शिरोभाग से उतरी जो यह गंगा है, उसे विष्णुपदी भी कहते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

यत्र ह वाव वीरव्रत औत्तानपादिः परमभागवतोऽस्मत्कुलदेवता-चरणारविन्दोदकमिति यामनुसवनमुत्कृष्यमाणभगवद्भक्तियोगेन दृढं क्लिद्यमानान्तर्हृदय औत्कण्ठ्यविवशामीलितलोचनयुगलकुड्मलविगलितामलबाष्पकलयाभिव्यज्यमानरोमपुलककुलकोऽधुनापि परमादरेण शिरसा बिभर्ति ॥२॥

पदच्छेद—यत्र ह वाव वीरव्रत औत्तानपादिः परमभागवतः अस्मत् कुलदेवता चरणारविन्द उदकम् इति याम् अनुसवनम् उत्कृष्यमाण भगवत् भक्ति योगेन दृढम् क्लिद्यमान अन्तः हृदय औत्कण्ठ्य विवश आमीलित लोचन युगल कुड्मल विगलित अमल बाष्प कलया अभिव्यज्यमान रोम पुलक कुलकः अधुना अपि परमादरेण शिरसा बिभर्ति ॥

शब्दार्थ—

यत्र ह वाव	२.	उस ध्रुवलोक में	औत्कण्ठ्य	१९.	उत्कण्ठा के
वीरव्रत	१.	हे वीरव्रत परीक्षित्	विवश	२०.	वश में
औत्तानपादिः	४.	उत्तानपाद के पुत्र ध्रुवजी ने यह	आमीलित	२१.	मुंदे हुये
परमभागवतः	३.	परम भागवत	लोचन	२३.	नयनों से
अस्मत्	५.	हमारे	युगल	२२.	दोनों
कुलदेवता	६.	कुल देवता के	कुड्मल	२४.	कमल
चरणारविन्द	७.	चरण कमलों का	विगलित	२५.	बहती हुई
उदकम्	८.	जल है	अमल	२६.	निर्मल
इति	९.	ऐसा मान कर	बाष्प	२७.	आँसुओं की
याम्	१०.	उसका	कलया	२८.	धारा और
अनुसवनम्	११.	सेवन करके	अभिव्यज्यमान	२९.	दिखाई देते हुये
उत्कृष्यमाण	१२.	बढ़ते हुये (तथा)	रोम पुलक	३०.	रोमाञ्च-पुलकावलि तथा
भगवत्	१४.	भगवत्	कुलक	३१.	आह्लाद से
भक्ति	१५.	भक्ति	अधुना	३२.	उसे आज
योगेन	१६.	भाव से	अपि	३३.	भी
दृढम्	१३.	अत्यधिक दृढ	परमादरेण	३४.	अत्यधिक आदर से
क्लिद्यमान	१८.	गद्-गद होकर	शिरसा	३५.	शिर पर
अन्तः हृदय	१७.	अन्तः करण और हृदय से	बिभर्ति ॥	३६.	धारण करते हैं

श्लोकार्थ—हे वीरव्रत परीक्षित् ! उस ध्रुवलोक में परम भागवत उत्तानपाद के पुत्र ध्रुव जीने यह हमारे कुलदेवता के चरणकमलों का जल है, ऐसा मान कर उसका सेवन करके बढ़ते हुये तथा अत्यधिक दृढ भगवत् भक्तिभाव से अन्तः करण और हृदय से गद्-गद होकर उत्कण्ठा के वश में मुंदे हुये दोनों कमल नयनों से बहती हुई निर्मल आंसुओं की धारा दिखाई देते हुये रोमाञ्च पुलकावलि तथा आह्लाद से उसे आज भी अत्यधिक आदर से सिर पर धारण करते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

ततः सप्त ऋषयस्तत्प्रभावाभिज्ञा यां ननु तपस आत्यन्तिकी सिद्धिरेतावती भगवति सर्वात्मनि वासुदेवेऽनुपरतभक्तियोगलाभेनैवोपेक्षितान्यार्थात्मगतयो मुक्तिमिवागतां मुमुक्षव इव सबहुमानमद्यापि जटाजूटैरुद्वहन्ति ॥३॥

पदच्छेद—ततः सप्त ऋषयः तत्प्रभाव अभिज्ञाः याम् ननु तपसः आत्यन्तिकी सिद्धिः एतावती भगवति सर्व आत्मनि वासुदेवे अनुपरत भक्तियोग लाभेन एव उपेक्षितानि अर्थात्म गतयः मुक्तिम् इव आगताम् मुमुक्षवः इव सबहुमानम् अद्य अपि जटा-जूटैः उद्वहन्ति ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इसके पश्चात्	भक्तियोग	१७.	भक्तियोग को
सप्त	२.	सात	लाभेन	१८.	प्राप्त करके (तथा)
ऋषयः	३.	ऋषिगणों ने	एव	१९	(निश्चय करके) ही
तत्	४.	उसका	उपेक्षितानि	१२.	त्याग दिया है
प्रभाव	५.	प्रभाव	अर्थ-आत्म	२०.	धन-प्राप्ति की
अभिज्ञा	६.	जानने के कारण	गतयः	२१.	स्थिति को
याम्	९.	यही (और)	मुक्तिम्	२६.	मुक्ति को (स्वीकार करते हैं)
ननु	७.	निश्चितरूप से	इव	२४.	जैसे
तपसः	८.	तपस्या की	आगताम्	२५.	प्राप्त हुई
आत्यन्तिकी	११.	सदा-सदा की आन्तरिक	मुमुक्षवः	२३.	मोक्ष कामी पुरुष
सिद्धि	१२.	सिद्धि है	इव	२७.	उसी प्रकार
एतावती	१०.	इतनी ही	सबहुमानम्	२८.	अति सम्मान के साथ (वे महादेव)
भगवति	१४.	भगवान्	अद्य-अपि	२९.	आज भी
सर्व आत्मनि	१३.	सर्वात्मा	जटा	३०.	अपने जटा
वासुदेवे	१५.	वासुदेव की	जूटैः	३१.	जूट पर
अनुपरत	१६.	निश्चल	उद्वहन्ति ॥	३२.	धारण करते हैं

श्लोकार्थ—इसके पश्चात् सात ऋषिगणों से उसका प्रभाव जानने के कारण निश्चित रूप से तपस्या की। यही और इतनी ही सदा-सदा की आन्तरिक सिद्धि है। सर्वात्मा भगवान् वासुदेव की निश्चल भक्तियोग को प्राप्त करके तथा निश्चय करके ही धन-प्राप्ति की स्थिति को त्याग दिया है। मोक्षकामी पुरुष जैसे प्राप्त हुई मुक्ति को स्वीकार करते हैं, उसी प्रकार अतिसम्मान के साथ वे महादेव आज भी अपने जटा जूट पर धारण करते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

ततोऽनेकसहस्रकोटिविमानानीकसङ्कुलदेवयानेनावतरन्तीन्दुमण्डलमावार्य-ब्रह्मसदने निपतति ॥४॥

पदच्छेद—ततः अनेक सहस्र कोटि विमान अनीक सङ्कुल देवयानेन अवतरन्ती इन्दु मण्डलम् आवार्य ब्रह्म सदने निपतति ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर वहाँ से गंगा जी	देवयानेन	८.	आकाश में
अनेक	२.	अनेकों	अवतरन्ती	९.	उतरती हैं (तथा)
सहस्र	३.	हजारों (तथा)	इन्दुमण्डलम्	१०.	चन्द्र मण्डल को
कोटि	४.	करोड़ों	अवाप	११.	आप्लावित करती हुई
विमान	५.	विमानों के	ब्रह्म	१२.	ब्रह्म
अनीक	६.	समूह से	सदने	१३.	पुरी में
संकुल	७.	घिरे हुये	निपतति ॥	१४.	गिरती हैं

श्लोकार्थ—तदनन्तर वहाँ से गंगाजी अनेकों-हजारों तथा करोड़ों विमानों के समूह से घिरे हुये आकाश में उतरती हैं तथा चन्द्रमण्डल को आप्लावित करती हुई ब्रह्मपुरी में गिरती हैं।

पञ्चमः श्लोकः

तत्र चतुर्धा भिद्यमाना चतुर्भिर्नामभिश्चतुर्दिशमभिस्पन्दन्ती नदनदी-पतिमेवाभिनिविशति सीतालकनन्दा चक्षुर्भद्रेति ॥५॥

पदच्छेद—तत्र चतुर्धा भिद्यमाना चतुर्भिः नामभिः चतुर्दिशम् अभिस्पन्दन्ती नद-नदी पतिम् एव अभिनिविशति सीता-अलकनन्दा चक्षुः भद्रा इति ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ से	पतिम्	१४.	स्वामी समुद्र में
चतुर्धा	२.	चार धाराओं में	एव	१५.	ही
भिद्यमाना	३.	विभक्त होती हुई	अविनिविशती	१६.	प्रवेश कर जाती है
चतुर्भिः	९.	चार	सीता	४.	सीता
नामभिः	१०.	नामों वाली	अलकनन्दा	५.	अलकनन्दा
चतुर्दिशम्	११.	चारों दिशाओं में	चक्षुः	६.	चक्षु और
अभिस्पन्दन्ती	१२.	बहती हुई	भद्रा	७.	भद्रा
नद-नदी	१३.	नद और नदियों के	इति ॥	८.	इन नामों से

श्लोकार्थ—वहाँ से चार धाराओं में विभक्त होती हुई सीता, अलकनन्दा, चक्षु और भद्रा इन नामों से चार नामों वाली, चारों दिशाओं में बहती हुई नद और नदियों के स्वामी समुद्र में ही प्रवेशकर जाती हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

सीता तु ब्रह्मसदनात्केसराचलादि गिरिशिखरेभ्योऽधोऽधः प्रस्रवन्ती गन्धमादनमूर्धसु पतित्वान्तरेण भद्राश्ववर्षं प्राच्यां दिशि क्षारसमुद्रमभिप्रविशति ॥६॥

पदच्छेद—सीता तु ब्रह्म सदनात् केसराचल आदि गिरि शिखरेभ्यो अधो अधः प्रस्रवन्ती गन्धमादन मूर्धसु पतित्वा अन्तरेण भद्राश्ववर्षम् प्राच्याम् दिशि क्षार समुद्रम् अभिप्रविशति ॥

शब्दार्थ—

सीता	२.	सीता	मूर्धसु	१०.	शिखरों पर
तु	१.	इनमें	पतित्वा	११.	गिरती है
ब्रह्मसदनात्	३.	ब्रह्मपुरी से	अन्तरेण	१२.	इसके बाद
केसराचल	४.	केसराचल	भद्राश्व	१३.	भद्राश्व
आदि गिरि	५.	आदि पर्वत	वर्षम्	१४.	वर्ष के
शिखरेभ्यः	६	शिखरों से	प्राच्याम्	१५.	पूर्व
अधो अधः	७.	नीचे की ओर	दिशि	१६.	दिशा की ओर
प्रस्रवन्ती	८.	बहती हुई	क्षार समुद्रम्	१७.	खारे समुद्र में
गन्धमादन ॥	९.	गन्ध मादन पर्वत के	अभिप्रविशति	१८.	प्रवेश कर जाती है

श्लोकार्थ—इनमें सीता ब्रह्मपुरी से केसराचल आदि पर्वत शिखरों से नीचे की ओर बहती हुई गन्ध मादन पर्वत के शिखरों पर गिरती है। इसके बाद भद्राश्ववर्ष के पूर्व दिशा को ओर खारे समुद्र में प्रवेशकर जाती है ॥

सप्तमः श्लोकः

एवं माल्यवच्छिखरान्निष्पतन्ती ततोऽनुपरतवेगा केतुमालमभि चक्षुः प्रतीच्यां दिशि सरित्पतिं प्रविशति ॥७॥

पदच्छेद—एवम् माल्यवत् शिखरात् निष्पतन्ती ततः अनुपरत वेगा केतुमालम् अभि चक्षुः प्रतीच्याम् दिशि सरित् पतिम् प्रविशति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इसी प्रकार	केतुमालम् अभि	८.	केतुमालवर्ष में (बहती हुई)
माल्यवत्	२.	माल्यवान्	चक्षुः	९.	चक्षु (नाम की नदी)
शिखरात्	३.	पर्वत के शिखर पर	प्रतीच्याम्	१०.	पश्चिम
निष्पतन्ती	४.	पहुँच कर	दिशि	११.	दिशा की ओर
ततः	५.	वहाँ से	सरित्	१२.	नदियों के
अनुपरत	६.	अबाधित	पतिम्	१३.	पति समुद्र में
वेगा	७.	गति से	प्रविशति ॥	१४.	प्रवेश कर जाती है

श्लोकार्थ—इसी प्रकार माल्यवान् पर्वत के शिखर पर पहुँच कर वहाँ से अबाधित गति से केतुमालवर्ष में बहती हुई चक्षुनाम की नदी पश्चिम दिशा को ओर नदियों के पति समुद्र में प्रवेश कर जाती है ॥

अष्टमः श्लोकः

भद्रा चोत्तरतो मेरुशिरसो निपतिता गिरिशिखराद्गिरिशिखरमतिहाय शृङ्गवतः शृङ्गादवस्यन्दमाना उत्तरांस्तु कुरूनभित उदीच्यां दिशि जलधिमभिप्रविशति ॥८॥

पदच्छेद—

भद्रा च उत्तरतः मेरु शिरसा निपतिता गिरि शिखरात् गिरि शिखरम् अतिहाय शृङ्गवतः शृङ्गात् अवस्यन्दमाना उत्तरांस्तु कुरुम् अभितः उदीच्याम् दिशि जलधिम् अभिप्रविशति ॥

शब्दार्थ—

भद्रा	२.	भद्रा नाम की नदी	शृङ्गवतः	११.	वह शृङ्गवान् पर्वत के
च	१.	और	शृङ्गात्	१२.	शिखर से
उत्तरतः	३.	उत्तर की ओर	अवस्यन्दमाना	१३.	गिर कर
मेरु	४.	मेरु पर्वत के	उत्तरांस्तु	१४.	उत्तर
शिरसः	५.	शिखर से	कुरून्	१५.	कुरु देश में
निपतिता	६.	गिरती है (तथा)	अभितः	१६.	होकर
गिरि	७.	एक पर्वत के	उदीच्याम्	१७.	उत्तर
शिखरात्	८.	शिखर से दूसरे	दिशि	१८.	दिशा की ओर
गिरिशिखरम्	९.	पर्वत के शिखर पर जाती है	जलधिम्	१९.	समुद्र में
अतिहाय	१०.	उसे भी छोड़कर	अभिप्रविशति ॥	२०.	प्रवेश कर जाती है

श्लोकार्थ—और भद्रा नामकी नदी उत्तर की ओर मेरु पर्वत के शिखर से गिरती है तथा एक पर्वत के शिखर से दूसरे पर्वत के शिखर पर जाती है। उसे भी छोड़कर वह शृङ्गवान् पर्वत के शिखर से गिर कर उत्तर कुरु देश में उत्तर दिशा की ओर समुद्र में प्रवेशकर जाती है ॥

नवमः श्लोकः

तथैवालकनन्दा दक्षिणेन ब्रह्मसदनाद्बहूनि गिरिकूटान्यतिक्रम्य हेमकूटाद्धैमकूटान्यतिरभसतररंहसा लुठयन्ती भारतमभि वर्षं दक्षिणस्यां दिशि जलधिमभिप्रविशति यस्यां स्नानार्थं चागच्छतः पुंसः पदे पदेऽश्वमेधराजसूयादीनां फलं न दुर्लभमिति ॥९॥

पदच्छेद—तथैव अलकनन्दा दक्षिणेन ब्रह्मसदनात् बहूनि गिरिकूटानि अतिक्रम्य हेमकूटात् हैमकूटान् अतिरभसतर रंहसा लुठयन्ती भारतम् अभिवर्षम् दक्षिणस्याम् दिशि जलधिम् अभिप्रविशति यस्याम् स्नानार्थम् च आगच्छतः पुंसः पदे पदे अश्वमेध राजसूय आदीनाम् फलम् न दुर्लभम् इति ॥

शब्दार्थ—

तथैव	१.	उसी प्रकार	दिशि	१७.	दिशा की ओर
अलकनन्दा	२.	अलकनन्दा	जलधिम्	१८.	समुद्र में
दक्षिणेन	३.	दक्षिण की ओर	अभिप्रविशति	१९.	जा मिलती हैं
ब्रह्मसदनात्	४.	ब्रह्मपुरी से	यस्याम्	२०.	इसमें
बहूनि	५.	अनेक	स्नानार्थम्	२१.	स्नान करने के लिये
गिरि	६.	पर्वत	च	२६.	और
कूटानि	७.	शिखरों को	आगच्छतः	२२.	आने वाले
अतिक्रम्य	८.	लांघती हुई	पुंसः	२३.	मनुष्यों को
हेमकूटात्	९.	हेम कूट से	पदे पदे	२४.	पग-पग पर
हैमकूटानि	१०.	हेमकूट पर्वत पर पहुँचती है	अश्वमेध	२५.	अश्वमेध
अतिरभसतर	११.	अत्यन्त तीव्र	राजसूय	२७.	राजसूय
रंहसा	१२.	वेग से (पर्वत के शिखरों को)	आदि	२८.	इत्यादि
लुठयन्ती	१३.	चीरती हुई	नाम	२९.	यज्ञों का
भारतम्	१४.	भारत	फलम्	३०.	फल
अभिवर्षम्	१५.	वर्ष में आती है (और फिर)	न	३२.	नहीं है
दक्षिणस्याम्	१६.	दक्षिण	दुर्लभम्	३१.	दुर्लभ
			इति ॥	३३.	ऐसा कहते हैं

श्लोकार्थ—उसी प्रकार अलक नन्दा दक्षिण की ओर ब्रह्मपुरी से अनेक पर्वत शिखरों को लांघती हुई हेमकूट पर्वत पर पहुँचती है। हेमकूट पर्वत से अत्यन्त तीव्र वेग से पर्वत के शिखर को चीरती हुई भारतवर्ष में आती है और फिर दक्षिण दिशा की ओर समुद्र में जा मिलती है। इसमें स्नान करने के लिये आने वाले मनुष्यों को पग-पग पर अश्वमेध और राजसूय यज्ञों का फल दुर्लभ नहीं है, ऐसा कहते है ॥

दशमः श्लोकः

अन्ये च नदा नद्यश्च वर्षे वर्षे सन्ति बहुशो मेर्वादिगिरिदुहितरः शतशः ॥१०॥

पदच्छेद— अन्ये च नदाः नद्यः च वर्षे वर्षे सन्ति बहुशः मेरु आदि गिरि दुहितरः शतशः ॥

शब्दार्थ—

अन्ये	१. प्रत्येक	बहुशः	७. और भी
च	८. तथा	मेरु	३. मेरु
नदाः	१०. नद	आदि	४. आदि
नद्यः	११. नदियाँ	गिरि	५. पर्वतों से
वर्षे-वर्षे	२. वर्षों में	दुहितरः	६. निकली हुई
सन्ति	१२. हैं	शतशः ॥	८. सैकड़ों

श्लोकार्थ—प्रत्येक वर्ष में मेरु पर्वत आदि पर्वतों से निकली हुई और भी सैकड़ों नद-नदियाँ हैं ॥

एकादशः श्लोकः

तत्रापि भारतमेव वर्षं कर्मक्षेत्रमन्यान्यष्ट वर्षाणि स्वर्गिणां पुण्यशेषो-पभोगस्थानानि भौमानि स्वर्गपदानि व्यपदिशन्ति ॥११॥

पदच्छेद—तत्र अपि भारतम् एव वर्षम् कर्मक्षेत्रम् अन्यानि अष्ट वर्षाणि स्वर्गिणाम् पुण्यशेषे उपभोग स्थानानि भौमानि स्वर्ग पदानि व्यपदिशन्ति ॥

शब्दार्थ—

तत्र अपि	१. इनमें भी	पुण्य	१०. पुण्यों के
भारतम्	३. भारतवर्ष	शेष	९. बचे हुये
एव	४. ही	उपभोग	११. भोगने के
वर्षम्	२. सब वर्षों में	स्थानानि	१२. स्थान हैं (इसीलिये)
कर्मक्षेत्रम्	५. कर्म भूमि है	भौमानि	१३. भूगोल इत्यादि को भी
अन्यानि	६. शेष	स्वर्ग	१४. स्वर्ग
अष्ट वर्षाणि	७. आठ वर्ष	पदानि	१५. शब्द से
स्वर्गिणाम्	८. स्वर्गवासी पुरुषों के	व्यपदिशन्ति ॥	१६. कहते हैं

श्लोकार्थ—इनमें भी सब वर्षों में भारतवर्ष ही कर्मभूमि है। शेष आठ वर्ष स्वर्गवासी पुरुषों के बचे हुये पुण्यों के भोगने के स्थान हैं। इसीलिये भूगोल इत्यादि को भी स्वर्ग शब्द से कहते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

एषु पुरुषाणामयुतपुरुषायुर्वर्षाणां देवकल्पानां नागायुतप्राणानां वज्रसंहननबलवयोमोदप्रमुदितमहासौरतमिथुनव्यवायापवर्गवर्षधृतैकगर्भकलत्राणां तत्र तु त्रेतायुगसमः कालो वर्तते ॥१२॥

पदच्छेद—एषु पुरुषाणाम् अयुत पुरुष आयुः वर्षाणाम् देवकल्पानाम् नाग अयुत प्राणानाम् वज्र संहनन बल वयः मोद प्रमुदित महासौरत मिथुन व्यवाय अपवर्ग वर्ष धृत एक गर्भकलत्राणाम् तत्र तु त्रेता युग समः कालः वर्तते ॥

शब्दार्थ—

एषु	१.	यहाँ के	मोद	१५.	प्रसन्नता और
पुरुषाणाम्	३.	पुरुषों की	प्रमुदित	१६.	उल्लास होता है
अयुत	५.	दस हजार	महासौरत	१७.	वे बहुत समय तक
पुरुष	४.	मानवी गणना के अनुसार	मिथुन	१८.	मैथुन इत्यादि
आयुः	७.	आयु होती है	व्यवाय	१९.	विषयों को भोगते हैं
वर्षाणाम्	६.	वर्षों की	अपवर्ग	२०.	मोक्ष का
देवकल्पानाम्	२.	देवताओं के समान	वर्ष	२२.	वर्ष शेष रहने पर
नाग	९.	हाथियों का	धृत	२५.	धारण करती हैं
अयुत	८.	उनमें दस हजार	एक	२१.	एक
प्राणानाम्	१०.	बल होता है (तथा)	गर्भ	२४.	एक बार ही गर्भ
वज्र	११.	व्रज्र के समान	कलत्राणाम्	२३.	उनकी स्त्रियाँ
संहनन	१२.	सुदृढ शरीर में	तत्र तु	२६.	वहाँ पर
बल	१३.	शक्ति	त्रेता युग समः	२७.	त्रेतायुग के समान
वयः	१४.	आयु	कालः वर्तते ॥	२८.	समय बना रहता है

श्लोकार्थ—यहाँ के देवताओं के समान पुरुषों की मानवी गणना के अनुसार दस हजार वर्षों की आयु होती है। उनमें दस हजार हाथियों का बल होता है। वज्र के समान सुदृढ शरीर में शक्ति,आयु, प्रसन्नता और उल्लास होता है। वे बहुत समय तक मैथुन इत्यादि विषयों को भोगते हैं। मोक्ष का एक वर्ष शेष रहने पर उनकी स्त्रियाँ एक बार ही गर्भ धारण करती हैं। वहाँ पर त्रेता युग के समान समय बना रहता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

यत्र ह देवपतयः स्वैः स्वैर्गणनायकैर्विहितमहार्हणाः सर्वर्तुकुसुमस्तबक-फलकिसलयश्रियाऽऽनम्यमानविटपलताविटपिभिरुपशुम्भमानरुचिरकानना-श्रमायतनवर्षगिरिद्रोणीषु तथा चामलजलाशयेषु विकचविविधनववनरुहा-मोदमुदितराजहंसजलकुक्कुटकारण्डवसारसचक्रवाकादिभिर्मधुकरनिकराकृति-भिरुपकूजितेषु जलक्रीडादिभिर्विचित्रविनोदैः सुललितसुरसुन्दरीणां कामक-लिलविलासहासलीलावलोकाकृष्टमनोदृष्टयः स्वैरं विहरन्ति ॥१३॥

पदच्छेद—यत्र ह देवपतयः स्वैः स्वैः गणनायकैः विहित महार्हणाः सर्व ऋतु कुसुम स्तबक फल किसलय श्रिया आनम्यमान विटप लता विटपिभिः उपशुम्भमान रुचिर कानन आश्रम आयतन वर्ष गिरि द्रोणीषु तथा च अमल जल आशयेषु विकच विविध नववनरुह आमोद मुदित राजहंस जल कक्कुट कारण्डव सारस चक्रवाक आदिभिः मधुकर निकर कृतिभिः उपकूजितेषु जलक्रीडा आदिभिः विचित्र विनोदैः सुललित सुर सुन्दरीणाम् काम कलिल विलास हास लीला अवलोक आकृष्ट मनः दृष्टयः स्वैरम् विहरन्ति ॥

शब्दार्थ—

यत्र ह	१. जब वहाँ पर	आमोद	३१. प्रमुदित और
देवपतयः	२. देवताओं के स्वामी	मुदित	३२. प्रसन्न होकर
स्वैः स्वैः	३. अपने-अपने	राजहंस	३३. राजहंस
गणनायकैः	४. प्रधान सेवकों के द्वारा	जलकुक्कट	३४. जल मुर्गे
विहित	६. निवास करते हैं	कारण्डव	३५. कारण्डव
महार्हणः	५. आदर-सत्कार किये जाते हुये	सारस	३६. सारस और
सर्व ऋतु	७. वहाँ सभी ऋतुओं में	चक्रवाक	३७. चक्रवाक
कुसुम	८. फूलों के	आदिभिः	३८. आदि पक्षी
स्तबक	९. गुच्छे	मधुकर	३९. भौरों के
फल	१०. फल और	निकर	४०. समूह के साथ
किसलय	११. नये नये पत्तों की	आकृतिभिः	४१. विभिन्न आकृतियों में

श्रिया　१२. शोभा के भार से
आनम्यमान　१३. झुकी हुई
विटप　१४. डालियों
लता　१५. लताओं और
विटपिभिः　१६. वृक्षों से
उपशुम्भमान　१७. सुशोभित हैं
रुचिर　१८. वहाँ सुन्दर
कानन　१९. वन
आश्रम　२०. आश्रम
आयतन　२१. भवन
वर्ष　२२. वर्ष तथा
गिरि　२३. पर्वतों की
द्रोणेषु　२४. घाटियाँ हैं
तथा च　२५. और
अमल　२६. निर्मल
जलाशयेषु　२७. जलाशयों में
विकच　२८. खिले हुये
विविध　२९. नाना प्रकार के
नव　३०. नूतन
वनरुह　३१. कमलों की सुगन्ध से

उपकूजितेषु ४२. गुन्जार करते हैं (वहाँ देवेश्वरगण)
जलक्रीडा　४३. जलक्रीडा
आदिभिः　४४. इत्यादि
विचित्र　४५. नाना प्रकार के
विनोदैः　४६. खेल करते हुये
सुललित　४७. परम सुन्दरी
सुर　४८. देवताओं की
सुन्दरीणाम्　४९. स्त्रियों के साथ
काम　५०. काम-भाव को
कलिल　५१. व्यक्त करने वाले
विलास　५२. विलास और
हास　५३. हास
लीला　५४. तथा लीला पूर्वक
अवलोक　५५. कटाक्षों से
आकृष्ट　५८. आकृष्ट हो जाने के कारण
मनः　५६. मन और
दृष्टयः　५७. नेत्रों के
स्वैरम्　५९. स्वच्छन्दता पूर्वक
विहरन्ति ॥　६०. विहार करते हैं

श्लोकार्थ—जब वहाँ पर देवताओं के स्वामी अपने-अपने प्रधान सेवकों के द्वारा आदर-सत्कार किये जाते हुये निवास करते हैं। वहाँ सभी ऋतुओं में फूलों के गुच्छे, फल और नये-नये पत्तों की शोभा के भार से झुकी हुई डालियों, लताओं और वृक्षों से सुशोभित सुन्दर वन, आश्रम, भवन, वर्ष तथा पर्वतों की घाटियाँ हैं। और निर्मल जलाशयों में खिले हुये नाना प्रकार के नूतन कमलों की सुगन्ध से प्रमुदित और प्रसन्न होकर राजहंस, जलमुर्ग, कारण्डव सारस और चक्रवाक आदि पक्षी, भौंरों के समूह के साथ विभिन्न आकृतियों में गुन्जार करते हैं। वहाँ देवेश्वर गण जलक्रीडा आदि नाना प्रकार के खेल करते हुये परम सुन्दरी देवताओं को स्त्रियों के साथ काम-भाव को व्यक्त करने वाले विलास और हास तथा लीलापूर्वक कटाक्षों से मन और नेत्रों के आकृष्ट हो जाने के कारण स्वच्छन्दता पूर्वक विहार करते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

नवस्वपि वर्षेषु भगवान्नारायणो महापुरुषः पुरुषाणां तदनुग्रहायात्मतत्त्वव्यूहेनात्मनाद्यापि संनिधीयते ॥१४॥

पदच्छेद—नवसु अपि वर्षेषु भगवान् नारायणः महापुरुषः पुरुषाणाम् तद् अनुग्रहाय आत्मतत्त्व व्यूहेन आत्मना अद्य अपि संनिधीयते ॥

शब्दार्थ—

नव सु	१.	इन नवों	तद्	९.	वह
अपि	३.	भी	अनुग्रहाय	८.	कृपा करने के लिये
वर्षेषु	२.	वर्षों में	आत्मतत्त्व	११.	अपनी
भगवान्	५.	भगवान्	व्यूहेन	१२.	विभिन्न मूर्तियों (तथा)
नारायणः	६.	नारायण	आत्मना	१३.	स्वरूपों से
महापुरुषः	४.	परम पुरुष	अद्य अपि	१०.	आज भी
पुरुषाणाम्	७.	पुरुषों पर	संनिधीयते ॥	१४.	विराजमान हैं

श्लोकार्थ—इन नवों वर्षों में भी परम पुरुष भगवान् नारायण पुरुषों पर कृपा करने के लिये आज भी अपनी विभिन्न मूर्तियों तथा स्वरूपों से विराजमान हैं

पञ्चदशः श्लोकः

इलावृते तु भगवान् भव एक एव पुमान्न ह्यन्यस्तत्रापरो निर्विशति भवान्याः शापनिमित्तज्ञो यत्प्रवेक्ष्यतः स्त्रीभावस्तत्पश्चाद्वक्ष्यामि ॥१५॥

पदच्छेद—इलावृते तु भगवान् भव एक एव पुमान् न हि अन्यः तत्र अपरः निर्विशति भवान्याः शाप निमित्तज्ञो यत् प्रवेक्ष्यतः स्त्री भावः तत् पश्चाद् वक्ष्यामि ॥

शब्दार्थ—

इलावृते तु	१.	इलावृत वर्ष में	निर्विशति	१३.	प्रवेश करता है (वह)
भगवान्	३.	भगवान्	भवान्याः	९.	पार्वती जी के
भवः	४.	शंकर	शाप	१०.	शाप को
एक	२.	एक मात्र	निमित्तज्ञो	११.	जानने वाला
एव	५.	ही	यत्	१४.	जो
पुमान्	६.	पुरुष हैं	प्रवेक्ष्यतः	१५.	प्रवेश करता है (वह)
नहि	८.	नहीं है	स्त्रीभावः	१६.	स्त्री-भाव को प्राप्त हो जाता है
अन्यः	७.	अन्य कोई पुरुष	तत् पश्चाद्	१७.	इसे बाद में
तत्र अपरः	१२.	वहाँ दूसरा कोई	वक्ष्यामि ॥	१८.	बतायेंगे

श्लोकार्थ—इलावृत वर्ष में एक मात्र भगवान् शंकर ही पुरुष हैं। अन्य कोई पुरुष नहीं है। पार्वती जी के शाप को जानने वाला वहाँ दूसरा कोई प्रवेश नहीं करता है। जो प्रवेश करता है, वह स्त्री-भाव को प्राप्त हो जाता है। इसे बाद में कहेंगे ॥

षोडशः श्लोकः

भवानीनाथैः स्त्रीगणार्बुदसहस्रैरवरुध्यमानो भगवतश्चतुर्मूर्तेर्महापुरुषस्य तुरीयां तामसीं मूर्तिं प्रकृतिमात्मनः सङ्कर्षणसंज्ञामात्मसमाधिरूपेण संनिधाप्यैतदभिगृणन् भव उपधावति ॥१६॥

पदच्छेद—भवानीनाथैः स्त्रीगण अर्बुद सहस्रैः अवरुध्यमानः भगवतः चतुर्मूर्तेः महापुरुषस्य तुरीयाम् तामसीम् मूर्तिम् प्रकृतिम् आत्मनः सङ्कर्षण संज्ञाम् आत्म समाधि रूपेण संनिधाप्य एतद् अभिगृणन् भव उपधावति ॥

शब्दार्थ—

भवानीनाथैः	१.	भगवान् शंकर	प्रकृतिम्	८.	कारण स्वरूप
स्त्रीगण	३.	स्त्रियों के समूह से	आत्मनः	७.	अपनी
अर्बुद-सहस्रैः	२.	हजारों अरब	सङ्कर्षण	९.	संकर्षण
अवरुध्यमानः	४.	घिरे हुये	संज्ञाम्	१०.	नाम वाली
भगवतः	५.	भगवान् शिव	आत्म	१५.	स्वयं
चतुर्मूर्तेः	६.	चार मूर्तियों में से	समाधिरूपेण	१६.	ध्यान स्थित स्वरूप का
महापुरुषस्य	१२.	परमपुरुष परमात्मा की	संनिधाप्य	१७.	ध्यान करते हैं और
तुरीयाम्	१३	चौथी	एतद्	१८.	इस मंत्र का
तामसीम्	११.	तमः प्रधान	अभिगृणन्	१९.	जप करते हुये
मूर्तिम्	१४.	मूर्ति के	भव उपधावति ॥	२०	भगवान् को प्राप्त करते हैं

श्लोकार्थ—भगवान् शंकर हजारों अरब स्त्रियों के समूह से घिरे हुये भगवान् शिव की चार मूर्तियों में से अपनी कारण स्वरूप सङ्कर्षण नाम वाली चौथी तमः प्रधान परम पुरुष परमात्मा की मूर्ति के स्वयम् ध्यान स्थित स्वरूप का ध्यान करते है और इस मंत्र का जप करते हुये भगवान् का प्राप्त करते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—ॐ नमो भगवते महापुरुषाय सर्वगुणसङ्ख्यानायानन्तायाव्यक्ताय नम इति ॥१७॥

पदच्छेद—ॐ नमः भगवते महापुरुषाय सर्वगुण सङ्ख्यानाय अनन्ताय अव्यक्ताय नमः इति ॥

शब्दार्थ—

ॐ	५.	ॐकार स्वरूप	सर्वगुण	१.	जिससे सभी गुणों की
नमः	९.	नमस्कार है	सङ्ख्यानाय	२.	अभिव्यक्ति होती है उन
भगवते	८.	भगवान् को	अनन्ताय	३.	अनन्त और
महा	६.	परम	अव्यक्ताय	४.	अव्यक्त
पुरुषाय	७.	पुरुष	नमः	१०.	नमस्कार है
			इति ॥	११.	ऐसा कहते हैं

श्लोकार्थ—जिनसे सभी गुणों की अभिव्यक्ति होती है, उन अनन्त और अव्यक्त ॐकार स्वरूप परम पुरुष भगवान् को नमस्कार है, नमस्कार है, ऐसा कहते हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

भजे भजन्यारणपादपङ्कजं भगस्य कृत्स्नस्य परं परायणम् ।
भक्तेष्वलं भावितभूतभावनं भवापहं त्वां भवभावमीश्वरम् ॥१८॥

पदच्छेद—भजे भजन्य अरण पाद पङ्कजम् भगस्यकृत्स्नस्य परम् परायणम् ।
भक्तेषु अमलम् भावितभूत भावनम् भव अपहम् त्वाम् भव भावम् ईश्वरम् ।।

शब्दार्थ—

भजे	१८.	मैं आपका भजन करता हूँ	भक्तेषु	१०.	भक्तों के सामने
भजन्य	१.	हे भजनीय परमात्मा !	अमलम्	११.	निर्मल रूप
अरण	४.	आश्रय देने वाले हैं आप	भावित	१२.	प्रकट कर देते हैं
पाद	२.	आपके चरण	भूतभावनम्	९.	हे भूत-भावन ! आप
पङ्कजम्	३.	कमल भक्तों को	भव	१४	संसार बन्धन को
भगस्य	६.	ऐश्वर्यों के	अपहम्	१५.	काट देने वाले हैं (तथा)आप ही
कृत्स्नस्य	५.	सम्पूर्ण	त्वाम्	१७	आपको नमस्कार हैं
परम्	७.	परम	भव भावम्	१६.	संसार बन्धन में डालने वाले हैं
परायणम् ।	८.	आश्रय हैं	ईश्वरम् ।।	१३.	हे ईश्वर ! आप ही

श्लोकार्थ—हे भजनीय परमात्मा ! आपके चरण कमल भक्तों को आश्रय देने वाले हैं । आप सम्पूर्ण ऐश्वर्यों के परम आश्रय हैं । हे भूतभावन ! आप भक्तों के सामने निर्मल रूप प्रकट कर देते हैं । हे ईश्वर ! आप ही संसार के बन्धन को काटने वाले हैं । तथा आप ही संसार बन्धन में डालने वाले हैं । आपको नमस्कार है ! मैं आपका भजन करता हूँ ।।

एकोनविंशः श्लोकः

न यस्य मायागुणचित्तवृत्तिभिर्निरीक्षतो ह्यण्वपि दृष्टिरज्यते ।
ईशे यथा नोऽजितमन्युरंहसां कस्तं न मन्येत जिगीषुरात्मनः ॥१९॥

पदच्छेद— न यस्य माया गुण चित्तवृत्तिभिः निरीक्षतः हि अणु अपि दृष्टिः अज्यते ।
ईशे यथा नः अजित मन्यु रंहसाम् कः तम् न मन्येत जिगीषुः आत्मनः ।।

शब्दार्थ—

न	१२.	नहीं	यथा नः	२.	जैसे हम लोग
यस्य	६.	जिसकी	अजित	५.	नहीं जीत सके हैं वैसे ही
माया-गुण	८.	माया के गुणों को	मन्यु	३.	क्रोध के
चित्तवृत्तिभिः	९.	मन की वृत्तियों के द्वारा	रंहसाम्	४.	वेग को
निरीक्षतः	१०.	देखते हुये	कः	१६.	कौन पुरुष
हि अणु अपि	११.	नाम मात्र भी	तम्	१७.	उन भगवान् को
दृष्टिः	७.	दृष्टि	न मन्येत	१८.	नहीं मानेगा
अज्यते ।	१३.	कलुषित होती है	जिगीषुः	१५.	जीतने की इच्छा वाला
ईशे	१.	हे प्रभो ! संसार का नियंत्रण करने वाले	आत्मनः ।।	१४.	मन को

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! जैसे हम लोग क्रोध के वेग को नहीं जीत सके हैं, वैसे ही जिसकी दृष्टि माया के गुणों को मन की वृत्तियों के द्वारा देखते हुये नाम मात्र भी कलुषित नहीं होती है ऐसा मन को जीतने की इच्छा वाला कौन पुरुष संसार का नियंत्रण करने वाले उन भगवान् को नहीं मानेगा ।।

विंशः श्लोकः

असद्दृशो यः प्रतिभाति मायया क्षीबेव मध्वासवताम्रलोचनः ।
न नागवध्वोऽर्हण ईशिरे ह्रिया यत्पादयोः स्पर्शनधर्षितेन्द्रियाः ॥२०॥

पदच्छेद— असद् दृशः यः प्रतिभाति मायया क्षीब इव मधु-आसव ताम्रलोचनः ।
न नाग वध्वः अर्हण ईशिरे ह्रिया यत् पादयोः स्पर्शन धर्षित इन्द्रियाः ॥

शब्दार्थ—

असद्	८.	वे मिथ्या	न	१८.	नहीं हो पाती
दृशः	९.	दर्शन करते हैं (तथा)	नागवध्वः	१४.	नाग पत्नियाँ
यः	१.	जो लोग	अर्हण	१७.	समर्थ
प्रतिभाति	७.	जान पड़ते हैं	ईशिरे	१६.	आपकी पूजा करने में
मायया	२.	माया के वशीभूत होकर	ह्रिया	१५.	लज्जा के कारण
क्षीब इव	६.	मतवाले पुरुष के समान	यत् पादयोः	१०	जिनके चरणों के
मधु-आसव	३.	मधु-आसवादि पीने से	स्पर्शन	११.	स्पर्श से
ताम्र	४.	लाल-लाल	धर्षित	१३.	चञ्चल होने के कारण
लोचनः	५.	नेत्रों वाले	इन्द्रियाः ॥	१२.	चित्त

श्लोकार्थ—जो लोग माया के वशीभूत होकर मधु-आसवादि पीने से लाल-लाल नेत्रों वाले मतवाले पुरुष के समान जान पड़ते हैं, वे मिथ्या दर्शन करते हैं तथा जिनके चरणों के स्पर्श से चित्त चञ्चल होने के कारण नाग-पत्नियाँ लज्जा के कारण आपकी पूजा करने में समर्थ नहीं हो पाती ॥

एकविंशः श्लोकः

यमाहुरस्य स्थितिजन्मसंयमं त्रिभिर्विहीनं यमनन्तमृषयः ।
न वेद सिद्धार्थमिव क्वचित्स्थितं भूमण्डलं मूर्धसहस्रधामसु ॥२१॥

पदच्छेद—यम् आहुः अस्य स्थिति जन्म संयमम् त्रिभिः विहीनम् यम् अनन्तम् ऋषयः ।
न वेद सिद्धार्थम् इव क्वचित् स्थितम्, भूमण्डलम् मूर्ध सहस्र धाम सु ॥

शब्दार्थ—

यम्	२.	आपको	ऋषयः	१.	वेद मन्त्र
आहुः	७.	कहते हैं	न वेद	१८.	नहीं जानते हैं
अस्य	३.	इस संसार की	सिद्धार्थम् इव	१५.	सरसों के दाने के समान
स्थिति	५.	स्थिति और	क्वचित्	१६.	कहीं
जन्म	४.	उत्पत्ति	स्थितम्	१७	रक्खा हुआ है (जिससे आप)
संयमम्	६.	लय का कारण	भूमण्डलम्	१४.	यह भूमण्डल
त्रिभिः	८.	आप इन तीनों विकारों से	मूर्ध	१२.	मस्तकों और
विहीनम्	९.	रहित हैं	सहस्र	११.	आप के हजारों
यम् अनन्तम्	१०.	आपको अनन्त कहते हैं	धामसु ॥	१३.	स्थानों पर

श्लोकार्थ—वेदमन्त्र आपको इस संसार की उत्पत्ति, स्थित और लय का कारण कहते हैं। आप इन तीनों विकारों से रहित हैं। आपको अनन्त कहते हैं। आपके हजारों मस्तकों और स्थानों पर यह भूमण्डल सरसों के दाने के समान कहीं रक्खा हुआ है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यस्याद्य आसीत् गुणविग्रहो महान् विज्ञानधिष्ण्यो भगवानजः किल ।
यत्सम्भवोऽहं त्रिवृता स्वतेजसा वैकारिकं तामसमैन्द्रियं सृजे ॥२२॥

पदच्छेद— यस्य अद्य आसीत् गुणविग्रहः महान् विज्ञान धिष्ण्यः भगवान् अजः किल ।
यत् सम्भवः अहम् त्रिवृता स्वतेजसा वैकारिकम् तामसम् ऐन्द्रियम् सृजे ॥

शब्दार्थ—

यस्य अद्य	१५. जिनके आज भी	यत्	१. जिनसे
आसीत्	१८. हैं	सम्भवः	२. उत्पन्न हुआ
गुण-विग्रह	१७. गुण-स्वरूप	अहम्	३. मैं अहंकार रूप
महान्	१६. महत्तत्त्व नामक	त्रिवृता	४. त्रिगुणमय
विज्ञान	१०. वे विज्ञान के	स्वतेजसा	५. अपने तेज से
धिष्ण्यः	११. आश्रय	वैकारिकम्	६. देवताओं और
भगवान्	१२. भगवान्	तामसम्	७. भूतों तथा
अजः	१३. ब्रह्मा जी भी	ऐन्द्रियम्	८. इन्द्रियों की
किल ।	१४. निश्चय ही	सृजे ॥	९. रचना करता हूँ

श्लोकार्थ—जिनसे उत्पन्न हुआ मैं अंहकार स्वरूप त्रिगुणमय अपने तेज से देवताओं, भूतों तथा इन्द्रियों की रचना करता हूं, वे विज्ञान के आश्रय भगवान् ब्रह्माजी भी निश्चय ही जिनके आज भी महत्तत्व नामक गुण स्वरूप हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

एते वयं यस्य वशे महात्मनः स्थिताः शकुन्ता इव सूत्रयन्त्रिताः ।
महानहं वैकृततामसेन्द्रियाः सृजाम सर्वे यदनुग्रहादिदम् ॥२३॥

एते वयम् यस्य वशे महात्मनः, स्थिताः शकुन्ता इव सूत्र यन्त्रिताः ।
महान् अहम् वैकृततामस इन्द्रियाः सृजाम सर्वे यद् अनुग्रहात् इदम् ॥

शब्दार्थ—

एते	५. ये सब और	महान् अहम्	१. महत्तत्त्व अहंकार
वयम्	६. हम सब भी	वैकृत	२. इन्द्रियाभिमानी देवता
यस्य	७. जिन	तामस	३. पञ्च महाभूत और
वशे	९. वश में होकर	इन्द्रियाः	४. इन्द्रियाँ
महात्मनः	८. महान् आत्मा के	सृजाम	१९. रचना करते हैं
स्थिताः	१४. स्थित हैं तथा	सर्वे	१८. सम्पूर्ण
शकुन्ताः	१२. पक्षी के	यद्	१५. जिनकी
इव	१३. समान	अनुग्रहात्	१६. कृपा से
सूत्र	१०. डोरी में	इदम् ॥	१७. इस संसार की
यन्त्रिताः ।	११. बंधे हुये		

श्लोकार्थ—महत्तत्त्व अंहकार, इन्द्रियाभिमानी देवता, पञ्चमहाभूत और इन्द्रियाँ ये सब और हम सब भी जिन महान् आत्मा के वश में होकर डोरी में बंधे हुये पक्षी के समान स्थित हैं तथा जिनकी कृपा से इस सम्पूर्ण संसार की रचना करते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

यन्निर्मितां कर्ह्यपि कर्मपर्वणीं मायां जनोऽयं गुणसर्गमोहितः ।
न वेद निस्तारणयोगमञ्जसा तस्मै नमस्ते विलयोदयात्मने ॥२४॥

पदच्छेद—

यत् निर्मिताम् कर्हि अपि कर्म पर्वणीम् मायाम् जनः अयम् गुण सर्ग मोहितः ।
न वेद निस्तारण योगम् अञ्जसा, तस्मै नमः ते विलय उदय आत्मने ॥

शब्दार्थ—

यत्	६.	जिसके द्वारा	न	१५.	नहीं
निर्मिताम्	७.	बनाई हुई	वेद	१६.	जान पाता है
कर्हि अपि	११.	कभी-कभी (जान लेता है) किन्तु	निस्तारण	१२.	उससे मुक्त होने का
कर्म	८.	कर्मबन्धन में	योगम्	१३.	उपाय
पर्वणीम्	९.	बाँधने वाली	अञ्जसा	१४.	सरलता से
मायाम्	१०.	माया को	तस्मै	१७.	ऐसे
जनः	५.	जीव	नमः	२२.	मैं नमस्कार करता हूँ
अयम्	४.	यह	ते	२१.	आपको
गुण	१.	गुणों की	विलय	१८.	प्रलय (और)
सर्ग	२.	सृष्टि से	उदय	१९.	उत्पत्ति
मोहितः ।	३.	मोहित हुआ	आत्मनः ॥	२०.	स्वरूप

श्लोकार्थ—गुणों की सृष्टि से मोहित हुआ यह जीव जिसके द्वारा बनाई हुई कर्मबन्धन में बाँधने वाली माया को कभी-कभी जान लेता है किन्तु उससे मुक्त होने का उपाय सरलता से नहीं जान पाता है ऐसे प्रलय और उत्पत्ति स्वरूप आपको मैं नमस्कार करता हूँ ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—तथा च भद्रश्रवा नाम धर्मसुतस्तत्कुलपतयः पुरुषा भद्राश्ववर्षे साक्षाद्भगवतो वासुदेवस्य प्रियां तनुं धर्ममयीं हयशीर्षाभिधानां परमेण समाधिना संनिधाप्येदमभिगृणन्त उपधावन्ति ॥१॥

पदच्छेद—तथा च भद्र श्रवा नाम धर्मसुतः तत् कुल पतयः पुरुषः भद्राश्ववर्षे साक्षात् भगवतः वासुदेवस्य प्रियाम् तनुम् धर्ममयीम् हयशीर्ष अभिधानाम् परमेण समाधिना संनिधाप्य इदम् अभिगृणन्तः उपधावन्ति ॥

शब्दार्थ—

तथा	२. इसी प्रकार	प्रियाम् तनुम्	१३. प्रियमूर्ति को
च	१. और	धर्ममयीम्	१०. धर्मयुक्त
भद्रश्रवानाम	५. भद्रश्रवानाम वाला	हयशीर्ष	८. हय ग्रीव
धर्म सुतः	४. धर्म पुत्र	अभिधानाम्	९. नामक
तत् कुलपतयः	६. उनके कुलों के सेवक (तथा)	परमेण	१४. अत्यन्त
पुरुषाः	७. पुरुष	समाधिना	१५. समाधिनिष्ठा के द्वारा
भद्राश्ववर्षे	३. भद्राश्ववर्ष में	संनिधाप्य इदम्	१६. धारण करके इस
साक्षात् भगवतः	११. साक्षात् भगवान्	अभिगृणन्तः	१७. मन्त्र का जप और
वासुदेवस्य।	१२. वासुदेव की	उपधावन्ति ॥	१८. स्तुति करते हैं

श्लोकार्थ—और इसी प्रकार भद्राश्ववर्ष में धर्म पुत्र भद्रश्रवा नाम वाला उनके कुलों के सेवक तथा पुरुष हयग्रीव नामक धर्म युक्त साक्षात् भगवान् वासुदेव की प्रिय मूर्ति को अत्यन्त समाधिनिष्ठा के द्वारा धारण करके इस मन्त्र का जप और स्तुति करते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

भद्रश्रवस ऊचुः—ॐ नमो भगवते धर्मायात्मविशोधनाय नम इति ॥२॥

पदच्छेद— ॐ नमः भगवते धर्माय आत्म विशोधनाय नमः इति ॥

शब्दार्थ—

ॐ	३. ॐकार स्वरूप	आत्म	१. चित्त को
नमो	६. नमस्कार है	विशोधनाय	२. शुद्ध करने वाले
भगवते	४. भगवान्	नमः	७. नमस्कार है
धर्माय।	५. धर्म को	इति ॥	८. ऐसा कहते हैं

श्लोकार्थ—चित्त को शुद्ध करने वाले ॐकार स्वरूप भगवान् धर्म को नमस्कार है नमस्कार है, ऐसा कहते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

अहो विचित्रं भगवद्विचेष्टितं घ्नन्तं जनोऽयं हि मिषन्न पश्यति ।
ध्यायन्नसद्यर्हि विकर्म सेवितुं निर्हृत्य पुत्रं पितरम् जिजीविषति ।।३।।

पदच्छेद— अहो हि विचित्रम् भगवत् विचेष्टितम् घ्नन्तम् जनः अयम् हि मषन् न पश्यति ।
ध्यायन् असत् यर्हि विकर्म सेवितुम् निर्हृत्य पुत्रम् पितरम् जिजीविषति ।।

शब्दार्थ —

अहो	१.	अहो	ध्यायन्	१२.	ध्यान करता हुआ (और)
विचित्रम्	४.	बड़ी विचित्र है (जिससे)	असत्	११.	तुच्छ विषयों का
भगवत्	२.	भगवान् की	यर्हि	१०.	क्योंकि
विचेष्टितम्	३.	लीला	विकर्म	१३.	बुरे कर्म का
घ्नन्तम्	७.	संहार करने वाले काल को	सेवितुम्	१४.	सेवन करता हुआ
जनः	६.	जीव	निर्हृत्य	१७.	(श्मशान में) जला कर भी
अयम्	५.	यह	पुत्रम्	१५.	पुत्र और
हि मिषन्	८.	देखते हुये भी	पितरम्	१६.	पिता को
न पश्यति ।	९.	नहीं देखता है	जिजीविषति ।।	१८.	जीने की इच्छा करता है

श्लोकार्थ—अहो भगवान् की लीला बड़ी विचित्र है । जिससे यह जीव संहार करने वाले काल को देखते हुये भी नहीं देखता है । क्योंकि तुच्छ विषयों का ध्यान करता हुआ और बुरे कर्म का सेवन करता हुआ पुत्र और पिता को (श्मशान) में जला कर भी जीने की इच्छा करता हैं ।।

चतुर्थः श्लोकः

वदन्ति विश्वं कवयः स्म नश्वरं, पश्यन्ति चाध्यात्मविदो विपश्चितः ।
तथापि मुह्यन्ति तवाज मायया, सुविस्मितं कृत्यमजं नतोऽस्मि तम् ।।४।।

पदच्छेद— वदन्ति विश्वम् कवयः स्म नश्वरम्, पश्यन्ति च अध्यात्म विदः विपश्चितः ।
तथापि मुह्यन्ति तव अज मायया सुविस्मितम् कृत्यम् अजम् नतः अस्मि तम् ।।

शब्दार्थ—

वदन्ति	४.	कहते हैं	तथापि	९.	फिर भी
विश्वम्	२.	संसार को	मुह्यन्ति	१२.	मोहित हो जाते हैं
कवयः स्म	१.	विद्वान् लोग	तव-अज	१०.	आप की हे अजन्मा !
नश्वरम्	३.	नाशवान्	मायया	११.	माया से लोग
पश्यन्ति	८.	देखते हैं	सुविस्मितम्	१४.	अत्यधिक आश्चर्यजनक है
च	५.	और	कृत्यम्	१३.	आपका कार्य
अध्यात्मविदः	७.	आत्मज्ञानी (ऐसा ही)	अजम्	१६.	अजन्मा को
विपश्चितः ।	६.	सूक्ष्मदर्शी	नतः अस्मि	१७.	नमस्कार करता हूँ
			तम् ।।	१५.	मैं उस

श्लोकार्थ—विद्वान् लोग संसार को नाशवान् कहते हैं और सूक्ष्मदर्शी आत्मज्ञानी ऐसा ही देखते हैं । फिर भी हे अजन्मा ! आपकी माया से लोग मोहित हो जाते हैं । आपका कार्य अत्यधिक अश्चर्यजनक है । मैं उस अजन्मा को नमस्कार करता हूँ ।।

पञ्चमः श्लोकः

विश्वोद्भवस्थाननिरोध कर्म ते ह्यकर्तुरङ्गीकृतमप्यपावृतः ।
युक्तं न चित्रं त्वयि कार्यकारणे, सर्वात्मनि व्यतिरिक्ते च वस्तुतः ॥५॥

पदच्छेद— विश्व उद्भव स्थान निरोध कर्म ते हि अकर्तुः अङ्गी कृतम् अपि अपावृतः ।
युक्तम् न चित्रम् त्वयि कार्यकारणे, सर्व आत्मनि व्यतिरिक्ते च वस्तुतः ॥

शब्दार्थ—

विश्व	३.	संसार की	युक्तम्	१०.	सो ठीक ही है
उद्भव	४.	उत्पत्ति	न	१२.	नहीं है
स्थान	५.	स्थिति (और)	चित्रम्	११.	इसमें कोई आश्चर्य
निरोध	६.	प्रलय	त्वयि	१४.	आप ही
कर्म	८.	कर्म	कार्य-कारणे	१५.	सम्पूर्ण कार्यों के कारण हैं
ते हि	७.	आपके ही	सर्व आत्मनि	१३.	क्योंकि सर्वात्म रूप से
अकर्तुः	१.	आप अकर्ता (और)	व्यतिरिक्ते	१८.	सबसे पृथक् हैं
अङ्गीकृतम्	९.	माने गये हैं	च	१६.	और
अपि अपावृतः ।	२.	माया के आवरण से रहित हैं	वस्तुतः ॥	१७.	शुद्ध स्वरूप में

श्लोकार्थ—आप अकर्ता और माया के आवरण से रहित हैं। संसार की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय आपके ही कर्म माने गये हैं। सो ठीक ही है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। क्योंकि सर्वात्मरूप से आप ही सम्पूर्ण कार्यों के कारण हैं और शुद्ध स्वरूप में सबसे पृथक् हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

वेदान् युगान्ते तमसा तिरस्कृतान् रसातलाद्यो नृतुरङ्गविग्रहः ।
प्रत्याददे वै कवयेऽभियाचते तस्मै नमस्तेऽवितथे हिताय इति ॥६॥

पदच्छेद— वेदान् युग अन्ते तमसा तिरस्कृतान् रसातलात् यः नृ तुरङ्ग विग्रहः ।
प्रति आददे वै कवये अभियाचते तस्मै नमः ते अवितथे हिताय इति ॥

शब्दार्थ—

वेदान्	५.	वेदों को	प्रत्याददे	११.	लाकर दिया था
युग अन्ते	३.	प्रलय काल में (जब)	वै	१२.	निश्चय ही
तमसा	४.	तमोगुण प्रधान (दैत्यगण)	कवयः	७.	ब्रह्माजी के
तिरस्कृतान्	६.	चुरा ले गये थे (तब)	अभियाचते	८.	प्रार्थना करने पर
रसातलात्	१०.	रसातल से	तस्मै	१३.	ऐसे
यः	१६.	आपने उन्हें	नमः ते	१६.	नमस्कार है आपको
नृ तुरङ्ग	१.	आपका मनुष्य और घोड़े का	अवितथे	१४.	सत्य
विग्रहः ।	२.	स्वरूप है	हिताय इति ॥	१५.	संकल्प वाले

श्लोकार्थ—आपका मनुष्य और घोड़े का स्वरूप है। प्रलयकाल में जब तमोगुण प्रधान दैत्यगण वेदों को चुरा ले गये थे तब ब्रह्माजी के प्रार्थना करने पर आपने उन्हें रसातल से लाकर दिया था। निश्चय ही ऐसे सत्य संकल्प वाले आपको नमस्कार है।

सप्तमः श्लोकः

हरिवर्षे चापि भगवान्नरहरिरूपेणास्ते। तद्रूपग्रहणनिमित्तमुत्तरत्राभिधास्ये। तद्दयितं रूपं महापुरुषगुणभाजनो महाभागवतो दैत्यदानवकुलतीर्थीकरणशीलाचरितः प्रह्लादोऽव्यवधानानन्यभक्तियोगेन सह तद्वर्षपुरुषैरुपास्ते इदं चोदाहरति ॥७॥

पदच्छेद—हरिवर्षे च अपि भगवान् नर हरि रूपेण आस्ते तद्रूप ग्रहण निमित्तम् उत्तरत्र अभिधास्ये तद्दयितम् रूपम् महापुरुष गुण भाजनः महा भागवतः दैत्य दानव कुल तीर्थी करणशील आचरितः प्रह्लादः अव्यवधान अनन्य भक्ति योगेन सह तद्वर्ष पुरुषैः उपास्ते इदम् च उदाहरति ॥

शब्दार्थ—

हरिवर्षे	२.	हरि वर्ष खण्ड में	दैत्य	२१.	दैत्य और
च	१.	और	दानव	२२.	दानवों के
अपि	३.	भी	कुलतीर्थी	२३.	कुल को पवित्र
भगवान्	४.	भगवान्	करण	२४.	करने वाले
नर हरि	५.	नर सिंह	शील	१९.	अपने शील और
रूपेण	६.	रूप से	आचरितः	२०.	आचरण से
आस्ते	७.	रहते हैं	प्रह्लादः	२५.	प्रह्लाद जी
तद्रूप	८.	वह रूप	अव्यवधान	२९.	निरन्तर
ग्रहण	१०.	धारण किया था (उसे)	अनन्यभक्ति	३०.	अनन्य भक्ति
निमित्तम्	९.	जिस कारण से	योगेन	३१.	भाव से (उस)
उत्तरत्र	११.	आगे	सह	२८.	साथ
अभिधास्ये	१२.	कहेंगे	तद् वर्ष	२६.	उस वर्ष के
दयितम्	१३.	भगवान् के उस	पुरुषैः	२७.	अन्य पुरुषों के
रूपम्	१४.	प्रियरूप की	उपास्ते	३२.	उपासना करते हैं
महापुरुष	१५.	महापुरुषों के	इदम्	३४.	इस
गुण	१६.	गुणों से	च	३३.	और
भाजनः	१७.	सम्पन्न	उदाहरति ॥	३५.	मन्त्र का जप करते हैं
महाभागवतः	१८.	परम भागवत तथा			

श्लोकार्थ—और हरिवर्ष खण्ड में भी भगवान् नर हरि रूप से रहते हैं। वह रूप जिस कारण से धारण किया था। उसे आगे कहेंगे। भगवान् के उस प्रिय रूप की महापुरुषों के गुणों से सम्पन्न, परम भागवत तथा अपने शील और आचरण से दैत्य और दानवों के कुल को पवित्र करने वाले प्रह्लाद जी उस वर्ष के अन्य पुरुषों के साथ निरन्तर अनन्य भक्ति-भाव से उपासना करते हैं और इस मन्त्र का जप करते हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

ॐ नमो भगवते नरसिंहाय नमस्तेजस्तेजसे आविराविर्भव वज्रनख वज्रदंष्ट्र कर्माशयान् रन्धय रन्धय तमो ग्रस ग्रस ॐ स्वाहा। अभयमभय-मात्मनि भूयिष्ठा ॐ क्ष्रौम् ॥८॥

पदच्छेद—

ॐ नमः भगवते नरसिंहाय नमः तेजः तेजसे आविः आविर्भव वज्रनख वज्रदंष्ट्र कर्माशयान् रन्धय रन्धय तमः ग्रस ग्रस ॐ स्वाहा। अभयम् अभयम् आत्मनि भूयिष्ठा ॐ क्ष्रौम् ॥

शब्दार्थ—

ॐ नमः	१. ॐकार स्वरूप आपको नमस्कार है	रन्धय	१२. जला डालिये
भगवते	२. भगवान्	रन्धय	१३. जला डालिये
नरसिंहाय	३. नरसिंह देव जी आपके	तमः	१४. हमारे अज्ञानरूप अन्धकार को
नमः	४. नमस्कार है	ग्रस-ग्रस	१५. नष्ट कीजिये नष्ट कीजिये
तेजः	५. हे तेजों के	ॐ स्वाहा	१६. ॐ स्वाहा
तेजसे	६. तेज	अभयम्	१७. अभय दीजिये
आविः	७. आप हमारे समीप	अभयम्	१८. अभय दीजिये
आविर्भव	८. प्रकट होइये	आत्मनि	१९. हमारे अन्तः करण में
वज्रनख	९. वज्र के समान नख वाले	भूयिष्ठाः	२०. प्रकाशित होइये
वज्रदंष्ट्र	१०. वज्र के समान डाढ़ों वाले	ॐ	२१. ॐ
कर्माशयान् ।	११. हमारी कर्म वासनाओं को	क्ष्रौम् ॥	२२. क्ष्रौम्

श्लोकार्थ—ॐकार स्वरूप भगवान् आपको नमस्कार है। नरसिंह देव जी आपको नमस्कार है। हे तेजों के तेज ! आप हमारे समीप प्रकट होइये, वज्र के समान नख वाले वज्र के समान डाढ़ों वाले ! हमारी कर्म वासनाओं को जला डालिये-जला डालिये। हमारे अज्ञानरूप अन्धकार को नष्ट कीजिये नष्ट कीजिये। ॐ स्वाहा अभय दीजिये अभय दीजिये। हमारे अन्तः करण में प्रकाशित होइये ॐ क्ष्रौम् ॥

नवमः श्लोकः

स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदतां ध्यायन्तु भूतानि शिवं मिथो धिया।
मनश्च भद्रं भजतादधोक्षजे आवेश्यतां नो मतिरप्यहैतुकी ॥९॥

पदच्छेद— स्वस्ति अस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदताम् ध्यायन्तु भूतानि शिवम् मिथो धिया।
मनः च भद्रम् भजतात् अधोक्षजे आवेश्यताम् नः मतिः अपि अहैतुकी ॥

शब्दार्थ—

स्वस्ति	२.	कल्याण	मनः	१२.	हमारा मन
अस्तु	३.	हो	च	११	और
विश्वस्य	१.	संसार का	भद्रम्	१३.	शुभ मार्ग में
खलः	४	दुष्टों की	भजतात्	१४.	प्रवृत्त हों
प्रसीदताम्	५.	बुद्धि-शुद्ध हो	अधोक्षजे	१९.	भगवान् श्री हरि में
ध्यायन्तु	१०.	चिन्तन करें	आवेश्यताम्	२०.	प्रवेश करें
भूतानि	६.	सभी प्राणी	नः	१५.	हमारी
शिवम्	९.	सबके कल्याण का	मतिः	१६.	बुद्धि
मिथो	८.	परस्पर	अपि	१७.	भी
धिया।	७.	अपनी बुद्धि से	अहैतुकी ॥	१८.	निष्काम भाव से

श्लोकार्थ—संसार का कल्याण हो। दुष्टों की बुद्धि शुद्ध हो। सभी प्राणी अपनी बुद्धि से परस्पर सबके कल्याण का चिन्तन करें। और हमारा मन शुभ मार्ग में प्रवृत्त हो। हमारी बुद्धि भी निष्काम भाव से भगवान् श्री हरि में प्रवेश करें ॥

दशमः श्लोकः

मागारदारात्मजवित्तबन्धुषु सङ्गो यदि स्याद्भगवत्प्रियेषु नः।
यः प्राणवृत्त्या परितुष्ट आत्मवान् सिद्ध्यत्यदूरान्न तथेन्द्रियप्रियः ॥१०॥

पदच्छेद— मा अगार दारा आत्मज वित्त बन्धुषु सङ्गः यदि स्यात् भगवत् प्रियेषु नः।
यः प्राणवृत्त्या परितुष्टः आत्मवान् सिद्ध्यति अदूरात् न तथा इन्द्रिय प्रियः ॥

शब्दार्थ—

मा अगार	७.	न होवे-घर	यः	११.	जो
दारा-आत्मज	२.	स्त्री-पुत्र	प्राणवृत्त्या	१३.	शरीर निर्वाह के योग्य अन्नादि से
वित्त-बन्धुषु	३.	धन और भाई बन्धुओं में	परितुष्टः	१४.	सन्तुष्ट रहता है (उसे)
सङ्गः यदि	५.	आसक्ति-यदि	आत्मवान्	१२.	संयमी पुरुष
स्यात्	८.	हो तो	सिद्ध्यति	१६.	सिद्धि प्राप्त होती है
भगवत्	९.	भगवान् के	अदूरात्	१५.	जितनी जल्दी
प्रियेषु	१०.	प्रेमी भक्तों में हो	न	१९.	नहीं होती
नः।	४.	हमारी	तथा इन्द्रिय	१७.	उतनी जल्दी इन्द्रियों के
			प्रियः ॥	१८.	लोलुप व्यक्ति को

श्लोकार्थ—घर-स्त्री-पुत्र-धन और भाई बन्धुओं में हमारी आसक्ति न हो। यदि हो तो भगवान् के प्रेमी भक्तों में हो। जो संयमी पुरुष शरीर निर्वाह के योग्य अन्नादि से सन्तुष्ट रहता है, उसे जितनी जल्दी सिद्धि प्राप्त होती है, उतनी जल्दी इन्द्रियों के लोलुप व्यक्ति को नहीं होती ॥

एकादशः श्लोकः

यत्सङ्गलब्धं निजवीर्यवैभवं, तीर्थं मुहुः संस्पृशतां हि मानसम् ।
हरत्यजोऽन्तः श्रुतिभिर्गतोऽङ्गजं को वै न सेवेत मुकुन्दविक्रमम् ॥११॥

पदच्छेद— यत् सङ्ग लब्धम् निज वीर्य वैभवम् तीर्थम् मुहुः संस्पृशताम् हिमानसम् ।
हरति अजः अन्तः श्रुतिभिः गतः अङ्गजम् कः वै न सेवेत मुकुन्द विक्रमम् ॥

शब्दार्थ—

यत् सङ्ग	१.	जिनके सङ्ग से (भगवान् के)	अजः	९.	और जो भगवान्
लब्धम्	४.	प्राप्त होवे हैं (तथा)	अन्तः	११.	हृदय में
निज-वीर्य	२.	असाधारण पराक्रम	श्रुतिभिः	१०.	कानों के द्वारा
वैभवम्	३.	और प्रभाव	गतः	१२.	प्रवेश करने पर
तीर्थम्	५.	तीर्थ तुल्य चरित्र	अङ्गजम्	१३.	मल को
मुहुः	६.	बार-बार	कः	१६.	कौन व्यक्ति ऐसे
संस्पृशतां हि	७.	सुनने से निश्चित ही	वै	१५.	निश्चित ही
मानसम्	८.	मन पवित्र होता है	न सेवेत	१९.	नहीं सेवन करेगा
हरति ।	१४.	नष्ट कर देते हैं	मुकुन्द	१७.	भगवान् के
			विक्रमम् ॥	१८.	भक्तों का

श्लोकार्थ—जिनके सङ्ग से (भगवान् के) असाधारण पराक्रम और प्रभाव प्राप्त होवे हैं तथा तीर्थ तुल्य चरित्र बार-बार सुनने से निश्चित ही मन पवित्र होता है और जो भगवान् कानों के द्वारा हृदय में प्रवेश करने पर मलों को नष्ट कर देते हैं, निश्चित ही कौन व्यक्ति ऐसे भगवान् के भक्तों का सेवन नहीं करेगा ॥

द्वादशः श्लोकः

यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्यकिञ्चना, सर्वैर्गुणैस्तत्र समासते सुराः ।
हरावभक्तस्य कुतो महद्गुणा मनोरथेनासति धावतो बहिः ॥१२॥

पदच्छेद— यस्य अस्ति भक्तिः भगवति अकिञ्चना सर्वैः गुणैः तत्र समासते सुराः ।
हरौ अभक्तस्य कुतः महद् गुणाः मनोरथेन असति धावतः बहिः ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जिस पुरुष की	हरौ	१०.	जो हरि भगवान् का
अस्ति	५.	है	अभक्तस्य	११.	भक्त नहीं है
भक्तिः	४.	भक्ति	कुतः	१४.	कहाँ से आयेंगे
भगवति	२.	भगवान् में	महद्	१२.	उसमें महापुरुषों के
अकिञ्चना	३.	निष्काम	गुणाः	१३.	गुण
सर्वैः गुणैः	८.	सम्पूर्ण गुणों के साथ	मनोरथेन	१५.	वह तो संकल्प करके
तत्र	६.	उसके हृदय में	असति	१६.	तुच्छ
समासते	९.	निवास करते हैं	धावतः	१८.	दौड़ता रहता है
सुराः ।	७.	समस्त देवता	बहिः ॥	१७.	बाहरी विषयों की ओर

शब्दार्थ—जिस पुरुष की भगवान् में निष्काम भक्ति है, उसके हृदय में समस्त देवता सम्पूर्ण गुणों के साथ निवास करते हैं । जो हरि भगवान् का भक्त नहीं है, उसमें महापुरुषों के गुण कहाँ से आयेंगे ? वह तो संकल्प करके तुच्छ बाहरी विषयों की ओर दौड़ता रहता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

हरिर्हि साक्षाद्भगवान् शरीरिणामात्मा झषाणामिव तोयमीप्सितम् ।
हित्वा महांस्तं यदि सज्जते गृहे तदा महत्त्वं वयसा दम्पतीनाम् ॥१३॥

पदच्छेद—हरिः हि साक्षात् भगवान् शरीरिणाम् आत्मा झषाणाम् इव तोयम् ईप्सितम् ।
हित्वा महान् तम् यदि सज्जते गृहे तदा महत्त्वम् वयसा दम्पतीनाम् ॥

शब्दार्थ—

हरिः	६.	श्री हरि	हित्वा	११.	त्याग कर
हि	७.	ही	महान्	१२.	महत्त्वाकांक्षी पुरुष
साक्षात्-भगवान्	५.	साक्षात् भगवान्	तम्	१०.	उन्हें
शरीरिणाम्	८.	समस्त देहधारियों के	यदि	१३.	यदि
आत्मा	९.	आत्मा हैं	सज्जते	१५.	आसक्त रहता है
झषाणाम्	१.	मछलियों को	गृहे	१४.	घर में
इव	२.	जैसे	तदा	१६.	तो ऐसे
तोयम्	३.	जल	महत्त्वम्	१८.	बड़प्पन
ईप्सितम् ।	४.	अत्यधिक प्रिय है (वैसे ही)	वयसा	१९.	आयु के आधार पर ही माना जायेगा
			दम्पतीनाम् ॥	१७.	स्त्री-पुरुषों का

श्लोकार्थ—मछलियों को जैसे जल अत्यधिक प्रिय है, वैसे ही साक्षात् भगवान् श्री हरि ही समस्त देहधारियों की आत्मा हैं। उन्हें त्यागकर महत्त्वाकांक्षी पुरुष यदि घर में आसक्त रहता है तो ऐसे स्त्री-पुरुषों का बड़प्पन आयु के आधार पर ही माना जाता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तस्माद्रजोरागविषादमन्युमानस्पृहाभयदैन्याधिमूलम् ।
हित्वा गृहं संसृतिचक्रवालं नृसिंहपादं भजताकुतोभयमिति ॥१४॥

पदच्छेद— तस्मात् रजः राग विषाद मन्यु मान स्पृहा भय दैन्य आधिमूलम् ।
हित्वा गृहम् संसृति चक्र बालम् नृसिंह पादम् भजत अकुतो भयम् इति ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये तुम	हित्वा	१३.	त्याग कर
रजः	२.	तृष्णा	गृहम्	१२.	घर आदि को
राग	३.	राग	संसृति	१०.	संसार
विषाद	४.	विषाद	चक्रबालम्	११.	चक्र का वह न करने वाले
मन्यु	५.	क्रोध	नृसिंह	१६.	भगवान् नृसिंह के
मान	६.	अभिमान	पादम्	१७.	चरण कमलों का
स्पृहा	७.	इच्छा	भजत	१८.	आश्रय लो
भय-दैन्य	८.	भय-दीनता (और)	अकुतो	१५.	जहाँ कहीं से भी
आधिमूलम् ।	९.	मानसिक सन्ताप के मूलकारण	भयम् इति ॥	१६.	भय न हो ऐसे (निर्भय)

श्लोकार्थ—इसलिये तुम तृष्णा, राग, विषाद, क्रोध, अभिमान, इच्छा, भय, दीनता और मानसिक सन्ताप के मूल करण संसारचक्र का वहन करने वाले घर आदि को त्याग कर भगवान् नृसिंह के निर्भय (जहाँ कहीं से भी भय न हो ऐसे) चरण कमलों का आश्रय लो ॥

पञ्चदशः श्लोकः

केतुमालेऽपि भगवान् कामदेवस्वरूपेण लक्ष्म्याः प्रियचिकीर्षया प्रजापतेर्दुहितॄणां पुत्राणां तद्वर्षपतीनां पुरुषायुषाहोरात्रपरिसंख्यानानां यासां गर्भा महापुरुषमहास्त्रतेजसोद्वेजितमनसां विध्वस्ता व्यसवः संवत्सरान्ते विनिपतन्ति ॥१५॥

पदच्छेद—केतुमाले अपि भगवान् कामदेव स्वरूपेण लक्ष्म्याः प्रिय चिकीर्षया प्रजापतेः दुहितॄणाम् पुत्राणाम् तद्वर्ष पतीनाम् पुरुष आयुषा अहोरात्र परिसंख्यानानाम् यासाम् गर्भाः महापुरुष महास्त्र तेजसा उद्वेजित मनसाम् विध्वस्ताः व्यसवः संवत्सरान्ते विनिपतन्ति ॥

शब्दार्थ—

केतुमाले	१. केतुमालवर्ष में	अहोरात्र	१६. दिन और रात के
अपि	२. भी	परि	१७. बराबर
भगवान्	९. भगवान्	संख्यानानाम्	१८. संख्यावाले
कामदेव	१०. कामदेव	यासाम्	१९. उन कन्यायों के
स्वरूपेण	११. रूप से निवास करते हैं,	गर्भाः	२०. गर्भ
लक्ष्म्याः	३. लक्ष्मी जी का (तथा)	महापुरुष	२१. परम पुरुष नारायण के
प्रिय	७. प्रिय	महास्त्र	२२. श्रेष्ठ अस्त्र सुदर्शन चक्र के
चिकीर्षया	८. करने की इच्छा से	तेजसः	२३. तेजसे
प्रजापतेः	४. संवत्सर नामक प्रजापति के	उद्वेजित	२५. भयभीत (होने से)
दुहितॄणाम्	६. पुत्रियों का	मनसाम्	२४. मन के
पुत्राणाम्	५. पुत्रों और	विध्वस्ताः	२६. नष्ट हो जाते हैं और
तद् वर्ष	१२. वे उस वर्ष के	व्यसवः	२९. उनके प्राण
पतीनाम्	१३. अधिपति हैं	संवत्सर	२७. वर्ष के
पुरुष	१४. मनुष्य को (१०० वर्ष की)	अन्ते	२८. अन्त में
आयुषा।	१५. आयु के	विनिपतन्ति ॥	३०. निकल जाते हैं

श्लोकार्थ—केतुमाल वर्ष में भी लक्ष्मी जी का तथा संवत्सर नामक प्रजापति के पुत्रों और पुत्रियों का प्रिय करने की इच्छा से भगवान् कामदेव रूप से निवास करते हैं। वे उस वर्ष के अधिपति हैं। मनुष्य की (१०० वर्ष की) आयु के दिन और रात के बराबर संख्या वाले उन कन्यायों के गर्भ परम पुरुष नारायण के श्रेष्ठ अस्त्र सुदर्शन चक्र के तेज से मन के भयभीत होने से नष्ट हो जाते हैं। और वर्ष के अन्त में प्राण निकल जाते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

अतीव सुललितगतिविलासविलसितरुचिरहासलेशावलोकलीलया किञ्चिदुत्तम्भितसुन्दरभ्रूमण्डलसुभगवदनारविन्दश्रिया रमां रमयन्निन्द्रियाणि रमयते ॥१६॥

पदच्छेद—अतीव सुललित गति विलास विलसित रुचिर हास लेश अवलोक लीलया किञ्चित् उत्तम्भित सुन्दर भ्रूमण्डल सुभग वदन अरविन्द श्रियारमाम् रमयन् इन्द्रियाणि रमयते ॥

शब्दार्थ—

अतीव	१.	वे भगवान् अत्यधिक	उत्तम्भित	११.	उठे हुये
सुललित	२.	सुन्दर	सुन्दर	१२.	सुन्दर
गति-विलास	३.	चाल और विलास से	भ्रूमण्डल	१३.	भ्रूमण्डल की
विलसित	४.	सुशोभित	सुभग	१४.	सुन्दरता और
रुचिर	५.	मधुर	वदन	१५.	मुख
हास	६.	मन्द मुसकान से	अरविन्द	१६.	कमल की
लेश	७.	तिरछी	श्रिया	१७.	शोभा से
अवलोक	८.	चितवन से	रमाम्	१८.	लक्ष्मी जी को
लीलया	९.	लीला पूर्वक	रमयन्	१९.	आनन्दित करते हुये
किञ्चित् ।	१०.	कुछ	इन्द्रियाणि	२०.	अपनी इन्द्रियों को भी
			रमयते ॥	२१.	आनन्दित करते हैं

श्लोकार्थ—वे भगवान् अत्यधिक सुन्दर चाल और विलास से सुशोभित मधुर मन्द मुसकान से, तिरछी चितवन से, लीला पूर्वक कुछ उठे हुये सुन्दर भ्रूमण्डल की सुन्दरता और मुख कमल की शोभा से लक्ष्मी जी को आनन्दित करते हुये अपनी इन्द्रियों को भी आनन्दित करते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

तद्भगवतो मायामयं रूपं परमसमाधियोगेन रमा देवी संवत्सरस्य रात्रिषु प्रजापतेर्दुहितृभिरुपेताहःसु च तद्भर्तृभिरुपास्ते इदं चोदाहरति ॥१७॥

पदच्छेद—तद् भगवतः माया मयम् रूपम् परम समाधि योगेन रमा देवी संवतसरस्य रात्रिषु प्रजापतेः दुहितृभिः उपेत अहः सु च तद् भर्तृभिः उपास्ते इदम् च उदाहरति ॥

शब्दार्थ—

तद्	५.	उस	रात्रिषु	९.	रात्रि के समय
भगवतः	४.	भगवान् के	प्रजापतेः	१०.	प्रजापति नामक
माया	६.	माया	दुहितृभिः उपेत	१२.	कन्याया के सहित
मयम्	७.	मय	अहः सु	१४.	दिन में
रूपम्	८.	स्वरूप की	च	१३.	और
परम समाधि	२.	परम समाधि	तद्भर्तृभिः	१५.	उनके पतियों के सहित
योगेन	३.	योग के द्वारा	उपास्ते	१७.	आराधना करती हैं
रमा देवी	१.	रमा देवी जो (लक्ष्मी जो)	इदम्	१६.	इस मन्त्र की
संवतसरस्य	११.	संवत्सर की	च उदाहरति ॥	१८.	और जप करती हैं

श्लोकार्थ—रमा देवी लक्ष्मी जो परम समाधि योग के द्वारा भगवान् के उस माया मय स्वरूप की रात्रि के समय प्रजापति नामक संवत्सर की कन्यायों के सहित और दिन में उनके पतियों के सहित इस मन्त्र की आराधना और जप करती हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ॐ नमो भगवते हृषीकेशाय सर्वगुणविशेषैर्विलक्षितात्मने आकूतीनां चित्तीनां चेतसां विशेषाणां चाधिपतये षोडशकलायच्छन्दोमयायान्नमयायामृतमयाय सर्वमयाय सहसे ओजसे बलाय कान्ताय कामाय नमस्ते उभयत्र भूयात् ॥१८॥

पदच्छेद—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ॐ नमो भगवते हृषीकेशाय सर्वगुण विशेषैः विलक्षित आत्मने आकूती नाम् चेतसाम् विशेषाणाम् च अधिपतये षोडशकलाय छन्दोमयाय अन्नमयाय अमृत मयाय सर्वमयाय सहसे ओजसे बलाय कान्ताय कामाय नमः ते उभयत्र भूयात् ॥

शब्दार्थ—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं	२४. इन बीज मन्त्रों सहित	षोडश	१२. सोलह
ॐ	२६. ॐकार स्वरूप	कलाय	१३. कलाओं से युक्त हैं
नमः	२७. आपको नमस्कार है	छन्दोमयाय	१४. वेदोक्त कर्मों से प्राप्त होते हैं
भगवते	२२. भगवान्	अन्नमयाय	१५. अन्नमय
हृषीकेशाय	१. जो इन्द्रियों के नियन्ता और	अमृतमयाय	१६. अमृतमय और
सर्वगुण	२. सम्पूर्ण गुणों से	सर्वमयाय	१७. सर्वमय हैं
विशेषैः	३. विशेष	सहसे	१८. शरीरिक
विलक्षित	४. युक्त	ओजसे	१९. पराक्रम स्वरूप
आत्मने	५. स्वरूप वाले हैं	बलाय	२०. बलरूप और
आकूतीनाम्	६. क्रिया शक्ति	कान्ताय	२१. सौन्दर्य युक्त
चित्तीनाम्	७. ज्ञान शक्ति	कामाय	२३. कामदेव को
चेतसाम्	८. संकल्प और अध्यवसायादि	नमः	२५. नमस्कार है
विशेषाणाम्	९. धर्मों के	ते	२८. आपको
च	१०. और	उभयत्र	२९. सब ओर से
आधिपतये	११. उनके अधीश्वर हैं	भूयात् ॥	३०. नमस्कार होवे

श्लोकार्थ—जो इन्द्रियों के नियन्ता और सम्पूर्ण विशेष गुणों से युक्त स्वरूप वाले हैं, क्रिया शक्ति, ज्ञान शक्ति, संकल्प और अध्यवसायादि धर्मों के और उनके अधीश्वर हैं, सोलह कलाओं से युक्त हैं, वेदोक्त कर्मों से प्राप्त होते हैं, अन्नमय, अमृतमय, और सर्वमय हैं उन शरीरिक पराक्रम स्वरूप बलरूप और सौन्दर्य युक्त भगवान् कामदेव को ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं इन मन्त्रों सहित नमस्कार है ॐकार स्वरूप आपको नमस्कार है। आपको सब ओर से नमस्कार है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

स्त्रियो व्रतैस्त्वा हृषिकेश्वरं स्वतो ह्याराध्य लोके पतिमाशासतेऽन्यम् ।
तासां न ते वै परिपान्त्यपत्यं प्रियं धनायूंषि यतोऽस्वतन्त्राः ॥१९॥

पदच्छेद—स्त्रियः व्रतैः त्वा हृषिकेश्वरम् स्वतः हि आराध्य लोके पतिम् आशासते अन्यम् ।
तासाम् न ते वै परिपान्ति अपत्यम् प्रियम् धन आयूंषि यतः अस्वतन्त्राः ॥

शब्दार्थ—

स्त्रियः	२.	स्त्रियाँ	तासाम्	११.	उनके
व्रतैः	३.	व्रतों के द्वारा	न	१५.	नहीं
त्वा	४.	आपकी ही	ते	१०.	किन्तु वे
हृषिकेश्वरम्	१.	हे इन्द्रियों के अधीश्वर !	वै	१७.	निश्चय ही
स्वतः हि	८.	स्वयम् ही	परिपान्ति	१६.	रक्षाकर पाते हैं
आराध्य	५.	आराधना करके	अपत्यम्	१३.	पुत्र
लोके पतिम्	७.	सांसारिक पतियों की	प्रियम्	१२.	प्रिय
आशासते	९.	इच्छा किया करती हैं	धनआयूंषि	१४.	धन और आयु की
अन्यम् ।	६.	अन्य	यतः अस्वतन्त्राः ॥	१८.	क्योंकि वे स्वयं परतन्त्र हैं

श्लोकार्थ—हे इन्द्रियों के अधीश्वर ! स्त्रियाँ व्रतों के द्वारा आपकी ही आराधना करके अन्य सांसारिक पतियों की स्वयम् ही इच्छा किया करती हैं । किन्तु वे उनके प्रिय, पुत्र, धन और आयु की रक्षा नहीं कर पाते हैं । क्योंकि वे निश्चय ही स्वयम् परतन्त्र हैं ॥

विंशः श्लोकः

स वै पतिः स्यादकुतोभयः स्वयं समन्ततः पाति भयातुरं जनम् ।
स एक एवेतरथा मिथो भयं नैवात्मलाभादधि मन्यते परम् ॥२०॥

पदच्छेद—सः वै पतिः स्यात् अकुतोभयः स्वयम् समन्ततः पाति भयातुरम् जनम् ।
सः एकः एव इतरथा मिथः भयम् न एव आत्मलाभात् अधिमन्यते परम् ॥

शब्दार्थ—

सः वै	१.	निश्चय ही वही	सः एकः	१०.	ऐसे एक मात्र
पतिः	२.	सच्चा पति	एव	११.	आप ही हैं
स्यात्	३.	है	इतरथा	१२.	दूसरा मानने पर
अकुतोभयः	६.	निर्भय हो (और)	मिथः भयम्	१३.	परस्पर भय होगा
स्वयम्	४.	जो अपने आप	न एव	१७.	नहीं
समन्ततः	५.	सब ओर से	आत्मलाभात्	१४.	अपनी प्राप्ति से
पाति	९.	रक्षा कर सके	अधि	१५.	बढ़कर
भयातुरम्	७.	भयभीत	मन्यते	१८.	माना जाता है
जनम् ।	८.	लोगों की	परम् ॥	१६.	कोई लाभ

श्लोकार्थ—निश्चय ही वही सच्चा पति है, जो अपने आप सब ओर से निर्भय हो, और भयभीत लोगों की रक्षाकर सके । ऐसे एक मात्र आप ही हैं । दूसरा मानने पर परस्पर भय होगा, अपनी प्राप्ति से बढ़ कर कोई लाभ नहीं माना जाता है ॥

एकविंशः श्लोकः

या तस्य ते पादसरोरुहार्हणं निकामयेत्साखिलकामलम्पटा ।
तदेव रासीप्सितमीप्सितोऽर्चितो यद्भग्नयाच्ञा भगवन् प्रतप्यते ॥२१॥

पदच्छेद— या तस्य ते पाद सरोरुह अर्हणम् निकामयेत् सा अखिल काम लम्पटा ।
तदेव रासि ईप्सितम् ईप्सितः अर्चितः यद् भग्न याच्ञा भगवन् प्रतप्यते ॥

शब्दार्थ—

या	२.	जो स्त्री	तदेवरासि	१३.	केवल वही देते हैं
तस्य	३.	उस	ईप्सितम्	१४.	अभीष्ट वस्तु
ते पाद	४.	आप के चरण	ईप्सितः	११.	एक ही वस्तु के लिए प्रार्थित और
सरोरुह	५.	कमलों का	अर्चितः	१२.	पूजित होने पर आप
अर्हणम्	६	पूजन	यद्	१५.	जिसके
निकामयेत्	७.	करना चाहती है	भग्न	१७.	टूट जाने पर
सा अखिल	८.	उसकी सम्पूर्ण	याच्ञा	१६.	भोग वस्तु के
काम	९.	कामनायें	भगवन्	१.	हे भगवन् !
लम्पटा ।	१०.	पूर्ण हो जाती हैं	प्रतप्यते ॥	१८.	वह दुःखी होती है

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! जो स्त्री आपके चरण कमलों का पूजन करना चाहती है, उसकी सम्पूर्ण कामनायें पूर्ण हो जाती हैं । (एक ही वस्तु के लिए) प्रार्थित और पूजित होने पर आप केवल वही अभीष्ट वस्तु देते हैं, जिसके टूट जाने पर वह दुःखी होती है ।

द्वाविंशः श्लोकः

मत्प्राप्तयेऽजेशसुरासुरादयस्तप्यन्त उग्रं तप ऐन्द्रियेधियः ।
ऋते भवत्पादपरायणान्न मां विन्दन्त्यहंत्वद्धृदया यतोऽजित ॥२२॥

पदच्छेद—मत् प्राप्तये अज ईश सुर असुर आदयः तप्यन्ते उग्रम् तपः ऐन्द्रिये धियः ।
ऋते भवत् पाद परायणात् न माम्, विन्दन्ति अहम् त्वद् हृदया यतः अजित ॥

शब्दार्थ—

मत् प्राप्तये	२.	मुझे पाने के लिये	भवत्-पाद	१०.	आपके-चरणों का
अज-ईश	५.	ब्रह्मा-ईश	परायणात्	११.	आश्रय लेने वाले भक्त के
सुर-असुर	६.	देवता-असुर	न	१४.	कोई नहीं
आदयः	७.	इत्यादि	माम्	१३.	मुझे
तप्यन्ते	९.	तपस्या करते हैं (किन्तु)	विन्दन्ति	१५.	पा सकता
उग्रंतपः	८.	कठिन-कष्ट सहकर	अहम्-त्वद्	१७.	मेरा मन-आपके
ऐन्द्रिये	३.	इन्द्रिय सुख को	हृदया	१८.	हृदय में (लगा रहता है)
धियः ।	४.	चाहने वाले	यतः	१६.	क्योंकि
ऋते	१२.	बिना	अजित ॥	१.	हे अजित !

श्लोकार्थ—हे अजित ! मुझे पाने के लिये इन्द्रिय सुख को चाहने वाले ब्रह्मा-ईश देवता-असुर इत्यादि कठिन कष्ट सह कर तपस्या करते हैं । किन्तु आपके चरणों का आश्रय लेने वाले भक्त के बिना मुझे कोई नहीं पा सकता । क्योंकि मेरा मन आपके हृदय में लगा रहता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

**स त्वं ममाप्यच्युत शीर्ष्णि वन्दितं कराम्बुजं यत्त्वदधायि सात्वताम् ।
बिभर्षि मां लक्ष्म वरेण्य मायया क ईश्वरस्येहितमूहितुं विभुरिति ॥२३॥**

पदच्छेद—सः त्वम् मम अपि अच्युत शीर्ष्णि वन्दितम् कर अम्बुजम् यत्त्वद् अधायि सात्वताम् ।
बिभर्षि माम् लक्ष्म वरेण्य मायया कः ईश्वरस्य ईहितम् ऊहितुम् विभुः इति ॥

शब्दार्थ—

सः त्वम्	२.	ऐसे आप	बिभर्षि	१०.	धारण करते हैं
मम अपि	३.	मेरे भी	माम्	११.	मुझे
अच्युत	१.	हे अच्युत !	लक्ष्म	१२.	लाञ्छन रूप से वक्षः स्थल में
शीर्ष्णि	४.	सिर पर	वरेण्य	१३.	हे श्रेष्ठ ! आप
वन्दितम्	५.	वन्दनीय	मायया	१४.	मायारूपी
कर-अम्बुजम्	६.	कर कमल को (रखिये)	कः	१५.	कौन
यत्-त्वद्	७.	जिसे-आपने	ईश्वरस्य	१६.	आपकी
अधायि	९.	रक्खा है	ईहितम्	१७.	लीलाओं को
सात्वताम् ।	८.	भक्तों के मस्तक पर	ऊहितुम्	१८.	रहस्य को जानने में
			विभुः इति ॥	१९.	समर्थ है

श्लोकार्थ—हे अच्युत ! ऐसे आप मेरे भी सिर पर वन्दनीय कर कमल को रखिये जिसे आप ने भक्तों के मस्तक पर रक्खा है । हे श्रेष्ठ ! आप मुझे श्री लाञ्छन रूप से वक्षः स्थल में धारण करते हैं । आपकी मायारूपी लीलाओं के रहस्य को जानने में कौन समर्थ है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

रम्यके च भगवतः प्रियतमं मात्स्यमवताररूपं तद्वर्षपुरुषस्य मनोः प्राक्प्रदर्शितं स इदानीमपि महता भक्तियोगेनाराधयतीदं चोदाहरति ॥२४॥

पदच्छेद—रम्यके च भगवतः प्रियतमम् मात्स्यम् अवतार रूपम् तद् वर्ष पुरुषस्य मनोः प्राक् प्रदर्शितम् सः इदानीम् अपि महता भक्तियोगेन आराधयति इदम् च उदाहरति ॥

शब्दार्थ—

रम्यके	१.	रम्यक वर्ष में	प्रदर्शितम्	१०.	दिखाये गये रूप की
च	६.	और	सः	११.	वे (मनु)
भगवतः	२.	भगवान् ने	इदानीम् अपि	१२.	इस समय भी
प्रियतमम्	३.	अपना परम प्रिय	महता	१३.	अत्यधिक
मात्स्यम्	४.	मत्स्य	भक्तियोगेन	१४.	भक्ति-भावसे
अवताररूपम्	५.	अवतार रूप (दिखाया)	आराधयति	१५.	उपासना करते हैं
तद् वर्ष	७.	उस वर्ष के	इदम्	१७.	इस मन्त्र का
पुरुषस्य	८	पुरुष	च	१६.	और
मनोः प्राक् ।	९.	मनु के पहले	उदाहरति ॥	१८.	जप करते हैं

श्लोकार्थ—रम्यक वर्ष में भगवान् ने अपना परम प्रिय मत्स्य अवतार रूप दिखाया और उस वर्ष के पुरुष मनु के पहले दिखाये गये रूप की वे मनु इस समय भी अत्यधिक भक्ति-भाव से उपासना करते हैं और इस मन्त्र का जप करते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

ॐ नमो भगवते मुख्यतमाय नमः सत्त्वाय प्राणायौजसे सहसे बलाय महामत्स्याय नम इति ॥२५॥

पदच्छेद—ॐ नमः भगवते मुख्य तमाय नमः सत्त्वाय प्राणाय ओजसे सहसे बलाय महा मत्स्याय नम इति ॥

शब्दार्थ—

ॐ	१.	ॐकार पदके अर्थ	प्राणाय	६.	प्राणरूप
नमः	३.	नमस्कार है	ओजसे	७.	शारीरिक
भगवते	२.	हे भगवन् ! आपको	सहसे	८.	बलरूप
मुख्यतमाय	४.	सबसे प्रधान	महा	९.	महा
नमः	१२.	नमस्कार है	मत्स्याय	१०.	मत्स्यरूप आपको
सत्त्वाय	५.	सत्त्वगुण रूप	नम इति ॥	११.	नमस्कार है

श्लोकार्थ—ॐकार रूप पद के अर्थ हे भगवन् ! आपको नमस्कार है। सब से प्रधान सत्व गुण रूप, प्राणरूप, शारीरिक बलरूप महामत्स्यरूप आपको नमस्कार है नमस्कार है ॥

षड्विंशः श्लोकः

अन्तर्बहिश्चाखिललोकपालकैरदृष्टरूपो विचरस्युरुस्वनः ।
स ईश्वरस्त्वं य इदं वशेऽनयन्नाम्ना यथा दारुमयीं नरः स्त्रियम् ॥२६॥

पदच्छेद— अन्तः बहिः च अखिल लोक पालकैः अदृष्टरूपः विचरसि उरुस्वनः। ।
स ईश्वरः त्वम् यः इदम् वशे अनयत् नाम्ना यथा दारुमयीम् नरः स्त्रियम् ॥

शब्दार्थ—

अन्तः बहिः	३.	अन्दर-बाहर	ईश्वरः	१२.	ईश्वर हैं
च	४.	और	त्वम्	११.	आप ही
अखिल	१.	हे प्रभो ! आप समस्त	यः	१३.	जो
लोक पालकैः	२.	लोक पालों के	इदम्	१०.	इस संसार के
अदृष्ट	७.	दिखाई नहीं देता	वशे अनयत्	१४.	अपने-अधीन करके
रूपः	६.	आपका रूप	नाम्ना	१८.	विभिन्न नामों के द्वारा इसे नचाते हैं
विचरसि	५.	संचार करते हैं	यथा	१७.	समान
उरु स्वनः ।	८.	वेद आपका ही महान् शब्द है	दारुमयीम्	१५.	लकड़ी से बनी हुई
सः	९.	ऐसे	नरः स्त्रियम् ॥	१६.	कठ पुतलियों के

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप समस्त लोकपालों के अन्दर और बाहर सञ्चार करते हैं। आपका रूप दिखाई नहीं देता, वेद आपका ही महान् शब्द है। ऐसे इस संसार के आप ही ईश्वर हैं। जो अपने अधीन करके लकड़ी से बनी हुई कठपुतलियों के समान विभिन्न नामों के द्वारा इसे नचाते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

यं लोकपालाः किल मत्सरज्वरा हित्वा यतन्तोऽपि पृथक् समेत्य च ।
पातुं न शेकुर्द्विपदश्चतुष्पदः सरीसृपं स्थाणु यदत्र दृश्यते ॥२७॥

पदच्छेद— यम् लोक पालाः किल मत्सर ज्वराः हित्वा यतन्तः अपि पृथक् समेत्य च ।
यातुम् न शेकुः द्विपद चतुष्पदः सरीसृपम् स्थाणु यद् अत्र दृश्यते ॥

शब्दार्थ—

यम्	४.	जिस प्राण को	पातुम्	१७.	रक्षा करने में
लोकपालाः	१.	इन्द्रियाभिमानी देवता	न शेकुः	१८.	नहीं समर्थ हो सके
किल-मत्सर	२.	निश्चय ही ईर्ष्यारूपी	द्विपदः	१०.	मनुष्य
ज्वराः	३.	रोग के कारण	चतुष्पदः	११.	पशु
हित्वा	५.	छोड़ कर	सरीसृपम्	१३.	जङ्गम आदि
यतन्तः अपि	६.	प्रयत्न करने पर भी	स्थाणु	१२.	स्थावर
पृथक्	७.	अलग-अलग	यद्	१४.	जो भी
समेत्य	९.	आपस में मिलकर भी	अत्र	१५.	यहाँ
च ।	८.	और	दृश्यते ॥	१६.	दिखाई देते हैं

श्लोकार्थ—इन्द्रियाभिमानी देवता निश्चय ही ईर्ष्यारूपी रोग के कारण जिस प्राण को प्रयत्न करने पर भी अलग-अलग और आपस में मिल कर भी मनुष्य, पशु, स्थावर, जङ्गम आदि जो भी यहाँ दिखाई देते हैं, रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सके ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

भवान् युगान्तार्णव ऊर्मिमालिनि क्षोणीमिमामोषधिवीरुधां निधिम् ।
मया सहोरु क्रमतेऽज ओजसा तस्मै जगत्प्राणगणात्मने नम इति ॥२८॥

पदच्छेद— भवान् युगान्त अर्णव ऊर्मि मालिनि क्षोणीम् इमाम् ओषधिवीरुधाम् निधिम् ।
मया सह उरुक्रमते अज ओजसा, तस्मै जगत् प्राण गण आत्मने नमः इति ॥

शब्दार्थ—

भवान्	२.	आपने	मया-सह	३.	मेरे साथ
युगान्त-अर्णव	११.	प्रलय-कालीन समुद्र में	उरु	१२.	अत्यधिक
ऊर्मि	१०.	तरंगों से युक्त	क्रमते	१४.	विहार किया था
मालिनि	९.	ऊँची-ऊँची	अज	१.	हे अजन्मा प्रभो !
क्षोणीम्	८.	पृथ्वी को	ओजसा	१३.	उत्साह से
इमाम्	७.	इस	तस्मै-जगत्	१५.	ऐसे-संसार के
ओषधि	४.	ओषधि और	प्राण-गण	१६.	प्राण-समुदाय
वीरुधाम्	५.	लताओं के	आत्मने	१७.	स्वरूप
निधिम् ।	६.	आश्रय रूप	नमः इति ॥	१८.	आपको मेरा नमस्कार है

श्लोकार्थ—हे अजन्मा ! प्रभो ! आपने मेरे साथ ओषधि और लताओं के आश्रय रूप इस पृथ्वी को लेकर ऊँची-नीची तरंगों से युक्त प्रलय कालीन समुद्र में अत्यधिक उत्साह से विहार किया था। ऐसे संसार के प्राण-समुदाय स्वरूप आपको मेरा नमस्कार है।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

हिरण्मयेऽपि भगवान्निवसति कूर्मतनुं बिभ्राणस्तस्य तत्प्रियतमां तनुमर्यमा सह वर्षपुरुषैः पितृगणाधिपतिरुपधावति मन्त्रमिमं चानुजपति ॥२९॥

पदच्छेद—हिरण्मये अपि भगवान् निवसति कूर्म तनुम् बिभ्राणः तस्य तत् प्रियतमाम् तनुम् अर्यमा सह वर्ष पुरुषैः पितृ गण अधिपतिः उपधावति मन्त्रम् इमम् च अनु जपति ॥

शब्दार्थ—

हिरण्मये अपि	१.	हिरण्मयवर्ष में भी	सह	७.	के साथ (भगवान् की)
भगवान्	२.	भगवान्	वर्ष पुरुषैः	६.	उस वर्ष के निवासियों
निवसति	५.	रहते हैं	पितृ गण	८.	पितृ गणों के
कूर्म-तनुम्	३.	कच्छप रूप	अधिपतिः	९.	स्वामी अर्यमा
बिभ्राणः	४.	धारण करके	उपधावति	१४.	उपासना करते हैं
तस्य	११.	भगवान् की	मन्त्रम्	१७.	मन्त्र का
तत् प्रियतमाम्	१२.	उस प्रियतम	इमम्	१६.	इस
तनुम्	१३.	मूर्ति की	च	१५.	और
अर्यमा ।	१०.	अर्यमा	अनुजपति ॥	१८.	जप करते हैं

श्लोकार्थ—हिरण्मय वर्ष में भी भगवान् कच्छप रूप धारण करके रहते हैं। वहाँ के निवासियों के साथ पितृगणों के स्वामी अर्यमा भगवान् की उस प्रियतम मूर्ति की उपासना करते हैं और इस मन्त्र का जप करते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

ॐ नमो भगवते अकूपाराय सर्वसत्त्वगुणविशेषणायानुपलक्षितस्थानाय नमो वर्ष्मणे नमो भूम्ने नमो नमोऽवस्थानाय नमस्ते ॥३०॥

पदच्छेद—ॐ नमः भगवते अकूपाराय सर्वसत्त्वगुण विशेषणाय अनुपलक्षित स्थानाय नमः वर्ष्मणे नमः भूम्ने नमः अवस्थानाय नमः ते ॥

शब्दार्थ—

ॐ	१.	ॐकार स्वरूप आपको	नमः	१३.	नमस्कार है
नमः	२.	नमस्कार है	वर्ष्मणे	८.	कालकी मर्यादा से रहित
भगवते	११.	भगवान्	नमः	१४.	नमस्कार है
अकूपाराय	१२.	कच्छप को	भूम्ने	९.	सर्व व्यापक
सर्व	३.	जो सम्पूर्ण	नमः	१५.	नमस्कार है
सत्त्वगुण	४.	सत्त्वगुण से	नमः	१६.	नमस्कार है
विशेषणाय	५.	युक्त हैं	अवस्थानाय	१०.	सर्वाधार
अनुपलक्षित	७.	निश्चित नहीं है	नमः	१८.	नमस्कार है
स्थानाय ।	६.	जिनका स्थान	ते ॥	१७.	आपको

श्लोकार्थ—ॐकार स्वरूप आपको नमस्कार है, जो सम्पूर्ण सत्त्वगुण से युक्त हैं, जिनका स्थान निश्चित नहीं है। काल की मर्यादा से रहित, सर्वव्यापक, सर्वाधार, भगवान् कच्छप को नमस्कार है। नमस्कार है। आपको नमस्कार है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

यद्रूपमेतन्निजमाययार्पितमर्थस्वरूपं बहुरूपरूपितम् ।
संख्यां न यस्यास्त्ययथोपलम्भनात् तस्मै नमस्तेऽव्यपदेशरूपिणे ॥३१॥

पदच्छेद—यद् रूपम् एतद् निजमायया अर्पितम् अर्थ स्वरूपम् बहुरूप रूपितम् ।
संख्याम् न यस्य अस्ति अयथा उपलम्भनात् तस्मै नमस्ते अव्यपदेश रूपिणे ॥

शब्दार्थ—

यद्	११.	जो	संख्याम् न	९.	संख्या नहीं
रूपम्	१२.	रूप	यस्य	८.	इसकी
एतद्	४.	यह	अस्ति	१०.	है
निजमायया	१३.	अपनी माया से	अयथा	६.	मिथ्या ही
अर्पितम्	१४.	प्रकाशित होने वाला है	उपलम्भनात्	७.	निश्चय होता है
अर्थस्वरूपम्	५.	दृश्य प्रपञ्च	तस्मै	१५.	ऐसे
बहु	१.	अनेक	नमः	१९.	नमस्कार है
रूप	२.	रूपों में	ते	१८.	आपको
रूपितम् ।	३.	प्रतीत होने वाला	अव्यपदेश	१६.	अनिर्वचनीय
			रूपिणे ।।	१७.	रूपवाले

श्लोकार्थ—अनेक रूपों में प्रतीत होने वाला यह दृश्य प्रपञ्च मिथ्या ही निश्चय होता है। इसकी संख्या नहीं है। जो रूप अपनी माया से प्रकाशित होने वाला है, ऐसे अनिर्वचनीय रूप वाले आपको नमस्कार है ।।

द्वात्रिंशः श्लोकः

जरायुजं स्वेदजमण्डजोद्भिदं चराचरं देवर्षिपितृभूतमैन्द्रियम् ।
द्यौः खं क्षितिः शैलसरित्समुद्रद्वीपग्रहर्क्षेत्यभिधेय एकः ॥३२॥

पदच्छेद—जरा युजम् स्वेदजम् अण्डज उद्भिदम्, चरअचरम् देव ऋषिपितृ भूतम् ऐन्द्रियम् ।
द्यौः खम् क्षितिः शैल-सरित् समुद्र द्वीप ग्रह ऋक्ष इति अभिधेय एकः ॥

शब्दार्थ—

जरायुजम्	२.	जरायुज	द्यौः खम	११.	स्वर्ग-आकाश
स्वेदजम्	३.	स्वेदज	क्षितिः	१२.	पृथ्वी
अण्डज	४.	अण्डज	शैल-सरित्	१३.	पर्वत-नदी
उद्भिदम्	५.	उद्भिज्ज	समुद्र	१४.	समुद्र
चर-अचरम्	६.	जङ्गम-स्थावर	द्वीप	१५.	द्वीप
देवऋषि	७.	देवता-ऋषि	ग्रह	१६.	ग्रह और
पितृ	८.	पितृ गण	ऋक्ष-इति	१७.	तारा इन नामों से
भूतम्	९.	भूत	अभिधेय	१८.	प्रसिद्ध हैं
ऐन्द्रियम् ।	१०.	इन्द्रिय	एकः ।।	१.	एक मात्र आप ही

श्लोकार्थ—एक मात्र आप ही जरायुज, स्वेदज अण्डज उद्भिज्ज स्थावर जङ्गम देवता ऋषि पितृ गण भूत इन्द्रिय स्वर्ग आकाश पृथ्वी पर्वत नदी समुद्र द्वीप ग्रह और तारा इन नामों से प्रसिद्ध हैं।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यस्मिन्नसंख्येयविशेषनामरूपाकृतौ कविभिः कल्पितेयम् ।
संख्या यया तत्त्वदृशापनीयते तस्मै नमः सांख्यनिदर्शनाय ते इति ॥३३॥

पदच्छेद— यस्मिन् असंख्येय विशेषनाम रूप आकृतौ कविभिः कल्पिते इयम् । संख्या यया तत्त्व दृशा अपनीयते तस्मै नमः सांख्य निदर्शनाय ते इति ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन्	१.	जिन आप में	यया	९.	जिस
असंख्येय	३.	असंख्य	तत्त्व	१०.	तत्त्व
विशेष	४.	विशेषण	दृशा	११.	दृष्टि का उदय होने पर
नाम	५.	नाम	अपनीयते	१३.	निवृत्त हो जाती है
रूप	६.	रूप (और)	तस्मै	१४.	ऐसे
आकृतौ	७.	आकृतियों की	नमः	१८.	नमस्कार है
कविभिः	२.	विद्वानों ने	सांख्य	१५.	सांख्य
कल्पितेयम् ।	८.	कल्पना की है	निदर्शनाय	१६.	सिद्धान्त स्वरूप
संख्या	१२.	संख्या	ते-इति ॥	१७.	आपको

श्लोकार्थ—जिन आप में विद्वानों ने असंख्य विशेषण, नाम, रूप और आकृतियों की कल्पना की है। जिस तत्त्व दृष्टि का उदय होने पर संख्या निवृत्त हो जाती है, ऐसे सांख्य सिद्धान्त स्वरूप आपको नमस्कार है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

उत्तरेषु च कुरुषु भगवान् यज्ञपुरुषः कृतवराहरूप आस्ते तं तु देवी हैषा भूः सह कुरुभिरस्खलितभक्तियोगेनोपधावति इमां च परमामुपनिषद-मावर्तयति ॥३४॥

पदच्छेद—उत्तरेषु च कुरुषु भगवान् यज्ञ पुरुषः कृत वराह रूप आस्ते तम् तु देवी ह एषा भूः सह कुरुभिः अस्खलित भक्ति योगेन उपधावति इमाम् च परमाम् उपनिषदम् आवर्तयति ॥

शब्दार्थ—

उत्तरेषु	२.	उत्तर	भूः	१२.	पृथ्वी
च	१.	और	सह	१०.	साथ
कुरुषु	३.	कुरुवर्ष में	कुरुभिः	९.	कुरुदेश के निवासियों के
भगवान्	४.	भगवान्	अस्खलित	१४.	अविचल
यज्ञपुरुषः	५.	यज्ञ पुरुष	भक्ति योगेन	१५.	भक्तिभाव से
कृत	७.	धारण करके	उपधावति	१६.	उपासना करती हैं
वराह रूप	६.	वराह का रूप	इमाम्	१८.	इस
आस्ते तम् तु	८.	विराजमान हैं वहाँ	च	१७.	और
देवी	१३.	देवी	परमाम्	१९.	परम उत्कृष्ट
ह एष	११.	यह	उपनिषदम्	२०.	मन्त्र का
			आवर्तयति ॥	२१.	जप करती हैं

श्लोकार्थ—और उत्तर कुरुवर्ष में भगवान् यज्ञ पुरुष वराह का रूप धारण करके विराजमान हैं। वहाँ कुरुदेश के निवासियों के साथ यह पृथ्वी देवी अविचल भक्ति-भाव से उपासना करती हैं। और इस परम उत्कृष्ट मन्त्र का जप करती हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

ॐ नमो भगवते मन्त्रतत्त्वलिङ्गाय यज्ञक्रतवे महाध्वरावयवाय महापुरुषाय नमः कर्मशुक्लाय त्रियुगाय नमस्ते ॥३५॥

पदच्छेद — ॐ नमः भगवते मन्त्र तत्त्व लिङ्गाय यज्ञ क्रतवे महा अध्वर अवयवाय महा पुरुषाय नमः कर्म शुक्लाय त्रियुगाय नमः ते ॥

शब्दार्थ—

ॐ	६.	ॐकार स्वरूप	अध्वर	७.	यज्ञ
नमः	१५.	नमस्कार है	अवयवाय	८.	जिनके अङ्ग हैं (ऐसे)
भगवते	१४.	भगवान्	महापुरुषाय	१३.	उन पुरुषोत्तम को
मन्त्र	२.	मन्त्रों से	नमः	१६.	नमस्कार है
तत्त्व	१.	जिनका तत्त्व	कर्म	११.	कर्ममय
लिङ्गाय	३.	जाना जाता है	शुक्लाय	१०.	शुक्ल
यज्ञ	४.	जो यज्ञ और	त्रियुगाय	१२.	त्रियुगरूप
क्रतवे ।	५.	क्रतुरूप हैं (तथा)	नमः	१८.	नमस्कार है
महा	६.	बड़े-बड़े	ते ॥	१७.	आपको

श्लोकार्थ— जिनका तत्त्व मन्त्रों से जाना जाता है, जो यज्ञ और क्रतुरूप हैं तथा बड़े-बड़े यज्ञ जिनके अङ्ग हैं, ऐसे ॐकार स्वरूप शुक्ल कर्ममय त्रियुगरूप उन पुरुषोत्तम भगवान् को नमस्कार है। आपको नमस्कार है।

षट्त्रिंशः श्लोकः

यस्य स्वरूपं कवयो विपश्चितो गुणेषु दारुष्विव जातवेदसम् ।
मथ्नन्ति मथ्ना मनसा दिदृक्षवो गूढं क्रियार्थैर्नम ईरितात्मने ॥३६॥

पदच्छेद — यस्य स्वरूपम् कवयः विपश्चितः गुणेषु दारुषु इव जात वेदसम् ।
मथ्नन्ति मथ्ना मनसा दिदृक्षवः गूढम् क्रियार्थैः नमः ईरित आत्मने ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जिनके	मथ्नन्ति	१५.	बिलो डालते है (ऐसे)
स्व	४.	अपने	मथ्ना	१३.	मथानी के द्वारा
रूपम्	५.	स्वरूप को	मनसा	१२.	मन रूपी
कवयः	८.	पंडित जन	दिदृक्षवः	६.	देखने की इच्छा से
विपश्चितः	७.	विद्वान्	गूढम्	३.	छिपे हुये
गुणेषु	१४.	इन्द्रियों को	क्रियार्थैः	२.	कर्म रूपी प्रयोजन से
दारुषु	९	काष्ठ में छिपी हुई	नमः	१८.	नमस्कार है
इव	११.	समान	ईरित	१७.	प्रकट करने वाले आपको
जातवेदसम् ।	१०.	अग्नि	आत्मने ॥	१६.	अपने स्वरूप को

श्लोकार्थ—जिनके कर्मरूपी प्रयोजन से छिपे हुये अपने स्वरूप को देखने की इच्छा से विद्वान् पंडित जन काष्ठ में छिपी हुई अग्नि के समान मन रूपी मथानी के द्वारा इन्द्रियों को बिलो डालते हैं। ऐसे अपने स्वरूप को प्रकट करने वाले आपको नमस्कार है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

द्रव्यक्रियाहेत्वयनेशकर्तृभिर्मायागुणैर्वस्तुनिरीक्षितात्मने ।
अन्वीक्षयाङ्गातिशयात्मबुद्धिभिर्निरस्तमायाकृतये नमो नमः ॥३७॥

पदच्छेद— द्रव्य क्रिया हेतु अयन ईश कर्तृभिः माया गुणैः वस्तु निरीक्षित आत्मने ।
अन्वीक्षया अङ्ग अतिशय आत्म बुद्धिभिः निरस्त माया कृतये नमो नमः ॥

शब्दार्थ—

द्रव्य	५.	विषय	अन्वीक्षया	१.	विचार (तथा)
क्रिया	६.	इन्द्रियों के व्यापार	अङ्ग	२.	योगाङ्गों के द्वारा
हेतु	७.	इन्द्रियों के अधिष्ठाता देवता	अतिशय	३.	निश्चय
अयन-ईश	८.	शरीर-ईश (और)	आत्मबुद्धिभिः	४.	स्वरूप बुद्धि से (जो)
कर्तृभिः	९.	कर्ता (आदि)	निरस्त	१६.	रहित (आपको)
माया-गुणैः	१०.	माया के कार्यों को	माया	१४.	माया की
वस्तु	१२.	वास्तविक	कृतये	१५.	आकृतियों से
निरीक्षित	११.	देखकर	नमो	१७.	नमस्कार है
आत्मने ।	१३.	रूपका निश्चय करते हैं (ऐसे) नमः ॥		१८.	नमस्कार है

श्लोकार्थ—विचार तथा योगाङ्गों के द्वारा निश्चय स्वरूप बुद्धि से जो विषय इन्द्रियों के व्यापार, इन्द्रियों के अधिष्ठाता देवता, शरीर, ईश और कर्ता आदि माया के कार्यों को देखकर वास्तविक रूप का निश्चय करते हैं ऐसे माया की आकृतियों रहति आपको नमस्कार है नमस्कार है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

करोति विश्वस्थितिसंयमोदयं यस्येप्सितं नेप्सितमीक्षितुर्गुणैः ।
माया यथायो भ्रमते तदाश्रयं ग्राव्णो नमस्ते गुणकर्मसाक्षिणे ॥३८॥

पदच्छेद—करोति विश्व स्थिति संयम उदयम् यस्य ईप्सितम् न ईप्सितम् ईक्षितुः गुणैः ।
माया यथा अयः भ्रमते तद् आश्रयम् ग्राव्णः नमः ते गुणकर्म साक्षिणे ॥

शब्दार्थ—

करोति	११.	करती रहती है	माया	७.	प्रकृति
विश्व	८.	संसार की	यथा-अयः	१२.	जैसे-लोहा
स्थिति-संयम	१०.	स्थिति (और) प्रलय	भ्रमते	१६.	चलने फिरने लगता है
उदयम्	९.	उत्पत्ति	तद्	१३.	उस
यस्य	३.	जिनकी	आश्रयम्	१५.	आश्रय पाकर
ईप्सितम्	४.	इच्छा मात्र से	ग्राव्णः	१४.	चुम्बक का
न	६.	नहीं है	नमः	२०.	नमस्कार है
ईप्सितम्	५.	जो इच्छा अपने लिये	ते	१९.	आपको
ईक्षितुः	१.	साक्षी होने के कारण	गुण कर्म	१७.	गुणों और कर्मों के
गुणैः ।	२.	गुणों के द्वारा	साक्षिणे ॥	१८.	साक्षी

श्लोकार्थ—साक्षी होने के कारण गुणों के द्वारा जिनकी इच्छा मात्र से, जो इच्छा अपने लिये नहीं है, प्रकृति संसार की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करती रहती है, जैसे लोहा उस चुम्बक का आश्रय पाकर चलने-फिरने लगता है, ऐसे गुणों और कर्मों के साक्षी आपको नमस्कार है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

प्रमथ्य दैत्यं प्रतिवारणं मृधे यो मां रसाया जगदादिसूकरः ।
कृत्वाग्रदंष्ट्रे निरगादुदन्वतः क्रीडन्निवेभः प्रणतास्मि तं विभुमिति ॥३९॥

पदच्छेद— प्रमथ्य दैत्यम् प्रतिवारणम् मृधे यः माम् रसायाः जगद् आदि सूकरः ।
कृत्वा अग्रदंष्ट्रे निरगात् उदन्वतः क्रीडन् इव इभः प्रणता अस्मि तम् विभुम् इति ॥

शब्दार्थ—

प्रमथ्य	९.	दलित करके	कृत्वा	१३.	रखकर
दैत्यम्	८.	हिरण्याक्ष दैत्य को	अग्रदंष्ट्रे	१२.	अपनी दाढ़ों की नोक पर
प्रतिवारणम्	७.	अपने प्रतिद्वन्द्वी	निरगात्	१६.	बाहर निकले थे
मृधे	६.	युद्ध में	उदन्वतः	१५	प्रलय कालीन समुद्र के
यः	१०.	जो	क्रीडन	५.	क्रीडा करते हुये
माम्	११.	मुझे	इव	४.	समान
रसायाः	१४.	रसातल से	इभः	३.	गजराज के
जगद्	१.	आप संसार के	प्रणता	१९.	नमस्कार
आदि सूकर ।	२.	आदि सूकर है	अस्मि	२०.	करती हूँ
तम्	१७.	ऐसे	विभुम् ॥	१८.	सर्व व्यापक प्रभु को मैं

श्लोकार्थ—आप संसार के आदि सूकर हैं। गजराज के समान क्रीडा करते हुये युद्ध में अपने प्रतिद्वन्द्वी हिरण्याक्ष दैत्य को दलित करके जो मुझे अपनी दाढ़ों की नोक पर रखकर रसातल से प्रलय कालीन समुद्र के बाहर निकले थे, ऐसे सर्वव्यापक प्रभु को मैं प्रणाम करती हूँ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमस्कन्धे भुवनकोश-वर्णनं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

पंचमः स्कन्धः

एकोनविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—किम्पुरुषे वर्षे भगवन्तमादिपुरुषं लक्ष्मणाग्रजं सीताभिरामं रामं तच्चरणसंनिकर्षाभिरतः परमभागवतो हनुमान् सह किम्पुरुषैरविरत-भक्तिरुपास्ते ॥१॥

पदच्छेद—किम्पुरुषे वर्षे भगवन्तम् आदि पुरुषम् लक्ष्मण अग्रजम् सीता अभिरामम् रामम् तत् चरण सन्निकर्ष अभिरतः परम भागवतः हनुमान् सह किम्पुरुषैः अविरत भक्तिः उपास्ते ॥

शब्दार्थ—

किम्पुरुषे	१.	किम्पुरुष	सन्निकर्ष	११.	पास
वर्षे	२.	वर्ष में	अभिरतः	१२.	रहने वाले
भगवन्तम्	८.	भगवान्	परमभगवतः	१३.	परक भागवत
आदि पुरुषम्	५.	आदि पुरुष	हनुमान्	१४.	हनुमान् जी
लक्ष्मण	३.	लक्ष्मण जी के	सह	१६.	साथ
अग्रजम्	४.	बड़े भाई	किम्पुरुषैः	१५.	किन्नरों के
सीता	६.	सीता जी को	अविरत	१७.	अविचल
अभिरामम्	७.	सुन्दर लगने वाले	भक्तिः	१८.	भक्ति-भाव
रामम्	९.	श्री रामजी के	उपास्ते ॥	१९.	उपासना करते हैं
तत् चरण	१०.	उन चरण कमल के			

श्लोकार्थ—किम्पुरुष वर्ष में लक्ष्मण जी के बड़े भाई आदि पुरुष, सीता जी को सुन्दर लगने वाले, भगवान् श्रीराम के :उन चरण कमलों के पास रहने वाले परम भागवत हनुमान् जी किन्नरों के साथ अविचल भक्ति-भाव से उपासना करते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

आर्ष्टिषेणेन सह गन्धर्वैरनुगीयमानां परमकल्याणीं भर्तृभगवत्कथां समुपशृणोति स्वयं चेदं गायति ॥२॥

पदच्छेद—आर्ष्टिषेणेन सह गन्धर्वैः अनुगीयमानाम् परम कल्याणीम् भर्तृ भगवत् कथाम् समुप शृणोति स्वयम् च इदम् गायति ॥

शब्दार्थ—

आर्ष्टिषेणेन	३.	आर्ष्टिषेण	भगवत्	५.	भगवान् राम की
सह	२.	सहित	कथाम्	७.	गुणगाथा को
गन्धर्वैः	१.	अन्य गन्धर्वों के	समुपशृणोति	९.	हनुमान् जी उसे सुनते हैं
अनुगीयमानाम्	८.	गाते रहते हैं	स्वयम्	११.	अपने आप
परम कल्याणीम्	६.	परम कल्याणमयी	च इदम्	१०.	और इस मन्त्र का
भर्तृ	४.	उनके स्वामी	गायति ॥	१२.	जप करते हैं

श्लोकार्थ—अन्य गन्धर्वों के सहित आर्ष्टिषेण उनके स्वामी भगवान् राम की परम कल्याणमयी गुण गाथा को गाते रहते हैं। हनुमान् जी उसे सुनते हैं और इस मन्त्र का जप करते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

ॐ नमो भगवते उत्तमश्लोकाय नम आर्यलक्षणशीलव्रताय नम उपशिक्षितात्मन उपासितलोकाय नमः साधुवादनिकषणाय नमो ब्रह्मण्य-देवाय महापुरुषाय महाराजाय नम इति ॥३॥

पदच्छेद—ॐ नमः भगवते उत्तम श्लोकाय नमः आर्य लक्षण शीलव्रताय नमः उपशिक्षित आत्मने उपासित लोकाय नमः साधुवाद निकषणाय नमः ब्रह्मण्य देवाय महापुरुषाय महाराजाय नमः इति

शब्दार्थ—

ॐ	१.	ॐकार स्वरूप	उपासित	१०.	प्रसन्न करने वाले
नमः	४.	नमस्कार है	लोकाय	९.	संसार को
भगवते	३.	भगवान् श्रीराम को	नमः	१८.	नमस्कार है
उत्तमश्लोकाय	२.	पवित्र कीर्ति वाले	साधुवाद	११.	सज्जनता की
नमः	१९.	नमस्कार है	निकषणाय	१२.	कसौटी के समान
आर्य लक्षण	५.	सत्पुरुषों के लक्षण	नमः	१७.	नमस्कार है
शीलव्रताय	६.	शील और आचरण वाले	ब्रह्मण्यदेवाय	१३.	ब्राह्मणों के भक्त
नमः	२०.	नमस्कार है	महापुरुषाय	१४.	महान् पुरुष
उपशिक्षित	८.	संयमी-रहने वाले	महाराजाय	१५.	महाराज श्रीराम को
आत्मने ।	७.	स्वयम् ही	नम इति ॥	१६.	नमस्कार है

श्लोकार्थ—ॐ कार स्वरूप, पवित्र कीर्ति, भगवान् श्रीराम को नमस्कार है। सत्पुरुषों के लक्षण, शील और आचरण वाले, स्वयम् ही संयमी रहने वाले, संसार को प्रसन्न करने वाले, सज्जनता की कसौटी के समान, ब्राह्मणों के भक्त, महान् पुरुष, महाराज, श्रीराम को नमस्कार है। नमस्कार है। नमस्कार है। नमस्कार है। नमस्कार है ॥

चतुर्थः श्लोकः

यत्तद्विशुद्धानुभवमात्रमेकं स्वतेजसा ध्वस्तगुणव्यवस्थम् ।
प्रत्यक् प्रशान्तं सुधियोपलम्भनं ह्यनामरूपं निरहं प्रपद्ये ॥४॥

पदच्छेद— यत्-तद् विशुद्ध अनुभव मात्रम् एकम् स्वतेजसा ध्वस्तगुण व्यवस्थम् ।
प्रत्यक् प्रशान्तम् सुधिया उपलम्भनम् हि अनामरूपम् निरहम् प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

यत् तद्	१.	आप जो वह	प्रत्यक्	९.	सर्वान्तरात्मा
विशुद्ध	२.	विशुद्ध	प्रशान्तम्	१०.	परम शान्त
अनुभव	३.	ज्ञान	सुधिया	११.	शुद्ध बुद्धि से
मात्रम्	४.	स्वरूप	उपलम्भनम्	१२.	प्राप्त होने वाले
एकम्	५.	अद्वितीय	हि अनाम	१३.	नाम और
स्वतेजसा	६.	अपने तेज से	रूपम्	१४.	रूप से रहित
ध्वस्त	८.	नष्ट करने वाले	निरहम्	१५.	अहंकार शून्य है
गुणव्यवस्थम् ।	७.	गुणों के कार्यों को	प्रपद्ये ।	१६.	मैं आपकी शरण में हूँ

श्लोकार्थ—आप जो वह विशुद्ध ज्ञान स्वरूप, अद्वितीय, अपने तेज से गुणों के कार्यों को नष्ट करने वाले, सर्वान्तरात्मा, परम शान्त, शुद्ध बुद्धि से प्राप्त होने वाले, नाम और रूप से रहित, अहंकार शून्य हैं, मैं आपकी शरण में हूँ ॥

पञ्चमः श्लोकः

मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्यशिक्षणं रक्षोवधायैव न केवलं विभोः ।
कुतोऽन्यथा स्याद्रमतः स्व आत्मनः सीताकृतानि व्यसनानीश्वरस्य ॥५॥

पदच्छेद— मर्त्यावतारः तु इह मर्त्यशिक्षणम् रक्षः वधाय एव न केवलम् विभोः ।
कुतः अन्यथा स्यात् रमतः स्व आत्मनः सीताकृतानि व्यसनानि ईश्वरस्य ॥

शब्दार्थ—

मर्त्यावतारः	३.	आपका मनुष्य अवतार	कुतः	१७.	कैसे
तु इह	२.	यहाँ	अन्यथा	१०.	अन्यथा
मर्त्य	८.	मनुष्यों को	स्यात्	१८.	हो सकता है
शिक्षणम्	९.	शिक्षा देने के लिये है	रमतः	१३.	रमण करने वाले
रक्षः	५.	राक्षसों के	स्व	११.	अपने
वधाय	६.	वध के लिये	आत्मनः	१२.	स्वरूप में
एव न	७.	ही नहीं है	सीताकृतानि	१५.	सीता जी के
केवलम्	४.	केवल	व्यसनानि	१६.	वियोग के कारण-इतना दुःख
विभोः ।	१.	हे प्रभो ।	ईश्वरस्य ॥	१४.	साक्षात् ईश्वर को

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! यहाँ आपका मनुष्य अवतार केवल राक्षसों के वध के लिये ही नहीं है । मनुष्यों को शिक्षा देने के लिये है । अन्यथा अपने स्वरूप में रमण करने वाले साक्षात् ईश्वर को सीता जी के वियोग के कारण इतना दुःख कैसे हो सकता है ॥

षष्ठः श्लोकः

न वै स आत्माऽऽत्मवतां सुहृत्तमः सक्तस्त्रिलोक्यां भगवान् वासुदेवः ।
न स्त्रीकृतं कश्मलमश्नुवीत न लक्ष्मणं चापि विहातुमर्हति ॥६॥

पदच्छेद— न वै सः आत्मा आत्मवताम् सुहृत्तमः सक्तः त्रिलोक्याम् भगवान् वासुदेवः ।
न स्त्री कृतम् कश्मलम् अश्नुवीत, न लक्ष्मणम् च अपि विहातुम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

न वै	९.	नहीं है	न	१०.	आप न तो
सः	१.	आप	स्त्रीकृतम्	११.	सीता जी के लिये
आत्मा	३.	आत्मा (और)	कश्मलम्	१२.	मोह को
आत्मवताम्	२.	धीर पुरुषों की	अश्नुवीत	१३.	प्राप्त हो सकते हैं
सुहृत्तमः	४.	प्रियतम	न लक्ष्मणम्	१५.	न लक्ष्मण जी का
सक्तः	८.	आसक्ति	च	१४.	और
त्रिलोक्याम्	७.	त्रिलोकी की किसी भी वस्तु में आपकी	अपि	१६.	ही
भगवान्	५.	भगवान्	विहातुम्	१७.	त्याग
वासुदेवः ।	६.	वासुदेव हैं	अर्हति ॥	१८.	कर सकते हैं

श्लोकार्थ—आप धीर पुरुषों की आत्मा और प्रियतम भगवान् वासुदेव हैं । त्रिलोकी की किसी भी वस्तु में आपकी आसक्ति नहीं है । आप न तो सीता जी के लिये मोह को प्राप्त हो सकते हैं और न लक्ष्मण जी का ही त्याग कर सकते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

न जन्म नूनं महतो न सौभगं न वाङ् न बुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः ।
तैर्यद्विसृष्टानपि नो वनौकसश्चकार सख्ये बत लक्ष्मणाग्रजः ॥७॥

पदच्छेद—न जन्म नूनम् महतः न सौभगम् न वाङ् न बुद्धिः न आकृतिः तोष हेतुः ।
तैः यद् विसृष्टान् अपि नः वनौकसः चकार सख्ये बत लक्ष्मण अग्रजः ॥

शब्दार्थ—

न	४.	न तो	तैः	१४.	उन जन्मादि से
जन्म	६.	जन्म	यद्	१३.	क्योंकि
नूनम्	३.	निश्चय ही	विसृष्टान्	१५.	रहित होने पर
महतः	५.	उत्तम कुल में	अपि	१६.	भी
न सौभगम्	७.	न सुन्दरता (और)	नः	१७.	हम
न वाङ्	८.	न वाणी	वनौकसः	१८.	वनवासियों से
न बुद्धिः	९.	न बुद्धि	चकार	२०.	की है
न	१०.	न	सख्यबत्	१९.	आपने मित्रता
आकृतिः	११.	जाति ही	लक्ष्मण	१.	हे लक्ष्मण जी के
तोषहेतुः ।	१२.	आपकी प्रसन्नता का कारण है	अग्रजः ॥	२.	बड़े भाई !

श्लोकार्थ—हे लक्ष्मण जी के बड़े भाई ! निश्चय ही न तो उत्तम कुल में जन्म, न सुन्दरता और न वाणी, न बुद्धि, न जाति ही आपकी प्रसन्नता का कारण है । क्योंकि उन जन्मादि से रहित होने पर भी हम वनवासियों से आपने मित्रता की है ॥

अष्टमः श्लोकः

सुरोऽसुरो वाप्यथ वानरो नरः सर्वात्मना यः सुकृतज्ञमुत्तमम् ।
भजेत रामं मनुजाकृतिं हरिं य उत्तराननयत्कोसलान्दिवमिति ॥८॥

पदच्छेद—सुरः असुरः वा अपि अथ वानरः नरः सर्व आत्मना यः सुकृतज्ञम् उत्तमम् ।
भजेत रामम् मनुज आकृतिम् हरिम् यः उत्तरान् अनयत् कोसलान् दिवम् इति ॥

शब्दार्थ—

सुर-असुर	१.	देवता-राक्षस	रामम्	११.	श्रीराम जी का
वा	३.	अथवा	मनुज	८.	मनुष्य की
अपि	५.	भी हो उसे	आकृतिम्	९.	आकृति वाले
अथ	४.	और जो	हरिम्	१०.	साक्षाद् परमात्मा
वानरः नरः	२.	वानर मनुष्य	यः	१४.	जो
सर्वआत्मना	१२.	सब प्रकार से	उत्तरान्	१५.	उत्तर
यः सुकृतज्ञम्	६.	उपकार को मानने वाले	अनयत्	१८.	अपने साथ ले गये थे
उत्तमम् ।	७.	उत्तम	कोसलान्	१६.	कोशल वासियों को
भजेत	१३.	भजन करना चाहिये	दिवम् इति ॥	१७.	दिव्यलोक में

श्लोकार्थ—देवता, राक्षस, वानर, मनुष्य अथवा और जो भी हो उसे, उपकार को मानने वाले, उत्तम मनुष्य की आकृति वाले, साक्षात् परमात्मा श्रीराम का सब प्रकार से भजन करना चाहिये, जो उत्तर कोशल वासियों को दिव्यलोक में अपने साथ ले गये थे ॥

नवमः श्लोकः

भारतेऽपि वर्षे भगवान्नरनारायणाख्य आकल्पान्तमुपचितधर्मज्ञान-वैराग्यैश्वर्योपशमोपरमात्मोपलम्भनमनुग्रहायात्मवतानुकम्पया तपोऽव्यक्तगतिश्चरति ॥९॥

पदच्छेद—भारते अपि वर्षे भगवान् नर नारायण आख्य आकल्पान्तम् उपचित धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य उपशम उपरम आत्म उपलम्भनम् अनुग्रहाय आत्मवताम् अनुकम्पया तपः अव्यक्त गतिः चरति ॥

शब्दार्थ—

भारते	१. भारत	ऐश्वर्यउपशम	९. ऐश्वर्य, शान्ति और
अपि	३. भी	परमात्म	१०. उदासीनता से
वर्षे	२. वर्ष में	उपलम्भनम्	११. आत्म स्वरूप को
भगवान् नर	४. भगवान् नर और	अनुग्रहाय	७. अनुग्रह करने के लिये
नारायणाख्य	५. नारायण रूप धारण करके	आत्मवताम्	६. संयमशील पुरुषों पर
आकल्पान्तम्	१४. कल्प के अन्त तक	अनुकम्पया	१३. कृपा करके
उपचित	१२. प्राप्त करके लोगों पर	तपः अव्यक्तगतिः	१५. तपस्या अप्रकट रूप से
धर्म-ज्ञान वैराग्य	८. धर्म, ज्ञान, वैराग्य	चरति ॥	१६. करते रहते हैं

श्लोकार्थ—भारतवर्ष में भी भगवान् नर और नारायण रूप धारण करके संयमशील पुरुषों पर अनुग्रह करने के लिये धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, शान्ति और उदासीनता से आत्म स्वरूप को प्राप्त करके लोगों पर कृपा करके कल्प के अन्त तक अप्रकट रूप से तपस्या करते रहते हैं ॥

दशमः श्लोकः

तं भगवान्नारदो वर्णाश्रमवतीभिर्भारतीभिः प्रजाभिर्भगवत्प्रोक्ताभ्यां सांख्ययोगाभ्यां भगवदनुभावोपवर्णनं सावर्णेरुपदेक्ष्यमाणः परमभक्ति-भावेनोपसरति इदं चाभिगृणाति ॥१०॥

पदच्छेद—तम् भगवान् नारदः वर्णाश्रमवतीभिः भारतीभिः प्रजाभिः भगवत् प्रोक्ताभ्याम् सांख्यः योगाभ्याम् भगवत् अनुभाव उपवर्णनम् सावर्णेः उपदेक्ष्यमाणः परमभक्ति भावेन उपसरति इदम् च अभिगृणाति ॥

शब्दार्थ—

तम्	१. वहाँ	भगवत् अनुभाव	६. भगवान् की महिमा को
भगवान नारदः	२. भगवान् नारद जी	उपवर्णनम्	७. प्रकट करने वाले
वर्णाश्रमवतीभिः	१०. वर्णाश्रम धर्म को जानने वाली	सावर्णेः	८. सावर्णि मुनि को
भारतीभिः प्रजाभिः	११. भारतवर्ष की प्रजा के साथ	उपदेक्ष्यमाणः	९. उपदेश देते हुये
भगवत्	३. भगवान् के द्वारा	परमभतिभावेन	१२. अत्यधिक भक्ति-भाव से
प्रोक्ताभ्याम्	४. कहे गये	उपसरति	१३. श्रीनारायण की उपासना
सांख्ययोगाभ्याम्	५. सांख्य और योग शास्त्र के सहित	इदम् च	१४. इस मन्त्र का और
		अभिगृणाति ॥	१५. जप करते हैं

श्लोकार्थ—वहाँ भगवान् नारद जी भगवान् के द्वारा कहे गये सांख्य और योग शास्त्र के सहित भगवान् की महिमा को प्रकट वाले सावीर्ण को उपदेश देते हुये वर्णाश्रम धर्म को जानने वाली भारतवर्ष की प्रजा के साथ अत्यधिक भक्ति-भाव से श्रीनरनारायण की उपासना और इस मन्त्र का जप करते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

ॐ नमो भगवते उपशमशीलायोपरतानात्म्याय नमोऽकिञ्चनवित्ताय ऋषिऋषभाय नरनारायणाय परमहंसपरमगुरवे आत्मारामाधिपतये नमो नम इति ॥११॥

पदच्छेद—ॐ नमः भगवते उपशम शीलाय उपरत अनात्म्याय नमः अकिञ्चन वित्ताय ऋषि ऋषभाय नरनाराणाय परमहंस परम गुरवे आत्माराम अधिपतये नमः नमः इति ॥

शब्दार्थ—

ॐ	१.	ॐ कार स्वरूप	ऋषि	८.	ऋषियों में
नमः	१२.	नमस्कार है	ऋषभाय	९.	श्रेष्ठ
भगवते	१०.	भगवान्	नर नारायणाय	११.	नर नारायण को
उपशम	३.	स्वभाव वाले	परमहंस	१३.	परमहंसों के
शीलाय	२.	शान्त	परमगुरवे	१४.	परम गुरु
उपरत	५	रहित	आत्माराम	१५.	आत्मारामों के
अनात्म्याय	४.	नाशवान् वस्तुओं से	अधिपतये	१६.	अधीश्वर (आपको)
नमः	१७.	नमस्कार है	नमः	१८.	नमस्कार है
अकिञ्चन	६.	निर्धनों के	नमः	१९.	नमस्कार है
वित्ताय	७.	धन	इति ॥	२०.	ऐसा कहते हैं

श्लोकार्थ— ॐकार स्वरूप शान्त स्वभाव वाले, नाशवान् वस्तुओं से रहित, निर्धनों के धन, ऋषियों में श्रेष्ठ, भगवान् नर नारायण को नमस्कार है। परमहंसों के परमगुरु, आत्मा रामों के अधीश्वर आपको नमस्कार है। नमस्कार है। ऐसा कहते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

गायति चेदम्—

कर्तास्य सर्गादिषु यो न बध्यते न हन्यते देहगतोऽपि दैहिकैः ।
द्रष्टुर्न दृग्यस्य गुणैर्विदूष्यते तस्मै नमोऽसक्तविविक्तसाक्षिणे ॥१२॥

पदच्छेद— कर्ता अस्य सर्ग आदिषु यः न बध्यते न हन्यते देह गतः अपि दैहिकैः ।
द्रष्टुः न दृक् यस्य गुणैः विदूष्यते तस्मै नमः असक्त विविक्त साक्षिणे ॥

शब्दार्थ—

गायति	२.	गाते हैं	द्रष्टुः न	११.	द्रष्टा होने पर भी
च इदम्	१.	और यह	न	१५.	नहीं होती
कर्ता	६	कर्ता होकर भी	दृक्	१३.	दृष्टि
अस्य	४.	इस संसार की	यस्य	१२.	जिनकी
सर्गआदिषु	५.	उत्पत्ति आदि के	गुणैः विदूष्यते	१४.	गुण-दोषों से दूषित
यः	३.	जो	तस्मै	१६.	ऐसे
न बध्यते	७.	नहीं अभिमान से बंधते हैं	नमः	२०.	नमस्कार है
न हन्यते	१०.	नहीं वश में होते हैं	असक्त,	१७.	असङ्ग (तथा)
देह गतः	८	शरीर के रहने पर	विविक्त	१८.	विशुद्ध
अपिदैहिकैः ।	९.	भी शरीर के धर्मों के	साक्षिणे ॥	१९.	साक्षी रूप आपको

श्लोकार्थ—और यह गाते हैं। जो इस संसार की उत्पत्ति आदि कर्ता होकर भी अभिमान से नहीं बंधते हैं, शरीर के रहने पर भी शरीर के धर्मों के वश में नहीं होते। द्रष्टा होने पर भी जिनकी दृष्टि गुण दोषों से दूषित नहीं होती, ऐसे असङ्ग तथा विशुद्ध साक्षी रूप आपको नमस्कार है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

इदं हि योगेश्वर योगनैपुणं हिरण्यगर्भो भगवाञ्जगाद यत् ।
यदन्तकाले त्वयि निर्गुणे मनो भक्त्या दधीतोज्झितदुष्कलेवरः ॥१३॥

पदच्छेद— इदम् हि योगेश्वर योग नैपुणम् हिरण्यगर्भः भगवान् जगाद् यत् ।
यदन्ते काले त्वयि निर्गुणे मनः भक्त्या दधीत उज्झित दुष्कलेवरः ॥

शब्दार्थ—

इदम् हि	६. यही	यद्	८. कि
योगेश्वर	१. हे योगेश्वर !	अन्तकाले	१०. अन्तकाल में
योग	४. योग	त्वयि	१५. आपके
नैपुणम्	५. साधन की कुशलता	निर्गुणे	१६. निर्गुण रूप में
हिरण्यगर्भः	३. हिरण्यगर्भ ब्रह्माजी ने	मनः	१४. अपना मन
भगवान्	२. भगवान्	भक्त्या	१३. भक्ति पूर्वक
जगाद	७. बतलाई है	दधीत	१७. लगाने
यत् ।	९. मनुष्य	उज्झित	१२. छोड़कर
		दुष्कलेवरः ॥	११. देहाभिमान को

श्लोकार्थ—हे योगेश्वर ! भगवान् हिरण्यगर्भ ब्रह्माजी ने योग साधन की कुशलता यही बतलाई है कि मनुष्य अन्तकाल में देहाभिमान छोड़कर भक्ति पूर्वक अपना मन आपके निर्गुण रूप में लगावे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यथैहिकामुष्मिककामलम्पटः सुतेषु दारेषु धनेषु चिन्तयन् ।
शङ्केत विद्वान् कुकलेवरात्ययाद् यस्तस्य यत्नः श्रम एव केवलम् ॥१४॥

पदच्छेद— यथा ऐहिक आमुष्मिक काम लम्पटः सुतेषु दारेषु धनेषु चिन्तयन् ।
शङ्केत विद्वान् कुकलेवर अत्ययाद् यः तस्य यत्नः श्रम एव केवलम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	शङ्केत	१४. भय बना रहा तो
ऐहिक	२. लौकिक और	विद्वान्	११. विद्वान को यदि
आमुष्मिक	३. पारलौकिक	कुकलेवर	१२. निन्दनीय शरीर के
काम	४. भोगों के	अत्ययाद्	१३. छूटने का
लम्पटः	५. लोभी मनुष्य	यः	१०. किसी
सुतेषु	६. पुत्र	तस्य	१५. उसका
दारेषु	७. स्त्री और	यत्नः	१६. ज्ञान प्राप्ति के लिये किया गया प्रयत्न
धनेषु	८. धन को	श्रम एव	१८. परिश्रम ही है
चिन्तयन् ।	९. चिन्ता करते हैं (वैसे ही)	केवलम् ॥	१७. केवल

श्लोकार्थ—जैसे लौकिक और पारलौकिक भोगों के लोभी मनुष्य पुत्र, स्त्री और धन की चिन्ता करते हैं, वैसे ही किसी विद्वान् को यदि निन्दनीय शरीर के छूटने का भय बना रहा, तो उसका ज्ञान-प्राप्ति के लिये किया गया प्रयत्न केवल परिश्रम ही है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

तन्नः प्रभो त्वं कुकलेवरार्पितां त्वन्माययाहंममतामधोक्षज ।
भिन्द्याम येनाशु वयं सुदुर्भिदां विधेहि योगं त्वयि नः स्वभावमिति ॥१५॥

पदच्छेद—ततः न प्रभो त्वम् कुकलेवर अर्पिताम् त्वत् मायया अहम् ममताम् अधोक्षज ।
भिन्द्याम् येन आशु वयम् सुदुर्भिदाम् विधेहि योगम् त्वयि नः स्वभावम् इति ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	इसलिये	भिन्द्याम्	२०.	काट डालें
नः	११.	अपने	येन	८.	जिससे
प्रभो	९.	हे प्रभो !	आशु	१९.	तत्काल
त्वम्	३.	आप	वयम्	१०.	हम
कुकलेवर	१२.	निन्दनीय शरीर में	सुदुर्भिदाम्	१६.	दुर्भेद्य
अर्पिताम्	१३.	लगी हुई	विधेहि	७.	प्रदान कीजिये
त्वत्	१४.	आपकी	योगम्	६.	भक्तियोग
मायया	१५.	माया के कारण	त्वयि	१४.	आपकी
अहम् ममताम्	१७.	अहंता ममता को	नः	४.	हमें
अधोक्षज ।	२.	हे अधोक्षज !	स्वभावम् इति ॥	५.	स्वाभाविक

श्लोकार्थ—इसलिये अधोक्षज ! आप हमें अपना स्वाभाविक भक्ति-योग प्रदान कीजिये, जिससे हे प्रभो ! हम अपने निन्दनीय शरीर में लगी हुई आपकी माया के कारण दुर्भेद्य अहंता-ममता को तत्काल काट डालें ॥

षोडशः श्लोकः

भारतेऽप्यस्मिन् वर्षे सरिच्छैलाः सन्ति बहवो मलयो मङ्गलप्रस्थो मैनाकस्त्रिकूट ऋषभः कूटकः कोल्लकः सह्यो देवगिरिऋष्यमूकः श्रीशैलो वेङ्कटो महेन्द्रो वारिधारो विन्ध्यः शुक्तिमानृक्षगिरिः पारियात्रो द्रोणश्चित्र-कूटो गोवर्धनो रैवतकः ककुभो नीलो गोकामुख इन्द्रकीलः कामगिरिरिति चान्ये च शतसहस्रशः शैलास्तेषां नितम्बप्रभवा नदा नद्यश्च सन्त्य-सङ्ख्याताः ॥१६॥

पदच्छेद—भारते अपि अस्मिन् वर्षे सरित् शैलाः सन्ति बहवः मलयः मङ्गल प्रस्थः मैनाकः त्रिकूटः ऋषभः कूटकः कोल्लकः सह्यः देवगिरिः ऋष्यमूकः श्रीशैलः वेङ्कटः महेन्द्रः वारिधारः विन्ध्यः शुक्तिमान् ऋक्षगिरिः पारियात्रः द्रोणः चित्रकूटः गोवर्धनः रैवतकः ककुभः नीलः गोकामुखः इन्द्र कीलः कामगिरिः इति च अन्ये च शत सहस्रशः शैलाः तेषाम् नितम्ब प्रभवाः नदाः नद्यः च सन्ति असङ्ख्याताः ॥

शब्दार्थ—

भारते	२. भारत	शुक्तिमान्	२४. शुक्तिमान्
अपि	४. भी	ऋक्षगिरिः	२५. ऋक्षगिरि
अस्मिन्	१. इस	पारियात्रः	२६. पारियात्र
वर्षे	३. वर्ष में	द्रोणः	२७. द्रोणः
सरित्	७. नदियाँ	चित्रकूटः	१८. चित्रकूटः
शैलाः	६. पर्वत (और)	गोवर्धनः	२९. गोवर्धन
सन्ति	८. हैं	रैवतकः	३०. रैवतक
बहवः	५. बहुत से	ककुभः	३१. ककुभ
मलयः	९. मलय	नीलः	३२. नील
मङ्गलप्रस्थः	१०. मङ्गलप्रस्थ	गोकामुखः	३३. गोकामुख
मैनाकः	११. मैनाक	इन्द्रकीलः	३४. इन्द्रकील
त्रिकूटः	१२. त्रिकूट	कामगिरिः	३५. कामगिरि
ऋषभः	१३. ऋषभ	इति च अन्ये	३६. इसी प्रकार और भी
कूटकः	१४. कूटक	च शत सहस्रशः	३७. सैकड़ों हजारों
कोल्लकः	१५. कोल्लक	शैलाः	३८. पर्वत हैं
सह्यः	१६. सह्य	तेषाम्	३९. उनके
देवगिरिः	१७. देवगिरि	नितम्ब	४०. तट भाग से
ऋष्यमूकः	१८. ऋष्यमूक	प्रभवाः	४१. निकलने वाले
श्रीशैलः	१९. श्री शैल	नदाः	४३. नद
वेङ्कटः	२०. वेङ्कट	नद्यः	४५. नदियाँ
महेन्द्रः	२१. महेन्द्र	च	४४. और
वारिधारः	२२. वारिधार	सन्ति	४६. हैं
विन्ध्यः ।	२३. विन्ध्य	असङ्ख्याताः ॥	४२. अगणित

श्लोकार्थ—इस भारतवर्ष में भी बहुत से पर्वत और नदियाँ हैं। मलय, मङ्गल प्रस्थ, मैनाक, त्रिकूट ऋषभ कूटक, कोल्लक, सह्य देवगिरि, ऋष्यमूक, श्रीशैल, वेङ्कट, महेन्द्र, वारिधार, विन्ध्य, शुक्तिमान्, ऋक्षगिरि पारियात्र, द्रोण, चित्रकूट, गोवर्धन, रैवतक, ककुभ, नील, गोकामुख, इन्द्र नील, कामगिरि। इसी प्रकार और भी सैकड़ों हजारों पर्वत हैं। उनके तट भाग से निकलने वाले अगणित नद और नदियाँ हैं॥

सप्तदशः श्लोकः

एतासामपो भारत्यः प्रजा नामभिरेव पुनन्तीनामात्मना चोपस्पृशन्ति ॥१७॥

पदच्छेद—एतासाम् अपः भारत्यः प्रजाः नामभिः एव पुनन्तीनाम् आत्मना च उपस्पृशन्ति ॥

शब्दार्थ—

एतासाम्	४. इन	एव	५. ही
अपः	७. नदियों में	पुनन्तीनाम्	३. पवित्र करने वाली
भारत्यः	८. भारतीय	आत्मना	२. जीव को
प्रजाः	९. प्रजायें	च	१. और
नामभिः ।	६. नाम वाली	उपस्पृशन्ति ॥	१०. स्नान करती हैं

श्लोकार्थ—और जीव को पवित्र करने वाली इन ही (इन्हीं) नाम वाली नदियों में भारतीय प्रजायें स्नान करती हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

चन्द्रवसा ताम्रपर्णी अवटोदा कृतमाला वैहायसी कावेरी वेणी पयस्विनी शर्करावर्ता तुङ्गभद्रा कृष्णा वेण्या भीमरथी गोदावरी निर्विन्ध्या पयोष्णी तापी रेवा सुरसा नर्मदा चर्मण्वती सिन्धुरन्धः शोणश्च नदौ महानदी वेदस्मृतिऋर्षिकुल्या त्रिसामा कौशिकी मन्दाकिनी यमुना सरस्वती दृषद्वती गोमती सरयू रोधस्वती सप्तवती सुषोमा शतद्रूश्चन्द्रभागा मरुद्वृधा वितस्ता असिक्नी विश्वेति महानद्यः ॥१८॥

पदच्छेद—चन्द्रवसा ताम्रपर्णी अवरोदा कृतमाला वैहायसी कावेरी वेणी पयस्विनी शर्करावर्ता तुङ्गभद्रा कृष्णा वेण्या भीमरथी गोदावरी निर्विन्ध्या पयोष्णी तापी रेवा सुरसा नर्मदा चर्मण्वती सिन्धुः अन्धः शोणः च नदौ महानदी वेदस्मृतिः ऋषिकुल्या त्रिसामा कौशिकी मन्दाकिनी यमुना सरस्वती दृषद्वती गोमती सरयू रोधस्वती सप्तवती सुषोमा शतद्रूः चन्द्रभागा मरुद्वृधा वितस्ता असिक्नी विश्वा इति महानद्यः ॥

शब्दार्थ—

चन्द्रवसा	१. चन्द्रवसा	**महानदी**	२१. महानदी
ताम्रपर्णी	२. ताम्रपर्णी	**वेदस्मृतिः**	२२. वेदस्मृति
अवरोदा	३. अवरोदा	**ऋषिकुल्या**	२३. ऋषिकुल्या
कृतमाला	४. कृतमाला	**त्रिसामा**	२४. त्रिसामा
वैहायसी	५. वैहायसी	**कौशिकी**	२५. कौशिकी
कावेरी-वेणी	६. कावेरी-वेणी	**मन्दाकिनी**	२६. मन्दाकिनी
पयस्विनी	७ पयस्विनी	**यमुना, सरस्वती**	२७. यमुना, सरस्वती
शर्करावर्ता	८. शर्करावर्ता	**दृषद्वती, गोमती**	२८. दृषद्वती, गोमती
तुङ्गभद्रा	९. तुङ्गभद्रा	**सरयू**	१९. सरयू
कृष्णा वेण्या	१०. कृष्णा, वेण्या	**रोधस्वती**	३०. रोधस्वती
भीमरथी	११. भीमरथी	**सप्तवती**	३१. सप्तवती
गोदावरी	१२. गोदावरी	**सुषोमा**	३१. सुषोमा
निर्विन्ध्या	१३. निर्विन्ध्या	**शतद्रू**	३३. शतद्रू
पयोष्णी	१४. पयोष्णी	**चन्द्रभागा**	३४. चन्द्रभागा
तापी, रेवा	१५. तापी, रेवा	**मरुद्वृधा**	३५. मरुद्वृधा
सुरसा, नर्मदा	१६. सुरसा, नर्मदा	**वितस्ता**	३६. वितस्ता
चर्मण्वती	१७ चर्मण्वती	**असिक्नी**	३७. असिक्नी
सिन्धुः, अन्धः	१८. सिन्धु अन्ध	**विश्वाइति**	३८. विश्वा ये
शोणः च	१९. और शोण	**महा**	३९. बड़ी-बड़ी
नदौ	२०. ये दो नद	**नद्यः ॥**	४०. नदियाँ हैं

श्लोकार्थ—चन्द्रवसा, ताम्रपर्णी, अवरोदा, कृतमाला, वैहायसी, कावेरी, वेणी, पयस्विनी, शर्करावर्ता, तुङ्गभद्रा, कृष्णा, वेण्या, भीमरथी, गोदावरी, निर्विन्ध्या, पयोष्णी, तापी, रेवा, सुरसा, नर्मदा, चर्मण्वती, सिन्धु, अन्ध और शोण ये दो नद महानदी, वेदस्मृति, ऋषिकुल्या, त्रिसामा, कौशिकी, मन्दाकिनी, यमुना सरस्वती, दृषद्वती, गोमती, सरयू, रोधस्वती सुषोमा, शतद्रु, चन्द्रभागा, मरुद्वृधा, वितस्ता, असिक्नी, विश्वा ये बड़ी-बड़ी नदियाँ हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अस्मिन्नेव वर्षे पुरुषैर्लब्धजन्मभिः शुक्ललोहितकृष्णवर्णेन स्वारब्धेन कर्मणा दिव्यमानुषनारकगतयो बह्व्य आत्मन आनुपूर्व्येण सर्वा ह्येव सर्वेषां विधीयन्ते यथावर्णविधानमपवर्गश्चापि भवति ॥१९॥

पदच्छेद—अस्मिन् एव वर्षे पुरुषैः लब्ध जन्मभिः शुक्ललोहित कृष्ण वर्णेन स्व आरब्धेन कर्मणा दिव्य मानुष नारक गतयः बह्व्यः आत्मनः आनुपूर्व्येण सर्वा हि एव सर्वेषाम् विधीयन्ते यथावर्ण विधानम् अपवर्गः च अपि भवति ॥

शब्दार्थ—

अस्मिन्	१.	इस	गतयः	१८.	योनियाँ (प्राप्त होती हैं)
एव	६.	ही	बह्व्यः	१४.	नाना प्रकार की
वर्षे	२.	वर्ष में	आत्मनः	१९.	अपने
पुरुषैः	५.	पुरुषों को	आनुपूर्व्येण	२०.	कर्मों के अनुसार
लब्ध	४.	लेने वाले	सर्वाः	२२.	सभी
जन्मभिः	३.	जन्म	हि एव	२३.	योनियाँ
शुक्ल	९.	सात्त्विक	सर्वेषाम्	२१.	सभी जीवों को
लोहित	१०.	राजस और	विधीयन्ते	२४.	प्राप्त हो सकती हैं
कृष्ण	११.	तामस	यथा	२७.	अनुसार किये गये
वर्णेन	१२.	वर्ण के	वर्ण	२६.	वर्णों के
स्व	७.	अपने द्वारा	विधानम्	२८.	धर्मों का अनुष्ठान करने पर
आरब्धेन	८.	किये हुये	अपवर्गः	२९.	मोक्ष
कर्मणा	१३.	कर्मों के द्वारा	च	२५.	और
दिव्य	१५.	दिव्य	अपि	३०.	भी
मानुष	१६.	मनुष्य (तथा)	भवति ॥	३१.	प्राप्त होता है
नरक ।	१७.	नारकीय			

श्लोकार्थ—इस वर्ष में जन्म लेने वाले पुरुषों को ही अपने द्वारा किये गये सात्त्विक, राजस और तामस वर्ण के कर्मों के द्वारा नाना प्रकार की दिव्य-मानुष तथा नारकीय योनियाँ प्राप्त होती हैं। अपने कर्मों के अनुसार सभी जीवों को सभी योनियाँ प्राप्त हो सकती हैं और वर्णों के अनुसार किये गये धर्मों का अनुष्ठान करने पर मोक्ष भी प्राप्त होता है।

विंशः श्लोकः

योऽसौ भगवति सर्वभूतात्मन्यनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयने परमात्मनि वासुदेवेऽनन्यनिमित्तभक्तियोगलक्षणो नानागतिनिमित्ताविद्याग्रन्थिरन्धन-द्वारेण यदा हि महापुरुषपुरुषप्रसङ्गः ॥२०॥

पदच्छेद—यः असौ भगवति सर्वभूत आत्मनि अनात्म्ये अनिरुक्ते अनिलयने परमात्मनि वासुदेवे अनन्य निमित्त भक्ति योग लक्षणः नाना गति निमित्त अविद्या ग्रन्थि रन्धन द्वारेण यदा हि महापुरुष पुरुष प्रसङ्गः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	लक्षणः	१५.	स्वरूप वाला (मोक्षपद) यह
असौ	२.	यह	नाना	१६.	अनेक
भगवति	३.	भगवान्	गति	१७.	गतियों को
सर्वभूत	४.	सम्पूर्ण प्राणियों के	निमित्त	१८.	प्रकट करने वाली
आत्मनि	५.	आत्मा	अविद्या	१९.	अविद्या रूप हृदय की
अनात्म्ये	६.	दोषों से रहित	ग्रन्थि	२०.	गाँठ
अनिरुक्ते	७.	अनिर्वचनीय	रन्धन	२१.	कट
अनिलयने	८.	निराधार	द्वारेण	२२.	जाने पर
परमात्मनि	९.	परमात्मा	यदा	२४	जब
वासुदेवे	१०.	वासुदेव में	हि	२३.	तभी प्राप्त होता है
अनन्य	११.	अनन्य (एवम्)	महा	२५.	भगवान् के
निमित्त	१२.	अकारण	पुरुष	२६.	प्रेमी
भक्ति	१३.	भक्ति	पुरुष	२७.	भक्तों का
योग	१४.	भाव के	प्रसङ्गः ॥	२८.	सङ्ग मिलता है

श्लोकार्थ—जो यह भगवान् सम्पूर्ण प्राणियों के आत्मा, दोषों से रहित, अनिर्वचनीय, निराधार, परमात्मा, वासुदेव में अनन्य एवम् अकारण भक्ति-भाव के स्वरूप वाला मोक्षपद है, यह अनेक गतियों को प्रकट करने वाली अविद्या रूप हृदय की गाँठ कट जाने पर तभी प्राप्त होता है, जब भगवान् के प्रेमी भक्तों का सङ्ग मिलता है ॥

एकविंशः श्लोकः

एतदेव हि देवा गायन्ति—

अहो अमीषां किमकारि शोभनं प्रसन्न एषां स्विदुत स्वयं हरिः।
यैर्जन्म लब्धं नृषु भारताजिरे मुकुन्दसेवौपयिकं स्पृहा हि नः ॥२१॥

एतद् एव हि देवा गायन्ति

पदच्छेद—अहो अमीषाम् किम् अकारि शोभनम् प्रसन्नः एषाम् स्वित् उत स्वयम् हरिः।
यैः जन्म लब्धम् नृषु भारत अजिरे मुकुन्द सेवा औपयिकम् स्पृहा हि नः ॥

शब्दार्थ—

एतद् एव	२.	ऐसा ही	उत	१३.	अथवा
हि देवाः	१.	देवता भी	स्वयम्हरिः	१५.	स्वयम् श्री हरि ही
गायन्ति अहो	३.	गाते हैं अहा	यैः	४.	जिन जीवों ने
अमीषाम् किम्	१०.	उन्होंने ऐसा क्या	जन्म	८.	जन्म
अकारि	१२.	किया है	लब्धम्	९.	प्राप्त किया है
शोभनम्	११.	पुण्य	नृषु	७.	मनुष्य
प्रसन्न	१६.	प्रसन्न	भारत अजिरे मुकुन्द	५.	भारतवर्ष में भगवान् की
एषाम्	१४.	इन पर	सेवा औपयिकम्	६.	सेवा के योग्य
स्वित्	१७.	हो गये हैं	स्पृहा हि नः ॥	१८.	इसके लिये ही हम तरसते हैं

श्लोकार्थ—देवता भी ऐसा ही गाते हैं अहा! जिन जीवों ने भारतवर्ष में भगवान् की सेवा के योग्य मनुष्य जन्म प्राप्त किया है, उन्होंने ऐसा क्या पुण्य किया है। अथवा इन पर स्वयम् श्री हरि ही प्रसन्न हो गये हैं। इस सौभाग्य के लिये ही हम तरसते रहते हैं॥

द्वाविंशः श्लोकः

किं दुष्करैर्नः क्रतुभिस्तपोव्रतैर्दानादिभिर्वा द्युजयेन फल्गुना।
न यत्र नारायणपादपङ्कजस्मृतिः प्रमुष्टातिशयेन्द्रियोत्सवात् ॥२२॥

पदच्छेद - किं दुष्करैः नः क्रतुभिः तपो व्रतैः दान आदिभिः वा द्युजयेन फल्गुना।
न यत्र नारायण पाद पङ्कज स्मृतिः प्रमुष्टा अतिशय इन्द्रिय उत्सवात् ॥

शब्दार्थ—

किम्	७.	इससे क्या लाभ है	न	१४.	नहीं होती
दुष्करैः	२.	बड़े कठोर	यत्र	८.	जहाँ
नः	१.	हमें	नारायणपादपङ्कज	१२.	नारायण के चरण कमलों की
क्रतुभिः तपोव्रतैः	३.	यज्ञ, तप, व्रत	स्मृतिः	१३.	स्मृति ही
दान आदिभिः	५.	दान आदिकर के (जो यह)	प्रमुष्टा	११.	छिन जाने के कारण
वा	४.	अथवा	अतिशय	१०.	अधिकता से (स्मृति के)
द्युजयेन फल्गुना।	६.	स्वर्ग प्राप्ति का अधिकार मिला है	इन्द्रिय उत्सवात् ॥	९.	इन्द्रियों के भोगों की

श्लोकार्थ— हमें बड़े कठोर यज्ञ, तप, व्रत अथवा दान आदि करके जो यह स्वर्ग प्राप्ति का अधिकार मिला है इससे क्या लाभ है, जहाँ इन्द्रियों के भोगों की अधिकता से स्मृति के छिन जाने के कारण श्री नारायण के चरण कमलों की स्मृति ही नहीं होती है॥

त्रयोविंशः श्लोकः

कल्पायुषां स्थानजयात्पुनर्भवात् क्षणायुषां भारतभूजयो वरम् ।
क्षणेन मर्त्येन कृतं मनस्विनः संन्यस्य संयान्त्यभयं पदं हरेः ॥२३॥

पदच्छेद—कल्प आयुषाम् स्थान जयात् पुनः भवात् क्षण आयुषाम् भारत भूजयः वरम् ।
क्षणेन मर्त्येन कृतम् मनस्विनः संन्यस्य संयान्ति अभयम् पदम् हरेः ॥

शब्दार्थ—

कल्प	१.	एक-एक कल्प की	क्षणेन	१२.	एक क्षण में
आयुषाम्	२.	आयु वाले	मर्त्येन	११.	मनुष्य
स्थान	३.	स्वर्ग	कृतम्	१३.	सम्पूर्ण कर्म
जयात्	४.	प्राप्त होने पर भी	मनस्विनः	१०.	धीर
पुनः भवात्	५.	फिर से जन्म लेते हैं इससे तो	संन्यस्य	१५.	अर्पण करके
क्षण-आयुषाम्	६.	थोड़ी आयु वाले	संयान्ति	१८.	प्राप्त कर लेते हैं
भारत-भू	७.	भारत भूमि में	अभयम्	१६.	अभय
जयः	८.	जन्म लेना	पदम्	१७.	पद
वरम् ।	९.	श्रेष्ठ हैं (क्योंकि)	हरेः ॥	१४.	भगवान् श्री हरि को

श्लोकार्थ—एक-एक कल्प की आयु वाले स्वर्ग प्राप्त होने पर भी फिर से जन्म लेते हैं । किन्तु थोड़ी आयु वाले भारत भूमि में जन्म लेना श्रेष्ठ है । क्योंकि धीर मनुष्य एक क्षण में सम्पूर्ण कर्म भगवान् श्री हरि को अर्पण करके अभयपद प्राप्त कर लेते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

न यत्र वैकुण्ठकथासुधापगा न साधवो भागवतास्तदाश्रयाः ।
न यत्र यज्ञेशमखा महोत्सवाः सुरेशलोकोऽपि न वै स सेव्यताम् ॥२४॥

पदच्छेद— न यत्र वैकुण्ठ कथा सुधा आपगा, न साधवः भागवताः तद् आश्रयाः ।
न यत्र यज्ञेश मखाः महोत्सवाः सुरेशलोकः अपि न वै सः सेव्यताम् ॥

शब्दार्थ—

न	४.	नहीं बहती	न	१४.	नहीं की जाती
यत्र	१.	जहाँ	यत्र	१०.	जहाँ
वैकुण्ठकथा	२.	भागवत कथा की	यज्ञेश	१२.	यज्ञ पुरुष की
सुधापगा	३.	अमृत मयी सरिता	मखाः	१३.	पूजा-अर्चा
न	९.	निवास नहीं करते	महोत्सवाः	११.	अत्यधिक उत्साह से
साधवः	८.	साधुजन	सुरेश-लोकः	१५.	ब्रह्मलोक
भागवताः	७.	भगवत् भक्त	अपि	१६.	होने पर भी
तद्	५.	जहाँ उसका	न वै	१८.	नहीं करना चाहिये
आश्रयाः ।	६.	आश्रय लेने वाले	सः सेव्यताम् ॥	१७.	उसका सेवन

श्लोकार्थ—जहाँ भागवत कथा की अमृतमयी सरिता नहीं बहती, जहाँ उसका आश्रय लेने वाले भगवत् भक्त साधु जन निवास नहीं करते, जहाँ अत्यधिक उत्साह से यज्ञ पुरुष की पूजा-अर्चा नहीं की जाती, ब्रह्मलोक होने पर भी उसका सेवन नहीं करना चाहिये ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

प्राप्ता नृजातिं त्विह ये च जन्तवो ज्ञानक्रियाद्रव्यकलापसम्भृताम् ।
न वै यतेरन्नपुनर्भवाय ते भूयो वनौका इव यान्ति बन्धनम् ॥२५॥

पदच्छेद— प्राप्ता नृजातिम् तु इह ये च जन्तवः ज्ञान क्रिया द्रव्य कलाप सम्भृताम् ।
न वै यतेरन् अपुनर्भवाय ते भूयो वनौकाः इव यान्ति बन्धनम् ॥

शब्दार्थ—

प्राप्ता	९. प्राप्त करके भी	न वै	१२. नहीं
नृजातिम्	८. मनुष्य जन्म	यतेरन्	१३. प्रयत्न किया
तु इह	१. इस भारतवर्ष में	अपुनर्भवाय	१०. मोक्ष प्राप्ति के लिये
ये	२. जिन	ते	१४. वे
च	५. और	भूयः	१५. बार-बार
जन्तवः	३. जीवों ने	वनौकाः	१६. वनवासी पक्षियों के
ज्ञान-क्रिया	४. ज्ञान-कर्म	इव	१६. समान
द्रव्य-कलाप	६. सामग्री के समूह से	यान्ति	१८. पड़ते हैं
सम्भृताम् ।	७. युक्त	बन्धनम् ॥	१७. बन्धन में

श्लोकार्थ——इस भारतवर्ष में जिन जीवों ने ज्ञान-कर्म सामग्री के समूह से युक्त मनुष्य जन्म प्राप्त करके भी मोक्ष प्राप्ति के लिये प्रयत्न नहीं किया वे बार-बार वनवासी पक्षियों के समाने बन्धन में पड़ते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

यैः श्रद्धया बर्हिषि भागशो हविर्निरुप्तमिष्टं विधिमन्त्रवस्तुतः ।
एकः पृथङ्नामभिराहुतो मुदा गृह्णाति पूर्णः स्वयमाशिषां प्रभुः ॥२६॥

पदच्छेद— यैः श्रद्धया बर्हिषि भागशः हविः निरुप्तम् इष्टम् विधि मन्त्र वस्तुतः ।
एकः पृथक् नामभिः आहुतः मुदा गृह्णाति पूर्णः स्वयम् आशिषाम् प्रभुः ॥

शब्दार्थ—

यैः	१. जिनके द्वारा	एकः	१७. अकेले ही (हवि को)
श्रद्धया	७. श्रद्धा पूर्वक	पृथक्	१०. भिन्न-भिन्न
बर्हिषि	२. यज्ञ में	नामभिः	११. नामों से
भागशः	४. अलग-अलग रखकर	आहुतः	१२. पुकारे जाने पर
हविः	८. हवि	मुदा	१६. प्रसन्न होकर
निरुप्तम्	९. प्रदान करने पर	गृह्णाति	१८. ग्रहण करते हैं
इष्टम्	३. देवताओं के उद्देश्य से	पूर्णः स्वयम्	१३. परिपूर्ण तथा स्वयम्
विधिमन्त्र	५. विधि, मन्त्र और	आशिषाम्	१४. पूर्णकाम
वस्तुतः ।	६. द्रव्यादि के द्वारा	प्रभुः ॥	१५. श्री हरि

श्लोकार्थ——जिनके द्वारा यज्ञ में देवताओं के उद्देश्य से अलग-अलग रखकर विधि, मन्त्र और द्रव्यादि के द्वारा श्रद्धा पूर्वक हवि प्रदान करने पर भिन्न-भिन्न नामों से पुकारे जाने पर परिपूर्ण तथा स्वयम् पूर्णकाम श्री हरि प्रसन्न होकर अकेले ही हवि को ग्रहण करते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

सत्यं दिशत्यर्थितमर्थितो नृणां नैवार्थदो यत्पुनरर्थिता यतः ।
स्वयं विधत्ते भजतामनिच्छतामिच्छापिधानं निजपादपल्लवम् ॥२७॥

पदच्छेद—सत्यम् दिशति अर्थितम् अर्थितः नृणाम् न एव अर्थदः यत् पुनः अर्थिता यतः ।
स्वयम् विधत्ते भजताम् अनिच्छताम् इच्छा पिधानम् निज पाद पल्लवम् ॥

शब्दार्थ—

सत्यम्	१.	यह ठीक है (कि भगवान्)	यतः	८.	क्योंकि
दिशति	५.	देते हैं (यह)	स्वयम्	१९.	स्वयम् ही
अर्थितम्	४.	अभीष्ट पदार्थ	विधत्ते	२०.	प्रदान करते हैं
अर्थितः	२.	मांगने वाले	भजताम्	१३.	भजन करने वाले
नृणाम्	३.	मनुष्यों को	अनिच्छताम्	१२.	निष्काम भाव से
न एव	७.	नहीं है	इच्छा	१४.	मनुष्य की इच्छा को
अर्थदः	६.	वास्तविक दान	पिधानम्	१५.	समाप्त करके
यत्	९.	वह मनुष्य	निज	१६.	अपने
पुनः	१०.	बार-बार	पाद	१७.	चरण
अर्थिता ।	११.	मांगता रहता है	पल्लवम् ॥	१८.	कमल

श्लोकार्थ—यह ठीक ही है कि भगवान् मांगने वाले मनुष्यों को अभीष्ट पदार्थ देते हैं । यह वास्तविक दान नहीं है । क्योंकि वह मनुष्य बार-बार मांगता रहता है । निष्काम भाव से भजन करने वाले मनुष्य की इच्छा को समाप्त करके अपने चरण कमल स्वयम् ही प्रदान करते हैं ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

यद्यत्र नः स्वर्गसुखावशेषितं स्विष्टस्य सूक्तस्य कृतस्य शोभनम् ।
तेनाजनाभे स्मृतिमज्जन्म नः स्याद् वर्षे हरिर्यद्भजतां शं तनोति ॥२८॥

पदच्छेद—यदि अत्र नः स्वर्ग सुख अवशेषितम् स्विष्टस्य सूक्तस्य कृतस्य शोभनम् ।
तेन अजनाभे स्मृतिमत् जन्म नः स्याद् वर्षे हरिः यद् भजताम् शम् तनोति ॥

शब्दार्थ—

यदि-अत्र	१.	यदि-यहाँ	तेन-अजनाभे	१०.	उससे-भारतवर्ष में
नः	४.	हमारे	स्मृतिमत्	११.	भगवान् की स्मृति से युक्त
स्वर्ग	२.	स्वर्ग	जन्म	१३.	जन्म
सुख	३.	सुख भोगने के बाद	नः	१२.	हमारा
अवशेषितम्	९.	बचा हो तो	स्याद्	१४.	हो
स्विष्टस्य	५.	यज्ञ	वर्षे हरिः	१६.	भारतवर्ष में श्री हरि का
सूक्तस्य	६.	प्रवचन	यद्	१५.	क्योंकि
कृतस्य	७.	शुभ कर्मों से	भजताम्	१७.	भजन करने पर
शोभनम् ।	८.	कुछ भी पुण्य	शम्-तनोति ॥	१८.	हमारा कल्याण होगा

श्लोकार्थ—यदि यहाँ स्वर्ग सुख भोगने के बाद हमारे यज्ञ-प्रवचन शुभ कर्मों से कुछ भी पुण्य बचा हो तो उससे भारतवर्ष में भगवान् की स्मृति से युक्त हमारा जन्म हो । क्योंकि भारतवर्ष में श्री हरि का भजन करने पर हमारा कल्याण होगा ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—जम्बूद्वीपस्य च राजन्नुपद्वीपानष्टौ हैक उपदिशन्ति सगरात्मजैरश्वान्वेषण इमां महीं परितो निखनद्भिरुपकल्पितान् ॥२९॥

पदच्छेद—जम्बूद्वीपस्य च राजन् उपद्वीपान् अष्टौ ह एक उपदिशन्ति सगर आत्मजैः अश्व अन्वेषणे इमाम् महीम् परितः निखनद्भिः उपकल्पितान् ॥

शब्दार्थ—

जम्बू	१०.	जम्बू	आत्मजैः	३.	पुत्रों ने
द्वीपस्य च	११.	द्वीप के अन्तर्गत और	अश्व	४.	यज्ञ के घोड़े को
राजन्	१.	हे राजन् !	अन्वेषणे	५.	खोजते हुये
उपद्वीपान्	१३.	उपद्वीप बन गये	इमाम्	६.	इस
अष्टौ	१२.	आठ	महीम्	७.	पृथ्वी को
ह एक	१४.	कुछ लोगों का ऐसा	परितः	८.	चारों ओर से
उपदिशन्ति	१५.	कथन है (और)	निखनद्भिः	९.	खोदा था
सगर ।	२.	राजा सगर के	उपकल्पितान् ॥	१६.	ऐसी कल्पना है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! राजा सगर के पुत्रों ने यज्ञ के घोड़े को खोजते हुये इस पृथ्वी को चारों ओर से खोदा था। जम्बूद्वीप के अन्तर्गत और आठ उपद्वीप बन गये, कुछ लोगों का ऐसा कथन है और ऐसी कल्पना है ॥

त्रिंशः श्लोकः

तद्यथा स्वर्णप्रस्थश्चन्द्रशुक्ल आवर्तनो रमणको मन्दरहरिणः पाञ्चजन्यः सिंहलो लङ्केति ॥३०॥

पदच्छेद—तत् यथा स्वर्ण प्रस्थः चन्द्र शुक्लः आवर्तनः रमणकः मन्दर हरिणः पाञ्चजन्यः सिंहल लङ्का इति ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	वह	मन्दर हरिणः	७.	मन्दर हरिण
यथा	२.	जैसे	पाञ्चजन्यः	८.	पाञ्चजन्य
स्वर्ण प्रस्थः	३.	स्वर्ण प्रस्थ	सिंहल	९.	सिंहल
चन्द्रशुक्लः	४.	चन्द्र शुक्ल	लङ्का	११.	लङ्का है
आवर्तनः	५.	आवर्तन	इति ।	१०.	और
रमणकः ॥	६.	रमणक			

श्लोकार्थ—वह जैसे स्वर्ग प्रस्थ, चन्द्रशुक्ल, आवर्तन, रमणक, मन्दरहरिण, पाञ्चजन्य, सिंहल और लङ्का हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

एवं तव भारतोत्तम जम्बूद्वीपवर्षविभागो यथोपदेशमुपवर्णित इति ॥३१॥

पदच्छेद—

एवम् तव भारत उत्तम जम्बूद्वीप वर्ष विभागः यथा उपदेशम् उपवर्णितः इति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	३.	इस प्रकार	वर्ष	६.	वर्षों का
तव	११.	आपको	विभागः	७.	विभाग
भारत	१.	हे भरत-वंशियों में	यथा	८.	जैसा
उत्तम	२.	श्रेष्ठ	उपदेशम्	९.	मैंने सुना था
जम्बू	४.	जम्बू	उपवर्णितः	१२.	सुना दिया
द्वीप।	५.	द्वीप के	इति ॥	१०.	वैसा

श्लोकार्थ—हे भरत-वंशियों में श्रेष्ठ ! इस प्रकार जम्बू द्वीप के वर्षों का विभाग जैसा मैंने सुना था, वैसा आपको ऐसा सुना दिया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे जम्बूद्वीपवर्णनं नाम एकोनविंशोऽध्यायः ॥१९॥

पंचमः स्कन्धः

विंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—अतः परं प्लक्षादीनां प्रमाणलक्षणसंस्थानतो वर्षविभाग उपवर्ण्यते ॥१॥

पदच्छेद—अतः परम् प्लक्ष आदीनाम् प्रमाण लक्षण संस्थानतः वर्ष विभागः उपवर्ण्यते ॥

शब्दार्थ—

अतः	१. इसके	लक्षण	४. लक्षण और
परम्	२. बाद	संस्थानतः	५. स्थिति के अनुसार
प्लक्ष	६. वर्ष	वर्ष	८. वर्ष
आदीनाम्	७. इत्यादि अन्य द्वीपों के	विभागः	९. विभाग का
प्रमाण।	३. परिमाण	उपवर्ण्यते ॥	१०. वर्णन किया जाता है

श्लोकार्थ—इसके बाद परिणाम, लक्षण और स्थिति के अनुसार प्लक्ष इत्यादि अन्य द्वीपों के वर्ष विभाग का वर्णन किया जाता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

जम्बूद्वीपोऽयं यावत्प्रमाणविस्तारस्तावता क्षारोदधिना परिवेष्टितो यथा मेरुर्जम्ब्वाख्येन लवणोदधिरपि ततो द्विगुणविशालेन प्लक्षाख्येन परिक्षिप्तो यथा परिखा बाह्योपवनेन। प्लक्षो जम्बूप्रमाणो द्वीपाख्यकरो हिरण्मय उत्थितो यत्राग्निरुपास्ते सप्तजिह्वस्तस्याधिपतिः प्रियव्रतात्मज इध्मजिह्वः स्वं द्वीपं सप्तवर्षाणि विभज्य सप्तवर्षनामभ्य आत्मजेभ्य आकलय्य स्वमात्मयोगेनोपरराम ॥२॥

पदच्छेद—जम्बूद्वीपः अयम् यावत् प्रमाण विस्तारः तावता क्षार उदधिना परिवेष्टितः यथा मेरुः जम्बू आख्येन लवण उदधिः अपि ततः द्विगुण विशालेन प्लक्ष आख्येन परिक्षिप्तः यथा परिखा बाह्य उपवनेन। प्लक्षः जम्बू प्रमाणः द्वीपाख्यकरः हिरण्मयः उत्थितः यत्र अग्निः उपास्ते सप्तजिह्वः तस्य अधिपतिः प्रियव्रत आत्मजः इध्मजिह्वः स्वम् द्वीपम् सप्त वर्षाणि विभज्य सप्त वर्ष नामभ्यः आत्मजेभ्य आकलय्य स्वम् आत्मयोगेन उपरराम ॥

शब्दार्थ—

जम्बूद्वीप	२. जम्बूद्वीप का	हिरण्मयः	१६ सोने का
अयम्	१. इस	उत्थितः	१८. वृक्ष भी है जहाँ
यावत् प्रमाण	३. जितना परिणाम और	यत्र अग्निः उपास्ते	२०. अग्नि देव विराजते हैं
विस्तारः तावता	४. विस्तार है उतने ही विस्तार वाले	सप्तजिह्वः	१९. सात जिह्वाओं वाले
क्षार उदधिना	५. खारे जल समुद्र से	तस्य अधिपतिः	२१. इस द्वीप के अधिपति
परिवेष्टितः यथा	६. घिरा हुआ है जिस प्रकार	प्रियव्रत आत्मजः	२२. प्रियव्रत के पुत्र
मेरुः जम्बू आख्येन	७. मेरु पर्वत जम्बूद्वीप से घिरा हुआ है	इध्मजिह्वः	२३. इध्मजिह्व हैं
लवण उदधिः अपि	१०. खारा समुद्र भी	स्वम् द्वीपम्	२४. उन्होंने उस द्वीप को
ततः द्विगुण विशालेन	११. अपने से दुगुने विस्तार वाले	सप्तवर्षाणि	२५. सात वर्षों में
प्लक्ष आख्येन	१२. प्लक्षद्वीप से	विभज्य सप्तवर्ष	२६. बाँटकर सातवर्षों के समान
परिक्षिप्तः	१३. घिरा हुआ है	नामभ्यः	२७. नाम वाले
यथा परिखा बाह्य	८. जिस प्रकार खाई बाहर के	आत्मजेभ्यः	२८. अपने पुत्रों को
उपवनेन	९. उपवन से घिरी रहती है	आकलय्य	२९. सौंप दिया (और)
प्लक्ष	१७. प्लक्ष	स्वम्	३०. आप
जम्बू प्रमाण	१४. जम्बूद्वीप में उतने ही विस्तार वाला	आत्म	३१. अध्यात्म
द्वीप आख्यकरः	१५. जम्बू नाम का वृक्ष वहाँ पर है	योगेन।	३२. योग के द्वारा
		उपरराम ॥	३३. उपरत हो गये

श्लोकार्थ—इस जम्बूद्वीप का जितना परिणाम और विस्तार है उतने ही विस्तार वाले खारे जल के समुद्र से घिरा हुआ है, जिस प्रकार मेरु पर्वत जम्बूद्वीप से घिरा है। जिस प्रकार खाई बाहर के उपवन से घिरी रहती है, वैसे ही खारा समुद्र भी अपने से दुगुने विस्तार वाले प्लक्ष द्वीप से घिरा हुआ है। जम्बूद्वीप में उतने ही विस्तार वाला जम्बूनाम का वृक्ष है। वहाँ पर सोने का प्लक्ष वृक्ष भी है। जहाँ सात जिह्वाओं वाले अग्निदेव विराजते हैं। इस द्वीप के अधिपति प्रियव्रत के पुत्र इध्मजिह्व थे। उन्होंने उस द्वीप को सात वर्षों में बाँटकर सात वर्षों के समान नाम वाले अपने पुत्रों को सौंप दिया और अध्यात्म योग के द्वारा उपरत हो गये ॥

तृतीयः श्लोकः

शिवं यवसं सुभद्रं शान्तं क्षेममममृतमभयमिति वर्षाणि तेषु गिरयो नद्यश्च सप्तैवाभिज्ञाताः ॥३॥

पदच्छेद—शिवम् यवसम् सुभद्रम् शान्तम् क्षेमम् अमृतम् अभयम् इति वर्षाणि तेषु गिरयः नद्यः च सप्त एव अभिज्ञाताः ॥

शब्दार्थ—

शिवम्	३.	शिव	वर्षाणि	२.	वर्षों के नाम
यवसम्	४.	यवस	तेषु	१०.	इनमें भी
सुभद्रम्	५.	सुभद्र	गिरयः	११.	पर्वत
शान्तम्	६.	शान्त	नद्यः	१४.	नदियाँ भी
क्षेमम्	७.	क्षेम	च	१२.	और
अमृतम्	८.	अमृत (और)	सप्त एव	१३.	सात ही
अभयम्	९.	अभय है	अभिज्ञाताः ॥	१५.	प्रसिद्ध हैं
इति ।	१.	इन			

श्लोकार्थ—इन वर्षों के नाम शिव, यवस, सुभद्र, शान्त, क्षेम, अमृत और अभय हैं। इनमें भी सात पर्वत और सात ही नदियाँ भी प्रसिद्ध हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

मणिकूटो वज्रकूट इन्द्रसेनो ज्योतिष्मान् सुपर्णो हिरण्यष्ठीवो मेघमाल इति सेतुशैलाः। अरुणा नृम्णाऽऽङ्गिरसी सावित्री सुप्रभाता ऋतम्भरा सत्यम्भरा इति महानद्यः। यासां जलोपस्पर्शनविधूतरजस्तमसो हंसपतङ्गोर्ध्वायनसत्याङ्गसंज्ञाश्चत्वारो वर्णाः सहस्रायुषो विबुधोपमसन्दर्शनप्रजननाः स्वर्गद्वारं त्रय्या विद्यया भगवन्तं त्रयीमयं सूर्यमात्मानं यजन्ते ॥४॥

पदच्छेद—मणिकूटः वज्रकूटः इन्द्रसेनः ज्योतिष्मान् सुपर्णः हिरण्यष्ठीवः मेघमालः इति सेतुशैलाः। अरुणा नृम्णा आङ्गिरसः सावित्री सुप्रभाता ऋतम्भरा सत्यम्भरा इति महानद्यः। यासाम् जल उपस्पर्शन विधूत रजः तमसः हंस पतङ्ग ऊर्ध्वायन सत्याङ्ग संज्ञाः चत्वारः वर्णाः सहस्र आयुषः विबुध उपम सन्दर्शन प्रजननाः स्वर्गद्वारम् त्रय्या विद्याभगवन्तम् सूर्यम् आत्मानम् यजन्ते।

शब्दार्थ—

मणिकूटः	१.	वहाँ मणिकूट	उपस्पर्शन	२१.	स्नान करने से
वज्रकूट	२.	वज्रकूट	विधूत	२७.	नष्ट हो जाते हैं
इन्द्रसेनः	३.	इन्द्रसेन	रजः तमसः	२६.	रजोगुण और तमोगुण
ज्योतिष्मान्	४.	ज्योतिष्मान्	हंस-पतङ्ग	२२.	हंस पतङ्ग
सुपर्णः	५.	सुपर्ण	ऊर्ध्वायन	२३.	ऊर्ध्वायन
हिरण्यष्ठीवः	६.	हिरण्यष्ठीव (और)	सत्याङ्ग संज्ञाः	२४.	सत्याङ्ग नाम वाले
मेघमाल	७.	मेघमाल	चत्वारः वर्णाः	२५.	चारों वर्णों के
इति	८.	ये सात	सहस्र	२८.	हजार वर्ष की
सेतुशैलाः	९.	मर्यादा पर्वत हैं	आयुषः	२९.	आयु वाले
अरुणा	१०.	अरुणा	विबुधउपम	३०.	देवताओं के समान
नृम्णा	११.	नृम्णा	सन्दर्शन	३१.	इन्हें थकान पसीना नहीं होता
आङ्गिरसी	१२.	आङ्गिरसी	प्रजननाः	३२.	सन्तानोत्पत्ति होती है
सावित्री	१३.	सावित्री	स्वर्ग द्वारम्	३३.	ये स्वर्ग के द्वार भूत
सुप्रभाता	१४.	सुप्रभाता	त्रय्या	३४.	त्रयी
ऋतम्भरा	१५.	ऋतम्भरा	विद्यया	३५.	विद्या के द्वारा
सत्यम्भरा	१६.	सत्यम्भरा	भगवन्तम्	३६.	भगवान्
इति	१७.	ये सात	त्रयीमयम्	३७.	त्रयीरूप
महानद्यः	१८.	महानदियाँ हैं	सूर्यं	३८.	सूर्य की
यासाम्	१९.	जिनके	आत्मानम्	३९.	आत्म स्वरूप
जल	२०.	जल में	यजन्ते ॥	४०.	उपासना करते हैं

श्लोकार्थ—वहाँ मणिकूट, वज्रकूट, इन्द्रसेन, ज्योतिष्मान् सुपर्ण, हिरण्यष्ठीवी और मेघमाल ये सात मर्यादा पर्वत हैं। अरुणा, नृम्णा, आङ्गिरसी, सावित्री, सुप्रभाता, ऋतम्भरा, सत्यम्भरा ये सात महा नदियाँ हैं। जिनके जल में स्नान करने से हंस, पतङ्ग, ऊर्ध्वायन और सत्याङ्ग नाम वाले चारों वर्णों के रजोगुण और तमोगुण नष्ट हो जाते हैं। हजार वर्ष की आयुवाले देवताओं के समान इन्हें थकान पसीना नहीं होता है। सन्तानोत्पत्ति होती है। ये स्वर्ग के द्वार भूत त्रयी विद्या के द्वारा भगवान् त्रयीरूप आत्म स्वरूप सूर्य की उपासना करते हैं॥

पञ्चमः श्लोकः

प्रत्नस्य विष्णोः रूपं यत्सत्यस्यर्तस्य ब्रह्मणः ।
अमृतस्य च मृत्योश्च सूर्यमात्मानमीमहीति ॥५॥

पदच्छेद— प्रत्नस्य विष्णोः रूपम् यत् सत्यस्य ऋतस्य ब्रह्मणः ।
अमृतस्य च मृत्योः च सूर्यम् आत्मानम् ईमहि इति ॥

शब्दार्थ—

प्रत्नस्य	९.	उन पुराण पुरुष	अमृतस्य	६.	शुभफल
विष्णोः	१०.	विष्णु	च	५.	और
रूपम्	११.	स्वरूप	मृत्योः	८	अशुभ (फल के दाता हैं)
यत्	१.	जो	च	७.	तथा
सत्यस्य	२.	सत्य और	सूर्यम्	१२.	सूर्य की
ऋतस्य	३.	ऋत	आत्मानम्	१३.	हम
ब्रह्मणः ।	४.	वेद	ईमहि इति ॥	१४.	शरण में जाते हैं

श्लोकार्थ—जो सत्य और ऋत वेद और शुभ फल तथा अशुभ फल के दाता हैं, उन पुराण पुरुष सूर्य की हम शरण में जाते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

प्लक्षादिषु पञ्चसु पुरुषाणामायुरिन्द्रियमोजः सहो बलं बुद्धिर्विक्रम इति च सर्वेषामौत्पत्तिकी सिद्धिरविशेषेण वर्तते ॥६॥

पदच्छेद—प्लक्ष आदिषु पञ्चसु पुरुषाणाम् आयुः इन्द्रियम् ओजः सहः बलम् बुद्धिः विक्रम इति च सर्वेषाम् औत्पत्तिकी सिद्धिः अविशेषेण वर्तते ॥

शब्दार्थ—

प्लक्ष	१.	प्लक्ष	बुद्धिः	१२.	बुद्धि और
आदिषु	२.	इत्यादि	विक्रम	१३.	पराक्रम
पञ्चसु	३.	पांच द्वीपों में	इति च	१४.	ये
पुरुषाणाम्	५.	मनुष्यों को	सर्वेषाम्	४.	सभी
आयुः	७.	आयु	औत्पत्तिकी	६.	जन्म से ही
इन्द्रियम्	८.	इन्द्रिय	सिद्धिः	१७.	सिद्ध
ओजः	९.	मनोबल	अवि	१६.	रूप से
सहः	१०.	शारीरिक	शेषेण	१५.	समान
बलम् ।	११.	बल	वर्तते ॥	१८.	रहते हैं

श्लोकार्थ—प्लक्ष इत्यादि पांच द्वीपों में सभी मनुष्यों को जन्म से ही आयु, इन्द्रिय, मनोबल, शारीरिक बल, बुद्धि और विक्रम ये समान रूप से सिद्ध रहते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

प्लक्षः स्वसमानेनेक्षुरसोदेनावृतो यथा तथा द्वीपोऽपि शाल्मलो द्विगुणविशालः समानेन सुरोदेनावृतः परिवृङ्क्ते ॥७॥

पदच्छेद—प्लक्षः स्व समानेन इक्षुरस उदेन आवृतः यथा तथा द्वीपः अपि शाल्मलः द्विगुण विशालः समानेन सुर उदेन आवृतः परिवृङ्क्ते ॥

शब्दार्थ—

प्लक्षः	२.	प्लक्ष द्वीप	अपि	११.	भी (उससे)
स्व	३.	अपने ही	शाल्मलः	९.	शाल्मल
समानेन	४.	समान विस्तार वाले	द्विगुण	१२.	दुगने
इक्षुरसः	५.	ईख के रस के	विशालः	१३.	परिमाण वाले और
उदेन	६.	समुद्र से	समानेन	१४.	उतने ही विस्तार वाले
आवृतः	७.	घिरा हुआ है	सुरा	१५	मदिरा के
यथा	१.	जैसे	उदेन	१६.	समुद्र से
तथा	८.	उसी प्रकार	आवृतः	१७.	घिरा हुआ
द्वीपः।	१०.	द्वीप	परिवृङ्क्ते ॥	१८.	स्थित है

श्लोकार्थ—जैसे प्लक्ष द्वीप अपने ही समान विस्तार वाले ईख के रस के समुद्र से घिरा हुआ है, उसी प्रकार शाल्मल द्वीप भी उससे दुगने परिमाण वाले और उतने ही विस्तार वाले मदिरा के समुद्र से घिरा हुआ स्थित है ॥

अष्टमः श्लोकः

यत्र ह वै शाल्मली प्लक्षायामा यस्यां वाव किल निलयमाहुर्भगवतश्छन्दःस्तुतः पतत्त्रिराजस्य सा द्वीपहूतये उपलक्ष्यते ॥८॥

पदच्छेद—यत्र ह वै शाल्मली प्लक्ष आयामा यस्याम् वाव किल निलयम् आहुः भगवतः छन्दः स्तुतः पतत्त्रि राजस्य सा द्वीप हूतये उपलक्ष्यते ॥

शब्दार्थ—

यत्र ह वै	१.	जहाँ	छन्दः	७.	वेदमय पंखों से
शाल्मली	५.	सेमर का वृक्ष है	स्तुतः	९.	स्तुति करने वाले
प्लक्ष	२.	पाकर के	पतत्त्रि	१०.	पक्षि
आयामा	३.	वृक्ष के बराबर	राजस्य	११.	राज गरुड का
यस्याम्	६.	यहीं	सा	१४.	यही
वाव किल	४.	जो कि	द्वीप	१५.	इस द्वीप के
निलयम्	१२.	निवास स्थान	हूतये	१६.	नाम करण का
आहुः	१३.	बताया गया है	उपलक्ष्यते।	१७.	कारण है
भगवतः ॥	८.	भगवान् की			

श्लोकार्थ—जहाँ पाकर के वृक्ष के बराबर जो कि सेमर का वृक्ष है। यहीं वेद मय पंखों से भगवान् की स्तुति करने वाले पक्षिराज गरुड़ का निवास स्थान बताया गया है। यही इस द्वीप के नाम करण का कारण है ॥

नवमः श्लोकः

तद्द्वीपाधिपतिः प्रियव्रतात्मजो यज्ञबाहुः स्वसुतेभ्यः सप्तभ्यस्तन्नामानि सप्तवर्षाणि व्यभजत्सुरोचनं सौमनस्यं रमणकं देववर्षं पारिभद्रमाप्यायनम विज्ञातमिति ॥९॥

पदच्छेद—तद् द्वीप अधिपतिः प्रियव्रत आत्मजः यज्ञ बाहुः स्व सुतेभ्यः सप्तभ्यः तत् नामानि सप्त वर्षाणि व्यभजत् सुरोचनम् सौमनस्यम् रमणकम् देववर्षम् पारिभद्रम् आप्यायनम् अविज्ञातम् इति ॥

शब्दार्थ—

तद्द्वीप	१.	उस द्वीप के	सप्तवर्षाणि	१७.	सातों वर्ष
अधिपतिः	२.	अधिपति	व्यभजत्	१८.	बाँट दिये
प्रियव्रत	३.	प्रियव्रत के	सुरोचनम्	६.	सुरोचन
आत्मजः	४.	पुत्र	सौमनस्यम्	७.	सौमनस्य
यज्ञबाहुः	५.	महाराज यज्ञबाहु थे (उन्होंने)	रमणकम्	८.	रमणक
स्वसुतेभ्यः	१५.	अपने पुत्रों को	देववर्षम्	९.	देववर्ष
सप्तभ्यः	१४.	सातों	पारिभद्रम्	१०.	पारिभद्र
तत्	१६.	इन्हीं नामों वाले	आप्यायनम्	११.	आप्यायन और
नामानि ।	१३.	नाम वाले	अविज्ञातम् इति ॥	१२.	अविज्ञात

श्लोकार्थ—उस द्वीप के अधिपति प्रियव्रत के पुत्र महाराज यज्ञ बाहु थे। उन्होंने सुरोचन, सौमनस्य, रमणक, देववर्ष, पारिभद्र, आप्यायन और अविज्ञात नाम वाले सातों अपने पुत्रों को इन्हीं नाम वाले सातों वर्ष बाँट दिये ॥

दशमः श्लोकः

तेषु वर्षाद्रयो नद्यश्च सप्तैवाभिज्ञाताः स्वरसः शतशृङ्गो वामदेवः कुन्दो मुकुन्दः पुष्पवर्षः सहस्रश्रुतिरिति। अनुमतिः सिनीवाली सरस्वती कुहू रजनी नन्दा राकेति ॥१०॥

पदच्छेद—तेषु वर्ष अद्रयः नद्यः च सप्त एव अभिज्ञाताः स्वरसः शतशृङ्गः वामदेवः कुन्दः मुकुन्दः पुष्पवर्षः सहस्रश्रुतिः इति । अनुमतिः सिनीवाली सरस्वती कुहू रजनी नन्दा राका इति ॥

शब्दार्थ—

तेषु	१.	इनमें भी	पुष्पवर्षः	१०.	पुष्पवर्ष और
वर्ष-अद्रयः	३.	वर्ष-पर्वत	सहस्रश्रुतिः	११.	सहस्रश्रुति पर्वत हैं
नद्यः	५.	नदियाँ	इति अनुमतिः	१२.	और अनुमति
च	४.	और	सिनीवाली	१३.	सिनी वाली
सप्त एव	२.	सात ही	सरस्वती	१४.	सरस्वती
अभिज्ञाताः	६.	प्रसिद्ध हैं	कुहूः	१५.	कुहू
स्वरसः शतशृङ्गः	७.	स्वरस-शतशृङ्ग	रजनी	१६.	रजनी
वामदेवः कुन्दाः	८.	वामदेव-कुन्द	नन्दा	१७.	नन्दा और
मुकुन्दः ।	९.	मुकुन्द	राका इति ॥	१८.	राका नदियाँ हैं

श्लोकार्थ—इनमें भी सात ही वर्ष-पर्वत और नदियाँ प्रसिद्ध हैं। स्वरस, शतशृङ्ग वामदेव, कुन्द, मुकुन्द, पुष्पवर्ष और सहस्र श्रुति पर्वत हैं। और अनुमति, सिनीवाली, सरस्वती, कुहू, रजनी नन्दा और राका नदियाँ हैं ॥

एकादशः श्लोकः

तद्वर्षपुरुषाः श्रुतधरवीर्यधरवसुन्धरेषन्धरसंज्ञा भगवन्तं वेदमयं सोममात्मानं वेदेन यजन्ते ॥११॥

पदच्छेद—तद् वर्ष पुरुषाः श्रुतधर वीर्यधर वसुन्धर ईषन्धर संज्ञाः भगवन्तम् वेद मयम् सोमम् आत्मानम् वेदेन यजन्ते ॥

शब्दार्थ—

तद्	१. इन		संज्ञा	८. नाम वाले (चार वर्ण)
वर्ष	२. वर्षों में रहने वाले		भगवन्तम्	११. भगवान्
पुरुषाः	३. मनुष्य		वेदमयम्	९. वेदमय
श्रुतधर	४. श्रुतधर		सोमम्	१२. चन्द्रमा की
वीर्यधर	५. वीर्यधर		आत्मानम्	१०. आत्म स्वरूप
वसुन्धर	६. वसुन्धर और		वेदेन	१३. वेद मन्त्रों से
ईषन्धर ।	७. ईषन्धर		यजन्ते ॥	१४. उपासना करते हैं

श्लोकार्थ—इन वर्षों में रहने वाले मनुष्य श्रुतधर, वसुन्धर और ईषन्धर नाम वाले चारवर्ण वेदमय, आत्मस्वरूप, भगवान् चन्द्रमा की वेदमन्त्रों से उपासना करते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

स्वगोभिः पितृदेवेभ्यो विभजन् कृष्णशुक्लयोः ।
प्रजानां सर्वासां राजान्धः सोमो न अस्त्विति ॥१२॥

पदच्छेद— स्व गोभिः पितृ देवेभ्यः विभजन् कृष्ण शुक्लयोः ।
प्रजानाम् सर्वासाम् राजा अन्धः सोमः नः अस्तु इति ॥

शब्दार्थ—

स्व	३. अपनी	प्रजानाम्	९. प्राणियों को (जो)
गोभिः	४. किरणों के द्वारा	सर्वासाम्	८. सम्पूर्ण
पितृ	६. पितर	राजा	१३. राजा
देवेभ्यः	७. देवता और	अन्धः	१०. अन्न देते हैं
विभजन्	५. बाँट करके	सोमः	११. वे चन्द्र देव
कृष्ण	१. कृष्ण पक्ष और	नः	१२. हमारे
शुक्लयोः ।	२. शुक्ल पक्ष में	अस्तु इति ॥	१४. हों

श्लोकार्थ—कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष में अपनी किरणों के द्वारा बाँट करके पितर, देवता और सम्पूर्ण प्राणियों को जो अन्न देते हैं, वे चन्द्रदेव हमारे राजा हों ॥

त्रयोदशः श्लोकः

एवं सुरोदाद्बहिस्तद्द्विगुणः समानेनावृतो घृतोदेन यथापूर्वः कुशद्वीपो यस्मिन् कुशस्तम्बो देवकृतस्तद्द्वीपाख्याकरो ज्वलन इवापरः स्वशष्परोचिषा दिशो विराजयति ॥१३॥

पदच्छेद—एवम् सुरोदाद् बहिः तद् द्विगुणः समानेन आवृतः घृतोदेनयथा पूर्वः कुशद्वीपः यस्मिन् कुशस्तम्बः देवकृतः तद् द्वीपआख्याकरः ज्वलन इव अपरः स्वशष्प रोचिषा दिशः विराजयति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इसी प्रकार	कुशस्तम्बः	१२. कुशों का झाड़ है
सुरोदाद्	२. मदिरा के समुद्र से	देवकृतः	११. भगवान् के द्वारा रचा हुआ
बहिः तद्	३. आगे उससे	तद्-द्वीप	१३. उसी से इस द्वीप का
द्विगुण	४. दुगुने-परिमाण वाले	आख्याकरः	१४. नाम करण हुआ है (वह)
समानेन	६. अपने ही-समान विस्तार वाले	ज्वलन इव	१६. अग्नि देव के समान
आवृतः	८. घिरा हुआ है	अपरः	१५. दूसरे
घृतोदेन	७. घी के समुद्र से	स्वशष्प	१७. अपनी कोमल
यथापूर्वः	५. पूर्वोक्त द्वीपों के समान	रोचिषा	१८. शिखाओं की कान्ति से
कुशद्वीप	९. यह कुश द्वीप है	दिशः	१९. समस्त दिशाओं को
यस्मिन् ।	१०. जिसमें	विराजयति ॥	२०. प्रकाशित करता है

श्लोकार्थ—इसी प्रकार मदिरा के समुद्र से आगे उससे दुगने परिमाण वाले पूर्वोक्त। द्वीपों के समान अपने ही समान विस्तार वाले घी के समुद्र से घिरा हुआ है। यह कुश द्वीप है। जिसमें भगवान् के द्वारा रचा हुआ कुशों का झाड़ है। उसी से इस द्वीप का नामकरण हुआ है। वह दूसरे अग्निदेव के समान अपनी कोमल शिखाओं की कान्ति से समस्त दिशाओं को प्रकाशित करता है।

चतुर्दशः श्लोकः

तद्द्वीपपतिः प्रैयव्रतो राजन् हिरण्यरेता नाम स्वं द्वीपं सप्तभ्यः स्वपुत्रेभ्यो यथाभागं विभज्य स्वयं तप आतिष्ठत वसुवसुदानदृढरुचिनाभिगुप्तस्तुत्यव्रतविविक्तवामदेवनामभ्यः ॥१४॥

पदच्छेद—तद्द्वीप पतिः प्रैयव्रतः राजन् हिरण्यरेताः नाम स्वंद्वीपम् सप्तभ्यः स्व पुत्रेभ्यः यथा भागम् विभज्य स्वयम् तप आतिष्ठत वसु वसुदान दृढरुचि नाभिगुप्त स्तुत्यव्रत विविक्त वामदेव न मभ्यः ॥

शब्दार्थ—

तद्	२.	इस	विभज्य	१८.	बाँट कर
द्वीपपतिः	३.	द्वीप के अधिपति	स्वयम्	१९.	अपने आप
प्रैयव्रतः	४.	प्रियव्रत के पुत्र	तप-आतिष्ठत	२०.	तपस्या करने चले गये
राजन	१.	हे राजन् !	वसु-वसुदान	८.	वसु-वसुदान
हिरण्यरेताः	५.	हिरण्यरेता	दृढरुचि	९.	दृढरुचि
नाम	६.	नाम वाले थे	नाभिगुप्त	१०.	नाभिगुप्त
स्वम्-द्वीपम्	७.	वे अपने द्वीपों को	स्तुत्यव्रत	११.	स्तुत्यव्रत
सप्तभ्यः	१५.	सात	विविक्त	१२.	विविक्त
स्व पुत्रेभ्यः	१६.	अपने पुत्रों में	वामदेव	१३.	वामदेव
यथाभागम् ।	१७.	यथा योग्य	नामभ्यः ॥	१४.	नाम वाले

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस द्वीप के अधिपति प्रियव्रत के पुत्र हिरण्यरेता नाम वाले थे । वे अपने द्वीपों को वसु-वसुदान-दृढरुचि-नाभिगुप्त-स्तुत्यव्रत-विविक्त-वामदेव नाम वाले सात अपने पुत्रों में यथा योग्य बाँट कर अपने आप तपस्या करने चले गये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

तेषां वर्षेषु सीमागिरयो नद्यश्चाभिज्ञाताः सप्त सप्तैव चक्रश्चतुःशृङ्गः कपिलश्चित्रकूटो देवानीक ऊर्ध्वरोमा द्रविण इति रसकुल्या मधुकुल्या मित्रविन्दा श्रुतविन्दा देवगर्भा घृतच्युता मन्त्रमालेति ॥१५॥

पदच्छेद—तेषाम् वर्षेषु सीमा गिरयः नद्यः च अभिज्ञाताः सप्त सप्तैव चक्रः चतुः शृङ्गः कपिलः चित्रकूटः देवानीकः ऊर्ध्वरोमा द्रविणः इति रसकुल्या मधुकुल्या मित्रविन्दा श्रुतविन्दा देवगर्भा घृतच्युता मन्त्र माला इति ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्-वर्षेषु	१. उन वर्षों में		देवानीकः	११. देवानीक
सीमा	२. सीमा को निश्चित करने वाले		ऊर्ध्वरोमा	१२. ऊर्ध्वरोमा और
गिरयः	४. पर्वत		द्रविणः इति	१३. द्रविण ये पर्वत हैं
नद्यः	७. नदियाँ		रसकुल्या	१४. रसकुल्या
च	५. और		मधुकुल्या	१५. मधुकुल्या
अभिज्ञाताः	८. प्रसिद्ध हैं		मित्रविन्दा	१६. मित्रविन्दा
सप्त	३ सात		श्रुतविन्दा	१७. श्रुत विन्दा
सप्तैव	६. सात ही		देवगर्भा	१८. देवगर्भा
चक्रः चतुः शृङ्गः	९. चक्र, चतुः शृङ्ग		घृतच्युता	१९. घृतच्युता
कपिलः चित्रकूटः	१०. कपिल चित्रकूट		मन्त्रमालाइति ॥	२०. मन्त्रमाला ये नदियाँ हैं

श्लोकार्थ—उन वर्षों में सीमा को निश्चित करने वाले सात पर्वत और सात ही नदियाँ प्रसिद्ध हैं । चक्र, चतुः शृङ्ग, कपिल, चित्रकूट, देवानीक, ऊर्ध्वरोमा और द्रविण ये पर्वत हैं । रसकुल्या, मधुकुल्या, मित्रविन्दा श्रुतविन्दा, देवगर्भा, घृतच्युता, मन्त्रमाला, ये नदियाँ हैं ॥

षोडशः श्लोकः

यासां पयोभिः कुशद्वीपौकसः कुशलकोविदाभियुक्तकुलकसंज्ञा भगवन्तं जातवेदसरूपिणं कर्मकौशलेन यजन्ते ॥१६॥

पदच्छेद–यासाम् पयोभिः कुशद्वीप ओकसः कुशल कोविद अभियुक्त कुलक संज्ञाः भगवन्तम् जातवेद सरूपिणम् कर्म कौशलेन यजन्ते ॥

शब्दार्थ—

यासाम्	१.	जिनके	कुलक	९.	कुलक
पयोभिः	२.	जल में स्नान करके	संज्ञा	१०.	वर्ण के पुरुष
कुश	३.	कुश	भगवन्तम्	१३.	भगवान् श्री हरि का
द्वीप	४.	द्वीप	जातवेद	११.	अग्नि
ओकसः	५.	वासी	सरूपिणम्	१२.	स्वरूप
कुशल	६.	कुशल	कर्म	१४.	कर्म
कोविद	७.	कोविद	कौशलेन	१५.	कौशल के द्वारा
अभियुक्त।	८.	अभियुक्त और	यजन्ते ॥	१६.	पूजन करते हैं

श्लोकार्थ—जिनके जल में स्नान करके कुशद्वीपवासी कुशल, कोविद, अभियुक्त और कुलक वर्ण के पुरुष अग्नि स्वरूप भगवान् श्री हरि का कर्म-कौशल के द्वारा पूजन करते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

परस्य ब्रह्मणः साक्षाज्जातवेदोऽसि हव्यवाट् ।
देवानां पुरुषाङ्गानां यज्ञेन पुरुषं यजेति ॥१७॥

पदच्छेद— परस्य ब्रह्मणः साक्षात् जातवेदः असि हव्यवाट् ।
देवानाम् पुरुष अङ्गानाम् यज्ञेन पुरुषम् यजेति ॥

शब्दार्थ—

परस्य	२.	पर	देवानाम्	९.	देवताओं के
ब्रह्मणः	३.	ब्रह्म को	पुरुष	७.	भगवान् के
साक्षात्	४.	साक्षात्	अङ्गानाम्	८.	अङ्गभूत
जातवेदः	१.	हे अग्निदेव ! आप	यज्ञेन	१०.	यजन द्वारा
असि	६.	हैं (अतः)	पुरुषम्	११.	आप परम पुरुष का
हव्यवाट्।	५.	हवि पहुँचाने वाले	यजेति ॥	१२.	यजन करें

श्लोकार्थ—हे अग्नि देव ! आप पर ब्रह्म को साक्षात् हवि पहुँचाने वाले हैं। अतः भगवान् के अङ्गभूत देवताओं के यजन द्वारा आप परम पुरुष का यजन करें ॥

अष्टादशः श्लोकः

तथा घृतोदाद्बहिः क्रौञ्चद्वीपो द्विगुणः स्वमानेन क्षीरोदेन परित उपक्लृप्तो वृतो यथा कुशद्वीपो घृतोदेन यस्मिन् क्रौञ्चो नाम पर्वतराजो द्वीपनामनिर्वर्तक आस्ते ॥१८॥

पदच्छेद—तथा घृतोदात् बहिः क्रौञ्च द्वीपः द्विगुणः स्व मानेन क्षीरोदेन परितः उपक्लृप्तः वृतः यथा कुशद्वीपः घृतोदेन यस्मिन् क्रौञ्चः नाम पर्वत राजः द्वीप नाम निर्वर्तक आस्ते ॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	इसी प्रकार	यथा	१२.	समान
घृतोदात्	२.	घी के समुद्र से	कुशद्वीपः	११.	कुशद्वीप के
बहिः	३.	आगे (उससे)	घृतोदेन	९.	घी के समुद्र से
क्रौञ्चद्वीपः	१३.	क्रौञ्चद्वीप है	यस्मिन्	१४	जिसमें
द्विगुण	४.	दूने परिमाण वाला	क्रौञ्चः	१५.	क्रौञ्च
स्वमानेन	५.	अपने ही परिमाण वाले	नाम	१६.	नाम का
क्षीरोदेन	६.	दूध के समुद्र से	पर्वतराजः	१७.	बहुत बड़ा पर्वत है
परितः	७.	चारों ओर से	द्वीपनाम	१८.	जो द्वीप के नाम करण का
उपक्लृप्तः	८.	युक्त तथा	निर्वर्तकः	१९.	कारण
वृतः।	१०.	घिरे हुये	आस्ते ॥	२०.	है

श्लोकार्थ—इसी प्रकार घी के समुद्र से आगे उससे दूने परिमाण वाला अपने ही परिमाण वाले दूध के समुद्र से चारों ओर से युक्त तथा घी के समुद्र से घिरे हुये कुशद्वीप के समान क्रौञ्चद्वीप है। जिसमें क्रौञ्च नाम का बहुत बड़ा पर्वत है। जो द्वीप के नाम करण का कारण है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

योऽसौ गुहप्रहरणोन्मथितनितम्बकुञ्जोऽपि क्षीरोदेनासिच्यमानो भगवता वरुणेनाभिगुप्तो विभयो बभूव ॥१९॥

पदच्छेद—यः असौ गुह प्रहरण उन्मथित नितम्ब कुञ्जः अपि क्षीरोदेन आसिच्यमानः भगवता वरुणेन अभिगुप्तः विभयः बभूव ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	क्षीरोदेन	८.	दूध के समुद्र से
असौ	२.	यह द्वीप है (वह)	आसिच्यमानः	९.	सींचे जाने पर (तथा)
गुह	३.	स्वामी कार्तिकेय जी के	भगवता	१०.	भगवान्
प्रहरण	४.	शस्त्र के प्रहार से	वरुणेन	११.	वरुणदेव से
उन्मथित	५.	क्षत-विक्षत	अभिगुप्तः	१२.	सुरक्षित होकर
नितम्ब	६.	कटि प्रदेश (और)	विभयः	१३.	निर्भय
कुञ्जः अपि।		लता-कुञ्जावाला होने पर भी	बभूव ॥	१४.	हो गया

श्लोकार्थ—जो यह द्वीप है, वह स्वामी कार्तिकेय जी के शस्त्र के प्रहार से क्षतविक्षत कटि प्रदेश और लता कुञ्जवाला होने पर भी दूध के समुद्र से सींचे जाने पर तथा भगवान् वरुणदेव से सुरक्षित होकर निर्भय हो गया ॥

विंशः श्लोकः

तस्मिन्नपि प्रैयव्रतः घृतपृष्ठो नामाधिपतिः स्वे द्वीपे वर्षाणि सप्त विभज्य तेषु पुत्रनामसु सप्त रिक्थादान् वर्षपान्निवेश्य स्वयं भगवान् भगवतः परमकल्याणयशस आत्मभूतस्य हरेश्चरणारविन्दमुपजगाम ॥२०॥

पदच्छेद--तस्मिन् अपि प्रैयव्रतः घृतपृष्ठः नाम अधिपतिः स्वे द्वीपे वर्षाणि सप्त विभज्य तेषु पुत्र नामसु सप्त रिक्थादान् वर्षपान् निवेश्य स्वयम् भगवान् भगवतः परमकल्याण यशसः आत्म भूतस्य हरेः चरणारविन्दम् उपजगाम ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१.	इस द्वीप में	सप्त	१६.	सात
अपि	२.	भी	रिक्थादान्	१७.	उत्तराधिकारी
प्रैयव्रतः	३.	प्रियव्रत के पुत्र	वर्षपान्	१५.	वर्षप आदि
घृतपृष्ठः	४.	घृतपृष्ठ	निवेश्य	१८.	नियुक्त करके
नाम	५.	नाम के	स्वयम्	१६.	अपने आप
अधिपतिः	६.	अधिपति थे	भगवान्	२०.	ऐश्वर्यशाली
स्वे	७.	वे इस	भगवतः	२६.	भगवान्
द्वीपे	८.	द्वीप को	परम	२१.	परम
वर्षाणि	१०.	वर्षों में	कल्याण	२२.	मङ्गलमय
सप्त	६.	सात	यशसः	२३.	कीर्तिशाली
विभज्य	११.	बांटकर	आत्म	२५.	अन्तरात्मा
तेषु	१२.	उसमें	भूतस्य	२४.	जीवों के
पुत्र	१३.	पुत्रों के	हरेः	२७.	श्री हरि के
नामसु	१४.	नाम वाले	चरणारविन्दम् ।	२८.	चरण कमलों में
			उपजगाम ॥	२६.	चले गये

श्लोकार्थ—इस द्वीप में भी प्रियव्रत के पुत्र घृतपृष्ठ नाम के अधिपति थे। वे इस द्वीप को सात वर्षों में बांट कर उसमें पुत्रों के नाम वाले वर्षप आदि सात उत्तराधिकारी नियुक्त करके अपने आप ऐश्वर्यशाली, परम मङ्गलमय, कीर्तिशाली जीवों के अन्तरात्मा भगवान् श्री हरि के चरण कमलों में चले गये ॥

एकविंशः श्लोकः

आमो मधुरुहो मेघपृष्ठः सुधामा भ्राजिष्ठो लोहितार्णो वनस्पतिरिति घृतपृष्ठसुतास्तेषां वर्षगिरयः सप्त सप्तैव नद्यश्चाभिख्याताः शुक्लो वर्धमानो भोजन उपबर्हिणो नन्दो नन्दनः सर्वतोभद्र इति अभया अमृतौघा आर्यका तीर्थवती वृत्तिरूपवती पवित्रवती शुक्लेति ॥२१॥

पदच्छेद—आमः मधुरुहः मेघपृष्ठः सुधामा भ्राजिष्ठः लोहितार्णः वनस्पतिः इति घृतपृष्ठ सुताः तेषाम् वर्ष गिरयः सप्त सप्तैव नद्यः च अभिख्याताः शुक्लः वर्धमानः भोजनः उपबर्हिणः नन्दः नन्दनः सर्वतोभद्र इति अभया अमृतौघा आर्यका तीर्थवती वृत्तिः रूपवती पवित्रवती शुक्लेति ॥

शब्दार्थ—

आमः	१.	आम	अभिख्याताः	१८.	प्रसिद्ध हैं
मधुरुहः	२.	मधुरुह	शुक्लः	१९.	शुक्ल
मेघपृष्ठः	३.	मेघपृष्ठ	वर्धमानः	२०.	वर्धमान
सुधामा	४.	सुधामा	भोजनः	२१.	भोजन
भ्राजिष्ठः	५.	भ्राजिष्ठ	उपबर्हिणः	२२.	उपबर्हिण
लोहितार्णः	६.	लोहितार्ण और	नन्दः	२३.	नन्द
वनस्पतिः	७.	वनस्पति	नन्दनः	२४.	नन्दन
इति	८.	ये	सर्वतोभद्रः	२५.	सर्वतोभद्र
घृतपृष्ठ	९.	महाराज घृतपृष्ठ के	इति	२६.	ये पर्वत हैं
सुताः	१०.	पुत्र थे	अभया	२७.	अभया
तेषाम्	११.	उनके वर्षों में	अमृतौघा	२८.	अमृतौघा
वर्ष	१३.	वर्ष	आर्यका	२९.	आर्यका
गिरयः	१४.	पर्वत	तीर्थवती	३०.	तीर्थवती
सप्त	१२.	सात	वृत्ति	३१.	वृत्ति
सप्तैव	१६.	सात ही	रूपवती,	३२.	रूपवती
नद्यः	१७.	नदियाँ	पवित्रवती	३३.	पवित्रवती
च ।	१५.	और	शुक्लेति ॥	३४.	शुक्ला, ये नदियां हैं

श्लोकार्थ—आम, मधुरुह, मेघपृष्ठ सुधामा, भ्राजिष्ठ, लोहितार्ण और वनस्पति ये महाराज घृतपृष्ठ के पुत्र थे। उनके वर्षों में सात वर्ष पर्वत और सात ही नदियां प्रसिद्ध हैं। शुक्ल, वर्धमान, भोजन, उपबर्हिण, नन्द, नन्दन, सर्वतोभद्र, ये पर्वत हैं। अभया, अमृतौघा, आर्यका, तीर्थवती, वृत्ति, पवित्रवती, शुक्ला, ये नदियां हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यासामम्भः पवित्रममलमुपयुञ्जानाः पुरुषऋषभद्रविणदेवकसंज्ञा वर्ष-पुरुषा आपोमयं देवमपां पूर्णेनाञ्जलिना यजन्ते ॥२२॥

पदच्छेद—यासाम् अम्भः पवित्रम् अमलम् उपयुञ्जानाः पुरुष ऋषभ द्रविण देवक संज्ञाः वर्ष पुरुषाः आपोमयम् देवम् अपाम् पूर्णेन अञ्जलिना यजन्ते ॥

शब्दार्थ—

यासाम्	१.	जिनके	संज्ञाः	१०.	नाम वाले
अम्भः	४.	जल का	वर्ष	११.	उस वर्ष के
पवित्रम्	२.	पवित्र और	पुरुषाः	१२.	निवासी
अमलम्	३.	निर्मल	आपोमयम्	१३.	जल से युक्त
उपयुञ्जानाः	५.	सेवन करने वाले	देवम्	१७.	देवता की
पुरुष	६.	पुरुष	अपाम्	१६.	जल के
ऋषभ	७.	ऋषभ	पूर्णेन	१४.	भरी हुई
द्रविण	८.	द्रविण और	अञ्जिलना	१५.	अञ्जिलियों के द्वारा
देवक।	९.	देवक	यजन्ते ॥	१८.	उपासना करते हैं

श्लोकार्थ—जिनके पवित्र और निर्मल जल का सेवन करने वाले पुरुष ऋषभ, द्रविण और देवक नाम वाले उस वर्ष के निवासी जल से युक्त भरी हुई अञ्जिलियों के द्वारा जल के देवता की उपासना करते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

आपः पुरुषवीर्याः स्थ पुनन्तीर्भूर्भुवः सुवः ।
ता नः पुनीतामीवघ्नीः स्पृशतामात्मना भुव इति ॥२३॥

पदच्छेद— आपः पुरुष वीर्याः स्थ पुनन्तीः भूर्भुवः सुवः ।
ताः नः पुनीत अमीवघ्नीः स्पृशताम् आत्मना भुवः इति ॥

शब्दार्थ—

आपः	१.	हे जल के देवता !	ताः नः	१३.	ऐसे हमें
पुरुष	२.	तुम्हें परमात्मा से	पुनीत	१४.	पवित्र करो
वीर्याः	३.	सामर्थ्य प्राप्त	अमीवघ्नीः	११.	पापों का नाश करने वाले
स्थ	४.	होवे	स्पृशताम्	१२.	तुम्हारा स्पर्श करने वाले
पुनन्तीः	७.	पवित्र करने वाले हो	आत्मना	१०.	स्वरूप से ही
भूर्भुवः	५.	तुम भू-भुव-और	भुवः	८.	अपने शरीर
सुव।	६.	सुवः नाम वाले तीनों लोकों को इति ॥		९.	से और

श्लोकार्थ—हे जल के देवता ! तुम्हें परमात्मा से सामर्थ्य प्राप्त होवे । तुम भूः भुवः और स्वः नाम वाले तीनों लोकों को पवित्र करने वाले हो । ८ । शरीर से और स्वरूप से ही पापों का नाश करने, वाले तुम्हारा स्पर्श करने वाले ऐसे हमें पवित्र करो ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवं पुरस्तात्क्षीरोदात्परित उपवेशितः शाकद्वीपो द्वात्रिंशल्लक्ष-योजनायामः समानेन च दधिमण्डोदेन परीतो यस्मिन् शाको नाम महीरुहः स्वक्षेत्रव्यपदेशको यस्य ह महासुरभिगन्धस्तं द्वीपमनुवासयति ॥२४॥

पदच्छेद—एवम् पुरस्तात् क्षीरोदात् परितः उपवेशितः शाकद्वीपः द्वात्रिंशत् लक्षयोजन आयामः समानेन च दधि मण्डउदेन परीतः यस्मिन् शाकः नाम महीरुहः स्व क्षेत्र व्यपदेशकः यस्य ह महा सुरभि गन्धः तम् द्वीपम् अनुवासयति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इसी प्रकार	परीतः	१४.	घिरा हुआ है
पुरस्तात्	३.	आगे	यस्मिन्	१५.	जिसमें
क्षीरोदात्	२.	क्षीर समुद्र से	शाकः	१६.	शाक
परितः	४.	उसके चारों ओर	नाम	१७	नाम का
उपवेशितः	५.	घिरा हुआ	महीरुहः	१८.	एक वृक्ष है
शाकद्वीपः	९.	शाकद्वीप है	स्वक्षेत्र	१९.	जो इस क्षेत्र के
द्वात्रिंशत्	६.	बत्तीस	व्यपदेशकः	२०.	नाम करण का कारण है
लक्षयोजन	७.	लाख योजन	यस्य ह	२१.	जिसकी
आयामः	८.	विस्तार वाला	महासुरभि	२२.	अत्यन्त मनोहर
समानेन	१०.	जो अपने ही समान परिमाण वाले	गन्धः	२३.	सुगन्ध से
च	१२.	और	तम्	२४.	वह
दधि	११.	दही	द्वीपम्	२५.	द्वीप
मण्डउदेन ।	१३.	मट्ठे के समुद्र से	अनुवासयति ॥	२६.	महकता रहता है

श्लोकार्थ—इसी प्रकार क्षीर समुद्र से आगे इसके चारों ओर घिरा हुआ बत्तीस लाख योजन विस्तार वाला शाकद्वीप है, जो अपने ही समान विस्तार वाले दही और मट्ठे के समुद्र से घिरा हुआ है। जिसमें शाक नाम का एक वृक्ष है। जो इस क्षेत्र के नाम करण का कारण है। जिसकी सुगन्ध से वह द्वीप महकता रहता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

तस्यापि प्रैयव्रत एवाधिपतिर्नाम्ना मेधातिथिः सोऽपि विभज्य सप्त वर्षाणि पुत्रनामानि तेषु स्वात्मजान् पुरोजवमनोजवपवमानधूम्रानीकचित्ररेफ-बहुरूपविश्वधारसंज्ञान्निधाप्याधिपतीन् स्वयं भगवत्यनन्त आवेशितमतिस्त-पोवनं प्रविवेश ॥२५॥

पदच्छेद—तस्य अपि प्रैयव्रत एव अधिपतिः नाम्ना मेधातिथिः सः अपि विभज्य सप्त वर्षाणि पुत्र नामानि तेषु स्व आत्मजान् पुरोजव मनोजव पवमान धूम्रानीक चित्ररेफ बहुरूप विश्वधार संज्ञान् निधाप्य अधिपतीन् स्वयम् भगवति अनन्त आवेशित मतिः तपोवनम् प्रविवेश ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	उस द्वीप के	पुरोजव	१७.	पुरोजव
अपि	२.	भी	मनोजव	१८.	मनोजव
प्रैयव्रत	४.	प्रियव्रत के पुत्र	पवमान	१९.	पवमान
एव	७.	ही थे	धूम्रानीक	२०.	धूम्रानीक
अधिपतिः	३.	अधिपति	चित्ररेफ	२१.	चित्ररेफ
नाम्ना	६.	नामक	बहुरूप	२२.	बहुरूप
मेधातिथिः	५.	मेधातिथि	विश्वधार	२३.	विश्वधार
सः	८.	उन्होंने	संज्ञान्	२४.	नाम वाले
अपि	९.	भी (द्वीप को)	निधाप्य	२७.	नियुक्त करके
विभज्य	१२.	बांट कर	अधिपतीन्	२६.	अधिपति रूप से
सप्त	१०.	सात	स्वयम्	२८.	स्वयम्
वर्षाणि	११.	वर्षों में	भगवति	२९.	भगवान्
पुत्र	१४.	पुत्रों के	अनन्त	३०.	अनन्त में
नामानि	१५.	नाम वाले	आवेशित	३२.	लगाकर
तेषु	१६.	उनमें	मतिः	३१.	मन को
स्व	१३.	अपने	तपोवनम्	३३.	तपोवन को
आत्मजान्	२५.	अपने पुत्रों को	प्रविवेश ॥	३४.	चले गये

श्लोकार्थ—उस द्वीप के भी अधिपति प्रियव्रत के पुत्र मेधातिथि ही थे। उन्होंने भी द्वीप को सात वर्षों में बांट कर अपने पुत्रों के नाम वाले उनमें पुरोजव, मनोजव, पवमान, धूम्रानीक, चित्ररेफ बहुरूप, विश्वधार नाम वाले अपने पुत्रों को अधिपति रूप से नियुक्त करके स्वयम् भगवान अनन्त में मन को लगाकर तपोवन को चले गये ॥

षड्विंशः श्लोकः

एतेषां वर्षमर्यादागिरयो नद्यश्च सप्त सप्तैव ईशान उरुशृङ्गो बलभद्रः शतकेसरः सहस्रस्रोतो देवपालो महानस इति अनघाऽऽयुर्दा उभयस्पृष्टिरपराजिता पञ्चपदी सहस्रस्रुतिर्निजधृतिरिति ॥२६॥

पदच्छेद—एतेषाम् वर्ष मर्यादा गिरयः नद्यः च सप्त सप्तैव ईशान उरुशृङ्गः बलभद्रः शतकेसरः सहस्रस्रोतः देवपालः महानस इति अनघा आयुर्दा उभय स्पृष्टिः अपराजिता पञ्चपदी सहस्रस्रुतिः निजधृतिः इति ॥

शब्दार्थ—

एतेषाम्	१.	इन	देवपालः	१४.	देवपाल और
वर्ष	२.	वर्षों में	महानस	१५.	महानस
मर्यादा	४.	मर्यादा	इति	१६.	ये पर्वत हैं
गिरयः	५.	पर्वत	अनघा	१७.	अनघा
नद्यः	८.	नदियाँ हैं	आयुर्दा	१८.	अयुर्दा
च	६.	और	उभय-	१९.	उभय-
सप्त	३.	सात	स्पृष्टिः	२०.	स्पृष्टि
सप्तैव	७.	सात ही	अपराजिता	२१.	अपराजिता
ईशानः	९.	ईशान	पञ्चपदी	२२.	पञ्चपदी
उरुशृङ्गः	१०.	उरुशृङ्ग	सहस्रस्रुतिः	२३.	सहस्रस्रुति और
बलभद्रः	११.	बलभद्र	निजधृति	२४.	निजधृति
शतकेसरः	१२.	शतकेसर	इति ।	२५.	ये नदियाँ हैं
सहस्रस्रोतः ॥	१३.	सहस्रस्रोत			

श्लोकार्थ—इन वर्षों में सात मर्यादा पर्वत और सात ही नदियाँ हैं। ईशान, उरुशृङ्ग, बलभद्र, शतकेसर, सहस्रस्रोत, देवपाल और महानस ये पर्वत हैं। अनघा, आयुर्दा, उभयस्पृष्टि, अपराजिता, पञ्चपदी, सहस्रस्रुति और निजधृति ये नदियाँ हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तद्वर्षपुरुषा ऋतव्रतसत्यव्रतदानव्रतानुव्रतनामानो भगवन्तं वाय्वात्मकं प्राणायामविधूतरजस्तमसः परमसमाधिना यजन्ते ॥२७॥

पदच्छेद—तद्वर्ष पुरुषाः ऋतव्रत सत्यव्रत दानव्रत अनुव्रत नामानः भगवन्तम् वायु आत्मकम् प्राणायाम विधूत रजः तमसः परम समाधिना यजन्ते ॥

शब्दार्थ—

तद्	६.	उस	वायु	१५.	वायु
वर्ष	७	वर्ष के	आत्मकम्	१६.	स्वरूप
पुरुषाः	८.	पुरुष	प्राणायाम	९.	प्राणायाम के द्वारा
ऋतव्रत	१.	ऋतव्रत	विधूत	१२.	क्षीण करके
सत्यव्रत	२.	सत्यव्रत	रजः	१०.	रजोगुण और
दानव्रत	३.	दानव्रत और	तमसः	११.	तमोगुण
अनुव्रत	४.	अनुव्रत	परम	१३.	महान्
नामानः	५.	नामक	समाधिना	१४.	समाधि के द्वारा
भगवन्तम् ।	१७.	भगवान् की	यजन्ते ॥	१८.	उपासना करते हैं

श्लोकार्थ—ऋतव्रत, सत्यव्रत, दानव्रत और अनुव्रत नामक उस वर्ष के पुरुष प्राणायाम के द्वारा रजोगुण और तमोगुण को क्षीण करके महान् समाधि के द्वारा वायु स्वरूप भगवान् की उपासना करते हैं ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

अन्तः प्रविश्य भूतानि यो बिभर्त्यात्मकेतुभिः ।
अन्तर्यामीश्वरः साक्षात्पातु नो यद्वशे स्फुटम् ॥२८॥

पदच्छेद— अन्तः प्रविश्य भूतानि यः बिभर्ति आत्मकेतुभिः ।
अन्तर्यामी ईश्वरः साक्षात् पातु नः यद् वशे स्फुटम् ॥

शब्दार्थ—

अन्तः	५.	अन्दर	अन्तर्यामी	११.	अन्तर्यामी वायु
प्रविश्य	६.	प्रवेश करके	ईश्वरः	१२.	भगवान्
भूतानि	४.	प्राणियों के	साक्षात्	१०.	वे साक्षात्
यः	१.	जो (प्राणादि वृत्तिरूप)	पातु	१४.	रक्षा करें
बिभर्ति	७.	उनका पालन करते हैं	नः	१३.	हमारी
आत्म	२.	अपनी	यद् वशे	९.	जिनके अधीन है
केतुभिः ।	३.	ध्वजाओं के सहित	स्फुटम् ॥	८.	सम्पूर्ण संसार

श्लोकार्थ—जो प्राणादि वृत्तिरूप अपनी ध्वजाओं के सहित प्राणियों के अन्दर प्रवेश करके उनका पालन करते हैं, सम्पूर्ण संसार जिनके अधीन है, वे साक्षात् अन्तर्यामी वायु भगवान् हमारी रक्षा करें ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

एवमेव दधिमण्डोदात्परतः पुष्करद्वीपस्ततो द्विगुणायामः समन्ततः उपकल्पितः समानेन स्वादूदकेन समुद्रेण बहिरावृतो यस्मिन् बृहत्पुष्करं ज्वलनशिखामलकनकपत्रायुतायुतं भगवतः कमलासनस्याध्यासनं परिकल्पितम् ॥२६॥

पदच्छेद- एवम् एव दधि मण्डोदात् परतः पुष्कर द्वीपः ततः द्विगुण आयामः समन्ततः उपकल्पितः समानेन स्वादु उदकेन समुद्रेण बहिः आवृतः यस्मिन् बृहत् पुष्करम् ज्वलन शिखा अमल कनक पत्र अयुत अयुतम् भगवतः कमलासनस्य अध्यासनम् परिकल्पितम् ॥

शब्दार्थ—

एवम् एव	१.	इसी प्रकार	बहिः	१६.	बाहर से
दधि	२.	दही	आवृतः	१७.	घिरा है
मण्डोदात्	३.	समुद्र से	यस्मिन्	१८.	जिसमें
परतः	४.	आगे	बृहत्	२५.	बहुत बड़ा
पुष्कर	८.	पुष्कर	पुष्करम्	२६.	कमल है
द्वीपः	९.	द्वीप है	ज्वलन	१९.	अग्नि की
ततः	५.	उससे	शिखा	२०.	शिखा के समान
द्विगुण	६.	दुगने	अमल	२१.	निर्मल
आयामः	७.	विस्तार वाला	कनक पत्र	२३.	स्वर्णमय पंखुड़ियों से
समन्ततः	१०.	वह चारों ओर से	अयुत	२४.	युक्त
उपकल्पितः	१२.	विस्तृत	अयुतम्	२२.	लाखों
समानेन	११.	अपने ही समान	भगवतः	२७.	(जो) भगवान्
स्वादु	१३.	मीठे	कमलासनस्य	२८.	ब्रह्मा जी का
उदकेन	१४.	जल के	अध्यासनम्	२९.	आसन
समुद्रेण ।	१५.	समुद्र से	परिकल्पितम् ॥	३०.	माना जाता है

श्लोकार्थ—इसी प्रकार दही के समुद्र से आगे उससे दुगने विस्तार वाला पुष्कर द्वीप है। वह चारों ओर से अपने ही समान विस्तृत मीठे जल के समुद्र से बाहर से घिरा है। जिसमें अग्नि की शिखा के समान निर्मल लाखों स्वर्णमय पंखुड़ियों से युक्त बहुत बड़ा कमल है! जो भगवान् ब्रह्मा जी का आसन माना जाता है॥

त्रिंशः श्लोकः

तद्द्वीपमध्ये मानसोत्तरनामैक एवार्वाचीनपराचीनवर्षयोर्मर्यादाचलोऽयुतयोजनोच्छ्रायायामो यत्र तु चतसृषु दिक्षु चत्वारि पुराणि लोकपालानामिन्द्रादीनां यदुपरिष्टात्सूर्यरथस्य मेरुं परिभ्रमतः संवत्सरात्मकं चक्रं देवानामहोरात्राभ्यां परिभ्रमति ॥३०॥

पदच्छेद—तद् द्वीप मध्ये मानसोत्तर नाम एक एव अर्वाचीन पराचीन वर्षयोः मर्यादा अचलः अयुत योजन उच्छ्राय आयामः यत्र तु चतसृषु दिक्षु चत्वारि पुराणि लोकपालानाम् इन्द्रादीनाम् यद् उपरिष्टात् सूर्यरथस्य मेरुम् परिभ्रमतः संवत्सर आत्मकम् चक्रम् देवानाम् अहोरात्राभ्याम् परिभ्रमति ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	उस	दिक्षु	१८.	दिशाओं में
द्वीप	२.	द्वीप के	चत्वारि	२१.	चार
मध्ये	३.	बीचों-बीच (उसके)	पुराणि	२२.	पुरियाँ हैं
मानसोत्तर	१२.	मानसोत्तर	लोकपालानाम्	२०.	लोक पालों की
नाम एक	१३.	नाम का एक	इन्द्रादीनाम्	१९.	इन्द्र इत्यादि
एव	१४.	ही	यद्	२३.	जिसके
अर्वाचीन	४.	पूर्वीय और	उपरिष्टात्	२४.	ऊपर
पराचीन	५.	पश्चिमीय	सूर्य	२७.	सूर्य के
वर्षयोः	६.	वर्षों को	रथस्य	२८.	रथ का
मर्यादा	७.	बांटने वाला	मेरुम्	२५.	मेरु पर्वत के
अचलः	१५.	पर्वत है	परिभ्रमतः	२६.	चारों ओर घूमने वाला
अयुत	८.	दस हजार	संवत्सर	२९.	संवत्सर
योजन	९.	योजन	आत्मकम्	३०.	रूप का
उच्छ्राय	१०.	ऊँचा और	चक्रम्	३१.	पहिया
आयामः	११.	उतना ही लम्बा	देवानाम्	३२.	देवताओं के
यत्र तु	१६.	इसके	अहोरात्राभ्याम्	३३.	दिन और रात के क्रम से
चतसृषु ।	१७.	चारों	परिभ्रमति ॥	३४.	घूमता है

श्लोकार्थ—उस द्वीप के बीचों-बीच उसके पूर्वीय और पश्चिमीय वर्षों को बांटने वाला दस हजार योजन ऊँचा और उतना ही लम्बा मानसोत्तर नाम का एक ही पर्वत है। इसके चारों दिशाओं में इन्द्र इत्यादि लोक पालों की चारों पुरियाँ हैं। जिसके ऊपर मेरु पर्वत के चारों ओर घूमने वाला सूर्य के रथ का संवत्सर रूप का पहिया देवताओं के दिन और रात के क्रम से घूमता है ॥

एकत्रिंश श्लोकः

तद्द्वीपस्याप्यधिपतिः प्रैयव्रतो वीतिहोत्रो नामैतस्यात्मजौ रमणकधातकिनामानौ वर्षपती नियुज्य स स्वयं पूर्वजवद्भगवत्कर्मशील एवास्ते ॥३१॥

पदच्छेद—तद् द्वीपस्य अपि अधिपतिः प्रैयव्रतः वीतिहोत्रः नाम एतस्य आत्मजौ रमणक घातकि नामानौ वर्षपती नियुज्य सः स्वयम् पूर्वजवद् भगवत् कर्मशीलः एव आस्ते ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	उस	नामानौ	१०.	नाम वालों को
द्वीपस्य	२.	द्वीप का	वर्षपती	११.	दोनों वर्षों का अधिपति
अपि	१२.	भी	नियुज्य	१३.	बनाकर
अधिपतिः	३.	अधिपति	सः स्वयम्	१४.	वह भी स्वयम्
प्रैयव्रतः	४.	प्रियव्रत का	पूर्वजवद्	१५.	अपने पूर्वजों के समान
वीतिहोत्रः	५.	वीतिहोत्र	भगवत्	१६.	भगवान् की
नाम एतस्य	६.	नामक अपने	कर्म	१७.	सेवा में
आत्मजौ	७.	पुत्र	शील	१८.	तत्पर
रमणक	८.	रमणक और	एव	१९.	ही
घातकि।	९.	घातकि	आस्ते ॥	२०.	रहने लगे

श्लोकार्थ—उस द्वीप का अधिपति प्रियव्रत का पुत्र वीतिहोत्र नामक अपने पुत्र रमणक और घातकि नाम वालों को भी दोनों वर्षों का अधिपति बनाकर वह भी स्वयम् अपने पूर्वजों के समान भगवान् की सेवा में तत्पर रहने लगे ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

तद्वर्षपुरुषा भगवन्तं ब्रह्मरूपिणं सकर्मकेण कर्मणाऽऽराधयन्तीदं चोदाहरन्ति ॥३२॥

पदच्छेद—तद्वर्ष पुरुषाः भगवन्तम् ब्रह्मरूपिणम् सकर्मकेण कर्मणा आराधयन्ति इदम् च उदाहरन्ति ॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	उस	सकर्मकेण	७.	सकाम
वर्ष	२.	वर्ष के	कर्मणा	८.	कर्मों के द्वारा
पुरुषाः	३.	पुरुष भी	आराधयन्ति	९.	आराधना करते हैं
भगवन्तम्	६.	भगवान् की	इदम्	११.	इस प्रकार
ब्रह्म	४.	ब्रह्मा	च	१०.	और
रूपिणम्।	५.	रूप	उदाहरन्ति ॥	१२.	स्तुति करते हैं

श्लोकार्थ—उस वर्ष के पुरुष भी ब्रह्मारूप भगवान् को सकाम कर्मों के द्वारा आराधना करते हैं और इस प्रकार स्तुति करते हैं ॥

त्रयस्त्रिंश श्लोकः

यत्तत्कर्ममयं लिङ्गं ब्रह्मलिङ्गं जनोऽर्चयेत् ।
एकान्तमद्वयं शान्तं तस्मै भगवते नम इति ॥३३॥

पदच्छेद—

यत् तत् कर्म मयम् लिङ्गम् ब्रह्म लिङ्गम् जनः अर्चयेत् ।
एकान्तम् अद्वयम् शान्तम् तस्मै भगवते नम इति ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	यह	अर्चयेत् ।	८.	पूजा करते हैं
तत्	२.	जो	एकान्तम्	९.	ब्रह्मज्ञान के साधन रूप
कर्म	३.	कर्म	अद्वयम्	१०.	अद्वितीय
मयम्	४.	फलरूप	शान्तम्	११.	शान्त स्वरूप
लिङ्गम्	५.	साधन के द्वारा	तस्मै	१२.	ऐसे
ब्रह्मलिङ्गम्	७.	परमेश्वर की	भगवते	१३.	भगवान् को
जनः	६.	लोग	नम इति ॥	१४.	नमस्कार है

श्लोकार्थ— यह जो कर्मफलरूप साधन के द्वारा लोग परमेश्वर की पूजा करते हैं । ब्रह्मज्ञान के साधन रूप अद्वितीय शान्त स्वरूप ऐसे भगवान् को नमस्कार है ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ऋषिरुवाच—ततः परस्ताल्लोकालोकनामाचलो लोकालोकयोरन्तराले परित उपक्षिप्तः ॥३४॥

पदच्छेद—

ततः परस्तात् लोकालोक नाम अचलः लोक आलोकयोः अन्तराले परितः उपक्षिप्तः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इसके	लोक	७.	प्रकाशित और
परस्तात्	२.	आगे	आलोकयोः	८.	अप्रकाशित प्रदेशों के
लोकालोक	३.	लोकालोक	अन्तराले	९.	बीच में
नाम	४.	नाम का	परितः	६.	पृथ्वी के चारों ओर
अचलः	५.	पर्वत है (जो)	उपक्षिप्तः ॥	१०.	स्थित है

श्लोकार्थ—इसके आगे लोकालोक पर्वत है, जो पृथ्वी के चारों ओर प्रकाशित और अप्रकाशित प्रदेशों के बीच में स्थित है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोक

यावन्मानसोत्तरमेर्वोरन्तरं तावती भूमिः काञ्चन्यन्याऽऽदर्शतलोपमा यस्यां प्रहितः पदार्थो न कथञ्चित्पुनः प्रत्युपलभ्यते तस्मात्सर्वसत्त्वपरिहृताऽऽसीत् ॥३५॥

पदच्छेद—यावत् मानसोत्तर मेरोः अन्तरम् तावती भूमिः काञ्चनी अन्या आदर्शतल उपमा यस्याम् प्रहितः पदार्थः न कथञ्चित् पुनः प्रत्युपलभ्यते तस्मात् सर्वसत्त्व परिहृता आसीत् ॥

शब्दार्थ—

यावत्	३.	जितना	प्रहित	१२.	गिरी हुई
मानसोत्तर	२.	मानसोत्तर पर्वत तक	पदार्थः	१३.	कोई वस्तु
मेरोः	१.	मेरु से लेकर	न	१६.	नहीं
अन्तरम्	४.	अन्तर है	कथञ्चित्	१४.	किसी भी प्रकार
तावती	५.	उतनी ही	पुनः	१५.	फिर से
भूमिः	६.	भूमि (समुद्र के उस ओर है)	प्रत्युप	१७.	प्राप्त
काञ्चनी	८.	सुवर्णमयी भूमि है	लभ्यते	१८.	होती है
अन्या	७.	उसके आगे	तस्मात्	१९.	इस लिये
आदर्शतल	९.	जो दर्पण के समान	सर्वसत्त्व	२०.	वहाँ कोई भी प्राणी
उपमा	१०.	स्वच्छ है	परिहृत	२१.	नहीं रहता
यस्याम्	११.	जिसमें	आसीत् ॥	२१.	था

श्लोकार्थ—मेरु से लेकर मानसोत्तर पर्वत तक जितना अन्तर है, उतनी ही भूमि समुद्र के उस ओर है। उसके आगे सुवर्णमयी भूमि है। जो दर्पण के समान स्वच्छ है। जिसमें गिरी हुई कोई वस्तु किसी प्रकार फिर से नहीं प्राप्त होती है। इसलिये वहाँ कोई भी प्राणी नहीं रहता था ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

लोकालोक इति समाख्या यदनेनाचलेन लोकालोकस्यान्तर्वर्तिनावस्थाप्यते ॥३६॥

पदच्छेद—लोकालोक इति समाख्या यद् अनेन अचलेन लोक आलोकस्य अन्तर्वर्तिना अवस्थाप्यते ॥

शब्दार्थ—

लोकालोक	१.	लोकालोक	अचलेन	६.	पर्वत
इति	२.	यह नाम	लोक	७.	प्रकाशित और
समाख्या	३.	इसलिये हुआ	अलोकस्य	८.	अप्रकाशित
यद्	४.	क्योंकि	अन्तर्वर्तिना	९.	भूभागों के बीच में
अनेन	५.	यह	अवस्थाप्यते ॥	१०.	स्थित है

श्लोकार्थ—लोकालोक यह नाम इसलिये हुआ। क्योंकि यह पर्वत प्रकाशित और अप्रकाशित भूभागों के बीच में स्थित है ॥

सप्तत्रिंश. श्लोकः

स लोकत्रयान्ते परित ईश्वरेण विहितो यस्मात्सूर्यादीनां ध्रुवापवर्गाणां ज्योतिर्गणानां गभस्तयोऽर्वाचीनांस्त्रींल्लोकानावितन्वाना न कदाचित्पराचीना भवितुमुत्सहन्ते तावदुन्नहनायामः ॥३७।

पदच्छेद—सः लोक त्रय अन्ते परितः ईश्वरेण विहितः यस्मात् सूर्य आदीनाम् ध्रुव अपवर्गाणाम् ज्योतिः गणानाम् गभस्तयः अर्वाचीनान्त्रीन् लोकान् वितन्वाना न कदाचित् पराचीना भवितुम् उत्सहन्ते तावत् उन्नहन आयामः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	इसे	गभस्तयः	२२.	किरणें
लोक	४.	लोकों के	अर्वाचीनाम्	१२.	एक ओर से
त्रय	३.	तीनों	त्रीन्	१३.	तीनों
अन्ते	५.	बाहर	लोकान्	१४.	लोकों को
परितः	६.	चारों ओर	वितन्वाना	१५.	प्रकाशित करने वाली
ईश्वरेण	२.	परमात्मा ने	न	२६.	नहीं
विहितः	७.	स्थापित किया है	कदाचित्	२५.	कभी भी
यस्मात्	११.	इसके	पराचीना	२३.	दूसरी ओर
सूर्य	१६.	सूर्य से	भवितुम	२४.	जाने में
आदीनाम्	१७.	लेकर	उत्सहन्ते	२७.	समर्थ हैं
ध्रुव	१८.	ध्रुव	तावत्	८.	क्योंकि यह इतना
अपवर्गाणाम्	१९.	पर्यन्त	उन्नहन	९.	ऊँचा और
ज्योतिः	२०.	समस्त ज्योति	आयामः ॥	१०.	लम्बा है कि
गणानाम्	२१.	मण्डल की			

श्लोकार्थ—इसे परमात्मा ने तीनों लोकों के बाहर चारों ओर स्थापित किया है। क्योंकि यह इतना ऊँचा और लम्बा है कि इसके एक ओर से तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाली सूर्य से लेकर ध्रुव पर्यन्त समस्त ज्योतिर्मण्डल की किरणें दूसरी ओर जाने में कभी भी नहीं समर्थ हैं॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

एतावाँल्लोकविन्यासो मानलक्षणसंस्थाभिर्विचिन्तितः कविभिः स तु पञ्चाशत्कोटिगणितस्य भूगोलस्य तुरीयभागोऽयं लोकालोकाचलः ॥३८॥

पदच्छेद—एतावान् लोकविन्यासः मानलक्षण संस्थाभिः विचिन्तितः कविभिः सः तु पञ्चाशत्कोटि गणितस्य भूगोलस्य तुरीय भागः अयम् लोकालोक अचलः ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	५.	इतना ही	पञ्चाशत्कोटि	११.	पचास करोड़ योजन है
लोक	४.	लोकों का	गणितस्य	९.	गणित और
विन्यास	६.	विस्तार	भूगोलस्य	१०.	भूगोल से
मानलक्षण	२.	प्रमाण लक्षण और	तुरीय	१३.	चौथाई
संस्थाभिः	३.	स्थिति के अनुसार	भागः	१४.	भाग
विचिन्तितः	७.	बतलाया है	अयम्	१२.	इसका
कविभिः	१.	विद्वानों ने	लोकालोक	१५.	लोकालोक
सः तु ।	८.	यह	अचलः ॥	१६.	पर्वत है

श्लोकार्थ—विद्वानों ने प्रमाण, लक्षण और स्थिति के अनुसार लोकों का इतना ही विस्तार बतलाया है। यह गणित और भूगोल से पचास करोड़ योजन है। इसका चौथाई भाग लोकालोक पर्वत है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तदुपरिष्टाच्चतसृष्वाशास्वात्मयोनिनाखिलजगद्गुरुणाधिनिवेशिता ये द्विरदपतय ऋषभः पुष्करचूडो वामनोऽपराजित इति सकललोकस्थितिहेतवः ॥३९॥

शब्दार्थ—

तद्	१.	इसके	ये	१६.	जो
उपरिष्टात्	२.	ऊपर	द्विरदपतयः	१७.	गजराज
चतसृषु	३.	चारों	ऋषभः	११.	ऋषभ
आशासु	४.	दिशाओं में	पुष्कर चूडः	१२.	पुष्कर चूड
आत्मयोनिना	८.	ब्रह्मा जी ने	वामनः	१३.	वामन और
अखिल	५.	समस्त	अपराजित	१४.	अपराजित
जगद्	६.	संसार के	इति	१५.	इस नाम के
गुरुणा	७.	गुरु	सकललोक	९.	सभी लोकों की
अधिनिवेशिता ।	१८.	नियुक्त किये हैं	स्थिति हेतवः ॥	१०.	स्थिति के लिये

शब्दार्थ—इसके ऊपर चारों दिशाओं में समस्त संसार के गुरु ब्रह्माजी ने सभी लोकों की स्थिति के लिये ऋषभ, पुष्कर चूड, वामन और अपराजित इस नाम के जो गजराज नियुक्त किये हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

तेषां स्वविभूतीनां लोकपालानां च विविधवीर्योपबृंहणाय भगवान् परममहापुरुषो महाविभूतिपतिरन्तर्याम्यात्मनो विशुद्धसत्त्वं धर्मज्ञान-वैराग्यैश्वर्याद्यष्टमहासिद्ध्युपलक्षणं विष्वक्सेनादिभिः स्वपार्षदप्रवरैः परिवारितो निजवरायुधोपशोभितैर्निजभुजदण्डैः सन्धारयमाणस्तस्मिन् गिरिवरे समन्तात्सकललोकस्वस्तय आस्ते ॥४०॥

पदच्छेद—तेषाम् स्वविभूतीनाम् लोक पालानाम् च विविधवीर्य उपबृंहणाय भगवान् परममहापुरुषः महाविभूति पतिः अर्न्यामी आत्मनः विशुद्ध सत्त्वम् धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्यादि अष्ट महासिद्धि उपलक्षणम् विष्वक्सेन आदिभिः स्वपार्षद प्रवरैः परिवारितः निजवर आयुध उपशोभितैः निज भुजदण्डैः सन्धारयमाणः तस्मिन् गिरिवरे समन्तात् सकल लोक स्वस्तये आस्ते ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	१.	इन दिग्गजों की	विष्वक्सेन	२१.	विष्वक्सेन
स्वविभूतीनाम्	३.	अपने अंशस्वरूप	आदिभिः	२२.	आदि
लोकपालानाम्	४.	इन्द्रादि लोक पालों की	स्व	२३.	अपने
च	२.	और	पार्षद	२५.	पार्षदों से
विविधवीर्य	५.	अनेक शक्तियों की	प्रवरैः	२४.	श्रेष्ठ
उपबृंहणाय	६.	वृद्धि (तथा)	परिवारितः	२६.	घिरे हुये
भगवान्	१०.	भगवान्	निजवर	२७.	अपने श्रेष्ठ
परममहापुरुषः	११.	परम पुरुष	आयुधः	२८.	आयुधों से
महाविभूतिपतिः	९.	महान् ऐश्वर्य के अधिकारी	उपशोभितैः	२९.	सुशोभित
अन्तर्यामी	१२.	अन्तर्यामी	निजभुजदण्डैः	३०.	अपने भुज दण्डों में
आत्मनः	१३.	रूप से	सन्धारयमाणः	३१.	धारण किये हुये वे भगवान्
विशुद्ध	१४.	विशुद्ध	तस्मिन्	३२.	उस
सत्त्वम्	१५.	सत्त्वस्वरूप	गिरि	३४.	पर्वत में
धर्मज्ञान	१६.	धर्म, ज्ञान,	वरे	३३.	श्रेष्ठ
वैराग्य	१७.	वैराग्य और	समन्तात्	३५.	सब ओर से
ऐश्वर्यादि	१८.	ऐश्वर्यादि	सकललोक	७.	समस्त संसार के
अष्टमहासिद्धि	१९.	आठ महासिद्धियों से	स्वस्तये	८.	कल्याण के लिये
उपलक्षणम् ।	२०.	युक्त	आस्ते ॥	३६.	विराजते हैं

श्लोकार्थ—इन दिग्गजों की और अपने अंश स्वरूप इन्द्रादि लोक पालों की अनेक शक्तियों की वृद्धि तथा समस्त संसार के कल्याण के लिये महान् ऐश्वर्य के अधिकारी, परम पुरुष, भगवान् अन्तर्यामी रूप से विशुद्ध सत्त्व स्वरूप, धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्यादि आठ महासिद्धियों से युक्त, विष्वक्-सेन आदि अपने श्रेष्ठ पार्षदों से घिरे हुये, अपने श्रेष्ठ आयुधों से सुशोभित अपने भुजदण्डों में धारण किये हुये वे भगवान् श्रेष्ठ पर्वत में सब ओर से विराजते हैं ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

आकल्पमेवं वेषं गत एष भगवानात्मयोगमायया विरचितविविध-लोकयात्रागोपीथायेत्यर्थः ॥४१॥

पदच्छेद—आकल्पम् एवम् वेषम् गतः एषः भगवान् आत्मयोग मायया विरचित विविध लोक यात्रा गोपीथाय इत्यर्थः ॥

शब्दार्थ—

आकल्पम्	१४.	कल्प के अन्त तक विराजते हैं	योग	५.	योग
एवम्	११.	इसी	मायया	६.	माया के द्वारा
वेषम्	१२.	स्वरूप को	विरचित	७.	रचे हुये
गत	१३.	धारण किये हुये	विविध	८.	अनेक
एषः	२.	ये	लोक यात्रा	९.	लोकों की व्यवस्था की
भगवान्	३.	भगवान्	गोपीथाय	१०.	रक्षा के लिये
आत्म ।	४.	अपनी	इत्यर्थः ॥	१.	इसका यह अर्थ है कि

श्लोकार्थ—इसका यह अर्थ है कि ये भगवान् अपनी योग माया के द्वारा रचे हुये अनेक लोकों की व्यवस्था के लिये इसी स्वरूप को धारण किये हुये कल्प के अन्त तक विराजते हैं ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

योऽन्तर्विस्तार एतेन ह्यलोक परिमाणं च व्याख्यातं यद्बहिर्लोकालोका-चलात् । ततः परस्ताद्योगेश्वरगतिं विशुद्धामुदाहरन्ति ॥४२॥

पदच्छेद—यः अन्तः विस्तारः एतेन हि अलोक परिमाणम् च व्याख्यातम् यद् बहिः लोकालोक अचलात् । ततः परस्ताद् योगेश्वर गतिम् विशुद्धाम् उदाहरन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जितना	यद्	९.	जो
अन्तः	२.	अन्तर्वर्ती भू भाग का	बहिः	१२.	बाहर है
विस्तारः	३.	विस्तार	लोकालोक	१०.	लोकालोक
एतेन	४.	इसी से	अचलात्	११.	पर्वत के
हि	१५.	ही	ततः परस्ताद्	१३.	इसके आगे तो
अलोक	५.	अलोक प्रदेश के	योगेश्वर	१४.	योगेश्वरों की
परिमाणम्	६.	परिमाण की	गतिम्	१६.	गति
च	८.	और	विशुद्धात्	१७.	ठीक-ठीक
व्याख्यातम् ।	७.	व्याख्या हो गई	उदाहरन्ति ॥	१८.	हो सकती है

श्लोकार्थ—जितना अन्तर्वर्ती भूभाग का विस्तार है, इसी से अलोक प्रदेश के परिमाण की व्याख्या हो गई और जो लोकालोक पर्वत के बाहर है, इसके आगे तो योगेश्वरों की ही गति ठीक-ठीक हो सकती है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

अण्डमध्यगतः सूर्यो द्यावाभूम्योर्यदन्तरम् ।
सूर्याण्डगोलयोर्मध्ये कोट्यः स्युः पञ्चविंशतिः ॥४३॥

पदच्छेद— अण्ड मध्यगतः सूर्यः द्यावा भूम्योः यद् अन्तरम् ।
सूर्य अण्ड गोलयोः मध्ये कोट्यः स्युः पञ्चविंशतिः ॥

शब्दार्थ—

अण्ड	५.	ब्रह्माण्ड के	सूर्य	८.	सूर्य और
मध्यगतः	६.	केन्द्र में स्थित	अण्ड	९.	ब्रह्माण्ड
सूर्य	७.	सूर्य हैं	गोलयोः	१०.	गोलक के
द्यावा	१.	स्वर्ग और	मध्ये	११.	बीच में
भूम्योः	२.	पृथ्वी के	कोट्यः	१३.	करोड़ योजन का
यद्	४.	जो	स्युः	१४.	अन्तर है
अन्तरम् ।	३.	बीच में	पञ्चविंशतिः ॥	१२.	पचीस

श्लोकार्थ—स्वर्ग और पृथ्वी के बीच में जो ब्रह्माण्ड के केन्द्र में स्थित सूर्य हैं ऐसे सूर्य और ब्रह्माण्ड गोलक के बीच में पचीस करोड़ योजन का अन्तर है ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

मृतेऽण्ड एष एतस्मिन् यदभूत्ततो मार्तण्ड इति व्यपदेशः ।
हिरण्यगर्भ इति यद्धिरण्याण्डसमुद्भवः ॥४४॥

पदच्छेद—मृते अण्ड एव एतस्मिन् यद् अभूत् ततः मार्तण्ड इति व्यपदेशः हिरण्यगर्भ इति यत् हिरण्य अण्ड समुद्भवः ॥

शब्दार्थ—

मृते अण्डे	२.	मरे हुये अण्ड में	व्यपदेशः ।	७.	नाम है
एष	१.	यह सूर्य	हिरण्यगर्भः	१३.	हिरण्यगर्भ
एतस्मिन्	४.	इसी से	इति	१४.	कहते हैं
यद्	८.	यह	यद्	९.	जो
अभूत्	३.	हुआ है	हिरण्य	१०.	हिरण्यमय
ततः	५.	इसका	अण्ड	११.	ब्रह्माण्ड से
मार्तण्ड इति	६.	मार्तण्ड ऐसा	समुद्भवः ॥	१२.	प्रकट हुआ है (उसे)

श्लोकार्थ—यह सूर्य मरे हुये अण्ड में हुआ है । इसी से इसका मार्तण्ड ऐसा नाम है । यह जो हिरण्यमय ब्रह्माण्ड से प्रकट हुआ है, उसे हिरण्यगर्भ कहते हैं ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

सूर्येण हि विभज्यन्ते दिशः खं द्यौर्मही भिदा ।
स्वर्गापवर्गौ नरका रसौकांसि च सर्वशः ॥४५॥

पदच्छेद— सूर्येण हि विभज्यन्ते दिशः खम् द्यौः मही भिदा ।
स्वर्ग अपवर्गौ नरकाः रसौकांसि च सर्वशः ॥

शब्दार्थ—

सूर्येण	१.	सूर्य के द्वारा	भिदा	१३.	भागों का
हि	२.	ही	स्वर्ग	७.	स्वर्ग और
विभज्यन्ते	१४.	विभाग होता है	अपवर्ग	८.	मोक्ष के प्रदेश
दिशः	३.	दिशा	नरकाः	९.	नरक
खम्	४.	आकाश	रसौकांसि	११.	रसातल (तथा)
द्यौः	५.	द्युलोक	च	१०.	और
मही	६.	पृथ्वीलोक	सर्वशः ॥	१२.	अन्य समस्त

श्लोकार्थ—सूर्य के द्वारा ही दिशा, आकाश, द्युलोक, पृथ्वी लोक, स्वर्ग और मोक्ष के प्रदेश, नरक और रसातल तथा अन्य समस्त भागों का विस्तार होता है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

देवतिर्यङ्मनुष्याणां सरीसृपसवीरुधाम् ।
सर्वजीवनिकायानां सूर्य आत्मा दृगीश्वरः ॥४६॥

पदच्छेद— देवतिर्यङ् मनुष्याणाम् सरीसृप सं वीरुधाम् ।
सर्व जीव निकायानाम् सूर्यः आत्मा दृक् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

देव	२.	देवता	जीव	८.	जीव
तिर्यङ्	३.	तिर्यक्	निकायानाम्	९.	समूहों के
मनुष्याणाम्	४.	मनुष्य	सूर्य	१.	सूर्य ही
सरीसृप	५.	साँप इत्यादि	आत्मा	१०.	आत्मा और
सवीरुधाम्	६.	लता-वृक्षादि सहित	दृक्	११.	नेत्र इन्द्रियों के
सर्व	७.	समस्त	ईश्वरः ॥	१२.	अधिष्ठाता हैं

श्लोकार्थ—सूर्य ही देवता, तिर्यक्, मनुष्य, साँप इत्यादि वृक्ष लतादि सहित समस्त जीव समूहों के आत्मा और नेत्र इन्द्रियों के अधिष्ठाता हैं ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे भुवनकोश-वर्णने समुद्रवर्षसंनिवेशपरिमाणलक्षणो विंशोऽध्यायः ॥२०॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—एतावानेव भूवलयस्य संनिवेशः प्रमाणलक्षणतो व्याख्यातः ॥१॥

पदच्छेद— एतावान् एव भूवलयस्य संनिवेशः प्रमाण लक्षणतः व्याख्यातः ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	५.	इतना	प्रमाण	१.	(हे राजन् !) परिमाण और
एव	६.	ही (विस्तार)	लक्षणतः	२.	लक्षणों के
भूवलयस्य	४.	भूमण्डल का	व्याख्यातः ।।	७.	बताया है
संनिवेशः ॥	३.	सहित			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! परिमाण और लक्षणों के सहित भूमण्डल का इतना ही विस्तार बताया है ॥

द्वितीयः श्लोकः

एतेन हि दिवो मण्डलमानं तद्विद उपदिशन्ति यथा द्विदलयोर्निष्पावादीनां ते अन्तरेणान्तरिक्षं तदुभयसन्धितम् ॥२॥

पदच्छेद—एतेन हि दिवः मण्डलमानं तद् विद उपदिशन्ति यथा द्विदलयोः निष्पाव आदीनाम् ते अन्तरेण अन्तरिक्षम् तद् उभय सन्धितम् ॥

शब्दार्थ—

एतेन हि	४.	इतना ही	निष्पाव	८.	चना मटर
दिवः	१.	द्युलोक का	आदीनाम्	९.	इत्यादि हैं उसी प्रकार
मण्डलमानम्	२.	परिमाण	ते	१०.	उन दोनों के
तद् विदः	३.	विद्वान् लोग	अन्तरेण	११.	बीच में
उपदिशन्ति	५.	बताते हैं	अन्तरिक्षम्	१२.	अन्तरिक्ष लोक है
यथा	६.	जिस प्रकार	तद् उभय	१३.	यह दोनों का
द्विदलयोः	७.	दो दाल वाले	सन्धितम् ॥	१४.	सन्धि स्थान है

श्लोकार्थ—द्युलोक का परिमाण विद्वान् लोग इतना ही बताते हैं। जिस प्रकार दो दाल वाले चना-मटर इत्यादि हैं, उसी प्रकार उन दोनों के बीच में अन्तरिक्ष लोक है। यह दोनों का सन्धि स्थान है ॥

तृतीयः श्लोकः

यन्मध्यगतो भगवांस्तपताम्पतिस्तपन आतपेन त्रिलोकीं प्रतपत्यव-भासयत्यात्मभासा स एष उदगयनदक्षिणायनवैषुवतसंज्ञाभिर्मान्द्यशैघ्य-समानाभिर्गतिभिरारोहणावरोहणसमानस्थानेषु यथासवनमभिपद्यमानो मकरादिषु राशिष्वहोरात्राणि दीर्घह्रस्वसमानानि विधत्ते ॥३॥

पदच्छेद—यत् मध्यगतः भगवान् तपताम् पतिः तपन आतपेन त्रिलोकीम् प्रतपति अवभासयति आत्मभासा स एष उदगयन दक्षिणायन वैषुवत संज्ञाभिः मान्द्य शैघ्य समानाभिः गतिभिः आरोहण समान स्थानेषु यथासवनम् अभिपद्यमानः मकर आदिषु राशिषु अहोरात्राणि दीर्घ ह्रस्व समानानि विधत्ते ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	इसके	आरोहण	२५.	ऊँचे
मध्यगतः	२.	मध्य भाग में स्थित	अवरोहण	१६.	नीचे और
भगवान्	४.	भगवान्	समान	२७.	समान
तपताम् पतिः	३.	ग्रहों के स्वामी	स्थानेषु	१८.	स्थानों में
तपन	५.	सूर्य	यथासवनम्	२१.	समयानुसार
आतपेन	६.	अपने ताप और	अभिपद्यमानः	२०.	चलते हुये
त्रिलोकीम्	८.	त्रैलोक्य को	मकर	२२.	मकर
प्रतपति	९.	तपाते और	आदिषु	२३.	आदि
अवभासयति	१०.	प्रकाशित करते हैं	राशिषु	२४.	राशियों में
आत्मभासा	७.	अपने प्रकाश से	अहोरात्राणि	२९.	दिन रात को
स एष	११.	वही यह सूर्य भगवान्	दीर्घ	३०.	बड़ा
उदगयन	१२.	उत्तरायण	ह्रस्व	३१.	छोटा और
दक्षिणायन	१३.	दक्षिणायन (और)	समानानि	३२.	समान
वैषुवत	१४.	विषुवत्	विधत्ते	३३.	करते हैं
संज्ञाभिः	१५.	नामवाली	मान्द्य	१६.	मन्द
शैघ्य	१७.	शीघ्र और	समानाभिः ॥	१८.	समान
गतिभिः ॥	१९.	गतियों से			

श्लोकार्थ—इसके मध्य भाग में स्थित ग्रहों के स्वामी भगवान् सूर्य अपने ताप और अपने प्रकाश से त्रैलोक्य को तपाते और प्रकाशित करते हैं। वही यह सूर्य भगवान् उत्तरायण दक्षिणायन और विषुवत् नाम वाली मन्द-शीघ्र और समान गतियों से चलते हुये समयानुसार मकर आदि राशियों में ऊँचे-नीचे और समान-स्थानों में दिन-रात को बड़ा-छोटा और समान करते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

यदा मेषतुलयोर्वर्तते तदाहोरात्राणि समानानि भवन्ति यदा वृषभादिषु पञ्चसु च राशिषु चरति तदाहान्येव वर्धन्ते ह्रसति च मासि मास्येकैका घटिका रात्रिषु ॥४॥

पदच्छेद—यदा मेष तुलयोः वर्तते तदा अहोरात्राणि समानानि भवन्ति यदा वृषभ आदिषु पञ्चसु च रात्रिषु चरति तदा अहानि एव वर्धन्ते ह्रसति च मासि-मासि एकैका घटिका रात्रिषु ॥

शब्दार्थ—

यदा मेष	१.	जब सूर्य भगवान् मेष और	राशिषु चरति	८.	राशियों में चलते हैं
तुलयोः वर्तते	२.	तुला राशि पर होते हैं	तदा अहानि एव	९.	तब दिन ही
तदाअहोरात्राणि	३.	तब दिन-रात	वर्धन्ते	१०.	बढ़ते हैं
समानानि भवन्ति	४.	बराबर होवे हैं	ह्रसति	१४.	घटती है
यदा वृषभ आदिषु	६.	जब वृष आदि	च मासि-मासि	११.	और प्रत्येक मास में
पञ्चसु	७.	पाँच	एका एका	१२.	एक-एक
च ।	५.	और	घटिका रात्रिषु ॥	१३.	घड़ी रात्रि

श्लोकार्थ—जब सूर्य भगवान् मेष और तुला राशिपर होते हैं तब दिन-रात बराबर होते हैं। और जब वृष आदि पांच राशियों में चलते हैं तब दिन ही बढ़ते हैं और प्रत्येक मास में एक एक घड़ी रात्रि घटती है ॥

पञ्चमः श्लोकः

यदा वृश्चिकादिषु पञ्चसु वर्तते तदाहोरात्राणि विपर्ययाणि भवन्ति ॥५॥

पदच्छेद— यदा वृश्चिक आदिषु पञ्चसु वर्तते तदा अहोरात्राणि विपर्ययाणि भवन्ति ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब सूर्य भगवान्	तदा	५.	तब
वृश्चिक	२.	वृश्चिक	अहोरात्राणि	६.	दिन-रात उसके
आदिषु	३.	आदि	विपर्ययाणि	७.	विपरीत
पञ्चसुवर्तते ।	४.	पांच राशियों में रहते हैं	भवन्ति ॥	८.	होते हैं

श्लोकार्थ—जब सूर्य भगवान् वृश्चिक आदि पांच राशियों में रहते हैं। तब दिन-रात उसके विपरीत होते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

यावद्दक्षिणायनमहानि वर्धन्ते यावदुदगयनं रात्रयः ॥६॥

पदच्छेद— यावत् दक्षिणायनम् अहानि वर्धन्ते यावत् उदगयनम् रात्रयः ॥

शब्दार्थ—

यावत्	१.	इस प्रकार	यावत्	५.	तक
दक्षिणायनम्	२.	दक्षिणायन तक	उदगयनम्	४.	उत्तरायण
अहानि वर्धन्ते ।	३.	दिन बढ़ते हैं (और)	रात्रयः ॥	६.	रात्रि या बढ़ती हैं

श्लोकार्थ—इस प्रकार दक्षिणायन तक दिन बढ़ते हैं और उत्तरायण तक रात्रियाँ बढ़ती हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

एवं नव कोटय एकपञ्चाशल्लक्षाणि योजनानां मानसोत्तरगिरिपरिवर्तनस्योपदिशन्ति तस्मिन्नैन्द्रीं पुरीं पूर्वस्मान्मेरोर्देवधानीं नाम दक्षिणतो याम्यां संयमनीं नाम पश्चाद्वारुणीं निम्लोचनीं नाम उत्तरतः सौम्यां विभावरीं नाम तासूदयमध्याह्नास्तमयनिशीथानीति भूतानां प्रवृत्तिनिवृत्तिनिमित्तानि समयविशेषेण मेरोश्चतुर्दिशम् ।।७।।

पदच्छेद—एवं नव कोटयः एक पञ्चाशत् लक्षाणि योजनानाम् मानसोत्तर गिरि परिवर्तनस्य उपदिशन्ति तस्मिन् ऐन्द्रीम् पुरीम् पूर्वस्मात् मेरोः देवधानीम् नाम दक्षिणतः याम्याम् संयमनीम् नाम पश्चाद्वारुणीम् निम्लोचनीम् नाम उत्तरतः सौम्याम् विभावरीम् तासु उदय मध्याह्न अस्तमय निशीथानि इति भूतानाम् प्रवृत्ति निवृत्ति निमित्तानि समय विशेषेण मेरोः चतुर्दिशम् ।।

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	नाम	२१.	नाम की पुरी है
नव	४.	नौ	पश्चात्	२२.	पश्चिम में
कोटयः	५.	करोड़	वारुणीम्	२३.	वरुण की
एक पञ्चाशत्	६.	इक्यावन	निम्लोचनीम्	२४.	निम्लोचनी
			नाम	२५.	नाम की पुरी है
लक्षाणि	७.	लाख	उत्तरतः	२६.	उत्तर में
योजनानाम्	८.	योजन	सौम्याम्	२७.	चन्द्रमा की
मानसोत्तर	२.	मानसोत्तर	विभावरीम्	२८.	विभावरी
गिरि	३.	पर्वत पर	नाम	२९.	नाम की पुरी है
परिवर्तनस्य	९.	सूर्य की परिक्रमा का मार्ग	तासु उदय	३०.	उस पुरियों में ३५ सूर्योदय
उपदिशन्ति	१०.	बताते हैं	मध्याह्न	३६.	मध्याह्न
तस्मिन्	११.	उस पर्वत पर	अस्तमय	३७.	सूर्यास्त (और)
ऐन्द्रीम्	१४	इन्द्र की	निशीथानि	३८.	अर्धरात्रि
पुरीम्	१७.	पुरी है	इति	३९.	होते हैं
पूर्वस्मात्	१३.	पूर्व में	भूतानाम्	४०.	प्राणियों की
मेरोः	१२.	मेरु पर्वत के	प्रवृत्ति	४१.	प्रवृत्ति या
देवधानीम्	१५.	देवधानी	निवृत्ति	४२.	निवृत्ति के
नाम	१६.	नाम की	निमित्तानि	४३.	कारण होते हैं
दक्षिणतः	१८.	दक्षिण में	समय	३३.	समय
याम्याम्	१९.	यमराज की	विशेषेण	३४.	समय पर
संयमनीम्	२०.	संयमनी	मेरोः	३१.	मेरु पर्वत के
			चतुर्दिशम् ।।	३२.	चारो तरफ

श्लोकार्थ—इस प्रकार मानसोत्तर पर्वत पर नौ करोड़ इक्यावन लाख योजन सूर्य की परिक्रमा का मार्ग बताते हैं। उस पर्वत पर मेरु पर्वत के पूर्व में इन्द्र की देवधानी नाम की पुरी है। दक्षिण में यमराज की संयमनी नाम की पुरी है। पश्चिम में वरुण की निम्लोचनी नाम की पुरी है। उत्तर में चन्द्रमा की विभावरी नाम की पुरी है। मेरु पर्वत के चारों तरफ समय-समय पर इन पुरियों में सूर्योदय, मध्याह्न, सूर्यास्त और अर्धरात्रि होते हैं। जो प्राणियों की प्रवृत्ति या निवृत्ति के कारण होते हैं ।।

अष्टमः श्लोकः

तत्रत्यानां दिवसमध्यङ्गत एव सदाऽऽदित्यस्तपति सव्येनाचलं दक्षिणेन करोति ॥८॥

पदच्छेद—तत्रत्यानाम् दिवस मध्यङ्गत एव सदा आदित्यः तपति सव्येन अचलम् दक्षिणेन करोति ॥

शब्दार्थ—

तत्रत्यानाम्	२.	वहाँ रहने वालों के लिए	आदित्यः	१.	भगवान् सूर्य
दिवस मध्यङ्गतः	३.	मध्याह्नकालीन	तपति	६.	तपते हैं (और)
एव	४.	ही होकर	सव्येन	७	बायें से (चलते हुये)
सदा	५.	हमेशा	अचलम्	८.	सुमेरु पर्वत के
दक्षिणेन ।	९.	दाहिने	करोति ॥	१०.	करके चलते हैं

श्लोकार्थ—भगवान् सूर्य वहाँ रहने वालों के लिए मध्याह्नकालीन ही होकर हमेशा तपते हैं। और बांये से चलते हुये सुमेरु पर्वत को दाहिने करके चलते हैं ॥

नवमः श्लोकः

यत्रोदेति तस्य ह समानसूत्रनिपाते निम्लोचति यत्र क्वचन स्यन्देनाभितपति तस्य हैष समानसूत्रनिपाते प्रस्वापयति तत्र गतं न पश्यन्ति ये तं समनुपश्येरन् ॥९॥

पदच्छेद—यत्र उदेति तस्य ह समान सूत्र निपाते निम्लोचति यत्र क्वचन स्यन्देन अभितपति तस्य ह एव समान सूत्र निपाते प्रस्वापयति तत्र गतम् न पश्यन्ति ये तं समनु पश्येरन् ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१.	जिस पुरी में (सूर्य भगवान् का)	तस्य	११.	उसके
उदेति	२.	उदय होता है	ह एव	२०.	उन सूर्य को
तस्य ह	३.	उसके	समानसूत्र	१२.	ठीक दूसरे
समान	४.	ठीक	निपाते	१३.	तरफ (लोगों को)
सूत्र-निपाते	५.	दूसरे-तरफ वे	प्रस्वापयति	१४.	सुलाते हैं
निम्लोचति	६.	अस्त होते हैं	तत्र	१८.	वहाँ पर
यत्र	७.	जहाँ	गतम्	१९.	स्थित वे लोग
क्वचन	८.	कहीं (लोगों को)	न पश्यन्ति	२१.	नहीं देख पाते हैं
स्यन्देन	९.	पसीने-पसीने करके	ये	१५.	जिन लोगों ने
अभितपति	१०.	तपाते हैं	तम्	१६.	उनको
			समनुपश्येरन् ॥	१७.	भली भांति देखा था

श्लोकार्थ—जिस पुरी में सूर्य भगवान् का उदय होता है, उसके ठीक दूसरी तरफ वे अस्त होते हैं। जहाँ कहीं लोगों को पसीने-पसीने करके तपाते हैं, उसके ठीक दूसरे तरफ सुलाते हैं। जिन लोगों ने उनको भली भांति तरह देखा था वहाँ पर स्थित वे लोग उन सूर्य को नहीं देख पाते हैं ॥

दशमः श्लोकः

यदा चैन्द्र्याः पुर्याः प्रचलते पञ्चदशघटिकाभिर्याम्यां सपादकोटिद्वयं योजनानां सार्धद्वादशलक्षाणि साधिकानि चोपयाति ॥१०॥

पदच्छेद—यदा च ऐन्द्र्याः पुर्याः प्रचलते पञ्चदश घटिकाभिः याम्याम् सपाद कोटि द्वयम् योजनानाम् सार्धं द्वादश लक्षाणि साधिकानि च उपयाति ॥

शब्दार्थ—

यदा	२.	जब	योजनानाम्	१२.	योजन
च	१.	और	सार्धं	८.	साढ़े
ऐन्द्र्याः पुर्याः	३.	इन्द्र की पुरी से	द्वादश	९.	बारह
प्रचलते	५.	चलते हैं (तब)	लक्षाणि	१०.	लाख
पञ्चदश घटिकाभिः	६.	पन्द्रह घड़ी में	साधिकानि	११.	पच्चीस हजार से अधिक
याम्याम्	४.	यमराज की पुरी की ओर	च	१३.	और
सपाद कोटि द्वयम्	७.	सवा दो करोड़	उपयाति ॥	१४.	चलते हैं

श्लोकार्थ—और जब इन्द्र की पुरी से यमराज की पुरी की ओर चलते हैं तब पन्द्रह घड़ी में सवा दो करोड़ साढ़े बारह लाख योजन और पचीस हजार से अधिक योजन और चलते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

एवं ततो वारुणीं सौम्यामैन्द्रीं च पुनस्तथान्ये च ग्रहाः सोमादयो नक्षत्रैः सह ज्योतिश्चक्रे समभ्युद्यन्ति सह वा निम्लोचन्ति ॥११॥

पदच्छेद—एवं ततः वारुणीम् सौम्याम् ऐन्द्रीम् च पुनः तथा अन्ये च ग्रहाः सोम आदयः नक्षत्रैः सह ज्योतिः चक्रे सम् अभ्युद्यन्ति सह वा निम्लोचन्ति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इसी प्रकार	ग्रहाः	११.	ग्रहों के
ततः	२.	वहाँ से	सोम	९.	चन्द्रमा
वारुणीम्	३.	वरुण	आदयः	१०.	आदि
सौम्याम्	४.	चन्द्रमा	नक्षत्रैः सह	१४.	नक्षत्रों के साथ
ऐन्द्रीम्	६.	इन्द्र की (पुरी में)	ज्योतिः	१५.	ज्योति
च	५.	और	चक्रे	१६.	चक्र में
पुनः	७.	फिर से (जाते हैं)	समभ्युद्यन्ति	१७.	समान रूप से उदित होते है (और)
तथा	८.	तथा	सह	१८.	साथ
अन्ये	१३.	दूसरे	वा	१९.	ही
च	१२.	और	निम्लोचन्ति ॥	२०.	अस्त होते हैं

श्लोकार्थ—इसी प्रकार वहाँ से वरुण, चन्द्रमा और इन्द्र की पुरी में फिर से जाते हैं। तथा चन्द्रमा आदि ग्रहों के और दूसरे नक्षत्रों के साथ ज्योतिश्चक्र में समान रूप से उदित होते हैं और साथ ही अस्त होते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

एवं मुहूर्तेन चतुस्त्रिंशल्लक्षयोजनान्यष्टशताधिकानि सौरो रथस्त्रयीमयोऽसौ चतसृषु परिवर्तते पुरीषु ॥१२॥

पदच्छेद—एवम् मुहूर्तेन चतुः त्रिंशत् लक्ष योजनानि अष्टशत अधिकानि सौरः रथः त्रयीमयः असौ चतसृषु परिवर्तते पुरीषु ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१	इस प्रकार	रथः	११.	रथ
मुहूर्तेन	२.	एक मुहूर्त में	त्रयीमयः	१०.	वेदमय
चतुः त्रिंशत्	३.	चौंतीस	असौ	९.	वह
लक्ष	४.	लाख	चतसृषु	१२.	इन चारों
योजनानि	६.	योजन	परिवर्तते	१५.	घूमता रहता है
अष्टशत	५.	आठ सौ	पुरीषु	१३.	पुरियों में
अधिकानि	७.	अधिक	सौरः ॥	८.	सूर्य का

श्लोकार्थ—इस प्रकार एक मुहूर्त में चौंतीस लाख आठ सौ योजन अधिक सूर्य का वह वेदमय रथ इन चारों पुरियों में घूमता रहता है।

त्रयोदशः श्लोकः

यस्यैकं चक्रं द्वादशारं षण्नेमि त्रिणाभि संवत्सरात्मकं समामनन्ति तस्याक्षो मेरोर्मूर्धनि कृतो मानसोत्तरे कृतेतरभागो यत्र प्रोतं रविरथचक्रं तैलयन्त्रचक्रवद् भ्रमन्मानसोत्तरगिरौ परिभ्रमति ॥१३॥

पदच्छेद—यस्य एकं चक्रं द्वादश अरम् षण्नेमि त्रिणाभि संवत्सर आत्मकम् सम्आमनन्ति तस्य अक्षः मेरोः मूर्धनि कृतः मानसउत्तरे कृत इतर भागः यत्र प्रोतम् रवि रथ चक्रम् तैलयन्त्र चक्रवत् भ्रमत् मानसोत्तर गिरौ परिभ्रमति ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	इसका	मानसोत्तरे कृत	१४.	मानसोत्तर पर्वत पर है
एकम् चक्रम्	४.	एक पहिया	इतर भागः	१३.	दूसरा भाग
द्वादश अरम्	६.	बारह तीलियाँ	यत्र प्रोतम्	१५.	इसमें लगा हुआ
षण्नेमि	७.	छः नेमि	रवि-रथ	१६.	सूर्य का रथ
त्रिणाभि	८.	तीन नाभि है	चक्रम्	१७.	पहिया
संवत्सर	२.	संवत्सर	तैलयन्त्र	१८.	कोल्हू के
आत्मकम्	३.	नाम का	चक्रवत्	१९.	चक्क की भांति
सम् आमनन्ति	५.	बतलाते है (उसमें)	भ्रमत्	२०.	घूमता हुआ
तस्य अक्षः	९.	उसकी धुरी	मानसोत्तरः	२१.	मानसोत्तर
मेरोः	१०.	सुमेर पर्वत के	गिरौ	२२.	पर्वत पर
मूर्धनि	११.	शिखर पर	परिभ्रमति	२३.	घूमता है
कृतः ॥	१२.	है (और धुरी का)			

श्लोकार्थ—इसका संवत्सर नाम का एक पहिया बतलाते हैं। उसमें बारह तीलियाँ, छः नेमि, तीन नाभि हैं। उसकी धुरी सुमेरु पर्वत के शिखर पर है। और धुरी का दूसरा भाग मानसोत्तर पर्वत पर है। इसमें लगा हुआ सूर्य के रथ का पहिया कोल्हू के चक्के की भांति घूमता हुआ मानसोत्तर पर्वत पर घूमता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तस्मिन्नक्षे कृतमूलो द्वितीयोऽक्षस्तुर्यमानेन सम्मितस्तैलयन्त्राक्षवद् ध्रुवे कृतोपरिभागः ॥१४॥

पदच्छेद—तस्मिन् अक्षे कृत मूलः द्वितीयः अक्षः तुर्यमानेन सम्मितः तैल यन्त्र अक्षवत् ध्रुवे कृत उपरिभागः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन् अक्षे	१.	उस धुरी में	तैल यन्त्र	७.	कोल्हू के
कृत मूलः	२.	जिसका मूल भाग	अक्षवत्	८.	धुरे के समान उसका
द्वितीयः	३.	दूसरी	ध्रुवे	१०.	ध्रुव लोक से
अक्षः	४.	धुरी से	कृते	११.	लगा हुआ है
तुर्यमानेन	६.	चौथाई के बराबर है	उपरिभागः	९.	ऊपरी भाग
सम्मितः	५.	जुड़ा है (जो)			

श्लोकार्थ—उस धुरी में जिसका मूल भाग दूसरी धुरी से जुड़ा है जो चौथाई के बराबर है। कोल्हू के धुरे के समान उसका ऊपरी भाग ध्रुव लोक से लगा हुआ है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

रथनीडस्तु षट्त्रिंशल्लक्षयोजनायतस्तत्तुरीयभागविशालस्तावान् रविरथयुगो यत्र हयाश्छन्दोनामानः सप्तारुणयोजिता वहन्ति देवमादित्यम् ॥१५॥

शब्दार्थ—

रथ	१.	रथ हैं	रवि	१०.	सूर्य का
नीडः तु	२.	बैठने का स्थान	रथ	१२.	रथ (है)
षट्त्रिंशत्	३.	छत्तीस	युगः	११.	वेदमय
लक्ष	४.	लाख	यत्र	१३.	जिसमें
योजनायतः	५.	योजन लम्बा है	हयाः	१७.	घोड़े
तत्	६.	उसका	छन्दोनामानः	१५.	गायत्री आदि छन्द नाम वाले
तुरीय भाग	७.	चौथाई भाग	सप्त	१६.	सात
विशालः	८.	योजन विशाल है	अरुण	१४.	अरुण ने
तावान्	९.	उन	योजिताः	१८.	लगाये हैं जो
			वहन्ति	१९.	ले जाते हैं
			देवम् आदित्यम् ॥	२०	भगवान् सूर्य को

श्लोकार्थ—रथ में बैठने का स्थान छत्तीस लाख योजन लम्बा है। उसका चौथाई भाग नव लाख योजन विशाल है। उन सूर्य का वेदमय रथ है जिसमें अरुण ने गायत्री आदि छन्द नाम वाले सात घोड़े लगाये हैं, जो भगवान् सूर्य को ले जाते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

पुरस्तात्सवितुररुणः पश्चाच्च नियुक्तः सौत्ये कर्मणि किलास्ते ॥१६॥

पदच्छेद— पुरस्तात् सवितुः अरुणः पश्चात् च नियुक्तः सौत्ये कर्मणि किल आस्ते ॥

शब्दार्थ—

पुरस्तात्	२.	सामने	सौत्ये	६.	सारथी का
सवितुः	१.	सूर्य के	कर्मणि	७.	कार्य
अरुणः	५.	अरुण	किल	८.	निश्चित रूप से
पश्चात् च	३.	पीछे की ओर (मुख करके)	आस्ते ।	९.	करते हैं
नियुक्तः ॥	४.	बैठे हुए			

श्लोकार्थ—सूर्य के सामने पीछे की ओर मुख करके बैठे हुए अरुण सारथी का कार्य निश्चित रूप से करते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

तथा वालखिल्या ऋषयोऽङ्गुष्ठपर्वमात्राः षष्टिसहस्राणि पुरतः सूर्यं सूक्तवाकाय नियुक्ताः संस्तुवन्ति ॥१७॥

पदच्छेद—तथा वालखिल्याः ऋषयः अङ्गुष्ठ पर्व मात्राः षष्टि सहस्राणि पुरतः सूर्यम् सूक्तवाकाय नियुक्ताः संस्तुवन्ति ॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	तथा	षष्टि	४.	साठ
वालखिल्याः	६.	वालखिल्यादि	सहस्राणि	५.	हजार
ऋषयः	७.	ऋषि	पुरतः	९.	आगे
अङ्गुष्ठ	२.	अँगूठे के	सूर्यं	८.	भगवान् सूर्य के
पर्व मात्राः	३.	पोरुए के बराबर	सूक्तवाकाय	१०.	स्वस्ति वाचन के लिये
नियुक्ताः	११.	नियुक्त हैं । वे सूर्य भगवान् की	संस्तुवन्ति	१२.	स्तुति करते हैं

श्लोकार्थ—तथा अँगूठे के पोरुए के बराबर साठ हजार वालखिल्यादि ऋषि भगवान् सूर्य के स्वस्ति वाचन के लिए आगे नियुक्त हैं । वे सूर्य भगवान् की स्तुति करते हैं ।

अष्टादशः श्लोकः

तथान्ये च ऋषयो गन्धर्वाप्सरसो नागा ग्रामण्यो यातुधाना देवा इत्येकैकशो गणाः सप्त चतुर्दश मासि मासि भगवन्तं सूर्यमात्मानं नानानामानं पृथङ्नानानामानः पृथक्कर्मभिर्द्वन्द्वश उपासते ॥१८॥

पदच्छेद—तथा अन्ये च ऋषयः गन्धर्व अप्सरसः नागाः ग्रामण्यः यातुधानाः देवाः इति एक एकशः गणाः सप्त चतुर्दश मासि-मासि भगवन्तम् सूर्यम् आत्मानम् नाना नामानम् पृथक् नानानामानः पृथक कर्मभिः द्वन्द्वशः उपासते ॥

शब्दार्थ—

तथा	१.	तथा	मासि-मासि	१३.	प्रत्येक महीने में
अन्ये	२.	दूसरे	भगवन्तम्	२०.	भगवान्
च	८.	और	सूर्यम्	२१.	सूर्य की
ऋषयः	३.	ऋषि	आत्मानम्	१६.	आत्म स्वरूप
गन्धर्व	४.	गन्धर्व	नाना नामानम्	१४.	अनेक नाम वाले (तथा)
अप्सरसः	५.	अप्सरा	पृथक्	१५.	अलग-अलग
नागाः ग्रामण्यः	६.	नाग, यक्ष	नाना नामानः	१६.	नाम वाले होकर
यातुधानाः देवाः	७.	राक्षस, देवता	पृथक्	१७.	अलग-अलग
इति एक एकशः	११.	इत्यादि एक-एक करके	कर्मभिः	१८.	कर्मों के द्वारा
गणाः	१०.	गण	द्वन्द्वशः	२२.	दो-दो मिलकर
सप्त	६.	सात	उपासते	२३.	उपासना करते हैं
चतुर्दश ॥	१२.	चौदह हैं			

श्लोकार्थ—तथा दूसरे ऋषि, गन्धर्व, अप्सरा, नाग, यक्ष, राक्षस, देवता और सात गण इत्यादि एक एक करके चौदह हैं। प्रत्येक महीने में अनेक नाम वाले होकर अलग-अलग कर्मों के द्वारा आत्म स्वरूप भगवान् सूर्य की दो दो मिलकर उपासना करते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

लक्षोत्तरं सार्धनवकोटियोजनपरिमण्डलं भूवलयस्य क्षणेन सगव्यूत्युत्तरं द्विसहस्रयोजनानि स भुङ्क्ते ॥१९॥

पदच्छेद—लक्ष उत्तरम् सार्ध नव कोटि योजन परिमण्डलम् भूवलयस्य क्षणेन सगव्यूति उत्तरम् द्विसहस्र योजनानि स भुङ्क्ते ॥

शब्दार्थ—

लक्ष	३.	एक लाख	क्षणेन	८.	एक क्षण में
उत्तरम्	४.	अधिक	सगव्यूति	१२.	दूरी
सार्ध	५.	साढ़े	उत्तरम्	११.	अधिक की
नवकोटि योजन	६.	नौ करोड़ योजन के	द्विसहस्र	९.	दो हजार
परिमण्डलम्	७.	घेरे में	योजनानि	१०.	योजन
भू वलयस्य	२.	भू मण्डल के	स	१.	वे सूर्य भगवान्
भुङ्क्ते ॥	१३.	पार करते हैं।			

श्लोकार्थ—वे सूर्य भगवान् भू मण्डल के एक लाख नौ करोड़ साढ़े इक्यावन योजन के घेरे में एक क्षण में दो हजार योजन अधिक की दूरी को पार करते हैं ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे ज्योतिश्चक्र सूर्यरथ मण्डल वर्णनं नाम एक विंशोऽध्यायः ॥२१॥

प्रथमः श्लोकः

राचोवाच—यदेतद्भगवत आदित्यस्य मेरुं ध्रुवं च प्रदक्षिणेन परिक्रामतो राशीनामभिमुखं प्रचलितं चाप्रदक्षिणं भगवतोपवर्णितममुष्य वयं कथमनुमिमीमहीति ॥१॥

पदच्छेद—

यत् एतद् भगवतः आदित्यस्य मेरुम् ध्रुवम् च प्रदक्षिणेन परिक्रामतः राशीनाम् अभिमुखम् प्रचलितम् च अप्रदक्षिणम् भगवता उपवर्णितम् अमुष्य वयम् कथम् अनुमिमीमहिइति ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जो	प्रचलितम्	६.	जाते हुये
एतद्	२.	यह	च	१२.	किन्तु
भगवतः आदित्यस्य	३.	भगवान् सूर्य	अप्रदक्षिणम्	१३.	उनकी गति दक्षिणावर्त नहीं है
मेरुम्	७.	सुमेरु	भगवता	१४.	(यह जो) आपने
ध्रुवम्	९.	ध्रुव के	उपवर्णितम्	१५.	वर्णन किया
च	८.	और	अमुष्य	१६.	इस विषय का
प्रदक्षिणेन	१०.	दक्षिण की ओर से	वयम्	१७.	हम लोग
परिक्रामतः	११.	परिक्रमा करते हैं	कथम्	१८.	किस प्रकार
राशीनाम्	४.	राशियों के	अनुमिमीमहि	१९.	अनुमान करें
अभिमुखम्	५.	सामने	इति ॥	२०.	यह कहें

श्लोकार्थ—जो यह भगवान् सूर्य राशियों के सामने जाते हुये सुमेरु और ध्रुव के दक्षिण की ओर से परिक्रमा करते हैं, किन्तु उनकी गति दक्षिणावर्त नहीं है, यह जो आपने वर्णन किया, इस विषय का हम लोग किस प्रकार अनुमान करें, यह कहें ॥

द्वितीयः श्लोकः

सा होवाच—यथा कुलालचक्रेण भ्रमता सह भ्रमतां तदाश्रयाणां पिपीलिका-दीनां गतिरन्यैव प्रदेशान्तरेष्वप्युपलभ्यमानत्वादेवं नक्षत्रराशिभिरुपलक्षितेन कालचक्रेण ध्रुवं मेरुं च प्रदक्षिणेन परिधावता सह परिधावमानानां तदाश्रयाणां सूर्यादीनां ग्रहाणां गतिरन्यैव नक्षत्रान्तरे राश्यन्तरे चोपलभ्य-मानत्वात् ॥२॥

पदच्छेद—स होवाच यथा कुलाल चक्रेण भ्रमता सह भ्रमताम् तद् आश्रयाणाम् पिपीलिकादीनाम् गतिः अन्या एव प्रदेशान्तरेषु अपि उपलभ्य मानत्वात् एवम् नक्षत्र राशिभिः उपलक्षितेन काल चक्रेण ध्रुवम् मेरुम् च प्रदक्षिणेन परिधावता सह परिधावमानानाम् तद् आश्रयाणाम् सूर्य आदीनाम् ग्रहाणाम् गतिः अन्या एव नक्षत्र अन्तरे राशि अन्तरे च उपलभ्यमानत्वात् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जिस प्रकार	ध्रुवम्	१६.	ध्रुव
कुलाल चक्रेण	३.	कुम्हार के चाक के	मेरुम्	१८.	सुमेरु को
भ्रमता	२.	घूमते हुये	च	१७.	और
सह भ्रमताम्	४.	साथ घूमती हुयी	प्रदक्षिणेन	१९.	दायें रखकर
तद्	५.	उसके	परिधावता		घूमते हैं
आश्रयाणाम्	६.	आश्रित	सह	२०.	साथ
पिपीलिकादीनाम्	८.	चींटीं आदि की	परिधावमानानाम्	३०.	घूमते हुये
गतिः अन्या एव	९.	गति भिन्न ही है क्योंकि	तद्	२१.	उनके
प्रदेशान्तरेषु अपि	११.	भिन्न-भिन्न स्थानों पर	आश्रयाणाम्	२२.	आश्रित
उपलभ्यमानत्वात्	१२.	दिखाई देती है	सूर्य	२३.	सूर्य
एवम्	१०.	इसी प्रकार	आदीनाम्	२४.	आदि
नक्षत्र राशिभिः	१३.	नक्षत्र और राशियों से	ग्रहाणाम्	२५.	ग्रहों की
उपलक्षितेन	१४.	दिखाई देने वाले	गतिः अन्या एव	२६.	भिन्न ही है
काल चक्रेण	१५.	काल चक्र में	नक्षत्र अन्तरे	२८.	नक्षत्रों में
			राशि अन्तरे च	२७.	भिन्न-भिन्न राशि और
			उपलभ्यमानत्वात् ॥	२९.	दिखाई पड़ते हैं ॥

श्लोकार्थ—जिस प्रकार घूमते हुये कुम्हार के चाक के साथ उसके आश्रित घूमती हुयी चींटी आदि की गति उससे भिन्न ही है, क्योंकि वह इस प्रकार भिन्न-भिन्न स्थानों पर भी दिखायी देती हैं इसी प्रकार नक्षत्र और राशियों से दिखायी देने वाले काल-चक्र में ध्रुव और सुमेरु को दायें रखकर साथ घूमते हुए उनके आश्रित सूर्य आदि ग्रहों की गति भिन्न ही है क्योंकि वे कालभेद से भिन्न-भिन्न राशि और नक्षत्रों में दिखाई पड़ते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

स एष भगवानादिपुरुष एव साक्षान्नारायणो लोकानां स्वस्तय आत्मानं त्रयीमयं कर्मविशुद्धिनिमित्तं कविभिरपि च वेदेन विजिज्ञास्यमानो द्वादशधा विभज्य षट्सु वसन्तादिष्वृतुषु यथोपजोषमृतुगुणान् विदधाति ॥३॥

पदच्छेद—सः एषः भगवान् आदि पुरुषः एव साक्षात् नारायणः लोकानाम् स्वस्तये आत्मानम् त्रयीमयम् कर्म विशुद्धि निमित्तम् कविभिः अपि च वेदेन विजिज्ञास्यमानः द्वादशधा विभज्य षट्सु वसन्तादिषु ऋतुषु यथा उपजोषम् ऋतुगुणान् विदधाति ॥

शब्दार्थ—

सः एष	१.	वह यह	कविभिः	२३.	जिसे विद्वान्
भगवान्	५.	भगवान्	अपि	२६.	भी
आदि	३.	आदि	च	२४.	और
पुरुषः	४.	पुरुष	वेदेन	२५.	वेद
एव	७.	ही	विजिज्ञास्यमानः	२७.	जानने की इच्छा रखते हैं।
साक्षात् नारायणः	२. ६.	साक्षात् नारायण	द्वादशधा	१५.	बारह मासों में
लोकानाम्	८.	लोकों के	विभज्य	१६.	बाँटकर
स्वस्तये	९.	कल्याण के लिए (और)	षट्सु	१७.	छह
आत्मानम्	१३.	अपने	वसन्तादिषु	१८.	वसन्त आदि
त्रयीमयम्	१४.	वेदमय (शरीर को)	ऋतुषु	१९.	ऋतुओं में
कर्म	१०.	कर्मों की	यथा	२०.	यथा-
विशुद्धि	११.	शुद्धि के	उपजोषम्	२०.	योग्य
निमित्तम्	१२.	कारण	ऋतुगुणान्	२१.	उनके गुणों का
विदधाति ॥	२२.	विधान करते हैं			

श्लोकार्थ—वह यह साक्षात् आदि पुरुष भगवान् नारायण ही लोकों के कल्याण के लिए और कर्मों की शुद्धि के कारण अपने वेदमय शरीर को बारह मासों में बाँटकर छह वसन्त आदि ऋतुओं में यथा-योग्य उनके गुणों का विधान करते हैं, जिसे विद्वान् और वेद भी जानने की इच्छा रखते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

तमेतमिह पुरुषास्त्रय्या विद्यया वर्णाश्रमाचारानुपथा उच्चावचैः कर्मभिराम्नातैर्योगवितानैश्च श्रद्धया यजन्तोऽञ्जसा श्रेयः समधिगच्छन्ति ॥४॥

पदच्छेद—

तम् एतम् इह पुरुषाः त्रय्या विद्यया वर्णाश्रम आचार अनु पथाः उच्चावचैः कर्मभिः आम्नातैः योग वितानैः च श्रद्धया यजन्तः अञ्जसा श्रेयः समधिगच्छन्ति ॥

शब्दार्थ—

तम् एतम् इह	१. ३. वे इस लोक में	योग	१२.	योग के
पुरुषाः त्रय्या विद्यया	२. ४. पुरुष वेद त्रयी के द्वारा	वितानैः	१३.	साधनों से
वर्णाश्रम	५. वर्णाश्रम	च	११.	और
आचार	६. धर्म का	श्रद्धया	१४.	श्रद्धापूर्वक
अनुपथाः	७. अनुकरण करने वाले	यजन्तः	१५.	आराधना करके
उच्चावचैः	८. बड़े छोटे	अञ्जसा	१६.	सुगमता से
कर्मभिः	९. कर्मों के द्वारा	श्रेयः	१७.	कल्याण को
आम्नातैः	१०. देवताओं के रूप में	समधिगच्छन्ति ॥	१८.	प्राप्त करते हैं

श्लोकार्थ—वे पुरुष इस लोक में वेद त्रयी के द्वारा वर्णाश्रम धर्म का अनुसरण करने वाले बड़े-छोटे कर्मों के द्वारा देवताओं के रूप में और योग के साधनों से श्रद्धा पूर्वक आराधना करके सुगमता से कल्याण को प्राप्त करते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

अथ स एष आत्मा लोकानां द्यावापृथिव्योरन्तरेण नभोवलयस्य कालचक्रगतो द्वादश मासान् भुङ्क्ते राशिसंज्ञान् संवत्सरावयवान्मासः पक्षद्वयं दिवा नक्तं चेति सपादर्क्षद्वयमुपदिशन्ति यावता षष्ठमंशं भुञ्जीत स वै ऋतुरित्युपदिश्यते संवत्सरावयवः ॥५॥

पदच्छेद—अथ सः एषः आत्मा लोकानाम् द्यावा पृथिव्योः अन्तरेण नभः वलयस्य काल चक्र गतः द्वादश मासान् भुङ्क्ते राशि संज्ञान् संवत्सर अवयवान् मासः पक्ष द्वयम् दिवा नक्तम् च इति सपादऋक्ष द्वयम् उपदिशन्ति यावता षष्ठम् अंशम् भुञ्जीत सः वै ऋतुः इति उपदिश्यते संवत्सर अवयवः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	अवयवान् ॥	१४.	अवयवभूत
सः	२.	वे भगवान्	मासः	१६.	मास
एष	३.	सूर्य	पक्षद्वयम्	२३.	दो पक्ष (कृष्ण शुक्ल) का
आत्मा	५.	आत्मा है	दिवा	२०.	दिन
लोकानाम्	४.	संसार की	नक्तम्	२२.	रात्रि के भेद से
द्यावा	६.	द्युलोक और	च	२१.	और
पृथिव्याः	७.	पृथिवी के	इति सपादऋक्ष द्वयम्	२४.	तथा सवा दो नक्षत्रों का
अन्तरेण	८.	मध्य	उपदिशन्ति	२५.	बताया जाता है
नभः	९.	आकाश	यावता	२६.	जितने समय में (सूर्य)
वलयस्य	१०.	मण्डल में	षष्ठम्	२७.	संवत्सर का छठा
काल-चक्र	११.	काल-चक्र में	अंशम्	२८.	भाग
गतः	१२.	स्थित होकर	भुञ्जीत	२९.	भोगते हैं
द्वादश	१५.	बारह	सः वै	३१.	उस
मासान्	१६.	मासों और	ऋतु इति	३३.	ऋतु
भुङ्क्ते	१८.	भोगते हैं	उपदिश्यते	३४.	कहते हैं
राशिसंज्ञान्	१७.	राशियों को	संवत्सर	३०.	संवत्सर के
संवत्सर	१३.	संवत्सर के	अवयवः	३१.	अवयव को

श्लोकार्थ—तदनन्तर वे भगवान् सूर्य संसार की आत्मा हैं। द्युलोक और पृथिवी के मध्य आकाश मण्डल में काल चक्र में स्थित होकर संवत्सर के अवयभूत बारह मासों और राशियों को भोगते हैं। मास दिन और रात के भेद से दो पक्ष (कृष्ण-शुक्ल) का तथा सवा दो नक्षत्रों का बताया जाता है। जितने समय में सूर्य संवत्सर का छठा भाग भोगते हैं, संवत्सर के उस अवयव को ऋतु कहते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

अथ च यावतार्धेन नभोवीथ्यां प्रचरति तं कालमयनमाचक्षते ॥६॥

पदच्छेद—अथ च यावत् अर्धेन नभः वीथ्याम् प्रचरति तम् कालम् अयनम् आचक्षते ॥

शब्दार्थ—

अथ च	१.	इसके बाद (भगवान् सूर्य)	प्रचरति	६.	चलते हैं
यावत्	२.	जितना	तम्	७.	उसे
अर्धेन	३.	आधा	कालम्	८.	समय को
नभः	५.	आकाश का	अयनम्	९.	एक अयन
वीथ्याम्	४.	मार्ग	आचक्षते ॥	१०.	कहते हैं

श्लोकार्थ—इसके बाद भगवान् सूर्य जितना आधा मार्ग आकाश में चलते हैं, उस समय को अयन कहते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

अथ च यावन्नभोमण्डलं सह द्यावापृथिव्योर्मण्डलाभ्यां कार्त्स्न्येन स ह भुञ्जीत तं कालं संवत्सरं परिवत्सरमिडावत्सरमनुवत्सरं वत्सरमिति भानोर्मान्द्यशैघ्र्यसमगतिभिः समामनन्ति ॥७॥

पदच्छेद—अथ च यावत् नभो मण्डलम् सह द्यावा पृथिव्योः मण्डलाभ्याम् कार्त्स्न्येन सह भुञ्जीत तम कालम् संवत्सरम् परिवत्सरम् इडावत्सरम् अनुवत्सरम् वत्सरम् इति भानोः मान्द्य शैघ्र्य समागतिभिः समामनन्ति ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	कालम्	१७.	समय को
च	१२.	और	संवत्सरम्	१८.	संवत्सर
यावत्	७.	जितने समय में	परिवत्सरम्	१९.	परिवत्सर
नभो मण्डलम्	९.	आकाश मण्डल को	इडावत्सरम्	२०.	इडावत्सर
सह	१४.	साथ	अनुवत्सरम्	२१.	अनुवत्सर और
द्यावा	१०.	स्वर्ग लोक	वत्सरम्	२२.	वत्सर
पृथिव्योः	११.	पृथिवी	इति		
मण्डलाभ्याम्	१३.	मण्डल के	भानोः	२.	सूर्य भगवान् अपनी
कार्त्स्न्येन	८.	सम्पूर्ण	मान्द्य	४.	मन्द और
स ह	९.	वे	शैघ्र्य	५.	शीघ्र
भुञ्जीत	१५.	भोगते हैं	समागतिभिः	६.	समान गति से
तम्	१६.	उस	समामनन्ति ॥	२३.	कहते हैं

श्लोकार्थ—तदनन्तर वे सूर्य भगवान् अपनी शीघ्र, मन्द और समान गति से जितने समय में सम्पूर्ण आकाश मण्डल को स्वर्गलोक और पृथिवी मण्डल के साथ भोगते हैं, उस समय को संवत्सर, परिवत्सर, इडावत्सर, अनुवत्सर और वत्सर कहते हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

एवं चन्द्रमा अर्कगभस्तिभ्य उपरिष्टाल्लक्षयोजनत उपलभ्यमानोऽर्कस्य संवत्सरभुक्तिं पक्षाभ्यां मासभुक्तिं सपादर्क्षाभ्यां दिनेनैव पक्षभुक्तिमग्रचारी द्रुततरगमनो भुङ्क्ते ॥८॥

पदच्छेद—एवम् चन्द्रमा अर्कगभस्तिभ्यः उपरिष्टात् लक्षयोजनत उपलभ्यमानः अर्कस्य संवत्सर भुक्तिम् पक्षाभ्याम् मास भुक्तिम् सपादर्क्षाभ्याम् दिनेन एव पक्षभुक्तिम् अग्रचारी द्रुततर गमनः भुङ्क्ते ॥

शब्दार्थ—

एवम् चन्द्रमा	१.	इस प्रकार चन्द्रमा	पक्षाभ्याम् मास	८.	दो पक्षों में एक मास के
अर्कगभस्तिभ्यः	२.	सूर्य की किरणों से	भुक्तिम् सपादर्क्षाभ्याम्	९.	भोग को सवा दो नक्षत्र में
उपरिष्टात्	४.	ऊपर	दिनेन एव	११.	एक दिन में ही
लक्षयोजनतः	३.	एक लाख योजन	पक्षभुक्तिम्	१०.	एक पक्ष के भोग को
उपलभ्यमानः	५.	दिखाई पड़ता है	अग्रचारी	१४.	आगे चलता है
अर्कस्य	६.	जो सूर्य के	द्रुततर गमनः	१३.	शीघ्रगामी होने से
संवत्सर भुक्तिम्	७.	एक वर्ष के भोग(मार्ग)को	भुङ्क्ते ॥	१२.	भोगते (तै कर लेते हैं)

श्लोकार्थ—इस प्रकार चन्द्रमा सूर्य की किरणों से एक लाख योजन ऊपर दिखाई पड़ता है। जो सूर्य के एक वर्ष के भोग (मार्ग) को, दो पक्ष में, एक मास के भोग को सवा दो नक्षत्र में और एक पक्ष के भोग को एक दिन में भोगते (तै कर लेते) हैं। शीघ्रगामी होने से आगे चलता है ॥

नवमः श्लोकः

अथ चापूर्यमाणाभिश्च कलाभिरमराणां क्षीयमाणाभिश्च कलाभिः पितृणामहोरात्राणि पूर्वपक्षापरपक्षाभ्यां वितन्वानः सर्वजीवनिवहप्राणो जीवश्चैकमेकं नक्षत्रं त्रिंशता मुहूर्तैर्भुङ्क्ते ॥९॥

पदच्छेद—अथ च आपूर्यमाणाभिः च कलाभिः अमराणाम् क्षीयमाणाभिः च कलाभिः पितृणाम् अहोरात्राणि पूर्वपक्षापरपक्षाभ्याम् वितन्वानः सर्वजीवनिवहप्राणः जीवः च एकम् नक्षत्रम् त्रिंशता भुङ्क्ते ॥

शब्दार्थ—

अथ च	१.	तदनन्तर (यह चन्द्रमा)	पूर्वपक्ष	२.	कृष्ण पक्ष में
आपूर्यमाणाभिः	८.	बढ़ती हुई	अपरपक्षाभ्याम्	७.	शुक्ल पक्ष में
च कलाभिः	९.	कलाओं से	वितन्वानः	१३.	विभाग करता हुआ
अमराणाम्	१०.	देवताओं के	सर्वजीवनिवह	१९.	सम्पूर्ण प्राणियों का
क्षीयमाणाभिः	३.	क्षीण होती हुई	प्राणः जीवः च	२०.	प्राण और जीवन हैं
च	६.	और	एकम्-एकम्	१६.	एक-एक
कलाभिः	४.	कलाओं से	नक्षत्रम्	१७.	नक्षत्र को
पितृणाम्	५.	पितृगणों के	त्रिंशता	१४.	तीस-तीस
अहो	११.	दिन (और)	मुहूर्तैः	१५.	मुहूर्त में
रात्राणि	१२.	रात का	भुङ्क्ते ॥	१८.	भोगता है (यह)

श्लोकार्थ—तदनन्तर यह चन्द्रमा कृष्ण पक्ष में क्षीण होती हुई कलाओं से पितृगणों के और शुक्ल पक्ष पक्ष में बढ़ती हुई कलाओं से देवताओं के दिन और रात का विभाग करता हुआ तीस-तीस मुहूर्त में एक-एक नक्षत्र को भोगता है। यह समस्त प्राणियों का प्राण और जीवन है ॥

दशम श्लोकः

य एष षोडशकलः पुरुषो भगवान्मनोमयोऽन्नमयोऽमृतमयो देवपितृमनुष्यभूतपशुपक्षिसरीसृपवीरुधां प्राणाप्यायनशीलत्वात्सर्वमय इति वर्णयन्ति ॥

पदच्छेद—यः एष षोडशकलः पुरुषः भगवान् मनोमयः अन्नमयः अमृतमयः देव पितृ मनुष्य भूत पशु पक्षि सरीसृप वीरुधाम् प्राण आप्यायन शीलत्वात् सर्वमय इति वर्णयन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः एष	१. जो ये	पशुपक्षि	१०. पशु पक्षी
षोडशकलः	२. सोलह कलाओं से युक्त	सरीसृप	११. रेंगने वाले जन्तु
पुरुषः	६. पुरुष स्वरूप	वीरुधाम्	१२. और वृक्ष आदि
भगवान्	७. भगवान् चन्द्रमा है (वे)	प्राण	१३. सभी प्राणियों का
मनोमयः	३. मनोमय	आप्यायन	१४. पोषण करते हैं
अन्नमयः	४. अन्नमय	शीलत्वात्	१५. इसलिए इन्हें
अमृतमय	५. अमृतमय और	सर्वमय	१६. सर्वमय
देव पितृ मनुष्य	८. देवता पितर मनुष्य	इति वर्णयन्ति	१७. कहते हैं
भूत ॥	९. भूत		

श्लोकार्थ—जो ये सोलह कलाओं से युक्त मनोमय, अन्नमय, अमृतमय, और पुरुष स्वरूप भगवान् (चन्द्रमा) हैं। वे देवता, पितर, मनुष्य, भूत, पशु, पक्षी, रेंगने वाले जन्तु और वृक्ष आदि सभी प्राणियों का पोषण करते हैं, इसलिए इन्हें सर्वमय कहते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

तत उपरिष्टात्त्रिलक्षयोजनतो नक्षत्राणि मेरुं दक्षिणेनैव कालायन ईश्वरयोजितानि सहाभिजिताष्टाविंशतिः ॥११॥

पदच्छेद—तत उपरिष्टात् त्रिलक्ष योजनतः नक्षत्राणि मेरुम् दक्षिणेन एव काल अयन ईश्वर योजितानि सह अभिजिता अष्टाविंशतिः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. उन चन्द्रमा से	काल	९. काल
उपरिष्टात्	३. ऊपर	अयन	१०. चक्र में
त्रिलक्ष योजनतः	२. तीन लाख योजन	ईश्वर	८. ईश्वर ने
नक्षत्राणि	७. नक्षत्र हैं (इन्हें)	योजितानि	११. नियुक्त किया है (ये)
मेरुम्	१२. मेरु को	सह	५. साथ
दक्षिणेन	१३. दाहिनी ओर रखकर	अभिजिता	४. अभिजित् के
एव	१४. चलते हैं	अष्टाविंशतिः ॥	६. अट्ठाईस

श्लोकार्थ—उन चन्द्रमा से तीन लाख योजन ऊपर अभिजित् के साथ अट्ठाईस नक्षत्र हैं, इन्हें ईश्वर ने काल चक्र में नियुक्त किया है। ये मेरु को दाहिने रखकर चलते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

तत उपरिष्टादुशना द्विलक्षयोजनत उपलभ्यते पुरतः पश्चात्सहैव वार्कस्य शैघ्र्यमान्द्यसाम्याभिर्गतिभिरर्कवच्चरति लोकानां नित्यदानुकूल एव प्रायेण वर्षयंश्चारेणानुमीयते स वृष्टिविष्टम्भग्रहोपशमनः ॥१२॥

पदच्छेद—ततः उपरिष्टात् उशना द्विलक्षयोजनतः उपलभ्यते पुरतः पश्चात् सह एव अर्कस्य शैघ्र्यमान्द्य साम्याभिः गतिभिः अर्कवत् चरति लोकानाम् नित्यदा अनुकूल एव प्रायेण वर्षयन् चारेण अनुमीयते सः वृष्टि विष्टम्भ ग्रह उपशमनः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इनसे	गतिभिः अर्कवत्	७.	गतियों से सूर्य के
उपरिष्टात् उशना	३.	ऊपर शुक्र	चरति	१०	चलते हैं
द्विलक्ष योजनतः	२.	दो लाख योजन	लोकानाम् नित्यदा	११.	लोकों के सर्वदा
उपलभ्यते	४.	दिखाई देते हैं	अनुकूल एव	१२	अनुकूल ही रहते हैं
पुरतः पश्चात्	८.	सामने पीछे और	प्रायेण वर्षयन्	१३.	प्रायः वर्षा करते हैं
सह एव वा	९.	साथ-साथ ही	चारेण अनुमीयते	१४.	इनकी गति के द्वारा अनुमान होता है
अर्कस्य शैघ्र्य	५.	सूर्य की शीघ्र	सः वृष्टि विष्टम्भ	१५.	वह वर्षा को रोकने वाले
मान्द्य साम्याभिः	६.	मन्द और समान	ग्रह उपशमनः ॥	१६.	ग्रहों को शान्तकर देते हैं

श्लोकार्थ—इन से दो लाख योजन ऊपर शुक्र दिखाई देते हैं। सूर्य की शीघ्र, मन्द और समान गतियों से सूर्य के सामने पीछे और साथ-साथ ही चलते हैं। लोकों के सर्वदा अनुकूल ही रहते हैं। प्रायः वर्षा करते हैं। इनकी गति के द्वारा अनुमान होता है। वह वर्षा को रोकने वाले ग्रहों को शान्त करते हैं॥

त्रयोदशः श्लोकः

उशनसा बुधो व्याख्यातस्तत उपरिष्टाद् द्विलक्षयोजनतो बुधः सोमसुत उपलभ्यमानः प्रायेण शुभकृद्यदार्काद् व्यतिरिच्येत तदातिवाताभ्रप्रायानावृष्ट्यादिभयमाशंसते ॥१३॥

पदच्छेद—उशनसा बुधः व्याख्यातः ततः उपरिष्टात् द्विलक्षयोजतः बुधः सोमसुतः उपलभ्यमानः प्रायेण शुभकृत् यदा अर्कात् व्यतिरिच्येत तदा अतिवात अभ्रप्राय अनावृष्टि आदि भयम् आशंसते ॥

उशनसा	१.	शुक्र के समान ही	उपलभ्यमानः	८.	दिखाई पड़ता है
बुधः	२.	बुध की	प्रायेण शुभकृत्	९.	(ये) प्रायः कल्याणकारो है
व्याख्यातः	३.	व्याख्या हो गई	यदा अर्कात्	१०.	जब सूर्य की गति का
ततः	४.	उससे	व्यतिरिच्येत	११.	उल्लंघन करता है
उपरिष्टात्	६.	ऊपर	तदा अतिवात	१२.	तब अधिक आंधी
द्विलक्षयोजनतः	५.	दो लाख योजन	अभ्रप्राय अनावृष्टि	१३.	बादल तथा सूखे
बुधः सोमसुतः	७.	बुध चन्द्रमा का पुत्र	अदिभयम् आशंसते ॥	१४.	आदि की सूचना देता है

श्लोकार्थ—शुक्र के समान ही बुध की व्याख्या हो गई। उससे दो लाख योजन ऊपर बुध चन्द्रमा का पुत्र दिखाई पड़ता है। यह प्रायः कल्याणकारी ग्रह है। जब सूर्य की गति का उल्लंघन करता है तब अधिक आंधी, बादल तथा सूखे आदि की सूचना देता है॥

चतुर्दशः श्लोकः

अत ऊर्ध्वमङ्गारकोऽपि योजनलक्षद्वितय उपलभ्यमानस्त्रिभिस्त्रिभिः पक्षैरेकैकशो राशीन्द्वादशानुभुङ्क्ते यदि न वक्रेणाभिवर्तते प्रायेणाशुभग्रहोऽघशंसः ॥१४॥

पदच्छेद—अतः ऊर्ध्वम् अङ्गारकः अपि योजन लक्ष द्वितय उपलभ्यमानः त्रिभिः त्रिभिः पक्षैः एकएकशः राशीन् द्वादश अनुभुङ्क्ते यदि न वक्रेण अभिवर्तते प्रायेण अशुभ ग्रहः अघशंसः ॥

शब्दार्थ—

अतः	१.	इससे	राशीन्	११.	राशियों को
ऊर्ध्वम् अङ्गारकः	६.	ऊपर मङ्गल	द्वादश	१०.	बारह
अपि	२.	भी	अनुभुङ्क्ते	१२.	भोगता है
योजन	५.	योजन	यदि	१३.	यदि
लक्ष	४.	लाख	न	१५.	नहीं
द्वितय	३.	दो	वक्रेण	१४.	वक्र गति से
उपलभ्यमानः	७.	दिखाई पड़ता है (जो)	अभिवर्तते प्रायेण	१६.	चले तो प्रायः
त्रिभिः त्रिभिः	८.	तीन-तीन	अशुभ ग्रहः	१७.	अमङ्गलकारी ग्रह है और
पक्षैः एकएकशः	९.	पक्षों में एक-एक करके	अघशंसः ॥	१८.	अमङ्गल का सूचक है

श्लोकार्थ—इससे भी दो लाख योजन ऊपर मङ्गल दिखाई पड़ता है। जो तीन-तीन पक्षों में एक-एक करके बारह राशियों को भोगता है। यदि वक्र गति से नहीं चले तो प्रायः अमङ्गलकारी ग्रह है और अमङ्गल का सूचक है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

तत उपरिष्टाद् द्विलक्षयोजनान्तरगतो भगवान् बृहस्पतिरेकैकस्मिन् राशौ परिवत्सरं परिवत्सरं चरति यदि न वक्रः स्यात्प्रायेणानुकूलो ब्राह्मणकुलस्य ॥१५॥

पदच्छेद—ततः उपरिष्टात् द्विलक्ष योजन अन्तरगतः भगवान् बृहस्पतिः एकएकस्मिन् राशौ परिवत्सरम् परिवत्सरम् चरति यदि न वक्रः स्यात् प्रायेण अनुकूलः ब्राह्मण कुलस्य ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इनके	परिवत्सरम्	१४.	वर्ष में
उपरिष्टात्	२.	ऊपर	चरति	१५.	पार करते हैं
द्विलक्षयोजन	३.	दो लाख योजन की	यदि	७.	यदि
अन्तरगतः	४.	दूरी पर	न	९.	नहीं
भगवान	५.	भगवान	वक्रः	८.	वक्र गति से
बृहस्पतिः	६.	बृहस्पति हैं (वे)	स्यात्	१०.	चले तो
एकएकस्मिन्	११.	एक-एक	प्रायेण	१६.	प्रायः
राशौ	१२.	राशि को	अनुकूलः	१८	अनुकूल रहते हैं
परिवत्सरम्	१३.	वर्ष	ब्राह्मण कुलस्य ॥	१७.	ब्राह्मण कुल के लिए

श्लोकार्थ—इसके ऊपर दो लाख योजन की दूरी पर भगवान् बृहस्पति हैं। वे यदि वक्र गति से नहीं चले तो एक-एक राशि को वर्ष-वर्ष में पार करते हैं। ये प्रायः ब्राह्मण कुल के लिए अनुकूल रहते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

तत उपरिष्टाद्योजनलक्षद्वयात्प्रतीयमानः शनैश्चर एकैकस्मिन् राशौ त्रिंशन्मासान् विलम्बमानः सर्वानेवानुपर्येति तावद्भिरनुवत्सरैः प्रायेण हि सर्वेषामशान्तिकरः ॥१६॥

पदच्छेद—तत उपरिष्टात् योजन लक्ष द्वयात् प्रतीयमानः शनैश्चरः एकएकस्मिन् राशौ त्रिंशत् मासान् विलम्बमानः सर्वान् एव अनुपर्येति तावद्भिः अनुवत्सरैः प्रायेण हि सर्वेषाम् अशान्तिकरः ॥

शब्दार्थ—

तत	१.	उनसे	सर्वान्	१२.	सब
उपरिष्टात्	४.	ऊपर	एव	१३.	ही राशियों को
योजन	३.	योजन	अनुपर्येति	१४.	पार करने में
लक्षद्वयात्	२.	दो लाख	तावद्भिः	११.	उसी प्रकार से
प्रतीयमानः	६.	दिखाई पड़ते हैं ये	अनुवत्सरैः	१५.	तीस वर्ष (लगते हैं)
शनैश्चरः	५.	शनैश्चर	प्रायेण हि	१६.	प्रायः (ये)
एक एकस्मिन्	७.	एक-एक	सर्वेषाम्	१७.	सभी के लिए
राशौ	८.	राशि में	अशान्तिकरः	१८.	अशान्तिकारक हैं
त्रिंशत् मासान्	९.	तीस-तीस महीने तक			
विलम्बमानः ॥	१०.	रहते हैं			

श्लोकार्थ—उससे दो लाख योजन ऊपर शनैश्चर दिखाई पड़ते हैं। ये एक-एक राशि में तीस-तीस महीने तक रहते हैं। उसी प्रकार से सब ही राशियों को पार करने में तीस वर्ष लगते हैं। प्रायः ये सभी के लिए अशान्तिकारक हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

तत उत्तरस्मादृषय एकादशलक्षयोजनान्तर उपलभ्यन्ते य एव लोकानां शमनुभावयन्तो भगवतो विष्णोर्यत्परमं पदं प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति ॥१७॥

पदच्छेद—ततः उत्तरस्मात् ऋषयः एकादश लक्ष योजन अन्तरे उपलभ्यन्ते य एव लोकानाम् शम् अनु भावयन्तः भगवतः विष्णोः यत् परमम् पदम् प्रदक्षिणम् प्रक्रमन्ति ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इनके ऊपर	लोकानाम्	८.	लोकों के
उत्तरस्मात्	२.	उत्तर दिशा में	शम् भावयन्तः	९.	कल्याण की कामना करते हुए
ऋषयः	५.	सप्त ऋषि गण	भगवतः विष्णोः	१०.	भगवान् विष्णु के
एकादश	३.	ग्यारह	यत् परमम्	११.	परम
लक्ष योजन अन्तरे	४.	लाख योजन की दूरी पर	पदम्	१२.	पद की
उपलभ्यन्ते	६.	दिखाई देते हैं	प्रदक्षिणाम्	१३.	प्रदक्षिणा
यः एवम्	७.	जो ये सब	प्रक्रमन्ति ॥	१४.	करते हैं

श्लोकार्थ—इनके ऊपर उत्तर दिशा में ग्यारह लाख योजन की दूरी पर सप्त ऋषि गण दिखाई देते हैं। जो ये सब लोकों के कल्याण की कामना करते हुये भगवान् विष्णु के परम पद की प्रदक्षिणा करते हैं ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे ज्योतिश्चक्रवर्णने द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—अथ तस्मात्परतस्त्रयोदशलक्षयोजनान्तरतो यत्तद्विष्णोः परमं पदमभिवदन्ति तत्र ह महाभागवतो ध्रुव औत्तानपादिरग्निनेन्द्रेण प्रजापतिना कश्यपेन धर्मेण च समकालयुग्भिः सबहुमानं दक्षिणतः क्रियमाण इदानीमपि कल्पजीविनामाजीव्य उपास्ते तस्येहानुभाव उपवर्णितः ॥१॥

पदच्छेद—अथ तस्मात् परतः त्रयोदशलक्ष योजन अन्तरतः यत् तद् विष्णोः परमम् पदम् अभिवदन्ति तत्र ह महाभागवतः ध्रुव औत्तान पादिः अग्निना इन्द्रेण प्रजा पतिना कश्यपेन धर्मेण च समकाल युग्भिः सबहुमानम् दक्षिणातः क्रियमाण इदानीम् अपि कल्प जीविनाम् आजीव्यः उपास्ते तस्य इह अनुभावः उपवर्णितः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	जप्रापतिना	१६	प्रजापति
तस्मात्	२.	उन सप्त ऋषियों से	कश्यपेन	२०.	कश्यप
परतः	३.	ऊपर	धर्मेण	२२.	धर्म
त्रयोदश	४.	तेरह	च	२१.	और
लक्षयोजन	५.	लाख योजन की	समकाल	२३.	एक
अन्तरतः	६.	दूरी पर (ध्रुवलोक है)	युग्भिः	२४.	साथ
यत्	७.	जिसे	सबहुमानम्	२५.	अत्यन्त आदरपूर्वक
तत्	८.	उन भगवान्	दक्षिणतः	२६.	प्रदक्षिणा
विष्णोः	९.	विष्णु का	क्रियमाण	२७.	करते हैं
परमम्	१०.	परम	इदानीम्	२८.	इस समय
पदम्	११.	पद	अपि	२९.	भी
अभिवदन्ति	१२.	कहते हैं	कल्प	३०.	कल्प
तत्र ह	१३.	वहाँ	जीविनाम्	३१.	पर्यन्त रहने वाले
महा भागवतः	१५.	महान् भगवद् भक्त	आजीव्य	३२.	लोग
ध्रुवः	१६.	ध्रुव जी हैं	उपास्ते	३३.	स्थित हैं
औत्तानपादिः	१४.	उत्तान पाद के पुत्र	तस्य इह	३४.	उनका इसलोक का
अग्निना	१७.	अग्नि	अनुभावः	३५.	प्रभाव
इन्द्रेण।	१८.	इन्द्र	उपवर्णितः ॥	३६.	पहले वर्णन किया है

श्लोकार्थ—इसके बाद उन सप्त ऋषियों से ऊपर तेरह लाख योजन की दूरी पर ध्रुव लोक है। जिसे उन भगवान् विष्णु का परम पद कहते हैं। वहाँ उत्तानपाद के पुत्र महान् भगवद् भक्त ध्रुव जी हैं। अग्नि, इन्द्र, प्रजापति, कश्यप और धर्म एक साथ अत्यन्त आदरपूर्वक प्रदक्षिणा करते हैं। इस समय भी कल्प पर्यन्त रहने वाले लोग स्थित हैं। उनका इस लोक का प्रभाव पहले वर्णन किया है ॥

द्वितीयः श्लोकः

स हि सर्वेषां ज्योतिर्गणानां ग्रहनक्षत्रादीनामनिमिषेणाव्यक्तरंहसा भगवता कालेन भ्राम्यमाणानां स्थाणुरिवावष्टम्भ ईश्वरेण विहितः शश्वदवभासते ॥२॥

पदच्छेद—सः हि सर्वेषाम् ज्योतिः गणानाम् ग्रह नक्षत्र आदीनाम् अनिमिषेण अव्यक्त रंहसा भगवता कालेन भ्राम्यमाणानाम् स्थाणुः इव अवष्टम्भ ईश्वरेण विहितः शश्वत्‌अवभासते ॥

शब्दार्थ—

सः हि	९. वे	भगवता	४. भगवान्
सर्वेषाम्	१०. सभी	कालेन	५. काल के द्वारा
ज्योतिः	११. ज्योति	भ्राम्यमाणानाम्	१३. घुमाये जाते हैं
गणानाम्	१२. गंण	स्थाणुः	१६. स्तम्भ के
ग्रह	६. ग्रह	इव	१७. रूप में
नक्षत्र	७. नक्षत्र	अवष्टम्भः	१५. आधार
आदीनाम्	८. इत्यादि	ईश्वरेण	१४. ईश्वर ने इन्हें
अनिमिषेण	१. अपलक (और)	विहितः	१८. नियुक्त किया है
अव्यक्त	२. अव्यक्त	शश्वत्	१९. ये हमेशा
रंहसा	३. गतिवाले	अवभासते ॥	२०. प्रकाशित होते रहते हैं

श्लोकार्थ—अपलक और अव्यक्त गति वाले भगवान् काल के द्वारा ग्रह, नक्षत्र इत्यादि वे सभी ज्योतिर्गण घुमाए जाते हैं। ईश्वर ने इन्हें आधार स्तम्भ के रूप में नियुक्त किया है। ये हमेशा प्रकाशित होते रहते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

यथा मेढीस्तम्भ आक्रमणपशवः संयोजितास्त्रिभिस्त्रिभिः सवनैर्यथास्थानं मण्डलानि चरन्त्येवं भगणा ग्रहादय एतस्मिन्नन्तर्बहिर्योगेन कालचक्र आयोजिता ध्रुवमेवावलम्ब्य वायुनोदीर्यमाणा आकल्पान्तं परिचङ्क्रमन्ति नभसि यथा मेघाः श्येनादयो वायुवशाः कर्मसारथयः परिवर्तन्ते एवं ज्योतिर्गणाः प्रकृतिपुरुषसंयोगानुगृहीताः कर्मनिर्मितगतयो भुवि न पतन्ति ॥३॥

पदच्छेद—यथा मेढीस्तम्भे आक्रमण पशवः संयोजिताः त्रिभिः त्रिभिः सवनैः यथा स्थानम् मण्डलानि चरन्ति एवम् भगणाः ग्रह आदयः एतस्मिन् अन्तः बहिः योगेन कालचक्रे आयोजिताः ध्रुवम् एव अवलम्ब्य वायुना उदीर्यमाणाः आकल्पान्तम् परिचङ्क्रमन्ति नभसि यथा मेघाः श्येन आदयः वायु वशाः कर्म सारथयः परिवर्तन्ते एवम् ज्योतिर्गणाः प्रकृति पुरुष संयोग अनुगृहीताः कर्म निर्मित गतयः भुवि न पतन्ति ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जिस प्रकार	आकल्पान्तम्	२०.	कल्पपर्यन्त
मेढीस्तम्भे	२.	मेढी स्तम्भ के चारों ओर	परिचङ्क्रमन्ति	२२.	घूमते रहते हैं
आक्रमणपशवः	३.	खूंदने वाले-पशु	नभसि	२१.	आकाश में
संयोजिताः	७.	लगाये जाते हैं जो	यथा-मेघाः	२३.	जिस प्रकार बादल और
त्रिभिः त्रिभिः	४.	तीन-तीन	श्येन आदयः	२४.	बाज आदि पक्षी
सवनैः	५.	रस्सियों से जिस प्रकार	वायुवशाः	२६.	वायु के वश में होकर
यथास्थानम्	६.	यथा स्थान	कर्मसारथयः	२५.	कर्मों की सहायता से
मण्डलानि	८.	मण्डल बनाकर	परिवर्तन्ते	२७.	चलते हैं
चरन्ति एवम्	९.	घूमते हैं उसी प्रकार	एवम्	२८.	इसी प्रकार ये
भगणाः	१०.	नक्षत्र गण	ज्योतिर्गणाः	२९.	ज्योतिर्गणाः
ग्रह आदयः	११.	ग्रह-इत्यादि	प्रकृति पुरुष	३०.	प्रकृति-पुरुष के
एतस्मिन्	१२.	इसके	संयोग	३१.	संयोग से
अन्तः बहिः	१३.	बाहर-भीतर के	अनुगृहीताः	३२.	अनुगृहीत
योगेन	१४.	क्रम से	कर्म	३३.	कर्मों के
कालचक्र	१५.	कालचक्र में	निर्मित	३४.	अनुसार
आयोजिताः	१६.	नियुक्त होकर	गतयः	३५.	गतिशील हैं (तथा)
ध्रुवम् एव	१७.	ध्रुव लोक का ही	भुवि	३६.	पृथ्वी पर
अवलम्ब्यवायुना	१८.	सहारा लेकर वायु की	न	३७.	नहीं
उदीर्यमाणा	१९.	प्रेरणा से	पतन्ति ॥	३८.	गिरते हैं

श्लोकार्थ—जिस प्रकार मेढी स्तम्भ के चारों ओर खूंदने वाले पशु तीन-तीन छोटी-बड़ी-मध्यम तीन भेद वाली रस्सियों से जिस प्रकार से यथा-स्थान लगाये जाते है। जो मण्डल बनाकर घूमते हैं। उसी प्रकार नक्षत्रगण ग्रह आदि बाहर भीतर के क्रम से कालचक्र में नियुक्त होकर ध्रुवलोक का ही सहारा लेकर वायु की प्रेरणा से कल्पपर्यन्त आकाश में घूमते रहते हैं। जिस प्रकार बादल और बाज आदि पक्षी कर्मों की सहायता से वायु के वश में होकर चलते हैं, इसी प्रकार से ज्योतिर्गण प्रकृति और पुरुष के संयोग से अनुगृहीत कर्मों के अनुसार गतिशील हैं तथा पृथ्वी पर नहीं गिरते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

केचनैतज्ज्योतिरनीकं शिशुमारसंस्थानेन भगवतो वासुदेवस्य योग-धारणायामनुवर्णयन्ति ॥४॥

पदच्छेद—केचन एतत् ज्योतिः अनीकम् शिशुमार संस्थानेन भगवतः वासुदेवस्य योग धारणायाम् अनुवर्णयन्ति ॥

शब्दार्थ—

केचन	१. कोई-कोई पुरुष	भगवतः	७. भगवान्
एतत्	२. इस	वासुदेवस्य	८. वासुदेव की
ज्योतिः	३. ज्योति	योग	९. योग
अनीकम्	४. चक्र का	धारणा	१०. माया के
शिशुमार	५. शिशुमार के	याम्	११. आधार पर
संस्थानेन	६. रूप में	अनुवर्णयन्ति ॥	१२. वर्णन करते हैं

श्लोकार्थ—कोई-कोई पुरुष इस ज्योति चक्र का शिशुमार के रूप में भगवान् वासुदेव की योगमाया के आधार पर वर्णन करते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

यस्य पुच्छाग्रेऽवाक्शिरसः कुण्डलीभूतदेहस्य ध्रुव उपकल्पितस्तस्य लाङ्गूले प्रजापतिरग्निरिन्द्रो धर्म इति पुच्छमूले धाता विधाता च कट्यां सप्तर्षयः। तस्य दक्षिणावर्तकुण्डलीभूतशरीरस्य यान्युदगयनानि दक्षिणपार्श्वे तु नक्षत्राण्युपकल्पयन्ति दक्षिणायनानि तु सव्ये। यथा शिशुमारस्य कुण्डलाभोगसन्निवेशस्य पार्श्वयोरुभयोरप्यवयवाः समसंख्या भवन्ति। पृष्ठे त्वजवीथी आकाशगङ्गा चोदरतः ॥५॥

पदच्छेद—यस्य पुच्छाग्रे अवाक् शिरसः कुण्डलीभूत देहस्य ध्रुव उपकल्पितः तस्य लाङ्गूले प्रजापतिः अग्निः इन्द्रः धर्मः इति पुच्छमूले धाता विधाता च कट्याम् सप्तर्षयः तस्य दक्षिणावर्त कुण्डली भूत शरीरस्य यानि उदगयनानि दक्षिणपार्श्वे तु नक्षत्राणि उपकल्पयन्ति दक्षिणायनानि तु सव्ये। यथा शिशुमारस्य कुण्डलाभोगसन्निवेशस्य पार्श्वयोः उभयोः अपि अवयवाः समसंख्याः भवन्ति। पृष्ठे तु अजवीथी आकाशगङ्गा च उदरतः ॥

शब्दार्थ—

यस्य पुच्छाग्रे	१.	जिसकी पूंछ का अग्रभाग	यानि उदगयनानि	१७.	उत्तरायण के
अवाक् शिरसः	२.	नीचे की ओर है सिरे पर	दक्षिणपार्श्वे	१६.	दाहिने भाग में
कुण्डलीभूत	५.	कुण्डली के स्वरूप का है	तु नक्षत्राणि	१८.	नक्षत्र
देहस्य	४.	इसका शरीर	उपकल्पयन्ति	१६.	बताये जाते हैं (तथा)
ध्रुव उपकल्पितः	३.	ध्रुव स्थित है	दक्षिणायनानि	२०.	दक्षिणायन के
तस्य लाङ्गूले	६.	इसकी पूंछ में	तु सव्ये यथा	२१.	बायें भाग में जब
प्रजापतिः अग्निः	७.	प्रजापति, अग्नि	शिशुमारस्य	२२.	शिशुमार
इन्द्रः धर्मः इति	८.	इन्द्र और धर्म हैं	कुण्डलाभोग	२३.	कुण्डलाकार
पुच्छमूले धाता	६.	पूंछ की जड़ में धाता	सन्निवेशस्य	२४.	होता है (तब)
विधाता च	१०.	विधाता हैं और	पार्श्वयोः उभयोः	२५.	बगल के दोनों
कट्याम्	११.	कटि प्रदेश में	अपिअवयवाः	२६.	अङ्गों की
सप्तर्षयः	१२.	सप्त ऋषि स्थित हैं	समसंख्याभवन्ति	२७.	समान संख्या रहती हैं
तस्य दक्षिणावर्त	१३.	इसके दक्षिण की ओर	पृष्ठे तु अजवीथी	२८.	पीठमें अजवीथी नक्षत्र
कुण्डलीभूत	१४.	कुण्डली स्वरूप	आकाशगङ्गा	३०.	आकाश गङ्गा है
शरीरस्य	१५.	शरीर के	च उदरतः ॥	२६.	और पेट में

श्लोकार्थ—जिसकी पूंछ का अग्र भाग नीचे की ओर है। सिरे पर ध्रुव स्थित है। इसका शरीर कुण्डली के स्वरूप का है। इसकी पूंछ में प्रजापति, अग्नि, इन्द्र और धर्म हैं। पूंछ की जड़ में धाता और विधाता हैं। कटि प्रदेश में सप्त ऋषि स्थित हैं। इसके दक्षिण की ओर कुण्डली स्वरूप शरीर के दाहिने भाग में उत्तरायण के नक्षत्र बताये जाते हैं। तथा दक्षिणायन के बायें भाग में जब शिशुमार कुण्डलाकार होता है तब बगल के दोनों अंगों की समान संख्या रहती है। पीठ में अजवीथी नक्षत्र और पेट में आकाशगंगा है ॥

षष्ठः श्लोकः

पुनर्वसुपुष्यौ दक्षिणवामयोः श्रोण्योरार्द्राश्लेषे च दक्षिणवामयोः पश्चिमयोः पादयोरभिजिदुत्तराषाढे दक्षिणवामयोर्नासिकयोर्यथासंख्यं श्रवणपूर्वाषाढे दक्षिणवामयोर्लोचनयोर्धनिष्ठा मूलं च दक्षिणवामयोः कर्णयोर्मघादीन्यष्ट नक्षत्राणि दक्षिणायनानि वामपार्श्ववङ्क्रिषु युञ्जीत तथैव मृगशीर्षादीन्युदगयनानि दक्षिणपार्श्ववङ्क्रिषु प्रातिलोम्येन प्रयुञ्जीत शतभिषाज्येष्ठे स्कन्धयोर्दक्षिणवामयोर्न्यसेत् ॥६॥

पदच्छेद—पुनर्वसु पुष्यौ दक्षिणवामयोः श्रोण्योः आर्द्रा आश्लेषे च दक्षिण वामयोः पश्चिमयोः पादयोः अभिजित् उत्तराषाढ़े दक्षिण वामयोः नासिकयोः यथासंख्यम् श्रवणपूर्वाषाढ़े दक्षिण वामयोः लोचनयोः धनिष्ठा मूलम् च दक्षिण वामयोः कर्णयोः मघा आदीनि अष्ट नक्षत्राणि दक्षिण पार्श्ववङ्क्रिषु प्रातिलोम्येन प्रयुञ्जीत शतभिषा ज्येष्ठे स्कन्धयोः दक्षिण वामयोः न्यसेत् ॥

शब्दार्थ—

पुनर्वसु पुष्य	३.	पुनर्वसु और पुष्य है	कर्णयोः	१६.	कान में
दक्षिण वामयोः	१.	दाहिने बायें	मघादीन्	१६.	मघा आदि
श्रोणि	२.	कटि प्रदेश में	अष्टनक्षत्राणि	२१.	आठ नक्षत्र
आर्द्रा आश्लेषे च	७.	आर्द्रा आश्लेषा है और	दक्षिणायनानि	२०.	दक्षिणायन के
दक्षिण वामयोः	५.	दाहिने बायें	वाम पार्श्व	२२.	बायीं
पश्चिमयोः	४.	पश्चिम की ओर	वङ्क्रिषु	२३.	पसलियों में
पादयोः	६.	चरणों में	युञ्जति तथैव	२४.	स्थित है उसी प्रकार
अभिजित्	१२.	अभिजित्	मृगशीर्षादीनि	२७.	मृगशिरा आदि
उत्तराषाढ़े	१३.	उत्तराषाढ़ा है	उदगयनानि	२६.	उत्तरायण के
दक्षिण वामयोः	८.	दाहिने बायें	दक्षिणपार्श्व	२८.	दाहिनी
नासिकयोः	१०.	नासिका में	वङ्क्रिषु	२६.	पसलियों में
यथासंख्यम्	११.	समान संख्या में	प्रातिलोम्येन	२५.	विपरीत क्रम से
श्रवण पूर्वाषाढ़े	१४.	श्रवण पूर्वाषाढ़ा है	प्रयुञ्जीत	३०.	स्थित है
दक्षिण वामयोः	१२.	दाहिने बायें	शतभिषा	३१.	शतभिषा और
लोचनयोः	१३.	नेत्रों में	ज्येष्ठे	३२.	ज्येष्ठा
धनिष्ठा	१८.	धनिष्ठा है	स्कन्धयोः	३५.	कन्धों के
मूलम् च	१७.	मूल और	दक्षिण	३३.	दाहिने और
दक्षिण वामयोः	१५.	दाहिने बायें	वामयोः	३४.	बायें
			न्यसेत् ॥	३६.	स्थान में है

श्लोकार्थ—इस शिशुमार चक्र के दाहिने- बांये कटि प्रदेश में पुनर्वसु और पुष्य हैं पश्चिम की ओर चरणों में दाहिने-बांये आर्द्रा और आश्लेषा हैं। दाहिने बांये नासिका में समान संख्या में दाहिने-बांये नेत्रों में श्रवण पूर्वाषाढ़ा है दाहिने-बांये कान में मूल और धनिष्ठा हैं। मघा-आदि दक्षिणायन के आठ नक्षत्र बायीं पसलियों में स्थित हैं। उसी प्रकार विपरीतक्रम से उत्तरायण के मृगशिरा आदि दाहिनी पसलियों में स्थित हैं। शतभिषा और ज्येष्ठा दाहिने और बायें कन्धे में स्थित हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

उत्तराहनावगस्तिरधराहनौ यमो मुखेषु चाङ्गारकः शनैश्चर उपस्थे बृहस्पतिः ककुदि वक्षस्यादित्यो हृदये नारायणो मनसि चन्द्रो नाभ्यामुशना स्तनयोरश्विनौ बुधः प्राणापानयो राहुर्गले केतवः सर्वाङ्गेषु रोमसु सर्वे तारागणाः ॥७॥

पदच्छेद—उत्तराहनौ अगस्तिः अधराहनौ मुखेषु च अङ्गारकः शनैश्चरः उपस्थे बृहस्पतिः ककुदि वक्षसि आदित्यः हृदये नारायणः मनसि चन्द्रः नाभ्याम् उशनाः स्तनयोः अश्विनौ बुधः प्राण अपानयोः राहुः गले केतवः सर्वं अङ्गेषु रोमसु सर्वे तारागणाः ॥

शब्दार्थ—

उत्तराहनौ	१.	इसके ऊपर की ठोडी में	मनसि	१६.	मन में
अगस्ति	२.	अगस्त	चन्द्रः	१७.	चन्द्रमा
अधः हनौ	३.	नीचे की ठोडी में	नाभ्याम्	१८.	नाभि में
यमः	४.	यम	उशनाः	१९.	शुक्र
मुखेषु	६.	मुख में	स्तनयोः	२०.	स्तनों में
च	५.	और	अश्विनौ	२१.	अश्विनीकुमार
अङ्गारकः	७.	मङ्गल	बुधः	२३.	बुध
शनैश्चरः	९.	शनैश्चर	प्राण-अपानयोः	२२.	प्राण और अपान में
उपस्थे	८.	लिङ्ग में	राहुः	२५.	राहु
बृहस्पतिः	११.	बृहस्पति	गले	२४.	कण्ठ में
ककुदि	१०.	गीवा में	केतवः	२७.	केतु
वक्षसि	१२.	वक्षःस्थल में	सर्वअङ्गेषु	२६.	सभी अङ्गों में
आदित्यः	१३.	सूर्य	रोमसु	२८.	रोमों में
हृदये	१४.	हृदय में	सर्वे	२९.	सभी
नारायणः	१५.	नारायण	तारागणाः ॥	३०.	तारागण स्थित हैं

श्लोकार्थ—इसके ऊपर की ठोडी में अगस्त्य, नीचे की ठोडी में यम, और मुख में मङ्गल, लिङ्ग प्रदेश में शनैश्चर, गीवा में बृहस्पति, वक्षः स्थल में सूर्य, हृदय, में नारायण, मन में चन्द्रमा, नाभि में शुक्र, स्तनों में अश्विनीकुमार प्राण और अपान में बुध, कण्ठ में राहु, सभी अङ्गों में केतु, रोमों में सभी तारागण स्थित हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

एतदु हैव भगवतो विष्णोः सर्वदेवतामयं रूपमहरहः सन्ध्यायां प्रयतो वाग्यतो निरीक्षमाण उपतिष्ठेत नमो ज्योतिर्लोकाय कालायनायानिमिषां पतये महापुरुषायाभिधीमहीति ॥८॥

पदच्छेद— एतद् उ ह एव भगवतः विष्णो सर्व देवता मयम् रूपम् अहरहः सन्ध्यायाम् प्रयतः वाग्यतः निरीक्षमाणः उपतिष्ठेत् नमः ज्योतिः लोकाय कालायनाय अनिमिषाम् पतये महापुरुषाय अभिधीमहि इति ॥

शब्दार्थ—

एतद् उ ह एव	१.	यह ही	उपतिष्ठेत्	९.	ध्यान करना चाहिये
भगवतः विष्णोः	२.	भगवान् विष्णु का	नमः	१५.	नमस्कार पूर्वक
सर्वदेवतामयम्	३.	सर्वदेवमय	ज्योतिः	१०.	ज्योतिर्गणों के
रूपम्	४.	स्वरूप है (इसका)	लोकाय कालायनाय	११.	आश्रय कालचक्र स्वरूप
अहरहः	५.	प्रति दिन	अनिमिषाम्	१२.	सम्पूर्ण देवों के
सन्ध्यायाम्	६.	सांयकाल के समय	पतये	१३.	स्वामी
प्रयतः वाग्यतः	७.	पवित्र और मौन होकर	महापुरुषाय	१४.	परमात्मा का हम
निरीक्षमाणः	८.	दर्शन करते हुये	अभिधीमहि इति ॥	१६.	ध्यान करते हैं

श्लोकार्थ—यह ही भगवान् विष्णु का सर्व देवमय स्वरूप है। इसका सायंकाल के समय पवित्र और मौन होकर दर्शन करते हुये ध्यान करना चाहिये। ज्योतिर्गणों के आश्रय, काल चक्र स्वरूप, सम्पूर्ण देवों के स्वामी, परमात्मा का हम नमस्कार पूर्वक ध्यान करते हैं ॥

नवमः श्लोकः

ग्रहर्क्षतारामयमाधिदैविकं पापापहं मन्त्रकृतां त्रिकालम् ।
नमस्यतः स्मरतो वा त्रिकालं नश्येत तत्कालजमाशु पापम् ॥९॥

पदच्छेद— ग्रह ऋक्ष तारामयम् आधिदैविक पाप अपहम् मन्त्र कृताम् त्रिकालम् ।
नमस्यतः स्मरतः वा त्रिकालम् नश्येत तत् कालजम् आशु पापम् ॥

शब्दार्थ—

ग्रह ऋक्ष	१.	ग्रह नक्षत्र और	नमस्यतः	८.	नमस्कार
तारामयम्	२.	ताराओं का	स्मरतः	१०.	स्मरण करने से
आधिदैविकम्	३.	आधिदैविक रूप है यह	वा	९.	अथवा
पाप अपहम्	६.	पाप को नष्ट कर देता है	त्रिकालम्	७.	तीनों काल में
मन्त्र कृतम्	५.	मन्त्र का जप करने वालों के	नश्येत	१६.	नष्ट हो जाता है
त्रिकालम्	४.	तीनों समय में	तत् कालजम्	११.	उस काल में किये हुये
आशु	१३.	शीघ्र ही	पापम् ॥	१२.	पाप

श्लोकार्थ—ग्रह, नक्षत्र और ताराओं का भगवान् का आधिदैविक रूप है। यह तीनों समय मन्त्र जप करने वालों के पाप को नष्ट कर देता है। तीनों काल में नमस्कार अथवा स्मरण करने से उस काल में किये हुये पाप शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे शिशुमार-संस्थावर्णनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—अधस्तात्सवितुर्योजनायुते स्वर्भानुर्नक्षत्रवच्चरतीत्येके योऽसावमरत्वं ग्रहत्वं चालभत भगवदनुकम्पया स्वयमसुरापसदः सैंहिकेयो ह्यतदर्हस्तस्य तात जन्म कर्माणि चोपरिष्टाद्वक्ष्यामः ॥१॥

पदच्छेद—अधस्तात् सवितुः योजन अयुते स्वर्भानुः नक्षत्रवत् चरति इति एके यः असौ अमरत्वम् ग्रहत्वम् च आलभत भगवत् अनुकम्पया स्वयम् असुर अपसदः सैंहिकेयः हि अतद् अर्हः तस्य तात जन्म कर्माणि च उपरिष्टात् वक्ष्यामः ॥

शब्दार्थ—

अधस्तात्	७.	नीचे	भगवत्	१२.	भगवान् की
सवितुः	४.	सूर्य से	अनुकम्पया	१३.	कृपा से
योजन	६.	योजन	स्वयम्	१९.	स्वयम् यह
अयुते	५.	दस हजार	असुर	२०.	असुर
स्वर्भानुः	८.	राहु	अपसदः	२२.	अधम होने से
नक्षत्रवत्	९.	नक्षत्रों के समान	सैंहिकेयः	२१.	सिंहिका पुत्र
चरति	१०.	घूमता है	हि अतत्	२३.	इस पद के
इति	२.	ऐसा	अर्हः	२४.	योग्य नहीं था
एके	३.	कुछ लोग कहते हैं कि	तस्य	२५.	इसके
यः	११.	जिस	तात	१.	हे तात परीक्षित् !
असौ	१४.	उसने	जन्म	२६.	जन्म
अमरत्वम्	१५.	देवताओं के	कर्माणि	२८.	कर्मों को
ग्रहत्वम्	१७.	ग्रहों के स्वरूप को	च	२७.	और
च	१६.	और	उपरिष्टात्	२९.	आगे
आलभत	१८.	प्राप्त किया है	वक्ष्यामः ॥	३०.	कहेंगे

श्लोकार्थ—हे तात परीक्षित् ! ऐसा कुछ लोग कहते हैं कि सूर्य से दस हजार योजन नीचे राहु नक्षत्रों के समान घूमता है। जिस उसने भगवान् की कृपा से यह देवताओं के और ग्रहों के स्वरूप को प्राप्त किया है। स्वयम् यह असुर सिंहिका-पुत्र अधम होने से इस पद के योग्य नहीं था। इसके जन्म और कर्मों को आगे कहेंगे॥

द्वितीयः श्लोकः

यददस्तरणेर्मण्डलं प्रतपतस्तद्विस्तरतो योजनायुतमाचक्षते द्वादशसहस्रं सोमस्य त्रयोदशसहस्रं राहोर्यः पर्वणि तद्व्यवधानकृद्वैरानुबन्धः सूर्याचन्द्रमसावभिधावति ॥२॥

पदच्छेद—यद् अदः तरणेः मण्डलं प्रतपतः तत् विस्तरतः योजन अयुतम् आचक्षते द्वादश सहस्रम् सोमस्य त्रयोदश सहस्रम् राहोर्यः पर्वणि तत् व्यवधानकृत् वैर अनुबन्धः सूर्या चन्द्रमसो अभिधावति ॥

शब्दार्थ—

यद्	५.	जो
अदः तरणेः	१.	यह सूर्य का
मण्डलम्	४.	मण्डल है
प्रतप्रतः	३.	तपता हुआ
तद् विस्तरतः	५.	उसका विस्तार
योजन अयुतम्	६.	दस हजार योजन
आचक्षते	७.	बताया जाता है
द्वादश सहस्रम्	६.	बारह हजार
सोमस्य	८.	चन्द्रमा का
त्रयोदश सहस्रम्	११.	तेरह हजार योजन है
राहोर्यः	१०.	जो राहु
पर्वणि तत्	१२.	पर्व पर उस
व्यवधानकृत्	१३.	बाधा डालने के कारण
वैर अनुबन्धः	१४.	शत्रुता बाँध करके
सूर्या चन्द्रमसो	१५.	सूर्य और चन्द्रमा पर
अभिधावति ॥	१६.	आक्रमण करता है

श्लोकार्थ—यह सूर्य का जो तपता हुआ मण्डल है, उसका विस्तार दस हजार योजन बताया गया है। चन्द्रमा का बारह हजार और राहु का तेरह हजार योजन है। जो राहु पर्व पर बाधा करने के कारण शत्रुता बाँध करके सूर्य और चन्द्रमा पर आक्रमण करता है ॥

तृतीयः श्लोकः

तन्निशम्योभयत्रापि भगवता रक्षणाय प्रयुक्तं सुदर्शनं नाम भागवतं दयितमस्त्रं तत्तेजसा दुर्विषहं मुहुः परिवर्तमानमभ्यवस्थितो मुहूर्तमुद्विजमानश्चकितहृदय आरादेव निवर्तते तदुपरागमिति वदन्ति लोकाः ॥३॥

पदच्छेद—तत् निशम्य उभयत्र अपि भगवता रक्षणाय प्रयुक्तम् सुदर्शनम् नाम भागवतम् दयितम् अस्त्रम् तत् तेजसा दुर्विषहम् मुहुः परिवर्तमानम् अभ्यवस्थितः मुहूर्तम् उद्विजमानः चकित हृदय आरात् एव निवर्तते तत् उपरागम् इति वदन्ति लोकाः ॥

तत् निशम्य	१.	यह सुनकर
उभयत्र अपि	३.	दोनों की
भगवता	२.	भगवान् ने
रक्षणाय	४.	रक्षा के लिये
प्रयुक्तम्	८.	नियुक्त कर दिया है वह
सुदर्शनं नाम	७.	सुदर्शन नाम वाले चक्र को
भागवतम्दयितम्	५.	अपने प्रिय
अस्त्रम्	६.	अस्त्र
तत् तेजसा	१२.	उसके तेज से
दुर्विषहम्	११.	असहनीय
मुहुः परिवर्तमानम्	६.	बार-बार घूमता हुआ
अभ्यवस्थितः	१०.	स्थित है
मुहूर्तम्	१५.	मुहूर्तभर रुक कर
उद्विजमानः	१३.	उद्विग्नचित्त और
चकित हृदयः	१४.	आश्चर्य चकित हृदय होकर
आरात् एव निवर्तते	१६.	शीघ्र ही लौट आता है
तत् उपरागम्	१७.	उसको ग्रहण
वदन्ति लोकाः ॥	१८.	कहते हैं लोग

श्लोकार्थ—यह सुनकर भगवान् ने दोनों की रक्षा के लिये अपने प्रिय अस्त्र सुदर्शन नाम वाले चक्र को नियुक्त कर दिया है। वह बार-बार घूमता हुआ स्थित है। उसके असहनीय तेज से उद्विग्न चित्त और आश्चर्यचकित हृदय होकर, मुहूर्तभर रुक कर शीघ्र ही लौट आता है। उसको लोग ग्रहण कहते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

ततोऽधस्तात्सिद्धचारणविद्याधराणां सदनानि तावन्मात्र एव ॥४॥

पदच्छेद— ततः अधः स्तात् सिद्ध चारण विद्याधराणाम् सदनानि तावत् मात्रे एव ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. उससे	सदनानि	८. स्थान हैं
अधः स्तात्	५. नीचे	तावत्	१. उतनी
सिद्ध चारण	६. सिद्ध, चारण (और)	मात्रे	४. संख्या में (दस हजार योजन)
विद्याधराणाम्	७. विद्याधरों के	एव ॥	३. ही

श्लोकार्थ—उससे उतनी ही संख्या में दस हजार योजन नीचे सिद्ध, चारण और विद्याधरों के स्थान हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

ततोऽधस्ताद्यक्षरक्षः पिशाचप्रेतभूतगणानां विहाराजिरमन्तरिक्षं यावद्वायुः प्रवाति यावन्मेघा उपलभ्यन्ते ॥५॥

पदच्छेद—ततः अधस्तात् यक्ष रक्षः पिशाच प्रेत भूत गणानाम् विहार अजिरम् अन्तरिक्षम् यावद् वायुः प्रवाति यावत् मेघाः उपलभ्यन्ते ॥

शब्दार्थ—

ततःअधस्तात्	१. उससे नीचे	विहार अजिरम्	९. विहार स्थल है
यक्षरक्षः	६. यक्ष, राक्षस	अन्तरिक्षम्	५. अन्तरिक्ष है (और)
पिशाच प्रेत	७. पिशाच, प्रेत,	यावद् वायुः	२. जहाँ-तक वायु
भूतगणानाम्	८. भूत गणों का	प्रवाति यावत्	३. चलती है और जहाँ तक
		मेघाःउपलभ्यन्ते ॥	४. बादल दिखाई देते हैं वहाँ तक

श्लोकार्थ—उससे नीचे जहाँ तक वायु चलती है और जहाँ-तक बादल दिखाई देते हैं, वहाँ तक अन्तरिक्ष है। यह यक्ष, राक्षस, पिशाच, प्रेत, भूतगणों का विहारस्थल है ॥

षष्ठः श्लोकः

ततोऽधस्ताच्छतयोजनान्तर इयं पृथिवी यावद्धंसभासश्येनसुपर्णादयः पतत्त्रिप्रवरा उत्पतन्तीति ॥६॥

पदच्छेद—ततः अधस्तात् शतयोजन अन्तरे इयम् पृथिवी यावत् हंस भास श्येन सुपर्ण आदयः पतत्त्रि प्रवराः उत्पतन्ति इति ॥

ततः अधस्तात्	१. उससे नीचे	भास श्येन	५. भास, गीध,
शतयोजन अन्तरे	२. सौ योजन की दूरी पर	सुपर्ण आदयः	६. गरुड आदि
इयम् पृथिवी	३. यह पृथ्वी है	पतत्त्रि	८. पक्षी
यावत् हंस	४. जहाँ तक हंस	प्रवराः	७. प्रधान
		उत्पतन्ति इति॥	९. उड़ते हैं

श्लोकार्थ—उससे नीचे सौ योजन की दूरी पर यह पृथ्वी है। जहाँ तक हंस, भास, गीध, गरुड आदि प्रधान पक्षी उड़ते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

उपवर्णितं भूमेर्यथासंनिवेशावस्थानमवनेरप्यधस्तात् सप्तभूविवरा एकैकशो योजनायुतान्तरेणायामविस्तारेणोपक्लृप्ता अतलं वितलं सुतलं तलातलं महातलं रसातलं पातालमिति ॥७॥

पदच्छेद—उपवर्णितम् भूमेः यथा संनिवेश अवस्थानम् अवनेः अपि अधस्तात् सप्त भू विवराः एकैकशः योजन अयुत अन्तरेण आयाम विस्तारेण उपक्लृप्ताः अतलं सुतलं वितलं तलातलं महातलं रसातलं पातालम् इति ॥

शब्दार्थ—

उपवर्णितम्	४.	वर्णन किया जा चुका है	अन्तरेण आयाम	१६.	दूरी पर स्थित हैं और इनकी
भूमेः यथा	१.	भूमि की	विस्तारेण	१७.	लम्बाई-चौड़ाई का विस्तार
संन्निवेश	२.	स्थिति और	उपक्लृप्ताः	१८.	दस हजार योजन है
अवस्थानम्	३.	विस्तार का	अतलम् वितलम्	७.	अतल-वितल
अवनेः अपि	५.	पृथ्वी के अधिक	सुतलम् तलातल्	८.	सुतल-तलातल
अधः स्तात्	६.	नीचे	महातलम्	९	महातल
सप्तभूविवराः	१३.	सात विल हैं	रसातलम्	१०.	रसातल और
एक एकशः	१४.	एक-एक के क्रम से	पातालम्	११.	पाताल
योजन अयुत	१५.	दस हजार योजन की	इति ॥	१२.	नामक

श्लोकार्थ—भूमि की स्थिति और विस्तार का वर्णन किया जा चुका है। पृथ्वी के अधिक नीचे अतल, सुतल, तलातल, रसातल और पाताल नामक सात विवर हैं। एक-एकके क्रम से दस हजार योजन की दूरी पर स्थित हैं। और इनकी लम्बाई-चौड़ाई का विस्तार दस हजार योजन है ॥

अष्टमः श्लोकः

एतेषु हि बिलस्वर्गेषु स्वर्गादप्यधिककामभोगैश्वर्यानन्दभूतिविभूतिभिः सुसमृद्धभवनोद्यानाक्रीडविहारेषु दैत्यदानवकाद्रवेया नित्यप्रमुदितानुरक्त-कलत्रापत्यबन्धुसुहृदनुचरा गृहपतय ईश्वरादप्यप्रतिहतकामा मायाविनोदा निवसन्ति ॥८॥

पदच्छेद—एतेषु हि बिलस्वर्गेषु स्वर्गात् अपि अधिक कामभोग ऐश्वर्य आनन्द भूति विभूतिभिः सुसमृद्धभवन उद्यान आक्रीडविहारेषु दैत्य दानव काद्रवेयाः प्रमुदित अनुरक्त कलत्र अपत्यबन्धु सुहृद् अनुचराः गृह पतयः ईश्वरात् अपि अप्रतिहत कामाः माया विनोदाः निवसन्ति ॥

शब्दार्थ—एतेषु हि बिल	१.	इस बिल में	दैत्य दानव काद्रवेयाः	१०.	दैत्य दानव नागों से
स्वर्गेषु	२.	स्वर्ग रूप	नित्य प्रमुदित	११	प्रतिदिन प्रसन्नचित्त
स्वर्गात् अपि	३.	स्वर्ग लोक से	अनुरक्त कलत्र	१२.	प्रेम युक्त स्त्री
अधिककामभोग	४.	भी अधिक विषय भोग	अपत्यबन्धु	१३.	सन्तान, भाई-बन्धु
ऐश्वर्यानन्द	५.	ऐश्वर्य आनन्द	सुहृत् अनुचरा	१४.	मित्र सेवक लोगों से
भूति विभूतिभिः	६.	सुख और धन सम्पत्तियों से	गृहपतयः	१७.	गृह स्वामी
सुसमृद्धभवन	७.	वैभव पूर्ण भवन	ईश्वरात् अपि	१५.	इन्द्र से भी
उद्यान	८.	बगीचों और	अप्रतिहतकामाः माया	१६.	अबाधित कर्मों वाले मायामयी
आक्रीड विहारेषु	९.	क्रीडा स्थलों में	विनोदा निवसन्ति ॥	१८.	क्रीडा के द्वारा निवास करते हैं

श्लोकार्थ—इस बिल से स्वर्गरूप, स्वर्ग लोक से भी अधिक विषय भोग, ऐश्वर्य आनन्द सुख और धन सम्पत्तियों से वैभवपूर्ण भवन, बगीचों और क्रीडा स्थलों में दैत्य, दानव, नागों से प्रतिदिन प्रसन्न चित्त प्रेम युक्तरूपी स्त्री, सन्तान, भाई, बन्धु, मित्र, सेवक लोगों से इन्द्र से भी अबाधित कर्मों वाले गृह स्वामी मायामयी क्रीडा के द्वारा निवास करते हैं ॥

नवमः श्लोकः

येषु महाराज मयेन मायाविना विनिर्मिताः पुरो नानामणिप्रवरप्रवेकविरचितविचित्रभवनप्राकारगोपुरसभाचैत्यचत्वरायतनादिभिर्नागासुरमिथुनपारावतशुकसारिकाकीर्णकृत्रिमभूमिभिर्विवरेश्वरगृहोत्तमैः समलङ्कृताश्चकासति ॥९॥

पदच्छेद—येषु महाराज मयेन मायाविना विनिर्मिताः पुरः नाना मणि प्रवर प्रवेक विरचित विचित्र भवन प्रकार गोपुर सभा चैत्य चत्वर आयतन आदिभिः नाग असुर मिथुन पारावत शुक सारिका कीर्ण कृत्रिम भूमिभिः विवरेश्वर गृहोत्तमैः सम् अलंकृताः चकासति ॥

शब्दार्थ—

येषु	२.	जिस पुरी में	चत्वर	१५.	आँगन
महाराज	१.	हे महाराज	आयतन	१६.	मन्दिर
मयेन	४.	मय के द्वारा	आदिभिः	१७.	आदि से
मायाविना	३.	मायावी	नाग असुर	२२.	नाग असुरों के
विर्निमिताः	५.	बनायी हुयी	मिथुन	२३.	जोड़े
पुरः	६.	पुरियाँ	पारावत शुक	२४.	कबूतर, तोता और
नाना मणि प्रवर	७.	अनेक १० मणियों के द्वारा श्रेष्ठ	सारिका	२५.	मैना आदि
प्रवेक	८.	सुन्दर	कीर्ण कृत्रिम	१९.	बिनवाये हुये २० बनावटी
विरचित	११.	बनाये हुए	भूमिभिः विवरेश्वर	२१.	फर्शों पर २६ पाताल के स्वामियों के
विचित्र भवन	१२.	विचित्र भवनों	गृहोत्तमैः	२८.	घरों की श्रेष्ठ
प्राकार गोपुर	१३.	परकोटों, नगर द्वार	सम् अलंकृताः	२९.	शोभा को बढ़ाते हैं
सभा चैत्य	१४.	सभा-भवन	चकासति ॥	१८.	सुशोभित हैं (जिनमें)

श्लोकार्थ—हे महाराज ! जिस पुरी में मायावी मय के द्वारा बनाई हुई पुरियाँ अनेक सुन्दर श्रेष्ठ मणियों के द्वारा बनाये हुए विचित्र भवनों, परकोटों, नगर द्वार, सभा भवन, आँगन, मन्दिर आदि से सुशोभित हैं, जिनमें बनवाये हुये बनावटी फर्शों पर नाग-असुरों के जोड़े, कबूतर, तोता और मैना आदि पाताल के स्वामियों के श्रेष्ठ घर की शोभा बढ़ाते हैं ॥

दशमः श्लोकः

उद्यानानि चातितरां मनइन्द्रियानन्दिभिः कुसुमफलस्तबकसुभग-
किसलयावनतरुचिरविटपविटपिनां लताङ्गालिङ्गितानां श्रीभिः समिथुनविविध-
विहङ्गमजलाशयानाममलजलपूर्णानां झषकुलोल्लङ्घनक्षुभितनीरनीरजकुमुद-
कुवलयकह्लारनीलोत्पललोहितशतपत्रादिवनेषु कृतनिकेतनानामेकविहाराकुल-
मधुरविविधस्वनादिभिरिन्द्रियोत्सवैरमरलोकश्रियमतिशयितानि ॥१०॥

पदच्छेद—उद्यानानि च अतितराम् मन इन्द्रिय आनन्दिभिः कुसुम फल स्तवक सुभग किसलय अवनत रुचिर विटप विटपिनाम् लताङ्ग आलिङ्गितानाम् श्रीभिः समिथुन विविध विहङ्गम जलाशयानाम् अमल जल पूर्णानाम् झषकुल उल्लंघन क्षुभित नीर नीरज कुमुद कुवलय कह्लार नीलोत्पल लोहित शतपत्र आदि वनेषु कृत निकेतनानाम् एक विहार आकुल मधुर विविध स्वनादिभिः इन्द्रिय उत्सवैः अमर लोक श्रियम् अति शयितानि ॥

शब्दार्थ—

	२. वहाँ के		
उद्यानानि	३. बगीचे अपनी	नीर नीरज	२७. जल से कमल
च	१. और	कुमुद कुवलय	२८. कुमुद कुवलय
अतितराम्	४. अत्यधिक	कह्लार	२९. कह्लार
मन इन्द्रिय	११. मन (और) इन्द्रियों को	नीलोत्पल	३०. नील कमल
आनन्दिभिः	१२. आनन्द देने वाले	लोहितशतपत्र	३१. लाल कमल (तथा) शतपत्र
कुसुम	१४. फूलों के	आदि वनेषु	३२. आदि से युक्त वनों में
फल	१३. फलों के और	कृत	३४. करने वाला
स्तवक सुभग	१५. गुच्छों से सुन्दर	निकेतनानाम्	३३. निवास
किसलय	१६. कोमल पल्लवों से	एक विहार	३५. लगातार विहार से युक्त
अवनत	१७. झुकी हुई	आकुल	३६. पक्षीगण
रुचिर विटप	१८. सुन्दर डालियों वाले	मधुर	३८. मीठी
विटपिनाम् लताङ्ग	१९. वृक्षों की लताओं के अंगों से	विविध	३७. अनेक प्रकार की
आलिङ्गितानाम्	२०. आलिङ्गित वृक्षों की	स्वनादिभिः	३९. अपनी बोली से
श्रीभिः	५. शोभा से	इन्द्रिय	४०. इन्द्रियों को
समिथुन	२२. जोड़ों से	उत्सवैः	४१. आह्लादित करते रहते हैं
विविध विहङ्गम	२१. अनेक पक्षियों के	अमर	६. देव
जलाशयानाम्	२४. जलाशयों में	लोक	७. लोक की
अमल जल पूर्णानाम्	२३. निर्मल जल से पूर्ण	श्रियम्	८. शोभा को
झषकुल उल्लंघन	२५. मछलियों के उछलने के कारण	अति	९. मात
क्षुभित	२६. हिलते हुये	शयितानि ॥	१०. कर देते हैं।

श्लोकार्थ—और वहाँ के बगीचे अपनी अत्यधिक शोभा से देवलोक की शोभा को मात कर देते हैं। मन और इन्द्रियों को आनन्द देने वाले फलों के गुच्छों से सुन्दर कोमल पल्लवों से झुकी हुई सुन्दर डालियों वाले और लताओं के अंगों से आलिंगित वृक्षों की शोभा से, अनेक पक्षियों के जोड़ों से, निर्मल जल से पूर्ण जलाशयों में मछलियों के उछलने के कारण हिलते हुये जल से, कमल कुमुद, कुवलय, कह्लार, नील कमल, लाल कमल तथा शत पत्र आदि से युक्त वनों में निवास करने वाले लगातार विहार से युक्त पक्षी गण अनेक प्रकार की अपनी मीठी-मीठी बोली से इन्द्रियों को आह्लादित करते रहते हैं॥

एकादशः श्लोकः

यत्र ह वाव न भयमहोरात्रादिभिः कालविभागैरुपलक्ष्यते ॥११॥

पदच्छेद— यत्र ह वाव न भयम् अहो रात्रआदिभिः काल विभागैः उपलक्ष्यते ॥

शब्दार्थ—

यत्र ह वाव	१.	जहाँ पर	रात्रादिभिः	३.	रात्रि इत्यादि के
न भयम्	६.	नहीं ५. भय	कालविभागैः	४.	समय के विभाजन का
अहो	२.	दिन और	उपलक्ष्यते ॥	७.	दिखाई देता है ॥

श्लोकार्थ—जहाँ पर दिन और रात्रि इत्यादि के समय के विभाजन का भय नहीं दिखाई देता है।

द्वादशः श्लोकः

यत्र हि महाहिप्रवरशिरोमणयः सर्वं तमः प्रबाधन्ते ॥१२॥

पदच्छेद— यत्र हि महा अहि प्रवर शिरोमणयः सर्वम् तमः प्रबाधन्ते ॥

शब्दार्थ—

यत्र हि	१.	जहाँ	मणयः ॥	५.	मणियाँ ही
महा अहि	३.	महान् सर्पों के	सर्वम्	६.	सम्पूर्ण
प्रवर	२.	श्रेष्ठ	तमः	७.	अन्धकार को
शिरो	४.	शिरों की	प्रबाधन्ते	८.	दूर करते हैं

श्लोकार्थ—जहाँ श्रेष्ठ महान् सर्पों के सिरों की मणियाँ ही सम्पूर्ण अन्धकार को दूर करती हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

न वा एतेषु वसतां दिव्यौषधिरसरसायनान्नपानस्नानादिभिराधयो व्याधयो वलीपलितजरादयश्च देहवैवर्ण्यदौर्गन्ध्यस्वेदक्लमग्लानिरिति वयोऽवस्थाश्च भवन्ति ॥१३॥

पदच्छेद—न वा एतेषु वसताम् दिव्यओषधि रस रसायन अन्न पान स्नान आदिभिः आधयः व्याधयः वली-पलित जरादयश्च देह-वैवर्ण्य दौर्गन्ध्य स्वेद क्लम ग्लानिः इति वयः अवस्थाः च भवन्ति ॥

शब्दार्थ—

न वा	१६.	नहीं	वली पलित	८.	झुर्रियाँ पड़ना बाल पकना
एतेषु वसताम्	१.	इन लोकों के निवासी मनुष्यों को	जरादयश्च	९.	बुढ़ापा आदि और
दिव्योषधि	२.	दिव्य ओषधि	देह वैवर्ण्य	१०.	शरीर का कान्ति हीन होना
रस रसायन	३.	रस-रसायन	दौर्गन्ध्य स्वेद	११.	दुर्गन्ध आना पसीना
अन्न पान	४.	अन्न पान	क्लम ग्लानिः	१२.	थकावट-शिथिलता
स्नान आदिभिः	५.	स्नानादि से	इति वयः	१३.	आदि आयु
आधयः	६.	मानसिक रोग तथा	अवस्थाः	१५.	अवस्थाओं का बदलना
व्याधयः	७.	शारीरिक रोग	च	१४	और
			भवन्ति ॥	१७.	होता है

श्लोकार्थ—इन लोकों के निवासी मनुष्यों को दिव्य ओषधि, रस-रसायन, अन्न-पान, स्नानादि से मानसिक रोग, झुर्रियाँ पड़ना, बाल पकना, बुढ़ापा आदि शरीर का कान्ति हीन होना, दुर्गन्ध आना, पसीना आना, थकावट, शिथिलता आदि, आयु और अवस्थाओं का बदलना नहीं होता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

न हि तेषां कल्याणानां प्रभवति कुतश्चन मृत्युर्विना भगवत्तेजसश्चक्रापदेशात् ॥१४॥

पदच्छेद—न हि तेषाम् कल्याणानाम् प्रभवति कुतश्चन मृत्युः विना भगवत् तेजसः चक्र अपदेशात् ॥

शब्दार्थ—

न हि	१०.	नहीं	मृत्युः	९.	मृत्यु
तेषाम्	१.	उन	विना	७.	अन्य
कल्याणानाम्	२.	पुण्यवान् पुरुषों की	भगवत्	३.	भगवान् के
प्रभवति	११.	हो सकती है	तेजसः	४.	तेजः स्वरूप
कुतश्चन	८.	किसी भी साधन से	चक्र अपदेशात् ॥	५.	सुदर्शन चक्र के ६ अतिरिक्त

श्लोकार्थ—उन पुण्यवान् पुरुषों की भगवान् के तेजः स्वरूप सुदर्शन चक्र के अतिरिक्त अन्य किसी भी साधन से मृत्यु नहीं हो सकती है।

पञ्चदशः श्लोकः

यस्मिन् प्रविष्टेऽसुरवधूनां प्रायः पुंसवनानि भयादेव स्रवन्ति पतन्ति च ॥१५॥

पदच्छेद—यस्मिन् प्रविष्टे असुरवधूनाम् प्रायः पुंसवनानि भयात् एव स्रवन्ति पतन्ति च ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन्	१.	जिस सुदर्शन चक्र के	पुंसवनानि	६.	गर्भ
प्रविष्टे	२	प्रवेश करते ही	भयात् एव	३.	भय से
असुरवधूनाम्	४.	असुर की स्त्रियों के	स्रवन्ति	७.	स्राव और
प्रायः	५.	प्रायः	पतन्ति च	८.	गर्भपात हो जाते हैं ॥

श्लोकार्थ—जिस सुदर्शन चक्र के प्रवेश करते ही भय से ही असुरों की स्त्रियों के प्रायः गर्भ स्राव और गर्भपात हो जाते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

अथातले मयपुत्रोऽसुरो बलो निवसति येन ह वा इह सृष्टाः षण्णवतिर्मायाः काश्चनाद्यापि मायाविनो धारयन्ति यस्य च जृम्भमाणस्य मुखतस्त्रयस्त्रीगणा उदपद्यन्त स्वैरिण्यः कामिन्यः पुंश्चल्य इति या वै विलायनं प्रविष्टं पुरुषं रसेन हाटकाख्येन साधयित्वा स्वविलासावलोकनानुरागस्मितसंलापोपगूहनादिभिः स्वैरं किल रमयन्ति यस्मिन्नुपयुक्ते पुरुष ईश्वरोऽहं सिद्धोऽहमित्ययुतमहागजबलमात्मानमभिमन्यमानः कत्थते मदान्ध इव ॥१६॥

पदच्छेद—अथ अतले मयपुत्रः असुरः बलः निवसति येन ह वा इह सृष्टाः षण्णवतिः मायाः काश्चन अद्यापि मायाविना धारयन्ति यस्य च जृम्भमाणस्य मुखतः त्रयः स्त्रीगणाः उदपद्यन्त स्वैरिण्यः कामिन्यः पुंश्चल्यः इति-या वै विल अयनम् प्रविष्टम् पुरुषम् रसेन-हाटक आख्येन साधयित्वा स्व विलास अवलोकन अनुराग स्मित संलाप उपगूहन आदिभिः स्वैरम् किल रमयन्ति यस्मिन् अनुपयुक्ते पुरुषः ईश्वरः अहम् सिद्धः अहम् इति अयुत महागज बलम् आत्मानम् अभिमन्यमानः कत्थते मदान्धः इव ॥

शब्दार्थ—

अथ अतले	१. इसके बाद अतल लोक में	प्रविष्टम् पुरुषम्	२२. रहने वाले पुरुष को
मय पुत्रः	२. मय दानव का पुत्र	रसेन-हाटक	२४. रस २१. हाटक
असुरः	४. असुर	आख्येन	२३. नाम का
बलः	३. बल नाम का	साधयित्वा	२५. पिलाकर
निवसति	५. निवास करता है	स्वविलास अवलोकन	२६. अपने विलास, चितवन
येन ह वा इह	६. जिसने यहाँ	अनुराग-स्मित	२७. प्रेम युक्त, मुसकान
सृष्टाः	८. रचा है	संलाप-उपगूहन	प्रेमालाप आलिंगन
षण्णवतिः माया	७. छियानवें तरह की माया	आदिभिः स्वैरम्	२९. आदि के द्वारा इच्छानुसार
काश्चन	९. कोई	किल-रमयन्ति	३०. निश्चित रूप से रमण करती हैं
अद्यापि	११. आज भी	यस्मिन् उपयुक्ते	३१. उसको पीने पर
मायाविनः	१०. मायावी पुरुष १२. उसे	पुरुषः	३२. मनुष्य
धारयन्ति	१३. धारण करते हैं	ईश्वरः	३५. ईश्वर हूँ
यस्य च	१५. जिसके १४. और	अहम्	३४. मैं
जृम्भमाणस्य	१६. जम्भाई लेने पर	सिद्धः	३७. सिद्ध हूँ
मुखतः त्रयः स्त्रीगणाः	१७. मुख से तीन स्त्रियां	अहम्	३६. मैं
उदपद्यन्त	२०. उत्पन्न हुईं	इति अयुत महागज	३८. इस प्रकार दस हजार बड़े हाथियों के
स्वैरिण्यः कामिन्यः	१८. स्वैरिणी कामिनी (और)	बलम आत्मानम्	३९. बल के समान अपने को
पुंश्चल्यः	१९. पुंश्चली	अभिमन्यमानः कत्थते	४०. मानता हुआ डींग हाँकता
इति या वै विल अयनम्	२१. जो इस लोक में	मदान्ध इव ॥	३३. मद से अन्धा हो जाता है और

श्लोकार्थ—इसके बाद अतल लोक में मय दानव का पुत्र बल नाम का असुर निवास करता है जिसने यहाँ छियानवें प्रकार की माया रची है। कोई मायावी पुरुष आज भी उसे धारण करते हैं और उसके जम्भाई लेने पर मुख से तीन स्त्रियाँ स्वैरिणी, कामिनी और पुंश्चली उत्पन्न हुयीं। जो उस लोक में रहने वाले पुरुषों को हाटक नाम का रस पिलाकर अपने विलास, चितवन, प्रेमयुक्त मुस्कान, प्रेमालाप, आलिंगन आदि के द्वारा इच्छानुसार निश्चित रूप से रमण करती हैं। उसको पीने पर मनुष्य मद से अन्धा हो जाता है और मैं ईश्वर हूँ मैं सिद्ध हूँ इस प्रकार दस हजार बड़े हाथियों के बल के समान अपने को मानता हुआ डींग हाँकता है॥

सप्तदशः श्लोकः

ततोऽधस्ताद्वितले हरो भगवान् हाटकेश्वरः स्वपार्षदभूतगणावृतः प्रजापतिसर्गोपबृंहणाय भवो भवान्या सह मिथुनीभूत आस्ते यतः प्रवृत्ता सरित्प्रवरा हाटकी नाम भवयोर्वीर्येण यत्र चित्रभानुर्मातरिश्वना समिध्यमान ओजसा पिबति तन्निष्ठ्यूतं हाटकाख्यं सुवर्णं भूषणेनासुरेन्द्रावरोधेषु पुरुषाः सह पुरुषीभिर्धारयन्ति ॥१७॥

पदच्छेद—ततः अध स्तात् वितले हरः भगवान् हाटकेश्वरः स्वपार्षद भूतगण आवृतः प्रजापति सर्ग उपबृंहणाय भवः भवान्या सह मिथुनीभूतः आस्ते यतः प्रवृत्ता सरित् प्रवरा हाटकी नाम भवयोः वीर्येण यत्र चित्र भानुः मातरिश्वना समिध्यमानः ओजसा पिबति तत् निष्ठ्यूतम् हाटक-आख्यम् सुवर्णम् भूषणेन असुरेन्द्र अवरोधेषु पुरुषाः सह पुरुषीभिः धारयन्ति ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	उसके	हाटकी	२०.	हाटकी
अध स्तात्	२.	नीचे	नाम	२१.	नाम की
वितले	३.	वितल लोक में	भवयोः	१८.	शंकर पार्वती के
हरः	५.	शंकर	वीर्येण	१९.	तेज से
भगवान्	६.	भगवान्	यत्र	२५.	जहाँ
हाटकेश्वरः	४.	हाटकेश्वर नाम के	चित्रभानुः	२८.	अग्नि
स्व-पार्षद	७.	अपने सेवकों (और)	मातरिश्वना	२६.	जल को वायु से
भूतगण आवृतः	८.	भूत गणों से घिरे रहते हैं	समिध्यमानः	२७.	प्रज्वलित
प्रजापतिः	९.	प्रजापति की	ओजसा	२९.	उत्साह से
सर्ग	१०.	सृष्टि की	पिबति	३०.	पीता है
उपबृंहणाय	११.	वृद्धि के लिए	ततः निष्ठ्यूतम्	३१.	उससे निकला हुआ
भवः	१२.	शंकर जी	हाटक-	३२.	हाटक
भवान्या	१३.	पार्वती जी के	आख्यम्	३३.	नाम के
सह	१४.	साथ	सुवर्णम्	३४.	सोने के
मिथुनीभूत	१५.	विहार करते	भूषणेन	३५.	आभूषण
आस्ते	१६.	रहते हैं	असुरेन्द्र	३६.	असुर राजाओं के
यतः	१७.	जहाँ	अवरोधेषु	३७.	अन्तः पुरों
प्रवृत्ता	२४.	निकली है	पुरुषाः	३८.	पुरुष
सरित्	२३.	नदी	सह पुरुषीभिः	३९.	स्त्रियों के साथ
प्रवरा	२२.	श्रेष्ठ	धारयन्ति ॥	४०.	धारण करती हैं

श्लोकार्थ—उसके नीचे वितल लोक में हाटकेश्वर नाम के शंकर भगवान् अपने सेवकों और भूतगणों से घिरे रहते हैं। प्रजापति की सृष्टि की वृद्धि के लिए शंकरजी पार्वती जी के साथ विहार करते रहते हैं। जहाँ शंकर-पार्वती के तेज से हाटकी नाम को श्रेष्ठ नदी निकली है। जहाँ जल को वायु से प्रज्वलित अग्नि बड़े उत्साह से पीता है। उससे निकला हुआ हाटक नाम के सोने के आभूषण असुर राजाओं के अन्तः पुरों में पुरुष स्त्रियों के साथ धारण करते हैं।।

अष्टादशः श्लोकः

ततोऽधस्तात्सुतले उदारश्रवाः पुण्यश्लोको विरोचनात्मजो बलिर्भगवता महेन्द्रस्य प्रियं चिकीर्षमाणेनादितेर्लब्धकायो भूत्वा वटुवामनरूपेण पराक्षिप्तलोकत्रयो भगवदनुकम्पयैव पुनः प्रवेशित इन्द्रादिष्वविद्यमानया सुसमृद्धया श्रियाभिजुष्टः स्वधर्मेणाराधयंस्तमेव भगवन्तमाराधनीयमपगत-साध्वस आस्तेऽधुनापि ॥१८॥

पदच्छेद—ततः अध स्तात् सुतले उदारश्रवाः पुण्यश्लोकः विरोचन आत्मजः बलिः भगवता महेन्द्रस्य प्रियम् चिकीर्षमाणेन अदितेः लब्धकायः भूत्वा वटु वामन रूपेण पराक्षिप्त लोकत्रयः भगवत् अनुकम्पया एव पुनः प्रवेशितः इन्द्र आदिषु अविद्यमानया सुसमृद्धया श्रिया अभि जुष्टः स्वधर्मेण आराधयन् तम् एव भगवन्तम् आराधनीयम् अपगत साध्वसः आस्ते अधुना अपि ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	उसके	लोक	१९.	लोकों को
अध स्तात्	२.	नीचे	त्रयः	१८.	तीन
सुतले	३.	सुतल लोक है (जहाँ)	भगवत्	२१	भगवान् की
उदारश्रवाः	४.	महान यशस्वी	अनुकम्पया	२३.	कृपा से (उनका)
पुण्यश्लोकः	५.	पवित्र कीर्ति	एव	२४.	ही
विरोचन	६.	विरोचन	पुनः	२१.	फिर से
आत्मजः	७.	पुत्र	प्रवेशितः	२५.	प्रवेश हुआ
बलिः	८.	बलि (रहते हैं)	इन्द्र	२६.	इन्द्र
भगवता	९.	भगवान् ने	आदिषु	२७.	आदि के पास में भी
महेन्द्रस्य	१०.	इन्द्र का	अविद्यमानया	३०.	नहीं
प्रियम्	११.	प्रिय	सुसमृद्धया	२८.	ऐसी अत्यधिक
चिकीर्षमाणेन	१२.	करने के लिए	श्रिया	२९.	सम्पत्ति
अदितेः	१३.	अदिति के	अभि जुष्टः	३१.	प्राप्त हुयी है
लब्धकायः	१४.	गर्भ से	स्वधर्मेण आराधयन्	३४.	अपने धर्म के द्वारा आराधना करते हुये
भूत्वा	१७.	उत्पन्न होकर	तमेव भगवन्तम्	३२/१	उन्ही ३३. भगवान् की
वटुवामन	१५.	वटु वामन	आराधनीयम्	३२/२	पूजा करने योग्य
रूपेण	१६.	रूप में	अपगत साध्वस	३७.	रहित होकर ३६. भय
पराक्षिप्त	२०.	छीन लिया था	आस्ते	३८.	रहते हैं
			अधुना अपि ॥	३५.	आज भी

श्लोकार्थ—उसके नीचे सुतल लोक है। जहाँ महान् यशस्वी पवित्रकीर्ति विरोचन के पुत्र बलि रहते हैं। भगवान् ने इन्द्र का प्रिय करने के लिए अदिति के गर्भ से वटु वामन रूप में उत्पन्न होकर तीनों लोकों को छीन लिया था। फिर से भगवान् की कृपा से ही उनका प्रवेश हुआ। इन्द्र आदि के पास में भी ऐसी अत्यधिक सम्पत्ति नहीं प्राप्त हुई। उन्हीं पूजा करने योग्य भगवान् की अपने धर्म के द्वारा आराधना करते हुये यहाँ आज भी भय रहित होकर रहते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नो एवैतत्साक्षात्कारो भूमिदानस्य यत्तद्भगवत्यशेषजीवनिकायानां जीवभूतात्मभूते परमात्मनि वासुदेवे तीर्थतमे पात्र उपपन्ने परया श्रद्धया परमादरसमाहितमनसा सम्प्रतिपादितस्य साक्षादपवर्गद्वारस्य यद्बिलनिलयैश्वर्यम् ॥१६॥

पदच्छेद—नो एव एतत् साक्षात्कारः भूमि दानस्य यत् तद् भगवति अशेष जीव निकायानां जीव भूतात्म भूते परम आत्मनि वासुदेवे तीर्थतमे पात्रे उपपन्ने परया श्रद्धया परम आदर समाहित मनसा सम्प्रति-पादितस्य साक्षात् अपवर्ग द्वारस्य यद्बिल निलय ऐश्वर्यम् ॥

शब्दार्थ—		हे राजन् !	तीर्थतमे	६.	पवित्रतम
नो	२५.	नहीं है	पात्र	१०.	पात्र के
एव	२३.	ही	उपपन्ने	११.	आने पर
एतत्	२२.	यह	परया	१२.	परम
साक्षात्कारः	२४.	मुख्य फल	श्रद्धया	१३.	श्रद्धा से और
भूमि	२०.	भूमि	परम	१४.	परम
दानस्य	२१.	दान का	आदर	१५.	आदर के साथ
यत्	२६.	जो	समाहित	१६.	स्थिर
तद्	१७.	यह	मनसा	१७.	मन से
भगवति	८/१.	भगवान् के	सम्प्रति	१८.	प्रदान किये
अशेष	१.	सम्पूर्ण	पादितस्य	१६.	किये गये
जीव	२.	जीवों के	साक्षात्	३१.	साक्षात्
निकायानाम्	३.	नियन्ता	अपवर्ग	३२.	मोक्ष का
जीव	४.	जीव	द्वारस्य	३३.	द्वार है
भूतात्मभूते	५.	स्वरूप एवम् आत्म स्वरूप	यद्बिल	२८.	सुतल
परम आत्मनि	७.	परमात्मा	निलयः	२६.	लोक का
वासुदेवे	८/२.	वासुदेव के समान	ऐश्वर्यम्	३०.	ऐश्वर्य है (यह)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सम्पूर्ण जीवों के नियन्ता जीव-स्वरूप एवम् आत्म-स्वरूप परमात्मा भगवान् वासुदेव के समान पवित्रतम पात्र के आने पर परम श्रद्धा से और परम आदर के साथ स्थिर मन से प्रदान किये गये भूमि-दान का यही मुख्य फल नहीं है, जो यह सुतल लोक का ऐश्वर्य है ॥

विंशः श्लोकः

यस्य ह वाव क्षुत्पतनप्रस्खलनादिषु विवशः सकृन्नामाभिगृणन् पुरुषः कर्मबन्धनमञ्जसा विधुनोति यस्य हैव प्रतिबाधनं मुमुक्षवोऽन्यथैवोपलभन्ते ॥२०॥

पदच्छेद—यस्य ह वाव क्षुत् पतन प्रस्खलन आदिषु विवशः सकृत् नाम अभिगृणन् पुरुषः कर्म बन्धनम् अञ्जसा विधुनोति यस्य ह एव प्रति बाधनम् मुमुक्षवः अन्यथा एव उपलभन्ते ।।

यस्य	१.	जिस भगवान् का	कर्म	११.	कर्म के
ह वाव			बन्धनम्	१२.	बन्धन को
क्षुत्	२.	छींकने	अञ्जसा	१३.	सुगमता से
पतन	३.	गिरने (और)	विधुनोति	१४.	काट देता है
प्रस्खलन	४.	फिसलने	यस्य	१५.	जबकि
आदिषु	५.	आदि के समय	ह एव		ही
विवशः	६.	विवश होकर	प्रति बाधनम्	१८.	कर्म बन्धन को
सकृत्	७.	एक बार	मुमुक्षवः	१६.	मोक्ष की इच्छा रखने वाले लोग
नाम	८.	नाम	अन्यथा	१७.	दूसरे उपायों से
अभिगृणन्	९.	लेने से	एव		ही
पुरुषः	१०.	पुरुष	उपलभन्ते ।।	१९.	काट पाते हैं

श्लोकार्थ—जिस भगवान् का, छींकने, गिरने और फिसलने आदि के समय विवश होकर एक बार नाम लेने से पुरुष कर्मों के बन्धन को सुगमता से काट देता है, जबकि मोक्ष की इच्छा रखने वाले लोग दूसरे उपायों से ही कर्म-बन्धन को काट पाते हैं ।।

शब्दार्थ—

एकविंशः श्लोकः

तद्भक्तानामात्मवतां सर्वेषामात्मन्यात्मद आत्मतयैव ॥२१॥

पदच्छेद— तद् भक्तानाम् आत्मवताम् सर्वेषाम् आत्मनि आत्मदः आत्मतया एव ।।

शब्दार्थ—

तद्	१.	अपने	आत्मनि	६.	आत्मा भगवान् को
भक्तानाम्	२.	भक्तों को और	आत्मदः	४.	स्वरूप प्रदान करने वाले
आत्मवताम्	३.	आत्म ज्ञानियों को	आत्मतया	७.	आत्म भाव से
सर्वेषाम्	५.	तथा सम्पूर्ण प्राणियों के	एव ।।	८.	ही यह भूमि दान का फल नहीं मिलता है

श्लोकार्थ—अपने भक्तों को और आत्मज्ञानियों को स्वस्वरूप प्रदान करने वाले तथा सम्पूर्ण प्राणियों के आत्मा भगवान् को आत्म भाव से ही भूमिदान का यह फल नहीं मिलता है ।।

द्वाविंशः श्लोकः

न वै भगवान्नूनममुष्यानुजग्राह यदुत पुनरात्मानुस्मृतिमोषणं मायामयभोगैश्वर्यमेवाततनुतेति ॥२२॥

पदच्छेद--न वै भगवान् नूनम् अमुष्य अनुजग्राह यदुत पुनः आत्मा अनुस्मृति मोषणम् मायामय भोग ऐश्वर्यम् एव अततनुत इति ॥

शब्दार्थ--

न वै	१३.	नहीं है	आत्मा	५/२.	अपनी
भगवान्	१.	भगवान् ने	अनुस्मृति	६.	विस्मृति
नूनम्	२.	निश्चित ही	मोषणम्	७.	कराने वाला
अमुष्य	४.	उस बलि का	मायामय	८.	माया से निर्मित
अनुजग्राह	१२.	कृपा	भोग ऐश्वर्यम्	९.	भोग और ऐश्वर्य
यदुत	३.	जो	एव	१०.	ही
पुनः	५/१.	फिर से	अततनुतः	११.	दिया (यह कोई)
			इति ॥		

श्लोकार्थ—भगवान् ने निश्चित ही जो इस बलि का फिर अपनी विस्मृति कराने वाला माया से निर्मित भोग और ऐश्वर्य ही दिया यह कोई कृपा नहीं है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

यत्तद्भगवतानधिगतान्योपायेन याच्ञाच्छलेनापहृतस्वशरीरावशेषितलोकत्रयो वरुणपाशैश्च सम्प्रतिमुक्तो गिरिदर्यां चापविद्ध इति होवाच ॥२३॥

पदच्छेद—यत् तत् भगवता अनधिगत अन्य उपायेन याच्ञा छलेन अपहृत स्व शरीर अवशेषित लोक त्रयः वरुण पाशैः च सम्प्रति मुक्तः गिरिदर्याम् च अपविद्ध इति ह उवाच ॥

शब्दार्थ—

यत् तत्	१.	जिस समय	लोक	१२.	लोकों का राज्य
भगवता	२.	भगवान् ने	त्रयः	११.	तीन
अनधिगत	५.	न देखकर	वरुण	१५.	वरुण के
अन्य	३.	दूसरा	पाशैः	१६.	पाश से
उपायेन	४.	उपाय	च	१४.	और
याच्ञा	६.	याचना के	सम्प्रति	१९.	इस समय
छलेन	७.	छल से	मुक्तः	२०.	डाल दिया
अपहृत	१३.	छीन लिया	गिरिदर्याम्	१८.	पर्वत की गुफा में
स्वशरीर	९.	उसका शरीर	च अपविद्धः	१७.	बाँधकर
अवशेषित	८. शेष छोड़कर १०.		इति ह उवाच ॥	२०.	ऐसा उसने कहा था

श्लोकार्थ—जिस समय भगवान् ने दूसरा उपाय न देखकर याचना के छल से शेष उसका शरीर छोड़कर तीन लोकों का राज्य छीन लिया और वरुण के पास से बाँधकर पर्वत की गुफा में डाल दिया उस समय उसने ऐसा कहा था ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

नूनं बतायं भगवानर्थेषु न निष्णातो योऽसाविन्द्रो यस्य सचिवो मन्त्राय वृत एकान्ततो बृहस्पतिस्तमतिहाय स्वयमुपेन्द्रेणात्मानमयाचतात्मनश्चाशिषो नो एव तद्दास्यमतिगम्भीरवयसः कालस्य मन्वन्तरपरिवृत्तं कियल्लोकत्रयमिदम् ॥२४॥

पदच्छेद—नूनम् बतअयम् भगवान् अर्थेषु न निष्णातः यः असौ इन्द्रः यस्य सचिवः मन्त्राय वृतः एकान्ततः बृहस्पतिः तम् अतिहाय स्वयम् उपेन्द्रेण आत्मानम् अयाचत आत्मनः च अशिषः नो एव तद् दास्यम् अति गम्भीर वयसः कालस्य मन्वन्तर परिवृत्तम् कियत् लोक त्रयम् इदम् ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	१.	निश्चित ही	अतिहाय	१६.	छोड़कर
बतअयम्	२.	खेद है कि यह ३.	स्वयम् उपेन्द्रेण	१७.	स्वयं भगवान् विष्णु से
भगवान्	४/१.	ऐश्वर्य युक्त	आत्मानम्	२१.	अपने लिये
अर्थेषु	५.	स्वार्थ सिद्धि में	अयाचत आत्मनः	१९.	न मांगकर उनके द्वारा
न	६.	नहीं	च	२३.	और
निष्णातः	७.	चतुर है	आशिषः	२२.	भोग को
यः	८.	जो	नो एव	२०.	हमसे ही २५.
असौ इन्द्रः	९.	इनसे ४/२ इन्द्र	तद् दास्यम्	१८.	उनके दास्य भाव को
यस्य		जिसका	अति गम्भीरवयसः	२४.	अत्यधिक अवस्था को मांगा
सचिवः	१३.	मंत्री	कालस्य	३०.	समय
मन्त्राय	११.	मंत्रणा के लिये	मन्वन्तर	२८.	मन्वन्तर
वृतः	१४.	बनाया	परिवृत्तम्	२९.	पर्यन्त
एकान्ततः	१२.	अनन्य भाव से	कियत् लोक	३१.	कितना है लोकों का १८.
बृहस्पतिस्तम्	१०.	बृहस्पति को उनको भी १५.	त्रयम् इदम् ॥	२७.	तीनों यह २६.

श्लोकार्थ—निश्चित ही खेद है कि यह ऐश्वर्य युक्त इन्द्र स्वार्थ, सिद्धि में चतुर नहीं है। जो इनसे बृहस्पति को मन्त्रण, के लिये अनन्य भाव से मन्त्री बनाया। उनको भी छोड़कर स्वयम् भगवान् विष्णु से उनके दास्य भाव को न मांगकर उनके द्वारा हमसे अपने लिये भोगों को और अत्यधिक अवस्था को ही मांगा। यह तीनों लोकों का मन्वन्तर पर्यन्त समय कितना है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

यस्यानुदास्यमेवास्मत्पितामहः किल वव्रे न तु स्वपित्र्यं यदुताकुतोभयं पदं दीयमानं भगवतः परमिति भगवतोपरते खलु स्वपितरि ॥२५॥

पदच्छेद—यस्य अनुदास्यम् एव अस्मत् पितामहः किल वव्रे न तु स्वपित्र्यम् यदुत अकुतोभयम् पदं दीयमानम् भगवतः परम् इति भगवता उपरते खलु स्वपितरि ॥

शब्दार्थ—

यस्य	४.	जिस भगवान् से	यदुत		यह
अनुदास्यम्	५.	सेवा को	अकुतोभयम्	१५/२.	निष्कण्टक
एव	६.	ही वर	पदम्	१६.	राज्य को
अस्मत्	२.	हमारे	दीयमानम्	१३.	दिये जाने पर
पितामह	३.	पितामह	भगवतः	६.	भगवान् के द्वारा
किल	१.	निश्चित ही	परम् इति	१५/१.	बड़े ऐसा
वव्रे	७	माँगा था और	भगवता	१२.	भगवान् के द्वारा
न तु	१७.	नहीं स्वीकार किया	उपरते	१०.	मारे जाने पर भी
स्वपित्र्यम्	८.	अपने पिता के	खलु	११.	निश्चित ही
			स्वपितरि ॥	१४.	अपने पिता के

श्लोकार्थ—निश्चित ही हमारे पितामह ने जिस भगवान् से सेवा का ही वर माँगा था और अपने पिता के मारे जाने पर भी निश्चित ही भगवान् के द्वारा दिये जाने पर अपने पिता के इस बड़े निष्कण्टक राज्य को नहीं स्वीकार किया था ॥

षड्विंशः श्लोकः

तस्य महानुभावस्यानुपथममृजितकषायः को वास्मद्विधः परिहीणभगवदनुग्रह उपजिगमिषतीति ॥२६॥

पदच्छेद—तस्य महानुभावस्य अनुपथम् अमृजितकषायः कः वा अस्मद्विधः परिहीण भगवत् अनुग्रहः उपजिगमिषति इति ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	वे प्रह्लाद जी	अस्मद्विधः	६.	हमारे समान
महानुभावों के	२.	महानुभावों के	परिहीण	१०.	रहित (मनुष्य उनके)
अनुपथम्	३.	अनुकरण करने वाले थे	भगवत्	८.	भगवान् की
अमृजितकषायः	५	नहीं शान्त हुयी है ४. हमारी वासनायें।	अनुग्रहः	९.	कृपा से
को वा	७.	कौन अथवा	उपजिगमिषति इति ॥	११.	पास में जाने की इच्छा कर सकता है ॥

श्लोकार्थ—वे प्रह्लाद जी महानुभावों के अनुकरण करने वाले थे। हमारी वासनायें शान्त नहीं हुयी हैं। अथवा हमारे समान कौन भगवान् की कृपा से रहित मनुष्य उन भगवान् के पास में जाने की इच्छा कर सकता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तस्यानुचरितमुपरिष्टाद्विस्तरिष्यते यस्य भगवान् स्वयमखिलजगद्-गुरुर्नारायणो द्वारि गदापाणिरवतिष्ठते निजजनानुकम्पितहृदयो येनाङ्गुष्ठेन पदा दशकन्धरो योजनायुतायुतं दिग्विजय उच्चाटितः ॥२७॥

पदच्छेद—तस्य अनुचरितम् उपरिष्टात् विस्तरिष्यते यस्य भगवान् स्वयम् अखिलजगद्गुरुः नारायणः द्वारि गदापाणिः अवतिष्ठते निजजन अनुकम्पितहृदयः येन अङ्गुष्ठेन पदा दशकन्धरः योजनअयुतअयुतम् दिग्विजयेः उच्चाटितः ॥

शब्दार्थ—

तस्य अनुचरितम्	१.	उन बलि का चरित्र	निजजन	४.	अपने भक्तों के प्रति
उपरिष्टात् विस्तरिष्यते	२.	आगे विस्तारपूर्वक कहेंगे	अनुकम्पित हृदयः	५.	दया से परिपूर्ण हृदय
यस्य भगवान् स्वयम्	३.	जो भगवान् स्वयम्	येन	११.	जिन भगवान् ने
अखिलजगद्गुरुः	६.	सम्पूर्ण जगत् के गुरु	अंगुष्ठेनपदा	१४.	अंगूठे के द्वारा पैर से
नारायणः	७.	नारायण	दशकन्धरः	१३.	रावण को
द्वारि	९.	दरवाजे पर	योजन अयुतायुतम्	१४.	लाखों योजन
गदापाणिः	८.	हाथ में गदा लेकर उसके	दिग्विजयेः	१२.	दिग्विजय के लिये
अवतिष्ठते	१०.	उपस्थित रहते हैं	उच्चाटितः ॥	१६.	दूर फेंक दिया था

श्लोकार्थ—उन बलि का चरित आगे विस्तार पूर्वक कहेंगे। जो भगवान् स्वयम् अपने भक्तों के प्रति दया से परिपूर्ण होकर सम्पूर्ण जगत् के गुरु नारायण हाथ में गदा लेकर उसके दरवाजे पर उपस्थित रहते हैं। जिन भगवान् ने दिग्विजय के लिये रावण को पैर के अँगूठे के द्वारा लाखों योजन दूर फेंक दिया था ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

ततोऽधस्तात्तलातले मयो नाम दानवेन्द्रस्त्रिपुराधिपतिर्भगवता पुरारिणा त्रिलोकीशं चिकीर्षुणा निर्दग्धस्वपुरत्रयस्तत्प्रसादाल्लब्धपदो मायाविनामाचार्यो महादेवेन परिरक्षितो विगतसुदर्शनभयो महीयते ॥२८॥

पदच्छेद—ततः अधस्तात्तलातले मयः नाम दानवेन्द्रः त्रिपुर अधिपतिः भगवता पुरारिणा त्रिलोकीशम् चिकीर्षुणा निर्दग्ध स्वपुर त्रयः तत् प्रसादात् लब्धपदः मायाविनाम् आचार्यः महादेवेन परिरक्षितः विगत सुदर्शनभयः महीयते ॥

शब्दार्थ—

ततः अधस्तात्	१.	उसके नीचे	निर्दग्ध	९.	भस्म कर दिये जाने पर
तलातले	२.	तलातल है (जिसमें)	स्वपुर त्रय	८.	अपने पुरों को तीनों
मयः नाम दानवेन्द्रः	४.	मय नाम का दानवेन्द्र रहता है	तत् प्रसादात्	१०.	उनकी कृपा से वह
त्रिपुर अधिपतिः	३.	पुर का स्वामी	लब्धपदः	११.	प्राप्त किया स्थान
भगवतापुरारिणा	७.	भगवान् शंकर के द्वारा	माया विनाम् आचार्यः	१२.	मायावियों के आचार्य
त्रिलोकीशम्	५.	तीनों लोकों को शान्ति	महादेवेन परिरक्षितः	१३.	भगवान् शंकर से सुरक्षित है
चिकीर्षुणा	६.	देने के लिये	विगतसुदर्शनभयः	१४.	नहीं है सुदर्शन का भय
			महीयते ॥	१५.	वहाँ उसका बड़ा आदर करते हैं

श्लोकार्थ—उसके नीचे तलातल है। जिसमें त्रिपुर का स्वामी मय नाम का दानवेन्द्र रहता है। तीनों लोकों को शान्ति देने के लिये भगवान् शंकर के द्वारा अपने तीनों पुरों को भस्म कर दिये जाने पर उनकी कृपा से वह स्थान प्राप्त किया। मायावियों के आचार्य भगवान् शंकर से सुरक्षित हैं। उसे सुदर्शन का भय नहीं है। वहाँ रहने वाले उसका बड़ा आदर करते हैं ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

ततोऽधस्तान्महातले काद्रवेयाणां सर्पाणां नैकशिरसां क्रोधवशो नाम गणः कुहकतक्षककालियसुषेणादिप्रधाना महाभोगवन्तः पतत्त्रिराजाधिपतेः पुरुषवाहादनवरतमुद्विजमानाः स्वकलत्रापत्यसुहृत्कुटुम्बसङ्गेन क्वचित्प्रमत्ता विहरन्ति ॥२९॥

पदच्छेद—

ततः अधस्तात् महातले काद्रवेयाणाम् सर्पाणाम् न एक शिरसाम् क्रोधवशः नाम गणः कुहक तक्षक कालिय सुषेण आदि प्रधानाः महाभोगवन्तः पतत्त्रिराज अधिपतेः पुरुष वाहात् अनवरतम् उद्विजमानाः स्वकलत्र अपत्य सुहृत् कुटुम्ब सङ्गेन क्वचित् प्रमत्ताः विहरन्ति ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	उसके	महा	१६.	बहुत बड़े-बड़े
अधस्तात्	२.	नीचे	भोगवन्तः	१७.	फणों से युक्त हैं
महातले	३.	महातल है (उसमें)	पतत्त्रिराज	१९.	पक्षियों के
काद्रवेयाणाम्	४.	कद्रू से उत्पन्न	अधिपतेः	२०.	स्वामी गरुड़ जी से
सर्पाणाम्	६.	सर्पों का	पुरुष वाहात्	१८.	भगवान् के वाहन
नएकशिरसाम्	५.	अनेक सिरों वाले	अनवरतम्	२१.	लगातार
क्रोधवशः	७.	क्रोधवश	उद्विग्नमानाः	२२.	भयभीत रहते हैं
नाम	८.	नाम का	स्वकलत्र	२३.	अपनी स्त्री
गणः	९.	समुदाय है	अपत्य	२४.	पुत्र
कुहक	१०.	कुहक	सुहृत्	२५.	मित्र और
तक्षक	११.	तक्षक	कुटुम्ब	२६.	कुटुम्ब के
कालिय	१२.	कालिय (और)	सङ्गेन	२७.	साथ
सुषेण	१३.	सुषेण	क्वचित्	२८.	कभी-कभी
आदि	१४.	आदि	प्रमत्ताः	२९.	उन्मत्त होकर
प्रधानाः	१५.	प्रधान	विहरन्ति ॥	३०.	विहार करते हैं

श्लोकार्थ—उसके नीचे महातल है। उसमें कद्रू से उत्पन्न अनेक सिरों वाले सर्पों का क्रोधवश नाम का समुदाय है। उनमें कुहक, तक्षक, कालिय और सुषेण आदि प्रधान बहुत बड़े-बड़े फनों से युक्त हैं। भगवान् के वाहन, पक्षियों के स्वामी गरुड़ जी से लगातार भयभीत रहते हैं। अपनी स्त्री, पुत्र, मित्र और कुटुम्ब के साथ कभी-कभी उन्मत्त होकर विहार करते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

ततोऽधस्ताद्रसातले दैतेया दानवाः पणयो नाम निवातकवचाः कालेया हिरण्यपुरवासिन इति विबुधप्रत्यनीका उत्पत्त्या महौजसो महासाहसिनो भगवतः सकललोकानुभावस्य हरेरेव तेजसा प्रतिहतबलावलेपा बिलेशया इव वसन्ति ये वै सरमयेन्द्रदूत्या वाग्भिर्मन्त्रवर्णाभिरिन्द्राद्बिभ्यति ॥३०॥

पदच्छेद—ततः अध स्तात् रसातले दैतेया दानवाः पणयः नाम निवात कवचाः कालेया हिरण्यपुर वासिन इति विबुध प्रत्यनीकाः उत्पत्त्या महौजसः महासाहसिनः भगवतः सकल लोक अनुभावस्य हरेः एव तेजसा प्रतिहतबल अवलेपाः बिलेशयाः इव वसन्ति ये वै सरमया इन्द्र दूत्या वाग्भिः मन्त्रवर्णाभिः इन्द्रात् बिभ्यति ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	उसके	सकल	१७.	सम्पूर्ण लोकों
अध स्तात्	२.	नीचे	लोक	१८.	लोकों में
रसातले	३.	रसातल में	अनुभावस्य	१९.	प्रभाव होने से
दैतेयः	६.	दैत्य और	हरेः	२१.	श्री हरि के
दानवाः	७.	दानव रहते हैं (वे)	एव	२२.	ही
पणयः	४.	पणि	तेजसा	२३.	तेज से
नाम	५.	नाम	प्रतिहत बल	२५.	नष्ट हो जाने के कारण
निवात कवचाः	८.	निवात कवच	अवलेपः	२४.	बल का अभिमान
कालेयाः	९.	कालेय और	बिलेशयाः	२६.	सर्पों के
हिरण्यपुरवासिनः	१०.	हिरण्यपुरवासी	इव वसन्ति	२७.	समान रहते हैं
इति	११.	ऐसा कहे जाते हैं	ये वै	२८.	जो
विबुध	१२.	ये देवताओं के	सरमया इन्द्र	३१.	सरमा के २९. इन्द्र की
प्रत्यनीकाः	१३.	विरोधी हैं	दूत्या	३०.	दूती
उत्पत्त्या	१४.	जन्म से ही	वाग्भिः	३३.	वाक्यों के कारण
महौजसः	१५.	बड़े बलवान्	मन्त्रवर्णाभिः	३२.	मन्त्र वर्ण स्वरूप
महासाहसिनः	१६.	महान्-साहसी हैं	इन्द्रात्	३४.	इन्द्र से
भगवतः	२०.	भगवान्	बिभ्यति ॥	३५.	डरते रहते हैं

श्लोकार्थ—उसके नीचे रसातल में पणि नाम के दैत्य और दानव रहते हैं। ये निवात कवच, कालेय और हिरण्यपुरवासी ऐसा कहे जाते हैं। यह जन्म से ही देवताओं के विरोधी हैं और बड़े बलवान् तथा महान् साहसी हैं। सम्पूर्ण लोकों में प्रभाव होने से भगवान् श्री हरि के ही तेज से बल का अभिमान नष्ट हो जाने के कारण सर्पों के समान (छिपकर) रहते हैं। जो इन्द्र की दूती सरमा के (कहे हुए) मन्त्र वर्ण स्वरूप वाक्यों के कारण इन्द्र से डरते रहते हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

ततोऽधस्तात्पाताले नागलोकपतयो वासुकिप्रमुखाः शङ्खकुलिकमहाशङ्खश्वेतधनञ्जयधृतराष्ट्रशङ्खचूडकम्बलाश्वतरदेवदत्तादयो महाभोगिनो महामर्षा निवसन्ति येषामु ह वै पञ्चसप्तदशशतसहस्रशीर्षाणां फणासु विरचिता महामणयो रोचिष्णवः पातालविवरतिमिरनिकरं स्वरोचिषा विधमन्ति ॥३१॥

पदच्छेद—ततः अध स्तात् पाताले नागलोक पतयः वासुकि प्रमुखाः शङ्ख कुलिक महाशङ्ख श्वेत धनञ्जय धृतराष्ट्र शङ्खचूड कम्बल अश्वतर देवदत्त आदयः महाभोगिनः महामर्षाः निवसन्ति येषाम् उ ह वै पञ्च सप्तदश शत सहस्र शीर्षाणाम् फणासु विरचितः महामणयः रोचिष्णवः पाताल विवर तिमिर निकरम् स्वरोचिषा विधमन्ति ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	उसके	महाभोगिनः	१९.	बड़े-बड़े फन वाले
अध स्तात्	२.	नीचे	महामर्षाः	२०.	महान् क्रोधी (नाग)
पाताले	३.	पाताल है	निवसन्ति	२१.	निवास करते हैं
नागलोक	४.	पाताल लोक के	येषाम्	२२.	उनमें से
पतयः	५.	स्वामी	उ ह वै	२३.	किसी-किसी के
वासुकि	६.	वासुकि	पञ्च	२४.	पांच
प्रमुखाः	७.	प्रधान हैं (वहां)	सप्तदश	२५.	सात, दस
शङ्ख	८.	शङ्ख	शत सहस्र	२६.	सौ हजार
कुलिक	९.	कुलिक	शीर्षाणाम्	२७.	सिर हैं
महाशङ्ख	१०.	महाशङ्ख	फणासु	२८.	फणों में
श्वेत	११.	श्वेत	विरचिताः	२९.	बनी हुई
धनञ्जय	१२.	धनञ्जय	महामणयः	३१.	महान् मणियां
धृतराष्ट्र	१३.	धृतराष्ट्र	रोचिष्णवः	३०.	चमकती हुई
शङ्खचूड	१४.	शङ्खचूड	पाताल	३३.	पाताल
कम्बल	१५.	कम्बल	विवर	३४.	लोक के
अश्वतर	१६.	अश्वतर और	तिमिर	३५.	अन्धकार का
देवदत्त	१७.	देवदत्त	निकरम्	३६.	समूह
आदयः	१८.	आदि	स्वरोचिषा	३२.	अपने प्रकाश से
			विधमन्ति ॥	३७.	दूर करती हैं

श्लोकार्थ—उसके नीचे पाताल है। पाताल लोक के स्वामी वासुकि प्रधान हैं। वहां शङ्ख, कुलिक, महाशङ्ख, श्वेत, धनञ्जय, शङ्खचूड, कम्बल, अश्वतर और देवदत्त आदि बड़े-बड़े फन वाले महान् क्रोधी नाग निवास करते हैं। उनमें से किसी-किसी के पांच, सात, दश, सौ हजार सिर हैं। फणों में बनी हुई चमकती हुई महान् मणियाँ अपने प्रकाश से पाताल लोक के अन्धकार के समूह को दूर करती हैं ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पञ्चमे स्कन्धे राह्वादिस्थितिबिलस्वर्गमर्यादा-निरूपणं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—तस्य मूलदेशे त्रिंशद्योजनसहस्रान्तर आस्ते या वै कला- भगवतस्तामसी समाख्यातानन्त इति सात्वतीया द्रष्टृदृश्ययोः सङ्कर्षण- महमित्यभिमानलक्षणं यं सङ्कर्षणमित्याचक्षते ॥१॥

पदच्छेद—तस्य मूलदेशे त्रिशत् योजन सहस्र अन्तरे आस्ते या वं कला भगवतः तामसी समाख्याता अनन्त इति सात्वतीया द्रष्टृ दृश्ययोः संकर्षणम् अहम् इति अभिमान लक्षणम् यम् सङ्कर्षणम् इति आचक्षते ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	उस पाताल लोक के	अनन्त	७.	अनन्त
मूलदेशे	९.	मूल देश में	इति	१८.	एक कर देती है
त्रिशत्योजन	३.	तीस योजन की	सात्वतीया	१०.	नित्य
सहस्र	४.	हजार	द्रष्टृ दृश्ययोः	१६.	द्रष्टा और दृश्य को
अन्तरे	५.	दूरी पर	संकर्षणम्	१७.	खींचकर
आस्ते या वं	१२.	है जो	अहम्	१३.	अहंकार स्वरूप और
कला	११.	कला	इति	१५.	होने से
भगवतः तामसी	६.	भगवान् की तामसी	अभिमान लक्षणम्	१४.	अभिमान स्वरूप
समाख्याता	८.	नाम से विख्यात	यम् संकर्षणम्	१९.	जिससे इन्हें संकर्षण
			इति आचक्षते ॥	२०.	ऐसा कहते हैं

श्लोकार्थ—उस पाताल लोक के मूल देश में तीस हजार योजन की दूरी पर अनन्त नाम से विख्यात भगवान् की तामसी कला है। जो अहंकार स्वरूप और अभिमान स्वरूप होने से द्रष्टा और दृश्यको खींचकर एककर देती है। जिससे इन्हें संकर्षण ऐसा कहते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

यस्येदं क्षितिमण्डलं भगवतोऽनन्तमूर्तेः सहस्रशिरस एकस्मिन्नेव शीर्षणि ध्रियमाणं सिद्धार्थ इव लक्ष्यते ॥२॥

पदच्छेद—यस्य इदम् क्षितिमण्डलम् भगवतः अनन्त मूर्तेः सहस्र शिरसः एकस्मिन् एव शीर्षणि ध्रियमाणम् सिद्धार्थ इव लक्ष्यते ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जिस	शिरसः	३.	शिर वाले
इदम्	९.	यह	एकस्मिन्	६.	एक
क्षिति	१०.	पृथ्वी	एवशीर्ष	७.	ही सिर पर
मण्डलम्	११.	मण्डल	ध्रियमाणम्	८.	रक्खा हुआ
भगवतः	५.	भगवान् के	सिद्धार्थम्	१२.	सरसों के दाने के
अनन्तमूर्तेः	४.	अनन्त मूर्ति	इव	१३.	समान
सहस्र	२.	हजारों	लक्ष्यते ॥	१४.	दिखाई देता है

श्लोकार्थ—जिस हजारों सिर वाले अनन्त मूर्ति भगवान् के एक ही सिर पर रक्खा हुआ यह पृथ्वी- मण्डल सरसों के दाने के समान दिखाई देता है ॥

तृतीयः श्लोकः

यस्य ह वा इदं कालेनोपसञ्जिहीर्षतोऽमर्षविरचितरुचिरभ्रमद्भ्रुवोरन्तरेण साङ्कर्षणो नाम रुद्र एकादशव्यूहस्त्र्यक्षस्त्रिशिखं शूलमुत्तम्भयन्नुदतिष्ठत् ॥३॥

पदच्छेद—यस्य ह वा इदम् कालेन उपसञ्जिहीर्षतः अमर्ष विरचितरुचिर भ्रमद्भ्रुवोः अन्तरेण साङ्कर्षणः नाम रुद्रः एकादशव्यूहः त्रिअक्षः त्रिशिखम् शूलम् उत्तम्भयन् उदतिष्ठत् ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जब भगवान् सङ्कर्षण की	साङ्कर्षणः नाम	९.	संकर्षण नाम के
ह वा	४.	होती है (तब)	रुद्रः	१२.	रुद्र
इदम् कालेन	२.	इस विश्व के प्रलयकाल के	एकादशव्यूहः	१०.	ग्यारह व्यूह संख्या वाले
उपसञ्जिहीर्षतः	३.	उपसंहार की इच्छा	त्रिअक्षः	११.	तीन आंखों वाले
अमर्ष	५.	क्रोध वश	त्रिशिखम्	१३.	तीन शिखाओं वाले
विरचितरुचिर	६.	बनाये हुये सुन्दर	शूलम्	१४.	त्रिशूल को
भ्रमद्भ्रुवोः	७.	घूमती हुई भौंहों से	उत्तम्भयन्	१५.	घुमाते हुये
अन्तरेण	८.	मध्य भाग से	उदतिष्ठत् ॥	१६.	प्रकट होते हैं

श्लोकार्थ—जब भगवान् संकर्षण की इस विश्व का प्रलयकाल के उपसंहार की इच्छा होती है तब क्रोध वश बनाये हुये सुन्दर घूमती हुई भौंहों के मध्य भाग से संकर्षण नाम के ग्यारह व्यूहसंख्या वाले, तीन आंखों वाले रुद्र, तीन शिखाओं वाले त्रिशूल को घुमाते हुये प्रकट होते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

यस्याङ्घ्रिकमलयुगलारुणविशदनखमणिषण्डमण्डलेष्वहिपतयः सह सात्वतर्षभैरेकान्तभक्तियोगेनावनमन्तः स्ववदनानि परिस्फुरत्कुण्डलप्रभामण्डितगण्डस्थलान्यतिमनोहराणि प्रमुदितमनसः खलु विलोकयन्ति ॥४॥

पदच्छेद—यस्य अङ्घ्रि कमल युगल अरुण विशद नखमणि षण्डमण्डलेषुअ हिपतयः सह सात्वतर्षभैः एकान्त भक्ति योगेन अवनमन्तः स्ववदनानि परिस्फुरत् कुण्डल प्रभा मण्डित गण्ड स्थलानि अतिमनोहराणि प्रमुदित मनसः खलु विलोकयन्ति ॥

शब्दार्थ—

			एकान्तभक्तियोगेन	१०.	अनन्य भक्ति योग से
यस्य	१.	जिस भगवान् के	अवनमन्तः	११.	प्रणाम करते हैं
अङ्घ्रिकमल	३.	चरण कमलों के	स्ववदनानि	१६.	अपने मुखों को
युगल	२.	दोनों	परिस्फुरत्	१२.	और स्फुरित होते हुये
अरुणविशद	४.	लाल स्वच्छ	कुण्डल प्रभा	१३.	कुण्डल की कान्ति से
नखमणिषण्ड	५.	नखमणि समूह के	मण्डितगण्ड	१४.	मण्डित कपोल
मण्डलेषु	६.	पंक्ति के समान	स्थलानि	१५.	स्थलों वाले
अहिपतयः	९.	सर्पों के स्वामी	अतिमनोहराणि	१७.	अत्यन्त सुन्दर
सह	८.	साथ	प्रमुदित मनसः	१८.	प्रसन्न मन से
सात्वतर्षभैः	७	प्रधान भक्तों के	खलु विलोकयन्ति ॥	१९.	निश्चित ही देखते हैं

श्लोकार्थ—जिस भगवान् के दोनों चरण कमलों को लाल स्वच्छ नखमणि समूह की पंक्ति के समान प्रधान भक्तों के साथ सर्पों के स्वामी अनन्य भक्तियोग से प्रणाम करते हैं और स्फुरित होते हुये कुण्डल की कान्ति से मण्डित कपोल स्थलों वाले अपने मुखों को अत्यन्त सुन्दर प्रसन्न मन से निश्चित ही देखते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

यस्यैव हि नागराजकुमार्य आशिष आशासानाश्चार्वङ्गवलयविलसित-विशदविपुलधवलसुभगरुचिरभुजरजतस्तम्भेष्वगुरुचन्दनकुङ्कुमपङ्कानुलेपेना-वलिम्पमानास्तदभिमर्शनोन्मथितहृदयमकरध्वजावेशरुचिरललितस्मितास्तद-नुरागमदमुदितमदविघूर्णितारुणकरुणावलोकनयनवदनारविन्दं सव्रीडं किल विलोकयन्ति ॥५॥

पदच्छेद—यस्य एव हि नागराजकुमार्यः आशिष आशासानाः चारु अङ्ग वलय विलसित विशद विपुल धवल सुभग रुचिर भुजरजत स्तम्भेषु अगुरु चन्दन कुङ्कुम पङ्क अनुलेपेन अवलिम्पमानाः तद् अभिमर्शन उन्मथित हृदय मकरध्वज आवेश रुचिर ललित स्मिताः तद् अनुराग मद मुदित मदविघूर्णित अरुण करुणा अवलोक नयन वदन अरविन्दम् सव्रीडम् किल विलोकयन्ति ॥

शब्दार्थ —

यस्य एव हि	१.	जहाँ पर ही	तद्	२१.	उनके
नागराजकुमार्यः	२.	नागराजों की कन्यायें	अभिमर्शन	२२.	अङ्ग स्पर्श से
आशिषः	३.	अनेकों	उन्मथित	२३.	मथित
आशासानाः	४.	कामनाओं से युक्त	हृदय	२४	हृदय में
चारु-अङ्ग	५.	सुन्दर अङ्ग	मकरध्वज	२५.	कामदेव का
वलय	६.	मण्डलों पर	आवेश	२६.	सञ्चार हो जाता है
विलसित	९.	सुशोभित	रुचिर	२७.	सुन्दर
विशद	१०.	स्वच्छ	ललित	२८.	ललित
विपुल	११.	अत्यन्त	स्मिताः	२९.	मुसकान से
धवल	१२.	सफेद	तद् अनुराग	३०.	उनके-प्रेम के
सुभग	१३.	सुभग	मद मुदित	३१.	मद से प्रसन्न
रुचिर	१४.	सुन्दर	मदविघूर्णित	३२.	मद विह्वल होकर
भुज	१५.	भुजाओं पर	अरुण	३५.	लाल
रजत	७.	चाँदी के	करुणा	३३.	करुणा से
स्तम्भेषु	८.	खम्भों के समान	अवलोक	३४.	युक्त
अगुरु	१६.	अगर	नयन-वदन	३६.	नेत्रों से मुख
चन्दन	१७.	चन्दन और	अरविन्दम्	३७.	कमल को
कुङ्कुम पङ्क	१८.	रोली के चूर्ण का	सव्रीडम्	३८.	लज्जा के साथ
अनुलेपेन	१९.	लेप करती हैं (तथा)	किल	३९.	निश्चित ही
अवलिम्पमानाः	२०.	लेप करती हुई	विलोकयन्ति ॥	४०.	देखती हैं

श्लोकार्थ—जहाँ पर ही नागराज की कन्यायें अनेकों कामनाओं से युक्त-सुन्दर अङ्ग मण्डलों पर चाँदी के खम्भों के समान सुशोभित, स्वच्छ, अत्यन्त सुभग एवं सुन्दर भुजाओं पर अगर, चन्दन और रोली के चूर्ण का लेप करती हैं। तथा लेप करती हुई उनके अङ्ग स्पर्श से मथित हृदय में कामदेव का सञ्चार हो जाता है। सुन्दर ललित मुसकान से उनके प्रेम के मद से प्रसन्न एवं मद विह्वल होकर करुणा से युक्त लाल नेत्रों से मुख कमल को निश्चित ही देखती हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

स एव भगवाननन्तोऽनन्तगुणार्णव आदिदेव उपसंहृतामर्षरोषवेगो लोकानां स्वस्तय आस्ते ॥६॥

पदच्छेद—

सः एव भगवान् अनन्तः अनन्त गुण अर्णवः आदिदेवः उपसंहृत अमर्ष रोषवेगः लोकानाम् स्वस्तये आस्ते ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वे	उपसंहृत	१२.	रोके हुये
एव	२.	ही	अमर्ष	९.	क्रोध और
भगवान्	७.	भगवान्	रोष	१०.	रोष के
अनन्तः	३.	अनन्त	वेगः	११.	वेग को
अनन्त	८.	अनन्त	लोकानाम्	१३.	सम्पूर्ण लोकों के
गुण	४.	गुणों के	स्वस्तये	१४.	कल्याण के लिये
अर्णवः	५.	समुद्र	आस्ते ॥	१५.	स्थित हैं
आदिदेवः	६.	आदिदेव			

श्लोकार्थ—वे ही अनन्त गुणों के समुद्र आदिदेव भगवान् अनन्त क्रोध और रोष के वेग को रोके हुये सम्पूर्ण लोकों के कल्याण के लिये स्थित हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

ध्यायमानः सुरासुरोरगसिद्धगन्धर्वविद्याधरमुनिगणैरनवरतमदमुदित-विकृतविह्वललोचनः सुललितमुखरिकामृतेनाप्यायमानः स्वपार्षदविबुधयूथ-पतीनपरिम्लानरागनवतुलसिकामोदमध्वासवेन माद्यन्मधुकरव्रातमधुर-गीतश्रियं वैजयन्तीं स्वां वनमालां नीलवासा एककुण्डलो हलककुदि कृत-सुभगसुन्दरभुजो भगवान्माहेन्द्रो वारणेन्द्र इव काञ्चनीं कक्षामुदारलीलो बिभर्ति ॥७॥

पदच्छेद—ध्यायमान। सुर असुर उरग सिद्ध गन्धर्व विद्याधर मुनि गणैः अनवरत मद मुदित विकृत विह्वल लोचनः सुललित मुखरिका अमृतेन अप्यायमानः स्वपार्षद विबुध यूथपतीन् अपरि म्लान राग नव तुलसिका मोद मध्वासवेन माद्यन् मधुकर व्रात मधुरगीत श्रियम् वैजयन्तीम् स्वाम् वनमालाम् नीलवासाः एक कुण्डलः हल ककुदि कृत सुभग सुन्दर भुजः भगवान् माहेन्द्रः वारणेन्द्रः इव काञ्चनीं कक्षाम् उदार लीलाः बिभर्ति ॥

शब्दार्थ—

ध्यायमानः	६.	ध्यान करते हैं	माद्यन्	२५.	उन्मत्त
सुर-असुर	१.	सुर-असुर	मधुकर	२६.	भौंरों के
उरग-सिद्ध	२.	नाग-सिद्ध	व्रात	२७.	समूह जिस पर
गन्धर्व विद्याधर	३.	गन्धर्व-विद्याधर	मधुरगीत	२८.	मधुर गुञ्जन करते हैं
मुनिगणैः	४.	मुनिगण	श्रियम्	३९.	शोभा को
अनवरत	५.	निरन्तर	वैजयन्तीम्	३७.	वैजयन्ती नामक
मदमुदित	७	प्रेम मद से प्रसन्न	स्वाम्	३६.	अपनी
विकृत विह्वल	८.	चञ्चल-विह्वल	वनमालाम्	३८.	वनमाला को
लोचनः सुललित	९.	नेत्रों से सुन्दर	नीलवासाः	१६.	नीलाम्बर वस्त्र वाले
मुखरिका	११.	वचन से	एक कुण्डलः	१७.	एक कुण्डल और
अमृतेन	१०.	अमृत	हल ककुदि	१८.	हल की मूठ को
अप्यायमानः	१५.	सन्तुष्ट करते हैं	कृत	१९.	धारण करते हैं तथा
स्वपार्षद	१२.	अपने पार्षद और	सुभग-सुन्दर	२९.	सुभग-सुन्दर
विबुध	१३.	देवताओं के	भुजः	३०.	भुजाओं वाले
यूथपतीन्	१४.	यूथ पतियों को	भगवान् माहेन्द्रो	३२.	भगवान् संकर्षण इन्द्र के
अपरिम्लान	२०.	कभी भी मलिन न होने वाली	वारणेन्द्र इव	३३.	हाथी ऐरावत के समान
राग	२४.	प्रेम करने वाले	काञ्चनीम्	३५.	सोने की करधनी के समान
नवतुलसिका	२१.	नवीन तुलसी की	कक्षाम्	३४.	गले में स्थित
आमोद	२२.	गन्ध से	उदारलीलाः	३१.	उदार लीला वाले
मध्वासवेन	२३.	मधुर परागों से	बिभर्ति ॥	४०.	धारण करते है

श्लोकार्थ—जिन भगवान् का सुर, असुर, नाग, सिद्ध, गन्धर्व, विद्याधर और मुनिगण निरन्तर ध्यान करते हैं। प्रेम मद से प्रसन्न, चञ्चल, विह्वल नेत्रों से तथा सुन्दर अमृत वचन से अपने पार्षद और देवताओं के यूथपतियों को सन्तुष्ट करते हैं। नीलाम्बर वस्त्र वाले तथा एक कुण्डल और हल की मूठ को धारण करते हैं। तथा कभी मलिन न होने वाली नवीन तुलसी की गन्ध से एवं मधुर परागों से प्रेम करने वाले उन्मत्त भौरों के समूह जिस पर मधुर गुञ्जन करते हैं ऐसी सुभग सुन्दर भुजाओं वाले, उदार लीला वाले भगवान् संकर्षण इन्द्र के हाथी ऐरावत के समान गले में स्थित सोने की करधनी के समान वैजयन्ती नामक वनमाला की शोभा को धारण करते हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

य एष एवमनुश्रुतो ध्यायमानो मुमुक्षूणामनादिकालकर्मवासनाग्रथितमविद्यामयं हृदयग्रन्थिं सत्त्वरजस्तमोमयमन्तर्हृदयं गत आशु निर्भिनत्ति तस्यानुभावान् भगवान् स्वायम्भुवो नारदः सह तुम्बुरुणा सभायां ब्रह्मणः संश्लोकयामास ॥८॥

पदच्छेद—यः एषः एवम् अनुश्रुतः ध्यायमानः मुमुक्षूणाम् अनादिकाल कर्मवासना ग्रथितम् अविद्या मयम् हृदय ग्रन्थिम् सत्त्वरजः तमो मयम् अन्तर् हृदयम् गतः आशु निर्भिनत्ति तस्य अनुभावान् भगवान् स्वायम्भुवः नारदः सह तुम्बुरुणा सभायाम् ब्रह्मणः संश्लोकयामास ॥

शब्दार्थ—

यः		जो	गतः	६.	आविर्भूत होकर
एषः		यह	आशु	१४.	शीघ्र ही
एवम्	१.	इसी प्रकार (भगवान् का माहात्म्य	निर्भिनत्ति	१५.	काट डालते हैं
अनुश्रुतः	२.	सुनने से और	तस्य	१६.	उनके
ध्यायमानः	३.	ध्यान करने से	अनुभावान्	१७.	गुणों की
मुमुक्षूणाम्	४.	मोक्ष प्राप्त करने वालों के	भगवान्	१८.	भगवान्
अनादिकाल	७.	अनादिकाल से	स्वायम्भुवः	१९.	ब्रह्मा के पुत्र
कर्म वासना	८.	कर्म वासनाओं से	नारदः	२०.	नारद जी
ग्रथितम्	९.	गुंथा हुआ	सह	२२.	साथ
अविद्यामयम्	१०.	अविद्यामयी (तथा)	तुम्बुरुणा	२१.	तुम्बुरु नामक गन्धर्व के
हृदय ग्रन्थिम्	१३.	हृदय की गांठ को	सभायाम्	२४.	सभा में
सत्त्व-रजः	११.	सत्त्वगुण, रजोगुण और	ब्रह्मणः	२३.	ब्रह्मा जी की
तमः मयम्	१२.	तमोगुणमयी	संश्लोक	२५.	स्तुति
अन्तर् हृदय	५.	हृदय के अन्दर	यामास ॥		की थी

श्लोकार्थ—जो यह इसी प्रकार भगवान् का महात्म्य सुनने से और ध्यान करने से मोक्ष प्राप्त करने वालों के हृदय के अन्दर आविर्भूत होकर अविद्यामयी तथा सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण मयी हृदय की गांठ को शीघ्र ही काट डालते हैं, उनके गुणों की भगवान् ब्रह्मा के पुत्र नारद जी तुम्बुरु नामक गन्धर्व के साथ ब्रह्मा जी की सभा में स्तुति की थी ॥

नवमः श्लोकः

उत्पत्तिस्थितिलयहेतवोऽस्य कल्पाः सत्त्वाद्याः प्रकृतिगुणा यदीक्षयाऽऽसन् ।
यद्रूपं ध्रुवमकृतं यदेकमात्मन् नानाधात्कथमु ह वेद तस्य वर्त्म ॥९॥

पदच्छेद—उत्पत्ति स्थिति हेतवः अस्य कल्पाः सत्त्व आद्याः प्रकृति गुणाः ईक्षया आसन् यद् रूपम् ध्रुवम् अकृतम् यद् एकम् आत्मन् नाना अधात् कथम् उ ह वेद तस्य वर्त्म ॥

शब्दार्थ—

उत्पत्ति	३.	उत्पत्ति	यद्रूपम्	११.	जिसका रूप
स्थिति-लय	४.	पालन और संहार के	ध्रुवम्	१२.	अनन्त और
हेतवः	५.	कारण स्वरूप	अकृतम्	१३.	अनादि है
अस्य	२.	इस जगत् को	यद् एकम्	१४.	जो अकेले ही
कल्पाः	८.	समर्थ	आत्मन्	१५.	अपने में
सत्त्व	६.	सत्त्व	नाना	१६.	अनेक प्रकार की
आद्याः	७.	आदि	अधात्	१७.	सृष्टि को धारण करता है
प्रकृतिगुणाः	८.	प्राकृतिक गुण	कथम् उ ह	१९.	कैसे
यद् ईक्षया	१.	जिनकी दृष्टि से	वेद	२०.	जाना जा सकता है
आसन् ।	१०.	होते हैं	तस्य वर्त्म ॥	१८.	उसके तत्त्वरूपी मार्ग को

श्लोकार्थ—जिनकी दृष्टि से इस जगत् की उत्पत्ति, पालन और संहार के कारण स्वरूप सत्त्व आदि प्राकृतिक गुण हैं। जिसका रूप अनन्त और अनादि है। जो अकेले ही अपने में अनेक प्रकार की सृष्टि को धारण करते हैं उनके तत्त्वरूपी मार्ग को कैसे जाना जा सकता है ॥

दशमः श्लोकः

मूर्तिं नः पुरुकृपया बभार सत्त्वं संशुद्धं सदसदिदं विभाति यत्र ।
यल्लीलां मृगपतिराददेऽनवद्यमादातुं स्वजनमनांस्युदारवीर्यः ॥१०॥

पदच्छेद—मूर्तिम् नः पुरु कृपया बभार सत्त्वम् संशुद्धम् सद् असद् इदम् विभाति यत्र यत् लीलां मृगपतिः आददे अनवद्यम् आदातुम् स्वजनमनांसि उदार वीर्यः ॥

शब्दार्थ—

			यत्र	१.	जिसमें
मूर्तिम्	१६	शरीर	यत्	८.	जिनकी
नः	१७.	हम लोगों पर	लीला	९.	लीला को
पुरुकृपया	१८.	अत्यधिक कृपा करने के लिये	मृगपतिः	१०.	सिंह ने
बभार	१९.	धारण किया	आददे	१२.	ग्रहण किया उन
सत्त्वम्	१५.	सत्त्व मय	अनवद्यम्	११.	आदर्शरूप में
संशुद्धम्	१४.	विशुद्ध	आदातुम्	७.	आकर्षित करने के लिये की हुई
सद्-असद्	३.	सत् और असत्	स्वजन	५.	तथा अपने निज जनों के
इदम्	२.	यह संसार	मनांसि	६.	मन को
विभाति	४.	रूप में प्रतीत हो रहा है	उदारवीर्यः ॥	१३.	उदार वीर्य भगवान् संकर्षण ने

श्लोकार्थ—जिसमें यह संसार सत् और असत् रूप में प्रतीत हो रहा है तथा अपने निजजनों के मन को आकर्षित करने के लिये की हुई जिनकी लीला को सिंह ने आदर्श रूप में ग्रहण किया उन उदार वीर्य भगवान् संकर्षण ने विशुद्ध सत्त्वमय शरीर हम लोगों पर अत्यधिक कृपा करने के लिये धारण किया है ॥

एकादशः श्लोकः

यन्नाम श्रुतमनुकीर्तयेदकस्मादार्तो वा यदि पतितः प्रलम्भनाद्वा ।
हन्त्यंहः सपदि नृणामशेषमन्यं कं शेषाद्भगवत आश्रयेन्मुमुक्षुः ॥११॥

पदच्छेद—यत् नाम श्रुतम् अनुकीर्तयेत् अकस्मात् आर्तः वा यदि पतितः प्रलम्भनात् वा । हन्ति अंहः सपदि नृणाम् अशेषम् अन्यम् कम् शेषात् भगवतः आश्रयेत् मुमुक्षुः ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जिसके	हन्ति	१४.	नष्ट कर देता है
नाम	३.	नाम को	अंहः सपदि	१३.	पापों को शीघ्र ही
श्रुत	२.	सुने हुए	नृणाम्	११.	मनुष्यों के
अनुकीर्तयेत्	१०.	उच्चारण करता है (वह)	अशेषम्	१२.	सम्पूर्ण
अकस्मात्	९.	एकाएक	अन्यम्	१८.	दूसरे
आर्तः	४.	पीडित	कम्	१९.	किसका
वा	५.	अथवा	शेषात्	१७.	अतिरिक्त
यदि	७.	यदि	भगवतः	१६.	भगवान् के
पतितः	६.	गिरा हुआ (व्यक्ति)	आश्रयेत्	२०.	आश्रय ले सकता है
प्रलम्भनात् वा ।	८.	हँसी से अथवा	मुमुक्षुः ॥	१५.	मोक्ष की इच्छा वाला मनुष्य

श्लोकार्थ—जिसके सुने हुए नाम को पीडित अथवा गिरा हुआ व्यक्ति यदि हँसी से अथवा एकाएक उच्चारण करता है, वह मनुष्यों के सम्पूर्ण पापों को शीघ्र ही नष्ट कर देता है। मोक्ष की इच्छा वाला मनुष्य भागवान् के अतिरिक्त दुसरे किसका आश्रय ले सकता है ।।

द्वादशः श्लोकः

मूर्धन्यर्पितमणुवत्सहस्रमूर्ध्नो भूगोलं सगिरिसरित्समुद्रसत्त्वम् ।
आनन्त्यादनिमितविक्रमस्य भूम्नः को वीर्याण्यधिगणयेत्सहस्रजिह्वः ॥१२॥

पदच्छेद—मूर्धनि अर्पितम् अणुवत् सहस्र मूर्ध्नः भूगोलम् सगिरि सरित् समुद्र सत्त्वम् आनन्त्यात् अनिमित विक्रमस्य भूम्नः कः वीर्याणि अधिगणयेत् सहस्र जिह्वः ॥

शब्दार्थ—

मूर्धनि	८.	एक मस्तक पर	आनन्त्यात्	१०.	अनन्त होने से उनके
अर्पितम्	९.	रक्खा है	अनिमित	१२.	परिमाण नहीं है (अतः)
अणुवत्	७.	रजः कण के समान	विक्रमस्य	११.	पराक्रम का
सहस्र	५.	हजारों	भूम्नः	१६.	उस महान् के
मूर्ध्नः	६.	सिर वाले (भगवान् ने)	कः	१३.	कौन
भूगोलम्	१.	पृथ्वी मण्डल	वीर्याणि	१७.	पराक्रम की
सगिरि सरित्	२.	पर्वतों-नदियों और	अधिगणयेत्	१८.	गणना कर सकता है
समुद्र	३.	समुद्र इत्यादि के	सहस्र	१४.	हजारों
सत्त्वम् ।	४.	पराक्रम को	जिह्वः ॥	१५.	जीभ वाला व्यक्ति

श्लोकार्थ—पृथ्वीमण्डल, पर्वतों, नदियों और समुद्र इत्यादि के पराक्रम को हजारों सिर वाले भगवान् ने रजः कण के समान एक मस्तक पर रक्खा है। अनन्त होने से उनके पराक्रम का परिमाण नहीं है। अतः कौन हजारों जीभ वाला व्यक्ति उस महान् के पराक्रम की गणना कर सकता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

एवम्प्रभावो भगवाननन्तो दुरन्तवीर्योरुगुणानुभावः।
मूले रसायाः स्थित आत्मतन्त्रो यो लीलया क्ष्मां स्थितये बिभर्ति ॥१३॥

पदच्छेद— एवम् प्रभावः भगवान् अनन्तः दुरन्तवीर्यः उरु गुण अनुभावः।
मूले रसायाः स्थितः आत्म तन्त्रः यः लीलया क्ष्माम् स्थितये बिभर्ति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	मूले	६.	मूल में
प्रभावः	२.	प्रभावशाली	रसायाः	५.	रसातल के
भगवान्	३.	भगवान्	स्थित	९.	स्थित हैं (वे)
अनन्तः	४.	अनन्त	आत्म	७.	अपने में
दुरन्त	१०.	अतिशय	तन्त्रः	८.	स्वतन्त्र रह कर
वीर्य	११.	पराक्रम	यः लीलया	१५.	जो लीला से
उरु	१२.	अत्यधिक	क्ष्माम्	१६.	पृथ्वी को
गुण	१३.	गुण और	स्थितेषु	१७.	पालन के लिये
अनुभावः।	१४.	प्रभाव से युक्त हैं (तथा)	बिभर्ति ॥	१८.	धारण करते हैं

श्लोकार्थ—इस प्रकार प्रभावशाली भगवान् अनन्त रसातल के मूल में अपने में स्वतन्त्र रहकर स्थित हैं। वे अतिशय पराक्रम, अत्यधिक गुण और प्रभाव से युक्त हैं तथा जो लीला से पृथ्वी को पालन के लिये धारण करते हैं॥

चतुर्दशः श्लोकः

एता ह्येवेह नृभिरुपगन्तव्या गतयो यथाकर्मविनिर्मिता यथोपदेश-मनुवर्णिताः कामान् कामयमानैः ॥१४॥

पदच्छेद— एताः हि एव इह नृभिः उपगन्तव्याः गतयः यथा कर्म।
विनिर्मिताः यथा उपदेशम् अनुवर्णिताः कामान् कामयमानैः ॥

शब्दार्थ—

एताः	९.	ये	कर्म	६.	कर्मों के अनुसार
हि एव	१०.	ही	विनिर्मिताः	८.	भगवान् के द्वारा बनाई हुई
इह	१.	यहाँ इस लोक में	यथा	१२.	जैसा
नृभिः	४.	मनुष्यों को	उपदेशम्	१३.	सुना था वैसा मैंने
उपगन्तव्याः	७.	प्राप्त होने वाली तथा	अनुवर्णिताः	१४.	वर्णन किया
गतयः	११.	गतियाँ	कामान्	२.	भोगों की
यथा	५.	अपने	कामयमानैः ॥	३.	कामना करने वाले

श्लोकार्थ—यहाँ इस लोक में भोगों की कामना करने वाले मनुष्यों को अपने कर्मों के अनुसार प्राप्त होने वाली तथा भगवान् के द्वारा बनाई हुई ये ही गतियाँ हैं। जैसा सुना था वैसा मैंने वर्णन किया॥

पञ्चदशः श्लोकः

एतावतीर्हि राजन् पुंसः प्रवृत्तिलक्षणस्य धर्मस्य विपाकगतय उच्चावचा विसदृशा यथाप्रश्नं व्याचख्ये किमन्यत्कथयाम इति ॥१५॥

पदच्छेद—

एतावतीः हि राजन् पुंसः प्रवृत्ति लक्षणस्य धर्मस्य विपाक गतयः।
उच्चावचाः विसदृशाः यथा प्रश्नम् व्याचख्ये किम् अन्यत् कथयामः इति ॥

शब्दार्थ—

एतावतीः हि	९.	इतना ही	उच्चावचाः	७.	ऊँची-नीची
राजन्	१.	हे राजन् !	विसदृशाः	८.	असमान
पुंसः	२.	पुरुषों की	यथा	१२.	अनुसार मैंने
प्रवृत्ति	३.	प्रवृत्ति	प्रश्नम्	११.	प्रश्न के
लक्षणस्य	४.	लक्षण रूप	व्याचख्ये	१३.	व्याख्या की (अब)
धर्मस्य	५.	धर्म के	किम्	१५.	क्या
विपाक	६.	परिणाम में	अन्यत्	१४.	और
गतयः	१०.	गतियाँ हैं	कथयामः इति ॥	१७.	सुनाऊँ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! पुरुषों की प्रवृत्ति लक्षणरूप धर्म के परिणाम में ऊँची नीची, असमान, इतनी ही गतियाँ हैं। प्रश्न के अनुसार मैंने व्याख्या की अब और क्या सुनाऊँ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां पंचमे स्कन्धे भूविवरविध्युपवर्णनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच— महर्ष एतद्वैचित्र्यं लोकस्य कथमिति ॥१॥

पदच्छेद—

महर्षे एतद् वैचित्र्यम् लोकस्य कथम् इति ॥

शब्दार्थ—

महर्षे	१.	हे महर्षि !	लोकस्य	२.	लोकों की यह
एतद्	४.	इतनी	कथम्	३.	कैसी
वैचित्र्यम्	५.	विचित्रता	इति ॥	६.	है

श्लोकार्थ—हे महर्षि ! लोकों की यह कैसी इतनी विचित्रता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

ऋषिरुवाच—त्रिगुणत्वात्कर्तुः श्रद्धया कर्मगतयः पृथग्विधाः सर्वा एव सर्वस्य तारतम्येन भवन्ति ॥२॥

पदच्छेद—त्रिगुणत्वात् कर्तुः श्रद्धया कर्म गतयः पृथक् विधाः सर्वाः एव सर्वस्य तारतम्येन भवन्ति ॥

शब्दार्थ—

त्रिगुण	१.	हे राजन् ! तीनों गुणों से युक्त	पृथक्	६.	अलग-अलग
त्वात्	२.	होने से	विधाः	७.	प्रकार की
कर्तुः	३.	कर्ता की	सर्वा एव	८.	सब ही
श्रद्धया	४.	श्रद्धया से	सर्वस्य	१०.	सब कुछ करने वालों के लिये
कर्म	५.	कर्मों की	तारतम्येन	११.	न्यूनाधिक रूप से
गतयः	९.	गतियाँ	भवन्ति ॥	१२.	होती हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तीनों गुणों से युक्त कर्ता की श्रद्धा से कर्मों की अलग-अलग प्रकार की सब ही गतियाँ सब कुछ करने वालों के लिये न्यूनाधिक से होती हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

'अथेदानीं प्रतिषिद्धलक्षणस्याधर्मस्य तथैव कर्तुः श्रद्धाया वैसादृश्यात्कर्मफलं विसदृशं भवति या ह्यनाद्यविद्यया कृतकामानां तत्परिणामलक्षणाः सृतयः सहस्रशः प्रवृत्तास्तासां प्राचुर्येणानुवर्णयिष्यामः ।३।

पदच्छेद—अथ इदानीम् प्रतिषिद्ध लक्षणस्य अधर्मस्य तथैव कर्तुः श्रद्धाया वैसादृश्यात् कर्मफलम् विसदृशम् भवति या हि अनादि अविद्यया कृत कामानाम् तत् परिणाम लक्षणाः सृतयः सहस्रशः प्रवृत्ताः तासाम् प्राचुर्येण अनुवर्णयिष्यामः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	या हि	११.	जो
इदानीम्	२०.	इस समय	अनादि	१२.	अनादि
प्रतिषिद्ध	२.	निषिद्ध	अविद्यया	१३.	अविद्या के कारण
लक्षणस्य	४.	कार्य का	कृत	१५.	किया हुआ
अधर्मस्य	३.	पाप रूप	कामानाम्	१४.	कामना पूर्वक
तथैव कर्तुः	५.	उसी प्रकार करने वालों को	तत् परिणाम	१६.	उन कर्मों के परिणाम
श्रद्धाया	६.	श्रद्धा की	लक्षणाः सृतयः	१७.	लक्षण का मार्ग है
वैसादृश्यात्	७.	असमानता के कारण	सहस्रशः	१८.	जिसकी हजारों
कर्मफलम्	८.	कर्मों का फल	प्रवृत्ताः तासाम्	१९.	गतियाँ हैं उनका
विसदृशम्	९.	विषम ही	प्राचुर्येण	२१.	विस्तार से
भवति	१०.	प्राप्त होता है	अनुवर्णयिष्यामः ॥	२२.	वर्णन करेंगे

श्लोकार्थ—इसके बाद निषिद्ध पापरूप कार्य का उसी प्रकार करने वालों को श्रद्धा की असमानता के कारण कर्मों का फल विषम ही प्राप्त होता है। जो अनादि अविद्या के कारण, कामनापूर्वक किया हुआ उन कर्मों के परिणाम लक्षण का मार्ग है॥ जिसकी हजारों गतियाँ हैं। उनका इस समय विस्तार से वर्णन करेंगे॥

चतुर्थः श्लोकः

राजोवाच—नरका नाम भगवन् किं देशविशेषा अथवा बहिस्त्रिलोक्या आहोस्विदन्तराल इति ॥४॥

पदच्छेद—नरकाः नाम भगवन् किम् देशविशेषाः अथवा बहिः त्रिलोक्याः आहोस्वित् अन्तराले इति ॥

शब्दार्थ—

नरकाः नाम	२.	नरक नाम का	अथवा	५.	अथवा (यह नरक)
भगवन्	१.	हे भगवन्!	बहिः	६.	त्रैलोक्य से बाहर
किम्	३.	क्या कोई	आहोस्वित्	७.	अथवा
देशविशेषाः	४.	देश विशेष हैं	अन्तराले इति ॥	८.	भीतर है

श्लोकार्थ—हे भगवन्! नरक नाम के क्या कोई देशविशेष हैं? अथवा यह नरक त्रैलोक्य से बाहर अथवा भीतर है॥

पञ्चमः श्लोकः

ऋषिरुवाच—अन्तराल एव त्रिजगत्यास्तु दिशि दक्षिणस्यामधस्ताद्भूमेरुपरिष्टाच्च जलाद्यस्यामग्निष्वात्तादयः पितृगणा दिशि स्वानां गोत्राणां परमेण समाधिना सत्या एवाशिष आशासाना निवसन्ति ॥५॥

पदच्छेद—अन्तराले एव त्रिजगत्याः तु दिशि दक्षिणस्याम् अधस्तात् भूमेः उपरिष्टात् च जलादि अस्याम् अग्निष्वात्त आदयः पितृगणाः दिशि स्वानाम् गोत्राणाम् परमेण समाधिना सत्याः एव आशिषः आशासानाः निवसन्ति ॥

शब्दार्थ—

अन्तराले एव	२.	भीतर ही	अग्निष्वात्त आदयः	११.	अग्निष्वात्त आदि
त्रिजगत्याः	१.	वे नरक त्रैलोक्य के	पितृ गणाः	१२.	पितृ गण
तु	८.	हैं	दिशि	१०.	दिशा में
दिशि	४.	दिशा में	स्वानाम् गोत्राणाम्	१४.	अपने वंश वालों के लिये
दक्षिणस्याम्	३.	दक्षिण	परमेण समाधिना	१३.	अत्यन्त एकाग्रतापूर्वक
अध स्तात्भूमेः	५.	नीचे भूमि के	सत्याः	१५.	सत्य और
उपरिष्टात्	७.	ऊपर स्थित हैं	एव आशिषः	१६.	कल्याण की ही
च जलादि	६.	और जल के	आशासानाः	१७.	कामना करते हुये
यस्याम्	९.	इसी	निवसन्ति ॥	१८.	निवास करते हैं

श्लोकार्थ—वे नरक त्रैलोक्य के भीतर ही दक्षिण दिशा में भूमि के नीचे और जल के ऊपर स्थित हैं। इसी दिशा में अग्निष्वात्त आदि पितृगण अत्यन्त एकाग्रतापूर्वक अपने वंशवालों के लिये सत्य और कल्याण की ही कामना करते हुये निवास करते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

यत्र ह वाव भगवान् पितृराजो वैवस्वतः स्वविषयं प्रापितेषु स्वपुरुषैर्जन्तुषु सम्परेतेषु यथाकर्मावद्यं दोषमेवानुल्लङ्घितभगवच्छासनः सगणो दमं धारयति ॥६॥

पदच्छेद—यत्र ह वाव भगवान् पितृ राजः वैवस्वतः स्वविषयम् प्रापितेषु स्वपुरुषैः जन्तुषु सम्परेतेषु यथाकर्मावद्यम् दोषम् एव अनुल्लङ्घित भगवत् शासनः सगणः दमम् धारयति ॥

शब्दार्थ—

यत्र ह वाव	१.	जहाँ	सम्परेतेषु	१०.	मरे हुये
भगवान् पितृराजः	३.	भगवान् पितृराज यम	यथाकर्मावद्यम्	१२.	कर्मों के अनुसार
वैवस्वतः	२.	सूर्य के पुत्र	दोषम् एव	१३.	पाप का ही
स्वविषयम्	८.	अपने राज्य में	अनुल्लङ्घित	६.	उल्लङ्घन न करके
प्रापितेषु	९.	लाये गये	भगवत् शासनः	५.	भगवान् की आज्ञा का
स्वपुरुषैः	७.	अपने दूतों के द्वारा	सगणः	४.	अपने गणों के साथ
जन्तुषु	११.	प्राणियों को	दण्डधारयति ॥	१४.	दण्ड देते हैं

श्लोकार्थ—जहाँ सूर्य के पुत्र भगवान् पितृराज यम अपने गणों के साथ भगवान् की आज्ञा का उल्लङ्घन न करके अपने दूतों के द्वारा अपने राज्य में लाये गये मरे हुये प्राणियों को कर्मों के अनुसार पाप का ही दण्ड देते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

तत्र हैके नरकानेकविंशतिं गणयन्ति । अथ तांस्ते राजन्नामरूपलक्षणतोऽनुक्रमिष्यामस्तामिस्रोऽन्धतामिस्रो रौरवो महारौरवः कुम्भीपाकः कालसूत्रमसिपत्रवनं सूकरमुखमन्धकूपः कृमिभोजनः सन्दंशस्तप्तसूर्मिर्वज्रकण्टकशाल्मली वैतरणी पूयोदः प्राणरोधो विशसनं लालाभक्षः सारमेयादनमवीचिरयः पानमिति । किञ्च क्षारकर्दमो रक्षोगणभोजनः शूलप्रोतो दन्दशूकोऽवटनिरोधनः पर्यावर्तनः सूचीमुखमित्यष्टाविंशतिर्नरका विविधयातनाभूमयः ॥७॥

पदच्छेद—तत्र ह एके नरकान् एक विंशतिम् गणयन्ति अथ तान् ते राजन् नाम रूप लक्षणतः अनुक्रमिष्यामः तामिस्रः अन्धतामिस्रः रौरवः महारौरवः कुम्भीपाकः कालसूत्रम् असि पत्रवनम् सूकरमुखम् अन्ध कूपः कृमि भोजनः सन्दंशः तप्तसूर्मिः वज्र कण्टक शाल्मली वैतरणी पूयोदः प्राणरोधः विशसनम् लाला भक्षः सारमेयादनम् अवीचिः अयः पानम् इति किञ्च क्षारकर्दमः रक्षोगण भोजनः शूल प्रोतः दन्दशूकः अवट निरोधनः पर्यावर्तनः सूचीमुखम् इति अष्टाविंशति नरकाः विविध यातना भूमयः ॥

शब्दार्थ—

तत्र ह एके	१. वहाँ कुछ लोग	प्राणरोधः विशसनम्	१६. प्राणरोध विशसन
नरकान्	२. नरकों को	लालाभक्षः सारमेयादनम्	१७. लालाभक्ष-सारमेयादन
एकविंशतिम्	३. इक्कीस	अवीचिः	१८. अवीचि (और)
गणयन्ति	४. बताते हैं	अयः पानम् इति	१९. अयः पान
अथ तान् ते	६. अब उनके	किञ्च	२०. किन्तु
राजन् नाम रूप	५. हे राजन्! नाम रूप	क्षारकर्दमः	२१. क्षार कर्दम
लक्षणतः	७. और लक्षणों के अनुसार	रक्षोगण भोजनः	२२. रक्षोगण-भोजन
अनुक्रमिष्यामः	८. क्रम से वर्णन करेंगे	शूल प्रोतः	२३. शूल प्रोत
तामिस्रः अन्धतामिस्रः	९. तामिस्र अन्धतामिस्र	दन्द शूकः	२४. दन्द शूक
रौरवः महारौरवः	१०. रौरव महारौरव	अवट निरोधनः	२५. अवट निरोधन
कुम्भीपाकः कालसूत्रम्	११. कुम्भीपाक कालसूत्र	पर्यावर्तनः	२६. पर्यावर्तन (और)
असिपत्रवनम् शूकरमुखम्	२१. असिपत्रवन सूकरमुख	सूचीमुखम्	२७. सूचीमुख (को मिलाकर)
अन्धकूपः कृमि भोजनः	२२. अन्धकूप कृमिभोजन	इति अष्टाविंशतिः	२८. ये अट्ठाईस
सन्दंशः तप्तसूर्मिः	१३. संदंश तप्तसूर्मि	नरकाः	२९. नरक
वज्रकण्टक शाल्मली	१४. वज्रकण्टक शाल्मलि	विविध	३०. अनेक प्रकार की
वैतरणी पूयोदः	१५. वैतरणी पूयोद	यातना भूमयः ॥	३१. यातनाओं की भूमि हैं।

श्लोकार्थ—वहाँ कुछ लोग नरकों को इक्कीस बताते हैं। हे राजन्! अब उनके नाम, रूप और लक्षणों के अनुसार क्रम से वर्णन करेंगे। तामिस्र, अन्धतामिस्र, कुम्भीपाक, कालसूत्र, असिपत्रवन, सूकरमुख, अन्धकूप, कृमिभोजन, संदंश, तप्तसूर्मि, वज्रकण्टक, शाल्मलि, वैतरणी, पूयोद, प्राणरोध, विशसन, लालाभक्ष, सारमेयादन, अवीचि और अयःपान। फिर क्षारकर्दम, रक्षोगणभोजन, शूलप्रोत, दन्दशूक, अवटनिरोधन, पर्यावर्तन और सूचीमुख (को मिलाकर) ये अट्ठाईस नरक हैं। ये अनेक प्रकार की यातनाओं की भूमि हैं।

अष्टमः श्लोकः

तत्र यस्तु परवित्तापत्यकलत्राण्यपहरति स हि कालपाशबद्धो यमपुरुषैरतिभयानकैस्तामिस्रे नरके बलान्निपात्यते। अनशनानुदपानदण्डताडनसंतर्जनादिभिर्यातनाभिर्यात्यमानो जन्तुर्यत्र कश्मलमासादित एकदैव मूर्च्छामुपयाति तामिस्रप्राये ॥८॥

पदच्छेद—तत्र यः तु परवित्त अपत्य कलत्राणि अपहरति सः हि काल पाश बद्धः यम पुरुषैः अति भयानकैः तामिस्रे नरके बलात् निपात्यते। अनशन अनुदपान दण्ड ताडन संतर्जन आदिभिः यातनाभिः यात्यमानः जन्तुः यत्र कश्मलम् आसादितः एकदा एव मूर्च्छाम् उपयाति तामिस्र प्राये ॥

शब्दार्थ—

तत्र यः तु	१. वहाँ जो पुरुष	अनशन	१८. विना अन्न
परवित्त	२. दूसरों का धन	अनुदपान	१९. जल के
अपत्य	३. सन्तान तथा	दण्डताडन	२०. डण्डे के प्रहार से
कलत्राणि	४. स्त्रियों का	संतर्जन	२१. गर्जन
अपहरति	५. हरण करता है	आदिभिः	२२. आदि
सः हि	६. उसे	यातनाभिः	२३. यातनाओं के द्वारा
काल	१०. काल	यात्यमानः	२४. पीड़ा दी जाती है
पाश	११. पाश में	जन्तुः	२६. जीव
बद्धः	१२. बांध कर	यत्र	२५. जहाँ
यमपुरुषैः	९. यमदूतों के द्वारा	कश्मलम्	२७. दुःखी
अति	७. अत्यधिक	आसादित	२८. होकर
भयानकैः	८. डरावने	एकदा	२९. एकाएक
तामिस्रे	१४. तामिस्र नाम के	एव	३०. ही
नरके	१५. नरक में	मूर्च्छाम्	३२. मूर्च्छित
बलात्	१३. बलपूर्वक	उपयाति	३३. हो जाता है
निपात्यते	१६. गिरा दिया जाता है	तामिस्र-प्राये ॥	३१. तामिस्र नामक नरक में

श्लोकार्थ—जो पुरुष दूसरों के धन, सन्तान तथा स्त्रियों का हरण करता है, उसे अत्यधिक डरावने काल-पास में बाँधकर यमदूतों के द्वारा बलपूर्वक तामिस्र नाम के नरक में गिरा दिया जाता है। वहाँ विना अन्न जल के डण्डे के प्रहार से गर्जन आदि से यातनाओं के द्वारा पीड़ा दी जाती है। जहाँ जीव दुःखी होकर एकाएक ही तामिस्र नामक नरक में मूर्च्छित हो जाता है।

नवमः श्लोकः

एवमेवान्धतामिस्रे यस्तु वञ्चयित्वा पुरुषं दारादीनुपयुङ्क्ते यत्र शरीरी निपात्यमानो यातनास्थो वेदनया नष्टमतिर्नष्टदृष्टिश्च भवति यथा वनस्पतिर्वृश्च्यमानमूलस्तस्मादन्धतामिस्रं तमुपदिशन्ति ॥९॥

पदच्छेद—एवम् एव अन्धतामिस्रे यः तु वञ्चयित्वा पुरुषम् दारादीन् उपयुङ्क्ते यत्र शरीरी निपात्यमानः यातना स्थः वेदनया नष्टमतिः नष्ट दृष्टिः च भवति यथा वनस्पतिः वृश्च्यमान मूलः तस्मात् अन्धतामिस्रम् तम् उपदिशन्ति ॥

शब्दार्थ—

एवम् एव	१.	इस प्रकार	वेदनया	१२.	कष्ट से
अन्धतामिस्रे	८.	अन्धतामिस्र नरक में	नष्टमतिः	१३.	नष्ट बुद्धि वाला
यः तु	२.	जो	नष्टदृष्टिः	१५.	नष्ट दृष्टि वाला
वञ्चयित्वा	४.	ठगकर उसकी	च	१४.	और
पुरुषम्	३.	पुरुषों को	भवति यथा	१६.	हो जाता है जिस प्रकार
दारादीन्	५.	स्त्री आदि को	वनस्पतिः	१९.	वृक्ष की गति होती है
उपयुङ्क्ते	६.	भोगता है (उसकी)	वृश्च्यमान	१८.	काट दिये जाने पर
यत्र	१०.	जहाँ	मूलः	१७.	जड़ से
शरीरी	७.	आत्मा	तस्मात्	२०.	इसी से
निपात्यमानः	९.	पड़ती है	अन्धतामिस्रम्	२१.	अन्धतामिस्र नरक
यातनास्थः	११.	यातनाओं में पड़कर	तम् उपदिशन्ति ॥	२२.	उसको कहते हैं

श्लोकार्थ—इस प्रकार जो पुरुष पुरुषों को ठगकर उसकी स्त्री आदि को भोगता है, उसकी आत्मा अन्धतामिस्र नरक में पड़ती है, जहाँ यातनाओं में पड़कर कष्ट से नष्ट बुद्धि वाला और नष्ट दृष्टि वाला हो जाता है, जिस प्रकार जड़ से काट दिये जाने पर वृक्ष की गति होती है। इसी से अन्धतामिस्र नामक नरक उसको कहते हैं।

दशमः श्लोकः

यस्त्विह वा एतदहमिति ममेदमिति भूतद्रोहेण केवलं स्वकुटुम्ब-मेवानुदिनं प्रपुष्णाति स तदिह विहाय स्वयमेव तदशुभेन रौरवे निपतति ॥१०॥

पदच्छेद—यः तु इह वा एतद् अहम् इति मम इदम् इति भूतद्रोहेण केवलम् स्वकुटुम्बम् एव अनुदिनम् प्रपुष्णाति सः तत् इह विहाय स्वयम् एव तत् अशुभेन रौरवे निपतति ॥

शब्दार्थ—

यः तु इह	१.	जो पुरुष इस लोक में	अनुदिनम्	८.	दिन-रात
वा	३.	अथवा	प्रपुष्णाति	९.	पालन-पोषण करता है
एतद् अहम् इति	२.	यह मैं हूँ ऐसा कहता है	सः तद् इह	१०.	वह इस लोक में
मम इदम्	४.	यह मेरे हैं	विहाय स्वयम्	११.	छोड़कर शरीर
इति भूतद्रोहेण	५.	अन्य प्राणियों से द्रोह करके	एव	१२.	ही
केवलम्	६.	केवल	तत् अशुभेन	१३.	उस पाप के कारण
स्वकुटुम्बम् एव	७.	अपने परिवार का ही	रौरवे निपतति ॥	१४.	रौरव नरक में गिरता है

श्लोकार्थ—जो पुरुष इस लोक में यह मैं हूँ अथवा यह मेरे हैं ऐसा कहता है और जो अन्य प्राणियों से द्रोह करके केवल अपने परिवार का ही दिन-रात पालन-पोषन करता है, वह इस लोक में शरीर छोड़ते ही उस पाप के कारण रौरव नरक में गिरता है॥

एकादशः श्लोकः

ये त्विह यथैवामुना विहिंसिता जन्तवः परत्र यमयातनामुपगतं त एव रुरवो भूत्वा तथा तमेव विहिंसन्ति तस्माद्रौरवमित्याहू रुरुरिति सर्पादतिक्रूरसत्त्वस्यापदेशः ॥११॥

पदच्छेद—ये तु इह यथा एव अमुना विहिंसिताः जन्तवः परत्र यमयातनाम् उपगतम् ते एव रुरवः भूत्वा तथा तम् एव विहिंसन्ति तस्मात् रौरवम् इति आहुः रुरुः इति सर्पात् अतिक्रूरसत्त्वस्य अपदेशः ॥

शब्दार्थ—

ये तु	१.	जिसमें	तथा	१३.	उसी प्रकार
इह	२.	इस लोक में	तम् एव	१४.	उस प्राणी को
यथैव	३.	जिस प्रकार से	विहिंसन्ति	१५.	कष्ट देते हैं
अमुना	४.	उन	तस्मात्	१६.	इसी से
विहिंसिताः	६.	कष्ट पहुंचाया है	रौरवम्	१७.	रौरव
जन्तवः	५.	प्राणियों को	इति	१८.	ऐसा
परत्र	७	परलोक में	आहुः	१९.	कहा जाता है
यमयातनाम्	८.	यम यातना का समय	रुरुः	२१.	रुरु
उपगतम्	९.	आने पर	इति	२०.	यह
ते एव	१०.	वे ही प्राणी	सर्पात्	२२.	सर्प से भी
रुरवः	११.	रुरु	अतिक्रूर-सत्त्वस्य	२३.	अधिक क्रूर प्राणी का
भूत्वा	१२.	होकर	अपदेशः ॥	२४.	नाम है

श्लोकार्थ—जिसने इस लोक में जिस प्रकार से उन प्राणियों को कष्ट पहुंचाया है, परलोक में यम-यातना का समय आने पर वे प्राणी रुरु होकर उसी प्रकार उस प्राणी को कष्ट देते हैं। इसी से रौरव ऐसा कहा जाता है। यह रुरु सर्प से भी अधिक क्रूर प्राणी का नाम है।

द्वादशः श्लोकः

एवमेव महारौरवो यत्र निपतितं पुरुषं क्रव्यादा नाम रुरवस्तं क्रव्येण घातयन्ति यः केवलं देहम्भरः ॥१२॥

पदच्छेद—एवमेव महारौरवः यत्र निपतितम् पुरुषम् क्रव्यादा नाम नाम रुरवः तम् क्रव्येण घातयन्ति यः केवलम् देहम्भरः ॥

शब्दार्थ—

एवमेव	५.	इसी प्रकार	रुरवः	१०.	रुरु
महारौरवः	६.	महारौरव नरक में	तम्	१२.	उस
यत्र	८.	जहाँ	क्रव्येण	१४.	मांस के लोभ से
निपतितम्	७.	गिरता है	घातयन्ति	१५.	काटते हैं
पुरुषम्	१३.	मनुष्य को	यः	१.	जो
क्रव्यादाः	९.	कच्चा मांस खाने वाले	केवलम्	२.	केवल
नाम	११.	नाम के कीड़े	देहम्भरः ॥	३.	अपने ही शरीर का पालन करता (वह प्राणी)

श्लोकार्थ—जो केवल अपने ही शरीर का पालन-पोषण करता है वह प्राणी इसी प्रकार महारौरव नरक में गिरता है, जहाँ कच्चा मांस खाने वाले रुरु नाम के कीड़े उस मनुष्य को मांस के लोभ से काटते हैं।

त्रयोदशः श्लोकः

यस्त्विह वा उग्रः पशून् पक्षिणो वा प्राणत उपरन्धयति तमपकरुणं पुरुषादैरपि विगर्हितममुत्र यमानुचराः कुम्भीपाके तप्ततैले उपरन्धयन्ति ॥१३॥

पदच्छेद—

यः तु इह वा उग्रः पशून् पक्षिणः वा प्राणतः उपरन्धयति तम् अपकरुणम् पुरुषादैः अपि विगर्हितम् अमुत्र यम अनुचराः कुम्भीपाके तप्त तैले उपरन्धयन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१.	जो	पुरुषादैः	१०.	तथा राक्षसों से भी
इह	३.	इस लोक में	अपि		भी
वा	५.	अथवा	विगर्हितम्	११.	निन्दनीय व्यक्ति
उग्रः	२.	क्रूर मनुष्य	अमुत्र	१२.	परलोक में
पशून्	४.	पशुओं को	यम	१३.	यम के
पक्षिणः	६.	पक्षिओं को	अनुचराः	१४.	दूत
वा		अथवा	कुम्भीपाके	१५.	कुम्भीपाक नरक में
प्राणतः	७.	पेट पालने के लिए	तप्त	१६.	खौलते हुये
उपरन्धयन्ति	८.	रांधता है	तैले	१७.	तेल में
तम् अपकरुणम्	९.	उस करुणा से रहित	उपरन्धयन्ति ॥	१८.	रांधते हैं

श्लोकार्थ—जो क्रूर मनुष्य इस लोक में पशुओं को अथवा पक्षियों को पेट पालने के लिये रांधता है, उस करुणा से रहित तथा राक्षसों से भी निन्दनीय व्यक्ति को परलोक में यम के दूत कुम्भीपाक नरक में खौलते हुये तेल में रांधते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यस्त्विह पितृविप्रब्रह्मध्रुक् स कालसूत्रसंज्ञके नरके अयुतयोजनपरिमण्डले ताम्रमये तप्तखले उपर्यधस्तादग्न्यर्काभ्यामतितप्यमानेऽभिनिवेशितः क्षुत्पिपासाभ्यां च दह्यमानान्तर्बहिःशरीर आस्ते शेते चेष्टतेऽवतिष्ठति परिधावति च यावन्ति पशुरोमाणि तावद्वर्षसहस्राणि ॥१४॥

पदच्छेद—यः तु इह पितृ विप्र ब्रह्मध्रुक् सः कालसूत्र संज्ञके नरके अयुत योजन परिमण्डले ताम्रमये तप्तखले अध स्ताद् अग्नि अर्काभ्याम् अतितप्यमाने अभिनिवेशितः क्षुत् पिपासाभ्याम् च दह्यमान अन्तः बहिः शरीरः आस्ते शेते चेष्टते अवतिष्ठति परिधावति च यावन्ति पशु रोमाणि तावद् वर्ष सहस्राणि ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१.	जो मनुष्य	क्षुत्	१८.	भूख
इह	२.	इस लोक में	पिपासाभ्याम्	२०.	प्यास के कारण
पितृ	३.	माता पिता	च	१६.	और
विप्र	४.	ब्राह्मण और	दह्यमान	२१.	जलते हुये
ब्रह्मध्रुक्	५.	ब्रह्म विरोध करता है	अन्तः	२२.	अन्दर और
सः	६.	वह	बहिः	२३.	बाहर
कालसूत्र	७.	काल सूत्र	शरीर	२४	शरीर से (कभी)
संज्ञके	८.	नामक	आस्ते	२५.	खड़ा होता है
नरके	१४.	नरक में	शेते	२६.	सोता है
अयुत	६.	दस हजार	चेष्टते	२७.	चेष्टा करता है
योजन	१०.	योजन के	अवतिष्ठति	२८.	बैठता है
परिमण्डले	११.	घेरे वाले	परिधावति	३०.	दौड़ता है
ताम्रमये	१२.	ताम्रमय और	च	२६.	और
तप्तखले	१३.	तपते हुये मैदान में	यावन्ति	३१.	जितने उस
अध स्ताद्	१५.	ऊपर और नीचे	पशु	३२.	नर-पशु के
अग्नि	१६.	अग्नि और	रोमाणि	३३.	रोयें होते हैं
अर्काभ्याम्	१७.	सूर्य के द्वारा जाता है	तावद्	३४.	उतने
अतितप्यमाने	३७.	अत्यन्त तपता	वर्ष	३६.	वर्षों तक
अभिनिवेशितः	१४.	वहाँ पहुँचाया हुआ प्राणी	सहस्राणि ॥	३५.	हजार

श्लोकार्थ—जो मनुष्य इस लोक में माता, पिता, ब्राह्मण और ब्रह्म से विरोध करता है वह काल सूत्र नामक दस हजार योजन के घेरे वाले ताम्रमय और तपते हुये मैदान वाले नरक में ऊपर और नीचे अग्नि और सूर्य के द्वारा अत्यन्त तपाया जाता है। वहाँ पहुँचाया हुआ प्राणी भूख-प्यास के कारण जलते हुये अन्दर और बाहर शरीर से कभी खड़ा होता है, सोता है, बैठता है, चेष्टा करता है, दौड़ता है और जितने उस नर-पशु के रोयें होते हैं उतने हजार वर्षों तक वह अत्यन्त (घोर नरक में) तपता रहता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

यस्त्विह वै निजवेदपथादनापद्यपगतः पाखण्डं चोपगतस्तमसिपत्रवनं प्रवेश्य कशया प्रहरन्ति तत्र हासावितस्ततो धावमान उभयतोधारैस्तालवनासिपत्रैश्छिद्यमानसर्वाङ्गो हा हतोऽस्मीति परमया वेदनया मूर्च्छितः पदे पदे निपतति स्वधर्महा पाखण्डानुगतं फलं भुङ्क्ते ॥१५॥

पदच्छेद—यः तु इह वै निज वेद पथात् अनापदि अपगतः पाखण्डम् च उपगतः तम् असिपत्र वनम् प्रवेश्य कशया प्रहरन्ति तत्र ह असौ इतः ततः धावमानः उभयतः धारैः तालवन असि पत्रैः छिद्यमान सर्वाङ्गः हा हतः अस्मि इति परमया वेदनया मूर्च्छितः पदे पदे निपतति स्व धर्महा पाखण्ड अनुगतम् फलम् भुङ्क्ते ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१.	जो पुरुष	धारैः	२०.	धार वाले
इह	२.	इस लोक में	तालवन	२१.	तालवन के
वै	४.	ही	असिपत्रैः	२२.	तलवार के समान पत्रों से
निज	५.	अपने	छिद्यमान	२३.	काटे जाते हुये
वेदपथात्	६.	वैदिक मार्ग को	सर्व	२४.	सभी
अनापदि	३.	बिना विपत्ति के	अङ्ग	२५.	अङ्गों से
अपगतः	७.	छोड़कर	हा	२६.	हा
पाखण्डम्	८.	पाखण्ड युक्त धर्म को	हतः	२८.	मरा
च		और	अस्मि इति	२७.	मैं इस प्रकार
उपगतः	९.	आश्रय लेता है	परमया	२८.	अत्यधिक
तम् असिपत्र	१०.	उसे यम दूत असिपत्र	वेदनया	२९.	पीड़ा से
वनम्	११.	वन नाम के नरक में	मूर्च्छितः	३०.	मूर्च्छित होता हुआ
प्रवेश्य	१२.	ले जाकर	पदे-पदे	३१.	पग-पग पर
कशया	१३.	कोड़े से	निपतति	३२.	गिरता है और
प्रहरन्ति	१४.	प्रहार करते हैं	स्व	३३.	अपने
तत्र ह	१५.	वहाँ	धर्महा	३४.	धर्म को छोड़कर
असौ	१६.	वह	पाखण्ड	३५.	पाखण्ड का
इतः ततः	१७.	इधर-उधर	अनुगतम्	३६.	अनुसरण करने के
धावमानः	१८.	दौड़ता हुआ	फलम्	३७.	फल को
उभयतः	१९.	दोनों ओर से	भुङ्क्ते ॥	३८.	भोगता है

श्लोकार्थ—जो पुरुष इस लोक में बिना विपत्ति के ही अपने वैदिक मार्ग को छोड़कर पाखण्ड युक्त धर्म का आश्रय लेता है, उसे यम दूत असिपत्रवन नाम के नरक में ले जाकर कोड़े से प्रहार करते हैं। वहाँ पर वह इधर-उधर दौड़ता हुआ दोनों ओर से धार वाले तालवन के तलवार के समान पत्तों से काटे जाते हुये सभी अङ्गों से हा मैं मरा इस प्रकार अत्यधिक पीड़ा से मूर्च्छित होता हुआ पग-पग पर गिरता है और अपने धर्म को छोड़कर पाखण्ड का अनुसरण करने के फल को भोगता है ॥

षोडशः श्लोकः

यस्त्विह वै राजा राजपुरुषो वा अदण्ड्ये दण्डं प्रणयति ब्राह्मणे वा शरीरदण्डं स पापीयान्नरकेऽमुत्र सूकरमुखे निपतति तत्रातिबलैर्विनिष्पिष्यमाणावयवो यथैवेहेक्षुखण्ड आर्तस्वरेण स्वनयन् क्वचिन्मूर्च्छितः कश्मलमुपगतो यथैवेहादृष्टदोषा उपरुद्धाः ॥१६॥

पदच्छेद—यः तु इह राजा राजपुरुषः वा अदण्ड्ये दण्डम् प्रणयति ब्राह्मणे वा शरीर दण्डम् सः पापीयान् नरके अमुत्र सूकरमुखे निपतति तत्र अतिबलैः विनिष्पिष्यमाण अवयवः यथैव इह इक्षुखण्डः आर्तस्वरेण स्वनयन् क्वचित् मूर्च्छितः कश्मलम् उपगतः यथैव इह अदृष्टदोषाः उपरुद्धाः ॥

शब्दार्थ—

यः तु	२. जो	निपतति	१८. गिरता है
इह वै	१. इस लोक में	तत्र	१९. वहाँ
राजा	३. राजा	अतिबलैः	२०. अधिक बलशाली यमदूतों के द्वारा
राजपुरुषः	५. राजकर्मचारी पुरुष	विनिष्पिष्यमाण	२४. पीसा जाता है
वा	४. अथवा	अवयवः	२१. उसके अङ्गों को
अदण्ड्ये	६. निरपराध व्यक्ति को	यथैव	२३. के समान
दण्डम्	७. दण्ड	इह	२५. यहाँ
प्रणयति	८. देता है	इक्षुखण्डः	२२. ईख के टुकड़े
ब्राह्मणे	१०. ब्राह्मण को	आर्तस्वरेण	२९. आर्त स्वर से
वा	९. अथवा	स्वनयन्	३०. चिल्लाता हुआ
शरीर	११. शरीर	क्वचित्	३१. कभी
दण्डम्	१२. दण्ड देता है	मूर्च्छितः	३२. मूर्छित होकर
सः	१३. वह	कश्मलम्	३३. दुःख को
पापीयान्	१४. महापापी	उपगतः	३४. प्राप्त होता है
नरके	१७. नरक में	यथैव	२८. जिस प्रकार (वह)
अमुत्र	१५. परलोक में	इह	यहाँ
सूकर मुखे	१६. सूरक मुख नाम के	अदृष्टदोषाः	२६. वे निरपराध प्राणी
		उपरुद्धाः	२७. रोते थे

श्लोकार्थ—इस लोक में जो राजा अथवा राजकर्मचारी पुरुष निरपराध व्यक्ति को दण्ड देता है। अथवा ब्राह्मण को शारीरिक दण्ड देता है, वह महापापी परलोक में सूकर मुख नाम के नरक में गिरता है। वहाँ अधिक बलशाली यमदूतों के द्वारा उसके अङ्गों को ईख के टुकड़े के समान पीसा जाता है। जिस प्रकार यहाँ पर वे निरपराध प्राणी रोते थे उसी प्रकार वह यहाँ आर्तस्वर से चिल्लाता हुआ कभी मूर्च्छित होकर दुःख को प्राप्त होता है।

सप्तदशः श्लोकः

यस्त्विह वै भूतानामीश्वरोपकल्पितवृत्तीनामविविक्तपरव्यथानां स्वयं पुरुषोपकल्पितवृत्तिर्विविक्तपरव्यथो व्यथामाचरति स परत्रान्धकूपे तदभिद्रोहेण निपतति तत्र हासौ तैर्जन्तुभिः पशुमृगपक्षिसरीसृपैर्मशकयूकामत्कुणमक्षिकादिभिर्ये के चाभिद्रुग्धास्तैः सर्वतोऽभिद्रुह्यमाणस्तमसि विहतनिद्रानिर्वृतिरलब्धावस्थानः परिक्रामति यथा कुशरीरे जीवः ॥१७॥

पदच्छेद—यः तु इह वै भूतानाम् ईश्वर उपकल्पित वृत्तीनाम् अविविक्त परव्यथानां स्वयम् पुरुष उपकल्पित वृत्ति विविक्त परव्यथः व्यथाम् आचरति स परत्र अन्धकूपे तदभि द्रोहेण निपतति तत्र ह असौ तैः जन्तुभिः पशुमृग पक्षिसरीसृपैः मशक यूका मत्कुणमक्षिका आदिभिः ये के च अभिद्रुग्धाः तैःसर्वतः अभिद्रुह्यमाणः तमसि विहत निद्रानिर्वृतिः अलब्ध अवस्थानः परिक्रामति यथा कुशरीरे जीवः ॥

शब्दार्थ—

यः तु इह वै	१. जो पुरुष इस लोक में	जन्तुभिः	२२. प्राणियों के द्वारा
भूतानाम्	२. प्राणियों को	पशुमृगपक्षि	१८. पशु, मृग, पक्षी
ईश्वरः	७. ईश्वर के द्वारा उनकी	सरीसृपैः मशक	१९. सर्प, मच्छर
उपकल्पित	९. बनायी हुई है उन्हें	यूका मत्कुण	२०. जूं, खटमल
वृत्तीनाम्	८. जीविका	मक्षिकादिभिः	२१. मक्खी आदि
अविविक्त	११. विवेक नहीं है	येकेच अभिद्रुग्धाः	२३. जिस किसी से द्रोह किया था
परव्यथानाम्	१०. दूसरों के कष्ट का	तै सर्वतः	२४. वे चारों ओर से
स्वयम्	१३. स्वयम्	अभिद्रुह्यमाणः	२५. काटते हैं
पुरुष	१२. पुरुष की	तमसि	२६. घोर अन्धकार में
उपकल्पितवृत्तिः	१४. बनाई हुई जीविका	विहतनिद्रा	२७. निद्रा और
विविक्त	१५. विवेक पूर्ण है उन्हें	निर्वृतिः	२८. शान्ति दूर हो जाती है
परव्यथः	१६. दूसरों के कष्ट का ज्ञान है	अलब्ध	३०. न प्राप्त होने से वह
व्यथाम्	३. कष्ट	अवस्थानः	२९ स्थान
आचरन्तिसः	४. देता है वह	परिक्रामति	३१. भटकता है
परत्र अन्धकूपे	५. परलोक में अन्धकूप नरक में	यथा	३२. जैसे
तद् अभिद्रोहेण निपतति	६. उनसे द्रोह करने के कारण गिरता है	कुशरीरे	३३. रोग ग्रस्त शरीर में
तत्र ह असौ तैः	१७. क्योंकि वहाँ वह	जीवः ॥	३४. जीव भटकता है

श्लोकार्थ—जो पुरुष इस लोक में प्राणियों को कष्ट देता है वह परलोक में अन्धकूप नामक नरक में उनसे द्रोह करने के कारण गिरता है। ईश्वर के द्वारा उनकी जीविका बनाई हुई है। उन्हें दूसरों के कष्ट का विवेक नहीं है। पुरुष की स्वयम् बनाई हुई जीविका विवेकपूर्ण है। उन्हें दूसरों के कष्ट का ज्ञान है। क्योंकि वहाँ उन्होंने पशु, मृग, पक्षी, सर्प, मच्छर, जूं, खटमल, मक्खी आदि प्राणियों के द्वारा जिस किसी से भी द्रोह किया था वे लोग चारों ओर से काटते हैं। घोर अन्धकार में निद्रा और शान्ति दूर हो जाती है। स्थान न प्राप्त होने से वह भटकता है,जैसे रोग-ग्रस्त शरीर में जीव भटकता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

यस्त्विह वा असंविभज्याश्नाति यत्किञ्चनोपनतमनिर्मितपञ्चयज्ञो वायससंस्तुतः स परत्र कृमिभोजने नरकाधमे निपतति तत्र शतसहस्रयोजने कृमिकुण्डे कृमिभूतः स्वयं कृमिभिरेव भक्ष्यमाणः कृमिभोजनो यावत्तदप्रत्ता-प्रहुतादोऽनिर्वेशमात्मानं यातयते ॥१८॥

पदच्छेद—यः तु इह वा असंविभज्य अश्नाति यत् किञ्चन उपनतम् अनिर्मित पञ्चयज्ञः वायस संस्तुतः सः परत्र कृमि भोजने नरकाधमे निपतति तत्र शत सहस्र योजने कृमि कुण्डे कृमि भूतः स्वयम् कृमिभिः एव भक्ष्यमाणः कृमि भोजनः यावत् तद् अप्रत्त अप्रहुतादः अनिर्वेशम् आत्मानम् यातयते ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१.	जो मनुष्य	शत सहस्र	१७.	सैकड़ों हजारों
इह	२.	इस लोक में	योजने	१८.	योजन
वा		अथवा	कृमि	१९.	कीड़ों के
असंविभज्य	८.	बिना बांटें हुये	कुण्डे	२०.	कुण्ड में
अश्नाति	९.	खाता है	कृमि	२१.	कीड़ा
यत्	५.	जो	भूतः	२२.	होकर
किञ्चन	६.	कुछ भी	स्वयम्	२३.	स्वयम्
उपनतम्	७.	प्राप्त करता है (उसे)	कृमिभिः	२४.	कीड़ों के द्वारा
अनिर्मित	४.	बिना किये हुये (तथा)	एव	२५.	ही
पञ्चयज्ञः	३.	पञ्चमहा यज्ञों का	भक्ष्यमाणः	२६.	खाया जाता हुआ
वायस	१०.	कौवे के	कृमि भोजनः	२७.	कीड़ों का भोजन करता है
संस्तुतः	११.	समान	यावत्	२८.	जब तक
सः	६.	वह	तद्	२९.	उसके
परत्र	१२.	परलोक में	अप्रत्त अप्रहुतादः	३०.	पापों का प्रायश्चित्त
कृमि भोजने	१३.	कृमि भोजन नाम के		३१.	नहीं होता (तब तक)
नरकाधमे	१४.	अधम नरक में	अनिर्वेशम्	३२.	वहाँ स्थित रह करके
निपतति	१५.	गिरता है	आत्मानम्	३३.	स्वयं
तत्र	१६.	वहाँ	यातयते ॥	३४.	यातना को भोगता रहता है

श्लोकार्थ—जो मनुष्य इस लोक में पञ्चमहा यज्ञों को बिना किये हुये जो कुछ भी प्राप्त करता है तथा उसे बिना बांटे हुये खाता है वह कौवे के समान परलोक में कृमि भोजन नाम के अधम नरक में गिरता है। वहाँ सैकड़ों हजारों योजन कीड़ों के कुण्ड में कीड़ा होकर स्वयम् कीड़ों के द्वारा ही खाया जाता हुआ कीड़ों का भोजन करता है। जब तक उसके पापों का प्रायश्चित्त नहीं होता तब तक वहाँ स्थित रहकर स्वयं यातना भोगता रहता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

यस्त्विह वै स्तेयेन बलाद्वा हिरण्यरत्नादीनि ब्राह्मणस्य वापहरत्यन्यस्य वानापदि पुरुषस्तममुत्र राजन् यमपुरुषा अयस्मयैरग्निपिण्डैः सन्दंशैस्त्वचि निष्कुषन्ति ॥१९॥

पदच्छेद—यः तु इह वै स्तेयेन बलाद्वा हिरण्यरत्न आदीनि ब्राह्मणस्य वा अपहरन्ति अन्यस्य वा अनापदि पुरुषः तम् अमुत्र राजन् यम पुरुषाः अयस्मयैः अग्निपिण्डैः सन्दंशैः त्वचि निष्कुषन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः तु इह	२.	जो पुरुष इस लोक में	पुरुषःतम्	१०.	पुरुष को उस
वै स्तेयेन	३.	अथवा चोरी से	अमुत्र	११.	परलोक में
बलाद्वा	४.	बल पूर्वक	राजन्	१.	हे राजन्
हिरण्यरत्नादीनि	६.	सुवर्णरत्न आदि	यम पुरुषाः	१२.	यम के दूत
ब्राह्मणस्य वा	५.	ब्राह्मण का अथवा	अयस्मयैः	१३.	लोहे के
अपहरति	९.	अपहरण करता है	अग्निपिण्डैः	१४.	तपाये हुये पिण्डों से
अन्यस्य	७.	अन्य व्यक्ति का	सन्दंशैः	१६.	सँडसी से उसकी
वा	१५.	तथा	त्वचि	१७.	त्वचा को
अनापदि	८.	विना विपत्ति के	निष्कुषन्ति ॥	१८.	नोचते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन्! जो पुरुष इस लोक में चोरी से अथवा बलपूर्वक ब्राह्मण का अथवा अन्य व्यक्ति का विना विपत्ति के सुवर्णरत्न आदि अपहरण करता है उस पुरुष को परलोक में यम के दूत लोहे के तपाये हुये पिण्डों से तथा सँडसी से उसकी त्वचा को नोचते हैं ॥

विंशः श्लोकः

यस्त्विह वा अगम्यां स्त्रियमगम्यं वा पुरुषं योषिदभिगच्छति तावमुत्र कशया ताडयन्तस्तिग्मया सूर्म्या लोहमय्या पुरुषमालिङ्गयन्ति स्त्रियं च पुरुषरूपया सूर्म्या ॥२०॥

पदच्छेद—यः तु इह वा अगम्याम् स्त्रियम् अगम्यम् वा पुरुषम् योषिद् अभिगच्छति तौ अमुत्र कशया ताडयन्तः तिग्मया सूर्म्या लोहमय्या पुरुषम् आलिङ्गयन्ति स्त्रियम् च पुरुषरूपया सूर्म्या ॥

शब्दार्थ—

यः तु इह	१.	जो पुरुष इस लोक में	कशया ताडयन्तः	८.	कोड़े से पीटते हैं (और)
वा	३.	अथवा कोई	तिग्मयासूर्म्या	१०.	तपते हुये प्रतिमा से
अगम्याम् स्त्रियम्	२.	अगम्या स्त्री के साथ	लोहमय्या	९.	लोहे की बनी हुई
अगम्यम् वा	४.	अगम्य	पुरुषम्	११.	पुरुष को तथा
पुरुषम् योषिद्	५.	पुरुष के साथ स्त्री	आलिङ्गयन्ति	१४.	आलिङ्गन कराते हैं
अभिगच्छति	६.	व्यभिचार करती है	स्त्रियम् च	१२.	स्त्री को
तौ अमुत्र	७.	उन्हें परलोक में यम दूत	पुरुष रूपया सूर्म्या ॥	१३.	पुरुष के स्वरूप की प्रतिमा से

श्लोकार्थ—जो पुरुष इस लोक में अगम्या स्त्री के साथ अथवा कोई अगम्या पुरुष के साथ स्त्री व्यभिचार करती है, उन्हें परलोक में यम दूत कोड़े से पीटते हैं। और लोहे की बनी हुई तपती हुई प्रतिमा से पुरुष को तथा स्त्री को पुरुष के स्वरूप की प्रतिमा से आलिङ्गन कराते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

यस्त्विह वै सर्वाभिगमस्तममुत्र निरये वर्तमानं वज्रकण्टकशाल्मली-मारोप्य निष्कर्षन्ति ॥२१॥

पदच्छेद—यः तु इह वै सर्वा अभिगमः तम् अमुत्र निरये वर्तमानम् वज्रकण्टक शाल्मलीम् आरोप्य निष्कर्षन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः तु इह	१ जो पुरुष इस लोक में	निरयेवर्तमानम्	५. नरक में रखकर
वै	३. निश्चित ही	वज्र कण्टक	६ वज्र के समान काँटों वाले
सर्वा अभिगमः	२. सभी से व्यभिचार करता है	शाल्मलीम् आरोप्य	७. सेमर के वृक्ष पर चढ़ाकर
तम् अमुत्र	४. उसको परलोक में (यमदूत)	निष्कर्षन्ति	८. नीचे की ओर खींचते हैं

श्लोकार्थ—जो पुरुष इस लोक में सभी से व्यभिचार करता है। निश्चित ही उसको परलोक में यमदूत नरक में रखकर वज्र के समान काँटों वाले सेमर के वृक्ष पर चढ़ा कर नीचे की ओर खींचते हैं।

द्वाविंशः श्लोकः

ये त्विह वै राजन्या राजपुरुषा वा अपाखण्डा धर्मसेतून् भिन्दन्ति ते सम्परेत्य वैतरण्यां निपतन्ति भिन्नमर्यादास्तस्यां निरयपरिखाभूतायां नद्यां यादोगणैरितस्ततो भक्ष्यमाणा आत्मना न वियुज्यमानाश्चासुभिरुह्यमानाः स्वाघेन कर्मपाकमनुस्मरन्तो विण्मूत्रपूयशोणितकेशनखास्थिमेदोमांसवसा-वाहिन्यामुपतप्यन्ते ॥२२॥

पदच्छेद—ये तु इह वै राजन्याः राज पुरुषा वा अपाखण्डाः धर्म सेतून् भिन्दन्ति ते सम्परेत्य वैतरण्याम् निपतन्ति भिन्न मर्यादाः तस्याम् निरयपरिखा भूतायाम् नद्याम् यादोगणैः इतः ततः भक्ष्यमाणाः आत्मना न वियुज्यमानाः च असुभिः उह्यमानाः स्वाघेन कर्मपाकम् अनुस्मरन्तः विण्मूत्र पूयशोणित केशनख अस्थिमेद मांस वसा वाहिन्याम् उपतप्यन्ते ॥

शब्दार्थ—

ये तु इह वै	१. जो इस लोक में	इतः ततः भक्ष्यमाणाः	११. इधर-उधर काटे जाते हुये
राजन्याः राजपुरुषाः	२. राजा, राज कर्मचारी	आत्मना न	१२. अपने शरीर के न
वा अपाखण्डाः	३. अथवा पाखण्ड रहित	वियुज्यमानाः च	१३. टूटने के कारण और
धर्म सेतुन् भिन्दन्ति	४. धर्म मर्यादा को नष्ट करते हैं	असुभिः उह्यमाना	१४. प्राणों को धारण करते हुये
ते सम्परेत्य वैतरण्याम्	५. वे मरने के बाद वैतरणी नदी में	स्वाघेन कर्मपाकम्	१५. अपने पाप से कर्मों के परिणाम
निपतन्ति	६. गिरते हैं	अनुस्मरन्तः	१६. स्मरण करते हुये
भिन्न मर्यादाः	७. मर्यादा भंग करने के कारण	विण्मूत्रपूयशोणित	१७. मल-मूत्र, पीव, रक्त
तस्याम्	९. उस	केशनख अस्थि	१८. केश, नख, हड्डी
निरयपरिखाभूतायाम्	८. नरक की खाई के समान	मेद मांस वसा	१९. चर्बी, मांस, वसा आदि
नद्याम् यादोगणैः	१०. नदी में जलजन्तुओं द्वारा	वाहिन्याम्	२०. धारण करने वाली नदी
		उपतप्यन्ते ॥	२१. सन्तप्त होते रहते हैं

श्लोकार्थ—जो इस लोक में राजा अथवा राजकर्मचारी पाखण्ड रहित धर्म मर्यादा को नष्ट करते हैं, वे मरने के बाद वैतरणी नदी में गिरते हैं। नरक की खाई के समान उस नदी में जल जन्तुओं द्वारा इधर-उधर काटे जाते हुये अपने शरीर के न टूटने के कारण और प्राणों को धारण करते हुये अपने पाप से कर्मों के परिणाम को स्मरण करते हुये, मल-मूत्र, पीव, रक्त, केश, नख, हड्डी, चर्बी, मांस, वसा आदि धारण करने वाली नदी में सन्तप्त होते रहते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

ये त्विह वै वृषलीपतयो नष्टशौचाचारनियमास्त्यक्तलज्जाः पशुचर्यां चरन्ति ते चापि प्रेत्य पूयविण्मूत्रश्लेष्ममलापूर्णार्णवे निपतन्ति तदेवातिबीभत्सितमश्नन्ति ॥२३॥

पदच्छेद—ये तु इह वै वृषली पतयः नष्ट शौचाचार नियमाः त्यक्त लज्जाः पशुचर्याम् चरन्ति ते च अपि प्रेत्य पूय विण्मूत्रश्लेष्म मल आपूर्ण अर्णवे निपतन्ति तदेव अतिबीभत्सितम् अश्नन्ति ॥

ये तु इह वै	१. जो मनुष्य इस लोक में	अपि	भी
वृषलीपतयः	७. शूद्रा के पति होकर	प्रेत्य	१०. परलोक में
नष्ट	३. नष्ट करते हैं	पूयविण्मूत्र	११. पीब, विष्ठा, मूत्र
शौचाचार नियमाः	२. शौच तथा अचार के नियमों को	श्लेष्म मल	१२. कफ मल से
त्यक्त	५. त्याग करते हैं	आपूर्ण अर्णव	१३. भरे हुये पूयोद नामक समुद्र में
लज्जाः	४. लज्जा	निपतन्ति	१४. गिर कर
पशुचर्याम्	८. पशु के समान	तदेव	१५. उसी
चरन्ति ते	९. आचरण करते हैं वे	अतिबीभत्सितम्	१६. अत्यन्त घृणित वस्तुओं को
च	६. और	अश्नन्ति	१७. खाते हैं

श्लोकार्थ—जो मनुष्य इस लोक में शौच तथा आचार के नियमों को नष्ट करते हैं, लज्जा का त्याग करते हैं और पशु के समान आचरण करते हैं, वे भी परलोक में पीब, विष्ठा, मूत्र कफ मल से भरे हुये पूयोद नामक समुद्र में गिर कर उन्हीं अत्यन्त घृणित वस्तुओं को खाते हैं।

चतुर्विंशः श्लोकः

ये त्विह वै श्वगर्दभपतयो ब्राह्मणादयो मृगया विहारा अतीर्थे च मृगान्निघ्नन्ति तानपि सम्परेताँल्लक्ष्यभूतान् यमपुरुषा इषुभिर्विध्यन्ति ॥२४॥

पदच्छेद—ये तु इह वै श्वगर्दभपतयः ब्राह्मण आदयः मृगया विहाराः अतीर्थे च मृगान् निघ्नन्ति तान् अपि सम्परेतान् लक्ष्य भूतान् यम पुरुषाः इषुभिः विध्यन्ति ॥

ये तु इह वै	१. जो इस लोक में	निघ्नन्ति	८. मारते हैं
श्वगर्दभपतयः	३. कुत्ते या गधों के स्वामी होते हैं	तान् अपि	९. उनको भी
ब्राह्मण आदयः	२. ब्राह्मण आदि	सम्परेतान्	१०. मरने के पश्चात्
मृगया विहाराः	५. शिकारादि में रहकर	लक्ष्यभूतान्	१२. शिकार में लक्ष्य बना कर
अतीर्थे	६. शास्त्र के विरुद्ध	यम पुरुषाः	१३. यमदूत
च	४. और	इषुभिः	११. बाणों से
मृगान्	७. मृगों को	विध्यन्ति ॥	१४. बींधते हैं

श्लोकार्थ—जो इस लोक में ब्राह्मण आदि कुत्ते या गधों के स्वामी होते हैं और शिकार आदि में रहकर शास्त्र के विरुद्ध मृगों को मारते हैं, उनको भी मरने के पश्चात् यमदूत शिकार में लक्ष्य बनाकर बाणों से बींधते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

ये त्विह वै दाम्भिका दम्भयज्ञेषु पशून् विशसन्ति तानमुष्मिँल्लोके वैशसे नरके पतितान्निरयपतयो यातयित्वा विशसन्ति ॥२५॥

पदच्छेद—ये तु इह वै दाम्भिकाः दम्भ यज्ञेषु पशून् विशसन्ति तान् अमुष्मिन् लोके वैशसे नरके पतितान् निरय पतयः यातयित्वा विशसन्ति ॥

शब्दार्थ—

ये तु	२. जो		अमुष्मिन् लोके	८. पर लोक में	
इह	१. इस लोक में		वैशसे	९. वैशस नाम के	
वै	०.		नरके	१०. नरक में	
दाम्भिकाः	३. पाखण्डी लोग		पतितान्	११. गिरा कर	
दम्भ यज्ञेषु	४. पाखण्ड युक्त यज्ञों में		निरय	१२. नरक के	
पशून्	५. पशुओं का		पतयः	१३. अधिकारी	
विशसन्ति	६. वध करते हैं		यातयित्वा	१४. यातना देकर	
तान्	७. उन्हें		विशसन्ति ॥	१५. काटते हैं	

श्लोकार्थ—इस लोक में जो पाखण्डी लोग पाखण्ड युक्त यज्ञों में पशुओं का वध करते हैं, नरक के अधिकारी उन्हें परलोक में वैशस नाम के नरक में गिरा कर यातना देकर काटते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

यस्त्विह वै सवर्णां भार्यां द्विजो रेतः पाययति काममोहितस्तं पापकृतममुत्र रेतः कुल्यायां पातयित्वा रेतः सम्पाययन्ति ॥२६॥

पदच्छेद—यः तु इह वै सवर्णां भार्याम् द्विजः रेतः पाययति काम मोहितः तम् पापकृतम् अमुत्र रेतः कुल्यायाम् पातयित्वा रेतः सम्पाययन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१. जो	मोहितः	७. मोहित होकर
इह वै	२. इस लोक में	तम्	१०. उस
सवर्णां	४. अपने वर्ण की	पापकृतम्	११. पापी को
भार्याम्	५. भार्या को	अमुत्र	१२. परलोक में (यमदूत)
द्विजः	३. द्विज	रेतः	१३. वीर्य की
रेतः	८. वीर्य	कुल्यायाम्	१४. नदी में
पाययति	९. पान कराता है	पातयित्वा	१५. गिराकर
काम	६. काम से	रेतः	१६. वीर्य
		सम्पाययन्ति ॥	१७. पिलाते हैं

श्लोकार्थ—जो द्विज इस लोक में अपने वर्ण की भार्या को काम से मोहित होकर वीर्य पान कराता है, उस पापी को परलोक में यमदूत वीर्य की नदी में गिराकर वीर्य पिलाते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

ये त्विह वै दस्यवोऽग्निदा गरदा ग्रामान् सार्थान् वा विलुम्पन्ति राजानो राजभटा वा तांश्चापि हि परेत्य यमदूता वज्रदंष्ट्राः श्वानः सप्तशतानि विंशतिश्च सरभसं खादन्ति ॥२७॥

ये तु इह वै दस्यवः अग्निदाः गरदाः ग्रामान् सार्थान् वा विलुम्पन्ति राजानः राजभटाः वा तान् च अपि परेत्य यमदूताः वज्र दंष्ट्राः श्वानः सप्तशतानि विंशन्ति च सरभसम् खादन्ति ॥

शब्दार्थ—

ये तु	२.	जो	वा	५.	अथवा
इह वै	१.	इस लोक में	तान् च अपि हि	१३.	उन्हें
दस्यवः	३.	डाकू	परेत्य	१४.	मरने के पश्चात्
अग्निदाः	७.	आग लगाते हैं	यमदूताः	१७.	यम के दूत स्वरूप
गरदाः	८.	विष देते हैं	वज्र	१५.	वज्र के समान
ग्रामान्	१०.	गाँवों या	दंष्ट्राः	१६.	दाँतों वाला
सार्थान्	११.	व्यापारियों के समूह	श्वानः	२०.	कुत्ते बन कर
वा	९.	अथवा	सप्तशतानि	१८.	सात सौ
विलुम्पन्ति	१२.	लूटते हैं	विंशतिः च	१९.	बीस
राजानः	४.	राजा	सरभसम्	२१.	बल पूर्वक
राजभटाः	६.	राज कर्मचारी	खादन्ति ॥	२२.	काट खाते हैं

श्लोकार्थ—इस लोक में जो डाकू राजा अथवा राजकर्मचारी आग लगाते हैं, (प्राणियों को) विष देते हैं अथवा गाँवों या व्यापारियों के समूह को लूटते हैं, उन्हें भी मरने के पश्चात् वज्र के समान दाँतों वाले, यम के दूत स्वरूप सात सौ बीस कुत्ते बल पूर्वक काट खाते हैं।

अष्टाविंशः श्लोकः

यस्त्विह वा अनृतं वदति साक्ष्ये द्रव्यविनिमये दाने वा कथञ्चित्स वै प्रेत्य नरकेऽवीचिमत्यधःशिरा निरवकाशे योजनशतोच्छ्रायाद् गिरिमूर्ध्नः सम्पात्यते यत्र जलमिव स्थलमश्मपृष्ठमवभासते तदवीचिमत्तिलशो विशीर्यमाणशरीरो न म्रियमाणः पुनरारोपितो निपतति ॥२८॥

पदच्छेद—यः तु इह वा अनृतम् वदति साक्ष्ये द्रव्यविनिमये दाने वा कथञ्चित् सः वै प्रेत्य नरके अवीचिमति अधः शिरा निरवकाशे योजनशत उच्छ्रायाद् गिरिमूर्ध्नः सम्पात्यते यत्र जलम् इव स्थलम् अश्म पृष्ठम् अवभासते तद् अवीचिमत् तिलशः विशीर्यमाण शरीरः न म्रियमाणः पुनः आरोपितः निपतति ॥

शब्दार्थ—

यः तु	२.	जो मनुष्य	शत	१६.	सौ
इह वै	१.	इस लोक में	उच्छ्रायाद्	१८.	ऊँचे
अनृतम्	८.	झूठ	गिरिमूर्ध्नः	१६.	पहाड़ के शिखर मे
वदति	६.	बोलता है	सम्पात्यते	२०.	गिराया जाता है
साक्ष्ये	३.	गवाही में	यत्र	२१.	जहाँ
द्रव्यविनिमये	४.	धन के लेन-देन में	जलम्-इव	२४.	जल के समान
दाने	६.	दान के समय	स्थलम्	२३.	स्थल
वा	५.	अथवा	अश्मपृष्ठम्	२२.	पत्थर की ऊपरी भाग का
कथञ्चित्	७.	किसी प्रकार	अवभासते	२५.	प्रतीत होता है इसलिये
सः वै	१०.	वह	तद् अवीचिमत्	२६.	उसका अवीचिमान् नाम है
प्रेत्य	१२.	मरने पर	तिलशः	२७.	गिराये जाने से
नरके	१४.	नरक में	विशीर्यमाण	२६.	टुकड़े-टुकड़े हो जाने पर भी
अवीचिमति	१३.	अवीचिमान्	शरीरः	२८.	शरीर के
अधः शिराः	१५.	नीचे सिर करके	न म्रियमाणः	३०.	न मरता हुआ
निरवकाशे	१२.	आधार शून्य	पुनःआरोपितः	३१	बार-बार ऊपर ले जाया जाकर
योजन	१७.	योजन	निपतति	३२.	गिराया जाता है ॥

श्लोकार्थ—इस लोक में जो मनुष्य गवाही में, धन के लेन-देन में अथवा दान के समय किसी प्रकार झूठ बोलता है वह मरने पर आधारशून्य अवीचिमान् नरक में नीचे सिर करके सौ योजन ऊँचे पहाड़ के शिखर से गिराया जाता है। जहाँ पत्थर के ऊपरी भाग का स्थल जल के समान प्रतीत होता है इसलिये उसका अवीचिमान् नाम है। (वहाँ से) गिराये जाने से शरीर के टुकड़े-टुकड़े हो जाने पर भी न मरता हुआ जीव बार-बार ऊपर ले जाया जाकर गिराया जाता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

यस्त्विह वै विप्रो राजन्यो वैश्यो वा सोमपीथस्तत्कलत्रं वा सुरां व्रतस्थोऽपि वा पिबति प्रमादतस्तेषां निरयं नीतानामुरसि पदाऽऽक्रम्यास्ये वह्निना द्रवमाणं कार्ष्णायसं निषिञ्चन्ति ॥२९॥

पदच्छेद—यः तु इह वै विप्रः राजन्यः वैश्यः वा सोमपीथः तत् कलत्रम् वा सुराम् व्रतस्थः अपि वा पिबति प्रमादतः तेषाम् निरयम् नीतानाम् उरसि पदा आक्रम्य आस्ये वह्निना द्रवमाणम् कार्ष्णायसम् निषिञ्चन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः तु इह वै	१.	जो इस लोक में	प्रमादतः	९.	प्रमादवश
विप्रः राजन्यः	२.	ब्राह्मण क्षत्रिय	तेषाम्	१०.	उसे यमदूत
वैश्यः	४.	वैश्य	निरयम्	१३.	नरक में
वा	३.	अथवा	नीतानाम्	१४.	ले जाकर
सोमपीथः	५.	सोमपान करता है	उरसि	१५.	उसके वक्षःस्थल पर
तत् कलत्रम्	७.	उसकी पत्नी	पदा आक्रम्य	१६.	पैर रख कर
वा	६.	अथवा	आस्ये वह्निना	१७	मुख में अग्नि से
सुराम्	१०.	सुरा को	द्रवमाणम्	१८.	गलाये हुये
व्रतस्थः अपि	८.	व्रती रह कर भी	कार्ष्णायसम्	१९.	लोहे को
वा पिबति	१२.	पीती है	निषिञ्चन्ति ॥	२०.	डालते हैं

श्लोकार्थ—जो इस लोक में ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य सोमपान करता है, अथवा उसकी पत्नी व्रती रहकर भी प्रमादवश सुरा को पीती है, उसे यमदूत नरक में ले जाकर उसके वक्षःस्थल पर पैर रखकर मुख में अग्नि से गलाये हुये लोहे को डालते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

अथ च यस्त्विह वा आत्मसम्भावनेन स्वयमधमो जन्मतपोविद्याचार-वर्णाश्रमवतो वरीयसो न बहु मन्येत स मृतक एव मृत्वा क्षारकर्दमे निरयेऽवाक्शिरा निपातितो दुरन्ता यातना ह्यश्नुते ॥३०॥

पदच्छेद—अथ च यः तु इह वा आत्म सम्भावनेन स्वयम् अधमः जन्म तपः विद्या आचार वर्ण आ श्रमवतः वरीयसः न बहु मन्येत सः मृतक एव मृत्वा क्षारकर्दमे निरये अवाक् शिराः निपातितः दुरन्ताः यातनाः हि अश्नुते ॥

शब्दार्थ—

अथ च यः	१.	और भी तो	न बहु	१०.	नहीं बहुत आदर
तु इह वा	२.	इस लोक से अथवा	मन्येत	११.	करता है
आत्म	४.	अपने	सः मृतक एव	१२.	वह मरा ही है और
सम्भावनेन	५.	बड़प्पन के कारण	मृत्वा	१३.	मरने के बाद
स्वयम् अधमः	३	स्वयम् अधम होकर	क्षारकर्दमे	१४.	क्षार कर्दम नाम के
जन्म तपः विद्या	६.	जन्म, तप, विद्या	निरये अवाक् शिराः	१५.	नरक में नीचे को सिर करके
आचार	७.	आचार	निपातितः	१६.	गिराया जाता हुआ
वर्णआश्रमवतः	८.	वर्ण आश्रम में	दुरन्ताः यातनाः	१७	भयंकर कष्ट को
वरीयसः	९.	बड़े लोगों का	हि अश्नुते ॥	१८.	प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—और भी जो इस लोक में अथवा स्वयम् अधम होकर अपने बड़प्पन के कारण जन्म, तप, विद्या, आचार, वर्ण आश्रम में बड़े लोगों का बहुत आदर नहीं करता है, वह मरा ही है और मरने के बाद क्षारकर्दम नाम के नरक में नीचे को सिर करके गिराया जाता हुआ भयंकर कष्ट को प्राप्त करता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

ये त्विह वै पुरुषाः पुरुषमेधेन यजन्ते याश्च स्त्रियो नृपशून् खादन्ति तांश्च ते पशव इव निहता यमसदने यातयन्तो रक्षोगणाः सौनिका इव स्वधितिनावदायासृक् पिबन्ति नृत्यन्ति च गायन्ति च हृष्यमाणा यथेह पुरुषादाः ॥३१॥

शब्दार्थ—

ये तु इह वै पुरुष मेधेन यजन्ते याः च स्त्रियः नृपशून् खादन्ति तान् च ते पशव इव निहताः यम सदने यातयन्तः रक्षोगणाः सौनिका इव स्वधितिना अवदाय असृक् पिबन्ति नृत्यन्ति च गायन्ति च हृष्यमाणाः यथा इह पुरुषादाः ॥

शब्दार्थ—

ये तु	१.	जो	यातयन्तः	१८.	यातना देते हुये
इह वै	३.	इस लोक में	रक्षोगणाः	१६.	राक्षस होकर
पुरुषाः	२.	पुरुष	सौनिकाः	१६.	कसाई के
पुरुष मेधेन	४.	नर मेध यज्ञ के द्वारा	इव	२०.	समान
यजन्ते	५.	यजन करते हैं	स्वधितिना	२१.	कुल्हाड़ी से
याः	७.	जो	अवदाय	२२.	काटकर
च	६.	और	असृक्	२४.	रक्त
स्त्रियः	८.	स्त्रियाँ	पिबन्ति	२५.	पीते हैं
नृपशून्	९.	पशुओं के समान मनुष्य को	नृत्यन्ति	२७.	नृत्य करते हैं
खादन्ति	१०.	खाती हैं	च	२६.	और
तान्	२१.	उन्हें	गायन्ति	२९.	गाते हैं
च	१८.	और	च	१८.	और
ते	१२.	वे	हृष्यमाणाः	२३.	प्रसन्न होते हुये, उनका
पशवः	१३.	पशुओं के	यथा	३०.	जैसे
इव	१४.	समान	इह	३१.	इस लोक में
निहताः	१५.	मारे गये पुरुष	पुरुषादाः ॥	३१.	नरभक्षी प्रसन्न होते थे
यमसदने	१७.	यमलोक में			

श्लोकार्थ—जो पुरुष इस लोक में नर मेध यज्ञ के द्वारा यजन करते हैं और जो स्त्रियाँ पशुओं के समान मनुष्य को खाती हैं उन्हें वे पशुओं के समान मारे गये राक्षस होकर यमलोक में यातना देते हुये कसाई के समान कुल्हाड़ी से काटकर प्रसन्न होते हुये, उनके रक्त पीते हैं और नृत्य करते हैं और गाते हैं, जैसे इस लोक में नरभक्षी प्रसन्न होते थे ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

ये त्विह वा अनागसोऽरण्ये ग्रामे वा वैश्रम्भकैरुपसृतानुपविश्रम्भय्य जिजीविषून् शूलसूत्रादिषूपप्रोतान् क्रीडनकतया यातयन्ति तेऽपि च प्रेत्य यमयातनासु शूलादिषु प्रोतात्मानः क्षुत्तृड्भ्यां चाभिहताः कङ्कवटादिभिश्चेतस्ततस्तिग्मतुण्डैराहन्यमाना आत्मशमलं स्मरन्ति ॥३२॥

पदच्छेद—ये तु इह वा अनागसः अरण्ये ग्रामे वा वैश्रम्भकैः उपसृतान् उपविश्रम्भय्य जिजीविषून् शूल सूत्र आदिषु उपप्रोतान् क्रीडनकतया यातयन्ति ते अपि च प्रेत्य यम यातनासु शूल आदिषु प्रोतात्मानः क्षुत्तृड्भ्याम् च अभिहताः कङ्क वटादिभिः च इतस्ततः तिग्म तुण्डैः आहन्यमानाः आत्मशमलम् स्मरन्ति ॥

शब्दार्थ—

ये तु	२.	जो पुरुष	अपि च	१८.	भी
इह	१.	इस लोक में	प्रेत्य	१९.	मरने वाला
वै	३.	निश्चित रूप से	यम यातनासु	२०.	यम यातना के समय
अनागसः	५.	निरपराध प्राणियों को	शूल	२१.	शूल
अरण्ये	७.	जङ्गल में	आदिषु	२२.	आदि से
ग्रामे	९.	गाँव में	प्रोतात्मानः	२३.	वेधते हैं
वा	८.	अथवा	क्षुत्तृड्भ्याम्	२४.	भूख और प्यास से
वश्रम्भकैः	१०.	अनेक उपायों से	अभिहताः	२५.	पीड़ित होते हुए
उपसृतान्	११.	पास बुला कर	कङ्क-वट	२६.	कङ्क-बटेर
उपविश्रम्भय्य	६.	विश्वास दिला कर	आदिभिः च	२७.	आदि
जिजीविषून्	४.	जीने की इच्छा वाले	इतः ततः	३०.	इधर-उधर
शूल-सूत्र	१२.	काँटे, रस्सी	तिग्म	२८.	तेज
आदिषु	१३.	आदि से	तुण्डैः	२९.	चोंच वाले पक्षियों से
उपप्रोतान्	१४.	बाँध कर	आहन्यमानाः	३१.	काटे जाते हुए
क्रीडनकतया	१५.	खिलवाड़ करते हुए उन्हें	आत्म	३२.	अपने
यातयन्ति	१६.	पीड़ा देते हैं	शमलम्	३३.	पापों का
ते ॥	१७.	वे उन्हें	स्मरन्ति	३४.	स्मरण करते हैं

श्लोकार्थ—इस लोक में जो पुरुष निश्चित रूप से जीने की इच्छा वाले निरपराध प्राणियों को विश्वास दिलाकर गाँव में अथवा जङ्गल में अनेक उपायों से पास बुलाकर काँटे, रस्सी आदि से बाँध कर खिलवाड़ करते हुए, उन्हें पीड़ा देते हैं, वे उन्हें भी मरने के बाद यम यातना के समय शूल आदि से बेधते हैं। वह भूख और प्यास से पीड़ित होते हुए तथा बटेर आदि तेज चोंच वाले पक्षियों से इधर-उधर से काटे जाते हुए अपने पापों का स्मरण करते हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

ये त्विह वै भूतान्युद्वेजयन्ति नरा उल्बणस्वभावा यथा दन्दशूकास्तेऽपि प्रेत्य नरके दन्दशूकाख्ये निपतन्ति यत्र नृप दन्दशूकाः पञ्चमुखाः सप्तमुखा उपसृत्य ग्रसन्ति यथा बिलेशयान् ॥३३॥

पदच्छेद—ये तु इह वै भूतानि उद्वेजयन्ति नरा उल्बण स्वभावा यथा दन्द शूकाः ते अपि प्रेत्य नरके दन्दशूक आख्ये निपतन्ति यत्र नृप दन्दशूकाः पञ्चमुखाः सप्तमुखाः उपसृत्य ग्रसन्ति यथा बिलेशयान् ॥

शब्दार्थ—

ये तु इह वै	२.	जो इस लोक में	निपतन्ति	१२.	गिरते हैं
भूतानि	७.	प्राणियों को	यत्र	१३.	जहां
उद्वेजयन्ति	८.	पीड़ित करते हैं	नृप	१.	राजन्!
नराः	६.	मनुष्य	दन्दशूकाः	१६.	सर्प
उल्बणस्वभावः	५.	उग्र स्वभाव वाले	पञ्चमुखाः	१४.	पाँच मुख वाले और
यथा	४.	समान	सप्तमुखाः	१५.	सात मुख वाले
दन्दशूकाः	३.	सर्पों के	उपसृत्य	१७.	समीप में जाकर उन्हें
ते अपि प्रेत्य	६.	वे भी मरने के बाद	ग्रसन्ति	२०.	निगलते हैं
नरके	११.	नरक में	यथा	१६.	समान
दन्दशूक आख्ये	१०.	दन्दशूक नाम के	बिलेशयान् ॥	१८.	चूहों के

श्लोकार्थ—राजन्! जो इस लोक में सर्पों के समान उग्र स्वभाव वाले मनुष्य प्राणियों को पीड़ित करते हैं वे भी मरने के बाद दन्दशूक नाम के नरक में गिरते हैं, जहां पाँच मुख और सात मुख वाले सर्प समीप में जाकर उन्हें चूहों के समान निगलते हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ये त्विह वा अन्धावटकुसूलगुहादिषु भूतानि निरुन्धन्ति तथामुत्र तेष्वेवोपवेश्य सगरेण वह्निना धूमेन निरुन्धन्ति ॥३४॥

पदच्छेद—ये तु इह वा अन्धअवट कुसूल गुहाआदिषु भूतानि निरुन्धन्ति तथा अमुत्र तेषु एव उपवेश्य सगरेण वह्निना धूमेन निरुन्धन्ति ॥

शब्दार्थ—

ये तु इह	१.	जो मनुष्य इस लोक में	अमुत्र	६.	परलोक में उन्हें भी
वा	४.	अथवा	तेषु	१०.	वैसे
अन्धअवट	३.	अन्धेरे गढ़े में	एव	११.	ही स्थानों में
कुसूल	५.	कोठों में या	उपवेश्य	१२.	डालकर
गुहा आदिषु	६.	गुफा आदि में	सगरेण	१३.	विष से युक्त
भूतानि	२.	प्राणियों को	वह्निना	१४.	अग्नि के
निरुन्धन्ति	७.	डाल देते हैं	धूमेन	१५.	धुयें में
तथा	८.	उसी प्रकार	निरुन्धन्ति ॥	१६.	घोटते हैं

श्लोकार्थ—जो मनुष्य इस लोक में प्राणियों को अन्धेरे गढ़े में अथवा कोठों में या गुफा आदि में डाल देते हैं, उसी प्रकार परलोक में उन्हें भी वैसे ही स्थानों में डालकर विष से युक्त अग्नि के धुयें में घोटते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

यस्त्विह वा अतिथीनभ्यागतान् वा गृहपतिरसकृदुपगतमन्युर्दिधक्षुरिव पापेन चक्षुषा निरीक्षते तस्य चापि निरये पापदृष्टेरक्षिणी वज्रतुण्डा गृध्राः कङ्ककाकवटादयः प्रसह्योरुबलादुत्पाटयन्ति ॥३५॥

पदच्छेद—

यः तु इह वा अतिथीन् अभ्यागतान् वा गृहपतिः असकृत् उपगत मन्युः दिधक्षुः इव पापेन चक्षुषा निरीक्षते तस्य च अपि निरये पापदृष्टेः अक्षिणी वज्रतुण्डाः गृध्राः कङ्क काक वट आदयः प्रसह्य उरुबलात् उत्पाटयन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१.	जो	निरीक्षते	१५.	देखता है
इह	३.	इस लोक में	तस्य	१७.	उसकी
वै	४.	निश्चित रूप से	च अपि	१८.	भी
अतिथीन्	५.	अतिथियों को	निरये	१६.	नरक में
अभ्यागतान्	७.	आगन्तुकों को	पापदृष्टेः	१९.	पाप दृष्टि वाली
वा	६.	अथवा	अक्षिणी	२०.	आँखों को
गृहपतिः	२.	गृह स्वामी	वज्रतुण्डाः	२१.	वज्र के समान चोंच वाले
असकृत्	८.	बार-बार	गृध्राः	२२.	गीध
उपगत	१०.	आकर	कङ्क	२३.	कङ्क
मन्युः	९.	क्रोध में	काक	२४.	कौवे
दिधक्षुः	११.	भस्म करने के	वट	२५.	बटेर
इव	१२.	समान	आदयः	२६.	आदि पक्षी
पापेन	१३.	पाप-युक्त	प्रसह्य	२७.	बलपूर्वक
चक्षुषा	१४.	नेत्रों से	उरुबलात्	२८.	बहुत जोर से
			उत्पाटयन्ति ॥	२९.	निकाल देते हैं

श्लोकार्थ—जो गृहस्वामी इस लोक में अतिथियों को अथवा आगन्तुकों को बार-बार क्रोध में आकर भस्म करने के समान पापयुक्त नेत्रों से देखता है, नरक में उसकी भी पाप दृष्टि वाली आँखों को वज्र के समान चोंच वाले गीध, कङ्क, कौवे, बटेर आदि बलपूर्वक बहुत जोर से निकाल लेते हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

यस्त्विह वा आढ्याभिमतिरहङ्कृतिस्तिर्यक्प्रेक्षणः सर्वतोऽभिविशङ्की अर्थव्ययनाशचिन्तया परिशुष्यमाणहृदयवदनो निर्वृतिमनवगतो ग्रह इवार्थमभिरक्षति स चापि प्रेत्य तदुत्पादनोत्कर्षणसंरक्षणशमलग्रहः सूचीमुखे नरके निपतति यत्र ह वित्तग्रहं पापपुरुषं धर्मराजपुरुषा वायका इव सर्वतोऽङ्गेषु सूत्रैः परिवयन्ति ॥३६॥

पदच्छेद—यः तु इह वा आढ्य अभिमतिः अहङ्कृतिः तिर्यक् प्रेक्षणः सर्वतः अभिविशङ्की अर्थ-व्ययनाश चिन्तया परिशुष्यमाण हृदय वदनः निर्वृतिम् अनवगतः ग्रह इव अर्थम् अभिरक्षति स च अपि प्रेत्य तद् उत्पादन उत्कर्षण संरक्षणशमल ग्रहः सूचीमुखे नरके निपतति यत्र ह वित्त ग्रहम् पाप पुरुषम् धर्मराज पुरुषाः वायका इव सर्वतः अङ्गेषु सूत्रैः परिवयन्ति ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१.	जो व्यक्ति अपने को	स च अपि	२४.	वह भी
इह वा	२.	इस लोक में	प्रेत्य	२५.	मरने के बाद
आढ्य	३.	अधिक धनवान्	तद्	१९.	उस धन के
अभिमतिः	४.	मानकर	उत्पादन	२०.	पैदा करने
अहङ्कृतिः	५.	अहंकार वश	उत्कर्षण	२१.	बढ़ाने में और
तिर्यक् प्रेक्षणः	६.	तिरछी दृष्टि से देखता है	संरक्षण	२२.	रक्षा करने में
सर्वतः	७.	सभी पर	शमलग्रहः.	२३.	जो पाप करता है सो
अभिविशङ्की	८.	सन्देह करता है	सूचीमुखे	२६.	सूचीमुख नाम के
अर्थव्यय	९.	धन के व्यय और	नरके निपतति	२७.	नरक में गिरता है
नाश	१०.	नाश की	यत्र ह	२८.	वहाँ
चिन्तया	११.	चिन्ता से	वित्तग्रहम्	२९.	धन पिशाच
परिशुष्यमाण	१२.	सूखे हुए	पापपुरुषम्	३०.	पापी पुरुष के
हृदय वदनः	१३.	हृदय और मुख से	धर्मराजपुरुषाः	३३.	यमराज के दूत
निर्वृतिम्	१४.	चैन	वायकाः	३४.	दर्जी के समान
अनवगतः	१५.	न पाते हुए,	सर्वतः	३१.	सभी
ग्रह इव	१६.	यक्ष के समान	अङ्गेषु	३२.	अङ्गों को
अर्थम्	१७.	धनकी	सूत्रैः	३५.	धागों से
अभिरक्षति	१८.	रक्षा करता है तथा	परिवयन्ति ॥	३६.	सीते हैं

श्लोकार्थ—जो व्यक्ति अपने को इस लोक में अधिक धनवान् मानकर अहंकार वश तिरछी दृष्टि से देखता है, सभी पर सन्देह करता है, धन के व्यय और नाश की चिन्ता से सूखे हुए हृदय और मुख से चैन न पाते हुए यक्ष के समान धन की रक्षा करता है तथा उस धन के पैदा करने में, बढ़ाने में और रक्षा करने में जो पाप करता है सो वह भी मरने के बाद सूचीमुख नाम के नरक में गिरता है। वहाँ धन पिशाच पापी पुरुष के सभी अङ्गों को यमराज के दूत दर्जी के समान धागों से सीते हैं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

एवंविधा नरका यमालये सन्ति शतशः सहस्रशस्तेषु सर्वेषु च सर्व एवाधर्मवर्तिनो ये केचिदिहोदिता अनुदिताश्चावनिपते पर्यायेण विशन्ति तथैव धर्मानुवर्तिन इतरत्र इह तु पुनर्भवे त उभयशेषाभ्यां निविशन्ति ॥३७॥

पदच्छेद—एवम् विधा नरका यम आलये सन्ति शतशः तेषु सर्वेषु च सर्व एव अधर्म वर्तिनः ये केचित् इह उदिताः अनुदिताः च अवनिपते पर्यायेण विशन्ति तथैव धर्म अनुवर्तिनः इतरत्र इह तु पुनः भवे ते उभय शेषाभ्याम् निविशन्ति ॥

शब्दार्थ—

एवम् विधाः	३.	इस प्रकार	उदिताः	१२.	वर्णन किया गया
नरकाः	६.	नरक	अनुदिताः	१४.	नहीं किया गया
यमालये	२.	यम लोक में	च	१३.	और जिसका वर्णन
सन्ति	७.	हैं	अवनिपते	१.	हे राजन् !
शतशः	४.	सैकड़ों	पर्यायेण	१९.	क्रमशः
सहस्रशः	५.	हजारों	विशन्ति	२०.	प्रवेश होता है
तेषु	८.	उन	तथैव	२१.	इसी प्रकार
सर्वेषु	१५.	सभी में	धर्मानुवर्तिनः	२२.	धर्मात्मा लोग
च सर्व एव	१६.	और सभी	इतरत्र	२३.	स्वर्गलोक में (जाते हैं)
अधर्म	१७.	अधर्म से युक्त	इह तु	२७.	यहाँ
वर्तिनः	१८.	जीवों का	पुनर्भवे	२८.	मृत्यु लोक में
ये	९.	जिस	ते	२६.	वे
केचित्	१०.	किसी नरक का	उभय	२४.	दोनों के पाप
इह	११.	यहाँ	शेषाभ्याम्	२५.	क्षीण हो जाने से
			निविशन्ति ॥	२९.	लौट आते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! यमलोक में इस प्रकार सैकड़ों-हजारों नरक हैं। उनमें जिस किसी नरक का यहाँ वर्णन किया गया, और जिसका वर्णन नहीं किया गया, उन सभी में सभी अधर्म से युक्त जीवों का क्रमशः प्रवेश होता है। इसी प्रकार धर्मात्मा लोग स्वर्गलोक में जाते हैं। दोनों के पाप पुण्य क्षीण हो जाने से पुनः यहाँ मृत्युलोक में लौट आते हैं।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

निवृत्तिलक्षणमार्ग आदावेव व्याख्यातः ॥ एतावानेवाण्डकोशो यश्चतुर्दशधा पुराणेषु विकल्पित उपगीयते यत्तद्भगवतो नारायणस्य साक्षान्महापुरुषस्य स्थविष्ठं रूपमात्ममायागुणमयमनुवर्णितमादृतः पठति शृणोति श्रावयति स उपगेयं भगवतः परमात्मनोऽग्राह्यमपि श्रद्धाभक्ति-विशुद्धबुद्धिर्वेद ॥३८॥

पदच्छेद—निवृत्ति लक्षण मार्गः आदौ एव व्याख्यातः एतावान् एव अण्डकोशः यः चतुर्दशधा पुराणेषु विकल्पितः उपगीयते यत् तद् भगवतः नारायणस्य साक्षात् महापुरुषस्य स्थविष्ठम् रूपम् आत्ममाया गुणमयम् अनुवर्णितम् आदृतः पठति शृणोति श्रावयति सः उपगेयम् भगवतः परमात्मनः अग्राह्यम् अपि श्रद्धा भक्ति विशुद्ध बुद्धिः वेद ॥

शब्दार्थ—

निवृत्ति	१.	निवृत्ति के	महा पुरुषस्य	१७.	महापुरुष
लक्षण	२.	लक्षण का	स्थविष्ठम्	११२.	स्थूल
मार्गः	३.	मार्ग	रूपम्	२३.	रूप है उसका
आदौ एव	४.	पहले ही	आत्ममाया	२०.	अपनी माया के
व्याख्यातः	५.	बता चुके हैं	गुणमयम्	२१.	गुणों से युक्त
एतावान्	१३.	इतना	अनुवर्णितम्	१४.	वर्णन किया
एव	१४.	ही है	आदृतः पठति	३०.	आदर के साथ पढ़ता है
अण्डकोशः	१२.	ब्रह्माण्ड कोश	शृणोति	३१.	सुनता है या
यः	७.	जो	श्रावयति	३२.	सुनाता है
चतुर्दशधा	८.	चौदह प्रकार के	सः	३३.	उसकी
पुराणेषु	६.	पुराणों में	उपगेयम्	१८.	स्तुत्य रूप
विकल्पितः	९.	स्वरूप का	भगवतः	२६.	भगवान्
उपगीयते	१०.	गान किया जाता है	परमात्मनः	२७.	परमात्मा
यत्	१५.	जो	अग्राह्यम्	१९.	अग्राह्य है (जो) इसे
तद्	११.	वह	अपि		भी
भगवतः	१८.	भगवान्	श्रद्धा भक्ति	३४.	श्रद्धा और भक्ति से
नारायणस्य	१९.	नारायण का	विशुद्ध बुद्धिः	३६.	बुद्धि निर्मल हो जाती है और
साक्षात्	१६.	साक्षात्	वेद ॥	३५.	भगवान् को जान सकता है

श्लोकार्थ—निवृत्ति के लक्षण का मार्ग पहले ही बता चुके हैं। पुराणों में चौदह प्रकार के स्वरूप का गान किया जाता है। वह ब्रह्माण्ड कोष इतना ही है। जो साक्षात् महापुरुष भगवान् नारायण का अपनी माया के गुणों से युक्त स्थूल रूप है, उसका वर्णन किया। भगवान् परमात्मा की यह स्तुत्य रूप अग्राह्य है। जो इसे आदर के साथ पढ़ता है, सुनता है या सुनाता है, उसकी श्रद्धा और भक्ति से बुद्धि निर्मल हो जाती है और वह भगवान् को जान सकता है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

श्रुत्वा स्थूलं तथा सूक्ष्मं रूपं भगवतो यतिः ।
स्थूले निर्जितमात्मानं शनैः सूक्ष्मं धिया नयेदिति ॥३९॥

पदच्छेद— श्रुत्वा स्थूलम् तथा सूक्ष्मम् रूपम् भगवतः यतिः ।
स्थूले निर्जितम् आत्मानम् शनैः सूक्ष्मम् धिया नयेत् इति ॥

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	७.	सुनकर	स्थूले	८.	स्थूल रूप से
स्थूलम्	३.	स्थूल	निर्जितम्	११.	स्थिर करके
तथा	४.	तथा	आत्मानम्	९.	अपनी
सूक्ष्मम्	५.	सूक्ष्म	शनैः सूक्ष्मम्	१२.	धीरे-धीरे सूक्ष्म रूप से
रूपम्	६.	स्वरूप को	धिया	१०.	बुद्धि को
भगवतः	२.	भगवान् के	नयेत् इति	१३.	लगा दे
यतिः ॥	१.	यति को चाहिए कि			

श्लोकार्थ—यति को चाहिए कि भगवान् के स्थूल तथा सूक्ष्म स्वरूप को सुनकर अपनी बुद्धि को स्थूल रूप में स्थिर करके धीरे-धीरे सूक्ष्म रूप में लगा दे ।

चत्वारिंशः श्लोकः

भूद्वीपवर्षसरिदद्रिनभःसमुद्रपातालदिङ्नरकभागणलोकसंस्था ।
गीता मया तव नृपाद्भुतमीश्वरस्य स्थूलं वपुः सकलजीवनिकायधाम ॥४०॥

पदच्छेद—भू द्वीप वर्ष सरित् अद्रि नभः समुद्र पातालदिक् नरक भागण लोक संस्था गीता मया तव नृप अद्भुतम् ईश्वरस्य स्थूलम् वपुः सकल जीव निकायधाम ॥

शब्दार्थ—

भू	४.	पृथिवी	गीता	१४.	वर्णन किया
द्वीप	५.	द्वीप।	मया	२.	मैंने
वर्ष	६.	वर्ष	तव	३.	तुमसे
सरित्	७.	नदी	नृप	१.	हे राजन्
अद्रि	८.	पर्वत	अद्भुतम्	१६.	अद्भुत
नभः	९.	आकाश	ईश्वरस्य	१५.	ईश्वर का यही
समुद्र	१०.	समुद्र	स्थूलम्	१७.	स्थूल रूप
पातालदिक्	११.	पाताल, दिशा	वपुः	१८.	शरीर है (जो)
नरक भागण	१२.	नरक नक्षत्रगण और	सकल जीव	१९.	सम्पूर्ण जीव
लोक संस्था	१३.	लोकों की स्थिति का	निकायधाम ॥	२०.	समूह का आश्रय

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मैंने तुमसे पृथ्वी, द्वीप, वर्ष, नदी, पर्वत, आकाश, समुद्र, पाताल, दिशा, नरक, नक्षत्रगण और लोकों की स्थिति का वर्णन किया। ईश्वर का यही अद्भुत स्थूल रूप शरीर है, जो सम्पूर्ण जीव-समूह का आश्रय है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे वैयासिक्यामष्टादशसाहस्र्यां पारमहंस्यां संहितायां
पञ्चमे स्कन्धे नरकानुवर्णनं नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥

भजन

(१)

रघुपति राघव राजाराम पतितपावन सीताराम ॥०॥
शंकर के डमरू से निकला रघुपति राघव राजाराम।
नारद की वीणा से निकला पतित पावन सीताराम ॥०॥
ब्रह्मा के वेदों से निकला जै सियाराम जै जै सियाराम।
सूरज की किरणों से निकला जै रघुनन्दन जै सियाराम ॥०॥
भिलनी के बेरों से निकला भाव के भूखे हैं भगवान्।
द्रौपदी की आहों से निकला जै गोविन्द जै जै गोपाल ॥०॥
गंगा की लहरों से निकला हरिहर हरिहर हरिहर राम।
जमुना की धारा से निकला जय राधे जय राधेश्याम ॥०॥
अर्जुन के बाणों से निकला जय मधुसूदन जय घनश्याम।
भक्तों के श्रीमुख से निकला जय जय राधे जय जय श्याम ॥०॥
अखिल लोक गुञ्जार रहा है रघुपति राघव राजाराम।
सुर नर मुनि सब गान करत हैं पतित पावन सीताराम ॥०॥

(२)

अपार तेरी माया माया अपार ॥०॥
तू ही सगुण है तू ही निर्गुण है तू ही सच्चा औतार ॥०॥
तू ही ने तारी अहिल्या सी नारी चरणों की रज से दातार ॥०॥
वह तो शिला थी मुनि के शाप की हम हैं पापों के भण्डार ॥०॥
शबरी के बेरों को तूने ही खाया तज के आचार विचार ॥०॥
तू ही ने भक्तों का कष्ट मिटाया धर कर राम अवतार ॥०॥
तेरी लीला जितनी होती हरने को आता भू भार ॥०॥
सीता सी नारी को त्यागा था तुमने रखा था प्रजा का प्यार ॥०॥
दया सिन्धु हम द्वारे आये कर देना बेड़े को पार ॥०॥

(३)

प्रभो दीन बन्धु दयाल पूरण ब्रह्मपूर्ण अवतार हो ।।०।।
जग के हितैषी नाथ बन के जग में आये जगदाधार हो ।।०।।
हो प्राण जड़ चेतन के प्रभु सर्वज्ञ सर्वाधार हो ।।०।।
वासी हो घट-घट के सकल ब्रह्माण्ड में व्यापक हो ।।०।।
अव्यक्त अप्रमेय :अलौकिक अचल निर्मल रूप हो ।।०।।
हो सर्वदेव शिरोमणि प्रभो सर्व शक्तिवान हो ।।०।।
इस सब चराचर विश्व के एक आप ही पोषण हार हो ।।०।।
होती जो उत्पत्ति प्रलय उस सबके कारण मूल हो ।।०।।
इस विश्व सम्पत्ति विभव के आप ही भण्डार हो ।।०।।
इस प्रकृति महा विशाल के प्रभो आप ही शृंगार हो ।।०।।
हमें दीजिये ये वर प्रभो श्री चरणों में अनुराग हो ।।०।।
रहें कर्म वश जहाँ कहीं भी एक आप का ध्यान हो ।।०।।

(४)

हे जग के प्रतिपालक स्वामी हे जग के प्रति पालक हे ।।०।।
शंख सुदर्शन चक्र गदाधर विष्णु चतुर्भुज अन्तरयामी ।।०।।
परमधाम के तुम अधिवासी योगेश्वर ध्रुव सत्य विलासी ।
सदा सर्व हित के शुभकारी ।।हे०।।
श्यामल रंग अंग मन भाये पीताम्बर वनमाल सुहायें ।
शरणागत प्रिय शिव गुणरासी ।।हे०।।
कमल नयन प्रभु कमला के पति दे दो अब तो हमें सुमति मति ।
हम नर तुम नारायण स्वामी ।।हे०।।
सज्जन रक्षक :दुर्जन भक्षक अहंकार के पूरे भक्षक ।
सुखकर वरद गरुड पर गामी ।।हे०।।
आत्मरूप में हमें मिला लो, चरणाम्बुज मकरन्द पिला दो ।
हम सेवक हैं प्रभु निष्कामी ।।हे०।।